तन्त्र ग्रन्थमाला नं.२

मंत्र महोदधि



शुकदेव चतुर्वेदी

प्राच्य प्रकाशन, वाराणसी

तन्त्र ग्रन्थमाला नं० २

श्रीमन्महीधर विरचित

मंत्र महोदधि

('नौका' संस्कृत टीका एवं 'मोहिनी' हिन्दी व्याख्या सहित)

सम्पादक एवं मोहिनी व्याख्याकार

शुकदेव चतुर्वेदी

ज्योतिषाचार्य, एम. ए.

प्राच्य प्रकाशन, वाराणसी

नवीन संस्करण १९८१

प्रकाशक :

प्राच्य प्रकाशन

लमही, (पोस्ट - वाया सारनाथ)

वाराणसी - २२१००७ (भारत)

शाखा :

प्राच्य प्रकाशन

पोस्ट बाक्स नं० २०३७

सी २१/३ सी, मलदहिया,

वाराणसी - २

सर्वाधिकार सुरक्षित

मूल्य : ४३५/- रुपये

मुद्रक :

अनूप प्रिन्टिंग वर्क्स, लमही, (पोस्ट – वाया सारनाथ), वाराणसी – ७

TANTRA GRANTHAMALA No. 2

MAHIDHARA'S
MANTRA MAHODADHI

(With his own 'NAUKA' Sanskrit Commentary)

Translated into Hindi with Mohini Hindi Commentary

Shukadeva Chaturvedi

PRACHYA PRAKASHAN
Varanasi-221002

Edition 1981

PRACHYA PRAKASHAN
Lamhi, (P. O. Via - Sarnathı)
Varanasi- 221007 (India)

Branch Office :
PRACHYA PRAKASHAN
Post Box No. 2037
C 21/3 C, Maldahiya, (Behind H. H. I.)
Varanasi 221002 (India)

All Rights Reserved

No part of this Book may be translated or reproduced in any form, by Print, Photoprint, microfilm or any other means without written permission from the Publishers.

Price : Rs. 435/-

Published by Pradeep Kumar Rai, for Prachya Prakashan,
Lamhi, (P. O. Via - Sarnath) Varanasi- 221007 (India)
and Printed at the Anoop Printing Works,
Lamhi, (P. O. Via - Sarnath) Varanasi- 221007 (India)

सर्वतन्त्र स्वतन्त्र

प्रातः स्मरणीय पूज्य गुरुदेव

श्री गिरिराज जी चतुर्वेदी

को

जिनके श्रीचरणों का सान्निध्य प्राप्त कर

मैंने मन्त्रशास्त्र का बोध प्राप्त किया

विषय-सूची

भूमिका 13

प्रस्तावना 15

प्रथम तरङ्ग १-४७

ग्रन्थकार का मंगलाचरण १। व्याख्याकार का मंगलाचरण १। साधक का नित्याह्निक २, द्वारपूजा ३, प्राणायाम विधि ४, भूतशुद्धि ४, प्राणप्रतिष्ठा ११, ऋष्यादिन्यास १३, पीठदेवतान्यास १६, प्राणशक्ति का ध्यान १७, प्राण प्रतिष्ठा के सप्ताक्षर मन्त्र का उद्धार २०, मातृका न्यास (सृष्टिन्यास) २१, पीठपूजा एवं आवरणपूजा २२, पुरश्चरण के नियम २९, हविष्यान्न २९, वह्निपूजन यन्त्र एवं पूजाविधि ३०, अग्नि (नवार्ण) मन्त्र ३२, अग्नि (चतुर्विंशत वर्णात्मक) मन्त्र ३३, अग्नि (षड्विंशत्यक्षर) मन्त्र ३३, सप्तजिह्वा मन्त्र ३४, अग्नि का ध्यान ३६, अग्निपूजा ३७, अष्टभैरवों के नाम ३७, ब्रह्मा का आवाहन एवं पूजन ३८, स्रुवा एवं स्रुची का संस्कार ३९, आज्या एवं आज्या स्थाली का संस्कार ४०, अग्नि के संस्कार ४१, पूर्णाहुति ४५, तर्पण, अभिषेक एवं ब्राह्मण भोजन ४६।

द्वितीय तरङ्ग ४८-७७

गणेश जी का षडक्षर मन्त्र, विनियोग, न्यास एवं प्रयोगविधि ४८, ध्यान, पुरश्चरण विधि, पीठपूजा, विविध काम्य प्रयोग ४८-५३, गणेश का अन्य मन्त्र, न्यासादि, जपसंख्या एवं पुरश्चरण ५३-५४, गणेश का अन्य (षडक्षर) मन्त्र ५५, उच्छिष्टगणपति का मन्त्र, काम्यप्रयोग, बलिमन्त्र ५५-५९, उच्छिष्टगणपति के अन्य मन्त्र : द्वादशाक्षर, दशाक्षर, एकोनविंशत्यक्षर, सप्तत्रिंशदक्षर, द्वात्रिंशदक्षर काम्य प्रयोग, ५९-६५। कुछ ध्यान रखने योग्य बातें ६५, शक्तिविनायक का मन्त्र ६६, लक्ष्मीविनायक का मन्त्र ६८, त्रैलोक्यमोहन गणेशमन्त्र ७१, हरिद्रा गणपति का मन्त्र ७४।

तृतीय तरङ्ग ७८-९९

दक्षिणाकाली का मन्त्र ७८, कालीपूजन की पद्धति ८४, काम्यप्रयोग ८८, काली के अन्य मन्त्र ९०, चौदह अक्षर का मन्त्र ९०, एकाक्षर मन्त्र ९१, षडक्षर मन्त्र ९१, तीन वर्ण, पंचवर्ण एवं सप्तवर्ण मन्त्र ९२। सुमुखी का मन्त्र ९४, काम्यप्रयोग ९७।

चतुर्थ तरङ्ग १००-१३८

तारा के मन्त्र १००, एकजटा मन्त्र एवं नीलसरस्वती के मन्त्र १०१, षोढ़ान्यास

आदि १०३ । उग्रतारा का ध्यान १११, पीठ मन्त्र ११२, बलि देने की विधि ११३, भूतशुद्धि ११५, भूमि मन्त्रण आदि के मन्त्र ११६ । तारा की पूजा पद्धति १२२, रहस्यपुरश्चरण १३४, काम्य प्रयोग १३६ ।

पंचम तरङ्ग १३९-१६०

तारा के विविध मन्त्र : ब्रह्मोपासित, विष्णु द्वारा उपासित, चतुर्मुखोपासित, एकजटा के मन्त्र, नारायणोपासित १४० । एकजटा मन्त्र १४२, नीलसरस्वती का मन्त्र १४३ । विद्याराज्ञी मन्त्र (महाविद्या मन्त्र) १४५, आवरण पूजा १४८, महाविद्या के तीन ध्यान १५७, काम्य प्रयोग १५९ ।

षष्ठ तरङ्ग १६१-१८६

छिन्नमस्ता का मन्त्र १६१, छिन्नमस्ता पूजन विधि १६३, काम्यप्रयोग १६८, उत्कीलन विधि १६९, रेणुकाशबरी मन्त्र १७०, काम्यप्रयोग १७२, स्वयंवराकला मन्त्र १७३, मधुमती मन्त्र १७८, काम्यप्रयोग १८०, मधुमती के अन्य मन्त्र १८१, प्रमदा का मन्त्र १८१, प्रमोदा का मन्त्र एवं प्रयोग १८२, बन्दी मन्त्र १८३, अष्टादशाक्षर मन्त्र १८६ ।

सप्तम तरङ्ग १८७-२१६

वटयक्षिणी का मन्त्र १८७, वटयक्षिणी का अन्य मन्त्र १९२, मेखलायक्षिणी मन्त्र १९३, विशालायक्षिणी का मन्त्र १९४, वार्ताली का मन्त्र (शत्रुघाती मन्त्र) १९५, धूमावती का मन्त्र १९७, कर्णपिशाचिनी मन्त्र १९९, शीतला मन्त्र २००, स्वप्नेश्वरी मन्त्र २०१, मातंगी मन्त्र २०२, काम्यप्रयोग २०९, बाणेशी का मन्त्र २१०, काम्य प्रयोग २१४, कामेशी का मन्त्र २१५ ।

अष्टम तरङ्ग २१७-२५३

बाला का मन्त्र २१७, नवयोनिन्यास २१८, रत्यादिन्यास २१९, मूर्तिन्यास २१९, पूजन २२१, काम्य प्रयोग २२७, कामना के भेद से विभिन्न मन्त्र २३३, बालाधारण यन्त्र २३५, बाला के भेद २३७, लघुश्यामा का मन्त्र २४०, विधिन्यास २४१, मातंगी गायत्री २५२, काम्यप्रयोग २५३ ।

नवम तरङ्ग २५४-२८७

अन्नपूर्णा का मन्त्र २५४, वाराह पूजन मन्त्र २५७, नारायण पूजन मन्त्र २५७, अन्नपूर्णा के अन्य मन्त्र २६१, त्रैलोक्य मोहन गौरी का मन्त्र २६३, काम्यप्रयोग २६६,

गौरी का अन्य मन्त्र २६६, ज्येष्ठालक्ष्मी का मन्त्र २६९, ज्येष्ठा का अन्य मन्त्र २७२। कुबेर मन्त्र २७७। प्रत्यङ्गिरा का मन्त्र २७८, काम्यप्रयोग २८१, प्रत्यङ्गिरा का माला मन्त्र २८२, काम्यप्रयोग २८३ । शत्रुनाशक मन्त्र २८४।

दशम तरङ्ग २८८-३१३

बगलामुखी मन्त्र २८८, काम्यप्रयोग २९२। स्वप्नवाराही का मन्त्र २९५। काम्य प्रयोग २९९। स्वप्नवाराही का धारणयन्त्र ३०१। वार्ताली मन्त्र ३०२। विविध बलि मन्त्र ३०८, बलि मुद्रायें ३१०। काम्यप्रयोग ३१०।

एकादश तरङ्ग ३१४-३५२

मंगलपूर्वक श्रीविद्या कथन ३१४। षोडशी मन्त्र ३१५, श्रीविद्या का पूजन ३४८।

द्वादश तरङ्ग ३५३-४००

श्रीविद्या का पूजन ३५३, कामेश्वरी का मन्त्र ३५४। भगमालिनी मन्त्र ३५५, नित्यक्लिन्ना मन्त्र ३५६, भेरुण्डा मन्त्र ३५६, वह्निवासिनी मन्त्र ३५६, महाविद्येश्वरी मन्त्र ३५७, शिवदूती मन्त्र ३५७, त्वरिता मन्त्र ३५८, कुलसुन्दरी मन्त्र ३५८, नित्या मन्त्र ३५८, नीलपताकिनी मन्त्र ३५९, विजया मन्त्र ३५९, सर्वमंगला मन्त्र ३६०, ज्वालामालिनी मन्त्र ३६०, विचित्रा मन्त्र ३६०, लक्ष्मी का मन्त्र ३६४, महालक्ष्मी मन्त्र ३६५, त्रिशक्ति मन्त्र ३६५, सर्वसाम्राज्या मन्त्र ३६५, कोणपंचक की देवियों के मन्त्र ३६५, कल्पलता पंचक की देवियों के मन्त्र ३६६, पारिजातेश्वरी मन्त्र ३६७, कामधेनु पंचक की देवियों के मन्त्र ३६७, रत्नपंचक की देवियों के मन्त्र ३६९, षड्दर्शनों का पूजन ३७०, श्रीविद्यार्चन पद्धति ३७१, काम्यप्रयोग ३८९, श्रीविद्या के भेद ३९१, पारिभाषिकी षोडशी मन्त्र ३९१, बीजावली षोडशी मन्त्र ३९१, गृह्य-षोडशी ३९२, महाषोडशी ३९२, गोपाल सुन्दरी मन्त्र ३९४।

त्रयोदश तरङ्ग ४०१-४२३

हनुमान का मन्त्र ४०१, काम्यप्रयोग ४०५। मारण प्रयोग ४०७, वेताल साधन ४०८, बन्दी मोचन ४०८, विविध कामनाओं की पूर्ति हेतु हवन ४०९, हनुमान जी का धारण मन्त्र ४१०, माला मन्त्र ४१४, पंचकूट मन्त्र ४१४, एकादशाक्षर एवं अष्टादशाक्षर मन्त्र ४१६, काम्यप्रयोग ४१८, प्लीहा रोग नाशक मन्त्र ४१८, विजयप्रद प्रयोग ४१९, विजयदायक ध्वज ४२०, रक्षाकारक यन्त्र ४२१, अष्टाक्षर मन्त्र ४२१, माला मन्त्र ४२२।

चतुर्दश तरङ्ग ४२४-४५८

विष्णु के मन्त्र ४२४, नृसिंह मन्त्र ४२४, काम्यप्रयोग एवं भयनाशक नृसिंह मन्त्र ४३०, लक्ष्मी नृसिंह मन्त्र ४३१, दशावतार नृसिंह मन्त्र ४३४, अभय नृसिंह मन्त्र ४३५। गोपाल मन्त्र ४३६, काम्य प्रयोग ४४४, गोविन्द मन्त्र ४४५, द्वादशाक्षर गोपाल मन्त्र ४४८, रुक्मिणी वल्लभ मन्त्र ४४९, अष्टाक्षरी मन्त्र ४५१, चतुर्वर्ण मन्त्र ४५२, सन्तान गोपाल मन्त्र ४५४, विषनाशक गरुड़ मन्त्र ४५५, महिमा ४५८।

पंचदश तरङ्ग ४५९-४८३

दरिद्रता नाशक रवि मन्त्र ४५९, मंगल का मन्त्र ४७०, पुत्रदायक भौमव्रत ४७२, अंगारक गायत्री ४७७, शुक्र का मन्त्र ४७९, काम्यप्रयोग ४८०, व्यास का मन्त्र ४८०, मृत्युञ्जय पुटित व्यास मन्त्र ४८३।

षोडश तरङ्ग ४८४-५२०

महामृत्युञ्जय मन्त्र ४८४, काम्यप्रयोग ४९५, दशाक्षर मन्त्र ४९६, फल ५१०, काम्यप्रयोग ५१०, कुबेर मन्त्र ५१०, काम्यप्रयोग ५१२, कुबेर का अन्य मन्त्र ५१२, गङ्गा मन्त्र ५१३, दशहरा की महिमा ५१६, गङ्गा के अन्य मन्त्र का उद्धार ५१६, मणिकर्णिका मन्त्र ५१८, मणिकर्णिका का अन्य मन्त्र ५२०।

सप्तदश तरङ्ग ५२१-५४४

कार्तवीर्यार्जुन के मन्त्र ५२१, काम्य प्रयोगों में पूजन का यन्त्र ५२७, कार्तवीर्य के मन्त्रों के भेद ५२९, कार्तवीर्य के दस मन्त्र ५३०, दस अन्य मन्त्र ५३०, कार्तवीर्य के अन्य मन्त्र ५३१, कार्तवीर्य का गायत्री मन्त्र ५३४। दीप स्थापन एवं पूजन ५३७, नित्य दीप ५४३। देवताओं की प्रिय वस्तुएं ५४४।

अष्टादश तरङ्ग ५४५-५९०

कालरात्रि का मन्त्र ५४५। वशीकरण ५५४। कज्जलाभिमन्त्रण एवं अंजनाभिमन्त्रण ५५५। स्तम्भन ५५७। मोहन ५५८। आकर्षण ५५९। उच्चाटन ५६१। विद्वेषण ५६२। मारण ५६४। चण्डी का नवार्ण मन्त्र ५६५, विविध न्यास ५६६, चण्डीपाठ ५८२। सप्तशती के तीनों चरित्रों के विनियोग ५८२। शतचण्डी की विधि ५८५। कन्यापूजन एवं उसके मन्त्र ५८७। सहस्रचण्डी ५८२।

एकोनविंशति तरङ्ग ५९१-६२१

चरणायुध (कुक्कुट) मन्त्र ५९१। काम्य प्रयोगों में जपसंख्या एवं बलिदान ५९५, विविध प्रयोगों में बलिदान ५९६, विविध काम्य प्रयोग ५९९। शास्ता का मन्त्र ६०१।

महाशास्ता का गायत्री मन्त्र ६०३। पार्थिवेश्वर पूजन ६०४। बालगणेश्वर की रचना का मन्त्र ६०५। कुमार की रचना तथा उसका मन्त्र ६०६। पिनाकी का मन्त्र ६०७। सदाशिव मन्त्र ६०९। महादेव मन्त्र ६०९। हर आदि के सात मन्त्र ६०९, विविध कामनाओं में पार्थिवेश्वर के ध्यान ६१०। लिङ्गपूजन का फल ६१२। धर्मराज मन्त्र ६१३। चित्रगुप्त का मन्त्र ६१५। आसुरी विद्या ६१६, काम्य प्रयोग ६१९।

विंशति तरङ्ग ६२२-६४८

यन्त्र साधना ६२३। यन्त्र गायत्री ६२४। भूतलिपि ६२४। विविध यन्त्र : वशीकरण ६२६। दिव्यस्तम्भन ६२८। राजमोहन ६२९। मृत्युञ्जय ६३०। धनिक वशीकरण ६३१। दुष्ट मोहन ६३२। विजयप्रद ६३३। राजा को वश में करने का यन्त्र ६३५। दुर्भाग्य नाशक तथा पति को वश में करने वाला ललिता यन्त्र ६३७। दुर्भाग्यनाशक बीजयन्त्र ६३८। अन्य यन्त्र : आकर्षण ६३९। मुखमुद्रण ६३९। अग्निभयहर्ता ६४०। विद्वेषण ६४०। मारण ६४१। उच्चाटन ६४२। शान्तिकारक ६४३, शाकिनी निवर्तक ६४३, ज्वरनिवर्तक ६४४। सर्पभय नाशक ६४४। बन्दी को छुड़ानेवाला यन्त्र ६४५। यन्त्रसिद्धि के लिए उपासना ६४५। स्वर्णाकर्षण भैरव मन्त्र ६४५।

एकविंशति तरङ्ग ६४९-६८५

नित्यपूजा, प्रातः कृत्य ६४९, गुरु स्मरण एवं इष्ट देव की प्रार्थना ६५०। स्नान तथा उसके भेद ६५०। वैष्णव एवं शैवों के तिलक ६५६। मन्त्र संध्या ६५७। विविध देवताओं के गायत्री मन्त्र ६५८। आचमन विधि ६६०। द्वारपालों का पूजन ६६२। विघ्नोत्सारण ६६३। आसन पर बैठने की रीति ६६४। पूजा सामग्री एवं मन्त्रों का स्थापन ६६५। श्रीकण्ठ मन्त्र ६६६। केशव मातृका यन्त्र ६७०। गणेश मातृका मन्त्र ६७३। कलामातृका मन्त्र ६७६। पीठ न्यास ६८२। मानस पूजा ६८४।

द्वाविंशति तरङ्ग ६८६-७१७

विशेषार्घ्यस्थापन ६८८। विविध मुद्रायें ६९०। पाद्य आदि के पात्र ६९२। अन्तर्याग की विधि ६९२। बाह्यपूजा में पीठपूजा विधि ६९३। आवाहन ६९४। पंचायतन पूजा में देवताओं का क्रम ६९५। आसन एवं उपवेशन ६९६। सन्निधान ६९६। सम्मुखीकरण ६९७। सकलीकरण ६९७। अवगुण्ठन ६९७। अमृतीकरण ६९८, स्वागत एवं सुस्वागत ६९८। पाद्य ६९८, आचमन ६९९। अर्घ्य ६९९, मधुपर्क ७००, पुनराचमन ७००। तैल, उद्वर्तन एवं स्नान ७००। अभिषेक ७०१। वस्त्र एवं उत्तरीय ७०१। उपवीत एवं आभूषण ७०१। लोकमोहन ७०१। गन्ध ७०२। पुष्प ७०२, पूजन में वर्जित पुष्प ७०३। पूजा में ग्राह्य पत्ते ७०३। प्रशस्त फल ७०४। घण्टा-

पूजन एवं धूपदान ७०७। दीप ७०८। नैवेद्य ७१०। बलिवैश्वदेव ७११। उच्छिष्ट-भोजी ७१२। आरती एवं ताम्बूल आदि उपचार ७१२। जप एवं उसका निवेदन ७१३। देवताओं की प्रदक्षिणा-संख्या ७१३। ब्रह्मार्पण विधि ७१४। विसर्जन ७१४। मध्याह्न एवं सायं पूजन ७१४। पंचोपचार ७१५। साधना के पांच भेद ७१६।

त्रयोविंशति तरङ्ग ७१८-७३३

पवित्र एवं दमन अर्पण ७१८। कामदेव एवं रति के मन्त्र ७१९। अधिवास ७२१। कामगायत्री ७२२। दमनपूजा ७२३। पवित्र पूजा ७२४। अधिवास ७२७। देवोत्सव का समय ७३१।

चतुर्विंशति तरङ्ग ७३४-७५६

मन्त्रशोधन ७३४। अकथह चक्र ७३५। सिद्धादि शोधन ७३६। अकडम चक्र ७३८। नक्षत्र शोधन ७४०। ऋण-धन शोधन ७४१। मन्त्र शोधन की एक अन्य रीति ७४५। मन्त्र शोधन का अपवाद ७४६। अरि मन्त्र के त्याग की विधि ७४७। मन्त्र की दोषमुक्ति का उपाय ७४८। विविध अवस्थाओं में सिद्धिदायक मन्त्र ७४९। कुला-कुल विचार ७५०। ग्राह्य नक्षत्र ७५१। मन्त्रों के दस संस्कार ७५२। कलियुग में सिद्धिदायक मन्त्र ७५५। विप्रादि तीन वर्णों को देय मन्त्र ७५६। ब्राह्मण एवं क्षत्रिय को देय मन्त्र ७५६। चारों वर्णों को देय मन्त्र ७५७। होमद्रव्य ७५८। पुनः पुरश्चरण की आवश्यकता ७५८। संक्षिप्त पुरश्चरण विधि ७५९।

पञ्चविंशति तरङ्ग ७६०-७८३

षड्कर्म ७६०। देवता एवं उनके वर्ण ७६१। ऋतुएँ ७६१। दिशा ७६१। दिन ७६२। आसन ७६३। विन्यास ७६४। मण्डल ७६५। मुद्रा ७६५। वर्ण ७६६। पञ्चभूतों का उदय ७६७। समिधा ७६७। माला ७६८। अग्नि ७६८, अग्नि की जिह्वाओं का पूजन ७६९। ब्राह्मण भोजन की संख्या ७६९। लेखन स्वरूप ७७०, लेखनाधार ७७१। कुण्ड ७७१। स्रुवा एवं स्रुची ७७१। लेखनी ७७२। भक्ष्य वस्तुएँ ७७२। तर्पण की वस्तुएँ ७७३। काम्य कर्मों में सावधानी ७७३, काम्य कर्मों का परिणाम ७७३, काम्य कर्मों को बतलाने के हेतु ७७३। निष्काम उपासना ७७४। पुरश्चरण के पहले भविष्य विचार की रीति ७७५। शुभाशुभ स्वप्न ७७६। मन्त्रसिद्धि का लक्षण ७७७। ग्रन्थसमाप्ति का मङ्गलाचरण ७७८। महोदधि की अनुक्रमणिका ७७९। वंशपरिचय ७८१। ग्रन्थ समाप्ति का आशीर्वचन ७८१। प्रार्थना ७८२। रचनाकाल ७८३।

यन्त्र चित्रावली ७८५

भूमिका

अपनी कामना या अभीष्ट की सिद्धि के प्रमुखतम उपाय को साधना कहते हैं। यह एक क्रियात्मक विज्ञान है, जो साधक को साध्य से मिलाकर उसकी समस्त कामनाओं को परिपूर्ण कर देता है। कवि को कवित्व एवं ऋषि को ऋषित्व साधना के द्वारा ही प्राप्त होता है। अतः साधना सफलता की कुंजी है।

भारत जैसे साधना-प्रधान देश में दैहिक, दैविक एवं भौतिक तापों से छुटकारा पाने के लिए सुदूरतम प्राचीन काल से मन्त्र साधना का आश्रय लिया जाता रहा है। इस साधना के द्वारा न केवल हमारी लौकिक कामनाओं की पूर्ति या लौकिक सिद्धियाँ ही मिलती हैं, अपितु इस साधना के द्वारा दुःखों की आत्यन्तिक निवृत्ति या मुक्ति भी मिलती है। तान्त्रिक सम्प्रदाय के अनुयायियों का विश्वास है कि यह साधना एक हाथ से भुक्ति तथा दूसरे हाथ से मुक्ति प्रदान करती है।

मन्त्र, तन्त्र एव यन्त्र तात्त्विक रूप से भिन्न वस्तु नहीं हैं, अपितु एक ही सत्य के तीन प्रकार हैं या एक ही शक्ति के तीन रूप हैं। व्यक्ति की शक्ति को उद्दीप्त कर उसमें गुरुतर शक्ति का संचार करने वाला गूढ़ रहस्य मन्त्र कहलाता है। मन्त्र का चित्रात्मक रूप यन्त्र तथा क्रियात्मक रूप तन्त्र है। मन्त्र के इन त्रिविध रूपों का क्रियात्मक-विज्ञान मन्त्र-साधना कहलाता है। इष्टसिद्धि या अभीष्ट-कामना की पूर्ति इसी क्रियात्मक विज्ञान पर निर्भर रहती है। इसीलिए मन्त्र साधना की छोटी से छोटी प्रक्रिया में जरा सी भी भूल-चूक हो जाने पर मात्र असफलता ही नहीं मिलती, अपितु मन्त्र-साधक कभी-कभी दुर्धर्ष विघ्नों का शिकार हो जाता है। इस प्रकार की भूल-चूकों से बचने के लिए साधक को मन्त्रशास्त्र का आश्रय लेना चाहिए। यह शास्त्र उन सत्यों, सिद्धान्तों, शक्तियों एवं प्रक्रियाओं का ज्ञान है, जो मन्त्र साधना एवं मन्त्रसिद्धि के लिए अत्यावश्यक हैं।

मन्त्रशास्त्र के ग्रन्थों में मन्त्रमहोदधि का स्थान सर्वोपरि है। इस अद्भुत एवं आकरग्रन्थ की संस्कृत नौका टीका सहित रचना आचार्य महीधर भट्ट ने विक्रम सम्वत् १६४५ में काशी में की थी। आचार्य महीधर वत्सगोत्रीय ब्राह्मण थे। इनके पिता

का नाम फतू भट्ट तथा पितामह का नाम श्री रत्नाकर भट्ट था। मन्त्रमहोदधि मन्त्र शास्त्र की प्रौढ़तम रचना है। इसकी महत्ता एवं उपादेयता आदि की यहाँ चर्चा करना व्यर्थ है, क्योकि विज्ञ समाज इससे भली भाँति परिचित है।

आचार्य महीधर द्वारा स्वरचित नौका संस्कृत टीका सहित प्रकाशित यह ग्रन्थ विद्वत्समाज में प्रचलित होते हुए भी अत्यन्त दुरूह माना जाता है। अतः मन्त्रसाधना की जटिल गुत्थियों को सुलझाकर सरल, बोधगम्य एवं सोदाहरण हिन्दी व्याख्या लिखने की ओर मैं प्रवृत्त हुआ। मोहिनी टीका में मन्त्रमहोदधि के भावार्थ का विवेचन करने के साथ-साथ टिप्पणी में मन्त्रसाधना को प्रक्रिया की विस्तृत व्याख्या को गयी है। ग्रन्थ को प्रस्तावना में मन्त्रशास्त्र एवं मन्त्रयोग के आधारभूत सिद्धान्तों का साङ्गोपाङ्ग विवेचन भी किया है। इस प्रकार विस्तृत टिप्पणी एवं हिन्दी-व्याख्या सहित सर्वप्रथम प्रकाशित इस ग्रन्थ में मन्त्रशास्त्र, मन्त्रयोग एवं मन्त्रसाधना के सिद्धान्तों एवं प्रक्रियाओं पर पर्याप्त प्रकाश डाला गया है। मेरा विश्वास है कि इसको पढ़कर जिज्ञासु पाठक मन्त्रशास्त्र एवं मन्त्रसाधना को जटिल गुत्थियों को आसानी से सुलझाकर मन्त्र-साधना के रहस्य को हृदयंगम कर सकेंगे।

मोहिनी टीका के लेखन में प्रेरणाप्रद योगदान देने के लिए मैं श्रद्धेय गुरुवर श्री संकठा प्रसाद जी उपाध्याय, भू० पू० प्राचार्य, श्रीमाथुर चतुर्वेद विद्यालय मथुरा, का हृदय से आभारी हूँ, जिन्होंने मुझे न केवल इस कार्य को करने के लिए प्रेरित किया, अपितु अपनी अस्वस्थता के विपरीत समय-समय पर आने वाली अनेक कठिनाइयों का समाधान करने में उदारतापूर्वक सहयोग दिया। उनकी इस उदारता एवं शिष्य-वत्सलता का आभार व्यक्त करने के लिये उपयुक्त शब्दों का अभाव प्रतीत हो रहा है। मैं श्री लालबहादुर शास्त्री केन्द्रीय संस्कृत विद्यापीठ नई दिल्ली के प्राध्यापक बन्धुओं–सर्वश्री डा० हर्षनाथ मिश्र, डा० रूद्रदेव त्रिपाठी, प्रो० विनयकुमार राय तथा आचार्य रमेश चतुर्वेदी के प्रति, उनके निरन्तर सहयोग एवं सतत प्रोत्साहन के लिए हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करता हूँ।

विजया दशमी, सं २०३७ शुकदेव चतुर्वेदी

१३/३०, शक्तिनगर, दिल्ली-११० ००७

प्रस्तावना

मन्त्र साधना एवं सिद्धान्त

साधना शब्द का अर्थ अत्यन्त व्यापक है। कोई भी कार्य हो उसी का एक साधन तथा एक साधना होती है। आगमग्रन्थों के अनुसार वे सब पदार्थ जो सिद्धि के अनुकूल होते हैं, साधन कहलाते हैं तथा उनका अवलम्बन या उन पर आचरण करना ही साधना है। कुछ आचार्यों के अनुसार साधक द्वारा साध्य की प्राप्ति के लिए किया जाने वाला प्रयत्न साधना कहलाता है। तथा इस साधना के उपयोगी उपकरणों को साधन कहते हैं। वस्तुत: साधन एवं साधना ये दोनों आध्यात्मिक शब्द हैं। इन दोनों के द्वारा साधक दु:खत्रय से मुक्त होकर सुख या आनन्द प्राप्त करता है।

आनन्द या सुख कैसे प्राप्त हो सकता है – इस विषय में आध्यात्मवाद एवं जड़वाद में भारी अन्तर है। संसार के सभी लोग सुख की इच्छा करते हैं। वे सुख की खोज ही नहीं करते, अपितु उसे प्राप्त करने के लिये प्राणपण से प्रयत्न भी करते हैं। किन्तु उन्हें स्थायी सुख प्राप्त नहीं होता। दीर्घकालीन प्रयास के बाद ज्योंही हम सुख का स्पर्श करते हैं त्यों ही वह अभाव में विलीन हो जाता है।

जब कभी भी हमें इच्छित वस्तु मिल जाती है तो हम फूले नहीं समाते, और जब वह हमारे हाथों से चली जाती है तो हम गम्भीर शोक एवं चिन्ता के सागर में डूब जाते हैं। इतना ही नहीं, इच्छित वस्तु मिल जाने पर भी यह सुख कुछेक क्षणों तक ही अनुभव का विषय बनता है, फिर अपने आप मन में नवीन इच्छाएँ बेचैनी उत्पन्न कर देती हैं।।

सुख कब और कैसे मिलता है – इस विषय में प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक विलियम जेम्स ने यह सूत्र बतलाया है :

$$\frac{\text{लाभ (Achievement)}}{\text{आशा (Expectation)}} = \text{आनन्द (Satisfaction)}$$

तात्पर्य यह है कि जब मनुष्य की आशा (तृष्णा) कम हो तथा लाभ अधिक हो तो उसे आनन्द मिलता है, और जब उसकी आशा (तृष्णा) अधिक हो तथा लाभ कम

हो तो आनन्द नहीं मिलता। इस स्थिति में आनन्द छिन्न-भिन्न हो जाता है। परिणामतः मनुष्य को दुःख का ही अनुभव होता है।

इस सूत्र का निष्कर्ष यह है कि मनुष्य आशा को कम कर के या लाभ को बढ़ा कर सुख प्राप्त कर सकता है। किन्तु इसके विपरीत आशा के बढ़ने या लाभ के घटने से आनन्द में ह्रास होता है। यहाँ यदि हम ध्यान देकर विचार करें तो एक और भी तथ्य दिखलायी देता है, जिसे परमानन्द का सूत्र कहा जा सकता है – "यदि लाभ को यथावत् रखते हुए आशा तृष्णा) को शून्य कर दिया जाय तो इस प्रकार प्राप्त होने वाला आनन्द परमानन्द बन जायेगा " – जिसे हम ब्रह्मानन्द भी कह सकते हैं। यद्यपि विलियम जेम्स अपने उपर्युक्त सूत्र का प्रतिपादन कर स्वयं इस निष्कर्ष पर नहीं पहुँचे, तथापि गणित की सामान्य जानकारी रखने वाला व्यक्ति सहज में ही इस निष्कर्ष को निकाल सकता है।

अब प्रश्न यह है कि आशा को शून्य कैसे किया जाय ? आशा या तृष्णा मन की तरंगें हैं। विचलित मन में आशा एवं तृष्णा उत्पन्न होती हैं। तथा प्रशान्त मन आशा एवं तृष्णा से रहित हो जाता है। "आशा हि परमं दुःखम्" की उद्घोषणा करने वाले भारतीय मनीषियों ने मन को नियन्त्रित तथा उसमें उत्पन्न होने वाली तरंगों को समाप्त करने के दो साधन बतलाये हैं : १. अभ्यास तथा २. वैराग्य।

अभ्यास वह साधना है जिससे मनुष्य प्रतिकूल परिस्थिति में भी आनन्दपूर्वक जीने की कला प्राप्त कर लेता है। अभ्यास के कारण ही खनिज मजदूर हजारों मीटर गहरी खानों में आनन्दपूर्वक काम करते हैं। अभ्यास के कारण मछुए समुद्र की तरंगों से खेलते रहते हैं, तथा अभ्यास के कारण ही वायुसैनिक चारों ओर से शत्रुओं से घिर जाने पर भी शत्रुओं के ठिकानों पर हमला करते हैं। उनका प्राणान्त किसी भी क्षण हो सकता है, उनकी जिन्दगी तथा मौत में कुछ इंच का ही फासला होता है, किन्तु अभ्यास के कारण उनका मन कुछ ऐसा बन जाता है कि उन्हें अपना कार्य करते समय मृत्यु की निकटता या उसकी विभीषिका का बोध तक नहीं होता। इस प्रकार हम देखते हैं कि अभ्यास के द्वारा किसी भी परिस्थिति को आनन्दमय बनाया जा सकता है। कारण यह है कि अभ्यास के द्वारा मन हमारे पूर्ण नियन्त्रण में आ जाता है, और इस पर नियन्त्रण होते ही हम सब परिस्थितियों में अनन्त आनन्द का उपभोग कर सकते हैं।

साधना की सुगम रीति : मन्त्रयोग

मन को वश में लाने का अभ्यास अनेक प्रकार का होता है। इन अभ्यासों को ही साधना कहा जाता है। महर्षि पतञ्जलि ने मन को वश में करने के लिए या चित्त-

वृत्तियों का निरोध करने के लिए चार प्रकार की साधना बतलाई है जिनमें मन्त्रयोग प्रथम है।

मन्त्रयोग का सिद्धान्त यह है कि परमात्मा से भाव, भाव से नामरूप और उसका विकार एवं विलासमय यह संसार पैदा हुआ है। इसलिए जिस क्रम से इसकी सृष्टि हुई है उसके विपरीत क्रम से ही इसका लय होगा – यह निश्चित है। अर्थात परमात्मा से भाव और भाव से नामरूप द्वारा जब सृष्टि हुई है, जिससे समस्त जीव संसार बन्धन में आ गए हैं, तो इससे मुक्ति प्राप्त करने के लिए भी नामरूप का आश्रय लेकर नामरूप से भाव में तथा भाव से भावग्राही परमात्मा में चित्तवृत्ति को मिलाने (विलीन करने) पर ही मुक्ति होगी। इसलिए हमारे महर्षियों ने नाम एवं रूप का अवलम्बन लेकर ही साधना-विधि बतलायी है, इसी साधना-विधि को मन्त्रयोग कहते हैं।

योगशास्त्र में कहा गया है कि "सृष्टि के नाम-रूपात्मक होने के कारण ही साधक नाम एवं रूप का अवलम्बन कर सृष्टि के बन्धन से अतीत होकर मुक्तिपद प्राप्त कर सकता है। जिस भूमि पर मनुष्य गिरता है, उसी भूमि के अवलम्बन से वह पुनः उठ सकता है – यह बात प्रत्यक्ष देखी जाती है। नाम-रूपात्मक विषय जीव को बन्धनयुक्त करते हैं, नाम-रूपात्मक प्रकृति वैभव से जीव अविद्याग्रस्त रहते हैं। अतः अपनी अपनी प्रकृति तथा प्रवृत्ति के अनुसार नाममय शब्द एवं भावमय रूप का अवलम्बन कर इस साधना से व्यक्ति अपना अभीष्ट प्राप्त कर सकता है।[1]

मन्त्रयोग के १६ अंग

मन्त्रयोग का विस्तार तथा इसकी महिमा सबसे अधिक है। हिन्दू धर्म में मूर्तिपूजा, यन्त्रपूजा, पीठपूजा एवं तान्त्रिक साधना मन्त्रयोग के अनुसार ही होती है। इस मन्त्रयोगमयी साधना के मुख्यतया १६ अङ्ग माने गये हैं, यथा :

भवन्ति मन्त्रयोगस्य षोडशाङ्गानि निश्चितम्। यथा सुधांशोर्जायन्ते कला षोडशशोभना॥

---

[1] नामरूपात्मिका सृष्टिर्यस्मात्तदवलम्बनात्।
बन्धनान्मुच्यमानोऽयं मुक्तिप्राप्नोति साधकः॥
तामेव भूमिमालम्ब्य स्खलनं यत्र जायते।
उत्तिष्ठति जनः सर्वोऽध्यक्षेणैतत्समीक्ष्यते॥
नामरूपात्मकैर्भावैर्बध्यन्ते निखिला जना।
अविद्याग्रसिताश्चैव तादृक प्रकृति वै भवत्॥
आत्मनः सूक्ष्म प्रकृतिं प्रवृत्तिं चानुसृत्य वै।
नामरूपात्मनो शब्द भावयोरवलम्बनात्॥

भक्ति शुद्धिश्चासनं च पञ्चाङ्गस्यापि सेवनम् । आचारधारणे दिव्यदेशसेवनमित्यपि ॥
प्राणक्रिया तथा मुद्रा तर्पणं हवनं बलिः । यागो जपस्तथा ध्यानं समाधिश्चेति षोडश: ॥

"चन्द्रमा की सोलह कलाओं के समान मन्त्रयोग के भी १६ अङ्ग होते हैं। ये अङ्ग इस प्रकार हैं : १. भक्ति, २. शुद्धि, ३. आसन, ४. पञ्चाङ्गसेवन, ५. आचार, ६. धारणा, ७. दिव्यदेश सेवन, ८. प्राणक्रिया, ९. मुद्रा, १०. तर्पण, ११. हवन, १२. बलि, १३ याग, १४. जप, १५. ध्यान एवं १६. समाधि।

१. भक्ति : इष्टदेव में परम अनुराग या परम प्रेम को भक्ति कहते हैं ('देवे परो-ऽनुरागस्तु भक्तिः सम्प्रोच्यते बुधैः —मन्त्रयोग संहिता।' 'सा त्वस्मिन् परम प्रेमरूपा' । —भक्तिसूत्र)। भक्ति तीन प्रकार की होती है : १. वैधी भक्ति, २. रागात्मिका भक्ति एवं ३. परा भक्ति। विधि एवं निषेध द्वारा निर्णीत धीर साधकों के द्वारा अपनायी गयी भक्ति वैधी कहलाती है। जिस भक्ति के रस का आस्वादन कर साधक भाव-सागर में डूब जाता है, उसे रागात्मिका भक्ति कहते हैं। परम आनन्ददायक भक्ति को परा भक्ति कहते हैं, यथा :

विधिना या विनिर्णीता निषेधेन तथा पुनः। साध्यमाना च या धीरैः सा वैधीभक्तिरुच्यते ॥
यथास्वाद्य रसान्मत्स्यो नरो भज्जति साधकः। रागात्मिका सा कथिता भक्ति योगविशारदैः ॥
परानन्ददा सा भक्ति पराभक्तिर्मता बुधैः ॥

तात्पर्य यह है कि इष्टदेव के प्रति भाव या अनुराग उत्पन्न होने से पहले केवल शास्त्र की आज्ञा मान कर जो भजन में प्रवृत्ति होती है उसका नाम वैधीभक्ति है। जब तक भाव की उत्पत्ति नहीं होती तब तक वैधी भक्ति रहती है, तथा देव के प्रति भाव उत्पन्न होते ही यह रागात्मिका भक्ति कहलाती है। यह रागात्मिका भक्ति दो प्रकार की होती है : १. कामरूपा एवं २. सम्बन्धरूपा। जिस भक्ति की प्रत्येक चेष्टा केवल अपने आराध्यदेव के सुख के लिए होती है, अर्थात् जिसमें काम प्रेमरूप में परिणत हो गया हो उसी को कामरूपा रागात्मिका भक्ति कहते हैं। और जिस भक्ति में 'मैं अपने आराध्यदेव का पुत्र, प्रियतम या प्रियतमा हूँ' इस प्रकार की बुद्धि हो उसे सम्बन्धरूपा रागात्मिका भक्ति कहते हैं।

कुछ आचार्यों ने रागात्मिका भक्ति से रागानुगा भक्ति की उत्पत्ति मानी है। उनके मतानुसार रागात्मिका भक्ति को जो अनुगता भक्ति है उसे रागानुगा भक्ति कहते हैं। इस रागानुगा भक्ति में स्मरण-अङ्ग की प्रधानता है।

रागानुगा भक्ति भी दो प्रकार की होती है : १. कामानुगा और २. सम्बन्धा-नुगा। कामरूपा रागात्मिका भक्ति की अनुगामिनी तृष्णा का नाम कामानुगा भक्ति है। कामानुगा भक्ति दो प्रकार की होती है : १. सम्भोगेच्छामयी और २. तत्तद्भावे-

च्छामयी। केवल सम्बन्धी अभिलाषा से युक्त भक्ति का नाम सम्भोगेच्छामयी तथा भाव एवं माधुर्य की प्राप्ति विषयक वासनामयी भक्ति का नाम तत्तद्भावेच्छामयी है। सम्बन्धानुगा भक्ति में इष्टदेव के साथ पुत्रत्व, प्रियतमत्व, प्रियतमात्व, भ्रातृत्व, पितृत्व आदि सम्बन्धों का मात्र चिन्तन ही नहीं होता, अपितु साधक के ऊपर ये भाव आरोपित हो जाते हैं। इस प्रकार रागात्मिका भक्ति में इष्टदेव के प्रति भाव एवं राग स्थिरता प्राप्त कर लेते हैं।

इष्टदेव के प्रति यह राग पुष्ट होकर जब अनुराग या परमप्रेम के रूप में परिणत हो जाता है तब यही भक्ति परा भक्ति कहलाती है। भाव की परिपक्वावस्था का नाम प्रेम है। चित्त के सम्पूर्ण रूप से निर्मल तथा अपने इष्टदेव में अतिशय ममता होने पर ही प्रेम का उदय होता है। किसी भी तरह के विघ्न के द्वारा जरा सा भी न घटना, न बदलना या विचलित न होना ही प्रेम का चिह्न है।

प्रेम दो प्रकार का होता है : १. महिमाज्ञानयुक्त और २. केवल। विधि मार्ग से चलने वाले भक्त का प्रेम महिमाज्ञानयुक्त होता है तथा राग मार्ग पर चलने वाले भक्त का प्रेम केवल – अर्थात शुद्ध माधुर्यमय होता है। ममता की उत्तरोत्तर जितनी वृद्धि होती है, प्रेम की अवस्था भी उत्तरोत्तर वैसे ही बदलती जाती है। प्रेम की एक ऊँची स्थिति का नाम स्नेह है। स्नेह का चिह्न है चित्त का द्रवित होना। उससे ऊँची अवस्था का नाम राग है। राग का चिह्न है प्रगाढ़ स्नेह। उससे भी ऊँची अवस्था का नाम है प्रणय। प्रणय का चिह्न है प्रगाढ़ विश्वास। इस प्रकार जब भक्त का अपने इष्टदेव के प्रति भाव परिपक्व होकर ममत्व, स्नेह, अनुराग या प्रणय के रूप में परिणत हो जाता है तो उस भक्ति को परा भक्ति या प्रेम भक्ति कहते हैं।

२. शुद्धि : अत्यन्त निर्मलता को शुद्धि कहते हैं। मन्त्र साधना में ४ प्रकार की शुद्धियों[1] पर बल दिया गया है : १. काय-शुद्धि, २. चित्त-शुद्धि, ३. दिक्-शुद्धि, एवं ४. स्थान-शुद्धि। कायशुद्धि को बाह्य शुद्धि तथा चित्तशुद्धि को अन्तः शुद्धि भी कहते हैं।

(i) कायशुद्धि : स्नान के द्वारा शरीर शुद्ध होता है। मल के प्रक्षालन को स्नान कहते हैं। अतः स्नान करने से शरीर निर्मल हो जाता है। यह स्नान ७ प्रकार का होता है : १. मान्त्र, २. भौम, ३. आग्नेय, ४. वायव्य, ५. दिव्य, ६. वारुण, एवं ७. मानस।

---

[1] (i) कायचित्तदिशास्थानभेदाच्छुद्धिश्चतुर्विधा।
(ii) स्थानशुद्धिश्च दिक्शुद्धिर्बाह्यशुद्धिस्तथैव च।
अन्तःशुद्धिरिति प्रोक्तास्ताश्चतस्रो यथाक्रमम्॥ –मन्त्रयोग संहिता।

'आपोहिष्ठा भुवः' इत्यादि मन्त्रों से मार्जन करने को मान्त्रस्नान कहते हैं। उबटन इत्यादि लगाकर रगड़ रगड़ कर नहाने को भौम स्नान कहते हैं। भस्म से स्नान करने को आग्नेय स्नान तथा गायों के खुरों से उड़ी हुई धूलि से स्नान करने को वायव्य स्नान कहते हैं। धूप या वर्षा से स्नान करने को दिव्य स्नान कहते हैं। जल में अवगाहन करने को वारुणस्नान तथा भगवान विष्णु का स्मरण मानस-स्नान है। उक्त रीतियों से स्नान करने पर काया शुद्ध हो जाती है।

(ii) चित्तशुद्धि : अभय, रागरहितता, ज्ञानयोग, दम, दान, यज्ञ, वेद एवं शास्त्रों का स्वाध्याय, तप, नम्रता, अहिंसा, सत्य, अक्रोध, त्याग, शान्ति, अपिशुनत्व, दया, सब जीवों पर अनुग्रह, मृदुता, अचपलत्व, तेज, क्षमा, धृति, शौच, अद्रोह, एवं अतिमानिता का अभाव – ये सब चित्त को शुद्ध करते हैं, यथा :

अभयं सत्त्वसंशुद्धिर्ज्ञानयोगव्यवस्थितः। दानं दमश्च यज्ञश्च स्वाध्यायस्तप आर्जवम्॥
अहिंसासत्यमक्रोधस्त्यागः शान्तिरपैशुनम्। दया भूतेष्वगृध्नुत्वं मार्दवं ह्रीरचापलम्॥
तेजः क्षमा धृतिः शौचमद्रोहोनातिमानिता। भवन्तिसम्पदो दैव्यश्चित्तनैर्मल्यकारणम्॥

(iii) दिक्शुद्धि : दिक्शुद्धि के द्वारा साधक का मन वश में होता है तथा उसकी साधना में सिद्धि मिलती है। अतः प्रयत्नपूर्वक दिक्शुद्धि करनी चाहिये।[1]

दिन में पूर्वाभिमुख होकर तथा रात्रि में उत्तराभिमुख होकर विधिवत जप एवं देवपूजन करना चाहिए। काम्य प्रयोगों में बतलायी गयी तत्तद् दिशा की ओर मुँह करके जप आदि करना चाहिए – इसे दिक्शुद्धि कहते हैं।

३. *आसन* : मन्त्रसिद्धि के लिए रेशम, कम्बल, कुशा, बाघम्बर एवं मृगचर्म का आसन श्रेष्ठ होता है। काम्य प्रयोगों में कम्बल का – विशेषकर लाल कम्बल का आसन श्रेष्ठ होता है। कृष्णाजिन के आसन से ज्ञानसिद्धि, बाघम्बर से मोक्ष, कुशासन से दीर्घायु तथा रेशमी आसन से व्याधि का नाश होता है।

सकाम एवं निष्काम कर्मों के भेद से तथा कामना के तारतम्य से आसन का निर्णय किया जाता है[2], यथा : शान्ति, वशीकरण, स्तम्भन, विद्वेषण, उच्चाटन एवं मारण आदि कर्मों में क्रमशः पद्मासन, स्वस्तिकासन, विकटासन, कुक्कुटासन, वज्रासन एवं भद्रासन लगाकर जप-पूजन आदि करना चाहिये (देखिये तरंग २५, श्लोक १५-१६)। निष्काम कर्मों में पद्मासन एवं स्वस्तिकासन उपयोगी माना गया है।

---

[1]दिक् शुद्धया साधकः सिद्धि साधने लभतेऽञ्जसा।
मनश्च वश्यतां यातीत्यतः कार्या प्रयत्नतः॥

[2]सकामाकामभेदेनोपासनायाश्च भेदतः। कामनातारतम्याच्च निर्णीतान्यासनानि वै।

शान्ति आदि षड्कर्मों में गाय, गैंडा, हाथी, सियार, भेड़ एवं भैंसा की खाल पर बैठकर, तथा अन्य काम्य प्रयोगों में रेशम, कुश एवं कम्बल के आसन पर बैठकर 'पृथिवी त्वया धृता०' मन्त्र से आसन का पूजन कर, प्रयोग के अनुसार 'पद्मासन' आदि लगाकर जप, पूजन एवं पुरश्चरण करना चाहिए।

४. *पञ्चाङ्ग-सेवन* : गीता, सहस्रनाम, स्तव, कवच एवं हृदय इन पाँचो को पञ्चाङ्ग कहते हैं। अपने अपने सम्प्रदाय की गीता का स्वाध्याय, मनन एवं चिन्तन करने से, सहस्रनाम का पाठ करने से तथा अपनी कल्पोक्त पद्धति अनुसार स्तोत्र, कवच एवं हृदय का पाठ करने से साधक पापरहित होकर सिद्धि प्राप्त करता है, यथा :

गीता सहस्रनामानि स्तवः कवचमेव च । हृदयं चेति पञ्चैते पञ्चाङ्गं प्रोच्यते बुधैः ॥
स्वोपासनानुसारेण गीतायाः पठनाद् ध्रुवम् । सहस्रनामाध्ययनात्स्वपद्धत्यनुसारतः ॥
स्तोत्रस्य कवचस्यापि हृदयस्य च पाठतः । योगसिद्धिमवाप्नोति योगी विगतकल्मषः ॥

पञ्चदेवोपासना में श्रीमद्भगवद्गीता, गणेशगीता, भगवतीगीता, सूर्यगीता तथा शिवगीता – ये ५ गीताएँ मानी गयी हैं। तथा विष्णुसहस्रनाम, गणेशसहस्रनाम, दुर्गासहस्रनाम्, सूर्यसहस्रनाम तथा शिवसहस्रनाम – ये ५ सहस्रनाम हैं। साधक को इनका प्रतिदिन स्वाध्याय, पाठ एवं चिन्तन करना चाहिए। किन्तु इन पाँच देवताओं के स्तव, कवच एवं हृदय अनेक मिलते हैं। उनमें जो स्तव आदि अपने सम्प्रदाय में प्रचलित तथा गुरु के द्वारा उपासना भेद के अनुसार निर्दिष्ट हों साधक को (कल्पोक्त पद्धति के अनुसार) उनका प्रतिदिन पाठ करना चाहिए।

५. *आचार* : मन्त्रसाधना में मुख्य रूप से तीन प्रकार के आचार माने गए हैं : १. वामाचार, २. दक्षिणाचार तथा ३. दिव्याचार।

वाम एवं दक्षिण आचार परस्पर एक दूसरे से भिन्न होते हुए भी एक ही लक्ष्य पर ले जाते हैं। इनमें भेद यह है कि वामाचार प्रवृत्तिमूलक तथा दक्षिणाचार निवृत्ति-मूलक है। प्रवृत्ति से निवृत्ति की ओर ले जाने वाले आचार को दिव्याचार कहते हैं। प्रवृत्ति तो जीव मात्र का सहज गुण है, किन्तु निवृत्ति महाफलदायक होती है। यह दिव्याचार उक्त दोनों आचारों के अविरुद्ध तथा सब जीवों के लिए हितकर है।

साधक को अपने गुरु की आज्ञानुसार आचार का निर्धारण करना चाहिए, तथा गुरु को शिष्य की प्रकृति, अभिरुचि एवं शक्ति का विचार कर काम्य एवं निष्काम उपासना के भेद पर ध्यान देकर आचार का उपदेश देना चाहिए।

६. *धारणा* : श्रद्धा एवं योग दोनों का विधिवत अभ्यास होने से धारणा की सिद्धि हो जाती है। यह धारणा मन्त्रसाधना में सर्वाधिक सहायक होती है। बाह्य एवं आभ्यान्तर भेद से धारणा दो प्रकार की होती है। बाह्य वस्तुओं के साथ

मनोयोग होने से बहिर्धारणा एवं अन्तर्जगत के सूक्ष्म द्रव्यों के साथ मनोयोग होने से अन्तर्धारणा बनती है। धारणा की सिद्धि हो जाने पर मन्त्रसाधना में तत्पर साधक को ध्यानसिद्धि एवं मन्त्रसिद्धि मिल जाती है। धारणा की सिद्धि से भक्ति, आचार, जपसिद्धि, प्राणसंयम, इष्टदेव का साक्षात्कार, दिव्यदेशों में देवशक्ति का विकास तथा इष्टदेव का दर्शन – ये सब प्राप्त होते हैं, यथा :

धारणासिद्धिमासाद्यसिद्धिं वै ध्यानमन्त्रयोः। प्राप्नोतिसाधको नित्यं मन्त्रयोगपरायणः॥
भक्तिर्जपस्य संसिद्धिराचारः प्राणसंयमः। साक्षात्कारो देवताया दिव्यदेशेषु निश्चयः॥
देवशक्तिविकासो वै हीष्टदर्शनमेव च। लभ्यन्ते धारणासिद्धया सर्वमीति विनिश्चयः॥

अतः धारणासिद्धि की स्थूल एवं सूक्ष्म सभी प्रक्रियाओं को योगमर्मज्ञ गुरु से विधिवत सीख कर मन्त्र-साधना करनी चाहिए।

७. *दिव्यदेश सेवन* : वह्नि, अम्बु, लिङ्ग, स्थण्डिल, कुण्ड, पट, मण्डल, विशिखा, नित्ययन्त्र, भावयन्त्र, पीठ, विग्रह, विभूति, नाभि, हृदय एवं मूर्धा – इन १६ को दिव्यदेश कहा गया है।[१] साधक को अपने अधिकार के अनुसार दिव्यदेश में पूजा एवं उपासना करनी चाहिए। ये दिव्यदेश मन्त्रसाधना में सिद्धिदायक माने गये है।

धारणा की सहायता से दिव्यदेश में इष्टदेव का साक्षात्कार होता है। अतः मन्त्र-साधना में दिव्यदेश सिद्धिदायक माना गया है, यथा :

धारणा सहकारेण दिव्यदेशे प्रकाशते। इष्टदेवो मन्त्रयोगे दिव्यदेशो हितप्रदः॥

जिस प्रकार गाय के पूरे शरीर में रहने वाला दूध केवल उसके थनों से ही निकलता है, उसी प्रकार सर्वव्यापी परमात्मा भी दिव्यदेश में अपना सूक्ष्म रूप छोड़ कर साधक के सामने प्रकट होता है।

८. *प्राणक्रिया* : मन, प्राण एवं वायु में अभेद सम्बन्ध माना गया है, तथा वायु एवं प्राण में कार्य-कारण सम्बन्ध होता है। इसलिए प्राणायामपूर्वक न्यासों को करना चाहिए।

मन्त्रसाधना में प्राणायाम अत्यन्त उपयोगी होता है। कुछ आचार्यों का मत है कि साधक को सहज प्राणायाम का अभ्यास करना चाहिए।

प्रणव एवं व्याहृतियों के साथ ३ बार गायत्री मन्त्र का जप करते हुए पूरक,

---

[१] तन्त्रेषु दिव्यदेशाः षोडशा प्रोक्ता यथाऽत्र कथ्यन्ते।
अग्न्यम्बुलिङ्गवेद्यो भित्ती रेखा तथा च चित्रं च॥
मण्डलविशिखौ नित्ययन्त्रं पीठं च भावयन्त्रं च।
मूर्तिर्विभूतिनाभी हृदयं मूर्धा च षोडशैते स्युः॥

फिर गायत्री मन्त्र के ३ बार जप से कुम्भक एवं रेचक करना चाहिए। कुछ आचार्यों का मत है कि पूरक, कुम्भक एवं रेचक की सन्धियों में भी ३-३ बार गायत्री मन्त्र का जप करना चाहिए।

योग एवं तन्त्र शास्त्र में प्राणायाम के अनेक भेद प्रचलित हैं उनमें से साधक को अपने सम्प्रदाय एवं गुरु परम्परा के अनुसार प्रचलित प्राणायाम का अभ्यास कर लेना चाहिए।

यद्यपि तन्त्र शास्त्र में असंख्य न्यासों का वर्णन किया गया है, किन्तु उनमें ७ न्यास प्रधान होते हैं। साधक को ये न्यास अपने गुरु से सीखा लेना चाहिए।

साधारण उपासना में केवल करन्यास एवं अङ्गन्यास ही करने चाहिए। और विस्तृत पूजन या पुरश्चरण आदि में इनके अलावा ऋष्यादिन्यास, अन्तर्मातृका न्यास, बहिर्मातृकान्यास, वर्णन्यास एवं पीठन्यासों को भी करना चाहिए।

९. मुद्रा : 'मोदनात् सर्वदेवानां द्रावणात् पापसन्ततेः।
तस्मान्मुद्रेति विख्यातः मुनिभिस्तन्त्रवेदिभिः॥'

तन्त्र के रहस्यवेत्ता ऋषियों ने 'मुद्रा' शब्द का निर्वचन करते हुए कहा है कि मुद्रा शब्द का प्रथम अक्षर देवताओं की प्रसन्नता का तथा दूसरा अक्षर पापक्षय का सूचक होता है। इस प्रकार मुद्रा के प्रभाव से देवता प्रसन्न होते हैं तथा साधक पापरहित हो जाता है।

पूजन, जप, काम्यप्रयोग, स्नान, हवन, विशेषार्घ्य स्थापन एवं नैवेद्य निवेदन आदि के समय अपने कल्पग्रन्थों में बतलाये गये लक्षणों की मुद्राएँ बनाकर दिखलानी चाहिए।

आवाहन आदि की ९ मुद्राएँ, पूजन की गन्ध आदि मुद्राएँ, तथा षडङ्गन्यास की मुद्राओं का साधारणतया सभी मन्त्रों के जप-पूजनादि में प्रयोग करना चाहिए, तथा स्नान में अंकुश आदि मुद्राओं से तीर्थों का आवाहन करना चाहिए।

शान्ति, वशीकरण, स्तम्भन, विद्वेषण, उच्चाटन एवं मारण – इन काम्यप्रयोगों में क्रमशः पद्म, पाश, गदा, मुसल, वज्र एवं खड्ग मुद्रा का प्रयोग करना चाहिए।

हवन में मृगी मुद्रा, हंसी मुद्रा एवं सूकरीमुद्रा का उपयोग होता है। शान्तिक-पौष्टिक कर्मों के हवन में मृगीमुद्रा से, वशीकरण आदि में हंसी मुद्रा से तथा स्तम्भन, विद्वेषण, उच्चाटन एवं मारण में सूकरी मुद्रा से आहुतियाँ डालना चाहिए।

विशेषार्घ्य स्थापन एवं नैवेद्य संरक्षण की मुद्राएँ देवताओं के अनुसार भिन्न-भिन्न होती है। अतः इन दोनों कार्यों में अपने कल्पग्रन्थों में बतलायी गयी मुद्रा का उपयोग करना चाहिए।

देवताओं को कुछ मुद्राएँ विशेष प्रिय होती हैं, जिन्हें जप-पूजन के समय दिखाकर साधक देवता को प्रसन्न कर सकता है।

विष्णु की प्रिय मुद्राएँ : शंख, चक्र, गदा, पद्म, वेणु, श्रीवत्स, कौस्तुभ, वनमाला, ज्ञान, त्रिलव, गरूड़, नारसिंही, वाराही, हायग्रीवी, धनु, वाण, परशु जगन्मोहनिका एवं काम – ये १९ मुद्राएँ विष्णु को प्रिय हैं।

शिव की प्रिय मुद्राएँ : लिंग, योनि, त्रिशूल, माला, वर, मृग, अभय, खट्वाङ्ग, कपाल एवं डमरू – ये १० मुद्राएँ शिव को प्रिय होती हैं।

गणेश की प्रिय मुद्राएँ : दन्त, पाश, अंकुश, विघ्न, परशु, लड्डूक एवं बीजपूर – ये ७ मुद्राएँ गणेश जी को प्रिय होती हैं।

दुर्गा की प्रिय मुद्राएँ : पाश, अंकुश, वर, अभय, खड्ग, चर्म, धनुष, बाण तथा मौशली – ये ९ मुद्राएँ दुर्गा को प्रिय होती हैं।

श्यामा एवं शक्ति की प्रिय मुद्राएँ : मत्स्य, कूर्म एवं लेलिहा – ये ३ मुद्राएँ श्यामा एवं शक्ति को समान रूप से प्रिय हैं। श्यामा को मुण्डमुद्रा तथा शक्ति को महायोनिमुद्रा प्रिय होती है।

तारा की प्रिय मुद्राएँ : योनि, भूतिनी, बीज, दैत्यधूमिनी तथा लेलिहाना – ये ५ मुद्राएँ तारा को विशेष प्रिय होती हैं।

त्रिपुरा की प्रिय मुद्राएँ : संक्षोभ, द्रावण, आकर्षण, वश्य, उन्माद महांकुशा, खेचरी, बीज, योनि एवं त्रिखण्डा – ये १० मुद्राएँ त्रिपुरसुन्दरी को विशेष प्रिय होती हैं।

अन्य देवताओं की प्रिय मुद्राएँ : लक्ष्मी के पूजन में लक्ष्मीमुद्रा, सरस्वती के पूजन में अक्षमाला, वीणा, व्याख्या एवं पुस्तक मुद्रा, गोपाल के पूजन में वेणुमुद्रा, नृसिंह पूजन में नारसिंहीमुद्रा, वराह के पूजन में वाराहीमुद्रा, हयग्रीव के पूजन में हायग्रीवी मुद्रा, राम के पूजन में धनुष एवं बाणमुद्रा, परशुराम के पूजन में परशुमुद्रा, कृष्ण के आवाहन तथा ध्यान में जगन्मोहनमुद्रा तथा अग्नि के पूजन में सप्तजिह्वामुद्रा दिखलानी चाहिए।

अन्य उपयोगी मुद्राएँ : मन्त्र साधना में कुम्भमुद्रा से अभिषेक, पद्ममुद्रा से आसन-शुद्धि, कालकर्णीमुद्रा से विघ्नशान्ति, नाराचमुद्रा से वस्तुओं का पवित्रीकरण, गालिनी-मुद्रा से जलशोधन तथा अंकुशमुद्रा से तीर्थों का आवाहन करना चाहिए।

तन्त्रोक्त पंचमकार में मुद्रा सबसे श्रेष्ठ है। मुद्रा में आसन, प्राणायाम, धारणा एवं ध्यान आदि सभी क्रियाओं का सम्मिश्रण है। मन्त्रसाधना में उपयोगी उक्त मुद्राओं के अलावा तन्त्रग्रन्थों में ऐसी अनेक मुद्राओं का वर्णन एवं विवेचन किया गया है,

जिनकी सहायता से जीव सर्वशक्तिमान् होकर शिव की पदवी प्राप्त कर लेता है[1]।

१०. तर्पण : तर्पण करने से देवता शीघ्र सन्तुष्ट एवं प्रसन्न होता है। अतः उसे सन्तुष्ट करने की विधि को तर्पण कहते हैं। यह तर्पण सकाम एवं निष्काम भेद से दो प्रकार का होता है। सकाम-तर्पण में तत्तद् द्रव्यों से तथा निष्काम-तर्पण में केवल जल से तर्पण किया जाता है। देवता को प्रसन्न करने का प्रधानतम साधन होने के कारण तर्पण मन्त्रसाधना का मुख्यतम अंग माना गया है।

मधु से तर्पण करने से सब कामनाएँ पूरी होती हैं, मन्त्र सिद्ध होते हैं तथा महापातक भी नष्ट हो जाते हैं। कपूर मिला कर जल से तर्पण करने पर राजा तथा हल्दी मिश्रित जल से तर्पण करने पर सामान्य व्यक्ति वश में हो जाता है। घी के तर्पण से दीर्घायु, दूध के तर्पण से आरोग्य, अगर मिश्रित जल के तर्पण से सुख, नारियल के जल के तर्पण से सर्वार्थसिद्धि, मिर्च मिलाकर जल के तर्पण से शत्रुओं का नाश तथा कवोष्ण (गुनगुने) जल के तर्पण से शत्रुओं का उच्चाटन हो जाता है।

साधक को स्नान, पूजन एवं हवन के समय प्रतिदिन तर्पण करना चाहिए। तर्पण करते समय देव, ऋषि, पितर, इष्टदेव एवं उसके आवरण देवताओं का कल्पोक्तरीति से तर्पण करना चाहिए।

११. हवन : जप के बिना मन्त्र सिद्ध नहीं होता तथा हवन के बिना वह फल नहीं देता[2]। अतः अभीष्ट फल की प्राप्ति हेतु साधक को श्रद्धापूर्वक हवन करना चाहिए। काम्य एवं निष्काम दोनों प्रकार के प्रयोगों में हवन किया जाता है। काम्य प्रयोगों में तत्तद् द्रव्यों से तथा निष्काम प्रयोगों में यथा उपलब्ध द्रव्यों से हवन किया जाता है।

काम्य प्रयोगों में अग्नि, समिधा, कुण्ड, दिशा एवं हवन द्रव्यों का यथावत् होना अनिवार्य है, अन्यथा अनिष्ट फल मिलता है। शान्ति एवं वश्य में लौकिक अग्नि में, स्तम्भन में वटवृक्ष के काष्ठ में मन्थन से उत्पन्न अग्नि में, विद्वेषण में बहेड़े की लकड़ी से उत्पन्न अग्नि में तथा उच्चाटन एवं मारण में श्मशान (चिता) की अग्नि में हवन करना चाहिए। शुभ कार्यों में बेल, आक, ढाक एवं दूध वाले वृक्षों की समिधा से, तथा अशुभ कार्यों में कुचिला, बहेड़ा, नीबू एवं धतूरा आदि की समिधाओं से अग्नि को प्रज्वलित करना चाहिए। शान्ति आदि षड्कर्मों में अग्नि की क्रमशः

---

[1] इस विषय की विस्तृत जानकारी के लिए घेरण्ड संहिता, शिव संहिता, दत्तात्रेय संहिता एवं ग्रहयामल आदि ग्रन्थों का अवलोकन करें।

[2] नो सिद्धयत्यजपान्मन्त्रो नाहुतश्चफलप्रदः। —मन्त्रयोग संहिता।

सुप्रभा, रक्ता, हिरण्या, गगना, अतिरिक्तका एवं कृष्णा नामक जिह्वा का पूजन किया जाता है। शान्ति में पश्चिम दिशा मे वृत्ताकार, वशीकरण मे उत्तर दिशा में पद्माकार, स्तम्भन में पूर्व दिशा में चतुर्भुजाकार, विद्वेषण में नैऋत्य कोण में त्रिभुजाकार, उच्चाटन में वायव्य कोण में षट्कोणाकार तथा मारण में दक्षिण दिशा में अर्धचन्द्राकार कुण्ड या स्थण्डिल बनाना चाहिए।

पूजन एवं बलि देने के बाद साधक को हवन करना चाहिए। अग्न्यौदक से कुण्ड या स्थण्डिल का प्रोक्षण कर उस पर ३ रेखाएँ लिखनी चाहिए। फिर विधिवत् अग्नि लाकर 'क्रव्यादेभ्यो नमः' तथा मूलमन्त्र बोलकर अग्नि को स्थापित करना चाहिए। तदनन्तर स्वाहान्त व्याहृतियों से ३ आहुतियाँ देकर षडङ्ग होम करना चाहिए। फिर अग्नि में इष्टदेवता का आवाहन कर मूलमन्त्र से विधिवत हवन करना चाहिए।

१२. बलि : देवता के लिए द्रव्य का समर्पण बलिदान कहलाता है। बलिदान करने से विघ्नों की शान्ति होती है तथा साधक निरापद होकर साध्य या सिद्धि को प्राप्त करता है। अतः अन्तर्याग एवं बहिर्याग दोनों में ही बलि की अनिवार्यता मानी गयी है।

अन्तर्याग में आत्मबलि को सर्वश्रेष्ठ मानते हैं। इसके करने से साधक का अहंकार नष्ट हो जाता है और फिर वह अपने उद्देश्य में सफल हो जाता है। बलिदानों में काम, क्रोध आदि शत्रुओं की बलि देना दूसरे स्थान पर माना गया है।

बहिर्याग में अपने इष्टदेव का पूजन करने के बाद बलि-द्रव्यों से बलिदान देना चाहिए। तन्त्र के विभिन्न सम्प्रदायों में अन्न, फल, फूल, धूप, दीप एवं यज्ञपशु आदि बलि देने की भिन्न-भिन्न परम्पराएँ प्रचलित हैं। बलि-द्रव्य का निर्णय देवता के स्वभाव एवं उसकी रुचि के अनुसार तथा कामना के भेद एवं तारतम्य के अनुसार करना चाहिए। दक्षिणाचार में हिंसा निषिद्ध होने के कारण पशुओं की बलि वर्जित है।

इष्टदेव को बलि देने के बाद अवशिष्टद्रव्य से अन्य देवताओं को बलि देनी चाहिए। घर के भीतर ब्रह्मा तथा विश्वेदेवताओं तथा पूर्वोत्तर में धन्वन्तरि को बलि दी जाती है। इन्द्र आदि देवताओं को उनकी दिशाओं में, गणेश, क्षेत्रपाल, बटुक एवं योगिनियों को यन्त्र के द्वारों पर, धाता एवं विधाता को पूजागृह के द्वार पर, अर्यमा एवं ग्रहों को चारों ओर, निशाचरों को आकाश मे तथा पितरों को दक्षिण में बलि देनी चाहिए। इस प्रकार साधक को आचमन करने के बाद एकाग्रचित्त होकर हाथ में जल लेकर तत्तद् स्थानों पर तत्तद् देवताओं को बलि देनी चाहिए।

१३. याग : इष्टदेव के पूजन को याग कहते हैं। यह दो प्रकार का होता है—

१. अन्तर्याग तथा बहिर्याग। अन्तर्याग में अपने देहमयपीठ पर पीठदेवता, पीठशक्तियों एवं आवरण देवताओं के साथ मानसोपचारों से इष्टदेव का पूजन किया जाता है। फिर आधार चक्र से सोती हुई कुण्डलिनी को जगाकर ब्रह्मरन्ध्र में विद्यमान परमशिव के पास ले जाकर वहाँ से टपकने वाली अमृत धाराओं से इष्टदेव को तृप्त कर मन्त्रार्थ की भावना के साथ जप किया जाता है। सभी प्रकार के पूजनों में अन्तर्याग की महिमा सर्वोपरि है। इसके लिए देश, काल एवं शरीर की शुद्धि आवश्यक नहीं है, तथा इसे सदैव कर सकते हैं।[1] अन्तर्याग की सिद्धि से जप सिद्धि, उससे ध्यान सिद्धि, उससे समाधि सिद्धि और उससे देव का साक्षात्कार होता है, यथा–

याग सिद्धया जपः सिद्धो ध्यानसिद्धस्ततः परम्।
ततः समाधिसिद्धिः स्यादेतया देवदर्शनम्॥

पीठ, विग्रह एवं यन्त्र आदि विधिवत पूजन करने को बहिर्याग कहते हैं। इष्टदेव को प्रसन्न करने के लिए भावों के साथ विविध उपचारों के समर्पण को पूजन कहते हैं। उपचार ३ प्रकार के होते हैं–दशोपचार, षोडशोपचार तथा पञ्चोपचार (अत्रोपचारास्त्रिविधा दशषोडशपञ्च च)।

१. पाद्य, २. अर्घ्य, ३. आचमनीय, ४. मधुपर्क, ५. स्नानीय, ६. गन्ध, ७. पुष्प, ८. धूप, ९. दीप एवं १० नैवेद्य–इन १० उपचारों को दशोपचार कहते हैं। १. आसन, २. स्वागत प्रश्न, ३. पाद्य, ४. अर्घ्य, ५. आचमनीय, ६. मधुपर्क, ७. आचमनीय, ८. स्नानीय, ९. वस्त्र, १०. अलंकार, ११. गन्ध, १२. पुष्प, १३. धूप, १४. दीप, १५. नैवेद्य, एवं १६. नमस्कार–इन १६ उपचारों को षोडशोपचार कहते हैं। १. गन्ध, २. पुष्प, ३. धूप, ४. दीप एवं, ५. नैवेद्य–ये पञ्चोपचार कहलाते हैं। तन्त्रशास्त्र के ग्रन्थों में कहीं-कहीं १८ उपचार तथा ६४ उपचारों का भी वर्णन मिलता है। साधक को अपनी शक्ति के अनुसार षोडशोपचार, दशोपचार एवं पञ्चोपचार आदि से भक्तिपूर्वक अपने इष्ट देव का पीठ देवताओं एवं आवरण देवताओं के साथ विधिवत पूजन करना चाहिए।

शास्त्रों में बहिर्याग के ५ उपकरण बतलाये गये हैं–१. अभिगमन, २. उपादान, ३. इज्या, ४. स्वाध्याय, एवं ५. योग। देवस्थान को साफ करना, लीपना, निर्माल्य

---

[1] अन्तर्यागस्य महिमा सर्वश्रेष्ठः प्रकीर्तितः।
नापेक्षिता देशशुद्धिर्नापि कालशरीरयोः॥
योगे जपे मानसे वै तथा कर्मणि निश्चितम्।
सर्वदा शक्यते कर्तुं मानसी निखिला क्रिया॥

हटाना आदि कार्यों को अभिगमन कहते हैं। पूजा के उपचारों का संग्रह करना उपादान कहलाता है। विविध उपचारों से इष्टदेव के पूजन को इज्या कहते हैं। मन्त्रार्थ की भावना के साथ जप करना, सूक्त, स्तोत्र आदि का पाठ करना या नाम, गुण एवं लीला का कीर्तन करना—यह सब स्वाध्याय कहलाता है। साधक, साधन एवं साध्य तीनों में अभेद बुद्धि रखने का योग कहते हैं।

गृहस्थ साधक को अन्तर्याग एवं बहिर्याग दोनों करने चाहिए। किन्तु ब्रह्मचारी, वानप्रस्थ एवं यति को केवल अन्तर्याग ही करना चाहिए, (देखिए—तरङ्ग २५, श्लोक २५)। काम्यप्रयोगों में भी अन्तर्याग एवं बहिर्याग दोनों को करना अनिवार्य बतलाया गया है। जबकि निष्काम प्रयोगों में स्वेच्छया कोई एक याग या दोनों याग कर सकता है।

१४. जप : मन्त्र की बार-बार आवृत्ति करने को जप कहते हैं। जप ३ प्रकार का होता है : १. मानसिक, २. उपांशु एवं ३. वाचिक। मन्त्रार्थ की भावना में तन्मय होकर अपने ही मन मन्त्र का उच्चारण करना मानसिक जप कहलाता है। मन्त्रार्थ एवं देवता में मन लगाकर जिह्वा एवं ओष्ठ को कुछ कम्पित करते हुए केवल अपने को ही सुनाई पड़ने योग्य मन्त्र का उच्चारण उपांशु जप कहलाता है। मन्त्रार्थ एवं देवता का ध्यान रखते हुए वाणी द्वारा मन्त्रोच्चारण करना वाचिक जप कहलाता है।

गौतमीय तन्त्र में कहा गया है कि जो व्यक्ति मन ही मन स्तोत्रपाठ तथा जोर २ से उच्चारण कहते हुए जप करता है, उसे कोई फल नहीं मिलता। काम्यप्रयोगों में केवल मारण में वाचिक जप फलदायक माना गया है। अन्य समस्त प्रयोगों में मानसिक या उपांशु जप करना चाहिए।

पाद्मनारदीय में लिखा है कि वाचिक जप का फल यज्ञतुल्य होता है। इसकी अपेक्षा उपांशु जप सौ गुना तथा उसकी अपेक्षा मानसिक जप हजार गुना अधिक फलदायी होता है। यहाँ यह भी स्पष्ट किया गया है कि सिद्धि के लिए मानसिक जप, पुष्टि के लिए उपांशु जप तथा मारण आदि क्रूर कर्मों के लिए वाचिक जप करना चाहिए।

मन को विषयों से हटाकर मन्त्रार्थ के भाव में तन्मय होकर, न तो बहुत जल्दी-जल्दी और न ही बहुत धीरे-धीरे अपितु मन्त्र को मन्त्र से मिलाकर मोती की माला की तरह जप करना चाहिए। मन्त्र का अर्थ, मन्त्रचैतन्य तथा योनिमुद्रा को न जानने वाले व्यक्ति को शतकोटि जप करने पर भी सिद्धि नहीं मिलती। जल्दी-जल्दी जप करने से व्याधि तथा धीरे-धीरे जप करने से सम्पत्ति का नाश होता है। अक्षर से अक्षर को तथा मन्त्र से मन्त्र को मोतियों के हार की तरह मिलाकर जप करना चाहिए।

सुप्त बीजमन्त्र कभी सिद्धि नहीं देता। किन्तु यदि उसे चैतन्य कर लिया जाय तो

उसके जप से सब सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं। चैतन्य किये बिना मन्त्र का जप करना वर्णों की बार-बार आवृत्ति करने के समान निष्फल होता है। अतः जप करने के पहिले मन्त्र को चैतन्य कर लेना चाहिए।

मन्त्रानुष्ठान या पुरश्चरण में बिना आसन, चलते-फिरते, सोते समय, भोजन के समय, चिन्तित, क्रुद्ध, भ्रान्त या क्षुधार्त होने पर जप नहीं करना चाहिए। इसी प्रकार पैर फैलाकर उत्कटासन पर बैठ कर, यज्ञकाष्ठ, पत्थर या मिट्टी पर बैठ कर, खड़े-खड़े, शय्या या सवारी पर बैठ कर भी जप करना वर्जित माना गया है। श्यामा, तारा, धूमावती, प्रचण्ड चण्डिका आदि के जप में, वीरसाधन तथा वामाचार में जप-विषयक कुछ विशेष नियम होते हैं। इनकी जानकारी इनकी उपासना के प्रकरण में बतलायी गयी है। कुछ आचार्यों का मत है कि वाचिक एवं उपांशु जप में उक्त सभी नियमों का पालन करना चाहिए। किन्तु मानसिक जप में कोई नियम लागू नहीं होता। मानसिक जप सभी स्थानों पर, सभी अवस्थाओं में तथा सभी समय किया जा सकता है। इसमें शुद्धि-अशुद्धि का भी कोई विचार नहीं होता।

वैशम्पायन संहिता में लिखा है कि जप करते समय पतित व्यक्ति का दर्शन, प्रलाप सुनने, जँभाई या अपानवायु निकलने पर जप छोड़कर पुनः आचमन, प्राणायाम एवं अङ्गन्यास आदि करके जप शुरू करना चाहिए। जप के समय शूद्र, बिल्ली, मुर्गा, बगला, बन्दर या गधा दिखलाई देने पर आचमन तथा इनका स्पर्श हो जाने पर स्नान कर जप करना चाहिए।

जप के समय एक बार अन्य शब्द बोलने पर प्रणवपूर्वक, निष्ठुर शब्द कहने पर प्राणायाम कर, तथा अनेक बातें करने पर आचमन, प्राणायाम एवं अङ्गन्यास करके जप करना चाहिए।

मलमूत्र का वेग रोकते हुए, मैला या अपवित्र वस्त्र पहिनकर, या केश एवं मुख आदि को दुर्गन्ध युक्त रखते हुए जप करने से देवता साधक का अनिष्ट कर देता है। जपकाल मे आलस्य, निद्रा, जँभाई, भूख, थकान, चिन्ता, शोक, क्रोध, भय, घृणा तथा कुविचार पूर्णरूपेण वर्जित माने गये हैं।

देवता, गुरु एवं मन्त्र में ऐक्य-भाव रखते हुए, मन्त्रार्थ एवं देवता का ध्यान करते हुए एकाग्रमन से प्रतिदिन प्रातःकाल से मध्याह्न तक तुल्य संख्या में जप करना चाहिए। किसी दिन न्यून और किसी दिन अधिक जप करने से अनुष्ठान या पुरश्चरण में विघ्न पड़ता है। जब तक मन में एकाग्रता हो एवं चित्तवृत्तियाँ शान्त हों तब तक ही जप करना चाहिए। अशान्त मन से किया जाने वाला जप निष्फल होता है।

वरदातन्त्र में कहा गया है कि जप एक स्थान एवं एक समय पर मनोयोगपूर्वक

करना चाहिए। इन तीन बातों का पालन करने से साधक को अभीष्टसिद्धि मिल जाती है।

१५. ध्यान : मन्त्रसाधना में ध्यान भाव-प्रधान होता है। कारण यह है कि कारण ब्रह्म एवं कार्यब्रह्म दोनों ही भावमय होते हैं। कार्यब्रह्म को तो हम भावमय देखते ही हैं। किन्तु मन एवं वाणी से अगोचर कारणब्रह्म केवल भावगम्य होता है।

जिस प्रकार मन्त्र शब्द से सम्बन्ध होता है, उसी प्रकार शब्द अर्थ से, अर्थ भाव से और भाव रूप से सम्बद्ध होता है। इसीलिए प्रत्येक मन्त्र का एक विशेष अर्थ, भाव एवं रूप होने के कारण उसका ध्यान भी विशिष्ट होता है। यही कारण है कि मन्त्रशास्त्र में प्रत्येक मन्त्र के ध्यान का पृथक्-पृथक् वर्णन किया गया है। तात्पर्य यह है कि कार्यब्रह्म के नाम, रूप एवं भाव अनन्त होने के कारण मन्त्रयोग में अनन्त मन्त्र तथा ध्यानों का वर्णन किया गया है।

भेद एवं अभेद दोनों ही निष्ठाओं में या निराकार एवं साकार दोनों की ही उपासना में ध्यान सबसे आवश्यक एवं महत्त्वपूर्ण साधन है। ध्यान के अनेक प्रकारों में से साधक को अपनी रुचि, भावना एवं अधिकार के अनुसार इष्टदेव का ध्यान करना चाहिए। साधक का यह स्मरण रखना चाहिए कि एक ही परमात्मा के अनेक दिव्य प्रकाशमय स्वरूप हैं। उनमें से किसी एक का आश्रय लेकर उसके स्वरूप को समझकर परमात्मा को जाना जा सकता है। क्योंकि वास्तव में परमात्मा उससे अभिन्न ही है। भगवान् के परमभाव को समझकर उनके किसी भी रूप का ध्यान किया जाय, अन्त में प्राप्ति उस एक ही भगवान् की होगी, जो सर्वथा अचिन्त्यशक्ति, सर्वव्यापी, सृष्टिकर्ता, सर्वरूप, स्वप्रकाश, सर्वात्मा, सर्वद्रष्टा, सर्वोपरि, सर्वेश्वर, सर्वज्ञ, अज, अविनाशी, सर्वातीत, अचिन्त्यस्वरूप, सदसद्विलक्षण, एकमात्र परम एवं चरम सत्य है। अतएव साधक को इधर-उधर मन न भटका कर अपने इष्टदेव में समस्त श्रद्धा एवं भक्ति रखते हुए प्रारम्भ में मन्त्रार्थभाव से और आगे चलकर परमभाव से उन्हीं का ध्यान करना चाहिए।

मन्त्रयोग एवं तन्त्रशास्त्र के अनुसार विष्णु की उपासना में ७ प्रकार का, शक्ति की उपासना में २४ प्रकार का, शिव की उपासना में ५ प्रकार तथा सूर्य एवं गणपति की उपासना में २-२ प्रकार का ध्यान प्रमुख रूप से बतलाया गया है।

मन के द्वारा इष्टदेवता के स्वरूप को जानना ध्यान कहलाता है (ध्यानं इष्टस्वरूपस्य वेदनं मनसा खलु)। प्रारम्भ में मन, मन्त्र एवं देवता की पृथक्-पृथक् अनुभूति होती है। ध्यान के प्रभाव द्वारा इन तीनों में एकरूपता का बोध होता है।

१६. समाधि : जिस प्रकार लययोग की समाधि महालय तथा हठयोग की समाधि महाबोध मानी जाती है, उसी प्रकार मन्त्रयोग की समाधि को महाभाव कहते हैं।

मन, मन्त्र एवं देवता इन तीनों की जब तक पृथक्-पृथक् सत्ता रहती है। तब तक ध्यान का अधिकार रहता है। इन तीनों के एक भाव में मिलते ही समाधि प्रारम्भ होती है, जिससे महाभाव उत्पन्न होता है।

मन का मन्त्र में तथा मन्त्र का देवता में लय कर—इस रीति से त्रिपुटी का नाश कर साधक समाधि प्राप्त करता है। इस अवस्था में साधक को रोमांच, स्तब्धता तथा प्रेमाश्रु बहने लगते हैं। इस स्थिति में साधक कृतकृत्य हो जाता है तथा उसे मन्त्रयोग का अन्तिम फल महाभाव मिल जाता है। इस समाधि में साधक अपने अस्तित्व को भूल जाता है और वह स्वयं इष्टमय हो जाता है।

मन्त्रसाधन :

सिद्धि के लिए किया जाने वाला प्रयत्न साधना कहलाता है, तथा उसके उपयोगी उपकरणों को साधन कहते हैं। साधन के बिना साधना की ओर प्रवृत्त होना सम्भव ही नहीं है। अतः मन्त्रसाधना की जानकारी के साथ-साथ मन्त्रसाधन का सम्यक् ज्ञान भी परमावश्यक है।

साधन के बारे में एक और बात का भी ध्यान रखना चाहिए कि जब वह कर्ता के अनिष्ट की प्राप्ति में सहायक हो तभी उसे साधन कहा जा सकता है। अतः जो मन्त्र या क्रियाएँ कर्ता का अभीष्ट सिद्ध नहीं कर सकतीं या कर्ता का अनिष्ट करती हैं, उन्हें साधन नहीं कहते। यही कारण है कि मन्त्रशास्त्र में सर्वप्रथम यह विचार किया गया है कि कोई मन्त्र साधक का अभीष्ट सिद्ध करेगा या नहीं ? इस प्रकार मन्त्र का चुनाव कर उन जिन-जिन क्रियाओं के करने से अभीष्टफलदायक हो जाता है उन सभी का विचार किया जाता है।

मन्त्र एवं तन्त्र शास्त्र के ग्रन्थों में मन्त्र को साधन या अभीष्टफलदायक बनाने के लिए निम्नलिखित बातों पर विशेष ध्यान दिया गया है—

(i) सिद्धादि शोधन, (ii) मन्त्रार्थ, (iii) मन्त्रचैतन्य, (iv) मन्त्रों की कुल्लुका, (v) मन्त्र सेतु, (vi) महासेतु, (vii) निर्वाण, (viii) मुखशोधन, (ix) प्राणयोग, (x) दीपनी, (xi) मन्त्र के सूतक, (xii) मन्त्र के दोष तथा दोष निवृत्ति के उपाय।

उक्त १२ बातों की विधिवत जानकारी एवं उनका सम्यक् उपयोग करने से मन्त्र साधन बन कर अभीष्ट सिद्धि देता है, अन्यथा मन्त्र साधक का सबसे बड़ा शत्रु हो जाता है, और वह साधक का नाश भी कर देता है।[1]

(i) *सिद्धादि शोधन* : किस मन्त्र के द्वारा साधक को सिद्धि मिलेगी ? कौन सा मन्त्र त्याज्य है ? तथा किस मन्त्र की साधना निष्फल हो सकती है ? इत्यादि प्रश्नों

---

[1] साधकं नाशयेन्मन्त्रः नास्ति मन्त्रसमो रिपुः। —योगिनीहृदयतन्त्र।

का विचार करने के लिए मन्त्रशास्त्र के आचार्यों ने मन्त्रशोधन की विधि बतलायी है।

मन्त्रशोधन में कुलाकुलविचार. सिद्ध, साध्य, सुसिद्ध एवं शत्रु विचार तथा ऋणी–धनी विचार किया जाता है। कुलाकुलचक्र, अकडमचक्र, अकथहचक्र, राशिचक्र, नक्षत्रचक्र एवं ऋणी-धनी चक्रों के आधार पर साधक के लिए सिद्धिदायक मन्त्र का चुनाव किया जाता है। इस प्रक्रिया को सिद्धादिशोधन कहते हैं। (विस्तृत जानकारी के लिए देखिए तरङ्ग २४)

(ii) *मन्त्रार्थ* : मन्त्र साधारण शब्द मात्र नहीं है। वह इष्टदेव से अभिन्न होते हुए भी उसके स्वरूप का बोध करता है। मन्त्र जिस अर्थ या लक्ष्य का संकेत करता है, साधक को उसकी जानकारी हो जाय तो साधना में सुविधा रहती है और वह लक्ष्य-भ्रष्ट नहीं होता। मन्त्र शब्द का धातुगत अर्थ गुप्तभाषा है। किन्तु साधक के लिए वह गुप्त नहीं अपितु सुस्पष्ट होना चाहिए। मन्त्रयोग में मन्त्रार्थ की भावना को ही जप कहा गया है, और जप के प्रभाव से ही सिद्धि होती है। अतः सिद्धि के लिए मन्त्रार्थ की जानकारी आवश्यक है।

पाठकों की जानकारी के लिए यहाँ कुछ प्रसिद्ध बीजमन्त्रों के अर्थ बतलाये जाते हैं :

ह्रीं : ह = शिव, र = प्रकृति, ई = महामाया, नाद = विश्वमाता और बिन्दु = दुःखहरण। इस प्रकार इस शक्ति बीज या माया बीज का अर्थ होता है–शिवसहित विश्वमाता शक्ति मेरे दुःखों को दूर करें।

ऐं : ऐ = सरस्वती और बिन्दु = दुःखहरण। इस प्रकार इस वाग्भवबीज का अर्थ है – सरस्वती मेरे दुःखों को नष्ट करें।

क्लीं : क = कृष्ण, काम या काली, ल = इन्द्र (लोकपाल), ई = महामाया या तुष्टि, और बिन्दु = सुखकर। इस प्रकार इस कृष्णबीज या कामबीज के अर्थ होते हैं : (i) मन्मथमन्मथ भगवान् कृष्ण मुझे सुख व शान्ति दें। (ii) लोकनायिका महाकाली मुझे सुख व शान्ति दे।

श्रीं : श = महालक्ष्मी, र = धनसम्पत्ति, ई = तुष्टि, नाद = विश्वमाता, बिन्दु = दुःखहरण। इस प्रकार श्री बीज या लक्ष्मी बीज का अर्थ होता है – धनसम्पत्ति एवं तुष्टि-पुष्टि की अधिष्ठात्री महालक्ष्मी मेरे दुःखों को दूर करें।

दूं : द = दुर्गा, ऊ = रक्षा, बिन्दु = दुःखहरण। इस दुर्गाबीज का अर्थ है – माँ दुर्गा मेरी रक्षा करें तथा मेरे दुःख दूर करें।

ह्रीं : स = दुर्गोत्तारण, त = तारक, र = मुक्ति, ई = महामाया, नाद= विश्वमाता, एवं बिन्दु = दुःखहरण। इस प्रकार इस बधूबीज का अर्थ है – तारिणी, विश्वमाता भगवती महामाया मेरे दुःखों को दूर करें।

हौं : ह = शिव, औ = सदाशिव एवं बिन्दु = दुःखहरण। इस प्रासादबीज का अर्थ है – शिव एवं सदाशिव के प्रसाद से मेरे दुःख नष्ट हों।

हूं : ह = शिव, ऊ = भैरव, नाद = लोकनायक, बिन्दु = दुःखहरण। इस वर्म-बीज या कूर्चबीज का अर्थ है – भीषण नाद करने वाले लोकनायक शिव मेरे दुःखों को दूर करें।

क्रीं : क = काली, र = ब्रह्म, ई = महामाया, नाद = लोकनायिका, एवं बिन्दु = दुःखहरण। इस कालीबीज या कर्पूरबीज का अर्थ है – ब्रह्मशक्तिस्वरूपिणी, लोक-नायिका महाकाली मेरे दुःखों को नष्ट करें।

गं : ग = गणेश एवं बिन्दु = दुःखहरण। इस गणेश-बीज का अर्थ है – भगवान् गणपति मेरे दुःखों को दूर करें।

ग्लौं : ग = गणेश, ल = व्यापक, औ = तेज, एवं बिन्दु = दुःखहरण। इस गणेश बीज का अर्थ है – परम व्यापक एवं ज्योतिर्मय भगवान् गणपति मेरे दुःखों को दूर करें।

क्ष्रौं : क्ष = नृसिंह, र = ब्रह्म, औ = ऊर्ध्वदन्त, तथा बिन्दु = दुःखहरण। इस नृसिंह बीज का अर्थ है – ब्रह्मस्वरूप, ऊर्ध्वदन्त भगवान् नृसिंह मेरे दुःखों को नष्ट करें।

इसी प्रकार अन्य बीजों एवं मन्त्रों के अर्थ दीक्षा के समय गुरुदेव से जान लेने चाहिए।

सरस्वती तन्त्र में कहा गया है कि मन्त्रो के शब्दार्थ एवं भावार्थ – ये दो प्रकार के अर्थ होते हैं। प्रारम्भ में शब्दार्थ जानकर साधना में प्रवृत्त होना चाहिए। इस साधना के प्रभाव से देवता का साक्षात्कार होने पर उसका जो स्वरूप दिखलाई देता है वह मन्त्र का भावार्थ होता है।

मन्त्र के शक्ति, देवता एवं दृष्टि के भेद से अनेक अर्थ हो सकते हैं जो साधना की प्रारम्भिक अवस्था में दिखलायी देते हैं। किन्तु मन्त्र का वास्तविक अर्थ एक ही होता है। इस विषय को स्पष्ट करते हुए भगवान् ने पार्वती से कहा है : 'हे परमेश्वरि, सहस्रार में पहुँचकर ध्यान करते समय मन्त्र का जो स्वरूप स्वयं प्रकट होता है, मन्त्र का वही अर्थ होता है।' यथा :

"ध्यानेन परमेशानि यद्रूपं समुपस्थितम्। तदेव परमेशानि मन्त्रार्थं विद्धि निश्चितम्।"

(iii) *मन्त्रचैतन्य* : साधारणतया शब्द दो प्रकार के होते हैं – एक तो किसी अर्थ के अवगत हो जाने पर मनःप्रेरित वायु के आघात से कण्ठ, तालु आदि विशेष स्थानों से उच्चारित होने वाला शब्द तथा दूसरा अन्तःकरण में अर्थ को उद्भासित करने वाला चैतन्य शब्द, जिसे वैयाकरण 'स्फोट' या 'शब्दब्रह्म' कहते हैं। 'स्फोट' का अर्थ है – जिससे अर्थ स्फुटित हो। अर्थ का स्फुरण स्पन्दन या कम्पन से होता है तथा कम्पन नाद सहकारी है। अतः कम्पन या स्पन्दन शब्द रूप ही हैं। चैतन्य-स्पन्दन, जिससे समस्त सूक्ष्म अर्थ, शब्दतन्मात्रा, आकाश, स्थूलशब्द तथा स्थूलसृष्टि की अभिव्यक्ति हुई, शब्द-ब्रह्म अथवा सगुणब्रह्म ही है। मन्त्र का भी यही मूलस्वरूप है और उसके इसी अर्थ में मन्त्र, देवता एवं गुरु का ऐक्य होता है, जिसे जप में आवश्यक माना गया है। इसलिए यह आवश्यक है कि साधक के चित्त में अपने मन्त्र के प्रति साधारण शब्द-भाव न रहे, अपितु उसमें ब्रह्मभाव जाग्रत् हो जाय। इस भाव के आते ही मन्त्र चैतन्यरूप में स्फुरित होने लगता है और इस स्थिति में साधक का मन उसमें तल्लीन एवं तन्मय हो जाता है।

तन्त्रशास्त्र के ग्रन्थों में मन्त्र चैतन्य करने की अनेक रीतियों का विस्तार से वर्णन एवं विवेचन किया गया है उनमें, कुछ प्रसिद्ध एवं सरल रीतियाँ संक्षेप में लिखी जा रही हैं।

(१) साधक को सर्वप्रथम यह ध्यान करना चाहिए कि मन्त्र के सब वर्ण उसके हृदय में अनाहत चक्र पर विद्यमान हैं। फिर मूलाधार में कुण्डलिनी को जगाकर सुषुम्णा मार्ग से अनाहत चक्र में लाकर उसके मुख में संगृहीत मन्त्रवर्णों को कुण्डलिनी के साथ विशुद्ध चक्र का भेदन करते हुए सहस्रार में ले जाना चाहिए। वहाँ सहस्रदल कमल की कर्णिका में मन्त्र के वर्णों को न्यस्त चैतन्यरूप मन्त्रशक्ति के साथ उसका ध्यान करना चाहिए। फिर मन्त्र का प्रत्येक वर्ण चैतन्य शक्ति से निर्मित एवं ग्रथित है – इस भावना के साथ मन्त्रवर्णों को नाभिस्थित मणिपूरचक्र में ले आना चाहिए, और फिर वहाँ वाणी में आते हुए मन्त्र का चिद्रूप से जप करना चाहिए। यह मन्त्र चैतन्य की एक रीति है।

(२) मन्त्र से पहिले कामबीज, श्रीबीज एवं मायाबीज, फिर अकार से क्षकार पर्यन्त समस्त स्वरवर्ण और फिर मन्त्र को बोलकर उसके पीछे उन्हीं बीजों एवं अक्षरों को बोलना चाहिए। इस प्रकार इस मूल विद्या का १०८ बार जप करने से मन्त्र चैतन्य हो जाता है।

(३) मन्त्र को 'ई' से सम्पुटित कर जप करने से भी मन्त्र चैतन्य हो जाता है।

(iv) *मन्त्रों की कुल्लुका* : रुद्रयामल में कहा गया है कि जो व्यक्ति कुल्लुका को जाने बिना जप करता है उसकी आयु, विद्या, कीर्ति एवं बल नष्ट हो जाता है। अतः मन्त्र का जप करने से पहले उसकी कुल्लुका का ज्ञान कर लेना चाहिए। सरस्वतीतन्त्र एवं वाराहीतन्त्र में बतलाया गया है कि जप प्रारम्भ करते समय साधक को जिस देव के मन्त्र का जप करना हो उसकी कुल्लुका का सर पर न्यास कर लेना चाहिए। ऐसा करने से जप निर्विघ्न पूरा होता है तथा साधक को सिद्धि मिलती है।

विभिन्न देवताओं के मन्त्रों की कुल्लुका इस प्रकार है :

देवता	कुल्लुका का मन्त्र	देवता	कुल्लुका का मन्त्र
शिव	ॐ हौं।	मञ्जुघोषा	ॐ अरवचल धीं।
विष्णु	ॐ नमो नारायणाय।	धूमावती	ॐ ह्रीं।
लक्ष्मी	ॐ श्रीं।	मातङ्गी	ॐ ॐ।
सरस्वती	ॐ ऐं।	भैरवी	ॐ हसरैं।
अन्नपूर्णा	ॐ क्लीं।	काली	ॐक्रीं हूंस्त्रीं ह्रीं फट्।
षोडशी	ॐ स्त्रीं।	तारा	ॐ ह्रीं स्त्रीं हूं।
भुवनेश्वरी	ॐ ह्रीं।	छिन्नमस्ता	ॐह्रीं ह्रीं ऐंह्रीं ह्रीं स्वाहा
त्रिपुरसुन्दरी	ॐ क्लीं ह्रीं त्रिपुरभगवति स्वाहा या क्लीं।	वज्रवैरोचिनी	ॐ श्रीं ह्रीं ह्रीं ऐंह्रीं ह्रीं- स्वाहा हूं।

शेष देवताओं के अपने अपने मन्त्र ही उनकी कुल्लुका कहलाते हैं।

(v) *मन्त्रसेतु* : साधक का मन्त्र के साथ सम्बन्ध जोड़ने वाला बीज सेतु कहलाता है। मन्त्र का जप करने से पहिले सेतुमन्त्र का हृदय में जप कर लेना चाहिए। प्रधानतः मन्त्रों का सेतु प्रणव ही है। अधिकांश तन्त्रग्रन्थों में ब्राह्मण एवं क्षत्रिय साधक के लिए प्रणव, वैश्यों के लिए 'फट्' तथा शूद्रों के लिए 'ह्रीं' सेतु बतलाया गया है। सेतु मन्त्र का जप करने से साधक तान्त्रिक मन्त्र के जप का अधिकारी हो जाता है।

(vi) *महासेतु* : जप करने से पहले महासेतु मन्त्र का जप किया जाता है। इसके प्रभाव से साधक को सभी समय एवं सभी अवस्थाओं में जप करने का अधिकार मिल जाता है।

कालिका का महासेतु 'क्रीं', तारा का 'हूं', त्रिपुर सुन्दरी का 'ह्रीं', तथा शेष सब देवताओं का महासेतु 'स्त्रीं' है। इसका जप कण्ठस्थित विशुद्ध चक्र में किया जाता है।

(vii) *निर्वाण* : सर्वप्रथम प्रणव फिर अकार से क्षकार तक समस्त स्वरवर्ण और फिर मूलमन्त्र के बाद पुनः समस्त स्वरवर्ण तथा अन्त में प्रणव लगाकर, अर्थात्

प्रणव एवं मातृका से सम्पुटित मूलमन्त्र का जप करना निर्वाण कहलाता है। इससे मन्त्र के आत्मस्वरूप का बोध हो जाता है तथा वह जाग्रत हो जाता है।

(viii) *मुखशोधन* : मन्त्रशास्त्र में जप करने से पहिले मुखशोधन करना आवश्यक माना गया है। जिह्वा पर अनेक प्रकार के मल लगे रहते हैं, यथा-भोजन का मल, असत्य बोलने का मल, कलह एवं क्रूर वचनों का मल इत्यादि। अशुद्ध जिह्वा से जप करने पर सिद्धि के स्थान पर साधक को हानि उठानी पड़ती है। इसलिए तन्त्रशास्त्र में मुखशोधन की विधि बतलायी गयी है।

मुखशोधन की विधि यह है कि आपको जिस देवता के मन्त्र का जप करना हो, उस देवता के अनुसार मुखशोधन मन्त्र का पहिले १० बार जप कर लेना चाहिए। ऐसा करने से जिह्वा एवं मुख मन्त्रोच्चार के योग्य बन जाते हैं।

देवताओं के अनुसार उनके मुखशोधन के मन्त्र इस प्रकार हैं :

देवता	मुखशोधन मन्त्र	देवता	मुखशोधन मन्त्र
विष्णु	ॐ ह्रं।	गणेश	ॐ गं।
लक्ष्मी	ॐ श्रीं।	दुर्गा	ऐं ऐं ऐं।
त्रिपुरसुन्दरी	श्रीं ॐ श्रीं ॐ श्रीं ॐ।	श्यामा	क्रींक्रींक्रीं ॐॐॐ क्रींक्रींक्रीं।
तारा	ह्रीं ह्रूं ह्रीं।	बगलामुखी	ऐं ह्रीं ऐं,
मातङ्गी	ॐ ऐं ॐ।	धूमावती	ॐ धूं ॐ।

शेष सभी देवताओं के मुखशोधन का मन्त्र प्रणव बतलाया गया है। मन्त्र का जप करने से पहिले मुखशोधन मन्त्र का १० बार जप कर लेना चाहिए।

(ix) *प्राणयोग* : जिस प्रकार प्राणयुक्त शरीर ही कुछ कर सकता है, उसी प्रकार प्राणयुक्त मन्त्र ही सिद्ध होकर अभीष्ट फल देता है। इसलिए मन्त्र-सिद्धि या अभीष्टफल के इच्छुक साधकों को मन्त्र का जप करने से पहले उसमें प्राणयोग कर लेना चाहिए।

वाराही तन्त्र एवं योगिनीहृदय तन्त्र में प्राण की विधि बतलायी गयी है। माया बीज से पुटित मूलमन्त्र का सात बार जप करना प्राण योग कहलाता है (मायाबीजेन पुटितं मूलमन्त्रं जपेत्सुधीः। सप्तवारं जपात्पूर्वं प्राणयोगरुदीरितः॥)

(x) *दीपनी* : जिस प्रकार दीपक से वातावरण का अन्धकार दूर हो जाता है और उसकी सारी चीजें दीखने लगती हैं उसी प्रकार दीपनीक्रिया से मन्त्र प्रदीप्त हो जाता है, तथा साधक को उसकी समस्त शक्तियों की प्रतीति होने लगती है। मन्त्र शक्तियों का आगार माना गया है तथा एक ही मन्त्र से अनेक प्रकार की सिद्धियाँ एवं

फल मिलते हैं। इसलिए मन्त्र का जप करने से पहले उसे प्रदीप्त कर लेना चाहिए।

दीपनी क्रिया केवल इतनी सी है कि मन्त्रजप प्रारम्भ करने से पहले मन्त्र को प्रणव से संपुटित कर उसका सात बार जप कर लेना चाहिए (प्रणवेन मूलमन्त्रस्य पुटितस्य परमेश्वरि। सप्तवारं जपं संदीपिनीविद्याखिलार्थदा ॥)

(xi) *मन्त्र के सूतक* : मन्त्र में दो प्रकार के सूतक होते हैं : १. जात सूतक, एवं २. मृत सूतक। इन दोनों आशौचों को भङ्ग किये बिना मन्त्र सिद्ध नहीं होता। अतः इन दोनों सूतकों को निवृत्ति के लिए प्रणव से सम्पुटित मूल मन्त्र का जप के प्रारम्भ में तथा जप की समाप्ति पर १०८ बार या ७ बार जप करना चाहिए। (जातसूतकमादौ स्यादन्ते च सूतसूतकः। सूतकद्वयसंयुक्तो यो मन्त्रः स न सिद्धयति ॥ सूतकद्वयनिर्मुक्तः स मन्त्रः सर्व सिद्धिदः। तस्माद्दोंव प्रयत्नेन ध्रुवेण पुटितं मनुम् ॥ अष्टोत्तरशतं वाऽपि सप्तवारं जपादितः। जपान्ते च ततो जप्याच्चतुर्वर्गफलाप्तये ॥)

(xii) *मन्त्र के दोष* : हरितत्त्व दीधिति में मन्त्र के ८ दोष बतलाये गये हैं : १. अभक्ति, २. अक्षरभ्रान्ति, ३. लुप्त, ४. छिन्न, ५. ह्रस्व, ६. दीर्घ, ७. कथन, एवं ८. स्वप्नकथन।

मन्त्र को अक्षरवर्णों की समष्टि मात्र समझना या दूसरे मन्त्र को अपने मन्त्र से श्रेष्ठ समझना अभक्ति नामक दोष कहलाता है। साधक की मन्त्र में भक्ति न होने पर उसे सिद्धि नहीं मिलती।

गुरु या शिष्य के प्रमादवश मन्त्र के अक्षरों में उलट-फेर हो जाना अक्षर-भ्रान्ति दोष कहा जाता है। मन्त्र में किसी वर्ण की न्यूनता को लुप्त दोष कहते हैं। मन्त्र के संयुक्त वर्णों में से किसी अंश का छूट जाना 'छिन्न' दोष कहलाता है। दीर्घ वर्ण के स्थान पर ह्रस्व का उच्चारण 'ह्रस्व' दोष तथा ह्रस्व वर्ण के स्थान पर दीर्घ वर्ण का उच्चारण 'दीर्घ दोष' कहलाता है।

जाग्रत् अवस्था में अपना मन्त्र किसी को बतला देना कथन नामक दोष कहा जाता है, तथा स्वप्न में अपना मन्त्र किसी को बतला देना स्वप्नकथन नाम का दोष कहलाता है।

शारदापटल में इन दोषों के अलावा रुद्ध, शक्तिहीन एवं पराङ्मुख आदि ५० और दोष भी बतलाये गये हैं। सात करोड़ मन्त्रों में से प्रायः सभी इन दोषों में से किसी न किसी दोष से दुष्ट पाये जाते हैं। इन दोषों को न जानते हुए या दोषों को जान कर उनकी निवृत्ति न करते हुए जो व्यक्ति मन्त्र साधना करता है, उसे कभी भी सिद्धि नहीं मिलती है (दोषानिमानविज्ञाय यो मन्त्रान् भजते जड़ः। सिद्धिर्न जायते तस्य कल्पकोटिशतैरपि ॥)।

दोष निवृत्ति के उपाय : मन्त्र सर्वशक्तिमान् देवता का स्वरूप है ऐसा अनुभव कर एक एक मन्त्र के उच्चारण में परमानन्द का अनुभव करते हुए मन्त्र का जप करने से मन्त्राधिष्ठातृ देव प्रसन्न हो जाता है, तब उसमें भक्ति का उदय होता है तथा भक्ति उदित होने पर शीघ्र सिद्धि मिल जाती है। अभक्तिदोष को दूर करने का यह उपाय है।

अक्षर-भ्रान्ति, लुप्त, छिन्न, ह्रस्व, दीर्घ आदि दोषों की निवृत्ति के लिए मन्त्र की पुनः दीक्षा लेनी चाहिए, तथा शेष दोषों की निवृत्ति के लिए मन्त्र के १० संस्कार करने चाहिए। इन संस्कारों के नाम हैं : १. जनन, २. दीपन, ३. बोधन, ४. ताड़न, ५. अभिषेक, ६. विमलीकरण, ७. जीवन, ८. तर्पण, ९. गोपन एवं १०. आप्यायन।

१. जनन : भोजपत्र पर लाल चन्दन एवं गोरोचन से 'जनन यन्त्र' लिखकर उसमे विधिवत मातृका देवी का आवाहन एवं पूजन कर एक अन्य भोजपत्र पर अपने मन्त्र के एक एक वर्ण का उद्धार करना चाहिए। तत्पश्चात् इन वर्णों का मार्जन कर पूरा मन्त्र लिख लेना चाहिए। इस प्रक्रिया को जनन संस्कार कहते हैं।

२. दीपन : हंस मन्त्र से सम्पुटित कर अपने मन्त्र का १ हजार जप करना दीपन संस्कार कहलाता है। उदाहरणार्थ 'रामाय नमः' मन्त्र का दीपन संस्कार करने के लिए 'हंसः रामाय नमः सोऽहम्' का १ हजार जप करना चाहिए।

३. बोधन : 'हूं' बीज से सम्पुटित मन्त्र का पाँच हजार जप करना बोधन कहलाता है। यथा : हूं रामाय नमः हूं।

४. ताडन : 'फट्' से सम्पुटित मन्त्र का एक हजार जप करना ताडन कहलाता है। यथा : फट् रामाय नमः फट्।

५. अभिषेक : भोजपत्र पर अपना मन्त्र लिखकर 'ऐं हंसः ओं' मन्त्र से एक हजार बार अभिमन्त्रित जल से इसी मन्त्र के द्वारा अपने मन्त्र का अभिषेक करना अभिषेक संस्कार कहलाता है।

६. विमलीकरण : 'ओं त्रों वषट्' मन्त्र से सम्पुटित अपने मन्त्र का एक हजार जप करना विमलीकरण कहलाता है। यथा : ओं त्रों वषट् रामाय नमः वषट् त्रों ओं।

७. जीवन : 'स्वधा वषट्' से सम्पुटित अपने मन्त्र का एक हजार जप करना जीवन कहलाता है। यथा : स्वधा वषट् रामाय नमः स्वधा वषट्।

८. तर्पण : दूध, घी, शहद या जल से मूलमन्त्र से १०० बार तर्पण करना ही तर्पण संस्कार है।

९. गोपन : मायाबीज से सम्पुटित अपने मन्त्र का एक हजार जप करना गोपन कहलाता है। यथा : ह्रीं रामाय नमः ह्रीं।

१०. आप्यायन : 'ह्सौः' बीज से सम्पुटित अपने मन्त्र का एक हजार जप करना

आप्यायन कहलाता है। यथा : हूंसौः रामाय नमः हूंसौः।

इस प्रकार संस्कृत मन्त्र शीघ्र सिद्धि देता है।

दीक्षा :

यदि समस्त साधकों का अधिकार एक होता, साधनाएँ अनेक न होतीं तथा सिद्धि के स्तर भी अनेक न होते तो यह सम्भव था कि बिना दीक्षा के ही सिद्धि मिल जाती, परन्तु ऐसा नहीं है। इसका कारण यह है कि मनुष्यों की प्रकृति, प्रवृत्ति एवं शक्ति में पर्याप्त भेद होने के कारण साधक के अधिकार एवं साधना-विधि में भेद करना आवश्यक है, तथा साधना के भेद से सिद्धि में भी भेद हो जाता है। जब साधक ही भिन्न-भिन्न प्रकृति, प्रवृत्ति एवं शक्ति वाले हों तो उनके लिए एक ही मन्त्र और एक जैसी साधना-विधि नहीं हो सकती। यह सत्य है कि साधक, मन्त्र एवं देवता इन तीनों में मूलतः एक ही तत्त्व विद्यमान है, फिर भी किस साधक के हृदय में किस देवता एवं किस मन्त्र के आश्रय से वह स्फुरित करना है — यह दीक्षा का मुख्य प्रयोजन है।

गुरु की कृपा एवं शिष्य की श्रद्धा इन दो पवित्र भावनाओं का संगम दीक्षा है। गुरु का आत्मदान एवं शिष्य का आत्मसमर्पण, एक की कृपा एवं दूसरे की श्रद्धा के अतिरेक से ही हो सकता है। दीक्षा एक दृष्टि से गुरु की ओर से आत्मदान, ज्ञानसंचार या शक्तिपात है, तो दूसरी दृष्टि से शिष्य की प्रसुप्त शक्तियों का उद्बोधन है। अतः सभी प्रकार के साधकों के लिए दीक्षा लेना अनिवार्य है। दीक्षा से शरीर की समस्त अशुद्धियों, मन की समस्त भ्रान्तियों और सिद्धि का मार्ग खुल जाता है। दीक्षा की कुछ विधियाँ इस प्रकार की भी होती हैं जिनसे सद्यः सिद्धि मिल जाती है।

साधक-जीवन की उपयोगी बहुत सी बातें गुरु के द्वारा ही जानी जा सकती हैं। साधना का रहस्य एवं अनुभूतज्ञान गुरुगम्य ही है। मन्त्र साधना में मन्त्र, इष्टदेव या साधना पद्धति के ज्ञान मात्र से सिद्धि नहीं मिल जाती, अपितु इसके लिए कुछ समय पुरश्चरण आदि करने होते हैं जिनकी प्रक्रिया एवं रहस्यों का अनुभूतज्ञान गुरुकृपा से ही मिल सकता है। अतः जो साधक सद्गुरु से सम्प्रदायानुगत दीक्षा प्राप्त कर उनके आदेशानुसार मन्त्र साधना में प्रवृत्त होता है, उसे अवश्य ही सिद्धि मिलती है।

दीक्षा के भेद : सामान्यतया दीक्षा के ३ भेद माने गये हैं : १. शाक्ती, २. शाम्भवी एवं ३. मान्त्री। मान्त्री दीक्षा को आणवी दीक्षा भी कहते हैं। शाक्ती दीक्षा में श्री गुरुदेव शिष्य के अन्तर्देह में प्रवेश कर कुण्डलिनी को जगा देते हैं और अपनी शक्ति से उसे परमशिव में मिला देते हैं। इसमें शिष्य को अपनी ओर से कुछ भी नहीं करना पड़ता। शाम्भवी दीक्षा में श्री गुरुदेव अपनी प्रसन्नता से दृष्टि या स्पर्श के द्वारा शिष्य को क्षणमात्र में अपने स्वरूप में स्थित कर देते हैं और शिष्य समाधिस्थ होकर

कृतकृत्य हो जाता है। मान्त्री या आणवी दीक्षा मन्त्र, पूजा, आसन, न्यास एवं ध्यान द्वारा होती है। इसमें गुरुदेव शिष्य को मन्त्रोपदेश करते हैं। इन तीनों दीक्षाओं में प्रथम दो दीक्षाएँ तत्काल सिद्धि देती हैं परन्तु मान्त्री-दीक्षा में पुरश्चरण आदि करने पर सिद्धि मिलती है।

शारदापटल में दीक्षा के ४ भेदों का विस्तार से विवेचन किया गया है। वे चार भेद हैं : १. क्रियावती, २. वर्णमयी, ३. कलावती एवं ४. वेद्यमयी। मन्त्रसाधना में पञ्चायतनी दीक्षा का भी बहुत प्रचार है। इसमें शक्ति, विष्णु, शिव, सूर्य, एवं गणेश इन पाँचों के पृथक २ यन्त्र बनाकर पूजा की जाती है। जिस देवता को प्रधानता रखनी हो उसे मध्य में स्थापित कर शेष देवताओं को चारो कोनों पर स्थापित किया जाता है। फिर विधिवत इनकी पूजाकर पुष्पाञ्जलि देने के बाद गुरु पंचायत पूजा विधि एवं उनके मन्त्र अपने शिष्य को बतलाते हैं। इसके अतिरिक्त तन्त्रग्रन्थों में क्रमदीक्षा का भी वर्णन मिलता है। इसकी बड़ी महिमा है। इस दीक्षा में शुद्धि एवं सिद्धादि शोधन की आवश्यकता नहीं होती। यह केवल गुरुकृपासाध्य है। इसमें दिन, महीना या वर्ष के क्रम से दीक्षा तथा अभिषेक होते हैं। क्रमशः साधक का अधिकार बढ़ता जाता है और वह एक दीक्षा से दूसरी दीक्षा के स्तर में बढ़ता हुआ अन्त में तद्भाव एवं महाभाव प्राप्त करता है।

सप्त अधिकार : जब गुरुदेव कृपापूर्वक अपने शिष्य को मन्त्रोपदेश करते हैं तो उसे दीक्षा कहते हैं। इसके बाद शिष्य को योग्य समझकर जब गुरुदेव शिष्य को योगक्रिया सिखाना शुरू करते हैं, उसे महादीक्षा कहते हैं। गुरु के बतलाये हुये लक्ष्य को ध्यान में रखकर साधक जिस साधना विधि से मन्त्रसिद्धि प्राप्त करता है, उसे पुरश्चरण कहते हैं तथा विशेष प्रक्रिया, विशेषकाल तथा विशेषनिर्देशन द्वारा किया जाने वाला पुरश्चरण ही महापुरश्चरण कहलाता है। पुरश्चरण के द्वारा सिद्धि मिल जाने पर जब साधक को साधना में उच्च अधिकार मिलता है तब गुरु शिष्य को साधना के रहस्यों को बतलाते हैं जिससे साधक आनन्दराज्य में प्रविष्ट हो जाता है– इस क्रिया को अभिषेक कहते हैं। तत्पश्चात् अत्युन्नत संस्कार सम्पन्न शिष्य को जब गुरु अपने में मिला लेता है तो उसे महाभिषेक कहते हैं। आध्यात्मिक उन्नति के द्वारा साधक ऊर्ध्वावस्था में जाकर नाम एवं रूप की एकता जानने पर अनेक सामर्थ्य प्राप्त कर लेता है। इस सर्वोत्तम अधिकार को तद्भाव कहते हैं। इसी भाव के द्वारा साधक इष्टदेव के साथ अपनी दृढ़ एकता स्थापित कर महाभाव प्राप्त कर लेता है, जो मन्त्र साधना का चरम लक्ष्य है।

पुरश्चरण एवं अनुष्ठान : मन्त्र प्राप्त करने के बाद सिद्धि प्राप्त करने के लिए साधना मार्ग पर निरन्तर बढ़ने को पुरश्चरण कहते हैं। पुरश्चरण के द्वारा ही साधक

को सिद्धि मिलती है। योगिनीहृदय तन्त्र में कहा गया है, कि गुरु से मन्त्र प्राप्त होते ही उसका पुरश्चरण करना चाहिए। क्योंकि जिस प्रकार जीवहीन देही कोई काम नहीं कर सकता, उसी प्रकार पुरश्चरणहीन मन्त्रसिद्ध न होने के कारण किसी भी कामना को पूर्ण नहीं करता। अतः मन्त्र सिद्धि के लिए पुरश्चरण करना अनिवार्य है।

पुरश्चरण द्वारा मन्त्र के सिद्ध हो जाने पर उस मन्त्र के द्वारा विविध कामनाओं की पूर्ति हेतु किये जाने वाले प्रयोगों को अनुष्ठान कहते हैं। कामनापूर्ति के लिए अनुष्ठान भी उतना ही अनिवार्य है जितना सिद्धि के लिए पुरश्चरण।

मन्त्र गुप्त भाषा या गुप्त विद्या है, जो मनन करने से साधक को दुःखों के घात-प्रतिघातों से सुरक्षित रखती है। अतः गुरुदेव की कृपा से मन्त्र प्राप्त होते ही उसका मनन एवं निदिध्यासन करना चाहिए। दर्शनशास्त्र में श्रवण, मनन एवं निदिध्यासन ये तीनों तत्त्व के जनक माने गये है। मन्त्रसाधना में भी इन तीनों का पूरा उपयोग होता है। मन्त्रसाधना में दीक्षा श्रवण है, मन्त्रार्थ भावना पूर्वक मन्त्र का जप मनन है तथा मन्त्र-पुरश्चरण निदिध्यासन है। इस प्रकार तत्त्व या देव का साक्षात्कार करने के लिए पुरश्चरण करना अनिवार्य माना गया है।

पुरश्चरण का स्थान : योगिनीहृदय में लिखा है कि सिद्धपीठ, पुण्यक्षेत्र, नदीतट, गुफा, पर्वतशिखर, तीर्थ, सङ्गम, पवित्र वन, एकान्त उद्यान, बिल्ववृक्ष, पर्वत की तराई, तुलसीकानन, गोशाला, देवालय, पीपल या आँवले के वृक्ष के नीचे, सरोवर या अपने घर में अनुष्ठान करना चाहिए। काली, तारा एवं छिन्नमस्ता आदि के मन्त्रों का पुरश्चरण करने के लिए एकलिङ्ग, शिवालय, श्मशान, निर्जन गृह, आकण्ठ जल, रणभूमि एवं विजनकानन भी श्रेष्ठ स्थान माने गये हैं। ब्रह्मयामल में कहा गया है कि घर में पुरश्चरण करने की तुलना में गोष्ठ में दस गुना, जंगल में सौ गुना, तालाब में हजार गुना, नदीतट पर लाख गुना, पर्वत पर करोड़गुना, शिवालय में अरबों गुना, तथा गुरु के सान्निध्य में अनन्त गुना फल मिलता है।

पुरश्चरण-स्थान वही सर्वश्रेष्ठ होता है जहाँ बैठकर जप करने से चित्त की ग्लानि मिटे तथा एकाग्रता एवं प्रसन्नता बढ़े। जिस स्थान पर स्थिरता से बैठने में किसी प्रकार की आशंका या आतंक न हो, म्लेच्छ, दुष्ट, बाघ एवं सर्प आदि विघ्न न डाल सकें, जहाँ आसपास में पुरश्चरण के विरोधी न हों, किसी प्रकार का उपद्रव या दुर्भिक्ष न हो, गुरुजनों एवं सम्प्रदाय के वृद्धजनों का सहज सान्निध्य हो तथा चित्त में एकाग्रता एवं प्रसन्नता सहज भाव से आती हो, वह स्थान ही पुरश्चरण के लिए सर्वश्रेष्ठ होता है।

गौतमीय तन्त्र में कहा गया है कि पर्वत, समुद्रतट, नदीतट एवं तपोवन आदि में कूर्मचक्र से दीपस्थान का निर्णय करने की आवश्यकता नहीं होती। किन्तु यदि गाँव

या घर में पुरश्चरण करना हो तो कूर्मचक्र के अनुसार दीपस्थान का निर्णय कर वहाँ बैठकर पुरश्चरण करना चाहिए, यथा : "दीपस्थानं समाश्रित्य कृतं कर्मफलप्रदम्"

जिस स्थान, क्षेत्र, नगर या घर में पुरश्चरण करना हो, उसके समान नौ भाग कर मध्य में स्वर, पूर्व से उत्तर तक कवर्ग आदि ७ वर्ग तथा ईशान में ल, य, वर्ण लिखने चाहिए, यथा :



इस चक्र में क्षेत्र का पहला अक्षर जिस कोष्ठ में हो, उस कोष्ठ को मुख समझना चाहिए। इस मुख वाले कोष्ठ को ही दीपस्थान कहते हैं। इस स्थान पर बैठकर पुरश्चरण करने से शीघ्र सिद्धि मिलती है।

पवित्र भोजन : पुरश्चरण एवं अनुष्ठान के समय साधक को पवित्र भोजन करना चाहिए, क्योंकि भोजन के रस से ही शरीर, प्राण, एवं मन का निर्माण होता है। अपवित्र भोजन करने से शरीर में रोग, प्राणों में क्षोभ तथा मन में विकार उत्पन्न होते हैं। विकृत मन से देवता एवं मन्त्र की साधना नहीं की जा सकती। इसके विपरीत शुद्ध अन्न लेने से चित्त के विक्षेप एवं मल नष्ट हो जाते हैं। निर्मल मन में

ही देवता एवं मन्त्र के प्रसाद का उदय होता है। अतः पुरश्चरणादि में भोजन की पवित्रता पर विशेष ध्यान देना चाहिए।

मुख्यतः भोजन के ३ दोष माने गये हैं : १. जातिदोष, २. आश्रयदोष, एवं ३. निमित्तदोष। स्वभाव से ही भोज्य-पदार्थ में रहनेवाला दोष जातिदोष कहलाता है। प्याज, लहसुन, मांस, मछली, अण्डा आदि में यही दोष होता है। पवित्र वस्तुएँ भी जब निकृष्ट व्यक्ति या स्थान का आश्रय प्राप्त कर लेती हैं तो उनमें आश्रयदोष आ जाता है। जैसे कसाई की दूकान या शराबखाने में रखा हुआ शुद्ध दूध भी अपवित्र माना जाता है। पवित्र स्थान पर रखी हुई पवित्र वस्तुएँ भी कभी कभी निमित्तदोष से दूषित हो जाती हैं। जैसे देव मन्दिर में रखे हुए दूध को कुत्ता पी जाय तो वह अपवित्र हो जाता है।

साधक का भोजन इन तीनों दोषों से मुक्त होना चाहिए। उसे मुख्य रूप से हविष्यान्न ग्रहण करना चाहिए तथा जिस देश में जिन वस्तुओं की पवित्रता शिष्टसम्मत पो या जिस आचार में जो वस्तु ग्राह्य मानी गयी हो उन्हीं चीजों को भोजन में लेना चाहिए। अगस्त्य संहिता में गाय का दूध, दही एवं घी, सफेद तिल, मूंग, कन्द, केला आम, नारियल, आँवला, जड़हन धान, जौ, जीरा एवं नारङ्गी को हविष्यान्न कहा गया है। मतान्तर से हैमन्तिक धान्य, सैन्धव नमक, फल, मेवा, दूध से बने पदार्थ एवं वे वस्तुएँ जो तेल में न तली गयी हों – ये सब हविष्यान्न कहलाती हैं। साधनाकाल में इन्हीं वस्तुओं को भोजन में लेना चाहिए।

मधु, खारी नमक, तेल, पान, गाजर, उड़द, अरहर, मसूर, कोदो, चना, बासी अन्न, रूखा अन्न, गरिष्ठ भोजन तथा वह अन्न जिसमें कीड़े पड़ गये हों – सर्वथा त्याज्य हैं। भोजन के सम्बन्ध में एक और बात ध्यान में रखनी चाहिए कि जितने भोजन की आवश्यकता हो उससे कुछ कम ही भोजन करना चाहिए। भर पेट भोजन करने से या अधिक भोजन करने से प्रमाद, आलस्य एवं निद्रा का वेग बढ़ता है।

पुरश्चरण के अन्य नियम : पुरश्चरण काल में कुटिलता, क्षौर, उबटन, बिना भोग लगाया भोजन, बिना संकल्प के कर्म नहीं करने चाहिए। स्त्री-संसर्ग, उनकी चर्चा तथा जहाँ वे रहती हों वह स्थान छोड़ देना चाहिए। ऋतुकाल के अतिरिक्त अपनी परिणीता पत्नी से भी संसर्ग नहीं करना चाहिए। स्त्री साधिकाओं के लिए अपने पति के विषय में यही बात समझनी चाहिए। किन्तु स्त्री साधिका को अपने सिद्ध पति से दीक्षा प्राप्त हो तो उसे अपने पति के साथ यौन सम्पर्क के अतिरिक्त अन्य सम्पर्क निषिद्ध नहीं हैं।

पुरश्चरणकाल में केवल आँवले या पंचगव्य से शास्त्रोक्त विधि से स्नान करना

चाहिए। स्नान, आचमन एवं भोजन मन्त्रोच्चारण पूर्वक करने चाहिए। प्रतिदिन संध्या, तर्पण, बलि, हवन एवं तीनों समय, दो समय या एक समय इष्टदेव का विधिवत पूजन करना चाहिए। स्नान एवं तर्पण किये बिना, अपवित्र हाथ से, नग्न अवस्था में या सर पर वस्त्र रख कर जप करना निषिद्ध माना गया है।

यदि जप करते समय एक शब्द भी बोलना पड़े तो एक बार प्रणव का उच्चारण करना चाहिए। यदि कठोर शब्द बोलना पड़े तो प्राणायाम और यदि वार्तालाप करना पड़े तो विधिवत आचमन, प्राणायाम एवं न्यास करना चाहिए।

जप करते समय लघुशंका एवं शौच का वेग हो तो उसे रोकना नहीं चाहिए, क्योंकि इस स्थिति में इष्टदेव एवं मन्त्र का चिन्तन न होकर मल-मूत्र की ओर ध्यान चले जाने के कारण जप-पूजन आदि अपवित्र हो जाता है। जप के समय आलस्य, जँभाई, नींद, छींक, थूकना, डरना, अपवित्र अंगों का स्पर्श, क्रोध, चित्त में व्याकुलता, क्षोभ, भ्रान्ति, भूख लगना एवं शरीर में पीड़ा होना-ये सब बातें निषिद्ध मानी गयी हैं।

गा-गाकर जपना, सिर हिलाना, लिखे हुए को पढ़ना, मन्त्रार्थ को न जानना तथा बीच-बीच में भूल जाना- ये सब मन्त्रसिद्धि के प्रतिबन्धक हैं। जप करते समय इष्टदेव, गुरु एवं मन्त्र ये तीनों एक हैं ऐसा ध्यान रखना चाहिए तथा मन्त्रार्थ की भावना सहित मनोयोगपूर्वक जप करना चाहिए।

मन्त्रसिद्धि के लिए ये १२ नियम बतलाये गये हैं : १. भूमिशयन, २. ब्रह्मचर्य, ३. मौन, ४. गुरु सेवन, ५. त्रिकाल स्नान, ६. पापकर्म परित्याग, ७. नित्यपूजा, ८. देवस्तुति एवं कीर्तन, ९. नैमित्तिक पूजा, १०. नित्यदान, ११. इष्टदेव एवं गुरु में विश्वास तथा १२. जपनिष्ठा। जो साधक पुरश्चरण काल में इन नियमों का पालन करता है उसे शीघ्र ही सिद्धि मिलती है।

पुरश्चरण काल में साधक को जननाशौच या मृताशौच नहीं लगते। अतः पुरश्चरण शुरू हो जाने पर कुटुम्ब में किसी की मृत्यु या किसी का जन्म होने पर भी पुरश्चरण करते रहना चाहिए।

मन्त्र की जप संख्या पूरी हो जाने पर कल्पोक्त विधि से जप के दशांश का हवन, उसके दशांश का तर्पण, उसके दशांश का मार्जन एवं उसके दशांश तुल्य ब्राह्मणों को भोजन कराना चाहिए।

पुरश्चरण पूरा होने पर गुरु, गुरुपुत्र, गुरुपत्नी या उनके वंशजों का पूजन कर उन्हें दक्षिणा देनी चाहिये। वास्तव में यह सब उनकी प्रसन्नता के लिए है। उन्हें हर प्रकार से प्रसन्न एवं सन्तुष्ट करके ही परम रहस्यमय ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है। अपने प्रयत्न एवं विचार से चाहे कोई भी व्यक्ति कितना ही ऊपर क्यों न उठ जाय,

वह पूर्णरूपेण सन्देह रहित नहीं हो सकता है। मन के समस्त संशयों का समाधान गुरु के अलावा कोई कर नहीं सकता । तान्त्रिक साधना में गुरु अपने गुरुत्व को मिटा कर अपने शिष्य में गुरुत्व की स्थापना करता है। यह एक ऐसा रहस्य है जिसे निगुरे नहीं जान सकते । यही कारण है कि तन्त्रशास्त्र में पुरश्चरण की पूर्णता गुरु की प्रसन्नता के साथ जुड़ी हुई है।

ग्रहण-पुरश्चरण : सूर्य या चन्द्रमा के ग्रहण के दिन साधक को उपवासी होकर समुद्रगामिनी नदी में नाभि पर्यन्त गहरे जल में खड़ा होकर एकाग्र चित्त से ग्रहण के स्पर्शकाल से मोक्षकाल तक मूलमन्त्र का जप करना चाहिए। सूर्यग्रहण में महानदी में या देव-प्रतिमा के सान्निध्य में स्पर्श से मोक्ष पर्यन्त मात्र जप करने से मन्त्र सिद्ध हो जाता है (सूर्यग्रहे महानद्यां प्रतिमासन्निधौ वा जप्त्वा मन्त्र सिद्धो भवति-अथर्वशीर्षसूक्त)। रुद्रायामल में कहा गया है कि नदी में मगर-घड़ियाल आदि का भय होने पर अपने आसपास में महानदी पर साधक को देवमन्दिर, शिवालय, तपोवन या उपवन में पवित्र स्थान पर बैठकर ग्रहण के स्पर्श से मोक्ष पर्यन्त जप करना चाहिए। इस जप से पुरश्चरण का फल प्राप्त होता है।

मन्त्रशास्त्र में पञ्चाङ्ग उपासना (जप, होम, तर्पण, मार्जन एवं ब्राह्मण भोजन) को ही पुरश्चरण कहा गया है। किन्तु ग्रहण काल में यह वैकल्पिक व्यवस्था है कि मात्र जप या पञ्चाङ्ग उपासना से पुरश्चरण पूरा हो जाता है। इस प्रकार ग्रहणकाल में अन्तर्याग पूर्वक जप करने से भी मन्त्र सिद्ध हो जाता है।

मन्त्र सिद्धि के उपाय : यदि विधिवत मन्त्र का पुरश्चरण करने पर भी सिद्धि न मिले तो उस मन्त्र का पुनः पुरश्चरण करना चाहिए। क्योंकि बहुधा जन्मान्तरार्जित पाप सिद्धि में बाधक होते हैं। किन्तु ३ बार पुरश्चरण करने पर भी सिद्धि न मिले तो निम्न सात उपाय करने चाहिए।

भ्रामण : यन्त्र पर एक वायुबीज (यं) और एक मन्त्राक्षर – इस क्रम से सम्पूर्ण मन्त्र के अक्षरों को वायु-बीज से सम्पुटित कर शिलारस, कपूर, कुंकुम, खस, एवं चन्दन को मिलाकर उसी से वस्त्र पर पूरा मन्त्र लिखना चाहिए। इस प्रकार लिखित मन्त्र को दूध, घी, मधु एवं जल में छोड़कर विधिवत पूजन, जप एवं हवन करना चाहिए। इस क्रिया को भ्रामण कहते हैं। ऐसा करके पुरश्चरण करने से मन्त्र शीघ्र ही सिद्ध हो जाता है।

रोधन : वागबीज (ऐं) से सम्पुटित मूल मन्त्र का जप करना रोधन कहलाता है।

वशीकरण : अलक्तक, लालचन्दन, कूट, धतूरे के बीज एवं मैंनसिल इस –सब

को मिलाकर उससे भोजपत्र पर अपना मन्त्र लिखकर उसे गले में धारण करने को वशीकरण कहते हैं।

पीडन : अधरोत्तर-योग से मन्त्र का जप करते हुए अधरोत्तर-स्वरूपिणी देवता को पूजा करनी चाहिए। तत्पश्चात् अकवन के दूध से मन्त्र लिखकर उसे पैर से दबा कर हवन करना चाहिए। इस क्रिया को पीडन कहते हैं।

पोषण : वधूबीज (ह्रीं) से सम्पुटित मूलमन्त्र का जप करना तथा गाय के दूध से लिखित मन्त्र को हाथ में धारण करना पोषण कहलाता है।

शोषण : वायुबीज (यं) से सम्पुटित मूलमन्त्र का जप करना तथा यज्ञ की भस्म से भोजपत्र पर मूल मन्त्र को लिखकर गले में धारण करना शोषण कहलाता है।

दाहन : मन्त्र के प्रत्येक स्वर-वर्ण के साथ अग्निबीज (रं) लगाकर जप करना तथा पलास के बीज के तेल से मन्त्र लिखकर गले में धारण करना – यह क्रिया दाहन कहलाती है।

उक्त सातो उपायों को एक साथ करने की आवश्यकता नहीं होती। इनमें से पहिला उपाय करने पर सिद्धि न मिले तो दूसरा, दूसरा करने पर सिद्धि न मिले तो तीसरा, और उसके करने पर भी सिद्धि न मिले तो चौथा, इस क्रम से ये जप करने चाहिए। इन उपायों के द्वारा निश्चित रूप से मन्त्रसिद्धि मिलती है।

मन्त्रसिद्धि का लक्षण : प्रारम्भ में साधक को मन, मन्त्र एवं देवता की अथवा ध्याता, ध्यान एवं ध्येय की पृथक् पृथक् प्रतीति होती है। किन्तु पुरश्चरणादि के द्वारा इस त्रिपुटी का नाश हो जाने पर इन तीनों में केवल इष्टदेव का रूप ही दिखलायी देता है। इस स्थिति में साधक, साधन एवं साध्य इन तीनों में कोई भेद ही नहीं रहता। इस अवस्था को प्राप्त करते ही साधक रोमांचित एवं स्तब्ध हो जाता है तथा उसके नेत्रों से प्रेमाश्रु बहने लगते हैं। मन एवं मन्त्र के देव में विलीन हो जाने पर साधक समाधिस्थ हो जाता है। और ऐसे कृतकृत्य साधक को महाभाव की उपलब्धि होती है जो मन्त्र साधना का अन्तिम फल है।

मंत्र महोदधि



मन्त्रमहोदधिः

मोहिनी-नौकाहिन्दी-संस्कृतव्याख्योपेतः

प्रथमतरंगः

अथ मन्त्रमहोदधिः

श्री गणेशाय नमः ॥ ॐनमः शिवाय ॥ ॐनमो भगवत्यै ॥
प्रणम्य लक्ष्मीनृहरिं महागणपतिं गुरुम् ।
तंत्राण्यनेकान्यालोक्य वक्ष्ये मंत्रमहोदधिम् ॥ १ ॥

अथ "मोहिनी" व्याख्या :

व्याख्याकर्तृमङ्गलम् :

॥ श्रीमन्महागणपतये नमः ॥

रवेरिव ध्वान्तमपास्य विघ्नान् यो मन्त्रसिद्धिं विदधाति नित्यम् ।
प्रणम्य देवेशमहं गणेशं, तं मोहिनीमत्र लिखामि टीकाम् ॥ १ ॥
(संदानितकम् त्रिभिः पद्यैः)

मन्त्रमहोदधेरस्य गूढं तत्त्वं यतो मया ।
ज्ञातं व्याख्यानदृष्टिश्च लब्धा तस्मै कृपालवे ॥
सर्वतन्त्रस्वतन्त्राय मन्त्रगूढार्थसंविदे ।
चतुर्वेदसमाजस्य गुरवे ज्ञानभानवे ।
श्रीमते गिरिराजाय चतुर्वेदीस्वरूपिणे ।
चतुर्वेदाय गायत्रीदीक्षादात्रे नमो नमः ॥ २ ॥

अथ नौकाः

श्रीगणेशाय नमः ॥ श्रीभवानीशङ्कराभ्यांनमः ॥ नत्वालक्ष्मीपतिंदेवंस्वीयेमन्त्र-

क्वाल्पधीः शुकदेवोऽयं क्वागाधोऽयं महोदधिः ।
पार गन्तुं हि शरणं सरणिगुरुर्निर्मिता ॥ ३ ॥

नौका न संतारविधौ समर्था स्थूलावबोधस्य नरस्य साम्प्रतम् ।
कपेरिवान्वीक्ष्य करोमि सेतुं रामो यथा मन्त्रमहोदधेरमुम् ॥ ४ ॥

मन्त्रार्थभेदिनी हिन्दी-व्याख्या व्यामोहभञ्जिनी ।
"मोहिनी" मोहिनीयं स्यात् क्रियातन्त्र विवर्तिनी ॥ ५ ॥

भगवान् महागणपति एवं गुरुवर श्रीनृसिंहाश्रम जी को प्रणाम कर अनेक तन्त्र-ग्रन्थों का मनन कर मन्त्रमहोद धि की रचना करता हूं ।

प्रातरुत्थाय शिरसि ध्यात्वा गुरुपदांबुजम ।
आवश्यकं विनिर्वर्त्य स्नातुं यायात्सरित्तटे ॥ २ ॥

साधक का नित्याह्निक

ब्राह्ममुहूर्त में उठकर शिरोदेश में श्रीगुरु के चरणारविन्दों का ध्यानकर (शौचादि) आवश्यक कार्यों से निवृत्त होकर स्नान करने के लिए नदी के तट पर जाना चाहिए ।

टिप्पणी : गुरु का ध्यान

साधक अपने शिरोदेश में सहस्रदलकमल की कर्णिकाओं के मध्य में स्थित, श्वेतवर्ण, दोनों भुजाओं में वर एवं अभय की मुद्रा वाले, श्वेत चन्दन एवं माला धारण किए हुए, स्वप्रकाशरूप, वाम भाग में बैठी हुई शक्ति के साथ अपने गुरु का ध्यान (सहस्रदलकमलकर्णिकामध्यस्थितं श्वेतवर्णं द्विभुजं वराभयकरं श्वेतमाल्यानुलेपनं स्वप्रकाशरूपं स्ववामास्थित् सुरक्त शक्त्यां स्वप्रकाशरूपया सहितं श्रीगुरुं ध्यायेत्) करे । फिर मानसोपचार से उनकी पूजा कर उन्हें नमस्कार करे ।

श्रौतेन विधिना स्नात्वा मंत्रस्नानं समाचरेत् ।
स्मार्तसंध्यां मंत्रसंध्यां कृत्वा देवं विचिंतयेत् ॥ ३ ॥

वैदिकविधि से स्नान कर मन्त्रस्नान करना चाहिए । स्मार्तसन्ध्या एवं मन्त्र सन्ध्या करके इष्टदेव का ध्यान करना चाहिए ।

महोदधौ ॥ नावविरचये रम्यांश्चरणायगुणैर्गताम ॥ १ ॥ तत्रनावन्मन्त्रमहोदधिनामकं तंत्रचिकिषुराचार्यः शिष्टाचारपरिपालनाय निर्विघ्नग्रंथसमाप्तयेचेष्टदेवतानमस्कारपूर्वकं ग्रंथकरणंप्रतिजानीते ॥ प्रणम्येति । लक्ष्म्याश्लिष्टोनृहरिर्लक्ष्मीनृहरिः । मध्यपदलोपीसमासः । गुरुश्रीनृसिंहाश्रमम् । मंत्रा एव महांतःपदकानिधीयंतेऽस्मिन्निति मंत्रमहोदधिः ग्रन्थः ॥१॥ तत्रप्रातरारभ्यमन्त्रिणःकृत्यमाह । प्रातरिति । स्पष्टम् । गुरुपादांबुजगलिताऽमृतधारयामानसंस्नानकुर्यात्–इत्यादिपूजा तरंगेवक्ष्यति ॥ २ ॥ ३ ॥

टिप्पणी : स्नान की वैदिक विधि : गौतमीयतन्त्र में कहा गया है कि अपने शरीर का मल धोने के लिए पहिले अपनी शाखोक्त (वैदिक) विधि से स्नान करना चाहिए। यथा, "अद्येत्यादि श्रौतस्मार्त कर्मानुष्ठान सिद्धयर्थं प्रातः स्नानमहं करिष्ये" ऐसा संकल्प कर "इमं मे गङ्गे यमुने सरस्वति०" इस मन्त्र का उच्चारण करते हुए स्नान करना चाहिए।

मन्त्रस्नान की विधि : "ॐ अद्येत्यादि··· अमुकदेवताप्रीतये स्नानमहं करिष्ये" ऐसा संकल्प कर षडङ्गन्यास एवं प्राणायाम कर सूर्यमण्डल से अंकुशमुद्रा द्वारा निम्नलिखित मन्त्र से तीर्थों का आवाहन करना चाहिए।

"ॐ गङ्गे च यमुने चैव गोदावरि सरस्वति।
नर्मदे सिन्धु कावेरि जलेऽस्मिन् सन्निधिं कुरु॥"

फिर 'वं' से धेनुमुद्रा द्वारा अमृतीकरण, 'हूं' से कवचमुद्रा द्वारा अवगुण्ठन तथा 'फट्' से संरक्षण कर ११ बार मूलमन्त्र का जप कर स्नानीय जल को अभिमन्त्रित करना चाहिए। इसके बाद सूर्याभिमुख होकर १२ बार जलधारा छोड़ते हुए यह भावना करनी चाहिए कि यह जल इष्टदेवता के चरणारविन्द से निःसृत हुआ है। तत्पश्चात् उस जल में ३ बार डुबकी लेकर इष्टदेवता का ध्यान करते हुए यथा शक्ति मूल मन्त्र का जप करना चाहिए। और अन्त में कलशमुद्रा से ३ बार उक्त जल से अपने मस्तक का अभिषेक करना चाहिए।

मन्त्रसन्ध्या की विधि इसी ग्रन्थ के अध्याय २१ (तरङ्ग) में बतलायी गई है।

गृहद्वारमथागत्य द्वारपूजां समाचरेत्।
द्वारमस्त्रांबुना प्रोक्ष्य गणेशं चोर्ध्वतोयजेत्॥ ४॥
महालक्ष्मीं दक्षभागे वामभागे सरस्वतीम्।
पुनर्दक्षे यजेद्विघ्नं गंगां च यमुनामपि॥ ५॥
पुनर्वामेक्षेत्रपालं स्वः सिन्धुयमुने अपि।
पुनर्दक्षेतुधातारविधातारं तु वामतः॥ ६॥
तद्वन्निधी शंखपद्मौ ततोऽर्च्चेद्द्वारपालकान्।

द्वारपूजा : तत्पश्चात् घर के दरवाजे पर आकर द्वारपूजा करनी चाहिए। "अस्त्राय फट्" इस मन्त्र से अभिमन्त्रित जल से द्वार का प्रोक्षण कर उसके ऊपरी भाग में गणपति पूजन करना चाहिए।

द्वार के दाहिनी ओर महालक्ष्मी एवं बायीं ओर सरस्वती का पूजन करना चाहिए। फिर द्वार के दाहिनी ओर विघ्न, गङ्गा एवं यमुना का तथा बायीं ओर क्षेत्रपाल, सिन्धु एवं यमुना का पूजन करना चाहिए। इसके बाद द्वार के दक्षिण भाग

अस्त्रांबुना। अस्त्रायफडित्यभिमन्त्रितजलेन॥ ४॥ ६॥

में धाता का एवं वाम भाग में विधाता का पूजन करना चाहिये। इसीप्रकार द्वार के दक्षिण एवं वाम भाग में क्रमशः शंखनिधि एवं पद्मनिधि का तथा बाद में द्वारपालों का पूजन करना चाहिये।

टिप्पणी : ॐ गणेशाय नमः, ॐ महालक्ष्म्यै नमः, ॐ सरस्वत्यै नमः, इत्यादि नाममन्त्रों से पूर्वोक्त क्रम से द्वार के ऊपर दाहिनी ओर एवं बायीं ओर उक्त देवताओं का जल पुष्प आदि से पूजन करना चाहिये।

द्वारपूजां विधायेत्थं प्रविश्यार्चनमंदिरम् ॥ ७ ॥
उपविश्यासने नत्वा गणेशगुरुदेवताः। प्राणानायम्य तारेण पूरकुम्भकरेचकैः ॥८॥
द्वात्रिंशता चतुःषष्ट्या क्रमात्षोडशसंख्यया।
देवार्चायोग्यताप्राप्त्यै भूतशुद्धिं समाचरेत् ॥ ९ ॥

इस प्रकार द्वारपूजा कर पूजागृह में प्रवेश कर, आसन पर बैठकर गणपति, गुरुदेव एवं इष्टदेव को प्रणाम करना चाहिये।

३२ बार प्रणव (ॐ) का जप करते हुये प्राणवायु खींचकर, ६४ बार प्रणव का जप करते हुये रोककर तथा १६ बार प्रणव का जप करते हुये प्राणवायु का रेचन कर प्राणायाम करना चाहिये। और फिर देवार्चन के योग्य बनने के लिये 'भूतशुद्धि' करनी चाहिये।

टिप्पणी : ॐ गणेशाय नमः, ॐ गुरुभ्यो नमः, ॐ परम गुरुभ्यो नमः, ॐ परापर गुरुभ्यो नमः, ॐ अमुक देवतायै नमः, इन मन्त्रों से गणपति, गुरु एवं इष्टदेव को नमस्कार करना चाहिये।

भूतशुद्धि : विशुद्धेश्वर तन्त्र के अनुसार भूतशुद्धि वह क्रिया है, जिसके द्वारा शरीराकार में परिणत पृथिवी आदि पञ्चभूत शुद्ध होकर अव्यय ब्रह्म से मिल जाते हैं।

मूलाधारस्थितां देवीं कुण्डलीं परदेवताम्।
बिसतंतुनिभां विद्युत्प्रभां ध्यायेत्समाहितः ॥ १० ॥
मूलाधारात्समुत्थाप्य संगतांहृदयांबुजे।
सुषुम्नामार्गमाश्रित्यादाय जीवं हृदंबुजात् ॥ ११ ॥
प्रदीपकलिकाकारं ब्रह्मरंध्रगतं स्मरेत्।
जीवं ब्रह्मणि संयोज्य हंसमन्त्रेण साधकः ॥ १२ ॥

शंखपद्मनिधीन्तद्वद्दक्षवामयोःद्वारपालांस्तत्तद्देवानांवक्ष्यमाणान् ॥ ७ ॥ ८ ॥ द्वात्रिंशद्वारंप्रणवजपन्प्राणं पूरयेत् ॥ चतुःषष्टिवारं जपन्कुम्भयेत् ॥ षोडशवारंजपन्रेचयदित्यर्थः ॥ ९ ॥ मूलाधारात्कुण्डलिनोमुत्थाप्यसमाहितः सन्ध्यायेत ॥ १० ॥ हृदोजीवगृहीत्वा सुषुम्नामार्ग ब्रह्मरन्ध्रं नीत्वा ब्रह्मणिस्थापयेदिति गुरूपदेश गम्योऽअर्थो-

भूतशुद्धि : मूलाधारचक्र में स्थित कमलनाल के तन्तु के समान सूक्ष्म विद्युत कान्ति के समान देदीप्यमान कुण्डलिनी का एकाग्रचित्त होकर ध्यान करना चाहिये। उस कुण्डलिनी को मूलाधार से जगाकर (क्रमशः स्वाधिष्ठान एवं मणिपूरक चक्र का भेदन कर) सुषुम्णामार्ग से हृदय स्थित अनाहत चक्र में लाकर वहाँ स्थित दीपशिखा के समान आकार वाले जीव, को अपने मुख में लेकर (विशुद्ध चक्र एवं आज्ञाचक्र का भेदन कर) ब्रह्मरन्ध्र में स्थित सहस्रार चक्र में लाने का ध्यान करना चाहिये। वहाँ परमात्मा का निवास है। साधक 'हंस' मन्त्र से जीवात्मा सहित उस कुण्डलिनी को परमात्मा में विलीन कर दे।

पादादिब्रह्मरंध्रांतं स्थितं भूतगणं स्मरेत्।
स्ववर्णबीजाकृतिभिर्युक्तं तद्विधिरुच्यते ॥ १३ ॥
पादादिजानुपर्य्यंतं चतुष्कोणं सवज्रकम्।
भूबीजाढ्यं स्वर्णवर्णं स्मरेदवनिमंडलम् ॥ १४ ॥
जान्वाद्यानाभिचंद्रार्द्धनिभं पद्मद्वयांकितम्।
वंबीजयुक्तं श्वेताभमंभसो मंडलं स्मरेत् ॥ १५ ॥
नाभेर्हृदयपर्य्यन्तं त्रिकोण स्वस्तिकान्वितं।
रंबीजेन युतं रक्तं स्मरेत्पावकमडलम् ॥ १६ ॥
हृदोभ्रूमध्यपर्य्यंतं वृत्तं षड्बिंदुलांछितम्।
यंबीजयुक्तं धूम्राभं नभस्वन्मंडलं स्मरेत् ॥ १७ ॥
आब्रह्मरंध्रं भ्रूमध्याद् वृत्तं स्वच्छं मनोहरम्।
हंबीजयुक्तमाकाशमडलं प्रविचिन्तयेत् ॥ १८ ॥

फिर पैर के तलुवे से लेकर ब्रह्मरन्ध्र पर्यन्त पृथिवी आदि भूतों के मण्डलों का अपने रंग एवं आकार के साथ चिन्तन करना चाहिये। उसकी विधि इस प्रकार है— पैर के तलुवे से जानु पर्यन्त पृथिवी मण्डल का ध्यान करना चाहिए, जो चौकोर है, भूबीज से युक्त है तथा स्वर्ण के समान पीले रंग का है। जानु से लेकर नाभि पर्यन्त श्वेतवर्ण अर्द्धचन्द्राकार, पद्मद्वयाङ्कित एवं जलबीज (वं) सहित सोममण्डल का ध्यान करना चाहिए।

नाभि से हृदय पर्यन्त त्रिकोणाकार, स्वस्तिकयुक्त, अग्निबीज (रं) के साथ रक्तवर्ण वाले अग्निमण्डल का ध्यान करना चाहिए। हृदय से भ्रूमध्य भाग तक गोलाकार षड्बिन्दुयुक्त धूम्रवर्ण एवं वायु बीज (यं) वाले वायुमण्डल का चिन्तन करना

योगिना ज्ञेयः ।। योगाभावे स्मरणमात्रविधेयम् ॥ ११ ॥ १२ ॥ वर्णापीतादयः ॥ बीजानिलमित्यादीनि ॥ आकृतयश्चतुष्कोणादयः ॥ तद्युक्तभूतगणम् ॥ १३ ॥ तदेवदर्शयति ॥ ॥ पादादीति ॥ १४ ॥ भूमंडले यदिंद्रिय गमन घ्राण गधः ब्रह्मनिवृत्तिः समानः ग्रन्तव्यो

चाहिए। भ्रूमध्य से ब्रह्मरन्ध्र पर्यन्त वृत्ताकार स्वच्छवर्ण, मनोहर एवं आकाशबीज (हं) वाले आकाश मण्डल का ध्यान करना चाहिए।

पद्धस्तपायूपस्थावाक्क्रमाद्ध्येयाधरादिगाः।
स्वकीयविषयैर्युक्ता गमनग्रहणादिभिः ॥ १९ ॥
घ्राणं च रसनाचक्षुःस्पर्शनश्रोत्रमिंद्रियम्।
क्रमाद्ध्येयं धरादिस्थं गंधादिगुणसंयुतम् ॥ २० ॥
ब्रह्मविष्णुशिवेशानाःसदाशिवइतीरिताः।
धरादिभूतसंघेशा ध्येयास्तन्मंडलेषु ते ॥ २१ ॥
निवृत्तिश्च प्रतिष्ठा च विद्या शांतिश्चतुर्थिका।
शांत्यतीतेतिपंचैव कला ध्येयाधरादिगाः ॥ २२ ॥
समानो दानव्यानाश्चापानप्राणौ च वायवः।
धरादिमंडलगताः पंचध्येयाःक्रमादिमे ॥ २३ ॥

पृथिवी आदि मण्डलों में अपने गमन आदान आदि विषयों के साथ पाद, हस्त, पायु, उपस्थ एवं वाक्–इन कर्मेन्द्रियों का तथा गन्ध आदि विषयों के साथ नासिका, जिह्वा, चक्षु, त्वचा एवं कर्ण–इन ज्ञानेन्द्रियों का चिन्तन करना चाहिए। पृथिवी आदि मण्डलों में ब्रह्मा, विष्णु शिव, ईशान एवं सदाशिव इन देवों का ध्यान करना चाहिए। उन्हीं मण्डलों में निवृत्ति, प्रतिष्ठा, विद्या, शान्ति एवं शान्त्यतीत कलाओं का तथा समान, उदान, व्यान, अपान एवं प्राण वायु का ध्यान करना चाहिए।

एवंभूतानि संचिंत्य प्रत्येकंप्रविलापयेत्।
भुवं जले जलं वह्नौ वह्निं वायौ नभस्यमुम् ॥ २४ ॥
विलाप्य खमहंकारे महत्तत्त्वेप्यहंकृतिम्।
महांतं प्रकृतौ मायामात्मनि प्रविलापयेत् ॥ २५ ॥

इस प्रकार भूत मण्डलों का चिन्तन कर भूमि को जल में, जल को अग्नि में, अग्नि को वायु में, वायु को आकाश में, आकाश को अहंकार में, अहंकार को महत्तत्व में, महत्तत्व को प्रकृति में और प्रकृति को आत्मा में विलीन करना चाहिए।

शुद्धसच्चिन्मयो भूत्वा चिंतयेत्पापपूरुषम्।
दक्षकुक्षिस्थितं कृष्णमंगुष्ठपरिमाणकम् ॥ २६ ॥
विप्रहत्याशिरोयुक्तं कनकस्तेयबाहुकम्।

देशोपि। एवमष्टौपदार्थाश्चित्या ॥ एवंजलमंडलं ॥ १५ ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥ ॥ २१ ॥ हस्तग्रहणग्राह्यरसनारसविष्णुप्रतिष्ठोदानाः ॥ तेजसि-पायुविसर्गविसर्जनीयचक्षु-रूपंशिवविद्याव्यानाः ॥ वायौउपस्थानदस्त्रीस्पर्श नस्पर्शेशानशांत्यपानाः ॥ नभसि-वाग्व-क्तव्यवदनश्रोत्रशब्दसद शिवशांत्यतीताप्राणाः ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥

मदिरापानहृदयं गुरुतल्पकटीयुतम् ॥ २७ ॥
पापिसंयोगिपद्वंद्वमुपपातकरोमकम् ।
खड्गचर्मधरं दुष्टमधो वक्त्रं सुदुःसहम् ॥ २८ ॥

फिर शुद्ध एवं सच्चिदानन्दमय होकर अपनी वाम कुक्षि में स्थित कृष्णवर्ण, अंगुष्ठमात्र परिमाण वाले पापपुरुष का ध्यान करें। ब्रह्महत्या उसका शिर है, स्वर्णस्तेय (सोने की चोरी) उसके हाथ हैं, मदिरापान उसका हृदय है, गुरु तल्पगमन उसकी कटि है, इन पापों के करने वाले पुरुषों का संसर्ग उसके दोनो पैर हैं तथा छोटे मोटे पाप उसके रोम हैं। खड्ग चर्म को धारण करने वाले, अधोमुख एवं दुष्ट उस पाप पुरुष का ध्यान करना चाहिए।

वायुबीजं (यं) स्मरन्वायुं संपूर्य्यैनं विशोषयेत् ।
स्वशरीरयुतं मंत्रीवह्नि(रं)बीजेन निर्दहेत् ॥ २९ ॥
कुम्भकेपरिजप्तेन ततःपापनरोद्भवम् ।
बहिर्भस्मसमुत्सार्य्य वायुबीजेन (यं) रेचयेत् ॥ ३० ॥

तत्पश्चात् वायुबीज (यं) का स्मरण करते हुए पूरक विधि से इस पाप पुरुष का शोषण तथा अग्नि बीज (र) का जप करते हुए साधक को अपने शरीर के साथ इस पाप पुरुष को जला देना चाहिए। फिर वायुबीज (यं) का जप करते हुए इस पाप पुरुष को भस्म को रेचक विधि से निकाल देना चाहिए।

सुधाबीजेन (वं) देहोत्थं भस्मसंप्लावयेत्सुधीः ।
भूबीजेन (लं) घनीकृत्य भस्मतत्कनकांडवत् ॥ ३१ ॥
विशुद्धमुकुराकारं जपन्बीजंविहायसः (हं) ।
मूर्द्धादिपादपर्य्यंतान्यंगानि रचयेत्सुधीः ॥ ३२ ॥
आकाशादीनिभूतानि पुनरुत्पादयेच्चतः ।
सोहंमन्त्रेण चात्मानमानयेद् हृदयांबुजे ॥ ३३ ॥
कुण्डलीं जीवमादाय परसंगात्सुधामयम् ।
संस्थाप्य हृदयांभोजे मूलाधारगतां स्मरेत् ॥ ३४ ॥

तदनन्तर सुधाबीज (वं) से उसके शरीर की भस्म को आप्लावित करना चाहिए। भूबीज (लं) से आप्लावित भस्म को घनीभूत करना चाहिए तथा विशुद्ध मुकुराकार आकाशबीज (हं) का जप करते हुए उससे शिर से लेकर पैर तक समस्त अंगों की रचना करनी चाहिए।

॥ २८ ॥ वायुर्बीज य वह्निबीजं रं ॥ २९ ॥ ३० ॥ सुधाबीज वं भूबीजं लं नभोबीजहं तंनशरीरंसावयव कुर्यात् ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ चित्तःब्रह्मणासकाशात् ॥ ३३ ॥ ३४ ॥३५ ॥ पाशः

फिर चित् (आत्मा) से 'सोऽहं' मन्त्र का जप करते हुए प्रकृति से लेकर पञ्चमहाभूतों तक २४ तत्वों को पुनः उत्पन्न करना चाहिए। फिर अमृतमय जीव को हृदय कमल पर स्थापित कर मूलाधार में गयी कुण्डलिनी का स्मरण करना चाहिए।

टिप्पणी : भूतशुद्धि की विधि

"ॐ अद्येत्यादि····देवपूजाद्यधिकारसिद्धये भूतशुद्धाद्यहं करिष्ये" ऐसा संकल्प कर शान्त एवं स्थिर होकर एकाग्रमन से कुण्डलिनी का चिन्तन करना चाहिए। कुण्डलिनी हजारों बिजलियों की कान्ति के समान देदीप्यमान, कमलनाल के तन्तु के समान सूक्ष्म एवं सर्पाकार है। वह मूलाधार चक्र में सोती रहती है। अब वह जाग गयी है और स्वाधिष्ठान तथा मणिपूर चक्र को भेद कर सुषुम्णा मार्ग से हृदय स्थित अनाहत चक्र में आ गयी है। वहाँ दीपशिखा जैसी आकृत्ति वाला जीव रहता है। उसे अपने मुख में लेकर वह विशुद्धचक्र एवं आज्ञा चक्र का भेदन करती हुई सहस्रार में पहुँच गयी है। वहाँ परमात्मा का निवास है – ऐसा ध्यान करते हुए साधक को 'हंसः' मन्त्र से जीवात्मा के साथ कुण्डलिनी को परमात्मा में विलीन कर देना चाहिए।

तदनन्तर ऐसा ध्यान करना चाहिए कि शरीर में पैर के तलुवे से जानुपर्यन्त पृथिवी मण्डल है, वह चौकोर और पीले रंग का है। उसमें पादेन्द्रिय, गमनक्रिया, गन्तव्य स्थान, गन्ध, घ्राण, पृथिवी, ब्रह्मा, निवृत्ति कला एवं समान वायु रहते हैं। ऐसा स्मरण करते हुए "ॐ ह्लां ब्रह्मणे पृथिव्यधिपतये निवृत्ति कलात्मने हुं फट् स्वाहा" इस मन्त्र का जप करते हुए कुण्डलिनी के द्वारा उन्हें जल स्थान में विलीन कर देना चाहिए।

फिर जानु से नाभि पर्यन्त श्वेत वर्ण, अर्द्धचन्द्राकार जलमण्डल का ध्यान करना चाहिए, जिसमें हस्त इन्द्रिय, दानक्रिया दातव्य, रस, रसना, जल, विष्णु, प्रतिष्ठाकला एवं उदान वायु रहते हैं। ऐसा ध्यान कर "ॐ ह्लीं विष्णवे जलाधिपतये प्रतिष्ठा कलात्मने हुं फट् स्वाहा" इस मन्त्र का जप करते हुए कुण्डलिनी के द्वारा इन सबको अग्नि स्थान में विलीन कर देना चाहिए।

तत्पश्चात् नाभि से हृदय पर्यन्त रक्त वर्ण, त्रिकोणाकार अग्निमण्डल का ध्यान करना चाहिए, जिसमें पायुइन्द्रिय, विसर्ग क्रिया, विसर्जनीय, रूप, चक्षु, तेज, रुद्र, विद्याकला एवं व्यान वायु निवास करते हैं। ऐसा ध्यान करते हुए "ॐ ह्रूं रुद्राय तेजोऽधिपतये विद्याकलात्मने हुं फट् स्वाहा" इस मन्त्र का जप करते हुए कुण्डलिनी के द्वारा इन सब को वायु मण्डल में विलीन कर देना चाहिए।

इसके बाद हृदय से भ्रूपर्यन्त काले रंग वाले, गोलाकार छः बिन्दुओं से चिह्नित

वायु मण्डल का ध्यान करना चाहिए, जिसमें उपस्थ इन्द्रिय, आनन्द क्रिया, स्पर्श, त्वचा, वायु ईशान, शान्तिकला एवं अपान वायु रहते हैं। ऐसा ध्यान करते हुए "ॐ ह्रैं ईशानाय वाय्वधिपतये शान्ति कलात्मने हुं फट् स्वाहा" इस मन्त्र का जप करते हुए कुण्डलिनी द्वारा इन सबको आकाश मण्डल में विलीन कर देना चाहिए।

और फिर भ्रूमध्य से ब्रह्मरन्ध्रपर्यन्त स्वच्छ वृत्ताकार आकाश मण्डल का ध्यान करना चाहिए, जिसमें वाग् इन्द्रिय, वचन क्रिया, वक्तव्य, शब्द, श्रोत्र, आकाश सदाशिव, शान्त्यतीत कला एवं प्राणवायु रहते हैं। ऐसा ध्यान कर "ॐ ह्रौं सदाशिवाय आकाशाधिपतये शान्त्यतीतकलात्मने हुं फट् स्वाहा" इस मन्त्र का जप करते हुए कुण्डलिनी द्वारा इन सबको अहंकार में विलीन कर देना चाहिए। तदनन्तर अहंकार को महत्तत्व में, महत्तत्व को प्रकृति में और प्रकृति को नित्यशुद्ध बुद्ध स्वभाव, स्वयं प्रकाश, सत्यज्ञान, अनन्त आनन्द स्वरूप, ज्योतिः स्वरूप परब्रह्म परमात्मा में विलीन कर देना चाहिए।

इसके बाद पाप पुरुष का चिन्तन करना चाहिए—"मेरो वामकुक्षि में अनादि कालीन पाप मूर्तिमान पुरुष के रूप में निवास करता है। उसका शरीर अंगुष्ठ प्रमाण है, वह कान्ति हीन है तथा उसका शरीर ५ महापापों से बना है। ब्रह्महत्या उसका सिर है, सोने की चोरी उसके हाथ हैं, सुरापान उसका हृदय है, गुरुतल्पगमन उसकी कटि है, तथा पापी पुरुषों का संसर्ग उसके पैर हैं। उसके अंग प्रत्यंग पाप से बने हैं। रोम रोम में उपपातक हैं। दाढ़ी और आँखें लाल हैं। एक हाथ में अविवेक का खड्ग और दूसरे में अहंकार की ढाल है। वह असत्य के घोड़े पर सवार है, चेहरे से पिशुनता टपक रही है। क्रोध के दाँत और काम का कवच है। ऐसा मूढ़ पाप पुरुष व्याधिग्रस्त होने के कारण मरणासन्न हो रहा है।

इस प्रकार पापपुरुष का चिन्तन कर उसका शोषण करने के लिए विनियोग करना चाहिए—"ॐ अस्य वायु बीजस्य किस्किन्धऋषिः वायुर्देवता जगतीछन्दः पापपुरुषशोषणे विनियोगः"—ऐसा विनियोग कर वायुबीज "यं" की १६ आवृत्ति के साथ पूरक रीति से उस वायुबीज से उत्पन्न वायु से सशरीर पाप पुरुष को सुखाने की भावना करनी चाहिए।

तदन्तर सूखे हुए पाप पुरुष के शरीर को भस्म करने के लिए विनियोग करना चाहिए, यथा—"ॐ अस्याग्निबीजस्य कश्यपऋषि अग्निर्देवता त्रिष्टुप्छन्दः पापपुरुष भस्मीकरणे विनियोगः"—ऐसा विनियोग कर अग्निबीज (रं) की कुम्भकरीति से ६४ आवृत्ति करते हुए उस पापपुरुष के सूखे हुए शरीर को भस्म कर देना चाहिए।

फिर पूर्वोक्त वायु बीज का पापपुरुष की भस्म निकालने के लिए विनियोग कर

वायुबीज (यं) की ३२ आवृत्ति करते हुए रेचक प्राणायाम द्वारा उसकी भस्म को उड़ा देना चाहिए। तत्पश्चात् उस भस्म को आप्लावित करने के लिए वरुण बीज का विनियोग करना चाहिए, यथा—"ॐ अस्य वरुणबीजस्य हिरण्यगर्भ ऋषिः हंसदेवता त्रिष्टुप् छन्द आप्लावितकरणे विनियोगः"—ऐसा विनियोग कर वरुणबीज (वं) का चिन्तन करते हुए उससे प्रवाहित होने वाले अमृत से उस भस्म को आप्लावित करना चाहिए। इसके बाद घनीकरण के लिए पृथिवीबीज का विनियोग करना चाहिए, यथा—"ॐ अस्य पृथिवीबीजस्य ब्रह्मा ऋषि इन्द्रो देवता गायत्री छन्द घनीकरणे विनियोगः" ऐसा विनियोग कर पृथिवी बीज (लं) से आप्लावित भस्म का घनीकरण करके आकाशबीज (हं) से पुनः सावयव शरीर की रचना करनी चाहिए।

इसको अपना दिव्य शरीर मानकर परमात्मा में विलीन पूर्वोक्त २४ तत्त्वों को सृष्टि क्रम से अपने अपने स्थान पर स्थापित कर 'सोऽहम्' मन्त्र का जप करते हुए कुण्डलिनी द्वारा परमात्मा की सन्निधि से जीव को लेकर उसे पुनः हृदय कमल में स्थापित कर कुण्डलिनी को मूलाधार में ले जाना चाहिए।

इस प्रकार भूतशुद्धि की उक्त क्रिया के द्वारा जीव परमात्मा की सत्ता, शक्ति, कृपा, सान्निध्य एवं सायुज्य प्राप्त कर परम पवित्र एवं दिव्य हो जाता है। इस क्रिया से शरीर पापरहित, नूतन, निर्मल एवं इष्टदेव की आराधना के योग्य हो जाता है।

भूतशुद्धि की अन्य संक्षिप्त रीतियां : पुरश्चरणचन्द्रिका[1] में भूतशुद्धि की निम्नलिखित विधि बतलायी गयी है—"हृदय में एक कमल है, उसका मूल धर्म और नाल ज्ञान है। आठ प्रकार के ऐश्वर्य उसके दल हैं और परवैराग्य कर्णिका है। वह प्रणव के द्वारा उद्भासित हो रहा है। उस कर्णिका पर दीप शिखा के समान ज्योतिः स्वरूप जीवात्मा स्थित है"—ऐसा ध्यान कर मूलाधार में कुण्डलिनी का चिन्तन करना चाहिए। वहाँ से सोती हुई कुण्डलिनी को जगाकर सुषुम्णामार्ग से जीवात्मा को लेकर परमात्मा में विलीन कर दे। कुछ समय तक इसी अवस्था का अनुभव कर कुण्डलिनी

---

[1] अथवान्यप्रकारेण भूतशुद्धिर्विधीयते।
धर्मकन्द समुद्भूतं ज्ञाननालं सुशोभितम्॥
ऐश्वर्याष्टदलोपेतं परवैराग्यकर्णिकम्।
स्वीय हृत्कमले ध्यायेत्प्रणवेन प्रकाशितम्॥
कृत्वा तत्कर्णिका संस्थं प्रदीपकलिकानिभम्।
जीवात्मानं हृदि ध्यात्वा मूले संचिन्त्य कुण्डलीम्॥
सुषुम्णावर्त्मनात्मानं परमात्मनि योजयेत्॥
—पुरश्चरण चन्द्रिका।

द्वारा परमात्मा की सन्निधि से जीवात्मा को लेकर हृदय में उसे स्थापित करते हुए कुण्डलिनो को मूलाधार में ले आना चाहिए। यह संक्षेप में भूतशुद्धि की विधि है।

इन दोनों रीतियों के अलावा भूत शुद्धि की एक तीसरी रीति इस प्रकार है। उक्त दोनों रीतियों में राजयोग को अनुभूति, लययोग की भावना, मन्त्रयोग की शक्ति तथा हठयोग की क्रियाएँ विद्यमान हैं। जब कि इस रीति में मन्त्रशक्ति एवं मन्त्रार्थ की भावना का सुन्दर पुट है। राजयोग में इसकी परिणति अवश्य है, किन्तु इसमें हठयोग बिल्कुल नहीं है। इस रीति में निम्नलिखित चार मन्त्रों की मन्त्रार्थ भावना सहित आवृत्ति करनी होती है,—

१. ॐ भूतशृंगाटात् शिरःसुषुम्णापथेन जीवशिवं परमशिवपदे योजयामि स्वाहा।
२. ॐ यं लिङ्गशरीरं शोषय शोषय स्वाहा।
३. ॐ रं सङ्कोच शरीरं दह दह स्वाहा।
४. ॐ परमशिवसुषुम्णापथेन मूलशृङ्गाटम् उल्लस उल्लस ज्वल ज्वल प्रज्वल प्रज्वल सोऽहं हंसः स्वाहा।

इन मन्त्रों को मन्त्रार्थ भावना सहित लगातार कुछ समय तक एकाग्रचित्त होकर आवृत्ति करने से शरीर दिव्य हो जाता है।

भूतशुद्धिं विधायैवं प्राणस्थापनमाचरेत्।
प्राणप्रतिष्ठामंत्रस्य मुनयोजेशपद्मजाः ॥ ३५ ॥
छंदऋग्यजुषं साम प्राणशक्तिस्तुदेवता।
पाशो (आं) बीजंत्रपा (ह्रीं) शक्तिर्विनियोःसुसंस्थितौ ॥ ३६ ॥
ऋषीञ्छिरसि वक्त्रे तु च्छंदांसि हृदिदेवताम्।
गुह्ये बीजं पदोःशक्तिन्यस्य कुर्य्यात्षडंगकम् ॥ ३७ ॥

प्राणप्रतिष्ठा : उक्त रीति से भूतशुद्धि करके प्राणप्रतिष्ठा करनी चाहिए। प्राण-प्रतिष्ठा-मन्त्र के अजेशपद्मज ऋषि हैं, ऋक् यजु एवं साम छन्द हैं, प्राणशक्ति देवता है, पाश (आं) बीज है, त्रपा (ह्रीं) शक्ति है और यह मन्त्र प्राणप्रतिष्ठा में विनियुक्त होता है।

ऋषि का शिर में, छन्द का मुख में, देवता का हृदय में, बीज का गुह्यस्थान में, तथा शक्ति का पैरों में न्यास कर (वक्ष्यमाण रीति से) अङ्ग न्यास करना चाहिए।

टिप्पणी : ऋषि :— जिस व्यक्ति ने सर्वप्रथम शिव जी के मुख से मन्त्र सुनकर विधिवत उसे सिद्ध किया था, वह उस मन्त्र का ऋषि कहलाता है। उस ऋषि को उस

आं त्रपा ह्रीं असुसस्थितौ प्राणस्थापने विनियोगः ॥ ३६ ॥ कवर्गेति क्रमतःपचमममति-प्रयोगः ङकंखंगंआकाशवायुतेजोजलपृथिव्यात्मनेहृदयायनमइत्यादि ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ ३९ ॥

मन्त्र का आदि गुरु मानकर श्रद्धा सहित उसका मस्तक में न्यास किया जाता है।

छन्द : मन्त्र को सर्वतोभावेन आच्छादित करने की विधि को छन्द कहते हैं। अक्षर या पदों से छन्द बनता है तथा इनका उच्चारण मुख से होता है। अतः छन्द का मुख में न्यास किया जाता है।

देवता : जीव मात्र के समस्त क्रिया कलापों को प्रेरित संचालित एवं नियन्त्रित करने वाली प्राणशक्ति को देवता कहते हैं। यह शक्ति व्यक्ति के हृदय में स्थित होती है। अतः देवता का हृदय में न्यास करते हैं।

बीज : मन्त्र शक्ति को उद्भावित करने वाला तत्व बीज कहलाता है। अतः बीज का गुताङ्ग (सृजनाङ्ग) में न्यास किया जाता है।

शक्ति : जिसकी सहायता से बीज मन्त्र बन जाता है, वह तत्व शक्ति कहलाता है। उसका पाद स्थान में न्यास करते हैं।

विनियोग : मन्त्र को फल की दिशा का निर्देश देना विनियोग कहलाता है। तान्त्रिक परम्परा में ऋषि आदि[१] की जानकारी के साथ साथ उसका यथार्थ विनियोग करना आवश्यक माना गया है। गौतमीय तन्त्र में कहा गया है कि ऋषि एवं छन्द का ज्ञान न होने पर मन्त्र का फल नहीं मिलता। तथा उसका विनियोग न करके मात्र जप करने से मन्त्र दुर्बल हो जाता है।

अङ्गन्यास : हृदय, शिर, शिखा, कवच, नेत्र एवं करतल इन छः अङ्गों में मन्त्र का न्यास करना अङ्गन्यास कहलाता है। कुलार्णव तन्त्र में लिखा है कि जो व्यक्ति न्यासरूपी कवच से आच्छादित होकर मन्त्र का जप करता है, उसकी साधना में विघ्न बाधाएँ स्वयं दूर हो जाती हैं, तथा उसे निश्चित सिद्धि मिलती है। जो व्यक्ति अज्ञान या प्रमाद वश न्यास नहीं करता उसे पग पग पर विघ्नों का सामना करना होता है।

पञ्चाङ्ग एवं षडङ्गन्यास : शारदा तिलक में लिखा है कि जहाँ पञ्चाङ्गन्यास कहा गया हो, वहाँ नेत्र को छोड़कर शेष पूर्वोक्त पाँच अङ्गों में न्यास करना चाहिए। अन्यथा पूर्वोक्त ६ अंगों में न्यास करना चाहिए।

विशेष : सामान्यतया अङ्गन्यास का क्रम एवं इनके मन्त्रों का वर्णन अपने कल्प एवं आगम ग्रन्थों में मिल जाता है। किन्तु जहाँ अङ्गन्यास के मन्त्र निर्दिष्ट न हों,

---

[१]विनियोग में ऋषि, छन्द, देवता, बीज एवं शक्ति के अलावा एक और भी तत्त्व होता है, जिसे कीलक कहते हैं। मन्त्र को धारण करने वाला या मन्त्र शक्ति को सन्तुलित रखने वाला तत्त्व कीलक कहलाता है। इसका सर्वाङ्ग में न्यास किया जाता है।

वहाँ देवता के नाम के आदि अक्षर या बीज द्वारा न्यास कर लेना चाहिए।

प्राणप्रतिष्ठा मन्त्र का विनियोग : ॐ अस्य श्री प्राणप्रतिष्ठा मन्त्रस्य अजेशपद्मजा ऋषयः ऋग्यजुःसामानिछंदांसि, प्राणशक्तिर्देवता, आं बीजं ह्रीं शक्तिः (क्रौं कीलकम्)[१] प्राणस्थापने विनियोगः।

ऋष्यादिन्यास : ॐ अजेशपद्मज ऋषिभ्यो नमः शिरसि
ॐ ऋग्यजुसाम छन्देभ्यो नमः मुखे
ॐ प्राण शक्तिर्देवतायै नमः हृदि
ॐ आं बीजाय नमः गुह्ये
ॐ ह्रीं शक्तये नमः पादयोः
ॐ क्रौं कीलकाय नमः सर्वाङ्गे

कवर्गनभआद्यैर्हृच्चशब्दाद्यैःशिरःस्मृतम् ।
टश्रोत्राद्यैःशिखाप्रोक्ता त गाद्यैस्तनुच्छदम् ॥ ३८ ॥
पवक्तव्यादिभिर्नेत्रमस्त्रंयेनांतरिंद्रियैः ।
आत्मनेतान्मनूनंगान्विन्यसेद्हृदयादिषु ॥ ३९ ॥
पंचमं प्रथमं पश्चाद्द्वितीयं च चतुर्थकम् ।
तृतायमित्थंक्रमतोवर्गवर्णान्समुच्चरेत् ॥ ४० ॥
यवर्गेप्येवमुच्चार्य्यं नभः (हं) श्वेतों (षं) तिमो (शं) भृगुः (सं)।
विमलश्वेति(लं) चोच्चार्य्याःक्रमाद्वर्णाःसबिंदवः ॥ ४१ ॥
नभोवाय्वग्निवार्भूमिनभआदयईरिताः ।
शब्दस्पर्शौ रूपरसगंधाःशब्दादयोमताः ॥ ४२ ॥
श्रोत्र त्वङ्नयनं जिह्वाघ्राणं श्रोत्रादयःस्मृताः।
वाक्पाणी पादपायूचोपस्थो वागादयः पुनः ॥ ४३ ॥
वक्तव्यादानगमनविसर्गानंदसंज्ञकाः ।
वक्तव्याद्या बुद्धिमनोहंकाराश्चित्तसंयुताः ॥ ४४ ॥
अन्तरिंद्रय संज्ञाःस्युरेवमुक्तं षडंगकम् ।

कवर्ग एवं नभ आदि का हृदय में, चवर्ग एवं शब्दादि का शिर में, टवर्ग एवं श्रोत्रादि का शिखा में, तवर्ग एवं वाक् आदि का कवच में, पवर्ग एवं वक्तव्यादि का

॥ ४० ॥ ४१ ॥ ४२ ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ शक्ति ह्रीश्च ॐ क्रौं ॥ ४६ ॥ आत्मनेइति ॥ आत्य-

---

[१]प्राणप्रतिष्ठा के विनियोग में प्रायः अधिकांश ग्रन्थों में "क्रौं कीलकम्" का उल्लेख किया गया है। इसलिए विनियोग में इसका उच्चारण तथा ऋष्यादि न्यास में कीलक का न्यास कर लेना चहिए।

पहिले प्रत्येक वर्ग के पंचम वर्ण, फिर क्रमशः प्रथम द्वितीय, चतुर्थ एवं तृतीय वर्णों का अनुस्वार सहित उच्चारण करना चाहिए। यवर्ग में उक्त क्रम से ५ अक्षरों (शं यं-रं वं लं) का उच्चारण कर नभ (ह) श्वेत (षं) तिम (श) भृगु (स) एवं विमल (ल) इन अक्षरों का अनुस्वार सहित उच्चारण करना चाहिए।

'नभोवाय्वग्निवार्भूमि' को नभ आदि, 'शब्दस्पर्शरूपरसगन्ध' को शब्दादि, 'श्रोत्रत्वङ्नयन जिह्वाघ्राण' को श्रोत्रादि, 'वाक्पाणि पादपायूपस्थ' को वाक् आदि 'वक्तव्यादानगमनविसर्गानन्द' को वक्तव्यादि तथा 'बुद्धिमनोहंकारचित्त' को अन्तरिन्द्रिय कहा गया है। इस प्रकार इन मन्त्रों से षडङ्गन्यास बतलाया गया है।

टिप्पणी : षडङ्गन्यास के मन्त्र

(ॐ) ङं कं खं घं गं नभोवाय्वग्निवार्भूम्यात्मने हृदयाय नमः
(ॐ) ञं चं छं झं जं शब्दस्पर्शरूपरसगन्धात्मने शिरसे स्वाहा
(ॐ) णं टं ठं ढं डं श्रोत्रत्वङ्नयनजिह्वाघ्राणात्मने शिखायै वषट्
(ॐ) नं तं थं धं दं वाक्पाणिपादपायूपस्थात्मने कवचाय हुम्
(ॐ) मं पं फं भं बं वक्तव्यादानगमनविसर्गानन्दात्मने नेत्रत्रयाय वौषट्
(ॐ) शं यं रं वं लं हं षं क्षं लं बुद्धिमनोहंकारचित्तात्मने अस्त्राय फट्

नेत्र में, यवर्ग एवं अन्तरिन्द्रिय का करतल में न्यास करना कहा गया है। अपने हृदय आदि अङ्गों में इन मन्त्रों का न्यास करना चाहिए।

नाभेरारभ्य पादान्तंपाशबीजं प्रविन्यसेत् ॥ ४५ ॥
नाभ्यंतं हृदयाच्छक्तिं (ह्रीं) हृदंतं मस्तकाच्छृणिम्(क्रौं)।
त्वगसृङ्मांसमेदोस्थिमज्जाशुक्राणि विन्यसेत् ॥ ४६ ॥
आत्मने हृदयांतानि यादिसप्तादिकान्यपि।
ओजःसद्यान्विताकाशपूर्वं प्राणं तु खादिकं ॥ ४७ ॥
भृग्वादिकं न्यसेज्जीवमेतान् हृदयदेशतः ।
यकाराद्या आद्यवर्णाःसर्वेस्युश्चंद्रभूषिताः ॥ ४८ ॥
ततः समस्तमूलेन मूर्द्धावचरणावधि ।
विधायव्यापकन्यासं विन्यसेत्पीठदेवताः ॥ ४९ ॥

नाभि से लेकर पैरों तक पाशबीज (आं) का न्यास करे। हृदय से नाभि तक शक्तिबीज (ह्रीं) का न्यास करे। मस्तक से हृदय तक शृणि (क्रौं) का न्यास करे।

त्वग्, असृग्, मांस, मेद, अस्थि, मज्जा, एवं शुक्र शब्द के साथ "आत्मने" लगाकर

इत्यतानित्वगादीनि हृदि न्यसेत् यादिवर्णपूर्वाणियत्वगात्मनेनम इत्यादि ॥ सद्यॐकार-स्तदन्विताआकाशःहःतदाद्यमोजः होंओजआत्मनेनमः ॥ खं हः तदादिकंप्राणं हं प्राणात्मने नमः ॥ ४७ ॥ भृगुः सः ॥ तदादिकंजीवात्मनेनमः ॥ यादयोवणश्चद्रेर्णानुस्वारेणभूषितायुताः

और आदि में सानुस्वार यकारादि वर्णों को लगाकर हृदय में न्यास करे। यथा—यं त्वगात्मने नमः, रं असृगात्मने नमः इस क्रम से उक्त सातों का हृदय में न्यास करना चाहिए। तथा सद्य (ओं) के साथ आकाश (ह) को प्रारम्भ में लगाकर ओजत्मने नमः, ख=आकाश (हं) के आगे प्राणात्मने नमः, तथा भृगु (सं) के आगे जीवात्मने नमः लगाकर हृदय में न्यास करना चाहिए।

यकारादि वर्णों को सानुस्वार बोलकर शिर से पैर तक व्याप्त करना चाहिए। इस प्रकार न्यास कर पीठ देवताओं का न्यास करना चाहिए।

टिप्पणी : प्रयोग : षडङ्गन्यास के बाद—

नाभेरारभ्य पादान्तं पाशबीज (आं) न्यसामि
हृदयादारभ्य नाभ्यन्तं शक्तिबीजं (ह्रीं) न्यसामि
मस्तकादारभ्य हृदयान्तं भ्रृणिबीजं (क्रौं) न्यसामि

ऐसा कहते हुए इन बीजों का उक्त अंगों में न्यास करना चाहिए।

फिर—(ॐ) यं त्वगात्मने नमः (ॐ) षं मज्जात्मने नमः
(ॐ) रं असृगात्मने नमः (ॐ) सं शुक्रात्मने नमः
(ॐ) लं मांसात्मने नमः (ॐ) हौं ओजात्मने नमः
(ॐ) वं मेदात्मने नमः (ॐ) हं प्राणात्मने नमः
(ॐ) शं अस्थ्यात्मने नमः (ॐ) सं जीवात्मने नमः

इन मन्त्रों को बोलते हुए इन तत्त्वों का हृदय में न्यास करना चाहिए।

तत्पश्चात्—

(ॐ) यं रं लं वं शं षं सं हं लं क्षं इति मूर्द्धादिचरणावधि व्यापकं करोमि—ऐसा कहते हुए इन बीजों को शिर से लेकर पैरों तक व्याप्त करे।

मंडूकश्चाथकालाग्नीरुद्र आधारशक्तियुक् ।
कूर्मोधरासुधासिंधुःश्वेतद्वीपं सुरांघ्रिपाः ॥ ५० ॥
मणिहर्म्यं हेमपीठं धर्मो ज्ञानं विरागता ।
ऐश्वर्यं धर्म्मपूर्वास्तुचत्वारस्ते नत्रादिकाः ॥ ५१ ॥
धर्मादयः स्मृताः पादाः पीठगात्राणि चेतरे ।
मध्येनंतस्तत्त्वपद्ममानंदमयकन्दकम् ॥ ५२ ॥
संविन्नालं ततःप्रोक्ता विकारमयकेसराः ।
प्रकृत्यात्मकपत्राणि पंचाशद्वर्णकर्णिका ॥ ५३ ॥
सूर्य्यस्येंदोःपावकस्य मंडलत्रितयं ततः ।
सत्त्वं रजस्तमःपश्चादात्मयुक्तोंतरात्मना ॥ ५४ ॥

परमात्माथज्ञानात्मात त्वेमायाकलादिके।
विद्यातत्त्वं परंतत्त्वं कथिताःपीठदेवताः ॥ ५५ ॥
पूजने सर्वदेवानां पीठे ताःपरपूजयेत् ।
न्यासस्थानानि चैतासां शरीरे बहिरर्चने ॥ ५६ ॥

पीठदेवता न्यास : (तदनन्तर) सानुस्वार अपने आद्यक्षर सहित पीठदेवताओं का न्यास करना चाहिए। मण्डूक, कालाग्निरुद्र, आधारशक्ति, कूर्म, पृथिवी, सुधासिन्धु (क्षीर सागर), श्वेतद्वीप कल्पवृक्ष, मणिमण्डप, स्वर्णसिंहासन, धर्म, ज्ञान, वैराग्य, ऐश्वर्य, अधर्म, अज्ञान, अवैराग्य, अनैश्वर्य, इनमें से धर्मादि पीठ के पाद तथा अन्य उसके अंग माने गये हैं। मध्य में अनन्त पद्म, आनन्दमयकन्दक, सांविन्नाल, विकारमयकेसर, प्रकृत्यात्मकपत्र, पंचाशद्वर्णात्मककर्णिका, सूर्यमण्डल, चन्द्रमण्डल, अग्निमण्डल, सत्त्व, रजस्, तमस् आत्मा, अन्तरात्मा, परमात्मा ज्ञानात्मा, मायातत्त्व, कलातत्त्व, विद्यातत्त्व एवं परंतत्त्व ये सर्व पीठदेवता बतलाये गये हैं।

सब देवताओं के पूजन में पीठ पर इनका पूजन करना चाहिए। बाह्य पूजा में शरीर पर इनके न्यास के स्थान पूजातरङ्ग में बतलाये जायेंगे।

टिप्पणी : पीठदेवताओं के न्यास की विधि : पीठ के मध्य में–मं मण्डूकाय नमः कं कालाग्निरुद्राय नमः, आं आधारशक्तये नमः, कूं कूर्माय नमः, पृं पृथिव्यै नमः, क्षीं क्षीरसमुद्राय नमः, श्वें श्वेतद्वीपाय नमः, कं कल्पवृक्षाय नमः, मं मणिमण्डपाय नमः, स्वं स्वर्णसिंहासनाय नमः इन मन्त्रों से तत्तद् देवताओं का न्यास करना चाहिए।

धं धर्माय नमः, ज्ञां ज्ञानाय नमः, वैं वैराग्याय नमः, ऐं ऐश्वर्याय नमः इन मन्त्रों से अग्नि कोण से प्रारम्भ कर चारों कोणों में इन देवताओं का न्यास करना चाहिए।

अं अधर्माय नमः, अं अज्ञानाय नमः, अं अवैराग्याय नमः, अं अनैश्वर्याय नमः— इन मन्त्रों से पूर्व आदि चारों दिशाओं में इन देवताओं का न्यास करना चाहिए।

फिर मध्य में अं अनन्ताय नमः, पं पद्माय नमः, आं आनन्दमयकन्दकाय नमः सं सविन्नालाय नमः, विं विकारमयकेसरेभ्यो नमः, प्रं प्रकृत्यात्मक पत्रेभ्यो नमः, पं पञ्चाशद्वर्णकर्णिकायै नमः, सं सूर्यमण्डलाय नमः, चं चन्द्र मण्डलाय नमः, अं अग्नि मण्डलाय नमः, सं सत्त्वाय नमः, रं रजसे नमः, तं तमसे नमः, आं आत्मने नमः, अं अन्तरात्मने नमः, पं परमात्मने नमः, मं मायातत्त्वाय नमः, कं कलातत्त्वाय नमः, विं विद्यातत्त्वाय नमः, पं परंतत्त्वाय नमः इन मन्त्रों से न्यास करना चाहिए।

कार्याः ॥ ४८ ॥ मडूकइत्यादिपीठदेवताः ॥ सुधासिंधुरित्यत्रस मुद्रविशेषंवक्ष्यति ॥ विरागतावैराग्यम् । न आदिकाअधर्मयनम इत्यादि ॥ ४९—५६ ॥

शरीर में पीठ देवताओं के न्यास के स्थानों का वर्णन इस ग्रन्थ के अध्याय २१ में किया गया है। जिज्ञासु वहाँ देख लें।

पूजातरङ्गे वक्ष्यन्ते सेन्द्राद्यर्णयुताश्चताः ।
प्राणशक्तेस्ततपूज्या अष्टौपीठस्य शक्तयः ॥ ५७ ॥
हृदयांभाजपत्रेषु नवमीत्वधिकर्णिकम् ।
जयाख्या विजया पश्चादजिताचाऽपराजिता ॥५८॥
नित्या विलासिनी दोग्ध्रीत्वघोरा मङ्गलांतिमा।
पाशादिबीजत्रितयं (आंह्रींक्रौं) प्राच्य पीठं दिशेत्ततः ॥५९॥
एवं देहमये पीठे ध्यायेद्देवीमसुप्रदाम् ।
नवयौनवगर्व्वाढ्यां पीवरस्तनशोभिनीम् ॥ ६० ॥

पीठशक्तियों का पूजन : इसके बाद हृदयकमल के ८ दलों पर (क्रमशः) आठ पीठ की शक्तियों का तथा उसकी कर्णिका में ९ वीं शक्ति का पूजन करना चाहिए। जया, विजया, अजिता, अपराजिता, नित्या, विलासिनी, दोग्ध्री, अघोरा एवं मङ्गला—ये नौ पीठ की शक्तियाँ हैं।

फिर पाश आदि तीनों बीजों (आं ह्रीं क्रौं) के साथ पीठ का उच्चारण कर, देहमय पीठ पर नवयौवनाभिमानिनी पुष्टस्तनों से सुशोभित प्राणशक्ति का ध्यान करना चाहिए।

टिप्पणी : प्रयोग : हृदयकमल के ८ पत्रों में—ॐ जयायै नमः, ॐ विजयायै नमः ॐ अजितायै नमः, ॐ अपराजितायै नमः, ॐ नित्यायै नमः, ॐ विलासिन्यै नमः, ॐ दोग्ध्र्यै नमः, ॐ अघोरायै नमः—इन मन्त्रों के पूजन कर कर्णिका में 'ॐ मंगलायै नमः' इस मन्त्र से पूजन/नमन करना चाहिए। फिर 'ॐ आं ह्रीं क्रौं पीठाय नमः' इस मन्त्र से पीठ का पूजन कर देहमय पीठ पर प्राणशक्ति का ध्यान करना चाहिए।

पाशंचापासृक्कपालेसृणीषूञ्छूलंहस्तैर्बिभ्रतीं रक्तवर्णाम् ।
रक्तोदन्वत्पोतरक्तांबुजस्थां देवीं ध्यायेत्प्राणशक्तिं त्रिनेत्राम् ॥६१॥

प्राण शक्ति का ध्यान : रक्तमय-समुद्र में नौका पर लालकमल में विराजमान, बायें हाथ में पाश, धनु एवं शूल धारण किए हुए तथा दाहिने हाथ में कपाल, अंकुश एवं बाण धारण किए हुए ६ भुजाओं वाली तीन नेत्रवाली प्राणशक्ति का ध्यान करना चाहिए।

॥ ५५-५६ ॥ पीठदेवतानां न्यासस्थानानिबहिर्यागेचपूजास्थानानिएकविंशेतरंगे वक्ष्यन्ते ताः मंडूकाद्याःसद्वाद्यर्णयुताः ॥ सानुस्वारप्रथमाक्षरयुताः । मंमंडूकाय नम इत्यादि ॥ ५७ ॥ हृदयपद्मपत्रेष्वष्टौ । नवमीकर्णिकायाम् । तांएवाह । जयेति ॥ ५८ ॥ पाशादीति ॥ आंह्रींक्रौंमितिपीठमन्त्रः ॥ ५९ ॥ ६० ॥ ध्यनामाह । पाशमिति ॥ षड्हस्तादेवीपाशधनुःशूलानि

अष्टपत्रस्थषट्कोणे ध्यात्वैवं पूजयेत्तृतान् ।
प्राग्रक्षोवायुकोणेषु ब्रह्मविष्णुशिवान्यजेत् ॥ ६२ ॥
अग्निवारुणशैवेष वाणीलक्ष्मीहिमाद्रिजाः ।
केसरेषु षडङ्गानि पत्रेष्वष्टौ तु मातरः ॥ ६३ ॥
ब्राह्मामाहेश्वरीचापि कौमारी वैष्णवी तथा ।
वाराहो च तथेंद्राणी चांमुण्डा सप्तमीमता ॥ ६४ ॥
अष्टमी तु महालक्ष्मीःप्रोक्ता विश्वस्य मातरः ।
देवतापूजने प्राची मध्ये पूजकपूज्ययोः ॥ ६५ ॥

अष्टदल के भीतर षट्कोण में इस प्रकार ध्यान कर पूर्व, नैऋत्य एवं वायु कोण में क्रमशः ब्रह्मा, विष्णु एवं शिव का तथा अग्नेय, पश्चिम एवं ईशान में क्रमशः वाणी (सरस्वती) लक्ष्मी एवं पार्वती का पूजन करना चाहिए।

फिर 'अग्नीशासुरवायव्यमध्यदिक्ष्वंगपूजनम्' इस रीति से अष्टदल में मातृकाओं का पूजन करना चाहिए। १. ब्राह्मी, २. माहेश्वरी, ३. कौमारी, ४. वैष्णवी, ५. वाराही ६. इन्द्राणी, ७. चामुण्डा एवं ८. महालक्ष्मी--ये विश्व की माता बतलायी गयी हैं।

देवपूजा में पूज्य एवं पूजक के मध्य में पूर्व दिशा होती है।

टिप्पणी : षट्कोण एवं अष्टदल में निर्दिष्ट दिशा में अपने नाममन्त्रों से उक्त देवताओं का पूजन/नमन करना चाहिए।

इन्द्रादयःस्वदिक्ष्वेव पूजनीया दिगीश्वराः ।
इन्द्रः कृशानुःकीनाशो निर्ऋतिर्वरुणोनिलः ॥६६॥
सोमईशाननामाधोनन्तऊर्ध्वं च तुर्म्मुखः ।
तत इन्द्रादिकाष्ठासु पूज्यादिक्पालहेतयः ॥ ६७ ॥
वज्रं शक्तिर्दण्डखड्गौ पाशोंकुशगदे अपि ।
त्रिशूलचक्रपद्मानि दशदिक्पालहेतयः ॥ ६८ ॥
एवमिष्ट्वाप्राणशक्तिं पंचावरणसंयुताम् ।
ध्यायन् हृदि करं धृत्वात्रिर्ज्जपेन्मत्तनुं सुधीः ॥ ६९ ॥

तदनन्तर अपनी अपनी दिशाओं में इन्द्र आदि दिक्पालों का पूजन करना चाहिए। इन्द्र, अग्नि, यम, निर्ऋति, वरुण, वायु, सोम, ईशान, अनन्त एवं ब्रह्मा ये १० दिक्पाल होते है। फिर पूर्व आदि दिशाओं में दिक्पालों के आयुधों का पूजन करना चाहिए।

वामहस्तेपरक्तकपालांकुशत्राणान्द्वेषु रक्तमयोयउदन्वान् समुद्रस्तत्रपोते नौस्तत्रारक्तपद्म-तत्रस्थिनाम् ॥ ६१ ॥ ६२ ॥ ६३ ॥ ६४ ॥ ६५ ॥ इंद्रादयःप्रसिद्धदिक्ष्वेवार्च्याः अन्यावरणे पूज्यपूजककोर्मध्येप्राची ॥ ६६ ॥ ६७ ॥ मन्त्रमुद्धरति । पाशमिति ॥ आंह्रींक्रौंयंरलंषंसं तारान्वितंनभः हों सप्तार्णोवच्यमाणः । अजपा हंसः ॥ ६८ ॥ ६९ ॥ ७० ॥ ७१ ॥ ७२ ॥

वज्र, शक्ति, दण्ड, खड्ग, पाश, अंकुश, गदा, त्रिशूल, चक्र एवं पद्म ये दिक्पालों के आयुध होते हैं।

इस प्रकार ५ आवरणों वाली प्राण शक्ति का पूजन कर हृदय पर हाथ रखकर (वक्ष्यमाण) मन्त्र का ३ बार जप करना चाहिए।

टिप्पणी : पूर्वे इन्द्राय नमः, आग्नेय्यां अग्नये नमः, दक्षिणस्यां यमाय नमः—इस रीति से पूर्व आदि दिशाओं में उनके स्वामियों का पूजन कर पूर्व, आग्नेय आदि क्रम से—वं वज्राय नमः, शं शक्तये नमः, दं दण्डाय नमः—इत्यादि मन्त्रों से दिक्पालों के समीप उनके आयुधों का पूजन करना चाहिए।

वक्ष्येधुनामनोस्तस्योद्धारं ध्यातृसुखावहम्।
पाशं (आं) मायां (ह्रीं) सृणिं (क्रौं) प्रोच्य यादीन्सप्तेन्दुसंयुतान् ।७०।
तारान्वितन्नभःसप्तवर्णमन्त्रं ततोऽजपाम्।
ममप्राणा इहप्राणा ममजीव इहस्थितः ॥ ७१ ॥
ममसर्वेन्द्रियाण्युक्त्वा ममवाङ्मनईरयेत्।
चक्षुःश्रोत्रघ्राणपदात्प्राणाइह समीर्य्य च ॥ ७२ ॥
आगत्यसुखमुच्चार्य्य चिरंतिष्ठंत्विदं पठेत्।
वह्निजायां (स्वाहा) च सप्तार्णमन्त्रमंतेपुनर्व्वदेत् ॥७३॥
प्राणप्रतिष्ठामंत्रोयं स्मृतःप्राणनिधापने।
ममेत्यस्यपदस्यादौ पाशादीनि समुच्चरेत् ॥ ७४ ॥
यन्त्रेषु प्रतिमादौ वा प्राणस्थापनमाचरन्।
ममस्थाने तस्य तस्य षष्ठ्यंतामभिधां वदेत् ॥ ७५ ॥

प्राणप्रतिष्ठामन्त्र का उद्धार : अब उस (प्राणप्रतिष्ठा) मन्त्र का उद्धार बतलाता हूँ, जो साधक को सुख देने वाला है। सर्वप्रथम पाश (आं) माया (ह्रीं) सृणि (क्रौं) बीजों को बोलकर सानुस्वार यकारादि सात वर्णों (यं रं लं वं शं षं सं) को बोलना चाहिए। और फिर तारा (ओं) के साथ नभ (ह) अर्थात् 'हों' बोलकर सप्ताक्षर मन्त्र (ॐ क्षं सं हंसः ह्रीं ॐ) तथा अन्त में अजपा (हंसः) बोलना चाहिए।

उक्त मन्त्र के साथ क्रमशः मम प्राणा इह प्राणाः, मम जीव इह स्पित, मम सर्वेन्द्रियाणि इह स्थितानि, 'मम वाङ्मनश्चक्षुः श्रोत्रघ्राणप्राणा इहागत्य सुखं चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा' यह बोलकर अन्त में सप्ताक्षरमन्त्र (ॐ क्षं सं हंसः ह्रीं ॐ) बोलना चाहिए।

॥ ७३ ॥ ७४ ॥ ७५ ॥ सप्तर्णमुद्धरति। सविंदवइति मेरुस्तः हंसः सः आकाशोहः भृगु सः

यह प्राणप्रतिष्ठामन्त्र प्राणप्रतिष्ठा के लिए बतलाया गया है। 'मम०' इत्यादि के पहिले पाशादि (आं ह्रीं क्रौं आदि) बोलने चाहिए। यन्त्र एवं प्रतिमा आदि में प्राणप्रतिष्ठा करते समय 'मम' के स्थान पर देवता का षष्ठ्यन्त नाम बोलना चाहिए। जैसे लक्ष्मीविनायक के यन्त्र में प्राणप्रतिष्ठा करते समय 'ॐ आं ह्रीं क्रौं०' इत्यादि बोलकर 'श्री लक्ष्मीविनायक देवताया प्राणा इह प्राणाः' ऐसा बोलना चाहिए।

टिप्पणी : मन्त्रोद्धार : (ॐ) आं ह्रीं क्रौं यं रं लं वं शं षं सं हों ॐ क्षं सं हंसः ह्रीं ॐ हंसः।

प्रयोग : पूर्वोक्त रीति से प्राणशक्ति का ध्यान कर—

'ॐ आं ह्रीं क्रौं यं रं लं वं शं षं सं हों ॐ क्षं सं हंसः ह्रीं ॐ हंसः मम प्राणा इह प्राणाः' ऐसा बोलकर प्राणप्रतिष्ठा करे।

'ॐ आं ह्रीं क्रौं यं रं० मम जीव इह स्थितः'—ऐसा बोलकर हृदय में जीवात्मा की प्रतिष्ठा करे।

"ॐ आं ह्रीं क्रौं यं रं० मम सर्वेन्द्रियाणि इह स्थितानि" ऐसा बोलकर अपनी समस्त इन्द्रियों की स्थापना करे।

"ॐ आं ह्रीं क्रौं यं रं० मम वाङ्मनश्चक्षुः श्रोत्रघ्राणप्राणा इहागत्य सुखं चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा ॐ क्षं सं हंसः ह्रीं ॐ" ऐसा बोलकर समस्त ज्ञानेन्द्रिय मन एव प्राण की प्रतिष्ठा करे। इस प्रयोग की ३ बार आवृत्ति करनी चाहिए।

सबिंदवो　　मेरुहंसाकाशाःसर्गोभृगुःपुनः।
मायेति　तारुद्धोयं　मन्त्रःसप्ताक्षरोमतः॥ ७६ ॥

प्राणप्रतिष्ठा के सप्ताक्षर मन्त्र का उद्धार : सानुस्वार मेरु (क्ष) हंस (स) आकाश (ह) के साथ भृगु (सः) एवं मायाबीज (ह्रीं) इन सबको 'ॐ' से सम्पुटित करने पर सप्ताक्षर मन्त्र बनता है।

टिप्पणी : सप्ताक्षर मन्त्र : ॐ क्षं सं हंसः ह्रीं ॐ

एवंप्राणान्प्रतिष्ठाप्य　मातृकान्यासमाचरेत्।
अकाराद्याःक्षकारान्ता　वर्णाःप्रोक्ता　तु　मातृका॥ ७७ ॥
प्रजापतिर्मुनिस्तस्या　गायत्रीछन्दईरितम्।
सरस्वतीदेवतोक्ता　विनियोगोऽखिलाप्तये॥
हलोबीजानि　चोक्तानि　स्वराःशक्तय　ईरिता॥७८॥

माया ह्रीं तारुद्धः प्रणवपुटितः तेनॐक्षंसं हंसः ह्रीं ओमितिसप्तार्णः॥ ७६ ॥ मातृकामाह॥ अकाराद्याइति प्रसिद्धा इत्यर्थः॥ ७७ ॥ षडंगमाह। पंचेति। क्लीबाऋॠऌॡ तद्धीनाः—सानुस्वरायेह्रस्वदीर्घास्तदंतरस्थितैः सबिंदुभिः जातयो हृदयायनमइत्यादयस्तद्युक्तैःषडवर्गैः

मूर्ध्नि वक्त्रे हृदि न्यस्येष्यादीन्साधकोत्तमः ।
पञ्चवर्गैर्यादिभिश्च षडङ्गानि समाचरेत् ॥ ७९ ॥
क्लीवहीनशशांकाढ्यह्रस्वदीर्घांतरस्थितैः ।
सानुस्वारैर्ज्जातियुक्तैर्ध्यायेद्देवीहृदम्बुजे ॥ ८० ॥

मातृका न्यास (सृष्टि न्यास) : पूर्वरीति से प्राणप्रतिष्ठा कर मातृका न्यास करना चाहिए। अकार से लेकर क्षकार तक के समस्त वर्णों को मातृका कहते हैं।

(मातृका न्यास मन्त्र का) प्रजापति ऋषि है, गायत्री छन्द है, सरस्वती देवता है, हल् बीज है, स्वर शक्ति है तथा सर्वाभीष्ट प्राप्ति के लिए यह विनियुक्त होता है।[१]

साधक को शिर, मुख एवं हृदय में (क्रमशः) ऋषि आदि का न्यास करना चाहिए। क्लीव वर्ण (ऋ ॠ ऌ ॡ) को छोड़कर शेष ह्रस्व एवं दीर्घ स्वरों से सम्पुटित सानुस्वार कवर्ग, चवर्ग, ट, तवर्ग, पवर्ग एवं यवर्ग से करन्यास कर षडङ्गन्यास करना चाहिए। फिर हृदय कमल पर सरस्वती का ध्यान करना चाहिए।

टिप्पणी : मातृका न्यास की उपयोगिता : यामल ग्रन्थों के अनुसार भूतशुद्धि एवं मातृका न्यास को छोड़कर जो व्यक्ति पूजन या पुरश्चरण करता है, उसकी वह पूजा भक्तिहीन पूजा के समान निष्फल हो जाती है।

तन्त्रशास्त्र के अन्य ग्रन्थों में कहा गया है कि मातृका न्यास के बिना जप आदि निष्फल हो जाते हैं, अतः देवताओं को वश में करने तथा मन्त्रों को सिद्ध करने के लिए प्रारम्भ में मातृका न्यास करना चाहिए। यथा—

'जयार्थं सर्वदेवानां विन्यासे च लिपेर्विना ।
कृतेतद्विफलं विद्यात्तदादौ तु लिपिं न्यसेत् ॥' इत्यादि ।

मातृका न्यास का विनियोग : ॐ अस्य श्री मातृका न्यास मन्त्रस्य ब्रह्मा ऋषिः गायत्री छन्दः मातृका सरस्वती देवी देवता हलो बीजानि स्वराः शक्तयः (क्षं कीलकं) अखिलाक्षये न्यासे विनियोगः।

ऋष्यादिन्यास : ॐ अं ब्रह्मणे ऋषये नमः आं शिरसि ।
ॐ इं गायत्री छन्दसे नमः ईं मुखे ।
ॐ उं सरस्वती देवतायै नमः ऊं हृदि ।
ॐ एं हल्भ्यो बीजेभ्यो नमः ऐं गुह्ये ।
ॐ ओं स्वरेभ्यो शक्तिभ्यो नमः औं पादयोः ।
ॐ अं क्षं कीलकाय नमः अः सर्वाङ्गे ।

षडंग अकंचवर्गंचडंआंहृदयायनमइत्यादि ॥ ७८ ॥ ७९ ॥ ८० ॥ ध्यानमाह ॥ पंचाशदिति

[१]इस मन्त्र का कीलक "क्षं" होता है।

करन्यास एवं अङ्गन्यास :

ॐ अं कं खं गं घं ङं आं अंगुष्ठाभ्यां नमः । हृदयाय नमः
ॐ इं चं छं जं झं ञं ईं तर्जनीभ्यां नमः । शिरसे स्वाहा
ॐ उं टं ठं डं ढं णं ऊं मध्यमाभ्यां नमः । शिखायै वषट्
ॐ एं तं थं दं धं नं ऐं अनामिकाभ्यां नमः । कवचाय हुम्
ॐ ओं पं फं बं भं मं औं कनिष्ठिकाभ्यां नमः । नेत्रत्रयाय वौषट्
ॐ अं यं रं लं वं शं षं सं हं लं क्षं अः करतलकरपृष्ठाभ्यां० । अस्त्राय फट्

पञ्चाशदर्णै रचिताङ्गभागां धृतेन्दुखण्डा कुमुदावदाताम् ।
वराभयेपुस्तकमक्षसूत्रं भजे गिरं संदधतीं त्रिनेत्राम् ॥ ८१ ॥

ध्यान : पचास वर्णों से विरचित शरीरावयव वाली, मस्तक पर चन्द्रकला धारण किये हुए, दाहिने हाथों में वरद मुद्रा एवं अक्षमाला, तथा बायें हाथों में अभय मुद्रा एवं पुस्तक धारण करने वाली, तीन नेत्रवाली सरस्वती देवी का ध्यान करता हूँ।

ध्यात्वैवं पूजयेत्पीठे देवताःपूर्वमीरिताः ।
पीठशक्तीस्तदुपरि सरस्वत्यानवाच्चयेत् ॥ ८२ ॥
मेधाप्रज्ञाप्रभाविद्याश्रीधृतिस्मृतिबुद्धयः ।
विद्येश्वरीति संप्रोक्ता मातृकापीठशक्तयः ॥ ८३ ॥
वियद्भृगुस्थमनुयुग्विसर्गाढ्यं च मातृका ।
योगपीठायनत्यन्तो मनुरासनदेशने ॥ ८४ ॥
मूर्तिं संकल्प्य मूलेन तस्यां वाणीं प्रपूजयेत् ।
आदावङ्गानि संपूज्य द्वितीये पूजमेत्स्वरौ ॥ ८५ ॥
द्वौ द्वौ तृतीये वर्गाश्च वर्गशक्तीश्चतुर्थके ।
व्यापिनी पालिनी चापि पावनी क्लेदिनी पुनः ॥ ८६ ॥
धारिणी मालिनी पश्चाद्धंसिनी शंखिनी तथा ।
वर्गशक्तय इत्युक्ताः पञ्चमेत्वष्टमातरः ॥ ८७ ॥
षष्ठे शक्रादयो देवाः सप्तमे वज्रपूर्वकाः ।
इत्थं संपूज्य देवेशीं न्यसेद्वर्णान्निजाङ्गके ॥ ८८ ॥

पीठपूजा एवं आवरणपूजा : इस प्रकार (सरस्वती देवी का) ध्यान कर पूर्वोक्त

वर्णैरंगरचनान्यासाद्बोध्या । वराक्षस्रजौदक्षयोः ॥ पुस्तकाभयेवामयोः । गिरंसरस्वतीम् ॥ ॥ ८१ ॥ पूर्वमीरितामंडूकाद्याः ॥ ८२ ॥ ८३ ॥ आसनमंत्रमाह । वियत् हः ॥ भृगुः सः मनुरौ तेनहसौः मातृकायोगपीठायनम इति ॥ ८४—९१ ॥

पीठदेवताओं (देखिए–श्लो० ५०-५५) का पूजन करना चाहिए। उसके ऊपर पीठ-शक्तियों एवं (कर्णिका में) सरस्वती का पूजन करना चाहिए। मेधा, प्रज्ञा, प्रभा, विद्या, श्री, धृति, स्मृति, बुद्धि एवं विद्येश्वरी—ये मातृका पीठ की शक्तियाँ बतलायी गयीं हैं।

आसन पूजा का मन्त्र—वियद् (ह) भृगु (स) मनु (औ) के आगे विसर्ग फिर "मातृका योग पीठाय नमः" लगाने से—"हसौः मातृका योगपीठाय नमः" इस मन्त्र से आसन-स्थान का पूजन करना चाहिए। उसमें मूल मन्त्र से मूर्ति की कल्पना कर वाणी (सरस्वती) का पूजन करना चाहिए।

प्रथमावरण में अङ्गों का पूजन कर द्वितीयावरण में स्वरों का पूजन करना चाहिए। तृतीयावरण में दो-दो वर्गों (अवर्ग एवं कवर्ग) का एवं चतुर्थावरण में चवर्ग एवं शक्तियों का पूजन करना चाहिए। व्यापिनी, पालिनी, पावनी, क्लेदिनी, धारिणी, मालिनी, हंसिनी एवं शंखिनी—ये ८ वर्गों की शक्तियाँ होती हैं। पञ्चमावरण में (ब्राह्मी आदि) आठ मातृकाओं का, षष्ठावरण में इन्द्र आदि देवों का तथा सप्तमावरण में वज्र आदि आयुधों का पूजन करना चाहिए। इस प्रकार देवेशी का पूजन कर अपने शरीर में वर्णों का न्यास करना चाहिए।

ललाटे मुखवृत्तेक्षिश्रवोनासासु गण्डयोः।
ओष्ठयोर्दंतपंक्त्योश्च मूर्ध्नि वक्त्रे न्यसेत्स्वरान् ॥ ८९ ॥
बाह्वोःसंधिषु साग्रेषु कचवर्गौ न्यसत्सुधीः।
टतवर्गौ पदोस्तद्वत्पार्श्वयोः पृष्ठदेशतः ॥ ९० ॥
नाभौ कुक्षौ पवर्गं च हृदंसककुदंततः।
न्यस्ययोदिचतुर्वर्णाञ्छादिषट्कं ततो न्यसेत् ॥ ९१ ॥

मातृका न्यास की विधि : ललाट, मुख, नेत्र, कान, नासापुट, गण्ड, होट, दन्तपंक्ति एवं शिर में स्वरों का न्यास करना चाहिए। दोनों भुजाओं के मूल, कूर्पर, मणिबन्ध, अंगुलिमूल एवं अंगुलि-अग्र में क्रमशः कवर्ग एवं चवर्ग का न्यास करना चाहिए। इसी प्रकार पैरों के मूल, जानु, गुल्फ, पादांगुलिमूल, एवं पादाङ्गुलि के अग्रभाग में क्रमशः टवर्ग एवं तवर्ग के अक्षरों का न्यास करना चाहिए। दोनों पार्श्व, पीठ, नाभि एवं उदर में पवर्ग के अ रों का न्यास करना चाहिए। हृदय, दोनों कन्धे एवं ककुद में यवर्ग के चार वर्णों का, हृदय से दोनों हाथ एवं दोनों पैर तक श, ष, स, ह का तथा उदर एवं मुख में ल एवं क्ष का न्यास करना चाहिए।

टिप्पणी : प्रयोग विधि : "तत्र प्रणव पूर्वकः, माया लक्ष्मीवाग्भवाद्यो वा नमः इत्यन्तकः न्यस्तव्यः"—इस नियम के अनुसार सानुस्वार वर्णों के आदि में प्रणव,

मायाबीज, श्रीबीज या वाग्भव बीज लगाकर और अन्त में नमः लगाकर शरीर के समस्त अंगों में न्यास करना चाहिए। विशुद्धेश्वर तन्त्र के अनुसार वाग्भव बीज आदि में लगाने से वाक्सिद्धि, श्रीबीज से लक्ष्मीवृद्धि और काम बीज से लोकवशीकरण होता है। नवरत्नेश्वरकार का मत है कि आदि में वाग्भव बीज एवं अन्त में नमः लगाने से अणिमादि सिद्धियाँ मिलती हैं। आदि में प्रणव और अन्त में नमः लगाने से समस्त मन्त्र सिद्ध हो जाते हैं। न्यास का क्रम इस प्रकार है :

ॐ अं नमः ललाटे।
ॐ आं नमः मुखवृत्ते।
ॐ इं नमः दक्षनेत्रे।
ॐ ईं नमः वामनेत्रे
ॐ उं नमः दक्षकर्ण।
ॐ ऊं नमः वामकर्णे।
ॐ ऋं नमः दक्षनासायाम्।
ॐ ॠं नमः वामनासायाम्।
ॐ ऌं नमः दक्षगण्डे।
ॐ ॡं नमः वाम गण्डे।
ॐ एं नमः ऊर्ध्वोष्ठे।
ॐ ऐं नमः अधरोष्ठे।
ॐ ओं नमः ऊर्ध्वदन्तपंक्तौ।
ॐ औं नमः अधोदन्तपंक्तौ।
ॐ अं नमः मूर्ध्नि।
ॐ अः नमः मुखे।
ॐ कं नमः दक्षबाहुमूले।
ॐ खं नमः ,, कूर्परे।
ॐ गं नमः ,, मणिबन्धे।
ॐ घं नमः ,, हस्ताङ्गुलिमूले।
ॐ ङं नमः ,, हस्ताङ्गुल्यग्रे।
ॐ चं नमः वाम बाहुमूले
ॐ छं नमः ,, कूर्परे।
ॐ जं नमः वाम मणिबन्धे।
ॐ झं नमः ,, हस्ताङ्गुलिमूले।
ॐ ञं नमः ,, हस्ताङ्गुल्यग्रे।
ॐ टं नमः दक्षिण पाद मूले।
ॐ ठं नमः ,, जानुनि।
ॐ डं नमः ,, गुल्फे।
ॐ ढं नमः ,, पादाङ्गुलिमूले।
ॐ णं नमः ,, पादाङ्गुल्यग्रे।
ॐ तं नमः वाम पादमूले।
ॐ थं नमः ,, जानुनि।
ॐ दं नमः ,, गुल्फे।
ॐ धं नमः ,, पादाङ्गुलिमूले।
ॐ नं नमः ,, पादाङ्गुल्यग्रे।
ॐ पं नमः दक्षिणपार्श्वे।
ॐ फं नमः वाम पार्श्वे।
ॐ बं नमः पृष्ठे।
ॐ भं नमः नाभौ।
ॐ मं नमः उदरे।
ॐ यं त्वगात्मने नमः हृदि।
ॐ रं असृगात्मने नमः दक्षांसे।
ॐ लं मांसात्मने नमः ककुदि।
ॐ वं मेदात्मने नमः वामांसे।

ॐ शं अस्थ्यात्मने नमः हृदयादि दक्ष हस्तान्तम् ।
ॐ षं मज्जात्मने नमः हृदयादिवाम हस्तान्तम् ।
ॐ सं शुक्रात्मने नमः हृदयाददक्षपादान्तम् ।
ॐ हं आत्मने नमः हृदयादिवामपादान्तम् ।
ॐ लं परमात्मने नमः जठरे ।
ॐ क्षं प्राणात्मने नमः मुखे ।

इति सृष्टिक्रमन्यासः

हृदादिकरयोरंघ्र्योर्जठरे वदने तथा ।
सृष्टिन्यासं विधायैवं स्थितिन्यासं समाचरेत् ॥ ९२ ॥
ऋषिश्छंदश्चपूर्व्वोक्तो देवताविश्वपालिनी ।
उपविष्टांवल्लभांके ध्यायेद्देवीमनन्यधीः ॥ ९३ ॥
मृगबालं वरं विद्यामक्षसूत्रं दधत्करैः ।
मालाविद्यालसद्धस्तां वहन्ध्येयःशिवोगिरम् ॥ ९४ ॥
एवंध्यात्वा डकाराद्यान्वर्णानंगेषु विन्यसेत् ।
गुल्फादिजानुपर्य्यंतं स्थितिन्यासोयमीरितः ॥ ९५ ॥

स्थिति न्यास : उक्त रीति से सृष्टि न्यास करके स्थिति न्यास करना चाहिए। इसके ऋषि एवं छन्द पूर्वोक्त हैं (देखिये श्लोक ७८)तथा विश्वपालिनी देवी देवता है। एकाग्रचित्त से प्रियतम के गोद में बैठी देवी का ध्यान करना चाहिए।

दहिने हाथ में वरदमुद्रा, अक्षसूत्र एवं दिव्यमाला तथा बायें हाथों में मृगशावक, विद्या एवं वर्णमाला धारण करने वाली विश्वपालिनी सरस्वती देवी का ध्यान करना चाहिए।

इस प्रकार ध्यान कर दक्षिण गुल्फ से लेकर बाम जानुपर्यन्त अङ्गों में डकार आदि वर्णों का न्यास करना चाहिए—इसे स्थितिन्यास कहते हैं।

टिप्पणी : प्रयोग : "ॐ डं नमः दक्षिण गुल्फे, ॐ ढं नमः दक्षपादङ्गुलिमूले .....ॐ थं नमः वाम जानुनि" इस क्रम से दक्षिण गुल्फ से लेकर वाम जानु पर्यन्त न्यास करना स्थिति न्यास कहलाता है।

वीर चूड़ामणि तन्त्र में स्थिति न्यास इससे भिन्न रूप में मिलता है। वहाँ ललाट से प्रारम्भ कर मुख तक सृष्टिक्रम से बतलाये अङ्गों में 'टं ठं डं नमः' इस मन्त्र का न्यास करना चाहिए। यथा, ॐ टं ठं डं नमः ललाटे, ॐ टं ठं डं नमः मुखवृते, ॐ टं ठं डं नमः दक्षनेत्रे ...ॐ टं ठं डं नमः हृदयादि वामपादान्तम्, ॐ टं ठं डं नमः हृदयादिमुखान्तम् ।

हृदादीनिकरपादोदरमुखेषुसंबध्यंते ॥ ९२ ॥ ९३ ॥ स्थितिन्यासेध्यानमाह । मृगेति । मृगविद्येवामयोः ॥ वराक्ष सूत्रेदक्षयोः देव्यामालाविद्येदक्षवामयोः ॥ ९४ - ९६ ॥ संहार-

न्यासे संहारसंज्ञे तु ऋषिश्छंदश्चपूर्व्ववत् ।
संहारिणी सपत्नानां शारदादेवता स्मृता ॥ ९६ ॥
अक्षस्रक्टंकसारंगविद्याहस्तां त्रिलोचनाम् ।
चंद्रमौलिं कुचानम्रां रक्ताब्जस्थां गिरं भजे ॥९७॥

संहारन्यास : संहारन्यास में ऋषि एवं छन्द पूर्वोक्त (ब्रह्माऋषि तथा गायत्री छन्द) ही हैं तथा शत्रुनाशिनी शारदा देवता मानी गयी हैं ।

रक्त कमल पर बैठी हुई, दहिने हाथों में अक्षमाला एवं परशु तथा बायें हाथों में मृगशावक एवं विद्या धारण किये हुए, चन्द्रकला से सुशोभित एवं स्तन भार से झुकी हुई शारदा देवी का ध्यान करना चाहिए ।

इस प्रकार ध्यान कर सृष्टिन्यास के विपरीत क्रम से ललाट आदि अङ्गों में क्षकार आदि वर्णों का न्यास करना चाहिए ।

टिप्पणी : संहारन्यास की विधि : "ॐ अस्य श्री संहार मातृकान्यासस्य ब्रह्मा-ऋषिः गायत्री छन्दः शत्रु संहारिणी शारदा देवता हलो बीजानि स्वराः शक्तयः अभीष्टाक्षये विनियोगः ।" ऐसा विनियोग कर पूर्वोक्त रीति से शत्रु संहारिणी शारदा देवी का ध्यान करना चाहिए ।

तदनन्तर "ॐ क्षं नमः ललाटे, ॐ हं नमः मुखवृत्ते, ॐ सं नमः दक्षनेत्रे, ॐ षं नमः वाम नेत्रे····· ॐ अं नमः मुखे" इस रीति से ललाट अदि अंगों में 'क्षं' आदि वर्णों का न्यास करना चाहिए ।

मन्त्र शास्त्र के अन्य आचार्यों का मत है कि संहारन्यास सृष्टिन्यास के एकदम विपरीत होता है । अतः मुख से लेकर ललाट तक अङ्गों में 'क्षं आदि बीजों का न्यास करना चाहिए । यथा—ॐ क्षं नमः मुखे, ॐ हं नमः जठरे·····ॐ अं नमः ललाटे । इस रीति में वर्ण अपने पूर्वोक्त अङ्गों में ही न्यस्त होते हैं, केवल न्यास का क्रम विपर्यय हो जाता है ।

ध्यात्वैवं विन्यसेद्वर्णान्क्षाद्यानान्तान्विलोमतः ।
सृष्टिन्यासे तु सर्गान्ताःसर्गबिंद्वंतिकाःस्थितौ ॥ ९८ ॥
बिंद्वंताःसंहृतौ चैषा पूर्व्ववच्चाङ्गपूजने ।
न्यस्याःसर्वत्रनत्यंता वर्णावातारसंपुटाः ॥ ९९ ॥
सृष्टिन्यासं स्थितिन्यासं पुनः कुर्यात्प्रयत्नतः ।
अन्ये तु मातृकान्यासाःकथ्याःपूजातरंगके ॥ १०० ॥

न्यासेध्यानमाह ॥ अक्षेति । मृगविद्ये वामयोः अक्षस्रक्टंकौदक्षयोः ॥ टंकः परशुः ॥ ९७ ॥ ॥ ९८ ॥ नत्यंताः ॥ अंनमःतारसंपुटाः ॥ ॐमित्यादि ॥ ९९—१०३ दीपस्थानमाह ।

सृष्टिन्यास में विसर्गयुक्त वर्णों का, स्थिति न्यास में विसर्ग एवं अनुस्वार युक्त वर्णों का तथा संहार न्यास में अनुस्वार युक्त वर्णों का न्यास करना चाहिए। अङ्गपूजन में आदि में प्रणव (ॐ) तथा अन्त में नमः लगाकर वर्णों (यथा—ॐ अं नमः, ॐ आं नमः, इत्यादि) का न्यास करना चाहिए।

संहार न्यास के बाद पुनः प्रयत्नपूर्वक सृष्टि न्यास एवं स्थिति न्यास करना चाहिए। अन्य मातृका न्यास पूजातरङ्ग में बतलाये जायेंगे।

मन्त्रस्नानादिविधयो गद्यास्तत्रैव ते मया।
भारतीमेवमाराध्य भजेदिष्टान्मनून्सुधीः॥ १०१॥
विष्णुःशिवो गणेशोर्कोदुर्गापञ्चैवदेवताः।
आराध्याःसिद्धिकामेन तत्तन्मन्त्रैर्य्यथोदितम्॥ १०२॥

मन्त्र स्नान आदि की विधियाँ भी पूजा तरङ्ग (२१वीं तरङ्ग) में बतलायी जायेंगी। (मातृका न्यास की रीतिसे) सरस्वती की आराधना कर अपने इष्टदेवों का पूजन एवं अभीष्ट मन्त्रों की सिद्धि करनी चाहिए।

सिद्धि की इच्छा रखने वाले साधक को विष्णु, शिव, गणेश सूर्य एवं दुर्गा—इन पाँचों देवताओं की यथोक्त मन्त्रों से आराधना करनी चाहिए।

आदौ देवं वशीकर्तुं पुरश्चरणमाचरेत्।
तीर्थादौ निर्जने स्थाने भूमिग्रहणपूर्वकम्॥ १०३॥
नवधा तां धरां कृत्वा पूर्व्वादिषु समालिखेत्।
कोष्ठेषु सप्तवर्गांश्चलक्षौ मध्ये तथा स्वरान्॥ १०४॥
क्षेत्रनामादिमो वर्णस्तत्रकोष्ठे भवेत्ततः।
उपविश्य जपं कुर्य्यान्नान्यस्मिन्दुःखदे स्थले॥ १०५॥

सर्वप्रथम इष्टदेव को अपने अनुकूल करने के लिए तीर्थ, निर्जन स्थान आदिमें भूमि का निश्चय कर पुरश्चरण करना चाहिए।

पुरश्चरण की भूमि के ९ भाग कर पूर्व से लेकर उत्तर तक ७ दिशाओं में ७ वर्ग, ईशान कोण में 'लक्ष' तथा मध्य में स्वरों को लिखना चाहिए। पुरश्चरण क्षेत्र के नाम का प्रथम अक्षर जिस कोष्ठक में हो, उस स्थान पर बैठकर जप करना चाहिए, अन्यत्र दुःखदायक स्थान पर नहीं।

टिप्पणी : पुरश्चरण योग्य भूमि का चुनाव : जिस स्थान में पुरश्चरण करना हो,

---

नवधेति। जपस्थानभूमिंनवधा कृत्वा॥ पूर्वादिकोष्ठेषुकचटतपयशवर्गान् लक्ष इत्यष्टमेविलिख्यमध्यकोष्ठमपि नवधा विधाय तत्र पूर्वादिषश्वरद्वंद्वक्षेत्रनामादिवर्णोयत्रकोष्ठेतदेवजपस्थानंसिद्धिदम्॥ १०४—१०५॥ पुरश्चरणधर्मानाह आमध्याह्नमिति॥ उपांशु शनैर्वर्णो-

उसके ९ भाग कर निम्नलिखित चक्र के अनुसार विभिन्न कोष्ठकों में स्वर वर्णों को लिख लेना चाहिए

पूर्व

ईशान	ल क्ष	क ख ग घ ङ	च छ ज झ ञ	आग्नेय
उत्तर	श ष स ह	मध्य अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ऋ, ॠ ऌ, ॡ, ए, ऐ, ओ, औ, अं, अः	ट ठ ड ढ ण	दक्षिण
वायव	य र ल व	प फ ब भ म	त थ द ध न	नैऋत्य

पश्चिम

इस चक्र में पुरश्चरण क्षेत्र के नाम का प्रथम अक्षर जिस भाग में पड़ता हो, पुरश्चरण स्थान की भूमि के उस भाग में बैठकर जप करना चाहिए।

उदाहरण : उदाहरणार्थ किसी साधक ने मथुरा में एकान्त स्थान में पुरश्चरण करने का निश्चय किया। अतः पुरश्चरण योग्य भूमि का निश्चय करने के लिए उस एकान्त स्थान को ९ भागों में विभक्त कर पूर्वोक्त चक्र बनाया गया। इस चक्र में 'मथुरा' के नाम का प्रथम अक्षर 'म' पश्चिम में पड़ता है। अतः साधक को उस एकान्त स्थान के पश्चिम भाग में बैठकर जप करना चाहिए।

आमध्याह्नं जपं कुर्यादुपांशुत्वथ मानसम्।
हविष्यं निशिभुञ्जीत त्रिःस्नाय्यभ्यङ्गवर्जितः॥ १०६॥
व्यग्रतालस्यनिष्ठीवक्रोधपादप्रसारणम्।
अन्यभाषां परेक्षां च जपकालेत्यजेत्सुधीः॥ १०७॥
स्त्रीशूद्रभाषणं निन्दां तांबूलं शयनं दिवा।
प्रतिग्रहं नृत्यगीते कौटल्यं वर्जयेत्सदा॥ १०८॥
भूशय्यां ब्रह्मचर्य्यं च त्रिकालंदेवतार्च्चनम्।
नैमित्तिकार्चनं देवस्तुतिं विश्वासमाश्रयेत्॥ १०९॥
प्रत्यहं प्रत्यहं तावन्नैव न्यूनाधिकंक्वचित्।
एवं जपं समाप्यांते दशांशं होममाचरेत्॥ ११०॥

च्चारणं मानप मनसैव। त्रिःस्नयीत्रिषवणस्नानशीलः॥ १०६॥ अन्यैःसंभाषणमन्यासाम्॥ अंत्यजानामीक्षांदर्शनंत्यजेत्॥ १०७--११०॥ होम विधिमाह। प्राणायाममिति॥ १११॥

पुरश्चरण के नियम : (पुरश्चरण करने वाले व्यक्ति को) प्रातः काल से मध्याह्न पर्यन्त उपांशु या मानस जप करना चाहिए। रात्रि में हविष्यान्न का भोजन करना चाहिए। त्रिकाल स्नान करना चाहिए और अभ्यंग आदि का सेवन नहीं करना चाहिए। व्यग्रता, आलस्य, क्रोध, पैर फैलाना, अन्यों से बोलना एवं अन्त्यजों को देखना यह सब साधक के लिए जप काल में वर्जित हैं। स्त्री एवं शूद्रों से संभाषण, निन्दा करना, पान खाना, दिन में सोना, दान लेना, नाचना, गाना एवं कुटिलता (धूर्तता) करना —यह सब साधक को सदैव वर्जित हैं।

प्रतिदिन एक जैसी संख्या में जप करना चाहिए, किसी दिन कम और किसी दिन अधिक संख्या में नहीं। इस प्रकार निश्चित संख्या में जप पूरा करके उसके दशांश का हवन करना चाहिए।

टिप्पणी : उपांशुजप : देवता में मन लगाकर जिह्वा एवं होठ को हिलाते हुए केवल स्वयं को सुनाई पड़ने योग्य मन्त्रोच्चारण को उपांशुजप कहते हैं।

मानसजप : मन्त्र, मन्त्रार्थ एवं देवता में मन लगाकर मन ही मन मन्त्र का उच्चारण करना मानस जप कहलाता है।

हविष्यान्न : गौतमीय तन्त्र के अनुसार भोजन-दोष मन्त्र-सिद्धि में बाधक होता है। अतः मन्त्रसिद्धि करने वाले साधक को दिन में एकबार सायंकाल या प्रदोषकाल में हविष्यान्न का भोजन करना चाहिए। गाय का दूध, दही, घी, मक्खन, शक्कर, तिल, खोआ, सोनामूंग, कन्द, नारियल, केला, फल, मेवा, आँवला, हैमन्तिक धान्य, सेन्धा नमक तथा वे वस्तुएँ जो तेल में पकी न हों, हविष्यान्न कहलाती है।

तत्तत्कल्पोदितैर्द्रव्यैस्तद्विधानमुदीर्यते ।
प्राणायामं षडङ्गं च कृत्वा मूलेन मन्त्रवित् ॥ १११ ॥
कुण्डे वा स्थंडिले कुर्यात्संस्काराणां चतुष्टयम् ।
मूलेनेक्षणमस्त्रेणप्रोक्षणं ताडनं कुशैः ॥ ११२ ॥

कल्पग्रन्थों में बतलाये गये देवता के हवि द्रव्यों से दशांश-हवन करना चाहिए। अब हवन की विधि बतलाते हैं। मूलमन्त्र से प्राणायाम एवं षडङ्गन्यास करके कुण्ड या स्थण्डिल पर चारों संस्कार करने चाहिए। मूलमन्त्र से देखकर, 'अस्त्राय फट्' मन्त्र से प्रोक्षण कर कुशाओं से ताडन कर 'हुम्' मन्त्र से मुष्टिका से सेचन कर स्थण्डिल या कुण्ड में वह्नियन्त्र लिखना चाहिए।

टिप्पणी : हविद्रव्य : प्रत्येक मन्त्र के पुरश्चरण में दशांश हवन किन द्रव्यों से करना चाहिए ? यह प्रत्येक मन्त्र की अनुष्ठान विधि में बतलाया जाता है। जहाँ हवि

॥ अस्त्रफट्वर्मणाहुंकारेण ॥ भूमंदिरंचतुष्कोणम् ॥ ११२–११७ ॥ क्रव्यादांसंमांसाशिनो-

द्रव्यों में वैकल्पिक व्यवस्था हो वहाँ किसी एक द्रव्य से भी हवन किया जा सकता है। कहीं-कहीं फल भेद से भिन्न द्रव्यों से हवन का उल्लेख मिलता है। वहाँ अभीष्ट फल के लिए निर्दिष्ट द्रव्य से हवन करना चाहिए। समान्यतया दशांश हवन के लिए हवि द्रव्यों का वर्णन, प्रत्येक मन्त्र के अनुष्ठान की विधि बतलाते समय अग्रिम अध्यायों में किया गया है।

कुण्ड/स्थण्डिल के चार संस्कार : जिस मन्त्र का दशांश हवन करना हो उस मन्त्र का जप करते हुए कुण्ड/स्थण्डिल को देखना चाहिए। फिर 'अस्त्राय फट्' मन्त्र बोलकर प्रोक्षण करना चाहिए। तत्पश्चात् कुशाओं से उसका ताड़न एवं 'हुम्' मन्त्र बोलते हुए मुष्टिका से कुण्ड/स्थण्डिल का सेचन करना चाहिए। ईक्षण, प्रोक्षण, ताडन एवं सेचन ये चारों कुण्ड या स्थण्डिल के चार संस्कार कहलाते हैं।

वर्म्मणामुष्टिनासिच्य लिखेद्यंत्रंतदन्तरे।
वह्निकोणाषडस्त्राष्टदलभूमन्दिरात्मकम् ॥ ११३ ॥
मध्येतारपुटां मायां लिखत्वा पीठमर्चयेत्।
मण्डूकात्परतत्वान्तं पीठशक्तीर्जयादिकाः ॥ ११४ ॥
वागीशीवागीश्वरयोर्योगपीठात्मने नमः।
मायादिकः पीठमन्त्रस्तयोस्तेनासनं दिशेत् ॥ ११५ ॥
यजेत्तौतारमायाभ्यां गंधाद्यैरुपचारकैः।
लक्ष्मीनारायणौत्वर्च्चेद्वैष्णवे होमकर्मणि ॥ ११६ ॥

वह्निपूजन यन्त्र एवं पूजाविधि : त्रिकोण, षट्कोण, अष्टदल एवं चतुष्कोण का यन्त्र (देखिये चित्र १) बनाकर उसके मध्य में 'ॐ ह्रीं ॐ' लिखकर पीठपूजन करना चाहिए। मण्डूक से लेकर परतत्त्व तक पीठ देवता तथा जया आदि पीठ शक्तियों का पूजन कर (देखिये : श्लो० ५०-६०) 'ॐ ह्रीं वागीशी वागीश्वरयोर्योग पीठात्मने नमः'—इस मन्त्र से उनको आसन देना चाहिए। फिर 'ॐ ह्रीं' इस मन्त्र से गन्ध आदि उपचारों से उन दोनों का पूजन करना चाहिए। वैष्णव मन्त्रों के हवन में 'ॐ ह्रीं लक्ष्मीनारायणाभ्यां नमः' इस मन्त्र से लक्ष्मीनारायण का पूजन करना चाहिए।

गन्ध आदि उपचार : गन्ध, पुष्प, धूप, दीप एवं नैवेद्य इन पाँच उपचारों को गन्धादि उपचार कहते हैं।

सूर्यकनादरणितः श्रोत्रियागारतोपि वा।
पात्रेणपिहिते पात्रे वह्निमानाययेत्ततः ॥ ११७ ॥

अस्त्रेणादाय तत्पात्रं वर्मणोद्धाटयेत्तु तम् ।
अस्त्रमन्त्रेणनैर्ऋत्ये क्रव्यादांशं ततस्त्यजेत् ॥ ११८ ॥
मूलेनपुरतो धृत्वा संस्कारांश्चततश्चरेत् ।
वीक्षणाद्यान्पुराप्रोक्तानल्पंप्रोक्षणमाचरन् ॥ ११९ ॥
परमात्मानलेनाथजाठरेणापि वह्निना ।
स्मरन्नैक्यं वह्निबीजाच्चैतन्यंयोजयेत्ततः ॥ १२० ॥
तारेणचाभिमंत्र्याग्नि सुधया धेनुमुद्रया ।
अमृतीकृत्य संरक्षेदस्त्रमन्त्रेण मन्त्रवित् ॥ १२१ ॥
मुद्रया त्ववगुण्ठिन्या कवचेनावगुण्ठयेत् ।
कुण्डोपरि ततो वह्निं भ्रामयेत्त्रिध्रुवं (ॐ) पठन् ॥ १२२ ॥
शय्यागतामृतुस्नातां नीलेन्दीवरधारिणीम् ।
देवेन भुज्यमानां तां स्मृत्वातद्योनिमंडले ॥ १२३ ॥
ईशरेतोधिया वह्निं स्थापयेदात्मसम्मुखम् ।
मूलं नवार्णं च पठञ्जानुस्पृष्टधरातलः ॥ १२४ ॥

अग्नि-स्थापना : सूर्यकान्तामणि से, अरणि या अग्निहोत्री ब्राह्मण के घर से किसी पात्र में दूसरे पात्र से ढँक कर अग्नि को लाना चाहिए ।

फिर 'अस्त्राय फट्' मन्त्र बोलते हुए अग्निपात्र लेकर 'हुम्' मन्त्र बोलते हुए उसे खोलकर पुनः 'अस्त्रायफट्' मन्त्र बोलते हुए उस अग्नि में से मांस भोजी अग्नि का एक अंश लेकर नैर्ऋत्य कोण में फेंक देना चाहिए ।

तदनन्तर मूल मन्त्र से अग्नि पात्र को सामने रखकर ईक्षण आदि पूर्वोक्त ४ संस्कार करने चाहिए । फिर परमात्मा जठराग्नि एवं सम्मुख रखी अग्नि में एकरूपता की भावना से 'रं' बीज से अग्नि को चैतन्य करना चाहिए ।

फिर प्रणव (ॐ) से अग्नि को अभिमन्त्रित कर सुधाबीज (वं) से धेनुमुद्रा द्वारा अमृतीकरण कर, 'अस्त्रायफट्' मन्त्र से संरक्षित करना चाहिए । तत्पश्चात् अवगुण्ठन मुद्रा द्वारा कवच (हुम्) अवगुण्ठन कर प्रणव का उच्चारण करते हुए अग्नि को कुण्ड के ऊपर घुमाना चाहिए ।

तत्पश्चात् घुटनों के बल बैठकर मूलमन्त्र या (वक्ष्यमाण) नवार्ण मन्त्र बोलते हुए शय्या में स्थित, ऋतुस्नाता, नीलकमल धारिणी, एवं देवताओं से उपभुक्ता का स्मरण

वह्नेर्यस्तत्रभागस्तमस्त्रेण ॥ त्यजेत् ॥ ११८ ॥ ११९ ॥ वह्निबी जात् रमितिबीजात् ॥ १२० ॥ सुधया वंबीजेन । धेनुमुद्रालक्षणंवक्ष्यते ॥ १२१ ॥ अवगुंठिन्या अपि वक्ष्यते ॥ कवचेनहुं-बीजेन । त्रिध्रुवं प्रणवम् ॥ १२२--१२४ ॥ नवार्णमुद्धरति ॥ अर्धेशेन्दुःऊः ॥ गगनंहः ।

कर उसके योनिमण्डल में शिव के वीर्य की भावना से अपने सामने अग्नि को स्थापित करना चाहिए।

टिप्पणी : *धेनुमुद्रा* : दोनों हाथों की अनामिका एवं कनिष्ठिकाओं को एक दूसरे से मिलाकर तथा तर्जनी एवं मध्यमा को एक दूसरे से मिलाने से धेनु मुद्रा बनती है। इसकी आकृति गाय के थनों जैसी होती है। यह मुद्रा अमृतीकरण में प्रयुक्त होती है। यथा—

"अन्योन्याभिमुखौ श्लिष्टौ कनिष्ठानामिका पुनः।
तथा तु तर्जनीमध्या धेनु मुद्रा प्रकीर्तिता॥"

अवगुण्ठनमुद्रा : दाहिने हाथ की मुट्ठी लगाकर मध्यमा एवं तर्जनी को अधोमुख कर चारों ओर घुमाने से अवगुण्ठन मुद्रा बनती है। यथा—

"सव्यहस्तकृता मुष्टिः दीर्घाधोमुखतर्जनी।
अवगुण्ठनमुद्रेयमभितो भ्रामिता भवेत्।"

रेफार्धेशेन्दुसंयुक्तं गगनं वह्निचै ततः।
तन्याय हृदयांतोयं नवार्णोग्निनिधापने॥ १२५॥

अग्नि स्थापना का मन्त्र : गगन (ह) को अर्धेशेन्दु (उं) एवं रेफ (र) से युक्त कर (अर्थात् ह्रूं) फिर 'चैतन्याय' और अन्त में 'नमः' लगाने से अग्निस्थापना का नवार्ण मन्त्र बनता है।

टिप्पणी : *मन्त्रोद्धार* : ॐ ह्रूं चैतन्याय नमः

विश्राण्याचमनं देवीदेवयोर्ज्वालयेद्वसुम्।
चतुर्विंशतिवर्णेन मन्त्रेण श्रपणादिभिः॥ १२६॥
चिदिंपिगलहनद्वंद्वं दहयुग्मं पचद्वयम्।
सर्वज्ञाज्ञापय स्वाहा मन्त्रोवेदभुजाक्षरः॥ १२७॥
प्रदर्श्यज्वालिनीं मुद्रामुत्थाय विहिताञ्जलिः।
श्लोकरूपेण मन्त्रेणह्युपतिष्ठेद्धुताशनम्॥ १२८॥

उक्त दोनों देवी एवं देवों को आचमन देकर चतुर्विंशतिमन्त्र का जप करते हुए कण्डा-समिधा आदि से अग्नि को जलाना चाहिए।

शेषंस्वरूपम् ॥ हृदयांतोनमोंतः ॥ नहंवाह्न चैतन्यायनमइत्यग्निस्थापनेनवाक्षरोमंत्रः ॥ १२५ ॥ विश्राण्यदत्त्वा ॥ १२६ ॥ चतुर्विंशतिवर्णमुद्धरति। चिदिति ॥ चिदिंपिगलहन हन दह दह पच पच सर्वज्ञाज्ञापयस्वाहा। वेद ४ भुजा २ शरश्चतुर्विंशतिवर्णः ॥ १२७ ॥ ज्वालिनीमुद्रालक्षणम्–मणिबंधयुगौकृत्वाप्रसृतांगुलिकौकरौ ॥ कनिष्ठांगुष्ठयुगलेमिलित्वांतः-प्रसारिते ॥ ज्वालिनीनाममुद्रेयवैश्वानरप्रियंकरीति ॥ १२८ ॥ श्लोकरूपंमंत्रमाह ॥ १२९ ॥

(सर्वप्रथम) 'चित्पिगल' फिर दो बार 'हन', तत्पश्चात् दो बार 'दह', फिर दो बार 'पच' और अन्त में 'सर्वज्ञा ज्ञापय स्वाहा' लगाने से चतुर्विंशति अक्षर मन्त्र बनता है।

ज्वालिनीमुद्रा प्रदर्शित कर अञ्जलि बाँधकर निम्न श्लोक रूपी मन्त्र से अग्नि का उपस्थान करे। मन्त्रार्थ—सुवर्ण के रंग के समान शुभ्र, विश्वतोमुख, जातवेद, हुताशन आदि नाम वाले प्रज्वलित अग्निदेव की वन्दना करता हूँ।

टिप्पणी : चतुर्विंशतिवर्णात्मकमन्त्र : चित्पिगल हन हन दह दह पच पच सर्वज्ञा-ज्ञापय स्वाहा।

ज्वालिनीमुद्रा : दोनों मणिबन्धों को मिलाकर हाथ की उँगलियों को सीधा कर कनिष्ठा एवं अँगूठा मिलने से ज्वालिनी मुद्रा बन जाती है। यह मुद्रा अग्नि को प्रसन्न करने वाली कही गयी है।

अग्निप्रज्वलितं वन्देजातवेदं हुताशनम्।
सुवर्णवर्णममलं समिद्धंविश्वतोमुखम् ॥ १२९ ॥
अथाग्निमन्त्रं वित्यस्मेत्तद्विधानमुदीर्यते।
वैश्वानरान्ते जातेतिवेदांतेस्यादिहावह ॥ १३० ॥
लोहिताक्षपदात्सर्वकर्माण्यंते तु साधय।
वह्निप्रियान्तो मन्त्रोयं षड्विंशत्यक्षरान्वितः ॥ १३१ ॥
ऋषिश्छन्दो देवतास्य भृगुर्गायत्रपावकाः।
रंबीजं ठद्वयं शक्तिर्हवने विनियोजनम् ॥ १३२ ॥

अग्नि मन्त्र : इसके बाद अग्नि मन्त्र का न्यास करना चाहिए—उसकी विधि बतलाते हैं। सर्वप्रथम 'वैश्वानर' इसके बाद 'जातवेद' फिर 'इहावह' तत्पश्चात् 'लोहिताक्ष' फिर 'सर्वकर्माणि तदनन्तर 'साधय' और अन्त में 'स्वाहा' लगाने से २६ अक्षरों वाला अग्नि मन्त्र बनता है।

इस मन्त्र का भृगु ऋषि है, गायत्री छन्द है, अग्नि देवता है, 'रं' बीज है, 'स्वाहा' शक्ति है तथा यह मन्त्र हवन में विनियुक्त होता है।

टिप्पणी : षड्विंशत्यक्षर मन्त्र : "वैश्वानर जातवेद इहावह लोहिताक्ष सर्वकर्माणि साधय स्वाहा"।

विनियोग : ॐ अस्याग्निमन्त्रस्य भृगुर्ऋषिः गायत्री छन्दः पावको देवता रं बीजं स्वाहा शक्तिः हवने विनियोगः

लिंगे पायौ मूर्ध्नि वक्त्रे नसि नेत्रे खिलांगके।
वह्निजिह्वाःस्वबीजाढ्यान्यसेन्ङेन्तानमोन्विताः ॥ १३३ ॥

अग्निमन्त्रमाह ॥ वश्वानरजातवेदइहावहलोहिताक्षसर्वकर्माणिसाधयस्वाहेति ॥ १३०–१३१॥ ठद्वयस्वाहा ॥ १३२ ॥ ङेन्ताश्चतुर्थ्यंताः ॥ १३३ ॥ जिह्वाबीजान्युद्धरति ॥ दीपि केति ॥

हिरण्या गगना रक्ता कृष्णासुप्रभयान्विता ।
बहुरूपातिरक्तेति जिह्वा दमुनसोमताः ॥ १३४ ॥
दीपिकानलवायुस्थाःसाद्या वर्णाविलोमतः ।
सेन्दवःसप्तजिह्वानां सप्तानां वीजतां गताः ॥ १३५ ॥

सप्तजिह्वामन्त्र एवं उनका न्यास : लिंग, गुदा, शिर, मुख, नाक, आँख एवं सर्वाङ्ग में अपने बीज के साथ 'नमः' अन्त में लगाकर अग्निजिह्वा के चतुर्थी एकवचन के रूप का न्यास करना चाहिए । हिरण्या, गगना, रक्ता, कृष्णा, सुप्रभा, वहुरूपा एवं अतिरक्ता ये ७ जिह्वाओं के नाम हैं ।

दीपिका (ऊ) अनत (र) वायु (य) इन तीनों कोमिल कर अर्थात् 'यू' में सकार आदि ७ वर्णों को विलोम क्रम से मिलाने एवं अनुस्वार लगाने से स्यूँ, ष्यूँ, श्यूँ, व्यूँ, ल्यूँ, र्यूँ, य्यूँ—ये ७ जिह्वाओं के बीज बनते हैं ।

टिप्पणी : प्रयोग विधि :

ॐ स्यूँ हिरण्यायै नमः लिंगे ।
ॐ ष्यूँ गगनायै नमः पायौ ।
ॐ श्यूँ रक्तायै नमः शिरसि ।
ॐ व्यूँ कृष्णायै नमः वक्त्रे ।
ॐ ल्यूँ सुप्रभायै नमः नासिकायाम् ।
ॐ य्यूँ अतिरक्तायै नमः नेत्रे ।
ॐ र्यूँ बहुरूपायै नमः सर्वाङ्गे ।

न्यास करते समय वक्ष्यमाण श्लो० १३७ के अनुसार बहुरूपा एवं अतिरक्ता में व्युत्क्रम हो जाता है । नेत्र में अतिरक्ता का एवं सर्वाङ्ग में बहुरूपा का न्यास किया जाता है ।

गीर्वाणपितृगंधर्वयक्षनागपिशाचकाः ।
राक्षसाश्चेति जिह्वानां देवतास्तत्स्थले न्यसेत् ॥ १३६ ॥
न्यासेर्चने व्युत्क्रमःस्याद्बहुरूपातिरिक्तयोः ।
नेत्रेतिरिक्ता न्यास्तव्या सर्वांगेबहुरूपिका ॥ १३७ ॥

जिह्वाओं के देवताओं का न्यास : सुर, पितृगण, गन्धर्व, यक्ष, नाग, पिशाच एवं राक्षस ये जिह्वाओं के अधिदेवता होते हैं—इनका उक्त अङ्गों में न्यास करना चाहिए ।

पूजा में वहुरूपा एवं अतिरक्ता का जो क्रम वतलाया है, न्यास में वह व्युत्क्रम हो जाता है । अतः नेत्र में अतिरक्ता का और सर्वाङ्ग में बहुरूपिका का न्यास होता है ।

दीपिकाऊ ॥ अनलोरः ॥ वायुर्यः ॥ एतेषुस्थिताःसकाराद्याविलोमवर्णाः ॥ षसशवलरयति ॥ सेंदवो नुस्वाराद्याइमेसप्तहिरण्यादिजिह्वानांबीजानीत्यर्थः ॥ ततश्चस्फ्रं हिरण्यायैनमः ॥ ष्फ्रं गगनायै नमः ॥ श्फ्रं रक्तायैनमः ॥ व्फ्रं कृष्णायैनमः ॥ ल्फ्रं सुप्रभायैनमः ॥ य्फ्रं अतिरक्तायैनमः ॥ १३४ ॥ १३५ ॥ गीर्वाणादयोजिह्वाधिदेवाजिह्वास्थानेपुन्यस्याः ॥ सुरेभ्योनमः लिंगे इत्यादिप्रयोगः ॥ १३६ ॥ मस्तकंशिरोमंत्रः ॥ १३७-१४० ॥ तारेति ॥ प्रणवाग्नयेपद-

टिप्पणी : प्रयोग विधि :

ॐ सुरेभ्यो नमः लिङ्गे। ॐ नागेभ्यो नमः नासिकायाम्।
ॐ पितृभ्यो नमः पायौ। ॐ पिशाचेभ्यो नमः नेत्रे।
ॐ गन्धर्वेभ्यो नमः मूर्ध्नि। ॐ राक्षसेभ्यो नमः सर्वाङ्गे।
ॐ यक्षेभ्यो नमः मुखे।

सहस्रार्चिषे हृदयं स्वस्तिपूर्णाय मस्तकम्।
उत्तिष्ठपुरुषायेतिशिखामन्त्रोयमीरितः ॥ १३८ ॥
धूमान्ते व्यापिने वर्म सप्तजिह्वाय नेत्रकम्।
अस्त्रं धनुर्धरायेतिषडङ्गानि समाचरेत् ॥ १३९ ॥

षडंगन्यास : ॐ सहस्रार्चिषे हृदयाय नमः, ॐ स्वस्तिपूर्णाय शिरसि स्वाहा, ॐ उत्तिष्ठ पुरुषाय शिखायै वषट्, ॐ धूमव्यापिने कवचाय हुम्, ॐ सप्तजिह्वाय नेत्र त्रयाय वौषट्, ॐ धनुर्धराय अस्त्राय फट्—इन मन्त्रों से षड्ङ्गन्यास करना चाहिए।

मूर्ध्नि वामेंसके पार्श्वे कटौ लिंगे कटौ पुनः।
दक्षेपार्श्वेंसके न्यस्येन्मूर्तीरष्टौ विभावसोः ॥ १४० ॥
तारान्मये पदाद्यास्ताश्चतुर्थीनमसान्विताः।
जातवेदाःसप्तजिह्वो हव्यवाहन इत्यपि ॥ १४१ ॥
अश्वोदरजसंज्ञोन्यस्तथावैश्वानराह्वयः।
कौमारतेजाःस्याद्विश्वमुखो देवमुखस्तथा ॥ १४२ ॥

अङ्गन्यास : शिर, वाम स्कन्ध, वाम पार्श्व, लिंग, वामकटि, दक्षिणकटि, दक्षिणपार्श्व, दक्षिणस्कन्ध इन अङ्गों में अग्नि की ८ मूर्तियों का न्यास करना चाहिए। अग्निमूर्तियों के चतुर्थ्यन्त नाम के आगे 'ॐ अग्नये' और अन्त में 'नमः' लगाकर न्यास करना चाहिए। जातवेद, सप्तजिह्व, हव्यवाहन, अश्वोदरज, वैश्वानर कौमारतेज, विश्वमुख एवं देवमुख (ये अग्नि की ८ मूर्तियों के नाम हैं।)

टिप्पणी : प्रयोगविधि :

ॐ अग्नये जातवेदसे नमः मूर्ध्नि। ॐ अग्नये वैश्वानराय नमः लिङ्गे।
ॐ अग्नये सप्तजिह्वाय नमः वामांसे। ॐ अग्नये कौमारतेजसे नमः दक्षकटौ।
ॐ अग्नये हव्यवाहनाय नमः वामपार्श्वे। ॐ विश्वमुखाय नमः दक्षपार्श्वे।
ॐ अग्नये अश्वोदरजाय नमः वामकटौ। ॐ देवमुखाय नमः दक्षांसे।

ततोन्यसेन्निजे देहेपीठं हाटकरेतसः।
वह्निमंडलपर्यंतं मण्डूकादि यथोदितम् ॥ १४३ ॥

पूर्वाः ॥ डेन्मोंताः ॐअग्नयेजातवेदसेनमोमूर्ध्नीत्यादि ॥ १४१-१४२ ॥ हाटकरेतसोवह्नेः ॥

पीता श्वेतारुणा कृष्णा धूम्रा तीव्रा स्फुलिङ्गिनी ।
रुचिरा ज्वालिनी चेति कृशानोःपीठशक्तयः ॥ १४४ ॥
बीजं वह्न्यासनायेतिहृदंतःपीठमन्त्रकः ।
एवं विन्यस्य पीठान्तं पावकं चिन्तयेत्तनौ ॥ १४५ ॥

पीठ देवता एवं शक्तियों का न्यास : इसके बाद मण्डूक से लेकर अग्निमण्डल पर्यन्त पूर्वोक्त अग्नि पीठ के देवताओं का अपने शरीर में न्यास करना चाहिए । पीता, श्वेता, अरुणा, कृष्णा, धूम्रा, तीव्रा स्फुलिंगनी, रुचिरा एवं ज्वालिनी—ये अग्निपीठ की शक्तियाँ होती हैं ।

'ॐ रं वह्न्यासनाय नमः'—यह पीठ का मन्त्र है । इस प्रकार पीठ पर्यन्त समस्त न्यास कर अपने शरीर में अग्नि का ध्यान करना चाहिए ।

त्रिनेत्रमारक्ततनुं शुभ्रवस्त्रं सुवर्णस्रजमग्निमीडे ।
वराभयस्वस्तिकशक्तिहस्तं पद्मस्थमाकल्पसमूह्ययुक्तम् ॥ १४६ ॥

अग्नि का ध्यान : तीन नेत्रवाले, लाल रंग वाले, शुभ्र वस्त्र धारण किये हुए, सुवर्ण माला पहिने हुए, दाहिने हाथों में वरद मुद्रा एवं स्वस्तिक को तथा बायें हाथों में अभय मुद्रा एवं शक्ति को धारण करने वाले अनेक आभूषणों से सुशोभित अग्निदेव का ध्यान करता हूँ ।

एवं ध्यात्वार्चनं कुर्यान्मानसं विधिवद्बुधः ।
परिषिञ्चेत्ततस्तोयैःकुण्डं स्थण्डिलमेव वा ॥ १४७ ॥
दर्भैःपरिस्तरेदग्निं प्रागग्रैरुदगग्रकैः ।
प्रत्यग्दक्षिणसौम्यासु न्यसेत्त्रीन्परिधीन्क्रमात् ॥ १४८ ॥
पालाशान्बिल्वजांस्तेषु ब्रह्मविष्णुशिवान्यजेत् ।
वह्नौ तत्पीठमभ्यर्च्यावाहयेत्स्वहृदोनलम् ॥ १४९ ॥
गंधादिभिःसमभ्यर्च्य पूजयेत्पावकंव्रती ।
षट्सु कोणेषु मध्ये च जिह्वास्तद्देवतायजेत् ॥ १५० ॥
ईशानादिषु वाय्वंतकोणेषु षट्समर्चयेत् ।
हिरण्याद्यतिरक्तांता मध्ये तु बहुरूपिणीम् ॥ १५१ ॥
केसरेष्वङ्गपूजास्याद्दलेष्वष्टसुमूर्त्तयः ।
मातरोष्टौ दलांतेषु भैरवाःस्युस्तदग्रतः ॥ १५२ ॥

मंडलपर्यंतमवपीठदेवताः पूज्याः ॥ ततः पीताद्याः पीठशक्तयः ॥ १४३-१४४ ॥ बीजमिति ॥ रंवह्न्यासनायनमः इतिपीठमंत्र ॥ १४५ ॥ ध्यानमाह ॥ त्रिनेत्रमिति ॥ वरस्वस्तिकादक्षयोः ॥ अभीतिशक्तीवामयोः ॥ आकल्पाआभरणानितत्संघयुतम् ॥ १४६-१५३ ॥

धरापुरे तु शक्राद्या वज्राद्यायुधसंयुताः ।
एवमावरणयुक्तं सप्तभिः पावकं यजेत् ॥ १५३ ॥
असितांगो रुरुश्चंडःक्रोध उन्मत्तसंज्ञकः ।
कपाली भीषणश्चापिसंहारश्चाप्टभैरवाः ॥ १५४ ॥

अग्नि पूजा : इस प्रकार ध्यान कर विधिवत मानसोपचार से अग्नि का पूजन करना चाहिए । फिर जल से कुण्ड या स्थण्डिल का परिषिचन करना चाहिए । पूर्व एवं उत्तर की ओर अग्रभागवाले कुशाओं के परिस्तरण रखने चाहिए । पलाश एवं विल्व की शाखाओं से पश्चिम, दक्षिण एवं उत्तर में क्रमशः ३ परिधि बनाकर उन पर ब्रह्मा, विष्णु एवं शिव का पूजन करना चाहिए ।

अग्नि में उसके पीठस्थ देवताओं का पूजन कर अपने हृदय से अग्नि का आवाहन करना चाहिए । और गन्ध आदि से उसका पूजन कर ईशान से वायव्य पर्यन्त ६ कोणों में हिरण्या से अतिरक्ता तक तथा मध्य में बहुरूपिणी नाम अग्नि की जिह्वा का पूजन करना चाहिए ।

केसरों में अङ्गपूजा, अष्टदलों में अष्टमूर्तियों की पूजा, दलों के अन्त में ८ मातृकाओं की पूजा और उनके आगे ८ भैरवों की पूजा करनी चाहिए । भूपुर में इन्द्र आदि देव तथा वज्र आदि आयुधों का पूजन करना चाहिए । इस प्रकार सातों आवरण के देवताओं के साथ अग्नि का पूजन करना चाहिए ।

असितांग, रुरु, चण्ड, क्रोध, उन्मत्त, कपाली, भीषण एवं संहार—ये ८ भैरवों के नाम हैं ।

वामेकुशानथास्तीर्य तत्रवस्तूनि निःक्षिपेत् ।
प्रणीताप्रोक्षणीपात्रे आज्यस्थालीं स्रुवंस्रुचम् ॥ १५५ ॥
अधोमुखानिचैतानिहोमद्रव्यं घृतंकुशान् ।
समिधःपञ्चपालाशीरन्यदप्युपयौगियत् ॥ १५६ ॥
कृत्वापवित्रे मूलेन प्रोक्षेत्तानि शुभांभसा ।
उत्तानानिविधायाथप्रणीतां पूरयेज्जलैः ॥ १५७ ॥
तीर्थमन्त्रेण तीर्थानि सृण्या तत्राह्वयेत्सुधीः ।
पवित्रे ह्यक्षतांस्तत्रनिःक्षिप्योत्पवनं चरेत् ॥ १५८ ॥
अथोदीच्यां निधायैतां प्रोक्षण्यां तज्जलं क्षिपेत् ।
हवनीयं द्रव्यजातमुक्षेत्तोयैःपवित्रगैः ॥ १५९ ॥

भैरवानाह ॥ असितांगइति ॥ १५४--१५७ ॥ तीर्थमंत्रेण गंगेचयमुनेचैवगोदावरिसरस्वति ॥ नर्मदेसिन्धुकावेरिजलेस्मिन्संनिधिकुर्वित्यनेन ॥ सृण्याअंकुशमुद्रया ॥ ऋज्वींमध्यमिकां-कृत्वातर्जनींमध्यपर्वणि ॥ संयोज्याकुञ्चयेत्किंचिन्मुद्रेषांकुशसंज्ञिकेतिलक्षणम् ॥१५८-१६०॥

पात्रासादन : अग्नि के बायीं ओर कुशाओं को फैलाकर उन पर प्रणीता, प्रोक्षणी पात्र, आज्य पात्र, स्रुवा, स्रुची आदि को अधोमुख रखना चाहिए तथा साथ में हवनीय द्रव्य घृत कुशा, पलाश की समिधा एवं अन्य उपयोगी वस्तुओं को रखना चाहिए।

मूल मन्त्र का उच्चारण करते हुए कुशा एवं शुद्ध जल से इन सबका प्रोक्षण करना चाहिए। फिर सब पात्रों को सीधा कर प्रणीता पात्र में जल भरना चाहिए। तीर्थ मन्त्र (ॐ गङ्गे च यमुने चैव०) से अंकुश मुद्रा द्वारा उस जल में तीर्थों का आवाहन कर दो पूरे कुशा डालकर उत्पवन करना चाहिए। फिर प्रणीता पात्र को उत्तर में रखकर उसका जल प्रोक्षणी पात्र में डालना चाहिए और उस पवित्र जल से समस्त हवनीय द्रव्यों का प्रोक्षण करना चाहिए।

मूलेन मूलगायत्र्या यद्वा हृदयमन्त्रतः।
दक्षिणे पीठमासाद्य तत्र ब्रह्माणमाह्वयेत् ॥ १६० ॥
अणिमाद्याःसिद्धयोष्टौ ब्रह्मणःपीठदेवताः।
तारहृत्पूर्वकोऽन्तोब्रह्मा मन्त्रोस्य पूजने ॥ १६१ ॥

ब्रह्मा का आवाहन एवं पूजन : मूलमन्त्र, गायत्रीमन्त्र या हृदयमन्त्र (ॐ नमः) से अग्नि के दाहिनी ओर पीठ बनाकर उस पर ब्रह्मा का आवाहन करना चाहिए। अणिमादि ८ सिद्धियाँ ब्रह्मा की पीठ के देवता होते हैं। तथा तार (ॐ) एवं हृद् (नमः) प्रारम्भ में लगाकर ब्रह्मा का चतुर्थ्यन्त रूप इनकी पूजा का मन्त्र होता है।

टिप्पणी : *मन्त्रोद्धार* : ॐ नमो ब्रह्मणे

प्रयोग : मूलमन्त्र, गायत्रीमन्त्र या हृदयमन्त्र से दाहिनी ओर पीठ बनाकर उस पर "ॐ अणिमायै नमः" इत्यादि नाममन्त्रों से आठों सिद्धियों का पूजन कर "ॐ नमो ब्रह्मणे" इस मन्त्र से ब्रह्मा का पूजन करना चाहिए।

हस्ताभ्यां स्रुक्स्रुवौ धृत्वा तापयेत्त्रिरधोमुखौ।
वामहस्तेन तौ धृत्वा दर्भैर्दक्षेणमार्जयेत् ॥ १६२ ॥
संप्रोक्ष्य प्रोक्षणीतोयैः प्रतप्य पूर्ववत्पुनः।
न्यस्याग्नौ मार्जनान्दर्भास्तयोःशक्तित्रयं न्यसेत् ॥ १६३ ॥
इच्छा ज्ञान क्रिया संज्ञा चतुर्थीनमसान्विता।
दीर्घत्रयेंदुयुग्व्योमपूर्वकं स्थानकत्रये ॥ १६४ ॥

अणिमाद्या अष्टमेवच्यते ॥ ब्रह्ममंत्रमुद्धरति ॥ तारेति ॥ ॐ नमोब्रह्मणे इति ॥ १६१ ॥ स्रुक्स्रुवसंस्कारमाह ॥ हस्ताभ्यमिति ॥ १६२--१६३ ॥ शक्तित्रयमाह ॥ इच्छेति ॥ दीर्घत्रयम् आईऊ। व्योम हः ॥ तत्पूर्वकां हांइच्छाशक्त्यैनमोमूलो ॥ हींज्ञानशक्त्यै-नमःमध्ये ॥ हूंक्रियाशक्त्यैनमःअन्ते ॥ १६४ ॥

हृदास्त्रचिन्यसेच्छक्तिं स्रुवे शम्भुंततस्तु तौ ।
सूत्रत्रयेण संवेष्टय संपूज्य कुसुमादिभिः ॥ १६५ ॥

स्रुवा एवं स्रुची का संस्कार : दोनों हाथों में स्रुवा एवं स्रुची लेकर उन्हें अधोमुख ३ बार अग्नि पर तपाना चाहिए । फिर उन दोनों को बायें हाथ में लेकर दाहिने हाथ में कुशा लेकर उनसे साफ करना चाहिए । प्रणीता के जल से प्रोक्षण कर, पर्ववत् उन्हें तपाकर मार्जन की कुशाओं को अग्नि में डालकर उन दोनों पर ३-३ शक्तियों का न्यास करना चाहिए ।

इच्छा, ज्ञान एवं क्रिया इनके चतुर्थ्यन्त रूपों के पीछे 'नमः' लगाकर तथा आदि में दीर्घत्रय (आ, ई, ऊ) के साथ सानुस्वार व्योम (ह) लगाने से (ॐ हाँ इच्छाशक्त्यै नमः, ॐ हीं ज्ञान शक्त्यै नमः, ॐ हूँ क्रिया शक्त्यै नमः) तीन मन्त्र बनते हैं। इन मन्त्रों से स्रुवा एवं स्रुची के मूल मध्य एवं अग्र भाग में उक्त तीनों शक्तियों का न्यास करना चाहिए ।

स्रुची में हृदय से शक्ति तथा स्रुवा में शिव का न्यास कर उन दोनों को तीन सूत्रों से बाँधकर पुष्प आदि से उनकी पूजा कर उन्हें कुशाओं पर दाहिनी ओर रखना चाहिए । यह स्रुवा एवं स्रुची का संस्कार कहलाता है ।

कुशोपरिन्यसेद्दक्षे तयोःसंस्कार ईरितः ।
अस्त्रोक्षितायामाज्यस्य स्थाल्यामाज्यं विनिःक्षिपेत् ॥ १६६ ॥
वीक्षणादिकसंस्कारसंस्कारसंस्कृतं मूलमन्त्रतः ।
गोमुद्रयामृतीकृत्य षट्संस्कारास्ततश्चरेत् ॥ १६७ ॥
कुण्डोद्धृते वायुकोणे स्थितेङ्गारे विनिःक्षिपेत् ।
हृदेतितापनं प्रोक्तं दर्भयुग्मं प्रदीपितम् ॥ १६८ ॥
आज्ये क्षिप्त्वा हृदावह्नौ पवित्रीकरणं क्षिपेत् ॥ १६९ ॥
आज्यं नीराजयेद्दीप्तदर्भयुग्मेन वर्मणा ।
अभिद्योतनमुक्तं तद्दीप्तं दर्भत्रयं घृते ॥ १७० ॥
दर्शयेदस्त्रेणोद्द्योते गृहीत्वा घृतपात्रकम् ।
संयोज्याग्नौ तदङ्गारान्सलिलं संस्पृशेन्मुधीः ॥ १७१ ॥
अङ्गुष्ठानामिकाभ्यां तु दर्भावादाय निःक्षिपेत् ।
त्रिरग्निसंमुखेत्वाज्यमस्त्रेणोत्पवनंत्विदम् ॥ १७२ ॥
हृदात्मसम्मुखं तद्वदाज्यक्षेपस्तुसंप्लवः ।
नीराजनादिसंस्कारेष्वग्नौदर्भान्विनिःक्षिपेत् ॥ १७३ ॥

॥१६५--१६६॥ गोमुद्रा धेनुमुद्रा ॥१६७--१७३॥ नाडीत्रयमिति ॥ इडापिंगलासुषुम्णाख्या ॥

दर्भद्वयं ग्रन्थियुतं घृतमध्येविनिःक्षिपेत् ।
वामदक्षिणयोःपक्षौ स्मृत्वा नाडीत्रयं स्मरेत् ।
दक्षिणाद्वामतोमध्याद्धृदादाय घृतंसुधीः ॥ १७४ ॥
अग्नयेग्निप्रियासोमायस्वाहेत्यग्निनेत्रयोः ।
जुहुयादग्नीषोमाभ्यांस्वाहेत्यक्षिणतृतीयके ॥ १७५ ॥
पातयेदाहुतेःशेषमाहुतिग्रहणस्थले ।
भूयो हृदादक्षभागादादायाज्यं मुखे यजेत् ॥ १७६ ॥
अग्नयेस्विष्टकृते तन्नेत्रास्योद्घाटनं मतम् ।
नरसिंहं विना विष्णुं मन्त्रेनेत्रद्वयं यजेत् ॥ १७७ ॥

आज्य एवं आज्यस्थाली का संस्कार : 'अस्त्राय फट्' मन्त्र से आज्यस्थाली का प्रोक्षण कर उसमें घी डालना चाहिए। फिर ईक्षण, प्रोक्षण, ताडन एवं सेचन से संस्कृत कर मूल मन्त्र से धेनु मुद्रा से आज्य का अमृतीकरण करके (वक्ष्यमाण) ६ संस्कार करने चाहिए।

कुण्ड से लेकर वायु कोण में स्थित अंगार पर आज्यस्थाली को रखना चाहिए। 'ॐ नमः' मन्त्र से तापन करना चाहिए। दो जलती हुई कुशाओं को घी में डालकर 'ॐ नमः' मन्त्र से अग्नि में कुशाओं को डालना चाहिए। जलती हुई दोनों कुशाओं को 'हुम्' मन्त्र बोलते हुऐ घी के चारों ओर घुमाना चाहिए—इसे अभिद्योतन कहते हैं। घी में ३ कुशा डुबोकर 'अस्त्राय फट्' मन्त्र से जलाकर आज्यस्थाली में डालकर, अंगार को कुण्ड की अग्नि में डालकर जल का स्पर्श करना चाहिए। अग्नि के सामने अँगूठा एवं अनामिका से दो कुशा पकड़कर 'अस्त्राय फट्' मन्त्र से ३ बार घी को ऊपर की ओर उछालना चाहिए। इसे उत्पवन कहते है। 'ॐ नमः' मन्त्र से उसी पर अपनी ओर घी फेंकना संप्लव कहलाता हैं। नीराजन आदि संस्कारों में अग्नि में कुशा डालने चाहिए।

गाँठ सहित दो कुशा घी में डालने चाहिए। वाम एवं दक्षिण दोनों स्वरों का ध्यान कर इडा, पिंगला तथा सुषुम्णा इन तीनों नाड़ियों का ध्यान करना चाहिए। साधक दक्षिण, वाम एवं मध्य भाग से 'ॐ नमः' मन्त्र से घी लेकर 'ॐ अग्नये स्वाहा', 'ॐ सोमाय स्वाहा' इन मन्त्रों से अग्नि के दोनों नेत्रों में तथा 'अग्नि सोमाभ्यां स्वाहा' मन्त्र से उसके तृतीय नेत्र में आहुति देनी चाहिए। आहुति के शेष भाग को प्रणीता में डालना चाहिए। फिर 'ॐ नमः' मन्त्र से दाहिनी ओर से घी लेकर 'ॐ अग्नये। स्विष्टकृते स्वाहा' मन्त्र से एक आहुति अग्नि के मुख में देनी चाहिए। इससे उसके

तृतीयामध्ये चिन्त्या ॥ हृदा नमइतिमन्त्रेण ॥ १७४ ॥ अग्नयेस्वाहेतिदक्षनेत्रे ॥ सोमाय-स्वाहेतिवामे तदाहुतिचतुष्टयेनाग्ननेत्र सुखप्रकाशोभवतीत्यर्थः ॥ १७५-- ७७ ॥

मुख का उद्घाटन हो जाता है। नरसिंह को छोड़कर अन्य विष्णु के मन्त्रों में दो नेत्रों में आहुति देनी चाहिए। तथा नृसिंह एवं अन्य देवताओं के दशांश हवन में अग्नि के तीनों नेत्रों में आहुतियाँ देनी चाहिए।

नरसिंहान्यदेवेषु वह्नेर्नेत्रत्रयं स्मृतम्।
महाव्याहृतिभिर्व्यस्तसमस्ताभिश्चतुष्टयम् ॥ १७८ ॥
आहुतीनां त्रयं वह्निमन्त्रेणैवततश्चरेत्।
घृताहुतिभिरष्टाभिरेकैकां संस्कृतिं चरेत् ॥ १७९ ॥

महाव्याहृतियों से पृथक्-पृथक् (यथा—ॐ भूः स्वाहा, ॐ भुवः स्वाहाः, ॐ स्वः स्वाहा) तथा सबसे (यथा—ॐ भूर्भुवः स्वः स्वाहा) चार आहुतियाँ देनी चाहिए। फिर अग्नि मन्त्र (ॐ वैश्वानर जातवेद इहावह लोहिताक्ष-सर्वकर्माणि साधय स्वाहा) से ३ आहुतियाँ देनी चाहिए। तथा फिर घी की आठ आहुतियों द्वारा एक एक आहुति से अग्नि का एक एक संस्कार करना चाहिए।

ओमस्याग्नेरमुं संस्कारं करोम्यग्निवल्लभा।
इत्थं मनुं जपन्गर्भाधानं पुन्सवनं ततः ॥ १८० ॥
सीमन्तोन्नयनं जातकर्मकृत्वा ततश्चरेत्।
वह्नौ पंचसमिद्धोमान्नालापनयनं वसोः ॥ १८१ ॥
कुर्याद्देवाभिधानेन पूर्ववन्नामशुष्मणः।
नामानन्तरमेतस्य पितरौ स्वेप्सयेद्धृदि ॥ १८२ ॥
अन्नप्राशं तथाचौलोपनयौ दारयोजनम्।
संस्काराःस्युर्विवाहान्ता मृत्यन्ता क्रूरकर्मणि ॥ १८३ ॥

अग्नि के संस्कार : 'ॐ अस्याग्ने गर्भा संस्कारं करोमि स्वाहा'—इस प्रकार मन्त्र में प्रत्येक संस्कार का नाम लेकर उक्त मन्त्र का जप करते हुए एक एक आहुति से एक एक संस्कार करना चाहिए। सर्वप्रथम गर्भाधान संस्कार, फिर पुंसवन, सीमन्तोन्नयन एवं जातकर्म करके अग्नि में ५ समिधाओं के हवन से नालापनयन संस्कार करना चाहिए।

फिर इष्टदेव के नाम अग्नि का नामकरण करना (यथा गणपति के होम में

॥ १७८-१७९ ॥ ॐ अस्याग्नेर्गर्भाधानसंस्कारंकरोमिस्वाहेत्यादि ॥ १८० ॥ पंचसमिधां-होमाद्वसोरग्नेः नालापनयनाख्यःसंस्कारः ॥ १८१ ॥ देवाभिधानेनदेवनाम्नाशुष्मणोग्नेर्नाम पूर्ववत् ॥ घृताहुत्यष्टकेन कुर्यात्—रामाग्निकृष्णाग्निरित्यादि ॥ एतस्याग्नेः पितरौवाग्गी-शीवागीशौकुण्डात्स्वहृदिन्यसेत् ॥ १८२ ॥ उपनयमुपवीतम्। दारयोजनं विवाहः ॥ ॥ १८३ ॥

'गणेशाग्निः', दुर्गा के होम 'दुर्गाग्निः' एवं कृष्ण मन्त्र के हवन में 'कृष्णाग्निः' इस रीति से नामकरण करना) चाहिए ।

नामकरण के बाद इसके माता-पिताओं (वागीशी एवं वागीश) को कुण्ड से लेकर अपने हृदय में स्थापित करना चाहिए । फिर अन्नप्राशन, चौल, उपनयन एवं विवाह संस्कार करना चाहिए । (शुभ कार्यों में) विवाह पर्यन्त संस्कार ही होते हैं, परन्तु क्रूर कार्यों में मृत्यु पर्यन्त संस्कार करने चाहिए ।

एकैकामाहुतिं कुर्याद्वह्नेर्जिह्वाङ्गमूर्तिभिः ।
इन्द्रादिभिश्च वज्राद्यैर्द्विठान्तैर्जुहुयात्ततः ॥ १८४ ॥
स्रुवेणाज्यं चतुर्वारं निधाय स्रुचितां सुधीः ।
अपिधाय स्रुवेणैतौ गृह्णीयात्करयुग्मतः ॥१८५॥
तिष्ठन्मूलं तयोर्नाभौकृत्वाग्रे कुसुमं क्षिपेत् ।
वामस्तनान्तं तन्मूलं कृत्वाग्नि मनुनासुधीः ॥१८६॥

अग्नि की जिह्वाओं के मन्त्रों से एक एक आहुति देनी चाहिए । फिर इन्द्रादि देव तथा वज्र आदि आयुधों के स्वाहान्त नाममन्त्रों (यथा ॐ इन्द्राय स्वाहा..... ॐ वज्राय स्वाहा.....) से हवन करना चाहिए ।

स्रुवा से स्रुचि में ४ बार घी डालकर फिर स्रुवा से स्रुचि को ढँक कर उनको दोनों हाथों में लेकर, उनके मूल भाग में बैठकर, अपनी नाभि के आगे करके उन पर पुष्प चढ़ाना चाहिए । फिर उनका मूल अपने बाँये स्तन के पास लाकर 'वौषट्' अन्त में लगाकर अग्नि मन्त्र (यथा—ॐ वैश्वानर जातवेद इहावह लोहिताक्ष सर्वकर्माणि साधय स्वाहा वौषट्) से सम्पत्ति प्राप्ति के लिए जागरूक साधक को एक आहुति देनी चाहिए ।

जुहुयाद्वौषडन्तेन संपत्त्यर्थमतन्द्रितः ।
महागणेशमन्त्रेण व्यस्तेनदशधा ततः ॥१८७॥
जुहुयाच्चसमस्तेन चतुर्वारं घृताहुतीः ।
पूर्वपूर्वयुतं बीजषट्कं बाणाश्चसायकाः ॥१८८॥
मुनयो मार्गणाश्चेतिविभागस्तन्मनोःस्मृतः ।
तारो लक्ष्मीर्गिरिसुता कामो भूर्गणनायकः ॥१८९॥

॥ १८४--१८५ ॥ कुसुमंपुष्पम् ॥१८६॥ दशधाव्यस्तेनविभक्तेन ॥१८७॥ तमेवविभागमाह ॥ पूर्वेति ॥ बीजषट्कम् ॥ बाणाःपञ्चवर्गाः ॥ सायकाःपंचैव । मुनयःसप्त ॥ मार्गणाःपंच ॥ गणेशमंत्रमाह ॥ तारइति ॥ तारःॐ ॥ लक्ष्मीः श्रीं ॥ गिरिसुताह्रीं ॥ कामःक्लीं ॥ भूःग्लौं ॥ गणनायकःगं ॥ इतिबीजषट्कम् ॥ गणपतयेवरवरद सर्वजनंमेवशमानय-स्वाहेतिविभागाः पूर्वयुताःकार्याः ॥ ॐ ॐ श्रीं ॐ श्रींह्रीं ॐ इत्यादि ॥ १८८--१८९ ॥

चतुर्थ्यन्तो गणपतिर्वरांते वरदेति च ।
सर्वांतेजनमित्युक्त्वा मेवशान्ते तु मानय ॥१९०॥
स्वाहान्तो वसुयुग्मार्णो महागणपतेर्मनुः ।
एवं कृत्वाग्निसंस्कारं पीठं देवस्य पूजयेत् ॥१९१

महागणपति मन्त्र के १० विभाग कर प्रत्येक भाग से एक-एक आहुति तथा समस्त मन्त्र से चार घी की आहुतियाँ देनी चाहिए । सर्वप्रथम ६ बीजों और फिर ५, ५, ७ एवं ५ अक्षरों का मन्त्र में एक एक भाग मानना चाहिए।

तारा (ॐ) लक्ष्मी (श्रीं) गिरिसुता (ह्रीं) काम (क्लीं) भू (ग्लौं) गणनायक (गं) चतुर्थन्त गणपति (गणपतये) फिर 'वर' इसके बाद 'वरद' एवं 'सर्वजनं' फिर 'मेवश' एवं 'मानय' और अन्त में 'स्वाहा' लगाने से २८ अक्षर वाला महागणपति का मन्त्र बनता है । इस प्रकार अग्नि के संस्कार करके देव की पीठ का पूजन करना चाहिए ।

टिप्पणी : महागणपति मन्त्र के १० भागों से हवन : १. 'ॐ स्वाहा'; २. 'ॐ श्रीं स्वाहा'; ३. ॐ श्रीं ह्रीं स्वाहा; ४. ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं स्वाहा; ५. ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं ग्लौं स्वाहा; ६. ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं ग्लौं गं स्वाहा; ७. ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं ग्लौं गं गणपतये स्वाहा; ८. ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं ग्लौं गं गणपतये वरवरद स्वाहा; ९. ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं ग्लौं गं गणपतये वरवरद सर्वजनं मेवश स्वाहा, तथा १०. ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं ग्लौं गं गणपतये वरवरद सर्वजनं मेवशमानय स्वाहा—इन १० मन्त्रों से एक-एक आहुति देनी चाहिए ।

फिर 'ॐ श्रीं ह्रीं..... .....वशमानय स्वाहा' इस मन्त्र से घी की चार आहुतियाँ देनी चाहिए ।

तत्रेष्टदेवमावाह्य मुद्रा आवाहनादिकाः ।
प्रदर्श्य वह्निरूपस्य देवस्य वदने पुनः ॥१९२॥
मूलेन जुहुयात्पञ्चनेत्रसंख्या घृताहुतीः ।
वक्त्रैकीकरणं त्वग्निर्देवयोस्तेन जायते ॥ १९३॥
नाडीसन्धानसिद्धयर्थं वह्निदेवतयोस्ततः ।
जुहुयान्मूलमन्त्रेण रुद्रसंख्या घृताहुतीः ॥१९४॥
इष्टदेवस्यावृतीनामेकैकामाहुतिं चरेत् ।
ततस्तुमूलमन्त्रेण दशधा जुहयाद् घृतम् ॥१९५॥
ततःकल्पोक्तद्रव्येण दशांशं जुहुयाज्जपात् ।
होमं समाप्य कुर्वीत पूर्णाहुतिमनन्यधीः ॥१९६॥

॥१९०-१९१॥ आवाहनादिकाअग्नेर्वक्त्रसंख्याः ॥१९२॥ पञ्चनेत्रसंख्या पंचविंशतिः ॥१९३-१९६॥

अग्नि में आवाहन आदि की मुद्रा प्रदर्शित कर इष्टदेव का आवाहन करना चाहिए। फिर अग्नि रूपी इष्टदेव के मुख में मूलमन्त्र से २५ घी की आहुतियाँ देनी चाहिए। इससे अग्नि एवं देवमुख का एकीकरण हो जाता है। तत्पश्चात् अग्नि एवं इष्टदेव का नाडी संधान करने के लिए मूल मन्त्र से घी की ११ आहुतियाँ देनी चाहिए।

फिर इष्टदेव के आवरण देवताओं को एक एक आहुति देनी चाहिए। तत्पश्चात् मूल मन्त्र से घी की १० आहुतियाँ देनी चाहिए। और फिर अनुष्ठान विधि में बतलाये द्रव्य से जप के दशांश का हवन करना चाहिए। इस प्रकार होम करके एकाग्रचित्त से पूर्णाहुति करनी चाहिए।

टिप्पणी : आवाहनी मुद्रा : 'ॐ पुष्पे पुष्पे महापुष्पे सुपुष्पे पुष्पसंभवे पुष्पं च यावत्कीर्ण हुं फट् स्वाहा'— इस मन्त्र से संशोधित पुष्पों को लेकर दोनों हाथों की अञ्जलि बनाने को आवाहनी मुद्रा कहते हैं। अनामिका मूल में अंगुष्ठ लगाकर हथेलियों के मिलने को अञ्जलि कहते है। यथा—

"सम्यक् सम्पूजितैः पुष्पैः कराभ्यां कल्पिताञ्जलिः।
आवाहनी समाख्याता मुद्रादेशिक सत्तमैः॥
अनामामूलं संलातङ्गुष्ठग्राञ्जलि रीरिता॥"

स्थापनी मुद्रा : आवाहनी मुद्रा को अधोमुख करने से स्थापनी मुद्रा बन जाती है। यथा—

"अधोमुखी कृता सैव स्थापनीति निगद्यते।"

सन्निधान मुद्रा : अँगूठों को ऊपर उठाकर दोनों मुट्ठियों को परस्पर मिलाने से सन्निधान मुद्रा बनती है। यथा—

"आश्लिष्ट मुष्टि युगला प्रोन्नताङ्गुष्ठयुग्मका।
सन्निधाने समुच्छिष्टा मुद्रेयं तन्त्रवेदिभिः॥"

सन्निरोध मुद्रा : अँगूठों को भीतर कर दोनों मुट्ठियों को परस्पर मिलाने से सन्निरोध मुद्रा बनती है। यथा—

"अंगुष्ठ गर्भिणी सैव सन्निरोधे समीरिता।"

सम्मुखीकरण मुद्रा : हृदय प्रदेश में अञ्जलि बनाने को सम्मुखीकरण मुद्रा कहते है। यथा—

"बद्धाञ्जलि हृदि प्रोक्ता सम्मुखीकरणे बुधैः।"

सकलीकरण मुद्रा : देवता के अंगों पर षडङ्गन्यास करना सकलीकरण कहलाता है। यथा—

"देवांगेषु षड्ङ्गानां न्यासः स्यात्सकलीकृतिः।"

अवगुण्ठन मुद्रा : दाहिने हाथ की मुट्ठी बनाकर मध्यमा एवं तर्जनी को अधोमुखकर चारों ओर घुमाने से अवगुण्ठन मुद्रा बनती है। यथा—

"सव्यहस्त कृतामुष्टिः दीर्घाधोमुख तर्जनी।
अवगुण्ठन मुद्रेयममितों भ्रामिता भवेत् ॥"

अमृतीकरण के लिए धेनु मुद्रा : दोनों हाथों की कनिष्ठा एवं अनामिका को तथा तर्जनी एवं मध्यमा को एक दूसरे से मिलाने पर धेनु मुद्रा बनती है। यथा—

"अन्योन्याभि मुखौश्लिष्टौ कनिष्ठानामिका पुनः।
तथा तु तर्जनीमध्या धेनु मुद्रा प्रकीर्तिता ॥"

परमीकरण के लिए महामुद्रा : अँगूठों को परस्पर ग्रथित कर अँगुलियाँ फैलाने से महामुद्रा बनती है, इसे परमीकरण करते हैं। यथा—

"अन्योन्य ग्रथितांगुष्ठौ प्रसारित करांगुलिः।
महामुद्रेयमुदिता परमीकरणे बुधैः ॥"

होमावशिष्टेनाज्येन पूरयित्वास्रुचं सुधीः।
पुष्पं फलं निधायाग्रेस्रुवेणाच्छाद्यतां पुनः ॥१९७॥
उत्थितो वौषडन्तेन मूलेन जुहुयाद्वसौ।
तत्द्रव्येणावृतोनां च जुहुयादाहुतिं पृथक् ॥१९८॥

पूर्णाहुति : फिर विद्वान् साधक होम के बचे हुए घी से स्रुचि को भर कर उसमें पुष्प या फल रखकर, उसे स्रुवा से ढँक कर खड़ा होकर मूल मन्त्र के अन्त में 'वौषट्' लगाकर अग्नि में पूर्णाहुति दे। तथा होम द्रव्य से आवरण देवताओं को पृथक्-पृथक् आहुति देनी चाहिए।

देवं विसृज्य स्वहृदि वह्नेर्जिह्वाङ्गमूर्तिभिः।
जुहुद्व्याहृतीर्हुत्वा प्रोक्षेत्तंप्रोक्षणीजलैः ॥१९९॥
सम्प्रार्थ्यानेन मनुना नत्वातंविसृजेद्धृदि।
भोभोवह्ने महाशक्ते सर्वकर्मप्रसाधक ॥२००॥
कर्मान्तरेपि सम्प्राप्ते सान्निध्यं कुरुसादरम्।
वह्नौ पवित्रे निःक्षिप्य प्रणीताम्बु भुवि क्षिपेत् ॥२०१॥

फिर अपने हृदय में इष्टदेव का विसर्जन कर अग्नि की ७ जिह्वा एवं ८ मूर्तियों को आहुतियाँ देनी चाहिए। और महाव्याहृति से हवन कर प्रोक्षणी के जल से उसका प्रोक्षण करना चाहिए। फिर—

-१९७-२०० ॥ पवित्रादिप्रतिपत्तिमाह ॥ वह्नविति ॥ विधिब्रह्माणंविसृज्यदक्षिणां दत्त्वेतिशेषः ॥ सकुशान्परिस्तरणसहितान्वसौवह्नौ ॥ २०१ ॥ तर्पणमंत्रमाह ॥ मूलमंत्रान्ते कृष्णं-

"भो भो वह्ने महाशक्ते सर्व कर्म प्रसाधक ।
कर्मान्तरे संप्राप्ते सान्निध्यं कुरु सादरम् ।।"

इस मन्त्र से अग्नि की प्रार्थना एवं प्रणाम कर अन्त में अपने हृदय में उसका विसर्जन करना चाहिए ।

कुशाओं को अग्नि में डालकर प्रणीता का जल भूमि में डाल देना चाहिए । फिर ब्रह्मा का विसर्जन कर परिधि के कुशाओं को अग्नि में रख देना चाहिए । इस प्रकार होम समाप्त कर तर्पण करना चाहिए ।

विधि विसृज्य सकुशान्परिधीन्विन्यसेद्वसौ ।
एवं होमं समाप्याथतर्प्पयेद्देवतां जले ॥२०२॥
आवाह्य तद्दशांशेन तर्पणादभिषेचनम् ।
तर्पयामिनमश्चेति द्वितीयान्तेष्टपूर्वकम् ॥२०३॥
मूलान्ते तु पदं देयं सिंचामीत्यभिषेचने ।
ततो नानाविधैरन्नैस्तर्पयेद्द्विजसत्तमान् ॥२०४॥
इष्टरूपान्समाराध्य तेभ्योदद्याच्चदक्षिणाम् ।
न्यूनं सम्पूर्णतामेति ब्राह्मणाराधनान्नृणाम् ॥२०५॥
देवताश्चप्रसीदन्ति सम्पद्यंते मनोरथाः ॥२०६॥

इतिश्रीमहीधरविरचितेमन्त्रमहोदधौ
भूतशुद्ध्यादिकथनंनामप्रथमस्तरङ्गः

तर्पण अभिषेक एवं ब्राह्मण भोजन : जल में देवता का आवाहन कर होम की संख्या के दशांश (१/१०) से तर्पण तथा उसके दशांश से अभिषेक करना चाहिए । मूलमन्त्र के बाद द्वितीयान्त देवनाम और अन्त में 'तर्पयामि नमः' लगाकर तर्पण करना चाहिए । अभिषेक में मूलमन्त्र के द्वितीयान्त देवनाम तथा अन्त में 'अभिंपिंचामि' लगाकर अभिषेक करना चाहिए ।

फिर विविध व्यञ्जनों से श्रेष्ठ ब्राह्मणों को भोजन कराना चाहिए । अपने इष्ट के रूप में ब्राह्मणों का पूजन कर उनको दक्षिणा देनी चाहिए ।

तर्पयामिनमइतितर्पणे ॥ क्रव्णमभिषिंचामीत्यभिषेके ॥ २०२ ॥ जपाद्दशांशाद्धोमः तद्दशांशेनतर्पणं तद्दशांशेनाभिषेकः तद्दशांशेनविप्रभोजनमिति पञ्चांगंपुरश्चरणमितिउत्तमः पक्षः ॥ अभिषेकवर्जोमध्यमः ॥ तर्पणाभिषेकवर्जस्त्रयंगःकनीयान्पक्षः होमदशांशंद्विजभोजनमिति ॥ किंबहुना ॥ बहुब्राह्मणभोजनेदेवताप्रसादोनभवति किमिति ॥ २०३--२०६ ॥ इति श्रीमहीधरविरचितमंत्र महोदधेःव्याख्यायां नौकायांभूतशुद्ध्यादिकथनंनामप्रथमस्तरंगः ॥ १ ॥

ब्राह्मणों की आराधना से अनुष्ठान की न्यूनता दूर हो जाती है, देवता प्रसन्न होते हैं, तथा अपने मनोरथों की सिद्धि होती है।

टिप्पणी : तर्पण एवं अभिषेक की संख्या : अनुष्ठान में मन्त्र की जप संख्या जितनी हो, उसके दसवें हिस्से (१/१०) से हवन करना चाहिए। तथा हवन के दसवें हिस्से से तर्पण, उसके दसवें हिस्से से अभिषेक (मार्जन) तथा उसके दसवें हिस्से से ब्राह्मण भोजन की संख्या निश्चित करनी चाहिए। उदाहरणार्थ गणपति मन्त्र के एक लाख जप के पुरश्चरण में हवन की संख्या १० हजार, तर्पण की १ हजार, अभिषेक की संख्या १ सौ तथा ब्राह्मण भोजन की संख्या १० होगी।

तर्पण का मन्त्र : तर्पण करते समय मूल मन्त्र के बाद देव का द्वितीयान्त नाम तथा अन्त में 'तर्पयामि नमः' बोलकर तर्पण करना चाहिए, यथा—उच्छिष्ट गणपति मन्त्र के तर्पण के समय—

ॐ हस्ति पिशाचि लिखे स्वाहा उच्छिष्ट गणपति तर्पयामि नमः —यह मन्त्र बोलकर तर्पण करना चाहिए।

अभिषेक मन्त्र : अभिषेक करते समय मूलमन्त्र के बाद देव का द्वितीयान्त नाम और अन्त में 'अभिषिञ्चामि' लगाकर अभिषेक करना चाहिए। यथा उच्छिष्ट गणपति मन्त्र के पुरश्चरण में अभिषेक के समय—

'ॐ हस्ति पिशाचि लिखे स्वाहा उच्छिष्ट गणपतिमभिषिञ्चामि'

यह मन्त्र बोलकर अभिषेक करना चाहिए।

इति श्री शुकदेव चतुर्वेदि विरचितायां सटिप्पण्यां मन्त्रमहोदधेः

मोहिनी व्याख्यायां प्रथमस्तरङ्गः

द्वितीय तरङ्ग

गणेशस्य मनून्वक्ष्मे सर्वाभीष्टप्रदायकान् ।
जलं(व)चक्री(क)वह्नि(र)युतःकर्णेंद्वाढ्या च कामिका(तुं) ॥ १ ॥
दारको(ड)दीर्घसंयुक्तो(आ)वायुः(य)कवच(हुं)पश्चिमः ।
षडक्षरोमन्त्रराजो भजतामिष्टसिद्धिदः ॥ २ ॥

गणेशजी का षडक्षरमन्त्र : साधकों को समस्त अभीष्ट देने वाले गणेशजी के मन्त्रों को बतलाता हूँ—जल (व) वह्नि के साथ चक्री (क्र) कर्णेन्दु के साथ कामिका (तुं) दीर्घसंयुक्त दारक (डा) वायु (य) तथा अन्त में कवच (हुम्)—यह छः अक्षरों का मन्त्रराज साधकों को अभीष्टसिद्धि देनेवाला है ।

टिप्पणी : मन्त्रोद्धार : "वक्रतुंडाय हुम्"

भार्गवोमुनिरस्योक्तश्छन्दोनुष्टुबुदाहृतः ।
विघ्नेशो देवता बीजं वं शक्तिर्यमितीरितम् ॥ ३ ॥

इस मन्त्र का विनियोग : इस मन्त्र का भार्गव ऋषि है, अनुष्टुप छन्द है, विघ्नेश देवता है, वं बीज तथा यं शक्ति माना गया है ।

टिप्पणी : विनियोग : ॐ अस्य श्री गणेश मन्त्रस्य भार्गव ऋषिरनुष्टुप छन्दः विघ्नेशो देवता वं बीजं यं शक्तिर्ममाभीष्टसिध्यये जपे विनियोगः ।

षडक्षरैः सविधुभिः प्रणवाद्यैर्नमोन्तकैः ।
प्रकुर्याज्जातिसंयुक्तैः षडंगविधिमुत्तमम् ॥ ४ ॥

आद्यौसकलविघ्ननिवर्तकस्यश्रीगणेशस्यमंत्रान्वक्तंप्रतिजानीते ॥ गणेशस्येति ॥ मनून्मंत्रान् मन्यंतेसर्वे यैरिति । मंत्रमुद्धरति ॥ जलंवः ॥ चक्रीकः वह्निःरः ॥ तेनयुतःतेनयुक्तः ॥ कार्मिकात् ॥ कर्णेंद्वाढ्यउ ॥ विंदुयुता ॥ तेनतुं ॥ दीर्घआ ॥ तेनयुतोदारकोडः ॥ वायुर्यः ॥ कवचपश्चिममंतेयस्यसतथा ॥ वक्रतुंढायहुमितिसविधुभिः सानुस्वारैः ॥ ॐवंनमः हृदयायनमःइत्यादि ॥ /व्यापय्यसर्वमंत्रंसर्वशरीरेन्यस्येत्यर्थ ॥ १–५ ॥ ध्यानमाह ।

षडङ्गन्यास : सानुस्वार (मन्त्र के) छ अक्षरों के आगे प्रणव तथा अन्त में 'नमः' लगाकर षडङ्गन्यास करना चाहिए ।

टिप्पणी : षडङ्गन्यास की विधि :

ॐ वं नमः अंगुष्ठाभ्यां नमः । हृदयाय नमः
ॐ क्रं नमः तर्जनीभ्यां नमः । शिरसे स्वाहा
ॐ तुं नमः मध्यमाभ्यां नमः । शिखायै वषट्
ॐ डां नमः अनामिकाभ्यां नमः । कवचाय हुम्
ॐ यं नमः कनिष्ठकाभ्यां नमः । नेत्रत्रयाय वौषट्
ॐ हुं नमः करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः । अस्त्राय फट्

भ्रूमध्यकंठहृदयनाभिलिंगपदेषु च ।
मनोर्वर्णान्क्रमान्न्यस्य व्यापय्याथोस्मरेत्प्रभुम् ॥ ५ ॥

सर्वाङ्गन्यास : भ्रूमध्य, कण्ठ, हृदय, नाभि, लिंग एव पैरों में क्रमशः मन्त्राक्षरों का न्यास कर तथा सम्पूर्ण मन्त्र का पूरे शरीर में न्यास कर प्रभु का स्मरण करना चाहिए ।

टिप्पणी : प्रयोगविधिः

ॐ वं नमः भ्रूमध्ये । ॐ यं नमः लिङ्गे ।
ॐ क्रं नमः कण्ठे । ॐ हुं नमः पादयोः ।
ॐ तुं नमः हृदये । ॐ वक्रतुण्डाय हुम् सर्वाङ्गे ।
ॐ डां नमः नाभौ ।

उद्यद्दिनेश्वररुचिं निजहस्तपद्मैः पाशांकुशाभयवरान्दधतं गजास्यम् ।
रक्ताम्बरं सकलदुःखहरं गणेशं ध्यायेत्प्रसन्नमखिलाभरणाभिरामम् ॥६॥

ध्यान : बाँये हाथों में पाश एवं अभयमुद्रा तथा दाहिने हाथों में वरदमुद्रा एवं अंकुश धारणा करने वाले, उगते सूर्य की कान्ति के समान आभा वाले, हाथी के समान मुख वाले, समस्त दुःखों को दूर करने वाले, समस्त आभूषणों से सुशोभित प्रसन्नमुद्रा वाले गणेशजी का ध्यान करना चहिए ।

ऋतुलक्षं जपेन्मन्त्रमष्टद्रव्यैर्दशांशतः ।
जहुयान्मन्त्रसंसिद्धयै वाडवान्भोजयेच्छुचीन् ॥ ७ ॥
इक्षवःसक्तवो रंभाफलानि चिपिटास्तिलाः ।
मोदका नारिकेलानि लाजाद्रव्याष्टकंस्मृतम् ॥ ८ ॥

उद्यदिति ॥ पाशाभयेवामयोः ॥ वरांकुशावन्ययोः ॥ ६ ॥ वाडवान्विप्रान् ॥ ७ ॥

पुरश्चरण विधि : इस मन्त्र का ६ लाख जप करना चाहिए। अष्टद्रव्य से दशांश होम कर मन्त्रसिद्धि के लिए पवित्र ब्राह्मणों को भोजन कराना चाहिए। ईख (गन्ना, सतुआ, केला, चिपिट, तिल, लड्डू, नारियल एवं धान की खीलें—इन्हें अष्टद्रव्य कहते हैं।

पीठमाधारशक्त्यादिपरतत्त्वांतमर्चयेत् ।
तत्राष्टदिक्षु मध्ये च संपूज्यानवशक्तयः ॥ ९ ॥
तीव्रा च चालिनी नन्दा भोगदा कामरूपिणी ।
उग्रा तेजोवती सत्या नवमी विघ्ननाशिनी ॥ १० ॥
विनायकस्यमन्त्राणामेताः स्युः पीठशक्तयः ।
सर्वशक्तिक्रमांते तुलासनायहृदंतिकः ॥ ११ ॥
पीठमन्त्रस्तदीयेन बीजेनादौसमन्वितः ।
प्रदायासनमेतेन मूर्तिं मूलेन कल्पयेत् ॥ १२ ॥
तस्यां गणेशमावाह्यपूजयेदासनादिभिः ।
अभ्यर्च्यकुसुमैरीशं कुर्यादावरणार्चनम् ॥ १३ ॥
आग्नेयादिषु कोणेषु हृदयं च शिरःशिखाम् ।
वर्माभ्यर्च्याग्रतो नेत्रंदिक्ष्वस्त्रंपूजयेत्सुधीः ॥ १४ ॥
द्वितीयावरणे पूज्याःप्रागाद्यष्टौवशक्तयः ।
विद्यादिमा विधात्री च भोगदा विघ्नघातिनी ॥ १५ ॥
निधिप्रदीपा पापघ्नी पुण्या पश्चाच्छशिप्रभा ।
दलाग्रेषु वक्रतुण्ड एकदंष्ट्रो महोदरः ॥ १६ ॥
गजास्यलम्बोदरकौ विकटो विघ्नराजकः ।
धूम्रवर्णस्तदग्रेषुशक्राद्या आयुधैर्युताः ॥ १७ ॥
एवमावरणैः पूज्यः पञ्चभिर्गणनायकः ।
पूर्वोक्ताचपुरश्चर्या कार्या मन्त्रस्य सिद्धये ॥ १८ ॥

पीठ पूजा : आधार शक्ति से लेकर परतत्त्व पर्यन्त पीठ की पूजा करनी चाहिए। उसपर ८ दिशा एवं मध्य में ९ शक्तियों की पूजा करनी चाहिए। तीव्रा, चालिनी, नन्दा, भोगदा, कामरूपिणी, उग्रा, तेजोवती, सत्या एवं विघ्ननाशिनी—ये गणेशमन्त्रों की ९ शक्तियाँ होती हैं।

गणपति बीज को प्रारम्भ में लगाकर 'सर्वशक्तिकम' फिर 'लासनाय' और अन्त

द्रव्याष्टकमाह इक्षवइति ॥८-९॥ पीठमंत्रमाह ॥ गंसर्वशक्तिकमलासनाय नमः ॥ एतेनासनंदत्त्वातद्देशेमूलेनमूर्तिंकल्पयेत् ॥ १०-१८ ॥ प्रयोगानाह ॥ ब्रह्मे ति ॥

'नमः' लगाने से पीठ मन्त्र बनता है। इस मन्त्र से आसन देकर पीठ पर मूलमन्त्र से मूर्ति की कल्पना करनी चाहिए। उस मूर्ति में गणेशजी का आवाहन कर आसानादि एवं पुष्प आदि से उनका पूजन कर आवरण पूजा करनी चाहिए।

आग्नेय आदि कोणों में 'गां हृदयाय नमः', 'गीं शिरसे स्वाहा', 'गूं शिखायै वषट्' एवं 'गै कवचाय हुम्' इन मन्त्रों से मध्य में 'गौं नेत्रत्रयाय वौषट्' तथा दिशाओं में 'गः अस्त्राय फट्' इन मन्त्रों से षडङ्गपूजा करनी चाहिए।

पूर्व आदि दिशाओं में ८ शक्तियों का पूजन करना चाहिए। विद्या, विधात्री, भोगदा, विघ्नघातिनी, निधिप्रदीपा, पापघ्नी एवं शशिप्रभा —ये ८ शक्तियाँ हैं।

अष्टदल के अग्रभाग से वक्रतुण्ड, एकदंष्ट्र, महोदर, गजास्य, लम्बोदर, विकट, विघ्नराज एवं धूम्रवर्ण का पूजन करना चाहिए।

उनके अग्रभाग में इन्द्र आदि देव तथा वज्र आदि आयुधों का पूजन करना चाहिए।

इस प्रकार पाँचों आवरणों के साथ गणेशजी का पूजन करना चाहिए। फिर मन्त्रसिद्धि के लिए पूर्वोक्त रीति से पुरश्चरण करना चाहिए।

पीठ पूजा करने के बाद उसपर निम्नलिखित मन्त्रों से गणेशमन्त्र की ९ शक्तियों का पूजन करना चाहिए (गणेश पूजन यन्त्र, देखिये चित्र २)—

पूर्व आदि दिशाओं में 'ॐ तीव्रायै नमः', 'ॐ चालिन्यै नमः,' 'ॐ नन्दायै नमः', 'ॐ भोगदायै नमः', 'ॐ कामरूपिण्यै नमः', 'ॐ उग्रायै नमः', 'ॐ तेजो वत्यै नमः', 'ॐ सत्यायै नमः', तथा मध्य में 'ॐ विघ्ननाशिन्यै नमः'—इन मन्त्रों से गणेशपीठ की शक्तियों का पूजन करना चाहिए। फिर 'ॐ गं सर्वशक्ति कमलासनाय नमः'—मन्त्र से आसन देकर मूलमन्त्र से गणेश जी की मूर्ति कल्पना कर उसमें गणेश जी का आवाहन कर आसन, पाद्य, अर्घ्य आदि समस्त उपचारों से पूजन कर आवरण पूजा करनी चाहिए।

ॐ गां हृदयाय नमः आग्नेये, ॐ गीं शिरसे स्वाहा नैऋत्ये, ॐ गूं शिखायै वषट् वायव्ये, ॐ गै कवचायहुम् ईशान्ये, ॐ गौं नेत्रत्रयाय वौषट् अग्रे, ॐ गः नमः अस्त्राय फट्, इन मन्त्रों से षडङ्ग पूजा कर अञ्जलि में पुष्प लेकर मूलमन्त्र बोलकर "अभीष्ट सिद्धि मे देहि शरणागत वत्सल। भक्त्या समर्पये तुभ्यं प्रथमावरणार्चनम्"—ऐसा कहते हुए पुष्पाञ्जलि चढ़ानी चाहिए।

फिर ॐ विद्यायै नमः पूर्वे, ॐ विधात्र्यै नमः आग्नेये, ॐ भोगदायै नमः दक्षिणे, ॐ विघ्न घातिन्यै नमः नैऋत्ये, ॐ निधि प्रदीपायै नमः पश्चिमे, ॐ पापघ्न्यै नमः वायव्ये, ॐ पुण्यायै नमः सौम्ये, ॐ शशिप्रभायै नमः ईशान्ये—इन मन्त्रों से आठ शक्तियों का पूर्व आदि दिशाओं में पूजन कर पुष्पाञ्जलि लेकर मूलमन्त्र बोलकर

"अभीष्ट सिद्धि०,·····भक्त्या समर्पये तुभ्यं द्वितीयावरणार्चनम्" बोलकर पुष्पाञ्जलि चढ़ानी चाहिए।

तदनन्तर अष्टदल के अग्रभागों में 'ॐ वक्र तुण्डाय नमः, ॐ एक दंष्ट्राय नमः, ॐ महोदराय नमः, ॐ गजास्याय नमः, ॐ लम्बोदराय नमः, ॐ विकटाय नमः, ॐ विघ्नराजकाय नमः, ॐ धूम्र वर्णाय नमः—इन मन्त्रों से वक्रकुण्ड आदि का पूजन कर पुष्पाञ्जजि लेकर मूल मन्त्र बोलकर "अभीष्ट सिद्धि मे देहि·····तृतीयावरणार्चनम्" बोलते हुए पुष्पाञ्जलि अर्पित करनी चाहिए।

तत्पश्चात् ॐ इन्द्राय नमः पूर्वे, ॐ अग्नये नमः आग्नेये, ॐ यमाय नमः दक्षिणे, ॐ निर्ऋतये नमः नैऋत्ये, ॐ वरुणाय नमः पश्चिमे, ॐ वायवे नमः वायव्ये, ॐ सोमाय नमः उत्तरे, ॐ ईशानाय नमः ईशान्ये, ॐ ब्रह्मणे नमः आकाशे, ॐ अनन्ताय नमः पाताले—इन मन्त्रों से १० दिशाओं में दिक्पालों का पूजन कर पुष्पाञ्जलि लेकर मूल मन्त्र के साथ 'अभीष्ट सिद्धि मे देहि····· चतुर्थावरणार्चनम्' बोलते हुए पुष्पाञ्जलि चढ़ानी चाहिए।

और अन्त में, ॐ वज्राय नमः, ॐ शक्तये नमः ॐ दण्डाय नमः, ॐ खड्गाय नमः, ॐ पाशाय नमः, ॐ अंकुशाय नमः, ॐ गदायै नमः, ॐ त्रिशूलाय नमः, ॐ चक्राय नमः ॐ पद्माय नमः—इन मन्त्रों से इन्द्रादि देवताओं के पास उनके वज्र आदि आयुधों का पूजन कर पुष्पाञ्जलि लेकर मूलमन्त्र बोलकर 'अभीष्ट सिद्धि····पञ्चमावरणार्चनम्' बोलते हुए पुष्पाञ्जलि समर्पित करनी चाहिए।

इस प्रकार दैनिक पूजन करते हुए उक्त मन्त्र का ६ लाख जप करना चाहिए। फिर अष्टद्रव्य से दशांश हवन करना चाहिए। इसके बाद यथाक्रमेण तर्पण, मार्जन एवं ब्राह्मण भोजन कराने से पुरश्चरण पूर्ण होता है तथा मन्त्र सिद्ध हो जाता है।

ततः सिद्धेमनोकाम्यान्प्रयोगान्साधयेन्निजान्।
ब्रह्मचर्यरतो मन्त्री जपेद्द्विसहस्रकम् ॥ १९ ॥
षण्मासमध्याद्दारिद्र्यं नाश त्येवंनिश्चितम्।
चतुर्थ्यादिचतुर्थ्यंतं जपेद्दशसहस्रकम् ॥ २० ॥
प्रत्यहं जुहुयादष्टोत्तरंशतमतंद्रितः।
पूर्वोक्तं फलमाप्नातिषण्मासाद्भक्तितत्परः ॥ २१ ॥
आज्याक्तान्नस्यहोमेन भवेद्धनसमृद्धिमान्।
पृथुकैर्नारिकेलैर्वा मरिचैर्वा सहस्रकम् ॥ २२ ॥
प्रत्यहं जुह्वतो मासाज्जायते धनसंचयः।
जीरसिन्धुमरीचाक्तैरष्टद्रव्यैः सहस्रकम् ॥ २३ ॥

॥ १९-२४ ॥ मडलादनकोपंचाशद्दिनमध्येइष्टंप्राप्नुतौसदृशौइयुतौ ॥ गगनंहः ॥ रतिर्णः ॥

जुह्वन्प्रतिदिनं पक्षात्स्यात्कुबेर इवार्थवान् ।
चतुःशतं ४४४ चतुश्चत्वारिंशदाढ्यं दिने दिने ॥ २४ ॥
तर्पयेन्मूलमन्त्रेण मण्डलादिष्टमाप्नुयात् ।

विविध काम्य प्रयोग : इसके बाद मन्त्र सिद्ध हो जाने पर अपने काम्य प्रयोग करने चाहिए--

ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए साधक १२ हजार मन्त्रों का जप करे तो ६ महीने के भीतर निश्चित रूप से दरिद्रता दूर हो जाती है ।

चतुर्थी से चतुर्थी तक प्रतिदिन १० हजार जप करें । और एकाग्रचित्त से प्रतिदिन १०८ आहुतियाँ दे । इस प्रकार भक्तिपूर्वक करने से ६ मास के भीतर पूर्वोक्त फल मिलता (दरिद्रता दूर होती) है । घी मिलाकर अन्न की आहुतियाँ देने से मनुष्य धन एवं समृद्धि प्राप्त करता है । प्रतिदिन नारियल आदि की १ हजार आहुतियाँ देने से १ महीने के भीतर धनराशि मिलती है । जीर सिन्धु मरीचि मिलाकर अष्टद्रव्य से प्रतिदिन १ हजार आहुतियाँ देने से व्यक्ति १ पक्ष में कुबेर की तरह धनवान हो जाता है ।

प्रतिदिन मूलमन्त्र से ४४४ तर्पण करने से मनोवाञ्छित फल मिलता है ।

अथ मन्त्रांतरं वक्ष्ये साधकानां निधिप्रदम् ॥ २५ ॥
रायस्पोषभृगुर्याढ्यो ददितामेषसात्वतौ ।
सहशो दोरत्नधातुमात्रक्षो गगनं रतिः ॥ २६ ॥
ससद्या बलशार्ङ्गी खं नोषडक्षरसंयुतः ।
एकत्रिंशद्वर्णयुक्तो मन्त्रोभीष्टप्रदायकः ॥ २७ ॥

गणेश का अन्य मन्त्र : साधकों को निधिदायक एक और मन्त्र बतलाते हैं । 'रायस्पोष', भृगु (स) से युक्त य (अर्थात्--स्य), फिर 'ददिता', इकार युक्त मेष (न) तथा सात्वत (ध) (अर्थात् निधि) तत्पश्चात् 'दो रत्नधातुमात्रक्षो' फिर गगन (ह) सद्य (ओ) से युक्त रति (ण) अर्थात् (हणो) फिर 'बल' तथा शार्ङ्गी (ग) खं (ह) तथा 'नो' और अन्त में षडक्षर मन्त्र (वक्रतुण्डाय हुम्) लगाने से, मनोवाञ्छित फल दायक ३१ अक्षरवाला मन्त्र बनता है ।

टिप्पणी : मन्त्रोद्धार

रायस्पोषस्यददितानिधिदोरत्नधातुमात्रक्षोहणोबलगहनोवक्रतुण्डाय हुम् ।

ससद्याऽँ॰ युताः ॥ शार्ङ्गांग. ॥ खहः ॥ अन्यत्स्वरूपम् ॥ षडक्षरःपूर्वोक्तः यथा रायस्पोषस्यददितानिधिदोरत्नधातुमात्रक्षोहणोबलगहनोवक्रतुण्डायहुमित्येकत्रिंशद्वर्णः ॥ ॥ २६-२७ ॥

सायकैस्त्रिभिरष्टाभिश्चतुर्भिःपञ्चभीरसैः ।
मन्त्रोत्थितैःक्रमाद्वर्णैःषडंगं समुदीरितम् ॥ २८ ॥
ऋष्याद्यर्चाप्रयोगाःस्युःपूर्ववन्निधिदोह्ययम् ।

न्यास आदि : मन्त्र के क्रमशः ५, ३, ८, ४, ५, एवं ६ अक्षरों से षडङ्गन्यास बतलाया गया है । इस मन्त्र के ऋषि आदि तथा पूजाविधि सब पूर्ववत् है । यह मन्त्र निधिदायक है ।

टिप्पणी : विनियोग : ॐ अस्य श्री गणेशमन्त्रस्य भार्गवऋषिः अनुष्टुप्छन्दः गणेशो देवता वं बीजम् यं शक्तिः ममाभीष्टसिद्धये जपे विनियोगः ।—ऐसा बोलकर विनियोग करना चाहिए ।

ऋष्यादि न्यास :

ॐ भार्गव ऋषये नमः शिरसि । ॐ वं बीजाय नमः गुह्ये ।
ॐ अनुष्टुप् छन्दसे नमः मुखे । ॐ यं शक्तये नमः पादयोः ।
ॐ गणेशदेवतायै नमः हृदये ।

इन मन्त्रों से ऋषि आदि का शिर आदि अंगो में न्यास करना चाहिए ।

करन्यास एवं अङ्गन्यास :

ॐ रायस्पोषस्य अंगुष्ठाभ्यां नमः । हृदयाय नमः
ॐ ददिता तर्जनीभ्यां नमः । शिरसे स्वाहाः
ॐ निधिदोरत्नधातुमान् मध्यमाभ्यां नमः । शिखायै वषट्
ॐ रक्षोहणो अनामिकाभ्यां नमः । कवचाय हुम्
ॐ वलगहनो कनिष्ठकाभ्यां नमः । नेत्रत्रयाय वौषट्
ॐ वक्रतुण्डाय हुम् करतलकर पृष्ठाभ्यां नमः । अस्त्राय फट् ।

इन मन्त्रों से करन्यास एवं अङ्गन्यास करने चाहिए ।

ध्यान : उद्यदिनेश्वररुचिं निजहस्तपद्मैः, पाशांकुशाभयवरान्दधतं गजास्यम् ।
रक्तांबरंसकलदुःखहरं गणेशं, ध्यायेत्प्रसन्नमखिलाभरणाभिरामम् ॥"

ऐसा श्लोकोक्त ध्यान करना चाहिए ।

जपसंख्या एवं पुरश्चरण : इस मन्त्र की जप संख्या ६ लाख है । तथा नित्यार्चन एवं पुरश्चरण की विधि पूर्वोक्त मन्त्र के समान है ।

पद्मनाभयुतोभानुर्मेधा सद्यसमन्विता ॥ २९ ॥

॥ २८ ॥ पूववत्षड्वर्णवत् ॥ २९ ॥ मंत्रांतरमाह ॥ पद्मेति ॥ भानुर्मः ॥ पद्मनाभए ॥ तद्युतःमे । धाधः ॥ सद्यॐ ॥ तद्युतालकौलकारककारौ ॥ अनंतमाकारमारूढौ ॥ बायुर्यः ॥

लकावनंतमारूढौवायुः पावकगेहिनी ।
षडक्षरोयमादिष्टो भजतामिष्टदोमनुः ॥ ३० ॥
पूर्ववत्सर्वमेतस्य समाराधनमीरितम् ।

गणेशजी का अन्य षडक्षर मन्त्र : पद्मनाभ (ए) से युक्त भानु (म)=अर्थात् मे, सद्य (ओ) सहित धा (ध)=अर्थात् धो, दीर्घ आकार सहित लकार ककार=अर्थात् ल्का, फिर वायु (य) और अन्त में पावक गेहिनी (स्वाहा) लगाने से साधक के लिये सर्वाभीष्टदाता यह षडक्षर मन्त्र बनता है।

इस मन्त्र का पुरश्चरण एवं काम्यप्रयोग ये सब पूर्वोक्त मन्त्र की तरह बतलाये गये हैं।

टिप्पणी : मन्त्रोद्धार : मेघोल्काय स्वाहा ।

लकुलीदृशमारूढौ भृगुतौ लोहितःसदृक् ॥ ३१ ॥
वकःसदीर्घश्चःसाक्षिलिखेन्मन्त्रःशिरोतिमः ।
नवाक्षरोमनुश्चास्य कंकोलः परिकीर्तितः ॥ ३२ ॥
विराट्छन्दो देवता तुस्याद्वैचोच्छिष्टनायकः ।
द्वाभ्यां त्रिभिर्द्वयेनाथ द्वाभ्यां सकलमन्त्रतः ॥ ३३ ॥

उच्छिष्ट गणपति का मन्त्र : लकुली (ह), दृश (इ) के साथ भृग (स्) एवं त = अर्थात् 'स्ति,' सदृक् लोहित (पि), सदीर्घ वक (शां) साक्षि च (चि) फिर लिखे और अन्त में शिर (स्वाहा) लगाने से यह नवाक्षर मन्त्र बनता है।

इस मन्त्र का कंकोल ऋषि, विराट् छन्द, उच्छिष्ट गणपति देवता है। मन्त्र के दो, तीन, दो, दो अक्षरों तथा पूरे मन्त्र से पञ्चाङ्गन्यास कर उच्छिष्ट गणपति का ध्यान करना चाहिए।

टिप्पणी : मन्त्रोद्धार : हस्ति पिशाचिलिखेस्वाहा

विनियोग : ॐ अस्योच्छिष्टगणपति मन्त्रस्य कंकोल ऋषिः विराट् छन्द उच्छिष्ट गणपतिर्देवता सर्वाभीष्टसिद्धये जपे विनियोगः ।

पञ्चाङ्गन्यास :

ॐ हस्ति हृदयाय नमः ॐ स्वाहा कवचाय हुम्
ॐ पिशाचि शिरसे स्वाहा ॐ हस्ति पिशाचि लिखेस्वाहा अस्त्रायफट्
ॐ लिखे शिखायै वषट्

पावकगेहेनीस्वाहा ॥ मेघोल्कायस्वाहेतिषड्वर्णः ॥ ३० ॥ मंत्रांतरमाह ॥ लकुलीति ॥ लकुलीहकारः ॥ भृगुतौसकारतकारोदृशमारूढौइकारयुतौ तेनास्त । लोहितःपःसदृक् इयुतः ॥ वकः शः ॥ सदीर्घःआयुतः चस्वरूपम् ॥ साक्षीइयुतः ॥ लिखेस्वरुपंशिरोतिकः स्वाहांतः ॥ हस्तिपिशाचिलिखेस्वाहेतिनवार्णः ॥ ३१-३२ ॥ पञ्चांगमाह ॥ द्वाभ्यामिति ॥ हस्तिहृदयायनमइत्यादि ॥ ३३ ॥ ध्यानमाह ॥ चतुर्भुजमिति ॥ अंकुशमोदकपात्रेदक्षयोः ॥

पञ्चांगान्यस्य कुर्वीत ध्यायेत्तं शशिशेखरम् ।
चतुर्भुजं रक्ततनुंत्रिनेत्रं पाशांकुशौ मोदकपात्रदंतौ ।
करैर्दधानंसरसीरुहस्थमुन्मत्तमुच्छिष्टगणेशमीडे ॥ ३४ ॥

इस मन्त्र का ध्यान : चार भुजा वाले, रक्तवर्ण, तीन नेत्र वाले, कमलदल पर विराजमान दहिने हाथों में अंकुश एवं मोदक पात्र तथा बाँये हाथों में पाश एवं दन्त धारण किये हुये उन्मत्त भगवान् उच्छिष्ट गणपति का ध्यान करता हूँ ।

लक्षमेकं जपेन्मन्त्रं दशांशं जुहुयात्तिलैः ।
पूर्वोक्ते पूजयेत्पीठे विधिनोच्छिष्टविघ्नपम् ॥ ३५ ॥
आदावंगानि संपूज्य ब्राह्माद्यान्दिक्षुपूजयेत् ।
ब्राह्मी माहेश्वरी चैव कौमारी वैष्णवी परा ॥ ३६ ॥
वाराही च तथेंद्राणी चामुण्डारमयासह ।
ककुप्सु वक्रतुण्डाद्यान्दशसु प्रतिपूजयेत् ॥ ३७ ॥
वक्रतुण्डैकदंष्ट्रौ च तथालम्बोदराभिधः ।
विकटो धूम्रवर्णश्चविघ्नश्चापि गजाननः ॥ ३८ ॥
विनायको गणपतिर्हस्तिदंताभिधोंतिमः ।
इन्द्राद्यानपिवज्राद्यान्पूजयेदावृतिद्वये ॥ ३९ ॥
एवसिद्धे मनौमन्त्रोप्रयोगान्कर्तुमर्हति ।

पुरश्चरणविधि : इस मन्त्र का १ लाख जप तथा तिलों से दशांश हवन करना चाहिए । पूर्वोक्त रीति से पीठ पर उच्छिष्ट गणपति का पूजन करना चाहिए । सर्वप्रथम अंङ्गों का पूजन कर दिशाओं में 'ब्राह्मी' आदि मातृकाओं का पूजन करना चाहिए । ब्राह्मी, माहेश्वरी, कौमारी, वैष्णवी, वाराही, इन्द्राणी, चामुण्डा एवं लक्ष्मी—ये ८ मातृकाएँ हैं ।

१० दिशाओं में वक्रतुण्ड, एकदंष्ट्र, लम्बोदर, विकट, धूम्रवर्ण, विघ्न, गजानन, विनायक, गणपति एवं हस्तिदन्त का पूजन करना चाहिए । फिर दोनों आवृत्तियों में इन्द्र आदि दिक्पाल तथा वज्र आदि आयुधों का पूजन करना चाहिए । इस प्रकार (पुरश्चरण द्वारा) मन्त्र के सिद्ध हो जाने पर साधक काम्य प्रयोगों को कर सकता है ।

टिप्पणी : प्रयोगविधि : पूर्वोक्त रीति से ध्यान करने के बाद पीठ एवं पीठस्थ देवताओं का पूजन कर मूल मन्त्र से देवता की मूर्ति कल्पना कर पुनः ध्यान आवाहन आदि पञ्च पुष्पाञ्जलि समर्पण पर्यन्त समस्त कार्य कर अङ्गपूजन करना चाहिए ।

अन्ययारन्ये ॥ ३४-३९ ॥ प्रयोगानाह ॥ स्वेति ॥ कपिनारक्तचदनेन ॥ सितभानुना-

फिर पूर्व आदि दिशाओं में ॐ ब्राह्म्यै नमः, ॐ माहेश्वर्यै नमः, ॐ कौमार्यै नमः, ॐ वैष्णव्यै नमः, ॐ वाराह्यै नमः, ॐ इन्द्राण्यै नमः, ॐ चामुण्डायै नमः, ॐ महालक्ष्म्यै नमः —इन मन्त्रों से मातृकाओं का पूजन करना चाहिए।

तत्पश्चात् पूर्व आदि १० दिशाओं में ॐ वक्रतुण्डाय नमः, ॐ एकदंष्ट्राय नमः, ॐ लम्बोदराय नमः, ॐ विकटाय नमः, ॐ धूम्रवर्णाय नमः, ॐ विघ्नाय नमः, ॐ गजाननाय नमः, ॐ विनायकाय नमः, ॐ गणपतये नमः, ॐ हस्तिदन्ताय नमः— इन मन्त्रों से दलों में पूजन करना चाहिए। फिर दलों के बाहर पूर्व आदि दिशाओं में इन्द्र आदि दिक्पालों का तथा उनके समीप वज्र आदि आयुधों का पूजन करना चाहिए। तदनन्तर धूप दीप आदि से पूजन कर मूलमन्त्र का जप करना चाहिए।

इस प्रकार १ लाख जप करने के बाद तिलों से १० हजार आहुतियाँ देकर हवन, १ हजार तर्पण, १ सौ मार्जन एवं १० ब्राह्मणों को मोदक, खीर आदि से भोजन कराना चाहिए। इस रीति से पुरश्चरण करने पर उक्त मन्त्र सिद्ध हो जाता है। मन्त्र को सिद्ध करने के बाद साधक इससे विविध काम्य प्रयोग कर विविध फल प्राप्त कर सकता है।

स्वांगुष्ठप्रतिमां कृत्वा कपिना सितभानुना ॥ ४० ॥
गणेशप्रतिमां रम्यामुक्तलक्षणलक्षिताम्।
प्रतिष्ठाप्य विधानेन मधुना स्नापयेच्चताम् ॥ ४१ ॥
आरभ्य कृष्णभूतादि यावच्छुक्लाचतुर्दशी।
सगुडं पायसं तस्मै निवेद्य प्रजपेन्मनुम् ॥ ४२ ॥
सहस्रं प्रत्यहं तावज्जुहुयात्सघृतैस्तिलैः।
गणेशोहमितिध्यायन्नुच्छिष्टेनावृतोरहः ॥ ४३ ॥
पक्षाद्राज्यमवाप्नोति नृपजोन्यापि वा नरः।
कुलालमृत्स्ना प्रतिमा पूजितैवंसुराज्यदा ॥ ४४ ॥
वल्मीकमृत्कृता लाभमेवमिष्टान्प्रयच्छति।
गौडी सौभाग्यदा सैवंलोवणी क्षोभयेदरीन् ॥ ४५ ॥
निंबजा नाशयेच्छत्रून्प्रतिमैवं समर्चिता।
मद्यवर्त्तिर्होमतो लाजैर्वशयेदखिलंजगत् ॥ ४६ ॥
सुप्तोधिशय्यमुच्छिष्टा जपञ्छत्रून्वशं नयेत्।
कटुतैलान्वितैः राजापुष्पैर्विद्वेषयेदरीन् ॥ ४७ ॥

श्वेतार्ककर्णवाप्रतिमाकार्य्या ॥ ४०--४२ ॥ अनावृतोनिवस्त्रः ॥ ४३--४३ ॥ वल्मीकमृत्तिका-प्रतिमंवंपूजितालाभदेति ॥ ४५--४६ ॥ अधिशय्यंशय्यायाम् ॥ कटुतैलंसर्षपतैलम् ॥४७॥

द्यूते विवादे समरे जप्तोयं जयमावहेत् ।
कुबेरोस्य मनोर्जापान्निधीनां स्वामितामयात् ॥ ४८ ॥
लेभाते राज्यमनरि वानरेशबिभीषणौ ।
रक्तवस्त्रांगरागाढ्यस्तांबूलं निश्यदञ्जपेत् ॥ ४९ ॥
यद्वा निवेदितं तस्मै मोदकं भक्षयञ्जपेत् ।
पिशितं वा फलं वापि तेन बलिं हरेत् ॥ ५० ॥
सेन्दुःस्मृतिस्तथाकाशं मन्विद्वाढ्यौ च सृष्टिलौ ।
पञ्चांतकशिवौ तद्वदुच्छिष्टगभगान्वितः ॥ ५१ ॥
उमाकान्तःशायमांते हायक्षायासबिन्दुयः ।
बलिरित्येष कथितो नवद्वर्णोबलेर्मनुः ॥ ५२ ॥

काम्यप्रयोग : लाल चन्दन या श्वेत अर्क से अपने अँगूठे के बराबर की ध्यान में बतलायी आकृति जैसी सुन्दर गणेश जी की प्रतिमा बनाकर विधिवत प्राण प्रतिष्ठा कर उसे मधु से स्नान कराना चाहिए ।

कृष्ण पक्ष की चतुर्दशी से शुक्लपक्ष की चतुर्दशी तक प्रतिदिन गुड एवं खीर निवेदित कर एकान्त में उच्छिष्टमुख एवं वस्त्र रहित होकर 'मैं स्वयं गणेश हूँ'—इस भावना के साथ घी एवं तिल से १ हजार आहुतियाँ देनी चाहिए । इस प्रयोग के प्रभाव से राजकुल में उत्पन्न या कोई भी अन्य व्यक्ति १५ दिन के भीतर राज्य प्राप्त कर लेता है ।

इसी प्रकार कुम्हार की मिट्टी की प्रतिमा का पूजन करना राज्य दायक होता है । बाँबी की मिट्टी से बनी प्रतिमा का पूजन करना मनोवाञ्छित लाभ देता है। गौड़ी प्रतिमा का उक्त रीति से पूजन करना सौभाग्य दायक तथा लावणी प्रतिमा का पूजन शत्रुओं को क्षुभित करता है । नीम की प्रतिमा का उक्त रीति से पूजन करने से शत्रुओं का नाश होता है

घी, शहद एवं शक्कर को लाजा (खीलों) में मिलाकर हवन करने से समस्त जगत वश में हो जाता है । उच्छिष्ट मुख से शय्या में सोते हुए जप करने से शत्रुओं को

---

४८ ॥ अनारशत्रुहीनम् ॥ ४९ ॥ तेनताम्बूलादिना ॥ ५० ॥ बलिमन्त्रमाह ॥ स्मृतिर्गः ॥ सेन्दुस्सानुस्वारः ॥ आकाशंहः ॥ तथासानुस्वारः ॥ सृष्टिलौककारलकारौ ॥ कीदृशौ मन्विद्वाढ्यौऔकारानुस्वारयुतौ ॥ तेनक्लौं ॥ पञ्चांतकशिवौगकारलकारौतद्वन्मन्विद्वाढ्यौग्लौं ॥ उच्छिष्टग स्वरूपम् ॥ भगान्वितः उमाकान्तः ॥ एकारयुतोणःणे ॥ सबिन्दुर्यः सानुस्वारोयकारः ॥ अन्यत्स्वरुपम् ॥ मन्त्रो यथा ॥ गंहक्लौंग्लौंउच्छिष्टगणेशायमहायक्षायायंबलिः इत्येकोनविंशत्यणोबलिमन्त्रः ॥ ५१–५२ ॥ मन्त्रांतर माह ॥ ध्रुव इात ॥

वश में किया जाता है। राजी पुष्पों में सरसो का तेल मिलाकर हवन करने से शत्रुओं का विद्वेषण होता है।

द्यूत, विवाद एवं लड़ाई में इस मन्त्र का जप करने से जीत होती है। इस मन्त्र के जप के प्रभाव से कुबेर निधियों का स्वामी बन गया और विभीषण ने राज्य प्राप्त किया।

लाल कपड़ा पहिनकर या लाल अंगराग लगाकर पान खाते हुए जप करना चाहिए। अथवा गणेश जी को निवेदित लड्डू खाते हुए जप करना चाहिए। तथा मांस, फल या पान आदि किसी चीज से बलि देनी चाहिए।

बलि का मन्त्र—सानुस्वार स्मृति (गं) इन्दु सहित आकाश (हं) अनुस्वार एवं औकर युक्त ककार लकार (क्लौं), उसी प्रकार गकार लकार (ग्लौं) फिर 'उच्छिष्टग' एकार युक्त ण (णे) फिर 'शाय' फिर 'महा यक्षाया' फिर 'यं' और अन्त में बलिः'' लगाने से १९ अक्षर का बलिमन्त्र बतलाया गया है।

टिप्पणी : बलिमन्त्र का उद्धार : गं हं क्लौं ग्लौं उच्छिष्ट गणेशाय महा-यक्षायायं बलिः

ध्रुवो माया सेन्दुशार्ङ्गिबीजाढ्यो नववर्णकः।
द्वादशार्णोमनुः प्रोक्तःसर्वमस्य नवार्णवत् ॥ ५३ ॥
तारादयश्चगणेशाद्योनवार्णो दशवर्णकः ।
द्विविधोस्योपासनं तु प्रोक्तमन्यन्नवार्णवत् ॥ ५४ ॥

उच्छिष्टगणपति के अन्य मन्त्र : नवार्णमन्त्र में ध्रुव (ॐ) माया (ह्रीं) तथा सानुस्वार शार्ङ्ग (गं) ये ३ बीज लगाने से द्वादशाक्षर मन्त्र बनता है। इस मन्त्र के न्यास ध्यान आदि सब नवार्णमन्त्र के समान कहे गये हैं।

नवार्ण मन्त्र के प्रारम्भ में तारा (ॐ) या गणेश बीज (गं) लगाने से २ प्रकार का दशाक्षर मन्त्र बनता है। इन दोनों मन्त्रों से नवार्णमन्त्र की तरह न्यास ध्यान करते हुए उपासना करनी चाहिए।

टिप्पणी : द्वादशाक्षर मन्त्र का उद्धार : ॐ ह्रीं गं हस्तिपिशाचिलिखे स्वाहा।

दशाक्षर मन्त्र : (क) ॐ हस्तिपिशाचिलिखे स्वाहा।

(ख) गं हस्तिपिशाचिलिखे स्वाहा।

उक्त तीनों मन्त्रों के विनियोग, न्यास, ध्यान एवं प्रयोग आदि सब बातें पूर्वोक्त नवार्णमन्त्र के समान जाननी चाहिए।

ध्रुव ॐ। मायाह्रीं। शार्ङ्गिगःसेन्दुःअनुस्वारसहितः॥ गत्रिबीजाढ्यः॥ स्पष्टम्। यथा ॐ ह्रींगंहस्तिपिशाचिलिखेस्वाहेतिद्वादशार्णः ॥ ५३ ॥ तारादयोयथा ॥ ॐ हस्तिपिशा-चिलिखेस्वाहा ॥ गणेशाद्यो यथा ॥ गंहस्तिपिशाचिलिखेस्वाहा ॥ ५४ ॥ मन्त्रान्तरमाह ॥

ध्रुवो हृदुच्छिष्टगणेशाय ते तु नवाक्षरः ।
एकोनविंशत्यर्णाढ्यो मनुर्मुन्यादिपूर्ववत् ॥ ५५ ॥
त्रिभिःसप्तभिरक्षिभ्यां त्रिभिर्द्वाभ्यां द्वयेन च ।
मन्त्रोत्थितैःसुधीर्वर्णैःकुर्यादंगं पुरार्चनम् ॥ ५६ ॥

एकोनविंशत्यक्षरमन्त्र : ध्रुव (ॐ) हृद् (नम) फिर 'उच्छिष्ट गणेशाय' और अन्त में नवार्णमन्त्र लगाने से १९ अक्षर का मन्त्र बनता है । इसके मुनि, छन्द, देवता आदि पूर्वोक्त नवार्णमन्त्र के समान हैं ।

मन्त्र के ३,७,२,३, २ एवं २ अक्षरों से षडङ्गन्यास एवं अङ्गपूजा करनी चाहिए ।

टिप्पणी : मन्त्रोद्धार : ॐ नम उच्छिष्ट गणेशाय हस्तिपिशाचि लिखे स्वाहा ।

विनियोग : ॐ अस्योच्छिष्ट गणपतिमन्त्रस्य कंकोलऋषिः, विराट्छन्दः उच्छिष्ट-गणपतिर्देवता मामाभीष्ट सिद्धये जपे विनियोगः ।

षडङ्गन्यास : ॐ नमः हृदयाय नमः — पिशाचि कवचायहुम्
उच्छिष्ट गणेशाय शिरसे स्वाहा — लिखे नेत्रत्रयाय वौषट्
हस्ति शिखायै वषट् — स्वाहा अस्त्राय फट्

ध्यान : चतुर्भुजं रक्ततनुं त्रिनेत्रं पाशांकुशौ मोदकपात्रदन्तौ ।
करैर्दधानं सरसीरुहस्थमुन्मत्तमुच्छिष्टगणेशमीडे ॥

तारो नमो भगवते झिंटीशश्चतुराननः ।
दन्ष्ट्राय हस्तिमुच्चार्य खाय लम्बोदराय च ॥ ५७ ॥
उच्छिष्टमवियद्दीर्घात्मने पाशांकुशःपरा ।
सेंदुःशार्ङ्गी भगयुते द्वे मेघे वह्निकामिनी ॥ ५८ ॥
उच्छिष्टगणनाथस्य मनुरद्रिगुणाक्षरः ।
गणको मुनिराख्यातो गायत्रीच्छन्द ईरितः ॥ ५९ ॥
उच्छिष्टगणपो देवो जपेदुच्छिष्ट एव तम् ।
सप्तदिग्बाणसप्ताब्धियुगाणैँरङ्गकं मनोः ॥ ६० ॥

ध्रुवेति ॥ ध्रुवः प्रणवः हृन्नमः स्वरुपमन्यम् ॥ मन्त्रः ॥ ॐ नमउच्छिष्टगणेशायहस्ति-पिशाचिलिखे स्वाहा इत्येकोनविंशतिवर्णः ॥ मुन्यादीति ॥ ऋषिश्छन्दोदेवताः नवार्णवत् ॥ ५५ ॥ षडङ्गमाह ॥ त्रिभिरिति ॥ अर्च्चनंपुरापूववदित्यर्थः ॥ ५६ ॥ मन्त्रांतरमाह ॥ तारइति ॥ झिंटीशः ए ॥ चतुराननःकः ॥ दीर्घोवयत् हा ॥ पाशआं ॥ अकुशःक्रा परार्द्धी ॥ सेन्दुशार्ङ्गीगं ॥ भगयुतेद्वेमेधे ॥ एकारयुतद्वयम् ॥ वह्निकामिनीस्वाहा ॥ अन्यत्स्व-रुपम् ॥ ॐ नमोभगवतेएकदंष्ट्रायहस्तिमुखायलम्बोदराय उच्छिष्टमहात्मनेऔंक्रोंह्रीं-गंघेघेस्वाहा ॥ अद्रि गुणाक्षरः सप्तत्रिंशदक्षरः ॥ ५७–५९ ॥ षडंगमाह ॥ सप्तेति ॥ ६० ॥

सप्तत्रिंशदक्षर मन्त्र : तारा (ॐ) फिर 'नमो भगवते' फिर भ्रिटीश (ए) चतुरानन (क) फिर 'दंष्ट्रायहस्तिमु' फिर 'खाय लम्बोदराय' फिर 'उच्छिष्टम' दीर्घवियत् (हा) फिर 'त्मने' पाश (आँ) अंकुश (क्रों) परा (ह्रीं) सेन्दुशार्ङ्गी (गं) भगसहित द्विमेध (घे घे) और अन्त में वह्निकामिनी (स्वाहा) लगाने से ३७ अक्षर का मन्त्र बनता है।

इस मन्त्र का गणक ऋषि, गायत्री छन्द एवं उच्छिष्टगणपति देवता है। उच्छिष्ट मुख से ही उसका जप करना चाहिए। मन्त्र के यथाक्रमेण ७, १०, ५, ७, ४ एवं ४ अक्षरों से षडङ्गन्यास तथा अङ्गपूजा करनी चाहिए।

टिप्पणी : मन्त्रोद्धार : ॐ नमो भगवते एकदंष्ट्राय हस्तिमुखाय लम्बोदराय-उच्छिष्टमहात्मने आँ क्रों ह्रीं गं घे घे स्वाहा।

विनियोग : ॐ अस्योच्छिष्ट गणपतिमन्त्रस्य गणकऋषिः गायत्रीछन्दः
उच्छिष्टगणपतिर्देवता ममाभीष्टसिद्धये जपे विनियोगः ।

षडङ्गन्यास :

ॐ नमो भगवते हृदयाय नमः — उच्छिष्टमहात्मने कवचाय हुम् ।
एकदंष्ट्राय हस्तिमुखाय शिरसे स्वाहा । — आँ ह्रीं क्रों गं नेत्रत्रयाय वौषट् ।
लम्बोदराय शिखायै वषट् । — घे घे स्वाहा अस्त्राय फट् ।

शरान्धनुःपाशशृणीस्वहस्तैर्दधानमारक्तसरोरुहस्थम् ।
विवस्त्रपत्न्यां सुरतप्रवृत्तमुच्छिष्टमम्बासुतमाश्रयेहम् ॥ ६१ ॥

ध्यान : बाँये हाथों में धनुष एवं पाश दाहिने हाथों में शर एवं अंकुश धारण किये हुए लाल कमल पर विराजमान तथा विवस्त्र अपनी पत्नी से सुरत में प्रवृत्त उच्छिष्टगणपति की शरण में हूँ।

लक्षं जपेद् घृतैर्हुत्वा तद्दशांशं प्रपूजयेत् ।
पूर्वोक्तपीठे स्वाभीष्टसिद्धये पूर्ववद्विभुम् ॥ ६२ ॥

पुरश्चरण विधि : अभीष्टफल की सिद्धि के लिए पूर्वोक्त पीठ पर उक्त रीति से पूजन कर उक्त मन्त्र का १ लाख जप कर घी की आहुतियों से दशांश हवन करना चाहिए।

कृष्णाष्टम्यादितद्धृतं यावत्तावज्जपेन्मनुम् ।
प्रत्यहं साष्टसाहस्रं जुहुयात्तद्दशांशतः ॥ ६३ ॥
तर्पयेदपि मन्त्रोयं सिद्धिमेवं प्रयच्छति ।
धनं धान्यं सुतान्पौत्रान्सौभाग्यमतुलं यशः ॥ ६४ ॥

ध्यानमाह ॥ शरानिति ॥ धनुःपाशौवामयोः ॥ शरांकुशौदक्षयोः ॥ ६१--६२ ॥ तद्भूतंया-

मूर्तिं कुर्य्याद्गणेशस्य शुभाहे निम्बदारुणा।
प्राणप्रतिष्ठां कृत्वाथ तदग्रे मन्त्रमाजपेत् ॥ ६५ ॥
यं ध्यात्वा दासवत्सोपि वश्या भवति निश्चितम्।
नदीजलं समादाय सप्तविंशतिसंख्यया ॥ ६६ ॥
मन्त्रयित्वा मुखं तेन प्रक्षाल्येशसभां व्रजेत्।
पश्येद्यं दृश्यते येन सवश्यो जायते क्षणात् ॥ ६७ ॥
चतुःसहस्त्रं धत्तूरपुष्पाणि मनुनार्पयेत्।
गणेशाय नृपादीनां जनानां वश्यताकृते ॥ ६८ ॥
सुन्दरीवामपादस्य रेणुमादाय तत्र तु।
सन्स्थाप्य गणनाथस्य प्रतिमां प्रजपेन्मनुम् ॥ ६९ ॥
तां ध्यात्वारविसाहस्त्रं सा समायाति दूरतः।
श्वेतार्केणाथनिम्बेन कृत्वा मूर्तिं घृतासुकाम् ॥ ७० ॥
चतुर्थ्यां पूजयेद्रात्रौ रक्तैःकुसुमचन्दनैः।
जप्त्वा सहस्त्रं तां मूर्तिं क्षिपेद्रात्रौ सरित्तटे ॥ ७१ ॥
स्वेष्टं कार्य्यं समाचष्टे स्वप्ने तस्य गणाधिपः।
सहस्त्रं निम्बकाष्ठानां होमादुच्चाटयेदरीन् ॥ ७२ ॥
वज्रिणःसमिधां होमाद्रिपुर्य्यमपुरं व्रजेत्।
वानरस्यास्थिसंजप्तं क्षिप्तमुच्चाटयेद्गृहे ॥ ७३ ॥
जप्तंनरास्थिकन्यायागृहे क्षिप्तं तदाग्निकृत्।
कुलालस्य मृदास्त्रीणां वामपादस्य रेणुना ॥ ७४ ॥
कृत्वा पुत्तलिकां तस्या हृदि स्त्रीनाम संलिखेत्।
निखनेन्मन्त्रसंजप्तैर्निम्बकाष्ठैःक्षितावमाम् ॥ ७५ ॥
सोन्मत्ता भवति क्षिप्रमद्धृतायां सुखं भवेत्।
शत्रोरेवं कृता सातु लशुनेन समन्विता ॥ ७६ ॥
शरावान्तर्गता सम्यक्पूजिता द्वारिविद्विषः।
निखाता पक्षमात्रेण शत्रूच्चाटनकृत्स्मृता ॥ ७७ ॥
विषमे समनुप्राप्ते सितार्करिष्टदारुजम्।
गणपं पूजितंसम्यक्कुसुमै रक्तचन्दनैः ॥ ७८ ॥
मद्यभाण्डस्थितं हस्तमात्रे तं निखनेत्स्थले।

वत्कृष्णचतुर्दशीपर्य्यन्तम् ॥ ६३--६९ ॥ घृतासुकां कृतप्राणप्रतिष्ठाम् ॥ ७०--७२ ॥ वज्री-स्नुही ॥ ७३--७७ ॥ अरिष्टोनिम्बः ॥ ७८--७९ ॥

तत्रोपविश्य प्रजपेन्मन्त्री नक्तंदिवा मनुम् ॥ ७९ ॥
सप्ताहमध्ये नश्यंति सर्वे घोरा उपद्रवाः ।
शत्रवो वशमायान्ति वर्द्धन्ते धनसम्पदः ॥ ८० ॥
दुष्टस्त्री वामपादस्य रजसा निर्जदेहजैः ।
मलैर्मूत्रपुरीषाद्यैः कुम्भकारमृदापि च ॥ ८१ ॥
एतैः कृत्वागणेशस्य प्रतिमां मद्यभांडगाम् ।
सम्पूज्य निखनेद्भूमौ हस्तार्द्धे पूरिते पुनः ॥ ८२ ॥
संस्थाप्य वह्निं जुहुयात्कुसुमैर्हयमारजैः ।
सहस्रं साभवेद्दासी तन्वाचमनसाधनैः ॥ ८३ ॥
एवमादिप्रयोगांस्तु नवार्णेनापि साधयेत् ।

काम्यप्रयोग : कृष्णपक्ष की अष्टमी से चतुर्दशी पर्यन्त प्रतिदिन ८५०० जप, इसके दशांश (८५०) का होम तथा तर्पण आदि करना चाहिए । इस प्रकार यह सिद्धि देता है । धन, धान्य, पुत्र, पौत्र, सौभाग्य एवं सुयश मिलता है ।

शुभदिन नीम की लकड़ी से गणेश जी की मूर्ति बनानी चाहिए, तथा उसकी प्राण प्रतिष्ठा कर उसके समक्ष जिस किसी का ध्यान कर जप किया जाता है, वह सेवक की तरह वश में हो जाता है ।

नदी का जल लेकर उसे २७ मन्त्रों से अभिमन्त्रित कर उस जल से मुख धोकर राज सभा में जाना चाहिए । (इसके प्रभाव से साधक) जिसे देखता है या जो उसे देखता है वह तत्काल वश में हो जाता है ।

राजा आदि को अपने वश में करने के लिए उक्त मन्त्र से ४ हजार धतूरे के फूल गणेश जी को समर्पित करने चाहिए ।

सुन्दरी स्त्री के बाँये पैर की धूल लाकर उसमें गणेश जी की प्रतिमा स्थापित कर उस स्त्री का ध्यान कर इस मन्त्र का १२ हजार जप करने से वह स्त्री दूर से आ जाती है ।

सफेद आक या नीम की लकड़ी की मूर्ति बनाकर चतुर्थी की रात्रि में लाल पुष्प एवं चन्दन से पूजन करे, तथा १ हजार जप करके रात्रि में उस प्रतिमा को नदी के किनारे पर डाल दे । ऐसा करने से भगवान् गणपति साधक के अभीष्ट कार्य को स्वप्न में बतला देते हैं ।

नीम की लकड़ियों की १ हजार आहुतियों से शत्रुओं का उच्चाटन होता है । वज्री समिधा के होम से शत्रु मर जाता है । वानर की हड्डी पर जप कर उसे फेंकने से

॥८०--८२॥ हयमारजैः करवीरोत्थैः ॥ ८३ ॥

उच्चाटन होता है। मनुष्य की हड्डी पर जप करके उसे कन्या के घर में फैंकने से वह मिल जाती है।

कुम्हार की मिट्टी तथा स्त्री के बाँये पैर की मिट्टी से पुतला बनाकर उसके हृदय पर स्त्री का नाम लिखना चाहिए। फिर मन्त्र का जप करते हुए इस पुतले को नीम की लकड़ी के साथ भूमि में गाड़ देना चाहिए। ऐसा करने से वह स्त्री तत्काल उन्मत्त हो जाती है तथा उस पुतले को जमीन से निकालने पर ठीक हो जाती है।

इसी प्रकार शत्रु का पुतला बनाकर उक्त प्रयोग करने से वह अपने सहयोगियों के साथ पागल हो जाता है। मिट्टी के बर्तन में उसे रखकर विधिवत पूजा करने से या शत्रुओं के पुतले को गाड़ने से १५ दिन के भीतर शत्रु का उच्चाटन हो जाता है।

विषम परिस्थिति आने पर सफेद आक या नीम की लकड़ी की प्रतिमा बनाकर, लाल चन्दन एवं लाल फूलों से विधिवत पूजन कर, उसे मद्यपात्र में रखकर, जमीन में १ हाथ नीचे गाड़ कर उसके ऊपर बैठकर दिन रात इस मन्त्र का जप करने से १ सप्ताह के भीतर सभी घोर उपद्रव नष्ट हो जाते हैं। शत्रु वश में आ जाते हैं तथा धन सम्पत्ति की वृद्धि होती है।

दुष्ट स्त्री के बाँये पैर की धूल, अपने शरीर का मल, मूत्र आदि तथा कुम्हार की मिट्टी, इन सब से गणेश जी की प्रतिमा बनाकर मद्यपात्र में रखकर विधिवत पूजन कर जमीन में आधा हाथ नीचे गाड़ कर, गड्ढे को भर कर उसके ऊपर अग्नि स्थापन कर कनेर के फूलों की १ हजार आहुति देने से वह स्त्री दासी के समान हो जाती है।

ये सब प्रयोग नवार्णमन्त्र से भी किय जा सकते हैं।

तारो हस्तिमुखायाथङेन्तोलम्बोदरस्तथा ॥ ८४ ॥
उच्छिष्टान्ते महात्माङे पाशांकुशशिवात्मभूः।
माया वर्म्म च घेघेउच्छिष्टाय दहनाङ्गना ॥ ८५ ॥
द्वात्रिंशदक्षरो मन्त्रो यजनं पूर्ववन्मतम्।
रसेषुसप्तषट्षट्कनेत्रार्णैरङ्गमीरितम् ॥ ८६ ॥

द्वात्रिंशदक्षर मन्त्र : तार (ॐ) 'हस्ति मुखाय' फिर क्रमशः चतुर्थ्यन्त लम्बोदर (लम्बोदराय) 'उच्छिष्ट' के बाद चतुर्थ्यन्त महात्मा (महात्मने) फिर पाश (आँ) अंकुश (क्रों) शिवा (ह्रीं) आत्मभू (क्लीं) माया (ह्रीं) वर्म (हूं) फिर 'घे घे उच्छिष्टाय' और अन्त से दहनाङ्गाना (स्वाहा) लगाने से ३२ अक्षर का मन्त्र बनता है।

मन्त्रान्तरमाह ॥ तारइति ॥ तारः ॐ ॥ महात्माङे-महात्मने ॥ पाशादियुक्तम् ॥ आत्मभूःक्लीं ॥ मायाहीं वर्महूं ॥ दहनांगनास्वाहा ॥ स्वरुपमन्यत ॥ यथाओंहस्तिमुखाय-लम्बोदरायउच्छिष्टमहात्मनेआंक्रोंह्रीक्लींह्रींहूंघेघेउच्छिष्टायस्वाहा ॥ ८४-८५ ॥ द्वात्रिंशदर्णः ॥ षडंगमाह ॥ रस इति ॥ ८६ ॥

इस मन्त्र का पूजन एवं पुरश्चरण आदि पूर्वोक्त मन्त्र की तरह करना चाहिए। मन्त्र के ६, ५, ७, ६, ६, एवं २ अक्षरों से अङ्गन्यास कहा गया है।

टिप्पणी : मन्त्रोद्धार :

ॐ हस्तिमुखाय लम्बोदराय उच्छिष्टमहात्मने
आं क्रों ह्रीं क्लीं ह्रीं हूं घे घे उच्छिष्टाय स्वाहा।

विनियोग : ॐ अस्योच्छिष्ट गणपतिमन्त्रस्य गणक ऋषिः गायत्री छन्दः उच्छिष्टगणपतिर्देवता ममाभीष्ट सिद्धये जपे विनियोगः।

षडङ्गन्यास :

ॐ हस्तिमुखाय हृदयाय नमः। ओं क्रों ह्रीं क्लीं ह्रीं हूं कवचाय हुम्।
लम्बोदराय शिरसे स्वाहा। घे घे उच्छिष्टाय नेत्रत्रयाय वौषट्।
उच्छिष्टमहात्मने शिखायै वषट्। स्वाहा अस्त्राय फट्।

ध्यान : शरान्धनुः पाशसृणीस्वहस्तैर्दधानमारक्तसरोरुहस्थम्।
विवस्त्रपत्न्यां सुरतप्रवृत्तमुच्छिष्टमम्बासुतमाश्रयेऽहम्॥

इस प्रकार न्यास आदि कर पीठ पूजा, आवरण पूजा आदि सब पूर्वोक्त रीति के अनुसार करते हुए इस मन्त्र का १ लाख जप, घी की आहुतियों से दशांश होम, तर्पण, मार्जन एवं ब्राह्मणभोजन सहित पुरश्चरण करने से यह मन्त्र सिद्ध हो जाता है।

उच्छिष्टगजवक्त्रस्य मन्त्रेष्वेषु न शोधनम्।
सिद्धादिचक्रं मासादेः प्राप्तास्ते सिद्धिदा गुरोः॥८७॥
मनवोऽमीसदागोप्या न प्रकाश्या यतः कुतः।
परीक्षिताय शिष्याय प्रदेया निजसूनवे॥ ८८॥

कुछ ध्यान रखने योग्य बातें : उच्छिष्ट गणपति के पूर्वोक्त मन्त्रों में सिद्ध आदि शोधन की कोई आवश्यकता नहीं है। ये मन्त्र गुरु से प्राप्त होते ही सिद्धिदायक माने गये हैं।

इन मन्त्रों को सदैव गुप्त रखना चाहिए तथा जिस किसी को नहीं बतलाना चाहिए। भली भाँति परीक्षा करने के बाद अपने शिष्य एवं पुत्र को इन मन्त्रों की दीक्षा देनी चाहिए।

माया त्रिमूर्तिचन्द्रस्थौ पञ्चान्तकहुताशनौ।
तारादिशक्तिबीजान्तो मन्त्रोयं चतुरक्षरः॥ ८९॥

॥ ८७॥ उच्छिष्टगणेशाउक्ताः॥ ८८॥ शक्तिविनायकस्य मन्त्रान्तरमाह॥ मायेति॥

भार्गवोस्य मुनिश्छन्दोविराट् शक्तिर्गणाधिपः ।
देवो मायाद्वितीये तु शक्तिबीजे प्रकीर्तिते ॥ ९० ॥
षड्दीर्घयुग्द्वितीयेन ताराद्येन षडङ्गकम् ।
विधाय सावधानेन मनसा संस्मरेत्प्रभुम् ॥ ९१ ॥

शक्तिविनायक का मन्त्र : प्रारम्भ में तार (ॐ) फिर माया (ह्रीं) फिर इकार एवं अनुस्वार के साथ गकार एवं रकार (ग्रीं) और अन्त में शक्ति बीज (ह्रीं) लगाने से यह ४ अक्षर का मन्त्र बनता है ।

इस मन्त्र का भार्गव ऋषि है, विराट् छन्द है, शक्तिगणाधिप देवता है, माया बीज शक्ति तथा द्वितीय (ग्रीं) बीज कहा गया है ।

प्रणव सहित द्वितीय में ६ दीर्घस्वर (आ, ई, ऊ, ऐ, और, अः) लगाकर उनसे षडङ्गन्यास करके ध्यानपूर्वक एकाग्रमन से गणेश जी का स्मरण करना चाहिए ।

टिप्पणी : मन्त्रोद्धार : ॐ ह्रीं ग्रीं ह्रीं

विनियोग : ॐ अस्य शक्तिगणाधिप मन्त्रस्य भार्गव ऋषिः विराट् छन्दः शक्तिगणाधिपो देवता ह्रीं शक्तिः ग्रीं बीजं ममाभीष्ट सिद्धये जपे विनियोगः ।

ऋष्यादिन्यास : ॐ भार्गवाय ऋषये नमः शिरसि ।
ॐ विराट् छन्दसे नमः मुखे ।
ॐ शक्ति गणाधिप देवतायै नमः हृदये ।
ॐ ग्रीं बीजाय नमः गुह्ये ।
ॐ ह्रीं शक्तये नमः पादयोः ।

षडङ्गन्यास : ॐ ग्रां हृदयाय नमः । ॐ ग्रैं कवचाय हुम् ।
ॐ ग्रीं शिरसे स्वाहा । ॐ ग्रौं नेत्रत्रयाय वौषट् ।
ॐ ग्रं शिखायै वषट् ॐ ग्रः अस्त्राय फट् ।

विषाणांकुशा वक्षसूत्रं च पाशं दधानं करैर्मोदकं षुष्करेण ।
स्वपत्न्यायुतं हेमभूषाभराढ्यं गणेशं समुद्यद्दिनेशाभमीडे ॥ ९२ ॥

ध्यान : दाहिने हाथों में अंकुश एवं अक्षसूत्र तथा बाँये हाथों में दन्त एवं पाश धारण किये हुए, सूड़ में मोदक लिए हुए, अपनी पत्नी के साथ सुवर्ण के आभूषणों

मायाह्रीं ॥ पञ्चान्तकहुताशनौगकाररेफौ ॥ त्रिमूर्तिचन्द्रस्थोइकारानुस्वारयुक्तौ ॥ तेनग्रीं-तारादिशक्तिबीजानः प्रणवादिर्मायाबीजान्तः ॥ अथा ॥ ॐ ह्रींग्रींह्रींइति चतुर्वर्णः ॥ ८९ ॥ देवइति ॥ पूर्वेणसम्बन्धः ॥ माया शक्तिः ॥ द्वितीयंबीजम् ॥ ९० ॥ षडङ्गमाह ॥ षडिति ॥ ॐ ग्रांहृत् ॥ ॐ ग्रींशिरइत्यादि ॥ ९१ ॥ ध्यानमाह ॥ विषाणेति ॥ अंकुशाक्षसूत्रे दक्षयोः ।

से अलंकृत तथा उदीयमान सूर्य जैसी आभावाले भगवान् गणेश जी की मैं वन्दना करता हूं ।

एवं ध्यात्वा जपेल्लक्षचतुष्कं तद्दशांशतः ।
अपूपैर्जुहुयाद्घृक्तैस्तर्पयेच्चतम् ॥ ९३ ॥
पूर्वोक्ते पूजयेत्पीठे केसरेष्वङ्गदेवताः ।
दलेषु वक्रतुण्डाद्यान्ब्राह्मीत्याद्यान्दलाग्रगान् ॥ ९४ ॥
ककुप्पालांस्तदस्त्राणि सिद्धि एवं भवेन्मनुः ।

पुरश्चरणविधि : इस प्रकार ध्यान कर ४ लाख जप करना चाहिए । तथा मधुयुक्त अपूप (मालपुआ) से दशांश हवन कर तर्पण करना चाहिए । पूर्वोक्त पीठ पर केसरों में अङ्गदेवताओ का पूजन करना चाहिए । दलों में 'वक्र तुण्ड' आदि का तथा दल के अग्रभाग में ब्राह्मी आदि का पूजन करना चाहिए । दिशाओं में दिक्पाल एवं उनके आयुधों का पूजन करना चाहिए । इस प्रकार पुरश्चरण करने से मन्त्र सिद्ध हो जाता है ।

टिप्पणी : प्रयोगविधि : श्लोक ९२ के अनुसार ध्यान कर मानस पूजा कर पीठ पूजन एवं तीव्र आदि पीठ शक्तियों का पूजन करना चाहिए । फिर मूलमन्त्र से देवता का ध्यान आवाहन आदि पूजन तथा पञ्चपुष्पाञ्जलि देने तक समस्त कार्य करने के बाद केशरों में 'ॐ ग्रां हृदयाय नमः' 'ॐ ग्रीं शिरसे स्वाहा'.....आदि मन्त्रों से अङ्गपूजा करनी चाहिए ।

फिर दलों में 'ॐ वक्रतुण्डाय नमः, ॐ एकदन्ताय नमः, ॐ महोदराय नमः, ॐ गजाननाय नमः, ॐ लम्बोदराय नमः, ॐ विकटाय नमः, ॐ विघ्नराजाय नमः, ॐ धूम्रवर्णाय नमः —इन मन्त्रों से वक्रतुण्ड आदि का पूजन कर दल के अग्र भागों में ॐ ब्राह्म्यै नमः, ॐ महेश्वर्यै नमः, ॐ कौमार्यै नमः, ॐ वैष्णव्यै नमः, ॐ वाराह्यै नमः, ॐ इन्द्राण्यै नमः, ॐ चामुण्डायै नमः, ॐ लक्ष्म्यै नमः—इन मन्त्रों से ब्राह्मी आदि मातृकाओं का पूजन करना चाहिए । फिर दलों के बाहर इन्द्र आदि दिक्पालों का तथा वज्र आदि आयुधों का पूजन करे । तब धूप, दीप, नैवेद्य आदि समर्पण के साथ नित्यपूजा समाप्त कर जप करें ।

इस प्रकार ४ हजार लाख जप करने के बाद मधु सहित अपूप (मालपुओं) से ४० हजार आहुति देनी चाहिए । ४ तर्पण, ४०० मार्जन एवं ४० ब्राह्मणों को भोजन कराने से इस मन्त्र का पुरश्चरण सम्पन्न होता है ।

घृताक्तमन्नं जुहुयादावर्षादन्नवान्भवेत् ॥ ९५ ॥

अन्येवामयोः ॥ ९२-९४ ॥ ककुप्पालादिन्द्रादीन् ॥ ९४ ॥ परमान्नायसम् ॥ ९६ ॥ वाम-

परमान्नैर्हुतालक्ष्मी रिक्षुदण्डैर्नृपश्रियः।
रम्भाफलैर्नारिकेलैः पृथुकैर्वश्यताभवेत् ॥ ९६ ॥
घृतेन धनमाप्नोति लवणैर्मधुसंयुतैः।
वामनेत्रां वशीकुर्य्यादपूपैः पृथिवीपतिम् ॥ ९७ ॥

विविध पदार्थों से हवन का फल : घृत सहित अन्न की आहुतियाँ देने से एक वर्ष के भीतर साधक अन्नवान् हो जाता है। पायस के होम से लक्ष्मी तथा गन्ने के होम से राजलक्ष्मी प्राप्त होती है। केला एवं नारियल के हवन से लोगों को वश में करने की शक्ति आ जाती है। घी के हवन से धन मिलता है। मधु के साथ लवण के हवन से स्त्री वश में हो जाती है, तथा अपूप (मालपुआ) के हवन से राजा वश में हो जाता है।

तारो रमा चन्द्रयुक्तः खान्तः सौम्या समीरणः।
ङेन्तोगणपतिस्तोयं रवरान्ते दसर्वंच ॥ ९८ ॥
जनंमे वशमादीर्घोवायुः पावककामिनी।
अष्टार्विंशतिवर्णोयं मनुर्द्धनसमृद्धिदः ॥ ९९ ॥
अन्तर्य्यामीमुनिश्छन्दो गायत्रीदेवता मनोः।
लक्ष्मीविनायको बीजंरमा शक्तिर्वसुप्रिया ॥१००॥
रमागणेशबीजाभ्यां दीर्घाढ्याभ्यां षडङ्गकम्।

लक्ष्मी विनायक का मन्त्र : तार (ॐ) रमा (श्रीं) इसके बाद सानुस्वार ख (गं) फिर 'सौम्या' समीरण (य) फिर चतुर्थ्यन्त गणपति (गणपतये) तोय (व) फिर 'र' और 'वर' के बाद 'द' फिर 'सर्वजनं मेवश' के बाद मा, दीर्घ (न) वायु (य) और अन्त में पावककामिनी (स्वाहा) लगाने से यह २८ अक्षरों का धन एवं समृद्धि देने वाला मन्त्र बनता है।

इस मन्त्र का अन्तर्य्यामी ऋषि है, गायत्री छन्द है, लक्ष्मीविनायक देवता है, रमा (श्रीं) बीज तथा स्वाहा शक्ति है।

रमाबीज के साथ दीर्घस्वरयुक्त गणेश बीज से षडङ्गन्यास करना चाहिये।

टिप्पणी : मन्त्रोद्धार : ॐ श्रीं गं सौम्याय गणपतये वरवरद सर्वजनं मे वशमानय स्वाहा।

विनियोग : ॐ अस्य लक्ष्मीविनायक मन्त्रस्य अन्तर्य्यामी ऋषिः गायत्री छन्दः

नेत्रानारी ॥ ९७ ॥ मन्त्रांतरमाह। तारइति ॥ तारः ॐ रमाश्रीं ॥ चन्द्रयुक्तःखान्तः गं ॥ समीरणोयः ॥ तोयंवः ॥ दीर्घोनः ॥ वायुयः ॥ पावककामिनी स्वाहा ॥ अन्यत्स्वरुपम् ॥ ॐ श्रींगंसौम्यायगणपतयेवरवरदसर्वजनंमेवशमानयस्वाहेति अष्टाविंशत्यर्णोलक्ष्मीगणेशो-मन्त्रः ॥ ९८-१०० ॥ षडंगमाह ॥ रमेति ॥ श्रींगांहृत, श्रींगींशिरः, श्रूंगूंशिखेत्यादि ॥

लक्ष्मीविनायको देवता श्रीं बीजं स्वाहा शक्तिः ममाभीष्टसिद्धये जपे विनियोगः ।

ऋष्यादि न्यास :

ॐ अन्तर्यामी ऋषये नमः शिरसि । ॐ श्रीं बीजाय नमः गुह्ये ।
ॐ गायत्री छन्दसे नमः मुखे : ॐ स्वाहा शक्तये नमः पादयोः ।
ॐ लक्ष्मीविनायक देवतायै नमः हृदि ।

षडङ्गन्यास : श्रीं गां हृदयाय नमः । श्रीं गैं कवचाय हुम् ।
श्रीं गीं शिरसे स्वाहा । श्रीं गौं नेत्रत्रयाय वौषट् ।
श्रीं गूं शिखायै वषट् । श्रीं गः अस्त्राय फट् ।

दन्ताभयेचक्रदरौदधानं कराग्रगस्वर्णघटं त्रिनेत्रम् ।
धृताब्जयालिङ्गितमब्धिपुत्र्या लक्ष्मीगणेशं कनकाभमीडे ॥१०१॥

ध्यान : दाहिने हाथों में दन्त एवं शंख तथा बाँये हाथों में अभय एवं चक्र धारण किये हुए, सूँड़ के अग्रभाग में सुवर्ण घट लिए हुए, हाथ में कमल धारण करने वाली लक्ष्मी द्वारा आलिंगित, तीन नेत्रवाले एवं सुवर्ण के समान आभावाले लक्ष्मी गणेश की मैं वन्दना करता हूं ।

चतुर्लक्षं जपेन्मन्त्रं समिद्भिर्बिल्वशाखिनः ।
दशांशं जुहुयात्पीठे पूर्वोक्ते तं प्रपूजयेत् ॥१०२॥
आदावङ्गानि सपूज्य शक्तीरष्टाविमायजेत् ।
बलाका विमलापश्चात्कमला वनमालिका ॥१०३॥
विभीषिका मालिका च शाङ्करी वसुबालिका
शंखपद्मनिधी पूज्यौ पार्श्वयोर्दक्षवामयोः ॥१०४॥
लोकाधिपांस्तदस्त्राणितद्बहिः परिपूजयेत् ।
एवं सिद्धे मनौ मन्त्री प्रयोगान्कर्तुमर्हति ॥१०५॥

पुरश्चरण विधि : ४ लाख जप करना चाहिए । तथा बेल वृक्ष की लकड़ी से दशांश होम करना चाहिए । पूर्वोक्त पीठ पर लक्ष्मीविनायक का पूजन करना चाहिए । सर्वप्रथम अङ्गपूजा कर इन आठ शक्तियों का पूजन करना चाहिए । बलाका, विमला कमला, वनमालिका, विभीषिका, मालिनी, शाङ्करी एवं वसुबालिका, ये आठ शक्तियाँ हैं । दाहिने एवं बाँये ओर क्रमशः शंखनिधि एवं पद्मनिधि का पूजन करना चाहिए । उसके बाहर के भाग में लोकपाल एवं उनके आयुधों का पूजन करना चाहिए । इस प्रकार पुरश्चरण कर मन्त्र सिद्ध हो जाने पर मान्त्रिक काम्य प्रयोग कर सकता है ।

ध्यानमाह ॥ दन्तेति ॥ दन्तशङ्खौदक्षयोः ॥ अभयचक्रेवामयोः ॥ शुण्डाग्रेस्वर्णकुम्भः ही ॥१०१-१०५॥

टिप्पणी : प्रयोगविधि : १०१ श्लोकोक्त, ध्यान के बाद मानसोपचार से पूजन कर अर्घ्य स्थापन करे। फिर गणेशोक्त पीठ पूजा कर मूलमन्त्र से लक्ष्मी विनायक की मूर्ति की कल्पना कर पुनः ध्यान, आवाहन आदि पञ्चपुष्पाञ्जलि देने तक समस्त कर्म करने के बाद आवरण पूजा करनी चाहिए।

४ कोण, मध्य एवं दिशाओं में क्रमशः 'ॐ श्रीं गां हृदयाय नमः' इत्यादि मन्त्रों से क्रमशः षडङ्गपूजन करना चाहिए। फिर दलों में ॐ बलाकायै नमः, ॐ विमलायै नमः, ॐ कमलायै नमः, ॐ वनमालिकायै नमः, ॐ विभीषिकायै नमः, ॐ मालिन्यै नमः, ॐ शङ्ख्यै नमः एवं ॐ वसुबालिकायै नमः, इन मन्त्र शक्तियों की पूजा करनी चाहिए। फिर दाहिनी ओर ॐ शंखनिधये नमः और बाँयी ओर ॐ पद्मनिधये नमः, इन मन्त्रों से दोनों निधियों का पूजन कर बाहरी भाग में इन्द्र आदि लोकपाल तथा वज्र आदि आयुधों का पूजन करना चाहिए। फिर धूप, दीप, नैवेद्य आदि से पूजन कर मूल मन्त्र का जप एवं उत्तर पूजन करना चाहिए।

इस प्रकार ४ लाख जप करने के बाद बेलवृक्ष की समिधाओं से दशांश हवन, तर्पण, मार्जन एवं ब्राह्मण भोजन आदि करने से पुरश्चरण पूरा तथा मन्त्र सिद्ध हो जाता है। मन्त्र सिद्ध हो जाने पर मान्त्रिक इस मन्त्र से विविध काम्य-प्रयोग कर सकता है।

उरोमात्रे जलेस्थित्वा मन्त्री ध्यात्वार्कमण्डले।
एवं त्रिलक्षं जपतो धनवृद्धिः प्रजायते ॥१०६॥
बिल्वमूलं समास्थाय तावज्जप्ते फलं हि तत्।
अशोककाष्ठैर्ज्वलिते वह्नावाज्याक्ततण्डुलैः ॥१०७॥
होमतो वशयेद्विश्वमर्ककाष्ठं शुचावपि।
खादिराग्नौ नरपतिं लक्ष्मीं पायसहोमतः ॥१०८॥

काम्य प्रयोग : हृदय पर्यन्त जल में खड़ा होकर सूर्य मण्डल में इष्टदेव का ध्यान कर ३ लाख जप करने से धन की वृद्धि होती है। बेल वृक्ष के मूल में बैठकर ३ लाख जप करने से भी वही फल होता है।

अशोक की लड़की से प्रज्वलित अग्नि में घृताक्त चावलों के होम से विश्व वश में हो जाता है। खादिर की लकड़ी से प्रज्वलित निर्मल अग्नि में आक की समिधा के होम से राजा वश में हो जाता है। तथा पायस (खीर) के होम से लक्ष्मी प्रसन्न हो जाती हैं।

॥ १०६ ॥ तावत्त्रिलक्षंतत्फलंधनवृद्धिः ॥ १०७-१०८ ॥ त्रैलोक्यमोहनगणेशमन्त्रमाह ॥

वक्रकर्णेन्दुयुग् णान्तो डैकदंष्ट्राय मन्मथः ।
माया रमा गजमुखो गणपान्ते भगीहरिः ॥१०९॥
वरवालाग्निसत्याः सरेफारूढं जलं स्थिरा ।
सेन्दुर्म्मेषो मेवशान्ते मानयोषर्वुधप्रिया ॥११०॥
स्यात्त्रयस्त्रिंशदर्णाढ्यो मनुस्त्रैलोक्यमोहनः ।
गणकोस्य ऋषिश्छन्दो गायत्रीदेवता पुनः ॥१११॥
त्रैलोक्यमोहनकरो गणेशो भक्तसिद्धिदः ।
रविवेदशरोदन्वद्रसनेत्रैः षडङ्गकम् ॥११२॥

त्रैलोक्यमोहन गणेश मन्त्र : 'वक्र' फिर कर्णेन्दु सहित ण (तुं) फिर 'डैक-दंष्ट्राय' फिर मन्मथ (क्लीं) माया (ह्रीं) रमा (श्रीं) गजमुख (गं) फिर 'गणप' भगीहरि (ते) फिर 'वर' वालाग्नि सत्य (वरद) फिर 'स' रेफारूढजल (वे) स्थिरा (ज) सेन्दुमेष (नं) फिर 'मे वश' 'मानय' और अन्त में उषर्बुधप्रिया (स्वाहा) लगाने से भक्तों को सिद्धिदायक त्रैलोक्यमोहन गणेश का ३३ अक्षर का मन्त्र बनता है ।

इस मन्त्र का गणक ऋषि, गायत्री छन्द, तथा भक्तों को सिद्धिदायक त्रैलोक्य-मोहनकारक गणेश देवता हैं । मन्त्र के १२, ४, ५, ४, ६ एवं २ अक्षरों से षडङ्गन्यास करना चाहिए ।

टिप्पणी : मन्त्रोद्धार :

वक्रतुंडैकदंष्ट्राय क्लीं ह्रीं श्रीं गं गणपते वरवरद सर्वजनं मेवशमानय स्वाहा ।

विनियोग : ॐ अस्य त्रैलोक्यमोहनगणेशमन्त्रस्य गणकऋषिः त्रैलोक्यमोहनकरो-गणेशो देवता ममाभीष्टसिद्धये जपे विनियोगः ।

षडङ्गन्यास : वक्रतुंडैक दंष्ट्राय क्लीं ह्रीं श्रीं गं हृदयाय नमः ।
गणपते शिरसे स्वाहा ।
वरवरद शिखायै वषट् ।
सर्वजनं कवचाय हुम् ।
मेवशमानय नेत्रत्रयाय वौषट् ।
स्वाहा अस्त्राय फट् ।

वक्रेति ॥ स्वरुपम् ॥ णांतस्तः ॥ कर्णेंदुयुक् ॥ उविंदुयुतः ॥ मन्मथः क्लींमायाह्रीं ॥ रमाश्रीं ॥ गजमुखोग ॥ भगीहरिः एयुतस्तः ॥ वालोवः ॥ अग्नीरः ॥ सत्योदः ॥ रेफारुढजलंर्व ॥ स्थिराजः ॥ सेन्दुर्मेषः नं ॥ उषबुधप्रियास्वाहा ॥ स्वरुपमन्यत् ॥ यथा ॥ वक्रतुंडैकदंष्ट्रायक्लींह्रीं श्रींगंगणपते वरवरदसर्वजनंमेवशमानयस्वाहेतित्रयस्त्रिंशद्वर्णाः ॥ १०९-१११ ॥ षडंगमाह ॥ रवीति ॥ उदन्वद्रसश्चत्वारः ॥ ११२ ॥ ध्यानमाह ॥ गदेति ॥

गदाबीजपूरेधनुः शूलचक्रे सरोजोत्पले पाशधान्याग्रदन्तान् ।
करैः संदधानं स्वशुण्डाग्रराजन्मणीकुम्भमङ्काधिरूढ स्वपत्न्या ॥११३॥
सरोजन्मनाभूषणानां भरेणोज्ज्वलद्धस्ततन्व्यासमालिङ्गिताङ्गम् ।
करीन्द्राननं चन्द्रचूडं त्रिनेत्रं जगन्मोहनं रक्तकान्ति भजेत्तम् ॥११४॥

ध्यान : दाहिने हाथों में गदा, बीजपुर, शूल, चक्र एवं पद्म तथा बाँये हाथों में धनुष, उत्पल, पाश, धानमंजरी एवं दन्त धारण किये हुए, सूंड़ के अग्र भाग में सुन्दर मणिकलश लिए हुए, तीन नेत्रवाले, कमल एवं आभूषणों से शोभायमान हाथों वाली गोद में बैठी हुई अपनी तन्वङ्गी पत्नी से आलिङ्गित, हाथी समान मुखवाले, सिर पर चन्द्रकला धारण करने वाले जगत को मोहित करने वाले, लाल आभावाले गणेश का ध्यान करता हूँ ।

वेदलक्षं जपेन्मन्त्रमष्टद्रव्यैर्दशांशतः ।
हुत्वा पूर्वोदितं पीठे पूजयेद्गणनायकम् ॥११५॥
अङ्गार्चापूर्ववत्प्रोक्ता शक्तीः पत्रेषु पूजयेत् ।
वामा ज्येष्ठा च रौद्री स्यात्काली कलपदादिका ॥११६॥
विकरिण्याह्वया तद्वद्बलाद्या प्रमथन्यपि ।
सर्वभूतदमन्याख्या मनोन्मन्यपि चाग्रतः ॥११७॥
दिक्षु प्रमोदः सुमुखो दुर्मुखो विघ्ननाशकः ।
दीर्घाद्या मातरः पूज्या इन्द्राद्या आयुधान्यपि ॥११८॥
एवं सिद्धे मनौ कुर्य्यादन्नयोगानिष्टसिद्धये ।

पुरश्चरण विधि : इस मन्त्र का ४ लाख जप करना चाहिए । तथा अष्टद्रव्य से दशांश होम कर पूर्वोक्त पीठ पर गणेश जी की पूजा करनी चाहिए । अङ्गपूजा पूर्वोक्त रीति से करनी चाहिए । दलों पर शक्तियों का पूजन करना चाहिए । वामा, ज्येष्ठा, रौद्री कलकाली, बलविकरिणी, बलप्रमथनी, सर्वभूतदमनी, मनोन्मनी— ये शक्तियाँ हैं । दिशाओं में प्रमोद, सुमुख, दुर्मुख एवं विघ्ननाशक का पूजन करना चाहिए । फिर आं ब्राह्मयै नमः, ईं माहेश्वर्यै नमः इन मन्त्रों से मातृकाओं का पूजन कर इन्द्र आदि दिक्पाल तथा वज्र आदि आयुधों का पूजन करना चाहिए । इस रीति से पुरश्चरण कर मन्त्र सिद्ध हो जाने पर अभीष्ट सिद्धि के लिए काम्य प्रयोग करने चाहिए ।

गदाबीजपूरशूलचक्रपद्मानि दक्षेषु धान्याग्रदन्तेषु ॥ धान्याग्रंवीहिमंजरी ॥११३॥ किंभूतया-पत्न्या ॥ सरोजन्मनापद्मेन भूषणसमूहेनचक्रमात् ॥ ज्वलन्दीप्यमानोहस्तोज्वलंती-तनुश्चयस्यास्तया ॥ ११४–११७॥ दीर्घाद्यामातरः ॥ आंब्राह्मयैनमः ॥ ईं माहेश्वर्यैनम-इत्यादि ॥ ११८–११९ ॥ चलदलोश्वत्थस्तस्यसमिद्भिर्धरासुरान्विप्रान्वशयेत् ॥ औदुंबर-

टिप्पणी : प्रयोग विधि : श्लोक ११३-१४ के अनुसार त्रैलोक्यमोहन गणपति का ध्यान कर मानसोपचार से पूजन कर अर्घ्य स्थापन करना चाहिए। तत्पश्चात् पीठ एवं पीठ देवता का पूजन कर मूलमन्त्र से इष्टदेव की मूर्ति कल्पना कर ध्यान आवाहनादि सहित ५ पुष्पाञ्जलि समर्पण तक समस्त कार्य करने चाहिए।

तदनन्तर 'ॐ वक्रतुंडैकदंष्ट्राय कलीं ह्रीं श्रीं गं हृदयाय नमः'.....इत्यादि षडङ्गन्यास में बतलाये मन्त्रों से अङ्गपूजा करनी चाहिए। फिर दलों में 'ॐ वामायै नमः, ॐ ज्येष्ठायै नमः, ॐ रौद्रयै नमः, ॐ कलकाल्यै नमः, ॐ बलविकरिण्यै नमः, ॐ बलप्रमथन्यै नमः, ॐ सर्वभूतदमन्यै नमः, ॐ मनोन्मन्यै नमः—इन मन्त्रों से शक्तियों का पूजन करना चाहिए।

तत्पश्चात् पूर्व आदि दिशाओं में कमशः 'ॐ प्रमोदाय नमः, ॐ सुमुखाय नमः, ॐ दुर्मुखाय नमः, ॐ विघ्ननाशकाय नमः—इन मन्त्रों से प्रमोद आदि पूजन कर दलों के अग्र भाग में 'आं ब्राह्म्यै नमः, ईं माहेश्वर्यै नमः, इत्यादि मन्त्रों से मातृकाओं का पूजन करना चाहिए। फिर दलों के बाहर इन्द्र आदि दिक्पाल तथा वज्र आदि उनके आयुधों का पूजन करना चाहिए। इस प्रकार आवरण पूजाकर धूप दीप आदि से विसर्जनान्त समस्त कार्य करने चाहिए।

उक्त रीति से नित्यार्चन करते हुए ४ लाख जप पूरा होने पर अष्टद्रव्य से दशांश हवन करना चाहिए। फिर तर्पण, मार्जन एवं ब्राह्मण भोजन करने से पुरश्चरण पूरा होता है तथा मन्त्र सिद्ध हो जाता है। मन्त्र सिद्ध हो जाने पर उससे काम्य प्रयोग किये जा सकते हैं।

वशमेत्कमलैर्भूपान्मन्त्रिणः कुमुदैर्हुतैः ॥११९॥
समिद्भिरश्वत्थदलसमुद्भूतैर्द्धरासुरान्।
उदुम्बरोत्थैर्नृपतीन्प्लक्षैर्वार्टिर्विशोन्तिमान् ॥१२०॥
क्षौद्रेण कनकप्राप्तिर्गोप्राप्तिः पयसा गवाम्।
ऋद्धिर्दध्योदनैरन्नं घृतैः श्रीर्वेतसैर्जलम् ॥१२१॥

काम्य प्रयोग : कमलों के हवन राजा को तथा कुमुद पुष्पों के हवन से मन्त्री को वश में किया जाता है। पीपल की समिधाओं के हवन से ब्राह्मणों को, उदुम्बर की समिधा के हवन से राजा (क्षत्रियों) को, प्लक्ष की समिधा के हवन से वैश्यों को

समिद्भिर्नृपतीन्वशयेत् ॥ प्लक्षसमिद्भिर्वैश्यान् ॥ वटजाभिरंतिमान् शूद्रान् ॥ १२ -१२१ ॥ हरिद्रागणेशप्रनुमाह ॥ तारद्वनि ॥ तार ॐ॥ वर्महुं ॥ गणेशोगं ॥ भूःग्लौं ॥ लोहितः ए ॥ आषाढीनः ॥ सत्योदः ॥ तर्जनीनः ॥ स्वर्णरेतसोवल्लभास्वाहा ॥ स्वरूपमन्यत ॥ यथा-ॐ हुंगःग्लौंहरिद्रागणपतयेवरवरदसर्वजन हृदयंस्तंभयस्तंभय स्वाहेतिद्वात्रिंशद्वर्णः ॥

तथा वटवृक्ष की समिधा के होम से शूद्रों के वश में किया जाता है। क्षौद्र के हवन से सोने की प्राप्ति तथा गो दुग्ध के हवन से गौएँ मिलती हैं। दही मिश्रित चरु के हवन से ऋद्धि होती है। घी की आहुतियों से अन्न एवं लक्ष्मी की वृद्धि होती है। तथा वेतस की आहुतियों से वृष्टि एवं सुकाल होता है।

तारो वर्म गणेशो भूर्हरिद्रागणलोहितः।
आषाढो येवरवरसत्यः सर्वजतर्जनी ॥१२२॥
हृदयं स्तम्भयद्वंद्वं वल्लभांस्वर्णरेतसः।
द्वात्रिंशदक्षरो मन्त्रो मदनो मुनिरीरितः ॥१२३॥
छन्दोनुष्टुब् देवतातु हरिद्रागणनायकः।
वेदाष्टशरसप्ताङ्गनेत्रार्णैरङ्गमीरितम् ॥१२४॥

हरिद्रा गणपति का मन्त्र : तार (ॐ) वर्म (हुं) गणेश (गं) भू (ग्लौं) फिर 'हरिद्रागण' इसके बाद लोहित (प) आषाढी (त) तथा 'ये' फिर 'वरवर' तथा सत्य (द) फिर 'सर्वज' तथा तर्जनी (न) फिर 'हृदयं स्तम्भय स्तम्भय और अन्त में अग्नि वल्लभा (स्वाहा) लगाने से ३२ अक्षरों का मन्त्र बनता है।

इस मन्त्र का मदन ऋषि, अनुष्टुप् छन्द तथा हरिद्रागणनायक देवता कहा गया है। मन्त्र के ४, ८, ५, ७, ६ एवं २ अक्षरों से षडङ्गन्यास बतलाया गया है।

टिप्पणी : मन्त्रोद्धार : ॐ हुं गं ग्लौं हरिद्रागणपतये वरवरद सर्वजनहृदयं स्तम्भय स्तम्भय स्वाहा।

विनियोग : ॐ अस्य श्री हरिद्रागणनायकमन्त्रस्य मदनऋषिः अनुष्टुप् छन्दः हरिद्रागणनायको देवता ममाभीष्टसिद्धये जपे विनियोगः।

षडङ्गन्यास : ॐ हुं गं ग्लौं हृदयाय नमः। सर्वजनहृदयं कवचाय हुम्।
हरिद्रागणपतये शिरसे स्वाहा। स्तम्भय स्तम्भय नेत्रत्रयाय वौषट्।
वरवरद शिखायै वषट्। स्वाहा अस्त्रायफट्।

पाशांकुशौ मोदकमेकदन्तं करैर्दधानं कनकासनस्थम्।
हारिद्रखण्डप्रतिमं त्रिनेत्रं पीतांशुकं रात्रिगणेशमीडे ॥१२५॥

ध्यान : दाहिने हाथों में अंकुश एवं मोदक तथा बाँये हाथों में पाश एवं दन्त धारण किये हुए, सोने के सिंहासन पर स्थित, हल्दी जैसी आभा वाले, तीन नेत्रवाले, पीतवस्त्र धारण करने वाले हरिद्रागणपति की वन्दना करता हूँ।

१२२--१२३ ॥ षडंगमाह ॥ वेदेति ॥ १२४ ॥ ध्यानमाह ॥ पाशेति ॥ अंकुशमोदकौदन्तयोः ॥

वेदलक्षं जपित्वान्ते हरिद्राचूर्णमिश्रितैः ।
दशांशं तण्डुलैर्हुत्वा ब्राह्मणानपि भोजयेत् ॥१२६॥
पूर्वोक्तपीठे प्रयजेदङ्गमातृदिशाधवैः ।
एवमाराधितो मन्त्रस्सिद्धो यच्छेन्मनोरथान् ॥१२७॥

पुरश्चरण विधि : इस मन्त्र का ४ लाख जप कर पिसी हल्दी को चावलों में मिलाकर उससे दशांश होम कर ब्राह्मण भोजन कराना चाहिए ।

पूर्वोक्त रीति से पीठ पर अङ्गपूजा, मातृका पूजन एवं दिक्पाल आदि का पूजन करना चाहिए । इस प्रकार पुरश्चरण करने से सिद्ध मन्त्र समस्त मनोवांछित वस्तुओं को देता है ।

टिप्पणी : *प्रयोगविधिः* : श्लोक १२५ में बतलाई भावना से ध्यान कर मानस-पूजा कर अर्घ्य स्थापन करना चाहिए । तत्पश्चात् पीठपूजा कर केशरों के मध्य में तीव्रादि पीठ-देवनाओं का पूजन करना चाहिए । फिर मूलमन्त्र से हरिद्रागणपति की मूर्ति की कल्पना कर पुनः ध्यान आवाहन से लेकर ५ पुष्पाञ्जलि देने तक यथाक्रमेण पूजन कर आवरण पूजा करनी चाहिए । यथा—

कर्णिका में पूर्व आदि दिशाओं में क्रमशः 'ॐ गणाधिपतये नमः, ॐ गणेशाय नमः, ॐ गणनायकाय नमः, ॐ गणक्रीडाय नमः—इन मन्त्रों से पूजन करना चाहिए । फिर केशरों में 'ॐ हुं गं ग्लौं हृदयाय नमः।'—इत्यादि षडङ्गन्यास मन्त्रों से अङ्गपूजा करनी चाहिए । तदनन्तर पद्म के दलों में वक्रतुण्ड आदि का पूजन तथा दलों के अग्र भाग में ब्राह्मी आदि मातृकाओं का पूजन करना चाहिए । फिर दलों के बाहर इन्द्र आदि दिक्पालों का तथा वज्र आदि आयुधों का पूजन कर धूप, दीप से लेकर प्रार्थना पर्यन्त समस्त कर्म करना चाहिए ।

इस प्रकार पूजन करके जप करना चाहिए । ४ लाख जप पूरा होने पर हल्दी मिश्रित चावलों से दशांश हवन करना चाहिए । और फिर क्रमशः तर्पण, मार्जन एवं ब्राह्मण भोजन आदि करने से पुरश्चरण पूरा तथा मन्त्र सिद्ध हो जाता है ।

शुक्लपक्षे चतुर्थ्यां तु कन्यापिष्टहरिद्रया ।
विलिप्यांगं जले स्नात्वा पूजयेद्गणनायकम् ॥१२८॥
तर्पयित्वा पुरस्तस्य सहस्रं साष्टकं जपेत् ।
शतं हुत्वा घृतापूपैर्भोजयेद्ब्रह्मचारिणः ॥१२९॥
कुमारीरपि सन्तोष्य गुरुं प्राप्नोति वांछितम् ।

पाशदन्तावन्ययोः ॥ रात्रिगणेशोहरिद्रागणपतिः ॥ १२५-१२९ ॥ कुमारीरपीति ॥

लाजैः कन्यामवाप्नोति कन्यापि लभते वरम् ॥१३०॥
वन्ध्यानारी रजः स्नाता पूजयित्वा गणाधिपम् ।
पलप्रमाणगोमूत्रे पिष्टाः सिन्धुवचानिशाः ॥१३१॥
सहस्रं मन्त्रयेत्कन्यावटून्त्संभोज्य मोदकैः ।
पीत्वा तदौषधं पुत्रं लभते गुणसागरम् ॥१३२॥
वाणीस्तम्भं रिपुस्तम्भं कुर्यान्मनुरुपासितः ।
जलाग्निचौरसिंहास्त्रप्रमुखानपि रोधयेत् ॥१३३॥

काम्यप्रयोग : शुक्लपक्ष की चतुर्थी को कन्या के द्वारा पीसी हल्दी का शरीर में लेपकर (तीर्थ आदि के) जल में स्नान कर गणेश जी का पूजन करना चाहिए। फिर तर्पण कर उनके सम्मुख १००८ जप करना चाहिए। घी एवं मालपुआ से १०० अहुतियाँ देकर ब्रह्मचारियों को भोजन कराना चाहिए। कुमारियों एवं अपने गुरु को सन्तुष्ट कर साधक मनोवाञ्छित फल प्राप्त करता है।

राजाओं के होम से वधू प्राप्त होती है, तथा कन्या को भी अनुरूप वर मिलता है। वन्ध्या स्त्री ऋतुस्नान करके गणेश जी का पूजन कर १ पल (४ तोला) गोमूत्र में दुधवच एवं हल्दी पीसकर १००० मन्त्र से अभिमन्त्रित करे। फिर कन्या एवं वटुकों को लड्डू खिलाकर उस औषधि को पीकर गुणवान पुत्र प्राप्त करती है। इस मन्त्र की उपासना से वाणी स्तम्भन एवं शत्रु स्तम्भन होता है, तथा जल, अग्नि, चौर, सिंह एवं अस्त्र आदि के प्रकोप को रोका जा सकता है।

शार्ङ्गीमांसस्थितः सेन्दुर्बीजमुक्तं गणेशितुः ।
हरिद्रागण्यस्य यजनं पूर्ववत्प्रोदितं मनोः ॥१३४॥

बीजमन्त्र : शार्ङ्गी (ग) एवं मांसस्थित (ल) में अनुस्वार लगाने से हरिद्रा-गणपति का बीज मन्त्र (ग्लं) बतलाया गया है। इस मन्त्र का पुरश्चरण पूर्वोक्त रीति से करना चाहिए।

टिप्पणी : विनियोग : ॐ अस्य श्री हरिद्रागणपतिमन्त्रस्य वसिष्ठऋषिः, गायत्री छन्दः हरिद्रागणपतिर्देवता गं बीजं लं शक्तिः ममाभीष्ट सिद्धये जपे विनियोगः ।

षडङ्गन्यास : ॐ गां हृदयाय नमः । ॐ गैं कवचाय हुम् ।
ॐ गीं शिरसे स्वाहा । ॐ गौं नेत्रत्रयाय वौषट् ।
ॐ गूं शिखायै वषट् । ॐ गः अस्त्राय फट् ।

भोजयेदित्यनेनान्वयः ॥ १३०-१३३ ॥ मंत्रांतरमाह ॥ शार्ङ्गीति ॥ शार्ङ्गीगः मांसस्थितः लकारस्यः ॥ ग्लौंतिबीज । ऋषेः । छंदः । देवतेः पूजनंपूर्ववत् ॥ १३४ ॥

ध्यान : हरिद्राभं चतुर्बाहुं हारिद्रवसनं विभुम् ।
पाशांकुशधरं देवं मोदकं दन्तमेव च ।

पुरश्चरणविधि : इस प्रकार ध्यान कर मानसोपचारों से पूजन कर विधिवत शंख स्थापन, पीठ पूजा, तीव्र आदि शक्तियों का पूजन, अङ्गपूजा एवं आवरण पूजा आदि समस्त कार्य पूर्वोक्त रीति के अनुसार करने चाहिए ।

इस प्रकार ४ लाख जप करने के बाद घी, मधु, शर्करा, एवं हरिद्रामिश्रित तण्डुलों से दशांश होम करना चाहिए । फिर तर्पण, मार्जन एवं ब्राह्मण भोजन करने से पुरश्चरण पूरा होता है ।

प्रोक्ता एते गणेशस्य मन्त्रा इष्टमभीप्सता ।
गोपनीया न दुष्टेभ्यो वदनीयाः कथंचन ॥१३५॥

इतिश्रीमहीधरविरचिते मन्त्रमहोदधौ
गणेशमन्त्रकथनंनाम द्वितीयस्तरङ्गः ॥२॥

उपसंहार : मनोभीष्ट फल देने वाले ये गणेश जी के मन्त्र बतलाये गये हैं । दुर्जनों से ये मन्त्र गुप्त रखने चाहिए तथा उन्हें कभी भी नहीं बतलाना चाहिए ।

इति श्री शुकदेव चतुर्वेदि विरचितायां सटिप्पण्यां मन्त्रमहोदधेः
मोहिनी व्याख्यायां द्वितीयस्तरङ्गः

॥ १३५ ॥ इतिमंत्रमहोदधिः नौकायांगणेशमंत्रकथनंनामद्वितीयस्तरङ्गः ॥ २ ॥

तृतीय तरङ्ग

अथ कालीमनून्वक्ष्ये सद्योवाक्सिद्धिदायकान् ।
आराधितैर्यैः सर्वेष्टं प्राप्नुवन्ति जना भुवि ॥ १ ॥

अब तुरन्त वाक्सिद्धि देने वाले काली के मन्त्रों को बतलाता हूँ जिनके द्वारा आराधना करने से मनुष्य इस लोक में समस्त अभीष्ट प्राप्त करता है ।

क्रोधीशत्रितयं वह्निवामाक्षिविधुभिर्युतम् ।
वराहद्वितयं वामकर्णचन्द्रसमन्वितम् ॥ २ ॥
मायायुग्मं दक्षिणे च दीर्घासृष्टिः सदृक्क्रिया ।
चक्रीझिंटीशमारूढः प्रागुक्तं बीजसप्तकम् ॥ ३ ॥
मन्त्रोवह्निप्रियांतोयं द्वाविंशत्यक्षरोमतः ।
न चात्रसिद्धसाध्यादिशोधनं मनसापि च ॥ ४ ॥
नयत्नातिशयः कश्चित्पुरश्चर्यानिमित्तकः ।
विद्याराज्ञाः स्मृतेरेव सिद्धयष्टकमवाप्नुयात् ॥ ५ ॥

दक्षिणाकाली का मन्त्र : वामाक्षि (ई) एवं विधु (र) के साथ क्रोधीश (क) अर्थात् क्रीं, इसकी ३ आवृत्ति, वामकर्ण (ऊ) एवं चन्द्रमा (अनुस्वार) सहित वराह (ह) —अर्थात् हूँ की २ आवृत्ति, फिर मायायुग्म (ह्रीं ह्रीं) फिर 'दक्षिणे' दीर्घासृष्टि (का) सदृक् क्रिया (लि) झिंटीश सहित चक्री (के) और फिर पूर्वोक्त सात बीज (क्रीं क्रीं क्रीं हूँ हूँ ह्रीं ह्रीं) तथा अन्त में वह्निप्रिया (स्वाहा) लगाने से यह २२ अक्षर वाला मन्त्र बनता है ।

कालीमत्र नवक्र प्रतिजानीते ॥ अथेति ॥ १ ॥ मंत्रमुद्धरति ॥ क्रोधीशेति ॥ क्रोधीशःकः ॥ तत्रयत्र पंचह्रेवामांक्षिविधुभिरेफईकारानुस्वारैर्युतम् ॥ तेनक्रींक्रींक्रीं ॥ वराहोहः वामकर्ण ऊ ॥ दक्षिणेत्यरूप ॥ सृष्टिःकः ॥ दीर्घाआकारयुता ॥ क्रियालः ॥ सदृक् इकुतःलिः ॥ चक्रीकः ॥ झिंटीशमारूढः एकुतःके ॥ प्रागुक्त आदावुक्त बीजानांसप्तकम् ॥ वह्निप्रियास्वाहा ॥ यथा ॥ क्रंक्रंक्रंहूंहूंह्रींह्रींदक्षिणेकालिकेक्रींक्रींक्रींहूंहूंह्रींह्रींस्वाहेति ॥ २--४ ॥ दीर्घवर्महूं ॥५--६ ॥

इस मन्त्र के लिए सिद्ध साध्य आदि शोधन की आवश्यकता नहीं है। मनोयोग एवं पुरश्चरण विषयक अत्यन्त प्रयास की भी आवश्यकता नहीं है। इस महाविद्या के स्मरण मात्र से आठों सिद्धियाँ मिल जाती हैं।

टिप्पणी : मन्त्रोद्धार :

क्रीं क्रीं क्रीं हूँ हूँ ह्रीं ह्रीं दक्षिणे कालिके क्रीं क्रीं क्रीं हूँ हूँ ह्रीं ह्रीं स्वाहा।

भैरवोस्य ऋषिश्छन्दउष्णिक् काली तु देवता।
बीज माया दीर्घकर्म शक्तिरुक्ता मनीषिभिः ॥ ६ ॥
षड्दीर्घाढ्याद्यबीजेन विद्याया अङ्गमीरितम्।
मातृकां पञ्चधाभक्त्वा वर्णान्दशदशक्रमात् ॥ ७ ॥
हृदये भुजयोः पादद्वये मन्त्री प्रविन्यसेत्।
व्यापकं मनुना कृत्वा ध्यायेच्चेतसि कालिकाम् ॥८॥

विनियोग एवं न्यास : इस मन्त्र का भैरव ऋषि, उष्णिक् छन्द, काली देवता, माया बीज, तथा दीर्घ वर्म शक्ति बतलायी गयी है।

छः दीर्घ सहित आद्य बीज से इस विद्या का षडङ्गन्यास करना चाहिए।

वर्णमाला को १०-१० अक्षरों के ५ भागों में विभक्त कर हृदय, दोनों हाथ एवं दोनों पैरों में न्यास करना चाहिए। फिर मूलमन्त्र से व्यापक कर असित कालिका का ध्यान करना चाहिए।

टिप्पणी : मन्त्रार्थ : यामल ग्रन्थ में उक्त काली मन्त्र का अर्थ इस प्रकार बतलाया गया है।

क्रीं क्रीं क्रीं=ककार मोक्षदायक तथा रकार सर्वतेजोमय है। ईकार शक्ति तथा बिन्दु ब्रह्म स्वरूप है। इस प्रकार 'क्रीं'—ये ३ बीज सृष्टि, स्थिति एवं प्रलय कारी है।

हूँ हूँ=हकार ज्ञान, अकार गुरु तथा बिन्दु परम शिव है। अतः ये दोनों बीज शब्द एवं शब्दार्थ ज्ञान देने वाले हैं।

ह्रीं ह्रीं=हकार परम ज्ञान, रकार परम तेज, ईकार परा शक्ति तथा बिन्दु परब्रह्म है। ये दोनों बीज सृष्टि एवं स्थिति करने वाले हैं।

दक्षिणे कालिके—यह सम्बोधन देवी का सान्निध्य देने वाला है।

स्वाहा—यह मन्त्र जगत् का मातृस्वरूप तथा समस्त पापों का नाशक है।

षडगमाह ॥ षाडेति ॥ क्रांक्रीमित्यादि ॥ मातृकामिति ॥ अआंइंईउंऊंऋंॠंऌंॡं १० नमोहृदि ॥ एं१०दक्षभुजे ॥ ङ१०वामभुजे ॥ णं १० वामपादे इति ॥ ७-८ ॥ ध्यानमाह ॥

विनियोग : ॐ अस्य कालीमन्त्रस्य भैरव ऋषिः उष्णिक् छन्दः काली देवता ह्रीं बीजं हूँ शक्तिः (क्रीं कीलकं) ममाभीष्ट सिद्धये (पुरुषार्थ चतुष्टय सिद्धये) जपे विनियोगः ।

ऋष्यादि न्यास : भैरव ऋषये नमः शिरसि ।
उष्णिक् छन्दसे नमः मुखे ।
(दक्षिण) काली देवतायै नमः हृदि ।
ह्रीं बीजाय नमः गुह्ये ।
हूँ शक्तये नमः पादयोः ।
क्रीं कीलकाय नमः सर्वाङ्गे ।

करान्यास : ॐ क्रां अंगुष्ठाभ्यां नमः । हृदयाय नमः ।
ॐ क्रीं तर्जनीभ्यां नमः । शिरसे स्वाहा ।
ॐ क्रूं मध्यमाभ्यां नमः । शिखायै वषट् ।
ॐ क्रैं अनामिकाभ्यां नमः । कवचाय हुम् ।
ॐ क्रौं कनिष्ठकाभ्यां नमः । नेत्रत्रयाय वौषट् ।
ॐ क्रः करतल कर पृष्ठाभ्यां नमः । अस्त्राय फट् ।

वर्णन्यास : अं आं इं ईं उं ऊं ऋं ॠं ऌं ॡं नमः हृदि ।
एं ऐं ओं औं अं अः कं खं गं घं नमः दक्षबाहौ ।
ङं चं छं जं झं ञं टं ठं डं ढं नमः वामबाहौ ।
णं तं थं दं धं नं पं फं बं भं नमः दक्षपादे ।
मं यं रं लं वं शं षं सं ह क्षं नमः वामपादे ।

विशेष : इस न्यास के विषय में कुछ मतभेद सम्प्रदाय में प्रचलित है । विरूपाक्ष के मतानुसार सविन्दु न्यास करना चाहिए, जैसा कि ऊपर लिखा गया है । मन्त्र महोदधिकार इसी सम्प्रदाय को मानते हैं । किन्तु कालीतन्त्र के अनुसार निर्बिन्दु न्यास करना चाहिए, यथा—अ आ ·····ॡ नमः हृदि इत्यादि । काली के उपासना में उक्त दोनों प्रकार का वर्ण न्यास आज प्रचलित एवं शास्त्र सम्मत माना जाता है ।

अन्य आवश्यक न्यास : वीरतन्त्र के अनुसार षोढा, तत्त्व एवं बीज, ये तीनों न्यास अनिवार्य हैं, नित्य पूजा में इन तीनों को न करने से पूजा अङ्गहीन हो जाती है । ये न्यास इस प्रकार हैं—

षोढान्यास : वीरतन्त्र में लिखा हैं कि सर्वप्रथम शुद्ध मातृका न्यास करना चाहिए ।

फिर मातृका वर्णों को प्रणव से पुटित कर ललाट आदि में न्यास करना चाहिए, यथा : ॐअं ॐ नमः ललाटे, ॐ आं ॐ नमः मुखे ···इत्यादि ।

तत्पश्चात् प्रणव को मातृकावर्ण से पुटित कर मातृकान्यास के स्थानों में क्रमशः न्यास करना चाहिए, यथा—अं ॐ अं नमः ललाटे, आं ॐ आं नमः मुखे ···इत्यादि ।

इसी प्रकार श्रीबीज से मातृकावर्ण को पुटित कर उक्त अङ्गों में न्यास करना चाहिए, यथा—श्रीं अं श्रीं नमः ललाटे, श्रीं आं श्रीं नमः मुखे ···इत्यादि ।

इसके बाद मातृकावर्ण से श्रीबीज को पुटित कर उक्त अङ्गों में न्यास करना चाहिए, यथा—अं श्रीं अं नमः ललाटे, आं श्रीं आं नमः मुखे ···इत्यादि ।

फिर काम बीज से पुटित मातृका वर्णों का उक्त अङ्गों में न्यास करना चाहिये, यथा— क्लीं अं क्लीं नमः ललाटे, क्लीं आं क्लीं नमः मुखे ···इत्यादि ।

तदनन्तर मातृकावर्ण से पुटित काम बीज का उक्त अङ्गों में न्यास करना चाहिए, यथा—अं क्लीं अं नमः ललाटे, आं क्लीं आं नमः मुखे ···इत्यादि ।

तत्पश्चात् माया बीज से पुटित वर्णों का उक्त अङ्गों में न्यास करना चाहिए, यथा—ह्रीं अं ह्रीं नमः ललाटे, ह्रीं अं ह्रीं नमः मुखे ·· इत्यादि ।

इसके बाद मातृका वर्ण से पुटित मायाबीज का उक्त अंगों में न्यास करना चाहिए, यथा—अं ह्रीं अं नमः ललाटे, आं ह्रीं आं नमः मुखे ··· इत्यादि ।

तदनन्तर 'क्रीं क्रीं' इन बीजों से 'ऋं ॠं ऌं ॡं' को पुटित कर उक्त स्थानों में न्यास करना चाहिए, यथा—क्रीं क्रीं ऋं ॠं ऌं ॡं क्रीं क्रीं नमः ललाटे ···इत्यादि ।

इसके बाद 'ऋं ॠं ऌं ॡं' से 'क्रीं क्रीं' को पुटित कर उक्त स्थानों में न्यास करना चाहिए, यथा—ऋं ॠं ऌं ॡं क्रीं क्रीं ऋं ॠं ऌं ॡं नमः ललाटे....इत्यादि ।

और अन्त में मूलमन्त्र से मातृका वर्ण को पुटित कर तथा मातृका वर्ण से मूलमन्त्र को पुटित कर क्रमशः उक्त स्थानों में न्यास करना चाहिए ।

इस प्रकार अनुलोम-विलोमात्कम न्यास कर मूलमन्त्र से १०८ बार व्यापक न्यास करना चाहिए ।

तत्त्वन्यास : स्वतन्त्र तन्त्र के अनुसार उक्त २२ अक्षर वाले मन्त्र के ७, ६ एवं ९ अक्षरों के तीन भाग कर उनसे तत्त्वन्यास करना चाहिए, यथा—

क्रीं क्रीं क्रीं हूँ हूँ ह्रीं ह्रीं ॐ आत्म तत्त्वाय स्वाहा पादमूलात् नाभिपर्यन्तम् ।

दक्षिणे कालिके ॐ विद्यातत्त्वाय स्वाहा नाभितः हृदयान्तम् ।

क्रीं क्रीं क्रीं हूँ हूँ ह्रीं ह्रीं स्वाहा ॐ शिवतत्त्वाय स्वाहा हृदयात् मस्तकान्तम् ।

बीजन्यास : उक्त मन्त्र के ७ बीजों का क्रमशः ब्रह्मरन्ध्र आदि स्थानों में न्यास करना बीज न्यास कहलाता है। यह न्यास इस प्रकार होता है—

क्रीं नमः ब्रह्मरन्ध्रे । हूँ नमः गुह्ये ।
क्रीं नमः भ्रूमध्ये । ह्रीं नमः मुखे ।
क्रीं नमः ललाटे । ह्रीं नमः सर्वाङ्गे ।
हूँ नमः नाभौ ।

इन सब न्यासों के बाद मूल मन्त्र से ७ बार व्यापक न्यास कर (यथोक्त मुद्राएं दिखाकर) भगवती दक्षिण कालिका का ध्यान करना चाहिए।

सद्यश्छिन्नशिरः कृपाणमभयं हस्तैर्वरं बिभ्रतीं
घोरास्यां शिरसांस्रजासुरुचिरामुन्मुक्तकेशावलिम् ॥
सृक्कद्वयसृक्प्रवहांश्मशाननिलयां श्रुत्योः शवालंकृतिं
श्यामांगीं कृतमेखलां शवकरैर्देवीं भजे कालिकाम् ॥ ९ ॥

ध्यान : दक्षिण कालिका देवी कराल मुखवाली हैं। उनके केश खुले हुए हैं। गले में मुण्डमाला है। उनके ४ भुजाएँ हैं। बाएँ निचले हाथ में तुरन्त कटा मुण्ड है तथा ऊपरी हाथ में अभय मुद्रा है। दायें निचले हाथ में वरद मुद्रा तथा ऊपरी हाथ में खड्ग है। उनके होठों के किनारों से रक्त चू रहा है। कानों में दो शव शिशु आभूषण के रूप में लटक रहे हैं। कमर में शवहस्त निर्मित करधनी शोभायमान है। उनका श्याम वर्ण है तथा वे सदा श्मशान में रहती हैं—ऐसी दक्षिण कालिका देवी का मैं ध्यान करता हूँ।

एवं ध्यात्वा जपेल्लक्षं जुहुयात्तद्दशांशतः।
प्रसूनैः करवीरोत्थैः पूजायन्त्रमथोच्यते ॥ १० ॥

इस प्रकार ध्यान कर १ लाख जप करना चाहिए, तथा कनेर के फूलों से दशांश होम करना चाहिए। अब उनके पूजायन्त्र को बतलाते हैं।

आदौ षट्कोणमारच्य त्रिकोणत्रितयं ततः।
पद्ममष्टदलं बाह्येभूपुरं तत्र पूजयेत् ॥ ११ ॥

काली पूजन यन्त्र: सर्व प्रथम षड्कोण लिखकर फिर ३ त्रिकोण बनाने चाहिए। इसके बाद अष्ट दल कमल और उसके बाहर भूपुर बनाकर इस यन्त्र पर काली का पूजन करना चाहिए। (देखिये चित्र नं० ३)

सद्यइति। खड्गवरारीदक्षयोः ॥ सद्यश्छिन्नशिरोऽभयेवामयोः ॥ सृक्किणोरोष्ठप्रांतयोरसृजो रुधिरस्यप्रवाहोयस्यास्ताम् ॥ श्रुत्योः कर्णयोःशवालंकारयुताम् ॥ ९--११ ॥

टिप्पणी : यह ३ त्रिकोण वाला यन्त्र काली उपासना में गौड़ माना गया है। मुख्य यन्त्र में ५ त्रिकोणों का उल्लेख किया गया है। मुण्डमाला तन्त्र के अनुसार सर्वप्रथम बिन्दु फिर निजबीज (क्रीं) और भुवनेश्वरी बीज (ह्रीं) लिखे। इसके बाहर त्रिकोण और उसके बाहर ४ और त्रिकोण बनाने चाहिए। फिर वृत्त, अष्टदल कमल और पुनः वृत्त बनाकर अन्त में चतुर्द्वारवाला भूपुर बनाना चाहिए। (देखिये चित्र नं०४)

जयाख्या विजया पश्चादजिता चापराजिता।
नित्याविलासिनी चापि दोग्ध्यघोरा च मंगला ॥१२॥
पीठशक्तय एताः स्युः कालिकायोगपीठतः।
आत्मने हृदयांतोयं मायादिः पीठमन्त्रकः ॥ १३ ॥
अस्मिन्पीठे यजेद्देवीं शवरूपशिवस्थिताम्।
महाकालरतासक्तांशिवाभिर्दिक्षु वेष्टिताम्॥ १४ ॥
अङ्गानि पूर्वमाराध्य षट्पत्रेषु समर्चयेत्।
कालीं कपालिनीं कुल्लां कुरुकुल्लां विरोधिनीम् ॥१५॥
विप्रचित्तां च संपूज्य नवकोणेषु पूजयेत्।
उग्रामुग्रप्रभां दीप्तां नीलां घनबलाकिके ॥ १६ ॥
मात्रां मुद्रां तथामित्रां पूज्याः पत्रेषु मातरः।
पद्मस्याष्टसुपत्रेषु ब्राह्मी नारायणीत्यपि ॥ १७ ॥
माहेश्वरी च चामुण्डा कौमारी चापराजिता।
वाराही नारसिंही च पुनरेतास्तुभूपुरे ॥ १८ ॥
भैरवीं महदाद्यांतांसिंहाद्यां धूम्रपूर्विकाम्।
भीमोन्मत्तादिकां चापि वशीकरणभैरवीम् ॥ १९ ॥
मोहनाद्यां समाराध्य शत्रादीनायुधान्यपि।
एवमाराधिता काली सिद्धा भवति मन्त्रिणाम् ॥ २० ॥

पूजन विधि : जया, विजया, अजिता, अपराजिता, नित्या, विलासिनी, दोग्ध्री, अघोरा एवं मगला—ये पीठ शक्तियाँ होती हैं। 'ह्रीं कालिका योग पीठात्मने नमः' यह पीठमन्त्र है।

इस पीठ पर शवरूपी शिव पर स्थित, महाकाल में आसक्त एवं चारों ओर शिवाओं से घिरी हुई देवी का पूजन करना चाहिए।

पीठमंत्रमाह ॥ आत्मनइति ॥ ह्रींआत्मनेनमइति ॥ १३--१८ ॥ महदाद्यांमहाभैरवीम् ॥ सिंहाद्यांसिंहभैरवीम् ॥ धूम्रपूर्विकांधूम्रभैरवीम् ॥ भीमोन्मत्तादिकांभीमभैरवीमुन्मत्त-भैरवींच ॥ १९ ॥ मोहनाद्यां मोहनभैरवीम् ॥ २० ॥

सर्वप्रथम अंग पूजा कर षडकोण में काली, कपालिनी, कुल्ला, कुरुकुल्ला, विरोधिनी एवं विप्रचित्ता का पूजन कर (३ त्रिकोणों के) ९ कोणों में उग्रा, उग्रप्रभा, दीप्ता, नीला, घना, बलाकिका मात्रा मुद्रा एवं मित्रा का पूजन करना चाहिए। कमल के ८ दलों में ब्राह्मी, नारायणी, माहेश्वरी, चामुण्डा, कौमारी, अपराजिता, वाराही, एवं नारसिंही का पूजन करना चाहिए। भूपुर में महाभैरवी, सिंहभैरवी, धूम्रभैरवी, भीम-भैरवी, उन्मत्त भैरवी वशीकरण भैरवी, एवं मोहन भैरवी का पूजन कर इन्द्र आदि दिक्पाल तथा वज्र आदि आयुधों का पूजन करना चाहिए। इस प्रकार पूजा करने से मान्त्रिक को काली सिद्ध हो जाती है।

टिप्पणी : काली पूजन की पद्धति : श्लोक ९ के अनुरूप भावना से दक्षिण कालिका देवी का ध्यान कर मानस पूजा करनी चाहिए। फिर अर्घ्य स्थापन करना चाहिए, यथा—अपने बाँयी ओर भूमि में 'हूँ' गर्भित त्रिकोण लिखकर, उस पर आधार सहित अर्घ्यपात्र रखकर, उसमें शुद्धजल भरकर, गन्ध आदि डालकर 'ॐ गङ्गे च यमुने चैव०' इत्यादि मन्त्रों से उसमें तीर्थों का आवाहन करना चाहिए। फिर 'यं वह्निमण्डलाय दशकलात्मने नमः' इस मन्त्र से आधार की, 'अं सूर्यमण्डलाय द्वादश-कलात्मने नमः'—इस मन्त्र से शंख की तथा 'उं सोममण्डलाय षोडशकलात्मने नमः'—इस मन्त्र से जल की पूजा करनी चाहिए।

तत्पश्चात् 'ॐ क्रां हृदयायनमः', ॐ क्रीं शिरसे स्वाहा, ॐ क्रूं शिखायै वषट्, ॐ क्रैं कवचाय हुम्'—इन मन्त्रों से क्रमशः आग्नेय, ईशान, नैऋत्य एवं वायव्य कोणों में पूजन कर 'ॐ क्रौं नेत्रत्रयाय वौषट्'—इस मन्त्र से मध्य में तथा 'ॐ क्रः अस्त्राय फट्'—इस मन्त्र से चारों दिशाओं में पूजन करना चाहिए।

फिर मत्स्यमुद्रा से अर्घ्यपात्र को ढँककर १० बार मूलमन्त्र का जपकर धेनुमुद्रा से अमृतीकरण, अस्त्र से संरक्षक कर भूतिनी एवं योनिमुद्रा दिखाकर उस जल में से कुछ जल प्रोक्षणीपात्र में डालकर मूलमन्त्र बोलते हुए उस जल को अपने ऊपर तथा पूजन सामग्री पर छिड़कना चाहिए। इसके बाद पीठ पूजन करना चाहिए।

पीठ पूजा : कर्णिका में 'ॐ आधार शक्तये नमः, ॐ प्रकृत्यै नमः, ॐ कमठाय नमः, ॐ शेषाय नमः, ॐ पृथिव्यै नमः, ॐ सुधाम्बुधये नमः, ॐ मणिद्वीपाय नमः, ॐ चिन्तामणिगृहाय नमः, ॐ श्मशानाय नमः एवं ॐ पारिजाताय नमः'—इन मन्त्रों से पूजन कर कर्णिका के मूल में 'ॐ रत्न वेदिकायै नमः'—इस मन्त्र से पूजनकर कर्णिका के ऊपर 'ॐ मणिपीठाय नमः' इस मन्त्र से पूजन करना चाहिए।

फिर चारों दिशाओं में 'ॐ मुनिभ्यो नमः, ॐ देवेभ्यो नमः, ॐ शिवाभ्यो नमः, ॐ शिवमुण्डेभ्यो नमः, ॐ धर्माय नमः, ॐ ज्ञानाय नमः, ॐ वैराग्याय नमः, ॐ

ऐश्वर्याय नमः, ॐ अधर्माय नमः, ॐ अज्ञानाय नमः, ॐ अवैराग्याय नमः, ॐ अनैश्वर्याय नमः, एवं ह्रीं ज्ञानात्मने नमः—इन मन्त्रों से पूजन करना चाहिए। तदनन्तर केशरों में पूर्व आदि क्रम से 'ॐ जयायै नमः, ॐ विजयायै नमः, ॐ अजितायै नमः, ॐ अपराजितायै नमः, ॐ नित्यायै नमः, ॐ विलासिन्यै नमः, ॐ घोरायै नमः एवं ॐ मंगलायै नमः'— इन मन्त्रों से पूजन कर उसके ऊपर 'ह्रीं कालिका योग पीठात्मने नमः' इस मन्त्र से पूजन करना चाहिए।

पीठ के उत्तर में 'ॐ गुरुभ्यो नमः, ॐ परम गुरुभ्यो नमः, ॐ परापर गुरुभ्यो नमः एवं ॐ परमेष्ठि गुरुभ्यो नमः',इन मन्त्रों से गुरु पूजन कर पुनः दक्षिण कालिका का ध्यान कर पुष्पाञ्जलि लेकर मूलमन्त्र से कल्पित मूर्ति में 'ॐ देवेशि भक्तिसुलभे परिवार-समन्विते। यावत्त्वां पूजयिष्यामि तावत्त्वं सुस्थिरा भव। मूलं दक्षिणे कालिके देवि इहावह २ इहतिष्ठ २ इहसन्निरुद्धस्व इह सन्निहिता भव'—इस मन्त्र से आवाहन करना चाहिए।

फिर 'हुं' से अवगुण्ठन कर अङ्गन्यासमन्त्र से सकलीकरण, धेनुमुद्रा से अमृतीकरण, परमीकरण मुद्रा से परमीकरण करके क्रमशः भूतिनी, आकर्षणी एवं योनि मुद्राएँ दिखाकर प्राणप्रतिष्ठाकर मूलमन्त्र से पाद्य आदि उपचारों द्वारा पूजन करना चाहिए, यथा—'मूलं एतत्पाद्यं दक्षिणकालिकायै नमः'— इस मन्त्र से पाद्य समर्पित कर इसी प्रकार 'अर्घ्यं स्वाहा, इदमाचमनीयं स्वधा, स्नानीयं निवेदयामि, पुनराचमनीयं स्वधा, एष गन्धो नमः, एतानि पुष्पाणि वौषट्'—इन मन्त्रों से पुष्प समर्पण पर्यन्त पूजन करना चाहिए। फिर मूलमन्त्र से ५ पुष्पाञ्जलियाँ प्रदान करनी चाहिए।

तत्पश्चात् 'मूलं एष धूपो नमः' से धूप देकर तथा 'मूलं एष दीपो नमः' से दीपक दिखाना चाहिए। साथ ही 'ॐ जयध्वनि मन्त्रमातः स्वाहा' से घण्टा पूजन कर उसे बायें हाथ से बजाते रहना चाहिए। धूप अधोमुख करके तथा दीपक दृष्टि तक ऊपर उठाकर प्रदान करना चाहिए। फिर मूलमन्त्र से ३ पुष्पाञ्जलियाँ देकर नैवेद्य समर्पित कर आवरण पूजा करनी चाहिए।

आवरण पूजा : 'श्री दक्षिणे कालिके देवि आवरणं ते पूजयामि'—ऐसा बोलकर माँ से आज्ञा लेकर षडङ्गपूजा करनी चाहिए। यथा--आग्नेये-ॐ क्रां हृदयाय नमः, ईशाने-ॐ क्रीं शिरसे स्वाहा, नैर्ऋत्ये-ॐ क्रूं शिखाये वषट्, वायव्ये-ॐ क्रैं कवचाय हुम्, अग्रे-ॐ क्रौं नेत्रत्रयाय वौषट्, चतुर्दिक्षु-ॐ क्रः अस्त्राय फट्' से पूजन कर 'मूलं अमोघ सिद्धि.....प्रथमावरणार्चनम्' बोलकर पुष्पाञ्जलि चढ़ानी चाहिए।

फिर षड्कोण में क्रमशः 'ॐ काल्यैनमः, ॐ कपालिन्यै नमः, ॐ कुल्लायै नमः, ॐ कुरुकुल्लायै नमः, ॐ विरोधिन्यै नमः एवं ॐ विप्र चित्तायै नमः, इन मन्त्रों से पूजन कर 'मूलं अभीष्ट सिद्धि०' बोलकर पुष्पाञ्जलि चढ़ानी चाहिए।

तदनन्तर तीनों त्रिकोणों में से प्रथम त्रिकोण के कोणों में 'ॐ उग्रायै नमः, ॐ उग्रप्रभायै नमः, ॐ दीप्तायै नमः से, द्वितीय त्रिकोण के कोणों में 'ॐ नीलायै नमः, ॐ घनायै नमः, ॐ बलाकायै नमः' से, तथा तृतीय त्रिकोण के कोणों में ॐ मात्रायै नमः, ॐ मुद्रायै नमः, ॐ मित्रायै नमः' से पूजन कर 'मूलं अभीष्टसिद्धि०' बोलकर पुष्पाञ्जलि चढ़ानी चाहिए।

तत्पश्चात् अष्टदल में पूर्व आदि क्रम से 'ॐ ब्राह्म्यै नमः, ॐ नारायण्यै नमः, ॐ माहेश्वर्यै नमः, ॐ चामुण्डायै नमः, ॐ कौमार्यै नमः, ॐ अपराजितायै नमः, ॐ वाराह्यै नमः, एवं ॐ नारसिंह्यै नमः--इन मन्त्रों से पञ्चोपचार से पूजन कर 'मूलं अभीष्ट सिद्धि०' बोलकर पुष्पाञ्जलि चढ़ानी चाहिए।

इसके बाद भूपुर में क्रमशः आठों दिशाओं में ॐ महाभैरव्यै नमः, ॐ सिंह भैरव्यै नमः, ॐ धूम्र भैरव्यै नमः, ॐ भीम भैरव्यै नमः, ॐ उन्मत्त भैरव्यै नमः, ॐ वशीकरण भैरव्यै नमः, ॐ मोहन भैरव्यै नमः एवं ॐ महा भैरव्यै नमः, इन मन्त्रों से भैरवियों का पूजन करें 'मूलं अभीष्टसिद्धि०' बोलकर पुष्पाञ्जलि चढ़ानी चाहिए।

फिर भूपुर के बाहर 'ॐ इन्द्राय नमः, ॐ अग्नये नमः, ॐ यमाय नमः, ॐ निर्ऋतये नमः, ॐ वरुणाय नमः, ॐ वायवे नमः, ॐ सोमाय नमः, ॐ ईशानाय नमः, ॐ ब्रह्मणे नमः एवं ॐ अनन्ताय नमः,इन मन्त्रों से दिक्पालों का पूजन करना चाहिए। इसके बाद दिक्पालों के पास उनके आयुधों का पूजन करना चाहिए, यथा--ॐ वज्राय नमः, ॐ शक्तये नमः, ॐ दण्डाय नमः, ॐ खड्गाय नमः, ॐ पाशाय नमः, ॐ अंकुशाय नमः, ॐ गदायै नमः, त्रिशूलाय नमः, ॐ चक्राय नमः, एवं ॐ पद्माय नमः--इन मन्त्रों से आयुधों का पूजन करना चाहिए। फिर मूल मन्त्र से ३ पुष्पाञ्जलियाँ देकर देवी के दक्षिण भाग में महाकाल भैरव का ध्यान करना चाहिए, यथा--

"महाकालं यजेद् देव्याः दक्षिणे धूम्र वर्णकम्।
बिभ्रतं दण्डखट्वाङ्गौ दंष्ट्रा भीममुखं शिशुम्॥
व्याघ्रचर्मावृतं-कटिं तुन्दिलं रक्तवाससम्।
त्रिनेत्रमूर्ध्वकेशं च मुण्डमालाविभूषितम्॥
जटाभारलसच्चन्द्रखण्डमुग्रं ज्वलन्निभम्॥"

ऐसा ध्यान कर " हूँ क्ष्रौं यां रां लां वां आं क्रीं महाकाल भैरव सर्वविघ्नान् नाशय

नाशय ह्रीं श्रीं फट् स्वाहा''—इस मन्त्र से पाद्य आदि उपचारों से विधिवत उनका पूजन कर ३ वार तर्पण करना चाहिए।

फिर मूलमन्त्र से गन्ध आदि उपचारों से देवी का पूजन कर देवी का ध्यान करते हुए मूलमन्त्र का जप करना चाहिए। काम्यजप में जिह्वा पर कपूर लगा लेना चाहिए।

जप पूरा करने के बाद 'ॐ गुह्यातिगुह्यगोप्त्री त्वं०' मन्त्र से देवी के बायें हाथ में जप समर्पित कर प्रदक्षिणा कर अष्टाङ्ग प्रणाम करते हुए जगन्मङ्गल नामक कवच का पाठ करना चाहिए।

फिर देवी के अङ्गों में आवरण देवताओं को विलीन कर संहार मुद्रा से 'दक्षिणे कालिके देवि क्षमस्व' कहकर विसर्जन करे। और फिर देवी के तेज को पुष्प के साथ अपने हृदय में आरोपित कर निवेदित नैवेद्य का कुछ अंश 'ॐ उच्छिष्टचाण्डालिन्यै नमः' इस मन्त्र से ईशान कोण में प्रदान कर निर्माल्य को मस्तक पर धारण कर बिहार करे।

उक्त मन्त्र के पुरश्चरण में २ लाख जप करना चाहिए। दिन में पवित्र एवं हविष्यान्न खाकर १ लाख जप करना चाहिए। तथा रात्रि में ताम्बूल खाकर शय्या पर बैठकर १ लाख जप करना चाहिए। जप पूरा होने पर दशांश हवन, तर्पण, अभिषेक एवं ब्राह्मण भोजन करा कर अन्त में गुरुदेव को दक्षिणा देकर उनका आशीर्वाद लेना चाहिए।

ततः प्रयोगान्कुर्वीत महाभैरवभाषितान्।
आत्मनोर्थे परस्यार्थेक्षिप्रसिद्धिप्रदायकान् ॥ २१ ॥
स्त्रीणां निन्दां प्रहारं च कौटिल्यं वाप्रियं वचः।
आत्मनोहितमन्विच्छन्कालीभक्तो विवर्जयेत् ॥ २२ ॥

पुरश्चरण द्वारा मन्त्र सिद्ध होने के बाद महाभैरव द्वारा बतलाये गये शीघ्र सिद्धि-दायक काम्य प्रयोगों को अपने या किसी अन्य के लिए करना चाहिए।

स्त्रियों की निन्दा, उनको मारना, उनसे कुटिल व्यवहार करना या अप्रिय बोलना—ये सब बातें अपना हित चाहने वाले काली के भक्त को छोड़ देनी चाहिए।

सुदृशो मदनावा संपश्यन् यःप्रजपेन्मनुम्।
अयुतं सोचिरादेव वाक्पतेः समतामियात् ॥२३॥
दिगम्बरो मुक्तकेशः श्मशानस्थोधियार्मनि।
जपेद्योयुतमेतस्य भवेयुः सर्वकामनाः ॥२४॥

॥ २१-२२ ॥ मदनावांसंभगम् ॥ २३ ॥ अधियार्मनिरात्रौ ॥ २४ ॥

शावं हृदयमारुह्य निर्वासाः प्रेतभूगतः ।
अर्कपुष्पसहस्रेणाभ्यक्तेन स्वीयरेतसा ॥२५॥
देवीं यः पूजयेद्भक्त्या जपन्नेकैकशो मनुम् ।
सोचिरेणैव कालेन धरणीप्रभुतां व्रजेत् ॥२६॥
रजः कीर्णभगं नार्या ध्यायन्योयुतमाजपेत् ।
सकवित्वेन रम्येण जनान्मोहयति ध्रुवम् ॥२७॥
त्रिपंचारे महापीठे शवस्य हृदि संस्थिताम् ।
महाकालेन देवेन मारयुद्धं प्रकुर्वतीम् ॥२८॥
तां ध्यायन्स्मेरवदनां विदधत्सुरतं स्वयम् ।
जपेत्सहस्रमपि यः सशङ्करसमो भवेत् ॥२९॥
अस्थिलोमत्वचायुक्तं मांसं मार्जारमेषयोः ।
उष्ट्रस्य महिषस्यापि बलिं यस्तु समर्पयेत् ॥३०॥
भूताष्टम्योर्मध्यरात्रे वश्याः स्युस्तस्य जंतवः ।
विद्यालक्ष्मीयशः पुत्रैः स चिरं सुखमेधते ॥३१॥
यो हविष्याशनरतो दिवा देवीं स्मरञ्जपेत् ।
नक्तं निधुवनासक्तो लक्षं स स्याद्धरापतिः ॥३२॥
रक्तांभोजैर्हुतैर्मन्त्री धनैर्जयति वित्तपम् ।
बिल्वपत्रैर्भवेद्राज्यं रक्तपुष्पैर्वशीकृतिः ॥३३॥
असृजामहिषादीनां कालिकां यस्तुतर्पयेत् ।
तस्य स्युरचिरादेव करस्थाः सर्वसिद्धयः ॥३४॥
यो लक्षं प्रजपेन्मन्त्रं शवमारुह्य मन्त्रवित् ।

काम्य प्रयोग : सुन्दरी के गुप्तांग को देखते हुए जो साधक १० हजार जप करता है, वह शीघ्र ही वाक्पति (वृहस्पति) के तुल्य हो जाता है । रात्रि में श्मशान में बैठकर दिगम्बर एवं केश खोलकर जो इस मन्त्र का १० हजार जप करता है, उसकी सब कामनाएँ पूरी होती हैं ।

श्मशान में जाकर शव के हृदय पर बैठकर विवस्त्र होकर जो साधक अपने वीर्य से अभ्यक्त आँक के पुष्पों से एक-एक मन्त्र के साथ एक-एक पुष्प द्वारा—इस प्रकार १ हजार पुष्पों से देवी का पूजन करता है, वह शीघ्र ही पृथ्वी का स्वामी (राजा) हो जाता है ।

॥ २५–२७ ॥ त्रिगुणाःपंचाराःकोणायस्येदृशेपीठेमहाकालेनभर्त्रामारयुद्धं सुरतं कुर्वतीम् ॥ २८–३४ ॥

स्त्री के रजाकीर्ण भग का ध्यान करते हुए जो व्यक्ति १० हजार जप करता है, वह अपनी उत्कृष्ट कवित्व शक्ति से लोगों को संमोहित कर देता है।

त्रिगुण एवं पञ्चार कोणवाली पीठ पर शव के वक्ष पर बैठी, अपने भर्ता महाकाल के साथ सुरत में प्रवृत्त, स्मेरमुखी देवी का ध्यान करते हुए जो साधक स्वयं सुरत करते हुए उक्त मन्त्र का १ हजार जप करता है, वह शंकर के समान हो जाता है।

कृष्ण पक्ष की अष्टमी के दिन मध्य रात्रि में मार्जार, भेड़, ऊँट या भैंसा के हड्डी, रोम एवं खाल सहित माँस की जो व्यक्ति बलि देता है, समस्त जन्तु उसके वश में हो जाते हैं।

जो साधक दिन में हविष्यान्न खाकर देवी का स्मरण करता हुआ जप करता है, वह विद्या, लक्ष्मी, यश, पुत्र एवं दीर्घकाल तक सुख प्राप्त करता है।

रात्रि में श्मशान में बैठकर १ लाख जप करने वाला व्यक्ति राजा हो जाता है।

लाल कमल की आहुतियों से व्यक्ति मन्त्री बन जाता है और कुबेर से भी बढ़कर सम्पत्तिशाली हो जाता है। बेलपत्र के होम से राज्य मिलता है तथा लालपुष्पों के हवन से वशीकरण होता है।

भैंसा आदि के रक्त से जो व्यक्ति कालिका का तर्पण करता है, शीघ्र ही समस्त सिद्धियाँ उसके हाथ में आ जाती हैं।

जो मान्त्रिक शव पर बैठकर उक्त मन्त्र का १ लाख जप करता है, उसका मन्त्र सिद्ध हो जाता है तथा शीघ्र ही समस्त मनोकामनाएँ पूरी होती हैं।

तस्य सिद्धोमनुः सद्यः सर्वेप्सितफलप्रदः ॥३५॥
तेनाश्वमेध प्रमुखैर्यागैरिष्टंसु जन्मना।
दत्तं दानं तपस्तप्तमुपास्ते यस्तुकालिकाम् ॥३६॥
ब्रह्मा विष्णुः शिवो गौरी लक्ष्मीर्गणपती रविः।

जो व्यक्ति कालिका की उपासना करता है, वह अश्वमेध आदि यज्ञ, दान एवं तप आदि के फल के समान अपने जीवन को सार्थक बनाता है।

जो व्यक्ति सदैव काली का पूजन करता है, वह ब्रह्मा, विष्णु, शिव, गौरी, लक्ष्मी, गणपति, सूर्य एवं अन्य समस्त देवताओं का स्वयं पूजन कर लेता है।

पूजिताः सकला देवा यःकालीं पूजयेत्सदा ॥३७॥
अथ कालीमन्त्रभेदा उच्यन्ते सिद्धिदायिनः।
मायायुगं कूर्चयुग्मं करशान्तिविधुत्रयम् ॥३८॥

॥ ३५-३७ ॥ कालीमंत्रभेदानाह ॥ मायेति ॥ मायाह्रीं ॥ कूर्च्चह्रूं ॥ करः स्वरूपम् ॥

दक्षिणेकालिके पूर्वबीजानि स्युर्विलोमतः ।
एकविंशतिवर्णात्मा ताराद्यःपूर्ववद्यजिः ॥३९॥
बिल्वमूले शवारूढो वटमूले तथैव च ।
लक्षं मनुमिमं जप्त्वा सर्वसिद्धीश्वरो भवेत् ॥४०॥

काली के अन्य मन्त्र : अब सिद्धिदायक काली मन्त्रों के भेद बतलाते हैं। सर्वप्रथम तार (ॐ) दो माया बीज (ह्रीं) दो कूर्च (हूँ) तीन कर शान्ति विधु (क्रीं) फिर 'दक्षिणे कालिके' और अन्त में विलोम क्रम से उक्त बीज लगाने से २१ अक्षर वाला मन्त्र बनता है। इसका पूजन एवं पुरश्चरण पूर्वोक्त रीति से करना चाहिए।

बिल्ववृक्ष के नीचे, शव पर या वटवृक्ष के नीचे बैठकर इस मन्त्र का ९ लाख जप करने से (साधक) सब सिद्धियों का स्वामी बन जाता है।

टिप्पणी : मन्त्रोद्धार : ॐ ह्रीं ह्रीं हूँ हूँ क्रीं क्रीं क्रीं दक्षिणेकालिके क्रीं क्रीं क्रीं हूँ हूँ ह्रीं ह्रीं।

पूजा एवं पुरश्चरणविधि : इस मन्त्र के न्यास, ध्यान, पूजन एवं पुरश्चरण की विधि पूर्वोक्त मन्त्र के समान है। जप संख्या १ लाख है। तथा इसका जप बिल्ववृक्ष के नीचे, वटवृक्ष के नीचे या शव पर बैठकर करने से व्यक्ति समस्त सिद्धियाँ प्राप्त करता है।

काली कूर्चं चहृल्लेखा दक्षिणेकालिके पठेत् ।
पुनर्बीजत्रयं वह्निवधूर्मन्वक्षरो मनुः ॥४१॥
यजनं पूर्ववत्प्रोक्तमस्य मन्त्रस्य मन्त्रिभिः ।
विशेषान्नृसुरादीनामयमाकर्षणे क्षमः ॥४२॥

चौदह अक्षर का मन्त्र : काली बीज (क्रीं) कूर्च (हूँ) हृल्लेखा (ह्रीं) फिर 'दक्षिणे कालिके' फिर तीनों बीज (क्रीं हूँ ह्रीं) तथा अन्त में वह्निवधू (स्वाहा) लगाने से १४ अक्षर का मन्त्र बनता है।

मन्त्र शास्त्र के आचार्यों ने इस मन्त्र का भी पूजन पुरश्चरण आदि पूर्वोक्त मन्त्र के समान बतलाया है। यह मन्त्र मनुष्य एवं देवताओं को आकर्षित करने का विशेष सामर्थ्य रखता है।

शांतिरी ॥ विधुर्बिन्दुः ॥ क्रीं ॥ उक्तबीजानिव्युत्क्रमेण ॥ स्वरूपमन्यत् ॥ ॐ ह्रींह्रींहूँहूँक्रीं-क्रींक्रींदक्षिणेकालिकेक्रींक्रींक्रींहूँहूँह्रींह्रींमित्येक विंशत्यर्णः ॥ ताराद्यःप्रणवाद्यः ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ ४० ॥ मन्त्रांतरमाह ॥ कालीति कालीक्रीं ॥ कूर्चहूं ॥ हृल्लेखाह्रीं ॥ वह्निवधूःस्वाहा ॥ यथा ॥ क्रींहूंह्रींदक्षिणेकालिकेक्रींहूँह्रींस्वाहेति ॥ चतुर्दशार्णः ॥ ४१--४२ ॥ मन्त्रांतरमाह ॥ कूर्चेति ॥

टिप्पणी :मन्त्रोद्धार : क्रीं हूँ ह्रीं दक्षिणे कालिके क्रीं हूँ ह्रीं स्वाहा ।

कूर्चद्वयं त्रयं काल्या मायायुग्मं तु दक्षिणे ।
कालिके पूर्वबीजानि स्वाहा मन्त्रो वशीकृतौ ॥४३॥

मन्त्रराज : दो कूर्च (हूँ) तीन काली बीज (क्रीं दो माया बीज (ह्रीं) फिर 'दक्षिणे कालिके' फिर उक्त बीज तथा अन्त में स्वाहा लगाने से यह मन्त्र बनता है, जिसका वशीकरण में प्रयोग किया जाता है ।

टिप्पणी : मन्त्रोद्धार : हूँ हूँ क्रीं क्रीं क्रीं ह्रीं ह्रीं दक्षिणे कालिके हूँ हूँ क्रीं क्रीं क्रीं ह्रीं ह्रीं स्वाहा ।

प्रयोग विधि : इस मन्त्र का विनियोग, न्यास, ध्यान, पूजन एवं पुरश्चरण आदि विधि दक्षिणा काली के पूर्वोक्त मन्त्र के समान है । जप संख्या भी १ लाख मानी गयी है । इस मन्त्र का प्रयोग विशेषरूप से वशीकरण के लिए किया जाता है ।

मन्त्रराजे पुनः प्रोक्तं बीजसप्तकमुत्सृजेत् ।
तिथिवर्णो महामन्त्र उपास्तिः पूर्ववन्मता ॥४४॥

महामन्त्र : उक्त मन्त्रराज में से पुनरुक्त ७ बीजों को निकाल देने से १५ अक्षर का महामन्त्र बनता है । इसकी उपासना पूर्वरीति से करनी चाहिए ।

टिप्पणी : मन्त्रोद्धार : हूँ हूँ क्रीं क्रीं क्रीं ह्रीं ह्रीं दक्षिणे कालिके स्वाहा ।

ब्रह्मरेफौ वामनेत्रं चन्द्रारूढं मनुर्मतः ।
एकाक्षरो महाकाल्याः सर्वसिद्धिप्रदायकः ॥४५॥

काली का एकाक्षर मन्त्र : नेत्र (ई) एवं चन्द्र (अनुस्वार) के साथ ब्रह्म एवं रेफ (कूर् = क्र) –यह काली का एकाक्षर मन्त्र समस्त सिद्धियाँ देनेवाला है ।

टिप्पणी : मन्त्रोद्धार : क्रीं

बीजं दीर्घयुतश्चक्री पिनाकी नेत्रसंयुतः ।
क्रोधीशो भगवान्स्वाहा षडर्णोमन्त्र ईरितः ॥४६॥

षड्क्षर मन्त्र : बीज (क्रीं) दीर्घयुत चक्री (का) नेत्रयुत पिनाकी (लि) भग सहित क्रोधीश (के) तथा अन्त में स्वाहा लगाने से ६ अक्षर वाला मन्त्र बतलाया गया है ।

टिप्पणी : मन्त्रोद्धार : क्रीं कालिके स्वाहा ।

कूर्चंहूं २ ॥ क्रीं ३ ॥ ह्रीं २ ॥ दक्षिणेकालिके पुनर्बीजानिस्वाहेति द्वाविंशत्यर्णः वशीकृतौ । क्षम इतिशेषः ॥ ४३ मन्त्रान्तरमाह । मन्त्रराजेति । क्रीं ३ हूं २ ह्रीं २ दक्षिणेकालिके स्वाहेति पञ्चदशार्णः ॥ ४४ ॥ मन्त्रान्तरम् । ब्रह्मेति । ब्रह्माकः । वामनेत्रई । क्रीं ॥ ४५ ॥ षडर्णमाह । बीजमिति । बीजंक्रीं । दीर्घयुतश्चक्रीका । नेत्रयुतः पिनाकी लि । भगमेकारस्त-

कालीं कूर्चं तथालज्जा त्रिवर्णो मनुरीरितः ।
हुंफडंतश्चपञ्चार्णः स्वाहांतः सप्तवर्णकः ॥४७॥

तीनवर्ण, पंचवर्ण एवं सप्तवर्ण मन्त्र : काली (क्रीं) कूर्च (हूँ) एवं लज्जा (ह्रीं) इन ३ बीजों से तीनवर्ण का मन्त्र कहा गया है ।

इस मन्त्र के अन्त में 'हुं फट्' लगाने से पञ्चवर्ण मन्त्र बन जाता है ।

तथा उक्त मन्त्र मे 'स्वाहा' लगाने से सप्तवर्ण मन्त्र बन जाता है ।

टिप्पणी : इन मन्त्रों का उद्धार :

(i) क्रीं हूँ ह्रीं ।
(ii) क्रीं हूँ ह्रीं हुं फट् ।
(iii) क्रीं हूँ ह्रीं हुं फट् स्वाहा ।

एतेषां पूर्ववत्प्रोक्तं यजनं नारदादिभिः ।
निग्रहानुग्रहे शक्ताः कालीमन्त्राः स्मृता इमे ॥४८॥

इन मन्त्रों का पूजन एवं पुरश्चरण : इन सब मन्त्रों का पूजन एवं पुरश्चरण आदि पूर्वोक्त दक्षिणा काली के मन्त्र के समान है । नारद आदि ऋषियों का यही मत है । ये काली के मन्त्र निग्रह एवं अनुग्रह की सामर्थ्य रखते हैं ।

टिप्पणी : इस तरङ्ग में दक्षिणा काली के कुल १० मन्त्रों का वर्णन किया गया है, जो निम्न लिखित हैं—

(i) *द्वाविंशत्यक्षर मन्त्र :*
क्रीं क्रीं क्रीं हूँ हूँ ह्रीं ह्रीं दक्षिणे कालिके क्रीं क्रीं क्रीं हूँ हूँ ह्रीं ह्रीं स्वाहा ।

(ii) *एकविंशत्यक्षर मन्त्र :*
ॐ ह्रीं ह्रीं हूँ हूँ क्रीं क्रीं क्रीं दक्षिणेकालिके क्रीं क्रीं क्रीं हूँ हूँ ह्रीं ह्रीं ।

(iii) *चतुर्दशाक्षर मन्त्र :*
क्रीं हूँ ह्रीं दक्षिणे कालिके क्रीं हूँ ह्रीं स्वाहा ।

(iv) *द्वाविंशत्यक्षर मन्त्र :*
हूँ हूँ क्रीं क्रीं क्रीं ह्रीं ह्रीं दक्षिणे कालिके हूँ हूँ क्रीं क्रीं क्रीं ह्रीं ह्रीं स्वाहा ।

(v) *पंचदशाक्षर मन्त्र :*
क्रीं क्रीं क्रीं हूँ हूँ ह्रीं ह्रीं दक्षिणे कालिके स्वाहा ।

(vi) *एकाक्षर मन्त्र :* क्रीं

(vii) *त्रिवर्ण मन्त्र :* क्रीं हूँ ह्रीं

श्रुतः क्रमशः के । क्रीं कालिकेस्वाहेति ॥ ४६ ॥ मन्त्रान्तरम् ॥ कालीति । क्रीं हूं ह्रीं । क्रींहूंह्रींहुं फडिति पञ्चार्णः । क्रींहूंह्रींहुंफट् स्वाहेति सप्तार्णः ॥ ४७ ॥ ४८ ॥ सुमुखीं वक्तुं

(viii) *पञ्चाक्षर मन्त्र* : क्रीं हूँ ह्रीं हुं फट्

(ix) *षडक्षर मन्त्र* : क्रीं कालिके स्वाहा ।

(x) *सप्ताक्षर मन्त्र* : क्रीं हूँ ह्रीं फट् स्वाहा ।

इन समस्त मन्त्रों के ऋषि भैरव हैं । प्रारम्भ के ५ मन्त्रों का छन्द उष्णिक् तथा शेष का विराट् छन्द है । समस्त मन्त्रों की देवता दक्षिणा काली हैं । इसके अनुसार विनियोग तथा ऋष्यादि न्यास कर लेना चाहिए ।

इन सब मन्त्रों का कर एवं अङ्गन्यास निम्न लिखित होता है—

ॐ क्रां अंगुष्ठाभ्यां नमः । हृदयाय नमः ।
ॐ क्रीं तर्जनीभ्यां नमः । शिरसे स्वाहा ।
ॐ क्रूं मध्यमाभ्यां नमः । शिखायै वषट् ।
ॐ क्रैं अनामिकाभ्यां नमः । कवचाय हुम् ।
ॐ क्रौं कनिष्ठकाभ्यां नमः । नेत्रत्रयाय वौषट् ।
ॐ क्रः करतल कर पृष्ठाभ्यां नमः । अस्त्राय फट् ।

इन सब मन्त्रों का ध्यान निम्नलिखित है—

"सद्यश्छिन्नशिरः कृपाणमभयं हस्तैर्वरं बिभ्रतीं,
घोरास्यां शिरसांस्रजासुरुचिरामुन्मुक्तकेशावलिम् ।
सृक्वयसृक् प्रवहां श्मशाननिलयां श्रूत्योः शवालंकृतिं,
श्यामाङ्गीं कृतमेखलां शवकरैर्देवीं भजे कालिकाम् ।।"

उक्त सभी मन्त्रों की पूजा विधि, पुरश्चरण विधि एवं जपसंख्या दक्षिणकालिका के पूर्वोक्त मन्त्र के समान है ।

अथ वक्ष्ये परां विद्यां सुमुखीमतिगोपिताम् ।
यां लब्ध्वा देशिको विद्वान्नशोचति कृताकृते ॥४९॥

कर्णोद्युतिः सनयना श्वेतेशः स्याज्जरासनः ।
लक्ष्मीर्दीर्घदुसंयुक्ता नंदीदीर्घः सदृक्क्रिया ॥५०॥

मेषः समाधवः कर्णो भृगुस्तंद्री च संधिका ।
खिदेविमवियद्दीर्घं पिशाचिनि हिमाद्रिजा ॥ ५१॥

नन्दजत्रितयं सर्गिद्वाविंशत्यक्षरोमनुः ।

प्रतिजानीते । अथेति ॥ ४९ । मन्त्रमुद्धरति । कर्णइति । कर्णउ । सनयनाद्युतिः इयुतश्छः च्छिः । जरासनः श्वेतशः । टकारस्थः षः ष्टः । लक्ष्मीश्चः । दीर्घेन्दु संयुक्ता आबिन्दुयुता चां ॥ दीर्घोनन्दीडा । सदृक्क्रिया इयुतोलः लि । समाधवोमेषः इयुतोनः नि । कर्णोभृगुः सः उयुतः सु । संधिकातन्द्रीमः उयुतोमु । खिदेविम । स्वरूपं दीर्घं वियत् । हा पिशा-

सुमुखी का मन्त्र : अब मैं अत्यन्त गोपनीय पराविद्या सुमुखी के बारे में बतलाता हूँ, जिसे प्राप्त कर विद्वान् कर्म एवं अकर्म के बारे में नहीं सोचता ।

कर्ण (उ) सनयना द्युति (च्छि) जरासन श्वेतेश (ष्ट) दीर्घेन्दुसंयुक्ता लक्ष्मी (चां) दीर्घनन्दी (डा) सट्क् क्रिया (लि) समाधवमेष (नि) कर्णो भृगु (सु) सेंधिका तन्द्री (मु) फिर 'खिदेवि म' फिर दीर्घ वियद् (हा) फिर 'पिशाचिनि' फिर हिमाद्रिजा (ह्रीं) और अन्त में विसर्ग सहित नन्दजत्रितय (ठः ठः ठः) लगाने से २२ अक्षर का मन्त्र बनता है ।

टिप्पणी : मन्त्रोद्धार : उच्छिष्ट चांडालिनि सुमुखिदेवि महापिशाचिनि ह्रीं ठः ठः ठः

स्मृता भैरवगायत्री सुमुखीमुनिपूर्विका ॥५२॥
मुनिरामद्विषट्चंद्रेवह्नयर्णैरंगकंमनोः ॥
विन्यस्य सुमुखीं ध्यायेद्भक्तचित्तांबुजस्थिताम् ।५३ ॥

विनियोग एवं न्यास : इस मन्त्र का भैरव ऋषि, गायत्री छन्द तथा सुमुखी देवता है । मन्त्र के ७, ३, २, ६, १ एवं ३ अक्षरों से षडङ्गन्यास कर भक्तों के हृदय कमल पर विराजमान सुमुखी देवी का ध्यान करना चाहिए ।

टिप्पणी : विनियोग : ॐ अस्य सुमुखी मन्त्रस्य भैरवऋषिर्गायत्री छन्दः सुमुखी देवता ममाभीष्ट सिद्धये जपे विनियोगः ।

षडङ्गन्यास :

ॐ उच्छिष्ट चांडालिनि हृदयाय नमः ।
ॐ सुमुखि शिरसे स्वाहा ।
ॐ देवि शिखायै वषट् ।
ॐ महापिशाचिनि कवचाय हुम् ।
ॐ ह्रीं नेत्रत्रयाय वौषट् ।
ॐ ठः ठः ठः अस्त्राय फट् ।

गुंजानिर्मितहारभूषितकुचां सद्यौवनोल्लासिनीं
हस्ताभ्यां नृकपालखड्गलतिके रम्ये मुदा बिभ्रतीम् ।
रक्तालंकृतिवस्त्रलेपनलसद्देहप्रभां ध्यायतां
नृणां श्रीसुमुखीं शवासनगतां स्युः सर्वदा सम्पदः ॥५४॥

ध्यान : शव पर आसीन, गुञ्जाहार से सुशोभित स्तनों वाली, दाहिने हाथ में

चिनीरवरूपम् । हिमाद्रिजाहीं । सर्गिनंदजत्रितयम् । विसर्गयुक्तठकारत्रयम् । यथा । उच्छिष्टचाण्डालिनिसुमुखिदेविमहापिशाचिनि ह्रीं ठः ठः ठः द्वाविंशत्यर्णः । मुनिपूर्वाः ऋषिच्छन्दो देवताः ॥ ५०-५२ ॥ षडङ्गमाह । मुनीति ॥ ५३-५५ ॥

खड्ग लता तथा बायें हाथ में नर कपाल धारण करने वाली, रक्तवर्ण के आभूषणों से विभूषित, लालवस्त्र, लाल रंग के आलेपन से सुशोभित कमनीय कान्तिवाली, विकसित यौवना सुमुखी देवी ध्यान करने वालों को सदैव सम्पत्ति प्रदान करती हैं।

लक्षमेकं जपेन्मन्त्रं दशांशं किंशुकोद्भवैः।
पुष्पैः समिद्वरर्वापि जुहुयान्मन्त्रसिद्धये ॥५५॥

जप संख्या एवं हव्यपदार्थ : उक्त मन्त्र का १ लाख जप करना चाहिए, तथा मन्त्र सिद्धि के लिए किंशुक पुष्पों या उसकी समिधाओं से दशांश हवन करना चाहिए।

कालीपीठे यजेद्देवीं पञ्चकोणाढ्यकर्णिके। अष्टपत्रेषोडशाब्जेवृत्तेभूपुरसंयुते ॥५६॥

सुमुखी पूजन यन्त्र : पञ्चकोण की कर्णिका, फिर अष्टदल और उसके ऊपर षोडशदल एवं भूपुर सहित यन्त्र में कालीपीठ पर सुमुखी देवी का पूजन करना चाहिए। (देखिये चित्र ५)

मूलेन मूर्तिं संकल्प्य पाद्यादीनि प्रकल्पयेत्।
चन्द्रां चद्राननां चारुमुखीं चामीकरप्रभाम् ॥५७॥
चतुरां पञ्चकोणेषु केसरेष्वङ्गदेवताः।
ब्राह्म्याद्या अष्टपत्रेषु षोडशारे कलादिकाः ॥५८॥
कला कलानिधिः काली कमला च क्रिया कृपा।
कुला कुलीना कल्याणी कुमारी कलभाषिणी ॥५९॥
करालाख्या किशोरी च कोमला कुलभूषणा।
कल्पदा भूपुरे पूज्या इन्द्राद्या हेतयोपि च ॥६०॥

पूजनविधि : मूल मन्त्र से देवी की मूर्ति कल्पित कर पाद्य आदि उपचारों से पूजन कर पञ्चकोणों में चन्द्रा, चन्द्रानना, चारुमुखी, चामीकरप्रभा एवं चतुरा का पूजन करना चाहिए। केसरों में अङ्गपूजन करना चाहिए। अष्टदलों में ब्राह्मी आदि का पूजन कर षोडश दलों में कला, कलानिधि, काली, कमला, क्रिया, कृपा, कुला, कुलीना, कल्याणी, कुमारी, कलभाषिणी, कराला, किशोरी, कोमला, कुलभूषणा एवं कल्पदा का पूजन करना चाहिए। फिर भूपुर में इन्द्र आदि दिक्पाल तथा वज्र आदि आयुधों का पूजन करना चाहिए।

टिप्पणी : *सुमुखीपूजन की पद्धति* : श्लोक ५४ के अनुसार ध्यान कर मानसोपचार से पूजन कर काली पूजन के समान पीठपूजा तथा गुरुपूजा करने के बाद मूल

ध्यानमाह ॥ गुंजेति ॥ एवंविधांसुमुखीं ध्यायतं नृणांसर्वदा संपदः स्युरित्यन्वयः ॥ खड्ग लता दक्षे कपालंवामे ॥ ५४-५५ ॥ कर्णिकायां पञ्चकोणम्। उपर्यष्टपत्रम्। तदुपरि षोडश दलम्। तदुपरिचतुष्कोणमिति पूजायन्त्रम् ॥ ५६-६० ॥

मन्त्र से सुमुखी देवी की मूर्ति कल्पित कर पाद्य, अर्घ्य, आचमन आदि उपचारों से नैवेद्य समर्पण पर्यन्त पूजाकर आवरण पूजा करनी चाहिए।

कर्णिका के ५ कोणों में—ॐ चन्द्रायै नमः, ॐ चन्द्राननायै नमः, ॐ चारुमुख्यै नमः, ॐ चारुकरप्रभायै नमः, ॐ चतुरायै नमः,—इन मन्त्रों से पूजन कर 'अभीष्ट सिद्धि०' बोलते हुए पुष्पाञ्जलि समर्पित करनी चाहिए।

फिर केशरों में अङ्गपूजा करनी चाहिए, यथा—ॐ उच्छिष्ट चांडालिनि हृदयाय नमः—आग्नेये, ॐ सुमुखि शिरसे स्वाहा—ईशाने, ॐ देवि शिखायै वषट्—नैऋत्ये, ॐ महापिशाचिनि कवचाय हुम्—वायव्ये, ॐ ह्रीं नेत्रत्रयाय वौषट्—मध्ये, तथा ॐ ठः ठः ठः अस्त्रायफट्—चतुर्दिक्षु—इन मन्त्रों से उक्त दिशाओं में पूजन कर 'मूलमन्त्र अभीष्ट सिद्धि०' बोलकर पुष्पाञ्जलि समर्पित करनी चाहिए।

फिर अष्टदल में पूर्व आदि दिशाओं में—ॐ ब्राह्म्यै नमः, ॐ नारायण्यै नमः ॐ माहेश्वर्यै नमः, ॐ चामुण्डायै नमः ॐ कमौार्यै नमः, ॐ अपराजितायै नमः, ॐ वाराह्यै नमः एवं ॐ नारसिंह्यै नमः—इन मन्त्रों से पूजन कर 'मूलमन्त्र अभीष्ट सिद्धिं०' बोलकर पुष्पाञ्जलि समर्पित करनी चाहिए।

तत्पश्चात् षोडशदल में यथाक्रमेण—ॐ कलायै नमः, ॐ कलानिधये नमः, ॐ कात्यै नमः, ॐ कमलायै नमः, ॐ क्रियायै नमः, ॐ कृपायै नमः, ॐ कुलायै नमः, ॐ कुलीनायै नमः, ॐ कल्याण्यै नमः, ॐ कुमार्यै नमः, ॐ कल भाषिण्यै नमः, ॐ करालायै नमः, ॐ किशोर्यै नमः, ॐ कोमलायै नमः, ॐ कुलभूषणायै नमः, ॐ कल्पदायै नमः—इन मन्त्रों से पूजन कर 'मूल मन्त्र अभीष्ट सिद्धि०' बोलकर पुष्पाञ्जलि समर्पित करनी चाहिए।

और फिर भूपुर में पूर्व आदि दिशाओं में—ॐ इन्द्राय नमः, ॐ अग्नेये नमः, ॐ यमाय नमः, ॐ निऋतये नमः, ॐ वरुणाय नमः, ॐ वायवे नमः, ॐ सोमाय नमः, ॐ ईशानाय नमः, ॐ ब्रह्मणे नमः, ॐ भूम्यै नमः—इन मन्त्रों से दिक्पालों का पूजन कर उनके पास उनके आयुधों का पूजन करना चाहिए, यथा—ॐ वज्राय नमः, ॐ शक्तये नमः, ॐ दण्डाय नमः, ॐ खड्गाय नमः, ॐ पाशाय नमः, ॐ अंकुशाय नमः, ॐ गदायै नमः, ॐ त्रिशूलाय नमः, ॐ चक्राय नमः, ॐ पद्माय नमः, इन मन्त्रों से आयुधों का पूजन कर 'मूल मन्त्र अभीष्ट०' बोलकर पुष्पाञ्जलि समर्पित करनी चाहिए।

इस प्रकार आवरण पूजा कर मूल मन्त्र से गन्ध आदि उपचारों से देवी का पूजन कर, देवी को समर्पित नैवेद्य खाकर उच्छिष्टमुख से मूलमन्त्र का जप करना चाहिए।

इत्थंजपादिभिः सिद्धे मनौकाम्या निसाधयेत् ।
भुक्त्वौदनमनाचम्य जपेन्मन्त्रमनन्यधीः ॥६१॥
उच्छिष्टो युतमेकं यः स भवेत्संपदां पदम् ।
उच्छिष्टेनैव भक्तेन बलिं दद्यान्निरन्तरम् ॥६२॥
दध्नाभ्यक्तैः प्रजुहुयाल्लक्षं सिद्धार्थतण्डुलैः ।
राजानो मंत्रिणस्तस्य भवंति वशगाःक्षणात् ॥६३॥
शस्त्राणि वशगानि स्युर्हुतान्मार्जारमांसतः ।
धनर्द्धिश्छागमांसेन विद्याप्राप्तिस्तुपायसैः ॥६४॥
मधुपायससंयुक्त स्त्रीरजोयुक्तवाससा ।
होममाचरतःपुसोजनतावशवर्तिनी ॥६५॥
मधुसर्पिर्युतैर्नागवल्लीपत्रैर्महाश्रियः ।
सद्योनिहतमार्जारमांसेन मधुसर्पिषा ॥६६॥
युक्तेनांत्यजकेशाद्यैर्हुतैराकर्षति स्त्रियः ।
मध्वक्तशशमांसेन तत्फलं विद्यया सह ॥६७॥
उन्मत्ततरुभिर्दीप्ते चिताग्नौ जुहुयाच्छदैः ।
कोकिला काकयोर्मन्त्रीमाचरेदचिरादरीन् ॥६८॥
वायसोलूकयोः पत्रैर्होमाद्विद्वेषमेदरीन् ।
गर्भपातः सगर्भाणामुलूकच्छदनैर्भवेत् ॥६९॥
आज्यार्क्तैर्बिल्वपत्रैर्यो मासमेकं सहस्रकम् ।
प्रत्यहं जुहुयात्तेन बंध्यापि लभते सुतम् ॥७०॥
सौभाग्यार्थं दुर्भगाया बन्धूककुसुमैर्नवैः ।
मधुनाक्तैः प्रजुहुयात्स्त्रीणामाकृष्टयेपितैः ॥७१॥
निर्जने सदनेऽरण्ये प्रेतावासे चतुष्पथे ।
बलिं दत्त्वा प्रजपतः सहस्रं चाष्टसंयुतम् ॥७२॥
उच्छिष्टस्य च सा देवी प्रत्यक्षा जायतेचिरात् ।
यत्र नोक्ता होमसंख्यायुतं तत्र विनिर्दिशेत् ॥७३॥

काम्यप्रयोग : इस जप, पुरश्चरण आदि से मन्त्र सिद्ध हो जाने पर काम्यप्रयोग करने चाहिए । ओदन (भात) खाकर आचमन किये बिना एकाग्रचित्त से जो व्यक्ति

प्रयोगानाह ॥ भुक्त्वेति ॥ ६१–६७ ॥ उन्मत्तौधत्तूरः ॥ छदैःपत्रैः ॥ ६८–७२ ॥ उच्छिष्टस्यबलिंदत्त्वेतिपूर्वेणान्वयः ॥ ७३ ॥

उक्त मन्त्र का उच्छिष्ट होकर १० हजार जप करता है, वह समस्त सम्पत्ति प्राप्त करता है।

उच्छिष्ट द्रव्य से निरन्तर बलि देनी चाहिए। (जो व्यक्ति) भात में दही मिलाकर उससे १ लाख आहुतियाँ देता है, राजा एवं मन्त्री आदि तत्काल उसके वश में हो जाते हैं।

मार्जार के मांस से होम करने से व्यक्ति शास्त्रों में पारङ्गत हो जाता है। छाग-मांस के होम से धन की वृद्धि होती है तथा पायस (खीर) के होम से विद्या मिलती है। रजस्वला के वस्त्र के टुकड़ों को मधु एवं पायस के साथ मिलाकर होम करने वाला व्यक्ति जनता (लोक) को वश में कर लेता है। मधु, घी एवं नागवल्ली (पान) के हवन से श्री वृद्धि होती है। तत्काल मारे गये मार्जार के मांस में मधु, घी एवं अन्त्यज के केश मिलाकर उससे होम करने से स्त्री आकर्षित होती है। मधु सहित शश-मांस के होम से भी उक्त फल मिलता है।

उन्मत्त (धतूरे) की लकड़ी से प्रज्वलित चिता की अग्नि में कोकिल एवं काक के पंखों का हवन करने से मान्त्रिक तुरन्त शत्रुओं को वश में कर लेता है। काक एवं उल्लू के पंखों के हवन से शत्रुओं में विद्वेष फैलता है। उल्लू के पंखों के होम से गर्भिणियों का गर्भपात हो जाता है।

घी मिलाकर बेलपत्रों की प्रतिदिन १ हजार आहुतियाँ देने से १ मास में वन्ध्या स्त्री भी पुत्र प्राप्त कर लेती है।

मधु सहित लाल बन्धूक (बेर) के पुष्पों के हवन से भाग्यहीन स्त्री सौभाग्यवती होती है।

निर्जन मकान, वन, श्मशान एवं चौराहे पर देवी को बलि समर्पित कर उच्छिष्ट होकर उक्त मन्त्र का १००८ जप करने से सुमुखी देवी तुरन्त प्रत्यक्ष होकर साधक पर कृपा करती हैं।

पूर्वोक्त द्रव्यों के होम में जहाँ आहुतियों की संख्या का निर्देश नहीं किया गया, वहाँ १० हजार आहुतियाँ देने का विधान निर्दिष्ट है।

टिप्पणी : हवनविधि : स्थण्डिल में चतुरस्र मण्डल बनाकर उसे मण्डल के मध्य में मूल मन्त्र से देवी की पूजा कर 'मूलमन्त्र मण्डलाय नमः' इस मन्त्र से मण्डल की पूजा करनी चाहिए।

फिर प्रथम तरङ्ग में बतलायी गयी विधि के अनुसार अग्निस्वरूपा देवी का ध्यान कर यथोक्त द्रव्यों से हवन करना चाहिए।

वाममार्गेण सुमुखी शीघ्रं कामविधायिनी ।
भोजनान्ते तथोच्छिष्टैर्जप्या सा स्वेष्टसिद्धये ॥७४॥
न शीघ्रफलदा देवी सुमुखीसदृशी परा ।
यस्यामन्त्रजपादेव प्रसिध्यन्ति मनोरथाः ॥७५॥

वाममार्ग की रीति से उपासना करने से सुमुखी शीघ्र ही समस्त मनोकामनाओं को पूर्ण करती है ।

अपने अभीष्ट की सिद्धि के लिए भोजन के बाद उच्छिष्ट मुख से ही इसके मन्त्र का जप करना चाहिए ।

सुमुखी देवी के समान शीघ्र फलदायक कोई अन्य विद्या नहीं है । इसके मन्त्र के जपमात्र से मनोरथ सिद्ध होते हैं ।

इति श्री शुकदेव चतुर्वेदि विरचितायां सटिप्पण्यां मन्त्रमहोदधेः
मोहिनी व्याख्यायां तृतीयस्तरङ्गः

---

७५ ॥ इतिमंत्रमहोदधिव्या नौकायांतृतीयस्तरंग ॥ ३ ॥

चतुर्थ तरङ्ग

कीर्त्यन्ते सिद्धिदातारस्तारायामनवोऽधुना ।
गुरूपदे शाज्ज्ञातैर्यैः कृतार्थाः स्युर्नराभुवि ॥१॥

अब सिद्धिदायक तारा के मन्त्रों को बतलाते हैं जिन्हें गुरु के उपदेश से जानकर मनुष्य इस लोक में कृतार्थ हो जाते हैं ।

आप्यायिनी सरात्रीशा वियदग्नींदुशान्तियुक् ।
हरिः पावक गोविन्दचद्रमोभिरलंकृतः ॥२॥
खमर्धीशशशांकाढ्यमस्त्रंपञ्चाक्षरोमनुः ।
आदिबीजवियुक्तैषा प्रोदितैकजटादिमैः ॥३॥
आद्यंतबीजरहिता प्रोक्ता नीलसरस्वती ।

तारा के मन्त्र : सरात्रीशा आप्यायनी (ॐ) अग्नीन्दुशान्तियुत वियद् (ह्रीं) पावक (र्) गोविन्द (इ) चन्द्रमा (अनुस्वार) के साथ हरि (त) अर्थात्=त्रीं, अर्धीश (उ) एवं शशांक (अनुस्वार) के साथ ख (ह) अर्थात् हुं तथा अन्त में अस्त्र (फट्) लगाने से तारा का पञ्चाक्षर मन्त्र बनता है ।

आदि बीज (ॐ) से रहित इस विद्या को पूर्वाचार्यों ने एकजटा कहा है ।

आदि बीज (ॐ) तथा अन्त बीज (फट्) से रहित यह विद्या नील सरस्वती कहलाती है ।

टिप्पणी : तारा मन्त्रोद्धार : ॐ ह्रीं त्रीं हुं फट्

तारांवक्ष्यमुपक्रमते ॥
कीर्त्यन्तइति ॥ १ ॥ मंत्रमुद्धरति ॥ आप्यायिनीति ॥ सरात्रीशा आप्यायिनी सबिंदुरोंकारः ॐ ॥ अग्नींदु शांतियुग्वियत् रेफबिंदुईयुतोहः ह्रीं ॥ पावकगोविंदचंद्रमोभिरलंकृतोहरिः रेफईबिंदुयुतस्तकारः त्रीं ॥ गोविंदईकारः ॥ २ ॥ अर्धीशशशांकाढ्यंखं ॥ उबिंदुयुतोहः हुं ॥ अस्त्रंफट् ॐ ॥ ह्रींत्रींहुंफडितिपंचार्णः ॥ मंत्रांतरमाह ॥ आदीति ॥ इयमेवविद्या आदिबीजेन ॐकारेणवियुक्तारहितासती आदिमैःपूर्वाचार्यैरेकजटाप्रोदिता--ह्रींत्रींहुंफडिति ॥ ३ ॥ आद्यंत-बीजाभ्यां ॐफड्भ्यांरहितानीलसरस्वतीसैव--ह्रींत्रींहुंइति ॥ सर्वांतुतारा ॥ ४ ॥ द्वितीय

तारार्णव के अनुसार वशिष्ठ ऋषि ने बहुत समय तक इस विद्या की उपासना की, किन्तु उन्हें सिद्धि नहीं मिली। परिणामतः क्रोधित होकर उन्होंने देवी को शाप दे दिया और तब से यह विद्या फल देने में अक्षम हो गयी।

बाद में शान्त होने पर ऋषिप्रवर ने इसका शापोद्धार किया। शापोद्धार करते समय ताराबीज (त्रीं) में सकार का योग कर 'ॐ ह्रीं स्त्रीं हुं फट्' इस विद्या (मन्त्र) से साधना करने का निर्देश दिया। तब से यह विद्या वधू के समान यशस्विनी हो गयी। तथा तारा का यह बीज (स्त्रीं) वधू बीज कहलाने लगा। नीलतन्त्र के अनुसार सप्रणव मायाबीज, वधूबीज, कूर्चबीज, एवं अस्त्र वाला यह (ॐ ह्रीं स्त्रीं हूँ फट्) पञ्चाक्षर दिव्य एवं अतिपवित्र है। यह विद्या साधकों को बुद्धि, ज्ञान, शक्ति, जय एवं श्री देने वाली तथा भय, मोह एवं अपमृत्यु का निवारण करने वाली मानी गयी है।

महोदधिकार श्री महीधर के अनुसार तारा के मन्त्र निम्नलिखित हैं—

तारा का मन्त्र : ॐ ह्रीं त्रीं हुँ फट्।

एकजटा का मन्त्र: ह्रीं त्रीं हुँ फट्।

नील सरस्वती का मन्त्रः ह्रीं त्रीं हुम्।

किन्तु एकवीराकल्प विश्वसार तन्त्र तथा नीलतन्त्र आदि ग्रन्थों में उक्त मन्त्रों में तारा बीज (त्रीं) के स्थान पर वधू बीज (स्त्रीं) का ग्रहण किया गया है।

तारा सर्वा मनोरस्य मुनिरक्षोभ्यसंज्ञकः ॥४॥
छन्दस्तुबृहती तारा देवता परिकीर्तिता।
द्वितीयतुर्ये क्रमतो बीजंशक्तिश्चसिद्धिदे ॥५॥
यद्वा क्रोधो बीजमुक्तमस्त्रं शक्तिरुदाहृता।
षड्दोर्घयुग्द्वितीयेन षडंगविधिरीरितः ॥६॥

विनियोग एवं षडङ्गन्यास : तारा के उक्त सब मन्त्रों के अक्षोभ्यऋषि हैं, बृहती छन्द है, तारा देवता है तथा (पंचाक्षर मन्त्र के) द्वितीय एवं चतुर्थव र्ण (ह्रीं तथा हुं) को सिद्धिदायक बीज एवं शक्ति माना गया है। अथवा कुछ आचार्य क्रोध (हुँ) के बीज तथा अस्त्र (फट्) को शक्ति मानते हैं।

षड् दीर्घयुक्त द्वितीय वर्ण से षडङ्गन्यास की विधि बतलायी गयी है।

टिप्पणी : विनियोग : अस्य श्रीतारामन्त्रस्य अक्षोभ्यऋषिः बृहती छन्दः तारा-देवता ह्रीं बीजं हुँ शक्तिः (स्त्रीं कीलकं) ममाभीष्टसिद्धये जपे विनियोगः।

यह देवी उग्र आपत्ति से उद्धार करने के कारण उग्रतारा कहलाती है। यह राजद्वार, राजसभा, राजकार्य, विवाद, संग्राम एवं द्यूत आदि में साधक को विजय दिलाती

तुर्येहींहुमिति क्रमाद्बीजंशक्तिश्च ॥ ५ ॥ षडंगमाह ॥ तत्रेति ॥ ह्रींहुमित्यादि ॥ ६ ॥

है। अतः इस प्रकार के प्रयोगों में इन मन्त्रों का विनियोग करते समय 'हुँ' बीज तथा 'फट्' शक्ति माने गये हैं। वीरतन्त्र के अनुसार ये बीजशक्ति चतुर्वर्गफल प्राप्ति के लिए भी विनियुक्त होते हैं।

ऋष्यादिन्यास : ॐ अक्षोभ्यऋषये नमः शिरसि।
ॐ बृहतीछन्दसे नमः मुखे।
ॐ तारादेवतायै नमः हृदि।
ॐ ह्रीं (हूँ) बीजाय नमः गुह्ये।
ॐ हुं (फट्) शक्तये नमः पादयोः।
ॐ स्त्रीं कीलकाय नमः सर्वाङ्गे।

कराङ्गन्यास : ॐ ह्रां अंगुष्ठाभ्यां नमः। हृदयाय नमः।
ॐ ह्रीं तर्जनीभ्यां नमः। शिरसे स्वाहा।
ॐ ह्रूं मध्यमाभ्यां नमः। शिखायै वषट्।
ॐ ह्रैं अनामिकाभ्यां नमः। कवचाय हुम्।
ॐ ह्रौं कनिष्ठकाभ्यां नमः। नेत्रत्रयाय वौषट्।
ॐ ह्रः करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः। अस्त्राय फट्।

सिद्धसारस्वत तन्त्र के अनुसार एकजटा तथा नील सरस्वती के पक्ष में इस प्रकार न्यास करना चाहिए—

एकजटा के पक्ष में न्यास :

ह्रां एकजटायै अंगुष्ठाभ्यां नमः। हृदयाय नमः।
ह्रीं तारिण्यै तर्जनीभ्यां नमः। शिरसे स्वाहा।
ह्रूं वज्रोदके मध्यमाभ्यां नमः। शिखायै वषट्।
ह्रैं उग्रजटे अनामिकाभ्यां नमः। कवचाय हुम्।
ह्रौं महाप्रतिसरे कनिष्ठाभ्यां नमः। नेत्रत्रयाय वौषट्।
ह्रः पिङ्गोग्रैकजटे करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः। अस्त्राय फट्।

नील सरस्वती के पक्ष में न्यास :

ह्रां अखिलवाग्रूपिण्यै अंगुष्ठाभ्यां नमः। हृदयाय नमः।
ह्रीं " तर्जनीभ्यां नमः। शिरसे स्वाहा।
ह्रूं " मध्यमाभ्यां नमः। शिखायै वषट्।
ह्रैं " अनामिकाभ्यां नमः। कवचाय हुम्।
ह्रौं " कनिष्ठाभ्यां नमः। नेत्रत्रयाय वौषट्।
ह्रः " करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः। अस्त्राय फट्।

वीरतन्त्र के अनुसार कराङ्गन्यास करने से पूर्व कालीतन्त्रोक्त वर्णन्यास (देखिये तृतीय तरङ्ग) कर लेना चाहिए, क्योंकि काली का जो रूप है, वही नीला या नीलसरस्वती का भी है। अतः नीला की उपासना में वर्णन्यास करना आवश्यक है।

षोढान्यासं ततः कुर्याद्देवताभाव सिद्धये।
देयं भक्ताय शिष्याय न देयं तु दुरात्मने ॥७॥
श्रीकण्ठादीन्यसेद्रुद्रान्मातृकावर्णपूर्वकान्।
मातृकोक्तस्थले मायातृतीयक्रोधपूर्वकान् ॥८॥
चतुर्थीनमसायुक्तान्प्रथमोन्यास ईरितः।
शवपीठ समासीनां नीलकान्ति त्रिलोचनाम् ॥९॥
अर्द्धेन्दुशेखरां नानाभूषणाढ्यां स्मरन्न्यसेत्।

षोढान्यास : इसके बाद देवत्व भाव की सिद्धि के लिए षोढान्यास करना चाहिए। इस न्यास की विधि अपने भक्त शिष्य को बतलानी चाहिए। दुष्ट व्यक्ति को यह कभी भी नहीं बतलानी चाहिए।

मायाबीज (ह्रीं) तृतीयबीज (त्रीं या स्त्रीं) तथा क्रोधबीज (हुँ) को आगे लगाकर फिर मातृकावर्णों (अं आं इं ई····इत्यादि) को क्रमशः लगाकर फिर चतुर्थ्यन्त श्रीकण्ठ आदि रुद्रों का तथा अन्त में 'नमः' लगाकर मातृकान्यास के स्थानों में न्यास करना चाहिए। यह प्रथम न्यास कहलाता है।

शवासन पर बैठी हुई, नीलवर्णा, तीननेत्रवाली, चन्द्रकला से सुशोभित उत्तमाङ्ग-वाली तथा विविध आभूषणों को धारण करने वाली देवी का स्मरण करते हुए न्यास करना चाहिए।

टिप्पणी : १. रुद्रन्यास, २. ग्रहन्यास, ३. लोकपालन्यास, ४. शिवशक्तिन्यास, ५. तारादिन्यास तथा ६. पीठन्यास—इन छः प्रकार के न्यासों को षोढान्यास कहते हैं। तारार्णव के अनुसार फल की कामना रखने वाले साधक को तारा का षोढान्यास करना आवश्यक है। यह न्यास तन्त्रशास्त्र में अतिगोपनीय तथा चमत्कृत फलदायक माना गया है।

रुद्रन्यास विधि : रुद्रन्यास करते समय निम्न प्रकार से देवी का ध्यान करते हुए न्यास करना चाहिए—

"नीलवर्णां त्रिनयनां शवासनसमायुताम्।
विभ्रतीं विविधां भूषामर्धेन्दुशेखरां वराम् ॥"

'तारा देवी का नीलवर्ण है, उसके तीन नेत्र हैं, वह शवासन पर विराजमान है, विविध अलङ्कारों से विभूषित है तथा चन्द्रकला से सुशोभित है'—ऐसी देवी का ध्यान करते हुए निम्न रीति से न्यास करना चाहिए, यथा—

ह्रीं त्रीं (स्त्रीं) हूँ अं श्रीकण्ठेशाय नमः ललाटे ।
,, ,, ,, आं अनन्तेशाय नमः मुखवृत्ते ।
,, ,, ,, इं सूक्ष्मेशाय नमः दक्षनेत्रे ।
,, ,, ,, ईं त्रिमूर्तीशाय नमः वामनेत्रे ।
,, ,, ,, उं अमरेशाय ,, दक्षकर्णे ।
,, ,, ,, ऊं अर्घीशाय ,, वामकर्णे ।
,, ,, ,, ऋं भारभूतीशाय ,, दक्षनासायाम् ।
,, ,, ,, ॠं अतिश्रीशाय ,, वामनासायाम् ।
,, ,, ,, ऌं स्थाणूकेशाय ,, दक्षगण्डे ।
,, ,, ,, ॡं हरेशाय ,, वामगण्डे ।
,, ,, ,, एं झिण्टीशाय ,, ऊर्ध्वोष्ठे ।
,, ,, ,, ऐं भौतिकेशाय ,, अधरोष्ठे ।
,, ,, ,, ओं सद्योजाताय ,, ऊर्ध्वदन्तपंक्तौ ।
,, ,, ,, औं अनुग्रहेशाय ,, अधोदन्तपक्तौ ।
,, ,, ,, अं अक्रूरेशाय ,, ब्रह्मरन्ध्रे ।
,, ,, ,, अः महासनेशाय ,, मुखे ।
,, ,, ,, कं क्रोधीशाय ,, दक्षबाहु मूले ।
,, ,, ,, खं चण्डेशाय ,, दक्षकूर्परे ।
,, ,, ,, गं पञ्चान्तकाय ,, दक्षमणिबन्धे ।
,, ,, ,, घं शिवोत्तमेशाय ,, दक्षकरांगुलिमूले ।
,, ,, ,, ङं एकरुद्रेशाय ,, दक्षकरांगुल्यग्रे ।
,, ,, ,, चं कूर्मेशाय ,, वामबाहुमूले ।
,, ,, ,, छं एकनेत्रेशाय ,, वामकूर्परे ।
,, ,, ,, जं चतुराननेशाय ,, वाममणिबन्धे ।
,, ,, ,, झं अजेशाय ,, वामकरांगुलिमूले ।
,, ,, ,, ञं सर्वेशाय ,, वामकरांगुल्यग्रे ।
,, ,, ,, टं सोमेशाय ,, दक्षोरुमूले ।
,, ,, ,, ठं लाङ्गलीशाय ,, दक्षजंघामूले ।
,, ,, ,, डं दारुकेशाय ,, दक्षपादमूलसन्धौ ।
,, ,, ,, ढं अर्धनारीश्वराय ,, दक्षपादांगुलिमूले ।
,, ,, ,, णं उमाकान्तेशाय ,, दक्षपादांगुल्यग्रे ।

ह्रीं त्रीं (स्त्रीं) हूँ तं आषाढीशाय नमः वामोरुमूले ।
,, ,, ,, थं दण्डीशाय ,, वामजंघामूले ।
,, ,, ,, दं अद्रीशाय ,, वामपादमूलसन्धौ ।
,, ,, ,, धं मीनेशाय ,, वामपादांगुलिमूले ।
,, ,, ,, नं मेषेशाय ,, वामपादांगुल्यग्रे ।
,, ,, ,, पं लोहितेशाय ,, दक्षपार्श्वे ।
,, ,, ,, फं शिखीशाय ,, वामपार्श्वे ।
,, ,, ,, बं छगलण्डेशाय ,, पृष्ठे ।
,, ,, ,, भं द्विरण्डेशाय ,, नाभौ ।
,, ,, ,, मं महाकालेशाय ,, उदरे ।
,, ,, ,, यं वालीशाय ,, वक्षे ।
,, ,, ,, रं भुजङ्गेशाय ,, दक्षस्कन्धे ।
,, ,, ,, लं पिनाकीशाय ,, ककुदि ।
,, ,, ,, वं खड्गीशाय ,, वामस्कन्धे ।
,, ,, ,, शं बकेशाय ,, हृदयादिदक्षहस्ते ।
,, ,, ,, षं श्वेतेशाय ,, हृदयादिवामहस्ते ।
,, ,, ,, सं भृग्वीशाय ,, हृदयादिदक्षपादे ।
,, ,, ,, हं नकुलीशाय ,, हृदयादि वामपादे ।
,, ,, ,, लं शिवेशाय ,, हृदयादि उदरे ।
,, ,, ,, क्षं सम्वर्तकेशाय ,, हृदयादिमुखे ।

इति रुद्रान्यसः

द्वितीयन्तु ग्रहन्यासं कुर्यात्तां समनुस्मरन् ॥१०॥
त्रिबीजस्वरपूर्वं तु रक्तं सूर्यंहृदि न्यसेत् ।
तथायवर्गपूर्वं तु सोमं शुक्लं भ्रुवोर्द्वयोः ॥११॥
कवर्गपूर्वं रक्ताभं मंगलं लोचनत्रये ।
चवर्गाढ्यं बुधं श्यामं न्यसेद्वक्षःस्थले बुधः ॥१२॥
टवर्गाढ्यं पीतवर्णं कण्ठकूपे बृहस्पतिम् ।
तवर्गाढ्यं श्वेतवर्णं घण्टिकायां तु भार्गवम् ॥१३॥
नीलवर्णं पवर्गाढ्यं नाभिदेशे शनैश्चरम् ।
शवर्गाढ्यं धूम्रवर्णं ध्यात्वा राहुं मुखे न्यसेत् ॥१४॥
लक्षाढ्यं धूम्रवर्णाभं केतुं नाभौ पुनर्न्यसेत् ।
त्रिबीजपूर्वकश्चैवं ग्रहन्यासः समीरितः ॥१५॥

ग्रहन्यास : उस देवी का स्मरण करते हुए ग्रहन्यास करना चाहिए। यह द्वितीय न्यास है। उक्त तीनों बीजों के साथ स्वर फिर 'रक्तवर्णं सूर्य' बोल कर हृदय में न्यास करना चाहिए। इसी प्रकार यवर्ग के साथ 'शुक्लवर्णं सोमं' बोल कर दोनों भौं में न्यास करना चाहिए। कवर्ग के साथ 'रक्तवर्णं मङ्गलं' बोलकर तीनों नेत्रों में, चवर्ग के साथ 'श्यामवर्णं बुधं' बोलकर वक्षस्थल में, टवर्ग के साथ 'पीतवर्णं बृहस्पतिं' बोलकर कण्ठकूप में, तवर्ग के साथ 'श्वेतवर्णं भार्गवं' बोलकर टेंटुआ में, पवर्ग के साथ 'नीलवर्णं शनैश्चरं' बोलकर नाभि में, शवर्ग के साथ 'धूम्रवर्णं राहुं' बोलकर मुख में तथा लवर्ण के साथ 'धूम्रवर्णं केतुं' बोलकर पुनः नाभि में न्यास करना चाहिए। इस ग्रहन्यास में सब जगह वर्णों के प्रारम्भ में उक्त तीनों बीजों (ह्रीं त्रीं हुं) को लगाकर न्यास करना चाहिए।

टिप्पणी : *ग्रहन्यासविधि* : रुद्रन्यास करने के बाद निम्नलिखित मन्त्रों से क्रमशः हृदय, दोनों भौं, तीनों नेत्र, वक्षस्थल, कण्ठ, घण्टिका (टेंटुआ) नाभि, मुख एवं पुनः नाभि में न्यास करना चाहिए, यथा—

ह्रीं त्रीं (स्त्रीं) हुं अं आं इं ईं उं ऊं ऋं ॠं ऌं ॡं एं ऐं ओं औं अं अः रक्तवर्णं सूर्यं हृदि।
,, ,, ,, ,, यं रं लं वं शुक्लवर्णं सोमं भ्रुवद्वये।
,, ,, ,, ,, कं खं गं घं ङं रक्तवर्णं मंगलं लोचनत्रये।
,, ,, ,, ,, चं छं जं झं ञं श्यामवर्णं बुधं वक्षस्थले।
,, ,, ,, ,, टं ठं डं ढं णं पीतवर्णं बृहस्पतिं कण्ठकूपे।
,, ,, ,, ,, तं थं दं धं नं श्वेतवर्णं भार्गवं घण्टिकायाम्।
,, ,, ,, ,, पं फं बं भं मं नीलवर्णं शनैश्चरं नाभिदेशे।
,, ,, ,, ,, शं षं सं हं धूम्रवर्णं राहुं मुखे।
,, ,, ,, ,, लं क्षं धूम्रवर्णं केतुं नाभौ।

इति ग्रहन्यासः

तृतीयं लोकपालानां न्यासं कुर्यात्प्रयत्नतः।
मायादिबीजत्रितयपूर्वकं सर्वसिद्धये ॥१६॥
स्वमस्तके ललाटादौ दशदिक्ष्वधऊर्ध्वतः।
ह्रस्वदीर्घकादिकाष्टवर्गपूर्वान्दिशाधिपान् ॥१७॥

लोकपालन्यास : लोकपालों के तृतीयन्यास को ध्यान पूर्वककरना चाहिए। सब सिद्धियाँ प्राप्त करने के लिए प्रारम्भ में माया आदि तीनों बीज फिर ह्रस्व दीर्घ स्वर वर्गों के साथ ८ वर्ग एवं दिक्पालों को ललाट से ऊपर नीचे सहित दश दिशाओं में न्यास करना चाहिए।

टिप्पणी : लोकपाल न्यास विधि : षोढान्यास के क्रम में लोकपालों का न्यास तृतीय न्यास है, यह न्यास निम्नलिखित मन्त्रों से अपने ललाट से पूर्व आदि १० दिशाओं में करना चाहिए, यथा—

ह्रीं त्रीं (स्त्रीं) हुं अं इं उं ऋं लृं एं ओं अं ललाटपूर्वे इन्द्राय नमः ।
,, ,, ,, आं ईं ऊं ॠं ॡं ऐं औं अः ललाटाग्नेय्यां अग्नये नमः ।
,, ,, ,, कं खं गं घं ङं ललाट दक्षिणे यमाय नमः ।
,, ,, ,, चं छं जं झं ञं ललाट नैऋत्यां निर्ऋतये नमः ।
,, ,, ,, टं ठं डं ढं णं ललाट पश्चिमायां वरुणाय नमः ।
,, ,, ,, तं थं दं धं नं ललाट वायव्यां वायवे नमः ।
,, ,, ,, पं फं बं भं मं ललाटोत्तरस्यां सोमाय नमः ।
,, ,, ,, यं रं लं वं ललाटैशान्यां ईशानाय नमः ।
,, ,, ,, शं षं सं हं ललाटोर्ध्वायां ब्रह्मणे नमः ।
,, ,, ,, लं क्षं ललाटाधोदिशि अनन्ताय नमः ।

इति लोकपाल न्यासः

शिवशक्त्यभिधन्यासं चतुर्थं तु समाचरेत् ।
त्रिबीजपूर्वकान्यस्येत्षट्शिवाञ्छक्तिसंयुतान् ॥१८॥
आधारादिषु चक्रेषु चक्रस्थाक्षरपूर्वकान् ।
ब्रह्माणं डाकिनीयुक्तं वादिसांतार्णभूषितम् ॥१९॥
मूलाधारे प्रविन्यस्येच्चतुर्दलसमन्विते ।
श्रीविष्णुं राकिनीयुक्तवादिलांतार्णपूर्वकम् ॥२०॥
स्वाधिष्ठानाभिधे चक्रे लिंगस्थे षड्दले न्यसेत् ।
रुद्रं तु लाकिनीयुक्तं डादिफांतार्णपूर्वकम् ॥२१॥
चक्रे दशदले न्यस्येन्नाभिस्थे मणिपूरके ।
ईश्वरं कादिठांतार्णपूर्वकं काकिनीयुतम् ॥२२॥
विन्यसेद्द्वा दशदले हृदयस्थेत्वनाहते ।
सदाशिवं शाकिनीं च षोडशस्वरपूर्वकम् ॥२३॥
कंठस्थे षोडशदले विशुद्धाख्ये प्रविन्यसेत् ।
आज्ञचक्रे परशिवहाकिनीसंयुतं जपेत् ॥२४॥
लक्षार्णपूर्वं भ्रूमध्ये संस्थितेतिमनोहरे ।

शिव शक्तिन्यास : (तदन्तर) शिव शक्ति संज्ञक चतुर्थ न्यास करना चाहिए । पूर्वोक्त तीनों बीजों को प्रारम्भ में लगाकर फिर चक्रस्थवर्ण और फिर अपनी शक्ति

के साथ ६ शिवों का क्रमशः मूलधार आदि ६ चक्रों में न्यास करना चाहिए।

चार दल वाले मूलाधार चक्र पर वकार आदि वर्णों के साथ डाकिनी सहित ब्रह्मा का न्यास करना चाहिए। लिंग स्थान में स्थित ६ दलवाले स्वाधिष्ठानचक्र पर बकार आदि वर्णों के साथ राकिनी सहित विष्णु का न्यास करना चाहिए। नाभि देश में स्थित दशदलवाले मणिपूरकचक्र पर णकार से फकार पर्यन्त वर्ण तथा लाकिनी सहित रुद्र का न्यास करना चाहिए। हृदयस्थ द्वादश दलवाले अनाहत चक्र में क से ठ पर्यन्त वर्ण तथा काकिनी सहित ईश्वर का न्यास करना चाहिए। कण्ठ में स्थित १६ दल-वाले विशुद्ध चक्र पर १६ स्वरों के साथ शाकिनी सहित सदाशिव का न्यास करना चाहिए। और भ्रूमध्य में स्थित दो दलवाले आज्ञाचक्र पर लक्ष वर्णों के साथ हाकिनी सहित परशिव का न्यास करना चाहिए।

टिप्पणी : शिवशक्ति न्यास विधि : मूलाधार से आज्ञाचक्र पर्यन्त ६ चक्रों में उक्त तीनों बीजों के साथ चक्र के वर्ण सहित अपनी शक्ति के साथ ६ शिवों का न्यास करना शिवशक्ति न्यास कहलाता है। यह न्यास इस प्रकार होता है—

ह्रीं त्रीं (स्त्रीं) हुं वं शं षं सं डाकिनी सहित ब्रह्मणे नमः मूलाधारे।
,, ,, ,, बं भं मं यं रं लं राकिनी सहित विष्णवे नमः स्वाधिष्ठाने।
,, ,, ,, डं ढं णं तं थं दं धं नं पं फं लाकिनी सहित रुद्राय नमः मणिपूरके।
,, ,, ,, कं खं गं घं ङं चं छं जं झं ञं टं ठं काकिनी सहिताय ईश्वराय नमः अनाहते।
,, ,, ,, अं आं इं ईं उं ऊं ऋं ॠं ऌं ॡं एं ऐं ओं औं अं अः शाकिनी सहितसदाशिवाय नमः विशुद्धाख्ये।
,, ,, ,, लं (हं) क्षं हाकिनीसहितपरमशिवाय नमः आज्ञाचक्रे।

तारादिपञ्चमं न्यासं कुर्यात्सर्वेष्टसिद्धये ॥२५॥
अष्टौवर्गान्स्वरद्वन्द्व पूर्वकान्बीजसंयुतान्।
पूर्वं प्रयोज्यताराद्यान्यस्तव्या अष्टमूर्तयः ॥२६॥
तारा उग्रा महोग्रापि वज्रा काली सरस्वती।
कामेश्वरी च चामुण्डा इत्यष्टौतारिकाः स्मृताः ॥२७॥
ब्रह्मरन्ध्रे ललाटे च भ्रूमध्ये कण्ठदेशतः।
हृदि नाभौ लिंगमूले मूलाधारे क्रमान्न्यसेत् ॥२८॥

तारादिन्यास : अपने समस्त अभीष्ट की सिद्धि हेतु तारादि संज्ञक पंचम न्यास करना चाहिए। पूर्वोक्त बीजों के बाद दो-दो स्वर सहित आठों वर्ग और

तारा आदि अष्टमूर्तियों का क्रमशः ब्रह्मरन्ध्र, ललाट, भ्रूमध्य, कण्ठ, हृदय, नाभि, लिंगमूल एवं मूलाधार में न्यास करना चाहिए ।

तारा, उग्रा, महोग्रा, वज्रा, काली, सरस्वती, कामेश्वरी तथा चामुण्डा ये आठ ताराएँ बतलायी गयी हैं ।

टिप्पणी : तारादिन्यासविधि : ब्रह्मरन्ध्र से लेकर मूलाधार पर्यन्त अङ्गों में पूर्वोक्त तीन बीज, दो-दो स्वर तथा क्रमश ८ वर्ग एवं ८ ताराओं का न्यास करना— यह तारादि न्यास कहलाता है । यह न्यास इस प्रकार किया जाता है—

ह्रौं त्रीं(स्त्रीं) हुं अं आं कं खं गं घं ङं तारायै नमः ब्रह्मरन्ध्रे ।
,, ,, ,, इं ईं चं छं जं झं ञं उग्रायै नमः ललाटे ।
,, ,, ,, उं ऊं टं ठं डं ढं णं महोग्रायै नमः भ्रूमध्ये ।
,, ,, ,, ऋं ॠं तं थं दं धं नं वज्रायै नमः कण्ठदेशे ।
,, ,, ,, ऌं ॡं पं फं बं भं मं महाकाल्यै नमः हृदि ।
,, ,, ,, एं ऐं यं रं लं वं सरस्वत्यै नमः नाभौ ।
,, ,, ,, ओं औं शं षं सं हं कामेश्वर्यै नमः लिंगमूले ।
,, ,, ,, अं अः लं क्षं चामुण्डायै नमः मूलाधारे ।

इति तारादिन्यासः

षष्ठंन्यासं ततः कुर्यात्पीठाख्यं सर्वसिद्धिदम् ।
आधारे कामरूपाख्यं ह्रस्वबीजार्णपूर्वकम् ॥२९॥
हृदि जालंधरं पीठं दीर्घपूर्वं प्रविन्यसेत् ।
ललाटे पूर्णगिर्याख्यं कवर्गाद्यं न्यसेत्सुधीः ॥३०॥
उड्डियानं चवर्गाद्यं केशसन्धौ प्रविन्यसेत् ।
भ्रुवोर्वाराणसीपीठं टवर्गाद्यं समाहितः ॥३१॥
तवर्गपूर्विकां न्यस्येदवन्तींनयनद्वये ।
पवर्गपूर्वकमायापुरीपीठं मुखे न्यसेत् ॥३२॥
कण्ठे तु मथुरापीठं यवर्गाद्यं प्रविन्यसेत् ।
अयोध्यापीठकं नाभौ शवर्गादिकमुत्तमम् ॥३३॥
कट्योः कांचीपुरीपीठं दशमं तु प्रविन्यसेत् ।
षोढान्यासास्तु तारायाः प्रोक्तास्ते इष्टदायकाः ॥३४॥

पीठन्यास : इसके बाद सर्वसिद्धिदायक पीठसंज्ञक षष्ठन्यास करना चाहिए । आधार में पूर्वोक्त बीजों के साथ ह्रस्व स्वर तथा कामरूप पीठ का न्यास करना चाहिए । हृदय में दीर्घ स्वर एवं जालंधर पीठ का न्यास करना चाहिए । ललाट

में कवर्ग के साथ पूर्णगिरि संज्ञक पीठ का, केशसन्धि में कवर्ग के साथ उड्डियान पीठ का, दोनों भौं में टवर्ग के साथ वाराणसी पीठ का, दोनों नेत्रों में तवर्ग के साथ अवन्ति पीठ का, मुख में पवर्ग के साथ मायापुरी पीठ का, कण्ठ में यवर्ग के साथ मथुरा पीठ का, नाभि में शवर्ग के साथ अयोध्या पीठ का तथा कटि में दशम पीठ कांचीपुरी का न्यास करना चाहिए। तारा के षोढान्यास इस प्रकार बतलाये गये हैं, वे साधक को अभीष्ट फल देते हैं।

टिप्पणी : पीठन्यास विधि :

ह्रीं त्रीं (स्त्रीं) हुम् अं इं उं ऋं लृं एं ओं अं कामरूप पीठाय नमः, आधारे।
,, ,, ,, आं ईं ऊं ॠं ऌं ऐं औं अः जालंधर पीठाय नमः, हृदि।
,, ,, ,, कं खं गं घं ङं पूर्णगिरि पीठाय नमः, ललाटे।
,, ,, ,, चं छं जं झं ञं उड्डियान पीठाय नमः, केशसन्धौ।
,, ,, ,, टं ठं डं ढं णं वाराणसी पीठाय नमः, भ्रुवोः।
,, ,, ,, तं थं दं धं नं अवन्ति पीठाय नमः, नेत्र द्वये।
,, ,, ,, पं फं बं भं मं मायापुरी पीठाय नमः, मुखे।
,, ,, ,, यं रं लं वं मथुरा पीठाय नमः, कण्ठे।
,, ,, ,, शं षं सं हं अयोध्या पीठाय नमः, नाभौ।
,, ,, ,, लं क्षं कांचीपुरी पीठाय नमः कट्योः।

इति पीठन्यासः

श्रीमतीं हृद्येकजटां तारिणीशिरसि न्यसेत्।
वज्रोदकां शिखायां तु उग्रतारां तु वर्मणि ॥३५॥
महापरिसरे नेत्रेपिंगोग्रैकजटेस्त्रके।
षड्दीर्घयुक्तमायाद्या एतान्यस्याः षडंगके ॥३६॥
अगुष्ठादिष्वंगुलीषु पूर्वविन्यस्य यत्नतः।
तर्जनीमध्यमाभ्यांतु कृत्वातालत्रयं ततः ॥३७॥
छोटिकामुद्रया कुर्याद्दिग्बन्धंदेवतां स्मरन्।
विद्यया तारपुटया व्यापकं सप्तधा चरेत्।
उग्रां तारां ततो ध्यायेत्सद्योवाक्सिद्धिदायिनीम् ॥३८॥

षडङ्गन्यास एवं दिग्बन्ध : षड्दीर्घयुक्त माया बीज (ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रैं ह्रौं ह्रः) को क्रमशः आदि में लगाकर हृदय में एकजटा का, शिर में तारिणी का, शिखा में वज्रोदका का, कवच में उग्रतारा का, नेत्रों में महापरिसरा का तथा अस्त्र में पिङ्गोग्रैक जटा का न्यास करना चाहिए।

अंगुष्ठादि अंगुलियों में भी उक्त रीति से न्यास कर तर्जनी एवं मध्यमा से तीन बार ताली बजाकर देवी का स्मरण करते हुए छोटिका मुद्रा से दिग्बन्ध करना चाहिए।

फिर प्रणव से पुटित विद्या (ॐ ह्रीं त्रीं हुम् फट्) द्वारा सात बार व्यापक न्यास करना चाहिए। फिर शीघ्र वाक्सिद्धि देने वाली उग्रतारा का ध्यान करना चाहिए।

टिप्पणी : कराङ्गन्यास विधि :

ह्रां एकजटायै अंगुष्ठाभ्यां नमः। हृदयाय नमः।
ह्रीं तारिण्यै तर्जनीभ्यां स्वाहा। शिरसे स्वाहा।
ह्रूं वज्रोदकायै मध्यमाभ्यां वषट्। शिखायै वषट्।
ह्रैं उग्रजटायै अनामिकाभ्यां हुम्। कवचाय हुम्।
ह्रौं महापरिसरायै कनिष्ठकाभ्यां वौषट्। नेत्र त्रयाय वौषट्।
ह्रः पिङ्गोग्रैकजटायै करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्। अस्त्राय फट्।

विश्वव्यापकवारिमध्यविलसच्छ्वेताम्बुजन्मस्थितां
कर्त्रीखड्गकपालनीलनलिनं राजत्करां नीलभाम्।
कांचीकुण्डलहारकंकणलसत्केयूरमंजीर-
तामाप्तैर्नागवरैर्विभूषिततनूमारक्तनेत्रत्रयाम् ॥३९॥
पिंगोग्रैकजटां लसत्सुरसनां दंष्ट्राकरालाननां
चर्मद्वैपिवरंकटौ विदधतीं श्वेतास्थिपट्टालिकाम्।
अक्षोभ्येण विराजमानशिरसं स्मेराननां भोरुहां तारां
शावहृदासनां हृढकुचामंबांत्रिलौक्याःस्मरेत् ॥४०॥

उग्रतारा का ध्यान : विश्वव्यापक जल के मध्य में श्वेत कमल पर अवस्थित हैं। दाहिने हाथों में खड्ग एवं नील कमल तथा बाँये हाथों में कर्तरिका एवं कपाल (नरमुण्ड) धारण किये हुए हैं। नीलवर्ण जैसी आभामय कान्तिवाली तथा कांची, कुण्डल, हार एवं केयूर आदि आभूषणों से सुशोभित हैं। सुन्दर नागों से विभूषित एवं लाल-लाल तीन नेत्रों से शोभायमान हैं। सिर पर पिंगल वर्ण की एक जटा हैं। चञ्चल जिह्वा है। उनकी दन्तपंक्ति मुख विकराल लगता है। कमर में व्याघ्रचर्म धारण किये हुये हैं। माथे पर श्वेतास्थिपट्टिका धारण किये हैं। शिर पर नागरूप धारी अक्षोभ्य ऋषि विराजमान हैं। अपने भावावेश में हास्य बदन वाली हैं। शव के हृदय पर बैठी हुई, कठोर स्तन वाली एवं तीनों लोकों की स्वामिनी भगवती तारा का स्मरण करना चाहिए।

॥ ३ ॥ ध्यानमाह ॥ विश्वेति ॥ खड्गनीलसरोजेदक्षयोः ॥ कर्त्रीकपालेवामयोः ॥ ३९ ॥ श्वेतोऽस्थिपट्टोऽलिकेललाटेयस्यास्ताम् ॥ अक्षोभ्योमंत्रद्रष्टामुनिस्तेनशोभितस्तकाम् ॥ ४० ॥

एवं ध्यायन्नदन्भक्ष्यमनेर्क दधिमध्वपि ।
मधुमांसं च ताम्बूलं जपेल्लक्षचतुष्टयम् ॥४१॥
दशाशं जुहुयाद्रक्तपद्मैः क्षीराज्यलोलितैः ।
स्थापयित्वा महाशंखं जपस्थाने जपं चरेत् ॥४२॥
नारीं पश्यन्स्पृशन्गच्छन्महानिशिबलिं ददेत् ।
नकार्यः सुभ्रुवां द्वेषो यत्नात्ताः पूजयेत्सदा ॥४३॥
जपे न कालनियमो न स्थितौ सर्वदाजपेत् ।
श्मशाने शून्यसदने देवागारेथनिर्जने ॥४४॥
पर्वते वनमध्ये वा शवमारुह्यमन्त्रवित् ।
समरेशत्रुनिहतं यद्वाषाण्मासिकं शिशुम् ॥४५॥
विद्यां संसाधयेच्छीघ्रं साधितैवं प्रसिध्यति ।

इस प्रकार ध्यान करते हुए हविष्यान्न अथवा दही, मधु, मांस एवं ताम्बूल खाकर ४ लाख जप करना चाहिए । फिर दूध एवं घी मिलाकर रक्त कमलों से दशांश हवन करना चाहिए ।

जप स्थान में महाशंख (कपाल) स्थापित कर जप करना चाहिए । स्त्री को देखते हुए, स्पर्श करते हुए एवं गमन करते हुए निशीथ काल में बलि देनी चाहिए । कभी भी स्त्रियों से द्वेष नहीं करना चाहिए, अपितु सदैव उन्हें प्रसन्न रखने का प्रयत्न करना चाहिए ।

जप में काल का कोई नियम नहीं होता, नहीं किसी स्थिति का नियम होता है । सदैव जप करना चाहिए ।

श्मशान, निर्जन घर, देव मन्दिर, निर्जन स्थान, पर्वत या वन में शव पर बैठ कर साधक को जप करना चाहिए । संग्राम में मारे गये शत्रु या ६ महीने के बालक के शव पर बैठ कर इस विद्या की सिद्धि करनी चाहिए । इस प्रकार साधना करने से यह शीघ्र सिद्ध हो जाती है ।

मेधाप्रज्ञाप्रभाविद्याधीर्धृतिस्मृतिबुद्धयः ॥४६॥
विद्येश्वरीतिसंप्रोक्ताः पीठस्य नवशक्तयः ।
भृगुमन्विन्दुसंयुक्तमेधवर्त्मसरस्वती ॥४७॥
योगपीठात्मने हार्दं पीठस्य मनुरीरितः ॥४८॥

॥ ४१ ॥ महाशंखंकपालम् ॥ ४२-४६ ॥ :पीठमन्त्रमुद्धरति । भृग्विति । भृगुमविन्दुसंयुक्तं सकारः औंबिन्दुयुतम् । मेधवर्त्महः । हार्दंनमः । स्वरूपमन्यत् । स हौंसरस्वतीयोगपीठात्मने इति ॥ ४७-४८ ॥

पीठ शक्ति एवं पीठ मन्त्र : मेधा, प्रज्ञा, प्रभा, विद्या, धी, धृति, स्मृति बुद्धि एवं विद्येश्वरी ये ९ पीठ की शक्तियाँ होती हैं। भृगु (स) अनुस्वार एवं औ सहित ह (हौं) फिर 'सरस्वतीयोगपीठात्मने नमः' यह पीठ का मन्त्र कहा गया है।

टिप्पणी : पीठमन्त्रोद्धार : स हौं सरस्वतीयोगपीठात्मने नमः।

दत्त्वानेनासनं मूर्तिं मूलमन्त्रेण कल्पयेत्।
पूजयेद्विधिवद्देवीं तद्विधानमथोच्यते ॥४९॥

इस मन्त्र से आसन देकर मूलमन्त्र से मूर्ति की कल्पना करनी चाहिए। फिर विधिवत देवी का पूजन करना चाहिए, जिसकी विधि बतलाते हैं।

तारो माया भगं ब्रह्माजटेसूर्यः सदीर्घखम्।
यक्षाधिपतये तंद्रीमोपनीतं बलिं ततः ॥५०॥
गृह्ण युग्मं शिवास्वाहा बलिमन्त्रोयमीरितः।
दद्यान्नित्यबलिं तेन मध्यरात्रे चतुष्पथे ॥५१॥

बलि देने की विधि : तार (ॐ) माया (ह्रीं) भग (ए) ब्रह्मा (क) फिर 'जटे' फिर सूर्य (म) सदीर्घ ख (हा) फिर 'यक्षाधिपतये' इसके बाद तंद्री (म) फिर 'मोपनीतं बलिं' फिर 'गृह्ण गृह्ण' शिवा (ह्रीं) एवं अन्त में स्वाहा—यह बलि मन्त्र कहा गया है।

इस मन्त्र से मध्य रात्रि के समय चौराहे पर प्रतिदिन बलि देनी चाहिए।

टिप्पणी : बलि मन्त्र : ॐ ह्रीं एकजटेमहायक्षाधिपतये ममोपनीतं बलिं गृह्ण गृह्ण ह्रीं स्वाहा।

जलादानादिकं मन्त्रैर्विदध्याद्दशभिस्ततः।
ध्रुवो वज्रोदके वर्मफट्सप्तार्णैर्जलग्रहः ॥५२॥
ताराद्यावह्निजायां तामायांघ्रिक्षालने स्मृता।
तारो माया भृगुः कर्णीविशुद्धधर्मवर्णतः ॥५३॥
सर्वपापानिशाम्याशे श्वेतोनेत्रयुतंजलम्।
कल्पानपनयस्वाहा षड्विंशत्यक्षरोमनुः ॥५४॥

---

४९ ॥ नित्यबलिदानमंत्रमाह ॥ तारइति ॥ तारः प्रणवः ॥ मायाह्रीं ॥ भगमेकारः ॥ ब्रह्माकः ॥ जटेस्वरूपम् ॥ सूर्योमः ॥ सदीर्घखंहा ॥ तंद्रीमः ॥ शिवाह्रीं ॥ स्वरूपमन्यत् ॥ यथा-ॐ ह्रींएकजटे महायक्षाधिपतयेममोपनीतंबलिंगृह्णगृह्णह्रींस्वाहेति ॥ अनेननित्यं-निशीथेबलिंदद्यात् ॥ ५०-५१ ॥ जलग्रहणादिमंत्रानुद्धरति ॥ ध्रुवइति ॥ ॐवज्रोदकेहुंफडि-तिजलग्रहणमंत्रः ॥ ५२ ॥ तारेति ॐह्रीं स्वाहेतिपादक्षालनमंत्रः ॥ तारइति ॥ कर्णीभृगुः उयुतः सः ॥ ५३ ॥ श्वेतः षः ॥ नेत्रयुतंजलमवि ॥ स्वरूपमन्यत् ॥ ॐह्रीं सुविशुद्धधर्म-सर्वपापानिशाम्याशेषविकल्पानपनयस्वाहेत्याचमनमंत्रः ॥ ५४ ॥ ध्रुवइति ॥ अक्षियुतोमृत्युः

अनेनाचमनं कुर्याद् ध्रुवोमणिधरीति च ।
वज्रिण्यक्षियुतो मृत्युः खरिनेत्रयुतारतिः ॥५५ ।
सर्वांते ववकः सेन्दुः करिण्यंतेशिरोऽधिखम ।
अस्त्रवह्निप्रियामन्त्रस्त्रयोविंशतिवर्णवान् ॥५६॥
शिखावन्धं प्रकुर्वीत मन्त्रेणानेन मन्त्रवित् ।
प्रणवो रक्षयुगलं दीर्घवर्मास्त्रठद्वयम् ॥५७॥
नववर्णेन मन्त्रेण कुर्याद्भूमिविशोधनम् ।
तारान्ते सर्वविघ्नानुत्सारयेतिपदं ततः ॥५८॥
हुंफट्स्वाहा गुणेन्द्वर्णोमनुर्विघ्ननिवारणे ।
अनेनविघ्नानुत्सार्य भूतशुद्धिमथाचरेत् ॥५९॥

जल ग्रहण आदि के मन्त्र : इसके बाद जलग्रहण आदि कार्य इन दस मन्त्रों से करने चाहिए ।

ध्रुव (ॐ) 'वज्रोदके' फिर वर्म (हुं) एवं अन्त में फट्, इस सात अक्षर के मन्त्र से जल लेना चाहिए। माया बीज के आदि में तार (ॐ) तथा अन्त में वह्निजाया (स्वाहा) लगाने से पाद प्रक्षालन का मन्त्र बनता है।

तार (ॐ) कर्णीगृगु (मु) फिर 'विशुद्ध धर्म' फिर 'सर्वपापानिशाम्या शे' फिर श्वेत (ष) नेत्रयुत जल (वि) फिर 'कल्मानपनय स्वाहा'—इस २६ अक्षर के मन्त्र से आचमन करना चाहिए ।

ध्रुव (ॐ) 'मणि धरि' फिर अक्षियुत मृत्यु (शि) फिर 'खरि' फिर नेत्रयुता रति (णि) फिर 'सर्व' फिर 'व' तथा सेन्दु वक (शं) तथा 'करिणि' फिर शिर (कं) सेन्दु अधि (हुं) अस्त्र (फट्) तथा अन्त में वह्निप्रिया (स्वाहा) इस २३ अक्षर के मन्त्र से साधक को शिखा बन्धन करना चाहिए।

प्रणव (ॐ) रक्ष युगल (रक्ष रक्ष) दीर्घवर्म (हुं) वर्म (फट्) ठ द्वय (स्वाहा) इस ९ अक्षर के मन्त्र से भूमि शोधन करना चाहिए ।

तार (ॐ) के बाद 'सर्वविघ्नानुत्सारय' फिर 'हुं फट् स्वाहा' इस १३ अक्षर के मन्त्र से विघ्न निवारण कर भूत शुद्धि करनी चाहिए ।

शि ॥ नेत्रयुतारतिः णि ॥ ५५ ॥ वकः शं ॥ शिरः कं ॥ अधि सेंदुः खं ॥ बिंदुयुतोहः हुं ॥ अस्त्रंफट् ॥ वह्निप्रिया स्वाहा ॥ स्वरूपमन्यत् ॥ यथाॐमणिधरिवज्रिणिशिखरिणिसर्ववशंकरिणिकंहुंफट्स्वाहेतिशिखा-बंधनमन्त्रः ॥ ५६ ॥ प्रणवइति ॥ दीर्घवर्महूं ॥ अस्त्रंफट् ॥ ठद्वयंस्वाहा ॥ ॐरक्ष २ हुंफट्स्वाहेतिभूशोधनमन्त्रः ॥ तारोत ॥ ॐसर्वविघ्नानुत्सारयहुंफट्-स्वाहेतिविघ्नवारणमंत्रः ॥ ५७–५९ ॥ भूतशुद्धिमाह ॥ मायेति ॥ ६०–६१ ॥ तुरीयमित ॥

टिप्पणी :

जल ग्रहण मन्त्र : ॐ वज्रोदके हुं फट् ।

पादप्रक्षालन मन्त्र : ॐ ह्रीं स्वाहा ।

आचमन मन्त्र : ॐ ह्रीं सुविशुद्धधर्मसर्वपापानिशाम्याशेष विकल्पान पनय स्वाहा ।

शिखाबन्धन मन्त्र : ॐ मणिधरि वज्रिणिशिखरिणिसर्ववशंकरिणि कं हुं फट् स्वाहा ।

भूमि शोधन मन्त्र : ॐ रक्ष रक्ष हूं फट् स्वाहा ।

विघ्न निवारण मन्त्र : ॐ सर्वविघ्नानुत्सारय हुं फट् स्वाहा ।

मायाबीजं जपापुष्पनिभं नाभौविचिन्तयेत् ।
तदुत्थेनाग्निना देहं दहेत्साद्धं स्वपाप्मना ॥६०॥
तारबीजं सुवर्णाभं चित्तमेद्धृदि मन्त्रवित् ।
पवनेन तदुत्थेन पापभस्म क्षिपेद्भुवि ॥६१॥
तुरीयं चन्द्रकुन्दाभं बीजं ध्यात्वा ललाटतः ।
तदुत्थसुधयादेहंरचयेद्देवतानिभम् ॥६२॥
अन्यथा भूतशुद्धया तु देवीसाट्श्यमाप्नुयात् ।

भूतशुद्धि : जपाकुसुम के समान लाल आभा वाले माया बीज (ह्रीं) का नाभि में ध्यान करना चाहिए । फिर उससे निकलने वाली अग्नि की लपटों में अपने पापों के साथ अपने शरीर को जला देना चाहिए । फिर सोने के समान पीतवर्ण वाले तारा बीज (त्रीं या स्त्रीं) का हृदय में ध्यान करना चाहिए । तथा उससे उत्पन्न वायु द्वारा पापों की भस्मी को निकाल कर भूमि पर फेंक देना चाहिए । तत्पश्चात् चन्द्रमा या कुन्द पुष्प के समान श्वेत आभा वाले तुरीय बीज (हूं) का ललाट देश में ध्यान कर उससे उत्पन्न अमृत द्वारा देवता के समान अपने शरीर की रचना करनी चाहिए।

इस भूत शुद्धि की क्रिया से साधक स्वयं देवी के सदृश हो जाता है ।

टिप्पणी : प्रयोग विधि : साधक अपनी गोद में दोनों हाथों को उत्तान-मुद्रा में रख कर पद्मासन लगाकर एकान्त एवं शान्त भाव से बैठ जाय । फिर 'हंसः' मन्त्र से कुण्डलिनी को जीवात्मा एवं चौबीस तत्वों के साथ सुषुम्ना मार्ग से ऊर्ध्व गति से ले जाकर शिर में स्थित सहस्रार पद्म में परमशिव से उन्हें मिला दे ।

तदनन्तर नाभि में रक्तवर्ण 'ह्रीं' बीज का ध्यान कर १६ बार जप करते हुए पूरक क्रिया द्वारा उस बीज से उत्पन्न अग्नि की लपटों से पाप सहित लिंग शरीर को जला दे ।

हूं ॥ ६२ ॥ तारइति ॥ अर्धांशेन्दुयुक्वियत् ॥ ऊर्बिदुयुतोहःहूं ॥ ॐपवित्रवज्रभूमेहूंस्वाहेति

तत्पश्चात् हृदय में पीत वर्ण 'स्त्रीं' बीज का ध्यान कर ६४ बार जप करते हुए कुम्भक रीति से भस्म को इकट्ठा कर रेचक क्रिया द्वारा उक्त भस्म को बाहर निकाल कर फेंक देना चाहिए।

इसके बाद शिर में शुक्लवर्ण 'हूं' बीज का ध्यान कर ३२ बार जप करते हुए पूरक क्रिया द्वारा उससे उत्पन्न अमृत से आप्लावित कर दिव्य शरीर की रचना करनी चाहिए।

फेत्कारीय तन्त्र में लिखा है कि इस प्रकार भूतशुद्धि कर 'आः' वर्ण को रक्त कमल के समान ध्यान कर, उसके 'टाँ' वर्ण को श्वेतकमल के समान और उसके ऊपर 'हूं' बीज को नील कमल के समान ध्यान कर उसके ऊपर 'हूं' बीज से उत्पन्न बीज भूषित कर्तरिका का ध्यान करना चाहिए। तथा कर्तृका के ऊपर अपनी आत्मा का तारिणी (तारा देवी) के रूप में ध्यान करना चाहिए। फिर 'आं ह्रीं क्रों स्वाहा'—इस मन्त्र का ११ बार जप करते हुए हृदय में प्राण प्रतिष्ठा करनी चाहिए।

इस रीति से साधक स्वयं देवी सदृश हो जाता है।

तारःपवित्रवज्रेतिभूमेर्घीशेन्दुयुग्वियत् ॥६३॥
वह्निप्रियामनुः प्रोक्ता रुद्रार्णो भूमिमन्त्रणे।
तारोनंतोभृगुः कर्णीपद्मनाभयुतोबली ॥६४॥
खेवज्ररेखे क्रोधाख्यं बीजं पावकवल्लभा।
द्वादशार्णेन मन्त्रेण रचयेन्मण्डलं शुभम् ॥६५॥
तारो यथागतानिद्रासदृक्षेकभृगुर्विषम्।
सदोर्घेस्मृतिरौ साक्षो महाकालो भगान्वितः ॥६६॥
क्रोधोस्त्रं मनुवर्णोयं मनुः पुष्पादिशोधने।
तारः पाशपरास्वाहापश्चार्णश्चित्तशोधने ॥६७॥

भूमिमन्त्रण आदि के मन्त्र : तार (ॐ) 'पवित्रवज्र' फिर 'भूमे' फिर अर्घीशेन्दु युत वियद् (हूं) और अन्त में वह्निप्रिया (स्वाहा) लगाने से ११ अक्षर वाला भूमि के अभिमन्त्रण का मन्त्र बनता है।

तार (ॐ) अनंत (आ) कर्णीभृगु (सु) पद्मनाभयुत बली (रे) फिर 'खे वज्रे' फिर

भूमिनिमत्रणमंत्रः ॥ ६३ ॥ तारइति अनंतआ ॥ कर्णीभृगुः ॥ सु ॥ पद्मनाभयुतोबली एयुतोरः रे ॥ क्रोधबीजम् हुं ॥ ॐ आसुरेखेवज्ररेखेहुंस्वाहेतिमंडलमंत्रः ॥ ६४–६५ ॥ तारइति ॥ सदृक्निद्रा इयुतोभः भिः ॥ भृगुःस ॥विषंमः ॥ सदाधैमायुतम् ॥ स्मृतिरौग-काररेफौ सा चौइयुतौग्नि ॥ भगान्वितोमहाकालः एयुतोमः ॥ ६६ ॥ क्रोधोहुं ॥ अस्त्रंफट् ॥ ॐयथागताभिषेकसमाग्निमेहुंफडितिपुष्पशोधनमंत्रः ॥ तारइति ॥ पाशआं ॥ पराहीं ॥ ॐआंह्रींस्वाहेतिचित्तशोधनमंत्रः ॥ ६७ ॥ अर्घ्यस्थापनमाह ॥ सेन्दुभ्यामिति ॥ मांसंलः ॥

क्रोधबीज (हुं) और अन्त में पावक वल्लभा (स्वाहा) लगाने से १२ अक्षर बाला मन्त्र बनता है। इस मन्त्र से मण्डल की रचना करनी चाहिए।

तार (ॐ) 'यथा गता' फिर सदृक्निद्रा (भि) फिर 'पेक' भृगु (स) सदीर्घविष (मा) साक्षि स्मृति (म्नि) भगान्वित महाकाल (मे) क्रोध (हुं) एवं अन्त में अस्त्र (फट्) लगाने से १४ अक्षर वाला पुष्प आदि शोधन का मन्त्र बनता है।

तार (ॐ) पाश (आं) परा (ह्रीं) एवं अन्त में स्वाहा लगाने से ५ अक्षर का चित्त शोधन का मन्त्र बनता है।

इस प्रकार जल ग्रहण आदि के १० मन्त्र बतलाये गये हैं। अब अर्घ्य स्थापन की विधि बतलाते हैं।

टिप्पणी : भूमि अभिमन्त्रण का मन्त्र : ॐ पवित्रवज्रभूमे हुं स्वाहा।
मण्डल बनाने का मन्त्र : ॐ आसुरेखे वज्ररेखे हुं स्वाहा।
पुष्प शोधन का मन्त्र : ॐ यथागताभिषेकसमाप्तिमे हुं फट्।
चित्त शोधन का मन्त्र : ॐ आं ह्रीं स्वाहा।

मनवोदशसं प्रोक्ता अर्घ्यस्थापनमुच्यते।
सेंदुभ्यां मांसतोयाभ्यां भुवंसंमृज्यभूगृहम् ॥ ६८ ॥
वृत्तं त्रिकोणसंयुक्तं कुर्यान्मंडलमन्त्रतः।
यजेत्तत्राधारशक्तिं कच्छपं नागनायकम् ॥ ६९ ॥
आधारं स्थापयेत्तत्तारा द्यस्त्रांगमायया।
वह्निमण्डलमभ्यर्च्य महाशंखं निधापयेत् ॥ ७० ॥
वामकर्णेन्दुयुक्तेन फडंतेन विहायसा।
प्रक्षालितं भृगुंदंडित्रिमूर्तीन्दुयुतं पठन् ॥ ७१ ॥
ततोर्चयेन्महाशंखं जपन्मन्त्रचतुष्टयम्।
दीर्घत्रयान्विता माया कालीसृष्टिःसदीर्घपः ॥ ७२ ॥

तीयंवः ॥६८॥ सबिंदुभ्यामाभ्यांभूमिसंशोध्यपूर्वोक्तेनमडलमंत्रेण,वृत्तत्रिकोण,चतुष्कोणात्मकंमंडलंकुर्यात् ॥ तत्राधारशक्तिंकूर्मशेषान्सपूज्य ॥ ६९ ॥ ॐह्रींफांडांतिमंत्रेणाधर्याधारंस्थापयेत् ॥ संवह्निमंडलायनमइतितत्संपूज्य ॥ ७० ॥ वामकर्णेन्दुयुक्तनउविंदुयुतेनफडंतेनविहायसा हकारण ॥ हुंफडंतिमंत्रेणप्रक्षालितंमहाशंखंनरकपालम् ॥ दंडांत्रमुर्तीदुयुतंथईंयंदुंदुंकभृगुंसकारम् स्थींमितिबीजंपठन् ॥ स्थापयेदित्यन्वयः ॥ ७१ ॥ ततोमंत्रचतुष्टयेनमहाशंखंपूजा ॥ मंत्रचतुष्टयमाह ॥ दीर्घेति ॥ दीर्घत्रयम् ईईऊ ॥ तद्युतामाया सृष्टिःकः ॥ सदीर्घयःया ॥ प्रतिष्ठाआकारस्तद्युतमांसंलः-ला ॥ पवनोयः हृदयनमः ॥ ह्रांह्रींकाहूँलीकपालायनमःइत्येकोमंत्रः ॥ ७२-७३ ॥ हंसइति ॥ हंसः सः ॥ हरिभुजंगो

प्रतिष्ठा संयुतं मांसं पवनो हृदयं ततः ।
एकादशार्णःप्रथमोमहाशंखार्चने मनुः ॥ ७३ ॥
हंसो हरिभुजंगेशयुतो दीर्घत्रयेन्दुयुक् ।
तारिण्यंते कपालायनमोंतो द्वादशाक्षरः ॥ ७४ ॥
खं दीर्घत्रयबिद्वाढ्यं मेषोवामदृगन्वितः ।
लोकपालाय हृदयं तृतीयोयं शिवाक्षरः ॥ ७५ ॥
माया स्त्रीबीजमर्घ्नीन्दुयुतं खं स्वर्गखादिमः ।
पालाय सर्वाधाराय सर्वःसर्वोद्भवस्तथा ॥ ७६ ॥
सर्वशुद्धिमयश्चेतिङेन्ताः सर्वासुरांततः ।
रुधिरारुरतिर्दीर्घावायुः शुभ्रानिलःसुरा ॥ ७७ ॥
भाजनाय भगीसत्यो वीकपालायहृन्मनुः ।
तुर्योरसेषुवर्णोयं महाशंखप्रपूजने ॥ ७८ ॥
तत्रार्कमण्डलं चेज्या सलिलंमूल मन्त्रतः ।
प्रपूरयेत्सुधाबुद्धया गंधपुष्पाक्षतान्क्षिपेत् ॥ ७९ ॥
मुद्रां त्रिखण्डां संदर्श्य पूजयेच्चन्द्रमण्डलम् ।
वाक्शक्तिपद्मागगनंरेफानुग्रहबिन्दुयुक् ॥ ८० ॥

शौतरी ताभ्यांयुतः तथादीर्घत्रयांबिंदुयुतश्च ॥ स्वरूपमन्यत् ॥ स्त्रांस्त्रींस्त्रूँतारिणीकपालाय नम इति द्वितीयः ॥ ७४ ॥ खमिति ॥ खंहः ॥ दीर्घत्रयबिंदुयुतः ॥ वामदृगन्वितोमेषः ईयुतोनः नी ॥ स्वरूपमग्रे ॥ ह्रौंह्रींह्रूंनीलाकपालायनमइतिकृतीयः ॥ ७५ ॥ चतुर्थमाह ॥ मायेति ॥ मायाह्रीं ॥ स्त्रीबीजंस्त्रीं ॥ अर्घ्नीन्दुयुतंखंह्रूं ॥ स्वर्गस्वरूपम् ॥ खादिमः कः ॥ पालायेत्यादिस्वरूपम् ॥ सर्वःसर्वोद्भवःसर्वशुद्धिमयइतिषदद्वयंचतुर्थ्यंतम् ॥ स्वरूपमग्रे ॥ दीर्घारतिः णा ॥ वायुः यः ॥ शुभ्रास्वरूपम् ॥ अनिलोयकारः ॥ सुराभाजनायस्वरूपम् ॥ भगीसत्यः एयुतोदः दे ॥ वीत्यादिस्वरूपम् ॥ हृन्नमः ॥ यथा–ह्रींस्त्रींह्रूंस्वर्गकपालायसर्वाधारायसर्वोद्भवायसर्वशुद्धिमयायसर्वासुररुधिरारुणायशुभ्रायसुराभाजनायदेवीकपालायनमइतिचतुर्थ्यांमंत्रः रसेषुवर्यः षट्पंचाशदक्षरः ॥ एभिमन्त्रैमहाशंखंसंपूज्यअंसूर्यमंडलायनमइत्यर्कमंडलंसंपूज्यमूलमंत्रंपठन्सुधाबुद्धयातोयंसंपूर्यतत्रगंधपुष्पाक्षतान्क्षिपेत् ॥ सुधा सुराक्षेतिरहस्यम् ॥ ७६–७९ ॥ त्रिखंडांमुद्रांबद्धा ॐ सोममंडलायनमइतितोयेचन्द्रमंडलंसंपूज्यकादशार्णमंत्रेणाष्टवारंजलंमंत्रयेत् ॥ त्रिखंडालक्षणंयथा ॥ परिवर्त्यकरौस्पष्टावंगुष्ठौ कास्येत्समौ ॥अनामांतर्गतेकृत्वातर्जन्यौकुटिलाकृती ॥ कनिष्ठिके नियुंजीतनिजस्थानेमहेश्वरि तिखंडेयसमाख्याताप्रिपुराह्वानकर्मणीति ॥ एकादशार्णमाह ॥ वागिति ॥ वाक्ऐं ॥ शक्तिः ह्रीं ॥ पद्माश्रीं॥रेफानुग्रहबिंदुयुक्गगनम् रेफ औंबिंदुयुतोहः ॥ह्रौं मूलमन्त्रः पूर्वोक्तःपंचार्णः॥ हंसमनुसगंसमन्वितंवियत् ॥ सऔंविसर्गयुतोहः हसौंः ॥ दीपिकेंद्वाढ्योवराहः ऊ ॥ बिंदुयुतोहः हूं ॥ यथा–ऐंह्रींश्रीं ह्रौं ॐहंसःत्रींह्रूंफट्हसौंःहूंमिति ॥ ८०–८१ ॥ ततोह्रींबीजेन

मूलमन्त्रो वियद्वंसमनुसर्गसमन्वितम् ।
वराहोदीपिकेंद्वाढ्यो मनुरेकादशाक्षरः ॥ ८१ ॥
अष्टकृत्वोमुनामन्त्रीमन्त्रयेत्प्रयतोजलम् ।
मायया मदिरां क्षिप्त्वा शंखं योनिं च दर्शयेत् ॥ ८२ ॥

अर्घ्यस्थापन : सानुस्वार ल एवं व (लं वं) से भूमि का शोधन कर मण्डलमन्त्र से वृत्तत्रिकोणचतुष्कोणात्मक मण्डल बनाना चाहिए। उस पर आधार शक्ति, कूर्म एवं शेषनाग का पूजन करना चाहिए। उस पर आदि में तार (ॐ) तथा अन्त में अस्त्र (फट्) सहित माया बीज (ॐ ह्रीं फट्) से आधार पात्र स्थापित करना चाहिए। फिर 'मं वह्निमण्डलाय नमः' इस मन्त्र से वह्निमण्डल की पूजा कर 'हुं फट्' इस मन्त्र से महाशंख (कपाल) का प्रक्षालन कर 'स्त्रीं' बीज पढ़ते हुए उस पर महाशंख (नरकपाल) को स्थापित करना चाहिए।

फिर (वक्ष्यमाण) चार मन्त्रों का जप करते हुए महाशंख की पूजा करनी चाहिए।

दीर्घत्रयान्विता माया (ह्रां ह्रीं ह्रूं) फिर 'काली' सृष्टि (क) दीर्घ प (पा) प्रतिष्ठा-युत मांस (ला) पवन (य) और अन्त में हृदय (नमः) लगाने से महाशंख पूजन का प्रथम मन्त्र बनता है।

अनुस्वार एवं दीर्घत्रय सहित हंस (स्) हरि (त्) भुजंगेश (र्) अर्थात् "स्त्रां स्त्रीं स्त्रूं" फिर 'तारिणी' और अन्त में 'कपालाय नमः' लगाने से (महाशंख पूजा का) द्वादशाक्षर मन्त्र बनता है।

विन्दु एवं दीर्घत्रय सहित ख=ह (अर्थात् ह्रां ह्रीं ह्रूं) वामदृक् सहित मेघ (नी) फिर 'ला कपालाय' एवं अन्त में हृदय (नमः) लगाने से ११ अक्षर का तृतीय मन्त्र बनता है।

माया (ह्रीं) स्त्री बीज (स्त्रीं) अर्घ्नीन्दुयुत खं (हूं) फिर 'स्वर्ग' खादिम (क) फिर 'पालाय सर्वाधाराय' फिर चतुर्थ्यन्त सर्व, सर्वोद्भव एवं सर्वशुद्धिमय अर्थात् 'सर्वाय सर्वोद्भवाय सर्वशुद्धिमयाय) फिर 'सर्वासुर' फिर 'रुधिरारु' दीर्घरति (णा) वायु (य) फिर 'शुभ्रा' अनल (य) फिर 'सुरा भाजनाय' भगीसख्य (दे) फिर 'वीकपालाय' और

तोयेसुरांप्रक्षिप्यशंखयोनिमुद्रेदर्शयेत् ॥ तयोर्लक्षणंयथा ॥ वामांगुष्ठंतुसंगृह्यदक्षहस्तस्यमुष्टिना कृत्वोद्यानंतथा मुष्टिमंगुष्ठंतुप्रसारयेत् ॥वामांगुल्यस्तथाशिष्टाःसंयुताःसुप्रसारिताः ॥ दक्षिणांगुष्ठकेलग्नामुद्राशंखस्यभूदेतिशंखमुद्रालक्षणम् ॥ मिथः कनिष्ठिकेबद्वानर्जनीभ्यामनामिके ॥ जना मिकाग्र्वसंश्लिष्टदीर्घमध्यमयोरधः ॥ अंगुष्ठाग्रद्वयंन्यस्येद्योनिमुद्रे यमीरिते-तियोनिमुद्रा लक्षणम् ॥ ८२ ॥

अन्त में हृदय (नमः) लगाने से ५६ अक्षर का महाशंख पूजन का चौथा मन्त्र बनता है।

उस पर ('अं सूर्य मण्डलाय नमः' मन्त्र से) अर्कमण्डल का पूजन कर मूलमन्त्र से सुधा (मदिरा) की भावना से जल भर कर उसमें गन्ध, पुष्प एवं अक्षत डालने चाहिए। फिर त्रिखण्डा मुद्रा दिखाकर ॐ सोम मण्डलाय नमः, इस मन्त्र से जल में चन्द्रमण्डल का पूजन करना चाहिए।

वाक् (ऐं) शक्ति (ह्रीं) पद्मा (श्रीं) रेफानुग्रह बिन्दु सहित गगन (ह्रौं) फिर मूलमन्त्र (ॐ ह्रीं त्रीं हुं फट्) हंसमनुसर्ग समन्वित वियत् (हंसौः) फिर अन्त में दीपिका एवं बिन्दु सहित वराह (हूं) लगाने से एकादश अक्षर वाला मन्त्र बनता है। इस मन्त्र की ८ आवृत्तियों से साधक जल को अभिमन्त्रित करे। फिर माया बीज (ह्रीं) से उसमें मदिरा डालकर शंखमुद्रा एवं योनिमुद्रा दिखलानी चाहिए।

टिप्पणी : अर्घ्यस्थापन की विधि : साधक अपने बाँयी ओर अर्घ्यस्थापना के लिए सर्वप्रथम 'लं वं', इन बीजों से भूमि साफ एवं शुद्ध करके 'ॐ आसुरेखे वज्ररेखे हुं स्वाहा' इस मन्त्र से वृत्त त्रिकोण एवं चतुष्कोण मण्डल बनावे। उस पर 'ॐ आधार शक्तये नमः, ॐ कूर्माय नमः, ॐ शेशाय नमः' इन मन्त्रों से आधार शक्ति, कूर्म एवं शेषनाग का पूजन कर 'ॐ ह्रीं फट्' मन्त्र से अर्घ्य के आधार पात्र को रखे।

तत्पश्चात् 'ॐ मं वह्निमण्डलाय नमः'—इस मन्त्र से आधार पात्र का पूजन कर 'हुं फट्' मन्त्र से महाशंख (नर कपाल) को धोकर 'स्थीं' बीज पढ़ते हुए आधार पात्र पर महाशंख को स्थापित करना चाहिए।

फिर निम्नलिखित चार मन्त्रों से महाशंख का पूजन करना चाहिए। महाशंख पूजा के मन्त्र—

(i) ह्रां ह्रीं ह्रूं काली कपालाय नमः।

(ii) स्त्रां स्त्रीं स्त्रूं तारिणी कपालाय नमः।

(iii) ह्रां ह्रीं ह्रूं नीलाकपालाय नमः।

(iv) ह्रीं स्त्रीं हूं स्वर्गकपालाय सर्वाधाराय सर्वाय सर्वोर्द्ध्वाय सर्वशुद्धिमयाय सर्वासुररुधिरारुणाय शुभ्राय सुराभाजनाय देवी कपालाय नमः।

इन मन्त्रों से महाशंख का पूजन कर 'अं सूर्यमण्डलाय नमः'—इस मन्त्र से अर्कमण्डल का पूजन कर मूलमन्त्र पढ़ते हुए मदिरा की भावना से उसमें जल भर कर उसमें गन्ध, पुष्प एवं अक्षत डालने चाहिये तथा त्रिखण्डा मुद्रा दिखानी चाहिए।

फिर 'ॐ सोममण्डलाय नमः' —इस मन्त्र से जल में चन्द्रमण्डल की पूजा कर 'ऐं ह्रीं श्रीं ॐ ह्रीं त्रीं हुं फट् हंसौः हूम्' इस मन्त्र से ८ बार जल को अभि मन्त्रित करना चाहिए।

तत्पश्चात् 'ह्रीं' से उस जल में तीर्थ (मदिरा) डाल कर शंख मुद्रा एवं योनि मुद्रा दिखानी चाहिए।

त्रिखण्डामुद्रा :

परिवर्त्यंकरौस्पष्टावंगुष्ठौ कारयेत्समौ।
अनामान्तर्गते कृत्वा तर्जन्यौ कुटिलाकृती॥
कनिष्ठिके नियुंजीत निजस्थाने महेश्वरि।
त्रिखंडेयं समाख्याता त्रिपुराह्वान कर्मणि॥

शंखमुद्रा : वामांगुष्ठं तु संगृह्य दक्ष हस्तस्य मुष्टिना।
कृत्वोत्तानं तथा मुष्टिमंगुष्ठं तु प्रसारयेत्॥
वामांगुल्यस्तथा शिष्टाः संयुताः सुप्रसारिताः।
दक्षिणांगुष्ठके लग्ना मुद्रा शंखस्य भूतिदा॥

योनिमुद्रा : मिथः कनिष्ठिके बद्धा तर्जनीभ्यामनामिके।
अनामिकोर्ध्वं संश्लिष्टदीर्घमध्यमयोरधः॥
अंगुष्ठाग्रद्वयं न्यस्येद्योनिमुद्रेयमीरिता॥

तत्रवृत्ताष्टषट्कोणं ध्यात्वा देवीं विचिन्तयेत्।
पूर्वोक्तां पूजयित्वैनां मूलेनाथप्रतर्पयेत्॥ ८३॥
तर्जनी मध्यमानामाकनिष्ठाभिर्महेश्वरी।
सांगुष्ठाभिश्चतुर्वारं महाशंखस्थिते जले।॥ ८४॥
खं रेफमनुविद्धाढ्यं भृगुमन्विदुयुक्तथा।
ध्रुवाद्येन नमोंतेन तर्प्यादानन्दभैरवम्॥ ८५॥
ततस्तेनार्घ्यतोयेन प्रोक्षेत्पूजनसाधनम्।
योनिमुद्रां प्रदर्श्याथ प्रणमेद्भुवतारिणीम्॥ ८६॥

अर्घ्य के जल में वृत्त अष्टदल एवं षड्कोण रूपी यन्त्र की भावना कर उसमें देवी का ध्यान कर मूलमन्त्र से उनका पूजन करना चाहिए।

तत्पश्चात् तर्जनी, मध्यमा, अनामिका एवं कनिष्ठका को अंगूठे से मिलाकर मूलमन्त्र से अर्घ्य के जल से ४ बार देवी का तर्पण करना चाहिए।

तत्रार्घ्यजलेवृत्ताष्टषट्कोणयंत्रं विचिंत्यध्यानोक्तांदेवींचस्मृत्वामूलेनार्चयेत्॥ ८३॥ ततोंगुष्ठयुताभिस्तर्जन्याद्यंगुलीभिरर्घ्यजलेमूलेनतांतर्पयेत्॥ ८४॥ खमिति॥ खंहः॥ मनुरौ॥ भृगुःसः॥ तत्राहंकारएवभृग्वादियुतः॥ ध्रुव ॐ॥ यथा-ॐ ह्रौंहूंसौंनमइत्यानंदभैरवंतर्पयेत्॥ ८५-८६॥

ख=ह्, रेफ=र् मनु एवं बिन्दु=औं, अर्थात् 'ह्रौं' तथा हकार की भृगु (स) सहित पूर्वोक्तवत् करने से 'ह्सौं' फिर प्रारम्भ में ध्रुव (ॐ) तथा अन्त में 'नमः' लगाने से जो मन्त्र (ॐ ह्रौं ह्सौं नमः) बनता है, उससे आनन्दभैरव का तर्पण करना चाहिए।

फिर उस अर्घ्य के जल से पूजा सामग्री का प्रोक्षण कर योनिमुद्रा दिखाकर भवतारिणी को प्रणाम करना चाहिए।

विधानमध्ये संप्रोक्तं सर्वसिद्धिप्रदायकम्।
पूर्वोक्ते पूजयेत्पीठे पद्मे षट्कोणकर्णिके ॥ ८७ ॥
धरागृहावृते रम्ये देवीं रम्योपचारकैः।
महीगृहचतुर्दिक्षु गणेशादीन्प्रपूजयेत् ॥ ८८ ॥

पूजाविधि : सब प्रकार की सिद्धि देने वाला पूजन का विधान (इस तरङ्ग के) मध्य में बतलाया जा चुका है।

षड्कोणकर्णिका, अष्टदल एवं भूपुर से वेष्टित पीठ पर रम्य उपचारों से देवी का पूजन करना चाहिए। भूपुर के चारों ओर गणेश आदि का पूजन करना चाहिए।

टिप्पणी : तारा की पूजा पद्धति : सर्वप्रथम प्रातः स्मरण से स्नान तक सब क्रियाओं को करके निम्न रीति से आचमन करना चाहिए—

(i) ॐ ह्रीं त्रीं हुं फट्, (ii) ह्रीं त्रीं हुं फट्, एव (iii) ह्रीं त्रीं हुम्,—इन तीनों मन्त्रों से विधिवत आचमन करना चाहिए। अथवा आगमतत्त्वविलास के अनुसार (i) ॐ उग्रतारायै नमः, (ii) ॐ एकजटायै नमः, (iii) ॐ नील-सरस्वत्यै नमः—इन तीन मन्त्रों से आचमन कर 'ह्रीं' से हाथ धोना, 'स्त्रीं हुं' से ओठों का मार्जन करना, तथा 'फट्' से पुनः हाथ धोना चाहिए।

फिर निम्न लिखित मन्त्रों से निर्दिष्ट स्थानों का स्पर्श करना चाहिए—

ॐ वैरोचनाय नमः—वदने।	ॐ भामकाय नमः—वामकर्णे।
ॐ शंखाय नमः—दक्षनासायाम्।	ॐ तावकाय नमः—नाभौ।
ॐ पाण्डवाय नमः—वामनासायाम्।	ॐ पद्मान्तकाय नमः—वक्षे।
ॐ पद्मनाभाय नमः—दक्षनेत्रे।	ॐ यमान्तकाय नमः—शिरसि।
ॐ अमिताभाय नमः—वामनेत्रे।	ॐ विघ्नान्तकाय नमः—दक्षस्कन्धे।
ॐ नामकाय नमः—दक्षकर्णे।	ॐ नरान्तकाय नमः—वामस्कन्धे।

इत्यर्घ्यविधिंकृत्वापूर्वोक्तेमेधादिनव शक्तिकेपीठेतांपूजयेत् ॥ ८७-८८ ॥

इस प्रकार आचमन आदि करके साधना स्थल पर जाना चाहिए।[1]

साधना स्थल पर जाकर 'ॐ वज्रोदके हुं फट्' मन्त्र से जल लेना चाहिए। इस प्रकार लिया जल शुद्ध हो जाता है। उसे पूजा के लिए अपने पास रख लेना चाहिए। फिर 'ॐ ह्रीं स्वाहा' मन्त्र से उस जल में से कुछ जल लेकर पैर धोने चाहिए। फिर स्वर्ण एवं रौप्यरूप कुल-कुश तर्जनी एवं अनामिका में पहिन कर 'ॐ ह्रीं सुविशुद्धधर्म सर्वपापानिशाम्या शेषविकल्पानपनय स्वाहा' मन्त्र से आचमन करना चाहिए।

फिर सर्वप्रथम श्मशान भूमि का ध्यान कर उसमें कल्पवृक्ष तथा उसके मूल में नाना रत्न जटित एवं विविध आभूषणों से विभूषित सुरजन एवं मुनिगणों से अलंकृत मणिपीठ की भावना करनी चाहिए। उक्त श्मशान भूमि में मांस और अस्थि के लोभ से आनन्दित होकर शिवाएँ विचरण कर रहीं हैं। इधर-उधर शव, मुण्ड एवं चिता के अंगार बिखरे पड़े हैं—इस प्रकार श्मशान भूमि में मणिपीठ पर श्लो० ३९-४० के अनुसार देवी का ध्यान कर 'ॐ मणिधरिवज्रिणि शिरवरिणिसर्ववशंकरिणी कं हुं फट् स्वाहा' मन्त्र से शिखा बन्धन करना चाहिए।

फिर 'ॐ रक्ष रक्ष हुं फट् स्वाहा' मन्त्र से जल छिड़कते हुए भूमि का शोधन करना चाहिए। और फिर 'ॐ सर्वविघ्नानुत्सारय हुं फट् स्वाहा' इस मन्त्र से नाराच मुद्रा द्वारा अक्षत फेंक कर दिव्य, आन्तरिक्ष एवं भौम इन त्रिविध विघ्नों का उत्सारण करना चाहिए।

तत्पश्चात् 'ॐ पवित्रवज्र भूमे हूं फट् स्वाहा' इस मन्त्र से भूमि को अभिमन्त्रित कर वहाँ कोमलासन, विष्टरासन या कम्बलासन[2] स्थापित करना चाहिए। इन तीनों

---

[1]*साधना स्थल* : नीलतन्त्र एवं महाफेत्कारिणी तन्त्र में बतलाया गया है कि जिस स्थान से ५ कोस की सीमा के भीतर एक के अलावा अन्य शिवलिङ्ग न हो, उस स्थान को एकलिङ्ग कहते हैं। वहाँ उपासना करने से सहज ही में मन्त्रसिद्धि मिल जाती है। इसके अलावा श्मशान उज्जट (जन-शून्य गृह) चतुष्पथ, रणभूमि, योनिमण्डल, विजनकानन देवमन्दिर, शिवमन्दिर, जलाशय, गङ्गागर्भ, पर्वत, शवासन एवं मुण्डासन वाले स्थान भी तारा की साधना के लिए प्रशस्त माने गये हैं।

[2]*कोमलासन* : श्रीक्रम में लिखा है कि पाँच वर्ष तक की आयु के अकृत-चूड शिशु की मृत्यु होने पर उसके शव को अथवा ६ मास के बाद एवं १० मास के पहिले गर्भस्राव से मृत बालक के शव को कोमलासन कहते हैं। नीलतन्त्र के अनुसार कृत-चूड एवं अनुपनीत तथा पूरे पाँचवें वर्ष में मृत शिशु का शव ही कोमलासन कहलाता है।

विष्टरासन : १०० कुशाओं द्वारा बटुक के द्वारा निर्मित आसन में शव की प्राण

आसनों को शवासन मानकर 'ॐ आसुरेखे वज्ररेखे हुं स्वाहा' मन्त्र से शवासन के ऊपर चतुरस्र एवं चतुर्द्वार युक्त मण्डल बनाकर आसन की विधिवत पूजाकर आसन पर स्वस्तिकादिक्रम से बैठना चाहिए।

आसन पर बैठते ही 'ॐ मणिधरि वज्रणि महाप्रतिसरे रक्ष रक्ष हूँ फट् स्वाहा'—इस मन्त्र से वस्त्र के छोर में रक्षा-ग्रन्थि बाँध लेनी चाहिए। और फिर 'ॐ आं ह्रीं स्वाहा'—इस मन्त्र के व्यापक न्यास द्वारा काय, वाक् एवं चित्त का शोधन करना चाहिए।

इसके बाद श्लोक ६०–६३ की टिप्पणी में बतलायी गयी रीति से भूतशुद्धि एवं प्राण प्रतिष्ठा कर अपनी आत्मा को तारिणीरूपा मानकर प्राणायाम करना चाहिए। ४ बार मूलमन्त्र का जप करते हुए वामनासा से पूरक, दोनों नासापुटों में वायु रोक कर १६ बार मूलमन्त्र का जप करते हुए कुम्भक तथा ८ बार मूल मन्त्र का जप करते हुए दाहिनी नासा से रेचक करना चाहिए। इसी प्रकार दाहिनी नासा से पूरक, दोनों नासापुटों में वायु रोक कर कुम्भक तथा वाम नासा से रेचक करना चाहिए। तदनन्तर पुनः वाम नासा से पूरक, दोनों नासाओं से कुम्भक तथा दाहिनी नासा से पूर्ववत् रेचन करना चाहिए। इस प्रकार तीन बार प्राणायाम करना चाहिए।

तदनन्तर श्लोक ४ की टिप्पणी में बतलाई गई रीति से ऋष्यादि न्यास कर काली तन्त्रोक्त वर्णन्यास करना चाहिए, यथा—

अं आं इं ईं उं ऊं ऋं ॠं ऌं ॡं नमो हृदि।
एं ऐं ओं औं अं अः कं खं गं घं नमो दक्षभुजे।
ङं चं छं जं झं ञं टं ठं डं ढं नमो वाम भुजे।
णं तं थं दं धं नं पं फं बं भं नमो दक्षिण जंघायाम्।
मं यं रं लं वं शं षं सं ह लं क्षं नमो वामजंघायाम्।

इसके बाद श्लोक ९–३४ की टिप्पणी में बतलायी गयी रीति से विधिवत ध्यान करके पीठन्यास करना चाहिए। तत्पश्चात श्लोक ३५–३८ में बतलायी रीति से कराङ्गन्यास करने के बाद तर्जनी एवं मध्यमा से ३ बार ताली बजाकर देवी का

प्रतिष्ठा करने पर वह विष्टरासन कहलाता है। यह आसन एक हाथ या दो हाथ लम्बा एवं चतुरस्र आकार का होना चाहिए।

कम्बलासन : कृष्णसार चर्म व्याघ्राजिन या ऊन से बना आसन कम्बलासन कहलाता है। कुछ आचार्यों के अनुसार इसमें भी शव की प्राणप्रतिष्ठा करना अनिवार्य माना गया है।

स्मरण करते हुए 'छोटिका मुद्रा' से दिग्बन्ध करना चाहिए। फिर 'ॐ ह्रीं त्रीं हुम् फट्' मन्त्र से सात बार व्यापक न्यास कर विधिवत ध्यान कर मूलमन्त्र से पूजा कर अपने वामभाग में श्लोक ६९-८२ में बतलायी गयी रीति से अर्घ्यस्थापन एवं महाशंख पूजन कर श्लोक ८३-८६ में बतलायी गयी रीति से तर्पण एवं पूजन सामग्री का प्रोक्षण करना चाहिए।

विशेष : फेत्कारिणी तन्त्र के अनुसार भूतशुद्धि के बाद अर्घ्यस्थापन कर प्राणायाम, ऋष्यादि न्यास एवं षोढ़ान्यास कर देवी का पूजन करना चाहिए। मन्त्रमहोदधिकार द्वारा बतलायी उक्त पद्धति यामल ग्रन्थों के अनुरूप है।

पूजन यन्त्र: षड्कोणकर्णिका, अष्टदलकमल एवं भूपुर वाले रमणीय यन्त्र पर तारा देवी का पूजन करना चाहिए (देखिये चित्र नं० ६)।

पीठ पूजा : कर्णिका में—ॐ आधार शक्तये नमः, ॐ प्रकृत्यै नमः,
ॐ कमठाय नम, ॐ शेषाय नमः
ॐ सुधाम्बुधये नमः, ॐ मणिद्वीपाय नमः
ॐ चिन्तामणि गृहाय नमः, ॐ श्मशानाय नमः
ॐ कल्पवृक्षाय नमः, इन मन्त्रों से पूजन करना चाहिए।

कर्णिका के मूल में—ॐ रत्नवेदिकायै नमः से पूजन कर
कर्णिका के ऊपर—ॐ मणिपीठाय नमः से पूजन करना चाहिए।
फिर चारों ओर—ॐ मुनिभ्यो नमः, ॐ देवेभ्यो नमः
ॐ बहुमांसास्थि मोदमान शिवाभ्यो नमः से पूजन करना चाहिए।

फिर आग्नेयादि ८ दलों में—ॐ मेधायै नमः, ॐ प्रज्ञायै नमः, ॐ प्रभायै नमः, ॐ विद्यायै नमः, ॐ धियै नमः, ॐ धृत्यै नमः, ॐ स्मृत्यै नमः ॐ बुद्धयै नमः, ॐ विद्येश्वर्यै नमः से पूजन कर 'सौं सरस्वती योग पीठात्मने नमः' इस पीठ मन्त्र से आसन देकर मूल मन्त्र से देवी की मूर्ति कल्पित कर ध्यान, आवाहन आदि से पूजन करना चाहिए।

अञ्जलि में दूर्वा, अक्षत एवं रक्त चन्दन मिश्रित पुष्प लेकर अपनी आत्मा से अभिन्न समझते हुए देवी का ध्यान करना चाहिए, यथा—

"प्रत्यालीढपदार्पितांघ्रिशवहृद्-घोराट्टहासा परा,
खड्गेन्दीवरकर्तृखर्परभुजा हूँकारबीजोद्भवा।

खर्वानील विशालपिङ्गलजटाजूटैकनागैर्युता,
जाड्यं न्यस्य कपालके त्रिजगतां हन्त्युग्रतारा स्वयम् ॥"

(तारा देवी प्रत्यालीढ स्थिति में शवरूपी शिव के हृदय के ऊपर दोनों पैर रख कर खड़ी हैं और वे अति भयंकर तथा उच्च स्वर से हास्य कर रही हैं। चारों हाथों में क्रमशः खड्ग, नीलकमल, कर्तृका एवं खर्पर (खप्पर) लिये हैं। वे हूँकार बीज से उद्भूत हैं, ठिगने कद तथा नील वर्ण वाली हैं। उनके शिर पर एक लम्बी तथा पिङ्गल वर्ण वाली एकजटा एवं अनेक सर्प हैं। ऐसी उग्रतारा देवी तीनों लोकों की जड़ता को स्वय नष्ट कर देती हैं।

इस प्रकार ध्यान कर हाथ की पुष्पाञ्जलि में मातृका यन्त्र की भावना करनी चाहिए। फिर मूलमन्त्र से षट्चक्र भेदन कर चैतन्यमयी देवी को शिरस्थ सहस्रदल कमल की कर्णिका के मध्य में विराजमान परम शिव से संयोजित कर सहस्रार स्थित सुधासागर में विश्राम करने के लिए स्थापित करना चाहिए। तत्पश्चात् अमृत लोलुपा चैतन्यमयी देवी को प्रवहण शील नासापुट द्वारा अपने हाथ की पुष्पाञ्जलि में लाकर उनकी मूर्ति कल्पित करते हुए आवाहन करना चाहिए। इस प्रकार अञ्जलि में स्थित पुष्पों में देवी का आवाहन कर उन पुष्पों को प्रतिमा या यन्त्र पर स्थापित कर निम्न-लिखित प्रार्थना करनी चाहिए।

"ॐ देवेशि भक्तिसुलभे परिवार समन्विते।
यावत्त्वां पूजयिष्यामि तावत्त्वं सुस्थिरा भव ॥

इसके बाद 'हुं' से अवगुण्ठन, अङ्गन्यास मन्त्र से सकलीकरण, धेनु मुद्रा से अमृती करण, परमीकरण मुद्रा से परमीकरण तथा भूतिनी, आकर्षणी, योनि आदि ५ मुद्राएँ दिखा कर 'ॐ आं ह्रीं क्रौं स्वहा' इत्यादि मन्त्र से प्राण प्रतिष्ठा कर षोडशोपचार या पञ्चोपचार से पूजन करना चाहिए।

पूजन में आसन आदि उपचार निम्नलिखित मन्त्रों[1] से समर्पित करने चाहिए।

---

१. श्री विद्याधराचार्य एवं तारिणी-निर्णय कार के अनुसार पूजा के उपचार समर्पित करने के मन्त्र इस प्रकार हैं—

'ॐ भगवत्येकजटे ह्रीं विशुद्धधर्मगात्रि सर्वपापानि शयम सर्वविकल्पानपनय हुं फट् स्वाहा पाद्यं नमः।

ॐ ह्रीं मणिधरि वज्रिणि महाप्रतिसरे इदमर्घ्यं स्वाहा।

ॐ तारिणी ह्रीं इदमाचमनीयं स्वधा।

ॐ ह्रीं कपालिके मधुपर्कः स्वधा।

ॐ श्रीमदेकजटे इदमाचमनीयं सुगन्धिजलं नमः।

ॐ तारिणि ह्रीं पुनराचमनीयं स्वधा।

स्त्रीं ह्रीं हुं फट् श्रीमदेकजटे वज्रपुष्पप्रतीच्छ हूं फट् स्वाहा इदमासनं श्रीमदकेजटायै नमः ।
स्त्रीं ह्रीं हुं फट् श्रीमदेकजटे वज्र पुष्पप्रतीच्छ हूं फट् स्वाहा एतत्पाद्यं श्रीमदेकजटायै नमः ।

,, ,, ,, ,, ,, ,, ,, इदमर्घ्यं ,, स्वाहा ।
,, ,, ,, ,, ,, ,, ,, इदमाचमनीयं ,, स्वधा ।
,, ,, ,, ,, ,, ,, ,, एष मधुपर्कः ,, स्वधा ।
,, ,, ,, ,, ,, ,, ,, स्नानीयं ,, निवेदयामि ।
,, ,, ,, ,, ,, ,, ,, पुनराचमनीयं ,, स्वधा ।
,, ,, ,, ,, ,, ,, ,, एष गन्धः ,, नमः ।
,, ,, ,, ,, ,, ,, ,, एतानि पुष्पाणि ,, वौषट् ।

इसके बाद मूलमन्त्र से ५ पुष्पाञ्जलियाँ प्रदान कर 'स्त्रीं ह्रीं''''स्वाहा एष धूपो श्रीमदेकजटायै नमः' इस मन्त्र से धूप देकर 'ॐ जयध्वनि मन्त्रमात स्वाहा' मन्त्र से घण्टा पूजन कर उसे बजाते हुए 'स्त्रीं ह्रीं....एष दीप श्रीमदेकजटायै नमः' से दीपक को दृष्टि तक ऊपर उठाकर दिखाना चाहिए। फिर मूल मन्त्र से ३ पुष्पाञ्जलियाँ देकर वेद्य समर्पित करना चाहिए।

पाशांकुशौ कपालं च त्रिशूलं दधतं करैः ।
अलंकारचयोपेतं गणेशं प्राक्समर्चयेत् ॥ ८९ ॥

ॐ परमानन्दसौरभ्यपरिपूर्ण दिगन्तरम् ।
गृहाण परमं गन्धं कृपा परमेश्वरि ॥
श्रीमदेकजटे एवं गन्धो नमः
ॐ तुरीयवनसम्भूतं नानागुणमनोहरम् ।
आनन्दसौरभं पुष्पं गृह्यतां परमेश्वरि ॥
श्रीमदेकजटे एतानिपुष्पाणि वौषट् ।

इन मन्त्रों से पाद्य से लेकर पुष्प पर्यन्त उपचारों से क्रमशः देवीका पूजन कर मूल मन्त्र से ५ पुष्पाञ्जलियाँ देकर 'बनस्पति श्रीमदेकजटे एष धूपो नमः' से धूप देकर विधिवत घण्टा का पूजनकर निम्नलिखित मन्त्र से दीपक दिखाना चाहिए।

"ॐ सुप्रकाशो महादीपः सर्वतस्तिमिरापहः ।
सबाह्याभ्यन्तरं ज्योतिर्दीपोऽयं प्रतिगृह्यताम् ॥
श्रीमदेकजटे एष दीपो नमः ।

गणेशादिध्यानमाह ॥ पाशेति ॥ अंकुशत्रिशूलेदक्षयोः पाशकपालेवा मयोः ॥ अलंकाराणांचयःसमूहस्तद्युतम् ॥ ८९ ॥

कपालशूले हस्ताभ्यां दधतं सर्पभूषणम् ।
श्वयूथवेष्टितं रम्यं बटुकं दक्षिणेर्चयेत् ॥ ९० ॥
असिशूलकपालानि डमरुं दधतं करैः ।
कृष्णं दिगंबरं क्रूरं क्षेत्रपं पश्चिमे यजेत् ॥ ९१ ॥
कपालं डमरुं पाशं लिङ्गं संबिभ्रतीकरैः ।
अंत्राकल्पा रक्तवस्त्रा योगिनीरुत्तरेयजेत् ॥ ९२ ॥
अक्षोभ्यं प्रयजन्मूर्ध्नि देव्यामन्त्रऋषि शुभम् ।
अक्षोभ्यवज्रपुष्पं च प्रतीच्छानलवल्लभा ॥ ९३ ॥
अक्षोभ्यपूजने मन्त्रः षट्कोणेषु षडंगकम् ।
वैरोचनं चामिताभं पद्मनाभाभिधं तथा ॥ ९४ ॥
शंखं पाण्डुरसंज्ञं च दिग्दलेषुप्रपूजयेत ।
लामकां मामकां चैवपाण्डुरां तारकां तथा ॥ ९५ ॥
विदिग्गताब्जपत्रेषु पूजयेदिष्टसिद्धये ।
सबिंदुनामाद्यर्णाद्याःसंबुध्यंतास्तथाभिधाः ॥ ९६ ॥
वज्रपुष्पंप्रतीच्छाग्निप्रियांताःप्रणवादिकाः ।
वैरोचनादिपूजायां मनवः परिकीर्तिताः ॥ ९७ ॥
भूगृहस्य च तुर्द्वार्षु पद्मान्तकयमान्तकौ ।
विघ्नान्तकाभिधं पश्चान्नारान्तकमथोयजेत् ॥ ९८ ॥
शक्रादींश्चापिवज्रादीन्पूजयेत्तदनंतरम् ।

आवरण पूजा पाश, अंकुश, कपाल एवं त्रिशूल को यथाक्रमेण चारों हाथों में धारण करने वाले तथा विविध आभूषणों से सुशोभित गणेश जी का पीठ के पूर्वद्वार पर पूजन करना चाहिए ।

कपाल एवं त्रिशूल को हाथों में धारण करने वाले सर्पों के आभूषणों से सुशोभित तथा श्वान दल से घिरे हुए बटुक भैरव का दक्षिणद्वार पर पूजन करना चाहिए ।

तलवार, शूल, कपाल एवं डमरु को चारो हाथों में धारण करनेवाले, कृष्णवर्ण, दिगम्बर एवं क्रूर आकृतिवाले क्षेत्रपाल का पश्चिमद्वार पर पूजन करना चाहिए ।

बटुकस्यदक्षे शूलम् ॥ ९० ॥ क्षेत्रपालस्यासिशूलेदक्षयोः ॥ ९१ ॥ योगिनीनांपाश-लिंगेदक्षयोः ॥९२॥ अक्षोभ्यवज्रपुष्पंप्रतीच्छस्वाहेतिमुनिमंत्रः ॥९३-९४-९५॥ सबिंदुनामादि वर्णआद्योयासांईदृश्यःसंबोधनांताःप्रणवाद्यावज्राद्यंताअभिधानामान्येववैरोचनादिमन्त्राः ॥ यथा–ॐ वैंवैरोचनवज्रपुष्पंप्रतीच्छस्वाहा ॥ ॐ अंअमिताभवज्र० ॥ पंपद्मनाभव० ॥ ॐ शंशंखपांडुरव० ॥ ॐ लांलामकेवज्र० ॥ ॐ मांमामकेवज्र०इत्यादि ॥ पद्मांतकादिपूजाया-मप्येवमेवमन्त्राः ॥९६–९८॥

कपाल, डमरु, पाश एवं लिङ्ग को हाथों में धारण करने वाली, लाल वस्त्र पहिनने वाली योगिनियों का उत्तर द्वार पर पूजन करना चाहिए।

'अक्षोभ्यवज्रपुष्पंप्रतीच्छस्वाहा—यह अक्षोभ्य ऋषि के पूजन का मन्त्र है। (इससे) देवी के मस्तकपर (नागरूप में) स्थित इस मन्त्र के ऋषि अक्षोभ्य का पूजन करते हुए षट्कोणों में षडङ्ग पूजा करनी चाहिए।

फिर (पूर्व आदि) दिशओं के दलों में वैरोचन अमिताभ, पद्मनाभ एवं शंखपाण्डु का पूजन करना चाहिए। अग्नि आदि कोणों के दलों में लामका, मामका, पाण्डुरा एवं तारका का इष्टसिद्धि के लिए पूजन करना चाहिए। इनके सम्बुध्यन्त नाम के आगे सानुस्वार नाम का आदि वर्ण लगाकर प्रारम्भ में प्रणव तथा अन्त में 'वज्रपुष्प प्रतीच्छ स्वाहा' लगाकर बने मन्त्र वैरोचन आदि के पूजा के लिए प्रयोग में लाने चाहिए।

भूपुर के चारों द्वारों पर पद्मान्तक, यमान्तक, विघ्नान्तक एवं नारान्तक का पूजन करने के बाद फिर इन्द्र आदि दिक्पाल एवं वज्र आदि आयुधों का पूजन करना चाहिए।

टिप्पणी : आवरण पूजाविधि : पूर्वोक्त रीति से देवी की पूजा करने के बाद योनिमुद्रा दिखाकर 'देवि आज्ञापय आवरणं ते पूजयामि'—कहते हुए देवी की आज्ञा लेकर आवरण पूजा करनी चाहिए।

"पाशांकुशौ कपालं च त्रिशूलं दधतं करैः।
अलंकार चयोपेतं गणेशं प्राक्स्थितं भजे॥"

ऐसा ध्यान कर 'ॐ ह्रीं गणेशाय नमः' मन्त्र से पीठ के पूर्वद्वार पर गणेश जी का पूजन करना चाहिए।

"कपालशूले हस्ताभ्यां दधतं सर्वभूषणम्।
श्वयूथवेष्टितं रम्यं बटुकं दक्षिणे भजे॥"

ऐसा ध्यान कर 'ॐ ह्रीं बं बटुकाय नमः' इस मन्त्र से पीठ के दक्षिण द्वार पर स्थित बटुक भैरव का पूजन करना चाहिए।

"असि शूल कपालानि डमरुं दधतं करैः।
कृष्णं दिगम्बरं क्रूरं क्षेत्रपं पश्चिमे भजे॥"

ऐसा ध्यान कर 'ॐ ह्रीं क्षं क्षेत्रपालाय नमः' मन्त्र से पीठ के पश्चिम द्वार पर स्थित क्षेत्रपाल का पूजन करना चाहिए।

"कपालं डमरुं, पाशं लिङ्गं संबिभ्रतीकरैः।
अंत्राकल्पा रक्तवस्त्रा योगिनीरुत्तरे भजेत॥"

ऐसा ध्यान कर ॐ यं योगिनीभ्यो नमः, मन्त्र से पीठ के उत्तर द्वार पर स्थित योगिनियों का पूजन करना चाहिए।

इसके बाद देवी की मौलि में स्थित इस विद्या के आदि गुरु अक्षोभ्य ऋषि का 'ॐ अक्षोभ्य वज्रपुष्पं प्रतीच्छ स्वाहा' मन्त्र से पूजन करना चाहिए।[1]

फिर केशरों के अग्नि, ईशान, वायु, नैऋत्य कोणों में, मध्य में तथा चारों दिशाओं में षडङ्गपूजत करना चाहिए, यथा—

ह्रां एकजटायै हृदयाय नमः—आग्नेये।
ह्रीं तारिण्यै शिरसे स्वाहा–ईशान्ये।
ह्रूं वज्रोदकायै शिखायै वषट्–वायव्ये।
ह्रैं उग्रजटायै कवचाय हुम्–नैऋत्ये।

---

[1]तारा तन्त्र एवं फेत्कारिणीतन्त्र में कहा गया है कि अक्षोभ्य ऋषि के पूजन के बाद पीठ के उत्तर भाग में वायु कोण से ईशान कोण तक दिव्यगुरु, सिद्धगुरु एवं मानवगुरुओं की पंक्ति का पूजन करना चाहिए।

तारातन्त्र के अनुसार ऊर्ध्वकेश, व्योमकेश, नीलकण्ठ एवं वृषध्वज ये दिव्यगुण हैं। वशिष्ठ, कूर्मनाथ, मोननाथ, महेश्वर एवं हरिनाथ–ये सिद्धगुरु हैं। तथा तारावती, भानुमती, जया, विद्या, महोदरी, सुखानन्द, परानन्द, पारिजात, कुलेश्वर, विरूपाक्ष एवं फेरवी–ये मानव गुरु हैं। तारा देवी के ये कुलगुरु हैं।

गुरुओं के पूजन के मन्त्रों में उनके नाम के अन्त में 'आनन्द नाथ' तथा गुरु रूपी स्त्रियों के नाम के अन्त में 'अम्बा' शब्द जोड़कर फिर 'वज्रपुष्प प्रतीच्छ स्वाहा' लगाने से उनकी पूजा के मन्त्र बन जाते हैं। यथा–

ऊर्ध्व केशानन्दनाथ वज्रपुष्प प्रतीच्छ स्वाहा।
व्योम केशानन्दनाथ ,, ,, ,, ।
नीलकण्ठानन्दनाथ ,, ,, ,, ।
वृषध्वजानन्दनाथ वज्रपुष्प प्रतीच्छ स्वाहा।

स्त्री गुरुओं की पूजा के मन्त्र इस प्रकार होते हैं–

'तारावत्यम्बा वज्रपुष्प प्रतीच्छ स्वाहा।'

तारातन्त्र के अनुसार ताराकुल के ये गुरुजन दृष्टादृष्ट फल के दाता हैं। अतः इनका पूजन करना चाहिए। असमर्थता होने पर केवल अक्षोभ्य ऋषि का पूजन कर लेना चाहिए। फेत्कारिणी तन्त्र में देवी का वचन है कि मेरी उपासना करने वाले व्यक्ति को मेरे मस्तक पर स्थित अक्षोभ्य ऋषि का पूजन अवश्य करना चाहिए।

ह्रौं महापरिसरायै नेत्रत्रयाय वौषट्–मध्ये ।

ह्रः पिङ्गोग्रैकजटायै अस्त्रायफट्–चतुर्दिक्षु ।

इसके बाद[1] पूर्व आदि दिशाओं के दलों में निम्नलिखित मन्त्रों से वैरोचन आदि का पूजन कर आग्नेय आदि कोणों के दलों पर लामकी आदि का पूजन करना चाहिए। इनकी पूजा के मन्त्र इस प्रकार हैं–

ॐ वं वैरोचन वज्रपुष्प प्रतीच्छ स्वाहा[2] ।

,, अं अमिताभ ,, ,, ,, ।

,, पं पद्मनाभ ,, ,, ,, ।

,, शं शंखनाभ ,, ,, ,, ।

,, लां लामिके ,, ,, ,, ।

,, मां मामिके ,, ,, ,, ।

,, पां पाण्डुरे ,, ,, ,, ।

ॐ तां तारके वज्रपुष्प प्रतीच्छ स्वाहा ।

फिर भूपुर के चारों द्वारों पर पूर्व आदि क्रम से निम्न लिखित मन्त्रों से पद्मान्तक आदि का पूजन करना चाहिए, यथा–

ॐ पं पद्मान्तक वज्रपुष्पं प्रतीच्छ स्वाहा ।

,, यं यमान्तक ,, ,, ,, ।

,, विं विघ्नान्तक ,, ,, ,, ।

ॐ नां नारान्तक वज्रपुष्प प्रतीच्छ स्वाहा[2] ।

तदनन्तर चतुरस्र में पूर्व आदि दिशाओं में यथाक्रमेण इन्द्र आदि लोकपालों का पूजन करना चाहिए, यथा–

ॐ लां इन्द्राय देवाधिपतये नमः–पूर्वे ।

ॐ रां अग्नये तेजोधिपतये नमः–आग्नेये ।

ॐ यां यमाय प्रेताधिपतये नमः–दक्षिणे ।

,, क्षां निर्ऋतये रक्षोधिपतये नमः–नैर्ऋत्ये ।

---

[1]फेत्कारिणीतन्त्र के अनुसार षडङ्गपूजा के बाद पूर्व आदि दिशाओं के दलों के मूल में महाकाली, रुद्राणी, उग्रा, भीमा, घोरा, भ्रामरी, महारात्रि एवं भैरवी–इन ८ योगिनियों का पूजन करना चाहिए। पूजामन्त्र, यथा ॐ महाकाल्यै नमः, इत्यादि ।

[2]नीलतन्त्र एवं सिद्ध सारस्वत का मत है कि इन देवताओं के सम्बुध्यन्त नामों के बाद 'वज्रपुष्प प्रतीच्छ हूं फट् स्वाहा' लगाने से इनकी पूजा के मन्त्र बनते हैं ।

ॐ वां वरुणाय जलाधिपतये नमः–पश्चिमे ।
,, यां वायवे प्राणाधिपतये नमः–वायव्ये ।
,, सां सोमाय ताराधिपतये नमः–उत्तरे ।
,, हां ईशानाय गणाधिपतये नमः–ईशाने ।
,, आं ब्रह्मणे प्रजाधिपतये नमः–पूर्वेशानयोर्मध्ये ।
ॐ ह्रीं अनन्ताय नगाधितपये नमः–निऋति वरुणयोर्मध्ये ।

और अन्त में चतुरस्र के बाहर पूर्व आदि दिशाओं में दिकपालों के आयुधों का पूजन करना चाहिए, यथा–

ॐ वज्राय नमः	ॐ अंकुशाय नमः
ॐ शक्तये नमः	ॐ गदायै नमः
ॐ दण्डाय नमः	ॐ शूलाय नमः
ॐ खड्गाय नमः	ॐ पद्माय नमः
ॐ पाशाय नमः	ॐ चक्राय नमः

इस प्रकार आवरण पूजा कर ५ पुष्पाञ्जलियाँ देकर विधिवत[१] जप करना चाहिए ।

एवं संपूजयेद्देवीं पांडित्यं धनमद्भुतम् ॥ ९९ ॥
पुत्रान्पौत्रान्सुखं कीर्तिं लभते जनवश्यताम् ।

इस प्रकार देवी का पूजन करने से साधक अद्भुत पाण्डित्य धन, पुत्र-पौत्र, सुख,

---

[१] मायातन्त्र एवं सरस्वती तन्त्र में कहा गया है कि तारा मन्त्र के जप में कुल्लिका का ज्ञान तथा उसका न्यास आवश्यक है । कुल्लिका का शिर में न्यास किये बिना तारा मन्त्र का जप करने से मृत्यु या उन्माद हो जाता है । अतः जप के पहिले कुल्लिका (ॐ ह्रीं स्त्रीं हूं) का शिर पर न्यास कर लेना चाहिए ।

इसके बाद रहस्यमाला या महाशंखमाला द्वारा जप करना चाहिए । फेत्कारिणी तन्त्र का मत है कि मनुष्य की ललाटास्थि से निर्मित माला को महाशंख माला कहते हैं । ताराविद्या के मन्त्र जप में यह माला परम प्रशस्त मानी गयी है । इसके द्वारा जप करने से मन्त्र शीघ्र सिद्ध होता है । नीलतन्त्र में कहा गया है कि महाशंख माला के अभाव में प्रवाल की पञ्चाशन्मणिमाला या स्फटिक की माला द्वारा जप करना चाहिए ।

मन्त्रजप विधि : मूलाधार, स्वाधिष्ठान एवं मणिपूर चक्रों में क्रमशः ह्रीं स्त्रीं एवं हूँ ये तीनों बीज कोटि विद्युत के समान उज्वल परस्पर ग्रथित रूप में व्याप्त हैं । हृदय में सर्वतेजोमय विश्रान्ति स्वरूप 'फट्' बीज है—ऐसा ध्यान करते हुए जप करने से साधक महापातकों से मुक्त होकर सिद्धि एवं सर्वज्ञता प्राप्त करता है ।

कीर्ति प्राप्त करता है तथा लोगों को अपने वश में कर लेता है।

तारो माया श्रीमदेकजटेनीलसरस्वति ॥ १०० ॥
महोग्रतारेदे वालःसनेत्रोगदियुग्मकम् ।
सर्वभूतपिशाचकूर्मो दीर्घोग्निर्मेरुसान्ग्रसः ॥१०१ ॥
ग्रभृगुर्ममजाडचं च च्छेदयद्वितयं रमा ।
मायास्त्राग्निप्रियांतोयं द्विपंचाशल्लिपिर्मनुः ॥ १०२ ॥
अनेन नित्यपूजान्तेऽन्वहंदेव्यै बलिं हरेत् ।
एवं सिद्धे मनौ मन्त्री प्रयोगान्विदधीत च ॥ १०३ ॥

पूजन के बाद बलि दान का मन्त्र : तार (ॐ) माया (ह्रीं). फिर 'श्रीमदेकजटे-नील सरस्वति महोग्रतारे दे' फिर सनेत्र वाल (वि) फिर गदि युग्म (ख ख) फिर 'सर्वभूतपिशा' फिर कूर्म (च) दीर्घ अग्नि (रा) मेरु (क्ष) भृगु (स) फिर 'ग्रस ग्र' भृगु (स) फिर 'मम जाडचं' २ बार 'छेदय' फिर रमा (श्रीं) माया (ह्रीं) अस्त्र (फट्) तथा अन्त में अग्निप्रिया (स्वाहा) लगाने से ५० अक्षर वाला यह मन्त्र बनता है। इस मन्त्र से प्रतिदिन पूजा के बाद देवी को बलि समर्पित करनी चाहिए।

इस प्रकार मन्त्र सिद्ध होने पर मान्त्रिक को काम्य प्रयोग करने चाहिए।

टिप्पणी : बलि मन्त्र का उद्धार :

ॐ ह्रीं श्रीमदेकजटे नील सरस्वति महोग्रतारे देवी ख ख सर्वभूतपिशाच राक्षासान् ग्रस ग्रस मम जाडचं छेदय छेदय श्रीं ह्रीं फट् स्वाहा।

बलिदान की विधि : फेत्कारिणी तन्त्र में कहा गया है कि पूजा के बाद भोजन द्रव्य निवेदित करने से पूर्व प्रतिदिन बलिदान करना चाहिए।

बलिदान करते समय साधक अपने वाम भाग में उसके ऊपर त्रिकोण-वृत्त-च तुरस्र का मण्डल बनाकर पुष्पों द्वारा उसका पूजन कर बलिद्रव्य से पूर्ण पात्र को आधार सहित रखे। फिर बायें हाथ की अंगुष्ठ एवं अनामिका अंगुलियों से पात्र को स्पर्श करते हुए उक्त बलिमन्त्र को ३ बार पढ़ते हुए देवी को बलि निवेदित करे।[1]

---

९९ ॥ नित्यपूजांतेबलिदानमन्त्रमाह ॥ तारइति ॥ तार ॐ ॥ मायाह्रीं ॥ वालोवः सनेत्रयुतःवि ॥ गदीवः ॥ कूर्मश्चकारः ॥ दीर्घोग्निः रा ॥ मेरुःक्षः ॥ भृगुः सः ॥ रमाश्रीं ॥ मायाह्रीं ॥ अस्त्रफट ॥ अग्निप्रियास्वाहा ॥ स्वरूपमन्यत् ॥ यथा-ॐ ह्रींश्रीमदे कजटेनीलसरस्वतिमहोग्र तारदेवि वालसवभूतपिशाचराक्षसान् ग्रस ग्रस ममजाड्यछेदय छेदय श्रींह्रींफट्स्वाहेतिद्विपंचाशदर्ण ॥ १००-१०४ ॥

[1] ता - की उपासना में पूजन के बाद बलि देने के अलावा प्रतिदिन रात्रि में मध्य रात्रि के समय चौराहे पर जाकर बलिदेना भी अनिवार्य होता है। विशेषकर

रहस्यपुरश्चरण : तारार्णव एवं मुण्डमालातन्त्र में पुरश्चरण की संक्षिप्त रीतियाँ बतलाते समय कहा गया है कि एक प्रसन्न मुद्रा में स्वयं देवी ने भगवान् शिव से पूछा कि 'हे देव ! मेरा अनन्य भक्त या असमर्थ व्यक्ति किस प्रकार पुरश्चरण करे ?' इस प्रश्न के उत्तर में भगवान् शिव ने पुरश्चरण की निम्नलिखित विधियाँ बतलाई।

(i) मंगलवार या शनिवार का एक नरमुण्ड लाकर उसे पञ्चगव्य से सिक्त कर चन्दन चर्चित करे। फिर दूरवर्ती या समीपवर्ती वन के मध्य में आधा हाथ नीचे भूमि में गाड़ देना चाहिए। फिर रात्रि में उसी स्थान पर एकाकी बैठ कर एक हजार जप करने से पुरश्चरण सम्पन्न हो जाता है। इस पुरश्चरण से साधक कल्पवृक्ष के समान हो जाता है।

(ii) मंगलवार या शनिवार को एक शव लाकर उसे उक्त रीति से द्वार देश में आधे हाथ नीचे भूमि में गाड़ देना चाहिए। फिर उसके ऊपर बैठ कर प्रतिदिन १०८ बार जप करना चाहिए। यह जिस वार को प्रारम्भ किया जाय उससे लगातार ८ दिन उसी वार तक जप करना चाहिए। यह ८ दिन का जप करने से पुरश्चरण संपन्न हो जाता है तथा साधक सब सिद्धियों का स्वामी बन जाता है।

(iii) शवासन या कोमलासन पर बैठ कर किसी अष्टमी या चतुर्दशी को सूर्योदय काल से प्रारम्भ कर पुनः अगले सूर्योदय तक निरन्तर जप करना चाहिए। इस पुरश्चरण के द्वारा साधक निर्भीक एवं सिद्धियों का स्वामी बन जाता है।

(iv) शरद् काल में चतुर्थी तिथि से नवमी तक प्रतिदिन निशाकाल में भक्ति पूर्वक देवी का पूजन कर १ हजार जप करना चाहिए। जपकाल में अष्टमी एवं नवमी का उपवास रखना चाहिए, तथा जनशून्ध एवं अन्धकारपूर्ण गृह में बैठकर जप करना चाहिए। इस प्रकार ६ दिन में एक पुरश्चरण सम्पन्न हो जाता है।

(v) कृष्णाष्टमी से प्रारम्भ कर पुनः कृष्णाष्टमी आने तक प्रतिदिन भक्तिपूर्वक देवी का पूजन कर १ हजार मन्त्रों का जप करना चाहिए। इस प्रकार १ मास तक जप करने से पुरश्चरण पूर्ण हो जाता है।

जातमात्रस्य बालस्यदिवसत्रितयादधः।

तारामन्त्र का पुरश्चरण करते समय निशीथ काल में इस प्रकार बलिदान अवश्य करना चहिए। इसकी विधि इस प्रकार है। साधक मध्य रात्रि में चौराहे पर जाकर त्रिकोण गर्भित मण्डल पर बलिद्रव्य सहित पात्र को रखकर 'ॐ ह्रीं एकजटे महायक्षाधिपतये ममोपनीतं बलिं गृह्ण गृह्ण ह्रीं स्वाहा' इसको बोलते हुए बलिद्रव्य देवी को समर्पित करे।

जिह्वायां विलिखेन्मन्त्रं मध्वाज्याभ्यां शलाकया १०४ ॥
सुवर्णकृतया यद्वा मन्त्री धवलदूर्वया ।
गतेष्टमेब्दे बालोसौ जायते कविराट् ध्रुवम् ॥ १०५ ॥
तथापरैरजेयोपि भूपसंघैर्घनार्चितः ।
उपरागेतदानीय तरद्दारुसरोजले ॥ १०६ ॥
निर्याय कीलकं तेन तैलमध्वमृतैर्लिखेत् ।
सरोजिनीदले मन्त्रं वेष्टयेन्मातृकाक्षरैः ॥ १०७ ॥
निखाय तद्दलं कुण्डे चतुरस्रे समेखले ।
संस्थाप्य पावकं तत्र जुहुयान्मनुनाऽमुना ॥ १०८ ॥
सहस्रं रक्तपद्मानां घृतदुग्धजलाप्लुतम् ।
होमान्ते विविधैरन्नैःपलैरपि बलिंहरेत् ॥ १०९ ॥
बलिमत्रेन्ण विधिवद्बलिमन्त्रः प्रकाश्यते ।
तार पद्मेयुगं तंद्रीवियद्दीर्घं च लोहितः ॥ ११० ॥
अत्रिविषभगारूढो वदेत्पद्मावतीपदम् ।
झिंटीशाढ्योनिलःस्वाहा षोडशार्णोबलेर्मनुः ॥ १११ ॥
ततो निशीथेपि बलिं पूर्वोक्तमनुना हरेत् ।
एवं कृते पण्डितानामजेयःकविराड् भवेत् ॥ ११२ ॥
निवासो भारती लक्ष्म्योर्जनतारंजनक्षमः ।
शताभिजप्तांयो मन्त्री रोचनामलिके धरेत् ॥ ११३ ॥
सयं पश्यति तस्यासौ दासवज्जायते क्षणात् ।
श्मशानांगारमाहृत्य शर्वर्यां कुजवासरे ॥११४ ॥
कृष्णाम्बरेण संवेष्टय निबद्धं रक्ततंतुभिः ।
शताभिजप्तमूलेन निःक्षिपेद्वैरिवेश्मनि ॥ ११५ ॥

॥ १५ ॥ प्रयोगांतरमाह ॥ उपरागइति ॥ ग्रहणेतडागेतरत्काष्ठंदतादंतेनानीयतेनलेखनींकृत्वातैलमधुसुराभिः पद्मिनीपत्रेतयामनुमालिख्यमातृकावर्णैः संवेष्टयकुंडंनिखायतदुपर्यग्निप्रतिष्ठाप्यगोदुग्धाक्तेनरक्तपद्मसहस्रेणतत्र हुत्वाषोडशार्णेनमांसैर्होमांतेबलिंदत्त्वामध्यरात्रेणबलिंदद्यात् एवंकृते उक्तफलसिद्धिः ॥ १०६-१०९ ॥ षोडशार्णमाह ॥ तारइति ॥ द्रीमः ॥ दीर्घ वियत् हा ॥ लोहितःपः ॥ विषभगारूढोत्रिः मप्युतोदः ग्वे ॥ अनिलोक्षिंटीशाढ्यःयएयुतःये ॥ यथा-ॐ पद्मे पद्मे महापद्मे पद्मावतीयेस्वा हेति ॥ ११०-१११ ॥ ११२ अलिकेललाटेधरेत् तिलकंकुर्यादित्यर्थ ॥ ११३-११५ ॥ विरोधिनःशत्रून्वा-

उच्चाटयति सप्ताहात्सकुटुम्बान्विरोधिनः ।
क्षाराढ्यनिशया मन्त्रं लिखित्वा पौरुषेस्थिनि ॥ ११६ ॥
रविवारे निशीथिन्यां सहस्रमभिमन्त्रयेत् ।
तक्षिप्तं शत्रुसदने मण्डलाद्भ्रंशकं भवेत् ॥ ११७ ॥

क्षेत्रे क्षिप्तं सस्यहान्यैजवहृत्तुरगालये ।
षट्कोणमध्ये प्रविलिख्य मूलं साध्यान्वितं केसरगस्वराढ्यम् ।
काद्यष्टवर्गान्वितपत्रमब्जं लिखेद्बहिर्भूमिपुरेण वीतम् ॥ ११८ ॥
यन्त्रमेतल्लिखेद्भूर्जैरसेन जतुजन्मना ।
पीताम्बरेण संवेष्ट्य बध्नीयात्पीतसूत्रतः ॥ ११९ ॥

शिशूनां कण्ठतो बद्धं रक्षकं भूतभीतितः ।
वामबाहौ तु नारीणां पुत्रदं सुभगत्वकृत् ॥ १२० ॥
दक्षबाहौ नृणां बद्धं निर्द्धनानां धनप्रदम् ।
ज्ञानदं ज्ञानमिच्छूनां राज्ञां तु विजयप्रदम् ॥ १२१ ॥

एतद्यंत्रं पुराधृत्वागौतमाद्यामहर्षयः ।
लेभिरे मोक्षसंसिद्धिं साम्राज्यं भूमिनायकाः ॥ १२२ ॥
किंभूरिणानृणामे तद्वाञ्छितां यच्छति श्रियम् ।
कवित्वं राजमानं च कीर्तिमायुररोगताम् ॥ १२३ ॥

नैव तारासमा काचिद्देवता सर्वसिद्धिदा ।
कलौ युगे ततो गोप्या वांछितां सिद्धिमीप्सुना ॥ १२४ ॥

काम्य प्रयोग : नवजात शिशु की जिह्वा पर तीन दिन के भीतर शहद एवं घी से सोने की या श्वेत दूर्वा की शलाका से तारा मन्त्र लिखना चाहिए। ऐसा करने से ८ वर्ष व्यतीत होने पर वह बालक निश्चित ही महाकवि बन जाता है। वह दूसरे विद्वानों से अपराजित थथा राजाओं से पूजित बन जाता है।

ग्रहण के समय सरोवर में तैरते हुए काष्ठ को लाकर उसकी लेखनी से अमल के पत्ते पर तैल, मधु एवं मदिरा से तारा मन्त्र लिखकर मातृका वर्णों से वेष्टित कर

टयति निष्कासयति ॥ क्षाराढ्यनिशया सैंधवयुक्तयाहरिद्रया ॥११६-११७॥ यंमाह ॥ षडिति ॥ षट्कोणेसान्यान्वितं मूलममुंकरङेनियुक्तंलमन्तविलिख्याष्टदलकेसरंअंआमित्यादिस्वराणांयुग्मपत्रेषुकचटतपयशलेलिवर्गान्विलिख्यबहिश्चतुष्कोणनवेष्टयेत् ११८॥ जतुजन्मनालाक्षोत्थेनरसेन ॥ ११९ ॥ ॥ २०-१२१-१२२-१२३ ॥ तारेति ॥ गाप्या हंतदुपासहृतिकस्याप्यग्रे नप्रकाशयेत् ॥ १२४ ॥ इति

समचतुरस्र एवं मेखला वाले कुण्ड में उसे गाड़ कर अग्नि स्थापन कर तारा मन्त्र से गो दुग्ध मिश्रित रक्त कमलों से १ हजार आहुतियाँ देनी चाहिए। होम के बाद विविध अन्न एवं मांस से बलिमन्त्र से विधिवत बलि देनी चाहिए। बलिमन्त्र इस प्रकार है—

तार (ॐ) फिर 'पद्मे पद्म' तन्द्री (म) दीर्घ वियत् (हा) लोहित (प) वृष भगारूढ़ अत्रि (द्मे) फिर 'पद्मावती' फिर भिंटीशादय अनिल (ये) और अन्त में 'स्वाहा' लगाने से १६ अक्षर वाला बलिमन्त्र बनता है। यथा—"ॐ पद्मे पद्मे महा-पद्मे पद्मावती ये स्वाहा।"

फिर निशीथ काल में भी पूर्वोक्त (श्लोक ५०-५१ में बतलाये गये) मन्त्र से बलि देनी चाहिए। ऐसा करने पर व्यक्ति पण्डितों से अपराजित एवं महाकवि बन जाता है। उसमें सरस्वती एवं लक्ष्मी निवास करतीं हैं। तथा वह जनता को प्रसन्न करने की क्षमता प्राप्त करता है।

तारा मन्त्र का १०० बार जप करके जो व्यक्ति गोरोचन का तिलक लगाता है, वह जिसे देखता है वह तत्काल उसका दास बन जाता है।

मंगलवार की रात्रि में श्मशान से अंगार लाकर काले कपड़े में लपेट कर लाल धागों से बाँध कर मूल मन्त्र का १०० बार जप कर शत्रु के घर में फेंक देना चाहिए। ऐसा करने से १ सप्ताह में शत्रु का परिवार सहित उच्चाटन हो जाता है।

रविवार की रात्रि में पुरुष की हड्डी पर सैन्धव एवं हल्दी से मूलमन्त्र लिखकर उसे १००० मन्त्रों से अभिमन्त्रित करना चाहिए। उसे शत्रु के घर में फेंकने से वह पदच्युत हो जाता है। खेत में फेंकने से वहाँ फसल नहीं उगती।

षड्कोण, अष्टदल एवं भूपुर वाला यन्त्र भोज पत्र पर लाक्षारस से लिखना चाहिए, यथा—षड्कोण के मध्य में मूलमन्त्र तथा साध्य व्यक्ति का नाम लिखना चाहिए। केसरों में स्वर तथा अष्ट दलों में कवर्ग आदि ८ वर्ग लिखकर भूपुर से वेष्टित करना चाहिए। (देखिये चित्र नं० ७)

इस यन्त्र को पीले कपड़े में लपेटकर पीले धागों से बाँधना चाहिए।

यह यन्त्र बच्चों के गले में बाँधने से भूत प्रेत आदि के भय से उनकी रक्षा करता है। स्त्रियों को बायें हाथ में धारण करने से पुत्र एवं सौभाग्य देता है। पुरुषों को दाहिनीं भुजा में धारण करने से निर्धन को धन, जिज्ञासुओं को ज्ञान तथा राजा को विजय देता है।

प्राचीन काल में इस यन्त्र को धारण करके गौतम आदि ऋषियों ने मुक्ति प्राप्त की थी। अनेक राजाओं ने साम्राज्य प्राप्त किया था। विशेष क्या कहें, यह यन्त्र

मनुष्यों को मनोवाञ्छित सिद्धि, कवित्व, राज सम्मान, कीर्ति, आयु एवं आरोग्य देता है।

कलियुग में तारा के समान सर्वसिद्धिदायक कोई अन्य देवता नहीं है। अतः वाञ्छित सिद्धि चाहने वालों को यह विद्या गोपनीय रखनी चाहिए।

इति श्री शुकदेव चतुर्वेदि विरचितायां मन्त्रमहोदधेः
सटिप्पण्यां मोहिनी टीकायां चतुर्थस्तरङ्गः।

पञ्चम तरङ्ग

ताराभेदा अथोच्यन्ते शीघ्र सिद्धिप्रदायिनः ।
वह्निवामाक्षिबिन्द्वाढ्या कामिका भुवनेश्वरी ॥ १ ॥
भुवनेशी वर्मरुद्धाफडंता प्रणवादिका ।
सप्ताक्षरीमहाविद्या विरिञ्चिसमुपासिता ॥ २ ॥
वाक्शक्तिःकमलाकामो हंसोनुग्रहसर्गवान् ।
वर्मोग्रतारे वर्मास्त्रंविष्णवर्चाद्वादशाक्षरी ॥ ३ ॥
तारवर्मशिवाकामो मनुसगयुंतोभृगुः ।
वर्मास्त्रमेषासप्तार्णा सिद्धिदा विष्णुसेविता ॥ ४ ॥
एतयोःपञ्चमे बीजे सकारोहादिरांतिमः ।
तदाविद्याद्वयं प्रोक्तं चतुर्मुखसमर्चितम् ॥ ५ ॥
तारो मायावर्ममायावर्मास्त्रं च रसाक्षरी ।
हरिग्नित्रिमूर्तीन्दुयुग्वर्मपुटिताद्विजा ॥ ६ ॥
अस्त्रांतापञ्चवर्णोयंप्रोक्तमेकजटाद्वयम् ।
रेफशांतीन्दुयुङ्णांतोवर्मास्त्रंकामवाग्भवम् ॥ ७ ॥
नारायणोपासितेयं पंचार्णा सर्वसिद्धिदा ।

सितातांतावदाह ॥ वह्नीति ॥ रेफईन्दुरताकामिका ॥ तकारःत्रीं ॥ १ ॥ वर्मरुद्धाभुवनेशी वर्मद्वयमध्यगतेत्यर्थः यथा ॥ ॐ त्रीं ह्रींहुंफडिति ॥ २ ॥ विष्णुतासितामाह ॥ वागिति ॥ कामः क्लीं ॥ अनुग्रहसर्गवान् हसः सौ ॥ यथा-ऐंह्रींश्रींक्लीं सौःहुंउग्रतारेहुंफडिति ॥ ३ ॥ द्वितीयांविष्णूपांसितामाह ॥ तारेति ॥ शिवाह्रीं ॥ भृगुःसः यथा-ॐ हुंह्रींक्लीं सौःहुंफडिति ॥ ४ ॥ चतुर्मुखोपसितंमंत्रद्वयमाह ॥ एतयोरित ॥ एततोरनंतरं उक्तयोर्विष्णूपासितयोर्द्वादशाक्षरीसप्ताक्षरयोर्विद्ययोःपंचमेबीजेसकारूपेयदिआदौहकारः अंतेरेफः तदातदेवविद्याद्वयंचतुर्मुखसेवितंहःआदौ यस्यरःअंतिमोयस्यसःहादिरांतिमः ॥ यथा-ऐंह्रींश्रींक्लींहसौः हुंउग्रतारेहुंफडित्याद्या ॥ ॐ हुंह्रींक्लींहसौःहुंफडितिद्वितीं ॥ ५ ॥ एवजटाद्वयमाह ॥ तारइति ॥ अग्निन्त्रिमूर्तीदुयुक्हरिःरईबिदुरुक्तकारस्त्रीं ॥ स्पष्टम मन्यत् ॥ यथा-ॐ ह्रींहुंह्रींफट्इतिप्रथमा ॥ त्रींहुंह्रींहुंफडितिद्वितीया ॥ नारायणीयामाह रेफेति ॥ रेफःरः ॥ शांतिः ईकारः ॥ अनुस्वारयुक्तोणांतस्तः त्रीं ॥ गथा-त्रींहुंफट्क्लींऐमिति ॥ ६ ॥ ॥ ७ ॥

तारा के विविध मन्त्र : शीघ्र सिद्धि देने वाले तारामन्त्रों के भेद अब बतलाये जाते हैं—

वह्निवामाक्षिबिन्दु सहित कामिका (त्रीं) फिर भुवनेश्वरी (ह्रीं) एवं दो वर्म बीजों के मध्य भुवनेशी (हुं ह्रीं हुं) इनके अन्त में 'फट्' तथा आदि में प्रणव (ॐ) लगाने से ब्रह्मोपासित महाविद्या (तारा) का मन्त्र बनता है।

वाक् (ऐं) शक्ति (ह्रीं) कमला (श्रीं) काम (क्लीं) अनुग्रहसर्गवान् हस (सौः) वर्म (हुं) फिर 'उग्रतारे' वर्म (हुं) एवं अन्त में अस्त्र (फट्) लगाने से विष्णु के द्वारा उपासित तारा का १२ अक्षर का मन्त्र बनता है।

तार (ॐ) वर्म (हुं) शिवा (ह्रीं) काम (क्लीं) मनुसर्ग सहित भृगु (सौः) वर्म (हुं) एवं अन्त में अस्त्र (फट्) लगाने से विष्णुसेविता तारा का सप्ताक्षर मन्त्र बनता है।

इन दोनों मन्त्रों में पञ्चम बीज (सौः) में सकार से पहिले 'ह' लगाने से ब्रह्मोपासिता तारा के मन्त्र बन जाते हैं।

तार (ॐ) माया (ह्रीं) वर्म (हुं) माया (ह्रीं) वर्म (हुं) एवं अन्त में अस्त्र (फट्) लगाने से षडक्षर मन्त्र बनता है।

अग्नि त्रिमूर्तीन्दु सहित हरि (त्रीं) वर्म पुटिता अद्रिजा (हुं ह्रीं हुं) तथा अन्त में अस्त्र (फट्) लगाने से पञ्चाक्षर मन्त्र बनता है। ये दोनों एकजटा के मन्त्र हैं।

रेफ शान्ति इन्दु सहित ण (त्रीं) वर्म (हुं) अस्त्र (फट्) काम (क्लीं) तथा अन्त में वाग्भव (ऐं) लगाने से सर्वसिद्धिदायक नारायणोपासित तारा का पञ्चाक्षर मन्त्र होता है।

टिप्पणी : ब्रह्मोपासित तारा मन्त्र :

(i) ॐ त्रीं ह्रीं हुं फट्।

विष्णु द्वारा उपासित तारा के मन्त्र :

(ii) ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं सौः हुं उग्रतारे हुं फट्।

(iii) ॐ हुं ह्रीं क्लीं सौः हुं फट।

चतुर्मुखोपासित तारा के मन्त्र :

(iv) ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं हसौः हुं उग्रतारे हुं फट्।

(v) ॐ हुं ह्रीं क्लीं हसौः हुं फट्।

एकजटा के मन्त्र :

(vi) ॐ ह्रीं हुं ह्रीं हुं फट्।

(vii) त्रीं हुं ह्री हुं फट्।

नारायणोपासित तारा का मन्त्र :

त्रीं हुं फट् क्लीं ऐं।

आमूषामष्टविद्यानामृषिःशक्तिर्वसिष्ठजः ॥ ८ ॥

गायत्री तारके छन्दोदेवते पारिकीर्तिते ।
न्यासं तु पूर्ववत्कृत्वाध्यायेत्तारां हृदम्बुजे ॥ ९ ॥

इन आठों विद्याओं के ऋषि वसिष्ठज-शक्ति हैं, गायत्री छन्द, तारका देवता है। पूर्वोक्त रीति से न्यास कर हृदय कमल पर स्थित तारा का ध्यान करना चाहिए।

टिप्पणी : उक्त आठों मन्त्रों का विनियोग, ऋष्णदि न्यास, कराङ्गन्यास इस प्रकार करना चाहिए—

विनियोग : ॐ अस्यास्ताराविद्याया: वसिष्ठजो शक्ति ऋषि: गायत्री छन्द: तारका देवता (ह्रीं बीजं, हुं शक्ति, स्त्रीं कीलकं) ममाभीष्ट सिद्धये जपे विनियोग: ।

ऋष्यादिन्यास :

ॐ वसिष्ठज शक्तिर्ऋषये नम:, शिरसि ।
ॐ गायत्री छन्दसे नम: मुखे ।
ॐ तारका देवतायै नम: हृदि ।
ॐ ह्रीं बीजाय नम: गुह्ये ।
ॐ हुं बीजाय नम: पादयोः ।
ॐ स्त्रीं कीलकाय नम: सर्वाङ्गे ।

कराङ्गन्यास :

ॐ ह्रीं अंगुष्ठाभ्यां नम: । हृदयाय नम: ।
ॐ ह्रीं तर्जनीभ्यां स्वाहा । शिरसे स्वाहा ।
ॐ ह्रूं मध्यमाभ्यां वषट् । शिखायै वषट् ।
ॐ ह्रैं अनामिकाभ्यां हुम् । कवचाय हुम् ।
ॐ ह्रौं कनिष्ठकाभ्यां वौषट् । नेत्रत्रयाय वौषट्
ॐ ह्रः करतलकरपृष्ठाभ्यां फट् । अस्त्राय फट्

श्वेताम्बरां शारदचन्द्रकांतिं सद्भूषणां चन्द्रकलावतंसाम् ।
कर्त्रीकपालान्वितपाणिपद्मां तारां त्रिनेत्रां प्रभजेखिलद्धयै ॥ १० ॥

उक्तानामष्टविद्यानामृष्याद्याह ॥ अमूषामिति ॥ ८ ॥ गायत्रीछंदः ॥ तारादेवता ॥ पूर्ववत्षड्दीर्घाढ्यमायाबी जेनहार्हीमित्यादि ॥९॥ ध्यानमाह ॥ श्वेतेति ॥ कर्त्रीदृच्चे ॥१०॥

ध्यान : श्वेत वस्त्र धारण करने वाली, शरच्चन्द्र की कान्ति के समान आभा वाली, चन्द्रकला से सुशोभित मस्तकवाली दोनों हाथों में कर्तृका एवं कपाल धारण करने वाली एवं तीन नेत्र वाली तारा देवी का अभीष्ट सिद्धि के लिए ध्यान करता हूँ।

जपपूजादिकं सर्वमासां पूर्ववदाचरेत् ।
मधुयुक्परमान्नेन होमाद्विद्या निधिर्भवेत् ॥ ११ ॥
रक्तांवश्ये स्वर्णवर्णां स्तम्भने मारणेसिताम् ।
उच्चाटने धूम्र वर्णां शांतौश्वेतां स्मरेदिमाम् ॥ १२ ॥
भूरिणाकिमिहोक्तेन विद्या एताः प्रसाधिताः ।
पूरयन्त्यखिलं नृणां मनोरथमिहध्रुवम् ॥ १३ ॥

जप, पूजन एवं होम आदि : इन विद्याओं का जप, पूजन आदि सब कर्म पूर्वोक्त तारा मन्त्र (देखिये चतुर्थतरङ्ग श्लोक ८६-८८ की टिप्पणी) के समान करना चाहिए। मधु सहित परमान्न के होम से साधक विद्वान् बन जाता है।

वश्य में लाल वर्ण वाली, स्तम्भन में सुनहले वर्ण वाली, मारण में कृष्ण वर्ण, उच्चाटन में धूम्रवर्ण, शान्तिक पौष्टिक प्रयोगों में श्वेतवर्ण देवी का स्मरण करना चाहिए।

उक्त रीति से आराधना करने पर ये विद्याएँ मनुष्यों के समस्त मनोरथों को पूरा कर देती हैं—इस विषय में विशेष कहने की आवश्यकता नहीं है।

मायाहृद्भगवत्येकजटे ममजलंस्थिरा ।
वह्निघासनगत्रा पुष्पंप्रतीच्छानलवल्लभा ॥ १४ ॥
द्वाविंत्यक्षरोमन्त्रस्तारादिःसर्वसिद्धिदः ।
ऋषिःपतञ्जलिश्छन्दो गायत्र्येकजटापुनः ॥ १५ ॥
देवता दीर्घषट्काद्यमाययास्यात्षडंगकम् ।
ध्यानार्चनप्रयोगांस्तुकुर्यात्पूर्वोक्तमन्त्रवत् ॥ १६ ॥

एकजटामन्त्र : माया (ह्रीं) हृद् (नमः) फिर 'भगवत्येकजटे' फिर जल (व) वह्नि-घासनगता स्थिरा (ञ्च) फिर 'पुष्पं प्रतीच्छ' और अन्त में अनल वल्लभा (स्वाहा) लगाने तथा आदि तार (ॐ) लगाने से एकजटा का सर्वसिद्धिदायक २२ अक्षर का मन्त्र होता है।

इस मन्त्र का पतंजलि ऋषि, गायत्री छन्द तथा एकजटा देवता है। षड्दीर्घ सहित माया बीज से षडङ्गन्यास करना चाहिए। ध्यान, पूजा एवं प्रयोग आदि पूर्वोक्त मन्त्र के समान करने चाहिए।

प्रयोगानाह ॥ मायेति ॥ ११-१२-१३ ॥ एकजटामाह ॥ मायेति ॥ जलंवः वह्नयासन-गतास्थिरा रेफयुताजञ्च ॥ यथा ॐ ह्रींनमोभगवत्येकजटेममवज्र पुष्पंप्रतीच्छस्वातेति ॥ १४-१५-१६ ॥

टिप्पणी :

एकजटा के मन्त्र का उद्धार : ॐ ह्रीं नमो भगवत्येकटे वज्रपुष्पं प्रतीच्छ स्वाहा ।

विनियोग : ॐ अस्य श्रीमदेकजटा मन्त्रस्य पतंजलिर्ऋषिः
गायत्री छन्दः एकजटादेवता ममाभीष्ट सिद्धये जपे विनियोगः ।

कराङ्गन्यास : ह्रां एकजटायै अंगुष्ठम्यां नमः । हृदयाय नमः ।
ह्रीं तारिण्यै तर्जनीभ्यां नमः । शिरसे स्वाहा ।
ह्रूं वज्रोदके मध्यमाभ्यां नमः । शिखायै वषट् ।
ह्रैं उग्रजटे अनामिकाभ्यां नमः । कवचाय हुम् ।
ह्रौं महाप्रतिसरे कनिष्ठाभ्यां नमः । नेत्रत्रयाय वौषट् ।
ह्रः पिङ्गोग्रैकजटे करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः । अस्त्राय फट् ।

ध्यान: विश्व्यापकवारिमध्यविलसत्द्वेताम्बुजन्मस्थितां,
कर्त्रीखड्गकपालनीलनलिनंराजत्करां नीलभाम् ।
कांचीकुण्डल हारकंकणलसत्केयूरमंजीरता-
माप्तैर्नाग विभूषिततनूमारलनेत्रत्रयाम् ॥
पिङ्गोग्रैकजटां लसत्सुरसनां दंष्ट्राकरालाननां,
चर्मद्वीपिवरं कटौ विदधतीं श्वेतास्थि पट्टालिकाम् ।
अक्षोभ्येणविरामानशिरसं स्मेराननां भीरुहां,
तारां शावहृदासनां हृक्कुचाम्बात्रि लोध्याः स्मरेत् ॥

रमां मायाहसौव्यापिन्यारूढौसर्गसंयुतौ ।
वर्मास्त्रंनीलभृगुरस्वत्यैठद्वयमीरितम् ॥ १७ ॥
प्रणवाद्यो मनुःसर्वद्धिदो मनुवर्णकः ।
ऋष्याद्या ब्रह्मगायत्रीतथानीलसरस्वती ॥ १८ ॥
नेत्रचंद्रेंदुनेत्रांगनेत्रार्णैरंगकल्पना ।
मन्त्रोत्थितैरथोध्यायेद्देवीं सर्वेष्टसिद्धिदाम् ॥ १९ ॥

नील सरस्वती का मन्त्र : रमा (श्रीं) माया (ह्रीं) व्यापिनी एवं विसर्ग सहित हस् (हसौः) वर्म (हुं) अस्त्र (फट्) फिर 'नील' भृगु (स) फिर 'रस्वत्यै' और अन्त में 'स्वाहा' तथा प्रारम्भ में प्रणव लगने से १४ अक्षर वाला नील सरस्वती का मन्त्र बन जाता है ।

नीलसरस्वतोमाह ॥ रमेति ॥ व्यापिन्यारूढौऔयुतौ ॥ भृगुःसः ॥ रस्वत्यस्वरूपम् ॥ ठद्वंयं स्वाहा ॥ यथा-ॐ श्रींह्रींहसःहुंफट्नीलहरस्वत्यैस्वाहा ॥ मनुर्गश्चतुर्दशार्णः ॥ १७-१८ ॥ षडंगमाह ॥ नेत्रेति ॥ नेत्रशब्देनार्णद्वयंचद्रएकः ॥ अंगानिषट् ॥ १९ ॥

इस मन्त्र के ब्रह्मा ऋषि, गायत्री छन्द तथा नील सरस्वती देवता हैं। मन्त्र के क्रमशः २, १, १, २, ६ तथा २ अक्षरों से षडङ्गन्यास कर सब मनोरथों को पूर्ण करने वाली देवी का ध्यान करना चाहिए।

टिप्पणी :

मन्त्रोद्धार : ॐ श्रीं ह्रीं ह्सौः हुं फट् नीलसरस्वत्यै स्वाहा।

विनियोग : ॐ अस्य श्री नीलसरस्वतीमन्त्रस्य ब्रह्माऋषिः गायत्री छन्दः नील-सरस्वतीदेवता ममाभीष्टसिद्धये जपे विनियोगः।

कराङ्गन्यास : ॐ श्रीं अंगुष्ठाभ्यां नमः। हृदयाय नमः।
ह्रीं तर्जनीभ्यां नमः। शिरसे स्वाहा।
ह्सौः मध्यमाभ्यां नमः। शिखायै वषट्।
हुं फट् अनामिकाभ्यां नमः। कवचाय हुम्।
नील सरस्वत्यै कनिष्ठाभ्यां नमः। नेत्रत्रयाय वौषट्।
स्वाहा करतलकरपृष्ठभ्यां नमः। अस्त्राय फट्।

घण्टाशिरःशूलमसिकराग्रैःसंबिभ्रतींचन्द्रकलावतंसाम्।
प्रमथ्नतीं पादतले पशुंतां भजेमुदानीलसरस्वतीशाम् ॥ २० ॥

ध्यान : दाहिने हाथों में शूल एवं तलवार तथा बायें हाथों में घण्टा एवं मुण्ड धारण करने वाली, शिर पर चन्द्रकला धारण करने वाली तथा पादतल में पशु को प्रमन्थन करती हुई प्रसन्न चित्त वाली नीलसरस्वती का ध्यान करता हूँ।

जपपूजादिकं सर्वमस्याःपूर्ववदीरितम्।
विशेषाज्जयदा वादे विद्येयं साधिता नृणाम् ॥ २१ ॥

जप पूजा आदि : इस मन्त्र की भी जप, पूजा आदि की विधि पूर्वोक्त मन्त्र के समान ही कही गयी है। यह विद्या सिद्ध हो जाने पर विशेष रूप से वाद-विवाद में विजयप्रद कही गयी है।

माया सानन्तसंयुक्ता वर्महुन्ङेयतापुनः।
तारामहापदाद्या सा भृगुब्रह्मानलांतिम ॥ २२ ॥
दुस्तरांस्तारयद्वंद्वं तरयुग्मं च ठद्वयम्।
द्वात्रिंशदर्णा ताराद्या पूजास्याःपूर्ववन्मता ॥ २३ ॥

ध्यानमाह। घटामिति ॥ शूलासीदक्षयोः ॥ घंटाशिरस्त्रीवामयो ॥ २० ॥ ॥ २१ ॥ मंत्रांतरमाह ॥ मायेति ॥ सामायाअनंतसंयुता ह्रां ङेयुतातारा तारायै ॥ सामहा पदाद्या महातारायं ॥ भृगुः सः ॥ ब्रह्माक ॥ अनलांतिमोलः ॥ स्पष्टमन्यत् तथा-ताराद्या त्रींबीजाद्या ॥ यथा-ॐत्रींह्रांहुनमस्तारायसकलदुस्तरांस्तारय २ तर २ स्वाहेति ॥ ॥ २२-२३ ॥

तारामन्त्र : आदि में तारा (ॐ त्रीं) सानन्त संयुक्ता माया (ह्रां) वर्म (हुं) हृद (नमः) चतुर्थ्यन्त तारा एवं महातारा (तारायै महातारायै) भृगु (स) ब्रह्मा (क) अनलान्तिम (ल) फिर 'दुस्तरां', २ बार 'तारय' २ बार 'तर' और अन्त में 'स्वाहा' लगाने से ३२ अक्षर वाला तारामन्त्र बन जाता है।

इस मन्त्र का पूजन आदि सब कर्म पूर्वोक्त तारामन्त्र के समान जानना चाहिए।

टिप्पणी : मन्त्रोद्धार : ॐ त्रीं ह्रां हुं नमस्तारायैमहातारायै सकल दुस्तरांस्तारय तारय तर तर स्वाहा।

विद्याराज्ञीमथोवक्ष्ये सुरेन्द्रस्यापि दुर्लभाम्।
लब्ध्वा यां मानवाःस्वेष्टं साधयन्त्यर्चनेरताः ॥ २४ ॥
वाङ्माया श्रीर्मनोजन्माहसोनुग्रह बिंदुयुक्।
कामःशक्तिश्चवाग्बीजं फातालार्धीशबिंदुयुक् ॥ २५ ॥
स्त्रीबीजं नीलतारेस्यात्सबुद्धयंता सरस्वती।
अत्रीसरेफौक्रमतःशेषवामाक्षिसंयुतौ ॥ २६ ॥
सानुस्वारौकामबीजंफांतोमांसार्धविदुगः।
सर्गीभृगुर्वाग्ह्लेखारमाकामोथसौद्वयम् ॥ २७ ॥
सर्गान्तंभुवनेशानीस्वाहा द्वात्रिंशदक्षरी।
महाविद्या हि साख्याता सेविता भोगमोक्षदा ॥ २८ ॥
ब्रह्मानुष्टुप्सरस्वत्यो मुन्याद्या अङ्गकल्पना।
पंचपचाष्टपचेषुयुगार्णैर्मन्त्रसंभवैः ॥ २९ ॥

विद्याराज्ञीमन्त्र (महाविद्यामन्त्र) : अब सुरेन्द्र के लिए भी दुर्लभ विद्याराज्ञी को बतलाता हूँ, जिसे प्राप्त कर पूजन में तत्पर होकर मनुष्य अपने समस्त अभीष्टों को सिद्ध कर लेता है।

वाग् (ऐं) माया (ह्रीं) श्री (श्रीं) मनोजन्मा (क्लीं) अनुग्रह विन्दुसहित हंस (सौं) काम (क्लीं) शक्ति (ह्रीं) वाग्बीज (ऐं) लार्धीशविन्दु युक्त फ (ब्लूं) स्त्रीबीज (स्त्रीं)

द्वात्रिंशदक्षरीमाह ॥ विद्येति ॥२४॥ वागिति ॥ मनोजन्माक्लीं ॥ अनुग्रहबिंदुयुक्तहसः सःसौं लार्धीशबिंदुयुक्फांतःलऊ बिंदुयुतोबःब्लूं॥ २५ ॥ स्त्रीबीजंस्त्रींसरेफोरफयुक्तौ शेषवामाक्षसंयुतौ क्रमतआईसयुतौ अत्रीदकारौ ॥ २६ ॥ सानुस्वारौद्रांद्रींमिति ॥ कामबीजक्लीं ॥ मासार्धीबिंदुयुग्लऊबिंदुयुक्तःफांतोबःब्लूं॥ सर्गीभृगुःसः ॥ ह्लल्लेखा ह्रीं यथा-ऐंह्रींश्रींक्लींसौंक्लींह्रींऐं ब्लूंस्त्रींनीलतारेसरस्वतिद्रांद्रींक्लींब्लूंसःऐंह्रीं श्रींक्लीं सौंःसौंःह्रींस्वाहेति ॥ २७-२८ ॥ षडंगमाह ॥ पचेति ॥ २९ ॥

फिर 'नील तारे' सम्बुद्धयन्त सरस्वती (सरस्वति) रेफ शेषवामाक्षि सहित सानुस्वार अस्त्रो (द्रां द्रीं) कामबीज (क्लीं) मांसार्धबिन्दुयुत फान्त (ब्लूं) सर्गीभृगु (सः) वाग् (ऐं) हृल्लेखा (ह्रीं) रमा (श्रीं) काम (क्लीं) २ बार विसर्गान्त सौ (सौः सौः) भुवनेशानी (ह्रीं) तथा अन्त में स्वाहा' से ३२ अक्षर का मन्त्र बनता है।

यह विद्या महाविद्या कही गयी है तथा साधक को भुक्ति एवं मुक्ति दोनों ही प्रदान करती है।

इस मन्त्र के ब्रह्मा ऋषि, अनुष्टुप छन्द तथा सरस्वती देवता हैं। तथा मन्त्र के क्रमशः ५, ५ ८, ५, ५ एवं ४ वर्णों से षडङ्गन्यास करना चाहिए।

टिप्पणी : *मन्त्रोद्धार* : ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं सौं क्लीं ह्रीं ऐं ब्लूं स्त्रीं नीलतारे सरस्वति-द्रां द्रीं क्लीं ब्लूं सः ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं सौः सौः ह्रीं स्वाहा।

विनियोग : ॐ अस्य श्री महाविद्यामन्त्रस्य ब्रह्माऋषिः अनुष्टुप् छन्दः सरस्वती देवता ममाभीष्टसिद्धये जपे विनियोगः।

कराङ्गन्यास : ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं सौं अंगुष्ठाभ्यां नमः। हृदयाय नमः।
क्लीं ह्रीं ऐं ब्लूं स्त्रीं तर्जनीभ्यां नमः। शिरसे स्वाहा।
नीलतारे सरस्वति मध्यमाभ्यां नमः। शिखायै वषट्।
द्रां द्रीं क्लीं ब्लूं सः अनामिकाभ्यां नमः। कवचाय हुम्।
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं सौः कनिष्ठाभ्यां नमः। नेत्रत्रयाय वौषट्।
सौः ह्रीं स्वाहा करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः। अस्त्राय फट्।

शवासनां सर्पविभूषणाढ्यां कर्त्रीं कपालं चषकंत्रिशूलम्।
करैर्दधानां नरमुण्डमालां त्र्यक्षां भजेनीलसरस्वतीं ताम् ॥ ३० ॥

ध्यान : शव पर आसीन, सर्पों के आभूषणों से सुशोभित, चारों हाथों में क्रमशः कर्तृका, कपाल, चषक एवं त्रिशूल धारण किये हुए, मुण्डमाला से अलंकृत, तीन नेत्र वाली नील सरस्वती का ध्यान करता हूँ।

चतुर्लक्षं जपेद्विद्यां किंशुकैर्मधुरान्वितैः।
दशांशं जुहुयाद्वह्नौ श्रद्धापूर्वमतंद्रितः ॥ ३१ ॥

जप संख्या एवं हवन : इस विद्या का ४ लाख जप करना चाहिए। तथा फिर अग्नि में मधु सहित पलाशपुष्पों (टेसू के फूल) से श्रद्धा एवं मनोयोग सहित दशांश-होम करना चाहिए।

ध्यानमाह। शवेति ॥ कर्त्रीत्रिशूलेदक्षयोः ॥ ३० ॥ किंशुकैः पलाशपुष्पैः ॥ ३१ ॥

पूर्वोक्ते पूजयेत्पीठेवक्ष्यमाणेन वर्त्मना ।
आदौत्रिकोणं षट्कोणमष्टषोडशपत्रके ॥ ३२ ॥
द्वत्रिंशत्पत्रमब्जंस्याच्चतुष्षष्टिदलंततः ।
त्रिरेखाढ्यंधरागेहं चतुरस्त्रमतःपरम् ॥ ३३ ॥
एवं यन्त्रंसमालिख्य बाह्यतःपूजनं चरेत् ।

पीठ पूजा एवं पूजनयन्त्रः पूर्वोक्त पीठ पर वक्ष्यमाण रीति से देवी का पूजन करना चाहिए ।

सर्वप्रथम त्रिकोण, फिर क्रमशः षड्कोण, अष्टदल, षोडशदल, द्वात्रिंशद्दल एवं चौसठदल कमल बनाकर तीनों रेखाओं वाले भूपुर से वेष्टित कर चतुरस्त्र बनाना चाहिए । इस प्रकार का मन्त्र लिखकर उसके बाह्य भाग से पूजन शुरू करना चाहिए । (देखिये चित्र नं० ८)

टिप्पणी : पिछले अध्याय में बतलायी गयी रीति के अनुसार भूत शुद्धि,पीठान्यास, दिग्बन्ध एवं अर्घ्यस्थापन कर तरङ्ग ४ श्लोक ८६-८८ की टिप्पणी में बतलायी गयी रीति से पीठ पूजा कर ध्यान, आवाहन आदि उपचारों से विधिवत देवी का पूजन कर योनि मुद्रा दिखाकर 'देवि आज्ञापय आवरणं ते पूजयामि' कहते हुए देवी की आज्ञा लेकर वक्ष्यमाण रीति से आवरण पूजा करनी चाहिए ।

चतुरस्त्रस्याग्निकोणेविघ्नेशं परिपूजयेत् ॥ ३४ ॥
वायुकोणे क्षेत्रपालमैशान्ये भैरवं तथा ।
नैर्ऋते योगिनीःसर्वा वामभागे गुरुं यजेत् ॥ ३५ ॥
भूगृहस्याद्य रेखायामणिमालघिमातथा ।
महिमाचेशितापूज्या वशिताकामपूरणी ॥ ३६ ॥
गरिमाप्राप्तिरित्येताःपूज्याःपूर्वादिदिक्क्रमात् ।
धरागृहस्यरेखायां द्वितीयायां तु भैरवाः ॥ ३७ ॥
असितांगो रुरुश्चण्डःक्रोधोन्मत्तकपालिनः ।
भीषणश्चाथसंहार एतेष्टौ भैरवाःस्मृताः ॥ ३८ ॥
भूमिगेहेतृतीयायां रेखायां मातरःपुनः ।
ब्राह्मीमाहेश्वरीचैवकौमारीवैष्णवीतथा ॥ ३९ ॥
वाराहींद्राणिकाचैव चामुण्डासप्तमीस्मृता ।
महालक्ष्मीस्तथेज्यास्ताःपूर्वादिषु यथाक्रमम् ॥ ४० ॥
इत्थमाद्यावृतिं चेत्वा योनिमुद्रां प्रदर्शयेत् ।

३२-३३-३४-३५-३६-३७-३८-३९-४० ॥

आवरण पूजा : चतुरस्र के अग्नि कोण में गणपति का, वायुकोण में क्षेत्रपाल का, ईशान कोण में भैरव का तथा नैऋत्य में समस्त योगिनियों का पूजन करना चाहिए। चतुररस्र के वाम भाग में गुरु पूजन करना चाहिए।

भूपुर की प्रथम रेखा में पूर्व आदि क्रम से क्रमशः अणिमा, लघिमा, महिमा, ईशिता, वशिता, कामपूरणी, गरिमा एवं प्राप्ति का पूजन करना चाहिए। भूपुर की द्वितीय रेखा में ८ भैरवों का पूजन करना चाहिए। असितांग, रुरु, चण्ड, क्रोध, उन्मत्त, कपाली, भीषण एवं संहार–ये आठ भैरव बतलाये गये हैं। भूपुर की तृतीय रेखा में मातृकाओं का पूजन करना चाहिए। ब्राह्मी, माहेश्वरी, कौमारी, वैष्णवी, वाराही, इन्द्राणी, चामुण्डा एवं महालक्ष्मी इन मातृकाओं का पूर्व आदि दिशाओं में पूजन करना चाहिए। इस प्रकार प्रथम आवरण का पूजन कर योनिमुद्रा दिखलानी चाहिए।

चतुःषष्टिदले पद्मे शक्तीरर्चेच्चतावतीः ॥ ४१ ॥
कुलेशी कुलनन्दा च वागीशी भैरवीतथा।
उमाश्रीःशान्तयाचण्डा धूम्राकाली करालिनी ॥ ४२ ॥
महालक्ष्मीश्चकंकालारुद्रकाली सरस्वती।
वाग्वादिनी च नकुलीभद्रकाली शशिप्रभा ॥ ४३ ॥
प्रत्यंगिरा सिद्धलक्ष्मीरमृतेशी च चण्डिका।
खेचरी भूचरी सिद्धाकामाक्षीहिंगुलाबला ॥ ४४ ॥
जया च विजया चाप्यजिता नित्यापराजिता।
विलासिनी तथा घोराचित्रामुग्धा धनेश्वरी ॥ ४५ ॥
सोमेश्वरीमहाचण्डाविद्याहंसीविनायिका।
वेदगर्भा तथा भीमा उग्रावैद्या च सद्गतिः ॥ ४६ ॥
उग्रेश्वरी चन्द्रगर्भा ज्योत्स्ना सत्या यशोवती।
कुलिका कामिनी काम्याज्ञानवत्यथडाकिनी ॥ ४७ ॥
राकिनी लाकिनी चाथ काकिनी शाकिनीत्यपि।
हाकिनीतिचतुःषष्टिशक्तयः सिद्धिदायिकाः ॥ ४८ ॥
दर्शयेत्खेचरीमुद्रां द्वितीयावरणेर्चिते।

फिर ६४ दलवाले कमल में ६४ शक्तियों का पूजन करना चाहिए। १. कुलेशी २. कुलनन्दा, ३. वागीशी, ४. भैरवी, ५. उमा, ६ श्री, ७. शान्तया, ८. चण्डा, ९. धूम्रा १०. काली ११. करालिनीं १२. महालक्ष्मी १३. कंकाली १४. रुद्रकाली १५. सरस्वती १६. वाग्वादिनी १७. नकुली १८. भद्रकाली १९ शशिप्रभा २०. प्रत्यं-

---

योनिमुद्रोक्ता ॥ ४१ ॥

गिरा २१. सिद्धलक्ष्मी २२. अमृतेशी २३. चण्डिका २४. खेचरी २५. भूचरी २६. सिद्धा २७. कामाक्षी २८. हिंगुला २९. बला, ३०. जया ३१. विजया ३२. अजिता ३३. नित्या, ३४. अपराजिता ३५. विलासिनी, ३६.घोरा ३७. चित्रा ३८. मुग्धा ३९. धनेश्वरी ४०. सोमेश्वरी ४१. महाचण्डा ४२. विद्या ४३. हंसी ४४. विनायका ४५. वेदगर्भा ४६ भीमा ४७. उग्रा ४८. वैद्या ४९. सद्गति ५०. उग्रेश्वरी ५१. चन्द्रगर्भा ५२. ज्योत्स्ना ५३. सत्या ५४. यशावती ५५. कुलिका ५६. कामिनी ५७. काम्या ५८. ज्ञानवती ५९. डाकिनी ६०. राकिनी ६१. लाकिनी ६२. काकिनी ६३. शाकिनी एवं ६४. हाकिनी—ये चौसठ सिद्धिदायिका शक्तियाँ होती है। द्वितीय आवरण की पूजा के बाद खेचरीमुद्रा दिखलानी चाहिए।

द्वात्रिंशत्पत्रमध्ये तु पूज्या एतास्तुशक्तयः ॥ ४९ ॥
किराता योगिनीवीरा वेताला यक्षिणी हरा।
ऊर्ध्वकेशी च मातंगी मोहिनी वंशवर्द्धिनी ॥ ५० ॥
मालिनी ललिता दूती मनोजा पद्मिनी धरा।
वर्वरी छत्रहस्ता च रक्तनेत्राविचर्चिका ॥ ५१ ॥
मातृकादूरदर्शी च क्षेत्रेशी रंगिनी नटी।
शान्तिर्दीक्षावज्रहस्ताधूम्राश्वेतासुमंगला ॥ ५२ ॥
इष्ट्वा तृतीयावरणं बीजमुद्रां प्रदर्शयेत्।

बत्तीस दल वाले कमल पर इन शक्तियों की पूजा करनी चाहिए—१. किराता २.योगिनी ३. वीरा ४. वेताला ५. यक्षिणी ६.हरा ७. ऊर्ध्वकेशी ८. मातंगी ९. मोहिनी १०. वंशवर्द्धिनी ११. मालिनी १२. ललिता १३. दूती १४. मनोजा १५. पद्मिनी १६. धरा १७. वर्वरी १८. छत्रहस्ता १९. रक्तनेत्रा २०. विचर्चिका २१. मातृका २२. दूरदर्शी २३. क्षेत्रेशी २४. रंगिनी २५ नटी २६. शान्ति २७. दीक्षा २८. वज्रहता २९. धूम्रा ३०. श्वेता ३१. सुमङ्गला एवं ३२.सर्वेश्वरी। तृतीय आवरण का पूजन कर बीज मुद्रा दिखलानी चाहिए।

ततःषोडशपत्रेषु पूज्याःषोडशशक्तयः ॥ ५३ ॥
मुग्धाश्रीः कुरुकुल्लाचत्रिपुरातोतलाक्रिया।

चतुःषष्टिदलेनावनीःशक्तीरभ्यर्च्यखेचरीमुद्रांदर्शयेत् ॥ तल्लक्षणंयथा ॥ सव्यंदक्षिणहस्तेतुसव्यहस्तेतुदक्षिणम् ॥ बहूकृत्वामहादेविहस्तौसंपरिवर्त्यच ॥ कनिष्ठानामिकेदेवियुक्तातेनक्रमेणतु ॥ तर्जनीभ्यांसमाक्रांतेसर्वोर्ध्वमपिमध्यमे ॥ अगुष्ठौतुमहादेवि विसरलावपिकारयेत् ॥ इयंसाखेचरीनामपूजासर्वोत्तमोत्तमेनि ॥ ४९- २ ॥ तृतीयावरणंपूज्यबीजमुद्रांदर्शयेत् ॥ तल्लक्षणंयथा–परिस्फुरौस्पष्टावर्द्धचंद्राकृतीप्रिये ॥ तर्जन्यंगुष्ठयुगपत्कारयेत्ततः ॥ अधःकनिष्ठावष्टब्धेमध्यमेविनियोजयेत् ॥ तथैवकुटिलेयोज्येसर्वांधस्तादनामिके ॥ बीजमुद्रेय मुदितासर्वसिद्धिप्रदायिनीनि ॥ ५३ ॥

रतिःप्रीतिस्तथाबालासुमुखीश्यामलांविला ॥ ५४ ॥
पिशाची च विदारी च शीतलावज्रयोगिनी ।
सर्वेश्वरीतिसंपूज्य सृणिमुद्रां प्रदर्शयेत् ॥ ५५ ॥

इसके बाद षोडशदलों में इन १६ शक्तियों का पूजन करना चाहिए—१. मुग्धा २. श्री ३. कुरुकुल्ला ४. त्रिपुरा ५. तोतला ६. क्रिया ७. रति ८. प्रीति ९. बाला १०. सुमुखी ११. श्यामलाविला १२. पिशाची १३. विदारी १४. शीतला १५. वज्रयोगिनी एवं १६. सर्वेश्वरी । इस प्रकार चतुर्थ आवरण का पूजन कर अंकुश मुद्रा दिखलानी चाहिए ।

अष्टपत्रे स्वस्वमन्त्रैर्यजेदष्टसरस्वतीः ।
तारोहृल्लोहितः सत्योवैकुण्ठानंतसंयुताः ॥ ५६ ॥
भृगुर्नेशब्दरूपेवाङ्मायाकामो वदद्वयम् ।
वाग्वादिन्यग्निकान्तेतिमन्त्रो वेदाक्षिवर्णवान् ॥ ५७ ॥
अनेन मनुना पूर्वपत्रे वागीश्वरीं यजेत् ।
वराहहंसचक्रीन्द्रसंयुताभुवनेश्वरी ॥ ५८ ॥
वदयुग्मंचचित्रेश्वरिवाग्बीजानलप्रिया ।
द्वादशार्णेन मनुना वह्नौचित्रेश्वरीं यजेत् ॥ ५९ ॥
वाग्बीजंकुलजेवाक्चसरस्वत्यनलांगना ।
एकादशार्णमनुना कुलजां दक्षिणेर्चयेत् ॥ ६० ॥
बाङ्मायाश्रींवदद्वन्द्वंकीर्न्तीश्वरिवसुप्रिया ।
त्रयोदशार्णे नयजेन्नैर्ऋत्ये कीर्तिनायिका ॥ ६१ ॥
वाङ्मायाचान्तरिक्षान्तेसरस्वतिचठद्वयम् ।
रव्यर्णेनयजेत्प्रत्यगन्तरिक्षसरस्वतीम् ॥ ६२ ॥

-५४ षडशपत्रंसपूज्यसृणिमुद्रांमकुशमुद्रांदर्शयेत् ॥ सापूर्वमुक्त ॥ ५५ ॥ अष्टपत्रे-सरस्वत्यष्टकंस्वमन्त्रैर्यजेदित्युक्तम् ॥ तासांमंत्रान्क्रमेणवदन्नादौवागीश्वरीमंत्रमाह ॥ तार इति ॥ लोहितःपः वैकुंठानतसयुतःसत्यः मआःयुतोदद्या ॥ ५६ ॥ भृगुःसः स्पष्टमन्यत्॥ यथा–ॐ नमःपद्मासनेशब्दरूपेऐं ह्रीं क्लीं वद वद वाग्वादिनीस्वाहेति वेदाक्षिवर्णवान् चतुर्विंशत्यर्णः ॥ ५७ ॥ चित्रेश्वरीमंत्रमाह ॥ वारहेति ॥ वराहेति ॥ वराहहंसचक्रींद्र-संयुताभुनेश्वरी हसकलह्रीं ॥ ५८ ॥ वद २ चित्रेश्वरि ऐंस्वाहेति ॥ प्रथमंषट्कूटम् ॥ यथा–क्लींवद २ चित्रेश्वरीऐं स्वाहा ॥ वह्नौआग्नकोणे ॥५९॥ कुलजामंत्रमाह ॥ वा।गति ॥ ऐं कुल जेऐं सरस्वतिस्वाहेति ॥ ६० ॥ कीर्तीश्वरीमंत्रमाह ॥ वागिति ॥ ऐं ह्रीं श्रींवद २ कीर्ती-श्वरिस्वाहेति ॥ वसुरग्नि ॥ ६१ ॥ अंतरिक्षसरस्वतीमन्त्रमाह वागिति ॥ ऐं ह्रीं अंतरिक्ष-सरस्वतिस्वाहेति ॥ ६२ ॥

वराहहंसचण्डीशजनार्दनकृशानुयुक् ।
सेन्दुर्योनिश्चलकुलीभृगुवह्नीन्दुयुङ्मनुः ॥ ६३ ॥
अरुणाभृगुशिख्यग्निसंयुताशान्तिरिन्दुयुक् ।
वाङ्मायाश्रीषुबीजानिघ्रींघटांतेसरस्वतीम् ॥ ६४ ॥
घटेवदतरद्वन्द्वं रुद्राज्ञाटायुताममं ।
अभिलाषंकुरुद्वन्द्वंप्रेयसीकृष्णवर्त्मनः ॥ ६५ ॥
गुणवेदार्णेन यजेद्वायौ घटसरस्वतीम् ।
भूधरेन्द्रयुतोर्धीशोबिन्द्वाढ्योवेंवदद्वयम् ॥ ६६ ॥
त्रींहुंफट्नवार्णेननीलामर्चेदुदग्दिशि ।
वाग्बीजमधराक्रान्तोनकुलीबिन्दुमान्पुनः ॥ ६७ ॥
शान्तिचन्द्राढ्यमाकाशंकिणीद्वन्द्वंसहग्जलम् ।
कूर्मद्वन्द्वंभगाक्रान्तंनवार्णेनामुना यजेत् ॥ ६८ ॥
मन्त्रेणेशानदिग्भागे किणिसंज्ञां सरस्वतीम् ।
पञ्चमावृत्तिमाराध्य क्षोभमुद्रां प्रदर्शयेत् ॥ ६९ ॥

अष्टदलों पर अपने अपने मन्त्र से आठ सरस्वतियों का पूजन करना चाहिए—

तार (ॐ) हृद् (नमः) लोहित (प) वैकुण्ठानन्त सहित सत्य (आ) भृगु (स) फिर 'नेशब्दरूपे' फिर वाङ् (ऐं) माया (ह्रीं) काम (क्लीं) २ बार वद (वद वद) फिर 'वाग्वादिनी, और अन्त में अग्निकान्ता (स्वाहा) लगाने से २४ अक्षर वाला मन्त्र बनता है। इस मन्त्र से पूर्व दिशा के पत्र पर वागीश्वरी का पूजन करना चाहिए।

घटसरस्वतीमंत्रमाह ॥ एवंविधायोनिरेकारः ॥ कीदृशी वराहहंसचंडीशजनार्दनकृशानुयुक् हसखफरयुता ॥ सेंदुःसबिंदुश्च ॥ कूटमिदम् ॥ मनुरौकारः ॥ कीदृशः ॥ लकुलीभृगुवह्नींदुयुक् हसरबिंदुयुतः ॥ शांतिरीअरुणादि युता ॥ अरुणाहः भृगुःसः ॥ शिखीफः ॥ अग्नीरःएतैर्युता सबिंदुश्चवाक् एं मायाह्रींश्रीश्रीः ॥ इषुबीजानिबाणबीजानि द्रांद्रींक्लींब्लूंसइति ॥ घ्रीमितिस्वरूपम् टायतातनीयांतारुद्राज्ञा ॥ कृष्णवर्त्मनोग्नेःप्रेयसीस्वाहा ॥ यथा-हसफ्रंह्स्रौःह्स्फ्रींएं ह्रींश्रींद्रांद्रींक्लींब्लूंसःघ्रींघटसरस्वतीघटेवद २ तर २ रुद्राज्ञयाममाभिलाषं कुरुकुरुस्वाहेति ॥ ६३-६४-६५ ॥ गुणवेदार्णस्त्रिचत्वारिंशदक्षरः ॥ नीलामंत्रमाह ॥ भूधरेति ॥ अर्धीशऊ ॥ भूधरोबेः ॥ इन्द्रोलः ॥ ताभ्यांयुतः बिंदुयुतश्चब्लूं ॥ ववदवदस्वरूपम् यथा-ब्लूंवंवद २ त्रींहुंफडिति ॥ किणिमंत्र माह ॥ वाग्बीजमिति अधराक्रांतोनकुलीएं हैंह्रींकिणि २ विच्चेइति ॥ ६६-६७-६८ ॥ एवंसरस्वत्यष्ट कंसंपूज्य क्षोभमुद्रादर्शनम् ॥ तल्लक्षणम्--मध्यमांमध्यमेकृत्वाकनिष्टांगुष्ठरोधिते ॥ तर्जन्यौदण्डवत्कृत्वामध्यमोपर्यनामिके ॥ क्षोभाविभानामुद्रेयंसर्वसंक्षोभकारिणीति ॥ ६९ ॥

वराह हंसचक्रीन्द्रसंयुता भुनेश्वरी (क्लीं) २ बार वद (वद वद) फिर 'चित्रेश्वरी' वाग् (ऐं) और अन्त में अनलप्रिया (स्वाहा) लगाने से १० अक्षर वाला मन्त्र बनता है। इससे अग्निकोण में चित्रेश्वरी का पूजन करना चाहिए।

वाग्बीज (ऐं) फिर 'कुलजे, वाग् (ऐं) 'सरस्वति' तथा अन्त में अनलाङ्गना (स्वाहा) लगाने से ११ अक्षर वाला मन्त्र बनता है। इससे दक्षिण में कुलजा का पूजन करना चाहिए।

वाग् (ऐं) माया (ह्रीं) श्री (श्रीं) २ बार वद (वद वद) फिर 'कीर्तीश्वरि' और अन्त में वसुप्रिया (स्वाहा) लगाने से १३ अक्षर का मन्त्र बनता है। इससे नैऋत्यकोण में कीर्तीश्वरी का पूजन करना चाहिए।

वाग् (ऐं) माया (ह्रीं) फिर 'अन्तरिक्ष सरस्वति' और अन्त में 'स्वाहा' लगाने से १२ अक्षर का मन्त्र बनता है। इससे पश्चिम में अन्तरिक्ष सरस्वती का पूजन करना चाहिए।

वराह हंस चण्डीशजनार्दनकृशानु युक् सेन्दु (हसक्ष्मं) लकुली भृगुवह्नीन्दुयुक् मनु (ह्स्रौः) अरुणाभृगु शिख्यग्नि संयुत इन्दुयुक् शान्ति (ह्स्फ्रीं) वाग् (ऐं) माया (ह्रीं) श्री (श्रीं)* इषुबीज (द्रां द्रीं क्लीं ब्लूं सः) फिर 'घ्रीं घट सरस्वतीघटे' फिर २ बार 'वद' एवं 'तर' (वद वद तर तर) टायुता तृतीयान्ता रुद्राज्ञा (रुद्राज्ञया) फिर 'ममामिलापं' २ बार कुरु (कुरु कुरु) तथा कृष्णवर्त्मा की प्रेयसी (स्वाहा) लगाने से ४३ अक्षर का मन्त्र बनता है। इससे वायव्य में घट सरस्वती का पूजन करना चाहिए।

भूधरेन्द्र युत बिन्दु सहित अर्धीश (ब्लूं) फिर 'वें' २ बार वद (वद वद) फिर 'त्रीं हुं फट्' लगाने से ९ अक्षर का मन्त्र बनता है। इससे उत्तर में नीला का पूजन करना चाहिए।

वाग्बीज (ऐं) अधराक्रान्त सबिन्दु नकुली (हैं) शान्ति चन्द्राढ्य आकाश (ह्रीं) २ बार किणि (किणि किणि) सटक् जल (वि) भगाक्रान्त कूर्मद्वय (च्चे)—इस ९ अक्षर के मन्त्र से ईशान कोण में किणि सरस्वती का पूजन करना चाहिए। इस प्रकार पंचम आवरण का पूजन कर क्षोभमुद्रा दिखलानी चाहिए।

डाकिन्याद्याः पूर्वमुक्ताःषट्कोणे षट्प्रपूजयेत्।
दर्शयेद्द्राविणीं मुद्रां षष्ठावरणपूजने ॥ ७० ॥

डाकिन्याद्याःपूर्वोक्ताः ॥ डाकिनीराकिनी लाकनीकाकिनीशाकिनीहाकिन्यः ॥ द्राविणी मुद्रालक्षणं यथा—क्षोभमुद्रालक्षणमुक्त्वोक्तम् ॥ एतस्या एवमुद्रायामध्यमेसरलेयदा ॥ क्रियेतेपरमेशानितदाविद्राविणीमतेति ॥ ७० ॥

षट्कोण में पूर्वोक्त डाकिनी आदि (डाकिनी, राकिनी, लाकिनी, काकिनी, शाकिनी एवं हाकिनी) का पूजन करना चाहिए। इस प्रकार षष्ठ आवरण का पूजन कर द्राविणीमुद्रा दिखलानी चाहिए।

परावालाभैरवीतिपूजनीयास्त्रिकोणके।
सप्तमावृतिपूजायां मुद्रां कुर्याच्चकर्षिणीम् ॥ ७१ ॥
इत्थं संपूज्य तारेशीं मनोभीष्टमवाप्नुयात्।

त्रिकोण में परा, बाला एवं भैरवी का पूजन करना चाहिए। इस प्रकार सप्तम आवरण की पूजा के बाद आकर्षणी मुद्रा दिखलानी चाहिए।

इस प्रकार तारेशी महाविद्या का पूजन करने से समस्त मनोरथों की पूर्ति होती है।

टिप्पणी : आवरण पूजा पद्धति : पूर्वोक्त रीति से देवी की पूजा करने के बाद उनकी आज्ञा लेकर आवरण पूजा करनी चाहिए। सर्वप्रथम चतुरस्र के बाहर अग्नि कोण में विधिवत् ध्यान कर 'ॐ ह्रीं गं गणपतये नमः' मन्त्र से गणेशजी का पूजन करना चाहिए। इसी प्रकार वायव्य में 'ॐ ह्रीं क्षं क्षेत्रपालाय नमः' से क्षेत्रपालका, ईशान कोण में 'ॐ ह्रीं बं बटुकाय नमः' से बटुक भैरव का, तथा नैऋत्यकोण में 'ॐ ह्रीं यं योगिनीभ्यो नमः' मन्त्र से [illegible]नियों का पूजन करना चाहिए।

भूपुर की प्रथम रेखा में पूर्व आदि दिशाओं में 'ॐ अणिमायै नमः, ॐ लघिमायै नमः, ॐ महिमायै नमः, ॐ ईशित्यै नमः, ॐ वशितायै नमः, ॐ कामपूरण्यै नमः, ॐ गरिमायै नमः तथा ॐ प्राप्त्यै नमः—मन्त्रों से क्रमशः अणिमा आदि का पूजन करना चाहिए। भूपुर की द्वितीय रेखा में पूर्व आदि ८ दिशाओं में निम्नलिखित मन्त्रों से ८ भैरवों का पूजन करना चाहिए—ॐ असितांग भैरवाय नमः, ॐ रुरु भैरवाय नमः, ॐ चण्ड भैरवाय नमः, ॐ क्रोध भैरवाय नमः, ॐ उन्मन्त भैरवाय नमः, ॐ कपाली भैरवाय नमः, ॐ भीषण भैरवाय नमः, एवं ॐ संहार भैरवाय नमः। भूपुर की तृतीय रेखा में पूर्व आदि दिशाओं में—ॐ ब्राह्म्यै नमः ॐ माहेश्वर्यै नमः, ॐ कौमार्यै नमः, ॐ वैष्णव्यै नमः, ॐ वाराह्यै नमः, ॐ इन्द्राण्यै नमः, ॐ चामुण्डायै नमः, एवं ॐ महालक्ष्म्यै नमः—इन मन्त्रों से अष्टमातृकाओं का पूजन करना चाहिए। इस प्रकार प्रथम आवरण का पूजन कर योनिमुद्रा दिखलानी चाहिए।

परावालाभैरवीतिस्वस्वमन्त्रैः— ह्रींपरायैनमः--ऐंक्लींसौः बालायैनमः--ह्सैंह्क्लींह्सौः-भैरव्यैनमइति ॥

द्वितीय आवरण में ६४ दलों पर निम्नलिखित मन्त्रों से ६४ शक्तियों का पूजन करना चाहिए —

ॐ ॐ कुलेश्यै नमः	ॐ चण्डिकायै नमः	ॐ वेदगर्भायै नमः
ॐ कुलनन्दायै नमः	ॐ खेचर्यै नमः	ॐ भीमायै नमः
ॐ वागीश्यै नमः	ॐ भूचर्यै नमः	ॐ उग्रायै नमः
ॐ भैरव्यै नमः	ॐ सिद्धायै नमः	ॐ वैद्यायै नमः
ॐ उमायै नमः	ॐ कामाक्ष्यै नमः	ॐ सद्गत्यै नमः
ॐ श्रियै नमः	ॐ हिंगुलायै नमः	ॐ उग्रेश्वर्यै नमः
ॐ शान्तयायै नमः	ॐ बलायै नमः	ॐ चन्द्रगर्भायै नमः
ॐ चण्डायै नमः	ॐ जयायै नमः	ॐ उद्योत्स्नायै नमः
ॐ घूम्रायै नमः	ॐ विजयायै नमः	ॐ सत्यायै नमः
ॐ काल्यै नमः	ॐ अजितायै नमः	ॐ यशोवत्यै नमः
ॐ करालिन्यै नमः	ॐ नित्यायै नमः	ॐ कुलिकायै नमः
ॐ महालक्ष्म्यै नमः	ॐ अपराजितायै नमः	ॐ कामिन्यै नमः
ॐ कंकाल्यै नमः	ॐ विलासिन्यै नमः	ॐ काम्यायै नमः
ॐ रुद्रकाल्यै नमः	ॐ घोरायै नमः	ॐ ज्ञानवत्यै नमः
ॐ सरस्वत्यै नमः	ॐ चित्रायै नमः	ॐ डाकिन्यै नमः
ॐ वाग्वादिन्यै नमः	ॐ मुग्धायै नमः	ॐ राकिन्यै नमः
ॐ नकुल्यै नमः	ॐ धनेश्वर्यै नमः	ॐ लाकिन्यै नमः
ॐ भद्रकाल्यै नमः	ॐ सोमश्वर्यै नमः	ॐ काकिन्यै नमः
ॐ शशिप्रभायै नमः	ॐ महाचण्डायै नमः	ॐ शाकिन्यै नमः
ॐ प्रत्यंगिरायै नमः	ॐ विद्यायै नमः	ॐ हाकिन्यै नमः
ॐ सिद्धलक्ष्म्यै नमः	ॐ हंस्यै नमः	
ॐ अमृतेश्यै नमः	ॐ विनायकायै नमः	

इस प्रकार द्वितीय आवरण की पूजा कर खेचरी मुद्रा दिखलानी चाहिए।

तृतीय आवरण में ३२ दलों पर निम्नलिखित मन्त्रों से ३२ शक्तियों का पूजन करना चाहिए—

ॐ किरातायै नमः	ॐ यक्षिण्यै नमः	ॐ मोहिन्यै नमः
ॐ योगिन्यै नमः	ॐ हरायै नमः	ॐ वंशवर्द्धिन्यै नमः
ॐ वीरायै नमः	ॐ ऊर्ध्वकेश्यै नमः	ॐ मालिन्यै नमः
ॐ बेतालायै नमः	ॐ मातंग्यै नमः	ॐ ललितायै नमः

ॐ दूत्यै नमः
ॐ मनोजायै नमः
ॐ पद्मिन्यै नमः
ॐ धरायै नमः
ॐ वर्वर्यै नमः
ॐ छत्रहस्तायै नमः
ॐ रक्तनेत्रायै नमः
ॐ विचर्चिकायै नमः
ॐ मातृकायै नमः
ॐ दूरदर्श्यै नमः
ॐ क्षेत्रेश्यै नमः
ॐ रंगिन्यै नमः
ॐ नटर्च नमः
ॐ शान्त्यै नमः
ॐ दीक्षायै नमः
ॐ वज्रहस्तायै नमः
ॐ धूम्रायै नमः
ॐ श्वेतायै नमः
ॐ सुमङ्गलायै नमः
ॐ सर्वेश्वर्यै नमः

इस प्रकार तृतीय आवरण में उक्त मन्त्रों से ३२ शक्तियों का पूजन कर बीजमुद्रा दिलानी चाहिए।

चतुर्थ आवरण में १६ दलों पर निम्नलिखित मन्त्रों से १६ शक्तियों का पूजन करना चाहिए, यथा—

ॐ मुग्धायै नमः
ॐ श्रियै नमः
ॐ कुरुकुल्लायै नमः
ॐ त्रिपुरायै नमः
ॐ तांतलायै नमः
ॐ क्रियायै नमः
ॐ रत्यै नमः
ॐ प्रीत्यै नमः
ॐ बालायै नमः
ॐ सुमुख्यै नमः
ॐ श्यामलाविलायै नमः
ॐ पिशाच्यै नमः
ॐ विदार्यै नमः
ॐ शीतलायै नमः
ॐ वज्रयोगिन्यै नमः
ॐ सर्वेश्वर्यै नमः

इस प्रकार चतुर्थ आवरण में उक्त मन्त्रों से १६ शक्तियों का पूजन कर अंकुश मुद्रा दिखलानी चाहिए।

पञ्चम आवरण में पूर्व आदि ८ दिशाओं के दलों पर निम्नलिखित मन्त्रों से ८ सरस्वतियों का पूजन करना चाहिए, यथा—

पूर्वदिशा के दल पर—'ॐ नमः पद्मासने शब्दरूपे ऐं ह्रीं क्लीं वद वद वाग्वादिनी स्वाहा' मन्त्र से वागीश्वरी का पूजन करना चाहिए।

अग्निकोण के दलपर—'क्लीं वद वद चित्रेश्वरी ऐं स्वाहा' मन्त्र से चित्रेश्वरी का पूजन करना चाहिए।

दक्षिण के दलपर—'ऐं कुलिजे ऐं सरस्वति स्वाहा' मन्त्र से कुलजा का पूजन करना चाहिए।

नैऋत्यकोण के दल पर—'ऐं ह्रीं श्रीं वद वद कीर्तीश्वरि स्वाहा' मन्त्र से कीर्तीश्वरी का पूजन करना चाहिए।

पश्चिम के दल पर—'ऐं ह्रीं अन्तरिक्ष सरस्वति स्वाहा' मन्त्र से अन्तरिक्ष सरस्वती का पूजन करना चाहिए।

वायव्य कोण के दल पर—हंसष्फं हस्त्रौः ह्स्फ्रीं ऐं ह्रीं श्रीं द्रां द्रीं क्लीं ब्लूं सः घ्रीं घटसरस्वति वदवद तरतर रुद्राज्ञयाममामिलाषं कुरु कुरु स्वाहा' मन्त्र से घट सरस्वती का पूजन करना चाहिए।

उत्तर के दल पर—'ब्लूं वें वदवद त्रीं हुं फट्' मन्त्र से नीला का पूजन करना चाहिए।

ईशान कोण के दल पर–'ऐं हैं हीं किणि किण विच्चे' मन्त्र से किणि का पूजन करना चाहिए।

इस प्रकार पंचम आवरण में ८ दलों पर उक्त मन्त्रों से वागीश्वरी आदि का पूजन कर क्षोभमुद्रा दिखलानी चाहिए।

षष्ठ आवरण में षड्कोण में निम्नलिखित मन्त्रों से डाकिनी आदि का पूजन करना चाहिए यथा—

ॐ डाकिन्यै नमः	ॐ काकिन्यै नमः
ॐ राकिन्यै नमः	ॐ शाकिन्यै नमः
ॐ लकिन्यै नमः	ॐ हाकिन्यै नमः

इस प्रकार उक्त मन्त्रों से डाकिनी आदि का पूजन कर द्राविणी मुद्रा दिखलानी चाहिए।

सप्तम आवरण में त्रिकोण में अपने २ मन्त्रों से परा, बाला एवं भैरवी का पूजन करना चाहिए, यथा—

ह्रीं परायै नमः।
ऐं क्लीं सौः बालायैः नमः।
ह्सैं ह्क्लीं ह्सौः भैरव्यै नमः।

इन मन्त्रों से त्रिकोण के तीनों कोणों में क्रमशः परा, बाला एवं भैरवी का पूजन कर आकर्षणी मुद्रा दिखलानी चाहिए।

इस प्रकार आवरणपूजा कर ५ पुष्पाञ्जलियाँ देकर विधिवत मन्त्र का जप करना चाहिए।

गणेशक्षेत्रपालाभ्यां योगिन्यै भैरवाय च ॥ ७२ ॥
तारायै चापि वितरेद्बलिनित्यंचतुष्पथे।
मांसमाषान्नशाकाज्यपायसापूपकादिकम् ॥ ७३ ॥
बलिद्रव्यं समाख्यातं तेनेष्टं सा प्रयच्छति।

प्रतिदिन चौराहे पर जाकर गणेश, क्षेत्रपाल, योगिनी भैरव एवं तारा को बलि देनी चाहिए। मांस, उड़द से बनी चीजें, शाक, घी, खीर एवं मालपुआ आदि पदार्थों को बलिद्रव्य कहते हैं। इनके समर्पण करने से देवी अभीष्ट सिद्धि देती है।

आकर्षिणी मुद्रालक्षणं यथा–नध्ममातर्जनीभ्यांतुकनिष्ठानामिकेसमे ॥ अंकुशाकार-रूपाभ्यामध्यमे परमेश्वरि ॥

टिप्पणी : तरङ्ग ४ श्लोक ५०–५१ में बतलाये गये मन्त्र तथा विधि से प्रतिदिन बलिदान करना चाहिए।

तस्याध्यानं त्रिधावक्ष्मि सत्त्वादिगुणभेदतः ॥ ७४ ॥
श्वेताम्बराढ्यां हंसस्थां मुक्ताभरण भूषिताम् ।
चतुर्वक्त्रामष्टभुजैर्दधानां कुण्डिकाम्बुजे ॥ ७५ ॥
वराभयेपाशशक्ती अक्षस्रक्पुष्पमालिके ।
शब्दपाथोनिधौ ध्यायेत्सृष्टिध्यानमुदीरितम् ॥ ७६ ॥
रक्ताम्बरां रक्तसिंहासनस्थां हेमभूषिताम् ।
एकवक्त्रां वेदसंख्यैर्भुजैःसंबिभ्रतीं क्रमात् ॥ ७७ ॥
अक्षमालां पानपात्रमभयंवरमुत्तमम् ॥
श्वेतद्वीपस्थितां ध्यायेत्स्थितध्यानमिदं स्मृतम् ॥ ७८ ॥
कृष्णाम्बराढ्यां नौसंस्थामस्थ्याभरणभूषिताम् ।
नववक्त्रां भुजैरष्टादशभिर्दधतींवरम् ॥ ७९ ॥
अभयं परशुं दर्वीखड्ग पाशुपतं हलम् ।
भिण्डि शूलं च मुसलं कर्त्री शक्ति त्रिशीर्षकम् ॥ ८० ॥
संहारास्त्रं वज्रपाशोखट्वांगं गदया सह ।
रक्ताम्भोधौस्थितां ध्यायेत्संहारध्यानमीदृशम् ॥ ८१ ॥
कर्मसु क्रूरसौम्येषु ध्यायेन्मन्त्री यथातथा ।
एवंसिद्धे मनौमन्त्रीगिरावाचस्पतिर्भवेत् ॥ ८२ ॥

महाविद्या के तीन ध्यान : सत्त्व आदि गुणों के भेद से अब उनके तीन प्रकारों के ध्यानों को बतलाता हूँ—

श्वेतवस्त्र धारण किये हुए, हंस पर विराजमान, मोतियों के आभूषणों से सुशोभित, ४ मुख एवं ८ भुजावाली, हाथों में क्रमशः कमण्डलु, कमल, वर, अभय, पाश, शक्ति अक्षमाला एवं पुष्पमाला धारण करने वाली देवी का ध्यान करना चाहिए। इसे सृष्टि ध्यान कहते हैं।

इयमाकर्षणीमुद्रात्रैलोक्याकर्षणेऽस्मेति ॥ ७१-७४ ॥ सात्विकध्यानमाह । श्वेतेति ॥ कमंडलुवराऽक्षस्रक्पुष्पमालादक्षेषु ॥ इतराणिवामेषु ॥ ७५-७६ ॥ राजसध्यानमाह । रक्तेति ॥ अक्षमालावरौदक्षयोः ॥ अन्ययोरन्य ॥ ७७-७८ ॥ तामसध्यानमाह ॥ कृष्णेति ॥ परशुदर्वीखड्गमुसलकर्त्रीशूलवज्रपाशगदादक्षेषु ॥ शेषाणिवामेषु ॥ ७९-८१ ॥ क्रूरेषुमारणे तामसध्यानम् ॥

लाल वस्त्र धारण करने वाली, रक्तसिंहासन पर विराजमान, सोने के आभूषणों से सुशोभित, एकमुख तथा चार भुजा वाली हाथों में अक्षमाला, पानपात्र, अभय एवं वरदमुद्रा धारण किये हुए तथा श्वेतदीप में स्थित देवी का ध्यान करना चाहिए। इसे स्थिति ध्यान कहते हैं।

काले वस्त्र धारण करने वाली, नौका पर स्थित, हड्डी के आभूषणों से सुशोभित, ९ मुख एवं १८ भुजाओं वाली, हाथों में अभय, परशु, दर्वी, खड्ग पाशुपत, हल, भिण्डि, शूल, मुसल, कर्तृका, शक्ति, त्रिशूल, संहारास्त्र, वज्र, पाश, खट्वाङ्ग एवं गदा धारण करने वाली रक्त सागर में स्थित देवी का ध्यान करना चाहिए। इसे संहार ध्यान कहते हैं।

मारण आदि क्रूर कर्मों में संहार ध्यान, उच्चाटन एवं वशीकरण आदि में स्थिति ध्यान तथा शान्तिक-पौष्टिक कर्मों में मान्त्रिक को सृष्टि ध्यान चरना चाहिए।

इस प्रकार प्रयोग एवं पुरश्चरण करने से मन्त्र सिद्ध हो जाने पर साधक वाणी से वाचस्पति के समान हो जाता है।

दूर्वोत्थयातुलेखन्यारोचनारसयुक्तया ।
बालस्याच्छिन्ननालस्य जिह्वायांविलिखेन्मनुम् ॥ ८३ ॥
संप्राप्ते चाष्टमे वर्षे सर्वशास्त्रज्ञतामियात् ।
मन्त्रेणायुतसंजप्तां वचां बालस्य कण्ठतः ॥ ८४ ॥
बध्नीयात्पूर्वसंप्रोक्तंवलिं दत्त्वा विधानतः ।
द्वादशेवत्सरे प्राप्ते भक्षिता साकवित्वकृत् ॥ ८५ ॥
ज्योतिष्मती भवं तैलं कर्षमात्रं सुमन्त्रितम् ।
उपरागे जलस्थोयोऽश्नीयाद्वाचस्पतिर्भवेत् ॥ ८६ ॥
चतुष्पथे श्मशाने वाहित्वा लज्जाभयं तथा ॥
जपेच्छवं समारुह्यविद्यातत्परमानसः ॥ ८७ ॥
शृणोत्यसावमुं शब्दं निशीथे जपतत्परः ।
पारगोभव विद्यानां सर्वासिद्धिमवाप्नुहि ॥ ८८ ॥
विद्वत्कुलसमुद्भूतमष्टवर्षं शिशुद्वयम् ।
उपवेश्य तयोर्मूर्ध्निकरौदत्त्वा जपेन्मनुम् ॥ ८९ ॥

उच्चाटनवश्यादौरक्तम् ॥ शांतौपुष्टौश्वेतम् ॥८२-८९॥

वेदान्तन्यायसंयुक्त्या विवदे ते उभावपि ।
यःकौतुकीस आश्चर्य्यंविद्यायाः पश्यतु ध्रुवम् ॥ ९० ॥
विधायवेदिकां रम्यां विजने कदलीवने ।
तत्रासीनो जपेद्विद्यामर्कलक्षं विधानतः ॥ ९१ ॥
दासी चालितदोलायामारूढां सुस्मिताननाम् ।
पुन्नागचम्पकाशोकरंभाविपिनसंस्थिताम् ॥ ९२ ॥
एवंध्यायन्भगवतीं बलिद्याज्ज पान्ततः ।
एवंकुर्वन्नरःसर्वमभीष्टंलभतेचिरात् ॥ ९३ ॥
निर्वासाविशिखःप्रेतभूमिस्थो यो जपेन्मनुम् ।
अयुतं कृष्णभूताहे सवाक्सिद्धिमवाप्नुयात् ॥ ९४ ॥
विद्यां सौख्यं धनं पुष्टिमायुःकीर्तिबलंस्त्रियः ।
रूपंकामयमानेन तारासेव्यानिरन्तरम् ॥ ९५ ॥

काम्यप्रयोग : बालक का नाल छेदन होते ही उसकी जिह्वा पर दूर्वा की लेखनी से गोरोचन से मन्त्र लिखना चाहिए। ऐसा करने से वह बालक ९ वर्ष का होते ही सब शास्त्रों का ज्ञाता बन जाता है।

पूर्वोक्त रीति से विधिवत बलिदान देकर १० मन्त्रों का जप करके वचा (दुधवच) बालक के गले में बाँध देना चाहिए। १२ वें वर्ष में उसे खाने से वह कवि हो जाता है।

ग्रहण के समय जल में स्थित होकर १ कर्ष (४ तोला) ज्योतिष्मती के तेल को अभिमन्त्रित कर पीने से व्यक्ति वाचस्पति हो जाता है।

चौराहे पर या श्मशान में लज्जा एवं भय को छोड़कर शव पर बैठकर महाविद्या में मन लगाकर मध्यरात्रि के समय जप में तल्लीन व्यक्ति यह सुनता है कि "विद्याओं में पारङ्गत हो जाओ तथा समस्त सिद्धियाँ प्राप्त करो।"

विद्वत्कुल में उत्पन्न आठ वर्ष के २ शिशुओं को बैठाकर उनके शिरपर हाथ रखकर इस मन्त्र का जप करना चाहिए। ऐसा करने से वे दोनों वेदान्त एवं न्याय शास्त्र के तर्कों से विवाद करने लगते हैं। जिस व्यक्ति के कौतूहल हो वह इस विद्या के आश्चर्य को निश्चित रूप से अजमाये।

निर्जन कदलीवन में सुन्दर वेदिका बनाकर उस पर बैठकर विधिवत् १२ लाख जप करना चाहिए। दासियों के द्वारा संचालित दोला (डोली) में बैठी हुई, प्रसन्न

उभावपिशिशूनैयायिकवेदान्तिनौभूत्वाविवादंकुर्वाते ॥ ९०-९३ ॥ निर्वासनग्नः ॥ विशिखोमुक्तकेशः ॥ कृष्णभूताहे कृष्णपक्षचतुर्दश्यांम् ॥९४-९५॥

वदना, पुन्नाग, चम्पक, अशोक एवं केला के वन में स्थित भगवती का ध्यान करते हुए जप के बाद में बलि देनी चाहिए। ऐसा करने से साधक शीघ्र ही अभीष्ट सिद्धि प्राप्त करता है।

कृष्णपक्ष की चतुर्दशी को विवस्त्र होकर केशों को खोलकर प्रेतभूमि (श्मशान) में बैठकर १० हजार जप करने से साधक वाक्सिद्धि प्राप्त करता है।

विद्या, सौख्य, धन, पुष्टि, आयु, कीर्ति, बल, स्त्री, एवं रूप की कामना रखने वाले व्यक्तियो को निरन्तर तारा की आराधना करनी चाहिए।

इति श्री शुकदेव चतुर्वेदि विरचितायां सटिप्पण्यां मन्त्रमहोदधेः
मोहिनी व्याख्यायां पञ्चमस्तरङ्गः।

षष्ठ तरङ्ग

छिन्नमस्तामनुं वक्ष्ये शीघ्रसिद्धिविधायिनम् ।
पद्मासनाशिवायुग्मं भौतिकःशशिशेखरः ॥ १ ॥
वज्रवैरोचनीपद्मनाभयुक्तःसदागतिः ।
मायायुगास्त्रदहनप्रियान्तःप्रणवादिकः ॥ २ ॥

छिन्नमस्ता का मन्त्र : अब शीघ्र सिद्धिदायक छिन्नमस्ता के मन्त्र को बतलाते हैं-- पद्मासना (श्रीं) शिवायुग्म (ह्रीं ह्रीं) शशिशेखर भौतिक (ऐं) फिर 'वज्रवैरोचनी' तथा पद्मनाभ युक्त सदागति (ये) मायायुग्म (ह्रीं ह्रीं) अस्त्र (फट्) अन्त में दहनप्रिया (स्वाहा) तथा प्रारम्भ में प्रणव लगाने से यह १७ अक्षरवाला मन्त्र बन जाता है ।

टिप्पणी : मन्त्रोद्धार : ॐ श्रीं ह्रीं ह्रीं वज्रवैरोचनीये ह्रीं ह्रीं फट् स्वाहा ।

मन्त्रःसप्तदशार्णोयं भैरवोस्य मुनिर्मतः ।
सम्राट्छन्दश्छिन्नमस्ता देवताभुवनेश्वरी ॥ ३ ॥
आंखड्गायहृदाख्यातमींखड्गायशिरःस्मृतम् ।
वज्रायशिखाप्रोक्ता ऐं पाशायतनुच्छदम् ॥ ४ ॥
ओमंकुशायनेत्रस्याद्विसर्गोवसुरक्षयुक् ।
मायायुग्मचास्त्रमगमनवःप्रणवादिकाः ॥ ५ ॥
स्वाहाताःप्रोदिता एवमंगेविन्यस्य तां स्मरेत् ।

विनियोग एवं न्यास : इस १७ अक्षर वाले मन्त्र का भैरव ऋषि है, सम्राट् छन्द तथा छिन्नमस्ता भुवनेश्वरी देवता है ।

प्रारम्भ में प्रणव और अन्त में २ माया बीज अस्त्रबीज लगाकर 'आं खड्गाय'

।छिन्नमस्तामंत्रमाह ॥ पद्मेति ॥ पद्मासनाश्रीं ॥ शिवाह्रीं ॥ भौतिकःसबिन्दुः ऐं ॥१॥ पद्मनाभयुतःसदागतिःएयुतोयःये ॥ यथा ॐ श्रींह्रींह्रींऐंवज्रवरोचनीयेंह्रींह्रींफटस्वाहेति ॥२-३-४-५॥

का हृदय, 'ईं खड्गाय' शिर, 'ॐ वज्राय' का शिखा, 'ऐं पाशाय' का कवच 'औं अंकुशाय' के नेत्र, तथा 'अः वसुरक्ष' का करतल पर न्यास करना चाहिए। न्यास मन्त्रों में सर्वत्र स्वाहा लगाना चाहिए। इस प्रकार अंगों पर न्यास कर देवी का स्मरण करना चाहिए।

टिप्पणी : विनियोग : ॐ अस्य श्री छिन्नमस्तामन्त्रस्य भैरवऋषिः
सम्राट् छन्दः छिन्नमस्ता भुवनेश्वरीदेवता।

(ह्रूं ह्रूं बीजं, स्वाहा शक्तिः) ममाभीष्ट सिद्धये जपे विनियोगः

ऋष्यादिन्यास : भैरवाय ऋषये नमः—शिरसि।
सम्राट् छन्दसे नमः— मुखे।
छिन्नमस्ता देवतायै नमः—हृदि।
ह्रूं ह्रूं बीजाय नमः—गुह्ये।
स्वाहा शक्तये नमः—पादयो।

कराङ्गन्यास : ॐ आं खड्गाय ह्रीं ह्रीं फट् हृदयाय स्वाहा—कनिष्ठयोः।
ॐ ईं सुखड्गाय ,, ,, ,, शिरसे स्वाहा—अनामिकयोः।
ॐ ऊं वज्राय ,, ,, ,, शिखायै स्वाहा—मध्यमयोः।
ॐ ऐं पाशाय ,, ,, ,, कवचाय स्वाहा—तर्जन्योः।
ॐ औं अंकुशाय ,, ,, ,, नेत्रत्रयाय स्वाहा—अंगुष्ठयोः।
ॐ अः वसुरक्ष ,, ,, ,, अस्त्राय फट्—करतलकरपृष्ठयोः।

इसी प्रकार हृदय, मस्तक, शिखा, कवच, नेत्र एवं करतल में षडङ्गन्यास करना चाहिए।

भास्वन्मण्डलमध्यगां निजशिरश्छिन्नं विकीर्णालकं
स्फारास्यं प्रपिबद्गलात्स्वरुधिरं वामेकरे बिभ्रतीम्।
याभासक्तरतिस्मरोपरिगतां सख्यौ निजेडाकिनी
वर्णिन्यौ परिदृश्यमोद कलितां श्रीछिन्नमस्तां भजे ॥ ६ ॥

ध्यान : सूर्यमण्डल के मध्य में विराजमान, बाँये हाथ में अपना कटा हुआ मस्तक धारण करने वाली, बिखरे हुए केशों वाली, अपने कण्ठ से निकलती हुई रक्तधारा का पान करनेवाली, विपरीतरति में आसक्त, रति एवं कामदेव के ऊपर स्थित, डाकिनी एवं वर्णिनी नामक अपनी सखियों के साथ प्रसन्न रहने वाली छिन्नमस्ता देवी का ध्यान करता हूँ।

ध्यात्वैवं प्रजपेल्लक्षचतुष्कं तद्दशांशतः।

अस्त्रमन्त्रमाह ॥ विसर्गईति ॥ ॐ अः वसुरक्ष ह्रीं ह्रीं अस्त्रंफडिति ॥ सर्वेस्वाहांताः ॥

पालाशैर्बिल्वजैर्वापि जुहुयात्कुसुमैःफलैः ॥ ७ ॥

जप संख्या एवं हवनद्रव्य : इस प्रकार देवी का ध्यान कर ४ लाख जप करना चाहिए। पलाश या बेल के पुष्प एवं फलों से दशांश होम करना चाहिए।

आधारशक्तिमारभ्य परतत्त्वान्त पूजिते।
पीठे जयाख्याविजयाजिताचाप्यपराजिता ॥ ८ ॥
नित्याविलासिनी षष्ठी दोग्ध्र्यघोरा च मंगला।
दिक्षु मध्ये च संपूज्या नवपीठस्य शक्तयः ॥ ९ ॥
सर्वबुद्धिप्रदे वर्णनीये सर्वभृगुःसट्क्।
सिद्धिप्रदे डाकिनीये च तारो वज्रसभौतिकः ॥ १० ॥
खड्गीशो रोचनीये च भगंह्येहिनमोंतिकः।
तारादिःपीठमन्त्रोयं वेदरामाक्षरो मतः ॥ ११ ॥
समर्प्यासनमेतेन तत्र संपूजयेच्छिवाम्।

पीठपूजा : 'आधारशक्त्ये नमः' से लेकर 'परमात्मने नमः' तक पूजित पीठ पर दिशाओं में जया, विजया, अजिता, अपराजिता, नित्या, विलासिनी, दोग्ध्री एवं अघोरा का तथा मध्य में मङ्गला का—(इस प्रकार) पीठ की ९ शक्तियों का पूजन करना चाहिए।

'सर्वबुद्धिप्रदेवर्णनीये सर्व' फिर सट्क् भृगु (सि) फिर 'द्धिप्रदेडाकिनीये' फिर तार (ॐ) फिर 'वज्र' सभौतिक खड्गीश (वै) फिर 'रोचनीये' फिर भग (ए) 'ह्येहि' तथा अन्त में 'नमः' तथा प्रारम्भ में प्रणव लगाने से ३४ अक्षर वाला यह पीठ मन्त्र बनता है। इस मन्त्र से आसन समर्पित कर देवी का पूजन करना चाहिए।

टिप्पणी : छिन्नमस्ता पूजन विधि : श्लोक ६ के अनुसार ध्यान कर मानसोपचार से देवी का पूजन कर तारा पूजन पद्धति के क्रम से अर्घ्य स्थापन कर पीठपूजा करनी चाहिए। यथा—

ॐ आधार शक्त्ये नमः	ॐ कल्पवृक्षाय नमः	ॐ तं तमसे नमः
,, प्रकृतये नमः	,, स्वर्ण सिंहासनाय नमः	,, आं आत्मने नमः
,, कूर्माय नमः	,, आनन्द कन्दाय नमः	,, अं अन्तरात्मने नमः
,, अनन्ताय नमः	,, संवन्निलाय नमः	,, पं परमात्मने नमः
,, पृथिव्यै नमः	,, सर्वतत्त्वात्मकपद्माय नमः	,, ह्रीं ज्ञानात्मने नमः
,, क्षीरसमुद्राय नमः	सं सत्त्वाय नमः	मध्ये ॐ रति कामाभ्यां नमः
,, रत्नद्वीपाय नमः	,, रं रजसे नमः	

ध्यानमाह ॥ भास्वदेति ॥ यामामधुव्रतदामकरीकामोपरिस्थिताम् ॥ ७-९ ॥ पीठमंत्रमाह ॥ सर्वेति ॥ सट्कभृगुः सिः ॥ सभौतिकः खड्गीशःऐयुतोवःवै ॥

इन मन्त्रों से पीठ की पूजा कर, पूर्व आदि दिशाओं में निम्नलिखित मन्त्रों से शक्तियों का पूजन करना चाहिए—

ॐ जयायै नमः
ॐ विजयायै नमः
ॐ अजितायै नमः
ॐ अपराजितायै नमः
ॐ नित्यायै नमः
ॐ विलासिन्यै नमः
ॐ दोग्ध्र्यै नमः
ॐ घोरायै नमः

फिर मध्य में 'ॐ मंगलायै नमः' से ९ वीं शक्ति का पूजन करना चाहिए। इसके बाद 'ॐ सर्वबुद्धिप्रदे वर्णनीयेसर्वसिद्धिप्रदे डाकिनीये ॐ वज्रवैरोचनीये एह्येहि नमः' इस पीठ मन्त्र से वर्णनी एवं डाकिनी सहित छिन्नमस्ता देवी को आसन देकर उनका पूजन करना चाहिए।

भैरव तन्त्र के अनुसार उक्त पीठ पर विधिवत देवी का ध्यान कर इस मन्त्र से आवाहन करना चाहिए— 'ॐ सर्वसिद्धिवर्णनीये सर्वसिद्धिडाकनीये वज्रवैरोचनीये इहावह, सर्वसिद्धिवर्णनीये सर्वसिद्धिडाकिनीये वज्रवैरोचनीये इह तिष्ठतिष्ठ इह सन्निधेहि इह सन्निरुद्धस्व।' इस प्रकार आवाहन कर 'ॐ वज्रवैरोचनीये देहि देहि एहि एहि गृह्ण गृह्ण स्वाहा मम सिद्धिं देहि देहि ममशत्रून मारय मारय करालिके हुं फट् स्वाहा'— इस मन्त्र से देवी का विधिवत पूजन करना चाहिए।

त्रिकोणमध्यषट्कोणपद्मभूपुरमध्यतः ॥ १२ ॥
बाह्यावरणमारभ्य पूजयेत्प्रतिलोमतः।
भूपुराद्बाह्यभागेषु वज्रादीनि प्रपूजयेत् ॥ १३ ॥
तदंतःसुरराजादीन्पूजयेद्धरितां पतान्।
भूपुरस्य चतुर्द्वार्षु द्वारपालान्यजेदथ ॥ १४ ॥
करालविकरालाख्यावतिकालस्तृतीयकः।
महाकालश्चतुर्थःस्यादथपद्मेष्टशक्तयः ॥ १५ ॥
एकलिंगा योगिनी च डाकिनी भैरवी तथा।
महाभैरविकेन्द्राक्षीत्वसितांगी तु सप्तमी ॥ १६ ॥
संहारिण्यष्टमी चेतिषट्कोणेष्वंगमूर्तयः।
त्रिकोणगच्छिन्नमस्तापार्श्वयोस्तुसखी द्वयम् ॥ १७ ॥
डाकिनीवर्णिनीसंज्ञे तारवाग्भ्यां प्रपूजयेत्।
एवं पूजादिभिः सिद्धे मन्त्रेमन्त्री मनोरथान् ॥ १८ ॥

भगम् एयथा—ॐसर्वबुद्धिप्रदेवर्णनीयेसर्वसिद्धिप्रदेडाकिनीये ॐ वज्रवैरोचनीयेएह्येहिनमः ॥ वेदरामाक्षरश्चतुस्त्रिंशदर्णः ॥ १०-१३ ॥ सुरराजादीन् इन्द्रादीन् ॥ हरितांदिशांपतीन् ॥ १४-१७ ॥ तारवाग्भ्याम् ॐ ऐंडाकिन्यैनमः ॥ १८ ॥

आवरण पूजा : त्रिकोण, षड्कोण, अष्टदल एवं भूपुर से बने यन्त्र पर बाह्य आवरण से प्रारम्भ कर प्रतिलोम क्रम से पूजन करना चाहिए। भूपुर के बाह्य भाग में वज्र आदि आयुधों का पूजन करना चाहिए। उसके भीतर इन्द्र आदि दिकपालों का पूजन करना चाहिए।

फिर भूपुर के चारों द्वारों पर कराल, विकराल अतिकाल एवं महाकाल इन चारों द्वारपालों का पूजन करना चाहिए। इसके बाद अष्टदल में एकलिंगा, योगिनी, डाकिनी, भैरवी, महाभैरवी, केन्द्राक्षी, असितांगी एवं संहारिणी—इन आठ शक्तियों का पूजन करना चाहिए।

त्रिकोण में छिन्नमस्ता देवी और उसके दोनों ओर डाकिनी एवं वर्णिनी नामक दोनों सखियों का प्रणव एवं वाग्बीज सहित नाम मन्त्रों से पूजन करना चाहिए। इस पूजन आदि करने से मन्त्र सिद्ध हो जाने पर साधक के समस्त मनोरथ पूर्ण हो जाते हैं।

आवरण पूजा पद्धति : छिन्नमस्ता की पूजा के लिए त्रिकोण, षड्कोण अष्टदल भूपुर वाला यन्त्र बनाना चाहिए (देखिए चित्र नं० ९)।

पीठ पूजन एवं देवी का पूजन करने के बाद देवी की आज्ञा लेकर आवरण पूजन करना चाहिए। छिन्नमस्ता देवी की आवरणपूजा बाह्य आवरण से प्रारम्भ कर प्रतिलोम क्रम से करनी चाहिए, यथा—

भूपुर के बाहर पूर्व आदि दिशाओं में—

ॐ वज्राय नमः	ॐ अंकुशाय नमः
,, शक्तये नमः	,, गदायै नमः
,, दण्डाय नमः	,, शूलाय नमः
,, खड्गाय नमः	,, पद्माय नमः
,, पाशाय नमः	,, चक्राय नमः

इन मन्त्रों से वज्र आदि आयुधों का पूजन करना चाहिए। फिर भूपुर के भीतर पूर्व आदि दिशाओं में—

ॐ इन्द्राय नमः	ॐ वायवे नमः
,, अग्नये नमः	,, सोमाय नमः
,, यमाय नमः	,, ईशानाय नमः
,, निऋतये नमः	,, ब्रह्मणे नमः
,, वरुणाय नमः	,, अनन्ताय नमः

इन मन्त्रों से दिक्पालों का पूजन करना चाहिए। इसके बाद भूपुर के द्वारों पर चारों दिशाओं में—

ॐ करालाय नमः ॐ अतिकालाय नमः
,, विकरालाय नमः ,, महाकालाय नमः

इन मन्त्रों से कराल आदि द्वारपालों का पूजन करना चाहिए।

फिर अष्टदल कमल में—

ॐ एकलिंगायै नमः ॐ महाभैरव्यै नमः
,, योगिन्यै नमः ,, केन्द्राक्ष्यै नमः
,, डाकिन्यै नमः ,, असितांग्यै नमः
,, भैरव्यै नमः ,, संहारिण्यै नमः

—इन मन्त्रों से एकलिङ्गा आदि ८ शक्तियों का पूजन करना चाहिए।

तत्पश्चात् षड्कोण में—ॐ आं खड्गाय ह्रीं ह्रीं फट् हृदयाय स्वाहा।
,, ईं सुखड्गाय ,, ,, ,, शिरसे स्वाहा।
,, ऊं वज्राय ,, ,, ,, शिखायै स्वाहा।
,, ऐं पाशाय ,, ,, ,, कवचाय स्वाहा।
,, औं अंकुशाय ,, ,, ,, नेत्रत्रयाय स्वाहा।
,, अः वसुरक्ष ,, ,, ,, अस्त्रायफट् स्वाहा।

—इन मन्त्रों से षडङ्ग पूजा करनो चाहिए।

तदनन्तर त्रिकोण में—

ॐ ऐं छिन्नमस्तायै नमः, ॐ ऐं डाकिन्यै नमः, ॐ ऐं वार्णिन्यै नमः

इन मन्त्रों से डाकिनी एवं वर्णिनी सहित छिन्नमस्ता देवी का पूजन करना चाहिए। इस प्रकार आवरण पूजा कर ५ पुष्पाञ्जलियाँ देकर विधिवत जप करना चाहिए।

प्राप्नुयान्निखिलान्सद्यो दुर्ल्लभांस्तत्प्रसादतः।
श्रीपुष्पैर्लभते लक्ष्मींतत्फलैः स्वसमीहितम् ॥ १९ ॥
वाक्सिद्धिं मालतीपुष्पैश्चंपकैर्हंवनात्सुखम्।
घृताक्तं छागमांसं यो जुहुयात्प्रत्यहं शतम् ॥ २० ॥
मासमेकं तु वशगास्तस्यस्युःसर्वपार्थिवाः।
करवीरस्य कुसुमैःश्वेतैर्लक्षंजुहोति यः ॥ २१ ॥
रोगजालं पराभूय सुखीजीवेच्छतंसमाः।

करवीरस्यकुसुमैःपुष्पैः ॥ प्रसूनं कुसुमंसुममित्यमर कोषः ॥ १९-२१ ॥

रक्तैस्तत्संख्यया हुत्वा वशयेन्मन्त्रिणो नृपान् ॥ २२ ॥
फलैर्हुत्वाप्नुयाल्लक्ष्मीमुदुम्बरपलाशजैः ।
गोमायुमांसैस्तामेव कविता पायसान्धसा ॥ २३ ॥

बन्धूककुसुमैर्भाग्यं कर्णिकारैः समीहितम् ।
तिलतण्डुलहोमेन वशयेन्निखिलाञ्जनान् ॥ २४ ॥

नारीरजोभिराकृष्टिर्मृगमांसैः समीहितम् ।
स्तम्भनं माहिषैर्मांसैः पंकजैः सघृतैरपि ॥ २५ ॥

चिताग्नौ परभृत्पक्षैर्जुहुयादरिमृत्यवे ।
उन्मत्तकाष्ठदीप्ताग्नौ तत्फलंवायसच्छदैः ॥ २६ ॥

द्यूते वने नृपद्वारे समरे वैरिसंकटे ।
विजयं लभते मन्त्री ध्यायन्देवीं जपन्मनुम् ॥ २७ ॥

भुक्तौ मुक्तौसितां ध्यायेदुच्चाटे नीलरोचिषम् ।
रक्तां वश्ये मृतौ धूम्रांस्तम्भने कनकप्रभाम् ॥ २८ ॥

निशिदद्याद्बलिं तस्यैसिद्धये मदिरादिना ।
गोपनीयःप्रयोगोथ प्राच्यते सर्वसिद्धदः ॥ २९ ॥

भूताहे कृष्णपक्षस्य मध्यरात्रे तमोघने ।
स्नात्वा रक्ताम्बरधरो रक्तमाल्यानुलेपनः ॥ ३० ॥
आनीय पूजयेन्नारीछिन्नमस्तास्वरूपिणीम् ।
सुन्दरीं यौवनाक्रान्तां नरपंचकगामिनीम् ॥ ३१ ॥
सस्मितां मुक्तकबरीं भूषादानप्रतोषिताम् ।
विवस्त्रां पूजयित्वैनामयुतं प्रजपेन्मनुम् ॥ ३२ ॥
बलिं दत्त्वा निशां नीत्वा संप्रेष्य धनतोषिताम् ।
भोजयेद्विविधैरन्नैर्ब्राह्मणान्देवताधिया ॥ ३३ ॥

अनेन विधिना लक्ष्मीं पुत्रान्पौत्रान्यशः सुखम् ।
नारीमायुश्चिरंधर्ममिष्टमन्यदवाप्नुयात् ॥ ३४ ॥
तस्यां रात्रौ व्रतं कार्यं विद्याकामेन मन्त्रिणा ।
मनोरथेषुचान्येषुगच्छेत्तां प्रजपन्मनुम् ॥ ३५ ॥

रक्तैःकरवीरैरिति पूर्वेण सम्बन्धः ॥ तत्संख्ययालक्षेण ॥ २२ ॥ गोमायुःशृगालः ॥ तामेव-लक्ष्मीमेव ॥ पायसांधसापायसान्नेन ॥ २३-२४ ॥ नार्यारजोभिर्ऋतुकालनिर्गतरुधिरैराकर्षणम् ॥ सघृतैःपङ्कजैरपिस्तम्भनमेव परभृत्कोकिलः ॥ उन्मत्तोधत्तूरः ॥ २५-३५ ॥

किंबहूक्तेन विद्याया अस्याविज्ञानमात्रतः ।
शास्त्रज्ञानं पापनाशः सर्वसौख्यं भवेद् ध्रुवम् ॥ ३६ ॥
उषस्युत्थाय शय्यायामुपविष्टो जपेच्छतम् ।
षण्मासाभ्यंतरे मन्त्री कविं न जयेत्कविम् ॥ ३७ ॥

काम्य प्रयोग : इस प्रकार पूजन एवं पुरश्चरण आदि से मन्त्र सिद्ध हो जाने पर साधक शीघ्र ही समस्त दुर्लभ मनोरथों को प्राप्त करता है ।

मालती पुष्पों के हवन से वाक् सिद्धि, चम्पा के फूलों के हवन से सुख मिलता है । जो व्यक्ति एक मास तक प्रतिदिन घी सहित छागमांस से १०० आहुतियाँ देता है सभी राजा उसके वश में हो जाते हैं ।

सफेद कनेर के फूलों से जो व्यक्ति १ लाख आहुतियाँ देता है, वह रोगजाल से मुक्त होकर १०० वर्ष तक जीवित रहता है । लाल कनेर के फूलों से १ लाख आहुति देने से व्यक्ति मन्त्री एवं राजाओं को वश में कर लेता है । उदुम्बर एवं पलाश के फलों का होम कर व्यक्ति लक्ष्मी प्राप्त करता है । गोमायु (सियार) के मांस के होम से भी लक्ष्मी प्राप्त होती हैं । पायस एवं अन्न के होम से कवित्व शक्ति मिलती है । बन्धूक पुष्पों के होम से भाग्य वृद्धि होती है । तिल एवं चावलों के होम से सब लोग वश में हो जाते हैं । स्त्री के रज के होम से आकर्षण, मृग के मांस के होम से मोहन, महिष मांस के होम से स्तम्भन तथा घी सहित कमल के होम से भी स्तम्भन होता है ।

चिता की अग्नि में कोयल के पंखों का हवन शत्रु की मृत्यु के लिए करना चाहिए । धतूरे की लकड़ी से प्रज्वलित अग्नि में कौआ के पंखों का हवन करने से भी शत्रु मर जाता है ।

जुआ, जंगल, राजद्वार, संग्राम एवं शत्रुसंकट में देवी का ध्यान करते हुए मन्त्र का जप करने से व्यक्ति विजय प्राप्त करता है ।

भुक्ति एवं मुक्ति के लिए श्वेतवर्ण वाली देवी का, उच्चाटन के लिए नीलवर्णवाली का, वशीकरण के लिए रक्त वर्णवाली, मारण के लिए धूम्रवर्ण वाली तथा स्तम्भन के लिए कनक वर्ण (सुनहरे रंग) वाली देवी का ध्यान करना चाहिए । देवी की सिद्धि के लिए रात्रि में मदिरा आदि से बलि देनी चाहिए ।

अब सर्वसिद्धिदायक एक अतिगोपनीय प्रयोग बतलाते हैं—कृष्णपक्ष की चतुर्दशी की मध्यरात्रि में घनघोर अन्धकार में स्नान कर, लालवस्त्र, लाल माला एवं रक्त

तत्काष्ठज्वलितेऽनौकाकपक्षैर्होमात्फलमरिमृत्युरेवस्यात् ॥ ३६ ॥ प्रयोगान्तरमाह ॥ उषसीति ॥ कविंशुक्राचार्यम् ॥ ३७ ॥

चन्दन लगाकर छिन्नमस्ता स्वरूपिणी स्त्री को लाकर उसका पूजन करना चाहिए। जो नवयुवती, सुन्दरी नर पंचक गामिनी, हँसमुख, खुलेकेशवाली हो उसे आभूषण आदि देकर प्रसन्न करके फिर विवस्त्र करके उसका पूजन कर १० हजार मन्त्रों का जप करना चाहिए। फिर बलि देकर रात्रि बिताकर धन से उसे संतुष्ट कर (दूसरे दिन) देवता की भावना से ब्रह्मणों को विविध प्रकार का भोजन कराना चाहिए। इस विधि से यह प्रयोग करने पर व्यक्ति लक्ष्मी, पुत्र, पौत्र, यश सुख, स्त्री, दीर्घायु, धन एवं अन्य मनोवाञ्छित फल प्राप्त करता है। विद्या की कामना वाले साधक को उस रात्रि में व्रत करना चाहिए और अन्य प्रकार फल की इच्छा वाले मान्त्रिक को मन्त्र जप करते हुए उसके साथ गमन करना चाहिए।[१]

विशेष क्या कहें इस विद्या की जानकारी मात्र से शास्त्र का ज्ञान, पापों का नाश एवं निश्चित रूप से सभी सुख मिलते हैं। उषःकाल में उठकर शय्या में बैठकर १०० बार जप करना चाहिए। ऐसा करने से ६ मास के भीतर व्यक्ति अपनी कवित्व शक्ति से शुक्राचार्य को जीत लेता है।

शिवेन कीलितविद्यातदुत्कीलनमुच्यते।
मायां तारपुटां मन्त्री जप्यादष्टोत्तरं शतम् ॥ ३८ ॥
मन्त्रस्यादौ तथैवान्ते भवेत्सिद्धिप्रदा तु सा।
एष नूनं विधिर्गोप्यःसिद्धिकामेन मन्त्रिणा ॥ ३९ ॥
उदिता छिन्नमस्तेयं कलौ शीघ्रमभीष्टदा।

उत्कीलन विधि : यह विद्या भगवान् शिव के द्वारा कीलित है। (अतः) अब उसका उत्कीलन बतलाते हैं : मन्त्र का जप करने से पहिले तथा बाद में प्रणव से सम्पुटित मायाबीज का १०८ बार जप करने से यह विद्या सिद्धिदायक हो जाती है। सिद्धि की कामना रखने वाले मान्त्रिक को यह विधि निश्चित रूप से गुप्त रखनी चाहिए।

कलियुग में शीघ्र ही मनोऽभीष्ट फल देने वाली यह छिन्नमस्ता विद्या बतलायी गयी।

---

[१] इन प्रयोगों को करने का अधिकार जन साधारण को नहीं है; सिद्ध विद्यावाले गुरु से दीक्षा एवं प्रयोग रहस्य को जानने के बाद ही इन्हें करना चाहिए। अन्यथा अज्ञानता वश अन्यथा फल मिल सकता है।

तारपुटांमाद्यां ॐ ह्रीं ॐ इति ॥ ३८-३९ ॥ रेणुकाशबरीमाह ॥ प्रणवइति ॥ कमलाश्रीं ॥

रेणुकाशबरीविद्या ताहश्येवोच्यतेधुना ॥ ४० ॥
प्रणवःकमलामायासृणिरिन्दुयुतोधरः ।
पंचाक्षरीमहाविद्या भैरवोस्य मुनिर्मतः ॥ ४१ ॥
पंक्तिश्छन्दोरेणुकाख्या शबरीदेवतोदिता ।
पंचवर्णैःसमस्तेन कुर्वीतमनुनांगकम् ॥ ४२ ॥

रेणुका शबरी मन्त्र : छिन्नमस्ता विद्या के समान ही रेणुकाशबरी विद्या होती है, उसे अब बतलाते हैं :

प्रणव (ॐ) कमला (श्रीं) माया (ह्रीं) सृणि (क्रों) एवं इन्दुयुत अधर (ऐं)–यह पंचाक्षरी महाविद्या है । इसका भैरव ऋषि, पंक्ति छन्द एवं रेणुकाशबरी देवता बतलाया गया है ।

पाँच बीज एवं समस्त मन्त्र से षडङ्गन्यास करना चाहिए ।

टिप्पणी : मन्त्रोद्धार : ॐ श्रीं ह्रीं क्रों ऐं ।

विनियोग : अस्य श्री रेणुकाशबरीमन्त्रस्य भैरव ऋषिः पंक्ति छन्दः रेणुका शबरी देवता ममाभीष्टसिद्धये जपे विनियोगः ।

कराङ्गन्यास : ॐ अगुष्ठाभ्यां नमः । हृदयाय नमः ।
श्रीं तर्जनीभ्यां नमः । शिरसे स्वाहा ।
ह्रीं मध्यमाभ्यां नमः । शिखायै वषट् ।
क्रों अनामिकाभ्यां नमः । कवचाय हुम् ।
ऐं कनिष्ठकाभ्यां नमः । नेत्रत्रयाय वौषट् ।
ॐ श्रीं ह्रीं क्रों ऐं करतलकरपृष्ठाभ्यां । नमः अस्त्राय फट ।

हेमाद्रिसानावुद्याने नानाद्रुममनोहरे ।
रत्नमण्डपमध्यस्थवेदिकायांस्थितां स्मरेत् ॥ ४३ ॥
गुञ्जाफलाकल्पितहाररम्यां श्रुत्योःशिखण्डं शिखिनो वहंतीम् ।
कोदण्डबाणौ दधतीं कराभ्यां कटिस्थवल्कां शबरीं स्मरेयम् ॥४४॥

ध्यान : मेरु शिखर पर अनेक रमणीय वृक्षों के उद्यान में रत्नमण्डप के मध्य में वेदिका पर विराजमान देवी का ध्यान करना चाहिए । गुञ्जाफलों से निर्मित हार से

मायाह्रीं ॥ सृणिःक्रो ॥ इन्दुयुतोऽधरः ऐं ॥ मन्त्रोयथा–ॐ श्रींह्रीक्रौंऐं ॥ षडंगमाह ॥ पञ्चेति ॥ समस्तेनास्त्रम् ध्यानमाह ॥ हेमाद्रीति ॥ मेरुशिखरे ॥ शिखिनोमयूरस्यशिच्छं-कणंयोर्दधतीम् ॥ कोदण्डंधनुर्वामे ॥४०-४४॥

सुशोभित, कानों में मोरपंख के कुण्डल धारण करने वाली दोनों हाथों में धनुष एवं बाण तथा कटि में वल्कल धारण करने वाली शबरी देवी का ध्यान करता हूँ।

ध्यात्वैवं प्रजपेल्लक्षपञ्चकं तद्दशांशतः।
फलैर्बिल्वैः प्रजुहुयात्तत्काष्ठैरेधितेनले ॥ ४५ ॥

जप संख्या एवं हवन : इस प्रकार ध्यान करके ५ लाख जप करना चाहिए। तथा बेलवृक्ष की लकड़ी से प्रज्वलित अग्नि में बिल्वफलों से दशांश हवन करना चाहिए।

पूर्वोदितेर्चयेत्पीठे षडङ्गावृत्तिरादिमा।
द्वितीयावरेणे पूज्याःशबर्य्या अष्टशक्तयः ॥ ४६ ॥
हुंकारीखेचरीचाथ चण्डास्याच्छेदनी तथा।
क्षेपणास्त्री च हुंकारीक्षेमकारी तथाष्टमी ॥ ४७ ॥
तृतीये दशदिक्पाला वज्राद्यानि चतुर्थके।
एवं सिद्धं मनुं सम्यक्कार्य्ये कर्मणि योजयेत् ॥ ४८ ॥

पीठ पूजा एवं आवरण पूजा : पूर्वोक्त पीठ पर देवी का पूजन करना चाहिए। फिर प्रथम आवरण में षडङ्गपूजा तथा द्वितीय आवरण में शबरी की आठ शक्तियों का पूजन करना चाहिए। हुंकरी, खेचरी, चण्डास्या, छेदनी, क्षेपणा, अस्त्री, हुंकारी तथा क्षेमकरी—ये आठ शक्तियाँ होती हैं। तृतीय आवरण में १० दिक्पालों का तथा चतुर्थ आवरण में वज्र आदि आयुधों का पूजन करना चाहिए।

इस प्रकार मन्त्र को सिद्ध कर काम्यप्रयोग में उसका उपयोग करना चाहिए।

टिप्पणी : षड्कोण, अष्टदल एवं भूपुर से सुशोभित यन्त्र पर देवी का पूजन करना चाहिए। श्लोक संख्या ८ की टिप्पणी में बतलायी गयी रीति से 'ॐ आधार शक्तये नमः' से लेकर 'ॐ रतिकामाभ्यां नमः' तक पीठपूजन कर जया आदि ९ पीठ शक्ति की पूजा करना चाहिए। फिर उस पीठ पर मूलमन्त्र से विधिवत रेणुकाशबरी देवी का पूजन कर आवरण पूजा करनी चाहिए।

ॐ हृदयाय नमः। क्रों कवचाय हुम्।
श्रीं शिरसे स्वाहा। ऐं नेत्रत्रयाय वौषट्।
ह्रीं शिखायै वषट्। ॐ श्रीं ह्रीं क्रों ऐं अस्त्रायफट्।

इन मन्त्रों से षड्कोण में षडङ्ग पूजा करनी चाहिए। इस प्रकार प्रथम आवरण का पूजन कर द्वितीय आवरण में अष्टदलों में पूर्व आदि क्रम से निम्नलिखित मन्त्रों से हुंकारी आदि शक्तियों का पूजन करना चाहिए, यथा—

बाणोदन्ते ॥ पूर्वोदितेजयादिके ॥ ४५-४८ ॥

ॐ हुंकार्चे नमः ॐ क्षेपणायै नमः
ॐ खेचर्यै नमः ॐ अस्त्र्यै नमः
ॐ चण्डास्यायै नमः ॐ हुंकार्यै नमः
ॐ छेदन्यै नमः ॐ क्षेमकार्यै नमः

इसके बाद तृतीय आवरण में भूपुर के भीतर दशों दिशाओं में आपने नाम-मन्त्रों से दिक्पालों का पूजन करना चाहिए, यथा—

ॐ इन्द्राय नमः—पूर्वे । ॐ वायवे नमः. वायव्ये ।
ॐ अग्नेये नमः—आग्नेये । ॐ सोमाय नमः—उत्तरे ।
ॐ यमाय नमः—दक्षिणे । ॐ ईशानाय नमः—ऐशान्ये ।
ॐ निर्ऋतये नमः—नैर्ऋत्ये । ॐ ब्रह्मणे नमः—पूर्वेशानयोर्मध्ये
ॐ वरुणाय नमः—पश्चिमे । ॐ अनन्ताय नमः—नैर्ऋत्यपश्चिमयोर्मध्ये ।

फिर चतुर्थ आवरण में भूपुर के बाहर वज्र आदि आयुधों का पूजन करना चाहिए, यथा—

ॐ वज्राय नमः ॐ पद्माय नमः
,, शक्तये नमः ,, खड्गाय नमः
,, दण्डाय नमः ,, अंकुशाय नमः
,, पाशाय नमः ,, शूलाय नमः
,, गदायै नमः ,, चक्राय नमः

इस प्रकार आवरण पूजा कर पुनः देवी का पूजन कर तथा ५ पुष्पाञ्जलियाँ देकर विधिवत जप करना चाहिए ।

मल्लीपुष्पैर्जनावश्या इक्षुखण्डैर्धनाप्तयः ।
पञ्चगव्यैर्धेनवःस्युरशोककुसुमैस्सुताः ॥ ४९ ॥
इन्दीवरैःकृते होमे नृपपत्नीवशंवदा ।
अन्नाप्तिरन्नैःसकलं मधूकैर्वाञ्छितंभवेत् ॥ ५० ॥
प्रोदिता शबरीविद्या कलौत्वरितसिद्धिदा ।

काम्यप्रयोग : मल्लिका पुष्पों के हवन से लोग वश में होते हैं । ईख के खण्डों के होम से धन लाभ होता है । पञ्चगव्य के होम से गोधन में वृद्धि तथा अशोक के फूलों के होम से पुत्र प्राप्ति होती है । कमल पुष्पों के होम से रानी वश में हो जाती है । अन्न के होम से अन्न प्राप्ति तथा मधूक (महुए) के होम से सभी वांच्छित कार्य होते हैं । कलियुग में शीघ्र सिद्धि देने वाली यह शबरी विद्या बतलायी गयी ।

स्वयंवरकलामाह ॥ तारइन्दि निद्राभकारः ॥ पवनोयः ॥ वह्निसुन्दरीस्वाहा ॥

अथोच्यते विवाहाप्त्यै स्वयंवरकलाशिवा ॥ ५१ ॥
तारो माया योगिनीतिद्वयं योगेश्वरिद्वयम् ।
योगनिद्रायंकरिस्यात्सकलस्थावरेतिच ॥ ५२ ॥
जंगमस्यमुखं प्रोच्यहृदयंममसंपठेत् ।
वशमाकर्षयाकर्षयपवनोवह्निसुन्दरी ॥ ५३ ॥

स्वयंवर कला मन्त्र : अब विवाह हेतु स्वयंवर कला विद्या को बतलाते हैं—

तार (ॐ) माया (ह्रीं) २ बार योगिनि (योगिनि-योनिनि) २ बार (योगेश्वरि (योगेश्वरि योगेश्वरि) फिर 'योग' निद्रा (भ) तथा 'यंकरि' फिर 'सकलस्थावर' 'जगमस्य मुखं' कहकर 'हृदयं' 'मम' तथा 'वशमाकर्षयाकर्ष पवन (य) एवं वह्नि सुन्दरी (स्वाहा) लगाने से ५० अक्षर वाला यह मन्त्र बनता है ।

टिप्पणी : ॐ ह्रीं योगिनि योगिनि योगेश्वरि योगेश्वरि योगभयंकरि सकल स्थावरजंगमस्य मुखं हृदयं मम वशमाकर्षयाकर्षय स्वाहा ।

पञ्चाशद्वर्णविद्याया मुनिरस्याः पितामहः ।
छन्दोतिजगती देवीगिरिपुत्रीस्वयंवरा ॥ ५४ ॥
जगत्त्रयेतिहृदयं त्रैलोक्येतिशिरोमतम् ।
उरगेतिशिखा सर्वराजेतिकवचं तथा ॥ ५५ ॥
सर्वस्त्रीपुरुषेत्यक्षि सर्वेत्यस्त्रंसमीरितम् ।
तारमायादिकावश्यमोहिन्यैवदपश्चिमाः ॥ ५६ ॥
षडंगमन्त्राउद्दिष्टामूलेन व्यापकं चरेत् ।
ध्यायेद्देवीं महादेवं वरीतुं समुपागताम् ॥ ५७ ॥

विनियोग एवं षडङ्गन्यास : पचास अक्षर वाली इस विद्या के ऋषि ब्रह्मा हैं, छन्द जगती है तथा देवता गिरिपुत्री स्वयंवरा देवी है ।

तार (ॐ) एवं माया (ह्रीं) को प्रारम्भ में लगाकर तथा 'वश्यमोहिन्यै' अन्त में लगाकर 'जगत्त्रय' से हृदय 'त्रैलोक्य' से शिर, 'उरग' से शिखा, 'सर्वराज' से कवच,

---

स्वरूपमन्यत् यथा—ॐ ह्रीं योगिनी योगेश्वरी योगेश्वरी योगभयंकरि सकलस्थावरजंगमस्यमुखंहृदयंममवशमाकर्षयस्वाहेति ॥ ५२ से ५४ ॥ षडंगमाह ॥ जगत्त्रयेतीति ॥५५॥ तारमायादिकाः ॥ वश्यमोहिन्यैपदपश्चिमम्—वर्तियेषामीदृशाः ॥ षडंगमन्त्राइत्युक्तत्वात् ॥ ॐ ह्रींजगत्त्रयवश्यमोहिन्यैहृदयाय नमः—ॐ ह्रीं त्रैलोक्यवश्यमोहिन्यैशिर०—ॐ ह्रीं उरगश्वयमोहिन्यै शिखेत्यादिबोध्यम् ॥ मायात्रदीर्घषट्कयुताकार्य्या ॥ ५६-५७ ॥

'सर्व स्त्रीपुरुष' से नेत्र तथा 'सर्व' से अस्त्र पर न्यास करना बतलाया गया है। (इस प्रकार) षडङ्गन्यास के मन्त्र बतलाये गये हैं। मूल मन्त्र से व्यापक न्यास करना चाहिए।

फिर महादेव का वर करने के लिए समुद्यत देवी का ध्यान करना चाहिए।

टिप्पणी विनियोग : ॐ अस्य श्री स्वयंवरकलामन्त्रस्य ब्रह्मा ऋषिः जगती छन्दः, देवीगिरिपुत्रीस्वयंवरा देवता ममाभीष्टसिद्धये जपे विनियोगः।

षडङ्गन्यास : ॐ ह्रीं जगत्त्रयवश्यमोहिन्यै हृदयाय नमः।
,, ह्रीं त्रैलोक्यवश्यमोहिन्यै शिरसे स्वाहा।
,, ह्रीं उरगवश्यमोहिन्यै शिखायै वषट्।
,, ह्रीं सर्वराजवश्यमोहिन्यै कवचाय हुम्।
,, ह्रीं सर्वस्त्रीपुरुषवश्यमोहिन्यै नेत्रत्रयाय वौषट्।
,, ह्रीं सर्ववश्यमोहिन्यै अस्त्राय फट्।

शम्भु जगन्मोहनरूपपूर्णविलोक्यलज्जाकुलितांस्मिताढ्याम्।
मधूकमालां स्वसखीकराभ्यां संबिभ्रतीमद्रिसुतां भजेयम् ॥ ५८ ॥

ध्यान : जगत् को मोहित करने वाले भगवान् शम्भु के रूप को एक टक देखकर लजाती एवं मन्द मन्द मुस्कराती हुई, तथा अपनी सखियों के साथ मधूक पुष्पों की माला (वर माला) लिए हुए गिरिसुता का ध्यान करना चाहिए।

एवं ध्यात्वा जपेल्लक्ष चतुष्कं तद्दशांशतः।
पायसान्नेन जुहुयात्पीठे पूर्वोदिते जयेत् ॥ ५९ ॥

जप संख्या एवं हवन : इस प्रकार ध्यान कर ४ लाख मन्त्रों का जप करना चाहिए। तथा पायस (खीर) से दशांश होम करना चाहिए। पूर्वोक्त पीठकर देवी का पूजन करना चाहिए।

त्रिकोणचतुरस्रांगकोणाष्टदलदिग्दलम्।
दिक्कलादन्तपत्राणि चतुष्षष्टिदलं पुनः ॥ ६० ॥
वृत्तत्रयं चतुर्द्वारयुक्तं धरणिकेतनम्।
पूजायन्त्रं प्रकुर्वीत तत्र सम्पूजयेदिमाम् ॥ ६१ ॥

पूजन यन्त्र : त्रिकोण, चतुरस्र, षटकोण, अष्टदल, दशदल पुनः दशदल, षोडश-दल, बत्तीस दल, चौसठ दल उसके बाद ३ वृत्त तथा ४ द्वार वाला भूपुर सहित पूजा यन्त्र बनाकर उस पर देवी का पूजन करना चाहिए।

टिप्पणी : स्वयंवर कला देवी का पूजन करने के लिए निम्नलिखित आकृति जैसा यन्त्र बना लेना चाहिए। (देखिये चित्र नं० १०)

त्रिकोणे पार्वतीमिष्ट्वा चतुरस्रेर्चयेदिमाः ।
मेधां विद्यां पुनर्लक्ष्मीं महालक्ष्मीं चतुर्थिकाम् ॥ ६२ ॥
षट्कोणेषु षडंगानि स्वरानष्टदलेर्चयेत् ।
दिग्दलद्वितीये देवानिन्द्रादीनायुधानि च ॥ ६३ ॥
तारादेन नमोन्तेन श्रीबीजेन रमां यजेत् ।
कलापत्रे द्विरामारे पाशमांयांकुशैःशिवा ॥ ६४ ॥
वेदांगपत्रे त्रिपुटां श्रीमायामदनैर्यजेत् ।
वृत्तत्रये महालक्ष्मीं भवानीं पुष्पसायकाम् ॥ ६५ ॥
चतुरस्रं चतुर्द्वार्षु विघ्नेट्क्षेत्रेशभैरवान् ।
योगिनीःपूजयेदित्थं नवावरणमर्चनम् ॥ ६६ ॥
एवं योभजते देवीं वश्यास्तस्याखिलाजनाः ।
लाजैस्त्रिमधुरो पेतैर्जुहुयादयुतं तु यः ॥ ६७ ॥
लभते वांछितां कन्यां धनमानसमन्विताम् ।
एवं स्वयंवराप्रोक्ता प्रोच्यते मधुमत्यथ ॥ ६८ ॥

आवरण पूजा : त्रिकोण में पार्वती का पूजन कर चतुरस्र में मेधा, विद्या लक्ष्मी एवं महालक्ष्मी—इन चारों का पूजन करना चाहिए। षडकोण में षडङ्गपूजा तथा अष्ट-दल में स्वरों का पूजन करना चाहिए। दोनों दश दलों में क्रमशः इन्द्र आदि दिक्पाल तथा वज्र आदि आयुधों का पूजन करना चाहिए। षोडश दल में 'ॐ श्रीं रमायै नमः मन्त्र से रमा का पूजन करना चाहिए। बत्तीस दल में 'आं ह्रीं क्रों शिवायै नमा'—मन्त्र से शिवा का पूजन करना चाहिए। चौसठ दल में 'श्रीं ह्रीं क्लीं त्रिपुरायै नमः' से त्रिपुरा का पूजन करना चाहिए। तीनों वृत्तों में क्रमशः महालक्ष्मी, भवानी एवं कामेश्वरी का पूजन करना चाहिए। भूपुर के चारों द्वारों पर गणेश, क्षेत्रपाल भैरव एवं योगिनियों का पूजन करना चाहिए। इस प्रकार नौ आवरणों की पूजा करनी चाहिए।

इस रीति से जो व्यक्ति देवी की आराधना करता है, सभी लोग उसके वश में हो जाते हैं। जो व्यक्ति त्रिमधु के साथ लाजाओं से होम करता है वह धन एवं मान

कलापत्रेषोडशदले ॥ तारादेनरमान्तेनबीजेन ॐ श्रीं श्रीमित्रिमनुनाश्रियंयजेत् ॥
द्विरामारे द्वात्रिंशदले ॥ पाशमायांकुशैः ॥ आंह्रींक्रोंशिवयैकमइ द्विरतांतजेत् । ६३ ॥
वेदांगपत्रे चतुष्पष्टिदले ॥ श्रीमायामदनैः श्रींह्रींक्लींत्रिपुरायैनमइतितांयजेत्॥ ६५-६८ ॥

सहित इच्छित कन्या को प्राप्त करता है। इस प्रकार स्वम्वरा विद्या बतलायी गयी। अब मधुमती को बतलाते हैं।

टिप्पणी पूजन विधि : श्लोक ५८ के अनुसार देवी का ध्यान कर मानसोपचार से पूजन कर, विधिवत् अर्घ्य स्थापन कर श्लोक ८ की टिप्पणी में बतलायी गयी रीति से पीठ पूजा कर उस पीठ पर मूल मन्त्र से आवाहन आदि उपचारों से देवी का पूजन करना चाहिए। फिर देवी की आज्ञा लेकर आवरण पूजा करनी चाहिए।

प्रथम आवरण में त्रिकोण में 'ह्रीं पार्वत्यै नमः' मन्त्र से पार्वती का पूजन करना चाहिए। द्वितीय आवरण में चतुरस्र में निम्नलिखित मन्त्रों से मेधा विद्या, लक्ष्मी एवं महालक्ष्मी का पूजन करना चाहिए, यथा--

ॐ मेधायै नमः।
,, विद्यायै नमः।
,, लक्ष्म्यै नमः।
,, महालक्ष्म्यै नमः।

तृतीय आवरण में षट्कोण में न्यास मन्त्रों से षडङ्ग पूजा करनी चाहिए, यथा--

ॐ ह्रीं जगत्त्रय वश्य मोहिन्यै हृदयाय नमः।
,, ह्रीं त्रैलोक्य वश्य मोहिन्यै शिरसे स्वाहा।
,, ह्रीं उरग वश्य मोहिन्यै शिखाये वषट्।
,, ह्रीं सर्वराज वश्य मोहिन्यै कवचाय हुम्।
,, ह्रीं सर्वस्त्रीपुरुष वश्य मोहिन्यै नेत्राय वौषट्।
,, ह्रीं सर्वराज वश्य मोहिन्यै अस्त्राय फट्।

चतुर्थ आवरण में अष्टदल कमल में 'ॐ स्वरेभ्यो नमः' मन्त्र से स्वरों का पूजन करना चाहिए।

पञ्चम आवरण में दल दल में पूर्व आदि दिशाओं में नाम मन्त्रों से इन्द्र आदि दिक्पालों का पूजन करना चाहिए, यथा--

ॐ इन्द्राय नमः--पूर्वे।
ॐ अग्नये नमः--आग्नेये।
ॐ यमाय नमः--दक्षिणे।
ॐ निर्ऋतये नमः नैर्ऋत्ये।
ॐ वरुणाय नमः--पश्चिमे।
ॐ वायवे नमः--वायव्ये।
ॐ सोमाय नमः--उत्तरे।

ॐ ईशानाय नमः—ईशान्ये ।
,, ब्रह्मणे नमः—पूर्वेशानयोर्मध्ये ।
,, अनन्ताय नमः—निर्ऋति पश्चिमयोर्मध्ये ।

षष्ठ आवरण में दशदल में पूर्व आदि दिशाओं में वज्र आदि आयुधों का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ वज्राय नमः ॐ पाशाय नमः ॐ पद्माय नमः ।
,, शक्तये नमः ,, अंकुशाय नमः ,, चक्राय नमः ।
,, दण्डाय नमः ,, गदायै नमः
,, खड्गाय नमः । ,, शूलाय नमः

सप्तम आवरण में षोडश दल में 'ॐ श्रीं रमायै नमः' मन्त्र से रमा का पूजन करना चाहिए ।

अष्टम आवरण में बत्तीस दल में 'आं ह्रीं क्रों शिवायै नमः' मन्त्र से शिवा का पूजन करना चाहिए ।

नवम आवरण में चौसठ दलों में 'श्रीं ह्रीं क्लीं त्रिपुरायै नमः' मन्त्र से त्रिपुरा का पूजन कर ३ वृत्तों में निम्नलिखित मन्त्रों से क्रमशः महालक्ष्मी, भवानी एवं कामेश्वरी का पूजन करना चाहिए, यथा :

श्रीं महालक्ष्म्यै नमः । ह्रीं भवान्यै नमः । क्लीं कामेश्वर्यैनमः ।

और अन्त में भूपुर के चारों द्वारों पर यथाक्रमेण गणपति, क्षेत्रपाल, भैरव एवं योगिनियों का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ ह्रीं गं गणेशाय नमः—पूर्व द्वारे ।
,, ह्रीं बं बटुकाय नमः—दक्षिण द्वारे ।
,, ह्रीं क्षं क्षेत्रपालाय नमः—पश्चिम द्वारे ।
,, ह्रीं यं योगिनीभ्यो नमः—उत्तर द्वारे ।

इस प्रकार आवरण पूजा करने के बाद पुनः पञ्चोपचार से देवी का पूजन कर पुष्पाञ्जलि समर्पित कर विधिवत् जप करना चाहिए ।

नारायणोविन्दुयुतो हृल्लेखांकुशमन्मथा ।
दार्घवर्मंध्रुवोवह्निप्रेयसी वसुवर्णवान् ॥ ६९ ॥

मधुमतीमाह ॥ नारायण इति ॥ बिन्दुयुतोनारायणः आं ॥ हृल्लेखाह्रा ॥ अकुशः क्रों ॥ मन्मथः क्लीं ॥ दीर्घंवमहूं ॥ ध्रुवः ॐ वह्निप्रेयसी स्वाहा मन्त्रोयथा-आंह्रींक्रोंक्लींहूं ॐ स्वाहा ॥ ६९ ॥

मधुमती मन्त्र : विन्दु सहित नारायण (आं) हृल्लेखा (ह्रीं) अंकुश (क्रों) मन्मथ (क्लीं) दीर्घवर्म (हूं) ध्रुव (ॐ) तथा अन्त में वह्नि प्रेयसी (स्वाहा) लगाने से ८ अक्षर वाला मधुमती का मन्त्र बनता है ।

टिप्पणी : मन्त्रोद्धार : आं ह्रीं क्रों क्लीं हूं ॐ स्वाहा ।

मुनिरस्य मधुश्छन्दस्त्रिष्टुब्मधुमतीति च ।
मुन्याद्याः पञ्चभिर्बीजैःपञ्चाङ्गानि प्रकल्पयेत् ॥ ७० ॥
अस्त्रंस्वाहांततारेण कृत्वा देवीं स्मरेद् बुधः ।

विनियोग एवं न्यास : इस मन्त्र का मधु ऋषि, त्रिष्टुप् छन्द तथा मधुमती देवता है । मन्त्र के पाँच बीजों से पाँच अङ्गों में तथा स्वाहान्त प्रणव से अस्त्र में न्यास कर विद्वान् साधक को देवी का ध्यान करना चाहिए ।

टिप्पणी : विनियोग : अस्य श्री मधुमतीमन्त्रस्य मधुर्ऋषिः त्रिषुप् छन्दः मधुमती-देवता, ममाभीष्टसिद्धये जपे विनियोगः ।

षडङ्गन्यास : आं हृदयाय नमः क्लीं कवचाय हुम् ।
ह्रीं शिरसे स्वाहा । हूं नेत्रत्रयाय वौषट्
क्रों शिखायै वषट् ॐ स्वाहा अस्त्राय फट् ।

नानाद्रुमलताकीर्णे कैलासगतकानने ॥ ७१ ॥
अहिलतादलनीलसरोजयुक्करयुगां मणिकाञ्चनपीठगाम् ।
अमरनागवधूगणसेवितां मधुमतीमखिलार्थकरीं भजे ॥ ७२ ॥

ध्यान : अनेक वृक्ष एवं लताओं से व्याप्त कैलाश गिरि के वन में मणि एवं कांचन से निर्मित पीठ पर विराजमान, दोनों हाथों में नागवल्ली दल एवं नीलकमल धारण किये हुए, देवांगना एवं नागपत्नियों से सेवित सर्वार्थ सिद्धिदायक मधुमती का ध्यान करता हूँ ।

प्रजप्य वसुलक्षं तद्दशांशंजुहुयाद्दलैः ।
बिल्वोत्थैःपूजयेत्पीठे जयादिसर्वशक्तिके ॥ ७३ ॥

जप संख्या एवं हवन : (उक्त मन्त्र का विधिवत्) ८ लाख जप करने के बाद बेलपत्रों से दशांश होम करना चाहिए ।

जया आदि सब शक्तियों के साथ पूर्वोक्त पीठ पर देवी का पूजन करना चाहिए ।

स्वाहान्तप्रणवेनास्त्रम् ॥ ७१ ॥ ध्यानमाह ॥ अहीति ॥ नागवल्लीदलंदधेनीलपद्मं-वामे ॥ ७२-७३ ॥

टिप्पणी : पीठ पूजा विधि : श्लोक संख्या ८ की टिप्पणी में बतलायी गयी रीति से 'ॐ आधार शक्तये नमः से लेकर ॐ मंगलायै नमः' तक शक्तियों के साथ पीठ पूजन कर उस पीठ पर मूलमन्त्र से विधिवत् देवी का पूजन करना चाहिए ।

कर्णिकायांषडंगानि शक्तयो वसुपत्रके ।
निद्राच्छायाक्षमातृष्णाकान्तिरार्याश्रुतिःस्मृतिः ॥ ७४ ॥
शक्रादयस्तदस्त्राणि पूज्यान्यन्ते सुखाप्तये ।
य इत्थं सेवते देवीं ससमृद्धेःपदंलभेत् ॥ ७५ ॥

आवरण पूजा : कर्णिका में षडङ्ग पूजा एवं अष्टदल में शक्तियों का पूजन करना चाहिये । निद्रा, छाया, क्षमा, तृष्णा, कान्ति, आर्या, श्रुति एवं स्मृति ये ८ शक्तियाँ होती हैं ।

फिर इन्द्र आदि का तथा बाद में उनके आयुधों का सुख प्राप्त करने के लिए पूजन करना चाहिये । जो व्यक्ति इस प्रकार देवी की उपासना करता है वह समृद्धि प्राप्त करता है ।

टिप्पणी : पूजन यन्त्र : वृत्ताकार कर्णिका के ऊपर क्रमशः अष्टदल एवं भूपुर बनाकर उस यन्त्र पर विधिवत् मधुमती देवी का पूजन करना चाहिये (देखिये चित्र नं० ११)

आवरण पूजा : उक्त यन्त्र पर पीठ पूजा कर, उस पर मूल मन्त्र से आवाहन आदि उपचारों से विधिवत देवी का पूजन कर उनकी आज्ञा लेकर निम्नलिखित रीति से आवरण पूजा करनी चाहिए ।

प्रथम आवरण में वृत्ताकार कर्णिका में निम्नलिखित मन्त्रों से षडङ्गपूजा करनी चाहिए, यथा :

आं हृदयाय नमः । क्लीं कवचाय हुम् ।
ह्रीं शिरसे स्वाहा । हूं नेत्रत्रयाय वौषट् ।
क्रों शिखायै वषट् । ॐ स्वाहा अस्त्राय फट् ।

द्वितीय आवरण में अष्टदल में पूर्व आदि दिशाओं में निम्नलिखित मन्त्रों से क्रमशः निद्रा आदि शक्तियों का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ निद्रायै नमः । ॐ क्षमायै नमः ।
ॐ छायायै नमः । ॐ तृष्णायै नमः ।

ॐ कान्त्यै नमः । ॐ श्रुत्यै नमः ।
ॐ आर्यायै नमः । ॐ स्मृत्यै नमः ।

तृतीय आवरण में भूपुर के भीतर दशों दिशाओं में इन्द्र आदि देवताओं का उनके नाम मन्त्रों से पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ इन्द्राय नमः—पूर्वे । ॐ वायवे नमः—वायव्ये ।
ॐ अग्नये नमः—आग्नेये । ॐ सोमाय नमः—उत्तरे ।
ॐ यमाय नमः—दक्षिणे । ॐ ईशानाय नमः—ईशान्ये ।
ॐ निर्ऋतये नमः—नैर्ऋत्ये । ॐ ब्रह्मणे नमः—पूर्वेशानयोर्मध्ये ।
ॐ वरुणाय नमः—पश्चिमे । ॐ अनन्ताय नमः—निर्ऋति पश्चिमयोर्मध्ये ।

चतुर्थ आवरण में भूपुर के बाद पूर्व आदि दिशाओं में नाम मन्त्रों से वज्र आदि आयुधों का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ वज्राय नमः—पूर्वे । ॐ अंकुशाय नमः वायव्ये ।
ॐ शक्तये नमः—आग्नेये । ॐ गदायै नमः—उत्तरे ।
ॐ दण्डाय नमः—दक्षिणे । ॐ शूलाय नमः—ईशान्ये ।
ॐ खड्गाय नमः—नैर्ऋत्ये । ॐ पद्माय नमः—पूर्वेशानयोर्मध्ये ।
ॐ पाशाय नमः—पश्चिमे । ॐ चक्राय नमः—निर्ऋति पश्चिमयोर्मध्ये ।

इस प्रकार आवरण पूजा करने के बाद पञ्चोपचार से पुनः देवी का पूजन एवं पुष्पाञ्जलि समर्पित कर विधिवत जप करना चाहिए ।

रक्तांभोजैर्हुतैर्मन्त्री भूपतीन्वश्यतां नयेत् ।
नानाभोगान्पायसेन ताम्बूलैर्वामलोचनाम् ॥ ७६ ॥

काम्य प्रयोग : लाल कमलों के होम से साधक राजा एवं मन्त्रियों को अपने वश में कर सकता है । पायस के होम से अनेक भोग तथा ताम्बूल के होम से स्त्री वश में हो जाती है ।

दामोदरोबिन्दुयुक्तो मधुमत्याःपरोमनुः ।
पूर्ववद्यजनं चास्य ध्यायेद्देवीं कुमारिकाम् ॥ ७७ ॥
कोटिरर्द्धंजपंकुर्वन्विद्यापारंगमो भवेत् ।
मधुमत्या समानान्या नानाभोगसुखप्रदा ॥ ७८ ॥

मन्त्रान्तरमाह ॥ दामोदर इति दामोदरएकारः ॥ ७७-७८ ॥

मधुमती का अन्य मन्त्र : बिन्दु सहित दामोदर (ए) मधुमती का अन्य मन्त्र होता है। पूर्वोक्त रीति से देवी का पूजन करना चाहिए।

कुमारिका देवी का ध्यान करना चाहिए। (इस प्रकार) ५० लाख जप करने से साधक विद्याओं में पारंगत हो जाता है।

मधुमती के समान अनेक भोग तथा सुख देने वाला कोई अन्य देवता नहीं है।

टिप्पणी : एकाक्षर मन्त्र : ऐं।

माया वह्निध्वासनःशूरो मदेपावकसुन्दरी।
षडर्णोमनुराख्यातो मुनिःशक्तिःसमीरितः ॥ ७९ ॥
गायत्रीछन्द आख्यातं देवताप्रमदाभिधा।
षडंगानिप्रकुर्वीत दीर्घषट्काद्यमायया ॥ ८० ॥

प्रमदा का मन्त्र : माया (ह्रीं) वह्निध्वासना शूर (प्र) फिर 'मदे' और अन्त में पावकसुन्दरी (स्वाहा) लगाने से ६ अक्षरवाला मन्त्र बनता है।

इस मन्त्र का शक्ति ऋषि है, गायत्री छन्द है तथा प्रमदा देवता है।

षड्दीर्घसहित माया से इसका षडङ्गन्यास करना चाहिए।

टिप्पणी : मन्त्रोद्धार : ह्रीं प्रमदे स्वाहा।

विनियोग : अस्य श्रीप्रमदामन्त्रस्य शक्तिर्ऋषिः गायत्री छन्दः, प्रमदादेवता ममाभीष्टसिद्धये जपे विनियोगः।

षडङ्गन्यास : ह्रां हृदयाय नमः। ह्रैं कवचाय हुम्।
ह्रीं शिरसे स्वाहा। ह्रौं नेत्रत्रयाय वौषट्।
ह्रूं शिखायै वषट्। ह्रः अस्त्राय फट्।

केयूरमुख्याभरणाभिरामां वराभये सन्दधतीं कराभ्याम्।
संक्रंदनाद्यामरसेव्यपादां सत्काञ्चनाभां प्रमदां भजामि ॥ ८१ ॥

ध्यान : केयूर आदि आभूषणों से अलंकृत, दोनों हाथों में वरद एवं अभय मुद्रावाली, इन्द्र आदि देवताओं के द्वारा सेव्यमान चरण युगल वाली तथा सुवर्ण के समान अभावाली प्रमदा देवी का ध्यान करता हूँ।

रसलक्षं जपेन्मन्त्रं दशांशंजुहुयाद् घृतैः।
पूर्वोक्ते पूजयेत्पीठे षडंगाशाधवायुधैः ॥ ८२ ॥

प्रमदामन्त्रमाह ॥ मायेति ॥ वह्नयासनःशूरः ॥ रेफयुतःपःप्र ॥ मदेस्वरूम् ॥ पावकसुन्दरी स्वाहा ॥ मन्त्रोयथा ॥ ह्रींप्रमदेस्वाहेतिषडर्णः ॥ ७९-८० ॥ ध्यानमाह ॥ केयूरेति ॥ केयूरमगदावरादत्ते ॥ संक्रन्दनःइन्द्रः तदाद्यदेवैः सेव्यौपादौयस्याः आशाधवादिकपालाः ॥८१-८४॥

निर्जने कानने रात्रावयुतं नियुतं जपेत् ।
सहस्रं पायसान्नेन हुत्वा शयनमाचरेत् ॥ ८३ ॥
त्रिसप्तदिवसं यावदेवमाचरतो निशि ।
देवीदृग्गोचरीभूय दद्यादिष्टानि मन्त्रिणे ॥ ८४ ॥

पुरश्चरण विधि : इस मन्त्र का ६ लाख जप करना चाहिए तथा घी से दशांश होम करना चाहिए। पूर्वोक्त पीठ पर देवी का पूजन करना चाहिए।

कर्णिका में षडङ्गपूजा और दिक्पाल तथा उनके आयुधों का पूजन करना चाहिए।

निर्जन वन में रात्रि में १० हजार जप करना चाहिए तथा पायस से १ हजार आहुतियाँ देकर सो जाना चाहिए। ७३ दिन तक लगातार रात्रि में ऐसा करने से देवी साक्षात् दृष्टिगोचर होकर मान्त्रिक को अभीष्ट वर देती है।

मायाप्रमोदे ठद्वन्द्वं षडर्णोमनुरुत्तमः ।
ऋष्याद्यर्चनपर्य्यन्तं प्रमदावदुदीरितम् ॥ ८५ ॥
सरितो निर्जनेतीरे मण्डले चन्दनैःकृते ।
जपहोमौविधायोक्तौ प्रमोदां पश्यतिध्रुवम् ॥ ८६ ॥

प्रमोदा का मन्त्र एवं प्रयोग : माया (ह्रीं) फिर 'प्रमोदे' और अन्त में ठद्वय (स्वाहा) लगाने से ६ अक्षर वाला श्रेष्ठ मन्त्र बनता है।

इसके ऋषि आदि तथा पूजाविधि प्रमदा के समान कही गयी है।

नदी के निर्जन तट पर चन्दन से मण्डल बनाकर पूर्वोक्त रीति से जप एवं होम करने पर साधक निश्चित रूप से प्रमोदा देवी का दर्शन करता है।

टिप्पणी मन्त्रोद्धार : ह्रीं प्रमादे स्वाहा।

विनियोग : अस्य श्री प्रमोदा मन्त्रस्य शक्तिर्ऋषिः गायत्री छन्दः, प्रमोदा देवता, ममाभीष्टसिद्धये जपे विनियोगः।

षडङ्गन्यास : ह्रां हृदयाय नमः। ह्रैं कवचाय हुम्।
ह्री शिरसे स्वाहा। ह्रौं नेत्रत्रयाय वौषट्
ह्रूं शिखायै वषट्। ह्रः अस्त्राय फट्।

प्रयोग विधि : श्लोक ८ की टिप्पणी में बतलायी गयी रीति से पीठ पूजाकर उस पर देवी का विधिवत पूजन करना चाहिए। फिर षडङ्ग पूजा, दिक्पाल एवं

प्रमोदागाह ॥ मायेति ॥ ठद्वयं स्वाहा ॥ मंत्रीयथा ॥ ह्रीं प्रमोदेस्वाहेतिषडर्णः ॥ ८४-८६ ॥

उनके आयुधों का पूजन करना चाहिए। इस प्रकार पीठ एवं आवरण सहित देवी का पूजन कर जप करना चाहिए।

नदी के एकान्त तट पर चन्दन से मण्डल बनाकर रात्रि में १० हजार जप तथा पायस से १ हजार आहुतियाँ देनी चाहिए। इस प्रकार ७३ दिन तक प्रयोग करने पर प्रमोदा देवी साधक के सामने आकर प्रत्यक्ष रूप से उसे अभीष्ट वर देती हैं।

तारो हिलियुगं बन्दीदेवीङेन्ता नमोंतकः।
एकादशाक्षरोमन्त्रो भैरवत्रिष्टुभौ पुनः ॥ ८७ ॥
बन्दीमुन्यादयः प्रोक्ता एकेनद्वन्द्वशोङ्गकम्।
विधाय संस्मरेद्बन्दीं रत्नसिंहासनस्थिताम् ॥ ८८ ॥

बन्दी मन्त्र : तार (ॐ) हिलियुग्म (हिलिहिलि) फिर 'बन्दी' तथा चतुर्थ्यन्त देवी (देव्यै) और अन्त में 'नमः' लगाने से ११ अक्षर वाला मन्त्र बनता है।

इस मन्त्र का भैरव ऋषि है, त्रिष्टुप् छन्द है तथा बन्दी देवता है।

मन्त्र के १ तथा २-२ अक्षरों से षडङ्गन्यास कर रत्न सिंहासन पर विराजमान बन्दी देवी का ध्यान करना चाहिए।

टिप्पणी : मन्त्रोद्धार : ॐ हिलि हिलि बंदी देव्यै नमः

विनियोग : अस्य श्री बन्दी मन्त्रस्य, भैरव ऋषिः त्रिष्टुप् छन्दः, बन्दी देवता ममाभीष्ट सिद्धये जपे विनियोगः।

षडङ्गन्यास : ॐ हृदयाय नमः — बंदी कवचाय हुम्।
हिलि शिरसे स्वाहा। — देव्यै नेत्रत्रयाय वौषट्।
हिलि शिखायै वषट्। — नमः अस्त्राय फट्।

सतोयपाथोदसमानकान्तिमम्भोजपीयूषकरीरहस्ताम्।
सुरांगनासेवितपादपद्मां भजामि बन्दीं भवबन्धमुक्त्यै ॥ ८९ ॥

ध्यान : जल वाले मेघ के समान कान्ति वाली, हाथों में कमल एवं अमृतकलश धारण करने वाली, देवांगनाओं से सेव्यमान चरणयुगल वाली बन्दी देवी का भवबन्धन से मुक्ति हेतु ध्यान करता हूँ।

लक्षयुग्मं जपेन्मन्त्रीपायसान्नैर्दशांशतः।
हुत्वा पूर्वोदिते पीठे पूजयेद्बन्धमुक्तये ॥ ९० ॥
अंगपूजाकेसरेषु शक्तयःपत्रमध्यगाः।
कालीताराभगवतीकुब्जाह्वाशीतलापि च ॥ ९१ ॥

बंदीमन्त्रमाह ॥तारइति॥ ॐ हिलि हिलि बन्दीदेव्यैनमइत्येकादशाक्षरः ॥ ८७-८८ ॥
ध्यानमाह ॥ सतोयेति ॥ सजलमेघश्यामांपीयूषकरीरोऽमृतेकुम्भःसदक्षे ॥ ८९-९१ ॥

त्रिपुरामातृकालक्ष्मीर्दिगीशा आयुधान्यपि ।
एवमाराधिता बन्दी प्रयच्छेदीप्सितं नृणाम् ॥ ९२ ॥
एकविंशतिघस्रान्तमयुतंप्रत्यहं जपेत् ।
ब्रह्मचर्य्यरतो मन्त्रीगणेशार्चनपूर्वकम् ॥ ९३ ॥
कारागृहनिबद्धस्य मोक्ष एवं कृते भवेत् ।

पुरश्चरण विधि : इस मन्त्र का २ लाख जप तथा पायस द्रव्य से दशांश होम करना चाहिए ।

बन्धन से मुक्ति के लिए पूर्वोक्त पीठ पर देवी का पूजन करना चाहिए ।

केशरों में अंग पूजा तथा दलों के मध्य में शक्तियों का पूजन करना चाहिए । काली, तारा, भगवती, कुब्जा, शीतला, त्रिपुरा, मातृका एवं लक्ष्मी—ये आठ शक्तियाँ होती हैं । फिर दिक्पाल एवं उनके आयुधों का पूजन करना चाहिए । इस प्रकार आराधना करने से बन्दी देवी मनुष्यों को अभीष्ट फल देती है ।

साधक को ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए गणेश पूजन सहित २१ दिन तक प्रतिदिन १० हजार मन्त्रों का जप करना चाहिए ।

ऐसा करने से कारागार में बन्दी व्यक्ति छूट जाता है ।

टिप्पणी : *पूजा विधि* : प्रारम्भ में गणेश पूजन करने के बाद श्लोक ८९ के अनुसार देवी का ध्यान कर मानसोपचार से पूजन कर अर्घ्यस्थापन कर श्लोक ८ की टिप्पणी में बतलायी गयी विधि से पीठ पूजन करने के बाद उसपर देवी का विधिवत पूजन करना चाहिए ।

फिर केशरों में निम्नलिखित मन्त्रों से षडङ्ग पूजा करनी चाहिए, यथा :

ॐ हृदयाय नमः	बन्दी कवचाय हुम् ।
हिलि शिरसे स्वाहा ।	देव्यै नेत्रत्रयाय वौषट् ।
हिलि शिखायै वषट् ।	नमः अस्त्राय फट् ।

इसके बाद दलों के मध्य में पूर्व आदि दिशाओं में निम्नलिखित मन्त्रों से काली आदि शक्तियों का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ काल्यै नमः ।	ॐ शीतलायै नमः ।
ॐ तारायै नमः ।	ॐ त्रिपुरायै नमः ।
ॐ भगवत्यै नमः ।	ॐ मातृकायै नमः ।
ॐ कुब्जायै नमः ।	ॐ लक्ष्म्यै नमः ।

घस्रोदितम् ॥ ९३ ॥

फिर भूपुर के भीतर पूर्वोक्त रीति से दिक्पालों का तथा उसके बाहर उनके अस्त्रों का पूजन करना चाहिए।

इस प्रकार पूजन करने के बाद २१ दिन तक लगातार प्रति दिन १० हजार के क्रम से जप करना चाहिए। जप की समाप्ति पर पायस से दशांश होम करना चाहिए।

बन्दी देवी का पूजन षड्कोण, अष्टदल एवं भूपुर से सुशोभित यन्त्र पर करना चाहिए (देखिये चित्र नं० १२)।

चतुरस्रे ठकारान्तरपूपोपरि संलिखेत् ॥ ९४ ॥
साध्यनाम घृतेनैव मायाबीजं च दिक्ष्वपि।
मनुनाष्टादशार्णेन चतुरस्रं प्रवेष्टयेत् ॥ ९५ ॥

वाग्बीजं भुवनेशानी रमा बन्दि च केशवः।
मुष्यबन्धन्ततोमोक्षंकुरुयुग्मंचठद्वयम् ॥ ९६ ॥
वसुचन्द्रार्णमन्त्रोयं क्षिप्रंबन्धविमोक्षदः।
तस्मिन्नपूपे सम्पूज्य बन्दीमावरणान्विताम् ॥ ९७ ॥

कारानिकेतनस्थाय मित्राय प्रददीत तम्।
सशुद्धो वाक्यतो भूत्वा भक्षयेत्तमपूपकम् ॥ ९८ ॥

तस्मिन्सम्भक्षिते बद्धो मुच्यते बन्धनाद्द्रुतम्।
एवं सम्प्रोदिता बन्दीस्मरणाद्बन्धमुक्तिदा ॥ ९९ ॥

कारागार से बन्दी को छुड़ाने का एक अन्य प्रयोग : अपूप (मालपुआ) पर घी से चतुरस्र के भीतर ठकार को लिखकर साध्यनाम (अमुकं मोचय) लिखना चाहिए। तथा दिशाओं में मायाबीज लिखना चाहिए। फिर अष्टादशाक्षर मन्त्र से उसे वेष्टित कर उस अपूप पर देवी का आवाहन एवं पूजन कर वह अपूप कारागार में पड़े मित्र को खाने के लिए दे देना चाहिए।

वह कारागार में स्थित बन्दी शुद्ध एवं संयमी हो उस अपूप को खा ले। उस मालपुए को खाने से बन्दी शीघ्र ही बन्धन मुक्त हो जाता है।

प्रयोगान्तरमाह ॥ चतुरस्रइति ॥ अपूपापरिघृतेनचतुरस्रांतर्वर्तिठकारंविलिख्यतत्रामुकंमोचयतिलिखेत् ॥ दिक्षुमायाबीजं च ॥ अष्टादशार्णमन्त्रेणतंवेष्टयित्वात्रदेवीमावाह्यभ्यर्च्यकारागृहस्थायाऽपूपंदद्यात् ॥ सचतज्जग्ध्वाबंधनान्मुच्यते ॥ ९४-९५ ॥ अष्टादशार्णमाह ॥ वागिति ॥ केशवःअकारः ॥ ठद्वयंस्वाहा ॥ स्वरूपमन्यत् ॥ स्पष्टं च ॥ यथा ॥ एहींश्रींबन्दअमुकंबन्धमोचं कुरु कुरु स्वाहेति ॥ वसुचन्द्रार्णोऽष्टादशार्णः ॥ ९६-९९ ॥

अष्टादशाक्षर मन्त्र : वाक्बीज (ऐं) भुवनेशानी (ह्रीं) रमा (श्रीं) फिर 'बन्दि' तथा केशव (अ) फिर 'मुष्य बन्धमोक्षं' २ बार कुरु (कुरु कुरु) तथा ठद्वय (स्वाहा) लगाने से १८ अक्षर वाला शीघ्र बन्धन से मुक्त कराने वाला मन्त्र बनता है ।

टिप्पणी : मन्त्रोद्धार : ऐं ह्रीं श्रीं बंदि अमुष्य बन्धमोक्षं कुरु कुरु स्वाहा ।

बन्दी को मुक्त कराने का यन्त्र (देखिये चित्र नं० १३) ।

प्रयोग विधि[1] : एक मालपुआ पर घी से उक्त यन्त्र जैसा यन्त्र बनाकर उस पर 'ॐ हिलि हिलि बन्दिदेव्यै नमः' मन्त्र से देवी का आवाहन एवं पूजन कर वह मालपुआ कारागार में पड़े बन्दी को दे देना चाहिए ।

बन्दी स्नान आदि से शुद्ध होकर स्वस्थ मन से देवी का ध्यान कर उस मालपुए को खा जाय । ऐसा करने से वह शीघ्र ही जेल या बन्धन से छूट जाता है ।

इति श्री शुकदेव चतुर्वेदि विरचितायां सटिप्पण्यां मन्त्रमहोदधेः
मोहिनी व्याख्यायां षष्ठस्तरङ्गः ।

---

१. श्लोक ८७ में बतलाये बन्दी मन्त्र का पुरश्चरण कर मन्त्र सिद्ध हो जाने पर यह प्रयोग आश्चर्यजनक फल देता है ।

सप्तम तरङ्ग

अथ सर्वेष्टसंसिद्धयै प्रवक्ष्ये वटयक्षिणीम् ।
पद्मनाभो वियद्वायूझिण्टीशस्थौ सदग्वियत् ॥ १ ॥
यक्षियक्षिमहायक्षिवटतोयंसनासिकम् ।
क्षनिवासिनिशीघ्रंमेसर्वसौख्यंकुरुद्वयम् ॥ २ ॥
स्वाहाद्वात्रिंशदर्णोयं मन्त्रोऽखिलसमृद्धिदः ।

वट यक्षिणी का मन्त्र : अब सब मनोरथों की सिद्धि के लिए वट यक्षिणी (की साधना) को बतलाता हूँ–

पद्मनाभ (ए) झिंटीशस्थ वियद् एवं वायु (ह्रे) सदक् वियद् (हि) फिर 'यक्षि यक्षि महायक्षिवट' फिर सनासिक तोय (वृ) फिर 'क्षनिवासिनिशीघ्रं मे सर्वसौख्यं' २ बार कुरु (कुरु कुरु) तथा अन्त में 'स्वाहा' लगाने से पूर्णसमृद्धिदायक ३२ अक्षर वाला मन्त्र बनता है ।

टिप्पणी : मन्त्रोद्धार : एह्येहि यक्षि यक्षि महायक्षि वट वृक्ष निवासिनि शीघ्रं मे सर्वसौख्यं कुरु कुरु स्वाहा ।

ऋषिःस्याद्विश्रवाश्छन्दोनुष्टुब्देवी तु यक्षिणी ॥ ३ ॥

विनियोग : इस मन्त्र का विश्रवा ऋषि है, अनुष्टुप् छन्द है तथा यक्षिणी देवी देवता है ।

टिप्पणी : विनियोग : अस्य श्री वट यक्षिणी मन्त्रस्य विश्रवा ऋषिरनुष्टुप् छन्दः यक्षिणी देवता, ममाभीष्टसिद्धये जपे विनियोगः ।

अथवटयाक्षणीमाह ॥ पद्मनाभइति ॥ पद्मनाभए ॥ झिंटीशस्थौवियद्वायूएस्थितौहकारयकारौह्रे ॥ सदग्वियतहि ॥ १ ॥ यक्षीत्यादिःवरूपम ॥ सनासिकंतोयम ऋ तोवः ॥ वृक्षेत्यादिस्वरूपंस्पष्टम ॥ यथा ॥ एह्येहियक्षियक्षिमहायक्षिवटवृक्षनिवासिनिशीघ्रंमेसर्वसौख्यंकुरुकुरु स्वाहा ॥ द्वात्रिंशदर्णः २-४ ॥

वह्निभिःश्रुतिभिर्वेदैर्वसुभिःसप्तभीरसैः ।
प्रकुर्वीत षडंगानि मन्त्रवर्णान्यसेत्ततो ॥ ४ ॥
मस्तके नेत्रयोर्वक्त्रे नासाकर्णांसयुग्मतः ।
स्तनयोःपार्श्वयोर्द्वन्द्वेहृदि नाभौ शिवोदरे ॥ ५ ॥
कट्यूरुनाभिजंघासु जानुनोर्मणिबन्धयाः ।
हस्तयोर्मूर्ध्नि विन्यस्य ध्यायेद्देवीं वटस्थिताम् ॥ ६ ॥

षडङ्गन्यास तथा सर्वाङ्गन्यास : मन्त्र के क्रमशः ३, ४, ४, ८, ७ एवं ६ अक्षरों से षडङ्गन्यास करना चाहिए ।

फिर मस्तक, नेत्र, मुख, नासिका, कान, दोनों कन्धे, स्तन, दोनों बगल, हृदय, नाभि, लिङ्ग, उदर, कटि, ऊरु, नाभि, जंघा, जानुनी, मणिबन्ध, हाथ तथा शिर में मन्त्रवर्णों का न्यास कर वट वृक्ष में स्थित देवी का ध्यान करना चाहिए ।

टिप्पणी : षडङ्गन्यास : एह्येहि हृदयाय नमः । वटवृक्ष निवासिनि कवचाय हुम् ।
यक्षियक्षि शिरसे स्वाहा । शीघ्रं मे सर्वसौख्यं नेत्रत्रयाय वषट् ।
महायक्षि शिखायै वषट् । कुरु कुरु स्वाहा अस्त्राय फट् ।

सर्वाङ्गन्यास :

एं नमः मस्तके ।	वं नमः वामस्तने ।	सं नमः नाभौ ।
ह्यें नमः दक्षनेत्रे ।	टं नमः दक्षिण पार्श्वे ।	वं नमः दक्षिण मणिबन्धे ।
हिं नमः वामनेत्रे ।	वृं नमः वाम पार्श्वे ।	सौं नमः वामजंघायाम्
यं नमः मुखे ।	क्षं नमः हृदि ।	ख्यं नमः दक्षिण जानौ
क्षि नमः दक्षनासायाम् ।	निं नमः नाभौ ।	कुं नमः वामजानौ
यं नमः वामनासायाम् ।	वां नमः लिङ्गे ।	सं नमः दक्षिणबन्धे
क्षि नमः दक्षकर्णे ।	सिं नमः उदरे ।	कुं नमः वाम मणिबन्धे ।
यं नमः वामकर्णे ।	निं नमः दक्षिणकट्याम् ।	सं नमः दक्षिण हस्ते ।
हां नमः दक्षांसे ।	शीं नमः वाम कट्याम् ।	स्वां नमः वाम हस्ते ।
यं नमः वमांसे ।	घ्रं नमः दक्षिण-ऊरौ ।	हां नमः मूर्ध्नि ।
क्षि नमः दक्षिण स्तने ।	में नमः वाम-ऊरौ ।	

अरुणचन्दनवस्त्रविभूषितां सजलतोयदतुल्यतनूरुचम् ।
स्मरकुरंगदृशं वटयक्षिणीं क्रमुकनागलतादलयुक्करां ॥ ७ ॥

वर्ण न्यासमाह ॥ मस्तक इति ॥ नेत्रयोर्द्वां ॥ नासाकर्णांसयुग्मतश्चकट्यूरुजंघाजानुमणिबन्धहस्तेषद्वौद्वौ ॥ अन्यत्रैकः ॥ शिवलिंगम् ॥ ५-६ ॥ ध्यानमाह ॥ अरुणेति क्रमुकं-पूगीफलंदत्ते ॥ ७ ॥

ध्यान : लाल चन्दन एवं वस्त्रों से अलंकृत, सजल मेघ के समान कान्तिवाली, मृगवधू के समान चंचल एवं विशाल नेत्रवाली तथा दोनों हाथों में क्रमशः पूगीफल एवं नागबल्ली दल धारण करने वाली (वटयक्षिणी) का ध्यान करता हूँ।

लक्षद्वयं जपेन्मन्त्रं बन्धूकैस्तद्दशांशतः।
हुत्वा पीठे यजेद्देवीमुच्यन्ते पीठशक्तयः ॥ ८ ॥
कामदामानदानक्तामधुरामधुराननां।
नर्मदाभोगदानंदाप्राणदापीठशक्तयः ॥ ९ ॥
मनोहरायय़क्षिण्यायोगपीठाय हृन्मनुः।
पीठस्योक्तस्तत्रदेवीं पूजयेद्वटयक्षिणीम् ॥ १० ॥

जप संख्या, हवन एवं पीठ शक्तियां : इस मन्त्र का २ लाख जप करना चाहिए। तथा बन्धूक पुष्पों से दशांश होम करना चाहिए।

पूर्वोक्त पीठ पर देवी का पूजन करना चाहिए। पीठ की शक्तियाँ बतलायी जाती हैं–कामदा, मानदा, नक्ता, मधुरा, मधुरानना, नर्मदा, भोगदा, नन्दा एवं प्राणदा–ये पीठ शक्तियाँ होती हैं। 'मनोहराय यक्षिणी योग पीठाय नमः' यह पीठ मन्त्र है। इस पीठ पर वट यक्षिणी देवी का पूजन करना चाहिए।

पीठ पूजा विधि : श्लोक ७ में वर्णित देवी के स्वरूप का ध्यान कर मानसोपचार से पूजन कर अर्घ्य स्थापना करनी चाहिए, यथा—'फट्' से अर्घ्यपात्र को धोकर, 'नमः' से जल भर कर, फिर उसमें 'ॐ' से गन्ध पुष्प छोड़कर 'ॐ गङ्गे च यमुने' से उसमें तीर्थों का आवाहन करना चाहिए। तदनन्तर धेनु मुद्रा दिखाकर अर्घ्यपात्र पर हाथ रख कर १० बार मूल मन्त्र का जप करना चाहिए। फिर अर्घ्यपात्र का कुछ जल प्रोक्षणीपात्र में डालकर उस जल से मूल मन्त्र द्वारा ३ बार अपने शरीर एवं पूजन सामग्री का प्रोक्षण करना चाहिए।

पूजन यन्त्र : वृत्ताकार कर्णिका और उसके ऊपर अष्टदल एवं भूपुर बनाकर (इस यन्त्र पर) वट यक्षिणी देवी का पूजन करना चाहिए (देखिये चित्र नं० १४)।

तत्पश्चात् निम्नलिखित मन्त्रों से विधिवत पीठ पूजा करनी चाहिए, यथा :

ॐ आधार शक्तये नमः	ॐ क्षीर समुद्राय नमः	ॐ संविन्नालाय नमः
ॐ प्रकृतये नमः	ॐ रत्नद्वीपाय नमः	ॐ सर्वतत्त्वात्मक पद्माय नमः
ॐ कूर्माय नमः	ॐ कल्पवृक्षाय	ॐ सं सत्वाय नमः
ॐ अनन्ताय नमः	ॐ स्वर्ण सिंहासनाय	ॐ रं रजसे नमः
ॐ पृथिव्यै नमः	ॐ आनन्द कन्दाय नमः	ॐ तं तमसे नमः

ॐ आं आत्मने नमः ॐ पं परमात्मने नमः
ॐ अं अन्तरात्मने नमः ॐ ह्रीं ज्ञानात्मने नमः

फिर पूर्व आदि दिशाओं में निम्नलिखित मन्त्रों से ८ शक्तियों का तथा मध्य में ९वीं शक्ति का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ कामदायै नमः ॐ मधुरायै नमः ॐ भोगदायै नमः
ॐ मानदायै नमः ॐ मधुराननायै नमः ॐ नन्दायै नमः
ॐ नक्तायै नमः ॐ नर्मदायै नमः ॐ प्राणदायै नमः ।

फिर 'ॐ मनोहराय यक्षिणी योग पीठाय नमः' इस पीठ मन्त्र से पीठ पूजा कर मूल मन्त्र से देवी की मूर्ति की कल्पना कर श्लोक ७ में वर्णित देवी के स्वरूप का ध्यान कर आवाहन आदि उपचारों से विधिवत देवी का पूजन कर, उनकी आज्ञा लेकर आवरण पूजा करनी चाहिए ।

कर्णिकायां षडंगानि पत्रेष्वेतायजेत्पुनः ।
सुनन्दाचन्द्रिकाहासासुलापामदविह्वला ॥ ११ ॥
आमोदा च प्रमोदापिवसुदेत्यष्टशक्तयः ।
इन्द्रादीनथ वज्रादीन्सम्पूज्यलभते सुखम् ॥ १२ ॥

आवरण पूजा : कर्णिका में षडङ्गपूजा तथा पत्रों में--सुनन्दा, चन्द्रिका, हासा, सुलापा, मदविह्वला, आमोदा, प्रमोदा एवं वसुदा--इन ८ शक्तियों का पूजन करना चाहिए । इसके बाद इन्द्र आदि दिक्पाल एवं वज्र आदि आयुधों का पूजन करने से साधक सुख प्राप्त करता है ।

टिप्पणी : आवरण पूजा विधि : प्रथम आवरण में वृत्ताकार कर्णिका में निम्नलिखित मन्त्रों से षडङ्गपूजा करनी चाहिए, यथा :

एह्येहि हृदयाय नमः । वटवृक्षनिवासिनि कवचायहुम् ।
यक्षियक्षि शिरसे स्वाहा । शीघ्रं मे सर्वसौख्यं नेत्रत्रयाय वौषट् ।
महायक्षि शिखायै वषट् । कुरु कुरु स्वाहा अस्त्राय फट् ।

द्वितीय आवरण में अष्टदलों में पूर्व आदि क्रम से निम्नलिखित मन्त्रों से आठ शक्तियों का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ सुनन्दायै नमः ॐ सुल्लापायै नमः ॐ प्रमोदायै नमः
ॐ चन्द्रिकायै नमः ॐ मदविह्वलायै नमः ॐ ॐ वसुदायै नमः ।
ॐ हासायै नमः ॐ आमोदायै नमः

इसके बाद तृतीय आवरण में भूपूर के भीतर अपनी २ दिशाओं में इन्द्र आदि दिक्पालों का उनके नाममन्त्रों से पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ इन्द्राय नमः---पूर्वे ।
ॐ अग्नये नमः---आग्नेये ।
ॐ यमाय नमः—दक्षिणे ।
ॐ निर्ऋतये नमः---नैर्ऋत्ये ।
ॐ वरुणाय नमः---पश्चिमे ।
ॐ वायवे नमः---वायव्ये ।
ॐ सोमाय नमः---उत्तरे ।
ॐ ईशानाय नमः---ईशान्ये ।
ॐ ब्रह्मणे नमः---पूर्वेशानयोर्मध्ये ।
ॐ अनन्ताय नमः---निर्ऋति पश्चिमयोर्मध्ये ।

और अन्त में चतुर्थ आवरण में भूपूर के बाहर वज्र आदि आयुधों का निम्नलिखित मन्त्रों से पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ वज्राय नमः ।
ॐ शक्तये नमः ।
ॐ दण्डाय नमः ।
ॐ खड्गाय नमः ।
ॐ पाशाय नमः ।
अंकुशाय नमः ।
ॐ गदायै नमः ।
ॐ शूलाय नमः ।
ॐ पद्माय नमः ।
ॐ चक्रायै नमः ।

इस प्रकार आवरण पूजा कर पुनः पञ्चोपचार से देवी का पूजन कर पुष्पाञ्जलि समर्पित कर विधिवत मन्त्र का जप करना चाहिए ।

एवमाराधितो मन्त्रःप्रयोगेषु क्षमो भवेत् ।
निर्मनुष्ये वने गत्वान्यग्रोधाधस्तले जपेत् ॥ १३ ॥
प्रतिघस्रं तमस्विन्यां सहस्रंनियतेन्द्रियः ।
सप्तमेदिवसे प्राप्ते कृत्वा चन्दनमण्डलम् ॥ १४ ॥
तत्राज्यदीपं कृत्वास्मिन्पूजयेद्वटयक्षिणीम् ।
तदग्रे प्रजपेन्मन्त्रमानिशीथं समाहितः ॥ १५ ॥
शृणोति नूपुरारावं मन्त्रीगीतध्वनिं ततः ।
श्रुत्वैव प्रजपेन्मन्त्रं वीतत्रासश्चतां स्मरेत् ॥ १६ ॥
ततःप्रत्यक्षतो देवीमीक्षते सुरतार्थिनीम् ।
तत्कामपूरणात्सा तु ददातीष्टानि मन्त्रिणे ॥ १७ ॥
किंबहूक्तेन सर्वेष्टपूरणीवटयक्षिणी ।

प्रयोग विधि : उक्त रीति से आराधना करने पर उक्त मन्त्र काम्यप्रयोगों के लिए सक्षम हो जाता है ।

निर्जन वन में जाकर न्यग्रोध (वट वृक्ष) के नीचे प्रतिदिन रात्रि में संयम सहित १ हजार जप करना चाहिए। सातवें दिन चन्दन से मण्डल बनाकर उसमें दीपक प्रज्वलित कर उसपर वट यक्षिणी का पूजन करना चाहिए। फिर सावधानी के साथ मध्य रात्रि पर्यन्त उसके सामने जप करना चाहिए। ऐसा करने से मान्त्रिक नूपुर एवं गीत की ध्वनि सुनता है।

ऐसा सुनने के बाद मान्त्रिक को निर्भय होकर देवी का स्मरण करते हुए जप करना चाहिए। ऐसा करने से कुछ क्षणों के बाद मदनविह्वला देवी प्रत्यक्ष दिखलायी देती है। तथा उसकी कामपूर्ति करने पर वह मान्त्रिक को अभीष्ट वर देती है। विशेष क्या कहें--यह वट यक्षिणी समस्त मनोरथों को पूर्ण कर देती है।

पद्माद्वयं यक्षिणीतिसचन्द्रं गगनत्रयम् ॥ १८ ॥
वैश्वानरप्रियांतोयं दशवर्णो मनुर्मतः।
ऋषिःपूर्वोदितश्छन्दःपंक्तिर्देवी तु यक्षिणी ॥ १९ ॥
चन्द्रैकत्रित्रियुग्मेनसर्वेणांगक्रियामता ।
स्मरेच्चम्पककांतारे रत्नसिंहासनस्थिताम् ॥ २० ॥
सुवर्णप्रभां रत्नभूषाभिरामां जपापुष्पसच्छायवासोयुगाढ्याम् ।
चतुर्दिक्षु दासीगणैःसेवितांघ्रिं भजे सर्वसौख्यप्रदां यक्षिणीं ताम् ॥२१॥
एवं ध्यात्वा जपेल्लक्षं जपापुष्पैर्दशांशतः ।
जुहुयात्पूर्ववत्पीठे पूर्वोक्ते प्रयजेदिमाम् ॥ २२ ॥

वट यक्षिणी का अन्य मन्त्र : पद्माद्वय (श्रीं श्रीं) फिर 'यक्षिणी' फिर सचन्द्र गगनत्रय (हं हं हं) तथा अन्त में वैश्वानर प्रिया (स्वाहा) लगाने से यह दशाक्षर मन्त्र बनता है।

इस मन्त्र का पूर्वोक्त (विश्रवा) ऋषि है, पंक्ति छन्द है तथा यक्षिणी देवी देवता है।

मन्त्र के १, १, ३, ३ एवं २ अक्षरों से तथा समस्त मन्त्र से षडङ्गन्यास करना चाहिए।

चम्पक वन में रत्नसिंहासन पर विराजमान सुवर्ण के समान कान्तिवाली, रत्नाभूषणों से सुशोभित, जपा कुसुम जैसे रंग के वस्त्र युगल धारण करने वाली,

---

पद्मेति ॥ पद्माद्वयं श्रीं श्रीं ॥ यक्षिणीस्वरूपम् ॥ चन्द्रंगगनत्रयंहंहंहं ॥ १८ ॥ वैश्वानरप्रियास्वाहा ॥ २० ॥

चारों ओर स्थिति दासियों से सेव्यमान चरण युगल वाली, एवं समस्त सुखों को देनेवाली यक्षिणी देवी का ध्यान करना चाहिए।

ऐसा ध्यान कर १ लाख जप करना चाहिए। जपाकुसुम से दशांश होम करना चाहिए। तथा पूर्वोक्त पीठ पर देवी का पूजन करना चाहिए।

टिप्पणी : मन्त्रोद्धार : श्रीं श्रीं यक्षिणी हं हं हं स्वाहा।

विनियोग : अस्य श्री वट यक्षिणी मन्त्रस्य विश्रवा ऋषिः पंक्ति-पंक्तिश्छन्दः यक्षिणी देवता ममाभीष्ट सिद्धये जपे विनियोगः।

षडङ्गन्यास : श्रीं हृदयाय नमः हं हं हं कवचाय हुम्
श्रीं शिरसे स्वाहा स्वाहा नेत्रत्रयाय वौषट्
यक्षिणी शिखायै वषट् श्रीं श्रीं यक्षिणी हंहंहं स्वाहा अस्त्रायफट्।

ध्यान : श्लोक २१ में वर्णित देवी के स्वरूप का ध्यान करना चाहिए।

पूजा विधि : इस मन्त्र की पीठ पूजा, आवरण पूजा तथा देवी की पूजा आदि समस्त विधियाँ पूर्वोक्त मन्त्र के समान है। जिज्ञासु पाठक, श्लोक ८-१२ की टिप्पणी देख लें।

क्रोधीशवह्नीमन्विन्दुयुक्तौमदनमेखले।
हृदयाग्निप्रियांतोयंताराद्यो द्वादशाक्षरः॥ २३॥

मेखला यक्षिणी मन्त्र : 'औ' एवं बिन्दु युक्त क्रोधीश एवं वह्नि (क्रौं) फिर 'मदन मेखले' फिर हृद् (नमः) तथा अन्त में अग्निप्रिया (स्वाहा) और प्रारम्भ में तार (ॐ) लगाने से १२ अक्षर का मन्त्र बनता है।

टिप्पणी : मन्त्रोद्धार : ॐ क्रौं मदनमेखले नमः स्वाहा।

अस्येज्यापूर्ववत्सर्वा मेखलायक्षिणीत्वियम्।
चतुर्दशाहपर्य्यन्तं मधूकावनिरुट्तले॥ २४॥
प्रजपेद्युतं नित्यं सहस्रं हवनं चरेत्।
मधूकपुष्पैर्मधुक्तैस्तत्काष्ठैश्चहुताशने॥ २५॥
सन्तुष्टैवं कृते देवी प्रयच्छेदंजनं शुभम्।
येनाक्तनयनो मन्त्री निधिं पश्येद्धरागतम्॥ २६॥

चम्पकानांकांतारेवने॥ २२॥ मन्त्रान्तरमाह॥
क्रोधीशेति॥ मन्विन्दुयुक्तौ॥ औविन्दुयुक्तौ क्रोधीशवह्नीकरतेनक्रौं॥ मदनमेखले-स्वरूपम्॥ हृदयंनमः॥ अग्निप्रियास्वाहा॥ २३॥ मधूकावनिरुट्तले॥ मधूकवृक्षा-धस्तात्॥ २४-२६॥

प्रयोग विधि : यह मेखला यक्षिणी है तथा इसकी पूजन आदि की समस्त विधि पूर्वोक्त यक्षिणी मन्त्र के समान है।

महुआ के वृक्ष के नीचे १४ दिन तक लगातार प्रतिदिन १० हजार जप तथा महुए की लकड़ी से प्रज्वलित अग्नि में मधु सहित महुए के फूलों की १ हजार आहुतियाँ देनी चाहिए। इस प्रकार देवी को सन्तुष्ट करने पर वह साधक को एक दिव्य अञ्जन देती है, जिसे आँखों में लगाने से साधक जमीन में गड़े खजाने को निश्चित रूप से देख (ढूंढ़) लेता है।

प्रणवो वाग्विशाले च माया पद्मा मनोभवः।
ठद्वयांतो दशार्णोयं विशालायक्षिणी मनुः ॥ २७ ॥

विशालायक्षिणी का मन्त्र : प्रणव (ॐ) वाग् (ऐं) फिर 'विशाले' फिर माया (ह्रीं) पद्मा (श्रीं) मनोभव (क्लीं) तथा अन्त में ठद्वय (स्वाहा) लगाने से १० अक्षर वाला विशाला यक्षिणी का मन्त्र बनता है।

टिप्पणी : *मन्त्रोद्धार* : ॐ ऐं विशाले ह्रीं श्रीं क्लीं स्वाहा।

मुन्यादि पूजापर्य्यन्तं पूर्ववत्समुदीरितम्।
चिञ्चातरोरधःस्थित्वा शुचिर्लक्षं जपेन्मनुः ॥ २८ ॥
शतपत्रैर्दशांशेन जुहुयात्तोषिततः।
रसं ददाति येनासौ नीरोगायुरवाप्नुयात् ॥ २९ ॥

प्रयोग विधि : इस मन्त्र की ऋषि आदि से लेकर पूजापर्यन्त समस्त विधि पूर्वोक्त मन्त्र के समान है।

चिंचा नामक वृक्ष के नीचे बैठ कर पवित्रतापूर्वक इस मन्त्र का १ लाख जप करना चाहिए, और फिर शतपत्र से दशांश होम करना चाहिए। ऐसा करने से सन्तुष्ट होकर देवी रस देती है, जिससे साधक निरोग होकर आयु प्राप्त करता है।

वाक्चन्द्रशेखरौ शार्ङ्गी पिनाकीशौ मनुस्थितौ।
लाङ्गलित्रितयं सेन्दुवर्मदीर्घं शुचिप्रिया ॥ ३० ॥
वस्वक्षरमनोः शत्रुघातिनःकपिलो मुनिः।
छन्दोनुष्टुप्चवाराही वार्ताली देवतोदिता ॥ ३१ ॥

मन्त्रान्तरमाह ॥ प्रणव इति ॥ वांक्ऐं ॥ विशालेस्वरूपं ॥ मायाह्रीं ॥ पद्माश्रीं ॥ मनोभवःक्लीं ॥ ठद्वयं स्वाहा ॥ २७-२९ ॥ वाराहीमाह ॥ वागिति ॥ मनुस्थितौचन्द्र-शेखरौशार्ङ्गीपिनाकीशौ ॥ औबिन्दुयुतौगलौं ॥ ग्लौं ॥ सेन्दुलांगलित्रयंठठ्वयं ठंठंठं ॥ दीर्घवर्महूं ॥ शुचिप्रियास्वाहा ॥ ३०-३२ ॥

वार्ताली का मन्त्र (शत्रुघाती-मन्त्र) : वाक् (ऐं) मनुस्थित चन्द्रशेखर शार्ङ्गी एवं पिनाकीश (ग्लौं) सेन्दु लांगलित्रय (ठं ठं ठं) फिर दीर्घवर्म (हूं) तथा अन्त में शुचिप्रिया (स्वाहा) लगाने से ८ अक्षर का यह मन्त्र बनता है।

इस शत्रुघाती मन्त्र का कपिल मुनि है, अनुष्टुप् छन्द है तथा वाराही वर्ताली देवता है।

टिप्पणी : *मन्त्रोद्धार* : ऐं ग्लौं ठं ठं ठं हूं स्वाहा।

विनियोग : अस्य शत्रुघातिनः मन्त्रस्य कपिल ऋषिः अनुष्टुप् छन्दः वाराही-वार्ताली देवता ममाभीष्टसिद्धये जपे विनियोगः।

द्विचन्द्रभूमिचन्द्रैकयुग्मार्णैरंगकल्पना।
वाराहीं चेतसि ध्यायेच्छत्रुनिग्रहकारिणीम् ॥ ३२ ॥

न्यास : मन्त्र के २, १, १, १, १ एवं २ वर्णों से षडङ्गन्यास की कल्पना कर लेनी चाहिए, और फिर मन्त्र में शत्रुनिग्रहकारिणी वाराही देवी का ध्यान करना चाहिए।

टिप्पणी : *षडङ्ग न्यास* : ऐं ग्लौं हृदयाय नमः। ठं कवचाय हुम्।
ठं शिरसे स्वाहा। हूं नेत्रत्रयाय वौषट्।
ठं शिखायै वषट्। स्वाहा अस्त्राय फट्।

विद्युद्रोचिर्हस्तपद्मैर्दधाना पाशं शक्तिं मुद्गरं चांकुशं च।
नेत्रोद्भूतैर्वीतिहोत्रैस्त्रिनेत्रा वाराही नःशत्रुवर्गं क्षिणोतु ॥ ३३ ॥

ध्यान : विद्युत् के समान कान्तिवाली, चारों करकमलों में क्रमशः पाश, शक्ति, मुद्गर (गदा) एवं अंकुश धारण करने वाली एवं तीन नेत्र वाली वाराही हमारे शत्रुओं को अपने नेत्रों से निकलने वाली अग्नि से भस्म कर दे।

वसुलक्षं जपित्वान्ते बिल्वपत्रैर्हयारिजैः।
धात्रीफलैर्भृङ्गराजैःकुशैर्हूयाद्दशांशतः ॥ ३४ ॥

जप संख्या एवं हवन : इस मन्त्र का ८ लाख जप करने के बाद बेलपत्र, कनेर, धात्रीफल (आँवला), भृङ्गराज (भाँगरा) एवं कुशाओं से दशांश होम करना चाहिए।

ध्यानमाह ॥ विद्युदिति ॥ [1]पाशमुद्गरादक्षयोः ॥ अंकुशशक्तीवामयोरूर्ध्वाधःस्थयोः ॥ नेत्रजैर्वीतिहोत्रैरग्निभिरस्माकमरिसमूहंनाशयतु ॥ ३३ ॥ वसुलक्षमष्टलक्षं हयारिजैःकरवीरैः ॥ हयादित्याश्वीर्लिङ्ग ॥ ३४ ॥

पूर्वोदिते यजेत्पीठे षडंगैर्दिगिनायुधैः ।
एवं सिद्धं मनुं मन्त्री यो जपेच्छत्रुनिग्रहे ॥ ३५ ॥

सृणिनाशत्रुमानीय बद्धापाशेन तं दृढम् ।
मुद्गरेण घ्नतीं मूर्ध्नि तां स्मरन्नयुतं जपेत् ॥ ३६ ॥

जुहुयादयुतं शुद्धैर्वनशुष्कैस्तुगोमयैः ।
प्रक्षिपेद्धोमजं भस्मवापीकूपादिपाथसि ॥ ३७ ॥

तत्पानीयस्य पातारो म्रियंते रिपवो ध्रुवम् ।
निर्यान्ति हित्वा स्थानं वा विद्विषन्तःपरस्परम् ॥ ३८ ॥

शत्रुनिग्रहणे दक्षा स्मरणादपि मन्त्रिणाम् ।
प्रकीर्तितेयं वाराही धूमावत्यधुनोच्यते ॥ ३९ ॥

प्रयोग विधि : पूर्वोक्त पीठ पर षडङ्ग पूजा फिर दिक्पाल एवं उनके आयुधों का पूजन करना चाहिए ।

इस प्रकार (पुरश्चरण द्वारा) सिद्धमन्त्र का शत्रु निग्रह हेतु जप करना चाहिए– अपने अंकुश से शत्रु को पकड़कर उसे पाश से दृढ़तापूर्वक बाँध कर गदा से उसके शिर पर बार-बार प्रहार करती हुई देवी का ध्यान करते हुए १० हजार जप करना चाहिए । फिर बन में सूखे गोबर के कण्डों से १० हजार आहुतियाँ देनी चाहिए । इस हवन की भस्म को वापी , कुँआ आदि के जल में फेंक देना चाहिए । इस पानी को पीने वाले शत्रु निश्चित रूप से मर जाते हैं । अथवा वे परस्पर लड़-झगड़ कर उस स्थान को छोड़ कर चले जाते हैं ।

यह देवी मान्त्रिकों के द्वारा स्मरण मात्र करने से भी शत्रु निग्रह में तत्पर हो जाती है । ऐसी शत्रुनिग्रह कारिणी वाराही के बारे में बतलाने के बाद अब धूमावती के बारे में बतलाते हैं ।

सात्वतत्रितयं साधितत्राद्यौ चन्द्रशेखरौ ।
वैकुण्ठोऽनन्तसंयुक्तो जलं नेत्रयुतो हरिः ॥ ४० ॥
अष्टार्णो वह्निजायान्तो मन्त्रःशत्रुविनाशनः ।

दिगिना दिक्पालाः ॥ ३५ ॥ सृणिनांकुशेन ॥ ३६ ॥ पाथसिजले ॥ ३७-३९ ॥ उत्तेष्टा-मन्त्रमाह । सात्वतेति ॥ साधितयुतं ॥ सात्वतत्रितयं धत्रयं ॥ तेषुद्वौसचिन्दू ॥ धूंधूंधूं ॥ अनन्तसंयुतोवैकुण्ठः आयुतोमः ॥ मा ॥ जलंवः ॥ नेत्रयुतोहरिः ॥ इयुतस्तः ॥ ४० ॥

धूमावती का मन्त्र (ज्येष्ठा का मन्त्र) : सादि सात्वत त्रय (धूं धूं धूं)–इनमें से प्रारम्भ के दोनों चन्द्रशेखर (धूँ धूँ धूं) फिर अनन्त संयुत वैकुण्ठ (मां) जल (व) नेत्र युत हरि (ति) तथा अन्त में वह्निजाया (स्वाहा) लगाने से आठ अक्षर वाला शत्रु-विनाशक मन्त्र बनता है ।

टिप्पणी: मन्त्रोद्धार : धूँ धूँ धूमावति स्वाहा ।

पिप्पलादोनिचृज्ज्येष्ठामुनिश्छन्दोस्यदेवता ॥ ४१ ॥
आद्यबीजद्वयांतस्थैःषडवर्णैरंगमीरितम् ।
श्मशाने संस्थितां ध्यायेज्ज्येष्ठां वायससंस्थिताम् ॥ ४२ ॥

विनियोग एवं न्यास : इस मन्त्र के पिप्पालाद ऋषि हैं, निचृद् छन्द है तथा ज्येष्ठा देवता है ।

प्रारम्भ के दोनों बीजों से षडङ्गन्यास करना चाहिए । फिर श्मशान में वायस पर विराजमान ज्येष्ठा देवी का ध्यान करना चाहिए ।

टिप्पणी : विनियोग : अस्य धूमावती मन्त्रस्य पिप्पलादऋषिः निचृच्छन्दः, ज्येष्ठा देवता ममाभीष्टसिद्धये जपे विनियोगः ।

न्यास : धूं धूं हृदयाय नमः । धूं धूं कवचाय हुम् ।
,, ,, शिरसे स्वाहा । ,, ,, नेत्रत्रयाय वौषट् ।
,, ,, शिखायै वषट् । ,, ,, अस्त्राय फट् ।

अन्य सम्प्रदायों में इस मन्त्र का न्यास इस प्रकार होता है—

धां अंगुष्ठाभ्यां नमः । हृदयाय नमः ।
धीं तर्जनीभ्यां स्वाहा । शिरसे स्वाहा ।
धूं मध्यमाभ्यां वषट् । शिखायै वषट् ।
धैं अनामिकाभ्यां हुम् । कवचाय हुम् ।
धौं कनिष्ठकाभ्यां वौषट् । नेत्रत्रयाय वौषट् ।
धः करतलकरपृष्ठाभ्यां फट् । अस्त्राय फट् ।

अत्युच्चामलिनाम्बराखिलजनोद्वेगावहादुर्मना
रूक्षाक्षित्रितयाविशालदशना सूर्योदरी चंचला ।
प्रस्वेदां बुचिताक्षुधाकुलतनुःकृष्णातिरूक्षप्रभा-
ध्येयासुक्तकचा सदाप्रियकलिर्धूमावती मन्त्रिणा ॥ ४३ ॥

वह्निजायास्वाहा ॥४१-४८॥

ध्यान : अत्यन्त लम्बी, मैले कुचैले वस्त्र धारण करने वाली, सब लोगों को उद्वेग देने वाली, खिन्न मन वाली, रूखी-रूखी तीन आँख वाली, बड़े-बड़े दाँतों वाली सूर्य के समान उदर वाली, चंचल चित्त वाली, पसीने से आर्द्र शरीर वाली, भूख से व्याकुल, कृष्णवर्णा, रूखे शरीर वाली, खुले केशवाली एवं कलह प्रिया धूमावती का मान्त्रिक को ध्यान करना चाहिए।

एवं ध्यात्वा जपेल्लक्षंश्मशाने विगताम्बरः।
निशाभोजी दशांशेन तिलैर्हवनमाचरेत् ॥ ४४ ॥

जपसंख्या एवं हवन : ऐसा ध्यान कर श्मशान में विवस्त्र होकर केवल रात्रि में भोजन करते हुए १ लाख जप करना चाहिए। फिर तिलों से दशांश होम करना चाहिए।

पूर्वोक्ते पूजयेत्पीठे ज्येष्ठां शत्रुविनष्टये।
केसरेषु षडंगानि पत्रस्था अष्टशक्तयः ॥ ४५ ॥
क्षुधातृष्णारतिर्निद्रानिर्ऋतिर्दुर्गतीरुषा।
अक्षमेतिततोदेवाइन्द्राद्यांआयुधानि च ॥ ४६ ॥
एवं ज्येष्ठां समाराध्य सिद्धमन्त्रःप्रजायते।

पूजाविधिः शत्रु का नाश करने के लिए पूर्वोक्त पीठ पर ज्येष्ठा का पूजन करना चाहिए केसरों में षडङ्ग पूजा तथा मन्त्रों में ८ शक्तियों का पूजन करना चाहिए। क्षुधा, तृष्णा, रति, निद्रा, निर्ऋति, दुर्गति, रुषा एवं अक्षमा (ये ८ शक्तियाँ है[1])। फिर इन्द्र आदि दिक्पाल एवं उनके आयुधों का पूजन करना चाहिए।

उपोष्यकृष्णभूताहे नग्नो मुक्तशिरोरुहः ॥ ४७ ॥
शून्यागारे श्मशाने वाकान्तारे भूधरेथवा।
प्रत्यहं प्रपेन्निर्भीर्ध्यायन्देवीं क्षपाशनः ॥ ४८ ॥
एवं लक्षं जपन्मन्त्रीनाशयेदचिरादरिम्।
जुह्वत्तालवणोपेतां राजिकांनिशि तत्फलम् ॥ ४९ ॥

प्रयोग विधि : कृष्ण पक्ष की चतुर्दशी को उपवास करके शून्य घर में, वन में या पर्वत पर नग्न होकर, केश खोकर, निर्भीकतापूर्वक देवी का ध्यान करते हुए प्रतिदिन जप करना चाहिए, तथा केवल रात्रि में भोजन करना चाहिए। इस प्रकार १ लाख जप करने से मान्त्रिक शीघ्र ही शत्रुओं का नाश कर देता है।

---

[1] रुषा ॥ अक्षमा ॥४६-४७॥ क्षपाशनोरात्रिभोजी ॥४८-४९ ॥

तारो मायाकर्णपिशासदृशौकूर्मधान्तिमौ।
कर्णेमे विधिदण्डीरोठद्वयंषोडशार्णकम् ॥ ५० ॥

कर्णपिशाचिनी मन्त्र : तार (ॐ) माया (ह्रीं) फिर 'कर्णपिशा' फिर सदृश कूर्म एवं धान्तिम (चिनि) फिर 'कर्णे मे' विधि (क) दण्डी (थ) इर (य) और अन्त में ठद्वय (स्वाहा) लगाने से १६ अक्षर का मन्त्र बनता है।

टिप्पणी : मन्त्रोद्धार : ॐ ह्रीं कर्णपिशाचिनि कर्णे मे कथय स्वाहा।

मनुऋष्यादिपूर्वोक्तं देवता तु पिशाचिनी।
एकैकाङ्गाग्निरामाक्षिवर्णैरंगमनोमतम् ॥ ५१ ॥

विनियोग एवं न्यास : इस मन्त्र के ऋषि एवं छन्द पूर्वोक्त हैं तथा देवता पिशाचिनी है।

मन्त्र के १, १, ६, ३, ३ एवं २ अक्षरों से षडङ्गन्यास करना चाहिए।

टिप्पणी : विनियोग : अस्य कर्णपिशाचिनी मन्त्रस्य पिप्पलाद ऋषिः निचृच्छन्दः, कर्ण पिशाचिनी देवता, ममाभीष्टसिद्धये जपे विनियोगः।

षडङ्गन्यास : ॐ हृदयाय नमः। कर्णे मे कवचाय हुम्।
ह्रीं शिरसे स्वाहा। कथय नेत्रत्राय वौषट्।
कर्णपिशाचिनि शिखायै वषट्। स्वाहा अस्त्राय फट्।

चितासनस्थां नरमुण्डमालां विभूषितामस्थिमणीन्कराब्जैः ॥
प्रोतां नरान्त्रैर्दधतीं कुवस्त्रां भजामहे कर्णपिशाचिनीं ताम् ॥ ५२ ॥

ध्यान : चितासन पर बैठी हुई, नरमुण्डों की माला से सुशोभित, हाथों में अस्थि, मणि, कमल एवं मनुष्य की आँतों की माला धारण करने वाली, मैले एवं फटे वस्त्र धारण करने वाली, कर्ण पिशाचिनी का ध्यान करता हूँ।

श्मशानस्थःशवस्थो वा जपेल्लक्षं समाहितः।
दशांशंजुहुयाद्घृतौबिभीतकसमिद्वरैः ॥ ५३ ॥
यजेत्पूर्वोदिते पीठे षडङ्गामरहेतिभिः।
सिद्धमन्त्रे जपं कुर्य्यादधस्ताद्बदरीतरोः ॥ ५४ ॥
अशुचिर्लक्षसंख्यातं तेन तुष्टा पिशाचिनी।
परचित्तस्थितां वार्तां भाविनीं च वदेच्छुतौ ॥ ५५ ॥

कर्णपिशाचिनीमाह ॥ तारइति ॥ तार ॐ ॥ मायाह्रीं कर्णपिशा स्वरूपम् ॥ कूर्मधांतिमौ-चनौ ॥ सदृशौ इयुतौ ॥ चिनि ॥ कर्णेमेस्वरूपम् ॥ विधिःकः ॥ दण्डीथः ॥ इरोयःठद्वयं-स्वाहा ॥ ५० ॥ षडंगमाह ॥ एकेति ॥ अंगनामिपट् ॥ अद्रयस्त्रयोरामाश्च ॥ ५१-५५ ॥

प्रयोग विधि : श्मशान में बैठकर या शव पर बैठ कर एकाग्र मनसे इस मन्त्र का १ लाख जप करना चाहिए। तथा बिभीतक की समिधाओं द्वारा अग्नि में दशांश-होम करना चाहिए।

पूर्वोक्त पीठ पर षडङ्ग पूजा, दिक्पाल एवं उनके आयुध सहित देवी का पूजन करना चाहिए। इस प्रकार मन्त्र सिद्ध हो जाने पर बेर के पेड़ के नीचे अपवित्रता पूर्वक १ लाख जप करना चाहिए। इससे संन्तुष्ट होकर पिशाचिनि दूसरों के मन की बात तथा भावी घटनाओं को कान में बतला देती है।

ध्रवःशिवारमाशीतलायैहार्दं नवाक्षरः।
उपमन्युश्चबृहतीं शीतला मुनिपूर्विका।
षड्दीर्घयुक्छिवालक्ष्मीर्वीजाभ्यां स्यात्षडंगकम् ॥ ५६ ॥

शीतला मन्त्र : ध्रुव (ॐ) शिवा (ह्रीं) रमा (श्रीं) फिर 'शीतलायै' और अन्त में हृदय (नमः) लगाने से नवाक्षर मन्त्र बनता है।

इस मन्त्र के उपमन्यु ऋषि हैं, बृहती छन्द है तथा शीतला देवता है।

षड्दीर्घसहित माया बीज एवं लक्ष्मी बीज से षडङ्गन्यास करना चाहिए।

टिप्पणी : *मन्त्रोद्धार* : ॐ ह्रीं श्रीं शीतलायै नमः।

विनियोग : अस्य श्री शीतला मन्त्रस्य उपमन्युर्ऋषिः बृहती छन्दः, शीतला देवता, ममाभीष्ट सिद्धये जपे विनियोगः।

षडङ्गन्यास : ह्रां श्रीं हृदयाय नमः। ह्रैं श्रीं कवचाय हुम्।
ह्रीं श्रीं शिरसे स्वहा। ह्रौं श्रीं नेत्रत्रयाय वौषट्।
ह्रूं श्रीं शिखायै वषट्। ह्रः श्रीं अस्त्राय फट्।

दिग्वाससंमार्जनिका च शूर्पकरद्वये सन्दधतीं घनाभाम्।
श्रीशीतलां सर्वरुजार्तिनष्टौ रक्तांगरागस्रजमर्चयामि ॥ ५७ ॥

ध्यान : दोनों हाथों में मार्जनी एवं सूप धारण करने वाली, दिगम्बरा, मेघों के समान आभावाली शीतला देवी का सब रोगों का नाश करने के लिए पूजन करता हूँ।

अयुतं प्रजपेन्मन्त्रं पायसेन सहस्रकम्।
जुहुयात्पूर्ववत्पीठे स्फोटानां नाशिनीत्वियम् ॥ ५८ ॥

शीतलामाह ॥ ध्रुवइति ॥ ध्रुव ॐ ॥ शिवाह्रीं ॥ रमाश्रीं ॥ शीतलायैस्वरूपम् ॥ हार्दं नमः षडंगमाह ॥ ह्रांश्रींहृत् ॥ ह्राश्रींशिर इति ॥५६॥ ध्यानमाह ॥दिगिति ॥ मार्जनी-दक्षे ॥ शूर्पवामे ॥ ५७-५९ ॥

जपसंख्या एवं हवन : इस मन्त्र का १० हजार जप करना चाहिए। पायस (खीर) से १ हजार आहुतियाँ देनी चाहिए। यह देवी स्फोटों (घाव, छाले आदि) का नाश करने वाली मानी गयी है।

नाभिमात्रे जले स्थित्वा यःसहस्रं जपेन्मनुम्।
तेन सम्मार्जितास्तीव्राःस्फोटा नश्यन्ति तत्क्षणात् ॥ ५९ ॥

प्रयोग विधि : जो व्यक्ति नाभिपर्यन्त जल में खड़ा होकर इस मन्त्र का १ हजार जप करता है। उस व्यक्ति के द्वारा मार्जित स्फोट तत्काल नष्ट हो जाते हैं।

प्रणवःकमला स्वप्नेश्वरिकार्य्यं च मे वद।
स्वाहात्रयोदशार्णोयं मन्त्रोमुन्यादिपूर्ववत् ॥ ६० ॥

स्वप्नेश्वरी मन्त्र : प्रणव (ॐ) कमला (श्रीं) फिर 'स्वप्नेश्वरि कार्यं' और 'मे वद स्वाहा' लगाने से १३ अक्षर वाला मन्त्र बनता है। इसके ऋषि आदि पूर्वोक्त हैं।

टिप्पणी : मन्त्रोद्धार : ॐ श्रीं स्वप्नेश्वरि कार्यं मे वद स्वाहा।

विनियोग : अस्य श्री स्वप्नेश्वरी मन्त्रस्य उपमन्युर्ऋषिः बृहती छन्दः श्री स्वप्नेश्वरी देवता, ममाभीष्टसिद्धये जपे विनियोगः।

अक्षिवेदाक्षिभूयुग्मनेत्रार्णैरंगकं मनोः।
विन्यस्य देवतां ध्यायेत्स्वप्नेशीमिष्टसिद्धये ॥ ६१ ॥

न्यास : मन्त्र के २, ४, २, १, २, एवं २ अक्षरों से षडङ्गन्यास करके अभीष्ट-सिद्धि के लिए स्वप्नेश्वरी का ध्यान करना चाहिए।

टिप्पणी : षडङ्गन्यास : ॐ श्रीं हृदयाय नमः। मे कवचाय हुम्।
स्वप्नेश्वरी शिरसे स्वाहा। वद नेत्रत्रयाय वौषट्।
कार्यं शिखायै वषट्। स्वाहा अस्त्राय फट्।

वराभयेपद्मयुगं दधानां करैश्चतुर्भिःकनकासनस्थाम्।
सिताम्बरां शारदचन्द्रकान्ति स्वप्नेश्वरीं नौमि विभूषणाढ्याम् ॥६२॥

ध्यान : चारों हाथों में वरद मुद्रा, अभय मुद्रा एवं दो कमल धारण करने वाली, स्वर्णसिंहासन पर विराजमान, श्वेत वस्त्र धारण करने वाली, शरदकालीन चन्द्रमा के समान कान्ति वाली एवं विविध आभूषणों से अलंकृत स्वप्नेश्वरी को प्रणाम करता हूँ।

स्वप्नेश्वरीमाह ॥ प्रणव इति ॥ प्रणव ॐ ॥ कमलाश्रीं ॥ स्वरूपमन्यत् ॥ ६०-६१ ॥ ध्यानमाह ॥ वरेति ॥ वरोदत्ते ॥ ६२ ॥

लक्षं जपेद्बिल्वपत्रैर्जुहुयात्तद्दशांशतः ।
पूर्वोदिते यजेत्पीठे षडङ्गत्रिदशायुधैः ॥ ६३ ॥
रात्रौ सम्पूज्यदेवेशीमयुतं पुरतो जपेत् ।
शयीतब्रह्मचर्य्येण भूमौ दर्भास्थिताजिनैः ॥ ६४ ॥
देव्यै निवेद्य स्वंहार्दं सास्वप्ने वदति ध्रुवम् ।
यक्षिण्याद्या इतिप्रोच्य मातङ्गी गद्यतेधुना ॥ ६५ ॥

प्रयोग विधि : इस मन्त्र का १ लाख जप करना चाहिए तथा बेलपत्रों से दशांश-होम करना चाहिए। पूर्वोक्त पीठ पर षडङ्ग, दिक्पाल एवं आयुधों के साथ देवी का पूजन करना चाहिए।

(इस प्रकार पुरश्चरण द्वारा मन्त्र सिद्ध हो जाने पर) रात्रि में देवी का पूजन कर उसके सम्मुख १० हजार जप करना चाहिए। ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए भूमि में कुशाओं पर मृगचर्म बिछाकर सोना चाहिए। इस प्रकार देवी को अपने हृदय की बात बताकर सोने से वह स्वप्न में उसका निश्चित रूप से उत्तर देती है।

इस प्रकार यक्षिणी आदि को बतलाकर अब मातंगी के बारे में कहते हैं।

तारोमायाचवाग्लक्ष्मीर्हृन्निद्रास्मृतिलान्तिमाः ।
सनेत्रोहरिरुच्छिष्टचाण्डानेत्रयुताक्रिया ॥ ६६ ॥
श्रीमातंगेश्वरिपदं सर्वशूलीनलान्तशम् ।
करिवह्निप्रियामन्त्रो द्वात्रिंशद्वर्णवानयम् ॥ ६७ ॥

मातंगी-मन्त्र : तार (ॐ) माया (ह्रीं) वाग् (ऐं) लक्ष्मी (श्रीं) हृद (नमः) निद्रा (भ) स्मृति (ग) लान्तिम (व) सनेत्रहरि (ति) फिर 'उच्छिष्ट-चाण्डा' फिर नेत्रयुत क्रिया (लि) फिर 'श्री मातङ्गेश्वरि सर्व' शूली (ज) फिर 'न' फिर लान्त (व) फिर 'शंकरि' और अन्त में वह्निप्रिया (स्वाहा) लगाने से ३० अक्षर का मन्त्र बनता है।

टिप्पणी : *मन्त्रोद्धार* : ॐ ह्रीं ऐं श्रीं नमो भगवति उच्छिष्ट चाण्डालि श्री मातङ्गेश्वरि सर्वजनवशंकरि स्वाहा।

मतङ्गोमुनिरस्योक्तोनुष्टुप्छन्दस्तुदेवता ।
मातङ्गीसर्वजनतावशीकरणतत्परा ॥ ६८ ॥
चतुर्भिःषड्भिरङ्गैश्चषडष्टनयनैरपि ।
मन्त्रोस्य वर्णैरंगानि न्यस्य देवीं विचिन्तयेत् ॥ ६९ ॥

त्रिदशाइन्द्रादयः ॥ ६३-६५ ॥ मातंगीमाह ॥ तार इति ॥ तार ॐ ॥ मायाह्रीं ॥ वाक्ऐं ॥ लक्ष्मीः श्रीं ॥ हृत्नमः ॥ निद्राभः ॥ स्मृतिर्गः ॥ लान्तिमोवः ॥ सनेत्रोहरिःति ॥ उच्छिष्टचाण्डास्वरूपम् ॥ नेत्रयुता क्रियालि ॥६६॥ श्रीमातङ्गेश्वरिसर्वंतिस्वरूपम् ॥ शूलीजः ॥ नस्वरूपम् ॥ लांतोवः ॥ शंस्वरूपम् ॥ करिस्वरूपम् ॥ वह्निप्रियास्वाहा ॥ ६७-७२ ॥

विनियोग एवं न्यास : इस मन्त्र का मतङ्ग ऋषि है, अनुष्टुप् छन्द है तथा सब लोगों को वेश में करने में तत्परा मातङ्गी देवता है।

मन्त्र के ४, ६, ६, ६, ८ एवं २ वर्णों से क्रमशः षडङ्गन्यास कर देवी का ध्यान करना चाहिए।

टिप्पणी : विनियोग : अस्य श्री मातङ्गी मन्त्रस्य मतङ्ग ऋषिः अनुष्टुप् छन्दः, मातङ्गी देवता, ममाभीष्टसिद्धये जपे विनियोगः।

षडङ्गन्यास : ॐ ह्रीं ऐं श्रीं हृदयाय नमः। श्री मातङ्गेश्वरिकवचाय हुम्।
नमो भगवति शिरसे स्वाहा। सर्वजनवशंकरि नेत्रत्रयाय वौषट्।
उच्छिष्टचाण्डालि शिखायै वषट्। स्वाहा अस्त्राय फट्।

घनश्यामलांङ्गीं स्थितां रत्नपीठे शुकस्योदितं शृण्वतीं रक्तवस्त्राम्।
सुरापानमत्तां सरोजस्थितां श्रीं भजेवल्लकीं वादयंतीं मतंगीम् ॥७०॥

ध्यान : मेघ के समान श्याम वर्णवाली, रत्नपीठ पर विराजमान, शुक की वाणी सुनती हुई, लालवस्त्र धारण करने वाली, सुरापान से उन्मत्त, कमल पर स्थित, वल्लकी बजाती हुई श्री मातङ्गी का ध्यान करता हूँ।

जपोयुतं सहस्रं तु होमःपुष्पैर्मधूकजैः।
मध्वक्तैःपूजयेत्पीठे वक्ष्यमाणविधानतः ॥ ७१ ॥

जप संख्या एवं हवन : इस मन्त्र का १० हजार जप करना चाहिए, तथा मधु सहित मधूक (महुआ) के पुष्पों से १ हजार आहुतियाँ देनी चाहिए। (तथा) पूर्वोक्त पीठ पर वक्ष्यमाण रीति से देवी का पूजन करना चाहिए।

त्रिकोणाष्टदलद्वन्द्वं कलास्रचतुरस्रकम्।
पीठं कृत्वा यजेत्तस्मिन्पीठशक्तीर्नवेष्टदाः ॥ ७२ ॥

पूजन यन्त्र : त्रिकोण, दो अष्टदल फिर षोडश दल तथा उसके ऊपर चतुरस्र (भूपुर) से पीठ (पूजन यन्त्र) बना कर उस पीठ पर अभीष्टदायक इन नौ शक्तियों का पूजन करना चाहिए।

टिप्पणी : मातङ्गी पूजन यन्त्र : (देखिये चित्र नं० १५।)

विभूतिरुन्नतिःकान्तिःसृष्टिःकीर्तिश्चसन्नतिः।
व्युष्टिरुत्कृष्टिऋद्धी च मातंग्यंताःसमीरिताः ॥ ७३ ॥

मातङ्ग्यंताइमाः ॥ विभूत्यैनमइत्यादिकाः ॥ ७३॥

सर्वशक्तिकमस्यांते लासनायहृदंतिकः ।
तारमायावाग्रमाद्यःपीठमन्त्रःकलार्णकः ॥ ७४ ॥
विश्राण्यासनमेतेन पाद्यादीनि प्रकल्पयेत् ।
मूलेन पुष्पपूजान्ते कुर्य्यादावरणार्चनम् ॥ ७५ ॥

पीठ पूजा : विभूति, उन्नति, कान्ति, सृष्टि, कीर्ति, सन्नति, व्युष्टिरुत्कृष्टि, ऋद्धि एवं मातङ्गी (ये शक्तियाँ) कही गयी हैं ।

'सर्व शक्तिकम' के बाद 'लासनाय' और अन्त हृद् (नमः) लगाने से तथा प्रारम्भ में तार (ॐ) माया (ह्रीं) वाग् (ऐं) तथा रमा (श्रीं) लगाने से १६ अक्षर वाला पीठ मन्त्र बनता है । इस मन्त्र से आसन देकर मूल मन्त्र से पाद्य आदि से पूजन कर पुष्प चढ़ाने के बाद आवरण पूजा करनी चाहिए ।

टिप्पणी : पीठ पूजा विधि : श्लोक ७० में वर्णित देवी के स्वरूप का ध्यान कर श्लोक ८-१० की टिप्पणी में बतलायी गयी रीति से अर्घ्य स्थापन कर निम्नलिखित मन्त्रों से विधिवत पीठ पूजा करनी चाहिए यथा :

ॐ आधार शक्तये नमः	ॐ कल्पवृक्षाय नमः	ॐ तं तमसे नमः
,, प्रकृतये नमः	,, स्वर्ण सिंहासनाय नमः	,, आं आत्मने नमः
,, कूर्माय नमः	,, आनन्द कन्दाय नमः	,, अं अन्तरात्मने नमः
,, अनन्ताय नमः	,, संविन्नालाय नमः	,, पं परमात्मने नमः
,, पृथिव्यै नमः	,, सर्वतत्त्वात्मक पद्माय नमः	ॐ ह्रीं ज्ञानात्मने नमः
,, क्षीर समुद्राय नमः	,, सं सत्त्वाय नमः	
,, रत्न द्वीपाय नमः	,, रं रजसे नमः	

इसके बाद निम्नलिखित मन्त्रों से पूर्व आदि दिशाओं में ८ शक्तियों का तथा मध्य में ९वीं शक्ति का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ विभूत्यै नमः—पूर्वे ।	ॐ सन्नत्यै नमः—वायव्ये
,, उन्नत्यै नमः—आग्नेये ।	,, व्युष्टयै नमः—उत्तरे ।
,, कान्त्यै नमः—दक्षिणे ।	,, उत्कृष्टिऋद्धिभ्यां नमः—ईशाने ।
,, सृष्टयै नमः—नैऋत्ये ।	,, मातंग्यै नमः—मध्ये ।
,, कीर्त्यै नमः—पश्चिमे ।	

इस प्रकार पीठ शक्तियों का पूजन कर 'ॐ ह्रीं ऐं श्रीं सर्वशक्ति कमलासनाय नमः'—मन्त्र से आसन देकर मूल मन्त्र से मूर्ति की कल्पना कर श्लोक ७० में वर्णित

पीठमन्त्रमाह ॥ सर्वेति ॥ ॐ ह्रीं ऐंश्रींसर्वशक्तिकमलासनायनमइति ॥७४॥ विश्राण्य दत्त्वा॥ ७५-७९ ॥

देवी के स्वरूप का ध्यान कर मूल मन्त्र से आवहन पाद्य आदि उपचारों से पुष्प चढ़ाने तक विधिवत पूजन कर आवरण पूजा करनी चाहिए।

त्रिकोणेष्वर्चयेत्तिस्रो रतिप्रीतिमनोभवाः।
केसरेषु षडङ्गानि मातृश्चदलमध्यगाः ॥ ७६ ॥
द्वितीयेष्टदले पूज्या असितांगादिभैरवाः।
षोडशाख्ये तु वामाख्याज्येष्ठारौद्रीप्रशान्तिका ॥ ७७ ॥
श्रद्धामाहेश्वरीचापि क्रियाशक्तिश्चसप्तमी।
सुलक्ष्मीःसृष्टिमोहिन्यौप्रमथाश्वासिनी तथा ॥ ७८ ॥
विद्युल्लताचचिच्छक्तिः सुन्दरीनन्दयासह।
नन्दबुद्धिःषोडशी तु पूजनीयाःप्रयत्नतः ॥ ७९ ॥
चतुरस्रे चतुर्दिक्षु मातङ्गी सामहादिका।
महालक्ष्मीस्तथासिद्धपुनर्वह्न्यादिकोणतः ॥ ८० ॥
विघ्नेश दुर्गाबटुकक्षेत्रेशादिग्धवास्ततः।
वज्राद्याःपूजनीयाःस्युरित्थं सिद्धिर्मनोर्भवेत् ॥ ८१ ॥
ध्रुवंभवानी वाग्बीजं रमामादौ प्रयोजयेत्।
सर्वावरणदेवानां मातङ्गीपदमंततः ॥ ८२ ॥

आवरण पूजा : त्रिकोण में रति, प्रीति एवं मनोभवा इन तीनों का पूजन करना चाहिए।

केसरों में षडङ्ग पूजा तथा प्रथम अष्टदल में मातृकाओं का पूजन करना चाहिए। द्वितीय अष्टदल में असितांग आदि ८ भैरवों का पूजन करना चाहिए।

षोडश दल में वामा, ज्येष्ठा, रौद्री, प्रशान्तिका, श्रद्धा, माहेश्वरी, क्रियाशक्ति, सुलक्ष्मी, सृष्टि, मोहिनी, प्रमथा, श्वासिनी, विद्युल्लता, चिच्छक्ति, नन्द सुन्दरी एवं नन्द बुद्धि, इन १६ शक्तियों का प्रयत्नपूर्वक पूजन करना चाहिए।

चतुरस्र में चारों दिशाओं में महामातङ्गी, महालक्ष्मी, महासिद्धि एवं महादेवी का तथा आग्नेय आदि कोणों में विघ्नेश, दुर्गा, बटुक एवं क्षेत्रपाल का पूजन करना चाहिए। इसके बाद दिक्पाल एवं वज्र आदि आयुधों का पूजन करना चाहिए। इस प्रकार पूजन करने से मन्त्र की सिद्धि होती है।

सामहादिकामहामातङ्गीः ॥ ८०-८१ ॥ ध्रुवमिति ॥ आवरणदेवतानामादौध्रुवादीन् अन्तेमातंगीपदञ्चयो जयेत् ॥ ॐ ह्रींऐंश्रींत्यैंभातंग्यैनमइत्यादि ॥ ८२-८३ ॥

समस्त आवरण देवताओं आदि में ध्रुव (ॐ) भवानी (ह्रीं) वाग् (ऐं) रमा (श्री) तथा अन्त में 'मातङ्गी' पद लगाकर पूजन मन्त्रों की कल्पना करनी चाहिए ।

टिप्पणी : आवरण पूजा विधि : प्रथम आवरण में त्रिकोण में निम्नलिखित मन्त्रों से रति आदि का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐह्रींऐंश्रीं रत्यै मातंग्यै नमः ।
,, प्रीत्यै ,, ,, ।
,, मनोभवायै ,, ,, ।

फिर केशरों में निम्नलिखित मन्त्रों से षडङ्ग पूजा करनी चाहिए, यथा :

ॐ ह्रीं ऐं श्रीं हृदयाय नमः श्री मातंगेश्वरि कवचाय हुम् ।
नमो भगवति शिरसे स्वाहा सर्वजनवशंकरि नेत्रत्रयाय वौषट् ।
उच्छिष्टचाण्डालि शिखायै वषट् स्वाहा अस्त्राय फट् ।

इसके बाद प्रथम अष्टदल में पूर्व आदि क्रम से निम्नलिखित मन्त्रों से मातृकाओं का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐह्रींऐंश्रीं ब्राह्म्यै मातंग्यै नमः ।
,, माहेश्वर्यै ,, ,, ।
,, कौमार्यै ,, ,, ।
,, वैष्णव्यै ,, ,, ।
,, वाराह्यै ,, ,, ।
,, इन्द्राण्यै ,, ,, ।
,, चामुण्डायै ,, ,, ।
,, महालक्ष्म्यै ,, ,, ।

द्वितीय अष्टदल में पूर्व आदि दिशाओं में निम्नलिखित मन्त्रों से क्रमशः असितांग आदि ८ भैरवों पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐह्रींऐंश्रीं असितांग-भैरवाय मातङ्गी रूपाय नमः ।
,, रुरु- ,, ,, ,, ।
,, चण्ड- ,, ,, ,, ।
,, क्रोध- ,, ,, ,, ।
,, उन्मत- ,, ,, ,, ।
,, कपाली- ,, ,, ,, ।

ॐह्रींऐंश्रीं भीषण-भैरवाय मातङ्गीरूपाय नमः ।
,, संहार- ,, ,, ,, ।

तत्पश्चात् षोडशदल में प्रदक्षिणा-क्रम से निम्नलिखित मन्त्रों से वामा आदि १६ शक्तियों का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐह्रींऐंश्रीं वामायै मातंग्यै नमः ।
,, ज्येष्ठायै ,, ,,
,, रौद्रयै ,, ,,
,, प्रशान्तिकायै ,, ,,
,, श्रद्धायै ,, ,,
,, माहेश्वर्यै ,, ,,
,, क्रियाशक्तये ,, ,,
,, सुलक्ष्म्यै ,, ,,
,, सृष्टयै ,, ,,
,, मोहिन्यै ,, ,,
,, प्रमथायै ,, ,,
,, श्वासिन्यै ,, ,,
,, विद्युल्लतायै ,, ,,
,, चिच्छक्तये ,, ,,
,, नन्दसुन्दर्यै ,, ,,
,, नन्दबुद्धयै ,, ,, ।

तदनन्तर चतुरस्र में पूर्व आदि दिशाओं में निम्नलिखित मन्त्रों से यथाक्रमेण महामातङ्गी आदि का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐह्रींऐंश्रीं महामातंग्यै मातंग्यै नमः ।
,, महलक्ष्मम्यै ,, ,, ।
,, महासिद्धयै ,, ,, ।
,, महादेव्यै ,, ,, ।

फिर चतुरस्र के आग्नेय आदि कोणों में निम्नलिखित मन्त्रों से विघ्नेश आदि का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐह्रींऐंश्रीं विघ्नेशाय मातंगीरूपाय नमः ।
,, दुर्गायै मातंग्यै ,, ।

ॐह्रींऐंश्रीं बटुकाय मातंगीरूपाय नमः ।
,, क्षेत्रपालाय ,, ,, ।

इसके बाद भूपुर के भीतर पूर्व आदि १० दिशाओं में इन्द्र आदि दिक्पालों का निम्नलिखित मन्त्रों से पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐह्रींऐंश्रीं इन्द्राय मातंगीरूपाय नमः ।
,, अग्नये ,, ,,
,, यमाय ,, ,,
,, निर्ऋतये ,, ,,
,, वरुणाय ,, ,,
,, वायवे ,, ,,
,, सोमाय ,, ,,
,, ईशानाय ,, ,,
,, ब्रह्मणे ,, ,,
,, अनन्ताय ,, ,,

और अन्त में भूपुर के बाहर पूर्व आदि १० दिशाओं में निम्नलिखित मन्त्रों से वज्र आदि आयुधों का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐह्रींऐंश्रीं वज्राय मातङ्गीरूपाय नमः ।
,, शक्तये ,, ,, ।
,, दण्डाय ,, ,, ।
,, खड्गाय ,, ,, ।
,, पाशाय ,, ,, ।
,, अंकुशाय ,, ,, ।
,, गदायै ,, ,, ।
,, शूलाय ,, ,, ।
,, पद्माय ,, ,, ।
,, चक्राय ,, ,, ।

इस प्रकार आवरण पूजा कर पुष्पाञ्जलि समर्पित कर धूप, दीप आदि उपचारों से देवी का विधिवत पूजन कर उक्त मन्त्र का जप करना चाहिए ।

मल्लिकाकुसुमैर्होमाद्भोगोराज्यं च बिल्वजैः ।
पत्रैःफलैर्वावश्यास्याज्जनताब्रह्मवृक्षजैः ॥ ८३ ॥

रोगनाशोमृताखण्डैर्निम्बैःश्रस्तंडुलैरपि ।
आकृष्टिर्लवणैर्विद्यात्तगरैर्वेतसैर्जलम् ॥ ८४ ॥
लवणैर्निम्बतैलाक्तैःशत्रुनाशोंधसाशनम् ।
निशाचूर्णयुतैर्लोणैर्होमात्स्यात्स्तम्भनं नृणाम् ॥ ८५ ॥
रक्तचन्दनकर्चूरमांसीकुंकुमरोचनाः ।
चन्दनागुरुकरैर्गन्धाष्टकमुदीरितम् ॥ ८६ ॥
एतद्धोमाज्जगद्वश्यं जायते मन्त्रिणो ध्रुवम् ।
एतत्पिष्ट्वा शतं जप्त्वा तिलकेन जगत्प्रियः ॥ ८७ ॥
कदलीफलहोमेन सर्वेष्टं समवाप्नुयात् ।
किंबहूक्तेन मातङ्गी पूजिता कामदा नृणाम् ॥ ८८ ॥

काम्य प्रयोग : मल्लिका पुष्पों के होम से भोग, बिल्वपत्रों के होम से राज्य मिलता है ! ब्रह्मवृक्ष के पत्र या फल के होम से लोग वश में हो जाते हैं । अमृता-खण्डों के होम से रोग नष्ट होता है । नीम या तण्डुल के होम से लक्ष्मी मिलती है । निशा (हल्दी) के चूरे के साथ लोण के हवन से स्तम्भन होता है । लवण के होम से आकर्षण होता है । तगर एवं बाँस के होम से वर्षा होती है । नीम के तेल के साथ लवण के होम से शत्रु नष्ट हो जाते हैं ।

लाल चन्दन, कपूर, जटामांसी, कुंकुम, गोरोचन, चन्दन अगर एवं कपूर—इन आठों को गन्धाष्टक कहते हैं । इनके होम से सम्पूर्ण जगत् मान्त्रिक के वश में हो जाता है । इस गन्धाष्टक को पीस कर उस पर १०० मूल मन्त्रों का जप कर तिलक लगाने से व्यक्ति लोकप्रिय हो जाता है । कदलीफल (केला) के होम से व्यक्ति समस्त अभीष्ट प्राप्त करता है । विशेष कहने की आवश्यकता नहीं है, मातङ्गी देवी का पूजन करने से वह मनुष्यों की सभी कामनाओं को पूरा करती हैं ।

मध्वक्तलोणरचितां पुत्तलीं दक्षिणांघ्रितः ।
हूयादष्टोत्तरशतं खादिराग्नौ वशं निशि ॥ ८९ ॥
शालिपिष्टमयीं तां तु भक्षयेत्स्त्रीवशीकृतौ ।
कृष्णभूतनिशि ध्वांक्षोदरे क्षिप्त्वा समुद्रजम् ॥ ९० ॥
नीलसूत्रेण संवेष्ट्य चिताग्नौ प्रदहेदमुम् ।
सहस्रजप्तं तद्भस्म यस्मै द्वयात्सदासवत् ॥ ९१ ॥

अमृताखण्डैर्गुडूचीशकलैः ॥ ८४ ॥ अन्धसान्नेनहुते नाशनमत्रंप्राप्यते ॥ ८५-९१ ॥

मधु सहि लोण से रचित पुतली की खैर की लकड़ी से प्रज्वलित अग्नि में रात्रि के समय आहुति देने से तथा मूल मन्त्र से १०८ आहुति देने से लोग वश में हो जाते हैं।

चावल के आटे से बनी पुतली को खाने से स्त्री वश में हो जाती है। कृष्ण पक्ष की रात्रि में चिता की अग्नि में इसे जलाये। फिर इसकी भस्म पर १ हजार जप करके वह भस्म जिसे दे दो, वह दास के समान हो जाता है।

सत्योग्नियुक्तोनन्तेन्दुसंयुक्तं बीजमादिमम्।
एतस्यानन्तसंस्थाने शान्तियुक्तोद्वितीयकम् ॥ ९२ ॥
ब्रह्मेन्द्रशन्तिर्विद्वाढ्यस्तृतीयंबीजमीरितम्।
भूधरोवसुधांर्धीशचन्द्राढ्यस्तत्तुरीयकम् ॥ ९३ ॥
सर्गोहंसःपञ्चमःस्यात्पञ्चबीजात्मको मनुः।

बाणेशी का मन्त्र : अनन्त एवं इन्दुसहित सत्य एवं अग्नि (द्रां) यह प्रथम बीज है। इस बीज में अनन्त (आ) के स्थान पर शान्ति (ई) लगाने से 'द्रीं'—यह द्वितीय बीज बनता है। इन्द्र, शान्ति एवं बिन्दु सहित ब्रह्मा—अर्थात् 'क्लीं'—यह तृतीय बीज है। वसुधार्धीश चन्द्र सहित भूधर—अर्थात् 'ब्लूं' यह चतुर्थ बीज है। तथा सर्गी हंस—अर्थात् 'सः' यह पांचवा बीज है। ऐसे यह ५ बीजात्मक मन्त्र बनता है।

टिप्पणी : मन्त्रोद्धार : द्रां द्रीं क्लीं ब्लूं सः।

ऋषिःसम्मोहनश्छंदोगायत्री देवता पुनः ॥ ९४ ॥
बाणेशी व्यस्तवर्णेन मन्त्रेणोक्तं षडंगकम्।
मूर्ध्नि पादे मुखे गुह्ये हृदये पञ्चदेवताः ॥ ९५ ॥
न्यस्तव्याःपञ्चबीजाद्या द्राविणीक्षोभिणीपुनः।
वशीकरण्याकर्षण्यौसम्मोहिन्यपि पञ्चमी ॥ ९६ ॥

विनियोग एवं न्यास : इस मन्त्र का सम्मोहन ऋषि है, गायत्री छन्द है तथा बाणेशी देवता है।

विपरीत क्रम से मन्त्र के ५ बीजों तथा समस्त मन्त्र से षडङ्गन्यास करना चाहिए।

उक्त ५ बीजों के साथ द्राविणी, क्षोभिणी, वशीकरणी, आकर्षणी एवं संमोहिनी, इन ५ देवताओं का क्रमशः सिर, पैर, मुख, गुप्तांग एवं हृदय में न्यास करना चाहिए।

बाणेशीमाह । सत्य इति ॥ सत्योदः अग्नियुक्तरेफयुतः अनन्तेन्दुसंयुतः आबिन्दुयुतश्च तेनद्रामित्यादिबीजं ॥ सएवरेफयुतोदः आस्थानेशान्तिरीतेनयुतोद्रीं ॥ ९२ ॥ इन्द्रंशान्तिरबिन्दुढ्य ब्रह्मालईबिन्दुयुतःकःक्लीं ॥ वसुधार्धीशचन्द्राढ्यं लऊ ॥ बिन्दुयुतोभूधरोवः ॥ ब्लूँ ॥ ९३ ॥ सर्गोहंसः सः ॥ ९४ ॥ व्यस्तवर्णेनपञ्चबीजैः षड्ङ्गानिसर्वेणास्त्रम् ॥ पञ्चबीजाद्याद्राविण्याद्यादेवतामूर्द्धादौन्यस्याः ॥ द्राक्द्राविण्यै नमोमूर्ध्नीत्यादि ॥ ९५-९६ ॥

टिप्पणी : विनियोग : अस्य बाणेशीमन्त्रस्य संमोहनऋषिः, गायत्री छन्दः, बाणेशीदेवता, ममाभीष्टसिद्धये जपे विनियोगः ।

षडङ्गन्यास : सः हृदयाय नमः । ह्रीं कवचाय हुम् ।
ब्लूं शिरसे स्वाहा । द्रां नेत्रत्रयाय वौषट् ।
क्लीं शिखाये वषट् । द्रां द्रीं क्लीं ब्लूं सः अस्त्राय फट् ।

सर्वाङ्गन्यास : द्रां द्राविण्यै नमः मूर्ध्नि । ब्लूं आकर्षण्यै नमः गुह्ये ।
द्रीं क्षोभिण्यै नमः पादयोः । सः संमोहिन्यै नमः हृदये ।
क्लीं वशीकरण्यै नमः मुखे ।

उद्यद्भास्वत्सन्निभा रक्तवस्त्रा नानारत्नालंकृतांगी वहंती ।
हस्तैःपाशं चांकुशं चापबाणौ बाणेशी नःकाम पूर्ति विधत्ताम् ॥९७॥

ध्यान : उदीयमान सूर्य के समान आभावाली, लाल वस्त्र धारण करने वाली, अनेक रत्नों के आभूषणों से सुशोभित अङ्गोंवाली, चारों हाथों में क्रमशः पाश, अंकुश, धनुष एवं बाण धारण करने वाली बाणेशी हमारी मनोकामनाओं की पूर्ति करें ।

एवं ध्यात्वा जपेल्लक्षपञ्चकं तद्दशांशतः ।
हुत्वा वाणेश्वरीं देवीं पूजयेद्विधि पूर्वकम् ॥ ९८ ॥

जप संख्या एवं हवन : ऐसा ध्यान कर ५ लाख जप करना चाहिए । तथा फिर दशांश होम कर बाणेश्वरी देवी का विधिवत् पूजन करना चाहिए ।

मोहिनीक्षोभिणीत्रासीस्तम्भिन्याकर्षिणीतथा ।
द्राविण्याह्लादिनीक्लिन्नाक्लेदिनीपीठशक्तयः ॥ ९९ ॥

बाणेशीयोगपीठाय नमो मूलादिकोमनुः ।
दत्त्वा तेनासनं मन्त्री तस्मिन्देवीं प्रपूजयेत् ॥ १०० ॥

पीठ शक्तियां एवं पीठ मन्त्र : मोहिनी, क्षोभिणी, त्रासी, स्तंभिनी, आकर्षिणी, द्राविणी, आह्लादिनी, क्लिन्ना एवं क्लेदिनी—ये पीठ शक्तियाँ होती हैं ।

'बाणेशीयोगपीठाय नमः' इसके प्रारम्भ में मूलमन्त्र लगाने से पीठमन्त्र बन जाता है । इससे आसन देकर इस पीठ पर साधक को देवी की पूजा करनी चाहिए ।

टिप्पणी : पीठ पूजा विधि : श्लोक ९७ में वर्णित देवी के स्वरूप का ध्यान कर मानसोपचारों में पूजन कर, फिर श्लोक ८-१० की टिप्पणी में बतलायी रीति से अर्घ्य स्थापन करना चाहिए ।

ध्यानमाह ॥ उद्यदिति ॥ बाणांकुशौदक्षयोः ॥ ९७-१०० ॥

तत्पश्चात् वृत्ताकार कर्णिका, अष्टदल एवं भूपुर सहित यन्त्र लिखकर, श्लोक ७३-७५ की टिप्पणी में बतलायी गयी रीति से 'ॐ आधार शक्तये नमः' से लेकर 'ॐ ह्रीं ज्ञानात्मने नमः' तक मन्त्रों से पीठ पूजा करनी चाहिए।

बाणेशी पूजन यन्त्र (देखिए चित्र नं० १६)।

इसके बाद निम्नलिखित मन्त्रों से पूर्व आदि दिशाओं में मोहिनी आदि ८ पीठ शक्तियों का तथा मध्य में क्लेदिनी का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ मोहिन्यै नमः पूर्वे ।
ॐ क्षोभिण्यै नमः आग्नेये ।
ॐ त्रास्यै नमः दक्षिणे ।
ॐ स्तांभन्यै नमः नैऋत्ये ।
ॐ आकर्षिण्यै नमः पश्चिमे ।
ॐ द्राविण्यै नमः वायव्ये ।
ॐ आह्लादिन्यै नमः उत्तरे ।
ॐ क्लिन्नायै नमः ईशान्ये ।
ॐ क्लेदिन्यै नमः मध्ये ।

फिर 'द्रां द्रीं क्लीं ब्लूं सः बाणेशी योग पीठायनमः' मन्त्र से आसन देकर श्लोक ९७ में वर्णित देवी के स्वरूप का ध्यान कर अञ्जलि में स्थित पुष्पों में मूलमन्त्र से देवी का आवाहन कर चढ़ाकर प्रार्थना करनी चाहिए, यथा :

देवेशि भक्तिसुलभे परिवारसमन्विते ।
यावत्त्वां पूजयिष्यामि तावत्त्वं सुस्थिरा भव ।

इसके बाद पाद्य आदि उपचारों से पुष्प समर्पण पर्यन्त विधिवत् देवी का पूजन कर आवरण पूजा करनी चाहिए।

आदौ षडंगान्याराध्य दिक्ष्वग्रे द्राविणीमुखाः ।
दलेष्वनंगरूपा स्यादनंगमदना तथा ॥ १०१ ॥
अनंगमन्मथानंगकुसुमामदनापरा ।
अनंगाद्या तथानंगशिशिरानंगमेखला ॥ १०२ ॥
अनंगदीपिकेत्यष्टौ शक्राद्या आयुधान्यपि ।
एवं सिद्धं मनुं मन्त्री काम्येषुविनियोजयेत् ॥ १०३ ॥

आवरण पूजा : सर्वप्रथम षडङ्ग पूजा कर दिशाओं एवं मध्य में द्राविणी आदि का पूजन करना चाहिए। अष्टदल में अनंगरूपा, अनंगमदना, अनंगमन्मथा, अनंगकुसुमा, अनंगमदना, अनंगशिशिरा, अनंगमेखला तथा अनंगदीपिका—इन आठ शक्तियों का

अनंगाद्याकुसुमापराअनङ्गकुसुमेत्यर्थः ॥ १०२-१०३ ॥

पूजन करना चाहिए। फिर इन्द्र आदि दिक्पाल एवं उनके आयुधों का पूजन करना चाहिए। इस प्रकार सिद्ध मन्त्र को साधक काम्य प्रयोगों में विनियुक्त करे।

टिप्पणी : आवरण पूजा विधि : सर्वप्रथम वृत्ताकार कर्णिका में निम्नलिखित मन्त्रों से षडङ्गपूजा करनी चाहिए, यथा :

सः हृदयाय नमः।	द्रीं कवचाय हुम्।
ब्लूं शिरसे स्वाहा।	द्रां नेत्रत्रयाय वौषट्।
क्लीं शिखायै वषट्।	द्रां द्रीं क्लीं ब्लूं सः अस्त्राय फट्।

फिर पूर्व आदि दिशाओं में निम्नलिखित मन्त्रों से यथाक्रमेण द्राविणी आदि का पूजन करना चाहिए, यथा :

द्रां द्राविण्यै नमः—पूर्वे।	क्लीं वशीकरण्यै नमः—पश्चिमे।
द्रीं क्षोभिण्यै नमः—दक्षिणे।	ब्लूं आकर्षण्यै नमः—उत्तरे।
	सः संमोहिन्यै नमः—अग्रे।

तदनन्तर अष्टदल में पूर्व आदि क्रम से निम्नलिखित मन्त्रों से अनंगरूपा आदि आठ शक्तियों का पूजन करना चाहिए, यथा—

ॐ अनंग रूपायै नमः।	ॐ अनंग मदनायै नमः।
ॐ अनंग मदनायै नमः।	ॐ अनंग शिशिरायै नमः।
ॐ अनंग मन्मथायै नमः।	ॐ अनंग मेखलायै नमः।
ॐ अनंग कुसुमायै नमः।	ॐ अनंग दीपिकायै नमः।

तत्पश्चात् भूपुर के भीतर पूर्व आदि अपनी-अपनी दिशाओं में निम्नलिखित मन्त्रों से इन्द्र आदि दिक्पालों का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ इन्द्राय नमः—पूर्वे।	ॐ वायवे नमः—वायव्ये।
ॐ अग्नये नमः—आग्नेये।	ॐ सोमाय नमः—उत्तरे।
ॐ यमाय नमः—दक्षिणे।	ॐ ईशानस्य नमः—ईशान्ये।
ॐ निर्ऋतये नमः—नैर्ऋत्ये।	ॐ ब्रह्मणे नमः—पूर्वेशानयोर्मध्ये।
ॐ वरुणाय नमः—पश्चिमे।	ॐ अनन्ताय नमः—निर्ऋति पश्चिमयोर्मध्ये।

और अन्त में भूपुर के बाहर पूर्व आदि दिशाओं में निम्नलिखित मन्त्रों से यथाक्रमेण वज्र आदि आयुधों का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ वज्राय नमः—पूर्वे।	ॐ दण्डाय नमः—दक्षिणे।
ॐ शक्तये नमः—आग्नेये।	ॐ खड्गाय नमः—नैर्ऋत्ये।

ॐ पाशाय नमः—पश्चिमे ॐ त्रिशूलाय नमः--ईशान्ये ।
ॐ अंकुशाय नमः—वायव्ये । ॐ पद्माय नमः--पूर्वेशानयोर्मध्ये ।
ॐ गदायै नमः—उत्तरे । ॐ चक्राय नमः–निर्ऋति पश्चिमयोर्मध्ये ।

इस प्रकार आवरण पूजा कर धूप, दीप आदि उपचारों से विधिवत देवी का पूजन कर मूलमन्त्र का यथाशक्ति जप करना चाहिए । इस प्रकार पूजन एवं पुरश्चरण करने से मन्त्र सिद्ध हो जाता है और फिर मन्त्र सिद्ध हो जाने पर काम्य प्रयोगों में उसका विनियोग किया जाता है ।

दधियुक्तैरशोकस्य पुष्पैर्योदिवसत्रयम् ।
सहस्रं जुहुयात्तस्य वश्याःस्युःप्राणिनोखिलाः ॥ १०४ ॥

लाजैर्दधियुतैर्होमान्मन्त्रीकन्यामवाप्नुयात् ।
कन्यापि वरमाप्नोति मासद्वितयमध्यतः ॥ १०५ ॥
गव्याज्येन सम्पातं हुत्वा साष्टशतं नरः ।
आज्यं सम्पातितं दद्यात्स्त्रियैविश्राणितश्रियै ॥ १०६ ॥
ह्मा तदाज्यं निजं कान्तं भोजयित्वा वशं नयेत् ।
सुगन्धकुसुमैर्हुत्वा धनमाप्नोति वांछितम् ॥ १०७ ॥

काम्य प्रयोग : जो व्यक्ति तीन दिन तक दही सहित अशोक के पुष्पों से प्रतिदिन १ हजार आहुतियाँ देता है, सब प्राणी उसके वश में हो जाते हैं ।

दही सहित लाजा (खील) के होम से साधक कन्या (पत्नी) को प्राप्त करता है। तथा कन्या भी (इस प्रयोग को करने से) २ मास के भीतर वर को प्राप्त करती है ।

गौ के घी से सम्पात सहित १०८ आहुतियाँ देकर मनुष्य सम्पातित घी को दक्षिणा देने वाली स्त्री को दे दे। वह स्त्री उस घी को अपने पति को खिलाकर वश में कर लेती है ।

सुगन्धित फूलों के होम से मनुष्य मनोवाञ्छित फल प्राप्त करता है ।

ससम्पातम् आहुतिशेषस्यपात्रान्तरेप्रक्षेपःसम्पातः तद्यतंहुत्वासम्पाताज्यंस्त्रियैदद्यात् ॥ किंभूतायै ॥ विश्राणितश्रियै दत्तदक्षिणायै ॥ दक्षिणामादावादायपश्चादाज्यंदद्यादित्यर्थः ॥ अन्यथाफलाभावात् ॥ १०६-१०७ ॥

मायामन्मथवाग्बीजेब्लूंस्त्रींपञ्चाक्षरो मनुः ।
ऋषिश्छन्दश्चपूर्वोक्ते कामेशीदेवतास्मृता ॥ १०८ ॥

कामेशी का मन्त्र : माया (ह्रीं) मन्मथ (क्लीं) वाग्बीज (ऐं) फिर 'ब्लूं' तथा 'स्त्री' लगाने से ५ अक्षर का मन्त्र बनता है ।

इस मन्त्र के ऋषि एवं छन्द पूर्वोक्त हैं तथा कामेशी देवता हैं ।

टिप्पणी : मन्त्रोद्धार : ह्रीं क्लीं ऐं ब्लूं स्त्रीं ।

विनियोग : अस्य श्री कामेशी मन्त्रस्य संमोहन ऋषिः गायत्री छन्दः कामेशी देवता ममाभीष्टसिद्धये जपे विनियोगः ।

षडङ्गन्यास : स्त्रीं हृदयाय नमः । क्लीं कवचाय हुम् ।
ब्लूं शिरसे स्वाहा । ह्रीं नेत्रत्रयाय वौषट् ।
ऐं शिखाये वषट् । ह्रीं क्लीं ऐं ब्लूं स्त्रीं अस्त्राय फट् ।

पाशांकुशाविक्षुशरासबाणौ करैर्वहन्तीमरुणांशुकाढ्याम् ।
उद्यत्पतङ्गाभिरुचिं मनोज्ञां कामेश्वरीं रत्नचितां प्रणौमि ॥ १०९ ॥

ध्यान : चारों हाथों में क्रमशः पाश, अंकुश, इक्षुचाप एवं बाण धारण करने वाली लाल वस्त्रों से अलंकृत, उदीयमान सूर्य के समान कान्तिवाली रत्नों से विभूषित एवं मनोज्ञा कामेश्वरी को मैं प्रणाम करता हूँ ।

भूतलक्षं जपित्वैनामघलक्षंपलाशजैः ।
कुसुमैर्जुहुयात्पीठे पूर्वोक्ते पूजयेदिमाम् ॥ ११० ॥

जप संख्या एवं हवन : इस मन्त्र का ५ लाख जपकर पलाश (टेसू) के फूलों से ५० हजार आहुतियाँ देनी चाहिए । तथा पूर्वोक्त पीठ पर इनका पूजन[1] करना चाहिए ।

आदावङ्गानि सम्पूज्य दिक्षु मध्ये मनोभवम् ।
मकरध्वजकन्दर्पौ मन्मथंकामदेवकम् ॥ १११ ॥
ततोह्यनंगरूपाद्यां इन्द्राद्यस्त्राणितद्बहिः ।
एवं सिद्धमनुर्मन्त्री पूर्वोक्तं योगमाचरेत् ॥ ११२ ॥

कामेशीमाह ॥ मायेति ॥ मायाह्रीं ॥ मन्मथः क्लीं ॥ वाग्बीजंऐं ॥ ब्लूंस्त्रींस्वरूपम् ॥१०८॥ ध्यानमाह ॥ पाशेति ॥ पाशेक्षुचापोवामयोः ॥ उद्यन्यःसहस्रांशुरादित्यस्तत्सम कांतिरत्नैश्चित्यान्याप्रणौमिप्रकर्षेणस्तौमि ॥१०९॥ भूतलक्षंपञ्चलक्षम् ॥११०॥ कामदेवमध्ये ॥ १११ ॥ योगं प्रयोगम् ॥ ११२ ॥ इति मन्त्रमहोदधिव्याख्यायां नौकायां यक्षिण्यादिकथनं नाम सप्तमस्तरंगः ॥

---

[1] पीठ पूजा की विधि श्लोक ९९-१०० की टिप्पणी में देख लें ।

आवरण पूजा : सर्वप्रथम षडङ्गपूजा कर दिशाओं तथा मध्य में मनोभव, मकरध्वज, कन्दर्प, मन्मथ एवं कामदेव का पूजन करना चाहिए। फिर अनंगरूपा आदि शक्तियों का पूजन करना चाहिए। तदन्तर इन्द्र आदि दिक्पालों का और भूपुर के बाहर उनके अस्त्रों का पूजन करना चाहिए। इस प्रकार सिद्ध मन्त्र के साधक पूर्वोक्त काम्य प्रयोग करें।

टिप्पणी : आवरण पूजा विधि : वृत्ताकार कर्णिका, उसके ऊपर चतुर्दल फिर अष्टदल एवं भूपुर लिखकर बने यन्त्र पर कामेशी का पूजन करना चाहिए (देखिए चित्र नं० १७)।

श्लोक १०९ में वर्णित कामेशी के स्वरूप का ध्यान कर मनसोपचार से पूजन कर श्लोक ८-१० की टिप्पणी में बतलायी गई रीति से अर्घ्य स्थापन कर उक्त पीठ पर श्लोक ९९-१०० में बतलायी गई रीति से पीठ पूजन तथा विधिवत देवी का पूजन करना चाहिए। इसके बाद देवी से आज्ञा लेकर आवरण पूजा करनी चाहिए, यथा :

सर्वप्रथम वृत्ताकार कर्णिका में निम्नलिखित मन्त्रों से षडङ्गपूजा करनी चाहिए, यथा : स्त्रीं हृदयाय नमः। क्लीं कवचाय हुम्।

ह्लूं शिरसे स्वाहा : ह्रीं नेत्रत्रयाय वौषट्।

ऐं शिखायै वषट्। ह्रीं क्लीं ऐं ह्लूं स्त्रीं अस्त्राय फट्।

इसके बाद चतुर्दल में पूर्व आदि दिशाओं में यथाक्रमेण मनोभव आदि का तथा मध्य में कामदेव का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ मनोभवाय नमः—पूर्वदले। ॐ मन्मथाय नमः—उत्तरदले।

ॐ मकरध्वजाय नमः—दक्षिणदले। ॐ कामदेवाय नमः—मध्ये।

ॐ कन्दर्पाय नमः—पश्चिमदले।

तत्पश्चात् श्लोक २०१-३ की टिप्पणी में बतलायी गयी विधि से अष्टदल में अनंग रूपा आदि ८ शक्तियों का, भूपुर के भीतर अपनी-अपनी दिशाओं में इन्द्र आदि दिक्पालों का तथा भूपुर के बाहर पूर्व आदि दिशाओं में यथाक्रमेण वज्र आदि आयुधों का पूजन कर पुष्पाञ्जलि समर्पित कर धूप दीप आदि उपचारों से विधिवत देवी का पूजन करना चाहिए।

इस प्रकार पूजन एवं पुरश्चरण करने से मन्त्र सिद्ध हो जाता है। फिर साधक श्लोक १०४-७ में बतलाये काम्य प्रयोगों में इस मन्त्र का विनियोग कर सकता है।

इति श्री शुकदेव चतुर्वेदि विरचितायां सटिप्पण्यां मन्त्रमहोदधेः

मोहिनी व्याख्यायां सप्तमस्तरङ्गः।

अष्टम तरङ्ग

अथ बालां प्रवक्ष्यामि मन्त्री संसेव्य यां द्रुतम् ।
बृहस्पतिःकुबेरश्चजायते विद्यया धनैः ॥ १ ॥

अब बाला के बारे में बतलाता हूँ, जिसकी उपासना कर साधक शीघ्र ही विद्या में बृहस्पति तथा धन में कुबेर के समान हो जाता है ।

दामोदरश्चन्द्रयुत आद्यंवाग्बीजमीरितम् ।
विधिर्वासवशान्तीन्दुयुक्तं कामभिधं परम् ॥ २ ॥
संकर्षणविसर्गाढ्योभृगुस्तार्तीयमीरितम् ।
त्रिबीजी गदिता बाला जगत्त्रितयमोहिनी ॥ ३ ॥
दक्षिणामूर्तिपंक्ती च मुनिश्छन्दःक्रमात्स्मृतम् ।
देवता त्रिपुराबाला मध्यान्ते शक्तिबीजके ॥ ४ ॥

बाला का मन्त्र : चन्द्र=अनुस्वार सहित दामोदर = ऐ अर्थात् 'ऐं' यह प्रथम वाग्भव बीज कहा जाता है ।

वासव = ल, शान्ति = इ, तथा इन्दु = अनुस्वार सहित विधि = क् अर्थात् 'क्लीं' यह दूसरा कामबीज है ।

संकर्षण = औ तथा विसर्ग सहित भृगु स—अर्थात् 'सौः' यह तृतीय बीज है ।

इन तीनों बीजों वाली बाला तीनों लोकों को मोहित करने वाली कही गयी है ।

टिप्पणी : मन्त्रोद्धार : ऐं क्लीं सौः ।

विनियोग : (इस मन्त्र के) दक्षिणामूर्ति ऋषि, पंक्ति छन्द, त्रिपुराबाला देवता, मध्य शक्ति तथा अन्तिम बीज माना गया है ।

॥ १ ॥ बालामन्त्रमाह ॥ दामोदर इति ॥ दामोदरऐं ॥ चन्द्रयुतोबिन्दुयुतःऐं ॥ वागिति संज्ञास्य ॥ विधिःकः ॥ वासवशान्तीन्दुयुतः ॥ लईबिन्दुयुतःक्लीं ॥ भृगुः सः ॥ तेनविसर्गेणयुतःसौः ॥ २-३ ॥

टिप्पणी : विनियोग : अस्य श्री बाला मन्त्रस्य दक्षिणामूर्तिर्ऋषिः, पंक्तिश्छन्दः, त्रिपुरा बाला देवता, क्लीं शक्तिः सौः बीजं ममाभीष्टसिद्धये जपे विनियोगः ।

नाभेरापादमाद्यं तु नाभ्यंन्तं हृदयात्परम् ।
मूर्ध्निहृदं तन्तार्तीयं क्रमादेहें प्रविन्यसेत् ॥ ५ ॥
आद्यं वामकरे दक्षकरेन्यदुभयोःपरम् ।
पुनर्बीजत्रयं न्यस्येन्मूर्ध्नि गुह्ये च वक्षसि ॥ ६ ॥

न्यास : शरीर में नाभि से पैरों तक प्रथम बीज, हृदय से नाभि तक द्वितीय बीज तथा शिर से हृदय तक तृतीय बीज का न्यास करना चाहिए ।

बाँये हाथ में प्रथम बीज, दाहिने हाथ में द्वितीय बीज तथा दोनों हाथों में तृतीय बीज का न्यास करना चाहिए ।

फिर शिर, गुह्यांग एवं वक्षस्थल में क्रमशः तीनों बीजों का न्यास करना चाहिए ।

टिप्पणी : न्यास विधि : ऐं नमः नाभे पादान्तम् । क्लीं नमः हृदयान्नाभ्यन्तम ।
सौ नमः भूर्ध्निहृदन्तम् ।

ततः ऐं नमः वामकरे । क्लीं नमः दक्षिण करे । सौः नमः करयोरूपयोः ।

ततश्च : ऐं नमः मूर्ध्नि । क्लीं नमः गुह्ये । सौः नमः वक्षे ।

नवयोन्यभिधे न्यासे नवकृत्वो मनुं न्यसेत् ।
कर्णयोश्चिबुके न्यस्येच्छंखयोर्मुखपंकजे ॥ ७ ॥
नेत्रयोर्नासिकायां च स्कन्धयोरुदरे तथा ।
न्यसेत्कूर्परयोर्नाभौ जानुनोलिङ्गमस्तके ॥ ८ ॥
पादयोरपिगुह्ये च पार्श्वयोर्हृदयेपुनः ।
स्तनयोःकण्ठदेशे च वामाङ्गादिप्रविन्यसेत् ॥ ९ ॥

नवयोनि न्यास : नवयोनि संज्ञक न्यास में ९ बार मन्त्र का न्यास करना चाहिए । (i) दोनों कान एवं ठोढ़ी में, (ii) दोनों गण्ड एवं मुख में, (iii) दोनों नेत्र एवं नासिका में, (iv) दोनों कन्धे एवं उदर में, (v) दोनों कूर्पर एवं नाभि में, (vi) दोनों जानु एवं लिंग पर, (vii) दोनों पैर एवं गुह्यांग में, (viii) दोनों पार्श्व एवं हृदय में, तथा (ix) दोनों स्तन एवं कण्ठ में —पहिले वामांग में न्यास के क्रम से (उक्त मन्त्र के बीजों का) न्यास करना चाहिए ।

मध्यान्तेमध्यं शक्तिः अन्ते बीजम् ॥ ४ ॥ नाभेः पादान्तमाद्यंबीजंन्यस्येत् ॥ एवमग्रेपि ॥ ५ ॥ दक्षकरेऽन्यद्द्वितीयम् ॥ परंतृतीयंतूभयोः करयोर्न्यस्येत् ॥ ६ ॥ कर्णौचिबुकमित्याद्यवयवानांत्रिकोणाकारत्वाद्योनिन्यासोयम् ॥ ७-९ ॥

टिप्पणी : न्यास विधि :

ऐं नमः वामकर्णे, क्लीं नमः दक्षिणकर्णे, सौः नमः चिबुके
ऐं नमः- वामगण्डे, क्लीं नमः - दक्षिण गण्डे, सौः नमः - मुखे ।
ऐं नमः- वामनेत्रे, क्लीं नमः - दक्षिणनेत्रे, सौः नमः - नासिकायाम् ।
ऐं नमः-वामस्कन्धे, क्लीं नमः - दक्षिणस्कन्धे, सौः नमः - उदरे ।
ऐं नमः- वामकूर्परे, क्लीं नमः - दक्षिणकूर्परे, सौः नमः - नाभौ
ऐं नमः- वामजानौ, क्लीं नमः -दक्षिणजानौ, सौः नमः - लिंगोपरि
ऐं नमः- वामपादे, क्लीं नमः - दक्षिणपादे, सौः नमः - गुह्ये ।
ऐं नमः- वामपार्श्वे, क्लीं नमः - दक्षिणपार्श्वे, सौ नमः - हृदि ।
ऐं नमः- वामस्तने, क्लीं नमः -दक्षिणस्तने, सौः नमः-कण्ठे ।

वाग्भवाद्यार्रति गुह्ये प्रीतिमन्त्यादिकाहृदि ।
कामबीजादिकां न्यस्येद्भ्रूमध्ये तु मनोभवा ॥ १० ॥
पुनर्वागंत्यकामाद्यास्तिस्र एव्वेव विन्यसेत् ।
अमृतेशीं च योगेशीं विश्वयोनिं तृतीयकाम् ॥ ११ ॥

रत्यादिन्यास : वाग्भव बीज सहित रति को मूलाधार में, अन्तिम बीज सहित प्रीति को हृदय में तथा कामबीज सहित मनोभवा को भ्रूमध्य में न्यस्त करना चाहिए। फिर अत्य, काम एवं प्रथम बीज सहित अमृतेशी, योगेशी तथा विश्वयोनि का इन्हीं अङ्गों में न्यास करना चाहिए ।

टिप्पणी : न्यास विधि : ऐं रत्यै नमः—गुह्ये । सौः अमृतेश्यै नमः—गुह्ये ।
सौः प्रीत्यै नमः—हृदि । क्लीं योगेश्यै नमः—हृदि ।
क्लीं मनोभावायै नमः-भ्रूभ्रध्ये । ऐं विश्वयोन्यै नमः—भ्रूमध्ये ।

मूर्ध्नि वक्त्रेहृदि न्यस्येद्गुह्ये चरणयोरपि ।
कामेशीपञ्चबीजाद्यान्स्मरान्मनोभवादिकान् ॥ १२ ॥

मूर्तिन्यास : कामेशी के पाँच बीजों के साथ मनोभव आदि कामदेवों का क्रमशः शिर मुख हृदय, गुप्तांग एवं पैरों में न्यास करना चाहिए ।

वागिति ॥ ऐं रत्यनमोगुह्ये ॥ अन्त्यादि तां ॥ सौःप्रीत्यैनमोहृदि ॥ क्लींमनोभवायैनमोभ्रूमध्ये ॥ १० ॥ पुनर्वाक् ॥ अन्त्यकामाद्याअमृतेशीयोगेशीविश्वयोनीःएव्वेवगुह्यहृद्भ्रूमध्येषन्यसेत् ॥ ऐंअमृतेश्यैनमइत्यादि ॥ ११ ॥ मूर्ध्नीति ॥ कामेशीपञ्चबीजानि हींक्लींऐंक्लूंस्त्रींमित्युक्तानि ॥ तदाद्यान्मनोभवादिकान् ॥ मनोभवमकरध्वजकन्दर्पमन्मथकामदेवाख्यान्स्मरान्शिरोमुखहृद्गुह्यपादेषुन्यसेत् ॥ हींमनोभवायनमइत्यादि ॥ १२ ॥

टिप्पणीः न्यास विधि : ह्रीं मनोभव्यय नमः-शिरसि । ब्लूं मन्मथाय नमः—गुह्ये ।
क्लीं मकरध्वजाय नमः-मुखे । स्त्रीं कामदेवाय नमः-चरणयोः ।
ऐं कन्दर्पाय नमः-हृदि ।

शिरःपन्मुखगुह्येषु हृदये पञ्चदेवताः ।
द्राविण्याद्याःक्रमाज्ज्यस्येद्बाणेशीबीजपूर्विका ॥ १३ ॥

बाणन्यास : बाणेशी के बीजों को प्रारम्भ में लगाकर द्राविणी आदि का क्रमशः शिर, पैर, मुख, गुप्तांग एवं हृदय में न्यास करना चाहिए ।

टिप्पणी : *न्यास विधि* : द्रां द्राविण्यै नमः—शिरसि । ब्लूं आकर्षण्यै नमः-गुह्ये ।
द्रीं क्षोभिण्यै नमः-पादयोः । सः संमोहन्यै नमः-हृदि ।
क्लीं वशीकरण्यै नमः—मुखे ।

तार्तीयवाग्मध्यगेन कामेन स्यात्षडंगकम् ।
षड्दीर्घस्वरयुक्तेन ततो देवीं विचिन्तयेत् ॥ १४ ॥

षडङ्गन्यास : तार्तीय (सौः) तथा वाग्भव (ऐं) इन दोनों के मध्य में षड्दीर्घ स्वर युक्त काम बीज से षडङ्गन्यास करना चाहिए । और इसके बाद देवी का ध्यान करना चाहिए ।

टिप्पणी : *न्यास विधि* : सौः क्लां ऐं हृदयाय नमः । सौः क्लैं ऐं कवचाय हुम् ।
सौः क्लीं ऐं शिरसे स्वाहा । सौः क्लौं ऐं नेत्रत्रयाय वौषट् ।
सौः ब्लूं ऐं शिखायै वषट् । सौः क्लः ऐं अस्त्राय फट् ।

रक्ताम्बरां चन्द्रकलावतंसां समुद्यदादित्यनिभां त्रिनेत्राम् ।
विद्याक्षमालाभयदामहस्तां ध्यायामि बालामरुणाम्बुजस्थाम् ॥ १५ ॥

ध्यान : लाल वस्त्र वाली, चन्द्रकला से सुशोभित मस्तक वाली, उदीयमान सूर्य के समान आभा वाली, तीन नेत्रवाली, चारों हाथों में क्रमशः पुस्तक, अक्षमाला, अभय एवं वरद मुद्रा वाली, रक्त कमल पर विराजमान बाला का मैं ध्यान करता हूँ ।

लक्षत्रयं जपेन्मन्त्रं दशांशंकिंशुकोद्भवैः ।
पुष्पैर्हयारिजैर्वापि जुहुयान्मधुरान्वितैः ॥ १६ ॥

शिर इति ॥ बाणेशीबीजानि ॥ द्रांद्रींक्लींब्लूंस इति ॥ तत्पूर्वाद्राविण्याद्या द्राविणी-क्षोभणीवशीकरण्याकर्षणीसम्मोहनीसंज्ञाःबाणदेवताःशिरःपादमुखगुह्यहृत्सुन्यसेत् ॥ द्रांद्रा-विण्यैनमःशिरसीत्यादि ॥ १३ ॥ षडंगमाह ॥ तार्तीयेति ॥ तार्तीयसौः ॥ वाक् ऐ ॥ तन्मध्यगतेनदीर्घाढ्येनकामेनषडंगम् ॥ सौः क्लांऐंहृत् ॥ सौःक्लींऐंशिरः ॥ सौःक्लूं-ऐंशिखेत्यादि ॥१४॥ ध्यानमाह ॥ रक्तेति ॥ विद्याभयेवामयोः ॥ अन्ययोरन्ये ॥ १५-१६ ॥

जप संख्या एवं हवन : इस मन्त्र का ३ लाख जप करना चाहिए। तथा मधु सहित किंशुक (टेसू) के फूलों या कनेर के फूलों से दशांश होम करना चाहिए।

नवयोन्यात्मकं यन्त्रं बहिरष्टदलावृतम्।
भूगृहेण पुनर्वीतं पूजनाय लिखेत्सुधीः ॥ १७ ॥
मध्ययोनौ तु तार्तीयमष्टयोनिषु मन्मथम्।
केसरेषु स्वराञ्यस्येद्वर्गानष्टौ दलेष्वपि ॥ १८ ॥
दलाग्रेषुत्रिशूलानिपद्मं मातृकयावृतम्।
एवं विलिखिते यन्त्रे पीठशक्तीःप्रपूजयेत् ॥ १९ ॥

पूजन यन्त्र : नवयोनि वाले यन्त्र के बाहर अष्टदल और उसे भूपुर से वेष्टित कर विद्वान् पूजा के लिए यन्त्र लिखे।

मध्य योनि में तार्तीय (सौः) तथा ८ योनियों में कामबीज, केसरों में स्वर एवं आठ दलों में ८ वर्ण लिखने चाहिए। दलों के अग्रभाग में लिखकर अष्ट दल के चारों ओर मातृका (वर्णमाला) को लिखना चाहिए। इस प्रकार से लिखे हुए यन्त्र पर पीठ शक्तियों का पूजन करना चाहिए।

इच्छाज्ञानक्रियाचैव कामिनी कामदायिनी।
रतीरतिप्रियानन्दामनोन्मन्यपिचांतिमा ॥ २० ॥
पीठशक्तीरिमा इत्त्रापीठं तं मनुनादिशेत्।
व्योमपूर्वं तु तार्तीयं सदाशिवमहापदम् ॥ २१ ॥
प्रेतपद्मासनंङेतं नमोंतःपीठमन्त्रकः।
षोडशार्णस्ततो मूर्त्तौंक्लेह्मायां मूलमन्त्रतः ॥ २२ ॥
आवाह्य पूजयेद्देवीमुपचारैःपृथग्विधैः।

पीठ शक्तियां एवं पीठ मन्त्र : इच्छा, ज्ञान, क्रिया, कामिनी, कामदायिनी, रति, रतिप्रिया, नन्दा एवं मनोन्मनी—इन पीठ शक्तियों का पूजन कर पीठ मन्त्र से देवी को आसन देना चाहिए।

व्योम सहित तार्तीय (ह्सौः) फिर 'सदाशिवमहा' चतुर्थ्यन्त प्रेतपद्मासन (प्रेत-पद्मासनाय) एवं अन्त में 'नमः'—यह १६ अक्षर वाला पीठ मन्त्र है।

फिर मूल मन्त्र से कल्पित देवी की मूर्ति में आवाहन कर विविध उपचारों से देवी का पूजन करना चाहिए।

पूजायन्त्रमाह ॥ नवेति ॥ स्पष्टम् ॥१०-२०॥ पीठमन्त्रमाह ॥ व्योमहः तत्पूर्वतृतीयं ॥ ह्सौःसदाशिवमहाप्रेतपद्मासनायनइति ॥ २१-२३ ॥

टिप्पणी : पीठ पूजा विधि : पीठ पूजा की सामान्य पद्धति के अनुसार 'ॐ आधार शक्तये नमः' से 'ह्रीं ज्ञानात्मने नमः' तक पीठ पूजा कर केसरों में तथा मध्य में निम्न-लिखित मन्त्रों से इच्छा आदि पीठ शक्तियों का पूजन करना चाहिए, यथा :

पूर्वादिक्रमेण केशरेषु—ॐ ईच्छायै नमः । ॐ कामदायिन्यै नमः ।
ॐ ज्ञानायै नमः । ॐ रत्यै नमः ।
ॐ क्रियायै नमः । ॐ रतिप्रियायै नमः ।
ॐ कामिन्यै नमः । ॐ नन्दायै नमः ।

मध्ये—ॐ मनोन्मन्यै नमः ।

फिर 'ह्सौः सदाशिव महाप्रेतपद्मासनाय नमः' मन्त्र से देवी को पीठ (आसन) देकर[1] मूलमन्त्र से कल्पित मूर्ति में देवी का आवाहन कर पाद्य आदि उपचारों से देवी का विधिवत पूजन करना चाहिए ।

देवीमिष्ट्वामध्ययोनौ त्रिकोणे रतिपूर्विकाः ॥ २३ ॥
वामकोणे रतिंदक्षे प्रीतिमग्रे मनोभवाम् ।
योन्यन्तर्बह्निकोणादावङ्गानि परिपूजयेत् ॥ २४ ॥
मध्ययोनेर्बहिःपूर्वादिक्षु चाग्रे स्मरानपि ।
बाणदेवीस्तद्बदेवं शक्तीरष्टसुयोनिषु ॥ २५ ॥
सुभगाख्याभगापश्चात्तृतीयाभगसर्पिणी ।
भगमाली तथानङ्गानङ्गाद्याकुसुमापरा ॥ २६ ॥
अनंगमेखलानंगमदनेत्यष्टशक्तयः ।
पद्मकेसरगाब्रह्मीमुखाःपत्रेषु भैरवाः ॥ २७ ॥
दीर्घाद्यामातरःपूज्या ह्रस्वाद्याश्चाष्टभैरवाः ।
दलाग्रेष्वष्टपीठानि कामरूपाख्यमादिमम् ॥ २८ ॥
मलयं कोल्लगिर्य्याख्यं चौहाराख्यं कुलान्तकम् ।
जालन्धरं तथोड्यानं कोढ्ढपीठमथाष्टमम् ॥ २९ ॥

अंगपूजामाह ॥ योनीति ॥ मध्ययोनिमध्येएवाग्निनिर्ऋतिवाऽवीशानेषु-हृच्छिरःशिखावर्मांगिसम्पूज्याग्नेयादित्रिदिक्षवस्त्रंयजेत् ॥ २४ ॥ मध्ययोनेर्बहिर्भागेदिक्षु-चतुरःपञ्चममग्रेएवं कामान्यजेत् ॥ बाणदेवीद्राविण्याद्यास्तद्वत्कामवत् ॥ दिक्ष्वग्रेचशक्तीः-सुभगाद्यादीर्घाद्यामातरःआंब्राह्म्यैनमइत्यादि ॥ ह्रस्वाद्याभैरवाःअंअसितांगायनमइत्यादि ॥ २५-२९ ॥

---

[1]फिर पूर्व योनि एवं मध्य योनि के बीच में श्री विद्यापूजन पद्धति के अनुसार गुप्तपंक्ति का पूजन करना चाहिए—शारदातिलकतन्त्र ।

भूगृहे दशदिक्ष्वर्चेद्धैतुकं त्रिपुरान्तकम् ।
वेतालमग्निजिह्वं च कालान्तककपालिनौ ॥ ३० ॥
एकपादं भीमरूपं मलयं हाटकेश्वरम् ।
शक्राद्यानायुधैःसार्द्धं स्वस्वदिक्षु समर्चयेत् ॥ ३१ ॥
तद्बहिर्दिक्षु बटुकं योगिनीक्षेत्रपालकम् ।
गणेशं विदिशास्वर्चेद्वसून्सूर्य्यांश्छिवांस्ततः ॥ ३२ ॥
भूतांश्चेत्थं भजेद्बालानीशःस्ताद्धनविद्ययोः ।

अङ्ग पूजा : मध्य योनि के त्रिकोण में रति आदि का पूजन करना चाहिए । वाम-कोण में रति, दक्षिण में प्रीति तथा अग्र में मनोभवा का पूजन करना चाहिए ।

अन्य योनि में अग्नि कोण से प्रारम्भ कर षडङ्गपूजा करनी चाहिए । मध्य योनि के बाहर पूर्व आदि दिशा एवं अग्रभाग में कामदेवों का पूजन करना चाहिए । इसी प्रकार बाण देवियों (द्राविणी आदि) का पूजन करना चाहिए ।

फिर आठ योनियों में शक्तियों का पूजन करना चाहिए । सुभगा, भगा, भगसर्पिणी, भगमाली, अनंगा, अनंग कुसुमा, अनंग मेखला एवं अनंग मदना—ये ८ शक्तियाँ होती हैं ।

पद्म केसर पर ब्राह्मी आदि पत्रों (दलों) पर भैरवों का पूजन करना चाहिए । आदि में सानुस्वार दीर्घ स्वर लगाकर मातृकाओं का तथा आदि सानुस्वार ह्रस्व स्वर लगाकर ८ भैरवों का पूजन करना चाहिए ।

दलों के अग्रभाग पर ८ पीठों का पूजन करना चाहिए । कामरूप, मलय, कोल-गिरि, चौहार, कुलान्तक, जालन्धर, उड्यान एवं कोट्ट पीठ ये ८ पीठ हैं ।

भूपुर में १० दिशाओं में हेतुक, त्रिपुरान्तक, बेताल, अग्निजिह्व, कालान्तक, कपाली, एकपाद, भीमरूप, मलय एवं हाटकेश्वर का पूजन करना चाहिए ।

वज्र आदि आयुधों के साथ इन्द्र आदि दिक्पालों का अपनी-अपनी दिशाओं में पूजन करना चाहिए ।

इसके बाहर दिशाओं में बटुक, योगिनी, क्षेत्रपाल एवं गणेश का तथा विदिशाओं में वसु, सूर्य, शिवा एवं भूतों का पूजन करना चाहिए । इस प्रकार धन एवं विद्या की स्वामिनी बाला का पूजन करना चाहिए ।

दशदिक्षुहैतुकादयोगणाः ॥ ३० ॥ शक्राद्यान्स्वस्वदिक्षिवत्युक्तःपूर्वावरणानिकल्पित-दिक्षेव ॥ एवं सर्वत्र ॥ ३१ ॥ विदिशासु ॥ अग्न्यादिषु वस्वादयः ॥ वसुभ्योनम-स्त्यादि ॥ ३३ ॥

टिप्पणी : आवरण पूजा विधि : पूर्वोक्त रीति से पूजित पीठ पर विधिवत् ध्यान, आवाहन आदि उपचारों से पञ्चपुष्पाञ्जलि दान पर्यन्त देवी का पूजन कर आवरण पूजा करनी चाहिए, यथा :

सर्वप्रथम मध्य योनि के त्रिकोण में रति आदि का निम्नलिखित मन्त्रों से पूजन करना चाहिए, यथा :

ऐं रत्यै नमः—वामकोणे । सौः मनोभवायै नमः—अग्रे ।

क्लीं प्रीत्यै नम—दक्षिणकोणे ।

फिर आग्नेय आदि चारों कोणों, मध्य में तथा सब दिशाओं में षडङ्गपूजा करनी चाहिए, यथा :

सौः क्लां ऐं हृदयाय नमः । सौः क्लैं ऐं कवचाय हुम् ।

सौः क्लीं ,, शिरसे स्वाहा । सौः क्लौं ,, नेत्रत्रयाय वौषट् ।

सौः क्लूं ,, शिखायै वषट् । सौः क्लः ,, अस्त्राय फट् ।

तत्पश्चात् मध्य योनि के बाहर पूर्व आदि दिशाओं में तथा अग्र भाग में निम्नलिखित मन्त्रों से पञ्चकामों का पूजन करना चाहिए, यथा :

ह्रीं कामाय नमः । ब्लूं मकरध्वजाय नमः ।

क्लीं मन्मथाय नमः । स्त्रीं मीनकेतवे नमः ।

ऐं कन्दर्पाय नमः ।

फिर इन्हीं स्थानों में इसी रीति से द्राविणी आदि बाण देवियों का पूजन करना चाहिए, यथा :

द्रां द्राविण्यै नमः । ब्लूं आकर्षण्यै नमः ।

द्रीं क्षोभिण्यै नमः । सः सम्मोहिन्यै नमः ।

क्लीं वशीकरण्यै नमः ।

तदनन्तर अष्टयोनियों में सुभगा आदि आठ शक्तियों का निम्नलिखित मन्त्रों से पूजन करना चाहिए, यथा :

ऐं क्लीं ब्लूं स्त्रीं सः सुभगायै नमः ।

,, ,, ,, भगायै ,, ।

,, ,, ,, भगसर्पिण्यै ,, ।

,, ,, ,, भगमालिन्यै ,, ।

,, ,, ,, अनङ्गायै ,, ।

,, ,, ,, अनङ्गकुसुमायै ,, ।

,, ,, ,, अनङ्गमेखलायै ,, ।

,, ,, ,, अनङ्गमदनायै नमः ।

फिर पद्म केसरों में यथाक्रमेण पूर्व आदि दिशाओं में ब्राह्मी आदि मातृकाओं का निम्नलिखित मन्त्रों से पूजन करना चाहिए, यथा :

आं ब्राह्म्यै नमः । लृं बाराह्यै नमः ।
ईं माहेश्वर्यै नमः । ऐं इन्द्राण्यै नमः ।
ऊं कौमार्यै नमः । औं चामुण्डायै नमः ।
ऋं वैष्णव्यै नमः । अः महालक्ष्म्यै नमः ।

तत्पश्चात् दलों में पूर्व आदि क्रम से निम्नलिखित मन्त्रों से असितांग आदि अष्टभैरवों का पूजन करना चाहिए, यथा :

अं असितांग-भैरवाय नमः । लृं उन्मत्त- भैरवाय नमः
इं रुरु- ,, ,, । एं कपाली- ,, ,, ।
उं चण्ड- ,, ,, । ओं भीषण- ,, ,, ।
ऋं क्रोध- ,, ,, । अः संहार-भैरवाय नमः ।

इसके बाद दलों के अग्र भाग में पूर्व आदि क्रम से निम्नलिखित मन्त्रों से आठ पीठों का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ कामरूप पीठाय नमः । ॐ कुलान्तक पीठाय नमः ।
ॐ मयलगिरि पीठाय नमः । ॐ जालन्धर पीठाय नमः ।
ॐ कोल्लगिरि पीठाय नमः । ॐ उड्यान पीठाय नमः ।
ॐ चौहार पीठाय नमः । ॐ कोट्ट पीठाय नमः ।

तत्पश्चात् भूपुर में पूर्व आदि १० दिशाओं में हैतुक आदि गणों का निम्नलिखित मन्त्रों से पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ हैतुकाय नमः । ॐ कपालिने नमः ।
ॐ त्रिपुरान्तकाय नमः । ॐ एकपादाय नमः ।
ॐ वेतालाय नमः । ॐ भीमरूपाय नमः ।
ॐ अग्नि जिह्वाय नमः । ॐ मलयाय नमः ।
ॐ कालान्तकाय नमः । ॐ हाटकेश्वराय नमः ।

फिर पूर्व आदि अपनी दिशाओं में वज्र आदि अपने आयुधों के साथ इन्द्र आदि दिक्पालों का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ वज्र सहिताय इन्द्राय नमः —पूर्वे ।
ॐ शक्ति ,, अग्नये ,, —आग्नेये ।

ॐ दण्ड	,	यज्ञाय ,,	—दक्षिणे ।
ॐ खड्ग	,,	निर्ऋतये ,,	—नैर्ऋत्ये ।
ॐ पाश	,,	वरुणाय ,,	—पश्चिमे ।
ॐ अंकुश	,,	वायवे ,,	—वायव्ये ।
ॐ गदा	,,	सोमाय ,,	—उत्तरे ।
ॐ शूल	,,	ईशानाय ,,	—ईशान्ये ।
ॐ पद्म	,,	ब्रह्मणे ,,	—पूर्वेशानयोर्मध्ये ।
ॐ चक्र	,,	अनन्ताय ,,	—निर्ऋति पश्चिमयोर्मध्ये ।

और अन्त में भूपुर के बाहर पूर्व आदि दिशाओं में बटुक आदि का तथा आग्नेय आदि कोणों मे वसु आदि का पूजन करना चाहिए, यथा :

पूर्वादि दिक्षु—	वं बटुकाय नमः ।	क्षं क्षेत्रपालाय नमः ।
	यं योगिनीभ्यो नमः ।	गं गणपतये नमः ।
आग्नेयादि कोणेषु—	ॐ वसुभ्यो नमः ।	ॐ शिवाभ्यो नमः ।
	ॐ आदित्येभ्यो नमः ।	ॐ भूतेभ्यो नमः ।

इस प्रकार आवरण पूजा कर पुष्पाञ्जलि समर्पित कर धूप, दीप आदि उपचारों से विसर्जन तक विधिवत् देवी का पूजन करना चाहिए । पूजन में विशेष बात यह है कि नैवेद्य समर्पित करने के बाद श्रीविद्यापद्धति के अनुसार चारों बलि उसी समय अर्पित करनी चाहिए ।

इस रीति से पूजन कर यथाशक्ति जप करना चाहिए ।

रक्ताम्भोजैर्हुतैनार्यो वश्याःस्युःसर्षपैर्नृपाः ॥ ३३ ॥
नन्द्यावर्तैः राजवृक्षैः कुन्दैःपाटलचम्पकैः ।
पुष्पैर्बिल्वफलैर्वापिहोमाल्लक्ष्मीःस्थिरा भवेत् ॥ ३४ ॥
अपमृत्युं जयेन्मन्त्री गुडूच्या दुग्धयुक्तया ।
पयोक्तदूर्वाहोमात्तुनीरोगायुःसमश्नुते ॥ ३५ ॥
ज्ञानं कवित्वं लभते चन्द्रागुरुपुरैर्हुतैः ।
द्विजेन्द्रा वश्यतां यान्ति कुसुमैरपराजितैः ॥ ३६ ॥
कल्हारैःक्षत्रियाःकर्णिकारजैःक्षितिपांगनाः ।
कोरण्टकुसुमैर्वैश्याःपादजाःपाटलैर्हुतैः ॥ ३७ ॥

नन्द्यावर्तगरः ३४-३५ ॥ चन्दनःकर्पूरः ॥ पुरंगुग्गुलु ॥ अपराजितायोन्याकारपुष्प-वल्लीतदीयान्यपराजितानितैः ॥ ३६-३७ ॥

पालाशपुष्पैर्वाक्सिद्धिरन्नाप्तिर्भक्तहोमतः ।
सारघक्षीरदध्यक्ताल्लाँजान्हुत्वा रुजो जयेत् ॥ ३८ ॥

काम्य प्रयोग : लाल कमलों के होम से स्त्रियाँ वश में हो जाती हैं तथा सरसों के होम से राजा वश में हो जाता है ।

तगर, राजवृक्ष, कुन्द, गुलाब या चम्पा के फूलों से अथवा बेल फल के होम से लक्ष्मी स्थिर हो जाती है ।

दूधवाली गुडूची के साथ दूध सहित दूर्वा के होम से मान्त्रिक अपमृत्यु को जीतता है तथा जीवन भर निरोग रहता है ।

चन्दन, अगर एवं गुग्गुल के होम से ज्ञान एवं कवित्व शक्ति मिलती है । तथा अपराजिता नामक लता के पुष्पों के होम से श्रेष्ठ ब्राह्मण वश में हो जाते हैं । कह्लार-पुष्पों के हवन से क्षत्रिय तथा कर्णिक रज से होम करने पर क्षत्रियों की स्त्रियाँ वश में हो जाती हैं । कोरण्ट-पुष्पों के होम से वैश्य तथा गुलाब के होम से शूद्र वश में हो जाते हैं ।

पलाश-पुष्पों के होम से वाक्सिद्धि तथा भात के होम से अन्नप्राप्ति होती है । मधु, दूध एवं दही मिलाकर लाजाओं के होम से रोग दूर हो जाते हैं ।

रक्तचन्दनकर्पूरकर्चूरागुरुरोचनाः ।
चन्दनं केसरं मांसी क्रमाद्भागैर्नियाजयेत् ॥ ३९ ॥
भूमिचन्द्रैकनन्दाब्धिदिक्सप्तनिगमोन्मितैः ।
श्मशाने कृष्णभूतस्य निशि नीहारपाथसा । ४० ॥
कुमार्य्या पेषयेत्तानि मन्त्रेणाप्यभिमन्त्रयेत् ।
विदध्यात्तिलकं तेन दर्शनाद्वशयेज्जनान् ॥ ४१ ॥
गजसिंहादिभूतानि राक्षसाञ्छाकिनीरपि ।

वशीकरण-तिलक : १ भाग लाल चन्दन, १ भाग कपूर, १ भाग कर्चूर, ९ भाग अगर, ४ भाग गोरोचन, १० भाग चन्दन, ७ भाग केशर तथा ४ भाग जटामांसी मिला लेना चाहिये ।

सारघंमधु ॥ ३८ ॥ तिलकमाह ॥ रक्तेति ॥ मांसीजटामांसी ॥ ३९ ॥ भागानाह ॥ भूमिरेकः ॥ नन्दानव ॥ अब्धयश्चत्वारः ॥ दिशोदश ॥ निगमाश्चत्वारः ॥ रक्तचन्दनमेक-भागमित्यादि ॥ एतान्येकीकृत्यकृष्णचतुर्दशी रात्रौ कुमार्यासंपेष्यमूलेनाभिमंत्र्यतिलकं-कुर्यात् ॥ वशयेदितिशाकिन्यन्तानित्यर्थः ॥ ४०-४२ ॥

(इन सब चीजों को उक्त मात्रा में मिलाकर) कृष्ण पक्षों की चतुर्दशी को श्मशान या चौराहे पर कुमारी कन्या से पिसवा कर उक्त मन्त्र से अभिमन्त्रित कर उसका तिलक लगाये। इस तिलक के देखने मात्र से मनुष्य, हाथी, सिंह, भूत, राक्षस एवं शाकिनी आदि भी वश में हो जाते हैं।

प्रयोगेष्वेषु कथ्यंते क्रमाद्ध्यानानि सिद्धये ॥ ४२ ॥

विविध ध्यान : इन विविध प्रयोगों में सिद्धि के लिए देवी के विविध ध्यानों को क्रमशः बतलाते हैं :

मातुलिङ्गपयोजन्महस्तां कनकसन्निभाम् ।
पद्मासनगतां बालां लक्ष्मीप्राप्तौ विचिंतयेत् ॥ ४३ ॥

दोनों हाथों में बीजपूर तथा कमल धारण करने वाली, सुवर्ण के समान आभा वाली तथा पद्मासन पर विराजमान बाला का लक्ष्मी प्राप्ति के लिए चिन्तन करना चाहिये।

वरपीयूषकलशपुस्तकाभीतिधारिणीम् ।
सुधां स्रवन्तीं ज्ञानाप्तौ ब्रह्मरन्ध्रे विचिन्तयेत् ॥ ४४ ॥

ज्ञान प्राप्ति के लिए—चारों हाथों में वरद मुद्रा, अमृत कलश, पुस्तक एवं अभय मुद्रा धारण करने वाली, अमृत की धारा फैलाने वाली बाला का ब्रह्मरन्ध्र में ध्यान करना चाहिये।

शुक्लाम्बरां शशांकाभां रोगनाशे स्मरेच्छिवाम् ।
अकारादिक्षकारान्तवर्णावयवरूपिणीम् ॥ ४५ ॥

रोग नाश के लिए—(चारों हाथों में वरद मुद्रा आदि धारण करने वाली), श्वेत वस्त्र वाली, चन्द्रमा के समान आभा वाली तथा अकार से लेकर क्षकार तक समस्त वर्णों के अवयव वाली बाला का ध्यान करना चाहिए।

गृणिपाशधरां देवीं रत्नालङ्कारभूषिताम् ।
प्रसन्नामरुणां ध्यायेद्वशीकरणसिद्धये ॥ ४६ ॥

वशीकरण के लिए–दोनों हाथों में अंकुश एवं पाश धारण करने वाली, रत्न एवं आभूषणों से अलंकृत, प्रसन्नवदना एवं अरुण आभा वाली देवी का ध्यान करना चाहिए।

ध्यानभेदानाह ॥ मातुलिंगेति ॥ मातुलिंगबीजपूरं तत्रे ॥ ४३ ॥ रोगनाशध्याने ॥ वरामृतकुम्भौदत्तयोः ॥ ४४-४५ ॥ वशीकरणध्याने ॥ पाशोदत्ते ॥ ४६ ॥

अथ प्रत्येक मन्त्रस्य जपध्यानविधिब्रुवे ।
शापोद्धारप्रकारं च बीजानां दीपिनीरपि ॥ ४७ ॥

अब प्रत्येक बीज के जप एवं ध्यान की विधि को बतलाते हैं तथा शापोद्धार की रीति एवं बीजों की दीपिनी भी बतलाते हैं ।

विद्याक्षमालासुकपाल मुद्राराजत्करां कुन्दसमानकान्तिम् ।
मुक्ताफलालंकृतिशोभिताङ्गीं वाणीं स्मरेद्वाङ्मयसिद्धिहेतोः ॥४८॥

वाग्बीज का ध्यान : पुस्तक, अक्षमाला, सुकपाल एवं ज्ञानमुद्रा से सुशोभित चार हाथ वाली, कुन्द पुष्प के समान कान्तिवाली, मोतियों के आभूषणों से सुशोभित अंगों वाली वाला का वाङ्मय सिद्धि के लिए ध्यान करना चाहिए ।

ध्यात्वैवं वाग्भवं लक्षत्रयं शुक्लाम्बरावृतः ।
शुक्लचन्दनलिप्ताङ्गो मौक्तिकाभरणान्वितः ॥ ४९ ॥
जपित्वा तद्दशांशेन पालाशकुसुमैर्नवैः ।
जुहुयान्मधुराक्तैर्यःसकविर्युवतिप्रियः ॥ ५० ॥

श्वेतवस्त्र पहिन कर, श्वेतचंदन लगाकर तथा मोतियों के आभूषण धारण कर जो साधक उक्त रीति से ध्यान कर वाग्भव बीज का ३ लाख जप करे, तथा जप के बाद मधु मिश्रित पालाश पुष्पों से दशांश होम करे वह व्यक्ति श्रेष्ठ कवि तथा युवतियों का प्रिय बन जाता है ।

भजेत्कल्पवृक्षाधउद्दीप्तरत्नासने सन्निषण्णां मदाघूर्णिताक्षीम् ।
करैर्बीजपूरं कपालेषु चापं सपाशांकुशां रक्तवर्णां दधानाम् ॥ ५१ ॥

कामबीज का ध्यान : कल्पवृक्ष के नीचे क्रान्तिमान् रत्नसिंहासन पर विराजमान, मद से आघूर्णित नेत्रवाली, (चारों हाथों में क्रमशः) बीजापूर, कपाल, धनुष-बाण एवं अंकुश धारण करने वाली एवं रक्तवर्णा देवी का ध्यान करता हूँ ।

ध्यात्वा देवीं जपेल्लक्षत्रयं योमध्यबीजकम् ।
रक्तवस्त्रावृतो रक्तभूषणो रक्तलेपनः ॥ ५२ ॥
दशांशं मालतीपुष्पैश्चन्द्रचन्दनलोलितैः ।
जुहुयात्तस्य वश्याःस्युस्त्रिलोकीजनताःक्षणात् ॥ ५३ ॥

बीजानामिति ॥ त्रयाणामित्यर्थः ॥ ४७ ॥ वाग्बीज ध्यानमाह ॥ विद्येति ॥ अक्षमाला-ज्ञानमुद्रेदक्षयोः ॥ ४८-५० ॥ कामबीजध्यानमाह ॥ कल्पेति ॥ बीजपूरवाणांकुशादद्धेष ॥ कपालचापपाशावामेष ॥ निषण्णांस्थिताम् ॥ षडक्षस्तेयम् ॥ ५१-५३ ॥

लाल कपड़ा एवं आभूषण पहिन कर लाल चन्दन लगाकर देवी के उक्त स्वरूप का ध्यान कर जो साधक कामबीज का ३ लाख जप करता है तथा चन्द्र (कपूर) एवं लाल चन्दन मिश्रित मालती के फूलों से दशांश होम करता है, तीनों लोकों के जीव शीघ्र ही उसके वश में हो जाते हैं।

व्याख्यानमुद्रामृतकुम्भविद्यामक्षस्रजं सन्दधन्तीं कराग्रैः।
चिद्रूपिणीं शारदचन्द्रकान्ति बालां स्मरेन्मौक्तिक भूषिताङ्गीम् ॥५४॥

तृतीय बीज का ध्यान : (चारों हाथों में क्रमशः) व्याख्यानमुद्रा, अमृतकलश, पुस्तक एवं अक्षमाला धारण करनेवाली, चैतन्यरूपिणी, शरदचन्द्र के समान कान्तिवाली, तथा मोती के आभूषणों से सुशोभित अंगोंवाली बाला देवी का ध्यान करना चाहिए।

ध्यात्वैवं चरमं बीजं जपेल्लक्षत्रयं सुधीः।
सितवस्त्रानुलेपाढ्यमात्मानं देवतां स्मरेत् ॥ ५५ ॥
मालतीकुसुमैर्हुत्वा चन्दनाक्तैर्दशांशतः।
लक्ष्मीं विद्यासुकीर्तीनामाधारो जायतेचिरात् ॥ ५६ ॥

श्वेतवस्त्र पहिनकर श्वेत चंदन लगाकर देवी के उक्त स्वरूप का ध्यान कर तथा स्वयं को देवता मानते हुए जो साधक तृतीय बीज का ३ लाख जप करता है तथा चन्दनमिश्रित मालती के फूलों से दशांश-होम करता है वह शीघ्र ही लक्ष्मी, विद्या एव कीर्ति प्राप्त करता है।

देव्याशप्ता कीलिता च विद्येयं तन्नसिद्धिदा।
शापोद्धारमथोत्कीलं विधाय जपमाचरेत् ॥ ५७ ॥

यह विद्या देवी के द्वारा शापग्रस्त एवं कीलित है, (अतः) यह सिद्धिदायक नहीं है। (इसलिए) शापोद्धार एवं उत्कीलन करके इस विद्या का जप करना चाहिए।

योजयेदादिबीजेन वराहभृगुपावकान्।
मध्यमादौ नभोहंसौ मध्यमां तेनपावकम् ॥ ५८ ॥
आदावन्ते च तार्तीये क्रमात् खंधूमकेतनम्।
एवं जप्ताशतं विद्याशापहीना फलप्रदा ॥ ५९ ॥

तृतीयबीजध्यानमाह ॥ व्याख्यानेति ॥ व्याख्यानमुद्राक्षस्रजोर्दक्षयोः ॥ ५४ ॥ ५५ ॥ ॥ ५६ ॥ ५७ ॥ शापोद्धारप्रकारमाह ॥ योजयेदिति ॥ आद्येनैतान् योजयेत् ॥ वाराहोहः॥॥ भृगुः सः ॥ पावकोरः ॥ तेनहस्त्रौः द्वितीय स्यादौ नभोहंसौहसौ ॥ अंतेरेफः ॥ तेनह-सकलरोमिकूटम् (?) ॥ तृतीयस्यादौ ॥ खंहः ॥ अंतेधूमकेतनो रेफः (?) ॥ तेन ह्सौः एवंभैरवीजाता ॥ अस्यांशतजप्तायांबालाशापहीनास्यात् ॥ ५८-५९ ॥

यद्वाद्ये चरमे बीजे नैव रेफं नियोजयेत् ।
शापोद्धारप्रकारोन्यो यद्वायं कीर्तितो बुधैः ॥ ६० ॥
आद्यमाद्यं च तार्तीयं कामःकामोथवाग्भवम् ।
अन्त्यमन्त्यमनंगं च नवार्णःकीर्तितोमनुः ॥ ६१ ॥
जप्तायं शतधा शापं बालायाविनिवर्तयेत् ।

शापोद्धार की रीति : प्रथम बीज के आगे वराह (ह) भृगु (स) एवं पावक (र) जोड़ देना चाहिए । (इस प्रकार यह बीज ह्स्रौं बन जाता (है) । मध्यम (द्वितीय) बीज के आगे नभ (ह) हंस (स) तथा अन्त में पावक (र) लगाना चाहिए । (इस प्रकार) द्वितीय बीज, 'हसकलरीम्' यह कूट बन जाता है । तृतीय बीज के आदि में ख (ह) तथा अन्त में धूमकेतन (र) लगाना चाहिए । इस प्रकार यह बीज 'ह्स्रौं' बन जाता है । इसका १०० बार जप करने से बाला शापहीन होकर फलदायक हो जाती है ।

अथवा आद्य एवं अन्त बीज में से रेफ निकाल देना चाहिए तथा मध्यम बीज को यथावत् रखना चाहिये । विद्वानों ने बाला के शापोद्धार का यह अन्य प्रकार बतलाया है ।

आद्य (ऐं) आद्य (ऐं) तार्तीय (सौः) काम (क्लीं) काम (क्लीं) वाग्भव (ऐं) अन्त्य (सौः) अन्त्य (सौः) तथा अनंग (क्लीं) यह ९ अक्षर का मन्त्र कहा गया है । इस मन्त्र का १०० बार जप करने से बाला का शाप दूर हो जाता है ।

टिप्पणी : शापोद्धार की विधि : 'ह्स्रौं ह्स्क्लरीं ह्सौः'—त्रिपुर भैरवी के इस मन्त्र का १०० बार जप करने से बाला विद्या का शापोद्धार हो जाता है ।

अथवा—'ह्सौं ह्स्क्लरीं ह्सौः'—इस मन्त्र का १०० बार जप करने से बाला का शाप दूर हो जाता है ।

या 'ऐं ऐं सौः क्लीं क्लीं ऐं सौः सौः क्लीं'—इस नवार्ण मन्त्र का १०० बार जप करने से भी बाला मन्त्र का शाप नष्ट हो जाता है ।

चेतन्याह्लादिनीमन्त्रौ जप्तौ निष्कीलताकरौ ॥ ६२ ॥

यद्वात्रैवा द्यैत्यंचबीजेरेफयोगाभावः ॥ तेनह्सौः ॥ मध्यमन्तदेव ॥६०॥ शापोद्धारेप्रकारांतरम् ॥ नवार्णजपमाह ॥ आद्यमिति ॥ ऐंऐंसौः क्लीं क्लीं ऐं सौः सौः एवंनवार्णः ॥ शतंजप्तः शापनिवर्तकः ॥ ६१-६२ ॥

त्रिस्वराश्चेतनीमन्त्रो धरःशान्तिरनुग्रहः ।
तारादिहृदयान्तःस्यात् काम आह्लादिनोमनुः ॥ ६३ ॥

उत्कीलन : चेतनी एवं आह्लादनी मन्त्रों का जप करने से यह विद्या उत्कीलित हो जाती है ।

अधर (ऐं) शान्ति (ई) तथा अनुग्रह (औ) इससे तीनों स्वरों का चेतनी मन्त्र बनता है । तथा आदि में तार (ॐ) तथा अन्त में हृदय (नमः) सहित काम (क्लीं) यह आह्लादिनी मन्त्र है ।

टिप्पणी : उत्कीलन विधि :

(i) *चेतनी मन्त्र* : ऐं ई औ ।

(ii) *आह्लादिनी मन्त्र* : ॐ क्लीं नमः

चेतनी एवं आह्लादिनी : इन दोनों मन्त्रों का विधिवत् जप करने से बाला मन्त्र का उत्कीलन हो जाता है ।

तथा त्रयाणां बीजाना दीपनैर्मनुभिस्त्रिभिः ।
मुदीप्तानि विधायादौ जपेत्तानीष्टसिद्धये ॥ ६४ ॥
वदयुग्मंसदीर्घाम्बुस्मृति बालावनन्तगौ ।
सत्यःसनेत्रोनस्ताद्दृगवाङ्नवार्णाद्यदीपिनी ॥ ६५ ॥
क्लिन्नेक्लेदिनिवैकुण्ठोदीर्घखंसद्यगोन्तिमः ।
निद्रासचन्द्राकुर्वन्ताशिवार्णामध्यदीपिनो ॥ ६६ ॥
तारो मोक्षं च कुर्वंतापश्चार्णात्यस्यदीपिनी ।
दीपिनीमन्तराबाला राधितापि न सिध्यति ॥ ६७ ॥

चेतनीमन्त्रमाह ॥ त्रीति ॥ अधरऐं ॥ शान्तिरी ॥ अनुग्रहऔ ॥ एतेत्रयः स्वराः केवलाश्चेतनीमन्त्रः शतंजप्तोबालांनिष्कीलांकरोति ॥ आह्लादिनीमन्त्रमाह ॥ तारादीति ॥ ॐ क्लींनमइति ॥ अयमप्युत्कीलनकरः ॥६३-६४॥ वाग्बीजस्यदीपनीविद्यामाह ॥ वदेति ॥ सदीर्घाम्बुवा अनन्तगौस्मृति ॥ बालौ आस्थिनौगवौ ॥ तेनग्वा ॥ सनेत्रः सत्यो दि ॥ तादृगनः ॥ वाक् ऐं ॥ इयमाद्यस्यबीजस्यदीपिनी प्रकाशकर्त्री ॥ ६५ ॥

कामबीजस्यदीपिनीमाह ॥ क्लिन्नेइति ॥ स्वरूपम् वैकुंठोमः दीर्घखंहाः अन्तिमःचन्द्रः सद्यगःओगवःचन्द्रो सचन्द्रानिद्राभं ॥ कुरुस्वरूपं ॥ शिवार्णऐकादशवर्णा मध्यबीजस्यदीपिनी ॥ ६६ ॥ तारइति ॥ तारः प्रणवः ॥ मोक्षंकुर्वंतिस्वरूपम् ॥ अन्त्यस्यबीजस्यदीपिनी ॥ उक्तांदीपिनीम् अन्तराविना आराधितापिबालानसिद्धयति ॥ ६७-६८ ॥

दीपन-विधि : जप से पहिले वक्ष्यमाण तीन दीपन मन्त्रों से तीनों बीजों का दीपन कर फिर अभीष्ट सिद्धि के लिए इनका जप करना चाहिए।

वद युग्म (वदवद) सदीर्घाम्बु (वा) अनन्तग स्मृति एवं बालः (ग्वा) सनेत्र सत्य (दि) तादृश 'न' (नि) तथा वाङ् (ऐं) लगाने से ९ अक्षर वाला आद्य बीज का दीपनी मन्त्र बनता है।

'क्लिन्ने क्लेदिनि' फिर वैकुण्ठ (म) दीर्घ ख (हा) सद्यग अन्तिम (क्षो) सचन्द्रा निद्रा (भं) और फिर 'कुरु'—यह ११ अक्षर वाला मध्य बीज का दीपनी मन्त्र होता है।

तार (ॐ) 'मोक्षं कुरु' यह ५ अक्षर वाला अन्तिम बीज का दीपनी मन्त्र है।

उक्त दीपनी मन्त्रों के बिना आराधना करने पर भी बाला सिद्ध नहीं होती।

टिप्पणी : वाग्भव बीज का दीपिनी मन्त्र : वदवदवाग्वादिनि ऐं।

काम बीज का दीपिनी मन्त्र : क्लिन्ने क्लेदिनि महाक्षोभं कुरु।

तार्तीय बीज का दीपिनी मन्त्र : ॐ मोक्षं कुरु।

बाला मन्त्र के तीनों बीजों के साथ उनके अपने दीपनी मन्त्रों को लगाकर जप करने से बाला विद्या दीप्त हो जाती है। इस प्रकार बने समस्त मन्त्र का नाम दीपिनी विद्या है। और यही विद्या बाला की प्राण स्वरूपा है। इस दीपिनी मन्त्र का जप के पहिले और बाद में ७-७ बार जप कर लेना चाहिये। अन्यथा बाला मन्त्र कभी भी सिद्ध नहीं होता।

इदं रहस्यं नाख्येयं कृतघ्ने कितवे शठे।
परीक्षिताय दातव्यमन्यथादातृदोषदम् ॥ ६८ ॥

कृतघ्न, धूर्त एवं शठ व्यक्ति को यह रहस्य नहीं बतलाना चाहिए। यह रहस्य केवल परीक्षित शिष्य को ही बतलाना चाहिए, अन्यथा बतलाने वाला ही दोष का भागी होता है।

वागन्त्यकामान्प्रजपेदरीणां क्षोभहेतवे।
कामवागंत्यबीजानि त्रैलोक्यस्य वशीकृतौ ॥ ६९ ॥
कामान्त्यवाणीबीजानि मुक्तये नियतो जपेत्।

कामना के भेद से विभिन्न मन्त्र : शत्रुओं के नाश के लिए वाग्भव, तार्तीय एवं काम बीजों का जप करना चाहिए।

जप भेदान्कामभेदेनाह ॥ वागिति ॥ ऐंसौंक्लीमित्यत्यरिनाशाय ॥ क्लींऐंसौरिति-वशीकरणे ॥ ६९ ॥

तीनों लोकों को वश में करने के लिए काम बीज, वाग्भव एवं तार्तीय का जप करना चाहिए ।

मुक्ति के लिए कामबीज, तार्तीय एवं वाग्भव का निश्चित रूप से जप करना चाहिए ।

टिप्पणी : *शत्रु नाशक मन्त्र* : ऐं सौः क्लीं
वशीकरण मन्त्र : क्लीं ऐं सौः ।
मोक्षदायक मन्त्र : क्लीं सौः ऐं ।

पूजाविधौ तु बालायास्त्रिविधानर्चयेद्गुरून् ॥ ७० ॥
दिव्यौघश्चेतिसिद्धौघो मानवौघ इति त्रिधा ।
परप्रकाशःपरमेशानःपरशिवस्तथा ॥ ७१ ॥
कामेश्वरस्ततोमोक्षःषष्ठःकामोमृतोन्तिमः ।
एते सप्तैव दिव्यौघा आनन्दपदपश्चिमाः ॥ ७२ ॥
ईशानाख्यस्तत्पुरुषो घोराख्यो वामदेवकः ।
सद्योजात इमे पञ्चसिद्धौघाख्याःस्मृताबुधैः ॥ ७३ ॥
मानवौघःप्रविज्ञेयःस्वगुरोःसम्प्रदायतः ।

गुरु पूजन : बाला के पूजन में त्रिविध गुरुओं का पूजन करना चाहिए । दिव्यौघ, सिद्धौघ एवं मानवौघ ये तीन प्रकार के गुरु होते हैं ।

परप्रकाशानन्द, परमेशानानन्द, परशिवानन्द, कामेश्वरानन्द, मोक्षानन्द, कामानन्द एवं अमृतानन्द ये सात दिव्यौघ गुरु होते हैं ।

ईशान, तत्पुरुष, घोर, वामदेव एवं सद्योजात ये पाँच सिद्धौघ गुरु माने जाते हैं ।

अपने गुरु के सम्प्रादाय के अनुसार मानवौघ गुरुओं को जान लेना चाहिए ।

टिप्पणी : *गुरुपूजा विधि* : 'शारदातिलक' के अनुसार पीठ पूजा के बाद पूर्वयोनि एवं मध्य योनि के बीच श्रीविद्यापूजन पद्धति के अनुसार गुरु पंक्ति का पूजन कर वहीं दिव्यौघ, सिद्धौघ एवं मानवौघ गुरुओं का पूजन करना चाहिए ।

गुरुओं के चतुर्थ्यन्त नामों के बाद 'नमः लगाने से उनकी पूजा के मन्त्र बन जाते हैं, यथा :

क्लींसौः एभितिमुक्तयं ॥ ७० ॥ दिव्यौघानाह ॥ परप्रकाश इति ॥ आनन्दपदपश्चिमाइतिवक्ष्यमाणत्वात्परप्रकाशानन्दायनमइत्यादिप्रयोगः ॥ ७१-७२ ॥ सिद्धौघानाह ॥ ईशानाख्यइति ॥ ७३ ॥

परप्रकाशानन्दाय नमः । अमृतानन्दाय नमः ।
परमेशानन्दाय नमः । ईशानाय नमः ।
परशिवानन्दाय नमः । तत्पुरुषाय नमः ।
कामेश्वरानन्दाय नमः । घोराय नमः ।
मोक्षानन्दाय नमः । वामदेवाय नमः ।
कामानन्दाय नमः । सद्योजाताय नमः । इत्यादि

नवयोन्यात्मके यन्त्रे विलिखेन्मध्ययोनितः ॥ ७४ ॥
प्रादक्षिण्येन बीजानि त्रिवारं साधकोत्तमः ।
त्रीस्त्रींन्वर्णांस्तुगायत्र्या अष्टपत्रेषु संलिखेत् ॥ ७५ ॥
बहिर्मातृकयावेष्ट्य तद्बहिर्भूपुरद्वयम् ।
कामबीजलसत्कोणं व्यतिभिन्नं परस्परम् ॥ ७६ ॥
यन्त्रं त्रैपुरमाख्यातं जप्तं सम्पातसाधितम् ।
बाहुना विधृतं दद्याद्धनं कीर्तिःसुखं सुतान् ॥ ७७ ॥
कामान्ते त्रिपुरादेविविद्महेका विषंभगि ।
बकःखड्गीशमारूढःसनेत्रोग्निश्चधीमहि ॥ ७८ ॥
तन्नःक्लिन्नेप्रचोदान्ते यादन्ता कीर्तिताबुधैः ।
गायत्री त्रैपुरी सर्वसिद्धिदासुरसेविता ॥ ७९ ॥

बाला धारण यन्त्र : नवयोन्यात्मक यन्त्र में मध्य योनि से प्रारम्भ कर प्रदक्षिण क्रम से तीन आवृत्तियों में बीजों को लिखना चाहिए। फिर अष्टदल में त्रिपुरा गायत्री के तीन तीन अक्षरों को लिखना चाहिए। (तत्पश्चात्) अष्टदल को बाहर वर्ण-माला से वेष्टित कर परस्पर व्यतिभिन्न रूप में दो चतुरस्र बनाने चाहिए तथा उनके कोणों में कामबीज लिखना चाहिए।

यह त्रिपुरासंज्ञक यन्त्र जप एवं आहुतिशेष घृत से बनाकर भुजा में धारण करने से धन, कीर्ति, सुख एवं पुत्र देता है।

काम (क्लीं) के बाद 'त्रिपुरा देवि विद्महेका' फिर भगि विष (मे) खड्गीश बक (श्व) सनेत्र अग्नि (रि) फिर 'धीमहि' और 'तन्नः क्लिन्ने प्रचोदयात्' यह सर्व-सिद्धिदायक एवं सुरसेवित त्रिपुरागायत्री कही गयी है।

यन्त्रमाह ॥नवांत ॥ गायत्र्यास्त्रिपुरागायत्र्यावक्ष्यमाणायावर्णत्रयंप्रतियन्त्रंलिखेत् ॥७४-७५॥ भूपुरद्वयंचतुष्कोणद्वयम् ॥ कीदृशंपरस्परंव्यतिभिन्नम् एकंबिदिग्गतकोणम् अपरन्दिग्गत-कोणमित्यर्थः ॥७६॥ सम्पातसाधितम् आहुतिशेषघृतेनसयोजितम् ॥७७॥ गायत्रीमुद्धरति ॥ कामान्त इति ॥ कामःक्लीं ॥ भगिएयुंतंविषंमःमे ॥ बकःशः खड्गीशं बकारमारूढः श्वः ॥ सनेत्रःअग्निःरि ॥ स्व पमन्यत् ॥ ७८-७९ ॥

टिप्पणी : त्रिपुरागायत्री : क्लीं त्रिपुरा देवि विद्महे कामेश्वरि धीमहि । तन्नः क्लिन्ने प्रचोदयात् ।

बालाधारण यन्त्र : (देखिये चित्र नं० १८)

अथ वक्ष्यामि बालाया भेदानागमगोपितान् ।
मायाकामोम्बरारूढं तार्तीयन्त्र्यक्षरो मनुः ॥ ८० ॥
अनुलोमप्रतिलोमाभ्यां बालामन्त्रःषडक्षरः ।
बालाश्रीकामाहृल्लेखा सम्पुटोयं नवाक्षरः ॥ ८१ ॥
बालान्ते बालात्रिपुरेस्वाहान्तो दशवर्णवान् ।
वाक्कामोव्योमभृग्विन्दुयुङ्मनुर्दीर्घभूधरः ॥ ८२ ॥
पिनाकी त्रिपुरेसिद्धिदेहिहृन्मनुवर्णवान् ।
मायालक्ष्मीर्मनोजन्मात्रिपुरान्ते तु भारती ॥ ८३ ॥
कवित्वंदेहि ठद्वन्द्वं षोडशार्णो मनुःस्मृतः ।
कमलापार्वतीकामस्त्रिपुरान्ते च मालती ॥ ८४ ॥
मह्यं सुखं ततो देहिस्वाहा सप्तदशाक्षरः ।
भृगुब्रह्मक्रियावह्नियुक्ताशान्तिस्सरात्रिपा ॥ ८५ ॥
दहनांत्यमहाकालभुजङ्गः पुरुषोत्तमाः ।
मन्वर्धीशेन्दुसंयुक्ताद्वितीयं बीजमीरितम् ॥ ८६ ॥
वाग्बीजं त्रिपुरेसर्ववांछितंदेहिहृत्ततः ।
वह्निप्रियासप्तदशवर्णोयं कीर्तितो मनुः ॥ ८७ ॥

बालाभेदेप्रथममन्त्रान्तरमाह ॥ मायेति ॥ मायाह्रीं ॥ कामःक्लीं तार्तीयंसौः अम्बरारूढंहयुतं हसौः प्रथमः ॥ ८० ॥ मन्त्रान्तरमाह ॥ अनुलोमेति ॥ ऐंक्लींसौःसौःक्लींऐं-द्वितीयः ॥ मन्त्रान्तरमाह ॥ बालेति ॥ श्रींक्लींह्रींऐंक्लींसौःह्रींक्लींश्रीमितितृतीयः ॥ ८१ ॥

मन्त्रान्तरमाह ॥ बालेति ॥ ऐंक्लींसौःबालत्रिपुरेस्वाहेतिचतुर्थः ॥ पञ्चममाह ॥ वागिति ॥ वाक्ऐं ॥ कामःक्लीं ॥ व्योमभृग्विन्दुयुङ्मनुःहसबिन्दुयुतौ हसौं ॥ दीर्घभूधरःवा ॥ पिनाकीला ॥ ८२ ॥ स्वरूपमन्यत् ॥ षष्ठमाह ॥ मायेति ॥ मायाह्रीं ॥ लक्ष्मीः श्रीं ॥ मनोजन्माक्लीं ॥ ठद्वयंस्वाहा ॥ स्वरूपमन्यत् ॥ सप्तममाह ॥ कमलेति ॥ कमला श्रीं ॥ पार्वतीह्रीं ॥ कामःक्लीं ॥ स्वरूपमन्यत् ॥ ८३-८४ ॥

अष्टममाह ॥ भृग्विति ॥ भृगुः सः ॥ ब्रह्माकः ॥ क्रियालः ॥ वह्नीरः ॥ एतैर्युक्ताशान्तिरीकारः सरात्रिरा सबिन्दुः स्कलरीं ॥ ८५ ॥ दहनोरः ॥ अन्त्यःक्षः ॥ महा कलोम ॥ भुजंगोरः पुरुषोत्तमोयः ॥ एतेमन्वर्धीशेन्दुसंयुक्ताऔ बिन्दुयुताः ॥ तेनक्ष्म्यौं ॥ ८६ ॥

वाग्बीजंऐं ॥ हृत्तनमः ॥ स्वरूपंशेषम् ॥ वह्निप्रियास्वाहा ॥ ८७ ॥

हृल्लेखात्रितयं प्रौढत्रिपुरेनन्तारोग्यमै-
श्वर्य्यदेहिप्रियावह्निमनुरष्टादशाक्षरः ॥ ८८ ॥

मायारमामन्मथान्तेत्रिपुरामदनेपदम् ।
सर्वशुभंसाधयाग्नेःप्रियान्तोष्टादशाक्षरः ॥ ८९ ॥

हृल्लेखाकमलानंगोबालान्तेत्रिपुरेपदम् ।
मदायत्तां ततो विद्याकुरुहृद्वह्निवल्लभा ॥ ९० ॥

मन्त्रोविंशतिवर्णोयं मायापद्मामनोभवः ।
परापरेन्ते त्रिपुरेसर्वमीप्सितमुच्यताम् ॥ ९१ ॥

साधयानलकान्तायमन्यो विंशतिवर्णकः ।
कामद्वन्द्वं रमायुग्मं मायायुक्त्रिपुरापदम ॥ ९२ ॥

ललितेन्ते मदीप्सीतितामन्त योषितंपदम् ।
देहिवांछितमित्युक्त्वाकुरुज्वलनकामिनी ॥ ९३ ॥

अष्टाविंशतिवर्णोयं मनुरिष्टप्रियाप्रदः ।
कामपद्माद्रिपुत्रीणां प्रत्येकं त्रितयं वदेत् ॥ ९४ ॥

त्रिपुरान्तेसुन्दरीतिसर्वंजगदिनद्वयम् ।
वशंकुरुद्वयं मह्यं बलंदेह्यनलांगना ॥ ९५ ॥

बाला के भेद : आगम शास्त्र में अत्यन्त गोपनीय माने गये बाला के भेदों को अब मैं बतलाता हूँ—

माया (ह्रीं) काम (क्लीं) तथा अम्बरारूढ तार्तीय (हसौः)—यह तीन अक्षर का मन्त्र है ।

नवमाह ॥ हृल्लेखेति । हृल्लेखात्रितयंह्रीं ॥ ३ ॥ अनंतआ ॥ स्वरूपमपरम् ॥ ८८ ॥

दशममाह ॥ मायेति ॥ मायह्रीं ॥ रमाश्रीं ॥ मन्मथःक्लीं ॥ स्वरूपं शेषम् ॥ ८९ ॥ एकादशमाह ॥ हृल्लेखेति हृल्लेखाह्रीं ॥ कमलाश्रीं ॥ अनंगःक्लीं हृत्नमः ॥ वह्निवल्लभा स्वाहा ॥ शेषं स्वरूपम् ॥ ९० ॥ द्वादशमाह ॥ मायेति ॥ माया ह्रीं ॥ पद्माश्रीं ॥ मनोभवःक्लीं ॥ ९१ ॥

अनलकान्तास्वाहा ॥ अन्यत्स्वरूपम् ॥ त्रयोदशमाह ॥ कामेति ॥ कामद्वन्द्वंक्लीं २ रमायुग्मंश्रीं ॥ मायायुक्तह्रीं ॥ त्रिपुरालालितेमदीप्सितांयोषितंदेहिवांछितंकुरु इति स्वरूपम् ॥ ज्वलनकामिनीस्वाहा ॥ ९२-९३ ॥ चतुर्दशमाह ॥ कामेति ॥ कामपद्माद्रिपुत्रीणांप्रत्येकंत्रयं क्लीं ३ श्रीं ३ ह्रीं ३ ॥ ९४ ॥ इनद्वयं मद्वयंमम ॥ अनलाङ्गनास्वाहा ॥ स्वरूपमपरम् ॥ ९५ ॥

अनुलोम एवं विलोम क्रम से बाला मन्त्र लिखने पर ६ अक्षर का मन्त्र बनता है।

बाला मन्त्र को श्रीबीज, कामबीज एवं मायाबीज से सम्पुटित करने पर ९ अक्षर का मन्त्र बनता है।

बाला मन्त्र के बाद 'बाला त्रिपुरे स्वाहा' लगाने से १० अक्षर का मन्त्र बनता है।

वाग्बीज, कामबीज, व्योम भृग्विन्दुयुक् (ह्सौः) दीर्घ भूधर (बा) पिनाकी (ला) फिर 'त्रिपुरे सिद्धिदेहि' और अन्त में हृदय (नमः) लगाने से १४ अक्षर का मन्त्र बनता है।

मायाबीज, लक्ष्मीबीज एवं कामबीज के बाद 'त्रिपुरा भारती कवित्वं देहि' और अन्त में ठद्वन्द (स्वाहा) लगाने से १६ अक्षर का मन्त्र बनता है।

लक्ष्मीबीज, पार्वतीबीज, कामबीज के बाद 'त्रिपुरा मालती मह्यं सुखं देहि स्वाहा' लगाने से १७ अक्षर का मन्त्र बनता है।

भृगु (स्) ब्रह्मा (क्) क्रिया (ल) एवं वह्नि(र्) इनसे युक्त सबिन्दु शान्ति (ई)–अर्थात्–'स्क्लरीं' (यह प्रथम बीज) फिर अन्त्य (क्ष्) महाकाल (म्) भुजंग (र्) पुरुषोत्तम (य) एवं दहन (र) ये सब मन्वर्धीशेन्दु (औं) के साथ अर्थात् 'क्ष्म्ल्रीं' यह द्वितीय बीज कहा गया है। फिर वाग्बीज एवं 'त्रिपुरे सर्ववांछितं देहि' तथा बाद में हृदय (नमः) एवं 'स्वाहा' लगाने से १७ अक्षर का मन्त्र बनता है।

माया बीजत्रय के बाद 'प्रौढत्रिपुरे' अनन्त (आ) फिर 'रीग्यमैश्वर्यं देहि' एवं अन्त में वह्नि प्रिया (स्वाहा) लगाने से १८ अक्षर का मन्त्र बनता है।

माया, रमा एवं कामबीज के बाद 'त्रिपुरा मदने सर्व शुभं साधय' और अन्त में अग्नि प्रिया (स्वाहा) लगाने से १८ अक्षर का मन्त्र बनता है।

हृल्लेखा, कमला एवं कामबीज के बाद 'बाल त्रिपुरे मदायत्तां विद्यां कुरु' फिर हृदय (नमः) तथा वह्निवल्लभा (स्वाहा) लगाने से २० अक्षर का मन्त्र बनता है।

माया, पद्मा एवं कामबीज के बाद 'परापरे त्रिपुरे सर्वमीप्सितं साधय' एवं अग्निकान्ता (स्वाहा) लगाने से २० अक्षर का मन्त्र बनता है।

२ कामबीज, २ श्रीबीज फिर मायाबीज के साथ 'त्रिपुरे ललिते' के बाद 'मदीप्सितां' 'योषितं' 'देहिवांछितं' बोलकर 'कुरु' एवं ज्वलनकामिनी (स्वाहा) लगाने से २८ अक्षर का यह मन्त्र इच्छित स्त्री को देने वाला कहा गया है।

३ कामबीज, ३ श्रीबीज एवं ३ पार्वतीबीज के बाद 'त्रिपुर' 'सुन्दरि' 'सर्वजगद्' फिर इनद्वय (मम) फिर 'वशं' कुरुद्वय (कुरु कुरु) फिर 'बलं देहि' और बाद में अनलाङ्गना (स्वाहा) लगाने से समस्त अभीष्टदायक यह ३५ अक्षर का मन्त्र बनता है।

टिप्पणी : उक्त १४ मन्त्रों का उद्धार :

(i) ह्रीं क्लीं ह्सौः—त्र्यक्षर मन्त्रः ।

(ii) ऐं क्लीं सौः सौः क्लीं ऐं—षडक्षर मन्त्रः ।

(iii) श्रीं क्लीं ह्रीं ऐं क्लीं सौः ह्रीं क्लीं श्रीं—नवार्ण मन्त्रः ।

(iv) ऐं क्लीं सौः बाला त्रिपुरे स्वाहा—दशार्ण मन्त्रः ।

(v) ऐं क्लीं ह्सौः बाला त्रिपुरे सिद्धि देहि नमः—चतुर्दशाक्षर मन्त्रः ।

(vi) ह्रीं श्रीं क्लीं त्रिपुरा भारती कवित्वं देहि स्वाहा—षोडशाक्षर मन्त्रः ।

(vii) श्री ह्रीं क्लीं त्रिपुरा मालिनी मह्यं सुखं देहि स्वाहा—सप्तदशाक्षर मन्त्रः ।

(viii) स्क्लरीं क्ष्म्ररौं ऐं त्रिपुरे सर्वबांछितं देहि नमः स्वाहा—सप्त दशार्णः ।

(ix) ह्रीं ह्रीं ह्रीं प्रौढत्रिपुरे आरोग्यमैश्वर्यं देहि स्वाहा—अष्टादशाक्षर मन्त्रः ।

(x) ह्रीं श्रीं क्लीं त्रिपुरामदने सर्वशुभं साधय स्वाहा—अष्टादशार्णः

(xi) ह्रीं श्रीं क्लीं बालत्रिपुरे मदायत्तां विद्यां कुरु नमः स्वाहा—विंशत्यक्षरमन्त्रः

(xii) ह्रीं श्रीं क्लीं परापरे त्रिपुरे सर्वमीप्सितं साधयस्वाहा—विंशत्यर्णः

(xiii) क्लीं क्लीं श्रीं श्रीं ह्रीं ह्रीं त्रिपुरालालिते मदीप्सितां योषितं देहि वांछितं कुरु स्वाहा—अष्टाविंशत्यक्षर मन्त्रः ।

(xiv) क्लीं क्लीं क्लीं श्रीं श्रीं श्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं त्रिपुर सुन्दरि सर्वजगन्मम वशं कुरु कुरु मह्यं बलं देहि स्वाहा—पञ्चत्रिंशदक्षरमन्त्रः ।

सर्वाभीष्टप्रदो मन्त्रउक्तो बाणगुणाक्षरः ।
चतुर्दशानामेतेषां मनूनामृषिरीरितः ॥ ९६ ॥
दक्षिणामूर्तिसंज्ञस्तुच्छन्दो गायत्रमुच्यते ।
त्रिपुरादेवता बालाषडंगंमातृकासमम् ॥ ९७ ॥

इन मन्त्रों का विनियोग एवं न्यास : इन १४ मन्त्रों के दक्षिणामूर्ति ऋषि हैं, गायत्री छन्द है तथा त्रिपुराबाला देवता है।[१] इनका षडङ्गन्यास मातृका के समान है।

एतेचतुर्दशबालाभेदाः ॥ तेषामम् ॥ ९६ ॥ ऋष्याद्याह ॥ दक्षिणेति ॥९७॥

---

[१] इनका बीजवाग्भव, शक्तितार्तीय एवं कीलक कामबीज है।—शारदातिलकतन्त्र ।

टिप्पणी : विनियोग : अस्य श्री बाला मन्त्रस्य दक्षिणामूर्तिर्ऋषिः गायत्री छन्दः त्रिपुराबालादेवता (ऐं बीजं, सौः शक्तिः क्लीं कीलकं) ममाभीष्टसिद्धये जपे विनियोगः ।

पाशांकुशौपुस्तकमक्षसूत्रं करैर्दधानासकलामरार्च्या ।
रक्ता त्रिनेत्रा शशिशेखरेयं ध्येयाखिलद्धर्यै त्रिपुराबाला ॥ ९८ ॥

ध्यान : (चारों हाथों में क्रमशः) पाश, अंकुश, पुस्तक अक्षसूत्र धारण करनेवाली, लाल (कमल के समान) तीन नेत्र वाली, चन्द्रकला से सुशोभित मस्तकवाली त्रिपुरा बाला का समस्त मनोकामनाओं की सिद्धि के लिए ध्यान करना चाहिए ।

जपेल्लक्षं दशांशेन होमःपुष्पैर्हयारिजैः ।
पूजापूर्वोदिते पीठेगैरत्याद्यैश्चसायकैः ॥ ९९ ॥
मातृभिर्दिगधीशास्त्रैः प्रयोगाः पूर्ववन्मताः ।

जपसंख्या, हवन एवं पूजन आदि : इन मन्त्रों का १ लाख जप करना चाहिए । (फिर) कनेर के फूलों से दशांश-होम करना चाहिए । पूर्वोक्तपीठ पर षडङ्गपूजा, रति आदि की पूजा, बाणदेवताओं, मातृकाओं, दिक्पालों एवं उनके अस्त्रों के साथ देवी का पूजन कर पूर्वोक्त रीति से काम्यप्रयोग करने चाहिए ।[१]

लघुश्यामामथो वक्ष्ये स्मरणादिष्टदायिनीम् ॥ १०० ॥
वाग्बीजंहृदयंकर्णएकनेत्रःसनेत्रकः ।
वृषोमुकुन्दमारूढोकूर्मोदीर्घेन्दुसंयुतः ॥ १०१ ॥
नन्दीदीर्घोलिमातङ्गिसर्वान्तेस्याद्वशंकरि ।
वैश्वानरप्रियान्तोऽयं मन्त्रोविंशतिवर्णवान् ॥ १०२ ॥

लघुश्यामा का मन्त्र : स्मरण मात्र से मनोकामनाओं को पूर्ण करनेवाली लघुश्यामा को अब मैं बतलाता हूँ—

वाग्बीज (ऐं) हृदय (नमः) कर्ण (उ) सनेत्र एकनेत्र (च्छि) मुकुन्दमारूढ़ वृष (ष्ट) दीर्घेन्दुसंयुत कूर्म (त्रां) दीर्घनंदी (डा) फिर 'लिमातंगि सर्ववशंकरि' और अन्त में वैश्वानर प्रिया (स्वाहा) लगाने से २० अक्षर का मन्त्र बनता है ।

ध्यानमाह पाशेति ॥ अंकुशाक्षसूत्रेदक्षयोः ॥९८॥ हयारिःकरवीरः ॥ सायकैःपञ्चबाणदेवताभिः ॥९९॥ दिगधीशास्त्रैरिति ॥ दिशामीशैस्तदस्त्रैश्चेत्यर्थः ॥ १०० ॥ बालामुक्त्वालघुश्यामामाह ॥ वाग्बीजमिति वाग्बीजंऐं ॥ हृदयनमः ॥ कर्णउ ॥ सनेत्रकएकनेत्रःइयुतश्चिच्छःच्छि ॥ मुकुन्दमारूढं वृषः टस्थितः षः ष्ट ॥ दीर्घेन्दुसंयुतः कूर्मः त्रः त्रां ॥१०१॥ दीर्घोनन्दी डा ॥ लिमातंगिसर्ववशंकरिस्वरूपम् ॥ वैश्वानरप्रियास्वाहा ॥ १०२ ॥

---

१. विस्तृत जानकारी के लिए श्लोक २०–३८ की टिप्पणियाँ देखिए ।

टिप्पणी : मन्त्रोद्धार : ऐं नमः उच्छिष्टचांडालि मातंगि सर्ववशंकरि स्वाहा ।

मदनोस्य मुनिःप्रोक्तो गायत्रीनिचृदादिका ।
छन्दो देवीलघुश्यामा बीजं वाग्वह्निवल्लभा ।
शक्तिरुक्ताखिलाभीष्ट साधने विनियोजनम् ॥ १०३ ॥

विनियोग : इस मन्त्र का मदन ऋषि है, निचृद्गायत्री छन्द है, लघुश्यामा देवता है, वाग्भव बीज है, वह्निवल्लभा शक्ति है तथा समस्त अभीष्टों की सिद्धि के लिए यह मन्त्र विनियुक्त होता है ।

टिप्पणी : विनियोग : अस्य श्री लघुश्यामामन्त्रस्य मदन ऋषिः निचृद्गायत्रीछन्दः, देवीलघुश्यामा देवता, ऐं बीजं, स्वाहा शक्तिः ममाखिलाभीष्ट सिद्धये जपे विनियोगः ।

वाक्पूर्विकां रतिं मूर्ध्नि प्रीतिं मायादिकां हृदि ॥ १०४ ॥
पादयोर्विन्यसेन्मन्त्री कामपूर्वां मनोभवाम् ।
इच्छाशक्तिं ज्ञानशक्तिं क्रियाशक्तिं क्रमान्न्यसेत् ॥ १०५ ॥
वाङ्मायाकामबीजाद्यां मुखे कण्ठे शिवे तथा ।

लघुश्यामा के न्यास : वाग् बीज प्रारम्भ में लगाकर रति का शिर में, माया बीज सहित प्रीति का हृदय में, काम बीज सहित मनोभवा का पैरों में न्यास करना चाहिए ।

प्रारम्भ में क्रमशः वाग् बीज, मायाबीज एवं काम बीज लगाकर इच्छाशक्ति, ज्ञान शक्ति एवं क्रियाशक्ति का यथाक्रमेण मुख, कण्ठ एवं लिंग में न्यास करना चाहिए ।

टिप्पणी : रत्यादिन्यास-विधि :

ऐं रत्यै नमः—मूर्ध्नि ।	ऐं इच्छाशक्त्यै नमः--मुखे ।
ह्रीं प्रीत्यै नमः—हृदि ।	ह्रीं ज्ञानशक्त्यै नमः—कण्ठे ।
क्लीं मनोभवायै नमः--पादयो ।	क्लीं क्रियाशक्त्यै नमः—लिंगे ।

द्रावणं शोषणं बाणं तापनं मोहनाभिधम् ॥ १०६ ॥
उन्मादनं क्रमात्पञ्चबाणेशीबीजपूर्वकान् ।
कास्यहृद्गुह्यपादेषु न्यस्य कुर्य्यात्षडङ्गकम् ॥ १०७ ॥

ऐंबीजंस्वाहाशक्तः ॥ १०३ ॥ न्यासानाह । वागिति । ऐंरत्यैनमःमूर्ध्नि । ह्रींप्रीत्यै नमोहृदि ॥ १०४ ॥ क्लींमनोभवायैनमःपादयोः । इच्छेति । ऐं इच्छाशक्त्यैनमोमुखे । ह्रींज्ञानशक्त्यैनमःकण्ठे । क्लींक्रियाशक्त्यैनमोलिंगे ॥ १०५ ॥

बाणेशीबीजानि—द्रांद्रीं क्लींब्लूंपः इति । तत्पूर्वकान् । द्रावणाद्यान्बाणान् कास्य-हृद्गुह्यपादेन्यसेत् । द्रांद्रावणबाणायनमहृदयादि । केंशिरः । आस्यंमुखं ॥ १०६-१०७ ॥

बाणन्यास : बाणेशी के बीजों को प्रारम्भ में लगाकर द्रावण, शोषण, तापन, मोहन एवं उन्मादन—इन ५ बाणों का क्रमशः शिर, मुख, हृदय, गुप्तांग एवं पैरों में न्यास करना चाहिए।

टिप्पणी : बाणन्यास विधि :

द्रां द्रावणबाणाय नमः—शिरसि । ब्लूं मोहनबाणाय नमः—गुह्ये।
द्रीं शोषणबाणाय नमः—मुखे । सः उन्मादनबाणाय नमः—पादयोः।
क्लीं तापनबाणाय नमः—हृदि ।

रामाग्निगुणरामाङ्गनेत्रवर्णैर्मनूत्थितैः ।

षडङ्गन्यास : मन्त्र के ३, ३, ३, ३, ६ एवं २ वर्णों से षडङ्गन्यास करना चाहिए।

टिप्पणी : षडङ्गन्यास : विधि :

ऐं नमः हृदयाय नमः । मातंगि कवचाय हुम् ।
उच्छिष्ट शिरसे स्वाहा । सर्ववशंकरि नेत्रत्रयाय वौषट् ।
चांडालि शिखायै वषट् । स्वाहा अस्त्राय फट् ।

ङेनमोंताःकन्यकान्ता ब्राह्म्याद्या अष्टमातरः ॥ १०८ ॥
दीर्घस्वराद्यदीर्घक्षाद्यष्टकाद्याविलोमतः ।
विन्यस्य मूर्धि वामांसे वामपार्श्वेषु नाभितः ॥ १०९ ॥
दक्षपार्श्वे दक्षिणांसे ककुद्धृदययोरपि ॥

मातृकान्यास : प्रारम्भ में दीर्घस्वर फिर क्षवर्ग आदि वर्णों को विलोम क्रम से दीर्घ आकार सहित फिर ब्राह्मी आदि ८ मातृकाओं के आगे कन्यका का चतुर्थ्यन्त रूप और अन्त में 'नमः' लगाकर इनका शिर, वामस्कन्ध, वामपार्श्व नाभि, दक्ष पार्श्व, दक्षिण स्कन्ध, ककुद एवं हृदय में न्यास करना चाहिए।

षडङ्गमाह। रामेति। मातृकान्यासमाह। ङेइति। दीर्घस्वरा आद्यायस्पेदशंविलोमतो-दीर्घत्वादीनाष्टकमाद्यंयासांतामातरोमूर्द्धा देपन्यस्याः । तथाकीदृश्योमातरः । ङेनमोंताः-कन्यकान्ताः चतुर्थीनमोन्तंकन्यकापदमन्तेयासान्ताः । यथा—आंत्रांब्राह्मीकन्यकायैनमो-मूर्धि। ईंलांमाहेश्वरीकन्यकायैनमोवामांसे । ऊंह्रांकौमारीक०वामपार्श्वे। ऋसांवैष्ण-वीक०नाभौ। ॡंषांवाराहीक०दक्षपार्श्वे। ऐंशांइन्द्राणीक० दक्षांसे। औंवांचामुण्डाकन्य-कायै०ककुदि। अःलांमहालक्ष्मीकन्यकायै०हृदि। सिद्धिन्यासमाह। तारेति ॐऐंअणिमा-सिद्धिकन्यकायैनमोमूर्ध्नीत्यादि। सिद्धयइति। अनुपदवचयमाणाः ॥ १०८-११० ॥

टिप्पणी : मातृकान्यास विधि :

आं क्षां ब्राह्मी कन्यकायै नमः - मूर्ध्नि ।
ईं लां माहेश्वरी कन्यकायै नमः - वामांसे ।
ऊं हां कौमारी कन्यकायै नमः - वामपार्श्वे ।
ऋं सां वैष्णवी कन्यकायै नमः - नाभौ ।
ॡं षां वाराही कन्यकायै नमः - दक्षपार्श्वे ।
ऐं शां इन्द्राणी कन्यकायै नमः - दक्षांसे ।
औं वां चामुण्डा कन्यकायै नमः - ककुदि ।
अः लां महालक्ष्मी कन्यकायै नमः - हृदि ।

तारवागादिका अष्टौसिद्धयःकन्यकान्तिमाः ॥ ११० ॥
चतुर्थी नमसायुक्ता न्यस्याःकालिकचिल्लिषु ।
कण्ठे च हृदये नाभावाधारे लिङ्गमूर्द्धनि ॥ १११ ॥
अणिमामहिमा चापि लघिमागरिमेशिता ।
वशिता चाथ प्राकाम्यं प्राप्तिरित्यष्टसिद्धयः ॥ ११२ ॥

सिद्धिन्यास : प्रारम्भ में तार (ॐ) वाग्बीज (ऐं) लगाकर फिर आठ सिद्धियों एवं कन्यका का चतुर्थ्यन्त रूप और अन्त में 'नमः' लगाकर शिर, ललाट, भ्रू, हृदय, नाभि, आधार, लिंग एवं शिर पर न्यास करना चाहिए। अणिमा, महिमा लघिमा, गरिमा, ईशिता, वशिता, प्राकाम्य एवं प्राप्ति—ये आठ सिद्धियाँ होती हैं ।

टिप्पणी : सिद्धिन्यास विधि :

ॐ ऐं अणिमा - सिद्धि कन्यकायै नमः मूर्ध्नि ।
,, ,, महिमा - ,, ,, ,, ललाटे ।
,, ,, लघिमा - ,, ,, ,, भ्रुवोः ।
,, ,, गरिमा - ,, ,, ,, हृदि ।
,, ,, ईशिता - ,, ,, ,, नाभौ ।
,, ,, वशिता - ,, ,, ,, मूलाधारे ।
,, ,, प्राकाम्य - ,, ,, ,, लिंगे ।
ॐ ऐं प्राप्ति - सिद्धि कन्यकायै नमः मूर्ध्नि ।

अलिकंललाटम् चिल्लिभ्रूः ॥१११॥ अष्टसिद्धीराह । अणिमेत्यादि ॥११२॥

कामाद्या कन्यकाःप्रीता अष्टावप्सरसोन्यसेत् ।
के भाले नेत्रयोर्वक्त्रे कर्णयोःकाकुदेपिच ॥ ११३ ॥
उर्वशी मेनका रम्भा घृताची पुञ्जकस्थला ।
सुकेशी मंजुघोषा च महारङ्गवतीरिताः ॥ ११४ ॥

अप्सरान्यास : प्रारम्भ में काम (क्लीं) लगाकर ऊर्वशी आदि आठ अप्सराओं, जो कन्यका शब्द से प्रसन्न हैं, का शिर, ललाट, दोनों नेत्र, मुख, दोनों कान एवं ककुद में न्यास करना चाहिए। उर्वशी, मेनका, रम्भा, घृताची, पुंजकस्थला, सुकेशी, मंजुघोषा एवं महारंगवती ये ८ अप्सराएँ कही गयी हैं।

टिप्पणी : अप्सरान्यास विधि :

क्लीं उर्वशी - कन्यकायै नमः मूर्ध्नि ।
,, मेनका - ,, ,, ललाटे ।
,, रम्भा - ,, ,, दक्षिणनेत्रे ।
,, घृताची - ,, ,, वामनेत्रे ।
,, पुंजकस्थला- ,, ,, मुखे ।
,, सुकेशी - ,, ,, दक्षिणकर्णे ।
,, मंजुघोषा - ,, ,, वामकर्णे ।
क्लीं महारंगवती-कन्यकायै नमः–ककुदि ।

यक्षगन्धर्वसिद्धानां कन्यका नरनागयोः ।
विद्याधरःकिंपुरुषःपिशाचानामपीहताः ॥ ११५ ॥
अंसयोर्हृदये न्यस्येत्स्तनयोर्जठरे क्रमात् ।
गुह्येप्याधारदेशे च नमोन्ता मदनादिकाः ॥ ११६ ॥

कन्यान्यास : यक्ष, गन्धर्व, सिद्ध, नर, नाग, विद्याधर किंपुरुष एवं पिशाच की कन्या का, प्रारम्भ में मदन (क्लीं) तथा अन्त में 'नमः' लगाकर कन्धों, हृदय, दोनों स्तन, जठर, गुह्य एवं आधार में न्यास करना चाहिए।

अप्सरोन्यासमाह । कामाद्याइति । क्लींउर्वशीकन्यकायैनमोमूर्ध्निइत्यादि । नेत्रयोर्द्वे । कर्णयोर्द्वे । अप्सरसआह । उर्वशीति । कन्यन्यासमाह । यक्षेति । नमोन्तामदनादिकाः । कामबीजाद्य द्वितीयकन्यका अवधेयाः । अंसयोर्द्वेस्तनयोर्द्वेएकैककन्यत्र । क्लींपत्तनकन्यकायैनम इत्यत्र–क्लींकन्यवत्कन्यकायनमोवामांसे–इत्यादिप्रयोगः ॥ ११३-११६ ॥

टिप्पणी : कन्यान्यास विधि :

क्लीं यक्ष - कन्यकायै नमः - दक्षांसे ।
,, गन्धर्व - कन्यकायै नमः - वामांसे ।
,, सिद्ध - कन्यकायै नमः - हृदि ।
,, नर - कन्यकायै नमः - दक्षिणस्तने ।
,, नाग- कन्यकायै नमः - वामस्तने ।
,, विद्याधर - कन्यकायै नमः - जठरे ।
,, किंपुरुष - कन्यकायै नमः - गुह्ये ।
क्लीं पिशाच कन्यकायै नमः मूलाधारे ।

ताराद्यान्नमसायुक्तान्मूलवर्णान्सबिन्दुकान् ।
न्यसेत्सन्धिषु साग्रेषु करयोःपादयोरपि ॥ ११७ ॥

वर्णन्यास : प्रारम्भ में तार (ॐ) तथा बाद में 'नमः' लगाकर मूल मन्त्र के सानुस्वार वर्णों का हाथ एवं पैरों की सन्धियों तथा अग्रभाग में न्यास करना चाहिए ।

टिप्पणी : वर्णन्यास विधि :

ॐ ऐं नमः दक्षांसे । ॐ डां नमः वाममणिबन्धे । ॐ वं नमः दक्षपादांगुल्यग्रे ।
ॐ नं नमः दक्षकूर्परे । ॐ लिं नमः वामांगुलिमूले । ॐ शं नमः वामपादमूले ।
ॐ मं नमः दक्षमणिबन्धे । ॐ मां नमः वामांगुल्यग्रे । ॐ कं नमः वामजंघायाम् ।
ॐ उं नमः दक्षांगुलिमूले । ॐ तं नमः दक्षपादमूले । ॐ रिं नमः वामगुल्फे ।
ॐ च्छिं नमः दक्षांगुल्यग्रे । ॐ गिं नमः दक्ष जंघायां । ॐ स्वांनमः वामपादांगुलिमूले ।
ॐ ष्टं नमः वामांसे ॐ सं नमः दक्षगुल्फे । ॐ हां नमः वामपादांगुल्यग्रे ।
ॐ चां नमः वामकूर्परे । ॐ वं नमः दक्षपादांगुलिमूले ।

न्यासानेवंविधान्कृत्वा मातङ्गीमासनेस्मरेत् ।
सुरार्णवान्तरीपस्थरत्नमन्दिरमध्यगे ॥ ११८ ॥
माणिक्याभरणान्वितां स्मितमुखीं नीलोत्पलाभाम्बरां
रम्यालक्तकलिप्तपादकमलां नेत्रत्रयोल्लासिनीम् ।
वीणावादनतत्परां सुरनतां कीरच्छदश्यामलां मातङ्गीं
शशिशेखरामनुभजेत्ताम्बूलपूर्णाननाम् ॥ ११९ ॥

वर्णन्यासमाह । तारेति । प्रणवाद्यान् । नमोन्तान्सबिन्दुकान् । मन्त्रवर्णान् । करपादसन्धिषुसाग्रेषु न्यसेत् । ॐक्लींनमोदक्षांसे । ॐनमोदक्षकूर्परेइत्यादि ॥ ११७ ॥ सुरार्णवस्यांतरीपंद्वीपंतत्रयद्रत्नमन्दिरत्नमध्यगे सहासनेस्थितांध्यायेत् ॥ ११८ ॥ माणिक्येति कीरच्छदश्यामलांशुकपिच्छनीलाम् ॥ ११९-१२१ ॥

ध्यान : उक्त समस्त न्यासों को करने के बाद सुरासागर के मध्यवर्ती द्वीप पर रत्नमन्दिर के मध्य में सिंहासन पर विराजमान मातंगी का स्मरण करना चाहिए।

माणिक्य के आभूषणों से सुशोभित, मुस्कराती हुई, नीलकमल के सामान आभावाली, नीलवस्त्र धारण करनेवाली, आलता से सुशोभित चरण कमलवाली, प्रफुल्लित तीन नेत्रवाली, वीणावादन में तत्पर, देवताओं द्वारा वन्दित, तोता के पंख के समान नीलवर्ण, चन्द्रकला से सुशोभित मस्तक वाली, पान से भरे हुए मुँह वाली मातंगी का ध्यान करता हूँ।

लक्षं जपेन्मधूकोत्थैर्जुहुयादयुतं शुभैः।
मातङ्गीप्रोदिते पीठे लघुश्यामां प्रपूजयेत् ॥ १२० ॥

जपसंख्या एवं हवन : (इस मन्त्र का) १ लाख जप करना चाहिए। तथा महुए के पुष्प या फल से १० हजार आहुतियाँ देनी चाहिए। पूर्वोक्त मातंगीपीठ पर लघुश्यामा का पूजन करना चाहिए (देखिये तरङ्ग ७ श्लो० ७३-७४ की टिप्पणी)।

त्रिकोणपञ्चकोणाष्टदलषोडशपत्रके।
वेदद्वारधरागेहावृत्ते यन्त्रेविधानतः ॥ १२१ ॥

पूजन यन्त्र : त्रिकोण, पंचकोण, अष्टदल एवं षोडशदल चार द्वार वाले भूपुर से वेष्टित यन्त्र पर विधिवत लघुश्यामा का पूजन करना चाहिए।

टिप्पणी : लघुश्यामा पूजन यन्त्र (देखिये चित्र नं० १९)।

देव्या अग्रे पार्श्वयोश्चतिस्रोचेंद्रतिपूर्विकाः।
इच्छाज्ञानक्रियाशक्तीःकोणेष्वग्रादिषुत्रिषु ॥ १२२ ॥
बाणान्पञ्चसु कोणेषु केसरेष्वंगदेवताः।
ब्राह्म्याद्या अष्टपत्रेषु पत्राग्रेष्वणिमादिकाः ॥ १२३ ॥
यजेत्षोडशपत्रेपूर्वंश्याद्याःकन्यका अपि।
प्रयोगान्न्यासवत्कुर्य्याद्रित्यादीनां प्रपूजने ॥ १२४ ॥
भूगृहस्य चतुर्दिक्षुयोगिनीःपरिपूजयेत्।
गजाननार्सिंहमुखीगृध्रास्याकाकतुण्डिका ॥ १२५ ॥
उष्ट्रग्रीवाहयग्रीवावाराहीशरभानना।
उलूकिकाशिवारावामयूरीविकटानना ॥ १२६ ॥

रविपूर्विकारविप्रीतिमनोभवाः ॥१२२-१२३॥ उर्वश्याद्याश्चाष्टौ। कन्याश्चाष्टौयज्ञादीनाम् न्यासवत्प्रयोगान्। न्यासेयथाप्रयोगास्तथापूजायामपि॥१२४॥ योगिनीराह। गजाननेत्यादि ॥ १२५ ॥ प्रतिदिशषोडशयथार्थनाम्न्यःसर्वाः ॥ १२६-१२९ ॥

अष्टवज्राकोटराक्षीकुब्जाविकटलोचना ।
समर्चयेद्दिशि प्राच्यामेताःषोडशयोगिनीः ॥ १२७ ॥
शुष्कोदरीललज्जिह्वाश्वदंष्ट्रावानरानना ।
ऋक्षाक्षीकेकराक्षी च बृहत्तुण्डासुराप्रिया ॥ १२८ ॥
कपालहस्तारक्ताक्षीशुकीश्येनीकपोतिका ।
पाशहस्तादण्डहस्ताप्रचण्डेत्यपि षोडश ॥ १२९ ॥
पूज्या कीनाशदिग्भागे प्रतीच्यां चण्डविक्रमा ।
शिशुघ्नीपापहंत्री च कालीरुधिरपायिनी ॥ १३० ॥
वसाधयागर्भभक्षाशवहस्तान्त्रमालिनी ।
स्थूलकेशीबृहत्कुक्षिःसर्पास्याप्रेतवाहना ॥ १३१ ॥
दन्दशूककराक्रौञ्चीमृगशीर्षेति षोडश ।
सम्पूज्या उत्तरस्यां तु षोडशैव वृषानना ॥ १३२ ॥
व्यात्तास्याधूमनिःश्वासाव्योमैकचरणोर्द्धदृक् ।
तापनीशोषणीदृष्टिःकोटरीस्थूलनासिका ॥ १३३ ॥
विद्युत्प्रभाबलाकास्यामार्जारीकटपूतना ।
अट्टाट्टहासाकामाक्षेत्यर्चनीया अभीष्टदाः ॥ १३४ ॥
नश्यंति भूतशाकिन्य आसांनामश्रुतेरपि ।
भूमन्दिरस्य कोणेषु वह्न्यादिषु यजेत्क्रमात् ॥ १३५ ॥
स्वस्वमन्त्रेण बटुकं गणेशं क्षेत्रपालकम् ।
दुर्गां तद्बहिरिन्द्रादीन्वज्रादीनपि पूजयेत् ॥ १३६ ॥
भूगृहस्यचतुर्दिक्षु चतुर्वाद्यानि पूजयेत् ।
तत्तत्संज्ञं च विततं घनं च सुषिराभिधम् ॥ १३७ ॥
द्वादशावरणैरेवं लघुश्यामां यजेत्तुयः ।
सर्वासां सम्पदां पात्रमचिराज्जायते स ना ॥ १३८ ॥

आवरण पूजा : देवी के अग्रभाग एवं दोनों पार्श्व में रति, प्रीति एवं मनोभवा का पूजन करना चाहिए। त्रिकोण के अग्रकोण से प्रारम्भ कर इच्छाशक्ति, ज्ञानशक्ति एवं क्रियाशक्ति का पूजन करना चाहिए।

कीनाशदिग्भागेदक्षिणस्याम् ॥ १३०-१३५ ॥ स्वस्वमन्त्रेणेति । बटुकादीनांमन्त्राउक्ताः ॥ १३६-१३८ ॥

पंचकोण के ५ कोणों में द्रावण, शोषण, तापन, मोहन एवं उन्मादन इन पाँच बाणों का पूजन करना चाहिए। तथा केसरों में षडङ्ग पूजा करनी चाहिए।

अष्टदल में ब्राह्मी आदि का तथा दलों के अग्रभाग में अणिमा आदि सिद्धियों का पूजन करना चाहिए।

षोडश दल में उर्वशी आदि ८ अप्सराओं तथा यक्ष कन्या आदि ८ कन्याओं का पूजन करना चाहिए। रति आदि के पूजन में न्यास की तरह प्रयोग करना चाहिए।

भूपुर की चारों दिशाओं में योगिनियों का पूजन करना चाहिए। गजानना, सिंहमुखी, गृध्रास्या, काकतुंडिका, उष्ट्रग्रीवा, हयग्रीवा, वाराही, शरभानना, उलूकिका, शिवारावा, मयूरी, विकटानना, अष्टवक्त्रा, कोटराक्षी, कुब्जा एवं विकटलोचना—इन १६ योगिनियों का पूर्व दिशा में पूजन करना चाहिए। शुष्कोदरी, ललज्जिह्वा, श्वदंष्ट्रा, वानरानना, ऋक्षाक्षी, केकराक्षी, बृहत्तुण्डा, सुराप्रिया, कपालहस्ता, रक्ताक्षी, शुकी, श्येनी, कपोतिका, पाशहस्ता, दण्डहस्ता एवं प्रचण्डा—इन १६ योगिनियों का दक्षिण दिशा में पूजन करना चाहिए। चण्डविक्रमा, शिशुघ्नी, पापहंत्री, काली, रुधिरपायिनी, वसाधया, गर्भभक्षा, शवहस्ता, अंत्रमालिनी, स्थूलकेशी, बृहत्कुक्षि, सर्पास्या प्रेतवाहना, दंदशूककरा, क्रौंची एवं मृगशीर्षा—इन १६ योगिनियों का पश्चिम में पूजन करना चाहिए। वृषानना, व्यात्तास्या, धूमनिश्वासा, व्योमैकचरणा, ऊर्ध्वदृक्, तापनी, शोषणी, दृष्टि, कोटरी, स्थूलनासिका, विद्युत्प्रभा, बलाकास्या, मार्जारी, कटपूतना, अट्टाट्टहासा एवं कामाक्षी—इन १६ योगिनियों का उत्तर में पूजन करना चाहिए। भूत एवं शाकिनी आदि इनका नाम सुनते ही दूर भाग जाते हैं।

भूपुर के आग्नेय आदि कोणों में क्रमशः अपने अपने मन्त्रों से बटुक, गणेश, क्षेत्रपाल एवं दुर्गा का पूजन करना चाहिए।

भूपुर के बाहर इन्द्र आदि दिक्पाल एवं वज्र आदि आयुधों का भी पूजन करना चाहिए।

भूपुर की चारों दिशाओं में वीणा, वितत, घन एवं सुषिर इन चारों वाद्यों का पूजन करना चाहिए।

जो व्यक्ति इस प्रकार १२ आवरणों के साथ लघुश्यामा का पूजन करता है, वह शीघ्र ही सब सम्पत्तियों का आश्रय बन जाता है।

टिप्पणी : आवरण पूजा-विधि : श्लोक ११८-१९ में वर्णित देवी के स्वरूप का ध्यान कर मानसोपचार से पूजन कर मातंगी-पूजन के समान अर्घ्य स्थापन कर

तरंग ७ श्लोक ७३-७४ में बतलायी गयी रीति से पीठ पूजा कर इस पीठ पर ध्यान, आवाहन आदि उपचारों से पुष्प समर्पण पर्यन्त देवी का विधिवत पूजन करना चाहिए। इसके बाद देवी की आज्ञा लेकर आवरण-पूजा करनी चाहिए यथा :

प्रथम आवरण में देवी के आगे तथा दोनों ओर रति आदि का निम्नलिखित मन्त्रों से पूजन करना चाहिए, यथा :

ऐं रत्यै नमः-अग्रे। ह्रीं प्रीत्यै नमः-दक्षिणपार्श्वे। क्लीं मनोभवायै नमः-वामपार्श्वे।

द्वितीय आवरण में त्रिकोण में अग्रकोण से प्रारम्भ कर प्रदक्षिण क्रम से इच्छा-शक्ति, ज्ञानशक्ति एवं क्रियाशक्ति का पूजन करना चाहिए, यथा :

ऐं इच्छाशक्त्यै नमः। ह्रीं ज्ञानशक्त्यै नमः। क्लीं क्रियाशक्त्यै नमः।

तृतीय आवरण में पंचकोण में निम्नलिखित मन्त्रों से द्रावण आदि पाँच बाणों का पूजन करना चाहिए, यथा :

द्रां द्रावण बाणाय नमः। ब्लूं मोहन बाणाय नमः।
द्रीं शोषण ,, ,, । सः उन्मादन बाणाय नमः।
क्लीं तापन ,, ,, ।

चतुर्थ आवरण में केसरों में षडङ्ग पूजा करनी चाहिए, यथा :

ऐं नमः हृदयाय नमः। मातंगि कवचाय हुम्।
उच्छिष्ट शिरसे स्वाहा। सर्ववशंकरि नेत्रत्रयाय वौषट्।
चाण्डालि शिखायै वषट्। स्वाहा अस्त्राय फट्।

पंचम आवरण में अष्टदल में पूर्व आदि क्रम से निम्नलिखित मन्त्रों से ब्राह्मी आदि ८ मातृकाओं का पूजन करना चाहिए, यथा :

आं क्षां ब्राह्मी कन्यकायै नमः। लृं षां वाराही कन्यकायै नमः।
ईं लां माहेश्वरी- ,, ,, । ऐं शां इन्द्राणी- ,, ,, ।
ऊं हां कौमारी- ,, ,, । औं वां चामुण्डा- ,, ,, ।
ॠं सां वैष्णवी- ,, ,, । अः लां महालक्ष्मी कन्यकायै नमः।

षष्ठ आवरण मे अष्टदल के अग्र भागों में पूर्व आदि क्रम से निम्नलिखित मन्त्रों से अणिमा आदि आठ सिद्धियों का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ ऐं अणिमा सिद्धिकन्याकयै नमः।
,, ,, महिमा सिद्धिकन्यकायै ,,।
,, ,, लघिमा सिद्धिकन्यकायै ,,।
,, ,, गरिमा सिद्धिकन्यकायै ,,।

ॐ ऐं ईशिता सिद्धिकन्यकायै नमः ।
,, ,, वशिता सिद्धिकन्यकायै ,, ।
,, ,, प्राकाम्य सिद्धिकन्यकायै ,, ।
,, ,, प्राप्ति सिद्धिकन्यकायै ,, ।

सप्तम आवरण में षोडश दल में उर्वशी आदि ८ अप्सरा एवं यक्षकन्या आदि ८ कन्याओं का निम्नलिखित मन्त्रों से पूजन करना चाहिए, यथा :

क्लीं उर्वशी कन्यकायै नमः । क्लीं यक्ष कन्यकायै नमः ।
,, मेनका ,, ,, । ,, गंधर्व ,, ,, ।
,, रम्भा ,, ,, । ,, सिद्ध ,, ,, ।
,, घृताची ,, ,, । ,, नर ,, ,, ।
,, पुंजकस्थला ,, ,, । ,, नाग ,, ,, ।
,, सुकेशी ,, ,, । ,, विद्याधर ,, ,, ।
,, मंजुघोषा ,, ,, । ,, किंपुरुष ,, ,, ।
,, महारंगवती ,, ,, । क्लीं पिशाचकन्यकायै नमः ।

अष्टम आवरण में भूपुर की चारों दिशाओं में चारों ओर क्रमशः १६-१६ योगिनियों का उनके नाममन्त्रों से पूजन करना चाहिए, यथा :

भूपुरस्य पूर्वदिशि—

ॐ गजाननायै नमः ।
ॐ सिंहमुख्यै नमः ।
ॐ गृध्रास्यायै नमः ।
ॐ काकतुंडायै नमः ।
ॐ उष्ट्रग्रीवायै नमः ।
ॐ हयग्रीवायै नमः ।
ॐ वाराह्यै नमः ।
ॐ शरभाननायै नमः
ॐ उलूकिकायै नमः ।
ॐ शिवारावायै नमः ।
ॐ मयूर्यै नमः ।
ॐ विकटाननायै नमः ।
ॐ अष्टवक्रायै नमः ।
ॐ कौटराक्ष्यै नमः ।
ॐ कुब्जायै नमः ।
ॐ विकटलोचनायै नमः ।

भूपुरस्यदक्षिणदिशि—

ॐ शुष्कोदर्यै नमः ।
ॐ ललज्जिह्वायै नमः
ॐ श्वदंष्ट्रायै नमः ।
ॐ वानराननायै नमः ।
ॐ ऋक्षाक्ष्यै नमः ।
ॐ केकराक्ष्यै नमः ।
ॐ वृहत्तुण्डायै नमः ।
ॐ सुराप्रियायै नमः ।

ॐ कपालहस्तायै नमः ॐ कपोतिकायै नमः ।
ॐ रक्ताक्ष्यै नमः । ॐ पाशहस्तायै नमः ।
ॐ शुक्यै नमः । ॐ दण्डहस्तायै नमः ।
ॐ श्येन्यै नमः । ॐ प्रचण्डायै नमः ।

भूपुरस्य पश्चिमदिशि—

ॐ चण्डविक्रमायै नमः । ॐ अंत्रमालिन्यै नमः ।
ॐ शिशुघ्न्यै नमः । ॐ स्थूलकेश्यै नमः ।
ॐ पापहंत्र्यै नमः । ॐ बृहत्कुक्ष्यै नमः ।
ॐ काल्यै नमः । ॐ सर्पास्यायै नमः ।
ॐ रुधिरपायिन्यै नमः । ॐ प्रेतवाहनायै नमः ।
ॐ वसाधयायै नमः । ॐ दंदशूकरायै नमः ।
ॐ गर्भभक्षायै नमः । ॐ क्रौञ्च्यै नमः ।
ॐ शवहस्तायै नमः । ॐ मृगशीर्षायै नमः ।

भूपुरस्योत्तरदिशि—

ॐ वृषाननायै नमः । ॐ कोटर्यै नमः ।
ॐ व्यात्तास्यायै नमः । ॐ स्थूलनासिकायै नमः
ॐ घूमनिश्वासायै नमः । ॐ विद्युत्प्रभायै नमः ।
ॐ व्योमकचरणायै नमः । ॐ बलाकास्यायै नमः ।
ॐ उर्ध्वदृशे नमः । ॐ मार्जार्यै नमः ।
ॐ तापिन्यै नमः । ॐ कटपूनायै नमः ।
ॐ शोषिण्यै नमः । ॐ अट्टाट्टहासायै नमः ।
ॐ दृष्टचै नमः । ॐ कामाक्ष्यै नमः ।

नवम आवरण में भूपुर के चारों ओर आग्नेय आदि कोणों में अपने अपने मन्त्रों से बटुकगणेश, क्षेत्रपाल एवं दुर्गा का पूजन करना चाहिए । यथा :

ॐ वं बटुकाय नमः । ॐ क्षं क्षेत्रपालाय नमः ।
ॐ गं गणपतये नमः । ॐ यं योगिनीभ्यो नमः ।

दशम आवरण में भूपुर के बाहर अपनी अपनी दिशाओं में इन्द्र आदि दिक्पालों का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ इन्द्राय नमः - पूर्वे । ॐ यमाय नमः - दक्षिणे ।
ॐ अग्नये नमः - आग्नेये । ॐ निर्ऋतये नमः - नैर्ऋत्ये ।

ॐ वरुणाय नमः - पश्चिमे । ॐ ईशानाय नमः - ईशान्ये ।
ॐ वायवे नमः - वायव्ये । ॐ ब्रह्मणे नमः - पूर्वेशानयोर्मध्ये ।
ॐ सोमाय नमः - उत्तरे । ॐ अनन्ताय नमः - नैर्ऋत्यपश्चिमयोर्मध्ये ।

एकादश आवरण में भूपुर के बाहर पूर्व आदि दिशाओं में दिक्पालों के समीप उनके अपने वज्र आदि आयुधों का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ वज्राय नमः पूर्वे । ॐ अंकुशाय नमः वायव्ये ।
ॐ शक्तये नमः आग्नेये । ॐ गदायै नमः उत्तरे ।
ॐ दण्डाय नमः दक्षिणे । ॐ त्रिशूलाय नमः ईशान्ये ।
ॐ खड्गाय नमः नैर्ऋत्ये । ॐ पद्माय नमः पूर्वेशानयोर्मध्ये ।
ॐ पाशाय नमः पश्चिमे । ॐ चक्राय नमः नैर्ऋत्यपश्चिमयोर्मध्ये ।

और १२ वें आवरण में भूपुर के बाहर पूर्व आदि शिशाओं में अपने अपने नाम-मन्त्रों से वीणा आदि वाद्यों की पूजा करनी चाहिए, यथा :

ॐ वीणायै नमः - पूर्वे । ॐ धनाय नमः - पश्चिमे ।
ॐ विततायै नमः - दक्षिणे । ॐ सुषिराय नमः - उत्तरे ।

इस प्रकार आवरण पूजा कर धूप दीप आदि उपचारों से देवी का पूजन कर यथाशक्ति मूलमन्त्र का जप करना चाहिए ।

वाणीशुकप्रियाङेन्ता विद्महे मीनकेतनः ।
कामेश्वरीं धीमहीतितन्नःश्यामाप्रचोदयात् ॥ १३९ ॥
एषोदिता तु मातङ्गीगायत्री सर्वसिद्धिदा ।
अनया यागवस्तूनि प्रोक्षेत्तस्यास्समर्चने ॥ १४० ॥

मातंगी गायत्री : वाणी (ऐं) चतुर्थ्यन्त शुकप्रिया (शुकप्रियायै) फिर 'विद्महे' फिर मीन केतन (क्लीं) और फिर 'कामेश्वरीं धीमहि तन्नः श्यामा प्रचोदयात्' लगाने से मातंगी गायत्री का मन्त्र बनता है । यह गायत्री सब प्रकार की सिद्धियाँ देती है ।

टिप्पणी : मातंगी गायत्री का उद्धार : ऐं शुकप्रियायै विद्महे क्लीं कामेश्वरीं धीमहि । तन्नःश्यामा प्रचोदयात् ॥

तद्गायत्रीमाह । वाणीति । वाणीऐं । शुकप्रियाङेता शुकप्रियायै । मीनकेतनःक्लीं । स्वरूपशेषम् ॥१३९-१४४॥ इति श्रीमन्त्रमहोदधिनौकायांबालाश्यामानिरूपणमष्टमस्तरंगः ।

मातङ्गीमन्त्रसम्प्रोक्ताःप्रयोगा अत्र कीर्तिताः ।
राजानोराजपुत्राश्चसुहृशो मदमंथराः ॥ १४१ ॥
दासामनोवचःकायैर्भवन्त्यस्या उपासितुः ।
शाकिनीप्रेतभूताश्चधर्षितुं तं न शक्नुयुः ॥ १४२ ॥

काम्यप्रयोग : मतंगी मन्त्र के सन्दर्भ में बतलाये गये काम्यप्रयोग (देखिये–तरङ्ग ७ श्लोक ८३-८१) इस मन्त्र से करने चाहिए ।

राजा, राजपुत्र एवं मदविह्वला स्त्री आदि मन, वचन एवं शरीर से मातंगी (लघुश्यामा) के उपासक के दास हो जाते हैं । तथा शाकिनी प्रेत एवं भूत आदि उसके प्रभाव को सहन नहीं कर पाते ।

भूरिणाकिमिहोक्तेन देवीयमखिलेष्टदा ।
यन्मनुस्मरणादेव नरो देवोपमो भवेत् ॥ १४३ ॥

विशेष कहने की कोई आवश्यकता नहीं है--यह देवी समस्त अभीष्टों को देने वाली है । इसके मन्त्र के स्मरण मात्र से मनुष्य देवतुल्य हो जाता है ।

देव्याउपासकैः पुंभिः स्त्रियोनिंद्या न जातुचित् ।
देवीवन्माननीयास्ता मनोभीष्टमभीप्सुभिः ॥ १४४ ॥

अपनी कामनाओं की पूर्ति चाहने वाले देवी के उपासकों को स्त्रियों की कभी भी निन्दा नहीं करनी चाहिए तथा उनका देवी के समान सम्मान करना चाहिए ।

इति श्री शुकदेव चतुर्वेदि विरचितायां सटिप्पण्यां मन्त्रमहोदधेः
मोहिनी व्याख्यायां अष्टमस्तरङ्गः ।

नवम तरङ्ग

अन्नपूर्णेश्वरीमन्त्रं वक्ष्येभीष्टप्रदायकम् ।
कुबेरोयामुपास्याशुलब्धवान्निधिनाथताम् ॥ १ ॥
शम्भोःसख्यं दिगीशत्वं कैलासाधीशतामपि ।
वेदादिर्गिरिजापद्मामन्मथोहृदयंभग ॥ २ ॥
वतिमाहेश्वरिप्रान्तेन्नपूर्णेदहनाङ्गना ।
प्रोक्ता विंशतिवर्णेयं विद्यास्याद्द्रुहिणोमुनिः ॥ ३ ॥
कृतिश्छन्दोन्नपूर्णेशी देवता परिकीर्तिता ।
षड्दीर्घाढ्येन हृल्लेखाबीजेन स्यात्षडङ्गकम् ॥ ४ ॥

अन्नपूर्णा का मन्त्र : अब अभीष्टफल दायक अन्नपूर्णेश्वरी का मन्त्र बतलाता हूँ, जिसे जानकर कुबेर निधियों का स्वामी, शम्भु का सखा, दिक्पाल एवं कैलास का अधीश बन गया।

वेदादि (ॐ) गिरिजा (ह्रीं) पद्मा (श्रीं) मन्मथ (क्लीं) हृदय (नमः) फिर 'भगवति माहेश्वरि' के बाद 'अन्नपूर्णे' और अन्त में दहनाङ्गना (स्वाहा) लगाने से यह २० अक्षर वाला मन्त्र बनता है।

इस मन्त्र का द्रुहिण (ब्रह्मा) ऋषि है, कृति छन्द है तथा अन्नपूर्णशो देवता बतलाया गया है।

षड्दीर्घसहित हृल्लेखाबीज से षडङ्गन्यास करना चाहिए।

टिप्पणी : मन्त्रोद्धार : ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं भगवति माहेश्वरि अन्नपूर्णे स्वाहा।

अन्नपूर्णेश्वरीमन्त्रवक्तृप्रतिजानीते । फलंकथयन् मन्त्रमुद्धरति । वेदादिरिति । वेदादिः-प्रणवः । गिरिजाह्रीं । पद्माश्रीं । मन्मथःक्लीं । हृदयंनमः । भगवतिमाहेश्वरिअन्नपूर्णेस्व-रूपम् । दहनांङ्गनास्वहा । द्रुहिणोब्रह्मा ॥ १-५ ॥

विनियोग : अस्य श्री अन्नपूर्णा मन्त्रस्य, द्रुहिण ऋषिः कृतिश्छन्दः, अन्नपूर्णेशी देवता, ममाभीष्टसिद्धये जपे विनियोगः ।

षडङ्गन्यास :

ह्रां हृदयाय नमः । ह्रैं कवचाय हुम् ।
ह्रीं शिरसे स्वाहा । ह्रौं नेत्रत्रयाय वौषट् ।
ह्रूं शिखाये वषट् । ह्रः अस्त्राय फट् ।

मुखनासाक्षिकर्णान्धुगुदेषु नवसु न्यसेत् ।
पदानिनवतद्वर्णसंख्येदानीमुदीर्य्यते ॥ ५ ॥
भूमिचन्द्रधरैकाक्षिवेदाब्धियुगबाहुभिः ।
पदसंख्यामितैर्वर्णैस्ततोध्यायेत्सुरेश्वरीम् ॥ ६ ॥

नवपदन्यास : मुख, दोनों नासिका, दोनों नेत्र, दोनों कान अन्धु एवं गुदा--इन ९ अंगों में मन्त्र के ९ पदों का न्यास करना चाहिए ।

अब ९ पदों की वर्ण संख्या बतलाते हैं—मन्त्र के १, १, १, १, २, ४, ४, ४ एवं २ वर्ण क्रमशः ९ पद होते हैं । इसके बाद देवेश्वरी का ध्यान करना चाहिए ।

टिप्पणी : नवपदन्यासविधि :

ॐ नमः - मुखे । भगवति नमः - दक्षकर्णे ।
ह्रीं नमः - दक्षनासिकायाम् । माहेश्वरि नमः - वामकर्णे ।
श्रीं नमः - वाम नासिकायाम् । अन्नपूर्णे नमः - अन्धौ ।
क्लीं नमः - दक्षनेत्रे । स्वाहा नमः - आधारे ।
नमः नमः वामनेत्रे ।

तप्तस्वर्णनिभा शशांकमुकुटा रत्नप्रभाभासुरा नाना-
वस्त्रविराजितात्रिनयना भूमीरमाभ्यां युता ।
दर्वीहाटकभाजनं च दधतीरम्योच्चपीनस्तनी नृत्यंतं
शिवमाकलय्यमुदिताध्येयान्नपूर्णेश्वरी ॥ ७ ॥

ध्यान : तप्त सोने के समान कान्तिवाली, चन्द्रमा का मुकुट धारण करनेवाली, रत्नकिरणों से सुशोभित, नानावस्त्रों से अलंकृत, तीन नेत्रवाली, भूमि एवं रमा के साथ रहनेवाली, दोनों हाथों में दर्वी एवं स्वर्णपात्र रखनेवाली रमणीय एवं उन्नत स्तनवाली, नृत्य करते शिव के आलिंगन से मुदित अन्नपूर्णेश्वरी का ध्यान करना चाहिए ।

भूमीत्यादि : द्वर्णसंख्या ॥ ६ ॥

लक्षं जपोयुतं होमश्चरुणाघृतसंयुतः ।
जयादिनवशक्त्याढ्ये पीठे पूजासमीरिता ॥ ८ ॥

जपसंख्या, हवन एवं पीठ पूजा : इस मन्त्र का १ लाख जप करना चाहिए। तथा घृत मिश्रित चरु से १० हजार आहुतियाँ देनी चाहिए। जया आदि ९ शक्तियों के साथ पूर्वोक्त पीठ पर उनकी पूजा करनी चाहिए।

त्रिकोणवेदपत्राष्टपत्रषोडशपत्रके ।
भूपुरेणयुते यन्त्रे प्रदद्यान्माययासनम् ॥ ९ ॥

पूजन यन्त्र : त्रिकोण, चतुर्दल, अष्टदल, षोडशदल एवं भूपुर सहित निर्मित यन्त्र पर माया बीज से आसन देना चाहिए।

टिप्पणी : अन्नपूर्णा पूजन यन्त्र (देखिये चित्र नं० २०)।

पीठपूजा विधि : श्लोक संख्या ७ में वर्णित देवी के स्वरूप का ध्यान कर मानसोपचार से पूजन कर शंख-स्थापन करना चाहिए। फिर सामान्य पूजा पद्धति के क्रम से 'ॐ आधार शक्तये नमः' से ह्रीं ज्ञानात्मने नमः' मन्त्रों से पीठ देवताओं का पूजन कर फिर पूर्व आदि दिशाओं एवं मध्य में निम्नलिखित मन्त्रों से जया आदि ९ पीठ शक्तियों का पूजन करना चाहिए, यथा :

पूर्वादिक्रमेण केसरेषु—

ॐ जयायै नमः ।
ॐ विजयायै नमः ।
ॐ अजितायै नमः ।
ॐ अपराजितायै नमः ।
ॐ विलासिन्यै नमः ।
ॐ दोग्ध्र्यै नमः ।
ॐ अघोरायै नमः ।
ॐ मङ्गलायै नमः ।

मध्ये— ॐ नित्यायै नमः ।

तत्पश्चात् मूलमन्त्र से मूर्ति कल्पित कर 'ह्रीं सर्वशक्ति कमलासनाय नमः' से देवी को आसन देकर फिर विधिवत ध्यान एवं आवाहन आदि उपचारों से पञ्च-पुष्पाञ्जलि समर्पण पर्यन्त देवी का पूजन कर आवरण पूजा करनी चाहिए।

अग्न्यादिकोणत्रितये शिववाराहमाधवान् ।
अर्चयेत्स्वस्वमन्त्रैस्तुप्रोच्यन्तेमनवस्तु ते ॥ १० ॥
प्रणवो मनुचन्द्राढ्यं गगनं हृदयंशिवा ।

ध्यानमाह । दर्वीदक्षे स्वर्णपात्रंवामे ॥ ७-१० ॥

मारुतःशिवमन्त्रोयं सप्तार्णःशिवपूजने ॥ ११ ॥
तारं नमोभगवते वराहार्घीशयुग्वसुः ।
पायभूर्भुवरन्तेस्वोथशूरःकामिकाचये ॥ १२ ॥
भूपतित्वंचमेदेहिददापयशुचिप्रिया ।
त्रयस्त्रिंशद्वर्णमन्त्रःप्रोक्तोवाराहपूजने ॥ १३ ॥
प्रणवो हृदयंनारायणायवसुवर्णकः ।
नारायणार्चने मन्त्रः षडङ्गानि ततोर्चयेत् ॥ १४ ॥

आवरणपूजा : आग्नेय आदि ३ कोणों में शिव, वराह एवं नारायण का अपने अपने मन्त्र से पूजन करना चाहिए । उन मन्त्रों को बतलाते हैं—प्रणव (ॐ) मनु-चन्द्राढ्य गगन (हौं) हृदय (नमः) फिर 'शिवा' एवं मारुत (य) लगाने से ७ अक्षर का शिवपूजन का मन्त्र बनता है ।

तार (ॐ) फिर 'नमो भगवते वराह' फिर अर्धीशयुग्वसु (रु) फिर 'पाय भूर्भुवः स्वः' फिर शूर (प) कामिका (त) फिर 'ये भूपतित्त्वं देहि ददापय' एवं अन्त में शुचिप्रिया (स्वाहा) लगाने से ३३ अक्षर का वराह पूजन का मन्त्र बनता है ।

प्रणव (ॐ) हृदय (नमः) और फिर 'नारायणाय' लगाने से ८ अक्षर का नारायण की पूजा का मन्त्र बनता है ।

इन तीनों का पूजन करके षडङ्गपूजा करनी चाहिए ।

टिप्पणी : शिव पूजन मन्त्र : ॐ हौं नमः शिवाय ।

वराह पूजन मन्त्र : ॐ नमो भगवते वराहरूपाय भूर्भुवस्वः पतये भूपतित्त्वं मे देहि ददापय स्वाहा ।

नारायण पूजन मन्त्र : ॐ नमो नारायणाय ।

धरां वामे स्वमनुना दक्षभागे श्रियं तथा ।
अन्नंमह्यन्नमित्युक्त्वा मेदेह्यन्नाधिपार्णका ॥ १५ ॥
तयेममान्नंप्राणान्ते दापयानलसुन्दरी ।
द्वाविंशत्यक्षरो मन्त्रो भूमोष्टौ भूमिसम्पुटः ॥ १६ ॥

शिवमन्त्रमाह । प्रणव इति । गगनंहृदारः । मनुचन्द्राढ्यमूऔबिन्दुयुतंहौंहृदयंनमः । शिवास्वरूपम् । मारुतोयः ॥ ११ ॥ वराहमन्त्रमाह । तारइति । तारॐ । नमोभगवते-वराहस्वरूपम् । अर्धीशयुग्वसुः । ऊयुतोरः । रूपायभूर्भुवः स्वःस्वरूपम् । शूरःपः । कामिका । तयेभूपतित्वमेदेहिददापयस्वरूपम् । शुचिप्रियास्वाहा ॥ १२-१३ ॥ नारायण-मन्त्रमाह । प्रणवइति । हृदयंनमः । नमःनारायणायस्वरूपम् । वसुवर्णोऽष्टार्णः ॥ १४ ॥

धराश्रियोमन्त्रमाह । अन्नमिति । अन्नंमह्यन्नंमेदेह्यन्नाधिपतयेममान्नप्रदापयस्वरूपम् । अनलसुन्दरीस्वाहा । अयंमन्त्रोभूमोष्टौ भूमिपूजनेभूमिबीजेनसम्पुटः ॥ १५-१६ ॥

लक्ष्मीपूटस्तत्पूजायां स्मृतिर्लमनुचन्द्रयुक् ।
भुवोबीजंवह्निशान्तिबिन्दुयुक्तोवकःश्रियः ॥ १७ ॥

वामभाग में अपने मन्त्र से भूमि का तथा दक्षिण भाग में अपने मन्त्र से श्री (लक्ष्मी) का (पूजन करना चाहिए) ।

'अन्नं मह्यन्न' कहकर फिर 'मेदेह्यन्नाधिप' और 'तये ममान्नंप्र' इसके बाद 'दापय' एवं अनल सुन्दरी (स्वाहा) लगाकर भूमिबीज से संपुटित यह २२ अक्षर का भूमि पूजन का मन्त्र बनता है । लक्ष्मी बीज से संपुटित यह मन्त्र श्रीपूजा में प्रयुक्त होता है ।

'ल' चन्द्र (अनुस्वार) एवं मनु (औ) सहित स्मृति (ग) अर्थात् 'ग्लौं' यह भूमि का बीज होता है ।

वह्नि (र) शान्ति (ई) बिन्दु सहित वक (श) अर्थात् 'श्रीं' यह श्रीबीज होता है ।

टिप्पणी : भूमि पूजन मन्त्र : ग्लौं अन्नं मह्यन्नं मे देह्यन्नाधिपतये ममान्नं प्रदापय स्वाहा ग्लौं ।

श्रीपूजन मन्त्र : श्रीं अन्नं मह्यन्नं मे देह्यन्नाधिपतये ममान्नं प्रदापय स्वाहा श्रीं ।

मन्त्रादिस्थचतुर्बीजपूर्विकाःपरिपूजयेत् ।
शक्तीश्चतस्रोवेदास्त्रेपरा च भुवनेश्वरी ॥ १८ ॥
कमलासुभगाचेति ब्राह्म्याद्या अष्टपत्रगाः ।
षोडशारेऽमृता चैव मानदातुष्टिपुष्टयः ॥ १९ ॥
प्रीतीरतिःह्रींश्रीश्चापिस्वधास्वाहादशम्यथ ।
ज्योत्स्नाहैमवतीछायापूर्णिमाःसहनित्यया ॥ २० ॥
अमावास्येति सम्पूज्या मन्त्रशेषार्णपूर्विकाः ।
भूपुरे लोकपालाःस्युस्तदस्त्राणि तदग्रतः ॥ २१ ॥

चतुर्दल में मूलमन्त्र के प्रारम्भिक चार बीजों के साथ परा, भुवनेश्वरी, कमला एवं सुभगा इन चार शक्तियों का पूजन करना चाहिए ।

अष्टदल में ब्राह्मी आदि आठ मातृकाओं का पूजन करना चाहिए ।

श्रीपूजायांश्रीबीजेनसम्पुटितः । भूबीजमाह । स्मृतिरिति । स्मृतिर्गः । लमनुचन्द्रयुक् । लऔं । बिन्दुयुतः । ग्लौं । एतद्भुवोबीजम् । श्रीबीजमाह । वह्नीति । रेफई । बिन्दुयुतोवकः शः । श्रींइतिश्रियोबीजम् ॥ १७ ॥

वेदास्त्रे चतुरस्त्रे मन्त्राद्यचतुर्बीजाद्याश्चतस्रःशक्तीःपूजयेत् । ताएवाह । परेति । ॐ परायैनमः । ह्रीं भुवनेश्वर्यै ॥ १८ ॥ श्रींकमलायै । क्लींसुभगायै । मन्त्रस्यशेषायेवर्णा.चतुर्बीजव्यतिरिक्ताः । तत्पूर्विकाअमृताद्याः षोडशदलेपूज्याः । अंअमृतायैनमः । मांमानदायैइत्यादि ॥ १९-२१ ॥

षोडशदल में मूलमन्त्र के शेष वर्णों के साथ अमृता, मानदा, तुष्टि, पुष्टि, प्रीती, रति ह्री, श्री, स्वधा, स्वाहा, ज्योत्स्ना, हैमवती, छाया, पूर्णिमा, नित्या एवं अमावस्या का पूजन करना चाहिए।

भूपुर में लोकपालों का तथा उसके बाहर उनके अस्त्रों का पूजन करना चाहिए।

टिप्पणी : आवरण पूजा विधि : प्रथम आवरण में त्रिकोणाकार कार्णिका में आग्नेय आदि कोणों के क्रम से निम्नलिखित मन्त्रों से शिव, वराह एवं नारायण का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ ह्रौं नमः शिवाय—आग्नेये।

ॐ नमो भगवते वराहरूपाय भूर्भुवस्वःपतये भूपतित्वं मे देहि ददापय स्वाहा—अग्रे।

ॐ नमो नारायणाय—ईशाने।

द्वितीय आवरण में केसरों में निम्नलिखित मन्त्रों से षडङ्गपूजा करनी चाहिए, यथा :

ॐ ह्रां हृदयाय नमः। ॐ ह्रैं कवचाय हुम्।
ॐ ह्रीं शिरसे स्वाहा। ॐ ह्रौं नेत्रत्रयाय वौषट्।
ॐ ह्रूं शिखायै वषट्। ॐ ह्रः अस्त्राय फट्।

फिर 'ग्लौं अन्नं मह्यन्नं मे देह्यन्नाधिपतये ममान्नं प्रदापय स्वाहा ग्लौं'—इस मन्त्र से देवी के वाम भाग में भूमि का पूजना चाहिए। तथा 'श्रीं अन्नं मह्यन्नं मे देह्यन्नाधिपतये ममान्नं प्रदापय स्वाहा श्रीं'—इस मन्त्र से देवी के दक्षिण भाग में श्री का पूजन करना चाहिए।

तृतीय आवरण में चतुर्दल में निम्नलिखित मन्त्रों से पूर्व आदि दिशाओं में परा आदि शक्तियों का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ परायै नमः। श्रीं कमलायै नमः।
ह्रीं भुवनेश्वर्यै नमः। क्लीं सुभगायै नमः।

चतुर्थ आवरण में अष्टदल में पूर्व आदि दिशाओं के दलों पर निम्नलिखित मन्त्रों से ब्राह्मी आदि ८ मातृकाओं का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ ब्राह्म्यै नमः। ॐ वाराह्यै नमः।
ॐ माहेश्वर्यै नमः। ॐ इन्द्राण्यै नमः।
ॐ कौमार्यै नमः। ॐ चामुण्डायै नमः।
ॐ वैष्णव्यै नमः। ॐ महालक्ष्म्यै नमः।

पञ्चम आवरण में, षोडशदल में, प्रदक्षिण क्रम से निम्नलिखित मन्त्रों से अमृता आदि १६ शक्तियों का पूजन करना चाहिए, यथा :

नं अमृतायै अन्नपूर्णायै	नमः ।	श्वं स्वधायै अन्नपूर्णायै	नमः ।
मों मानदायै ,,	,,	रिं स्वाहायै ,,	,, ।
भं तुष्टये ,,	,,	अं ज्योत्स्नायै ,,	,, ।
गं पुष्ट्यै ,,	,,	न्नं हैमवत्यै ,,	,, ।
व प्रीत्यै ,,	,,	पूं छायायै ,,	,, ।
तिं रत्यै ,,	,,	र्णें पूर्णिमायै ,,	,, ।
मां ह्रियै ,,	,,	स्वां नित्यायै ,,	,, ।
हें श्रियै ,,	,,	हां अमावस्यायै ,,	नमः ।

षष्ठ आवरण में भूपुर में अपनी-अपनी दिशाओं में निम्नलिखित मन्त्रों से इन्द्र आदि दिक्पालों का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ लां इन्द्राय देवाधिपतये सायुधाय सवाहनाय सपरिवाराय नमः ।
ॐ रां अग्नये तेजोधिपतये ,, ,, ,, नमः ।
ॐ यां यमाय प्रेताधिपतये ,, ,, ,, नमः ।
ॐ क्षां निर्ऋतये रक्षोधिपतये ,, ,, ,, नमः ।
ॐ वां वरुणाय जलाधिपतये ,, ,, ,, नमः ।
ॐ यां वायवे प्राणाधिपतये ,, ,, ,, नमः ।
ॐ सं सोमाय ताराधिपतये ,, ,, ,, नमः ।
ॐ हां ईशानाय गणाधिपतये ,, ,, ,, नमः ।
ॐ आं ब्रह्मणे प्रजाधिपतये ,, ,, ,, नमः ।
ह्रीं अनन्ताय नागाधिपतये ,, ,, ,, नमः ।

और फिर सप्तम आवरण में भूपुर के बाहर अपनी-अपनी दिशाओं में निम्नलिखित मन्त्रों से वज्र आदि आयुधों का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ वं वज्राय नमः ।	ॐ अं अंकुशाय नमः ।
ॐ शं शक्तये नमः ।	ॐ गं गदायै नमः ।
ॐ दं दण्डाय नमः ।	ॐ शूं शूलाय नमः ।
ॐ खं खड्गाय नमः ।	ॐ पं पद्माय नमः ।
ॐ पां पाशाय नमः ।	ॐ चं चक्राय नमः ।

इस प्रकार आवरण पूजा कर धूप, दीप आदि उपचारों से विधिवत देवी का पूजन कर यथाशक्ति जप करना चाहिए ।

इत्थंजपादिभिःसिद्धे मन्त्रेस्मिन्धनसञ्चयैः ।
कुबेरसदृशो मन्त्री जायते जनवन्दितः ॥ २२ ॥

इस प्रकार जप आदि से मन्त्र के सिद्ध हो जाने पर साधक कुबेर के समान धनवान एवं लोकमान्य बन जाता है ।

अयं रमाकामबीजरहितोष्टादशाक्षरः ।
द्विनेत्रवेदवेदाब्धिनेत्रार्णैरङ्गमीरितम् ॥ २३ ॥

अन्नपूर्णा के अन्य मन्त्र : रमा एवं काम बीज रहित पूर्वोक्त मन्त्र ही १८ अक्षर वाला अन्य मन्त्र बन जाता है । इस मन्त्र के २, २, ४, ४, ४ एवं ४ अक्षरों से षडङ्गन्यास करना चाहिए ।

टिप्पणी : मन्त्रोद्धार : ॐ ह्रीं नमः भगवति माहेश्वरि अन्नपूर्णे स्वाहा ।

षडङ्गन्यास :

ॐ ह्रीं हृदयाय नमः ।	माहेश्वरि कवचाय हुम् ।
नमः शिरसे स्वाहा ।	अन्नपूर्णे नेत्रत्रयाय वौषट् ।
भगवति शिखायै वषट् ।	स्वाहा अस्त्राय फट् ।

इस मन्त्र का विनियोग एवं ध्यान पूर्वमन्त्र के समान है ।

पूर्वोक्तमन्त्रे मन्वर्णान्ममाभिमतमुच्चरेत् ।
अन्नंदेहियुगंचापि भवेदेकगुणार्णवान् ॥ २४ ॥
युगांगवेदसप्ताब्धिषडर्णैरङ्गकल्पनम् ।

अन्य मन्त्र : पूर्वोक्त विंशत्यक्षर मन्त्र में १४ अक्षरों के बाद 'ममाभिमतमन्नं देहि देहि' लगाने से ३१ अक्षर का मन्त्र बनता है । इस मन्त्र के ४, ६, ४, ७, ४ एवं ६ अक्षरों से षडङ्गन्यास करना चाहिए ।

टिप्पणी : मन्त्रोद्धार : ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं नमः भगवति माहेश्वरि ममाभिमतमन्नं देहि देहि अन्नपूर्णे स्वाहा ।

षडङ्गन्यास :

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं हृदयाय नमः ।	ममाभिमतमन्नं कवचाय हुम् ।
नमः भगवति शिरसे स्वाहा ।	देहि देहि नेत्रत्रयाय वौषट् ।
माहेश्वरि शिखायै वषट् ।	अन्नपूर्णे स्वाहा अस्त्राय फट् ।

इस मन्त्र का विनियोग एवं ध्यान पूर्ववत है ।

मन्त्रान्तरमाह । अयमिति । अयंविंशत्यर्णः । श्रीकामहीनः । षडङ्गमाह । द्वीति ॥२२-२३॥ मन्त्रान्तरमाह । पूर्वोक्तेति । विंशत्यर्णेमन्वर्णाच्चतुर्दशाक्षरात् । माहेश्वरीत्यन्ते । ममाभिमतमन्नंदेहिदेहीतिवर्णानुच्चारयेत् । अन्नपूर्णेस्वाहेत्यन्तेऽस्त्येव । ततएकगुणार्णवानेकत्रिंशदर्णः ॥ २४ ॥

प्रणवःकमलाशक्तिर्नमोभगवतीति च ॥ २५ ॥
प्रसन्नपारिजातेश्वर्यन्नपूर्णेनलाङ्गना ।
चतुर्विंशतिवर्णात्मा मन्त्रःसर्वेष्टसाधकः ॥ २६ ॥
रामाक्षिवेदनिधिभिर्वेदद्व्यर्णैःषडङ्गकम् ।

अन्य मन्त्र : प्रणव (ॐ) कमला (श्रीं) शक्ति (ह्रीं) फिर 'नमो भगवति प्रसन्नपारिजातेश्वरि अन्नपूर्णे' और अन्त में अनलाङ्गना (स्वाहा) लगाने से यह सब अभीष्टों का साधक २४ अक्षर वाला मन्त्र बनता है ।

मन्त्र के ३, २, ४, ९, ४ एवं २ अक्षरों से षडङ्गन्यास करना चाहिए ।

टिप्पणी : मन्त्रोद्धार : ॐ श्रीं ह्रीं नमो भगवति प्रसन्नपारिजातेश्वरि अन्नपूर्णेस्वाहा ।

षडङ्गन्यास : ॐ श्रीं ह्रीं हृदयाय नमः । प्रसन्नपारिजातेश्वरि कवचाय हुम् ।
नमः शिरसे स्वाहा । अन्नपूर्णे नेत्रत्रयाय वौषट् ।
भगवति शिखायै वषट् । स्वाहा अस्त्राय फट् ।

इस मन्त्र का विनियोग एवं ध्यान पूर्ववत् है ।

तारश्रीशक्तिहृदयंभगवंभःकामिकासदृक् ॥ २७ ॥
माहेश्वरीप्रसन्नेति वरदेपदमुच्चरेत् ।
अन्नपूर्णेऽग्निपत्नीतिपञ्चविंशतिवर्णवान् ॥ २८ ॥
रामषड्युगषड्वेदनेत्रार्णैःस्यात्षडङ्गकम् ।
एषां चतुर्णां मन्त्राणामन्यत्सर्वंतु पूर्ववत् ॥ २९ ॥

अन्यमन्त्र : तार (ॐ) श्री (श्रीं) शक्ति (ह्रीं) हृदय (नमः) फिर 'भग' एवं अंभ (व) सदृक् कामिका (ति) फिर 'माहेश्वरि प्रसन्नवरदे' एवं 'अन्नपूर्णे' और अन्त में अग्निपत्नी (स्वाहा) लगाने से यह २५ अक्षर वाला मन्त्र बनता है ।

(मन्त्र के) ३, ६, ४, ६, ४ एवं २ अक्षरों से षडङ्गन्यास करना चाहिए ।

इन चारों मन्त्रों के विनियोग, ध्यान एवं पूजन आदि समस्त कृत्य पूर्वोक्त मन्त्र के समान हैं ।

टिप्पणी : मन्त्रोद्धार : ॐ श्रीं ह्रीं नमः भगवति माहेश्वरि प्रसन्नवरदे अन्नपूर्णे स्वाहा ।

षडङ्गमाह । युगेति । मन्त्रान्तरमाह । प्रणव इति । कमलाश्रीं ॥ शक्तिःह्रीं । अनलाङ्गनास्वाहा ॥ २५-२६ ॥

षडंगमाह । रामेति । निधयोनव । मन्त्रान्तरमाह ॥ तारेति । तारॐ । श्रीः श्रीं । शक्तिःह्रीं ॥ हृदयनमः । भगवत्यै वषट् । अम्भोवः । सदृक्कामिकाति ॥ २७ ॥ अग्निपत्नीस्वाहा । स्वरूपमन्यत ॥२८॥ षडङ्गमाह । रामेति । अन्यत्कध्यानपूजाप्रयोगा.पूर्ववत् ॥२९॥

षडङ्गन्यास :

ॐ श्रीं ह्रीं हृदयाय नमः । प्रसन्नवरदे कवचाय हुम् ।
नमः भगवति शिरसे स्वाहा । अक्षपूर्णे नेत्रत्रयाय वौषट् ।
माहेश्वरि शिखायै वषट् । स्वाहा अस्त्राय फट् ।

त्रैलोक्यमोहनोगौरीमन्त्रः संकीर्त्यतेधुना ।
मायानमोनेब्रह्मश्रीराजितेराजपूजिते ॥ ३० ॥
जयेति विजयेगौरीगान्धारीति वदेत्पदम् ।
त्रिभुतायनेवशंकरिसर्वससद्यलः ॥ ३१ ॥
कवशंकरिसर्वस्त्रीपुरुषान्तेवशंकरि ।
सुद्वयंदुद्वयंद्वेयुग्मंवायुग्मं हरवल्लभा ॥ ३२ ॥
स्वाहान्त एकषष्ट्यर्णो मन्त्रराजःसमीरितः ।

त्रैलोक्यमोहन गौरी का मन्त्र : अब त्रैलोक्यमोहन गौरी का मन्त्र बतलाते हैं :

माया (ह्रीं) एवं 'नमः' के बाद 'ब्रह्मश्रीराजिते राजपूजिते जय' फिर 'विजयेगौरी-गान्धारी' कहे, फिर 'त्रिभु' तोय (व) मेष (न) एवं 'वशंकरि' फिर 'सर्व' ससद्यल (लो) 'कवशंकरि सर्व स्त्री पुरुष' के बाद 'वशंकरि' फिर सु द्वय (सुसु) दु द्वय (दुदु) घेयुग् (घेघे) वायुग्म (वावा) हरवल्लभा (ह्रीं) तथा अन्त में 'स्वाहा' लगाने से यह ६१ अक्षर का मन्त्र मन्त्रराज कहा गया है ।

टिप्पणी : मन्त्रोद्धार : ह्रीं नमो ब्रह्मश्रीराजिते राजपूजिते जयविजये गौरि-गान्धारि त्रिभुवनवशंकरि सर्वलोकवशंकरि सर्व स्त्रीपुरुषवशंकरि सुसु दुदु घेघे वावा ह्रीं स्वाहा ।

अजोमुनिर्निचृच्छन्दो गौरीत्रैलोक्यमोहिनी ॥ ३३ ॥
देवताबीजशक्ती तु मायास्वाहापदे क्रमात् ।
चतुर्दशदशाष्टाष्टदशैकादशवर्णकैः ॥ ३४ ॥
दीर्घाद्यमायया युक्तैःषडङ्गानि समाचरेत् ।
मूलेन व्यापकं कृत्वा ध्यायत्त्रैलोक्यमोहिनीम् ॥ ३५ ॥

विनियोग एवं न्यास : इस मन्त्र का अज ऋषि है, निचृद् गायत्री छन्द है, गौरी त्रैलोक्यमोहिनी देवता है, माया बीज है तथा स्वाहा शक्ति है ।

गौरीमन्त्रमाह । मायेति । मायाह्रीं ॥ ३० ॥ तोयवः । मेषोनः । ससद्यलः । लो ॥३१॥ सुदुवेवाएषांयुग्मंसु २ दु २ वा २ हरवल्लभाह्रीं ॥ स्वरूपंशेषम् ॥ ३२ ॥
अजोब्रह्मा ॥३३॥ षडगमाह । चतुर्दशेति । दीर्घषट्कयुक्तैश्चतुर्दशाद्यक्षरैषडंगम् ॥३४-३५॥

षड्दीर्घसहित मायाबीज एवं मन्त्र के क्रमशः १४, १०, ८, ८, १० एवं ११ अक्षरों से षडङ्गन्यास करना चाहिए। तथा मूलमन्त्र से व्यापक कर त्रैलोक्यमोहिनी का ध्यान करना चाहिए।

टिप्पणी : विनियोग : अस्य श्री त्रैलौक्यमोहनगौरी मन्त्रस्य, अज ऋषिः, निचृद्-गायत्री छन्दः, गौरीत्रैलोक्यमोहिनी देवता, ह्रीं बीजं, स्वाहाशक्तिः ममाखिलकाम, सिद्धये जपे विनियोगः।

षडङ्गन्यास : ह्रां ह्रीं नमो ब्रह्म श्रीराजिते राजपूजिते हृदाय नमः।
ह्रीं जयविजये गौरिगान्धारि शिरसे स्वाहा।
ह्रूं त्रिभुवन वशंकरि शिखायै वषट्।
ह्रैं सर्वलोक वशंकरि कवचाय हुम्।
ह्रौं सर्वस्त्रीपुरुषवशंकरि नेत्रत्रयाय वौषट्।
ह्रः सुसु दुदु धेधे वावा ह्रीं स्वाहा अस्त्राय फट्।
इसके बाद मूल मन्त्र से ७ बार व्यापक न्यास करना चाहिए।

गीर्वाणसंघार्चितपादपङ्कजारुणप्रभाबालशशांकशेखरा।
रक्ताम्बरालेपनपुष्पयुङ् मुदे सृणि सपाशं दधती शिवास्तु नः ॥३६॥

ध्यान : देवसमूह के द्वारा जिसके पदकमलों की पूजा होती है, अरुण आभावाली, मस्तक पर चन्द्रकला धारण करने वाली, लाल वस्त्र, चन्दन एवं पुष्पों से अलंकृत तथा दोनों हाथों में अंकुश एवं पाश धारण करने वाली गौरी हम पर प्रसन्न हो।

अयुतं प्रजपेन्मन्त्रं सहस्रं घृतसंयुतैः।
पायसैर्जुहुयात्पीठे प्रागुक्ते गिरिजां यजेत् ॥ ३७ ॥

जपसंख्या, हवन एवं पूजन : इस मन्त्र का १० हजार जप करना चाहिए। घी मिश्रित खीर से १ हजार आहुतियाँ देनी चाहिए, तथा पूर्वोक्त पीठ पर गिरिजा का पूजन करना चाहिए।

केसरेष्वंगमाराध्य ब्राह्म्याद्याःपत्रमध्यगाः।
लोकेश्वरास्तदस्त्राणितद्बहिःपरिपूजयेत् ॥ ३८ ॥

आवरण पूजा : केसरों में अंगपूजा कर, अष्टदलों के मध्य में ब्राह्मी आदि मातृकाओं, (भूपुर में) लोकपालों तथा उसके बाहर उनके आयुधों का विधिवत पूजन करना चाहिए।

ध्यानमाह । गीर्वाणेति । गीर्वाणादेवास्तत्समूहैःपूजितंपादपद्मं यस्याः । अंकुशंदधे ॥ ३६-४१ ॥

टिप्पणी : आवरण पूजाविधि : श्लोक ३६ में वर्णित त्रैलोक्यमोहिनी के स्वरूप का ध्यान कर मानसोपचार से पूजन कर शंखस्थापन कर वृत्त, अष्टदल एवं भूपुर से निर्मित यन्त्र पर देवी का पूजन करना चाहिए।

त्रैलोक्यमोहनगौरी का पूजन यन्त्र (देखिये चित्र नं० २१)। श्लोक सं० ९ की टिप्पणी में बतलायी गयी विधि से यथाक्रमेण पीठ देवताओं एवं पीठ शक्तियों का पूजन कर उस पीठ पर ध्यान आवाहन आदि उपचारों से पञ्चपुष्पाञ्जलि दान पर्यन्त देवी का विधिवत पूजन कर आवरण पूजा करनी चाहिए, यथा :

सर्वप्रथम केसरों में निम्नलिखित मन्त्रों से षडङ्गपूजा करनी चाहिए, यथा :

ह्रां ह्रीं नमो ब्रह्मश्रीराजिते राजपूजिते हृदयाय नमः।
ह्रीं जयविजये गौरि गान्धारि शिरसे स्वाहा।
ह्रूं त्रिभुवन वशंकरि शिखायै वषट्।
ह्रैं सर्वलोकवशंकरि कवचाय हुम्।
ह्रौं सर्वस्त्रीपुरुषवशंकरि नेत्रत्रयाय वौषट्।
ह्रः सुसु दुदु घेघे वावा ह्रीं स्वाहा अस्त्राय फट्।

फिर अष्टदल में पूर्व आदि दिशाओं में निम्नलिखित मन्त्रों से ब्राह्मी आदि ८ मातृकाओं का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ ब्राह्म्यै नमः। ॐ वाराह्यै नमः।
ॐ माहेश्वर्यै नमः। ॐ इन्द्राण्यै नमः।
ॐ कौमार्यै नमः। ॐ चामुण्डायै नमः।
ॐ वैष्णव्यै नमः ॐ महालक्ष्म्यै नमः।

तत्पश्चात् भूपुर में पूर्व आदि अपनी-अपनी दिशाओं में निम्नलिखित मन्त्रों से इन्द्र आदि लोकपालों का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ लां इन्द्राय देवाधिपतये नमः। ॐ यां वायवे प्राणाधिपतये नमः।
,, रां अग्नये तेजोऽधिपतये ,, ,, सां सोमाय ताराधिपतये ,,
,, यां यमाय प्रेताधिपतये ,, ,, हां ईशानाय गणाधिपतये ,,
,, क्षां निर्ऋतये रक्षोधिपतये ,, ,, आं ब्रह्मणे प्रजाधिपतये ,,
,, वां वरुणाय जलाधिपतये ,, ,, ह्रीं अनन्ताय नागाधिपतये ,,

और फिर भूपुर के बाहर पूर्व आदि दिशाओं में नाम मन्त्रों से वज्र आदि आयुधों का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ वं वज्राय नमः। ॐ दं दण्डाय नमः
,, शं शक्तये ,, ,, खं खड्गाय ,,

ॐ पां पाशाय नमः । ॐ शूं शूलाय नमः
,, अं अंकुशाय ,, ,, पं पद्माय ,,
,, गं गदायै ,, ,, चं चक्राय ,,

इस प्रकार आवरण पूजा कर धूप दीप आदि उपचारों से देवी का पूजन कर यथा-शक्ति जप करना चाहिए ।

इत्थमाराधितादेवी प्रयच्छेत्सुखसम्पदः ।
तन्दुलैस्तिसम्मिश्रैर्लवणैर्मधुरान्वितैः ॥ ३९ ॥
फलै रम्यैं रक्तपद्मैर्जुहुयाद्योदिनत्रयम् ।
तस्यविप्रादयो वर्णा वश्याःस्युर्मासमध्यतः ॥ ४० ॥
रविमण्डलमध्यस्थां देवींध्यायञ्जपेन्मनुम् ।
अष्टोत्तरशतं तावद्धुत्वाग्नौ वशयेज्जगत् ॥ ४१ ॥

काम्य प्रयोग : इस प्रकार उपासना करने से देवी सुख एवं सम्पत्ति देती है ।

तिल मिश्रित तंदुल (चावल), सुन्दर फल एवं लाल कमलों से जो व्यक्ति तीन दिन तक हवन करता है, ब्राह्मण आदि वर्ण एक मास में उसके वश में हो जाते हैं ।

सूर्यमण्डल के मध्य में विराजमान देवी का ध्यान करते हुए जप करने तथा उसी प्रकार अग्नि में १०८ आहुतियाँ देने से व्यक्ति जगत को अपने वश में कर लेता है ।

नभोहंसानलयुतमैकारस्थं शशांकयुक् ।
तोयं वाय्वग्निकर्णेन्दुयुतंराजमुखीति च ॥ ४२ ॥
राजाधिमुखिवश्यांते मुखिमायारमात्मभूः ।
देविदेविमहादेविदेवाधिदेविसर्व च ॥ ४३ ॥
जनस्य च मुखंपश्चान्ममवशंकुरुद्वयम् ।
वह्निप्रियान्तो मन्त्रोष्टचत्वारिंशल्लिपिर्मतः ॥ ४४ ॥

गौरी का अन्य मन्त्र : हंस (स) अनल (र) ऐकारस्थ शशांकयुक् (ऐं) इनके साथ नभ (ह) अर्थात् 'ह्स्रैं' वायु (य) अग्नि (र) एवं कर्णेन्दु (ॐ) सहित तोय (व) अर्थात् 'व्यरूं फिर 'राजमुखि' 'राजाधिमुखिवश्य' के बाद 'मुखि' माया (ह्रीं) रमा (श्रीं) आत्मभू (क्लीं) फिर 'देवि देवि महादेविदेवाधिदेविसर्व'

गौर्यामन्त्रान्तरमाह । नभइति । नभोहंकारः । कीदृक्नभःहसानलयुतम् । हसःस । अनलोरः । ताभ्यांयुतम् । ऐस्थबिन्दुयुतम् । तेनहस्त्रैं । तोयंवः । कीदृक् वायुर्यः । अग्नीरः । कर्णऊः । इन्दुर्बिन्दुः ॥ तैर्युतम् ॥ व्यरूं ॥ स्वरूपमन्यत् ॥ मायाह्रीं ॥ रमाश्रीं ॥ आत्मभूः क्लीं ॥ अन्यत्स्वरूपम् ॥ वह्निप्रियास्वाहा ॥ ४२।४६ ॥

एवं 'जनस्य मुखं' के बाद 'ममवशं' फिर २ वार कुरु (कुरुकुरु) और अन्त में वह्नि-प्रिया (स्वाहा)लगाने से ४८ अक्षर का यह मन्त्र बनता है ।

टिप्पणी : मन्त्रोद्धार : ह्स्रैं व्य्रूं राजमुखि राजाधिराजमुखि वश्यमुखि ह्रीं श्रीं क्लीं देवि देवि महादेवि देवाधिदेवि सर्वजनस्य मुखं ममवश्यं कुरु कुरु स्वाहा ।

ऋषिच्छन्दोदेवतास्तुपूर्ववत्परिकीर्तिताः ।
हृदेकादशभिःप्रोक्तंशिरःस्यात्सप्तवर्णकैः ॥ ४५ ॥
शिखावर्मापित्रेदार्णैःपञ्चभिर्नेत्रमीरितम् ।
अस्त्रंसप्तदशार्णैःस्याद्ध्यानजप्यादिपूर्ववत् ॥ ४६ ॥
अङ्गमन्त्रास्तुदीर्घाढ्यभुवनेशीपरामताः ।
एवंसिद्धमनुर्मन्त्री प्रयोगान्कर्तुमर्हति ॥ ४७ ॥

विनियोग एवं न्यास आदि : इस मन्त्र के ऋषि, छन्द एवं देवता पूर्ववत कहे गये हैं ।

मन्त्र के ११ वर्णों से हृदय, ७ वर्णों से शिर, ४ वर्णों से शिखा, ४ वर्णों से कवच, ५ वर्णों से नेत्र तथा १७ वर्णों से अस्त्र पर न्यास कर पूर्ववत जप, ध्यान एवं पूजन करना चाहिए । षड्दीर्घयुत मायाबीज प्रारम्भ में लगाकर अङ्गन्यास के मन्त्रों की कल्पना कर लेनी चाहिए ।

इस प्रकार सिद्ध मन्त्र से साधक काम्यप्रयोग कर सकता है ।

टिप्पणी : विनियोग : अस्य श्री गौरी मन्त्रस्य अजऋषिः निचृदगायत्री छन्दः गौरी देवता ह्रीं बीजं स्वाहा शक्तिः ममाखिलकामसिद्धये जपे विनियोगः ।

षडङ्गन्यास :

ह्रां ह्स्रैं व्य्रूं राजमुखि राजाधिमुखि हृदयाय नमः ।
ह्रीं वश्यमुखि ह्रीं श्रीं क्लीं शिरसे स्वाहा ।
ह्रूं देवि देवि शिखायै वषट् ।
ह्रैं महादेवि कवचाय हुम् ।
ह्रौं देवाधिदेवि नेत्रत्रयाय वौषट् ।
ह्रः सर्वजनस्यमुखं मम वश्यं कुरुकुरु स्वाहा अस्त्राय फट् ।

पूजा विधि : श्लोक ३६ में वर्णित देवी के स्वरूप का ध्यान कर अर्घ्यस्थापन कर पूर्वोक्त यन्त्र पर पीठ देवता, पीठ शक्ति एवं आवरण देवताओं के साथ पूर्वोक्त रीति से देवी का विधिवत पूजन करना चाहिए ।

अङ्गमन्त्राःषट् ॥ दीर्घंयुकमायाबीजंपरंयेषामीदृशाः ॥ ४७ ॥

कुर्य्यात्सर्वजनस्थाने मनोःसाध्याभिधानकम् ।
जपे होमे तर्पणे च वशीकरण कर्मणि ॥ ४८ ॥
ससम्पातं घृतं हुत्वा सहस्रं सप्तवासरम् ।
सम्पाताज्यं तु साध्यस्य प्राशितं वश्यकारकम् ॥ ४९ ॥
साध्यनक्षत्रवृक्षेण कुर्य्यात्साध्याकृतिं शुभाम् ।
तस्यामसून्प्रतिष्ठाप्य प्राङ्गणेनिखनेच्चताम् ॥ ५० ॥
तत्रानलं समाधाय रक्तचन्दनसंयुतैः ।
जपापुष्पैर्निशीथिन्यां जुहुयात्सप्तवासरम् ॥ ५१ ॥
सहस्रं प्रत्यहं पश्चात्तां निष्कास्य सरित्तटे ।
निखनेत्साधकस्तस्य साध्यो दासो भवेद्ध्रुवम् ॥ ५२ ॥

वशीकरण के कुछ प्रयोग : वशीकरण के जप, होम एवं तर्पण में मूलमन्त्र के 'सर्वजनस्य' पद के स्थान पर साध्य के नाम का षष्ठयन्त रूप लगाना चाहिए ।

सात दिन तक सम्पात सहित घी से होम कर उस सम्पात के घी को साध्य व्यक्ति को खिलाने से वह वश में हो जाता है ।

साध्य व्यक्ति के जन्म नक्षत्र के वृक्ष की लकड़ी से साध्य की प्रतिमा बनाकर उसमें प्राण प्रतिष्ठा कर उस प्रतिमा को आंगन में गाड़ कर, उसके ऊपर अग्नि स्थापन कर मध्यरात्रि में ७ दिन तक रक्त चन्दन मिश्रित जपाकुसुम के फूलों से प्रतिदिन १ हजार आहुतियाँ देनी चाहिए । इसके बाद उस प्रतिमा को निकाल कर नदी के किनारे पर गाड़ देना चाहिए । ऐसा करने से साध्य निश्चित रूप से साधक का दास बन जाता है ।

मनोर्मन्त्रस्यसर्वजनस्थानेसर्वजनस्येतिपदस्थानेसाध्याभिधानकंसाध्यनामोच्चरेत् ॥ देवदत्तस्यमुखमित्यादि ॥ ४८-४९ ॥

प्रयोगान्तरमाह ॥ साध्यनक्षत्रेति ॥ साध्यस्ययन्नक्षत्रम् ॥ जन्मनक्षत्रंतत्सम्बन्धीयोवृक्षस्तेनसाध्याकृतिंसाध्यप्रतिमांकुर्यात् ॥ तत्रप्राणान्प्रतिष्ठाप्य ॥ तामङ्गणेखात्वातदुपर्यग्निंनिधायरक्तचन्दनाक्तैर्जपापुष्पैः सहस्रंहुत्वातांनिष्कास्यनदीतटेनिखनेत् ॥ सदासःस्यात् ॥ नक्षत्रवृक्षायथा–कारस्करोथधात्रीस्यादुदुंबरतरुःपुनः ॥ जम्बूःखादिर कृष्णाख्यौवंशपिप्पलसंज्ञकौ ॥ नागरोहिणनामानौपलाशप्लक्षसंज्ञकौ ॥ अम्बष्ठबिल्वार्जुनाख्यविकंकतमहीरुहाः ॥ बकुलःसरलःसर्जोवंजुलःपनसार्ककौ ॥ शमीकदम्बनिम्बाम्रमधूकावृक्षशाखिनः । इतिशारदोक्ताः ॥ ५०-५२ ॥

टिप्पणी : जन्म नक्षत्र एवं उनके वृक्ष :

नक्षत्र	वृक्ष	नक्षत्र	वृक्ष	नक्षत्र	वृक्ष
अश्विनी	कारस्कर	मघा	रोहिण	मूल	सर्ज
भरणी	धात्री	पू० फा०	पलाश	पू० षा०	वंजुल
कृत्तिका	उदुम्बर	उ० फा०	प्लक्ष	उ० षा०	पनस
रोहिणी	जम्बू	हस्त	अम्बष्ठ	श्रवण	अर्क
मृगशिर	खादिर	चित्रा	बिल्व	धनिष्ठा	शमी
आर्द्रा	कृष्ण	स्वाति	अर्जुन	शतभिषा	कदम्ब
पुनर्वसु	वंश	विशाखा	विकंकत	पू० भा०	निम्ब
पुष्य	पिप्पल	अनुराधा	बकुल	उ० भा०	आम्र
आश्लेषा	नाग	ज्येष्ठा	सरल	रेवती	मधूक

ज्येष्ठलक्ष्मी महामन्त्रःप्रोच्यते धनवृद्धिदः ।
वाग्बीजं भुवनेशानीश्रीरनन्तोद्यलक्ष्मि च ॥ ५३ ॥
स्वयंभुवेशंभुजायाज्येष्ठायैहृदयान्तिकः ।

ज्येष्ठा लक्ष्मी का मन्त्र : धन की वृद्धि करने वाला ज्येष्ठा लक्ष्मी का मन्त्र बतलाया जाता है—

वाग्बीज (ऐं) भुवनेशानी (ह्रीं) श्री (श्रीं) अनन्त (आ) फिर 'द्यलक्ष्मि' एवं 'स्वयं भुवे' फिर शंभुजाया (ह्रीं) एवं 'ज्येष्ठायै' और अन्त में हृदय (नमः) लगाने से यह १७ अक्षरवाला मन्त्र बनता है ।

टिप्पणी मन्त्रोद्धार : ऐं ह्रीं श्रीं आद्यलक्ष्मि स्वयंभुवे ह्रीं ज्येष्ठायै नमः ।

मनुःसप्तदशार्णोयं मुनिर्ब्रह्मास्य कीर्तितः ॥ ५४ ॥
छन्दोष्टिर्ज्येष्ठलक्ष्मीस्तुदेवता शक्तिबीजके ।
श्रीमाये मूलतो हस्तौप्रमृज्याङ्गं समाचरेत् ॥ ५५ ॥

विनियोग एवं हस्तमार्जन : इस मन्त्र का ब्रह्मा ऋषि है, अष्टि छन्द है, ज्येष्ठा लक्ष्मी देवता है, श्री बीज है तथा माया शक्ति है । मूल मन्त्र से हाथ धोकर अङ्गन्यास करना चाहिए ।

ज्येष्ठालक्ष्मीमन्त्रमाह ॥ वागिति ॥ वाग्बीजंऐं ॥ भुवनेशानीह्रीं । श्रीः श्रीं । अनन्तआ । द्यलक्ष्मिस्वरूपम् ॥ ५३ ॥

स्वयंभुवेस्वरूपम् ॥ शम्भुजायाह्रीं ॥ ज्येष्ठायैस्वरूपम् ॥५४॥ श्रींशक्तिः ॥ ह्रींबीजम् ॥ पदोन्मितिः पदवर्णसंख्याभूरित्यादिवर्णैर्ज्ञेया ॥ ५५-५७ ॥

टिप्पणी : विनियोग : अस्य श्री ज्येष्ठा लक्ष्मी मन्त्रस्य ब्रह्मा ऋषिः, अष्टिश्छन्दः, ज्येष्ठालक्ष्मी देवता, ह्रीं बीजं श्रीं शक्तिः ममाभीष्टसिद्धये जपे विनियोगः ।

रामवेदयुगैकत्रिनेत्रार्णैर्मनुसम्भवैः ।
पदानामष्टकं न्यस्येच्छिराभ्रूमध्यवक्त्रके ॥ ५६ ॥
हृन्नाभ्याधारके जानुपादयोस्तत्पदोन्मितिः ।
भूचन्द्रैकचतुर्वेदभूमिरामाक्षिवर्णकैः ॥ ५७ ॥

न्यास : मन्त्र के ३, ४, ४, १, ३ एवं २ वर्णों से षडङ्गन्यास करना चाहिए ।

(तथा) मन्त्र के १, १, १, ४, ४, १, ३ एवं २ वर्णों से शिर, भ्रूमध्य, मुख, हृदय, नाभि, आधार जानु एवं पैरों में न्यास करना चाहिए ।

टिप्पणी : षडङ्गन्यास :

ऐं ह्रीं श्रीं हृदयाय नमः । ह्रीं कवचाय हुम् ।
आद्यालक्ष्मि शिरसे स्वाहा । ज्येष्ठायै नेत्रत्रयाय वौषट् ।
स्वयंभवे शिखायै वषट् । नलः अस्त्राय फट् ।

सर्वाङ्गन्यास :

ऐं नमः—शिरसि । स्वयंभुवे नमः—नाभौ ।
ह्रीं नमः—भ्रूमध्ये । ह्रीं नमः—आधारे ।
श्रीं नमः—मुखे । ज्यैष्ठाये नमः—जान्वोः ।
आद्यलक्ष्मि नमः—हृदि । नमः नमः—पादयोः ।

उद्यद्भास्करसन्निभा स्मितमुखी रक्ताम्बरालेपना
सत्कुम्भंधनभाजनंसृणिमथोपाशंकरैर्बिभ्रती ।
पद्मस्था कमलेक्षणा दृढकुचासौन्दर्य्यवारांनिधिर्ध्यातव्या
सकलाभिलाषफलदा श्रीज्येष्ठलक्ष्मीरियम् ॥ ५८ ॥

ध्यान : उदीयमान सूर्य के समान आभावाली, प्रसन्नवदना, लालवस्त्र एवं चन्दन आदि से अलंकृत, हाथों में कुम्भ, धनपात्र, अंकुश एवं पाश धारण करनेवाली, कमल पर विराजमान, कमल के समान नेत्रवाली, पीन स्तनवाली सौन्दर्य के सागर जैसी एवं समस्त अभिलाषाओं को पूर्ण करनेवाली श्री ज्येष्ठा लक्ष्मी का ध्यान करना चाहिए ।

लक्षं जपेत्पायसेन जुहुयात्तद्दशांशतः ।
आज्याक्तेन यजेत्पीठे वक्ष्यमाणे महाश्रियम् ॥ ५९ ॥

ध्यानमाह ॥ उद्यदिति ॥ धनपात्रांकुशौदक्षिणयोः ॥ कुम्भपाशौवामयोः ॥ ५८-५९ ॥

लोहिताक्षीविरूपा च करालीनीललोहिता ।
समदावारुणीपुष्टिरमोघाविश्वमोहिनी ॥ ६० ॥
तत्पीठशक्तयःप्रोक्ता दिक्षु मध्ये च ता यजेत् ।
प्रयच्छेदासनं तस्यै गायत्र्यावक्ष्यमाणया ॥ ६१ ॥
प्रणवो रक्तज्येष्ठायैविद्महेपदमन्ततः ।
नीलज्येष्ठापदंपश्चाद्धीमहि ततःपदम् ॥ ६२ ॥
तन्नोलक्ष्मीःपदं प्रोच्य चोदयादितिचोच्चरेत् ।
गायत्र्येषा समाख्याता केसरेष्वंगपूजनम् ॥ ६३ ॥
मातरःपत्रमध्येषु बाह्येलोकेशहेतयः ।
इत्थंजपादिभिःसिद्धोमनुर्दद्यादभीप्सितम् ॥ ६४ ॥

जपसंख्या, हवन एवं पूजन : इस मन्त्र का १ लाख जप करना चाहिए तथा घी मिश्रित खीर से दशांश होम करना चाहिए । फिर वक्ष्यमाण पीठ पर महालक्ष्मी का पूजन करना चाहिए ।

लोहिताक्षी, विरूपा, करालि, नीललोहिता, समदा, वारुणी, पुष्टि, अमोघा एवं विश्वमोहिनी—ये उसकी पीठशक्तियाँ कही गयी हैं । ८ दिशाओं में तथा मध्य में उनका पूजन करना चाहिए । वक्ष्यमाण गायत्रीमन्त्र से उसको आसन देना चाहिए ।

प्रणव (ॐ) फिर 'रक्तज्येष्ठायैविद्महे' 'नीलज्येष्ठा' एवं 'धीमहि' इसके बाद 'तन्नोःलक्ष्मी' एवं 'प्रचोदयात्' कहना चाहिए । यह गायत्री मन्त्र कहा गया है ।

केसरों में अङ्गपूजा, पत्रों में मातृकाओं का पूजन तथा बाहर लोकपाल एवं उनके आयुधों का पूजन करना चाहिए । इस प्रकार जप आदि से सिद्ध मन्त्र वाञ्छित फल देता है ।

टिप्पणी : *पीठपूजा विधि* : श्लोक ५८ में वर्णित ज्येष्ठा लक्ष्मी के स्वरूप का ध्यान कर, मानसोपचार से पूजन कर फिर शंख स्थापन करने के बाद 'ॐ आधार शक्तये नमः' से 'ह्रीं ज्ञानात्मने नमः' तक सामान्य पूजापद्धति के अनुसार पीठ देवताओं का पूजन करना चाहिए । (ज्येष्ठा लक्ष्मी का पूजन यन्त्र त्रैलोक्य मोहन गौरी के समान होता है ।)

तत्पश्चात् पूर्व आदि ८ दिशाओं में तथा मध्य में निम्नलिखित मन्त्र से ९ पीठ शक्तियों का पूजन करना चाहिए, यथा :

पीठशक्तीराह ॥ लोहिताक्षीति ॥ ६०-६१ ॥ गायत्रीमाह ॥ प्रणवइति ॥ स्पष्टम् ॥ ६२-६३ ॥ लोकेशाइन्द्रादयः ॥ हेतयोवज्राद्याः ॥ ६४ ॥

पूर्वादिदिक्षु—ॐ लोहिताक्ष्यै नमः । ॐ समदायै नमः ।
,, विरूपायै नमः । ,, वारुण्यै नमः ।
,, करालयै नमः । ,, पुष्ट्यै नमः ।
,, नीललोहितायै नमः । ,, अमोघायै नमः ।
मध्ये—ॐ विश्व मोहिन्यै नमः ।

फिर 'ॐ रक्तज्येष्ठायै विद्महे नीलज्येष्ठायै धीमहि । तन्नो लक्ष्मीः प्रचोदयात् ॥' इस गायत्री मन्त्र से उक्त पूजित पीठ पर देवी को आसन देकर ध्यान, आवाहन आदि उपचारों से पञ्च पुष्पाञ्जलि दान पर्यन्त विधिवत देवी का पूजन करना चाहिए ।

आवरण पूजा : इसके बाद आवरण पूजा करनी चाहिए । सर्वप्रथम केसरों में निम्नलिखित मन्त्रों से षडङ्ग पूजा करनी चाहिए, यथा :

ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हृदयाय नमः । ह्रीं कवचाय हुम् ।
आद्यलक्ष्मि शिरसे स्वाहा । ज्येष्ठायै नेत्रत्रयाय वौषट् ।
स्वयंभुवे शिखायै वषट् । स्वाहा अस्त्राय फट् ।

तदनन्तर अष्टदल में ब्राह्मी आदि मातृकाओं का तथा उसके बाहर इन्द्र आदि लोकपालों एवं उनके अस्त्रों का पूजन करना चाहिए (इनके पूजा मन्त्रों के लिए श्लो० ३८ की टिप्पणी देखिये) ।

आवरण पूजा के बाद धूप, दीप आदि उपचारों से देवी का पूजन कर यथाशक्ति जप करना चाहिए । इस प्रकार पूजन सहित पुरश्चरण करने से मन्त्र सिद्ध हो जाता है तथा वह साधक को वाञ्छित फल देता है ।

अथान्नमदनोर्वक्ष्ये साधनं यःपुरोदितः ।
अन्नपूर्णावृतौ भूमिश्रीयागे द्वियमाक्षरः ॥ ६५ ॥
तारभूश्रीपुटोजप्यो मुनिरस्य चतुर्मुखः ।
छन्दो निचृतिराख्यातं देवते वसुधाश्रियौ ॥ ६६ ॥
भूबीजं बीजमस्योक्तं श्रीबीजं शक्तिरीरिता ।

ज्येष्ठा का अन्य मन्त्र : अन्नपूर्णा की आवरण पूजा में भूमि एवं श्री के पूजनार्थ जो २२ अक्षर वाला अन्नद मन्त्र पहिले बतलाया था, उसको तार (ॐ) भू (ग्लौं) एवं श्री (श्रीं) से सम्पुटित कर जप करना चाहिए । इस अन्नदायक मन्त्र की साधना को अब बतलाते हैं :

अन्नदमन्त्रमाह ॥ अथेति ॥ योमन्त्रःअन्नपूर्णावरणपूजनेभूमिश्रियोःपूजनेद्वियमाक्षरोद्वाविंशत्यर्णःपुराकथितः सोन्नदोमनुः ॥ अन्नमद्यन्नमेदेह्यन्नाधिपतयेममान्नप्रदापयस्वाहेतिसप्रणवभूबीजश्रीबीजसम्पुटौष्टाविंशतिवर्णः ॥ ६५-६६ ॥

इस मन्त्र के ऋषि ब्रह्मा हैं, छन्द निचृद् गायत्री है, देवता वसुधा एवं श्री हैं, भूबीज इसका बीज है, तथा श्री बीज शक्ति है।

टिप्पणी : मन्त्रोद्धार : ॐ ग्लौं श्रीं अन्नं मह्यन्नमेदेह्यन्नाधिपतये ममान्नं प्रदापय स्वाहा श्रीं ग्लौं ॐ।

विनयोग : अस्य श्री ज्येष्ठालक्ष्मी मन्त्रस्य ब्रह्मा ऋषिः निचृद्गायत्री छन्दः, वसुधाश्रियौ देवते ग्लौं बीजं, श्रीं शक्तिः ममाभीष्ट प्राप्तौ जपे विनियोगः।

अन्नंमहीतिहृदयमन्नंमेदेहिमस्तकम् ॥ ६७ ॥
शिखात्वन्नाधिपतये ममान्नं च प्रदापय।
वर्मोक्तं स्वाहया चास्त्रमंगमन्त्राध्रुवादिकाः ॥ ६८ ॥
षड्दीर्घारूढभूमिश्रीबीजांताःपरिकीर्तिताः।
विनेत्रा अपदुग्धाब्धौस्वर्णदीपे तु ते स्मरेत् ॥ ६९ ॥

न्यास मन्त्र : 'अन्नमहि' से हृदय, 'अन्नं मे देहि' से शिर, अन्नाधिपतये' से शिखा, 'ममान्नं प्रदापय' से कवच तथा 'स्वाहा' से अस्त्र पर न्यास करना चाहिए। इन मन्त्रों के प्रारम्भ में ध्रुव (ॐ) तथा अन्त में षड्दीर्घ सहित भूमिबीज एवं श्रीबीज लगाना चाहिए। तथा नेत्र को छोड़कर ५ अङ्गों में न्यास करना चाहिए। और फिर क्षीर सागर में स्वर्ण द्वीप पर वसुधा एवं श्री का ध्यान करना चाहिए।

टिप्पणी : पञ्चाङ्गन्यास : 'पञ्चांगानि मनोर्यत्र तत्र नेत्र मनुंत्यजेत्' आगम शास्त्र के इस नियमानुसार नेत्रमन्त्र को छोड़कर निम्नलिखित मन्त्रों से पञ्चाङ्गन्यास करना चाहिए। यथा :

ॐ अन्नं महि ग्लां श्रीं हृदयाय नमः। ॐ ममान्नं प्रदापयग्लैं श्रीं कवचाय हुम्।
ॐ अन्नं मे देहिग्लीं श्रीं शिरसे स्वाहा। ॐ स्वाहा ग्लौं श्रीं अस्त्राय फट्।
ॐ अन्नाधिपतये ग्लूं श्रीं शिखायै वषट्।

कल्पद्रुमाधोमणिवेदिकायां समास्थिते वस्त्रविभूषणाढ्ये।
भूमिश्रियौ वाञ्छितवामदक्षे संचिन्तयेद्देवमुनीन्द्रवंद्ये ॥ ७० ॥

ध्यान : कल्पवृक्ष के नीचे मणिवेदिका पर वाम एवं दक्षिण भाग में विराजमान, वस्त्र एवं आभूषणों से अलंकृत, तथा देवता एवं मुनियों से वन्दित भूमि एवं श्री का ध्यान करना चाहिए।

षडङ्गमाह। अन्नंमहीति। षडङ्गमन्त्राः। ध्रुवादिकाःप्रणवाद्याः। दीर्घयुक्तेभूश्रीबीजेअन्तेयेषान्ते। विनेत्रानेत्रहीनाःपञ्चव। पञ्चाङ्गानिमनोर्यत्रतत्रनेत्रमनुंत्यजेदित्युक्तेः। ॐ अन्नमहिग्लांश्रींहृत्॥ ॐ अन्नंदेहिग्लींश्रींशिर इत्यादि ॥ ६७-७१ ॥

लक्षमेकं जपेन्मन्त्रं तद्दशांशं घृतप्लुतैः ।
अग्नौहुत्वा यजेत्पीठे वैष्णवे वसुधाश्रियौ ॥ ७१ ॥
विमलोत्कर्षिणी ज्ञानक्रियायोगाभिधातथा ।
प्रह्वीसत्यानथेशानानुग्रहापीठशक्तयः ॥ ७२ ॥
तारं नमोभगवतेविष्णवेसर्वभूतात्मसंयोगपदं योगपद्मपदंततः ॥ ७३ ॥
पीठात्मनेनमोंतोयं पीठस्य मनुरीरितः ।
दद्यादासनमंत्रेण मूलेनावाहनादिकम् ॥ ७४ ॥

जपसंख्या, हवन एवं पीठपूजन : इस मन्त्र का १ लाख जप करना चाहिए। तथा घी मिश्रित अन्न से दशांश होम करके वैष्णव पीठ पर वसुधा, एवं श्री का पूजन करना चाहिए।

विमला, उत्कर्षिणी, ज्ञाना, क्रिया, योगा, प्रह्वी, सत्या, ईशाना एवं अनुग्रहा—ये पीठ शक्तियाँ होती हैं।

तार (ॐ) फिर 'नमोभगवते विष्णवे सर्व' 'भूतात्मसंयोग' 'योगपद्म' एवं 'पीठात्मने नमः' लगाने से यह पीठ मन्त्र बतलाया गया है। इस मन्त्र से आसन देकर मूलमन्त्र से आवाहन आदि (उपचारों से) पूजन करना चाहिए।

टिप्पणी : *पीठपूजाविधि* : श्लोक ७० में वर्णित वसुधा एवं श्री के स्वरूप का ध्यान कर मानसोपचार से पूजन कर विधिवत शंख स्थापित कर सामान्य पूजापद्धति के अनुसार 'ॐ आधार शक्तये नमः' इत्यादि मन्त्रों से पीठ के मध्य पीठ में देवताओं का पूजन करना चाहिए, यथा :

पीठमध्ये—

ॐ आधार शक्तये नमः
ॐ प्रकृतये नमः
ॐ कूर्माय नमः
ॐ अनन्ताय नमः
ॐ पृथिव्यै नमः
ॐ क्षीर समुद्राय नमः
ॐ श्वेतद्वीपाय नमः
ॐ मणिमण्डपाय नमः
ॐ कल्पवृक्षाय नमः
ॐ मणिवेदिकायै नमः
ॐ रत्नसिंहासनाय नमः

फिर आग्नेय आदि कोणों में निम्नलिखित मन्त्रों से धर्म आदि का पूजन करना चाहिए।

वैष्णवीपीठशक्तीराह । विमलेति ॥ ७२ ॥ पीठमन्त्रमाह । तारमिति : ॐ नमो-भगवतेविष्णवेसर्वभूतात्मसंयोगपद्मपीठात्मनेनमः ॥ ७३-७९ ॥

ॐ धर्माय नमः—आग्नेये । ॐ वैराग्याय नमः—वायव्ये ।
ॐ ज्ञानाय नमः—नैऋत्ये । ॐ ऐश्वर्याय नमः—ईशान्ये ।

तत्पश्चात् पूर्व आदि दिशाओं में अधर्म आदि का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ अधर्माय नमः—पूर्वे । ॐ अवैराग्याय नमः—पश्चिमे ।
ॐ अज्ञानाय नमः—दक्षिणे । ॐ अनैश्वर्याय नमः—उत्तरे ।

इसके बाद पुनः पीठ के मध्य में निम्नलिखित मन्त्रों से अनन्त आदि का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ अनन्ताय नमः । ॐ रं रजसे नमः ।
,, पद्माय ,, । ,, तं तमसे ,, ।
,, अं सूर्य मण्डलाय द्वादश कलात्मने ,, । ,, आं आत्मने ,, ।
,, उं सोम मण्डलाय षोडश कलात्मने ,, । ,, अं अन्तरात्मने ,, ।
,, रं वह्नि मण्डलाय दशकलात्मने ,, । ,, पं परमात्मने ,, ।
,, सं सत्त्वाय ,, । ,, ह्रीं ज्ञानात्मने ,, ।

तत्पश्चात् पूर्व आदि केसरों में निम्नलिखित मन्त्रों से ८ दिशाओं एवं मध्यभाग में विमला आदि पीठ शक्तियों का पूजन करना चाहिए, यथा :

पूर्वादिदिक्षु—ॐ विमलायै नमः । ॐ योगायै नमः ।
,, उत्कर्षिण्यै ,, । ,, प्रह्वयै ,, ।
,, ज्ञानायै ,, । ,, सत्यायै ,, ।
,, क्रियायै ,, । ,, ईशानायै ,, ।
मध्ये—ॐ अनुग्रहायै नमः ।

फिर 'ॐ नमो भगवते विष्णवे सर्वभूतात्मसंयोग योगपद्मपीठात्मने नमः'—इस मन्त्र से दोनों देवियों को इस पूजित पीठ पर आसन देकर, श्लोक ७० में वर्णित उनके स्वरूप का ध्यान कर मूलमन्त्र से आवाहन कर पाद्य आदि उपचारों से पञ्चपुष्पाञ्जलि दान पर्यन्त विधिवत पूजन करना चाहिए ।

अङ्गानीष्ट्वार्चयेद्दिक्षु भूवह्निजलमारुतान् ।
निवृत्तिं च प्रतिष्ठां च विद्यां शान्तिंविदिक्षु च ॥ ७५ ॥
अष्टशक्तीर्बलाद्या च विमलाकमला तथा ।
वनमालाबिभीषा च मालिकाशांकरीपुनः ॥ ७६ ॥
पूर्वादिदिक्षु प्रयजेदष्टमी वसुमालिका ।
शक्राद्यानायुधैर्युक्तान्स्वस्वदिक्षु समर्चयेत् ॥ ७७ ॥

इत्थं सपरिवारे योधयेल्लक्ष्म्यौ जपादिभिः ।
आराधयेत्सलभते महतीमन्नसम्पदम् ॥ ७८ ॥

आवरण पूजा : सर्वप्रथम षडङ्गपूजा कर पूर्व आदि दिशाओं में भूमि, अग्नि, जल एवं वायु का तथा विदिशाओं में निवृत्ति, प्रतिष्ठा, विद्या एवं शान्ति का पूजन करना चाहिए ।

बलाका, विमला, कमला, बनमाला, विभीषा, मालिका, शांकरी एवं वसुमालिका—इन ८ शक्तियों को पूर्व आदि दिशाओं में पूजन करना चाहिए । (और फिर) आयुधों के साथ इन्द्र आदि का अपनी-अपनी दिशा में पूजन करना चाहिए ।

इस प्रकार जो व्यक्ति परिवार के साथ वसुधा एवं लक्ष्मी की जप-पूजन आदि के द्वारा आराधना करता है, वह पर्याप्त धन-धान्य प्राप्त करता है ।

टिप्पणी : आवरण पूजा विधि :

सर्वप्रथम केसरों में निम्नलिखित मन्त्रों से अंग पूजा करनी चाहिए, यथा :

ॐ अन्नं महि ग्लां श्रीं हृदयाय नमः । ॐ यमान्न प्रदापय ग्लैं श्रीं कवचाय हुम् ।
,, अन्नं देहि ग्लीं श्रीं शिरसे स्वाहा । ,, स्वाहा ग्लौं श्रीं अस्त्राय फट् ।
,, अन्नाधिपतये ग्लूं श्रीं शिखायै वषट् ।

फिर पूर्व आदि दिशाओं में निम्नलिखित मन्त्रों से भूमि आदि का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ लं भूम्यै नमः । ॐ वं अद्भ्यो नमः ।
ॐ रं अग्नये नमः । ॐ वायवे नमः ।

तत्पश्चात् आग्नेय आदि कोणों में निम्न मन्त्रों से निवृत्ति आदि कलाओं का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ निवृत्यै नमः । ॐ विद्यायै नमः ।
ॐ प्रतिष्ठायै नमः । ॐ शान्त्यै नमः ।

फिर अष्टदलों में पूर्व आदि दिशाओं में निम्नमन्त्रों से बलाका आदि ८ शक्तियों की पूजा करनी चाहिए, यथा :

ॐ बलाकायै नमः । ॐ विभीषायै नमः ।
ॐ विमलायै नमः । ॐ मालिकायै नमः ।
ॐ कमलायै नमः । ॐ शांकर्यै नमः ।
ॐ बनमालायै नमः । ॐ वसुमालिकायै नमः ।

तदनन्तर भूपुर में पूर्व आदि अपनी अपनी दिशाओं में श्लोक संख्या ३८ की टिप्पणी में बतलाये गये मन्त्रों से इन्द्र आदि दिक्पाल तथा उनके वज्र आदि आयुधों का पूजन करना चाहिए।

इस प्रकार आवरण पूजा समाप्त कर धूप, दीप आदि उपचारों से वसुधा एवं लक्ष्मी का पूजन कर यथाशक्ति मूलमन्त्र का जप करना चाहिए।

आज्याक्तैश्चतिलैर्बिल्वसमिद्भिर्जुहुयाच्छ्रिये।
साज्येन पायसेनापि फलैःपत्रैश्चबिल्वजैः ॥ ७९ ॥
जपतामुं महामन्त्रं होमःकार्यो दिने दिने।
दशसख्यःकुबेरस्य मनुनेध्मैर्वटोद्भवैः ॥ ८० ॥
तारोवैश्रवणायाग्निप्रियान्तोष्टाक्षरोमनुः।
होमकाले कुबेरं तु चिन्तयेदग्निमध्यगम् ॥ ८१ ॥
धनपूर्णं स्वर्णकुम्भं तथा रत्नकरण्डकम् ॥ ८२ ॥
हस्ताभ्यां विप्लुतं खर्वकरपादं च तुन्दिलम्।
वटाधस्ताद्रत्नपीठोपविष्टं सुस्मिताननम् ॥ ८३ ॥
एवं कृतहुतो मन्त्रीलक्ष्म्या जयतिवित्तपम्।

हवन विधि : लक्ष्मी के लिए घृत मिश्रित तिलों से, बिल्ववृक्ष की समिधाओं से, घी सहित खीर से तथा बेलपत्र एवं बेलगिरि से हवन करना चाहिए।

प्रतिदिन इस (निम्नांलखित) कुबेर[1] के मन्त्र का जप करते हुए वटवृक्ष की समिधाओं से १० आहुतियाँ देनी चाहिए।

कुबेर मन्त्र : तार (ॐ) 'वैश्रवणाय' एवं अग्निप्रिया (स्वाहा) अर्थात् 'ॐ वैश्रवणाय स्वाहा'–यह कुबेर का आठ अक्षर का मन्त्र है।

कुबेर का ध्यान : "दोनों हाथों में धनपूर्ण स्वर्णकुम्भ तथा रत्नकरण्ड धारण करने वाले, छोटे छोटे हाथ एवं पैर वाले, बड़ी तोंद वाले, वटवृक्ष के नीचे रत्नपीठ पर विराजमान एवं प्रसन्नवदन कुबेर" का हवन के समय अग्नि में ध्यान करना चाहिए।

इस प्रकार होम करने से साधक कुबेर से भी अधिक सम्पत्ति प्राप्त करता है।

अथ प्रत्यंगिरां वक्ष्ये परकृत्याविमिदनीम् ॥ ८४ ॥
दीर्घेन्दुयुग्मरुद्ब्रह्मामांसलोहितसंस्थिताम्।
यन्तिनोरयउच्चार्यकूरांकृत्यांसमुच्चरेत् ॥ ८५ ॥

इध्मैस्समिद्भिः ॥ ८० ॥ कुबेरमन्त्रमाह। तारइति। तार ॐ। अग्निप्रियास्वाहा ॥ ८१ ॥ कुबेरध्यानमाह। धनेति। रत्नकरण्डोदरे ॥ ८२-८४ ॥

वधूमिवपदं पश्चात्तांब्रह्मान्तेसदीर्घणः ।
पर्निर्णुद्मइत्यन्तेप्रत्यक्कर्तारमृच्छतु ॥ ८६ ॥
तारमायापुटो मन्त्रःस्यात्सप्तत्रिंशदक्षरः ।

प्रत्यंगिरा का मन्त्र : अब परकृत्य को नष्ट करनेवाली प्रत्यंगिरा को बतलाता हूँ–

दीर्घेन्दुयुक् मरुत् (यां) फिर ब्रह्मा (क) लोहित स्थित मांस (ल्प) फिर 'यंतिनोरयः' कहकर 'क्रूरां कृत्यां' कहना चाहिए । फिर 'वधूमिव' के बाद 'ब्रह्म' एवं सदीर्घ ण (णा) फिर 'अपनिर्णुद्मः' के पश्चात् 'प्रत्यक्कर्तारमृच्छतु'—यह पूरा मन्त्र तार (ॐ) एवं माया (ह्रीं) से सम्पुटित होकर ३७ अक्षर का मन्त्र बनता है ।

टिप्पणी : मन्त्रोद्धार : ॐ ह्रीं यां कल्पयंतिनोरयः क्रूराकृत्यां वधूमिव ह्रां ब्रह्मणा अपनिर्णुद्मः प्रत्यक्कर्तारमृच्छतु ह्रीं ॐ ।

ब्रह्मानुष्टुम्मुनिश्छन्दो देवी प्रत्यंगिरेरिता ॥ ८७ ॥
बीजशक्तितारमाये कृत्वा नाशे नियोजनम् ।

विनियोग : इस मन्त्र का ऋषि ब्रह्मा है, छन्द अनुष्टुप् है, देवी प्रत्यंगिरा देवता है, प्रणव बीज है, माया शक्ति है तथा (परकृत्य के) नाश में इसका विनियोग होता है ।

टिप्पणी : विनियोग : अस्य प्रत्यंगिरामन्त्रस्य ब्रह्मा ऋषिः अनुष्टुप् छन्दः, देवी प्रत्यंगगिरा देवता, ओं बीजं, ह्रीं शक्तिः परकृत्यनिवारणे (ममाखिलाप्तये) जपेविनियोगः ।

अष्टभिस्तोयनिधिभिर्युगैर्वेदैश्चपञ्चभिः ॥ ८८ ॥
वसुभिर्मन्त्रजैर्वर्णैर्दीर्घयुक्पार्वतीपरैः ।
प्रणवाद्यैःषडङ्गानि कल्पयेज्जातिसंयुतैः ॥ ८९ ॥
शिरोभ्रूमध्यवक्त्रेषु कण्ठे बाहुद्वयेहृदि ।
नाभावूर्वोर्जानुनोश्चपदानि पदयोर्न्यसत् ॥ ९० ॥
चतुर्दशक्रमान्मन्त्रीतारमायापुटान्यपि ।

प्रत्यंगिरामाह । दीर्घेति । मरुत्यकारः । दीर्घेन्दुयुक् । आविन्दुश्रुतः यां । ब्रह्माकः । लोहितःपः । तत्संस्थमांसलः । ल्प । यंतिनोरयः । क्रूरांकृत्यांवधूमवतांब्रह्मस्वरूपम् । सदीर्घोणःणा । अपनिर्णुद्मइतिस्वरूपम् । प्रत्यक्कर्तारमृच्छतुस्वरूपम् । प्रणवमायाबीजसम्पुटः ॥ ८५-८७ ॥ षडङ्गमाह । अष्टभिरिति । तोयनिधिभेश्चतुर्भिः । दीर्घयुक्पार्वतीमायाबीजंपरंयेषाम् । प्रणवआद्योयेषाम् । जातयोहृदयायनमइत्यादयस्तत्संयुतैरष्टादिवर्णैः षडङ्गम् ॥ ८८ ॥ पदन्यासमाह । शिरइति ॥ प्रणवमायासम्पुटानिचतुर्दशपदानिशिरआदिषुन्यसेत् । तेचवर्णसख्याक्रमात् । एकचतुरेकत्रिद्वित्रिद्वयेकत्रिपञ्चद्वित्रिवर्णैर्बोध्या । ॐह्रीं यांह्रींशिरसीत्यादि ॥ ८९-९० ॥

न्यास : मन्त्र के क्रमशः ८, ४, ४, ४, ५ एवं ८ अक्षरों से प्रारम्भ में प्रणव और अन्त में सदीर्घा माया लगाकर तथा जाति (हृदयाय नमः इत्यादि) के साथ षडङ्ग-न्यास करना चाहिए।

साधक प्रणव एवं मायाबीज से सम्पुटित मन्त्र के १४ पदों का क्रमशः शिर, भ्रूमध्य, मुख, कण्ठ, दोनों बाहु, हृदय, नाभि, दोनों ऊरु, दोनों जानु एवं दोनों पैरों में न्यास करे।

टिप्पणी : षडङ्गन्यास :

ॐ यां कल्पयंतिनोरयः ह्रां हृदयाय नमः।
ॐ क्रूरां कृत्यां ह्रीं शिरसे स्वाहा।
ॐ वधूमिव ह्रूं शिखायै वषट्।
ॐ ह्रां ब्रह्मणा ह्रैं कवचाय हुम्।
ॐ अपनिर्णुद्मः ह्रौं नेत्रत्रयाय वौषट्।
ॐ प्रत्यक्कर्तारमृच्छतु ह्रः अस्त्राय फट्।

पदन्यास :

ॐ ह्रीं यांह्रीं—शिरसि। ॐ ह्रीं मिव ह्रीं—नाभौ।
ॐ ह्रीं कल्पयंति ह्रीं—भूमध्ये। ॐ ह्रीं ह्रां ह्रीं—दक्षिण ऊरौ।
ॐ ह्रीं नो ह्रीं—मुखे। ॐ ह्रीं ब्रह्मणा ह्रीं—वामऊरौ।
ॐ ह्रीं रथः ह्रीं—कण्ठे। ॐ ह्रीं अपनिर्णुद्मः ह्रीं-दक्षिणजानौ।
ॐ ह्रीं क्रूरां ह्रीं—दक्षिणबाहौ। ॐ ह्रीं प्रत्य ह्रीं—वामजानौ।
ॐ ह्रीं कृत्यां ह्रीं—वामबाहौ। ॐ ह्रीं वकर्तार ह्रीं—दक्षिणपादे।
ॐ ह्रीं वधू ह्रीं—हृदि। ॐ ह्रीं मृच्छतु ह्रीं—वाम पादे।

आशाम्बरा मुक्तकचा घनच्छविर्ध्येयासचर्मासिकराहिभूषणा।
दंष्ट्रोग्रवक्त्राग्रसिताहितान्वया प्रत्यंगिरा शंकरतेजसेरिता ॥ ९१ ॥

ध्यान : दिगम्बरा, खुले केश वाली, मेघ के समान श्यामवर्ण वाली, चर्मधारण करने वाली, दोनों हाथों में तलवार एवं सर्प धारण करने वाली, उग्र दाँत एवं मुख से शत्रु समूह को ग्रसित करने वाली एवं शंकर के तेज से प्रदीप्ता प्रत्यंगिरा देवी का ध्यान करना चाहिए।

ध्यायन्नेवं जपेन्मन्त्रमयुतं तद्दशांशतः।
अपामार्गेधमराज्याज्यहविर्भिर्जुहुयात्ततः ॥ ९२ ॥

ध्यायन्नाह। आशेति। आशाम्बरानग्ना। घनच्छविर्मेघश्यामा। ग्रसितोऽहितानां-रिपूणामन्वयोवंशोयया। असिर्दक्षिणे ॥ ९१-९३ ॥

जपसंख्या एवं हवन : ऐसा ध्यान करते हुए इस मन्त्र का १० हजार जप करना चाहिए। तथा अपामार्ग की समिधा, घी एवं हविष्यान्न से दशांश-होम करना चाहिए।

अन्नपूर्णासने चार्चेदङ्गलोकेश्वरायुधः।
एवं सिद्धमनुर्मन्त्री प्रयोगेषु शतं जपेत् ॥ ९३ ॥

पीठ एवं आवरण पूजा : अन्नपूर्णा पीठ पर, अंग पूजा, लोकपाल एवं उनके आयुधों का पूजन करना चाहिए। इस प्रकार सिद्ध मन्त्र का साधक काम्यप्रयोगों में १०० बार जप करे।

टिप्पणी : पीठ पूजा : श्लोक ९ की टिप्पणी में बतलायी गयी रीति से पीठ देवता एवं पीठ शक्तियों का पूजन कर उस पीठ पर देवी का विधिवत् पूजन करना चाहिए।

आवरण पूजा : सर्वप्रथम कर्णिका में निम्नलिखित मन्त्रों से अंग पूजा करनी चाहिए, यथा :

ॐ यां कल्पयंतिनोरयः	ह्रां हृदयाय नमः।
क्रूरां कृत्यां	ह्रीं शिरसे स्वाहा।
वधूमिव	ह्रूं शिखायै वषट्।
ह्रां ब्रह्मणा	ह्रैं कवचाय हुम्।
अपनिर्णुद्मः	ह्रौं नेत्रत्रयाय वौषट्।
प्रत्यक्कर्तारमृच्छतु	ह्रः अस्त्राय फट्।

इसके बाद श्लोक २१ की टिप्पणी में अन्नपूर्णा के षष्ठ एवं सप्तम आवरण में बतलाये गये मन्त्रों से इन्द्र आदि लोकपालों तथा वज्र आदि आयुधों का पूजन कर धूप, दीप आदि उपचारों से देवी का विधिवत् पूजन करना चाहिए।

जुहुयाच्चशतं दिक्षु दशमन्त्रैर्हरेद्बलिम्।
यो मे पूर्वगतःपाप्मापापकेनेहकर्मणा ॥ ९४ ॥
इन्द्रंस्तंदेवउच्चार्य राजान्ते भञ्जयत्विति।
अञ्जयत्वितिचोच्चार्यमोहयत्विति चोच्चरेत् ॥ ९५ ॥
नाशयतुपदंपश्चान्मारयत्वित्यतो बलिम्।
तस्मैप्रयच्छतुकृतंममान्ते च शिवंमम ॥ ९६ ॥
शान्तिःस्वस्त्ययनंचास्तुबलिमन्त्र उदाहृतः।
प्रणवाद्योष्टषष्ठ्यर्णस्तेनैव वितरेद्बलिम् ॥ ९७ ॥

बलिमन्त्रमाह । यं मइति । ॐयोमेपूर्वगतःपाप्मापापकेनेहकर्मणाइन्द्रस्तंदेवराजोभञ्जयतुअञ्जयतुमोहयतुनाशयतुमारयतुकस्मैप्रयच्छतुकृतंममशिवंममशान्तिःस्वस्त्ययनंचास्तु । इतिबलिमन्त्रः । अनेनप्राच्यांबलिंदद्यात् ॥ ९४-९७ ॥

अस्मिन्मन्त्रे पूर्वपदस्थानेऽन्यादिपदं वदेत् ।
अग्निरित्यादि च पठेदिन्द्रइत्यादिके स्थले ॥ ९८ ॥
एवंतुदशमन्त्राःस्युस्तैस्तत्तद्दिग्बलिं हरेत् ।
इत्थं कृते शत्रुकृताकृत्या क्षिप्रंविनश्यति ॥ ९९ ॥

काम्य प्रयोग : (पूर्वोक्त रीति से सिद्ध मन्त्र का) काम्य प्रयोग में १०० बार जप करना चाहिए तथा १०० आहुतियाँ देनीं चाहिए। फिर दशों दिशाओं में वक्ष्यमाण मन्त्रों से बलि देनी चाहिए।

'यो मे पूर्वगतः पाप्मापापकेनेह कर्मणा इन्द्रस्तंदेव' कहकर 'राज' 'भंजयतु' 'अंजयतु' एवं 'मोहयतु' कहना चाहिए। फिर 'नाशयतु' 'मारयतु' 'बलितस्मै प्रयच्छतुकृतं मम' के बाद 'शिवमम शान्तिः स्वस्त्ययनं चास्तु' कहने से यह बलिमन्त्र बन जाता है। इसके प्रारम्भ में प्रणव लगाकर इस ६८ अक्षर वाले मन्त्र से बलि देनी चाहिए।

इस मन्त्र के 'पूर्व' के स्थान पर 'आग्नेय' आदि तथा 'इन्द्र' के स्थान पर 'अग्नि' आदि पढ़ने से १० दिक्पालों को बलि देने के दश मन्त्र बन जाते हैं। उन मन्त्रों से उन दिशाओं में बलि देनी चाहिए।

ऐसा करने से शत्रु द्वारा किये गये कृत्य शीघ्र नष्ट हो जाते हैं।

टिप्पणी : *बलिदान के मन्त्र* : ॐ यो मे पूर्वगतः पाप्मापापकेनेह कर्मणा इन्द्रस्तं देवराजो भञ्जयतु अंजयतु मोहयतु नाशयतु मारयतु बलिन्तस्मै प्रयच्छतु कृतं मम शिवं मम शान्तिः स्वस्त्ययनं चास्तु—इस मन्त्र से पूर्व में इन्द्र को बलिदान देना चाहिए।

इसी प्रकार आग्नेय आदि शेष ९ दिशाओं में भी यथाक्रमेण निम्नलिखित मन्त्रों से अग्नि आदि को बलि देनी चाहिए। बलिमन्त्र इस प्रकार हैं :

ॐ यो मे आग्नेयगतः पाप्मापापकेनेहकर्मणा अग्निस्तं तेजराजो भञ्जयतु इत्यादि

,,	,,	दक्षिणगतः	,,	,,	यमस्तं	प्रेतराजो	,,	,,
,,	,,	नैर्ऋत्यगतः	,,	,,	निर्ऋतिस्तं	रक्षराजो	,,	,,
,,	,,	पश्चिमगतः	,,	,,	वरुणस्तं	जलराजो	,,	,,
,,	,,	वायव्यगतः	,,	,,	वायुस्तं	प्राणराजो	,,	,,
,,	,,	उत्तरगतः	,,	,,	सोमस्तं	ताराराजो	,,	,,
,,	,,	ईशानगतः	,,	,,	ईशानस्तं	गणराजो	,,	,,
,,	,,	ऊर्ध्वगतः	,,	,,	ब्रह्मास्तं	प्रजाराजो	,,	,,
,,	,,	अधोगतः	,,	,,	अनन्तस्तं	नागराजो	,,	,,

अस्मिन्मन्त्रे । पूर्वेत्यस्यस्थानेअग्न्यादिपदम् । इन्द्रइत्यस्यस्थानेअग्निरित्यादि । देवराजइत्यत्रतेजोराजइत्यादिऊहान्कृत्वादशमन्त्राविधेयास्तैस्तस्यांतस्यांदिशिबलिंदद्यात् । यथा । योमेऽग्निगतःपाप्मापापकेनेहकर्मणाअग्निस्तंतेजोराजोभञ्जयत्वित्यादियोमेदक्षिणगतःयमस्तंप्रेतराजइत्यादि ॥ ९८-९९ ॥

अथ प्रत्यंगिरामालामन्त्रसिद्धिःप्रकीर्त्यते ।
तारोमायानमःकृष्णंवाससेशतवर्णकाः ॥ १०० ॥
सहस्रंहिंसिनिपदंसहस्रवदने पुनः ।
महाबलेपदंपश्चादुच्चरेदपराजिते ॥ १०१ ॥
प्रत्यंगिरेपरसैन्यपरकर्मसदृग्जलम् ।
ध्वंसिनिपरमन्त्रोत्सादिनिसर्वपदं ततः ॥ १०२ ॥
भूतान्ते दमनिप्रान्ते सर्वदेवान्समुच्चरेत् ।
बन्धयुग्मं सर्वविद्याश्छिंधियुक्क्षोभयद्वयम् ॥ १०३ ॥
परयन्त्राणिसंकीर्त्य स्फोटयद्वितयं पठेत् ।
सर्वान्ते शृङ्खला उक्त्वात्रोटयद्वितयंज्वलत् ॥ १०४ ॥
ज्वालाजिह्वं करालान्ते वदनेप्रत्यमुच्चरेत् ।
गिरेमायानमोंतोयं शरसूर्य्याक्षरो मनुः ॥ १०५ ॥

प्रत्यंगिरा का मालामन्त्र : अब प्रत्यंगिरा के माला मन्त्र की सिद्धि बतलाते है । तार (ॐ) माया (ह्रीं) फिर 'नमः कृष्णवाससे शत' 'सहस्रंहिंसिनि' 'सहस्रवदने' 'महाबले' 'अपराजिते प्रत्यंगिरे परसैन्यपरकृत्य' । फिर सदृक् जल (वि) 'ध्वंसिनि परमन्त्रोत्सादिनिसर्व' 'भूत' 'दमनि' एवं 'सर्वदेवान्' फिर बन्धयुग्म, 'सर्वविद्याः' छिन्धि युग्म, क्षोभय युग्म फिर 'परयन्त्राणि' स्फोटय युग्म फिर 'सर्वशृङ्खला' एवं त्रोटय युग्म फिर 'ज्वलज्ज्वाला जिह्व करालवदनेप्रत्यं' के बाद 'गिरे' माया (ह्रीं) तथा अन्त में 'नमः' लगाने से १२५ अक्षर का प्रत्यंगिरा का माला मन्त्र बनता है ।

टिप्पणी : प्रत्यंगिरा माला मन्त्र :

ॐ ह्रीं नमः कृष्णवाससे शतसहस्र हिंसिनि सहस्रवदने महाबले अपराजिते प्रत्यंगिरे परसैन्यपरकर्मविध्वंसिनि परमन्त्रोत्सादिनि सर्वभूतदमनि सर्वदेवान् बन्ध बन्ध सर्वविद्याश्छिन्दि छिन्दि क्षोभय क्षोभय परयन्त्राणि स्फोटय स्फोटय सर्वशृङ्खलास्त्रोटय त्रोटय ज्वलज्ज्वालाजिह्वे करालवदने प्रत्यंगिरे ह्रीं नमः ।

ऋष्यादिकं पूर्वमुक्तं माययास्यात्षडङ्गकम् ।
ध्यायेत्प्रत्यंगिरां देवीं सर्वशत्रुविनाशिनीम् ॥ १०६ ॥

प्रत्यंगिरामालामन्त्रमाह । तारइति । तारःप्रणवः । मायाह्रीं । सदृक् जलम् । इदुतोवः वि ॥ १००-१०४ ॥ शरसूर्य्याक्षरः । पञ्चविंशत्यधिकशतार्णः । ॐह्रींनमःकृष्णवाससेशतसहस्रंहिंसिनिसहस्रवदनेमहाबलेअपराजितेप्रत्यंगिरेपरसैन्यपरकर्मविध्वंसिनिपरमन्त्रोत्सादिनिसर्वभूतदमनिसर्वदेवान्बन्धबन्धसर्वविद्याश्छिंधि २ क्षोभय २ परयन्त्राणिस्फोटय २ सर्वशृङ्खलास्त्रोटयत्रोटयज्वलज्ज्वालाजिह्वे करालवदनेप्रत्यंगिरेह्रींनमः इति ॥ १०५-१०६ ॥

विनियोग एवं न्यास : इस मन्त्र के ऋषि आदि पूर्वोक्त मन्त्र के समान हैं। तथा मायाबीज से षडङ्गन्यास करना चाहिए। फिर सब शत्रुओं का नाश करनेवाली प्रत्यंगिरा देवी का ध्यान करना चाहिए।

टिप्पणी : विनियोग : अस्य प्रत्यंगिरा मन्त्रस्य ब्रह्माऋषिः, अनुष्टुप् छन्दः देवी प्रत्यंगिरा देवता ॐ बीजं ह्रीं शक्तिः परकृत्यनिवारणे (ममाखिलाप्तये वा) जपे विनियोगः।

षडङ्गन्यास : ह्रां हृदयाय नमः। ह्रैं कवचाय हुम्।
ह्रीं शिरसे स्वाहा। ह्रौं नेत्रत्रयाय वौषट्।
ह्रूं शिखायै वषट्। ह्रः अस्त्राय फट्।

सिंहारूढातिकृष्णांत्रिभुवनभयकृद्रूपमुग्रंवहन्ती
ज्वालावक्त्रावसानानववसनयुगंनीलमण्याभकान्तिः।
शूलं खड्गं बहन्तीनिजकरयुगले भक्तरक्षैकदक्षा सेयं-
प्रत्यंगिरा संक्षपयतु रिपुभिर्निमितं वोभिचारम् ॥ १०७ ॥

ध्यान : सिंह पर आरूढ़, तीनों लोकों को भयभीत करने वाली एकदम काली एवं उग्ररूप वाली, मुख से अग्नि की ज्वाला निकालने वाली, दो नवीन वस्त्र धारण करने वाली, नीलमणि के समान आभा वाली, दोनों हाथों में शूल एवं खड्ग धारण करने वाली एवं भक्तों की रक्षा में तत्पर प्रत्यंगिरा देवी हमारे शत्रुओं के द्वारा किये गये अभिचारों को नष्ट करे।

अयुतं प्रजपेन्मन्त्रं सहस्रं तिलराजिकाः।
हुत्वा सिद्धमनुं मन्त्रं प्रयोगेषु शतं जपेत् ॥ १०८ ॥

जपसंख्या एवं हवन : इस मन्त्र का १० हजार जप करना चाहिए तथा तिल एवं राजिका से १ हजार आहुतियाँ देकर सिद्ध मन्त्र का काम्यप्रयोग में १०० बार जप करना चाहिए।

ग्रहभूतादिका विष्टं सिञ्चेन्मन्त्रं जपञ्जलैः।
विनाशयेत्परकृतं यन्त्रमन्त्रादिकर्मणाम् ॥ १०९ ॥

काम्यप्रयोग : ग्रह एवं भूत आदि से ग्रस्त व्यक्ति पर इस मन्त्र का (१०० बार) जप करते हुए जल से मार्जन करना चाहिए। इस प्रकार परकृत यन्त्र मन्त्र आदि कृत्यों को नष्ट करना चाहिए।

ध्यानमाह। सिंहेति। खड्गोदक्षिणे ॥ १०७-१०९ ॥

मन्त्रं विरोधिशमकं प्रवक्ष्येषोडशाक्षरम् ।
प्रणवःकेशवःसेन्दुर्वर्गाद्याःपञ्चसेन्दवः ॥ ११० ॥
वियच्चन्द्रान्वितंरान्तसद्योजातःशशांकयुक् ।
मायात्रिकर्णचन्द्राढ्योभृगुःसर्गीसवर्मफट् ॥ ११ ॥
स्वाहान्तःषोडशार्णोयं मन्त्रःशत्रुविनाशनः ।

शत्रुनाशक मन्त्र : १६ अक्षरवाला शत्रुनाशक मन्त्र बतलाता हूँ ।

प्रणव (ॐ) सेन्दु केशव (अं) सेन्दु पंचवर्गाद्या (कं चं टं तं पं) चन्द्रान्वित वियत (हं) सद्योजात–शशांक युक् रान्त (लों) माया (ह्रीं) कर्णचन्द्राढ्य अत्रि (हुं) सर्गी भृगु (सः) वर्म (हुं) फिर 'फट्' एवं अन्त में 'स्वाहा' लगाने से १६ अक्षर वाला यह शत्रुनाशक मन्त्र बन जाता है ।

टिप्पणी . मन्त्रोद्धार : ॐ अं कं चं टं तं पं हं लों दुं सः हुं फट् स्वाहा ।

विधाताष्टिर्ऋषिश्छन्दःपर्वताब्ध्यग्निवायवः ॥ ११२ ॥
धराकाशौमहापूर्वा देवताःपरिकीर्तिताः ।
हुंबीजं पार्वतीशक्तिर्मायया तु षडङ्गकम् ॥ ११३ ॥

विनियोग एवं न्यास : इस मन्त्र का विधाता ऋषि है, अष्टि छन्द है, महापर्वत, महाब्धि, महाग्नि, महावायु महाधरा एवं महाकाश देवता बतलाये गये हैं, 'हुं' बीज है तथा पार्वती (ह्रीं) शक्ति है । (षड्दीर्घ सहित) माया बीज से षडङ्गन्यास करना चाहिए ।

टिप्पणी : *विनियोग* : अस्य मन्त्रस्य ब्रह्माऋषिः, अष्टिश्छन्दः महापर्वत-महाब्धि–महाग्नि-महावायु-महाधरा-महाकाशः षड् देवताः हुं बीजं ह्रीं शक्तिः ममाभीष्टसिद्धये जपे विनियोगः ।

षडङ्गन्यास :

ह्रां हृदयाय नमः ।	ह्रैं कवचाय हुम् ।
ह्रीं शिरसे स्वाहा ।	ह्रौं नेत्रत्रयाय वौषट् ।
ह्रूं शिखायै वषट् ।	ह्रः अस्त्राय फट् ।

शत्रुनाशकमन्त्रमाह । प्रणवइति । प्रणवः ॐ । सेन्दुःकेशवः । अं । सेन्दवः पञ्चवर्गाद्याः कंचंटंतंपं ॥ ११० ॥

चन्द्रान्वेवंवियत्हं । रान्तंलः । सद्योजातः । शशांकश्चेन्दुस्ताभ्यांयुक्तःलों । र मायाह्रीं । कर्णचन्द्राढ्यःउ । बिन्दुयुक्तोऽत्रेर्दुः । सर्गीभृगुःसः । वर्महुं ॥ १११ ॥

फट्स्वाहास्वरूपम् । विधाताब्रह्मा । महापूर्वाःपर्वतादयः । महापर्वतमहासमुद्रमहाग्नि महावायुमहापृथ्वीमहाकाशाःषड्देवताः । पार्वतीह्रीं मायादीर्घाढ्ययाषडङ्गम् ॥११२-११३॥

नानारत्नार्चिराक्रान्तं वृक्षांभःस्रवणैर्युतम् ।
व्याघ्रादिपशुभिर्व्याप्तं सानुयुक्तं गिरिं स्मरेत् ॥ ११४ ॥
मत्स्यकूर्मादिबीजाढ्यं नवरत्नसमन्वितम् ।
घनच्छायं सकल्लोलमकूपारं विचिन्तयेत् ॥ ११५ ॥
ज्वालावतीसमाक्रान्त जगत्त्रितयमद्भुतम् ।
पीतवर्णं महावह्निं संस्मरेच्छत्रुशान्तये ॥ ११६ ॥
धरासमुत्थरेण्वौघमलिनं रुद्धभूदिवम् ।
पवनं संस्मरेद्विश्वजीवनं प्राणरूपतः ॥ ११७ ॥
नदीपर्वतवृक्षादिफलिताग्रामसंकुला ।
आधारभूता जगतो ध्येया पृथ्वीह मन्त्रिणा ॥ ११८ ॥
सूर्यादिग्रहनक्षत्रकालचक्रसमन्वितम् ।
निर्मलं गगनं ध्यायेत्प्राणनामाश्रयप्रदम् ॥ ११९ ॥

ध्यान : अनेक रत्नो के समूह, वृक्ष झरनों एवं सिंह आदि पशुओं से व्याप्त तथा चोटियों से युक्त पर्वत का स्मरण करना चाहिए ।

मछली, कछुआ आदि से व्याप्त, अवरत्नवाले, मेघ के समान नीलवर्णवाले, तथा कल्लोलित समुद्र का ध्यान करना चाहिए ।

तीनों लोकों को ज्वालाओं से आक्रान्त करने वाले, अद्भुत एवं पीतवर्ण महाग्नि का शत्रु की शान्ति के लिए ध्यान करना चाहिए ।

पृथ्वी से उड़ायी गयी रेणु राशि से द्युलोक एवं भूलोक को मलिन एवं रुद्ध करने वाले तथा प्राण रूप से विश्व को जीवित रखनेवाले पवन का स्मरण करना चाहिए ।

नदी, पर्वत, वृक्ष आदि फलने-फूलने वाले ग्रामों से संकुलित तथा जगत की आधारभूता पृथ्वी का साधक को ध्यान करना चाहिए ।

सूर्य आदि ग्रह, नक्षत्र एवं कालचक्र से समन्वित तथा प्राणियों को आश्रय देने वाले निर्मल आकाश का ध्यान करना चाहिए ।

एवंषड्देवता ध्यात्वा सहस्राणि तु षोडश ।
जपेन्मन्त्रं दशांशेन षड्द्रव्यैर्होममाचरेत् ॥ १२० ॥
व्रीहयस्तन्दुला आज्यं सर्षपाश्चयवास्तिलाः ।
एतैर्हुत्वायथाभागं पीठे पूर्वोदिते यजेत् ॥ १२१ ॥
अङ्गदिक्पालवज्राद्यैरेवं सिद्धो भवेन्नुः ।

षडङ्गक्रमेण ध्यानान्याह । नानेति ॥ ११४ ॥ अकूपारं समुद्रम् ॥ ११५-११६ ॥
प्राणरूपेणविश्वजीवयतीति विश्वजीवनम् ॥ ११७-१२० ॥

जपसंख्या, हवन एवं पूजन : इस प्रकार उक्त ६ देवताओं का ध्यान कर इस मन्त्र का १६ हजार जप करना चाहिए। तथा षड्द्रव्यों से दशांश-होम करना चाहिए।

धान, चावल, घी, सरसों, जौ एवं तिल से प्रत्येक को अपने भाग के अनुसार (२६७) आहुतियाँ देकर पूर्वोक्त पीठ पर इनका पूजन करना चाहिए। फिर अङ्गपूजा दिक्पाल एवं वज्र आदि आयुधों के साथ उनका पूजन करने से यह मन्त्र सिद्ध हो जाता है।

शत्रूपद्रवमापन्नो युंज्यात्तन्नष्टये मनुम् ॥ १२२ ।
अकारं पर्वताकारं धावंतं शत्रुसम्मुखम् ।
पतनोन्मुखमत्युग्रं प्राच्यांदिशि विचिन्तयेत् ॥ १२३ ॥
ककारं क्षुब्धकल्लोलं प्लाविताखिलभूतलम् ।
समुद्ररूपिणं भीमं प्रतीच्यांदि संस्मरेत् ॥ १२४ ॥
वर्णं तदग्रिमं ज्वालासंघव्याप्तनभस्तलम् ।
याम्येरब्धजगद्दाहं स्मरेत्प्रलयपावकम् ॥ १२५ ॥
तृतीयवर्गप्रथमं प्रकम्पितजगत्त्रयम् ।
युगान्तपवनाकारमुत्तरस्यां दिशि स्मरेत् ॥ १२६ ॥
तुरीयपञ्चमाद्यार्णौ पृथ्वीगगनरूपिणौ ।
शत्रुवर्गं बाधमानौ चिन्तयेन्नियतात्मवान् ॥ १२७ ॥
तदग्रिमं वर्णयुगं शत्रोर्निःश्वासपद्धतिम् ।
निरुन्धानं स्मरेन्मन्त्रीविदधद्रिपुमाकुलम् ॥ १२८ ॥
मायादिवर्णत्रितयं शत्रोर्नेत्रश्रुतीमुखम् ।
प्रत्येकं तु निरुन्धानं चिन्तयेत्साधकोत्तमः ॥ १२९ ॥
वर्मसंक्षोभितं त्वस्त्रं रिपोराधारदेशतः ।
उत्थाप्य वह्निं तद्देहं प्रदहन्समनुस्मरेत् ॥ १३० ॥
एवंवर्णान्स्मरन्मन्त्रं जपेन्मन्त्रीसहस्रकम् ।
मण्डलत्रितयादर्वाङ्मारयत्येवविद्विषम् ॥ १३१ ॥

यथाभागंसप्तषष्टयधिकंशतद्वयंप्रत्येकम् ॥ १२१-१२२ ॥ प्रयोगमाह । अकारमिति ॥ १२३-१२४ ॥ तदग्रिमञ्चकारंयाम्येदक्षिणस्याम् । रब्धआरब्धोजगद्दाहोयेनलंकृतेतिवा-पाठः ॥ १२५ ॥ तृतीयेतिटम् ॥ १२६ ॥ तुरायेति । चतुर्थपञ्चमवर्गय रादिमार्णौतन्नं ॥१२७॥ तदग्रिमवर्गयुगंद्वयं हंलोमिति ॥ १२८ ॥ मायादिवर्णत्रितयंह्रींहुंसइति ॥ १२९ ॥ वर्मणा-हुंकारेणक्षोभितमस्त्रंफट्कारंरिपोधारादग्निमुत्थाप्यरिपुदेहंतंस्मरेत् ॥ १३० ॥ मण्डल-मेकोनपञ्चाशद्दिनानि ॥ ३१ ॥

एवं यःकुरुतेकर्मप्राणायामजपादिभिः ।
संशोधयित्वा स्वात्मानं स्वरक्षायै हरिं स्मरेत् ॥ १३२ ॥

प्रयोग विधि : शत्रु के उपद्रवों से परेशान व्यक्ति को उसके नाश हेतु इस मन्त्र का प्रयोग करना चाहिए ।

पर्वत जैसे आकारवाले, शत्रु की ओर दौड़ते हुए, उसके ऊपर पतनोन्मुख एवं अति उग्र अकार का पूर्वदिशा में ध्यान करना चाहिए ।

समुद्र जैसे रूप वाले, क्षुब्ध तरंगों से समस्त भूतल को आप्लावित करने वाले तथा भयंकर रूप वाले ककार का पश्चिम दिशा में ध्यान करना चाहिए ।

ज्वाला मण्डल धरती एवं आकाश को व्याप्त करने वाले, जगत के जलाने वाले प्रलयाग्नि के समान तृतीय वर्ण (चकार) का दक्षिण दिशा में ध्यान करना चाहिए ।

प्रलयकालीन तूफानों से तीनों लोकों को प्रकम्पित करने वाले तृतीय वर्ग के प्रथम अक्षर (टकार) का उत्तर दिशा में ध्यान करना चाहिए ।

शत्रुवर्ग को बाँधनेवाले, पृथ्वी एवं आकाशरूपी चतुर्थ एवं पंचम वर्ग के प्रथम अक्षरों (तकार एवं पकार) का, नियतात्मा साधक ध्यान करे ।

शत्रु की श्वास प्रणाली को रोकने वाले तथा शत्रुओं को व्याकुल करने वाले अग्रिम दोनों वर्णों का ध्यान करना चाहिए ।

फिर श्रेष्ठ साधक शत्रु के नेत्र, मुख एवं कान को अवरुद्ध करने वाले माया आदि तीन वर्णों का ध्यान करे । फिर वर्म (हुंकार) संक्षोभित तथा अस्त्र से शत्रु को उठाकर अग्नि में उसके शरीर को जलाते हुए मन्त्र का ध्यान करना चाहिए ।

इस प्रकार मन्त्र के सब वर्णों का ध्यान करते हुए मान्त्रिक १ हजार जप करे तो ३ मण्डलों (१४७ दिनों) पहिले शत्रु को मार सकता है ।

इस प्रकार के प्रयोग को करने वाले साधक को प्राणायाम एवं जप आदि से आत्मशुद्धि कर अपनी रक्षा के लिए हरि का स्मरण करना चाहिए ।

इति श्री शुकदेव चतुर्वेदि विरचितायां सटिप्पण्यां मन्त्रमहोदधेः
मोहिनी व्याख्यायां नवमस्तरङ्गः ।

मारणंकुर्वतःप्रायश्चित्तमाह । एवमिति ॥ १३२ ॥ इतिमन्त्रमहोदधिनौकायामञ्च-पूर्णादिनिरूपणंनामनवमस्तरङ्गः ।

दशम तरङ्गः

अथ प्रवक्ष्ये शत्रूणां स्तम्भिनी बगलामुखी ।
प्रणवोगगनंपृथ्वीशान्तिबिन्दुयुतंबग ॥ १ ·
लामुसाक्षोगदीसर्वदुष्टानांवाहलीन्दुयुक् ।
मुखपदंस्तंभयान्ते जिह्वांकीलयवर्णकाः ॥ २ ॥
बुद्धिविनाशयःन्ते तु बीजं तारोग्निसुन्दरी ।
षट्त्रिंशदक्षरो मन्त्रो नारदोमुनिरस्यतु ॥ ३ ॥
छन्दोपिवृहती ज्ञेयं देवताबगलामुखी ।
नेत्राक्षसायकनवपञ्चकाष्ठाभिरङ्गकम् ॥ ४ ॥

बगलामुखी मन्त्र : अब शत्रुओं का स्तम्भन करने वाली बगलामुखी को बतलाता हूँ—

प्रणव (ॐ) शान्ति एवं विन्दु सहित गगन एवं पृथ्वी (ह्लीं) फिर 'बगलामु' एवं साक्ष गदी (खि) फिर 'सर्वदुष्टानां वा' एवं इन्द्रयुक् हली (चं) फिर 'मुखंपदं स्तंभय' के बाद 'जिह्वाकीलय' एवं 'बुद्धिविनाशय' फिर बीज (ह्लीं) तार (ॐ) तथा अग्निसुन्दरी (स्वाहा) लगाने से यह ३६ अक्षर का मन्त्र बनता है ।

इस मन्त्र का ऋषि नारद है, वृहती छन्द है, तथा बगलामुखी देवता है । मन्त्र के २, ५, ५, ९, ५ एवं १० अक्षरों से षडङ्गन्यास करना चाहिए ।

टिप्पणी : बगलामुखी का मन्त्र, उसका विनियोग एवं न्यास इस प्रकार है—

मन्त्र : ॐ ह्लीं बगलामुखि सर्वदुष्टानां वाचंमुखं पदं स्तंभय जिह्वांकीलय बुद्धिं विनाशय ह्लीं ॐ स्वाहा ।

बगलामुखीमाह । प्रणवइति । गगनंहः । पृथ्वीलः । शान्तिः । विन्दुश्चतैर्युतंह्लीं । बगलामुखस्वरूपं । गदीखः । साक्षइयुतःखि । सर्वदुष्टानांवास्वरूपम् । इन्दुयुक्हलीचं । मुखंपदमित्यादिस्वरूहम् । बीजह्लीं । तारॐ । अग्निसुन्दरीस्वाहा ॥ १-३ ॥ षडङ्गमाह । नेत्रेति । अक्षाणिपञ्च ॥ ४ ॥

विनियोग : अस्य श्री बगलामुखीमन्त्रस्य नारद ऋषिः बृहती छन्दः बगलामुखी देवता शत्रूणां स्तम्भनार्थे (ममाभीष्टसिद्धये वा) जपे विनियोगः ।

षडङ्गन्यास :

ॐ ह्रीं हृदयाय नमः । वाचंमुखं पदं स्तंभय कवचाय हुम् ।
बगलामुखि शिरसे स्वाहा । जिह्वांकीलय नेत्रत्रयाय वौषट् ।
सर्वदुष्टानां शिखायै वषट् । बुद्धिं विनाशय ह्रीं ॐ स्वाहा अस्त्राय फट् ।

सौवर्णासनसंस्थितांत्रिनयनां पीतांशुकोल्लासिनीं
हेमाभांगरुचिं शशांकमुकुटां सच्चम्पकस्रग्युताम् ।
हस्तैर्मुद्गरपाश वज्ररसनाःसंबिभ्रतीं भूषणैर्व्याप्ताङ्गीं
बगलामुखीं त्रिजगतां संस्तम्भिनींचिन्तयेत् ॥ ५ ॥

ध्यान : सुवर्ण के सिंहासन पर विराजमान, तीन नेत्र वाली, पीत वस्त्रों से सुशोभित, सुवर्ण के समान आभावाली, चन्द्रकलारूपी मुकुट धारण करनेवाली, चम्पा की माला पहिननेवाली, हाथों में मुद्गर, पाश, वज्र एवं रिपुजिह्वा लिये हुए, आभूषणों से अलंकृत अंगोंवाली तथा तीनों लोकों को स्तंभित करनेवाली बगलामुखी का ध्यान करना चाहिए ।

एवं ध्यात्वाजपेल्लक्षमयुतं चम्पकोद्भवैः ।
कुसुमैर्जुहुयात्पीठे पूर्वोक्ते पूजयेदिमाम् ॥ ६ ॥

जपसंख्या, हवन एवं पीठ पूजा : इस प्रकार ध्यान कर (उक्त मन्त्रका) १ लाख जप करना चाहिए । चम्पा के फूलों से १० हजार आहुतियाँ देनी चाहिए । तथा पूर्वोक्त पीठ पर इनका पूजन करना चाहिए (पीठपूजा की विधि तरङ्ग ९ श्लो० ९ की टिप्पणी में बतलायी जा चुकी है) ।

चन्दनागुरुचन्द्राद्यैःपूजार्थं यन्त्रमालिखेत् ।
त्रिकोणषड्दलाष्टास्रषोडशारधरापुरम् ॥ ७ ॥

पूजायन्त्र : त्रिकोण, षड्दल, अष्टदल, षोडशदल एवं भूपुर सहित पूजायन्त्र को चन्दन, अगर एवं कपूर आदि से लिखना चाहिए ।

टिप्पणी : बगलामुखी का पूजायन्त्र (देखिये चित्र नं० २२)

मध्ये सम्पूजयेद्देवीं कोणे सत्त्वादिकान्गुणान् ।
षट्कोणेषु षडङ्गानि मातृर्भैरवसंयुताः ॥ ८ ॥

ध्यानमाह । सौवर्णेति । मुद्गरवज्रौदक्षयोः पाशरिपुजिह्वेवामयोः ॥ ५-८ ॥

सम्पूज्याष्टदले पद्मे षोडशारे यजेदिमाः ।
मङ्गलास्तम्भिनी चैव जृम्भिणीमोहिनी तथा ॥ ९ ॥
वश्याचलाबलाका च भूधराकल्मषाभिधा ।
धात्री च कलनाकालकर्षिणीभ्रामिकापिच ॥ १० ॥
मन्दगमनाचभोगस्थाभाविकाषोडशीस्मृता ।
भूगृहस्य चतुर्दिक्षु पूर्वादिषु यजेत्क्रमात् ॥ ११ ॥
गणेशं बटुकं चापि योगिनीं क्षेत्रपालकम् ।
इन्द्रादींश्चततो बाह्येनिजायुधसमन्वितान् ॥ १२ ॥
इत्थंसिद्धमनुर्मन्त्रीस्तम्भयेद्देवतादिकान् ।

आवरणपूजा : मध्य में देवी का पूजन करना चाहिए तथा त्रिकोण में सत्त्व आदि गुणों की पूजा करनी चाहिए। षड्कोण षडङ्गपूजा तथा अष्टदल में भैरवों के साथ मातृकाओं का पूजन करना चाहिए।

षोडशदल में इन शक्तियों का पूजन करना चाहिए—मंगला, स्तंभिनी, जृम्भिणी, मोहिनी, वश्या, चला, बलाका, भूधरा, कल्मषा, धात्री, कलना, कालकर्षिणी, भ्रामिका, मन्दगमना, भोगस्था एवं भाविका—ये १६ शक्तियाँ कही गयी हैं।

भूपुर की पूर्व आदि चारों दिशाओं में गणेश, बटुक, योगिनी एवं क्षेत्रपाल का पूजन करना चाहिए। और फिर उसके बाहर अपने आयुधों के साथ इन्द्र आदि दिक्-पालों का पूजन करना चाहिए।

इस प्रकार सिद्ध मन्त्र से मान्त्रिक देवता आदि सभी को स्तभित कर सकता है।

टिप्पणी : आवरण पूजाविधि : श्लोक ५ में वर्णित बगलामुखी के स्वरूप का ध्यान कर मानसोपचार से पूजन कर शंख स्थापन करना चहिए। फिर तरङ्ग ९ श्लोक ९ की टिप्पणी में बतलायी गयी रीति से पीठपूजा कर उस पर देवी का विधिवत पूजन कर आवरणपूजा करनी चाहिए, यथा :

सर्वप्रथम यन्त्र के मध्य में मूलमन्त्र से बगलामुखी देवी का पूजन करना चाहिए। फिर त्रिकोण में निम्नलिखित मन्त्रों से सत्त्व, रज एवं तम, इन तीनों गुणों का पूजन करना चाहिए। इनकी पूजा के मन्त्र इस प्रकार हैं :

ॐ सं सत्त्वाय नमः ॐ रं रजसे नमः। ॐ तं तमसे नमः।

तत्पश्चात् षड्कोण में निम्नलिखित मन्त्रों से अङ्गपूजा करनी चाहिए, यथा :

ॐ ह्लीं हृदयाय नमः। सर्वदुष्टानां शिखायै वषट्।
बगलामुखि शिरसे स्वाहा। वाचं मुखं पदं स्तंभय कवचाय हुम्।

भैरवसंयुतामातृरष्टदलेसम्पूज्यषोडशदलेइमाभङ्गलाद्यायजेत् ॥ ९-१२ ॥

जिह्वां कीलय नेत्रत्रयाय वौषट् । बुद्धि विनाशय ह्रीं ॐ स्वाहा अस्त्राय फट् ।

तदनन्तर अष्टदल में असिताङ्ग आदि अष्टभैरवों के साथ ब्राह्मी आदि अष्टमातृकाओं का इन मन्त्रों से पूजन करना चाहिए :

ॐ असिताङ्गब्राह्मीभ्यां नमः । ॐ उन्मत्तवाराहीभ्यां नमः ।
ॐ रुरु माहेश्वरीभ्यां नमः । ॐ कपालीन्द्राणीभ्यां नमः ।
ॐ चण्डकौमारीभ्यां नमः । ॐ भीषणचामुण्डाभ्यां नमः ।
ॐ क्रोध वैष्णवीभ्यां नमः । ॐ संहारमहालक्ष्मीभ्यां नमः ।

इसके बाद षोडश दल में मंगला आदि १६ शक्तियों का उनके नाममन्त्रों से पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ मंगलायै नमः । ॐ वलाकायै नमः । ॐ कालकर्षिण्यै नमः ।
ॐ स्तंभिन्यै ,, । ॐ धूधरायै ,, । ॐ भ्रामिकायै ,, ।
ॐ जृम्भिण्यै ,, । ॐ कल्मषायै ,, । ॐ मन्दगमनायै ,, ।
ॐ मोहिन्यै ,, । ॐ धात्र्यै ,, । ॐ भोगस्थायै ,, ।
ॐ वश्यायै ,, । ॐ कलनायै ,, । ॐ भाविकायै ,, ।
ॐ चलायै ,, ।

फिर भूपुर के चारों ओर पूर्व आदि दिशाओं में क्रमशः गणेश, बटुक, योगिनी एवं क्षेत्रपालों का निम्नलिखित मन्त्रों से पूजन करना चाहिए :

ॐ गं गणपतये नमः—पूर्वे । ॐ यां योगिनीभ्यो नमः—पश्चिमे ।
ॐ बं बटुकाय नमः—दक्षिणे । ॐ क्षं क्षेत्रपालाय नमः—उत्तरे ।

तत्पश्चात् भूपुर के बाहर अपनी अपनी दिशाओं में इन्द्र आदि दिक्पालों का निम्नलिखित मन्त्रों से पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ लं इन्द्राय देवाधिपतये नमः । ॐ यं वायवे प्राणाधिपतये नमः ।
ॐ रं अग्नये तेजोऽधिपतये नमः । ॐ सं सोमाय ताराधिपतये नमः ।
ॐ मं यमाय प्रेताधिपतये नमः । ॐ हं ईशानाय गणाधिपतये नमः ।
ॐ क्षं निर्ऋतये रक्षोधिपतये नमः । ॐ आं ब्रह्मणे पूजाधिपतये नमः ।
ॐ वं वरुणाय जलाधिपतये नमः । ॐ ह्रीं अनन्ताय नागाधिपतये नमः ।

और अन्त में दिकपालों के पास उनके अपने अपने वज्र आदि आयुधों का पूजन करना चाहिए, यथा :

इन्द्र समीपे - ॐ वं वज्राय नमः । निर्ऋति ,, - ॐ खं खड्गाय नमः ।
अग्नि ,, - ॐ शं शक्तये नमः । वरुण ,, - ॐ पां पाशाय नमः ।
यम ,, - ॐ दं दण्डाय नमः । वायु समीपे - ॐ अं अंकुशाय नमः ।

सोम ,, - ॐ गं गदायै नमः । ब्रह्मा ,, - ॐ पं पद्माय नमः ।
ईशान ,, - ॐ शूं शूलाय नमः । अनन्त ,, - ॐ चं चक्राय नमः ।

इस प्रकार आवरण पूजा कर धूप दीप आदि उपचारों से विधिवत देवी का पूजन कर यथाशक्ति जप करना चाहिए ।

पीतवस्त्रस्तदासीनःपीतमाल्यानुलेपनः ॥ १३ ॥
पीतपुष्पैर्यजेद्देवीं हरिद्रोत्थस्रजा जपन् ।
पीतां ध्यायन्भगवतीं प्रयोगेष्वयुतं जपेत् ॥ १४ ॥
त्रिमध्वक्ततिलैर्होमो नृणां वश्यकरोमतः ।
मधुरत्रितयाक्तैःस्यादाकर्षो लवणैर्ध्रुवम् ॥ १५ ॥
तैलाभ्यक्तैर्निम्बपत्रैर्होमो विद्वेषकारकः ।
तालल्लोणहरिद्राभिद्विषां संस्तम्भनं भवेत् ॥ १६ ॥
अङ्गार धूमंराजीश्चमाहिषं गुग्गुलं निशि ।
श्मशानपावके हुत्वा नाशयेदचिरादरीन् ॥ १७ ॥
गरुतोगृध्रकाकानां कटुतैलं बिभीतकम् ।
गृहधूमं चितावह्नौ हुत्वा प्रोच्चाटयेद्रिपून् ॥ १८ ॥
दूर्वागुडूचीलाजान्यो मधुरत्रितयान्वितान् ।
जुहोति सोखिलान्रोगाञ्छमयेद्दर्शनादपि ॥ १९ ॥
पर्वताग्रे महारण्ये नदीसंगेशिवालये ।
ब्रह्मचर्यव्रतो लक्षं जपेदखिलसिद्धये ॥ २० ॥

काम्य प्रयोग : पीले वस्त्र पहिनकर, पीले आसन पर बैठकर, पीली माला धारण कर तथा पीला चन्दन लगाकर साधक पीले पुष्पों से देवी की पूजा करे । तथा पीतवर्णा देवी के स्वरूप का ध्यान करत हुए काम्यप्रयोगों में हल्दी की माला पर १० हजार जप करना चाहिए ।

त्रिमधु मिश्रित तिलों के होम से मनुष्यों को वश में किया जाता है । मधुरत्रय मिश्रित लवण के होम से निश्चित रूप से आकर्षण होता है । तैल मिलाकर नीम के पत्रों का होम करने से विद्वेषण होता है । ताल, लोण एवं हरिद्रा के होम से शत्रुओं का स्तंभन होता है । श्मशान की अग्नि में रात्रि के समय अंगार, धूम, राजी, महिष एवं गुग्गुल की आहुतियाँ देने से शत्रुओं का नाश हो जाता है । चिता की अग्नि में गिद्ध एवं कौआ के पंख, सरसों का तेल, बहेडा तथा गृहधूम का होम करने से

॥ १३-१७ ॥ गरुतःपक्षान् ॥ १८-२४ ॥

शत्रुओं का उच्चाटन हो जाता है। मधुरत्रय मिश्रित दूर्वा, गुडूची एवं लाजाओं का जो व्यक्ति हवन करता है उसके दर्शन मात्र से रोग ठीक हो जाते हैं।

पर्वत के शिखर, घोर जंगल, नदियों के संगम या शिवालय में ब्रह्मचर्यव्रत का पालन करते हुए १ लाख जप करने से सब सिद्धियाँ मिलती हैं।

एकवर्णगवीदुग्धं शर्करामधुसंयुतम्।
त्रिशतं मन्त्रितं पीतंहन्याद्विषपराभवम् ॥ २१ ॥

एक रंगवाली गाय के दूध में शक्कर एवं शहद मिलाकर ३०० बार मूलमन्त्र से अभिमन्त्रित कर पीने से शत्रुओं को मार डालता है।

श्वेतपालाशकाष्ठेन रचिते रम्यपादुके।
अलक्तरञ्जिते लक्षं मन्त्रयेन्मनुनामुना ॥ २२ ॥
तदारूढःपुमान्गच्छेत्क्षणेन शतयोजनम्।
पारदं च शिलां तालपिष्टं मधुसमन्वितम् ॥ २३ ॥
मनुना मन्त्रयेल्लक्षं लिपेत्तेनाखिलांतनुम्।
अदृश्यःस्याद्गृणामेष आश्चर्यंदृश्यतामिदम् ॥ २४ ॥

सफेद पलाश (ढाक) की लकड़ी से बनी सुन्दर पादुकाओं को आलता से रंगने के बाद इस मन्त्र से १ लाख बार अभिमन्त्रित करना चाहिए। इनको पहिनकर मनुष्य क्षणमात्र में १०० योजन चला जाता है।

मधु के साथ मिलाकर पारा, मैंनसिल एवं ताल को पीसकर इस मन्त्र से १ लाख बार अभिमन्त्रित करना चाहिए। फिर उसका शरीर पर लेप करना चाहिए। ऐसा करने से व्यक्ति मनुष्यों के बीच में अदृश्य हो जाता है। (जो व्यक्ति, देखना चाहें) इस आश्चर्य को देख लें।

षट्कोणे विलिखेद्बीजं साध्यनामान्वितं मनोः।
हरितालनिशाचूर्णैरुन्मत्तरससंयुतैः ॥ २५ ॥
शेषाक्षरैः समावीतं धरागेहविराजितम्।
तद्यंत्रं स्थापितप्राणं पीतसूत्रेणवेष्टयेत् ॥ २६ ॥
भ्राम्यत्कुलालचक्रस्थां गृहीत्वामृत्तिकां तया।
रचयेद्वृषभं रम्यं यन्त्रं तन्मध्यतःक्षिपेत् ॥ २७ ॥
हरितालेन संलिप्य वृषं प्रत्यहमर्चयेत्।
स्तम्भयेद्विद्विषां वाचं गतिं कार्य्यपरम्पराम् ॥ २८ ॥

हरिताल एवं हल्दी के चूरे में धतूरे का रस मिलाकर उससे षड्कोण में 'ह्लीं'

बीज के साथ 'अमुकं स्तम्भय' लिखे। फिर मन्त्र के शेष अक्षरों से उसे वेष्टित कर सूपुर बनावे। उस यन्त्र में प्राणप्रतिष्ठा कर पीले धागे से वेष्टित करे।

फिर घूमती हुई कुम्हार की चाक से मिट्टी लेकर सुन्दर बैल बनावे तथा उसके बीच में इस यन्त्र को रख दे। फिर उस पर हरिताल का लेप कर प्रतिदिन उस बैल की पूजा करनी चाहिए। (ऐसा करने से) शत्रुओं की वाणी, गति, कार्य एवं परम्परा ये सब स्तंभित हो जाती हैं।

टिप्पणी : इस प्रयोग में प्रयुक्त होनेवाले वगलामुखीस्तंभन यन्त्र की आकृति (देखिये चित्र नं० २३)

आदाय वामहस्तेन प्रेतभूमिस्थखर्परम्।
अङ्गारेण चितास्थेन तत्र यन्त्रं समालिखेत् ॥ २९ ॥
मन्त्रितं निहितं भूमौ रिपूणां स्तंभयेद्गतिम्।
प्रेतवस्त्रे लिखेद्यंत्रमङ्गारेणैव तत्पुनः ॥ ३० ॥
मण्डूकवदने न्यस्येत्पीतवस्त्रेणवेष्टितम्।
पूजितं पीतपुष्पैस्तद्वाचं संस्तम्भयेद्द्विषाम् ॥ ३१ ॥

श्मशान में पड़े खर्पर (खप्पर) को बाँये हाथ में लेकर चिता के अंगार से उसमें यन्त्र लिखना चाहिए। उसको अभिमन्त्रित कर शत्रुओं की जमीन में रखने से उनकी गति स्तम्भित हो जाती है।

कफन पर चिता के अंगार से यन्त्र लिखना चाहिए। फिर उस यन्त्र को मेंढक के मुँह में रखकर उसे पीले धागे से लपेट देना चाहिए। उसकी पीले पुष्पों से पूजा करने से शत्रुओं की वाणी स्तंभित हो जाती है।

यद्भूमौ भवितादिव्यं तत्र यन्त्रं समालिखेत्।
मार्जितं तद्वृषापत्रैर्दिव्यस्तम्भनकृद्भवेत् ॥ ३२ ॥
इन्द्रवारुणिकामूलं सप्तशोमनुमन्त्रितम्।
क्षिप्तं जलेदिव्यकृतां जलस्तम्भनकारकम् ॥ ३३ ॥
किंभूरिणा साधकेन मन्त्रःसम्यगुपासितः।
शत्रूणां गतिबुद्ध्यादेःस्तम्भनो नात्रसंशयः ॥ ३४ ॥

जिस भूमि में दिव्य बातें होती हों वहाँ यह यन्त्र लिखना चाहिए और फिर उसका वृषापत्रों से मार्जन करने से वह दिव्य घटनाओं को स्तंभित करता है।

यन्त्रमाह। षटकोण इति। धत्तूररसाक्तहरिद्राचूर्णेनषट्कोणेऽमुकंस्तंभयेतिवर्णयुतंह्ली-मितिबीजंविलिख्यमन्त्रशेषार्णैःसंवेष्ट्योपरिचतुरस्रंणवेष्टितंपीतसूत्रवीतंकृत्वा भ्रमत्कुम्भ-कारचक्रस्थमृदारचितवृषोदरेप्रक्षिप्यहरितालेनसंलिप्य वृषंप्रत्यहंपूजयेत् स्तम्भनफलम् ॥ २५-३१ ॥ वृषाआटरूपकः ॥ ३२-३४ ॥

इन्द्र एवं वाराणिका इन दोनों लताओं की जड़ को मूलमन्त्र से ७ बार अभिमन्त्रित कर जल में डालने से वह जल को स्तम्भित कर देता है।

विशेष क्या कहें साधक के द्वारा सम्यक् उपासित यह मन्त्र शत्रुओं की गतिविधि एवं बुद्धि का स्तम्भन कर देता है इसमें सन्देह नहीं है।

उच्यते स्वप्नवाराही जनतावशकारिणी।
वेदादिबीजं मायाच्यहृदीर्घौजलपावकौ ॥ ३५ ॥
खंसट्कखद्वयुग्मेघारेस्वप्नंसर्गिणौचठौ।
कृशानुवल्लभांतोयं मन्त्रःपञ्चदशाक्षरः ॥ ३६ ॥

स्वप्न वाराही का मन्त्र : अब जनता को वश में करने वाली स्वप्नवाराही को बतलाते हैं।

वेदादि (ॐ) मायाबीज (ह्रीं) हृद (नमः) दीर्घ जल एवं पावक (वा रा) सट्कं खं (हि) सद्वयुक् मेघा (घो) फिर 'रे स्वप्न' विसर्ग सहित दो ठ (ठः ठः) और अन्त में कृशानुवल्लभा (स्वाहा) लगाने से यह १५ अक्षर का मन्त्र बनता है।

टिप्पणी : *स्वप्नवाराही मन्त्र* : ॐ ह्रीं नमो वाराहि घोरे स्वप्नं ठः ठः स्वाहा।

ईश्वरोजगतीस्वप्नवाराहीमुनिपूर्वकाः।
तारो बीजं च हृल्लेखाशक्तिष्ठौकीलकं मतम् ॥ ३७ ॥

विनियोग : इस मन्त्र का ईश्वर ऋषि है, जगती छन्द है। स्वप्नवाराही देवता है, प्रणव बीज है, हल्लेखा शक्ति है तथा ठकार द्वय कीलक कहा गया है।

टिप्पणी : *विनियोग* : अस्य श्री स्वप्नवाराहीमन्त्रस्य ईश्वर ऋषिः जगती छन्दः स्वप्नवाराहीदेवता ॐ बीजं ह्रीं शक्तिः ठःठः कीलकं ममाभीष्टसिद्धये जपे विनियोगः।

द्विपञ्चनेत्रहस्ताक्षियुग्मार्णैरङ्गकं मनोः
पादलिंगकटी कण्ठगण्डाक्षिश्रुतिनासिके।
विन्यस्य मन्त्रजान्वर्णांश्चिन्तयेत्परदेवताम् ॥ ३८ ॥

न्यास : (मन्त्र के) २, ५, २, २, २, एवं २ अक्षरों से षडङ्गन्यास करना चाहिए, तथा पैर, लिङ्ग, कटि, कण्ठ, गण्ड, नेत्र, कान, नासिका एवं शिर में मन्त्र के वर्णों का न्यास कर महादेवी का ध्यान करना चाहिये।

स्वप्नवाराहीमाह। वेदादीति। वेदादिर्बीजम् ॐ। मायार्ह्रीं। हृत्नमः। जलंबः। पावकोरः। तौदीर्घौबारा। सट्कंखंहः हि। मेघाघः। सद्वयुक्ओंहुताधो। रेस्वप्नंस्वरूपम्। सर्गिणौठौ। ठःठः। कृशानुवल्लभास्वाहा ॥ ३५-३७ ॥ वर्णन्यासमाह। पादेति। लिङ्गेकण्ठे-मूर्धिनएकैकः। अन्यत्र द्वौद्वौ ॥ ३८ ॥

टिप्पणी : षडङ्गन्यास :

ॐ ह्रीं हृदयाय नमः ।	स्वप्नं कवचाय हुम् ।
नमो वाराहि शिरसे स्वाहा ।	ठः ठः नेत्रत्रयाय वौषट् ।
घोरे शिखायै वषट् ।	स्वाहा अस्त्राय फट् ।

वर्णन्यास :

ॐ नमः - दक्षपादे ।	रां नमः - कण्ठे ।	प्नं नमः - दक्षकर्णे ।
ह्रीं नमः - वामपादे ।	हिं नमः - दक्षगण्डे ।	ठः नमः - वामकर्णे ।
नं नमः - लिङ्गे ।	घों नमः वामगण्डे ।	ठः नमः - दक्षनासायाम् ।
मों नम :- दक्षकटौ ।	रें नमः - दक्षनेत्रे ।	स्वां नमः - वामनासायाम्
वां नमः - वामकटौ ।	स्वं नमः - वामनेत्रे ।	हां नमः - मूर्ध्नि ।

मेघश्यामरुचिं मनोहरकुचां नेत्रत्रयोद्भासितां कोलास्यां
शशिशेखरा॰चलयादंष्ट्रातले शोभिनीम् ।
बिभ्राणां स्वकराम्बुजैरसिलतां चर्मापिपाशं
सृणिं वाराहीमनुचिन्तयेद्धयवरारूढां शुभालंकृतिम् ॥ ३९ ॥

ध्यान : मेघ के समान श्यामल आभावाली, सुन्दरस्तन वाली, तीन नेत्रवाली, वराह जैसे मुखवाली, मस्तक पर चन्द्रकला धारण करने वाली, दाँत रखी पृथ्वी से सुशोभित हाथों में तलवार, ढाल, पाश एवं अंकुश धारण करने वाली, घोड़े पर सवार तथा अलंकारों से सुशोभित वाराही का ध्यान करना चाहिए ।

लक्षं जपेद्दशांशेन नीलपद्मैस्तिलैःशुभैः ।
जुहुयात्पूर्वसंप्रोक्ते पीठेसम्पूजयेदिमाम् ॥ ४० ॥

जपसंख्या, हवन एवं पूजन : इस मन्त्र का १ लाख जप करना चाहिए । नील-कमल एवं तिलों से दशांश होम करना चाहिए तथा पूर्वोक्त पीठ पर इनका पूजन करना चाहिए ।

त्रिकोणेतां समाराध्य षट्कोणेष्वङ्गदेवताः ।
षोडशारे यजेच्छक्तीर्वक्ष्यमाणास्तुषोडश ॥ ४१ ॥
उच्चाटनीतदीशीचशोषणीशोषणीश्वरी ।
मारणीमारणीशी च भीषणीभीषणीश्वरी ॥ ४२ ॥
त्रासनीत्रासनीशीचकम्पनीकम्पनीश्वरी ।
आज्ञाविवर्तिनीपश्चादाज्ञाविवर्तिनीश्वरी ॥ ४३ ॥

ध्यानमाह । मेघेति । कोलास्यांवराहवदनाम् । दंष्ट्रातलेवर्तमानयाऽचलयावसुधया-

वस्तुजातेश्वरी चाथसर्वसम्पादनीश्वरी ।
एताःपूज्याश्चतुर्थ्यन्ताःप्रणवाद्या नमोन्विताः ॥ ४४ ॥
यजेदष्टदलेपद्मेमातृभैरवसंयुताः ।
लोकपालान्दशदले द्वितीयेहेतिसंयुतान् ॥ ४५ ॥

आवरण पूजा : त्रिकोण में देवी का पूजन कर षड्कोण में अङ्गपूजा करनी चाहिए । षोडश दल में वक्ष्यमाण १६ शक्तियों का पूजन करना चाहिए। उच्चाटनी, उच्चाटनीश्वरी, शोषणी, शोषणीश्वरी, मारणी, मारणीश्वरी, भीषणी, भीषणीश्वरी, त्रासनी, त्रासनीश्वरी, कम्पनी, कम्पनीश्वरी, आज्ञाविवर्तनी, आज्ञाविवर्तनीश्वरी, वस्तुजातेश्वरी एवं सर्वसम्पादनीश्वरी, इन १६ शक्तियों के चतुर्थ्यन्त नाम के आगे प्रणव तथा अन्त में नमः लगाकर उन मन्त्रों से इनका पूजन करना चाहिए ।

अष्टदल पद्म में भैरवों के साथ मातृकाओं का पूजन करना चाहिए । दशदल में लोकपालों का तथा द्वितीय दशदल में उनके आयुधों का पूजन करना चाहिए । इस रीति से सिद्ध मन्त्र का साधक काम्य कर्मों में प्रयोग करे ।

टिप्पणी पूजाविधि : श्लोक ३९ में वर्णित स्वप्नवाराही के स्वरूप का ध्यान कर मानसोपचार से पूजन कर विधिवत शंख स्थापन कर तरङ्ग ९ श्लोक ९ की टिप्पणी में बतलायी गयी रीति से पीठ देवता एवं पीठ शक्तियों का पूजन कर 'ॐ ह्रीं सर्व-शक्ति कमलासनाय नमः' मन्त्र से देवी को आसन देकर पुनः देवी के स्वरूप का ध्यान कर मूल मन्त्र से उनकी मूर्ति की कल्पना कर फिर आवाहन आदि उपचारों से देवी का विधिवत पूजन करना चाहिए ।

पूजायन्त्र : स्वप्नवाराही की पूजा के लिए त्रिकोण गर्भित षड्कोण एवं उसके बाहर क्रमशः षोडशदल, अष्टदल, तथा २ दशदल वाला यन्त्र बनाना चाहिए (देखिये चित्र नं० २४) ।

आवरणपूजा विधि : पूर्वोक्त पीठ पर ध्यान आवाहन आदि उपचारों से पञ्च-पुष्पाञ्जलि दान पर्यन्त देवी का पूजन कर आवरण पूजा करनी चाहिए, यथा :

सर्वप्रथम त्रिकोण में मूल मन्त्र से देवी का पूजन करना चाहिए । इसके बाद षड्कोण में निम्नलिखित मन्त्रों से अङ्गपूजा करनी चाहिए । षडङ्गपूजा के मन्त्र इस प्रकार हैं :

ॐ ह्रीं हृदयाय नमः ।	स्वप्नं कवचाय हुम् ।
नमोवाराहि शिरसे स्वाहा ।	ठः ठः नेत्रत्रयाय वौषट् ।
घोरे शिखायै वषट् ।	स्वाहा अस्त्राय फट् ।

शोभिताम् । असिलतां कुशौदक्षयोः ॥ ३९-४६ ॥

तत्पश्चात् षोडश दल में उच्चाटनी आदि १६ शक्तियों का उनके नाम मन्त्रों से पूजन करना चाहिए, यथा ।

ॐ उच्चाटन्यै नमः ।
ॐ उच्चाटनीश्वर्यै नमः ।
ॐ शोषण्यै नमः ।
ॐ शोषणीश्वर्यै नमः ।
ॐ मारण्यै नमः ।
ॐ मारणीश्वर्यै नमः ।
ॐ भीषण्यै नमः
ॐ भीषणीश्वर्यै नमः ।
ॐ त्रासन्यै नमः ।
ॐ त्रासनीश्वर्यै नमः ।
ॐ कम्पन्यै नमः ।
ॐ कम्पनीश्वर्यै नमः ।
ॐ आज्ञाविवर्तिन्यै नमः ।
ॐ आज्ञाविवर्तिनीश्वर्यै नमः ।
ॐ वस्तुजातेश्वर्यै नमः
ॐ सर्व सम्पादनीश्वर्यै नमः ।

फिर अष्ट दलों में पूर्व आदि क्रम से असिताङ्ग आदि आठ भैरवों के साथ ब्राह्मी आदि अष्टमातृकाओं का उनके नाममन्त्रों से पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ असिताङ्गब्राह्मीभ्यां नमः ।
ॐ रुरुमाहेश्वरीभ्यां नमः ।
ॐ चण्डकौमारीभ्यां नमः ।
ॐ क्रोधवैष्णवीभ्यां नमः ।
ॐ उन्मत्तवाराहीभ्यां नमः ।
ॐ कपालीन्द्राणीभ्यां नमः ।
ॐ भीषण चामुण्डाभ्यां नमः ।
ॐ संहार महालक्ष्मीभ्यां नमः ।

तदनन्तर दशदल में अपनी-अपनी दिशाओं में इन्द्र आदि १० लोकपालों का निम्नलिखित मन्त्रों से पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ लं इन्द्राय देवाधिपतये नमः ।
ॐ रं अग्नये तेजोधिपतये नमः ।
ॐ मं यमाय प्रेताधिपतये नमः ।
ॐ क्षं निर्ऋतये रक्षोधिपतये नमः ।
ॐ वं वरुणाय जलाधिपतये नमः ।
ॐ यं वायवे प्राणाधिपतये नमः ।
ॐ सं सोमाय ताराधिपतये नमः ।
ॐ हं ईशानाय गणाधिपतये नमः ।
ॐ आं ब्रह्मणे प्रजाधिपतये नमः
ॐ ह्रीं अनन्ताय नागाधिपतये नमः ।

और अन्त में द्वितीय दशदल में अपनी-अपनी दिशाओं में वज्र आदि आयुधों का निम्नलिखित मन्त्रों से पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ वं वज्राय नमः ।
ॐ शं शक्तये नमः ।
ॐ दं दण्डाय नमः ।
ॐ खं खड्गाय नमः ।
ॐ पां पाशाय नमः ।
ॐ अं अंकुशाय नमः ।
ॐ गं गदाये नमः ।
ॐ शूं शूलाय नमः ।
ॐ पं पद्माय नमः ।
ॐ चं चक्राय नमः ।

इस प्रकार आवरण पूजा कर धूप, दीप आदि उपचारों से यथाविधि देवी का

पूजन करना चाहिए। इस रीति से पूजन सहित उक्त मन्त्र का पुरश्चरण करने से मन्त्र सिद्ध हो जाता है। तब इस मन्त्र का काम्यकर्मों में प्रयोग करना चाहिए।

एवं सिद्धं मनुं मन्त्री काम्यकर्मणि योजयेत्।
तर्पयेन्नारिकेलोत्थैर्जलैस्तीर्थोद्भवैरपि ॥ ४६ ॥
मानयेत्तरुणीवर्गान्सर्वकार्यार्थसिद्धये।

काम्यप्रयोग : नारियल के पानी एवं तीर्थोदक से तर्पण करके साधक समस्त काम एवं अर्थसम्बन्धी कार्यों में सफलता के लिए स्त्रियों को मना लेता है।

कृष्णपक्षेष्टमीघस्रे भूताहे वा कृतव्रतः ॥ ४७ ॥
चतुष्पथान्नदीकूलद्वयात्कौलालदेशतः।
मृदमानीय धत्तूररससंयुक्तया तया ॥ ४८ ॥
रचयेत्पुत्तलीं रम्यां साध्यासुस्थापनान्विताम्।
ततःप्रेताम्बरे यन्त्रं नृकाकाजामृजा लिखेत् ॥ ४९ ॥
चिताङ्गारयुजायोनिषट्कोणंभूपुरान्वितम्।
तदन्तर्मन्त्रमालिख्य वेष्टयेन्मनुनामुना ॥ ५० ॥
साध्यमुच्चाटययुगंशोषयद्वितयं ततः।
मारयद्वितयं चाथभीषयद्वितयं ततः ॥ ५१ ॥
नाशयद्वितयंपश्चाच्छिरःकम्पययुग्मकम्।
ममाज्ञावर्तिनंपश्चात्कुरुसर्वाभिमार्णकाः ॥ ५२ ॥
तवस्तुजातंशब्दान्तेसम्पादययुगं ततः।
सर्वंकुरुयुगं स्वाहा मुनिसप्ताक्षरोमनुः ॥ ५३ ॥
अनेन वेष्टितं यन्त्रं कृतं देवीप्रतिष्ठितम्।
पुत्तल्या हृदि विन्यस्य यजेत्तामुक्तमार्गतः ॥ ५४ ॥
तदग्रे प्रजपेन्मन्त्रं रात्रावेकान्तमाश्रितः।
सहस्रं साष्टकं भूयःपूजयेत्तां समाहितः ॥ ५५ ॥
एवं कृते नरानार्य्यो राजानो राजवल्लभाः।
सिंहागजामृगाःक्रूराभवेयुर्वशगा ध्रुवम् ॥ ५६ ॥

कृष्णपक्षंइत्यारभ्यवशगाध्रुवमित्यन्तएकोवश्यार्थंप्रयोगः ॥ ४७-४८ ॥ मृकाकाजानांनरवायसमेषाणामसृजारुधिरेण ॥ ४९-५० ॥ वेष्टनमन्त्रमाह ॥ साध्यमिति ॥ ५१ ॥ शिरःस्वाहा। स्पष्टमन्यत् ॥ ५२ ॥ मुनिसप्ताक्षरः ससप्तसत्यर्णः ॥ ५३ ॥ उक्तमार्गतःपूर्वोक्तविधिना ॥ ५४-५७ ॥

कृष्ण पक्ष की अष्टमी या चतुर्दशी को व्रत करके साधक चौराहे से, नदी के दोनों किनारों से या कुम्हार के घर से मिट्टी लाये। उसमें धतूरे का रस मिलाकर उससे सुन्दर साध्य की पुतली बनावे और उसमें प्राणप्रतिष्ठा करे।

फिर कफन पर नर-काक के खून एवं चिता के अंगार से षड्कोण कर्णिका एवं भूपुर वाले यन्त्र को लिखना चाहिए। उसके बीच में स्वप्नवाराही का मन्त्र लिखकर इस (७७ अक्षर वाले) मन्त्र से षड्कोण को वेष्टित करना चाहिए।

'साध्यं' उच्चाटय उच्चाटय, शोषय शोषय, मारय मारय, भीषय भीषय, नाशय नाशय, फिर 'स्वाहा' और कम्पय कम्पय 'ममाज्ञावर्तिनं' के बाद कुरु फिर 'सर्वाभिम' एवं 'तवस्तुजातं' सम्पादय सम्पादय फिर 'सर्वं' कुरु कुरु तथा अन्त में 'स्वाहा' लगाने से ७७ अक्षर का यह मन्त्र बनता है। यथा—साध्यमुच्चाटयोच्चाट्य शोषय शोषय मारय मारय भीषय भीषय नाशय नाशय स्वाहा कम्पय कम्पय ममाज्ञावर्तिनं कुरु सर्वाभिमतवस्तुजातं सम्पादय सम्पादय सर्वंकुरु कुरु स्वाहा।

इस मन्त्र से वेष्टित यन्त्र में देवी की प्रतिष्ठा कर उस यन्त्र को पुतली के हृदय में रख कर पूर्वोक्त विधि से उसका पूजन करे। रात्रि के समय एकान्त में उसके आगे १००८ जप करे तथा एकाग्रचित्त से उसका पुनः पूजन करे। ऐसा करने पर मनुष्य, स्त्री, राजा, राजा के प्रियजन, सिंह, हाथी मृग एवं अन्य क्रूर प्राणी निश्चित रूप से वश में हो जाते हैं।

टिप्पणी : वशीकरण के इस प्रयोग में काम आने वाला स्वप्नवराही का वशीकरण यन्त्र (देखिये चित्र नं० २५)।

चित्ते ध्यात्वानिजं कार्य्यं शयीतविजनेव्रती।
यथा भावि तथा देवीस्वप्नेवदतिमंत्रिणे ॥ ५७ ॥

मन में अपने कार्य का ध्यान कर साधक निर्जन स्थान पर सो जाय, तो होने वाले कार्य को देवी स्वप्न में बतला देती है।

अथैतस्या महायन्त्रं प्रवक्ष्येसिद्धिदं नृणाम।
कृत्वात्रिकोणं षट्कोणं षोडशारं वसुच्छदम् ॥ ५८ ॥
दशारद्वितयं पञ्चदशास्रं भूपुरद्वयम्।
त्रिकोणे काम बीजस्थं वाग्भवं विलिखेत्पुनः ॥ ५९ ॥
षट्सुकोणेषु वाग्बीजं पाशं मायां सृणिश्रियम्।
दीर्घं च कवचं पश्चाद्विलिखेत्षोडशच्छदे ॥ ६० ॥

यन्त्रमाह। कृत्वेति ॥ ५८ ॥ कामःक्लीं। वाग्भवम् ऐं ॥ ५९ ॥

शक्तीःषोडशपूर्वोक्ताब्राह्म्याद्या अष्टपत्रके ।
भैरवैःसंयुताञ्यस्येद्दशारे दिक्पतीन्क्रमात् ॥ ६१ ॥
स्वस्वबीजादिकान्बीजसमूहःकथ्यतेऽधुना ।
मांसं रक्तंविषंमेरुर्जलं वायुर्भृगुर्वियत् ॥ ६२ ॥
एतानि शशियुक्तानि पाशोमायान्तिमा मता ।
वज्राद्यान्विलिखेत्सम्यक्पंक्तिपत्रे द्वितीयके ॥ ६३ ॥
तिथिपत्रे मूलवर्णान्गायत्र्यर्णैःप्रवेष्टयेत् ।
वाय्वग्नीविलिखेद्भूमि मन्दिरद्वितयान्तिषु ॥ ६४ ॥
भूर्जादौ यन्त्रमालिख्य जपं सम्पातसाधितम् ।
बाह्वादौ विधृतं दद्यान्नृणां कीर्तिंधनं सुखम् ॥ ६५ ॥
बहुनाकिमिहोक्तेन वाराहीष्टं प्रयच्छति ।

स्वप्नवाराही का धारणयन्त्र : अब मनुष्यों को सिद्धिदायक इसका महायन्त्र बतलाता हूँ :

त्रिकोण, षडकोण, षोडशदल बनाकर दो दशदल फिर पंचदशदल एव दा भूपुर बनाने चाहिए। त्रिकोण में कामबीजस्थ वाग्भव बीज को लिखना चाहिए। षडकोणों में क्रमश वाग्बीज (ऐं) पाश (आं) माया (ह्रीं) सृणि (क्रों) श्री (श्रीं) एवं दीर्घकवच्च (हूं) लिखना चाहिए। षोडशदल में पूर्वोक्त (उच्चाटनी आदि) १६ शक्तियों तथा अष्टदल में अष्टभैरवों के साथ ब्राह्मी आदि मातृकाओं को लिखना चाहिए। दश दल में यथाक्रमेण अपने अपने बीजों के साथ दिक्पालों को लिखना चाहिए। उनके बीजों को अब कहते हैं—

बिन्दुसहित–मांस (ल) रक्त (र) विष (म) मेरु (क्ष) जल (व) वायु (य) भृगु (स) एवं वियत् (ह) तथा पाश (आं) एवं माया (ह्रीं)—ये दिक्पालों के बीज हैं।

फिर द्वितीय दशदल में विधिवत् वज्र आदि आयुधों को लिखना चाहिए। पञ्चदशदल के पत्रों में मूलमन्त्र के वर्णों को वैदिक गायत्री के वर्णों के साथ लिखना चाहिए। दोनों भूपुरों के कोणों में वायु (य) एवं अग्नि (र) लिखना चाहिए।

पाशमआं । मायाह्रीं । सृणिक्रों । श्रियंश्रीं । दीर्घंकवचंहूं ॥ ६० ॥ पूर्वोक्ताउच्चाटनाद्याः ॥ ६१ ॥ दिक्पालबीजान्याह । मांसमिति । मांसंलः । रक्तंरः । विषंमः । मेरुःक्षः । जलं वः । वायुर्यः । भृगुःसः । वियत्हः ॥ ६२ ॥ एतानिशशियुक्तानि । पाशःआं । अन्तिमाचरमामायाह्रीं ॥ ६३ ॥ तिथिपत्रेपञ्चदशदले । गायत्र्यर्णैर्वैदिकगायत्रीवर्णैः । भूमिमिति । चतुरस्रद्वयकोणेषुवाय्वग्नी यरेफौलिखेत् ॥ ६४-६५ ॥

भोजपत्र आदि पर सम्पातित घी से यह यन्त्र लिखकर मूलमन्त्र का जप करके भुजा आदि में धारण करने से यह मनुष्यों को कीर्ति, धन एवं सुख देता है।

विशेष क्या कहें, उक्त विधि से उपासिता वाराही मनोवांछित फल देती है।

टिप्पणी : स्वप्नवाराही का धारण यन्त्र (देखिये चित्र नं २६)।

वाग्बीजपुटिताभूमिर्नमोंते भगवत्यथ ॥ ६६ ॥
वार्तालिवारागगनंसदृग्वाराहिवापदम् ।
राहमुखि ततोबीजत्रयंपूर्वोदितं वदेत् ॥ ६७ ॥
अन्धेअन्धिनिहृदयंरुन्धेरुन्धिनिहृत्तथा ।
जम्भेजम्भिनिहृत्पश्चान्मोहेमोहिनिहृत्पुनः ॥ ६८ ॥
स्तम्भेस्तम्भिनिहार्दान्ते पुनर्बीजत्रयं वदेत् ।
सर्वदुष्टप्रदुष्टानां सर्वेषां सर्ववाक्पदम् ॥ ६९ ॥
चित्तचक्षुर्मुखगतिजिह्वास्तम्भंकुरुद्वयम् ।
शीघ्रंवश्यंकुरुद्वन्द्वं त्रिबीजीठचतुष्टयम् ॥ ७० ॥
सर्गाढ्यंवर्मफट्स्वाहावेदरुद्राक्षरो मनुः ।

वार्ताली मन्त्र का उद्धार : वाग्बीज पुटिता भूमि (ऐं ग्लौं ऐं) एवं 'नमो' के बाद 'भगवति' 'वार्तालिवारा' एवं सदृक् गगन (हि) फिर 'वाराहिवा' 'राहमुखि' एवं बीजत्रय (ऐं ग्लौं ऐं) फिर 'अन्धे अंधिनि' एवं हृदय (नमः) 'रुंधे रुंधिनि' एवं हृत् (नमः), 'जंभे जंभिनि' एवं हृत् (नमः), 'मोहे मोहिनि' एवं हृत् (नमः) 'स्तंभे स्तंभिनि' एवं हार्द (नमः), फिर बीजत्रय (ऐं ग्लौं ऐं) के बाद 'सर्वदुष्ट-प्रदुष्टानां सर्वेषां सर्ववाक्' 'चित्तचक्षुर्मुखगतिजिह्वा स्तंभं' कुरुद्वय (कुरुकुरु) फिर 'शीघ्रवश्यं' कुरुद्वय (कुरुकुरु) एवं त्रिबीज (ऐं ग्लौं ऐं) फिर सर्गाढ्य ठ चतुष्टय (ठः ठः ठः ठः) वर्म (हुं) एवं अन्त में 'फट् स्वाहा' तथा प्रारम्भ में ॐ लगाने से ११४ अक्षर का यह मन्त्र बनता है।

टिप्पणी : *वार्तालीमन्त्र* : ॐ ऐं ग्लौं ऐं नमो भगवतिवार्तालि वाराहिवाराहि-वाराहमुखि ऐं ग्लौं ऐं अंधेअंधिनि नमो रुंधेरुंधिनि नमो जंभेजंभिनि नमो मोहेमोहिनि नमो स्तंभेस्तंभिनी नमो ऐं ग्लौं ऐं सर्वदुष्टप्रदुष्टानां सर्वेषां वाक्चित्तचक्षुर्मुखगतिजिह्वास्तंभं कुरुकुरु शीघ्रं वश्यं कुरु कुरु ऐं ग्लौं ऐं ठः ठः ठः ठः हुं फट् स्वाहा।

वार्तालीमाह। वागिति। भूमिःग्लौं। सावाग्बीजेनपुटिता तन्मध्यऐंग्लौंऐमिति ॥६६॥ सदृक्गगनाह। पूर्वोदितंबीजत्रयम्। ऐंग्लौंऐमिति ॥ ६७ ॥ हृदयंनमः। हृन्नमः ॥ ६८ ॥ हार्दंनमः। बीजत्रयंऐंग्लौंऐमिति ॥ ६९ ॥ त्रिबीजी ऐंग्लौंऐमिति। सर्गाढय ठचतुष्टयं ठःठःठःठः ॥ ७० ॥

प्रणवादिर्मुनिश्छन्दःशिवोतिजगती तथा ॥ ७१ ॥
वार्तालीदेवता प्रोक्ता वार्तालीहृदयं स्मृतम् ।
वाराहीतिशिरःप्रोक्तं शिखावाराहमुख्यपि ॥ ७२ ॥
अन्धेअन्धिनिदर्मोक्तं रुन्धेन्धिनिनेत्रकम् ।
जम्भेजिम्भिनिचास्त्रं स्यात्ततो ध्यायेत्तु देवताम् ॥ ७३ ॥

विनियोग एवं न्यास : इस मन्त्र का शिव ऋषि है, अतिजगती छन्द है तथा देवी वार्ताली को देवता बतलाया गया है ।

'वार्ताली' से हृदय, वाराही से शिर, वाराहमुखी से शिखा, अंधेअंधिनि से कवच, रुंधेरुंधिन से नेत्र तथा जंभेजंभिनि से अस्त्र पर न्यास करना कहा गया है । इसके बाद देवता का ध्यान करना चाहिए ।

टिप्पणी : *विनियोग* : अस्य श्रीवार्तालीमन्त्रस्य शिवऋषिरतिजगती छन्दः वार्ताली देवता ममाखिलाप्तये जपे विनियोगः ।

षडङ्गन्यास :

वार्ताली हृदयाय नमः ।	अंधे अंधिनि कवचाय हुम् ।
वाराही शिरसे स्वाहा ।	रुंधेरुंधिनि नेत्रत्रयाय वौषट् ।
वाराहमुखी शिखायै वषट् ।	जंभेजंभिनि अस्त्राय फट् ।

रक्ताम्भोरुहकर्णिकोपरिगते शावासने संस्थितां
मुण्डस्रक्परिराजमानहृदयां नीलाश्मसद्रोचिषम् ।
हस्ताब्जैर्मुसलं हलाभयवरान्सम्बिभ्रन्तीं सत्कुचां
वार्तालीमरुणांबरां त्रिनयनां वन्दे वराहाननाम् ॥ ७४ ॥

ध्यान : लालकमल की कर्णिका पर शवासन पर विराजमान, मुण्डमाला से सुशोभित हृदयवाली, नीलमणि के समान कान्तिवाली, करकमलों में मुसल-हल, अभय एवं वरदमुद्रा धारण करने वाली, सुन्दर स्तनवाली, लालवस्त्र एवं तीन नेत्रवाली तथा वराह जैसे मुखवाली वार्ताली देवी की मैं वन्दना करता हूँ ।

तत्सप्तदशसाहस्रं प्रजपेत्तद्दशांशतः ।
तिलैर्बन्धूककुसुमैर्जुहुयान्मधुरान्वितैः ॥ ७५ ॥

जपसंख्या एवं हवन : इस मन्त्र का १७ हजार जप करना चाहिए । मधुरमिश्रित तिल एवं बन्धूक पुष्पों से दशांशहोम करना चाहिए ।

वेदरुद्राक्षरः चतुर्दशोत्तरःशतार्णः ॥ ७१-७३ ॥ ध्यानमाह । रक्तेति । मुसलवरौ-दक्षयोः ॥ ७४-७६ ॥

पूजायन्त्रमथोवक्ष्ये जपादिनवशक्तिकम् ।
स्वर्णे रूप्ये तथाताम्रे भूर्जपत्रेथ दारुणि ॥ ७६ ॥
लिखेद्गोरोचनारात्रिचन्दनागुरुकुंकुमैः ।
योनिपञ्चास्रषट्कोणाष्टपत्रशतपत्रकम् ॥ ७७ ॥
सहस्रदलभूबिम्बसंवीतद्वारसंयुतम् ।

पूजायन्त्र : सुवर्ण, चाँदी, ताँबा, भोजपत्र या लकड़ी पर गोरोचन, हल्दी, चन्दन, अगर एवं कुंकुम से योनि, पंचकोण, षड्कोण, अष्टदल, शतदल, सहस्रदल एवं चारद्वार वाले भूपुर से वेष्टित यन्त्र को लिखना चाहिए ।

टिप्पणी : वार्ताली का पूजायन्त्र (देखिये चित्र नं० २७) ।

कैलासाचलमध्यस्थं पीठमेतद्विचिन्तयेत् ॥ ७८ ॥
तत्रावाह्य यजेद्देवीमुपचारैर्मनोहरैः ।

पीठपूजा : कैलास पर्वत के मध्य में स्थित पीठ का ध्यान करना चाहिए तथा उस पीठ पर देवी का आवाहन कर रम्य उपचारों से उनका पूजन करना चाहिए ।

त्रिकोणमध्ये देवेशीं तदग्न्यादिषु चाङ्गकम् ॥ ७९ ॥
वार्ताली चापि वाराही पूज्या वाराह मुख्यपि ।
त्रिकोणेष्वथ पञ्चास्रेष्वन्धिनीरुन्धिनी तथा ॥ ८० ॥
जम्भिनीमोहिनी चापिस्तम्भिनीज्या तु पञ्चमी ।
षट्कोणेषुपुनःपूज्या डाकिनीराकिनी तथा ॥ ८१ ॥
लाकिनीकाकिनी चापि शाकिनीहाकिनी पुनः ।
षट्कोणपार्श्वयोःपूज्यंस्तम्भिनीक्रोधिनीद्वयम् ॥ ८२ ॥
मुसलेष्टवरौत्वाद्याकपालहलभृत्परा ।
षट्कोणाग्रे यजेच्चण्डोच्चण्डं तस्याःसुतोत्तमम् ॥ ८३ ॥
शूलं नागं च डमरुंकपालं दधतं करैः ।
इन्द्रनीलनिभं नग्नं जटाभारविराजितम् ॥ ८४ ॥

रात्रिर्हरिद्रा । पूजायन्त्रमाह । योनीति । योनिस्त्रिकोणम् ॥ ७७ ॥ भूबिम्बंरतुरस्रम् ॥ ७८ ॥ तदग्न्यादिषु तस्यारेव्याअग्न्यादिषु अग्निनिर्ऋतिवायवीशानाग्निदिशासु । अगकं षडङ्गानि । यजेदितिपूर्वेणान्वयः ॥ ७९-८२ ॥ स्तम्भिनीध्यानेइष्टोवरोदक्षेमुसलंवामे । पराक्रोधिनी । कपालहलभृत् कपालंदक्षे । देवीसुतायचण्डोच्चण्डायनमइतिसुतपूजा ॥ ८३ ॥ सुतध्यानमाह । शूलमिति । डमरुकपालेदक्षयोः । शूलनागौवामयोः ॥ ८४ ॥

अष्टपत्रेषु वार्तालीमुखं देव्यष्टकं यजेत् ।
शतपत्रेषु सम्पूज्या रुद्रार्कावसवोश्विनौ ॥ ८५ ॥
त्रिरेकैकोंत्यपत्रे तु जम्भिनीस्तम्भिनीयुता ।
शतकोणाग्रतःपूज्यःसिंहोमर्षिसंयुतः ॥ ८६ ॥
सहस्रपत्रे वाराहीं पूजयेत्तु सहस्रशः ।
अंकुशोङ्तवाराहीनमोंतस्तन्मनुःस्मृतः ॥ ८७ ॥
भूपुरद्वारदेशे तु बटुकं क्षेत्रपालकम् ।
योगिनीं गणनाथं च तत्तन्मन्त्रैः प्रपूजयेत् ॥ ८८ ॥
फान्तःसबिन्दुर्बटुकोङ्तोहृत्सप्तवर्णकः ।
मेरुःशशियुतः क्षेत्रपालायनमसान्वितः ॥ ८९ ॥
अष्टार्णःशेषयुग्वायुःसचन्द्रोयोगिनीपदम् ।
भ्योनमोंतःसप्तवर्णःखान्तश्चन्द्रान्वितोगण ॥ ९० ॥
पतयेहृच्चाष्टवर्णाःप्रोक्तास्ते मनवःक्रमात् ।
दिक्पालानायुधैर्युक्तान्दिक्षु सम्पूजयेत्ततः ॥ ९१ ॥

आवरणपूजा : त्रिकोण के मध्य में देवेशी की पूजा तथा उससे आग्नेय, नैऋत्यादि कोणों में अङ्गपूजा करनी चाहिए। त्रिकोण के तीनों कोणों में क्रमशः वार्ताली, वाराही एवं वाराहमुखी का पूजन करना चाहिए।

इसके पंचकोण में अंधिनी, रुंधिनी, जंभिनी, मोहिनी एवं स्तंभिनी का पूजन करना चाहिए। फिर षड्कोण में डाकिनी, राकिनी, लाकिनी, काकिनी, शाकिनी एवं हाकिनी का पूजन करना चाहिए। तत्पश्चात् षड्कोण के दोनों ओर स्तंभिनी एवं क्रोधिनी इन दोनों का पूजन करना चाहिए। स्तंभिनी के दोनों हाथों में क्रमशः मुसल एवं वर है तथा क्रोधिनी के दोनों हाथों में कपाल एवं हल है। षड्कोण के अग्रभाग में

वार्तालीमुखं वार्ताल्यादि। देव्यष्टकमनन्तरोक्तं वार्तालीवाराहीवाराहमुख्यंधिनी-रुन्धिनीजम्भिनीमोहिनीस्तम्भिनीसंज्ञकम्। रुद्राःएकादश वीरभद्रादयः। अर्काःद्वादश धात्रादयः। वसवोष्टौधरादयः। अश्विनौनासत्यदस्रौ ॥ ८५ ॥ एकैकःपत्रत्रिकेपूज्यः। एवं-नवनवतिः। चरमपत्रेतुजम्भिनीस्तम्भिनीभ्यांनमइति ॥ ८६ ॥ वाराहीमन्त्रमाह। अंकुश इति। क्रोंवाराह्यैनमः इति मन्त्रेणसहस्रवारंवाराहीमेवपूजयेत् ॥८७-८८॥ बटुकमन्त्रमाह। फांतइति। फांतोबः। बंबटुकायनमइति। क्षेत्रपालमन्त्रमाह। मेरुरिति। मेरुःक्षः। क्षं क्षेत्रपालायनमः इति ॥ ८९ ॥ योगिनीमन्त्रमाह। अष्टार्णइति। वायुर्यः शेषयुक्-आयुतः सचन्द्रोबिन्दुयुतश्च यांयोगिनीभ्योनमइति। गणेशमन्त्रमाह। खांतइति। खांतोगः ॥ ९०-९१॥

देवी के पुत्र चण्डोच्चण्ड का पूजन करना चाहिए, जिनके हाथों में शूल, नाग, डमरू एवं कपाल है, इन्द्रनीलमणि जैसी उनकी आभा है, वे विवस्त्र हैं तथा जटाओं से सुशोभित हैं। चण्डोच्चण्ड का ऐसा ध्यान कर उनका पूजन करना चाहिए।

अष्टदल में वार्ताली आदि (वार्ताली, वाराही, वाराहमुखी, अंधनी, रुंधिनी, जंभिनी, मोहिनी एवं स्तंभिनी) आठ देवियों का पूजन करना चाहिए।

शतदल में वीरभद्र आदि एकादश, धात्रादि द्वादश, आठवसु तथा सत्य एवं दक्ष (कुल ३३ देवताओं का) ३-३ पत्रों पर १-१ देवता के क्रम से पूजन करना चाहिए तथा अन्तिम पत्र पर जंभिनी एवं स्तंभिनी का पूजन करना चाहिए।

सहस्रदल में वाराहीमन्त्र से १ हजार बार उनका पूजन करना चाहिए। अंकुश (क्रों) चतुर्थ्यन्त वाराही (वाराह्यै) एवं अन्त में 'नमः' लगाने से—'क्रों वाराह्यै नमः'—यह उनकी पूजा का मन्त्र बतलाया गया है।

भूपुर के द्वारों पर बटुक, क्षेत्रपाल, योगिनी एवं गणपति का उनके मन्त्रों से पूजन करना करना चाहिए। सबिन्दु फान्त (बं) चतुर्थ्यन्त बटुक (बटुकाय) और अन्त में हृत् (नमः) लगाने से ७ अक्षर का (बटुक पूजन का) मन्त्र बनता है। शशि सहित मेष (क्षं) और 'क्षेत्रपालाय नमः' यह ८ अक्षर का (क्षेत्रपाल के पूजन का) मन्त्र होता है। सचन्द्र शेष युक् वायु (यां) फिर 'योगिनी' एवं 'भ्योनमः'—यह ७ अक्षर का (योगिनी पूजन का) मन्त्र है। चन्द्रान्वित खान्त (गं) फिर 'गणपतये' एवं हृद् (नमः) लगाने से ८ अक्षर का (गणपतिपूजन का) मन्त्र होता है। ये चारों क्रमशः उनके मन्त्र बतलाये गये हैं।

फिर आयुधों के साथ दिक्पालों का अपनी अपनी दिशाओं में पूजन करना चाहिए।

टिप्पणी : आवरण पूजाविधि : सर्वप्रथम त्रिकोण के मध्य में मूलमन्त्र से वार्ताली देवी का पूजन कर देवी से आग्नेयकोण आदि दिशाओं में निम्नलिखित मन्त्रों से षडङ्गपूजन करना चाहिए :

वार्ताली हृदयाय नमः।	अंधे अंधिनि कवचाय हुम्।
वाराही शिरसे स्वाहा।	रुंधे रुंधिनि नेत्रत्रयाय वौषट्।
वाराहमुखी शिखायै वषट्।	जंभेजंभिनि अस्त्राय फट्।

इसके बाद त्रिकोण के तीनों कोणों में वार्ताली, वाराही एवं वाराहमुखी का उनके नाममन्त्रों से पूजन करना चाहिए :

ॐ वार्तालयै नमः। ॐ वाराह्यै नमः। ॐ वाराहमुख्यै नमः।

तत्पश्चात् पंचकोणों में अंधिनी आदि का उनके नाममन्त्रों से पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ अंधिन्यै नमः । ॐ जंभिन्यै नमः । ॐ स्तंभिन्यै नमः ।
ॐ रुंधिन्यै नमः । ॐ मोहिन्यै नमः ।

फिर षड्कोण में डाकिनी आदि का निम्नलिखित मन्त्रों से पूजन करना चाहिए .

ॐ डाकिन्यै नमः । ॐ लाकिन्यै नमः । ॐ शाकिन्यै नमः ।
ॐ राकिन्यै नमः । ॐ काकिन्यै नमः । ॐ हाकिन्यै नमः ।

तदनन्तर षड्कोण के दोनों ओर यथाक्रमेण मुसल एवं वर मुद्रा से सुशोभित कर-युग्मवाली स्तंभिनी तथा दोनों हाथों में कपाल एवं हल धारण करने वाली क्रोधनी का ध्यान कर पूजन करना चाहिए । फिर देवी के पुत्र चण्डोच्चण्ड के श्लोक ८४ में वर्णित स्वरूप का ध्यान कर षड्कोण के अग्रभाग में उनका पूजन करना चाहिए । इन तीनों के पूजनमन्त्र इस प्रकार है :

ॐ स्तंभिन्यै नमः । ॐ क्रोधिन्यै नमः । ॐ चण्डोच्च चण्डाय नमः ।

इसके बाद अष्टदल में वार्ताली आदि ८ देवियों का अपने अपने नाम मन्त्रों से पूजन करना चाहिए :

ॐ वार्तालिये नमः । ॐ अंधिन्यै नमः । ॐ मोहिन्यै नमः ।
ॐ वाराह्यै नमः । ॐ रुंधिन्यै नमः । ॐ स्तंभिन्यै नमः ।
ॐ वाराहमुख्यै नमः । ॐ जंभिन्यै नमः ।

फिर शतदल में बीरभद्र आदि ११, क्षात्रा आदि १२ देवताओं, धरा आदि ८, नासत्य एवं दस्र इन ३३ देवताओं का ३-३ दल पर १-१ देवता के क्रम से पूजन कर १०० वें दल पर 'जंभिनीस्तंभिनीभ्यांनमः'—मन्त्र से जंभिनी एवं स्तंभिनी का पूजन करना चाहिए ।

तत्पश्चात् 'क्रों वाराह्यै नमः'—इस मन्त्र से सहस्रदल में हजारबार वाराही देवी का ही पूजन करना चाहिए ।

तदनन्तर भूपुर के चारों द्वारों पर निम्नलिखित मन्त्रों से क्रमशः बटुक, क्षेत्रपाल, योगिनी एवं गणपति का पूजन करना चाहिए :

बं बटुकाय नमः । क्षं क्षेत्रपालाय नमः । यां योगिनीभ्यो नमः । गं गणपतये नमः ।

फिर श्लोक सं० ४५ की टिप्पणी में बतलाये गये मन्त्रों से भूपुर के बाहर अपनी अपनी दिशाओं में इन्द्र आदि दिक्पाल एवं उनके वज्र आदि आयुधों का पूजन करना चाहिए ।

इस प्रकार आवरण के साथ देवी का बिधिवत पूजन करने के बाद बटुक आदि को बलि देनी चाहिए ।

पूजान्ते बटुकादिभ्यो बलिमन्त्रैर्बलिं हरेत् ।
बलिदानोचितामन्त्राःकीर्त्यन्तेखिलसिद्धिदाः ॥ ९२ ॥

पूजा के बाद बटुक आदि को बलिमन्त्रो से बलिद्रव्य देना चाहिए। सर्वसिद्धिदायक बलिदान के उपयोगी मन्त्र बतलाये जाते हैं।

एह्येहीतिपदं प्रोच्य देवी पुत्रेति कीर्तयेत् ।
बटुकांते नाथकपिलजटाभारभासुर ॥ ९३ ॥
त्रिनेत्रज्वालाशब्दांते मुखसर्वजलंसट्टक् ।
घ्नान्नाशययुगं सर्वोपचारसहितं बलिम् ॥ ९४ ॥
गृह्णयुग्मं वह्निपत्नीशरपञ्चाक्षरो मनुः ।
बटुकस्य बलिंदद्यादनेन श्रद्धयान्वितः ॥ ९५ ॥

बटुक के *बलिमन्त्र का उद्धार* : 'एह्येहि' कहकर 'देवीपुत्र' 'बटुक' एवं 'नाथकपिलजटाभार भासुरत्रिनेत्रज्वाला' के बाद 'मुखसर्व' फिर सट्टक् जल (वि) एवं 'घ्नान्' नाशय युग्म (नाशय नाशय) 'सर्वोपचार सहितं बलि' एवं गृह्णयुग्म (गृह्ण गृह्ण) तथा अन्त में वह्निपत्नी (स्वाहा) लगाने से यह ५५ अक्षर का मन्त्र बनता है। इस मन्त्र से श्रद्धा सहित बटुक को बलि देनी चाहिए।

टिप्पणी : बटुक के *बलिदान का मन्त्र* : एह्येहि देवी पुत्रबटुकनाथकपिलजटाभारभासुर त्रिनेत्रज्वालामुख सर्वविघ्नान्नाशय नाशय सर्वोपचार सहितं बलिं गृह्ण गृह्ण स्वाहा।

मेरुःषड्दीर्घयुग्वर्मस्थानक्षेत्रपदं वदेत् ।
पालेशसर्वकामं च पूरयानलवल्लभा ॥ ९६ ॥
त्रयोविंशतिवर्णाढ्यःक्षेत्रपालमनुर्मतः ।

क्षेत्रपाल के बलिमन्त्र का उद्धार : षड्दीर्घ सहित मेरु (क्षां क्षीं क्षूं क्षैं क्षौं क्षः) फिर वर्म (हुं) 'स्थान क्षेत्र' 'पालेशसर्वकामं' फिर 'पूरय' एवं अन्त में अनलवल्लभा (स्वाहा) लगाने से २३ अक्षर का क्षेत्रपाल का बलिमन्त्र बनता है।

टिप्पणी : *क्षेत्रपाल के बलिदान का मन्त्र* : क्षां क्षीं क्षूं क्षैं क्षौं क्षः हुंस्थान क्षेत्रपालेश सर्वकामं पूरय स्वाहा

योगिनीनामथो मन्त्रःपद्यरूपःप्रपठ्यते ॥ ९७ ॥

गगगपतयनमइति ॥ ९२ ॥ बटुकस्यबलिमन्त्रमाह । एहीति ॥ ९३ ॥ सट्टकूजलमियुतोवः । वि ॥ ९४ ॥ वह्निपत्नीस्वाहा । स्वरूपमपरं । शरपञ्चाक्षरः पञ्चपञ्चाशदर्णः । यथा – एह्येहिदेवीपुत्रबटुकनाथकपिलजटाभारभासुरत्रिनेत्रज्वालामुखसर्वविघ्नान्नाशय २ सर्वोपचारसहितंबलिं गृह्ण २ स्वाहेति ॥ ९५ ॥ क्षेत्रपालबलिमन्त्रमाह । मेरुरिति । मेरुःक्षः । षड्दीर्घयुक् क्षांक्षींक्षूं क्षैं क्षौंक्षः हुंस्थान क्षेत्रपालेशसर्वकामपूरयस्वाहेति॥९६-९७॥

ऊर्द्धब्रह्माण्डतो वा दिविगगनतले भूतले निष्कले वा
पाताले वातले वा सलिलपवनयोर्यत्र कुत्र स्थिता वा ।
क्षेत्रे पीठोपपीठादिषु च कृतपदाधूपदीपादिकेन प्रीता
देव्यः सदानः शुभबलिविधिना पान्तु वीरेन्द्रवंद्याः ॥९८॥
यांयोगिनीभ्यःस्वाहान्तो भूमिनन्दाक्षरोमनुः ।
योगिनीनां बलिंदद्यादनेनविधिपूर्वकम् ॥ ९९ ॥

योगिनियों का बलिमन्त्र : अब योगिनियों का पद्यमय बलिमन्त्र बतलाते हैं : 'ऊर्ध्वब्रह्माण्डतोवा०' इत्यादि पद्य के बाद 'यां योगिनीभ्यः स्वाहा' लगाने से ९१ अक्षर का मन्त्र बनता है । इस मन्त्र से विधिवत योगिनियों को बलि देनी चाहिए ।

टिप्पणी : योगिनियों का बलिमन्त्र : ऊर्ध्व ब्रह्माण्डतो वा दिविगगनतले भूतले निष्कले वा, पाताले वातले वा सलिलपवनयोर्यत्र कुत्र स्थिता वा । क्षेत्रे पीठोपपीठादिषु च कृतपदा धूपदीपादिकेन, प्रीतादेव्यः सदानः शुभबलिविधिना पांतु वीरेन्द्रवन्द्याः ॥ यां योगिनीभ्यः स्वाहा ।

दीर्घत्रयेन्दुयुक्सेन्दुः शार्ङ्गीगणपतार्णकाः ।
मारुतोभगवांस्तोयंरवरांते दसर्वच ॥ १०० ॥
जनंमेवशमानान्ते यः सर्वोलोहितोहली ।
दीर्घोरसहितंप्रान्तेबलिंगृह्णयुगंशिरः ॥ १०१ ॥
गणेशबलिमन्त्रोयं गगनश्रुति वर्णवान् ।

गणेश के बलिमन्त्र का उद्धार : दीर्घत्रयेन्दु युक् एवं सेन्दु शार्ङ्गी (गां गीं गूं गं) फिर 'गणपते' एवं भगवान् मारुत (ये) फिर तोय (व) एवं 'रवरदसर्व' 'जनं मे वशमानय' के बाद 'सर्वो, लोहित् (प) दीर्घ हली (चा) 'र सहितं' फिर 'बलिं' गृह्ण युग्म (गृह्ण गृह्ण) और अन्त में शिर (स्वाहा) लगाने से ४० अक्षर का यह गणेश का बलिमन्त्र बनता है ।

टिप्पणी : गणेश का बलिमन्त्र : गां गीं गूं गं गणपतये वरवरद सर्वजनं मे वशमानयसर्वोपचारसहितं बलिं गृह्णगृह्ण स्वाहा ।

एवं तेभ्यो बलिं दत्त्वा स्वस्वमुद्रां प्रदर्शयेत् ॥ १०२ ॥

योगिनीबलिमन्त्रमाह । ऊर्ध्वमित्यादि ॥ ९८ ॥ स्वाहान्तःस्वरूपमेव । भूमिनन्दाक्षरः एकनवतिवर्णः पद्येनसह ॥ ९९ ॥ गणेशबलिमन्त्रमाह । दीर्घेति । शार्ङ्गीगः दीर्घत्रयेन्दुयुक् गांगींगूं । सेन्दुर्गं । मारुतो यः भगवान्एयुतः ये । तोयंवः ॥ १०० ॥ लोहितः पः । दीर्घोहलीचा । शिरःस्वाहा ॥१०१॥

अंगुष्ठंतर्जनीयुक्तंदर्शयेद्बटुके बली।
अंगुष्ठानामिके वामे क्षेत्रपालबलौमता ॥ १०३ ॥
किंचिद्वक्रीकृतामध्यागणनाथबली स्मृता।
अनामामध्यमांगुष्ठायोगिनीनां बलौपुनः ॥ १०४ ॥

बलिमुद्राएँ : इस प्रकार बटुक आदि को बलि देकर उनकी अपनी अपनी मुद्राएँ दिखलानी चाहिए—बटुक के बलिदान में तर्जनी एवं अगुष्ठ को मिलाकर दिखलाना चाहिए। क्षेत्रपाल के बलिदान में बांये हाथ के अंगुष्ठ एवं अनामिका दिखलाने चाहिए। गणपति की बलि के समय थोड़ी वक्र की हुई मध्यमा दिखलानी चाहिए। तथा योगिनियों को बलि देकर अनामिका, मध्यमा एवं अगुष्ठ ये तीनों दिखलाने चाहिए।

एवं संपूज्य संस्तुत्य नत्वात्मन्युपसंहरेत्।
सिद्धमन्त्रः प्रकुर्वीत प्रयोगाञ्छिवभाषितान् ॥ १०५ ॥

इस प्रकार वार्ताली का पूजन कर स्तुति एवं वन्दना कर विसर्जित देवी को अपने हृदय में स्थापित करना चाहिए। फिर मन्त्र को सिद्ध करलेने वाला व्यक्ति भगवान् शिव के द्वारा बतलाये गये काम्यप्रयोगों को करे।

हरिद्रया चन्दनेन लाक्षयागुरुणापिच।
पुरेणविविधैर्मांसैर्जुहुयादिष्टसिद्धये ॥ १०६ ॥

काम्य प्रयोग : अभीष्ट सिद्धि के लिए हल्दी, चन्दन, लाख, अगर, गुग्गुल एवं विविध मांस से होम करना चाहिए।

हरिद्रामालया कुर्य्याज्जपं स्तंभनकर्मणि।
स्फाटिकैः पद्मबीजैश्चरुद्राक्षैःशुभकर्मणि ॥ १०७ ॥

स्तम्भन के प्रयोग में हल्दी की माला से जप करना चाहिए। तथा शुभकार्यों (शान्तिक-पौष्टिक प्रयोगों) में स्फटिक, कमलगट्टा या रुद्राक्ष की माला से जप करना चाहिए।

स्वर्णादिपात्रैःसुरयाबन्धूककुसुमैस्तिलैः।
वाराहींतर्प्पयेत्सम्यक्कामसम्पूर्तये नरः ॥ १०८ ॥

कामपूर्ति के लिए साधक को स्वर्ण आदि के पात्रों से सुरा, बन्धूक पुष्प एवं तिलों से विधिवत वाराही का तर्पण करना चाहिए।

चतुःशतं तु तापिच्छैर्जुहुयात्स्तंभनेच्छया।

गगनश्रुति पर्णवान् चत्वारिंशदर्णः। यथा—गांगींगूंगांगणपतयेवरवरदसर्वजनंमेवश-मानयसर्वोपचारसहितंबलिंगृह्ण २ स्वाहेति ॥ १०३-१०८ ॥

स्तंभन की इच्छा से तमालपुष्पों की ४०० आहुतियाँ देनी चाहिए।

लाजचूर्णतिलैःकुर्य्यात्खरमेषासृजान्वितैः ॥ १०९ ॥
पिण्डं मनोहरं तं तुपूजयेत्तर्पयेदपि ।
सपत्नसदनं सांगमेतस्मैविनिवेदयेत् ॥ ११० ॥
कुण्डेपिण्डंनिधायामुं जुहुयात्तत्र चायुतम् ।
एकविंशतिरात्रीषु लाजैरक्तसमन्वितैः ॥॥ १११ ॥
एवं कृते वैरिवृंदं भक्ष्यते योगिनीगणैः ।

लाजाओं के आटे में तिल तथा गदर्भ एवं भेड़ का रक्त मिलाकर एक सुन्दर पिण्ड बनाना चाहिए। फिर उसका विधिवत पूजन एवं तर्पण करना चाहिए। तथा उस पिण्ड को शत्रु का पूरा घर निवेदित करना चाहिए। फिर कुण्ड में इस पिण्ड को रखकर २१ रात्रियों में रक्त मिश्रित लाजाओं से १० हजार आहुतियाँ देनी चाहिए। ऐसा करने से योगिनीगण शत्रु के समूह का खा जाते हैं।

अथयन्त्रं महादेव्याः प्राच्यते शकटाभिधम् ॥ ११२ ॥
विलिख्य तारे साध्याख्यं भूबीजेनप्रवेष्टयेत् ।
उकारेण चसंवेष्टय भूपुरं परितोलिखेत् ॥ ११३ ॥
अष्टवज्रान्वितं वज्रप्रान्ते प्रणवमालिखेत् ।
वज्रमध्ये साध्यनाम लिखेत्कर्मसमन्वितम् ॥ ११४ ॥
धराबीजेन संवेष्टय भूपुरं मूलविद्यया ।
बहिरंकुशसंवीतंक्षिण्टीशेनप्रवेष्टयेत् ॥ ११५ ॥

शकट यन्त्र : अब महादेवी के शकट संज्ञक यन्त्र को बतलाते हैं

(मध्य में) प्रणव में साध्य नाम लिखकर उसे भूबीज (ग्लौं) से वेष्टित करना चाहिए। फिर उसे 'उकार' से वेष्टित कर उसके ऊपर अष्टवज्र सहित भूपुर लिखना चाहिए।

अष्ट वज्रों के प्रान्त भाग में प्रणव लिखना चाहिए। वज्रों के मध्य में साध्यनाम एवं अभीष्ट उच्चाटनादि कार्य लिखना चाहिए। यथा उच्चाटन में : 'अमुकं उच्चाटय', स्तम्भन में : 'अमुकं स्तम्भय', विद्वेषण में : 'अमुकं विद्वेषय' इत्यादि लिखना चाहिए।

फिर भूपुर को धराबीज (ग्लौं) से वेष्टित कर 'ॐ ऐं ग्लौं ऐं नमो भगवति

तापिच्छंनामतमालपुष्पम् । लाजानांचूर्णसुसैमितैलैःखरमेषरुधिरयुतैः ॥ १०९ ॥ सपत्नसदनंशत्रुगृहम् । एतस्मैपिंडाय ॥ ११०-११२ ॥ यन्त्रसाद्ध । विलिख्येति । तारेप्रणवे । साध्याख्यसाध्यनाम । भूबीजेन ग्लौमितिबीजेन ॥ ११३ ॥ कर्मसमन्वितम् अमुक-मुच्चाटयेतिक्रियायुतम् ॥ ११४ ॥ धराबीजंतदेव । अंकुशःक्रों । क्षिंटीशः एकारः ॥ ११५ ॥

वार्तालिवाराहि वाराहि वाराहमुखि ऐं ग्लौं ऐं अन्धेअन्धिनि नमो रुंधे रुंधिनि नमो जम्भे जम्भिनी नमो मोहे मोहिनि नमः स्तम्भे स्तम्भिनि नमो ऐं ग्लौं ऐं सर्वदुष्ट प्रदुष्टानां सर्वेषां सर्ववाक् चित्त चक्षुर्मुख गति जिह्वा स्तम्भं कुरु कुरु शीघ्रं वश्यं कुरु-कुरु ऐं ग्लौं ऐं ठः ठः ठः ठः हुं फट् स्वाहा'—इस मूल विद्या से वेष्टित करना चाहिए। फिर उसके बाहर अंकुश (क्रों) से वेष्टित कर झिण्टीश (ए) से वेष्टित करना चाहिए।

टिप्पणी : शकट यन्त्र (वार्तालीस्तम्भन यन्त्र) (देखिये चित्र नं० २८)

एतद्यन्त्रं समालिख्य नूत्ने कौलालखर्परे ॥
कृष्णपुष्पैः समभ्यर्च्य निःक्षिपेत्त्वरिवेश्मनि ॥ ११६ ॥
रिपुमुच्चाटयेच्छीघ्रं स्थितं वर्षशतान्यपि ।
वादित्रे यन्त्रमालिख्य वादयेत्समरान्तरे ॥ ११७ ॥
श्रुत्वातद्रवसंत्रस्ताः पलायन्तेविरोधिनः ।
पाषाणेलिखितं रात्र्यापीतपुष्पेषु निःक्षिपेत् ॥ ११८ ॥
संपूजितमधोवक्त्रं वाचं संस्तंभयेद्द्विषाम् ।
तापकार्यग्निनिःक्षिप्तं जले दोषप्रदं भवेत् ॥ ११९ ॥
साध्यर्क्षतरुगर्भस्थं शत्रूणां दुःखदायकम् ।
किंबहूक्तेन सर्वेष्टं साधयेत्साधितं नृणाम् ॥ १२० ॥

इस यन्त्र को नवीन कुलाल खर्पर (सकोरा) में लिखकर काले फूलों से इसका पूजन कर उसे शत्रु के घर में डाल देना चाहिए। (ऐसा करने से) यह यन्त्र १०० वर्षों से रहनेवाले शत्रु का भी उच्चाटन कर देता है।

वाद्य के ऊपर यह यन्त्र लिखकर युद्ध के बाद उसे बजाना चाहिए। उसके शब्द को सुनकर भयभीत शत्रु भाग जाते हैं।

पाषाण पर हल्दी से (इस यन्त्र को) लिखकर विधिवत पूजा कर फिर इसे अधोमुख करके पीले फूलों में डाल देना चाहिए। (ऐसा करने से यह) शत्रुओं की वाणी को स्तम्भित कर देता है। (यदि इसको) अग्नि में डाल दिया जाय, तो शत्रुओं को ताप (ज्वर) हो जाता है, और जल में डालने से दोषदायक होता है।

नूत्तेनवीने ॥ ११६-११७ ॥ गव्याहरिद्रया । पाषाणेलिखित्वाग्नौनिःक्षिप्तंतापकारि ॥ ११८ ११९ ॥ साध्यर्क्षतरवः साध्यस्ययज्जन्मनक्षत्रंतस्यवृक्षमध्येक्षिप्तंतेषांदुःखदम् । तेचपूर्वमुक्ताः । साधितं सम्यगादिनाप्रतिष्ठितमेतद्यंत्रंसर्वेष्टंसाधयेत् ॥ १२० ॥

इति श्रीमन्त्रमहोदधिव्याख्यायांनौकायांवगलादिनिरूपणंनामदशमस्तरङ्गः ।

साध्य व्यक्ति के जन्म नक्षत्र के अनुसार उसके वृक्ष की लकड़ी (विस्तृत जानकारी के लिए तरङ्ग ९ श्लो० ५० की टिप्पणी को देखिए) के भीतर इस यन्त्र को रखने से यह शत्रुओं को दुःख देता है। विशेष कहने की क्या आवश्यकता है। इस यन्त्र की सिद्धि से मनुष्य अपने सभी अभीष्टों को सिद्ध कर सकता है।

इति श्री शुकदेव चतुर्वेदि विरचितायां सटिप्पण्यां मन्त्रमहोदधेः
मोहिनी व्याख्यायां दशमस्तरङ्गः।

एकादश तरङ्ग

ॐ त्रिनेत्रं कमलाकान्तं नृसिंहं चन्द्रशेखरम् ।
नत्वासंक्षेपतो वक्ष्ये श्रीविद्यां मन्त्रनायिकाम् ॥ १ ॥

मङ्गलाचरण : तीन नेत्र वाले, कमलापति, एवं चन्द्रकला को धारण करनेवाले भगवान् नृसिंह को प्रणाम कर समस्त मन्त्रों की स्वामिनी श्रीविद्या को संक्षेप में बतलाता हूँ ।

अपरीक्षितशिष्याय तां न दद्यात्कदाचन ।
यदुच्चारणमात्रेण पापसंघः प्रलीयते ॥ २ ॥

यह विद्या अपरीक्षित शिष्य को कभी भी नहीं देना चाहिए । इसके उच्चारण मात्र से पापराशि नष्ट हो जाती है ।

तारंमायां च कमलामादौ बीजत्रयं पठेत् ।
ब्रह्मञ्झिण्टीशगोविन्दधरामायेति चादिमम् ॥ ३ ॥
आकाशभृगुचक्रध्वभ्रमांसमायाद्वितीयकम् ।
हंसधातृक्षमामायातृतीयं बीजमीरितम् ॥ ४ ॥
वाक्वामशक्तिसंज्ञं तु क्रमाद्बीजत्रयं भवेत् ।
इयं षडर्णा श्रीमायाकामवाक्छक्तिसम्पुटा ॥ ५ ॥
अनेकपुण्यसम्प्राप्या श्रीविद्याषोडशाक्षरी ।

श्रीविद्यांवक्तुमङ्गलमाचरति । त्रिनेत्रमिति । मन्त्रनायिकां त्रिलोकवर्तिनांसर्वमन्त्राणां-स्वामिनीम् । उत्पादिकामित्यर्थः ॥ १ ॥ अपरीक्षितायशिष्यायतांविद्यांनदद्यात् । आत्मा-देयःशिरोदेयंनदेयाषोडशाक्षरीतिवचनात् ॥ २ ॥ मन्त्रमुद्धरति । तारमिति । तार ॐ । मायाह्रीं ॥ कमलाश्रीं । एतद्बीजत्रयंकूटत्रयादौ पठेत् । आद्यकूटमाह । ब्रह्मेति । ब्रह्माकः । झिंटीश ए । गोविन्द ई । धरा लः । मायेति–प्रथमंकूटं कएईलह्रीमिति ॥ ३ ॥ द्वितीयमाह । आकाशेति । आकाशोहः । भृगुःसः । चक्रीकः । अभ्रंहः । मांसंलः । मायेति–द्वितीयंकूटं हसकहलह्रीमिति । तृतीयमाह । हंसेति । हंसःसः । धाताकः । क्षमालः । मायाचेति–तृतीयंकूटं सकलह्रीमिति ॥ ४ ॥ कूटत्रयस्यसंज्ञाआह । वागिति । प्रथमंवाग्बीजं । द्वितीयंकामबीजं । तृतीयंशक्तिबीजं । श्रीःश्रीबीजं । माया ह्रीं । कामः क्लीं । वाक्ऐं । शक्तिःसौः । एतैः पञ्चबीजैःक्रमोत्क्रमाभ्यांसम्पुटापूर्वोक्तषडर्णा ॥ ५ ॥

षोडशी मन्त्र का उद्धार : (कूटत्रय के) आदि में तार (ॐ) माया (ह्रीं) एवं कमला (श्रीं) ये तीनों बीज बोलने चाहिए। ब्रह्म (क) भिटीश (ए) गोविन्द (ई) धरा (ल) एवं माया (ह्रीं) अर्थात् 'कएईल ह्रीं' यह प्रथम कूट है। आकाश (ह) भृगु (स) चक्री (क) अभ्र (ह) मांस (ल) तथा माया (ह्रीं) अर्थात् 'हसकहल ह्रीं'—यह द्वितीय कूट है। हंस (स) धाता (क) क्षमा (ल) एवं माया (ह्रीं) अर्थात् 'सकलह्रीं' यह तृतीय कूट है। इन तीनों कूटों में से प्रथम वाग्बीज, द्वितीय कामबीज तथा तृतीय शक्तिबीज कहलाता है।

इस षडक्षरा (ॐ ह्रीं श्रीं कएईलह्रीं हसकहलह्रीं सकलह्रीं) विद्या को श्रीमाया काम, वाग् एवं शक्ति—इन पाँचों बीजों से सम्पुटित करने पर अनेक पुण्यों से प्राप्त होने वाली षोडशाक्षरी श्रीविद्या बनती है।

टिप्पणी : षोडशी मन्त्र : श्रीं ह्रीं क्लीं ऐं सौः ॐ ह्रीं श्रीं कएईल ह्रीं हसकहल ह्रीं सकल ह्रीं सौः ऐं क्लीं ह्रीं श्रीं।

मुनिःस्याद्दक्षिणामूर्तिः पंक्तिश्छन्दः समीरितम् ॥ ६ ॥
देवताजगतामादिः श्रीमत्त्रिपुरसुन्दरी।
बीजमं भृगुरौःशक्तिःकामबीजं तु कीलकम् ॥ ७ ॥
मूर्द्धास्यहृद्गुह्यपादे नाभौ मुन्यादिकान्यसेत्।

विनियोग : इस मन्त्र के ऋषि दक्षिणामूर्ति हैं, पंक्ति छन्द है, जगत् की आदि श्रीमत्त्रिपुर सुन्दरी देवता है, ऐं बीज है, सौः शक्ति है तथा कामबीज कीलक है।

टिप्पणी : विनियोग : अस्य श्री त्रिपुर सुन्दरी मन्त्रस्य दक्षिणामूर्तिर्ऋषिः पंक्तिश्छन्दः श्रीमत्त्रिपुरसुन्दरी देवता ऐं बीजं सौः शक्तिः क्लीं कीलकं ममाभीष्ट सिद्धये जपे विनियोगः।

ऋष्यादिन्यास :

दक्षिणामूर्तये नमः - मूर्ध्नि।	ऐं बीजाय नमः - गुह्ये।
पंक्ति छन्दसे नमः - मुखे।	सौः शक्तये नमः - पादयोः।
त्रिपुरसुन्दर्यै देवतायै नमः - हृदि :	क्लीं कीलकाय नमः - नाभौ।

न्यासान्सर्वान्प्रकुर्वीत मायाश्रीबीजपूर्वकान् ॥ ८ ॥

षोडशाक्षरी श्रीविद्याभिधामहाविद्या ॥ ६ ॥ भृगुःसः। औःस्वरूपं। तेनसौःशक्तिः। कामबीजंक्लीं ॥ ७ ॥ न्यासानाह। मूर्धेति। दक्षिणामूर्तयेनमोमूर्ध्नि। पंक्तयेनमोमुखे। त्रिपुरसुन्दर्यैनमोहृदि। ऐंबीजायनमोगुह्ये। सौःशक्तयेनमः पादयोः। क्लींकीलकाय-नमोनाभौ। इतिमुन्यादिन्यासः ॥ ८ ॥

मध्यानामाकनिष्ठासु ज्येष्ठयोस्तर्जनीद्वयोः ।
तले पृष्ठे चकरयोर्विन्यसेद्द्विष्कमादिमान् ॥ ९ ॥
श्रीकण्ठानंतसौवर्णान् बिन्दुसर्गसमन्वितान् ।
नमोंतान्करशुद्ध्याख्यो न्यासोयं परिकीर्तितः ॥ १० ॥

करशुद्धि न्यास : (इस महाविद्या के) सभी न्यास प्रारम्भ में माया एवं श्रीबीज लगाकर करने चाहिए ।

' बिन्दु सहित श्रीकण्ठ एवं अनन्त (अं आ) तथा विसर्ग सहित 'सौ' (सौः) इन वर्णों के अन्त में 'नमः' लगाकर क्रमशः मध्यमा अनामिका एवं कनिष्ठका तथा फिर अंगुष्ठ, तर्जनी एवं करतल का पृष्ठ में न्यास करना चाहिए । यह करशुद्धि न्यास कहलाता है ।

टिप्पणी : न्यासविधि :

ह्रीं श्रीं अं मध्यमाभ्यां नमः । ह्रीं श्रीं अं अंगुष्ठाभ्यां नमः ।
ह्रीं श्रीं आं अनामिकाभ्यां नमः । ह्रीं श्रीं आं तर्जनीभ्यां नमः ।
ह्रीं श्रीं सौः कनिष्ठकाभ्यां नमः । ह्रीं श्रीं सौः करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः ।

देव्यासनं च प्रथमं तथाचक्रासनं क्रमात् ।
सर्वमन्त्रासनं साध्यसिद्धासनमितिन्यसेत् ॥ ११ ॥
ङेनमोंतं च बीजाढ्यं पञ्जंघाजानुलिंगके ।
मायां कामं शक्तिबीजं प्रथमासनपूर्वकम् ॥ १२ ॥
वियदारूढ वाक्कामशक्तिबीजानिपूर्वतः ।
द्वितीयेसम्प्रोज्यानि सहपूर्वाणि तत्परे ॥ १३ ॥

अन्यान्न्यासानाह । मध्येति । इमान्श्रीकण्ठादिनमोंतान्द्विर्वारद्वयंमध्यानामिकाकनिष्ठांगुष्ठतर्जनीतलपृष्ठेषुन्यसेत् ॥ ९ ॥ इमान्कानित्यतआह । श्रीति । श्रीकण्ठोऽकारः अनन्तआकारः । सौस्वरूपम् । क्रमाद्बिन्द्वादियुतान् । अंआंएतौसबिन्दू । सौः सर्गौ । तथा-मायाश्रीबीजपूर्वकानिति सर्वन्यासेषुसम्बद्धयते । ह्रींश्रींअंमध्यमाभ्यांनमः । ह्रीं श्रींआंअनामिकाभ्यांनमः । ह्रींश्रींसौःकनिष्ठिकाभ्यांनमः । ह्रींश्रींअंअंगुष्ठाभ्यांनमः । ह्रींश्रींआंतर्जनीभ्यांनमः । ह्रींश्रींसौःकरतलकरपृष्ठाभ्यांनमः । अयंकरशुद्धिन्यासः ॥ १० ॥ आसनन्यासमाह । देव्येति । देव्यासनाद्यासनचतुष्कं ङेनमोंतं चतुर्थीनमोंतंबीजाद्यं मायामिःयादिवद्यमाणप्रासिद्धिकबीजपूर्व पञ्जंघाजानुलिंगेषुन्यसेत् । प्रथमासनबीजान्याह । मायामिति । शक्तिःसौः । चक्रासनबीजान्याह । वियदिति । वियत्हः । तथुतानिद्वागादीनि । तत्परे तृतीयासने । सहपूर्वाणि वागादीनि ॥ ११-१३ ॥

मायां कामं फान्तमांसे भगेंद्वाढ्येप्रयोजयेत् ।
तुरीयासनपूर्वाणीत्यासनन्यासईरितः ॥ १४ ॥

आसन न्यास : सर्वप्रथम देव्यासन फिर क्रमशः चक्रासन, सर्वमन्त्रासन एवं साध्य-सिद्धासन के चतुर्थ्यन्त रूप के अन्त में 'नमः' तथा आदि में अपने अपने बीज लगाकर पैर, जंघा, जानु एवं लिंग में न्यास करना चाहिए ।

माया (ह्रीं) काम (क्लीं) एवं शक्ति (सौः) को प्रथम आसन के साथ लगा-कर, वियदारूढ वाग् (हैं) काम (क्लीं) एवं शक्ति (सौः) को द्वितीय आसन के प्रारम्भ में लगाकर, इन्हीं बीजों को तृतीय आसन के प्रारम्भ में लगाकर तथा माया (ह्रीं) काम (क्लीं) एवं भग तथा बिन्दु सहित फान्त मांस (ब्लें) को चतुर्थ आसन के प्रारम्भ में लगाकर न्यास करना चाहिए ।

टिप्पणी : "न्यासान्सर्वान्प्रकुर्वीत माया श्रीबीजपूर्वकान्" इस नियम के अनुसार न्यास के समस्त मन्त्रों के प्रारम्भ में माया एवं श्रीबीज लगा लेना चाहिए । फिर प्रत्येक आसन के पहिले उसके निर्दिष्ट बीज लगाकर और अन्त में 'नमः' लगाकर न्यास करना चाहिए, यथा :

ह्रीं श्रीं ह्रीं क्लीं सौः देव्यासनाय नमः - पादयोः ।
,, ,, ,, ,, ,, चक्रासनाय नमः - जंघयोः ।
,, ,, ,, ,, ,, सर्वमन्त्रासनाय नमः - जान्वोः ।
,, ,, ,, ,, ब्लें साध्यसिद्धासनाय नमः - लिंगे ।

ततः षडंगं कुर्वीत पञ्चभिस्त्रिभिरेकतः ।
एकेनैकेनपंचार्णैर्मन्त्रस्य क्रमतःसुधीः ॥ १५ ॥

षडङ्गन्यास : मन्त्र के क्रमशः ५, ३, १, १, १ एवं ५ वर्णों से विद्वान् साधक षडङ्गन्यास करे ।

टिप्पणी : *षडङ्गन्यास* :

श्रीं ह्रीं क्लीं ऐं सौः हृदयाय नमः ।	हसकहल ह्रीं कवचाय हुम् ।
ॐ ह्रीं श्रीं शिरसे स्वाहा ।	सकल ह्रीं नेत्रत्रयाय वौषट् ।
कएईल ह्रीं शिखायै वषट् ।	सौः ऐं क्लीं ह्रीं श्रीं अस्त्राय फट् ।

चतुर्थासनबीजान्याह । मायामिति । फांतमांसेबली । भगद्वाढ्यैर्बिन्दुयुतैतेनब्ले । यथा-ह्रींश्रींह्रींक्लींसौः देव्यासनायनमःपादयोः । ह्रींश्रीहैंक्लींसौःचक्रासनायनमःजघयोः । ह्रींश्रींहैंक्लींसौःसवमन्त्रासनायनमः जान्वोः । ह्रीश्रींह्रींक्लींब्लेंसाध्यासद्धासनायनमोलिंगे इत्यासनन्यासः ॥ १४ ॥षडंगमाह । ततइति । श्रींह्रींक्लीं ऐंसौःहृदय ॥ ॐ ह्रींश्रींशिरः ॥ आद्यकूटेनशिखा । मध्यकूटेनकवचं । तृतीयकूटनेत्र । सौःऐंक्लींह्रींश्रींअस्त्रम् । इतिषडंग-न्यासः ॥ १५ ॥

मूलविद्यां समुच्चार्य्य प्रणवादिनमोंतिकाम् ।
मध्यमानामिकाभ्यां तु ब्रह्मरन्ध्रे प्रविन्यसेत् ॥ १६ ॥
सुधां स्रवन्तीं वर्णेभ्यःप्लावयन्तींनिजां तनुम् ।
प्रदीपकलिकाकारां महासौभाग्यदां स्मरेत् ॥ १७ ॥
मुद्रां कृत्वावामकर्णे परसौभाग्यदण्डिनीम् ।
वाममूर्द्धादिपादान्तं तथा मूलं प्रविन्यसेत् ॥ १८ ॥
त्रिखण्डया मुद्रया तु भाले मूलं न्यसेत्तथा ।
त्रैलोक्यस्याखिलस्याहं कर्त्तेतिस्वं विचिन्तयेत् ॥ १९ ॥
रिपुजिह्वाग्रहां मुद्रां दर्शयन्सर्वविद्विषः ।
निगृह्णामीति संचिन्त्यपादमूले तथान्यसेत् ॥ २० ॥
मुखे संवेष्टयंस्तेपुनर्दक्षिणकर्णतः ।
विन्यस्य वामकर्णान्तं कण्ठाद्वक्त्रं ततो न्यसेत् ॥ २१ ॥
तारसंपुटितां विद्यां सर्वाङ्गे विन्यसेत्पुनः ।
योनिमुद्रां मुखेबद्धा नमेत्त्रिपुरसुन्दरीम् ॥ २२ ॥

जगद्वशीकरण न्यास : मन्त्राक्षरों से अमृत बरसाती हुई और उससे अपने शरीर को आप्लावित करती हुई, प्रदीप कलिका के समान आकार वाली, ब्रह्मरन्ध्र में स्थित, सौभाग्यदा देवी का ध्यान करते हुए मूल मन्त्र के प्रारम्भ में प्रणव तथा अन्त में 'नमः' लगाकर मध्यमा एवं अनामिका से शिर में न्यास करना चाहिए ।

फिर बाँये कान में परसौभाग्यदण्डिनी मुद्रा करके बाँयी ओर शिर से पैर तक प्रणवादि एवं नमः अन्त वाले मूल मन्त्र का न्यास करना चाहिए ।

'सब लोकों का कर्ता मैं हूँ'—ऐसा विचार करते हुए त्रिखण्डा मुद्रा से प्रणवादि एवं नमोन्त मन्त्र का ललाट में न्यास करना चाहिए ।

रिपुजिह्वाग्रहा मुद्रा को दिखाते हुए तथा 'मैं सब शत्रुओं का निग्रह कर रहा हूँ'—इस भावना से प्रणवादि नमोन्त मूल मन्त्र का पादमूल में न्यास करना चाहिए ।

मन्त्रवर्णभ्योऽमृतंक्षरंन्तीतेननिजंशरीरमाप्लावयन्तींप्रदीपकलिकाकारांब्रह्मरन्ध्रस्थांसौभाग्यदांदेवींध्यायन्सतारादिनमोंतंमूलंमध्यमानामिकाभ्याशिरसिन्यसेत् ॥ १६-१७ ॥ पुनर्वामकर्णेपरसौभाग्यदंडिनींमुद्रांकृत्वावामपार्श्वेमूर्धादिपादान्तंतारादिनमोन्तं मूलंन्यसेत् ॥१८॥ रिपुजि ाग्रहांमुद्रांदर्शयन्सर्वशत्रून्निगृह्णामीतिसञ्चिन्त्यपादमूलेतारादिनमोंतंमूलंन्यसेत् । सकलल ककर्ताहमितिवीजंविचिन्त्यत्रिखण्डयामुद्रयाललाटेतारादिनमोंतं मूलंन्यसेत् ॥ १९ २० ॥ मुखेसंवेष्टयंस्तारादिनमोंतंमूलंन्यसेत् । दक्षकर्णतोवामांतंन्यस्यकण्ठान्मुखान्तमेवमेवन्यसेत् ॥ २१ ॥ पुनःप्रणवपुटांविद्यांसर्वाङ्गेन्यसेत् ॥ मुखेयोनिमुद्रांबद्धातथवदेवींनमेत् ॥ २२ ॥

फिर मुख में संवेष्टित करते हुए प्रणवादि नमोन्त मूल मन्त्र का न्यास करना चाहिए। तत्पश्चात् दाहिने कान से बाँये कान तक उसी प्रकार न्यास कर कण्ठ से मुख तक उसी प्रकार न्यास करना चाहिए।

फिर प्रणवपुटित विद्या का सर्वाङ्ग में न्यास करना चाहिए, और फिर मुख पर योनि मुद्रा बाँधकर त्रिपुरसुन्दरी देवी को प्रणाम करना चाहिए।

टिप्पणी : त्रिखण्डा एवं योनिमुद्रा का लक्षण पञ्चम तरङ्ग में बतलाया जा चुका है। पर सौभाग्यदण्डिनी एवं रिपुजिह्वाग्रहण मुद्राओं के लक्षण इस प्रकार हैं :

परसौभाग्यदण्डिनी मुद्रा :

'वामे मुष्टिं दृढं बद्ध्वा तर्जनीं प्रविसारयेत्।
भ्रामयेद् वामकर्णान्तं मुद्रा सौभाग्यदण्डिनी॥'

रिपुजिह्वाग्रहण मुद्रा :

'अंगुष्ठगर्भितां मुष्टिं बध्नीयात् दक्षपाणिना।
रिपुजिह्वाग्रहाख्येयं मुद्रोक्ता शत्रुनाशिनी॥

ब्रह्मरन्ध्रे हस्तमूले भाले विद्यां प्रविन्यसेत्।
अंगुष्ठानामिकाभ्यां तु न्यासःसम्मोहनाभिधः॥ २३॥
जगद्वश्यकराख्योयं न्यासःसंकीर्तितो मया।
संस्मरन्नरुणामूलं सुन्दरीप्रभया जगत्॥ २४॥

संमोहन न्यास : देवी की आभा से लालवर्ण वाले विश्व का ध्यान करते हुए, अंगुष्ठ एवं अनामिका द्वारा ब्रह्मरन्ध्र, मणिबन्ध एवं ललाट में मूल विद्या का न्यास करना चाहिए। यह न्यास संमोहनसंज्ञक है। जगद्वशीकरण संज्ञक न्यास मैंने (पहिले) बतलाया है।

पादयोर्द्वयोर्न्यस्येज्जान्वोश्चकटिभागयोः।
लिङ्गे पृष्ठे नाभिदेशे पार्श्वयोस्तनयोरपि॥ २५॥
अंसयोःकर्णयोर्ब्रह्मरंध्रे वक्त्रे च नेत्रयोः।
कर्णयोःकर्णवेष्टेपिमूलस्यैकैकमक्षरम्॥ २६॥
संहारन्यासउक्तोयं ततो वाग्देवतां न्यसेत्।

अयं जगद्वशीकरणन्यासः॥ देव्या कायात्तेजश्चक्रध्यायन्नंगुष्ठानामिकाभ्यांब्रह्मरंध्रे-मणिबन्धेललाटेविद्यांन्यसेत्॥ इतिसम्मोहनन्यासः॥ २३॥ परसौभाग्यदण्डिनीमुद्रोक्ता। तल्लक्षणंयथा–वामेमुष्टिंदृढबद्ध्वातर्जनींप्रावसारयेत्। भ्रामयेद्वामकर्णान्तमुद्रासौभाग्य-दण्डिनीति। रिपुजिह्वाग्रहणमुद्रालक्षणन्तु–अंगुष्ठगर्भितां मुष्टिबध्नीयाद्दक्षपाणिना। रिपु-जिह्वाग्रहाख्येयंमुद्रोक्ताशत्रुनाशिनीति। मुद्रावाम (पाद) तलेकृतेति त्रिख-डालक्षणं-तारातन्त्रेउक्तम्॥ २४॥ अक्षरन्यासंसंहाराख्यमाह। पादयोरिति। पादादिष्वेकैकमक्षरं-न्यसेत्। कर्णवेष्टःकर्णशष्कुली। श्रींनमःपादयो. ह्रींनमोजंघयोरित्यादिप्रयोगः॥२५-२६॥

अक्षरन्यास (संहार न्यास) : दोनों पैर, जंघा, जानु, कटिभाग, लिंग, पीठ, नाभि, बगल, स्तन, कन्धे, कान, ब्रह्मरन्ध्र, मुख, नेत्र, कान एवं कर्णशष्कुली में यथाक्रमेण मन्त्र के एक एक अक्षर का न्यास करना चाहिए। यह संहारसंज्ञक न्यास कहा गया है। इसके बाद वाग्देवता न्यास करना चाहिये।

टिप्पणी : न्यास विधि :

श्रीं नमः	- पादयो।	कएईलह्रीं नमः	- स्तनयोः।
ह्रीं ,,	- जंघयोः।	हसकहल ह्रीं ,,	- अंसयोः।
क्लीं ,,	- जान्वोः।	सकल ह्रीं ,,	- कर्णयोः।
ऐं ,,	- कटिभागयोः।	सौः ,,	- ब्रह्मरन्ध्रे।
सौः ,,	- लिङ्गे।	ऐं ,,	- मुखे।
ॐ ,,	- पृष्ठे।	क्लीं ,,	- नेत्रयोः।
ह्रीं ,,	- नाभि देशे।	ह्रीं ,,	- कर्णयोः।
श्रीं ,,	- पार्श्वयोः।	श्रीं ,,	- कर्णवेष्टे।

तासां बीजानि नामानि न्यासस्थानानि च ब्रुवे ॥ २७ ॥
अग्निभूधरमांसाढ्योर्धीशोबीजंशशांकयुक् ।
षोडशस्वरबीजाढ्यां वशिनीं शिरसि न्यसेत् ॥ २८ ॥
क्रोधीशमांसयुङ्मायाद्वितीयं बीजमीरितम् ।
कवर्गपूर्वबीजाद्यां भाले कामेश्वरीं न्यसेत् ॥ २९ ॥
दीर्घखड्गीशरान्ताढ्यशान्तिबिन्दुसमन्विताम् ।
चवर्गतद्बीजयुतां भ्रूमध्ये माहिनीं न्यसेत् ॥ ३० ॥
अर्धीशोवायुमांसस्थोबिन्द्वाढ्यस्तत्तुरीयकम् ।
टवर्गबीजपूर्वां तु विमलां विन्यसेद्गले ॥ ३१ ॥

अयंसंहारन्यासः ॥ २७ ॥ वाग्देवतान्यासमाह । अग्नीति । अग्नीरेफः । भूधरोवः । मांसंलः । एतैर्युतोर्धीशऊकारःशशांकयुक् बिन्दुयुतः । तेनव्लूं । षोडशस्वरपूर्वकं तद्बीजपूर्वांवशिनींशिरसिन्यसेत् । यथा--अंआंइंईंउंऊंऋंॠंऌंॡंएंऐंओंऔंअंअःव्लूंवशिनीवाग्देवतायैनमःशिरसि ॥ २८ ॥ क्रोधीशेति । क्रोधीशः कः । मांसंलः । एताभ्यांयुतामायाकलह्रीं । कवर्गःपूर्वोयस्येदृशमेतद्बीजमाद्यंयस्यास्तांकामेश्वरींभालेन्यसेत् ॥ यथा—कंखंगंघंङंकलह्रींकामेश्वरीवाग्देवतायैनमोललाटे ॥ २९ ॥ दीर्घेति । दीर्घोनकारः । खड्गीशोवः । रान्तोलः । एतैर्युताशांतिरीकारः । बिन्दुयुतातेनन्व्लीं । चवर्गेणतद्बीजेनचयुतांमोहिनीं भ्रूमध्येन्यसेत् । यथा–चंछंजंझंञंन्व्लींमोहिनीवाग्देवतायैननोभ्रूमध्ये ॥ ३० ॥ अर्धीशेति । अर्धीशऊ । वीदृशः । वायुमांसस्थः । यलौस्थितौयस्मिन् । बिन्दुयुतस्तत्तुरीयंचतुर्थवाग्देवताबीजं । तेनव्लूं । टवर्गस्तद्बीजंचपूर्वयस्यास्तांविमलांकण्ठेन्यसेत् । यथा–टंठंडंढंणंव्लूंविमलावाग्देवतायैनमःकण्ठे ॥ ३१ ॥

शूलिवैकुण्ठरेफस्थंवामनेत्रंसविन्दुतत् ।
तवर्गबीजसंयुक्तांविन्यसेदरुणांहृदि ॥ ३२ ॥
वामकर्णोवियद्धंसमांसवालानिलेन्दुयुक् ।
पवर्गतद्बीजपूर्वांजयिनींनाभितोन्यसेत् ॥ ३३ ॥
पाशीतन्द्री रेफावायुसंयुतादीपिकेन्दुयुक् ।
यवर्गबीजाद्यां मूलाधारे सर्वेश्वरीं न्यसेत् ॥ ३४ ॥
संवर्तकमहाकालरेफस्थाशान्तिरिन्दुयुक् ।
कौलिनीशादिबीजाद्यांन्यसेत्पादान्तमूरुतः ॥ ३५ ॥
वाग्देवतायैहार्दान्तं नामान्ते प्रोच्चरेत्पदम् ।
उक्तोवाग्देवतान्यासःसृष्टिन्यासमथाचरेत् ॥ ३६ ॥

वाग्देवता न्यास : संहार के बाद वाग्देवता न्यास करना चाहिये । उसके बीजों के नाम एवं स्थान बतलाता हूँ :

अग्नि, भूधर, मांसल एवं शशांक सहित अर्धीश (ल्व्रूं) के पहिले १६ स्वर लगाकर वशिनी का शिर पर न्यास करना चाहिये ।

क्रोधीश एवं मांस के साथ माया (कलह्रीं) द्वितीय बीज कहलाता है । इसके पहिले कवर्ग लगाकर इसके साथ कामेश्वरी का ललाट पर न्यास करना चाहिये ।

दीर्घ, खड्गीश एवं रान्त के साथ शान्ति एवं बिन्दु लगाने से 'ल्व्ली' बीज बनता है । चवर्ग एवं इस बीज के साथ मोहिनी का भ्रूमध्य में न्यास करना चाहिये ।

वायु एवं मांस सहित सबिन्दु अर्धीश (ल्व्रूं) चतुर्थ बीज कहलाता है । टवर्ग एवं इस बीज के साथ विमला का कण्ठ में न्यास करना चाहिये ।

शूलीति । वामनेत्रमी । कीदृशं । शूलीजः–वैकुण्ठोमः--रेफस्तेस्थितायत्रतत् सविन्दुच । ईदृशंतद्बीजं । तेनज्व्रीं । तवर्गबीजाभ्यांयुतामरुणां हृदिन्यसेत् । यथा--तंथंदंधंनंज्व्रीं-अरुणावाग्देवतायैनमोहृदि ॥ ३२ ॥ वामेति । वियत हः । हंसःसः । मांसंलः । वालोवः । अनिलोयः । इन्दुर्बिन्दुः । एतैर्युक्तोवामकर्णऊकारः । तेनहस्ल्व्यूं । पवर्गएतद्बीजंचपूर्वं-यस्यास्तांजयिनींनाभौन्यसेत् । यथा--पंफंबंभंमंहस्ल्व्यूंजयिनीवाग्देवतायैनमोनाभौ ॥ ३३ ॥ पाशीति । दीपिकाऊकारः कीदृशी । पाशीझः । तंद्रीमः । रेफः । वायुर्यः । तैःसंयुताइन्दु-युक् । तेन इय्रूं । यवर्गोबीजंचाद्यंयस्यास्तांसर्वेश्वरींमूलाधारेन्यसेत् । यथा--यंरंलंवंइय्रूं सर्वेश्वरीवाग्देवतायैनमो मूलाधारे ॥ ३४ ॥ संवर्तकेति संवर्तकःहः । महाकालोमः । रेफः । एतैर्युतोबिन्दुयुताच्छांतिःई । तेनच्छ्रीं आदयं बीजंचाद्यंयस्यास्तांकौलिनीशादिबीजाद्यांन्यसेत् शंषंसंहंलंक्षच्छ्रीं कौलिनीवाग्देवतायैनमऊर्वादिपादान्तम् ॥ ३५ ॥ वागिति । हार्दनमः । वाग्देवतायैनमइतिपदं नामान्ते वाक्षन्यादिनामान्ते प्रोच्चरेत् इति तत्प्रयोगेष्-लिखितम् ॥ ३६ ॥

शूली, वैकुण्ठ एवं रेफ सहित सबिन्दु वामनेत्र (ज्म्रीं) यह पंचम बीज है। तवर्ग एवं इस बीज के साथ अरुणा का हृदय में न्यास करना चाहिये।

वियद्, हंस, मांस, बाल एवं अनिल के साथ सबिन्दु वामकर्ण (हस्ल्व्यूं) यह षष्ठ बीज है। पवर्ग एवं इस बीज के साथ जयिनी का नाभि में न्यास करना चाहिए।

पाशी, तन्द्री, रेफ एवं वायु के साथ सबिन्दु दीपिका (इम्य्रूं) सप्तम बीज है। यवर्ग एवं इस बीज के साथ सर्वेश्वरी का मूलाधार में न्यास करना चाहिये।

संवर्तक, महाकाल एवं रेफ के साथ सबिन्दु शान्ति (क्ष्म्रीं) यह अष्टम बीज है। शवर्ग एवं इस बीज के साथ कौलिनी का ऊरु से पैरों तक न्यास करना चाहिए।

'वाग्देवतायै' तथा अन्त में हार्द (नमः) पद प्रत्येक नाम के बाद लगाना चाहिए। (इस प्रकार) वाग्देवता न्यास कहा गया है। इसके बाद सृष्टि न्यास करना चाहिए।

टिप्पणी : न्यासविधि :

अं आं इं ईं उं ऊं ऋं ॠं ऌं ॡं एं ऐं ओं औं
अं अः ब्लूं वशिनी वाग्देवतायै नमः - शिरसि

कं खं गं घं ङं कलह्रीं कामेश्वरी ,, ,, - ललाटे
चं छं जं झं ञं व्ल्वीं मोहिनी ,, ,, - भ्रूमध्ये
टं ठं डं ढं णं ल्यूं विमला ,, ,, - कण्ठे
तं थं दं धं नं ज्म्रीं अरुणा ,, ,, - हृदि
पं फं बं भं मं ह्स्ल्व्यूं जयिनी ,, ,, - नाभौ
यं रं लं वं इम्य्रूं सर्वेश्वरी ,, ,, - मूलाधारे
शं षं सं हं लं क्षं क्ष्म्रीं कौलिनी ,, ,, - ऊर्वादिपादान्तम्

ब्रह्मरन्ध्रे ललाटे च नेत्रयोःकर्णयोर्नसोः।
गण्डदन्तोष्ठजिह्वासुमुखकूपे च पृष्ठतः ॥ ३७ ॥
सर्वाङ्गे हृदये न्यस्येत्स्तनकुक्षिध्वजेषु च।
एकैकार्णमथो मूर्ध्नि सर्वेण व्यापकं चरेत् ॥ ३८ ॥

सृष्टिन्यास : : ब्रह्मरन्ध्र, ललाट, नेत्र, कान, नासिका, गण्ड, दाँत, होट, जिह्वा, मुख, पीठ, सर्वाङ्ग, हृदय, स्तन, कुक्षि एवं लिङ्ग पर क्रमशः एक-एक वर्ण का न्यास करना चाहिए। तथा समस्त मन्त्र से व्यापक करना चाहिए।

सृष्टिन्यासमाह । ब्रह्मरन्ध्रइति । ब्रह्मरन्ध्रादिष्वेकैकंवर्णन्यसेत् । आद्यंब्रह्मरन्ध्रे । द्वितीयंललाटे । तृतीयंदृशोः । चतुर्थंकर्णयोः । पञ्चमंनसोः । षष्ठंगण्डयोः । सप्तमंदन्तेषु । अष्टममोष्ठयोः । नवमंजिह्वायाम् । दशमंमुखमध्ये । एकादशंपृष्ठे । द्वादशंसर्वांगे । त्रयोदशं-हृदि । चतुर्दशंस्तनयोः । पंचदशं कुक्षौ । षोडशंलिङ्गे ॥ ३७-३८ ॥

टिप्पणी : न्यासविधि :

श्रीं	नमः	-	ब्रह्मरध्रे ।	कएईल ह्रीं	नमः	-	जिह्वायाम् ।
ह्रीं	,,	-	ललाटे ।	हसकहल ह्रीं	,,	-	मुखमध्ये ।
क्लीं	,,	-	नेत्रयोः ।	सकल ह्रीं	,,	-	पृष्ठे ।
ऐं	,,	-	कर्णयोः ।	सौः	,,	-	सर्वाङ्गे ।
सौः	,,	-	नासोः ।	ऐं	,,	-	हृदि ।
ॐ	,,	-	गण्डे ।	क्लीं	,,	-	स्तनयोः ।
ह्रीं	,,	-	दन्तेषु ।	ह्रीं	,,	-	कुक्षौ ।
श्रीं	,,	-	ओष्ठयोः ।	श्रीं	,,	-	लिङ्गे ।

सृष्टिन्यासं विधायैवं स्थितिन्यासमथाचरेत् ।
करांगुष्ठाद्यंगुलीषु ब्रह्मरन्ध्रे मुखे हृदि ॥ ३९ ॥
नाभ्यादिपादपर्यन्तं नाभ्यंतं कण्ठदेशतः ।
ब्रह्मरन्ध्राच्चकण्ठान्तं पादांगुलिषु पञ्चवा ॥ ४० ॥

स्थितिन्यास : इस प्रकार सृष्टिन्यास कर फिर स्थितिन्यास करना चाहिए। हाथ की अंगुष्ठ सहित पाँच अँगुलियों, ब्रह्मरन्ध्र, मुख, हृदय, नाभि से पैर तक, कण्ठ से नाभि तक, ब्रह्मरन्ध्र से कण्ठ तक, तथा पैर की ५ अँगुलियों में क्रमशः मन्त्र के एक-एक वर्ण का न्यास करना चाहिए।

टिप्पणी : न्यासविधि :

श्रीं	नमः	-	अंगुष्ठयोः ।	कएईलह्रीं	नमः	-	नाभ्यादिपादान्तम् ।
ह्रीं	,,	-	तर्जन्योः ।	हसकहलह्रीं	,,	-	कण्ठादिनाभ्यन्तम् ।
क्लीं	,,	-	मध्यमयोः ।	सकलह्रीं	,,	-	ब्रह्मरन्ध्रात् कण्ठान्तम् ।
ऐं	,,	-	अनामिकयोः ।	सौः	,,	-	पादांगुष्ठयोः ।
सौः	,,	-	कनिष्ठकयोः ।	ऐं	,,	-	पादतर्जन्योः ।
ॐ	,,	-	ब्रह्मरन्ध्रे ।	क्लीं	,,	-	पादमध्यमयोः ।
ह्रीं	,,	-	मुखे ।	ह्रीं	,,	-	पादानामिकयोः ।
श्रीं	,,	-	हृदि ।	श्रीं	,,	-	पादकनिष्ठयोः ।

स्थितिन्यासमाह । कोति । पंचकरांगुलीषु । षष्ठंब्रह्मरंध्रे । सप्तमंमुखे । अष्टमंहृदि ॥ ३९ ॥ नवमंनाभ्यादि पादांतम् । दशमंकण्ठादिनाभ्यंतम् । एकादशंब्रह्मरंध्रात्कण्ठान्तं । पंचपादांगुलीषु ॥ ४० ॥

अथ पञ्चविधं न्यासं वक्ष्ये सर्वेष्टसिद्धिदम् ।
मन्त्रपञ्चावृत्तिरूपं येन तद्रूपतां व्रजेत् ॥ ४१ ॥
मूर्ध्निवक्त्रे दृशोःश्रुत्योर्नसोर्गण्डोष्ठयोरपि ।
वक्त्रमध्ये दन्तपंक्त्योर्वदनेविन्यसेत्क्रमात् ॥ ४२ ॥
एकैकवर्णं विद्यायाइत्येको न्यासईरितः ।
शिखाशिरोललाटंभ्रूर्घ्राणवक्त्रे षडर्णकान् ॥ ४३ ॥
करसन्धिषुसाग्रेषु दशेतिस्याद्द्वितीयकः ।
शिरोललाटनेत्रास्येजिह्वायां षण्न्यसेत्पुनः ॥ ४४ ॥
पादसन्धिषुसाग्रेषु दशेतिस्यात्तृतीयकः ।
स्वरस्थाने चतुर्थस्तुललाटे च गले हृदि ॥ ४५ ॥
नाभौ च मूलाधारेपि ब्रह्मरन्ध्रे मुखे गुदे ।
आधारे हृद्ब्रह्मरन्ध्रे करयोःपादयोर्हृदि ॥ ४६ ॥
एवं पञ्चविधं कृत्वा विद्यां प्रणवसम्पुटाम् ।
सर्वस्मिन्व्यापमेदंगे नमोंतां तां हृदि न्यसेत् ॥ ४७ ॥

पंचावृत्तिन्यास : अब सर्वेष्टसिद्धिदायक पञ्चावृत्ति रूपी पञ्चविध न्यास बतलाता हूँ जिससे साधक तद्रूपता प्राप्त कर लेता है :

शिर, मुख, दोनों नेत्र, दोनों कान, दोनों नासिका, दोनों गण्ड, दोनों ओष्ठ, मुख-कूप, दोनों दन्तपंक्तियाँ तथा मुख में क्रमशः विद्या के एक-एक वर्ण का न्यास करना चाहिए—यह प्रथम न्यास कहलाता है ।

शिखा, शिर, ललाट, भ्रू, नासिका एवं मुख में मन्त्र के ६ वर्णों का तथा दोनों हाथों की सन्धि एवं अग्रभाग में शेष वर्णों का न्यास करना चाहिए—यह द्वितीय न्यास कहा जाता है ।

शिर, ललाट, दोनों नेत्र, मुख एवं जिह्वा पर मन्त्र के ६ वर्ण तथा दोनों पैरों की सन्धियों एवं उनके अग्रभाग पर शेष वर्णों का न्यास करना चाहिए—यह तृतीय न्यास है ।

पंचावृत्तिन्यासमाह । मूर्ध्नीति । दृशोर्द्वे । श्रुत्योर्द्वे । नसोर्द्वे । गंडयोर्द्वे । ओष्ठयोर्द्वे । दंतयोर्द्वे शेषेष्वेकैकम् ॥ ४१-४२ ॥ द्वितीयमाह । शिखेति । शिखाशिरोभालभ्रूनासामुखेषु षट् ॥ ४३ ॥ दक्षकरसंध्यग्रेषुपंच । एवंवामेपंच । तृतीयमाह । शिरोभालनेत्रास्यजिह्वासुषट् ॥ ४४ ॥ दक्षपादसंध्यग्रेषुपंच । वामपादेपंच । चतुर्थमाह । स्वरेति । मातृकान्यासेस्वरस्थानान्युक्तानि । तेषु षोडशबीजानिन्यसेत् । पंचममाह । ललाटइति ॥ ४५ ॥ करयोर्द्वे । पादयर्द्वे । अन्यत्रैकैकम् ॥ ४६ ॥ प्रणवपुटितांविद्यांसर्वाङ्गेन्यसेत् । नमोंतांहृदिच ॥ ४७ ॥

मातृका न्यास में बतलाये गये स्वरस्थानों में मन्त्र के १६ वर्णों का न्यास करना चतुर्थ न्यास कहलाता है।

ललाट, कण्ठ, हृदय, नाभि, मूलाधार, ब्रह्मरन्ध्र, मुख, गुदा, आधार, हृदय, ब्रह्मरन्ध्र, दोनों हाथ, दोनों पैर तथा हृदय में मन्त्र के एक-एक वर्ण का न्यास करना चाहिए—यह पञ्चम न्यास है।

इस प्रकार पञ्चविध न्यास करने के बाद प्रणव संपुटित विद्या को सब अंगों में व्यापक करना चाहिए तथा मूलविद्या के बाद 'नमः' लगाकर हृदय में न्यास करना चाहिए।

टिप्पणी : इस न्यास में मूलमन्त्र की ५ आवृत्तियाँ होने के कारण यह पञ्चावृत्ति न्यास कहलाता है। यह न्यास पाँच प्रकार का होता है, यथा—

प्रथम न्यास :

श्रीं नमः - मूर्ध्नि ।	कएईलह्रीं नमः - दक्षिणगण्डे ।
ह्रीं ,, - वक्त्रे ।	हसकलहह्रीं ,, - वामगण्डे ।
क्लीं ,, - दक्षिणनेत्रे ।	सकलह्रीं ,, - ऊर्ध्वोष्ठे ।
ऐं ,, - वामनेत्रे ।	सौः ,, - अधरोष्ठे ।
सौः ,, - दक्षिणकर्णे ।	ऐं ,, - वक्त्रमध्ये ।
ॐ ,, - वामकर्णे ।	क्लीं ,, - ऊर्ध्वदन्तपंक्तौ ।
ह्रीं ,, - दक्षनासायाम् ।	ह्रीं ,, - अधोदन्तपंक्तौ ।
श्रीं ,, - वामनासायाम् ।	श्रों ,, - वदने ।

द्वितीय न्यास :

श्रीं नमः - शिखायाम् ।	कएईलह्रीं नमः - दक्षिण मणिबन्धे ।
ह्रीं ,, - शिरसि ।	हसकहलह्रीं ,, - ,, अंगुलिमूले ।
क्लीं ,, - ललाटे ।	सकलह्रीं ,, - ,, अंगुल्यग्रे ।
ऐं ,, - भ्रुवोः ।	सौः ,, - वामबाहुमूले ।
सौः ,, - नासायाम् ।	ऐं ,, - ,, कूर्परे ।
ॐ ,, - वक्त्रे ।	क्लीं ,, - ,, मणिबन्धे ।
ह्रीं ,, - दक्षिण बाहुमूले ।	ह्रीं ,, - ,, अंगुलिमूले ।
श्रीं ,, - ,, कूर्परे ।	श्रीं ,, - ,, अंगुल्यग्रे ।

तृतीय न्यास :

श्रीं नमः - शिरसि ।	क्लीं ,, - दक्षिणनेत्रे ।
ह्रीं ,, - ललाटे ।	ऐं ,, - वाम नेत्रे ।

सौः	नमः	मुखे ।	सकलह्रीं	नमः	दक्षपादांगुल्यग्रे ।
ॐ	नमः	जिह्वायाम् ।	सौः	,,	वामपाद मूले ।
ह्रीं	नमः	दक्षपादमूले ।	ऐं	,,	वामगुल्फे ।
श्रीं	नमः	दक्षगुल्फे ।	क्लीं	,,	वाम जंघायाम् ।
कएईलह्रीं	नमः	दक्षजंघायाम् ।	ह्रीं	,,	वाम पादांगुलि मूले ।
हसकहलह्रींनमः		दक्षपादांगुलिमूले ।	श्रीं	,,	वाम पादांगुल्यग्रे ।

चतुर्थ न्यास :

श्रीं	नमः	ललाटे ।	कएईलह्रीं	नमः	दक्षगण्डे ।
ह्रीं	,,	मुखवृत्ते ।	हसकहलह्रीं	,,	वामगण्डे ।
क्लीं	,,	दक्षनेत्रे ।	सकलह्रीं	,,	ऊर्ध्वोष्ठे ।
ऐं	,,	वामनेत्रे ।	सौः	,,	अधरे ।
सौः	,,	दक्षकर्णे ।	ऐं	,,	ऊर्ध्वदन्त पंक्तौ ।
ॐ	,,	वामकर्णे ।	क्लीं	,,	अधोदन्त पंक्तौ ।
ह्रीं	,,	दक्षनासायाम् ।	ह्रीं	,,	ब्रह्मरन्ध्रे ।
श्रीं	,,	वामनासायाम् ।	श्रीं	,,	मुखे ।

पंचम न्यास :

श्रीं	नमः	ललाटे ।	कएईलह्रीं	नमः	आधारे ।
ह्रीं	,,	कण्ठे ।	हसकहलह्रीं	,,	हृदि ।
क्लीं	,,	हृदि ।	सकलह्रीं	,,	ब्रह्मरन्ध्रे ।
ऐं	,,	नाभौ ।	सौः	,,	दक्षिण हस्ते ।
सौः	,,	मूलाधारे ।	ऐं	,,	वामहस्ते ।
ॐ	,,	ब्रह्मरन्ध्रे ।	क्लीं	,,	दक्षिण पादे ।
ह्रीं	नमः	मुखे ।	ह्रीं	,,	वामपादे ।
श्रीं	,,	गुदे ।	श्रीं	,,	हृदि ।

इस प्रकार पञ्चावृत्ति न्यास 'ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं ऐं सौः ॐ ह्रीं श्री कएईलह्रीं हसकहलह्रीं सकलह्रीं सौः ऐं क्लीं ह्रीं श्रीं'–मन्त्र का सब अङ्गों में व्यापक न्यास करना चाहिये तथा इस मन्त्र के अन्त में 'नमः' लगाकर हृदय में न्यास करना चाहिये ।

षोढान्यासादयोन्यासाःकार्य्याःसौभाग्यवांछयौ ।
नोच्यन्ते विस्तरभयान्नैव चावश्यकाश्चते ॥ ४८ ॥

षोढान्यासादयोविस्तरभयान्नोक्तास्तेउच्यंते । गणेशग्रहनक्षत्रयोगिनीराशिपीठलक्षणाः-षोढान्यासाः । गणेशमातृकामन्त्रस्यदक्षिणामूर्तिर्ऋषिः गायत्रीछन्दःश्रीमातृकासुन्दरीदेवता-ममोपास्यश्रीविद्यांगत्वेनषोढान्यासेविनियोगः । अंकं ५ आंऐंहृत् । इंचं ५ ईक्लींशिरः ।

षोढ़ान्यास : सौभाग्य की इच्छा से साधक को षोढ़ान्यास आदि सभी न्यास करने चाहिए। विस्तार के भय से उन न्यासों को यहाँ नहीं बतलाया जा रहा है। (तथा प्रसिद्ध होने के कारण उनके बतलाने की) आवश्यकता नहीं है।

टिप्पणी : १. गणेश मातृका न्यास, २. ग्रहमातृका न्यास, ३. नक्षत्र मातृका न्यास ४. योगिनी मातृका न्यास, ५. राशि मातृका न्यास, एवं ६. पीठ मातृका न्यास—इन ६ न्यासों को षोढान्यास कहते हैं। ये न्यास इस प्रकार हैं :

गणेश मातृका न्यास :

विनियोग : अस्य श्री गणेश मातृका मन्त्रस्य दक्षिणामूर्तिऋँषिः, गायत्री छन्दः, श्रीमातृकासुन्दरी देवता ममोपास्य श्रीविद्याङ्गत्वेन षोढ़ान्यासे विनियोगः।

षडङ्गन्यास : अं कं खं गं घं ङं आं ऐं हृदयाय नमः।
इं चं छं जं झं ञं क्लीं शिरसे स्वाहा।
उं टं ठं डं ढं णं ऊं सौः शिखायै वषट्।
एं तं थं दं धं नं ऐं सौः कवचाय हुम्।
ओं पं फं बं भं मं औं क्लीं नेत्रत्रयाय वौषट्।
अं यं रं लं वं शं षं सं हं ळं क्षं अः ऐं अस्त्राय फट्।

उं टं ५ ऊँ सौः शिखा। एं तं ५ ऐं सौः कवचम्। ओं पं ५ ओं क्लीं नेत्रम्। अं यं १० अः ऐं अस्त्रम्। ध्यानम्–उद्यत्सूर्यसहस्राभांपीनोन्नतपयोधराम्। रक्तमाल्याम्बरालेपरक्तभूषणभूषिताम्। पाशांकुशधनुर्बाणभास्वत्पाणिचतुष्टयाम्। रक्तनेत्रत्रयांस्वर्गमुकुटोल्लासिचंद्रिकाम्। एवंध्यात्वान्यसेद्बीजपूर्वंगंअंविघ्नेशद्भींभ्यांनमः। गंआंविघ्नराजश्रीभ्यांनमः इत्यादिमातृकास्थलेन्यसेत्। गणेशाःशक्तिमुक्ताण्डकविशेतरंगमृदे ग्रंथकारेणोक्ताः। इति गणेशमातृकान्यासः। (१)। अथग्रहमातृकामंत्रस्यदक्षिणामूर्तिऋषिरित्यादिपूर्ववत्। षडंगंच। ग्रहरूपिणीसुन्दरीदेवता। ध्यानम्। रक्तंश्वेतंतथारक्तंश्यामंपीतंचपाण्डुरम्। धूम्रकृष्णंचधूम्रंचधूमधूम्रांवांचन्तयेत्। रविमुख्यान्कामरूपान्सर्वाभरणभूषिताम्। वामोरुन्यस्तहस्तांश्चदक्षिणेनवरप्रदान्। एवंध्यात्वामातृकापूर्वान्न्यासान्न्यसेत्। अं १६ सूर्यायरेणुकाम्बायैनमःहृदि ॥ १ ॥ यं ४ चंद्रायामृतांबायैनमःभ्रूमध्ये ॥ २ ॥ कं मंगलायधामांबायैनमोनेत्रयोः ॥ ३ ॥ चं ५ बुधायज्ञानरूपाम्बायैनमोहृदि ॥ ४ ॥ टं ५ बृहस्पतयेयशस्विन्यम्बायैनमोहृदयो परिभागे ॥ ५ ॥ तं ५ शुक्रायशोकर्यम्बायैनमःकण्ठे ॥ ६ ॥ पं ५ शनैश्चरायशक्त्यंबायैनमोनाभौ ॥ ७ ॥ शं ४ राहवेकृष्णाम्बायैनमोमुखे ॥ ८ ॥ लंकेतवेधूम्राम्बायैनमोगुदे ॥ ९ ॥ इतिग्रहमातृकान्यासः। (२) नक्षत्रमातृकामंत्रस्यदक्षिणामूर्तिऋषिर्गायत्रीछंदः। नक्षत्ररूपिणीसुन्दरीदेवता। श्रीविद्यांगत्वेनन्यासेविनियोगः। ध्यानम्। ज्वलत्कालाग्निसंकाशाःसर्वाभरणभूषिताः। नतिपाण्योऽश्विनीमुख्यावरदाभयपाणयः। एवं ध्यात्वामातृका पूर्वंनक्षत्राणिन्यसेत्। यथा–अंआंअश्विन्यैनमोललाटे ॥ १ ॥ इंभरण्यैनमोदक्षनेत्रे ॥ २ ॥ ईंउं ऊं कृत्तिकायैनमोवामनेत्रे ॥ ३ ॥ ऋॠ-

ध्यान : उद्यत्सूर्य सहस्राभां पीनोन्नत पयोधराम् ।
रक्तमाल्याम्बरालेप रक्तभूषणभूषिताम् ॥
पाशांकुशधनुर्बाणभास्वत्पाणिचतुष्टयम् ।
रक्तनेत्रत्रयांस्वर्णमुकुटोद्भासिचन्द्रिकाम् ॥

इस प्रकार ध्यान कर निम्नलिखित मन्त्र से मातृका स्थानों में न्यास करना चाहिये, यथा :

ऐं ॐ रोहिण्यैनमोदक्षनेत्रे ॥ ४ ॥ एं मृगशिरसेनमोवामकर्णे ॥ ५ ॥ ऐं आर्द्रायैनमोदक्षनसि ॥ ६ ॥ ॐ औं पुनर्वसवेनमोवामनसि ॥ ७ ॥ कं पुष्यायनमः कण्ठे ॥ ८ ॥ खं अश्लेषायैनमोदक्षस्कन्धे ॥ ९ ॥ घं मघायैनमोवामस्कन्धे ॥ १० ॥ चं पूर्वाफाल्गुन्यैनमोदक्षकूर्परे ॥ ११ ॥ छं उत्तराफाल्गुन्यैनमोवामकूर्परे ॥ २ ॥ झं हस्तायनमोदक्षमणिबंधे ॥ १३ ॥ टं चित्रायैनमोवाममणिबंधे ॥ १४ ॥ डं स्वात्यैनमोदक्षहस्ते ॥ १५ ॥ ढं विशाखायैनमोवामहस्ते ॥ १६ ॥ तं थं दं अनुराधायैनमोनाभौ ॥ १७ ॥ धं ज्येष्ठायैनमोदक्षकटौ ॥ १८ ॥ नं पं फं मूलायनमोवामकटौ ॥१९॥ बं पूर्वाषाढायैनमोदक्षोरौ ॥ २० ॥ भं उत्तराषाढायैनमोवामोरौ ॥ २१ ॥ मं श्रवणायनमोदक्षजानुनि ॥ २२ ॥ यं रं धनिष्ठायैनमोवामजानुनि ॥ २३ ॥ लं शतभिषायैनमोदक्षजंघायाम् ॥ २४ ॥ वं शं पूर्वाभाद्रपदायैनमोवामजंघायाम् ॥ २५ ॥ षं सं हं उत्तराभाद्रपदायैनमोदक्षपादे ॥ २६ ॥ लं क्षं अं अः रेवत्यैनमोवामपादे ॥ २७ ॥ इतिनक्षत्रमातृका० । (३) सर्वेषुन्यासेष्वादौमायाश्रीबीजयोर्योज्ये । न्यासान्सर्वान्प्रकुर्वीतमायाश्रीबीजपूर्वकानित्युक्तत्वात् । योगिनीन्यासस्यमुनिच्छन्दसीपूर्वोक्ते । योगिनीरूपासुन्दरीदेवताश्रीविद्यांगत्वेनन्यासेविनियोगः । ध्यानम् । सितासितारुणाबभ्रूचित्रापीताश्चिन्तयेत् । चतुर्भुजाःसमैर्वक्त्रैःसर्वाभरणभूषिताः । एवंध्यात्वान्यसेत् । ह्रीं श्रीं डां डीं डं मलवरयूंपूं डाकिन्यैनमः । अं १६ । ममत्वचरक्त २ त्वागात्मनेनमःकण्ठदेशेविशुद्धे ॥ १ ॥ ह्रीं श्रीं रीं रीं रं मलवरयूंपूं राकिन्यैनमः कं १२ । ममरक्तंरक्त २ असृगात्मनेनमः हृद्यनाहते ॥ २ ॥ लां लीं लं मलवरयूंपूं लाकिन्यैनमः डं १० मममांसंरक्त २ मांसात्मनेनमः नाभौमणिपूरे ॥ ३ ॥ कां कीं कं मलवरयूंपूं काकिन्यैनमः वं ६ । मममेदोरक्त २ मेदआत्मनेनमः लिंगमूलेस्वाधिष्ठाने ॥ ४ ॥ शां शीं शं मलवर यूंपूं शाकिन्यैनमः वं ४ ममास्थिरक्त २ अस्थ्यात्मनेनमः गुदेमूलाधारे ॥ ५ ॥ हां हीं हं मलवरयूंपूं हाकिन्यैनमः हं ं ममममज्जारक्त २ मज्जात्मनेनमोभ्रूमध्यआज्ञाचक्रे ॥ ६ ॥ यां यीं यं मलवरयूंपूं याकिन्यैनमअंममशुक्रंरक्त २ शुक्रात्मनेनमः ब्रह्मरन्ध्रे ॥ ७ ॥ इतियोगिनीमातृकाः । (४) । राशिमातृकामन्त्रस्यमुनिच्छन्दसीपूर्वोक्ते । राशिरूपा सुन्दरीदेवता । श्रीविद्यांगत्वेनन्यासेविनियोगः । ध्यानम् । रक्तश्वेतहरिद्वर्णपाण्डुचित्रासितान्स्मरेत् । पिशंग पिंगलौबभ्रुकर्बुराशितधूम्रभान् । एवंध्यात्वान्यसेत् । अं आं इं ईं मेषायनमः दक्षपादगुल्फ ॥ १ ॥ उं ऊं ऋं वृषायनमः दक्षजानुनि ॥ २ ॥ ऋं ॠं लृं लॄं मिथुनायनमः दक्षवृषणे ॥ ३ ॥ एं ऐं कर्कायनमः दक्षकुचौ ॥ ४ ॥ ओं औं सिंहाय० दक्षस्कन्ध ॥ ५ ॥ अं अः शं षं सं हं लं कन्यायैनमः दक्षशिरोभागे ॥ ६ ॥ कं खं गं घं ङं तुलायैनमोवामशिराभागे ॥ ७ ॥ चं छं जं झं ञं वृश्चिकायनमः वामस्कन्धे ॥ ८ ॥ टं ठं डं ढं णं-

गं क्षं विघ्नेशह्रीभ्यां नमः ललाटे ।
,, लां विघ्नराजश्रीभ्यांनमः मुखवृत्ते ।
,, ईं विनायक पुष्टिभ्यां नमः दक्षनेत्रे ।
,, ईं शिवोत्तम शान्तिभ्यांनमः वामनेत्रे ।
,, उं विघ्नकृत् स्वस्तिभ्यांनमः दक्षकर्णे ।
,, ऊं विघ्नहर्तसरस्वतीभ्यांनमः वामकर्णे ।
,, ऋं गण स्वाहाभ्यां नमः दक्षगण्डे ।
,, ॠं एकदन्तसुमेधाभ्यां नमः वामगण्डे ।
,, ऌं द्विदन्त कान्तिभ्यांनमः दक्षनासायाम्
,, ॡं गजवक्त्रकामिनीभ्यांनमः वामनासायाम् ।
,, एं निरंजनमोहिनीभ्यांनमः ऊर्ध्वोष्ठे ।
,, ऐं कपर्दीनटीभ्यां नमः अधरे ।
,, ओं दीर्घजिह्वापार्वतीभ्यांनमः ऊर्ध्वदन्तपंक्तौ
,, औं शंकुकर्णज्वालिनीभ्यांनमः अधोदन्तपंक्तौ
,, अं वृषभध्वजनन्दाभ्यां नमः ब्रह्मरन्ध्रे ।
,, अः सुरेशगणनायकाभ्यां नमः मुखे ।
,, कं गजेन्द्रकामरूपिणीभ्यांनमः दक्षबाहुमूले
,, खं सूर्यकर्णोमाभ्यांनमः दक्षकूर्परे ।
,, गं त्रिलोचनतेजवतीभ्यांनमः दक्षमणिबन्धे ।
,, घं लम्बोदरसत्याभ्यांनमः दक्षअंगुलिमूले ।
,, ङं महानन्द विघ्नेशीभ्यांनमः दक्षअंगुल्यग्रे
,, चं चतुर्मूर्ति सुरूपिणीभ्यां नमः वामबाहुमूले
,, छं सदाशिवकामदाभ्यां नमः वामकूर्परे ।
,, जं आमोदमदजिह्वाभ्यां नमः वाममणिबन्धे
,, झं दुर्मुखभूतिभ्यां नमः वामअंगुलिमूले
,, ञं सुमुखमौतिकाभ्यां नमः वामअंगुल्यग्रे ।

गं टं प्रमोदसिताभ्यां नमः दक्षपादमूले ।
,, ठं एकपादरमाभ्यां नमः दक्षगुल्फे ।
,, डं द्विजिह्वमहिषीभ्यांनमः दक्षजंघायाम् ।
,, ढं शूरभंजनीभ्यां नमः दक्षपादांगुलिमूले
,, णं वीरविकर्णाभ्यांनमः दक्षपादांगुल्यग्रे ।
,, तं षण्मुखभृकुटीभ्यां नमः वामपादमूले ।
,, थं वरदलज्जाभ्यां नमः वामगुल्फे ।
,, दं वामदेवदीर्घघोणाभ्यांनमः वामजंघायाम्
,, धं वक्रतुण्डधनुर्धराभ्यांनमःवामपादांगुलिमूले
,, नं द्विरदयामिनीभ्यांनमः वामपादांगुल्यग्रे
,, पं सेनानीरात्रिभ्यां नमः दक्षपार्श्वे ।
,, फं कामान्धोग्रामणीभ्यां नमः वामपार्श्वे ।
,, बं मत्तशशिप्रभाभ्यां नमः पृष्ठे ।
,, भं विमत्तलोललोचनाभ्यां नमः नाभौ ।
,, मं मत्तवाहनचंचलाभ्यां नमः उदरे ।
,, यं त्वगात्मभ्यां जटिदीप्तिभ्यां नमः हृदि
,, रं मुण्डीसुभगाभ्यां नमः दक्षांसे ।
,, लं खड्गीदुर्भगाभ्यां नमः ककुदि ।
,, वं वरेण्यशिवाभ्यां नमः वामांसे ।
,, शं वृषकेतनभगाभ्यां नमः हृदादिदक्षकरे
,, षं भक्तप्रियभगिनीभ्यांनमःहृदादिवामकरे
,, सं गणेशभोगिनीभ्यांनमः हृदादिदक्षपादे
,, हं मेघनादसुभगाभ्यांनमःहृदादिवामपादे
,, लं व्यासीस्थकालरात्रिभ्यांनमःहृदादिउदरे
,, क्षं गणेश्वरकालिकाभ्यां नमः हृदादिमुखे

धनुषेनमःवामकुक्षौ ॥ ९ ॥ तंथंदंधनंमकरायनमः वामवृषणे ॥ १० ॥ पफंबंभंमुम्भायनमः वामजानुनि ॥ ११ ॥ यंरंलंवंशं मीनायनमोवामगुल्फे ॥ १२ ॥ इतिराशिमातृकाः । (५) । पीठमातृकामन्त्रस्यमुनिच्छन्दोगानिपूर्ववत् । पीठरूपिणीसुन्दरी देवता । श्रीविद्यांगत्वेन-न्यासेविनियोगः । ध्यानम् । सितासितारुणश्यामहरित्पीतान्यनुक्रमात् । पुनरेकमहोवी-पञ्चाशत्स्थानसंचये । पीठानीहस्मरेद्विद्वान्सर्वकामार्थसिद्धये । एवंन्यात्वामातृकास्थानेषु-मातृकावर्णपूर्वाणिपीठानिन्यसेत् । तानियथा-ह्रींश्रींअकामरूपपीठायनमः ॥ १ ॥ आं-

ग्रह मातृकान्यास : विनियोग :

अस्य श्री ग्रह मातृका मन्त्रस्य दक्षिणामूर्तिर्ऋषिः गायत्री छन्दः, ग्रहमूर्तिधरी सुन्दरी देवता ममोपास्य श्रीविद्याङ्गत्वेन षोढान्यासे विनियोगः ।

षडङ्गन्यास : पूर्ववत् :

ध्यान : रक्तं श्वेतं तथा रक्तं श्यामं पीतं चपाण्डुरम् ।
धूम्रकृष्णं च धूम्रं च धूमधूम्रं विचिन्तयेत् ॥
रविमुख्यान्कामरूपान्सर्वाभरण भूषितान् ।
वामोरुन्यस्तहस्तांश्च दक्षिणेनवरप्रदान् ॥

न्यासः

अं १६ सूर्यायरेणुकाम्बायै नमः	हृदि ।	तं ५ शुक्राय शांकर्यम्बायै नमः	कण्ठे ।
यं ४ चन्द्रायामृताम्बायै	,, भ्रूमध्ये ।	पं ५ शनैश्चराय शक्त्यम्बायै	,, नाभौ ।
कं ५ मङ्गलाय धामाम्बायै	,, नेत्रयो ।	शं ४ राहवे कृष्णाम्बायै	,, मुखे ।
चं ५ बुधाय ज्ञानरूपाम्बायै	,, हृदि ।	लं क्षं केतवे धूम्राम्बायै	,, गुदे ।
टं ५ बृहस्पतये यशस्विन्यम्बायै- नमः हृदयो परिभागे ।			

नक्षत्र मातृका न्यास :

विनियोग : अस्य श्री नक्षत्र मातृका मन्त्रस्य दक्षिणामूर्तिर्ऋषिः गायत्री छन्दः, नक्षत्ररूपिणी सुन्दरी देवता ममोपास्य श्रीविद्याङ्गत्वेन षोढान्यासे विनियोगः ।

वाराणसीपीठायनमः ॥ २ ॥ इंनेपालपीठायनमः ॥ ३॥ इंपौंड्रवर्धनपीठ० ॥ ४॥ उंजम्मीरपीठ० ॥ ५ ॥ ऊंकान्यकुब्जपीठ० ॥ ६ ॥ ऋंपूर्णगिरिपीठ० ॥ ७ ॥ ऋंहृदाचलपीठ० ॥ ८ ॥ लृंआम्रातकेश्वरपीठ० ॥ ९ ॥ लृंएकाम्रपीठा० ॥ १० ॥ एंत्रिस्रोतःपीठा० ॥ ११ ॥ ऐंकामकोटिपीठा० ॥१२॥ ओंकैलासपीठ० ॥ १३ ॥ औंभृगुपीठ० ॥१४॥ अंकेदारपीठ० ॥ १५ ॥ अः चन्द्रपुरपीठा० ॥१६॥ कंश्रीपीठ० ॥१७॥ खंओंकारपीठ० ॥ १८ ॥ गंजालंधरपीठ० ॥ १९ ॥ घंमालवपीठ० ॥ २० ॥ डंकुलांतपीठ० ॥२१॥ चंदेवीकोट्टकपीठ० ॥ २२ ॥ छंगोकर्णपीठ० ॥ २३ ॥ जंमारुतेश्वरपीठ० ॥२४॥ झंअट्टहासपीठ० ॥२५॥ ञंविरजपीठ० ॥ २६ ॥ टंराजगृहपीठ० ॥२७॥ ठंमहापथपीठ० ॥ २८ ॥ डंकोल्लगिरिपीठ० ॥ २९ ॥ ढंएलापुरपीठ० ॥ ३० ॥ णंकालेश्वरपीठ० ॥ ३१ ॥ तंजयंतीपीठ० ॥ ३२ ॥ थंउज्जयिनीपीठ० ॥ ३३ ॥ दंचरित्रपीठ० ॥ ३४ ॥ धंक्षीरिकापीठ० ॥ ३५ ॥ नंहस्तिनापुरपीठा० ॥३६॥ पंउड्डीशपीठ० ॥ ३७ ॥ फंप्रयागपीठ० ॥ ३८ ॥ बंषष्टीशपीठ० ॥ ३९ ॥ भंमायापुरीपीठ० ॥ ४० ॥ मंमलयपीठ० ॥ ४१ ॥ यंश्रीशैलपीठ० ॥४२॥ रंमेरुपीठ० ॥ ४३ ॥ लंगिरिपीठ० ॥ ४४ ॥ वंमाहेंद्रपीठ० ॥ ४५ ॥ शंवामनपीठ० ॥ ४६ ॥ षंहिरण्यपुरपीठ० ॥ ४७ ॥ संमहालक्ष्मीपीठ० ॥ ४८ ॥ हंउड्डियाणपीठायनमः ॥ ४९ ॥ लंछाया पीठ० ॥ ५० ॥ क्षंचत्रपुरपीठ० ॥ ५१ ॥ इति पीठमातृकापीठन्यासः (६) ॥ इतिषोढान्यासः (६) ॥ आदिशब्दात्काममातृकादयोज्ञेयाः ॥ ४८ ॥

षडङ्गम् : पूर्ववत् :

ध्यान : ज्वलत्कालाग्निसंकाशाः सर्वाभरण भूषिताः ।
नतिपाण्योऽश्विनीमुख्या वरदा भयपाणयः ॥

न्यास :

अं आं अश्विन्यैनमः ललाटे
इं भरण्यै नमः दक्षनेत्रे
ईं उं ऊं कृत्तिकायै नमः वामनेत्रे
ऋं ॠं लृं ॡं रोहिण्यै नमः दक्षकर्णे
एं मृगशिरसे नमः वामकर्णे
ऐं आद्रायै नमः दक्षनासायाम्
ओं औं पुनर्वसवे नमः वामनासायाम्
कं पुष्याय नमः कण्ठे
खं गं आश्लेषायै नमः दक्षस्कन्धे
घं ङं मघायै नमः वामस्कन्धे
चं पूर्वाफाल्गुन्यै नमः दक्षकूर्परे
छं जं उत्तराफाल्गुन्यै नमः वामकूर्परे
झं ञं हस्ताय नमः दक्षमणिबन्धे
टं ठं चित्रायै नमः वाममणिबन्धे
डं स्वात्यै नमः दक्षहस्ते
ढं णं विशाखायै नमः वामहस्ते
तं थं दं अनुराधायै नमः नाभौ
धं ज्येष्ठायै नमः दक्षकटौ
नं पं फं मूलाय नमः वामकटौ
बं पूर्वाषाढायै नमः दक्षोरौ
भं उत्तराषाढायै नमः वामोरौ
मं श्रवणाय नमः दक्षजानुनि
यं रं धनिष्ठायै नमः वामजानुनि
लं शतभिषायै नमः दक्षजंघायाम्
वं शं पूर्वाभाद्रपदायै नमः वामजंघायाम्
षं संहं उत्तराभाद्रपदायै नमः दक्षपादे
ळक्षंअंअः रेवत्यै नमः वामपादे

योगिनी मातृकान्यास :

विनियोग : अस्य श्री योगिनीमातृकामन्त्रस्य दक्षिणामूर्तिर्ऋषिः गायत्री छन्दः, योगिनीरूपा सुन्दरी देवता श्रीविद्याङ्गत्वेन षोढान्यासे विनियोगः ।

ध्यान : सितासितारुणाबभ्रूचित्रापीताश्च चिन्तयेत् ।
चतुर्भुजाः समैर्वक्त्रैः सर्वाभरण भूषिताः ॥

न्यास :

ह्रीश्रींडांडींडंमलवरयंपूं डाकिन्यै नमः अं१६ ममत्वचं रक्ष२ त्वगात्मनेनमः कंठेविशुद्धे
,, ,, रांरींरं ,, ,, राकिन्यै ,, कं१२ ,, रक्तं ,, असृगात्मने ,, हृद्यनाहते
,, ,, लांलींलं ,, ,, लाकिन्यै ,, डं१० ,, मांसं ,, मांसात्मने ,, नाभौमणिपूरे
,, ,, कांकींकं ,, ,, काकिन्यै ,, बं६ ,, मेदो ,, मेदआत्मने ,, लिंगेस्वाधिष्ठाने
,, ,, शांशींशं ,, ,, शाकिन्ये ,, वं४ ,, अस्थि ,, अस्थ्यात्मने ,, गुदेमूलाधारे
,, ,, हांहींहं ,, ,, हाकिन्यै ,, हंक्षं ,, मज्जां ,, मज्जात्मने ,, भ्रूमध्येआज्ञा.
,, ,, यांयींयं ,, ,, याकिन्यै ,, अं ममशुक्रं रक्ष २ शुक्रात्मने नमः ब्रह्मरन्ध्रे

राशिमातृकान्यास : विनियोग : अस्य श्रीराशिमातृकामन्त्रस्य दक्षिणमूर्तिर्ऋषिः, गायत्रीछन्दः, राशिरूपा सुन्दरी देवता श्रीविद्याङ्गत्वेन षोढान्यासे विनियोगः ।

ध्यान : रक्तश्वेतहरिद्वर्णपाण्डुचित्रासितान्स्मरेत् ।
विशंगपिंगलौवभ्रुकर्बुराशितधूम्रभान् ॥

न्यास :

अं आं इं ईं मेषाय नमः दक्षपादगुल्फे ।
उं ऊं ऋं वृषाय नमः दक्षजानुनि ।
ऋं ॠं लृं मिथुनाय नमः दक्षवृषणे ।
एं ऐं कर्काय नमः दक्षकुक्षौ ।
ओं औं सिंहाय नमः दक्षस्कन्धे ।
अं अः शं षं सं हं ळं कन्यायैनमः दक्षशिरोभागे
कं खं गं घं ङं तुलायै नमः वामशिरोभागे ।
चं छं जं झं ञं वृश्चिकाय नमः वामस्कन्धे ।
टं ठं डं ढं णं धनुषे नमः वामकुक्षौ ।
तं थं दं धं नं मकराय नमः वामवृषणे ।
पं फं बं भं मं कुम्भाय नमः वामजानुनि ।
यं रं लं वं क्षं मीनाय नमः वामगुल्फे ।

पीठमातृका न्यास : विनियोग अस्य श्री पीठमातृकामन्त्रस्य दक्षिणामूर्तिर्ऋषिः गायत्री छन्दः, पीठरूपिणी सुन्दरी देवता श्रीविद्याङ्गत्वेन षोढान्यासे विनियोगः ।

ध्यान : सितासितारुणश्यामहरितपीतायनुक्रमात् ।
पुनरेतत्क्रमाद्देवीपञ्चाशत्स्थान संचये ॥
पीठानीह स्मरेद्विद्वान्सर्वकामार्थसिद्धये ॥

न्यास :

ह्रीं श्रीं अं कामरूपपीठाय नमः ललाटे
,, ,, आं वाराणसीपीठाय नमः मुखवृत्ते
,, ,, इं नेपालपीठाय नमः दक्षनेत्रे
,, ,, ईं पौंड्रवर्धन ,, नमः वामनेत्रे
,, ,, उं काश्मीर ,, नमः दक्षकर्णे
,, ,, ऊं कान्यकुब्ज,, नमः वामकर्णे
,, ,, ऋं पूर्णगिरि ,, नमः दक्षगण्डे
,, ,, ॠं अर्बुदाचल,, नमः वामगण्डे
,, ,, लृं आम्रातकेश्वर-
पीठाय नमः दक्षनासायाम्
,, ,, ॡं एकाम्र ,, नमः वामनासायाम्
,, ,, एं त्रिस्रोतः ,, नमः ऊर्ध्वोष्ठे
ह्रीं श्री ऐं कामकोटिपीठाय नमः अधरे
,, ,, ओं कैलाश ,, नमः ऊर्ध्वदन्तपंक्तौ
,, ,, औं भृगु ,, नमः अधोदन्तपंक्तौ
,, ,, अं केदार ,, नमः ब्रह्मरन्ध्रे
,, ,, अः चन्द्रपुर ,, नमः मुखे
,, ,, कं श्री- ,, नमः दक्षबाहुमूले
,, ,, खं ओंकार ,, नमः ,, कूर्परे
,, ,, गं जालन्धर,, नमः ,, मणिबन्धे
,, ,, घं मालव ,, नमः ,, अंगुलिमूले
,, ,, ङं कुलान्त ,, नमः ,, अंगुल्यग्रे
,, ,, चं देवीकोट्टक,, नमः वामबाहुमूले

ह्रीं श्रीं छं गोकर्णपीठायनमः वामकूर्परे ह्रीं श्रीं फं प्रयागपीठाय नमः वामपार्श्वे
,, ,, जं मारुतेश्वर,, नमः ,, मणिबन्धे ,, ,, बं षष्ठीश ,, नमः पृष्ठे
,, ,, झं अट्टहास ,, नमः ,, अंगुलिमूले ,, ,, भं मायापुरी ,, नमः नाभौ
,, ,, ञं विरजपीठाय नमः वामांगुल्यग्रे ,, ,, मं मलय ,, नमः उदरे
,, ,, टं राजगृह ,, नमः दक्षपादमूले ,, ,, यं श्रीशैल ,, नमः हृदि
,, ,, ठं महापथ ,, नमः ,, गुल्फे ,, ,, रं मेरु ,, नमः दक्षांसे
,, ,, डं कोल्लगिरि,, नमः ,, जंघायाम् ,, ,, लं गिरि ,, नमः ककुदि
,, ,, ढं एलापुर ,, नमः ,, पादांगुलिमूले ,, ,, वं माहेन्द्र ,, नमः वामांसे
,, ,, णं कालेश्वर ,, नमः ,, पादांगुल्यग्रे ,, ,, शं वामन ,, नमःहृदादिदक्षहस्ते
,, ,, तं जयन्ती ,, नमः वामपादमूले ,, ,, षं हिरण्यपुर,, नमः ,, वामहस्ते
,, ,, थं उज्जयिनी ,, नमः ,, गुल्फे ,, ,, सं महालक्ष्मी,, नमः ,, दक्षपादे
,, ,, दं चरित्र ,, नमः ,, जंघायाम ,, ,, हं उड्डियान ,, नमः ,, वामपादे
,, ,, धं क्षीरिका ,, नमः ,, पादांगुलिमूले ,, ,, ळं छाया ,, नमः ,, उदरे
,, ,, नं हस्तिनापुर ,, नमः ,, पादांगुल्यग्रे ,, ,, क्षं क्षत्रपुर ,, नमः ,, मुखे
,, ,, पं उड्डीश ,, नमः दक्षपार्श्वे

मुद्राःप्रदर्शयेत्कृत्वा षडङ्गं प्राणसंयमम् ।
संक्षोभद्रावणाकर्षवश्योन्मादमहांकुशाः ॥ ४९ ॥
खेचरीबीजयोन्याख्यामुद्रा देवीप्रिया नव ।
ततो ध्यायेद्भगवतीं श्रीमत्त्रिपुरसुन्दरीम् ॥ ५० ॥

फिर प्राणायाम एवं षडङ्गन्यास करने के बाद मुद्राएँ दिखलानी चाहिए । संक्षोभिणी, द्रावणी, अकर्षणी, वश्या, उन्माद, महांकुश, खेचरी, बीज एवं महायोनि

एवन्यासान्कृत्वामुद्राःप्रदर्शयेदित्याह । मुद्राइति । नवानांमुद्राणांमध्येसंक्षोभद्रावणाकर्षखेचरीबीजाख्यानांपंचानांलक्षणमुक्तम् । चतसृणामुच्यते । तत्रवश्यमुद्रालक्षणं यथा—पुटाकारौकरौकृत्वातर्जन्यावंकुशाकृती । परिवर्त्यक्रमेणैवमध्यमेतदधोगते । क्रमेणैवंविधैर्वकनिष्ठानामिकादयः । संयोज्यनिविडाःसर्वांअंगुष्ठावग्रदेशतः । मुद्रेयंपरमेशानीसर्ववश्यकरीमतेति । उन्मादमुद्रालक्षणंयथा—संमुखौतुकरौकृत्वाऽध्यमामध्यमेनुजे । अनामिकेतुसरलेतदधस्तर्जनीद्वयम् । दंडाकारौततोंगुष्ठौमध्यमानस्वदेशगौ । मुद्रेषेन्मादिनीनामक्लेदिनीसर्वयोषिताम्मिता । महांकुशमुद्रालक्षणंयथा—अस्यास्त्वनामिकाग्रमधःकृत्वांकुशाकृति । तर्जन्यावपितेनैवकनिष्ठेनविनियोजयेत् । इयंमहांकुशामुद्रासर्वकामार्थसाधनीति । यंनिशब्देनात्रमहायोनिमुद्रा । तल्लक्षणंयथा- मध्यमेकुटिलेकृत्वातर्जन्युपरिसंस्थिते । अनामिकामध्यगतेतथैवहिकनिष्ठिके । सर्वाएकत्रसंयोज्याअंगुष्ठापरिपीडिता । एषातुप्रथमामुद्रामहायोन्यभिधामतेति । मुद्राएवंप्रदर्श्यध्यायेत् ॥ ४९-५० ।

ये ९ मुद्राएँ देवी की प्रिय मुद्रायें हैं। फिर श्रीमत्त्रिपुरसुन्दरी देवी का ध्यान करना चाहिए।

टिप्पणी : देवी की प्रिय संक्षोभ आदि ९ मुद्राओं के लक्षण इस प्रकार हैं :

(i) *संक्षोभ मुद्रा* : मध्यमां मध्यमे कृत्वा कनिष्ठांगुष्ठरोधिते।
तर्जन्यौ दण्डवत् कृत्वा मध्यमोपर्यनामिके ॥
क्षोभाभिधान मुद्रेयं सर्वसंक्षोभकारिणी ॥

(ii) *द्राविणी मुद्रा* : एतस्या एव मुद्राया मध्यमे सरले यदा।
क्रियेते परमेशानि तदा विद्राविणी मता ॥

(iii) *आकर्षिणीमुद्रा* : मध्यमातर्जनीभ्यां तु कनिष्ठानामिके समे।
अंकुशाकार रूपाभ्यां मध्यमे परमेश्वरि ॥
इयमाकर्षिणीमुद्रा त्रैलोक्याकर्षणे क्षमा ॥

(iv) *वश्य मुद्रा* : पुटाकारौ करौ कृत्वा तर्जन्यावंकुशाकृती।
परिवर्त्य क्रमेणैव मध्यमे तदधोगते ॥
क्रमेण देवि तेनैव कनिष्ठानामिकादयः।
संयोज्य निविडाः सर्वा अंगुष्ठावग्रदेशतः ॥
मुद्रेयं परमेशानि सर्ववश्यकरी मता ॥

(v) *उन्मादमुद्रा* : संमुखौ तु करौ कृत्वा मध्यमामध्यमेनुजे।
अनामिके तु सरले तदधस्तर्जनीद्वयम् ॥
दण्डाकारौं ततोऽङ्गुष्ठौ मध्यमान स्वदेशगौ।
मुद्रैषोन्मादिनी नाम क्लेदिनी सर्वयोषिताम् ॥

(vi) *महांकुशामुद्रा* : अस्यास्त्वनामिका युग्ममधः कृत्वांकुशाकृति।
तर्जन्यावपि तेनैव क्रमेण विनियोजयेत् ॥
इयं महांकुशा मुद्रा सर्वकामार्थसाधिनी ॥

(vii) *खेचरीमुद्रा* : सव्यं दक्षिण हस्ते तु सव्यहस्ते तु दक्षिणम्।
बाहूकृत्वा महादेवि हस्तौ संपरिवर्त्य च ॥
कनिष्ठानामिके देवि युक्ता तेन क्रमेण तु।
तर्जनीभ्यां समाक्रान्ते सर्वोर्ध्वमपि मध्यमे ॥
अंगुष्ठौ तु महादेवि सरलावपि कारयेत्।
इयं सा खेचरी वाम मुद्रा सर्वोत्तमोत्तमा ॥

(viii) *बीजमुद्रा* : परिवर्त्य करौ स्पष्टावर्द्धचन्द्राकृती प्रिये।
तर्जन्यंगुष्ठ युगलं युगपत्कारयेत्ततः ॥

अधः कनिष्ठावष्टब्धे मध्यमे विनियोजयेत् ।
तथैव कुटिले योज्ये सर्वाधस्तादनामिके ॥
बीज मुद्रेयमुदिता सर्वसिद्धिप्रदायिनी ॥

ix) *महायोनिमुद्रा* : मध्यमे कुटिले कृत्वा तर्जन्युपरि संस्थिते ।
अनामिका मध्यगते तथैव हि कनिष्ठके ॥
सर्वा एकत्र संयोज्या अंगुष्ठपरिपीडिताः ।
एषा तु प्रथमा मुद्रा महायोन्याभिधा मता ॥

बालार्कायुततेजसं त्रिनयनां रक्ताम्बरोल्लासिनीं
नानालंकृतिराजमानवपुषं बालोडुराट्शेखराम् ।
हस्तैरिक्षुधनुःसृणिसुमशरंपाशंमुदाबिभ्रतीं
श्रीचक्रस्थितसुन्दरीं त्रिजगतामाधारभूतां स्मरेत् ॥ ५१ ॥

ध्यान : बाल रवि के समान कान्ति वाली, तीन नेत्रवाली, लाल वस्त्रों से सुशोभित, अनेक आभूषणों से अलंकृत देहवाली, शिरपर चन्द्रकला धारण करने वाली, चारों हाथों में क्रमशः इक्षधनु, अंकुश, पुष्पवाण एवं पाश धारण करने वाली, श्रीचक्र पर विराजमान एवं तीनों लोकों की आधारभूता त्रिपुर सुन्दरी देवी का ध्यान करना चाहिए ।

लक्षमेकं जपेन्मन्त्रं दशांशं हयमारजैः ।
पुष्पैस्त्रिमधुरोपेतैर्जुहुयात्पूजिते नले ॥ ५२ ॥

जपसंख्या एवं हवन : इस मन्त्र का १ लाख जप करना चाहिए । तथा त्रिमधुर मिश्रित कनेर के फूलों से विधिवत पूजित अग्नि में दशांश होम करना चाहिए ।

श्रीचक्रस्योद्धृतिं वक्ष्ये तत्र पूजनसिद्धये ।
बिन्दुगर्भं त्रिकोणं तु कृत्वा चाष्टारमुद्धरेत् ॥ ५३ ॥
दशारद्वयमन्वस्राष्टारषोडश कोणकम् ।
त्रिरेखात्मकभूगेहवेष्टितं यन्त्रमालिखेत् ॥ ५४ ॥

श्रीयन्त्र का उद्धार : श्रीयन्त्र पर पूजन करने के लिए उसका उद्धार बतलाता हूँ—अपने गर्भ में बिन्दु सहित त्रिकोण लिखकर उसके ऊपर अष्टदल लिखना चाहिए । (फिर उसके ऊपर क्रमशः) दो दशदल, चतुर्दश दल, अष्टदल एवं षोडशदल लिखने

ध्यानमाह । बालेति । नानालंकृतयोविविधाभरणानितैराजमानंशोभमानंवपुर्यस्यास्ताम् । बालउडुराट्चंद्रःशेखरेयस्यास्ताम् । सृणिमंकुशं । सुमशरंपुष्पबाणं । बाणांकुशौदधायोः । इक्षुधनुःपाशौबामयोः । श्रीचक्रंवक्ष्यमाणं । तत्रस्थितांसुन्दरींत्रिपुरसुन्दरींध्यायेत् ॥ ५१ ॥ हयमारःकरवीरः ॥ ५२ ॥ श्रीचक्रमाह । श्रीचक्रस्येति ॥५३॥ मन्वस्रं चतुर्दशारम् ॥५४॥

चाहिए। फिर इन्हें तीन रेखात्मक भूपुर से वेष्टित करना चाहिए। इस प्रकार श्रीयन्त्र को लिखना चाहिए।

टिप्पणी : श्रीविद्या का पूजन यन्त्र (देखिये चित्र नं० २९)।

तत्र पूजां प्रवक्ष्यामि पात्रस्थापनपूर्वकम्।
वहन्नाडीस्थहस्तेन स्वाग्रतो यन्त्रमालिखेत् ॥ ५५ ॥
त्रिकोणमध्यषट्कोणवृत्तभूमण्डलात्मकम्।
बालयापूजयेन्मध्यं तद्बीजैःकोणकत्रयम् ॥ ५६ ॥
अनुलोमविलोमैस्तैःषट्कोणान्पूजयेत्ततः।
अस्त्रप्रक्षालितं मध्ये पात्राधारंनिधापयेत् ॥ ५७ ॥
एकत्रिंशार्णमनुनातमाधारं समर्चयेत्।
वह्निर्दीर्घत्रयेंद्वाढ्योरम्भातलवरानिलाः ॥ ५८ ॥
वामकर्णेन्दुसंयुक्तारःसेन्दुश्चाग्निमण्डला।
वायुर्धर्मप्रददशकलात्माङ्गेसमन्वितः ॥ ५९ ॥
वाग्बीजंकलशाधारा पवनोनमसान्वितः।
तारादिरीरितो मन्त्रो भाजनाधारपूजने ॥ ६० ॥
प्रादक्षिण्याद्दृशाग्नेयीस्तदुपर्य्यर्चयेत्कलाः।
धूम्रार्चिरूष्माज्वलिनीज्वालिनीविस्फुलिंगिनी ॥ ६१ ॥
सुश्रीःसुरूपाकपिलाहव्यकव्यादिकावहा।
सबिन्दुयादिवर्णाद्यादशाग्नेरीरिताःकलाः ॥ ६२ ॥
कलाश्रीपादुकांपूजयामीति पदमुच्चरेत्।
नाम्नामन्ते ततस्तासां प्राणस्थापनमाचरेत् ॥ ६३ ॥

पात्रस्थापनमाह। वहदिति। वहन्नीयानाडीदक्षहस्तेनाधारतद्धस्तेनस्वाग्रेत्रिकोणादियंत्रमालिख्य तत्रास्त्रक्षालितपात्राधारंस्थापयेत् ॥ ५५-५७ ॥ एकत्रिंशदक्षरमनेणाधारपूजयेत्। तमाह। वह्निरिति। वह्निरेफः दीर्घत्रयेन्दुयुक्तः रांरीं रूं। स्वरूपम्। भातोमः। लवरस्वरूपम्। अनिलोयः ॥ ५८ ॥ एतेषामकर्णेदुसयुताःऊबिदुयुताः वायुरः। कलात्माङेसमान्वतश्चतुर्थ्यन्तः। वाग्बीजएँ। पवनोयः। स्वरूपमन्यत्। यथा-ॐरांरींरूंम्लव्यूरंअग्निमडलायधर्मप्रददशकलात्मनेएँ कलशाधारायनमः ॥ ५९-६० ॥ प्रादक्षिण्यादिति। तदुपरिपात्राधारंपरिआग्नेयीदशकलाअर्चयेत्। ताएवाह। धूम्रार्चिरिति ॥६१॥ हव्यकव्यादिकावहा हव्यवहाकव्यवहाच। कीदृश्यस्ताः। सांबदवोयाःदशवर्णाआद्यायासाम् ॥ ६२ ॥ कलेति। नाम्नांधूम्रार्चिरित्यादिनाम्नामंतेकलेत्यादिपदमुच्चरेत्। यंधूम्रार्चिःकलाश्रीपादुकांपूजयामि-रंऊष्माकलाश्रीपादुकांपूजयामीत्यादिप्रयोगः ॥ ६३ ॥

स्वर्णादिपात्रमस्त्रेणक्षालितं तत्र विन्यसेत् ।
वियद्दीर्घत्रयेन्द्वाढ्यं हमसांसंदरानिलः ॥ ६४ ॥
अर्धीशबिन्दुसंयुक्तःसेन्दुखंसूर्य्यमण्डला ।
वायुर्वसुप्रदान्तेस्याद्द्वादशान्तेकलात्मने ॥ ६५ ॥
मन्मथः कलशायेतिनमोंतःप्रणवादिकः ।
त्रिंशद्वर्णात्मको मन्त्रःकलशस्यार्च्चनेमतः ॥ ६६ ॥
कलाद्वादशसूर्य्यस्य कलशोपरि पूजयेत् ।
तपिनीतापिनीधूम्रामरीचिर्ज्वालिनीरुचिः ॥ ६७ ॥
सुषुम्नाभोगदाविश्वाबोधिनीधारिणीक्षमा ।
अनुलोमविलोमाभ्यां कादिभाद्यर्णयुग्युता ॥ ६८ ॥
पूर्ववत्ताःसमापूज्याःकलशेपूरयेज्जलम् ।
उच्चरन्मातृकावर्णान्मूलविद्यां च मन्त्रवित् ॥ ६९ ॥
दन्ताक्षरेण मनुना कलशोदकमर्च्चयेत् ।
भृगुर्दीर्घत्रयेंद्वाढ्यःसमलांव्वह्निनायदः ॥ ७० ॥
अर्धीशेन्दुयुताःसेन्दुहंसान्तेसोममण्डला ।
यकामप्रदषोडान्तेशकलात्मातुङेयुतः ॥ ७१ ॥
भृगुर्मनुर्विसर्गाढ्योङेयुतंकलशामृतम् ।
तारादिहृदयान्तायंमनुःपानीयपूजने ॥ ७२ ॥
चान्द्रीःकलाःस्वराद्यास्तुयजेत्षोडशतज्जले ।
अमृतामानदापूषातुष्टिपुष्टीरतिर्धृतिः ॥ ७३ ॥

स्वर्णादिनिर्मितंकलशम् अस्त्रायफडितिप्रक्षाल्यतत्राधारेन्यसेत् । तंत्रिंशद्वर्णमन्त्रेणार्च्चयेत् । तमुद्धरति । वियदिति । वियत्हकारंदीर्घत्रयाढ्यं हांहींहूं । हमस्वरूपम् । मांसंलः । वरस्वरूपम् । अनिलोयः ॥ ६४ ॥ अर्धीशबिन्दुयुक्तःयूं । सेंदुखंसबिंदुहम् । वायुर्यः ॥ ६५ ॥ मन्मथःक्लीं । स्पष्टमन्यत् । यथा-ॐ हांहींहूंहमलवरयूंहंसूर्यमंडलायवसुप्रदद्वादशकलात्मनेक्लींकलशायनमइति ॥ ६६ ॥ सूर्यकलाआह । तपिनीति ॥ ६७ ॥ कीदृश्यस्ताः । अनुलोमेति । क्रमोत्क्रमाभ्यां यैकादयोभादयश्चवर्णाः तेषांयुजोयुग्मानितैर्युताः । कभंतपिन्यैनमःखंवंतापिन्यैनमः-गफंधूम्रायैनमः-इत्यादि ॥ ६८ ॥ पूर्ववत् । तपिनीकलाश्रीपादुकांपूजयामीतिप्रयोगः ॥ ६९ ॥ दंताक्षरेणद्वात्रिंशदक्षरेण । तमेवोद्धरति । भृगुरिति । भृगुःसः दीर्घत्रययुतः सांसींसूं । अंबुदः । अग्नीरः । वायुर्यः । एते ॥ ७० ॥ अर्धीशेंदुयुताःऊंबिंदुयुताः । ङेयुतश्चतुर्थ्यंतः ॥ ७१ ॥ भृगुःसःमनुरौं । ङेयुतंकलशामृतं कलशामृताय । तारादिहृदयांतः प्रणवादिनमोंतः । ॐसांसींसूंसमूलंव्यूंसंसोममंडलायकामप्रदषोडशकलात्मनेसौः कलशामृतायनमः (३२) मंत्रोयंजलार्चने ॥ ७२ ॥

शशिनीचन्द्रिकाकान्तिर्ज्योत्स्नाश्रीःप्रीतिरंगदा ।
पूर्णापूर्णामृताचेति पूजनं पूर्ववन्मतम् ॥ ७४ ॥
भैरवं च सुधादेवीं स्वमन्त्राभ्यां यजेज्जले ।
सहक्षमलपानीयवह्नीरार्धीशबिन्दुमत् ॥ ७५ ॥
बीजमानन्दभैरवान्तेवायुर्वौषण्मनुर्मतः ।
हसयोर्वैपरीत्येन बीजं पूर्वोदितं सुधा ॥ ७६ ॥
देव्यैवौषट्तयोर्मन्त्रौ दशमुन्यक्षरौ क्रमात् ।
ततो मत्स्यास्त्रकवचधेनुमुद्राःप्रदर्शयेत् ॥ ७७ ॥
संरोधिन्या संनिरुध्य मुसलं चक्रसंज्ञकम् ।
महामुद्रांयोनिमुद्रांकुर्य्यात्कुम्भामृते पुनः ॥ ७८ ॥
एवं कलशमास्थाप्य तस्य दक्षिणदेशतः ।
शंखं चापिविशेषार्घ्यं स्थापयेत्पूर्ववत्क्रमात् ॥ ७९ ॥
अर्घ्येत्रिकोणं संचिंत्याऽकथाद्यैःषोडशाक्षरैः ।
हक्षाभ्यां शोभितं मध्ये तत्र बालां प्रपूजयेत् ॥ ८० ॥
अष्टवर्णनमन्त्रेण देवीं ज्योतिर्मयीं यजेत् ।
तारोमायेन्दुयुग्व्योमभृगुसर्गीससद्यसः ॥ ८१ ॥
वराहोबिन्दुयुक्स्वाहा वसुवर्णःस्मृतोमनुः ।
मूलंत्रिरभिजप्याथ कुर्यान्मुद्राःसमीरिताः ॥ ८२ ॥

षोडशस्वराद्याश्चार्द्धीःकलास्तज्जलेचर्चयेत् । ताआह । अमृतेति ॥ ७३-७४ ॥ भैरवमंत्रमाह । हसेति । हसक्षमलेतिस्वरूपम् । पानीयंवः । वह्नीरः । ईशेयः अर्धीशऊविन्दुश्च एतैर्युतम् ॥ ७५ ॥ बीजम् । स्व पमन्वत् । यथा-हसक्ष मलवर्यूआनंदभैरवायवौषट्-दशार्णः । सुधादेवीमन्त्रमाह । हसयोरिति । पूर्वोक्तबीजेहसयोर्वैपरीत्यं सहक्ष मलवर्यूं सुधादेव्यैवौषट्-सुन्यक्षरःससार्णः । मत्स्येति । मत्स्यमुद्रालक्षणं यथा--वामे परिष्टात्संस्थाप्यदक्षहस्तंप्रसारयेत् । अंगुष्ठौभुतयोः पार्श्वेमत्स्यमुद्रेयमीरितेति । अस्त्रकवचमुद्रेवक्ष्येते । धेनुमुद्रोक्ता ॥ ७६-७७ ॥ संरोधिनीवक्ष्यते । मुसलमुद्रा । यथा-मुष्टीकृत्वातुहस्ताभ्यां-वामस्योपरिदक्षिणम । कुर्यान्मुसलमुद्रेयंसर्वविघ्ननिवारिणीति । चक्रमुद्रायथा-हस्तौ तुसम्मुखौकृत्वासलग्नौसुप्रसारितौ । कनिष्ठांगुष्ठकौलग्नौमुद्रैषाचक्रसंज्ञितेति । महामुद्रावक्ष्यते । योनिमुद्रोक्ता ॥ ७८-७९ ॥ अर्घ्यइति । कादयःषोडशस्वराः । कादयः-षोडशतांताः । थादयःषोडशसांताः । तैरर्घ्येत्रिकोणंसंचिंत्य । कीदृशम् । हक्षाभ्यांमध्ये-शोभितम् । तत्र ऐंक्लींसौरिनिबालांसपूजयत् ॥ ८० ॥ अष्टवर्णमाह । तारइति । तार-ॐ । मायाह्रीं । इन्दुयुग्व्योमहं । सर्गीभृगुःसः ससद्यः औयुतः सः सौः ॥ ८१ ॥ बिंदु-युगवराहोहः हं । स्वाहास्वरूपम् । समीरितामुद्रामत्स्याद्यानवमुद्राःकुर्यात् ॥ ८२ ॥

शंखार्घ्यस्थापने कार्य्यं ऊहःकलशनामनि ।
एवं पात्राणि संस्थाप्य गृहीत्वार्घ्योदकं ततः ॥ ८३ ॥
पूजावस्तूनि चात्मानं प्रोक्षेन्मूलमनुं स्मरन् ।
विधाय मानसीं पूजां पीठपूजामथाचरेत् ॥ ८४ ॥

पात्रस्थापन : उस श्रीयन्त्र पर श्रीविद्या का पूजन पात्रस्थापन पूर्वक बतलाता हूँ । दक्षिण या वाम जो स्वर चल रहा हो, उस हाथ से अपने आगे वक्ष्यमाण यन्त्र लिखे । त्रिकोण के मध्य में षड्कोण फिर वृत्त एवं भूपुर सहित यन्त्र लिखना चाहिए । यन्त्र के मध्य की बाला मन्त्र से पूजा करनी चाहिए तथा उसके तीनों कोणों की बाला मन्त्र के तीनों बीजों से पूजा करनी चाहिए । इन तीन बीजों को अनुलोम एवं विलोम कर उनसे क्रमशः षड्कोणों का पूजन करना चाहिए ।

फिर उक्त यन्त्र पर 'अस्त्राय फट्' मन्त्र से प्रक्षालित पात्राधार को रखना चाहिए । (तथा) ३१ अक्षरवाले (वक्ष्यमाण) मन्त्र से उस आधार की पूजा करनी चाहिए ।

दीर्घत्रयेन्दु युक्त वही (रां रीं रुं) फिर 'र' भान्त (म) ल, व, र, एवं अनिल (य) ये सब वामकर्णेन्दु (ऊं) के साथ अर्थात्—'म्लव्र्यूं' फिर सेन्दु र (रं) 'अग्निमण्डला' एवं वायु (य) फिर चतुर्थ्यन्त ध 'प्रद दश कलात्मा, बाग्बीज (ऐं) 'कलशाधारा' एवं पवन (य) अन्त में 'नमः' तथा प्रारम्भ में प्रणव लगाने से यह ३१ अक्षर का आधार पात्र की पूजा का मन्त्र बनता है, यथा : ॐ रां रीं रुं म्लव्र्यूं रं अग्निमण्डलाय धर्मप्रददशकलात्मने ऐं कलशाधाराय नमः ।

उस आधारपात्र के ऊपर प्रदक्षिण क्रम से अग्नि की दशकलाओं का पूजन करना चाहिए । धूम्रार्चि, ऊष्मा, ज्वलिनी, ज्वालिनी, विस्फुलिंगिनी, सुश्री, सुरूपा, कपिला, हव्यवहा ए ' कव्यवहा—ये सबिन्दु यकार आदि १० वर्णों के साथ अग्नि की कलाएँ कही गयी हैं । इनके नाम के बाद 'कलाश्रीपादुकां पूजयामि' यह पद बोलना चाहिए । और फिर उनका प्राण स्थापन करना चाहिए ।

इसके बाद 'अस्त्राय फट्' मन्त्र से प्रक्षालित सुवर्ण आदि से निर्मित पात्र (कलश) उस आधार पर रखना चाहिए (और ३० अक्षर वाले वक्ष्यमाण मन्त्र से उसका पूजन करना चाहिए) ।

दीर्घत्रयेन्दु सहित वियद् (हां हीं हूं) फिर 'ह, म, मांस (ल) व, र अनिल (य) ये सब अर्धीश बिन्दु सहित अर्थात् 'हम्ल्व्र्यूं' फिर सेन्दु खं (हं) 'सूर्यमण्डला' एवं वायु (य) फिर 'वसुप्रद, 'द्वादश' एवं 'कलात्मने' फिर मन्मथ (क्लीं) 'कलशाय नमः' इस मन्त्र के आदि में प्रणव लगाने से यह ३० अक्षर का कलशपूजन का

शंखस्थापनेऽर्घ्यपात्रस्थापनेचकलशनाम्निऊहःशंखपदमर्घ्यपदंचप्रयोज्यम् ॥ ८३-८४ ॥

मन्त्र (ॐ हां हीं हूं ह्स्म्ल्व्र्यूं हं सूर्यमण्डलाय वसुप्रद द्वादशकलात्मने ह्सौं कलशाय नमः) बतलाया गया है ।

कलश के ऊपर सूर्य की द्वादश कलाओं का पूजन करना चाहिए । तपिनी, तापिनी, धूम्रा, मरीचि, ज्वालिनी, रुचि, सुषुम्ना, भोगदा, विश्वा, बोधिनी, धारिणी एवं क्षमा—ये अनुलोम ककारादि एवं विलोम भकार आदि वर्णों से युक्त होती हैं । इनका भी पूर्वोक्त रीति से पूजन करना चाहिए ।

फिर साधक मातृका वर्णों को एवं मूलमन्त्र को बोलते हुए कलश में जल भरे । तथा ३२ अक्षरवाले वक्ष्यमाण मन्त्र से कलश के जल का पूजन करे ।

दीर्घत्रयेन्दु सहित भृगु (सां सीं सूं) फिर स् म् ल्, अम्बु (व्) अग्नि (र्) एवं वायु (य्) ये सब अर्धीशेन्दु युत—अर्थात् 'स्म्ल्व्र्यूं' फिर हंस (सं) 'सोम मण्डलायकामप्रदषोडश' के बाद चतुर्थ्यन्त कलात्मा (कलात्मने) फिर मनुविसर्गाढ्य भृगु (सौः) चतुर्थ्यन्त कलशामृत (कलशामृताय)—इसके प्रारम्भ में प्रणव एवं अन्त में हृद् (नमः) लगाने से यह ३२ अक्षर का जल पूजन का मन्त्र (ॐ सां सीं स्म्ल्व्र्यूं सं सोममण्डलाय कामप्रद षोडशकलात्मने सौः कलशामृताय नमः) होता है ।

उस जल में १६ स्वरों के साथ १६ चान्द्री कलाओं का पूजन करना चाहिए । अमृता, मानदा, पूषा, तुष्टि, पुष्टि, रति, धृति, शशिनी, चन्द्रिका, कान्ति, ज्योत्स्ना, श्री, प्रीति, अंगदा, पूर्णा एवं पूर्णामृता ये कलाएं होती हैं । इनका भी पूर्वोक्त रीति से पूजन करना चाहिए ।

जल में अपने-अपने मन्त्रों से भैरव एवं सुधा देवी का पूजन करना चाहिए ।

ह्, स्, क्ष्, म्, ल्, पानीय (व्), वह्नि (र्) ये सब अर्धीश एवं बिन्दु सहित होने से 'ह्स्क्ष्म्ल्व्र्यूं' यह बीज बनता है । इस बीज के बाद 'आनन्दभैरवा' एवं वायु (य) तथा अन्त में 'वौषट्' से १० अक्षर का भैरव मंत्र ("ह्स्म्ल्व्र्यूं आनन्द भैरवाय वौषट्") तथा पूर्वोक्त बीज में ह्स् का विपर्यय करने से इस 'स्ह्क्ष्म्ल्व्र्यूं, के बाद 'सुधादेव्यै वौषट्' लगाने से ७ अक्षर का सुधा की पूजा का मन्त्र (स्ह्म्ल्व्र्यूं सुधा देव्यै वौषट्) बनता है ।

फिर मत्स्य, अस्त्र, कवच एवं धेनु मुद्राएँ दिखलानी चाहिए । संरोधिनी मुद्रा से संनिरोध कर कलश के जल में मुसल, चक्र, महामुद्रा एवं योनि मुद्राएँ दिखलानी चाहिए ।

इस प्रकार कलश स्थापन कर उसके दक्षिण भाग में पूर्वोक्त रीति से शंख एवं विशेषार्घ्य का भी स्थापन करना चाहिए । अर्घ्य में अकारादि, ककारादि एवं थकारादि १६-१६ अक्षरों की रेखाओं से बने तथा मध्य में 'हक्ष' वर्णों से शोभित त्रिकोण

का ध्यान कर उसमें (ऐं क्लीं सौः' मन्त्र से) वाला का पूजन करना चाहिए। अष्टाक्षर मन्त्र से ज्योतिर्मयी देवी का पूजन करना चाहिए।

तार (ॐ) माया (ह्रीं) इन्दुयुग् व्योम (हं) सर्गी भृगु (सः) ससद्य भृगु (सौः) बिन्दुयुक् वराह (हं) एवं 'स्वाहा' लगाने से ८ अक्षर का मन्त्र ("ॐ ह्रीं हंसः सौः हं स्वाहा ।") बनता है।

फिर मूल मन्त्र को ३ बार जप कर मत्स्य आदि पूर्वोक्त ९ मुद्राएँ दिखलानी चाहिए। शंख एवं अर्घ्य स्थापन में 'कलश' शब्द के स्थान पर उनके नाम लेने चाहिए।

इस प्रकार पात्रों का स्थापन करने के बाद अर्घ्यपात्र में से जल लेकर उस जल से पूजा सामग्री एवं अपने ऊपर छींटे लगाने चाहिए। फिर मानसोपचार से देवी का पूजन कर पीठ पूजा करनी चाहिए।

टिप्पणी : पात्र स्थापन विधि : पात्र स्थापन करते समय दक्षिण या वाम जो स्वर चल रहा हो, उस हाथ से अपने आगे त्रिकोण, षड्कोण, वृत्त एवं भूपूरवाला यन्त्र लिखकर उसके मध्य भाग की 'ऐं क्लीं सौः' मन्त्र से पूजा कर इस मन्त्र के तीन बीजों से क्रमशः त्रिकोण के तीन कोणों का तथा 'ऐं क्लीं सौः सौः क्लीं ऐं'–इन ६ बीजों से क्रमशः षड्कोण के ६ कोणों का पूजन करना चाहिए।

फिर 'अस्त्राय फट्' मन्त्र से प्रक्षालित पात्राधार को उक्त यन्त्र के मध्य में रखकर "ॐ रां रीं रुं म्ल्व्र्यूं रं अग्नि मण्डलाय धर्मप्रद दशकलात्मने ऐं कलशाधाराय नमः" मन्त्र से आधार की पूजा करनी चाहिए। तत्पश्चात् पात्राधार के ऊपर निम्नलिखित मन्त्रों से अग्नि की १० कलाओं का पूजन करना चाहिए। मन्त्र इस प्रकार हैं—

यं धूम्रार्चिषे नमः	धूम्रार्चि	कला	श्रीपादुकां	पूजयामि	नमः।
रं ऊष्मायै नमः	ऊष्मा	,,	,,	,,	,,।
लं ज्वलिन्यै नमः	ज्वलिनी	,,	,,	,,	,,।
वं ज्वालिन्यै नमः	ज्वालिनी	,,	,,	,,	,,।
शं विस्फुलिंगिन्यै नमः	विस्फुलिंगनी	,,	,,	,,	,,।
षं सुश्रियै नमः	सुश्रीः	,,	,,	,,	,,।
सं सुरूपायै नमः	सुरूपा	,,	,,	,,	,,।
हं कपिलायै नमः	कपिला	,,	,,	,,	,,।
ळं हव्यवाहायै नमः	हव्यवहा	,,	,,	,,	,,।
क्षं कव्यवाहायै नमः	कव्यवहा	,,	,,	,,	,,।

और इसके बाद इन कलाओं की पात्राधार पर प्राण प्रतिष्ठा करनी चाहिए।

तदनन्तर पात्राधार पर 'अस्त्राय फट्' मन्त्र से प्रक्षालित स्वर्ण आदि से निर्मित कलश रखकर "ॐ हां हीं हूं ह्म्ल्व्र्यूं हं सूर्यमण्डलाय वसुप्रदद्वादशकलात्मने क्लीं कलशाय नमः" मन्त्र से कलश का पूजन करना चाहिए। फिर कलश पर निम्नलिखित मन्त्रों से तपिनी आदि सूर्य की १२ कलाओं का पूजन करना चाहिए, यथा—

कं भं तपिन्यै नमः तपिनी कला श्रीपादुकां पूजयामि नमः। खं बं तापिन्यै नमः तापिनी कला श्रीपादुकां पूजयामि नमः। गं फं धूम्रायै नमः धूम्रा कला श्रीपादुकां पूजयामि नमः। घं पं मरीच्यै नमः मरीचि कला श्रीपादुकां पूजयामि नमः। ङं नं ज्वालिन्यै नमः ज्वालिनी कला श्रीपादुकां पूजयामि नमः। चं धं रुच्यै नमः रुचि कला श्रीपादुकां पूजयामि नमः। छं दं सुषुम्णायै नमः सुषुम्ना कला श्रीपादुकां पूजयामि नमः। जं थं भोगदायै नमः भोगदा कला श्रीपादुकां पूजयामि नमः। झं तं विश्वायै नमः विश्वा कला श्रीपादुकां पूजयामि नमः। ञं णं बोधिन्यै नमः बोधिनी कला श्रीपादुकां पूजयामि नमः। टं ढं धारिण्यै नमः धारिणी कला श्रीपादुकां पूजयामि नमः। ठं डं क्षमायै नमः क्षमा कला श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

तत्पश्चात् 'अं आं इं ईं····ळं क्षं' मातृका वर्णों तथा मूलमन्त्र को बोलते हुए कलश में जल भरकर "ॐ सां सीं सूं स्म्ल्व्र्यूं सं सोम मण्डलाय कामप्रदषोडशकलात्मने सौः कलशामृताय नमः"—मन्त्र से कलशोदक का पूजन करना चाहिए। फिर जल में निम्नलिखित मन्त्रों से अमृता आदि चन्द्रमा की १६ कलाओं का पूजन करना चाहिए, यथा :

अं अमृतायै नमः अमृता कला श्रीपादुकां पूजयामि नमः। आं मानदायै नमः मानदा कला श्रीपादुकां पूजयामि नमः। इं पूषायै नमः पूषा कला श्रीपादुकां पूजयामि नमः। ईं तुष्टयै नमः तुष्टि कला श्रीपादुकां पूजयामि नमः। उं पुष्ट्यै नमः पुष्टि कला श्रीपादुकां पूजयामि नमः। ऊं रत्यै नमः रति कला श्रीपादुकां पूजयामि नमः। ऋं धृत्यै नमः धृति कला श्रीपादुकां पूजयामि नमः। ॠं शशिन्यै नमः शशिनी कला श्रीपादुकां पूजयामि नमः। ऌं चन्द्रिकायै नमः चन्द्रिका कला श्रीपादुका पूजयामि नमः। ॡं कान्त्यै नमः कान्ति कला श्रीपादुकां पूजयामि नमः। एं ज्योत्स्नायै नमः ज्योत्स्ना कला श्रीपादुकां पूजयामि नमः। ऐं श्रियै नमः श्रीकला श्रीपादुकां पूजयामि नमः। ओं प्रीत्यै नमः प्रीति कला श्रीपादुकां पूजयामि नमः। औं अंगदायै नमः अंगदा कला श्रीपादुकां पूजयामि नमः। अं पूर्णायै नमः पूर्णा कला श्रीपादुकां पूजयामि नमः। अः पूर्णामृतायै नमः पूर्णामृता कला श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

इसके बाद जल में 'ह्स्क्ष्म्ल्व्र्यूं आनन्द भैरवाय वौषट्' मन्त्र से भैरव का तथा 'स्ह्क्ष्म्ल्व्र्यूं सुधा देव्यै वौषट्'—मन्त्र से सुधा देवी का पूजन करना चाहिए। और फिर

मत्स्य, अस्त्र, कवच एवं धेनु मुद्राएँ दिखाकर संरोधिनी से संरोधन कर मुसल, चक्र, महामुद्रा एवं योनि मुद्राएँ दिखलानी चाहिए। इन मुद्राओं के लक्षण इस प्रकार हैं :

(i) *मत्स्य मुद्रा* : वामोपरिष्टात्संस्थाप्य दक्षहस्तं प्रसारयेत् ।
अंगुष्ठौ युतयोः पार्श्वे मत्स्यमुद्रेयमीरिता ॥

(ii) *अस्त्रमुद्रा* : नाराचमुष्ट्युद्धृतबाहुयुग्मकांगुष्ठतर्जन्युदितोध्वनिस्तु ।
विष्वक् विशक्तः कथिताऽस्त्रमुद्रा ।

(iii) *कवचमुद्रा* : करद्वन्द्वांगुल्यो वर्मणि (कवच) स्युः ।

(iv) *धेनुमुद्र* : अन्योन्याभिमुखौ श्लिष्टौ कनिष्ठानामिका पुनः ।
तथैव तर्जनीमध्या धेनुमुद्रा प्रकीर्तिता ॥

(v) *सन्निरोधमुद्रा* : आश्लिष्ट मुष्टियुगला प्रोन्नताङ्गुष्ठयुग्मका ।
सन्निधाने समुद्दिष्टा मुद्रेयं तन्त्रवेदिभिः ॥
अंगुष्ठगर्भिणी सैव सन्निरोधे समीरिता ॥

(vi) *मुसलमुद्रा* : मुष्टिं कृत्वा तु हस्ताभ्यां वामस्योपरि दक्षिणम् ।
कुर्यान्मुसलमुद्रेयं सर्वविघ्नविनाशिनी ॥

(vii) *चक्रमुद्रा* : हस्तौ तु संमुखौ कृत्वा संलग्नौ सुप्रसारितौ ।
कनिष्ठांगुष्ठकौ लग्नौ मुद्रैषा चन्द्रसंज्ञिका ॥

(viii) *महामुद्रा* : अन्योन्यग्रथितांगुष्ठौ प्रसारितकरांगुलिः ।
महामुद्रेयमुदिता परमीकरणा बुधैः ॥

(xi) *योनिमुद्रा* : मिथः कनिष्ठके बद्ध्वा तर्जनीभ्यामनामिके ।
अनामिकोर्ध्वं संश्लिष्ट दीर्घमध्यमयोरधः ॥
अंगुष्ठाग्रद्वयं न्यस्येद् योनिमुद्रेयमीरिता ॥

उक्त रीति से कलश स्थापन कर उसके दाहिनी ओर शंख एवं विशेषार्घ्य का भी पूर्वोक्त रीति से स्थापन करना चाहिए (शंख आदि की स्थापना के समय कलश स्थापन में बतलाये पूर्वोक्त मन्त्रों में 'कलश' पद के स्थान पर 'शंख' या 'विशेषार्घ्य' पद लगाना चाहिए)।

तत्पश्चात् अर्घ्यपात्र में अकारादि १६, ककारादि १६ एवं थकारादि १६ वर्णों की ३ रेखाओं से निर्मित तथा मध्य में ह क्ष वर्णों से सुशोभित त्रिकोण का ध्यान कर

उसके मध्य में 'ॐ ह्रीं हं सः सौः हं स्वाहा' इस अष्टाक्षर मन्त्र से वाला का पूजन करना चाहिए। फिर उसके ऊपर ३ बार मूलमन्त्र का जप कर पूर्वोक्त मत्स्य आदि ९ मुद्राएँ दिखानी चाहिए।

इस प्रकार पात्रों का विधिवत स्थापन करने के बाद अर्घ्यपात्र से जल लेकर मूलमन्त्र का जप करते हुए पूजासामग्री एवं स्वयं को छींटें लगाने चाहिए। और फिर श्लोक ५१ में वर्णित देवी के स्वरूप का ध्यान कर निम्नलिखित मन्त्रों से मानसी पूजा करनी चाहिए :

ॐ लं पृथिव्यात्मकं महादेव्यै गन्धं विलेपयामि नमः - अंगुष्ठकनिष्ठाभ्याम्।
ॐ हं आकाशात्मकं महादेव्यै पुष्पाणि समर्पयामि नमः - अंगुष्ठानामिकाभ्याम्।
ॐ यं वाय्वात्मकं महादेव्यै धूपं आघ्रापयामि नमः - अंगुष्टमध्यमाभ्याम्।
ॐ रं वह्न्यात्मकं महादेव्यै दीपं दर्शयामि नमः - अंगुष्टतर्जनीभ्याम्।
ॐ बं अमृतात्मकं महादेव्यै नैवेद्यं निवेदयामि नमः - अंगुष्ठानामिकाभ्याम्।

मण्डूकं कालवह्नीशं तन्मूलप्रकृतिं यजेत्।
आधारशक्तिं कूर्मं च शेषवाराहमेदिनीः ॥ ८५ ॥
सुधाब्धिं रत्नदीपं च स्वर्णाद्रिं नन्दनंवनम्।
दृष्ट्वाकल्पतरून्मध्ये विचित्रानन्दभूमिकाम् ॥ ८६ ॥
श्रीरत्नमन्दिरं रत्नवेदिकां धर्मवारणम्।
रत्नसिंहासनं तस्य पादान्धर्मादिकान्यजेत् ॥ ८७ ॥
गात्राणितांश्चनञ्पूर्वान्पद्मंचानन्दकन्दकम्।
ज्ञाननालं कर्णिकां च सूर्य्यसोमाग्निमण्डलम् ॥ ८८ ॥
तारमात्रात्रयाद्यं तत्स्ववर्णाद्यान्गुणान्यजेत्।
मात्रात्रयाद्यमात्मानमन्तरात्मानमेव च ॥ ८९ ॥
तृतीयं परमात्मानं ज्ञानात्मानं परादिकम्।
मायातत्त्वं कलातत्त्वं विद्यातत्त्वं च पूजयेत् ॥ ९० ॥

पीठपूजामाह। मण्डूकमिति। कालवह्नीशंकालाग्निरुद्रम् ॥ ८५ ॥ स्वर्णाद्रिंमेरुः ॥८६॥ धर्मवारणंछत्रम्। धर्मादिकान्धर्मज्ञानवैराग्यैश्वर्याणि ॥ ८७ ॥ नञ्पूर्वानधर्मादीन् ॥ ८८ ॥ तारमात्रात्रयाद्यम् अंउंमंपूर्वंसूर्यसोमाग्निमंडलम्। गुणान्सत्त्वरजस्तमांसि। स्ववर्णाद्यान्संसत्त्वायनमइत्यादिरूपान्। आत्मानमित्यादीन् मात्रात्रयादीन् अंआत्मने-उंअन्तरात्मने ॥ ८९ ॥ मंपरमात्मने। पादिकंमायाबीजाद्यम् ज्ञानात्मानम् ह्रीं ज्ञानात्मनेइति। मायातत्त्वादीनिस्ववर्णाद्यानि मांमायातत्त्वायनमइत्यादिरूपाणि ॥ ९० ॥

परतत्त्वं स्ववर्णाद्यं ब्रह्मविष्णुशिवांस्ततः ।
प्रेतांतानीश्वरं तुर्यं पञ्चमं च सदाशिवम् ॥ ९१ ॥
सुधार्णवासनं पश्चाद्यजेत्प्रेताम्बुजासनम् ।
दिव्यासनं चक्रासनं सर्वमन्त्रासनं ततः ॥ ९२ ॥
साध्यसिद्धासनं प्राच्यं चक्रराजं प्रपूजयेत् ।
पीठशक्तिस्ततःकाष्ठास्विच्छाज्ञानक्रियातथा ॥ ९३ ॥
कामिनीकामदायिन्यौरतिरेवंरतिप्रिया ।
नन्दामनोन्मनीचेतिवराभयकरास्तुता ॥ ९४ ॥
तत आसनमन्त्रेणपूजयेच्चक्रनायकम् ।
वाक्परायैकेशवोऽथपरायै च परापरा ॥ ९५ ॥
वालीदामोदरारूढस्तार्तीयं च सदाशिव ।
महाप्रेतं पठेत्पद्मासनायहृदयान्तिकः ॥ ९६ ॥
एकोनत्रिंशदर्णाढ्यो मनुरासनसंज्ञकः ।

पीठपूजा : मण्डूक, कालाग्निरुद्र, मूलप्रकृति, आधार शक्ति, कूर्म, शेष, वाराह, मेदिनी, सुधाम्बुधि, रत्नद्वीप, मेरु, नन्दनवन का पूजन करना चाहिए। फिर कल्पवृक्ष को देखकर मध्य में विचित्रानन्द भूमि, श्रीरत्नमन्दिर, रत्नवेदिका, छत्र एवं सिंहासन का पूजन कर उसके पादरूपी धर्म, ज्ञान, वैराग्य, एश्वर्यों का तथा अधर्म अज्ञान, अवैराग्य एवं अनैश्वर्य का पूजन करना चाहिए। फिर पद्म, आनन्दकन्द, ज्ञाननाल, कर्णिका का पूजन कर ओंकार के तीन स्वरों (अं उं मं) के साथ सूर्य, सोम एवं अग्नि के मण्डलों का, अपने वर्णों के साथ सत्त्व, रज एवं तमोगुण का तथा पूर्वोक्त तीन स्वरों के साथ आत्मा, अन्तरात्मा एवं परमात्मा का पूजन करना चाहिए। फिर माया बीज के साथ ज्ञानात्मा का तथा अपने अपने वर्णों के साथ मायातत्त्व, कलातत्त्व, विद्यातत्त्व, एवं परतत्त्व का पूजन करना चाहिए। फिर अपने अपने वर्णों को आदि में लगाकर ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र, ईश्वर एवं सदाशिव–इन ५ प्रेतों का पूजन करना चाहिए।

फिर सुधार्णवासन, प्रेताम्बुजासन, दिव्यासन, चक्रासन, सर्वमन्त्रासन, एवं साध्य-सिद्धासन का पूजन कर चक्रराज का पूजन करना चाहिए।

ब्रह्मविष्णुरुद्रेश्वरसदाशिवान्प्रेतशब्दांतान्बंब्रह्मप्रेतायनमइत्यादिरूपान् ॥ ९१-९२ ॥ काष्ठासुदिच्छु । पीठशक्तीराह । इच्छेति ॥ ९३-९४ ॥ पीठमंत्रमुद्धरति । वागिति । वाक्ऐं । केशवःअः ॥ ९५ ॥ वालीयः दामोदरारूढःऐयुतः यै । तार्तीयंहसौः । हृदयांतिकः नमोंतः । स्वरूपमन्यत । यथा–ऐंपरायै अपरायै परापरायैहसौःसदाशिवमहाप्रेतपद्मासनायनम-इति ॥ ९६-९७ ॥

तत्पश्चात् दिशाओं में वरद एवं अभयमुद्रा धारण करने वाली पीठ शक्तियों का पूजन करना चाहिए। इच्छा, ज्ञान, क्रिया, कामिनी, कामदायिनी, रति, रतिप्रिया, नन्दा एवं मनोन्मनी—ये पीठ शक्तियाँ होती हैं।

तदनन्तर आसन मन्त्र से चक्रनायक का पूजन करना चाहिए।

वाम् (ऐं) फिर 'परायैः' केशव (अ) 'परायै' 'परापरा' एवं दामोदरारूढ वाली (यै) फिर तार्तीय (ह्सौः) 'सदाशिवमहाप्रेत' फिर 'पद्मासनाय' और अन्त में हृदय (नमः) लगाने से २९ अक्षर का यह आसनमन्त्र बनता है।

टिप्पणी : पीठपूजा विधि : पात्र स्थापन करने के बाद देवी का विधिवत ध्यान एवं मानसोपचार से पूजन कर यन्त्रराज पर निम्न मन्त्रों से पीठ देवताओं एवं पीठ शक्तियों का पूजन करना चाहिए, यथा :

कर्णिका में—ॐ मण्डूकाय नमः। ॐ कालाग्निरुद्राय नमः। ॐ मूलप्रकृत्यै नमः। ॐ आधार शक्तये नमः। ॐ कूर्माय नमः। ॐ शेषाय नमः। ॐ वाराहाय नमः। ॐ पृथिव्यै नमः। ॐ सुधाम्बुधये नमः। ॐ रत्नद्वीपाय नमः। ॐ मेरवे नमः। ॐ नन्दनवनाय नमः। ॐ कल्पवृक्षाय नमः।

कर्णिका मूल में—ॐ विचित्रानन्दभूम्यै नमः।

फिर कर्णिका के ऊपर—ॐ श्रीरत्नमन्दिराय नमः। ॐ रत्नवेदिकायै नमः। ॐ धर्मवारणाय नमः। ॐ रत्नसिंहासनाय नमः।

चारों दिशाओं मे—ॐ धर्माय नमः। ॐ ज्ञानाय नमः। ॐ वैराग्याय नमः। ॐ ऐश्वर्याय नमः। ॐ अधर्माय नमः। ॐ अज्ञानाय नमः। ॐ अवैराग्याय नमः। ॐ अनैश्वर्याय नमः।

फिर मध्य में—ॐ आनन्द कन्दाय नमः। ॐसंविन्नालाय नमः। ॐसर्व तत्त्वात्मक पद्माय नमः। ॐ प्रकृतिमयपत्रेभ्यो नमः। ॐ विकारमयकेसरेभ्यो नमः। ॐ पञ्चाशद्बीजाढ्यकर्णिकायै नमः। ॐ अं द्वादशकलात्मने सूर्यमण्डलाय नमः। ॐ उं षोडशकलात्मने सोममण्डलाय नमः। ॐ मं दशकलात्मने वह्निमण्डलाय नमः। ॐ सं सत्त्वाय नमः। ॐ रं रजसे नमः। ॐ तं तमसे नमः। ॐ आं आत्मने नमः। ॐ ईं अन्तरात्मने नमः। ॐ मं परमात्मने नमः। ॐ ह्रीं ज्ञानात्मने नमः।

तत्रैव—ॐ मां मायातत्त्वाय नमः। ॐ कं कलातत्त्वाय नमः। ॐ विं विद्यातत्त्वाय नमः। ॐ पं परतत्त्वाय नमः।

तत्रैव—ॐ ब्रं ब्रह्मप्रेताय नमः। ॐ विं विष्णुप्रेताय नमः। ॐ रुं रुद्रप्रेताय नमः। ॐ ईं ईश्वरप्रेताय नमः। ॐ सं सदाशिवप्रेताय नमः।

तत्रैव—ॐ सुधार्णवासनाय नमः। ॐ प्रेताम्बुजासनाय नमः। ॐ दिव्यासनाय नमः। ॐ चक्रासनाय नमः। ॐ सर्वमन्त्रासनाय नमः। ॐ साध्यसिद्धासनाय नमः।

इसके बाद विधिवत चक्रराज का पूजन कर पूर्व आदि दिशाओं में तथा मध्य में निम्नलिखित मन्त्रों से इच्छा आदि ९ पीठ शक्तियों का पूजन करना चाहिए, यथा :

पूर्व आदि ८ दिशाओं में—ॐ इं इच्छायै नमः। ॐ ज्ञां ज्ञानायै नमः। ॐ क्रिं क्रियायै नमः। ॐ कां कामिन्यै नमः। ॐ कां कामदायिन्यै नमः। ॐ रं रत्यै नमः। ॐ रं रतिप्रियायै नमः। ॐ नं नन्दायै नमः।

मध्य में—ॐ मं मनोन्मन्यै नमः।

इस प्रकार पीठ शक्तियों का पूजन करने के बाद "ऐं परायै अपरायै परापरायै ह्सौः सदाशिवमहाप्रेत पद्मासनाय नमः"—मन्त्र से चक्रनायक का पूजन करना चाहिए।

एवं पीठं समभ्यर्च्य दद्यात्पुष्पाञ्जलिं ततः ९७ ॥
प्रकटान्तं गुप्तगुप्ततरान्ते सम्प्रदाय च।
कुलान्ते नेत्रयुङ्मेषोगर्भरेति ततःपठेत् ९८ ॥
ह्स्यान्तेति रहस्यार्णापराररहस्य च।
संज्ञकःश्रीचक्रगतोयोगिनीपादुकापदम् ॥ ९९ ॥
भ्योनमोंतोधराबाणवर्णोमायारमादिकः।
मन्त्रपुष्पाञ्जलेर्दाने सर्वसिद्धिप्रदायकः ॥ १०० ॥
मुद्रां त्रिखण्डांकृत्वाथ पुष्पाण्यादायचाञ्जलौ।
ध्यात्वा पूर्वोदितां देवीं मूलविद्यां समुच्चरेत् ॥ १०१ ॥
चैतन्यंहृत्कमलतोनासिकारंध्रनिर्गतम्।
ब्रह्मरंध्रस्य मार्गेण योजितं कुसुमाञ्जलौ ॥ १०२ ॥
महापद्मवनान्तस्थे कारणानन्दविग्रहे।
सर्वभूतहिते मातरेह्येहि परमेश्वरि ॥ १०३ ॥
महःपूजाभचैतन्यसंयुक्तकुसुमाञ्जलिम्।
श्रीचक्रराजे संयोज्य ततःश्लोकद्वयंपठेत् ॥ १०४ ॥
देवेशि भक्तिसुलभे सर्वावरणसंयुते।
यावत्त्वां पूजयिष्यामि तावत्त्वं सुस्थिराभव ॥ १०५ ॥

पुष्पाञ्जलिमन्त्रमाह। प्रकटेति। नेत्रयुङ्मेषनिः ॥९८-९९॥ मायारमादिकः ह्रींश्री-मादिकः। यथा ह्रींश्रींप्रकटगुप्तगुप्ततरसंप्रदायकुलनिगर्भरहस्यातिरहस्यपरापररहस्य-संज्ञकश्रीचक्रगतयोगिनीपादुकाभ्योनमइति धराबाणवर्णः एकपञ्चाशदक्षरः ॥ १०० ॥ त्रिखंडामुद्रोक्ता ॥ १०१ ॥ आवाहनमन्त्रमाह। चैतन्यमिति ॥ १०२-१०६ ॥

इदमावाहनं प्रोक्तं ततःस्थापनमाचरेत् ।
भैरवीमन्त्रमुच्चार्य श्रीमत्त्रिपुरसुन्दरि ॥ १०६ ॥
चक्रेस्मिन्कुरुसान्निध्यं न तितःस्थापने मनुः ।
दर्शयेत्स्थापनीं मुद्रां सन्निधिं सन्निरोधनम् ॥ १०७ ॥
सम्मुखीकरणं तत्तन्मुद्राभिर्मन्त्रविच्चरेत् ।
न्यसेत्षडंगं देव्यंगे सकलीकरणंत्विदम् १०८ ॥
अवगुण्ठामृतीकारपरमीकरणानि च ।
तत्तन्मुद्राभिराराध्य मूलेन त्रिःप्रपूजयेत् ॥ १०९ ॥
ततः पाद्यादिकान्सम्यगुपचारान्प्रकल्पयेत् ।
मूलमन्त्रेण पुष्पांतान्पुनः सन्तर्पयेत्त्रिधा ॥ ११० ॥
पुष्पाञ्जलिं विधायाथ ध्यात्वा देवीं यथाविधि ।
अनुज्ञां प्रार्थयेन्मन्त्री परिवारसमर्चने ॥ १११ ॥

श्रीविद्या का पूजन : इस प्रकार पीठपूजा करने के बाद फिर पुष्पाञ्जलि देनी चाहिए ।

'प्रकट गुप्ततर' के बाद क्रमशः 'सम्प्रदाय' 'कुल' नेत्रयुक् मेष (नि) एवं 'गर्भर' बोलना चाहिए । फिर 'हस्य' 'अतिरहस्य' 'परापर रहस्य' 'संज्ञकश्रीचक्रगतयोगिनी-पादुका' एवं 'भ्योनमः' बोलना चाहिए । तथा प्रारम्भ में माया एवं रमा बीज लगाने से यह ५१ अक्षर वाला सर्वसिद्धिदायक पुष्पाञ्जलि देने का मन्त्र बनता है ("ह्रीं श्रीं प्रकटगुप्तगुप्ततरसंप्रदायकुलनिगर्भरहस्यातिरहस्यपरापररहस्यसंज्ञक श्रीचक्रगतयोगिनी पादुकाभ्यो नमः")

इसके बाद त्रिखण्डा मुद्रा बनाकर और अंजलि में पुष्प लेकर श्लोक ५१ में वर्णित देवी के स्वरूप का ध्यान कर मूलमन्त्र बोलना चाहिए । फिर हृदयकमल से नासिका-रन्ध्र से निर्गत एवं ब्रह्मरन्ध्र मार्ग से योजित चैतन्य (तेज) को पुष्पाञ्जलि[१] में लेकर उस तेज को श्रीचक्रराज पर स्थापित कर निम्नलिखित दो श्लोकों का पाठ करना चाहिए :

महापद्मवनान्तस्थे कारणानन्दविग्रहे । सर्वभूतहिते मातरेह्येहि परमेश्वरि ॥
देवेशि भक्तिसुलभे सर्वावरणसंयुते । यावत्त्वां पूजयिष्यामि तावत्त्वं सुस्थिराभव ॥

---

[१] *आवाहनी मुद्रा* : सम्यक् संपूजितैः पुष्पैः कराभ्यां कल्पिताञ्जलिः ।
आवाहनी समाख्याता मुद्रा देशिकसत्तमैः ॥

स्थापन्याद्यासुद्रावच्यंते ॥ १०५–१११ ॥ इतिमंत्रमहोदधिव्याख्यायांनौकायामेकादश-स्तरंगः ।

यह आवहन कहा गया है। फिर स्थापन करना चाहिए। भैरवीमन्त्र (ह्स्त्रैं ह्स्क्लरीं ह्सौः) बोलकर फिर 'श्रीमत्त्रिपुर सुन्दरि चक्रेऽस्मिन् कुरु सान्निध्यं नमः' यह स्थापन का मन्त्र है। फिर स्थापनी मुद्रा[१] दिखानी चाहिए।

तत्पश्चात् सन्निधान, सन्निरोध एवं संमुखी मुद्राओं[२] से साधक सन्निधान, सन्निरोधन एवं संमुखीकरण करने के बाद देवी के अंगों में षडङ्गन्यास करे—यह सकलीकरण[३] कहलाता है।

फिर तत्तद्मुद्राओं[४] से अवगुण्ठन, अमृतीकरण एवं परमीकरण करने के बाद मूलमन्त्र से ३ बार देवी का पूजन करना चाहिए। तत्पश्चात् मूलमन्त्र से पाद्य आदि उपचारों से पुष्प चढाने तक विधिवत पूजन कर ३ बार तर्पण करना चाहिए।

फिर पुष्पाञ्जलि लेकर विधिवत देवी का ध्यान कर आवरण पूजा के लिए साधक देवी की आज्ञा माँगे।

टिप्पणी : *पूजापद्धति* : पीठपूजा करने के बाद—"ह्रीं श्रीं प्रकट गुप्तगुप्ततर सम्प्रदायकुलनिगर्भरहस्यातिरहस्यपराररहस्यसंज्ञकश्रीचक्रगतयोगिनीपादुकाभ्योनमः। मन्त्र से पुष्पाञ्जलि देकर त्रिखण्डा मुद्रा बाँधकर और फिर पुष्पाञ्जलि लेकर देवी को अपनी आत्मा से अभिन्न समझते हुए ध्यान करना चाहिए, यथा—

बालार्कमण्डलाभासां चतुर्बाहुं त्रिलोचनाम्। पाशांकुशशरांश्चापं धारयन्तीं शिवां भजे॥

---

[१] *स्थापनी मुद्रा* : "अधोमुखी कृता सैव स्थापनीति निगद्यते।"

[२] *सन्निधान, सन्निरोध एवं संमुखी मुद्राएं* :

आश्लिष्ट मुष्टि युगला प्रोन्नतांगुष्ठ युग्मका।
सन्निधाने समुद्दिष्टा मुद्रेयं तन्त्रवेदिभिः॥
अंगुष्ठगर्भिणी सैव सन्निरोधे समीरिता॥
हृदि बद्धाञ्जलि मुद्रा संमुखीकरणे मता॥

[३] *सकलीकरण* : देवाङ्गेषु षडङ्गानां न्यासः स्यात्सकलीकृतिः।

[४] *अवगुण्ठनमुद्रा* : सव्यहस्त कृतामुष्टिः दीर्घाधोमुखतर्जनी।
अवगुण्ठनमुद्रेयमभितो भ्रामिता भवेत्॥

अमृतीकरण मुद्रा : अन्योन्याभिमुखो श्लिष्टौ कनिष्ठानामिका पुनः।
तथा तु तर्जनीमध्या धेनुमुद्राप्रकीर्तिता॥
अमृतीकरणं कुर्यात्तया देशिक सत्तमः॥

परमीकरणमुद्रा : अन्योन्यग्रथितांगुष्ठौ प्रसारितकरांगुलिः।
महामुद्रेयमुदिता परमीकरणा बुधैः॥

आवाहन : इस प्रकार ध्यान कर दूर्वाक्षत रक्तचन्दन मिश्रित लोहितवर्ण हस्तस्थ पुष्पाञ्जलि में मातृकामन्त्र की भावना करनी चाहिए। फिर मूल मन्त्र से षट्चक्र भेद करते हुए चैतन्यमयी देवी को शिरस्थ: सहस्रदलकमल की कर्णिका के मध्य में विराजमान परमशिव से संयोजित कर सहस्रार स्थित सुधासागर में विश्राम करने के लिए स्थापित करना चाहिए। तदनन्तर अमृतलोलुपा चैतन्यमयी देवी को प्रवहणशील नासापुट द्वारा पूर्वकल्पित पुष्पाञ्जलि में अर्पित करते हुए इस मन्त्र से देवी का आवाहन करना चाहिए,

ॐचैतन्यं हृत्कमलतोनासिकारन्ध्र निर्गतम् । ब्रह्मरन्ध्रस्यमार्गेण योजितं कुसुमाञ्जलौ ॥
महापद्मवनान्तस्थे कारणानन्दविग्रहे । सर्वभूतहिते मातरेह्येहि परमेश्वरि ॥

इस प्रकार पुष्पाञ्जलि में देवी का आवाहन कर उन पुष्पों को श्रीयन्त्र पर चढ़ा कर यह प्रार्थना करनी चाहिए, यथा :

ॐदेवेशि भक्तिसुलभे सर्वावरणसंयुते । यावत्त्वां पूजयिष्यामि तावत्त्वं सुस्थिरा भव ॥

स्थापन : फिर ह्रूँ 'ह्रस्क्लरीं ह्रसौः श्रीमत्त्रिपुरसुन्दरि चक्रेऽस्मिन् कुरु सान्निध्यं नमः'—मन्त्र से स्थापनीमुद्रा द्वारा स्थापन करना चाहिए।

आसन : मूलमन्त्र बोलकर—"ॐ सर्वान्तर्यामिनि देवि सर्वबीजमयं शुभम् स्वात्मस्थाप्यपरं शुद्धमासनं कल्पयाम्यहम् आसनं गृहाण नमः"—मन्त्र से देवी को आसन देना चाहिए।

उपवेशन : मूलमन्त्र बोलकर "ॐ अस्मिन् वरासने देवि सुखासीनाऽक्षरात्मके। प्रतिष्ठिता भवेशि त्वं प्रसीदपरमेश्वरि ॥ उपविष्ठा भव नमः" मन्त्र से देवी को अपने समीप प्रदत्त दिव्य आसन पर बैठाना चाहिए।

सन्निधीकरण[1] : मूलमन्त्र बोलकर "ॐ अनन्यं तव देवेशि यन्त्रं शाक्तिरिदं वरे। सान्निध्यं कुरु तस्मिन्त्वं भक्तानुग्रहतत्परे ॥ भगवति त्रिपुर सुन्दरि इह सन्निधेहि" मन्त्र से पूर्वोक्त सन्निधान मुद्रा द्वारा सन्निधीकरण करना चाहिए।

सन्निरोधन : मूलमन्त्र बोलकर 'ॐ आज्ञया तव देवेशि कृपाम्भोधे गुणाम्बुधे आत्मानन्दैकतृप्तां त्वां निरुणध्मि पितर्गुरो श्रीमत्त्रिपुर सुन्दरि संविरुध्यस्व" मन्त्र से पूर्वोक्त संन्निरोध मुद्रा द्वारा सन्निरोधन करना चाहिए।

सम्मुखीकरण : मूलमन्त्र बोलकर 'ॐ अज्ञानाद् दुर्मनस्ताद्वा वैकल्पात्साधनस्य च यदा पूर्णं भवेत्कृत्यं तदप्यभिमुखी भव श्रीमत्त्रिपुरसुन्दरि इह संमुखी भव" मन्त्र से पूर्वोक्त संमुखीमुद्रा द्वारा सम्मुखीकरण करना चाहिए।

---

[1] कुछ आचार्यों का मत है कि सन्निधीकरण, सन्निरोधन एवं सम्मुखीकरण केवल तत्तद् मुद्राओं से कर लेना चाहिए।

सकलीकरण : फिर देवी के अंगों में षडङ्गन्यास करना चाहिए, यह सकलीकरण कहलाता है। न्यास के मन्त्र इस प्रकार हैं—

श्रीं ह्रीं क्लीं ऐं सौः हृदयाय नमः। ॐ ह्रीं श्रीं शिरसे स्वाहा। कएईल ह्रीं शिखायै वषट्। हसकहल ह्रीं कवचाय हुम्। सकल ह्रीं नेत्रत्रयाय वौषट्। सौः ऐं क्लीं ह्रीं श्रीं अस्त्राय फट्।

अवगुण्ठन[1] : मूलमन्त्र बोलकर 'ॐ अव्यक्त वाङ्मनश्चक्षुः श्रोत्रप्रज्वलितद्युते स्वतेज पुञ्जकेनाशु वेष्टिता भव सर्वतः श्रीमत्रिपुर सुन्दरि हुम्"—मन्त्र से पूर्वोक्त अवगुण्ठन मुद्रा द्वारा अवगुण्ठन करना चाहिए तथा छोटिका मुद्रा द्वारा दिग्बन्धन करना चाहिए।

इसके बाद धेनु मुद्रा से अमृतीकरण तथा महामुद्रा से परमीकरण करने के बाद मूलमन्त्र से ३ बार देवी का पूजन कर निम्न श्लोकों से स्वागत करना चाहिए, यथा :

यस्याः दर्शनमिच्छन्ति देवाः स्वाभीष्टसिद्धये।
तस्यै ते परमेशायै स्वागतं स्वागतं च ते॥
कृतार्थोनुग्रहीतोऽस्मि सकलं जीवितं मम।
आगता देवि देवेशि सुस्वागतमिदं पुनः॥

पाद्य : जल में श्यामाक, विष्णुक्रान्ता, कमल एवं दूर्वा डालकर 'मूलं एतत्पाद्यं श्रीमत्रिपुर सुन्दर्यै नमः'—मन्त्र से पाद्य देना चाहिए।

अर्घ्य : अर्घ्य पात्र में दूर्वा, तिल, दर्भाग्र, सरसों, जौ पुष्प, गन्ध एवं अक्षत लेकर 'मूलं इदमर्घ्यं श्रीमत्रिपुर सुन्दर्यै स्वाहा' मन्त्र से अर्घ्य देना चाहिए।

आचमन : आचमनीय जल में लौंग, जायफल एवं कंकोल डालकर 'मूलं इदमाचनीयं स्वधा' मन्त्र से आचमन करना चाहिए।

स्नान : स्नानीय जल में चन्दन, अगर एवं सुगन्धित द्रव्य डालकर 'मूलं स्नानीयं निवेदयामि' मन्त्र से स्नान करना चाहिए। फिर पञ्चामृत, शुद्धोदक एवं गन्धोदक से स्नान कराकर सर्वाङ्ग स्नान कराना चाहिए और इसके बाद अभिषेक करना चाहिए।

इसके बाद पुनः आचमन कराकर कर वस्त्र एवं उत्तरीय समर्पित करना चाहिए। फिर पुनः आचन कराके अलंकार एवं आभूषण समर्पित करने चाहिए।

---

[1] कुछ आचार्यों के अनुसार सकलीकरण के बाद प्राणप्रतिष्ठा करनी चाहिए और अवगुण्ठन मुद्रा से ही अवगुण्ठन कर लेना चाहिए।

गन्ध : 'मूलं एव गन्धो नमः' मन्त्र से गन्धमुद्रा (कनिष्ठांगुष्ठ योगेन गन्ध मुद्रां प्रदर्शयेत्) द्वारा गन्ध लगाना चाहिए। और इसके बाद नाना परिमल सौभाग्य द्रव्य अर्पित करने चाहिए। तथा अक्षत चढ़ाने चाहिए।

पुष्प : 'मूलं एतानि पुष्पाणि वौषट्' मन्त्र से पुष्पमुद्रा (अंगुष्ठानामिकाभ्यां तु पुष्पमुद्रा प्रकीर्तिता) द्वारा ऋतुकालोद्भव पुष्प चढ़ाने चाहिए।

इसके बाद ३ पुष्पाञ्जलियाँ समर्पित कर विधिवत देवी का ध्यान कर उनके परिवार के पूजनार्थ आज्ञा माँगनी चाहिए।

इति श्री शुकदेव चतुर्वेदि विरचितायां सटिप्पण्यां मन्त्रमहोदधेः
मोहिनो व्याख्यायामेकादशस्तरङ्गः।

द्वादश तरङ्गः

श्रीत्रिद्याया अथोवक्ष्ये परिवारप्रपूजनम् ।
कृतेन येन मन्त्रज्ञो लभते वांछिताधिकम् ॥ १ ॥

श्रीविद्या का पूजन : अब श्रीविद्या के परिवारपूजन की रीति बतलाता हूँ, जिसके करने से मान्त्रिक इच्छा से भी अधिक फल पाता है ।

शुक्लपक्षे यजेन्नित्याःकामेश्वर्य्यादिषोडश ।
कृष्णपक्षे विचित्राद्याःकामेश्वर्य्यवसानकाः ॥ २ ॥
षोडशीं च यजेन्मध्ये वक्ष्ये तद्यजनक्रमम् ।
एकैकं स्वरमुच्चार्य्यनित्यामन्त्रं समुच्चरेत् ॥ ३ ॥
कामेश्वर्य्यादिनामान्ते नित्याश्रीपादुकां पठेत् ।
पूजयामितर्पयामिहृदयं प्रोच्य पूजयेत् ॥ ४ ॥
बिन्दुं परित आकल्प्य त्रिकोणेबिन्दुतोतिमम् ।
दक्षहस्तेन पुष्पादिवामेनाम्भो विनिःक्षिपेत् ॥ ५ ॥
केचिदाहुरिहाचार्य्या आर्द्रकेण जलं क्षिपेत् ।
वामावर्तेन सम्पूज्याःकोणपार्श्वेषु पंचशः ॥ ६ ॥

शुक्लपक्ष में कामेश्वरी से विचित्रा पर्यन्त नित्याओं का तथा कृष्णपक्ष में विचित्रा से कामेश्वरी तक नित्याओं का (त्रिकोण की रेखाओं के पास ५-५ के क्रम से तथा वामावर्त क्रम से) पूजन करना चाहिए । मध्य (बिन्दु) में षोडशी का मूलमन्त्र से पूजन करना चाहिए ।

श्रीविद्यायाआवरणार्चनंवक्तुंप्रतिजानीते । श्रीविद्यायाइति । येनमनोरथाधिकमाप्नोति ॥१॥ शुक्लपक्षेकामेश्वर्यादिविचित्रान्तांबिन्दुंपरितःकल्पितेत्रिकोणेप्रतिपार्श्वंवामावर्तेनपञ्चपञ्च-सम्पूज्यबिन्दौ षोडशींमूलेनपूजयेत् कृष्णपक्षेतुविचित्राद्याःकामेश्वर्यन्ताः स्वस्वमन्त्रेणतथैव सम्पूज्यमध्येषोडशींयजेत् ॥ २ ॥ तत्रविधिमाह । एकैकमिति । एकैकंस्वरमुक्त्वाउच्य-माणमेकैकंनित्यामन्त्रंचप्रोच्यनित्यानामान्ते अमुकनित्याश्रीपादुकांपूजयामीतिदक्षहस्तेन पुष्पचन्दनाक्षतानितर्पयामीतिवामहस्तेनजलंचार्पयेत् ॥ ३-४ ॥ अम्भःजलंगोक्षीरंवा ॥ ५ ॥ जलेक्षीरेवाआर्द्रकंप्रास्यमितिकेचित् ॥ ६ ॥

अब उनकी पूजाविधि को बतलाता हूँ—एक-एक स्वर बोलकर (वक्ष्यमाण) नित्याओं का १-१ मन्त्र बोलना चाहिए और फिर कामेश्वरी आदि का नाम लेकर 'नित्या श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः' लगाकर पूजन करना चाहिए। बिन्दु ऊपर त्रिकोण में वामावर्त क्रम से इनकी कल्पना करनी चाहिए तथा बिन्दु को अन्तिम मानना चाहिए। दाहिने हाथ से (पूजयामि कहते समय) पुष्पादि एवं बाँये हाथ से (तर्पयामि कहते समय) जल या गाय का दूध चढ़ाना चाहिए। कुछ आचार्यों का कहना है कि अदरख के साथ जल चढ़ाना चाहिए। त्रिकोण (की रेखाओं) के पास ५-५ के क्रम से तथा वामावर्त क्रम से इनका पूजन करना चाहिए।

नित्यामन्त्राःप्रवक्ष्यंते स्मृताः सर्वेष्टसिद्धदाः।
बालातारोनमःकामेश्वरिहृदीर्घजादिमः ॥ ७ ॥
कामफलप्रदेसर्वसत्त्ववान्ते तु शंकरि।
सर्वान्ते तु जगद्वर्णात्क्षोभणान्ते करीति च ॥ ८ ॥
वर्मत्रयं पञ्चबाणाःप्रतिलोमाकुमारिका।
कामेश्वरीमनुःप्रोक्तः षट्चत्वारिंशदर्णवान् ॥ ९ ॥

नित्याओं के मन्त्र : कामेश्वरी मन्त्र का उद्धार : अब स्मरण करने मात्र से सब अभीष्टों के देने वाली नित्याओं के मन्त्रों को बतला हूँ—

बाला (ऐंक्लीं सौः) तार (ॐ) एवं 'नमः कामेश्वरि' फिर हृक् एवं दीर्घ जादि (इच्छा) फिर 'कामफलप्रदे सर्वसत्त्वव' 'शंकरिसर्व' 'जगत्' 'क्षोभण' एवं 'करि' फिर वर्मत्रय (हुं हं हुं) पंचबाण (द्रां द्रीं क्लीं ब्लूं सः) और अन्त में प्रतिलोमा बाला (सौः क्लीं ऐं) लगाने से ४६ अक्षर का कामेश्वरी का मन्त्र बनता है।

टिप्पणी : (i) *कामेश्वरी का मन्त्र :* ऐं क्लीं सौः ॐ नमः कामेश्वरि इच्छाकामप्रदे सर्वसत्त्ववशंकरि सर्वजगत्क्षोभणकरि हुं हुं हुं द्रां द्रीं क्लीं ब्लूं सः सौः क्लीं ऐं।

कामेश्वरी का पूजनमन्त्र : अं 'ऐं क्लीं सौः....०' कामेश्वरिनित्या श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः।

वाग्बीजं भगकर्णाढ्यानिद्रागेभगिनीति च।
भगोदरीतिवर्णान्ते भगमालेभगावहे ॥ १० ॥
भगगुह्येभगांतेस्याद्योनेभगनिपातिनि।
सर्वान्ते भगशब्दान्ते वशंकरिभगेति च ॥ ११ ॥

नित्यामन्त्रेबुकामेश्वरीमन्त्रमाह। बालेति। बालाऐंक्लींसौः। तारःप्रणवः। हृक्हृ। दीर्घश्चासौजादिमश्चछ ॥ ७-८ ॥ वमहुं ३। पञ्चबाणाः द्रांद्रींक्लींब्लूंसःइति। कुमारिकाबालाप्रतिलोमा। अंसौःक्लींऐंकामेश्वरीनित्याश्रीपादुकांपूजयामितर्पयामिनमइति ॥ ९ ॥ भगमालिनीमाह। वागिति। वाग्बीजंऐं। कर्णाढ्यानिद्राउपुतोभःभुः ॥ १०-११ ॥

रूपेनित्यपदंक्लिन्नेभगस्वाग्निः सदीपकः ।
पेसर्वभस्मृतिर्दीर्घानिमेह्यानयवाग्नयः ॥ १२ ॥
देरेतेसुसञ्झिटीशःपावकस्तेभगार्णकाः ।
क्लिन्नेक्लिन्नद्रदेक्लेदयद्रावयचकेशवः ॥ १३ ॥
मोघेभगान्ते विच्चेचक्षुभक्षोभयसर्वच ।
सत्त्वान्भगेश्वरिप्रान्तेवाग्व्लंजंव्लंचभेंपुनः ॥ १४ ॥
व्लूंमोंव्लूंहेंपुनर्व्लूंहींक्लिन्नेसर्वाणिभाक्षरम् ।
गानिमेवशमानान्तेमारुतःस्त्रीं हरेति च ॥ १५ ॥
व्लेंमायांगत्रिभूवर्णाप्रोदिताभगमालिनी ।

(ii) *भगमालिनी मन्त्र का उद्धार* : वाग् बीज (ऐं) फिर 'भग' एवं कर्णाख्यानिद्रा (भु) फिर 'गे भगिनि' 'भगोदरि' 'भगमाले भगावहे' 'भगगुह्ये भग' के बाद 'योनेभगनिपातिनि' सर्व' 'भग' 'वशंकरिभग' 'रूपेनित्य' 'क्लिन्ने भगस्व' तथा सदीपक अग्नि (रू) फिर 'पे सर्वभ' एवं दीर्घास्मृति (गा) फिर 'न मे ह्यानय व' एवं अग्नि (र) फिर 'देरेतेसु' एवं सञ्झिटीश पावक (रे) फिर 'ते भग' 'क्लिन्ने क्लिन्नद्रवे क्लेदय द्रावय' एवं केशव (अ) फिर 'मोघे भग' 'विच्चे' 'क्षुभक्षोभय सर्व' 'सत्त्वान् भगेश्वरि' फिर वाक् (ऐं) 'व्लूं जं व्लूं' 'भें' 'व्लूं मों व्लूं हें' फिर 'व्लूं हें' 'सर्वाणिभ' 'गानिमेवशमान' एवं मारुत (य) फिर 'स्त्रीं हर' 'व्लें और अन्त में माया (ह्रीं) लगाने से १३६ अक्षर का भगमालिनी का मन्त्र बतलाया गया है ।

टिप्पणी : भगमालिनी का मन्त्र : ऐं भगभुगे भगिनि भगोदरि भगमाले भगावहे भगगुह्ये-भगयोनि भगनिपातिनि सर्वभगवशंकरि भगरूपे नित्यक्लिन्ने-भगस्वरूपे सर्व-भगानि मे ह्यानय वरदे रेते सुरेते भगक्लिन्न-क्लिन्नद्रवे क्लेदय द्रावय अमोघे भगविच्चे क्षुभक्षोभय सर्वसत्त्वान् भगेश्वरि ऐं व्लूं जं व्लूं भें व्लूं मों व्लूं हें व्लूं हें क्लिन्ने सर्वाणि भगानि मे वशमानय स्त्रीं हर व्लें ह्रीं ।

पूजा मन्त्र : आं 'ऐं भगभुगे''''०' भगमालिनी नित्या श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः

सदीपकःअग्निः ऊयुतोरःरूः । दीर्घास्मृतिःगा । अग्नीरेफः ॥ १२ ॥ सञ्झिटीशःपावकः एयुतोरःरे । केशवःअः ॥ १३ ॥ वाक्ऐं ॥ १४ ॥ मारुतोयः ॥ १५ ॥

मायाह्रीं । स्वरूपमन्यत् । ' अङ्गत्रिभूवर्णाषट्त्रिंशदुत्तरशतार्णाभगमालिनी । यथा-आंऐं भगभुगेभगिनिभगोदरिभगमालेभगावहेभगगुह्येभगयोनेभगनिपातिनिसर्वभगवशं-करिभगरूपेनित्यक्लिन्नेभगस्वरूपेसर्वभगानिमेह्यानयवरदेरेतेसुरेतेभगक्लिन्नेक्लिन्नद्रवेक्ले-

नित्यक्लिन्नेमदद्रान्तेपद्मनाभयुतंजलम् ॥ १६ ॥
मायाद्यग्निप्रियान्तेयंनित्यक्लिन्नाशिवाक्षरः ।

(iii) *नित्यक्लिन्ना के मन्त्र का उद्धार* : 'नित्यक्लिन्ने मदद्र' के बाद पद्मनाभ सहित जल (वे) तथा प्रारम्भ में माया (ह्रीं) और अन्त में अग्निप्रिया (स्वाहा) लगाने से ११ अक्षर का नित्यक्लिन्ना का मन्त्र बनता है ।

टिप्पणी : नित्यक्लिन्ना का मन्त्र : ह्रीं नित्यक्लिन्ने मदद्रवे स्वाहा ।

इनका पूजन मन्त्र : ईं 'ह्रीं नित्यक्लिन्ने····०' नित्यक्लिन्नानित्या श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः

बान्तोरेफासनस्तारसंयुतोंकुशसम्पुटः ॥ १७ ॥
चवर्ग वर्णाश्चत्वारोवह्निमन्बिन्दुसंयुताः ।
वह्निप्रियान्तस्तारादयोभेरुण्डायादशाक्षरः ॥ १८ ॥

(iv) *भेरुण्डा मन्त्र का उद्धार* : तार संयुत रेफासन बान्त (भ्रों)—यह अंकुश (क्रों) से संपुटित (क्रों भ्रों क्रों) फिर वह्नि, मनु एवं बिन्दु संयुक्त चवर्ग के ४ वर्ण (च्रीं छ्रीं ज्रीं झ्रीं) और अन्त में अग्निप्रिया (स्वाहा) तथा प्रारम्भ में तार (ॐ) लगाने से १० अक्षर का भेरुण्डा का मन्त्र बनता है ।

टिप्पणी : भेरुण्डा का मन्त्र : ॐ क्रों भ्रों क्रों च्रीं छ्रीं ज्रीं झ्रीं स्वाहा ।

इनका पूजन मन्त्र : ईं 'ॐ क्रों भ्रों····०' भेरुंडा नित्या श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः ।

मायान्ते वह्निवासिन्यैप्रणवाद्योनमोंतिकः ।
मन्त्रोयं वह्निवासिन्यानववर्णःसमीरितः ॥ १९ ॥

(v) *वह्नि वासिनी के मन्त्र का उद्धार* : माया (ह्रीं) के बाद 'वह्निवासिन्यै'

दयद्रावयअमोघेभगविच्चेक्षुभक्षोभयसर्वसत्त्वान्भगेश्वरिऐं ब्लूंक्लेंब्लूं भेंब्लूं हें ब्लूंमों ब्लूं हें-क्लिन्ने सर्वाणि भगानिमेवशमानयस्त्रींहरब्लेंह्रीं (१३६) भगमालिनीनित्याश्रीपादुकां-पूजयामिनमः । नित्यक्लीन्नामन्त्रमाह । नित्येति । पद्मनाभयुतंजलम् एयुतोवः वे ॥ १६ ॥

मायाह्रीं तदाद्या । अग्निप्रियास्वाहान्तदन्ता । शिवाक्षरएकादशार्णः । यथा–ईंह्रीं-नित्यक्लिन्नेमदद्रवेस्वाहा (११) नित्यक्लिन्नानित्याश्रीपादुकांपूजयामि । भेरुंडामंत्रमाह । बांतइति । बांतोभः रेफयुतः तारसंयुतःओंकारसंयुतः भ्रों । स कीदृशः । अंकुशसंपुटः क्रोंमितिबीजेनादावंतेयुतः ॥ १७ ॥ चवर्गस्यचत्वारोवर्णाःवह्निमन्बिंदुसंयुतारऔबिन्दु-युताः च्रींछ्रींज्रींझ्रीं । स्वाहान्तःप्रणवाद्योदशवर्णः । यथा–ईंॐक्रोंभ्रोंक्रोंच्रींछ्रींज्रींझ्रींस्वाहा (१०) भेंरुडानित्याश्रीपादुकांपूजयामि ॥ १८ ॥

वह्निवासिनीमन्त्रमाह । मायेति । स्पष्टं । यथा–उंॐह्रींवह्निवासिन्यैनमः (९) वह्नि-वासिनीनित्याश्रीपादुकांपू० ॥ १९ ॥

और अन्त में 'नमः' तथा प्रारम्भ में प्रणव लगाने से वह्निवासिनी का ९ अक्षर का मन्त्र बतलाया गया है ।

टिप्पणी : वह्निवासिनी का मन्त्र : ॐ ह्रीं वह्निवासिन्यै नमः ।

इनका पूजन मन्त्र : ॐ 'ॐ ह्रीं वाह्निवासिन्यै नमः' वह्निवासिनीनित्या श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः ।

तारोमायाशिखीवह्नि पद्मनाभेन्दुसंयुतः ।
सविसर्गोभृगुर्नित्यक्लिन्नेपश्चान्मदद्रवे ॥ २० ॥
स्वाहान्तो मनुवर्णोयं महाविद्येश्वरीमनुः ।

(vi) *महाविद्येश्वरी के मन्त्र का उद्धार :* तार (ॐ) माया (ह्रीं) वह्नि पद्मनाभ एवं इन्दु सहित शिखी (फ्रें) फिर विसर्ग सहित भृगु (सः) फिर 'नित्यक्लिन्ने' 'मदद्रवे' और अन्त में 'स्वाहा' लगाने से महाविद्येश्वरी का १४ अक्षर का मन्त्र बनता है ।

टिप्पणी : महाविद्येश्वरी का मन्त्र : ॐ ह्रीं फ्रें सः नित्यक्लिन्ने मदद्रवे स्वाहा ।

इनका पूजनमन्त्र : ॐ 'ॐ ह्रीं फ्रें सः....०' महाविद्येश्वरी नित्या श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः ।

शिवदूतीचतुर्थ्यन्ता मायाद्याहृदयांतिका ॥ २१ ॥
शिवदूती मनुःप्रोक्तःसप्तवर्णोखिलेष्टदः ।

(vii) *शिवदूती के मन्त्र का उद्धार :* चतुर्थ्यन्त शिवदूती (शिवदूत्यै) के प्रारम्भ में माया (ह्रीं) तथा अन्त में हृदय (नमः) लगाने से सर्वाभीष्टप्रद शिवदूती का ७ अक्षर का मन्त्र कहा गया है ।

टिप्पणी : शिवदूती का मन्त्र : ह्रीं शिवदूत्यै नमः ।

पूजन मन्त्र : ॐ 'ह्रीं शिवदूत्यै नमः' शिवदूती नित्या श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः ।

तारःपरावर्मखेचछेक्षःस्त्रीवामकर्णयुक् ॥ २२ ॥
गगनंशशिसंयुक्तंमेरुर्भगयुतोद्रिजा ।
फडन्तो द्वादशार्णोयं त्वरिताया मनुर्मतः ॥ २३ ॥

महाविद्येश्वरीमन्त्रमाह । तारइति । तारॐ । मायाह्रीं । शिखीफः वह्निपद्मनाभेंदुसंयुतः रएविन्दुयुतःफ्रें । सविसर्गोभृगुःसः ॥ २० ॥

मनुवर्णश्चतुर्दशार्णः । यथा-ऊं ॐह्रींफ्रेंसःनित्यक्लिन्नेमदद्रवेस्वाहा (१४) महाविद्येश्वरीनित्याश्रीपादुकांपू० ॥ २१ ॥ शिवदूतीमन्त्रमाह । शिवेति । यथा-ॐह्रींशिवदूत्यै नमः (७) शिवदूतीनित्याश्रीपादुकांपू० । त्वरितामन्त्रमाह । तारइति । तारॐ । पराह्रीं । वर्महुं । खेचछेक्षःखीस्वरूपम् । वामकर्णयुक् ॥ २२ ॥ शशियुतंचगगनं (१२)

(viii) *त्वरिता के मन्त्र का उद्धार* : तार (ॐ) परा (ह्रीं) वर्म (हुं) फिर 'खेचछेक्षः स्त्रीं' वामकर्ण एवं शशी सहित गगन (हं) भगयुत मेरू (क्षे) अद्रिजा (ह्रीं) तथा अन्त में 'फट्' लगाने से त्वरिता का १२ अक्षर का मन्त्र बतलाया गया है ।

टिप्पणी : त्वरिता का मन्त्र : ॐ ह्रीं हुं खेचछे क्षः स्त्रीं हूं क्षे ह्रीं फट् ।

पूजन मन्त्र :ॐ 'ॐ ह्रीं हुं....०' त्वरिता नित्या श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः ।

दामोदरोबिन्दुयुतःकलौशान्तीन्दुसंयुतौ ।
भृगुर्मनुर्विसर्गाढ्यस्त्र्यक्षराकुलसुन्दरी ॥ २४ ॥

(ix) *कुल सुन्दरी के मन्त्र का उद्धार* : बिन्दुयुत दामोदर (ऐं), शान्ति एवं इन्दुसहित क, ल (क्लीं) मनु एवं विसर्ग सहित भृगु (सौः) यह ३ अक्षर का कुलसुन्दरी का मन्त्र है ।

टिप्पणी : कुलसुन्दरी का मन्त्र : ऐं क्लीं सौः ।

पूजन मन्त्र : लृं ऐं क्लीं सौः कुलसुन्दरीनित्या श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः ।

भैरवीबालयायुक्ताप्राक्पश्चाच्चक्रमोत्क्रमात् ।
तदन्ते पञ्चबाणाःस्युर्नित्यामन्त्राक्षरेरिता ॥ २५ ॥

(x) *नित्या के मन्त्र का उद्धार* : आगे एवं पीछे क्रम एवं उत्क्रम से बालामन्त्र (ऐं क्लीं सौः) से संपुटित त्रिपुरभैरवी (ह्स्रौं ह्स्वल्रीं ह्स्रौः) और इसके बाद पंचबाण बीज (द्रां द्रीं क्लीं ब्लूँ सः) लगाने से नित्या का १४ अक्षर का मन्त्र बनता है ।

टिप्पणी : नित्या का मन्त्र : ऐं क्लीं सौः ह्स्रौं ह्स्कल्रीं ह्स्रौः सौः क्लीं ऐं द्रां द्रीं क्लीं ब्लूँ सः ।

पूजन मन्त्र : लृं 'ऐं क्लीं सौः....०' नित्या श्रीपादुकां पूजयामि नमः ।

ऊबिन्दुयुतोहः हूं । मेरुरुक्षः भगंए तद्युतः क्षे । अद्रिजाह्रीं । यथा-ॐ ह्रीं हुं खेचछेक्षः स्त्रीं-हूंक्षेह्रींफट् (१२) त्वरितानित्याश्रीपादुकांपू० ॥ २३ ॥

कुलसुन्दरीमन्त्रमाह । दामोदेरइति । दामोदरः ऐं बिन्दुयुतः ऐं । कलौशान्तींदु-संयुतौ ईबिन्दुसंयुतौ क्लीं । मनुर्विसर्गाढ्योभृगुःसः सौं स्वर्गयुतःसौः । यथा-लृऐंक्लींसौः (३) कुलसुन्दरीनित्याश्रीपादुकांपू० ॥ २४ ॥

नित्यामन्त्रमाह । भैरवीति । प्राक्क्रमात्पश्चिमादुक्क्रमाद्बालयायुताम्त्रिपुरभैरवी । ततः-पञ्चबाणबीजानि । एषामन्वक्षराचतुर्दशार्णानित्येरिता । यथा-लृऐंक्लींसौःह्स्रौंस्वल्रींह्स्रौं-सौंःक्लींऐंद्रांद्रींक्लींब्लूंसः (१४) नित्याश्रीपादुकांपू० ॥ २५ ॥

तारोमायाफान्तरेफौ झिटीशशशिसंयुतौ ।
हंसोग्न्यर्धीशबिन्द्वाढ्योहृल्लेखांकुशनित्यम ॥ २६ ॥
दद्रवेवर्म सृण्यंताप्रोक्तानीलपताकिनी ।
चतुर्दशाक्षरा सर्वत्रैलोक्याकर्षणक्षमा ॥ २७ ॥

(xi) *नीलपताकिनी के मन्त्र का उद्धार* : तार (ॐ) माया (ह्रीं) झिटीश एवं शशी सहित फ एवं रेफ (फ्रें), अग्नि, अर्धीश एवं बिन्दु सहित हंस (स्रं) फिर हृल्लेखा (ह्रीं) अंकुश (क्रों) तथा 'नित्यमदद्रवे' फिर वर्म (हुं) तथा अन्त में असृणि (क्रों) लगाने से समस्त त्रिलोकी को आकर्षित करने योग्य नीलपताकिनी का १४ अक्षर का मन्त्र कहा गया है ।

टिप्पणी : नीलपताकिनी का मन्त्र : ॐ ह्रीं फ्रें स्रं ह्रीं क्रों नित्यमदद्रवे हुं क्रों ।

जन मन्त्र : ऐं 'ॐ ह्रीं फ्रें....०' नीलपताकिनीनित्या श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः: ।

वराहहंसचण्डीशजनार्दनकृशानवः ।
पद्मनाभेन्दुसंयुक्ताविजयायै नमोंतिकः ॥ २८ ॥
विजयायामनुःप्रोक्तःसप्तवर्णोखिलार्थदः ।

(xii) *विजया के मन्त्र का उद्धार* : पद्मनाभ एवं इन्दु सहित वराह, हंस, चण्डीश, जनार्दन एवं कृशानु (ह्स्रफ्रें) और फिर 'विजयायै नमः' लगाने से सर्वार्थ-दायक विजया का ७ अक्षर वाला मन्त्र बतलाया गया है ।

टिप्पणी : विजया का मन्त्र : ह्स्रफ्रें विजयायै नमः ।

जन मन्त्र : ऐं 'ह्स्रफ्रें विजयायै नमः' विजयानित्या श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः ।

ताराढ्यौ भृगुखङ्गीशौ ङेन्तास्यात्सर्वमंगला ॥ २९ ॥
नमोंतो मनुराख्यातो नवार्णःसर्वमंगलः ।

नीलपताकिनीमन्त्रमाह । तारइति । तारॐ । मायाह्रीं । फांतरेफौफरौतौझिटीशश-शिसंयतौ एविदुयतौ फ्रें । हंसःसखः यर्धीशविन्द्वाढ्यःरविदुयुतःस्रं । हृल्लेखाह्रीं । अंकुशःक्रों । नित्यमदद्रवेस्वरूपम् । वर्महुं । सृणिःक्रों । यथा–ॐ ह्रीं फ्रें स्रं ह्रीं क्रों नित्य-मदद्रवे हुं क्रों (१४) नीलपताकिनीनित्याश्रीपादुकांपू० ॥ २६-२७ ॥

विजयामंत्रमाह । वराहेति । वराहोहः । हंसःसः । चंडीशःसः । जनार्दनःफः । कृशा-नूरः । एते पद्मनाभेंदुसंयुक्ताः एविदुनायुताः । एतत्कूटंह्स्रफ्रें । स्वरूपमन्यत् । यथा–ऐं ह्स्रफ्रेंविजयायैनमः (७) विजयानित्याश्रीपादु० ॥ २८ ॥ सर्वमंगलामंत्रमाह । ताराढ्याविति । भृगुखङ्गीशौस्यौ ताराढ्यौ ओं युतौस्यौं । ङेंताचतुर्थ्येकवचनांता ॥२९॥

(xiii) *सर्वमंगला के मन्त्र का उद्धार* : तार सहित भृगु एवं खड्गीश (स्वों) फिर चतुर्थ्यन्त सर्वमङ्गला (सर्वमङ्गलायै) और अन्त में 'नमः' लगाने से सर्वमङ्गलकारक यह ९ अक्षर का मन्त्र बतलाया गया है ।

टिप्पणी : सर्वमङ्गला का मन्त्र : स्वों सर्वमङ्गलायै नमः ।

पूजन मन्त्र : ओं 'स्वों सर्वमङ्गलायै नमः' सर्वमङ्गलानित्या श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः ।

तारो नमोभगवतिज्वालामालिनितत्परम् ॥ ३० ॥
देव्यं ते सर्वभूतान्ते संहारान्ते तु कारिके ।
जातवेदसिवर्णान्ते ज्वलन्तिप्रज्वलन्ति च ॥ ३१ ॥
ज्वलद्वयंप्रज्वलान्ते कवचंपावकद्वयम् ।
वर्मास्त्रान्तोदिताज्वालामालिन्यष्टयुगाक्षरा ॥ ३२ ॥

(xiv) *ज्वालामालिनी के मन्त्र का उद्धार* : तार (ॐ) 'नमो भगवति ज्वालामालिनि' के बाद 'देवि' 'सर्वभूत' 'संहार' 'कारिके' एवं 'जातवेदसि' 'ज्वलंति प्रज्वलंति' फिर दो बार ज्वल (ज्वल ज्वल) 'प्रज्वल' एवं कवच (हुं) के बाद दो बार पावक (रं रं) वर्म (हुं) तथा अन्त में अस्त्र (फट्) लगाने से ज्वालामालिनी का ४८ अक्षर का मन्त्र बनता है ।

टिप्पणी : ज्वालामालिनी का मन्त्र : ॐ नमो भगवति ज्वालामालिनि देवि सर्वभूतसंहारकारिकेजातवेदसि ज्वलंति प्रज्वलंति ज्वल ज्वल प्रज्वल हुं रं रं हुं फट् ।

पूजन मन्त्र : ओं 'ॐ नमो भगवति ०' ज्वालामालिनी नित्या श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः ।

कूर्मःक्रोधीशमन्विन्दुसंयुतो ह्येकवर्णकः ।
विचित्रायामनुश्चैता नित्याःपञ्चदशोदिताः ॥ ३३ ॥

(xv) *विचित्रा के मन्त्र का उद्धार* : मनु एवं बिन्दु सहित कूर्म एवं क्रोधीश (च्कौं) यह विचित्रा का एकाक्षर मन्त्र है । इस प्रकार ये १५ नित्या बतलायी गयीं ।

यथा—ओंॐस्वोंसर्वमंगलायनमः (९) सर्वमंगलानित्याश्रीपा० । ज्वालामालिनीमंत्रमाह । तारइति । तारॐ । स्वरूपमग्रे । कवचंहुं । पावकद्वयंरंर । वर्मास्त्रांतोहुंफडंता । अष्टयुगाक्षराअष्टचत्वारिंशदर्णा–ज्वालामालिनीउदिता । यथा–ओंॐनमोभगवतिज्वालामालिनिदेविसर्वभूतसंहारकारिकेजातवेदसिज्वलंतिप्रज्वलंतिज्वलज्वलप्रज्वलहुंरंरंहुंफट् (४८) ज्वालामालिनीनित्याश्रीपा० ॥ ३०-३२ ॥

विचित्रामंत्रमाह । कूर्मेति । कूर्मश्चकारः क्रोधीशमन्विंदुयुतः कऔंबिन्दुयुतः च्कौं । अत्रप्रथमश्चकारः । यथा–अंच्कौं (१) विचित्रानित्याश्रीपा० । एतापञ्चदशनित्याः ॥ ३३ ॥

टिप्पणी : विचित्रा का मन्त्र : क्लीं ।

पूजन मन्त्र : अं क्लीं विचित्रा नित्या श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः ।

मूलेन षोडशीं मध्ये यजेत्त्रिपुरसुन्दरीम् ।
बिन्दुत्रिकोणयोर्मध्ये त्रिभंगीभिर्गुरून्यजेत् ॥ ३४ ॥

(त्रिकोण में इन १५ नित्याओं का पूजन कर) मध्य बिन्दु में मूल मन्त्र से १६वीं महात्रिपुर सुन्दरी का पूजन करना चाहिए ।

बिन्दु एवं त्रिकोण के बीच की ३ पंक्तियों में गुरुओं का पूजन करना चाहिए ।

टिप्पणी : षोडशी पूजन मन्त्र : अः (अं) मूलं महात्रिपुरसुन्दरीनित्या श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः ।

दिव्यौघाश्चापिसिद्धौघा मानवौघास्त्रिधाहिते ।
परप्रकाशःप्रथमस्ततःपरशिवाभिधः ॥ ३५ ॥
परशक्तिश्चकौलेशःशुक्लादेवी कुलेश्वरः ।
कामेश्वरीतिसप्तैव दिव्यौघा गुरवःपराः ॥ ३६ ॥
भोगःक्रीडश्चसमयःसहजश्चपरावरः ।
सिद्धौघगुरवश्चैते चत्वारःपरिकीर्तिताः ॥ ३७ ॥
गगनोविश्वविमलो मदनो भुवनस्तथा ।
लीलास्वात्माप्रियेत्यष्टौमानवाअपरामताः ॥ ३८ ॥

त्रिविध गुरु : दिव्यौघ, सिद्धौघ एवं मानवौघ के भेद से गुरु तीन प्रकार के होते हैं । परप्रकाश, परशिव, परशक्ति, कौलेश शुक्लादेवी, कुलेश्वर एवं कामेश्वरी–ये ७ परम दिव्यौघ गुरु हैं । भोग, क्रीड, समय, सहज–ये ४ परावर सिद्धौघ गुरु बतलाये गये हैं । गगन, विश्व, विमल, मदन भुवन, लीला, स्वात्मा एवं प्रिया—ये ८ अपर मानवौघ गुरु कहे गये हैं ।

आनन्दनाथशब्दान्ताःपुरुषागुरवःस्मृताः ।
अम्बान्तास्तुस्त्रियःकार्य्याःसर्वसिद्धिप्रदायिकाः ॥ ३९ ॥
परशक्तिस्तथाशुक्लादेवीकामेश्वरीति च ।

एतास्त्रिकोणेपञ्चदशसंपूज्य बिन्दौमूलेनषोडशींयजेत् । यथा–अंमूलंमहात्रिपुरसुन्दरीनित्याश्रीपादुकांपूजयामितर्पयामिनमः । बिन्दुत्रिकोणयोर्मध्येत्रिभंगीभिःपंक्तित्रयेणगुरून्यजेत् ॥ ३४ ॥तेत्रिविधाइत्याह । दिव्यौघाइति । दिव्यौघानाह । परप्रकाशइति ॥ ३५-३६ ॥ सिद्धौघानाह । भोगइति ॥ ३७ ॥ मानवौघानाह । गगनइति ॥ ३८ ॥

पुमांसोगुरवःआनन्दनाथशब्दांताःकार्याः । स्त्रियोगुरवस्तुअंबाशब्दांताः ॥ ३९ ॥ कतिस्त्रियःकतिनराइत्यत्राह । परशक्तिरिति । दिव्यगुरुःपरशक्तिशुक्लादेवीकामेश्वर्यस्तिस्त्रः

तिस्रःस्त्रियस्तुदिव्येषु प्रियालीलेतिमानवे ॥ ४० ॥
श्रीपादुकां पूजयामीत्यंते सर्वत्र योजयेत् ।

गुरु जन के मन्त्र : पुरुष गुरुओं के नाम के बाद 'आनन्द नाथ' तथा स्त्री गुरुओं के नाम के बाद 'अम्बा' शब्द लगना चाहिए । ये सब प्रकार की सिद्धि देने वाले हैं ।

दिव्यौघ गुरुओं में परशक्ति, शुक्ला देवी एवं कामेश्वरी ये तीन स्त्रियाँ हैं । तथा मानवौघ गुरुओं में लीला एवं प्रिया ये २ स्त्रियाँ हैं ।

(इस प्रकार इनके नामों के बाद) 'श्रीपादुकां पूजयामि नमः' यह पद सर्वत्र लगाना चाहिए ।

टिप्पणी : जन मन्त्र : परप्रकाशानन्दनाथ श्रीपादुकां पूजयामि नमः । परशिवानन्दनाथ श्रीपादुकां पूजयामि नमः । परशक्त्यम्बा श्रीपादुकां पूजयामि नमः ; इत्यादि ।

ततो बिन्दोश्चतुर्दिक्षु यजेदाम्नायदेवताः ॥ ४१ ॥
पूर्वदक्षिणमाम्नायं पश्चिमं चोत्तरं तथा ।

आम्नाय देवताओं का पूजन : फिर बिन्दु के चारों ओर क्रमशः पूर्व, दक्षिण पश्चिम एवं उत्तर आम्नाय के देवताओं का पूजन करना चाहिए ।

टिप्पणी : पूजन मन्त्र : ह्रीं श्रीं पूर्वाम्नायदेवता श्रीपादुकां पूजयामि नमः । ह्रीं श्रीं दक्षिणाम्नाय देवता श्रीपादुकां पूधयामि नमः । ह्रीं श्रीं पश्चिमाम्नायदेवता श्रीपादुकां पूजयामि नमः । ह्रीं श्रीं उत्तराम्नाय देवता श्रीपादुकां पूजयामि नमः ।

ततःप्रपूजयेद्दिक्षु मध्येतःपञ्चपञ्चिकाः ॥ ४२ ॥
आद्यां मध्ये चतस्रोन्याःपूर्वाद्याशासु पूजयेत् ।
पञ्चस्वपिगणेष्वत्रश्रीविद्याद्याप्रकीर्तिता ॥ ४३ ॥
श्रीविद्याचतथालक्ष्मीर्महालक्ष्मीस्तृतीयका ।
त्रिशक्तिःसर्वसाम्राज्यपञ्चलक्ष्म्यःप्रकीर्तिताः ॥ ४४ ॥

स्त्रियश्चत्वारोन्येपुमांसः । मानवगुरुषुप्रियालीलेद्वेस्त्रियौ, षडन्येनराः । सिद्धगुरुषुचत्वारोपिपुमांसएव । तथाचप्रयोगः–परप्रकाशानंदनाथश्रीपादुकांपूजयामिनमः । परशक्त्यंबाश्रीपादुकांपूजयामीत्यादि० ॥ ४० ॥

बिंदोःप्रागादिदिक्षुपूर्वाम्नायदेवताश्रीपादुकांपू० । दक्षिणाम्नायदेवतेत्यादिचतस्रःआम्नायदेवताःपूजयेत् । ततःपञ्चपञ्चिकाःपूजयेत् ॥ ४१-४२ ॥आद्यांमूलेन, मध्येद्वितीयाद्यास्वस्वदिक्षुस्वस्वमंत्रैरितिविवक्षते । एवमन्याःपञ्चिकाः ॥ ४३ ॥ तासुप्रथमपञ्चिकामाह । श्रीविद्येति । आद्यपञ्चकंलक्ष्मीसंज्ञम् ॥ ४४ ॥

श्रीविद्याचपरंज्योतिःपरनिष्कलशांभवी ।
अजपामातृकाचेतिपञ्चकोशा इमे स्मृताः ॥ ४५ ॥
श्रीविद्यात्वरिता चैव पारिजातेश्वरीपुनः ।
त्रिपुटापञ्चबाणेशीपञ्चकल्पलता इमाः ॥ ४६ ॥
श्रीविद्यामृत पीठेशीसुधाश्रीरमृतेश्वरी ।
अन्नपूर्णेतिविख्याताःपंचैताःकामधेनवः ॥ ४७ ॥
श्रीविद्यासिद्धलक्ष्मीश्चमातङ्गीभुवनेश्वरी ।
वाराही च स्मृतंचैतन्मुनिभिरत्नपञ्चकम् ॥ ४८ ॥
श्रीविद्यांमूलमन्त्रेण मध्ये संयोज्य पूजयेत् ।
क्रमतोन्याश्चतुर्दिक्षु तासां मन्त्रान्क्रमाद्ब्रुवे ॥ ४९ ॥

पंचपंचिकाएं : इसके बाद मध्य में तथा पूर्व आदि दिशाओं पंचपंचिकाओं का पूजन करना चाहिए। मध्य में आद्या का तथा पूर्व आदि दिशाओं में अन्य चारों का पूजन करना चाहिए।

पंचिकाओं के पाँचों वर्गों में आद्या श्रीविद्या ही बतलायी गयी हैं श्रीविद्या, लक्ष्मी, महालक्ष्मी, त्रिशक्ति एवं सर्वसाम्राज्या—ये ५ लक्ष्मी कही गयी है। (यह आद्य पंचक लक्ष्मी संज्ञक हैं)। श्रीविद्या, परं ज्योति, परनिस्कलशांभवी, अजपा एवं मातृका इन पाँचों का यह पंचक कोश संज्ञक है। श्रीविद्या, त्वरिता, पारिजातेश्वरी, त्रिपुटा एवं पंचबाणेशी इनका यह पंचक कल्पलता संज्ञक है। श्रीविद्या अमृतपाठेशी, सुधाश्री, अमृतेश्वरी एवं अन्नपूर्णा—इनका यह पंचक कामधेनु संज्ञक है।

श्रीविद्या, सिद्धलक्ष्मी, मातंगी, भुवनेशी एवं वाराही इन पाँचों का यह पंचक मुनियों ने रत्न संज्ञक कहा है।

श्रीविद्या का मध्य में मूलमन्त्र से पूजन करना चाहिए। और अन्यों का क्रमशः पूर्व आदि चारों दिशाओं में पूजन करना चाहिए। अब उनके मन्त्रों को क्रमशः बतलाता हूँ।

बकेशो वह्निमारूढो वामनेत्रेन्दुसंयुतः ।
लक्ष्मीमन्त्रोयमेकार्णस्तेन लक्ष्मीं प्रपूजयेत् ॥ ५० ॥

द्वितीयंपञ्चकंकोशसंज्ञम् ॥ ४५ ॥ तृतीयंपञ्चकंकल्पलतासंज्ञम् ॥ ४६ ॥ चतुर्थं-पञ्चकंकामधेनुसंज्ञम् ॥ ४७ ॥ पञ्चमंपञ्चकंरत्नसंज्ञकम् ॥ ४८ ॥ तासांक्रमान्मन्त्रान्वदति। श्रीविद्यामिति । तत्राद्यपञ्चके मूलेनश्रीविद्यामध्येपूज्या दिक्षुलक्ष्म्याद्याः ॥ ४९ ॥ तत्रलक्ष्मीमन्त्रमाह। बकेशइति। बकेशःशः। वह्नीरेफस्तथुतंवामनेत्रमीदिन्दुर्बिंदुस्तथु-तश्चश्रीं। तेन-श्रीं (१) लक्ष्मीश्रीपादुकांपू० इतिपूर्वं ॥ ५० ॥

तारपद्माशक्तिपद्माकमलेकमलालये ।
प्रसीदयुगलंलक्ष्मीर्मायापद्माध्रुवोमहा ॥ ५१ ॥
लक्ष्म्यैनमोंतो मन्त्रोयमष्टाविंशतिवर्णवान् ।
पूज्यानेन महालक्ष्मीःश्रीविद्यादक्षिणे स्थिता ॥ ५२ ॥
लक्ष्मीर्मायामनोजन्मात्रिशक्तिर्मनुरीरितः ।
त्रिवर्णेनिन सम्पूज्या त्रिशक्तिःपश्चिमे स्थिता ॥ ५३ ॥
भृग्वाकाशकलामायारूढापद्मालयापुटाः ।
त्रिवर्णाःसर्वसाम्राज्या तां यजेदुत्तरस्थिताम् ॥ ५४ ॥

लक्ष्मी पंचक की देवियों के मन्त्रों का उद्धार : वामनेत्र एवं इन्दु सहित वह्नि युत वकेश (श्रीं)—यह एक अक्षर का लक्ष्मी का मन्त्र है । इससे (पूर्व में) लक्ष्मी का पूजन करना चाहिए ।

तार (ॐ) पद्मा (श्रीं) शक्ति (ह्रीं) एवं कमला (श्रीं) फिर 'कमले कमलालये' एवं दो बार प्रसीद (प्रसीद प्रसीद) फिर लक्ष्मी (श्रीं) माया (ह्रीं) पद्मा (श्रीं) एवं ध्रुव (ॐ) और अन्त मे 'महालक्ष्म्यै नमः' लगाने से २८ अक्षर का महालक्ष्मी का मन्त्र बनता है । इससे श्रीविद्या के दक्षिण में महालक्ष्मी का पूजन करना चाहिए ।

लक्ष्मी (श्रीं) माया (ह्रीं) एवं मनोजन्मा (क्लीं) यह तीन अक्षर का त्रिशक्ति का मन्त्र कहा गया है । इससे पश्चिम में स्थित त्रिशक्ति का पूजन करना चाहिए ।

भृगु (स) आकाश (ह) फिर क, ल एवं माया (ह्रीं)—इस प्रकार 'स्ह्क्लह्रीं' इस कूट को पद्मालया (श्रीं) से संपुटित करने पर तीन अक्षर का सर्वसाम्राज्या का मन्त्र बनता है । इससे उत्तर में स्थित सर्वसाम्राज्या का पूजन करना चाहिए ।

टिप्पणी : लक्ष्मी का मन्त्र : श्रीं

महालक्ष्मीमन्त्रमाह। तारेति । तारॐ । पद्माश्रीं । शक्तिःह्रीं । पद्माश्रीं । लक्ष्मीःश्रीं । मायाह्रीं । पद्माश्रीं । ध्रुवःॐ । स्वरूपंशेषम् । यथा–ॐ श्रींह्रींश्रींकमलेकमलालयेप्रसीद २ श्रींह्रींश्रींॐमहालक्ष्म्यैनमः (२८) महालक्ष्मीश्रीपा०इतिदक्षिणे ॥ ५१-५२ ॥ त्रिशक्तिमन्त्रमाह । लक्ष्मीःश्रीं । मायाह्रीं । मनोजन्माक्लीं । यथा–श्रींह्रींक्लीं (३) त्रिशक्तिश्रीपा०पश्चिमे ॥ ५३ ॥ सर्वसाम्राज्यामन्त्रमाह । भृग्विति । भृगुःसः । आकाशोहः । कलायतेमायास्थिताः । पद्मालयाश्रीं । तेनपुटिताः । यथा–श्रींसहकलह्रींश्रीं (७) सर्वसाम्राज्याश्रीपा०उत्तरे ॥ ५४ ॥

महालक्ष्मी का मन्त्र : ॐ श्रीं ह्रीं श्रीं कमले कमलालये प्रसीद प्रसीद श्रीं ह्रीं श्रीं ॐ महालक्ष्म्यै नमः ।

त्रिशक्ति का मन्त्र : श्रीं ह्रीं क्लीं ।

सर्वसाम्राज्या का मन्त्र : श्रीं स्ह्रक्लह्रीं श्रीं ।

इनके उक्त मन्त्रों के साथ 'श्रीपादुकां पूजयामि नमः' लगाने से इनके पूजन मन्त्र बन जाते हैं, यथा :

'मूलं' महात्रिपुरसुन्दरी श्रीपादुकां पूजयामि नमः । 'श्रीं' लक्ष्मीं श्रीपा० । 'ॐ श्रीं ह्रीं श्रीं····०' महालक्ष्मी श्रीपा०। 'श्रीं ह्रीं क्लीं' त्रिशक्ति श्रीपा० । 'श्रीं स्ह्रक्लह्रीं श्रीं' सर्वसाम्राज्या श्रीपादुकां पूजयामि नमः ।

तारोमायाततोहंसःसोहंवह्निप्रियान्तिमः ।
अष्टवर्णःपरंज्योतिर्मनुस्तां पूर्वतो यजेत् ॥ ५५ ॥
तारःपरोनिष्कलश्चशाम्भवीज्या तु दक्षिणे ।
नभःसबिन्दुसर्गाढ्योभृगुर्द्वर्णोजपाप्परे ॥ ५६ ॥
अकारादिक्षकारान्ता वर्णाःप्रोक्ता तु मातृका ।

कोशपंचक की देवियों के मन्त्रों का उद्धार : तार (ॐ) माया (ह्रीं) फिर 'हंसः सोहं' और अन्त में वह्निप्रिया (स्वाहा) लगाने से ८ अक्षर का परंज्योति का मन्त्र बनता है । इससे पूर्व में उनकी पूजा करनी चाहिए ।

तार (ॐ) फिर 'पर' 'निष्कल' एवं 'शांभवी'—यह ९ अक्षर का परनिष्कल शांभवी का मन्त्र है । इससे दक्षिण में उनका पूजन करना चाहिए ।

सबिन्दु नभ (हं) तथा विसर्गाढ्य भृगु (सः) यह २ अक्षर का अजपा का मन्त्र है । इससे पश्चिम में उनका पूजन करना चाहिए ।

अकार से क्षकार पर्यन्त सानुस्वार वर्णमाला मातृका का मन्त्र कहा गया है ।

टिप्पणी : परंज्योति का मन्त्र : ॐ ह्रीं हंसः सोऽहं स्वाहा ।

परनिष्कल शांभवी का मन्त्र : ॐ परनिष्कल शांभवी ।

अजपा का मन्त्र : हंसः ।

मातृका मन्त्र : अं आं इं ईं उं ऊं····हं ळं क्ष ।

पूजन मन्त्र : परंज्योति आदि के उक्त मन्त्रों के साथ उनके नाम और फिर

द्वितीयपंचकेपरज्योतिर्मंत्रमाह । तारइति । :तारॐ । मायाह्रीं । यथा-ॐह्रींहंसः सोहंस्वाहा (८) परंज्योतिःश्रीपा०पूर्वे ॥ ५५ ॥ परनिष्कलशांभवीमन्त्रमाह । तारइति । प्रणवस्तन्मन्त्रः । यथा-ॐपरनिष्कलशांभवी (८) श्रीपा०दक्षिणे । अजपामाह । नभइति । नभोहः । भृगुःसः । यथा-हंसः (२) अजपाश्रीपा०पश्चिमे ॥ ५६ ॥

'श्रीपादुकां पूजयामि नमः' लगाने से उनके पूजनमन्त्र बन जाते हैं, यथा : ॐ ह्रीं हंसः सोऽहं स्वाहा परंज्योति श्रीपादुकां पूजयामि नमः । इत्यादि ।

प्रणवोभुवनेशीहुंखेचछेक्षःपदंपुनः ॥ ५७ ॥
स्त्रींहुंमेरुःसञ्झिटीशामायास्त्रंद्वादशाक्षरः ।
त्वरिताया मतुःप्रोक्तस्तेन तां पुरतोर्चयेत् ॥ ५८ ॥
आकाशहंसक्रोधीशपिनाकीशहराधराः ।
सेन्दवस्तारमायाभ्यां सम्पुटाश्चंसरस्वती ॥ ५९ ॥
ङेंतोहृदन्तो मन्त्रोयं प्रोक्त एकादशाक्षरः ।
अनेन पारिजातेशीं दक्षिणस्यां प्रपूजयेत् ॥ ६० ॥
रमामायामनोभूमिस्त्रिवर्णात्रिपुटोदिता ।
तां यजेत्पश्चिमे भागे बाणेशीमुत्तरे पुनः ॥ ६१ ॥
द्रांद्रींक्लींब्लूंभृगुःसर्गीसोदिता पञ्चवर्णका ।

कल्पलता पंचक की देवियों के मन्त्रों का उद्धार : प्रणव (ॐ) भुवनेशानी (ह्रीं) फिर 'खेच छे क्षः' तथा 'स्त्रीं हुं' फिर सञ्झिटीश मेरु (क्षे) माया (ह्रीं) तथा अन्त में अस्त्र (फट्) लगाने से १२ अक्षर का त्वरिता का मन्त्र कहा गया है । इससे पूर्व में उनका पूजन करना चाहिए ।

बिन्दुओं के साथ आकाश (हं) हंस (सं) क्रोधीश (कं) पिनाकी (लं) तथा धरा एवं बिन्दु के साथ 'ह्' 'र' (ह्रैं)—इस कूट को तार (ॐ) तथा माया (ह्रीं) से सम्पुटित कर चतुर्थ्यन्त सरस्वती (सरस्वत्यै) तथा हृदय (नमः) लगाने से ११ अक्षर का पारिजातेश्वरी का मन्त्र बनता है । इससे दक्षिण दिशा में उनका पूजन करना चाहिए ।

रमा (श्रीं) माया (ह्रीं) एवं मनोभूमि (क्लीं) यह ३ अक्षर का त्रिपुटा का मन्त्र कहा गया है । उनका पश्चिम की ओर पूजन करना चाहिए ।

आदिर्झांतवर्णास्तुमातृका । अंआंइंईं०क्षं (५१) मातृकाश्रीपा० उत्तरे । कल्पलतापंचकेत्वरितामन्त्रमाह । प्रणवइति । भुवनेशीह्रीं ॥ ५७ ॥ मेरुःक्षःझ्मिटीशःएयुतःखे । यथा—ॐह्रींहुंखेचछेक्षःस्त्रींहुंखेह्रींफट् (१२) त्वरिताश्रीपा०पूर्वे ॥ ५८ ॥ पारिजातेश्वरीमन्त्रमाह । आकाशेति । आकाशोहः । हंसः सः । क्रोधीशःकः । पिनाकीशोलः । हर स्वरूपम् । अधरएे । एतेसबिन्दवः कूटं तारमायासंपुटम् । यथा-ॐह्रींहंसंकंलंह्रैंह्रींॐसरस्वत्यैनमः (११-१५) पारिजातेश्वरीश्रीपा०दक्षिणे ॥ ५९-६० ॥ त्रिपुटामन्त्रमाह । रमेति । मनोभूमिःक्लीं । यथा—श्रींह्रींक्लीं (३) त्रिपुटाश्रीपा०पश्चिमे । द्रांद्रींक्लींब्लूंसः (५) पंचबाणेशीश्रीपा०उत्तरे । कामधेनुपंचके अमृतपीठेशीमन्त्रमाह । वागिति । यथा—ऐंक्लींसौः (३)

'द्रां द्रीं क्लीं ब्लूं' तथा सर्गी भृगु (सः) यह ५ अक्षर का पंचबाणेशी का मन्त्र कहा गया है। इनको उत्तर में पूजा करनी चाहिए।

टिप्पणी : त्वरिता का मन्त्र : ॐ ह्रीं हुं खेचछेक्षः स्त्रीं हुं क्षे ह्रीं फट्।

पारिजातेश्वरी का मन्त्र : ॐ ह्रीं हंसंकलंह्रैं ह्रीं ॐ सरस्वत्यै नमः।

त्रिपुटा का मन्त्र : श्रीं ह्रीं क्लीं।

पंचबाणेशी का मन्त्र : द्रां द्रीं क्लीं ब्लूं सः।

पूजन मन्त्र : त्वरिता आदि के उक्त मन्त्रों के आगे उनका नाम और फिर 'श्रीपादुकां पूजयामि नमः' लगाने से उनके पूजन मन्त्र बन जाते हैं, यथा :

ॐ ह्रीं हुं खेचछेक्षः स्त्रीं हुं क्षे ह्रीं फट् त्वरिता श्रीपादुकां पूजयामि नमः। इत्यादि।

वाक्कामौभृगुरौसर्गयुक्तो मन्त्रस्त्रिवर्णकः ॥ ६२ ॥
प्रोदितोऽमृतपीठेशी तेन तां पूर्वतो यजेत्।
नभोभृग्वग्नयोवामनेत्राढ्याश्चन्द्रभूषिताः ॥ ६३ ॥
सार्णाद्याभुवनेशीश्रींकलाद्याभुवनेश्वरी।
सुधाश्रीमन्त्रउदितो वेदार्णस्तां यजेदवाक् ॥ ६४ ॥
सकारोनुग्रहीसर्गीकामोवागभ्रपूर्विका।
त्रिवर्णमनुनापश्चात्पूजयेदमृतेश्वरीम् ॥ ६५ ॥
विंशत्यर्णान्नपूर्णोक्ता तरङ्गे नवमे मया।
तन्मन्त्रेणोत्तरस्यां तु पूजयेदन्नदायिनीम् ॥ ६६ ॥

कामधेनु पञ्चक की देवियों के मन्त्रों का उद्धार : वाग् (ऐं) काम (क्लीं) तथा औ एवं विसर्ग सहित भृगु (सौः)—यह ३ अक्षर का अमृतपीठेशी का मन्त्र बतलाया गया है। इससे पूर्व में उनका पूजन करना चाहिए।

नभ (ह्) भृगु (स्) अग्नि (र) इन तीनों को वामनेत्र (इ) एवं बिन्दु से युक्त करने पर 'ह्स्रीं' कूट बनता है। फिर आदि में सकार सहित भुवनेशी (स्ह्रीं)

अमृतपीठेशीश्रीपादुकां०पूर्वे। सुधाश्रीमन्त्रमाह। नभइति। नभोहः। भृगुःसः। अग्नीरः। एतेवामनेत्रमीकारस्तद्युताःसबिन्दवश्चहस्त्रीं ॥ ६१-६३ ॥ सार्णाद्याभुवनेशानीस्ह्रीं। श्रीकलाद्या। भुवनेश्वरीक्लीं। वेदार्णश्चतुर्वर्णोयंसुधाश्रीमन्त्रः। तेनतामवाक्दक्षिणेयजेत्। यथा ह्स्रौंस्ह्रींश्रींक्लीं (४) सुधाश्रीपा० ॥ ६४ ॥ अमृतेश्वरीमन्त्रमाह। सकारइति। अनुग्रहीऔयुतः। अभ्रपूर्विकावाक् हयुतंवाग्बीजंहें। यथा—सौःक्लींहें (३) अमृतेश्वरीश्रीपा० पश्चिमे ॥ ६५ ॥ अन्नपूर्णानवमेतरंगेउक्ता। तेनोत्तरेतांयजेत्। यथा--ॐह्रींश्रींक्लींनमोभगवतिमाहेश्वरिअन्नपूर्णेस्वाहा (२०) अन्नपूर्णाश्रीपादुकांपू० उत्तरे ॥ ६६ ॥

फिर 'श्रीं' और अन्त में कलाद्या भुवनेश्वरी (क्लीं) लगाने से ४ अक्षर का सुधाश्री का मन्त्र बनता है । इससे दक्षिण में उनकी पूजा करनी चाहिए ।

अनुग्रहो एवं सर्गी सकार (सौः) काम (क्लीं) तथा अभ्रपूर्वक वाग् (हैं)– इस ३ अक्षर के मन्त्र से अमृतेश्वरी का पश्चिम में पूजन करना चाहिए ।

नवम तरङ्ग में मैंने २० अक्षर का अन्नपूर्णा का मन्त्र बतलाया है । उस मन्त्र से उत्तर में अन्नपूर्णा का पूजन करना चाहिए ।

टिप्पणी : अमृतपाठेशी का मन्त्र : ऐं क्लीं सौः ।

सुधाश्री का मन्त्र : ह्स्त्रीं स्ह्रीं श्रीं क्लीं ।

अमृतेश्वरी का मन्त्र : सौः क्लीं हैं ।

अन्न र्णा का मन्त्र : ॐ ह्री श्रीं क्लीं नमो भगवति माहेश्वरि अन्नपूर्णे स्वाहा ।

जन मन्त्र : अमृतपाठेशी आदि के उक्त मन्त्रों के आगे पूर्वोक्त रीति से उनके नाम तथा फिर 'श्रीपादुकां पूजयामि नमः' लगाने से उनके पूजन मन्त्र बन जाते हैं, यथा : ऐं क्लीं सौः अमृतपाठेशी श्रीपादुकां पूजयामि नमः । इत्यादि

वाणीबीजं ततःक्लिन्नेकामबीजंमदद्रवे ।
कुलेवराहहंसाग्निवर्णाऔसर्गतंयुताः ॥ ६७ ॥
एकादशाक्षरो मन्त्रःसिद्ध लक्ष्म्याःसमीरितः ।
तेन तां पूजयेत्पूर्वे मातङ्गीं दक्षिणे पुनः ॥ ६८ ॥
वाक्कामःसौःपुनर्वाणीमायालक्ष्मीर्ध्रुवोनमः ।
भगवान्तेतिमातङ्गीश्वरिसर्वजनाणंकाः ॥ ६९ ॥
मनोहरिपदंप्रोच्य सर्वराजदशंकरि ।
सर्वांतेमुखरंज्यंतेमेषोनेत्रसमन्वितः ॥ ७० ॥
सर्वस्त्रीपुरुषान्तेतुवशंकरिपदंवदेत्
सर्वदुष्टमृगप्रान्तेवशंकरिपुनःपदम् ।
सर्वलोकवशंपश्चात्करिमायांरमांगजः
वाक्त्रिसप्ततिवर्णोयं मातंग्या उदितो मनुः ॥ ७१ ॥

रत्नपंचकेसिद्धलक्ष्मीमन्त्रमाह । वाणीति । वाणीबीजंऐं । कामबीजंक्लीं । वराहहंसाग्निवर्णाहसराः औसर्गयुताह्स्त्रौः । स्वरूपमन्यत् । यथा--ऐंक्लिन्नेक्लींमदद्रवेकुलेह्स्त्रौः (११) सिद्धलक्ष्मीश्रीपा०पूर्वे ॥ ६७ ॥ दक्षिणेमातंगीं ॥ ६८ ॥ तन्मन्त्रमाह । वागिति । वाक्ऐं । कामःक्लीं । वाणीऐं । मायाह्रीं । लक्ष्मीःश्रीं । ध्रुवॐ ॥ ६९ ॥ नेत्रसमन्वितोमेषोनःनि । रमाश्रीं । अंगजःक्लीं । स्वरूपमन्यत् । यथा--ऐंक्लींसौःऐंह्रींश्रींॐ नमोभगवतिमातंगीश्वरिसर्वजनमनोहरिसर्वराजवशंकरिसर्वमुखरंजिनिसर्वस्त्रीपुरुषवशंकरिसर्वदुष्टमृगवशंकरिसर्वलोकवशंकरिह्रींश्रींक्लींऐं (७३) मातंगीश्रीपा० ॥ ७०-७१ ॥

गगनंवह्निनावामनेत्रेन्दुभ्यां समन्वितम् ।
भुवनेशीमनुःप्रोक्तस्तेन तां पश्चिमे यजेत् ॥ ७२ ॥
तरङ्गे दशमे प्रोक्तो वेदरुद्राक्षरोमनुः ।
वाराह्यास्तेन तांदेव्या वामभागे समर्चयेत् ॥ ७३ ॥

राज्ञ पंचक की देवियों के मन्त्रों का उद्धार : वाणी बीज (ऐं) फिर 'क्लिन्ने' कामबीज (क्लीं) एवं 'मदद्रवे कुले' और फिर औ एवं विसर्ग सहित वराह (ह) हंस (स) एवं अग्नि (र) से बना कूट (ह्स्रौं)–यह ११ अक्षर का सिद्धलक्ष्मी का मन्त्र बतलाया गया है । इससे पूर्व में उनका पूजन करना चाहिए ।

फिर दक्षिण में मातङ्गी का पूजन करना चाहिए । वाग् (ऐं) काम (क्लीं) 'सौः' फिर वाणी (ऐं) माया (ह्रीं) लक्ष्मी (श्रीं) तथा ध्रुव (ॐ) फिर 'नमः' 'भगवं' 'ति मातङ्गीश्वरिसर्वजन' 'मनोहरि' कहकर 'सर्वराजवशंकरि' 'सर्व' 'मुख' 'रंज' एवं नेत्र सहित मेष (नि) फिर 'सर्व स्त्रीपुरुष' के बाद 'वशंकरि' पद कहना चाहिए, फिर 'सर्वदुष्ट मृग' के बाद पुनः 'वशंकरि' तथा 'सर्वलोकवशं' के बाद 'करि' फिर माया (ह्रीं) रमा (श्रीं) अंगज (क्लीं) तथा वाग (ऐं) लगाने से ७३ वर्ण का यह मातङ्गी का मन्त्र कहा गया है ।

वामनेत्र (इ) एवं इन्दु (अनुस्वार) सहित गगन (ह) एवं वह्नि (र) अर्थात् 'ह्रीं' यह भुवनेश्वरी का मन्त्र बतलाया गया है । इससे पश्चिम में उनका पूजन करना चाहिए ।

दशम तरंग में बतलाये गये ११४ अक्षर वाले वाराही के मन्त्र से देवी के वाम भाग में वाराही का पूजन करना चाहिए ।

टिप्पणी : सिद्ध लक्ष्मी का मन्त्र : ऐं क्लिन्ने मदद्रवे कुले ह्स्रौः ।

मातंगी का मन्त्र : ऐं क्लीं सौः ऐं ह्रीं श्रीं ॐ नमो भगवति मातंगीश्वरि सर्वजनमनोहरिसर्वजनमनोहरिसर्वराजवशंकरि सर्वमुखरंजिनि सर्वस्त्रीपुरुष वशंकरि सर्वदुष्टमृग वशंकरि सर्वलोकवशंकरि ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं ।

भुवनेश्वरीमाह । गगनमिति । गगनंहः वह्निनारेफेणवामनेत्रेंदुभ्यांईकिन्दुभ्यांयुतः । यथा–ह्रीं (ह) भुवनेश्वरीश्रीदुकांपू०पश्चिमे ॥ ७२ ॥ दशमेतरंगेवेदरुद्राक्षरश्चतुर्दशोत्तरशताणोवाराहीमनुरुक्तः । तेननासुत्तरेयजेत् । ॐऐंग्लौंएंनमोभगवतिवार्तालेवाराहिवाराहिवाराहमुखिएंग्लौंएंअंधेअंधिनिनमःरुंधेरुंधिनिनमःजंभेजंभनिनमःमोहेमोहिनिनमःस्तम्भेस्ताम्भानिनमःऐंग्लौंएंसर्वदुष्टप्रदुष्टानांसर्ववाक्चित्तचक्षुमुखगति।जह्यास्तंभंकुरु२ शीघ्रंवशंकुरु २ ऐंग्लौंएंठःठःठःठःहुंफट्स्वाहावाराहीश्रीपादु०–उत्तरे ॥ ७३ ॥

भुवनेश्वरी का मन्त्र : ह्रीं

वराही का मन्त्र : ॐ ऐं ग्लौं ऐं नमो भगवति वार्तालि वाराहि वाराहि वराहमुखि ऐं ग्लौं ऐं अन्धेअन्धिनि नमः रुंधेरुंधिनि नमः जंभेजंभिनि नमः मोहे मोहिनि नमः स्तंभे स्तंभिनि नमः ऐं ग्लौं ऐं सर्वदुष्टप्रदुष्टानां सर्वेषां सर्ववाक्चित्तचक्षुर्मुखगतिजिह्वास्तम्भं कुरुकुरु शीघ्रंवशं कुरुकुरु ऐं ग्लौं ऐं ठः ठः ठः हुं फट् स्वाहा ।

जनमंत्र : सिद्धलक्ष्मी आदि के उक्त मन्त्रों के आगे पूर्वोक्त रीति से उनका नाम तथा 'श्रीपादुकां पूजयामि नमः' लगाने से उनके पूजन मन्त्र बन जाते हैं, यथा : ऐं क्लिन्ने मदद्रवे कुले ह्स्त्रौं: सिद्धलक्ष्मी श्रीपादुकां पूजयामि नमः । इत्यादि

पञ्चिका एवमाराध्य दर्शनानि यजेच्चषट् ।
आद्यं मध्ये चतुर्दिक्षु चत्वारि पुरतोन्तिमम् ॥ ७४ ॥
शैवं शाक्तं तथा ब्राह्मं वैष्णवं सौरसौगतम् ।
दर्शनान्येवमाराध्य मूलेन त्रिःप्रतर्पयेत् ॥ ७५ ॥

षड्दर्शनों का पूजन : इस प्रकार पाँचों पंचिकाओं का पूजन कर ६ दर्शनों का पूजन करना चाहिए । प्रथम दर्शन का मध्य में फिर अग्रिम चार दर्शनों का क्रमशः चारों दिशाओं में और अन्तिम दर्शन का अग्रभाग में पूजन करना चाहिए । १. शैव, २. शाक्त, ३. ब्राह्म, ४. वैष्णव, ५. सौर, एवं ६. सौगत ये ६ दर्शन हैं ।

इस रीति से दर्शनों की पूजा कर मूल मन्त्र से तीन वार तर्पण करना चाहिए ।

टिप्पणी : *जनमन्त्र* : उक्त ६ दर्शनों के नामों के आगे 'श्रीपादुकां पूजयामि नमः' लगाने से उनके पूजन मन्त्र बन जाते हैं, यथा : शैव दर्शन श्रीपादुकां पूजयामि नमः । इत्यादि

तर्पणमन्त्र : मूलं महात्रिपुर सुन्दरी श्रीपादुकां तर्पयामि नमः ।

अंगुष्ठानामिकाभ्यां तां यच्छेत्पुष्पं तु मुद्रया ।
ज्ञानाख्यया सा चांगुष्ठतर्जनीयोगतो मता ॥ ७६ ॥
एवं सम्पूज्यबिन्दुस्थां श्रीमत्त्रिपुरसुन्दरीम् ।
ततोंगाद्यावृतीनां तु पूजनं सम्यगाचरेत् ॥ ७७ ॥

भगवती को अंगुष्ठ एवं अनामिका द्वारा पुष्प आदि समर्पित करने चाहिए । किन्तु दर्शनों का पूजन ज्ञानमुद्रा द्वारा करना चाहिए । यह मुद्रा अंगुष्ठ एवं तर्जनी को मिलाने से बनती है ।

एवं पञ्चपञ्चिकाः सम्पूज्य दर्शनानि यजेत् । अग्रेस्पष्टम् ॥ ७४ ॥ शिवदर्शनश्रीपा० इत्यादि० ॥ ७५ ॥ ज्ञानमुद्रामाह । सा चेति । अंगुष्ठतर्जनीयोगेज्ञानमुद्रा ॥ ७६-७७ ॥

इस प्रकार वेन्दक चक्र में स्थित श्रीमत्त्रिपुर सुन्दरी का पूजन करने के बाद फिर आवरण देवताओं का विधिवत पूजन करना चाहिए।

टिप्पणी : श्रीविद्यार्चन पद्धति : पिछले अध्याय में बतलायी गयी रीति से ध्यान आवाहन उपचारों से तत्तद्मुद्राओं द्वारा पुष्पाञ्जलि समर्पण पर्यन्त विधिवत भगवती का पूजन कर तथा उनसे परिवार पूजन की आज्ञा लेकर सर्वप्रथम १६ नित्याओं का पूजन करना चाहिए।

बिन्दु एवं त्रिकोण के मध्य त्रिकोण की प्रत्येक भुजा के समीप ५-५ के क्रम से वामावर्त रीति से १५ नित्याओं का तथा मध्य में महाषोडशी का पूजन करना चाहिए। शुक्ल पक्ष में कामेश्वरी से प्रारम्भ कर विचित्रा पर्यन्त तथा कृष्ण पक्ष में विचित्रा से प्रारम्भ कर कामेश्वरी पर्यन्त १५ नित्याओं का पूर्वोक्त स्थानों पर पूजन किया जाता है।

एक एक स्वर डालकर नित्या का मन्त्र फिर उनका नाम और उसके बाद' नित्या श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः' लगाने से उनके पूजन मन्त्र बन जाते हैं। दाहिने हाथ के अंगुष्ठ एवं अनामिका द्वारा 'पूजयामि' कहते समय पुष्प आदि चढ़ाने चाहिए तथा 'तर्पयामि' कहते समय बाँये हाथ से तत्वमुद्रा[१] द्वारा जल या दूध चढ़ाना चाहिए। नित्याओं के पूजन मन्त्र इस प्रकार हैं।

अं 'ऐं क्लीं सौः····०' कामेश्वरी नित्या श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः। आं 'ऐं भगमुगे····०' भगमालिनी नित्याश्रीपादुकां०। इं 'ह्रीं नित्यक्लिन्न····०' नित्यक्लिन्ना नित्या श्रीपा०। ईं 'ॐ क्रों भ्रों क्रों ···०' भेरुण्डा नित्या श्रीपा०। उं 'ॐ ह्रीं वह्नि-वासिन्यै नमः' वह्निवासिनी नित्या श्रीपा०। ऊं 'ॐ ह्रीं फ्रें स····०' महाविद्येश्वरीनित्या श्रीपा०। ऋं 'ह्रीं शिवदूत्यै नमः' शिवदूती नित्या श्रीपा०। ॠं 'ॐ ह्रीं हुं खे····०' त्वरितानित्या श्रीपा०। ऌं ऐं क्लीं सौः कुल सुन्दरीनित्या श्रीपा०। ॡं 'ऐं क्लीं सौः ह्स्त्रौं····०'नित्या श्रीपा०। एं 'ह्रीं फ्रें स्वं ···०' नीलपताकिनी नित्या श्रीपा०। ऐं 'ह्स्त्रूफ्रें विजयायै नमः'विजयानित्या श्रीपा०। ओं 'ॐ स्वों सर्वमङ्गलायै नमः' सर्वमङ्गलानित्या श्रीपा०। औं 'ॐ नमो भगवति ···०' ज्वाला मालिनीनित्या श्रीपा०। अं क्लीं विचित्रा नित्याश्रीपा०। अं मूलं महात्रिपुर सुन्दरी नित्या श्रीपदुकां पूजयामि तर्पयामि नमः।

इसके बाद बिन्दु एवं त्रिकोण के मध्य में तीन पंक्तियों में क्रमशः दिव्यौघ, सिद्धौघ एवं मानवौघ गुरुओं का निम्नलिखित मन्त्रों से पूजन करना चाहिए, यथा :

---

[१] स्वतन्त्र तन्त्र में लिखा है कि बाँये हाथ के अंगुष्ठ एवं अनामिका को मिलाने से तत्त्वमुद्रा बनती है। इससे तर्पण करना चाहिए।

परप्रकाशानन्दनाथ श्रीपादुकां पूजयामि नमः। परशिवानन्दनाथश्रीपा०। परशक्त्यम्बा श्रीपा०। कौलेशानन्दनाथ श्रीप०। शुक्लादेव्यम्बा श्रीपा०। कुलेश्वरानन्दनाथ श्रीपा०। कामेश्वर्यम्बा श्रीपा०। भोगानन्दनाथ श्रीपा०। क्रीडानन्दनाथ श्रीपा०। समयानन्दनाथ श्रीपा०। सहजानन्दनाथ श्रीपा०। गगनानन्दनाथ श्रीपा०। विश्वानन्दनाथ श्रीपा०। विमलानन्दनाथ श्रीपा०। मदनानन्दनाथ श्रीपा०। भुवनानन्दनाथ श्रीपा०। लोलाम्बा श्रीपा०। स्वात्मानन्दनाथ श्रीपा०। प्रियाम्बा श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

तत्पश्चात् बिन्दु के चारों ओर पूर्व आदि दिशाओं में आम्नाय देवताओं का निम्नलिखित मन्त्रों से पूजन करना चाहिए, यथा :

पूर्वाम्नाय देवता श्रीपादुकां पूजयामि नमः। दक्षिणाम्नाय देवता श्रीपा०। पश्चिमाम्नाय देवता श्रीपा०। उत्तरामाम्नाय देवता श्रीपादुकां पूजयामि नमः।

तदनन्तर मध्य में श्रीविद्या का और चारों दिशाओं में अन्य देवियों का—इस रीति से पाँचों पंचिकाओं का निम्नलिखित मन्त्रों से पूजन करना चाहिए, यथा—

मूलं महात्रिपुरसुन्दरी श्रीपादुकां पूजयामि नमः-मध्ये। श्रीं लक्ष्मीश्रीपा० पूर्वे। 'ॐ श्रीं ह्रीं श्रीं कमले···' महालक्ष्मी श्रीपा० दक्षिणे। 'श्रीं ह्रीं क्लीं' त्रिशक्ति श्रीपादु० पश्चिमे। श्रीं स्फुरत्कलह्रीं श्री सर्वसाम्राज्या श्रीपादुकां पूजयामि नमः-उत्तरे।

मूलं महात्रिपुरसुन्दरी श्रीपादुकां पूजयामि नमः-मध्ये। ॐ ह्रीं हंसः सोऽहं स्वाहा परंज्योति श्रीपा० पूर्वे। ॐ परनिष्कलशांभवीश्रीपा० दक्षिणे। हंस, अजपाश्रीपा० पश्चिमे। अं आं इं···ळं क्षं मातृका श्रीपादुकां पूजयामि नमः-उत्तरे।

मूलं महात्रिपुरसुन्दरी श्रीपादुकां पूजयामि नमः-मध्ये। 'ॐ ह्रीं हूं त्रि···ः' त्वरिता श्रीपा० पूर्वे। 'ॐ ह्रीं हं सं कं लं ह्रीं···ः' पारिताम्रेश्वरी श्रीपा० दक्षिणे। 'श्रीं ह्रीं क्लीं' त्रिपुटा श्रीपा० पश्चिमे। द्रां द्रीं क्लीं ब्लूं सः पंचबाणेशी श्रीपादुकां पूजयामि नमः-उत्तरे।

मूलं महात्रिपुरसुन्दरी श्री पादुकां पूजयामि नमः-मध्ये। ऐं क्लीं सौः अमृतपाठेशी श्रीपा० पूर्वे। ह्स्त्रौं स्ह्रीं श्रीं क्लीं सुधाश्री श्रीपा० दक्षिणे। सौः क्लीं हैं अमृतेश्वरी श्रीपा० पश्चिमे। 'ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं नमो···ः' अन्नपूर्णा श्री पादुकां पूजयामि नमः-उत्तरे।

मूलं महात्रिपुरसुन्दरी श्रीपादुकां पूजयामि नमः-मध्ये। 'ऐं क्लिन्ने क्लीं···ः' सिद्धलक्ष्मी श्रीपा० पूर्वे। ऐं क्लीं सौः ऐं ह्रीं···ः' मातंगी श्रीपा० दक्षिणे। ह्रीं भुवनेश्वरी श्रीपा० पश्चिमे। 'ॐ ऐं ग्लौं ऐं नमो····ः' वाराही श्रीपादुकां पूजयामि नमः-उत्तरे।

फिर मध्य में शैवदर्शन, चारों दिशाओं में क्रमशः शाक्त, ब्राह्म, वैष्णव एवं सौर दर्शन तथा अग्रभाग में सौगत दर्शन का अंगुष्ठ एवं तर्जनी के योग से बनी ज्ञान मुद्रा द्वारा पूजन करना चाहिए। पूजा के मन्त्र इस प्रकार हैं—

शैव दर्शन श्रीपादुकां पूजयामि नमः-मध्ये। शाक्त दर्शन श्रीपा० पूर्वे। ब्राह्म दर्शन श्रीपा० दक्षिणे। वैष्णव दर्शन श्रीपा० पश्चिमे। सौर दर्शन श्रीपा० उत्तरे। सौगत दर्शन श्री पादुकां पूजयामि नमः-अग्रभागे।

और फिर अन्त में 'भूत्रं महात्रिपुर सुन्दरी श्री पादुकां तर्पयामि नमः' इस मन्त्र से ३ बार तर्पण करना चाहिए। इस प्रकार बैन्दव चक्र में स्थित श्रीमत्त्रिपुर सुन्दरी का विधिवत् पूजन करने के बाद आवरण पूजा शुरू करनी चाहिए।

भूबिम्बाद्बिन्दुपर्य्यंतं नवावृतिसमर्चनम्।
माया श्रीबीजपूर्वाणांनाम्नामन्तेनियोजयेत् ॥ ७८ ॥
श्रीपादुकां पूजयामीत्येतद्वर्णाश्चसर्वतः।
अग्नीशासुरवायव्यपुरोदिक्ष्वंगपूजनम् ॥ ७९ ॥
भूबिम्बस्याऽऽद्यरेखायां दिक्षूद्धाधिःक्रमाद्यजेत्।
सिद्धीर्दशाणिमात्वाद्या महिमालघिमेशिता ॥ ८० ॥
वशित्वसिद्धिप्राकाम्याभुक्तिरिच्छाष्टमी पुनः।
प्राप्तिश्चसर्वकामाख्यासिद्धयो दशकीर्तिताः ॥ ८१ ॥
तप्तहेमसमानाभाः पाशांकुशधराःशुभाः।
साधकेभ्यःप्रयच्छन्ति रत्नौघं ता विचिन्तयेत् ॥ ८२ ॥
भूपुरे मध्यरेखायां पश्चिमाद्यर्चयेदिमाः।
ब्राह्मीं माहेश्वरीं चापि कौमारीं वैष्णवीमपि ॥ ८३ ॥
वाराहीं च तथेन्द्राणीं चामुण्डामथसप्तमीम्।
महालक्ष्मीमिमाध्यायेत्सर्वाभरणसंयुताः ॥ ८४ ॥

भूबिम्बमारभ्यबिंदुपर्यंतं प्रतिलोमेननवावरणपूजा। आवरणदेवतानामादौमायाश्रीबीजे अंतेतुश्रीपादुकांपूजयामीतिप्रयोगः। आग्नेयेहृत्। ईशेशिरः। नैर्ऋत्येशिखा। वायौकवचं। पुरोनेत्रं। दिक्षवस्त्रं। यथा-श्रींह्रींक्लीं ऐं सौः हृदयंवाग्देवताश्रीपा० ॥ ७८-७९ ॥ त्रिरेखंभूगृहमस्ति। यस्याधररेखायामष्टदिक्षुऊर्ध्वमधश्चाणिमाद्यादशसिद्धीर्यजेत्। ह्रींश्रींअणिमासिद्धिश्रीपादुकांपूजयामीत्यादिप्रयोगः ॥ ८०-८१ ॥ तासांध्यानमाह। दधोंकुशधराः। वामेपाशधराः। साधकेभ्यःरत्नसमूहान्ददति ॥ ८२ ॥ भूगृहद्वितीयरेखायांपश्चमादिषुदिक्षुब्राह्मयाद्याअष्टमातृर्यजेत्। ह्रींश्रींब्राह्मीमातृकाश्रीपादुकांपूजयामीत्यादि० ॥ ८३ ॥ तासांध्यानमाह। इमाइति ॥ ८४ ॥

विद्यां शूलं शक्तिचक्रेगदां वज्रंहिदंडकम् ।
पद्मं क्रमेण दधतीः सर्वाभीष्टप्रदायिकाः ॥ ८५ ॥
तस्यां तृतीयरेखायां दशमुद्राः प्रपूजयेत् ।
क्षोभणद्रावणाकर्षवश्योन्मादमहांकुशाः ॥ ८६ ॥
खेचरी बीजयोनी च त्रिखण्डेतिस्मृता इमाः ।
एवं भूबिम्बमाराध्य क्षोभमुद्रां प्रदर्शयेत् ॥ ८७ ॥
त्रैलोक्यमोहने चक्रे योगिन्यःप्रकटाइमाः ।
पूजितास्तर्पिताः सन्तुस्वेष्टदा इति प्रार्थयेत् ॥ ८८ ॥
बिन्दौपुष्पाञ्जलिं दत्त्वामूलेनान्यवृत्ति यजेत् ।

आवरण पूजा : भूपुर से प्रारम्भ तक बिन्दु पर्यन्त (प्रतिलोम क्रम से) नौ आवरणों की पूजा करनी चाहिए । आवरण देवताओं के नाम से पहिले मायाबीज एवं श्रीबीज तथा अन्त में 'श्री पादुकां पूजयामि नमः' यह पद सर्वत्र लगाना चाहिए ।

आग्नेय, ईशान, नैऋत्य, वायव्य, अग्रभाग एवं दिशाओं में षडङ्गपूजा करनी चाहिए ।

भूपुर की प्रथम रेखा में ८ दिशाओं में तथा ऊर्ध्व एवं अधोभाग में क्रमशः १० सिद्धियों का पूजन करना चाहिए । अणिमा, महिमा, लघिमा, ईशिता, वशिता, सिद्धि, प्राकाम्या, भुक्तिरिच्छा, प्राप्ति एवं सर्वकाम्या ये १० सिद्धियाँ होती हैं । तप्त सुवर्ण के समान आभा वाली, पाश एवं अंकुश धारण करने वाली तथा साधकों को रत्न समुदाय देती हुई सिद्धियों का ध्यान करना चाहिए ।

भूपुर की मध्य रेखा में पश्चिम आदि दिशाओं में ब्राह्मी, माहेश्वरी, कौमारी, वैष्णवी, वाराही, इन्द्राणी, चामुण्डा एवं महालक्ष्मी का पूजन करना चाहिए ।

समस्त आभूषणों से अलंकृत, अपने ८ हाथों में क्रमशः पुस्तक, शूल, शक्ति, चक्र, गदा, वज्र, दण्ड एवं कमल धारण करने वाली तथा सब मनोरथों को पूर्ण करने वाली इन शक्तियों का ध्यान करना चाहिए ।

भूपुर की तृतीय रेखा में १० मुद्राओं का पूजन करना चाहिए । क्षोभण, द्रावण, आकर्षण, वश्य, उन्माद, महांकुश, खेचरी, बीज, योनि एवं त्रिखंडा—ये १० मुद्राएँ होती हैं ।

क्रमाद्विद्यादीन्यायुधानिदधतीः ॥ ८५ ॥ तस्यांभूपुरस्थतृतीयरेखायांदिक्षुऊर्ध्वमधश्च-दशसंक्षोभणाद्यादशमुद्रायजेत् । ह्रींश्रींक्षोभणमुद्राश्रीपा० ॥ ८६ ॥ मुद्राणांलक्षणान्युक्तानि । एवंप्रथमावरणमाराध्य ॥ ८७ ॥ त्रैलोक्यमोहनेचक्रे इमाःप्रकटयोगिन्यः-पूजितास्तर्पिताइष्टदाःसन्वितिप्रार्थ्यमूलेनबिन्दौपुष्पाञ्जलिंदद्यात् । ततः षोडशा रेविलोमे-

(इस प्रकार प्रथम आवरण में) भूपुर का पूजन कर क्षोभ मुद्रा दिखलानी चाहिए। फिर "त्रैलोक्य मोहन चक्र में ये प्रकट योगिनियाँ पूजन एवं तर्पण से अभीष्ट फल दायक हों"—यह प्रार्थना करनी चाहिए, और मूल मन्त्र से बिन्दु पर पुष्पाञ्जलि चढ़ानी चाहिए।

टिप्पणी : **षडङ्गपूजा** : सर्वप्रथम यन्त्र के ईशान आदि कोणों में यथाक्रम से निम्न-लिखित मन्त्रों से षडङ्गपूजा करनी चाहिए, यथा—श्री ह्रीं क्लीं ऐं सौः हृदयाय नमः-आग्नेये। ॐ ह्रीं श्रीं शिरसे स्वाहा-ईशाने। कएईलह्रीं शिखायै वषट्-नैर्ऋत्ये। हसकहलह्रीं कवचाय हुम्-वायव्ये। सकलह्रीं नेत्रत्रयाय वौषट्-अग्ने। सौः ऐं क्लीं ह्रीं श्रीं अस्त्राय फट्-दिक्षु।

प्रथम आवरण का पूजन : 'तप्तहेमसमानाभाः पाशांकुशधराः शुभा।
साधकेभ्यः प्रयच्छन्ति रत्नोघं सिद्धयस्सदा॥"

ऐसा ध्यान कर भूपुर की प्रथम रेखा में पूर्व आदि दिशाओं में निम्नलिखित मन्त्रों से अणिमा आदि १० सिद्धियों का पूजन करना चाहिए, यथा—

ह्रीं श्रीं अणिमा सिद्धि श्रीपादुकां पूजयामि-पूर्वे। ह्रीं श्रीं महिमा सिद्धि श्रीपा० आग्नेये। ह्रीं श्रीं लघिमा सिद्धि श्रीपा० दक्षिणे। ह्रीं श्री ईशिता सिद्धि श्रीपा० नैर्ऋत्ये। ह्रीं श्रीं वशिता सिद्धि श्रीपा० पश्चिमे। ह्रीं श्रीं सिद्धि सिद्धि श्रीपा० वायव्ये। ह्रीं श्रीं प्राकाम्या सिद्धि श्रीपा० उत्तरे। ह्रीं श्रीं भुक्तिरिच्छा सिद्धि श्रीपा० ईशान्ये। ह्रीं श्रीं प्राप्ति सिद्धि श्रीपा०ऊर्ध्वभागे। ह्रीं श्रीं सर्वकामा सिद्धि श्रीपादुकां पूजयामि-अधोभागे।

तत्पश्चात् भूपुर की द्वितीय रेखा में पश्चिमादि दिशाओं में निम्नलिखित मन्त्रों से ब्राह्मी आदि ८ मातृकाओं का पूजन करना चाहिए, यथा :

ह्रीं श्रीं ब्राह्मी मातृका श्रीपादुकां पूजयामि-पश्चिमे। ह्रीं श्रीं माहेश्वरी मातृका श्रीपा० वायव्ये। ह्रीं श्रीं कौमारी मातृका श्रीपा० उत्तरे। ह्रीं श्रीं वैष्णवी मातृका श्रीपा० ईशान्ये। ह्रीं श्रीं वाराही मातृका श्रीपा० पूर्वे। ह्रीं श्रीं इन्द्राणी मातृका श्रीपा० आग्नेये। ह्रीं श्रीं चामुण्डा मातृका श्रीपा० दक्षिणे। ह्रीं श्रीं महालक्ष्मी मातृका श्रीपादुकां पूजयामि-नैर्ऋत्ये।

इसके बाद भूपुर की तृतीय रेखा में—दिशाओं, ऊर्ध्व एवं अधोभाग में निम्न-लिखित मन्त्रों से क्षोभण आदि १० मुद्राओं का पूजन करना चाहिए, यथा :

ह्रीं श्रीं क्षोभणमुद्रा श्रीपादुकां पूजयामि। ह्रीं श्रीं द्रावणमुद्रा श्रीपा०। ह्रीं श्रीं आकर्षणमुद्रा श्रीपा०। ह्रीं श्रीं वश्यमुद्रा श्रीपा०। ह्रीं श्री उन्मादमुद्रा श्रीपा०। ह्रीं श्रीं महांकुशामुद्रा श्रीपा०। ह्रीं श्रीं खेचरीमुद्रा श्रीपा०। ह्रीं श्री बीजमुद्रा श्रीपा०। ह्रीं श्रीं योनिमुद्रा श्रीपा०। ह्रीं श्रीं त्रिखण्डामुद्रा श्रीपादुकां पूजयामि।

इस प्रकार प्रथम आवरण का पूजन कर क्षोभमुद्रा दिखाकर—"त्रैलोक्यमोहनेचक्रे इमाः प्रकट योगिन्यः पूजितास्तर्पिता सुप्रदाः सन्तु"—यह प्रार्थना कर मूलमन्त्र से बिन्दु पर पुष्पाञ्जलि चढ़ानी चाहिए।

क्षोभ मुद्रा का लक्षण :

मध्यमां मध्यमे कृत्वा कनिष्ठांगुष्ठरोधिते।
तर्जन्यौ दण्डवत् कृत्वा मध्यमोपर्यनामिके॥
क्षोभाभिधानमुद्रेयं सर्वक्षोभकारिणी॥

षोषशारे पश्चिमादिविलोमेन क्रमादिमाः॥ ८९॥
कामाकर्षणिकात्वाद्या बुद्ध्याकर्षणिका ततः।
अहंकाराकर्षिणी च शब्दाकर्षणिका पुनः॥ ९०॥
स्पर्शाकर्षणिकातद्वद्रूपाकर्षणिकापि च।
रसाकर्षणिका चान्यागन्धाकर्षणिकातथा॥ ९१॥
चित्ताकर्षणिका चापि धैर्य्याकर्षणिकापरा।
नामाकर्षणिका चापि बीजाकर्षणिका तथा॥ ९२॥
अमृताकर्षणी चान्या स्मृत्याकर्षणिका तथा।
शरीराकर्षणी चैवमात्माकर्षणिका परा॥ ९३॥
सर्वाशापूरके चक्रे षोडशस्वरसंयुते।
गुप्ताएतास्तुयोगिन्यः पूजिताः संविदं वदेत्॥ ९४॥
दर्शयेद्द्राविणीं मुद्रां द्वितीयावरणार्चने।

द्वितीय आवरण का पूजन : फिर षोडशदल में पश्चिम से प्रारम्भ कर विलोम क्रम से इन १६ शक्तियों का पूजन करना चाहिए—१. कामाकर्षणिका, २. बुद्ध्याकर्षणिका, ३. अहंकाराकर्षिणी, ४. शब्दाकर्षणिका, ५. स्पर्शाकर्षणिका, ६. रूपाकर्षणिका, ७. रसाकर्षणिका, ८. गन्धाकर्षणिका, ९. चित्ताकर्षणिका, १०. धैर्य्याकर्षणिका, ११. नामाकर्षणिका, १२. बीजाकर्षणिका, १३. अमृताकर्षणी, १४. स्मृत्याकर्षणिका, १५. शरीराकर्षणी एवं १६. आत्माकर्षणिका।

तत्पश्चात् "सर्वाशापूरके चक्रे एताः षोडशगुप्त योगिन्यः पूजितास्तर्पिताः सन्तु" यह कहना चाहिए और द्वितीय आवरण की पूजा के बाद द्राविणीमुद्रा दिखलानी चाहिए।

नपश्चिमादिषोडशकामाकर्षणाद्याःशक्तीःपूजयेत्। ह्रींश्रींकामाकर्षणीशक्तिश्रीपा०इत्यादि०। एवंद्वितीयावरणंसम्पूज्यसर्वाशापूरकेचक्रएताःषोडशगुप्तयोगिन्यःपूजितास्तर्पिताःसंवित्त्युक्त्वा॥ ८८-९४॥

टिप्पणी : पूजाविधि : द्वितीय आवरण में षोडषदल में पश्चिम से प्रारम्भ कर विपरीत क्रम से निम्नलिखित मन्त्रों से कामाकर्षणिका आदि १६ शक्तियों का पूजन करना चाहिए, यथा :

ह्रीं श्रीं कामाकर्षणीशक्ति श्रीपादुकां पूजयामि। ह्रीं श्रीं बुद्ध्याकर्षणीशक्ति श्रीपा०। ह्रीं श्रीं अहंकाराकर्षणीशक्ति श्रीपा०। ह्रीं श्रीं शब्दाकर्षणीशक्ति श्रीपा०। ह्रीं श्रीं स्पर्शाकर्षणीशक्ति श्रीपा०। ह्रीं श्रीं रूपाकर्षणीशक्ति श्रीपा०। ह्रीं श्रीं रसाकर्षणीशक्ति श्रीपा०। ह्रीं श्रीं गन्धाकर्षणीशक्ति श्रीपा०। ह्रीं श्रीं चित्ताकर्षणीशक्ति श्रीपा०। ह्रीं श्रीं धैर्य्याकर्षणीशक्ति श्रीपा०। ह्रीं श्रीं नामाकर्षणीशक्ति श्रीपा०। ह्रीं श्रीं बीजाकर्षणीशक्ति श्रीपा०। ह्रीं श्रीं अमृताकर्षणीशक्ति श्रीपा०। ह्रीं श्रीं स्मृत्याकर्षणीशक्ति श्रीपा०। ह्रीं श्रीं शरीराकर्षणीशक्ति श्रीपा०। ह्रीं श्रीं आत्माकर्षणीशक्ति श्रीपादुकां पूजयामि।

इस प्रकार द्वितीय आवरण का पूजन कर "सर्वाशा पूरके चक्रे एताः षोडशगुप्त योगिन्यः पूजितास्तर्पिता सन्तु"—यह प्रार्थना कर पुष्पाञ्जलि अर्पित कर द्राविणी मुद्रा दिखलानी चाहिए।

द्राविणी मुद्रा का लक्षण : क्षोभाभिधानमुद्रायाः मध्यमे सरले यदा।
क्रियते परमेशानि तदा विद्राविणी मता॥

काद्यष्टवर्गसंयुक्तेष्टारे पूज्या इमाःपुनः॥ ९५॥
पूर्वादिष्वनुलोमेन बन्धूककुसुमप्रभाः।
अनङ्गकुसुमात्वाद्या द्वितीयानंगमेखला॥ ९६॥
अनङ्गमदनातद्वदनंगमदनातुरा।
अनंगरेखाचानंगवेगानंगांकुशापुनः॥ ९७॥
अनंगमालिनीत्यष्टौ पाशांकुशलसत्कराः।
सर्वसंक्षोभणे चक्रे देव्यो गुप्ततराभिधाः॥ ९८॥
पूजिताः सत्वितिप्रोच्याकर्षमुद्रां प्रदर्शयेत्।

तृतीय आवरण का पूजन : कवर्ग आदि ८ वर्गों से युक्त अष्टदल में पूर्व आदि दिशाओं में अनुलोम क्रम से बन्धूकपुष्प के समान आभावाली, हाथों में पाश एवं अंकुश धारण करने वाली अनंगकुसुमा आदि का पूजन करना चाहिए। १. अनङ्गकुसुमा,

---

द्राविणीमुद्रांदर्शयेत्। सागदिता॥ ९५॥ अष्टवर्गान्वितेष्टारेपूर्वाद्यनुलोमेनानंगकुसुमाद्याःपूजयेत्। ह्रांश्रींअनंगकुसुमाश्रीपा०। एवंतृतीयावरणंसम्पूज्यसर्वसंक्षोभणेचक्रेएताअष्टौगुप्ततरयोगिन्यःपूजिताःसन्तुः इत्युक्त्वाकर्षणमुद्रांदर्शयेत्। ततश्चतुर्थावरणेचतुर्दशारेकादिचतुर्दशार्णयुते॥ ९६-९९॥

२. अनंग मेखला, ३. अनंगमदना, ४. अनंगमदनातुरा, ५. अनंगरेखा, ६. अनंगवेगा, ७. अनंगांकुशा, एवं ८. अनंगमालिनी का पूजन करना चाहिए। फिर 'सर्वसंक्षोभणे-चक्रे एता अष्टौ गुप्ततर योगिन्यः पूजिता सन्तु'—ऐसा कहकर आकर्षणी मुद्रा दिखलानी चाहिए।

टिप्पणी : पूजाविधि : तृतीय आवरण में अष्टदल में पूर्व आदि दिशाओं में अनुलोम क्रम से अनंगकुसुमा आदि ८ गुप्ततर योगिनियों का ध्यान कर निम्नलिखित मन्त्रों से उनकी पूजा करनी चाहिए।

ध्यान : सर्वसंक्षोभणे चक्रे बंधूक कुसुम प्रभाः।
अनंगकुसुमाद्यष्टौ पाशांकुशलसत्कराः॥

पूजनमन्त्र : ह्रीं श्रीं अनंगकुसुमा श्रीपादुकां पूजयामि। ह्रीं श्रीं अनंगमेखला श्रीपा०। ह्रीं श्रीं अनंगमदना श्रीपा०। ह्रीं श्रीं अनंगमदनातुरा श्रीपा०। ह्रीं श्रीं अनंगरेखा श्रीपा०। ह्रीं श्रीं अनंगवेगा श्रीपा०। ह्रीं श्रीं अनंगांकुशा श्रीपा०। ह्रीं श्रीं अनंगमालिनी श्रीपादुकां पूजयामि।

इस रीति से तृतीय आवरण का पूजनकर–"सर्वसंक्षोभणे चक्रे एता अष्टौ गुप्ततर योगिन्यः पूजिताः सन्तु" ऐसी प्रार्थनाकर पुष्पाञ्जलि देकर आकर्षणीमुद्रा दिखलानी चाहिए।

आकर्षणीमुद्रा का लक्षण : मध्यमातर्जनीभ्यां तु कनिष्ठानामिके समे।
अंकुशाकाररूपाभ्यां मध्यमे परमेश्वरि॥
इयमाकर्षणी मुद्रा त्रैलोक्याकर्षणे क्षमा॥

चतुर्दशारे सम्पूज्याःकादिढांतार्णराजिते॥ ९९॥
इद्रगापनिभा रम्या मदोन्मत्ताः सभूषणाः।
बिभ्रत्यो दर्पणं पानपात्रं पाशांकुशावपि॥ १००॥
पश्चिमादिविलोमेन चतुर्थावरणस्थिताः।
सर्वसंक्षोभिणीपूर्वा सर्वविद्राविणीपरा॥ १०१॥
सर्वाकर्षिणिका चान्या सर्वाह्लादकरी पुनः।
सर्वसम्मोहिनी चापि सर्वस्तंभनकारिणी॥ १०२॥
सर्वजृम्भणिकानामाष्टमीसर्ववशंकरी।
सर्वरंजिनिका चापि सर्वोन्मादिनिका तथा॥ १०३॥

इन्द्रगोपेत्यादि। उक्तरूपाःदर्पणपाशधरवामकराः–पानपात्रांकुशधरदक्षकराः॥ १००॥ सर्वसंक्षोभिण्याद्याश्चतुर्दशशक्तयः शक्तिपदादिकाःपश्चिमादिविलोमतःपूज्याः। ह्रींश्रींकं-

सर्वार्थसाधिनी चाथ सर्वसम्पत्तिपूरणी ।
सर्वमन्त्रमयी चांत्या सर्वद्वंद्वक्षयंकरी ॥ १०४ ॥
मूलेन पुष्पं दत्त्वाथ वश्यमुद्रां प्रदर्शयेत् ।
सर्वसौभाग्यदे चक्रे सम्प्रदायाभिधा इमाः ॥ १०५ ॥
योगिन्यः पूजितास्तृप्तामंगलानि दिशन्तु मे ।

चतुर्थ आवरण का पूजन : ककार से ठकार तक के वर्णों से सुशोभित चतुर्दश दल में पश्चिम दिशा से प्रारम्भ कर विलोमक्रम से— इन्द्रगोप सदृश आभावाली, मदोन्मत्त, आभूषणों से अलंकृत तथा हाथों में क्रमशः दर्पण, पानपात्र, पाश एवं अंकुश धारण करने वाली १४ शक्तियों का पूजन करना चाहिए ।

सर्वसंक्षोभिणी, सर्वविद्रावणी, सर्वाकर्षणी, सर्वाह्लादकरी, सर्वसंमोहिनी, सर्वस्तंभनकारिणी, सर्वजृंभिणी सर्ववशंकरी, सर्वरंजिनी, सर्वोन्मादिनी, सर्वार्थसाधिनी, सर्वसम्पत्तिपूरिणी, सर्वमन्त्रमयी एवं सर्वद्वन्द्वक्षयंकरी—ये १४ शक्तियाँ होती हैं ।

फिर मूलमन्त्र से पुष्पाञ्जलि देकर वश्य मुद्रा दिलानी चाहिए । तथा "सर्वसौभाग्यदे चक्रे इमाश्चतुर्दश संप्रदाययोगिन्यः पूजिता सन्तु'—ऐसी प्रार्थना करनी चाहिए ।

टिप्पणी : *जाविधि* : "इन्द्रगोपनिभारम्या मदोन्मत्ताः सभूषणाः ।
विभ्रत्यो दर्पणं पानपात्रं पाशांकुशावपि ॥

ऐसा ध्यान कर चतुर्थ आवरण में चतुर्दशदल पश्चिम से प्रारम्भ कर विलोमक्रम से सर्वसंक्षोभिणी आदि १४ सम्प्रदाय योगिनियों का निम्नलिखित मन्त्रों से पूजन करना चाहिए, यथा :

ह्रीं श्रीं कं सर्वसंक्षोभिणी शक्ति श्रीदुकां पूजयामि । ह्रीं श्रीं खं सर्वविद्रावणी शक्ति श्रीपा० । ह्रीं श्रीं गं सर्वाकर्षणी शक्ति श्रीपा० । ह्रीं श्रीं घं सर्वाह्लादकरी शक्ति श्रीपा० । ह्रीं श्रीं ङं सर्वसंमोहिनी शक्ति श्रीपा० । ह्रीं श्रीं चं सर्वस्तम्भनकरी शक्ति श्रीपा० । ह्रीं श्रीं छं सर्वजृम्भिणी शक्ति श्रीपा० । ह्रीं श्रीं जं सर्ववशंकरी शक्ति श्रीपा० । ह्रीं श्रीं झं सर्वरंजिनी शक्ति श्रीपा० । ह्रीं श्रीं ञं सर्वोन्मादिनी शक्ति श्रीपा० । ह्रीं श्रीं टं सर्वार्थसाधिनी शक्ति श्रीपा० । ह्रीं श्रीं ठं सर्वसम्पत्तिपूरिणी शक्ति श्रीपा० । ह्रीं श्रीं डं सर्वमन्त्रमयी शक्ति श्रीपा० । ह्रीं श्रीं ढं सर्वद्वन्द्वक्षयंकरी शक्ति श्रीपादुकां पूजयामि ।

इस प्रकार उक्त शक्तियों का पूजन कर "सर्वसौभाग्यदे चक्रे इमाश्चतुर्दशसम्प्रदाय-

---

संक्षोभणीशक्तिश्रीपा० इत्यादि० ॥ १०१-१०४ ॥ एवंचतुर्थावरणमाराधमूलं ततःसर्वसौभाग्यदेचक्रेइमाश्चतुर्दशसम्प्रदाययोगिन्यःपूजिताःसन्वितचोक्त्वापुष्पाञ्जलिदत्त्वावश्य -

योगिन्यः पूजिता सन्तुः" ऐसी प्रार्थना कर पुष्पाञ्जलि चढ़ानी चाहिए, और इसके बाद वश्य मुद्रा दिखलानी चाहिए।

वश्यमुद्रा का लक्षण :

पुटाकारौ करौ कृत्वा तर्जन्यावंकुणाकृती।
परिवर्त्य क्रमेणैव मध्यमे तदधोगते॥
क्रमेण देवि तेनैव कनिष्ठानामिकादयः।
संयोज्य निविडाः सर्वा अंगुष्ठावग्रदेशतः॥
मुद्रेयं परमेशानि सर्ववश्यकरी मताः॥

सम्प्रार्थ्येतिदशारेऽथणादिभांतार्णभूषिते॥ १०६॥
सम्पूज्या दशयोगिन्यो जपापुष्पसमप्रभाः।
स्फुरन्मणिविभूषाढ्यः पाशांकुशलसत्कराः॥ १०७॥
पश्चिमादिविलोमेन सावकाभीष्टसिद्धिदाः।
सर्वसिद्धिप्रदा पूर्वा सर्वसंपत्प्रदाततः॥ १०८॥
सर्वप्रियंकरी चान्या सर्वमंगलकारिणी।
सर्वकामप्रदापश्चात्सर्वदुःखविमोचनी॥ १०९॥
सर्वमृत्युप्रशमनीसर्वविघ्ननिवारिणी।
सर्वांगसुन्दरी चान्या सर्वसौभाग्यदायिनी॥ ११०॥
विन्दो पुष्पं समर्प्याथोन्मादमुद्रां प्रदर्शयेत्।
सर्वार्थसाधके चक्रे पञ्चमे सर्वतः स्थिताः॥ १११॥
पूजिताः कुलयोगिन्यः सन्तु मेभीष्टसिद्धिदाः।

पंचम आवरण का पूजन : णकार से भकार तक के वर्णों से सुशोभित दशदल में जपाकुसुम के समान आभावाली, चमकीले आभूषणों से अलंकृत तथा हाथों में पाश एवं अंकुश धारण करनेवाली १० कुल योगिनियों का पश्चिम से प्रारम्भ कर विलोम क्रम से पूजन करना चाहिए।

सर्वसिद्धिप्रदा, सर्वसंपत्प्रदा, सर्वप्रियंकरी, सर्वमंगलकारिणी, सर्वकामप्रदा, सर्वदुःख-विमोचिनी, सर्वमृत्युप्रशमनी, सर्वविघ्ननिवारिणी, सर्वाङ्गसुन्दरी तथा सर्वसौभाग्य-दायिनी—ये १० कुलयोगिनियाँ हैं।

मुद्रांदर्शयेत्। णादिदशवर्णयुतेदशारेपश्चिमादिविलोमक्रमेणसर्वसिद्धिप्रदाद्यादेवीपदाद्यादशपूज-येत्। ह्रीं श्रीं गंसर्वसिद्धिप्रदादेवीश्रीपा० ॥ १०५-१०८ ॥ एवंपञ्चमावरणंसम्पूज्यपुष्पाञ्जलिं-दत्त्वावज्रनाथसाधकेचक्रेइमादशकुलयोगिन्यः पूजिताःसन्तिसम्प्रार्थ्योन्मादमुद्रांदर्शयेत् ॥ १०९-१११ ॥

बिन्दु पर पुष्पाञ्जलि चढ़ाकर उन्माद मुद्रा दिखलानी चाहिए। तथा "सर्वार्थ-साधके चक्रे इमाः दश कुलयोगिन्यः पूजिताः सन्तुः"—ऐसी प्रार्थना करनी चाहिए।

टिप्पणी : पूजाविधि : "सिद्धिदा दशयोगिन्यो जपापुष्पसमप्रभाः।
स्फुरन्मणि विभूषाढ्याः पाशांकुशलसत्कराः॥"

ऐसा ध्यान कर दशदल में पश्चिम से प्रारम्भ कर विलोम क्रम से निम्नलिखित मन्त्रों से सर्वसिद्धिप्रदा आदि १० कुलयोगिनियों का पूजन करना चाहिए, यथा—

ह्रीं श्री णं सर्वसिद्धिप्रदा देवी श्रीपादुकां पूजयामि। ह्रीं श्री तं सर्वसंपत्प्रदा देवी श्रीपा०। ह्रीं श्रीं थं सर्वप्रियंकरी देवी श्रीपा०। ह्रीं श्रीं दं सर्वमङ्गलकरी देवी श्रीपा०। ह्रीं श्रीं धं सर्वकामप्रदा देवी श्रीपा०। ह्रीं श्री नं सर्वदुःखविमोचिनी देवी श्रीपा०। ह्रीं श्रीं पं सर्वमृत्युप्रशमनी देवी श्रीपा०। ह्रीं श्री फं सर्वविघ्ननिवारिणी देवी श्रीपा०। ह्रीं श्रीं बं सर्वाङ्गसुन्दरी देवी श्रीपा०। ह्रीं श्रीं भं सर्वसौभाग्यदायिनी देवी श्रीपादुकां पूजयामि।

इस प्रकार कुल योगिनियों का पूजन कर "सर्वार्थ साधके चक्रे इमा दश कुल-योगिन्यः पूजिता सन्तुः" कहकर पुष्पाञ्जलि चढ़ानी चाहिए। और फिर उन्माद मुद्रा दिखलानी चाहिए।

उन्मादमुद्रा का लक्षण :

संमुखौ तु करौ कृत्वा मध्यमामध्यमेनुजे।
अनामिके तु सरले तदधस्तर्जनी द्वयम्॥
दण्डाकारौ ततोऽङ्गुष्ठौ मध्यमानस्व देशगौ।
मुद्रैषोन्मादिनी नाम बलेदिनी सर्वयोषिताम्॥
इतिसम्प्रार्थ्य सम्पूज्य मादिक्षांतविभूषिते॥ ११२॥
परे दशारे योगिन्यउद्यद्भास्करसन्निभाः।
ज्ञानमुद्राटंकपाशवरधारिकराम्बुजा॥ ११३॥
सर्वज्ञासर्वशक्तिश्चसर्वैश्वर्य्यफलप्रदा।
सर्वज्ञानमयीपश्चात्सर्वव्याधिविनाशिनी॥ ११४॥
सर्वाधारस्वरूपा च सर्वपापहरापरा।
सर्वानन्दमयीदेवी सर्वरक्षास्वरूपिणी॥ ११५॥

ततोपरेदशारेमादिवर्णयुतेज्ञानमुद्रावरदहस्ताः टंकपाशवामकराः उद्यद्रविनिभाः सर्वज्ञादेव्याद्या दश पूजयेत्। ह्रींश्रींमं सर्वज्ञादेवीश्रीपा०॥ ११२-११५॥

सर्वेप्सितार्थफलदा पश्चिमादिविलोमगाः ।
पुष्पं मूलेन दत्त्वाथो कुर्य्यान्मुद्रांमहांकुशाम् ॥ ११६ ॥
सर्वरक्षाकरे चक्रे निगर्भाःपूजिता इमाः ।
योगिन्यस्तर्पिताः सन्तुममाभीष्टफलप्रदाः ॥ ११७ ॥

षष्ठ आवरण का पूजन : मकार से क्षकार के १० वर्णों से सुशोभित द्वितीय दशदल में उदीयमान सूर्य जैसी आभावाली तथा हाथों में ज्ञानमुद्रा, टंक, पाश एवं वरमुद्रा धारण करने वाली सर्वज्ञा आदि १० योगिनियों का पश्चिम से प्रारम्भ कर विलोमक्रम से पूजन करनी चाहिए ।

सर्वज्ञा, सर्वशक्ति, सर्वैश्वर्यफलप्रदा, सर्वज्ञानमयी, सर्वव्याधिविनाशिनी, सर्वाधारस्वरूपा, सर्वपापहरा, सर्वानन्दमयी, सर्वरक्षा स्वरूपिणी एवं सर्वेप्सितार्थफलदा—ये १० योगिनियाँ होती हैं ।

मूल मन्त्र से पुष्पाञ्जलि चढ़ाकर महांकुशा मुद्रा दिखलानी चाहिए । तथा "सर्वरक्षाकरे चक्रे इमा दशनिगर्भयोगिन्यः पूजिताः सन्तु"—ऐसी प्रार्थना करनी चाहिए ।

टिप्पणी : पूजा विधि :

"सर्वरक्षाकरे चक्रे उद्यद्भास्कर सन्निभाः ।
ज्ञामुद्राटंकपाशवरधारिकराम्बुजाः ॥"

—ऐसा ध्यान कर द्वितीय दशदल में पश्चिम से प्रारम्भ कर विलोम क्रम से निम्नलिखित मन्त्रों से सर्वज्ञा देवी आदि १० निगर्भ योगिनियों का पूजन करना चाहिए, यथा :

ह्रीं श्रीं मं सर्वज्ञा देवी श्रीपादुकां पूजयामि । ह्रीं श्रीं यं सर्वशक्ति देवी श्रीपा० । ह्रीं श्रीं रं सर्वैश्वर्यफलप्रदा देवी श्रीपा० । ह्रीं श्रीं लं सर्वज्ञानमयी देवी श्रीपा० । ह्रीं श्रीं वं सर्वव्याधिविनाशिनी देवी श्रीपा० । ह्रीं श्रीं शं सर्वाधारस्वरूपा देवी श्रीपा० । ह्रीं श्रीं षं सर्वपापहरा देवी श्रीपा० । ह्रीं श्रीं सं सर्वानन्दमयी देवी श्रीपा० । ह्रीं श्रीं हं सर्वरक्षास्वरूपिणी देवी श्रीपा० । ह्रीं श्रीं क्षं सर्वेप्सितार्थफलदा देवी श्रीपादुकां पूजयामि ।

इस रीति से उक्त योगिनियों का पूजन कर मूल मन्त्र से पुष्पाञ्जलि चढ़ाकर "सर्व रक्षाकरे चक्रे इमा दशनिगर्भयोगिन्यः पूजिताः सन्तु" यह प्रार्थना कर महांकुशा-मुद्रा दिखलानी चाहिए ।

एवषष्ठमावरणमभ्यर्च्यमूलेनपुष्पांजलिंदत्त्वासर्वरक्षाकरेचक्रेइमादशनिगर्भयोगिन्यः पूजिताः संत्वितिसम्प्रार्थ्यांकुशमुद्रांदर्शयेत् । ततोष्टारेरक्तवस्त्रबाणवरदत्तकराधनुर्द्विबाहवाम-

महाकुंशा मुद्रा का लक्षण :

अन्यास्त्वनामिका युग्ममध: कृत्त्वांकुशाकृति ।
तर्जन्यावपि तेनैव क्रमेण विनियोजयेत् ॥
इयं महांकुशामुद्रा सर्वकामार्थसाधिनी ॥

सम्प्राथ्यैंवमथाष्टारे दाडिमीपुष्पसन्निभाः ।
रक्तांशुकावनुर्वाणविद्यावरलसत्कराः ॥ ११८ ॥
अकाराद्यष्टवर्गाद्या पश्चिमादिविलोमताः ।
पूजयेत्पूर्वसम्प्रोक्ता बीजाद्या अष्टदेवताः ॥ ११९ ॥
वशिनी चापि कौमारीमोदिनी विमलारुणा ।
जयिनी चापि सर्वेशीकौलिनीत्युदिताःपुरा ॥ १२० ॥
सर्वरोगहरे चक्रे रहस्याःपूजितामया ।
तर्पिताः पूजिताःसन्त्विवत्युक्त्वा दद्यात्सुमाञ्जलिम् ॥ १२१ ॥
खेचरीं दर्शयेन्मुद्रां सुन्दरीं तोषयेत्ततः ।

सप्तम आवरण का पूजन : इसके बाद अष्टदल में दाडिमी पुष्प जैसी आभा वाली, लाल वस्त्रों से अलंकृत तथा हाथों में धनुष, बाण विद्या एवं वर धारण करने वाली, न्यासोक्त वशिनी आदि ८ देवियों का ध्यान कर अकार आदि ८ वर्गों में तथा पूर्वोक्त बीजों के साथ उक्त ८ देवियों का पश्चिम से प्रारम्भ कर विलोम क्रम से पूजन करना चाहिए ।

वशिनी, कौमारी, मोदिनी, विमला, अरुणा, जयिनी, सर्वेशी एवं कौलिनी—ये पूर्वोक्त ८ देवियाँ हैं । फिर 'सर्वरोग हरे चक्रे अष्टारे इमा रहस्ययोगिन्यः पूजिताः तर्पिताः सन्तु'—ऐसा कहकर पुष्पाञ्जलि चढ़ानी चाहिए । और फिर खेचरीमुद्रा दिखलानी चाहिए ।

टिप्पणी : पूजा विधि :

"सर्वरोग हरे चक्रे दाडिमी पुष्प सन्निभा ।
रक्तांशुकाधनुर्बाण विद्यावरलसत्कराः ॥"

—ऐसा ध्यान कर अष्टदल में पश्चिम से प्रारम्भ कर निम्नलिखित मन्त्रों से वशिनी आदि ८ योगिनियों का पूजन करना चाहिए, यथा :

ह्रीं श्रीं अं आं वशिनी वाग्देवता श्रीपादुकां पूजयामि । ह्रीं श्रीं इं ईं कौमारी

करान्यासं कृत्वाऽष्टवाशिन्याद्यानुक्तबीजपूर्विकायजेत् । ह्रांश्रींअंआं इंईं उंऊ ऋंॠं लृंॡं एंऐं ओंऔं अंअः वशिनीवाग्देवताश्रीपा० ॥ ११६-१२० ॥ एवसप्तमावरणमिष्ट्वासर्वरोगहरेचक्रे इमाअष्टारेरहस्ययोगिन्यःपूजेताःसंत्विति प्रार्थ्य०खेचरीमुद्रादर्शयत् ॥१२१-२२॥

वाग्देवता श्रीपा० । ह्रीं श्रीं उं ऊं मोहिनी वाग्देवता श्रीपा० । ह्रीं श्रीं ऋं ॠं विमला वाग्देवता श्रीपा० । ह्रीं श्रीं ऌं ॡं अरुणा वाग्देवा श्रीपा० । ह्रीं श्रीं एं ऐं जयिनी वाग्देवता श्रीपा० । ह्रीं श्रीं ओं औं सर्वेशी वाग्देवता श्रीपा० । ह्रीं श्रीं अं अः कौलिनी वाग्देवता श्रीपादुकां पूजयामि ।

इस रीति के उक्त योगिनियों का पूजन कर मूलमन्त्र से पुष्पाञ्जलि चढ़ाकर "सर्वरोगहरेचक्रे अष्टारे इमा रहस्ययोगिन्यः पूजिता सन्तु"—ऐसी प्रार्थना कर खेचरीमुद्रा दिखलानी चाहिए ।

खेचरीमुद्रा का लक्षण :

सव्यं दक्षिणहस्ते तु सव्यहस्ते तु दक्षिणम् ।
बाहू कृत्त्वा महादेवि हस्तौ संपरिवर्त्य च ॥
कनिष्ठानामिके देवि युक्ता तेन क्रमेण तु ।
तर्जनीभ्यां समाक्रान्ते सर्वोर्ध्वमपि मध्यमे ॥
अंगुष्ठौ तु महादेवि सरलावपि कारयेत् ।
इयं सा खेचरी नाम मुद्रा सर्वोत्तमोत्तमा ॥

त्रिकोणेत्वकथाद्यर्णरचिते पश्चिमादितः ॥ १२२ ॥
यजेत्कामेशकामेश्यौर्वाणांश्चापं च पाशकम् ।
अंकुशं चानुलोमेन चतुर्दिक्षु समाहितः ॥ १२३ ॥
जम्भमोहवशस्तम्भपदाद्यान्बीजपूर्वकान् ।
बाणबीजानि बाणादौ मीनकृष्णौ सबिन्दुकौ १२४ ॥
चापादौ पाशकस्यादौ पाशमाये नियोजयेत् ।
अंकुशत्वंकुशस्यादौ स्मर्तव्या हेतिदेवताः ॥ १२५ ॥
नानारत्नविभूषाढ्याः स्वस्वायुधसमन्विताः ।
विद्युद्दामसमानांग्यो यौवनोन्मदसुन्दराः ॥ १२६ ॥

ततोऽकथादिवर्णरचितेत्रिकोणेपश्चिमाद्यनुलोमेनचतुर्दिक्षुस्वस्वबीजपूर्वकान् जम्भमोहवशस्तम्भविशेषणविशिष्टान्कामेश्वरकामेश्वर्यौबाणधनुःपाशांकुशान्पूजयेत् । बीजान्याह । बाणेति । बाणादौपञ्चबाणबीजानि । चापादौसबिन्दुमीनकृष्णौधकारथकारौ । पाशमायेआंह्रीमितिपाशादौ । अंकुशस्यादौत्वंकुशक्रं मिति । हेतिदेवताआयुधदेवताः ॥ १२३-१२५ ॥ तासांध्यानमाह । नानेति । स्वस्वायुधानिबाणादीनितैःसंयुतावाणधराइत्यादि० । प्रयोगोयथा—यांरांलांवांशांद्रांद्रींक्लींब्लूंसःकामेश्वरकामेश्वरीजम्भनबाणश्रीपा० पश्चिमे । धंथं कामेश्वरकामेश्वरीमोहनधनुःश्रीपा०उत्तरे । आंह्रींकामेश्वरकामेश्वरीवशीकरणपाशश्रीपा०पूर्वे । क्रौंकामेश्वरकामेश्वरीस्तम्भनांकुशश्रीपा०दक्षिणे ॥ १२६ ॥

अग्न्यादिकोणत्रितये पूज्याः कूटत्रयादिकाः ।
कामेश्वरी च वज्रेशी तृतीया भगमालिनी ॥ १२७ ॥
कामेश्वरीरुद्रशक्तिःशरच्चंद्रशतप्रभा ।
स्मर्तव्या दधती हस्तैःपुस्तकाभीवरस्रजः ॥ १२८ ॥
वज्रेश्वरीविष्णुशक्तिरुद्यन्मार्तण्डसप्रभा ।
इक्षुचापवराभीतिपुष्पबाणलसत्करा ॥ १२९ ॥
भगमालाब्रह्मशक्तिस्तप्तहाटकसप्रभा ।
ज्ञानमुद्रां वरं पाशमंकुशं दधतीकरैः ॥ १३० ॥
एवं त्रिकोणं सम्पूज्य यच्छेत्पुष्पाञ्जलिं ततः ।
बीजमुद्रां प्रदर्श्याथ प्रार्थयेत्सुन्दरीमिदम् ॥ १३१ ॥
सर्वसिद्धिप्रदे चक्रे योगिन्यःपूजितामया ।
दिशंत्वतिरहस्याख्या मङ्गलं मे निरन्तरम् ॥ १३२ ॥

अष्टम आवरण का पूजन : अ, क, थ वर्णों से विरचित त्रिकोण में पश्चिमादि अनुलोम क्रम से चारों दिशाओं में एकाग्रचित्त होकर अपने-अपने बीजों के साथ जंभ, मोह, वश एवं स्तंभ संज्ञक कामेश्वर एवं कामेश्वरी के बाण, धनु, पाश एवं अंकुशों का पूजन करना चाहिए। बाण के पहिले द्र बाण बीज, चाप के पहिले सानुस्वार मीन कृष्ण (धं थं), पाश के पहिले पाश एवं माया बीज (आं ह्रीं) तथा अंकुश के पहिले अंकुश बीज (क्रों) लगाना चाहिए।

फिर अनेक रत्नों से सुशोभित, अपने आयुधों सहित, बिजली के समान कान्तिमान् अंगों वाली तथा यौवन के उन्माद से मन्थर गति वाली आयुध देवियों का स्मरण करना चाहिए।

आग्नेय आदि तीन कोणों में कूटत्रय सहित कामेश्वरी, वज्रेशी एवं भगमालिनी का पूजन करना चाहिए।

अग्नीत। अग्नेदक्षिणकामकोणेषुकूटत्रयपूर्वं । रुद्रविष्णुब्रह्मणांशक्तयश्चतिस्रःकामेश्वरीवज्रेश्वरीभगमालिनीसंज्ञाःपूज्याः ॥ १२७ ॥ तासांध्यानान्याहश्लोकत्रयेण । कामेतौ वामयःपुस्तकाभये । वराक्षमालेदक्षयोः । उद्यन्मार्तण्डभासुरतनुसमानप्रभायस्याः । वरपुष्पबाणेदक्षयोः । इक्षुधनुरभयेवामयोः । भगेति । हाटककनकांतत्तुल्यकान्तिः । ज्ञानमुद्रावरौदक्षयोः । पाशांकुशौवामयोः ॥ १२८-१३० ॥ प्रयोगायथा–कएईलह्रींकामरूपपीठेकामेश्वरीरुद्रशक्तिश्रीपा०। हसकलह्रींपूर्णगिरिपीठेवज्रेश्वरीविष्णुशक्तिश्रीपा०। सकलह्रीजालंधरपीठेभगमालिनीब्रह्मशक्तिश्रीपा० । एवमष्टमावरणमिष्ट्वासर्वसिद्धिप्रदेचक्रेमूलेनपुष्पाञ्जलिंदत्त्वाइमाअतिरहस्ययोगिन्यःपूजिताःसंत्वतिसंप्रार्थ्यबीजमुद्रांदर्शयेत् ॥ १३१-३२ ॥

शरदकालीन चन्द्रमा जैसी आभावाली तथा अपने हाथों में पुस्तक, अभय, वर एवं माला धारण करनेवाली रुद्र की शक्ति कामेश्वरी का स्मरण करना चाहिए।

उदीयमान सूर्य जैसी आभावाली तथा इक्षुचाप, वर, अभय एवं पुष्पबाण से सुशोभित हाथोंवाली विष्णु की शक्ति वज्रेश्वरी का स्मरण करना चाहिए।

तपे हुए सुवर्ण जैसी आभावाली, तथा हाथों में ज्ञानमुद्रा, वर, पाश एवं अंकुश धारण करने वाली ब्रह्मा की शक्ति भगमाला का स्मरण करना चाहिए।

इस प्रकार त्रिकोण का पूजन कर पुष्पाञ्जलि समर्पित करनी चाहिए, और फिर बीजमुद्रा दिखाकर "सर्वसिद्धिप्रदेचक्रे इमा अतिरहस्य योगिन्यः पूजिता मे निरन्तरं मंगलं दिशन्तु"—ऐसी प्रार्थना करनी चाहिए।

टिप्पणी : पूजाविधि : "नानारत्न विभूषाढ्याः स्वस्वायुध समन्विताः।
विद्युद्दामसमानांग्यो यौवनोन्मदमन्थराः ॥"

ऐसा ध्यान कर अ क थ वर्णों से रचित त्रिकोण के चारों ओर पश्चिम से प्रारम्भ का अनुलोम क्रम से अपने अपने बीजों के साथ निम्नलिखित मन्त्रों से कामेश्वर एवं कामेश्वरी के बाण आदि का पूजन करना चाहिए, यथा :

यां रां लां वां शां द्रां द्रीं क्लीं ब्लूं सः कामेश्वरकामेश्वरी जंभनबाण श्री पादुकां पूजयामि-पश्चिमे। धं थं कामेश्वरकामेश्वरी मोहनधनु श्रीपादुकां पूजयामि-उत्तरे। आं ह्रीं कामेश्वरकामेश्वरी वशीकरणपाश श्रीपा० पूर्वे। क्रों कामेश्वरकमेश्वरी स्तंभनांकुश श्रीपादुकां पूजयामि-दक्षिणे।

फिर त्रिकोण के आग्नेय आदि कोणों में कामेश्वरी आदि का ध्यान करना चाहिए, यथा :

कामेश्वरी रुद्रशक्तिः शरच्चन्द्रशतप्रभा। स्मर्तव्या दधतीहस्तैः पुस्तकाऽभीवरस्रजः ॥
वज्रेश्वरी विष्णुशक्तिरुद्यन्मार्तण्डसप्रभा। इक्षुचापवराभीतिपुष्पबाणलसत्करा ॥
भगमालाब्रह्मशक्तिस्तप्तहाटकसप्रभा। ज्ञानमुद्रां प्रदर्श्याथ प्रार्थयेत्सुन्दरीमिदम् ॥

इस प्रकार ध्यान कर निम्नलिखित मन्त्रों से कामेश्वरी आदि शक्तियों का पूजन करना चाहिए, यथा :

कएईल ह्रीं कामरूपपीठे कामेश्वरी रुद्रशक्ति श्रीपादुकां पूजयामि। हसकहल ह्रीं पूर्णगिरिपीठे वज्रेश्वरी विष्णुशक्ति श्रीपा०। सकल ह्रीं जालन्धरपीठे भगमालिनी ब्रह्मशक्ति श्रीपादुकां पूजयामि।

इस प्रकार पूजन करने के बाद मूलमन्त्र से पुष्पाञ्जलि चढ़ाकर "सर्वसिद्धिप्रदेचक्रे इमा अतिरहस्ययागिन्यः पूजिता निरन्तरं मे मङ्गलं दिशन्तु"—ऐसी प्रार्थनाकर बीज-मुद्रा दिखलानी चाहिए।

बीजमुद्रा का लक्षण :

परिवर्त्यकरौ स्पष्टावर्द्धचन्द्राकृती प्रिये । तर्जन्यंगुष्ठयुगलं युगपत्कारयेत्ततः ॥
अधः कनिष्ठावष्टब्धे मध्यमे विनियोजयेत् । तथैव कुटिले योज्ये सर्वाधस्तादनामिके ॥
बीजमुद्रेयमुदिता सर्वसिद्धिप्रदायिनी ॥

बिन्दौ सम्पूजयेत्पश्चाच्छ्रीमत्त्रिपुरसुदरीम् ।
मूलविद्यां समुच्चार्य्य ध्यात्वा पूर्वोक्तवर्त्मना ॥ १३३ ॥
सर्वानन्दमये चक्रे सर्वाभीष्टविधायिनीम् ।
परापररहस्याख्या योगिनी पूजितास्तुमे ॥ १३४ ॥
योनिमुद्रां प्रदर्श्याथ तर्पणं त्रिःसमाचरेत् ।
धूपं दीपं चनैवेद्यमन्नैर्नानाविधैर्दिशेत् ॥ १३५ ॥

नवम आवरण का पूजन : इसके बाद बिन्दु पर विधिवत् ध्यान कर पूर्वोक्त रीति से मूल विद्या बोलकर श्रीमत्त्रिपुर सुन्दरी का पूजन करना चाहिए। फिर 'सर्वानन्दमये चक्रे सर्वाभीष्टदायिनी परापर रहस्य योगिनी श्रीमत्त्रिपुरसुन्दरी पूजितास्तु', –ऐसी प्रार्थना कर योनिमुद्रा दिखाकर ३ बार तर्पण करना चाहिए, और फिर धूप, दीप एवं अनेक प्रकार के भोज्य पदार्थों को नैवेद्य के रूप में निवेदित करना चाहिए।

टिप्पणी : पूजाविधि : तरङ्ग ११ श्लोक ५१ में वर्णित भगवती के स्वरूप का ध्यान कर बिन्दु पर 'मूलं श्रीमत्त्रिपुर सुन्दरी श्रीपादुकां पूजयामि'—मन्त्र से श्रीविद्या का पूजन करना चाहिए।

फिर पुष्पाञ्जलि समर्पित कर 'सर्वानन्दमये चक्रे सर्वाभीष्टदायिनीपरापररहस्ययोगिनी-श्रीमत्त्रिपुरसुन्दरी पूजितास्तु'—ऐसी प्रार्थना कर महायोनिमुद्रा दिखलानी चाहिए।

महायोनिमुद्रा का लक्षण :

मध्यमे कुटिले कृत्वा तर्जन्युपरि संस्थिते । अनामिकामध्यगते तथैव हि कनिष्ठके ॥
सर्वा एकत्र संयोज्या अंगुष्ठ परिपीडिताः । एषा तु प्रथमामुद्रा महायोन्याभिधा मता ॥

फिर मूलमन्त्र से ३ बार तर्पण करके धूप, दीप आदि उपचारों से देवी का विधिवत् पूजन करना चाहिए।

वह्नि सम्पूज्य पूर्वोक्तविधिना तत्र सुन्दरीम् ।
आवाह्यजुहुयाद्द्रव्यं पञ्चविंशतिसंख्यया ॥ १३६ ॥

ततोमूलविद्यांपठित्वाध्यात्वाबिन्दौश्रीमत्त्रिपुरसुन्दरीश्रीपादुकांपूजयामीतियजेत् ॥१३३॥ एवंनवमावरणमाराध्यसर्वकामप्रदेचक्रे सर्वाभीष्टदायिनीपरापररहस्ययोगिनीश्रीमत्त्रिपुर-सुन्दरीपूजितास्त्वितिसम्प्रार्थ्ययानिमुद्राप्रदर्श्यत्रिस्तर्पयित्वाधूपदीपादीनदत्वाअग्नावा-वाह्यहुत्वोद्वासयेत् ॥ १३३-३६ ॥

हवन : पूर्वोक्त रीति से अग्नि का पूजन कर उसमें त्रिपुरसुन्दरी का आवाहन कर हव्यद्रव्य से २५ आहुतियाँ देनी चाहिए।

श्रीचक्रस्य बलिदद्याद्हुतशेषेन संयुतः।
ईशानाग्नेयनैर्ऋत्यवायुकोणेषु च क्रमात् ॥ ३७ ॥
बटुकस्य चयोगिन्याःक्षेत्रेशगणनाथयोः।
निजैमन्त्रैःस्वमुद्राभिःपूर्वसंकीर्तितैर्मया ॥ १३८ ॥
प्रदक्षिणानतीःकृत्वा मूलविद्यां ततो यजेत्।
एवं श्रीं सुन्दरीं नित्य पूजयन्विजितेन्द्रियः ॥ १३९ ॥
नवावृतियुतां सर्वान्कामानिष्टानवाप्नुयात्।

बलिदान : श्रीचक्र के ईशान, आग्नेय, नैर्ऋत्य एवं वायव्य कोण में हुतशेष द्रव्य से अपने-अपने मन्त्रों एवं मुद्राओं से बटुक, योगिनी, क्षेत्रपाल एवं गणपति को पूर्वोक्त रीति से बलि देनी चाहिए। फिर प्रदक्षिणा एवं नमस्कार कर मूलविद्या का जप करना चाहिए।

इस प्रकार जितेन्द्रिय साधक प्रतिदिन ९ आवरणों के साथ त्रिपुरसुन्दरी का पूजन करने से सब मनोरथों को प्राप्त करता है।

टिप्पणी : *बलिदान की विधि* : 'एह्येहि देवीपुत्र बटुकनाथकपिलजटाभारभासुर-त्रिनेत्रज्वालामुखसर्वविघ्नान्नाशय नाशय सर्वोपचारसहितं बलिं गृह्ण गृह्ण स्वाहा'—इस मन्त्र से तर्जनी एवं अंगूठा मिलाकर हुतशेष द्रव्य से ईशान कोण में बटुक को बलि देनी चाहिए।

तदनन्तर—'ऊर्ध्वं ब्रह्माण्डतो वा दिवि गगनतले भूतले निष्कले वा, पाताले वातले वा सलिलपवनयोर्यत्र कुत्र स्थिता वा। क्षेत्रे पीठोपपीठादिषु च कृतपदा धूपदीपादिकेन, प्रीता देव्यः सदा नः शुभबलि विधिना पातु वीरेन्द्रवन्द्याः ॥ यां योगिनीभ्यो नमः'—इस मन्त्र से अनामिका, कनिष्ठा एवं अंगुष्ठ के मिलाने से बनी मुद्रा द्वारा हुतशेष द्रव्य से आग्नेय कोण में योगिनियों को बलि देनी चाहिए।

तत्पश्चात्—'क्षां क्षीं क्षूं क्षैं क्षौं क्षः हुं स्थानक्षेत्रपालेश सर्वकामं पूरयस्वाहा'—इस मन्त्र से बाँयें हाथ के अंगूठा एवं अनामिका को मिलाने से बनी मुद्रा से हुतशेष द्रव्य से श्रीचक्र के नैर्ऋत्य कोण में क्षेत्रपाल को बलि देनी चाहिए। और फिर 'गां गीं गूं गं गणपतये वरवरद सर्वजनं मे वशमानय सर्वोपचारसहितं बलिं गृह्ण गृह्ण स्वाहा'—इस मन्त्र से थोड़ी वक्र की हुई मध्यमा से हुतशेष द्रव्य से श्रीचक्र से वायव्यकोण में गणपति को बलि देनी चाहिए।

ततईशानादिकोणेषुहुतशेषेणबटुकयोगिनीक्षेत्रपालगणेशेभ्यःपूर्वोक्तैःस्वस्वमन्त्रैस्तत्तन्मुद्रा-दर्शनपूर्वकंबलिदद्यात् ॥ १३७-१३८ ॥ नतीर्नमस्कारान् ॥ १३९ ॥

अथ प्रयोगा वक्ष्यंते साधकाभीष्टसिद्धिदाः ॥ १४० ॥
नवलक्षजपेनास्य रुद्ररूपो नरो भवेत् ।
मल्लिकामालतीपुष्पैर्होमाद्वागीशतामियात् ॥ १४१ ॥
करवीरैर्जपापुष्पैर्होमान्मोहयते जगत् ।
चन्द्रकुंकुमकस्तूरीहोमात्कामाधिको भवेत् ॥ १४२ ॥
चम्पकैःपाटलैर्विश्वं वशमानयतेऽचिरात् ।
लाजाहोमोराज्यदायी मधुनोपद्रवक्षयः ॥ १४३ ॥
निशिच्छागबलैर्होमो रिपुसैन्यविनाशकृत् ।
दध्याज्यदुग्धमधुभिःक्रमाद्धोमादवाप्नुयात् ॥ १४४ ॥
आरोग्यं सम्पदं ग्रामं धनं शकरयासुखम् ।
कमलैर्धनसम्पत्तिर्दाडिमैराजवश्यताम् ॥ १४५ ॥
क्षत्रियामातुलिङ्गैस्तु वैश्या नारं गजैःफलैः ।
शूद्राःकूष्माण्डसम्भूतैर्वश्याःस्युरचिराद्धुतैः ॥ १४६ ॥॥
पनसानां लक्षहोमाद्वश्यास्स्युश्चक्रवर्तिनः ।
द्राक्षाफलैरिष्टसिद्धि रम्भाभिर्मन्त्रिणोवशाः ॥ १४७ ॥
नारिकेलैस्तुसम्पत्तिस्तिलैःसर्वेष्टसिद्धयः ।
गुग्गुलैर्दुःखनाशः स्यात्सर्वेष्टंशर्करागुडैः ॥ १४८ ॥
पायसैर्धनधान्याप्तिर्बन्धूकैःप्राणिनोवशाः ।
घृतैश्चूतफलैर्होमाल्लक्षमात्राद्धरावशा ॥ १४९ ॥
लवणै राजिकायुक्तैर्होमाद्दुष्टविनाशनम् ।
कर्पूरहोमाल्लभते ब्राक्पतित्वं नरोऽचिरात् ॥ १५० ॥
करञ्जफलहोमेन भूतप्रेतादयो वशाः ।
बिल्वैःस्यादतुलालक्ष्मी रिक्षुदण्डैः सुखाप्तयः ॥ १५१ ॥
घृतहोमादाप्सिताप्तिः शान्तिःस्यात्तिलतण्डुलैः ।
किंबहूक्तेन देवेशि सर्वष्टं साधितं नृणाम् । १५२ ॥

काम्यप्रयोग : साधक को अभीष्ट सिद्धि देने वाले प्रयोगों को बतलाता हूँ :

नवावृतियुतानवावरणैरुक्तैर्युतान् ॥ १४० ॥ प्रयोगानाह । नवेति ॥ १४१ ॥ चन्द्रः-कर्पूरम् । कामाधिकोभवेद्रूपेगेतिशेषः ॥ १४२-४३ ॥ दधीति । दध्नारोग्यम् । आज्येन-सम्पदम् । दुग्धेनग्रामम । मधुनाधनमितिक्रमः । राजवश्यतामवाप्नुयादितिपूर्वेणसंबन्धः । मातुलिंगैर्बीजपूरैर्हुतैःक्षत्रियावश्याः । एवमग्रेपि ॥ १४४-४८ ॥ धराभूमिर्वशातत्स्थाःप्राणिनो-वश्याःस्युरित्यर्थः ॥ १४९-१५२ ॥

इस मन्त्र का ९ लाख जप करने से मनुष्य रुद्ररूप प्राप्त करता है।

मल्लिका (बेला) एवं मालती के फूलों के होम से वागीशता मिलती है। कनेर एवं जवा कुसुम के होम से साधक जगत् को मोहित कर देता है।

कपूर, कुंकुम एवं कस्तूरी के होम से व्यक्ति कामदेव से भी अधिक रूपवान् बन जाता है।

चम्पा एवं गुलाब के होम से व्यक्ति शीघ्र ही विश्व को अपने वश में कर लेता है। लाजा (खील) के होम से राज्य मिलता है। मधु के होम से उपद्रव नष्ट हो जाते हैं। रात्रि में छाग के मांस के होम से शत्रु की सेना नष्ट हो जाती है। दही के होम से आरोग्य, घी के होम से सम्पत्ति, दूध के होम से गाँव तथा मधु के होम से धन मिलता है। कमलों के होम से धन-सम्पत्ति मिलती है, तथा अनार के होम से राजा वश में हो जाता है।

बिजौरा के होम से क्षत्रिय, नारंगी के होम से वैश्य तथा पेठा के होम से शूद्र शीघ्र ही वश में हो जाते हैं।

कटहल से १ लाख आहुतियाँ देने पर चक्रवर्ती राजा वश में हो जाते हैं। अंगूर के होम से इष्टसिद्धि होती है। केला के होम से मन्त्री वश में होते हैं। नारियल के होम से सम्पत्ति तथा तिल के होम से सब अभीष्टों की सिद्धि होती है। गुग्गुल के होम से दुःख नष्ट होते हैं। चक्वर एवं गुड़ के होम से सब मनोरथ पूर्ण होते हैं।

खीर के होम से धन-धान्य मिलता है। बन्धूक (दुपहरिया) के फूलों के होम से प्राणी वश में होते हैं। पके आमों की १ लाख आहुतियाँ देने से भूमि पर रहनेवाले सब जीव वश में हो जाते हैं।

राई मिलाकर लवण के होम से दुष्टों का नाश होता है। कपूर के होम से शीघ्र ही कवित्व मिलता है। करंजफल के होम से भूत-प्रेत आदि वश में हो जाते हैं। बेल-फल के होम से अतुल लक्ष्मी तथा ईख के टुकड़ों के होम से सुख मिलता है। घी के होम से इच्छित वस्तु की प्राप्ति तथा तिल एवं तन्दुल (चावल) के होम से शान्ति मिलती है।

देवेशि! विशेष क्या कहें, इस मन्त्र से मनुष्य सब अभीष्टों को सिद्ध कर सकता है।

मध्ये कूटत्रिके भेदावर्णान्तरनियोजनात्।
बहवोन्येन गदिता ग्रन्थगौरवभीतितः ॥ १५३ ॥

मध्येमन्त्रमध्येयत्कूटत्रयंतत्रान्यवर्णयोगात्कुबेरोपासितयोर्द्वात्रिंशद्भेदास्तेग्रन्थगौरव - भीत्यानोक्ताः। अनयैवोपासितयासर्वेष्टसिद्धेश्चमुख्यैषैवकामराजविद्या। तेभेदायथा-

श्रीविद्या के भेद : मन्त्र के बीच में तीनों कूटों में अन्य वर्ण लगाने से (इस विद्या के) अनेक भेद हो जाते हैं। ग्रन्थ विस्तार के भय से उन्हें नहीं बतलाता हूँ।

टिप्पणी : षोडशी मन्त्र के मध्य के तीनों कूटों में वर्णविपर्यय द्वारा कुबेरोपासिता आदि ३२ भेद बनते हैं, जिनका आचार्य ने 'नौका' में वर्णन किया है।

इसके अलावा आगम शास्त्र में षोडशी विद्या के कुछ और भी भेद बतलाये हैं, जो इस प्रकार हैं :

पारिभाषिकी षोडशी मन्त्र : १. कामराज विद्या, २. अगस्त्यपूजिता लोपामुद्रा, ३. मनुपूजिता, ४. चन्द्रपूजिता, ५. कुबेरपूजिता, ६. अगस्त्यपूजिता द्वितीय लोपामुद्रा, ७. नन्दिपूजिता, ८. इन्द्रपूजिता, ९. सूर्यपूजिता, १०. शंकरपूजिता (चतुष्कूटा), ११. विष्णुपूजिता (षड्कूटा) एवं १२. दुर्वासापूजिता[१]—इन १२ मन्त्रों के प्रारम्भ में 'ह्रीं श्रीं'—इन दोनों बीजों को लगाने से जो मन्त्र बनते हैं वे पारिभाषिक षोडशी मन्त्र कहलाते हैं।

ज्ञानार्णव में लिखा है उक्त १२ मन्त्रों के आदि में 'ॐ ह्रीं श्रीं'—इन तीन बीजों को लगाने से षोडशी मन्त्र बनते है। ऐसा करने से त्रिकूटमन्त्र षड्कूट, षड्कूट-वैष्णवमन्त्र नवकूट तथा चतुष्कूट शिवमन्त्र सप्तकूट बन जाते हैं। ये सभी मन्त्र शिव-शक्तिमय माने गये हैं।

बीजावली षोडशी : रुद्रयामल के अनुसार—क्रमशः श्री, माया, बाला, श्री, माया, काम, वाग्, माया, श्री, परा, काम, वाग्, माया एवं श्री—इन बीजों का उच्चारण करने

---

१ कामराजविद्या—कएलईह्रीं, हसकहलह्रीं, सकलह्रीं।
प्रथमलोपामुद्रा—हसकल ह्रीं, हसकहल ह्रीं, सकल ह्रीं।
मनुपूजिता—कहएईल ह्रीं, हकएईल ह्रीं, सकएईल ह्रीं।
चन्द्रपूजिता—सहकएलईल ह्रीं, सहकहईल ह्रीं, सहकएईल ह्रीं।
कुबेरपूजिता—हसकएईल ह्रीं, हसकहएईल ह्रीं, हसकएईल ह्रीं।
द्वितीयलोपामुद्रा—कएईल ह्रीं, हसकहल ह्रीं, सहसकल ह्रीं।
नन्दिपूजिता—सएईल ह्रीं, सहकहल ह्रीं, सकल ह्रीं।
इन्द्रपूजिता—कएईल ह्रीं, हसकहल ह्रीं, सकल ह्रीं।
सूर्यपूजिता—कएईल ह्रीं, सहकल ह्रीं, सहकसकल ह्रीं।
शंकरपूजिता—कएईल ह्रीं, हसकलह्रीं, सहसकल ह्रीं, कएईलहसकहलसकसकल ह्रीं।
विष्णुपूजिता—कएईल ह्रीं, हसकल ह्रीं, सहसकल ह्रीं, सएईल ह्रीं, सहकहल ह्रीं, सकल ह्रीं।
दुर्वासापूजिता—कएईलह्रूरी हसकहलह्रूरा, सकलह्रूरी।

से [illegible]वली षोडशीमन्त्र बनता है। यह मन्त्र अत्यन्त गोपनीय कहा गया है। आचार्यों का निर्देश है कि परिस्थितिवश अपना राज्य या अपना शिर तक दे देना चाहिए, किन्तु इसे नहीं देना चाहिए।

ब्रह्मयामल के अनुसार—क्रमशः श्री, माया, बाला, श्री, माया, काम, वाग्, विलोम बाला, श्री, माया, फिर माया एवं श्री बीजों का उच्चारण करने से षोडशी मन्त्र बनता है। यह मन्त्र आगम शास्त्र में गोपनीय माना गया है।

गुह्यषोडशी मन्त्र : दो माया बीजों के मध्य में श्री बीज, फिर परा बीज, काम बीज एवं बाला का प्रथम बीज—इन बीजों में से माया एवं श्री बीजों के आदि में प्रणव लगाना चाहिए। फिर लोपामुद्रा त्रिकूटा और अन्त में प्रथमपञ्चबीज लगाने से अत्यन्त गुह्यषोडशी मन्त्र बनता है, जिसका माहात्म्य अतुलनीय एवं अकथनीय है। यह मन्त्र इस प्रकार है :

ॐ ह्रीं ॐ श्रीं ह्रीं सौः क्लीं ऐं हसकल ह्रीं हसकहल ह्रीं, सकल ह्रीं ॐ ह्रीं ॐ श्रीं ह्रीं।

महाषोडशी मन्त्र : प्रारम्भ में ह्रीं श्रीं—ये दो बीज विपरीत क्रम में और फिर बाला के मध्य बीज को प्रारम्भ में करके लिखने से 'श्रीं ह्रीं क्लीं ऐं सौः'—ये ५ बीज होते हैं। इन पाँच बीजों द्वारा अनुलोम विलोम क्रम से षट्कूट मन्त्र को पुटित करने से षोडशाक्षर मन्त्र बनता है।

उक्त पञ्चबीजों से सप्तकूट को पुटित करने पर सप्तदशाक्षर मन्त्र तथा नवकूट को पुटित करने पर ऊनविंश अक्षर मन्त्र बनता है। इस प्रकार षट्कूट षोडशाक्षर शैवमन्त्र सप्तदशाक्षर तथा वैष्णव मन्त्र ऊनविंशाक्षर होता है।

श्रीक्रम संहिता में भी इसी प्रकार का उल्लेख है, यथा—श्रीबीज, मायाबीज, कामबीज, वाग्भवबीज एवं परावीज को पहिले रखे। फिर प्रणव, भुवनेश्वरीबीज लक्ष्मीबीज एवं त्रिकूट—इस प्रकार बने षड्कूट को उक्त पाँच बीजों से पुटित करने पर महाषोडशी मन्त्र बनता है। मायातन्त्र, कुलामृत एवं यामल ग्रन्थों में भी ऐसा ही उल्लेख मिलता है।

कुब्जिका तन्त्र में महाषोडशी मन्त्र का उद्धार इस प्रकार है—परा, श्री, काम, वाग्भव एवं शक्ति बीज इन पाँचों के बाद प्रणव, माया, श्रीबीज त्रिकूट और फिर उक्त पाँचों को विलोम क्रम से लगाने पर महाषोडशी मन्त्र बनता है, जिसे भुवन सुन्दरी मन्त्र भी कहते हैं। यह मन्त्र भुक्ति एवं मुक्ति दायक माना गया है। मन्त्र इस प्रकार है—"ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं सौः ॐ ह्रीं श्रीं कएलई ह्रीं हसकहल ह्रीं सकल ह्रीं सौः ऐं क्लीं श्रीं ह्रीं"।

इस मन्त्र के प्रारम्भ में श्रीबीज लगाने से यह कमलसुन्दरी मन्त्र बनता है। इसी प्रकार इस मन्त्र के आदि में क्रमशः कामबीज, वाग्बीज, शक्ति बीज और प्रणव लगाने पर ये मन्त्र क्रमशः कामसुन्दरी, वाक्सुन्दरी शक्तिसुन्दरी एवं तारसुन्दरी मन्त्र कहलाते हैं।

सिद्धयामल में महाषोडशी मन्त्र का उद्धार इस प्रकार है—प्रणव, काम, माया, वाला, त्रिकूट, स्त्री, भग, अंकुश, काली, कामकला एवं कूर्च बीज लगाने से महाषोडशी मन्त्र बनता है। यह विद्या सभी आम्नायों में पूजिता है। मन्त्र इस प्रकार है—"ॐ क्लीं ह्रीं श्रीं ऐं क्लीं सौः कएईल ह्रीं हसकहल ह्रीं सहल ह्रीं स्त्रीं ऐं क्रों क्रीं ईं हूं"।

अपरीक्षितशिष्याय न देयं कदाचन।
पुत्राय वा सुशिष्याय दत्त्वाभीष्टप्रदायिनी ॥ १५४ ॥

हसकलएईलह्रीं हसकलएईलह्रीं सहकएईलह्रीं हसकहएईलह्रीं सहकहएईलह्रीं कहसहएईलह्रीं। एतत्कौबेरीद्वयंकूटद्वयंरामराजीयम्। सहसकलह्रीं सहसकलह्रीं हसकहकहलह्रीं सकलह्रीं। एतद्द्वयमगस्त्योपासितम्। हसकलह्रींअन्तेकामराजीयेआद्यद्वयंकामराजीयं सहसकलह्रीं। एतद्द्वयंलोपामुद्रोपासितम्। हसकएईलह्रींसहएकईलह्रींहसकएईलह्रीं। हसकएईलह्रीं सहकएईलह्रीं। तृतीयमीदृशमेव। चान्द्रीद्वयमेतत्। सकलह्रीं। सकलहलह्रीं। हसकलहह्रीं। कएईलहसकहलहीह्रींह्रींहीलसकहलह्रीं। एतद्द्वयंदुर्वासोर्चितम्। तदुक्तंज्ञानार्णवे—कामराजाख्यविद्यायास्त्रिकूटेषुवरानने। यास्थिताभुवनेशानीद्विधाकुरुमहेश्वरि। बिन्दुहीनानादहीनादुर्वासोपासिताभवत्। संहितायांच—वाग्भवस्थंचतुष्कंचकामराजस्थपञ्चकम्। शक्तिकूटंत्रिकार्यंचकामराजस्यसंलिखेत्। मायास्थानेहरीवर्णयुगलंचक्रमाल्लिखेत्। दुर्वाससापूजितेयंपुरुषार्थप्रदायिनीति। कएईलहरीहसकहलहरीसहलहरी। एतद्द्वयं दुर्वाससार्चितम्। आद्याकामराजतुल्या। सहकलह्रीं० अन्त्येएतादृशेएव। ऐंद्रीद्वयमेतत्। सएईलह्रीं हकहकहलह्रीं०सकलह्रीं। सहसकलह्रींसहसकलकहलह्रीं। आद्यमेवतृतीयम्। नन्दिविद्याद्वयमेतत्। हसकहलह्रीं। सकहसकलह्रींसहकहलह्रीं ॥ १५ ॥ हसएकलह्रींद्वयमेतदेवस्कांदीद्वयमेतत् ॥ १६ ॥ कहएईलह्रींहकएईलह्रींसकएईलह्रीं ॥ १७ ॥ मानवी। कएकलह्रींहकहलहींसहकलह्रीं ॥ १८ ॥ धर्मराजी। आद्यंकामराजीयं। द्वितीयेतृतीयेधार्मराजीये ॥ १९ ॥ एषावारुणी। कसकलह्रींहसकलह्रींसकलरह्रीं ॥ २० ॥ आग्नेयी। हसकलह्रींहसकलह्रींतृतीयमाग्नेयम् ॥ २१ ॥ एषाशैवी। कएरलारह्रींङ्कलरहलह्रींसरकलरह्रीं ॥ २२ ॥ वायवीयम्। कएईरलह्रींहकहलह्रींसहकलरह्रीं ॥ २३ ॥ सौमीयम्। कहलह्रींहकहललरह्रींसकलह्रीं ॥ २४ ॥ ऐशीयम्। कएकलह्रीं। अन्तेकामराजीयम् ॥ २५ ॥ शाक्तीयम्। आद्यंकामराजद्वयम्। अन्त्यंसकलह्रीमिति ॥ २६ ॥ रतिपूजिता। हसकलह्रींहकहसरह्रींआद्यमेवतृतीयम ॥ २७ ॥ जैवीयम्। आद्यंकामराजीयं। हकहसरह्रींहसकलह्रीं ॥२८॥ ब्राह्मीयं। सहलह्रींसहकलहलह्रीं ॥२९॥ वैष्णवीयम्। आद्यंकामराजीयं। हकहलह्रींहसकलह्रीं ॥ ३० ॥ उन्मनीयं। हसकलह्रींसहकलह्रींकलह्रींसकलहलह्रीं ॥ ३१ ॥ सौरी। एतेभेदाः। एषांश्रीबीजादिभिःसम्पुटिताः। कामराजवदेवउपासनमपि ॥ १५३-१५४ ॥

यह विद्या अपरीक्षित शिष्य को कभी भी नहीं देनी चाहिए। अपने पुत्र एवं सुपरीक्षित शिष्य को ही अभीष्टफलदायिनी विद्या देनी चाहिए।

गोपालसुन्दरीं वक्ष्ये भोगमोक्षप्रदायिकाम्।
मायारमाचित्तजन्माकृष्णायेतिपदं ततः ॥ १५५ ॥
आद्यं वाक्कूटमुच्चार्य्य गोविन्दायपदं वदेत्।
द्वितीयं तु ततःकूटं गोपीजनपदं ततः ॥ १५६ ॥
वल्लभायपदान्तं तु तृतीयं कूटमुच्चरेत्।
स्वहान्ता वह्नियुग्मार्णा स्मृता गोपालसुन्दरी ॥ १५७ ॥

गोपालसुन्दरी मन्त्र का उद्धार : भोग एवं मोक्ष दायिनी गोपालसुन्दरी मन्त्र बतलाता हूँ—

माया (ह्रीं) रमा (श्रीं) चित्तजन्मा (क्लीं) फिर 'कृष्णाय'—इस प्रथम वाक् कूट को बोलकर 'गोविन्दाय' पद बोलना चाहिए—यह द्वितीय कूट है। और फिर 'गोपीजन' एवं 'वल्लभाय' यह तृतीय कूट बोलना चाहिए। और अन्त में 'स्वाहा' लगाने से २३ अक्षर का गोपालसुन्दरी का मन्त्र बनता है।

टिप्पणी : *गोपालसुन्दरी का मन्त्र* : ह्रीं श्रीं क्लीं कृष्णाय गोविन्दाय गोपीजन वल्लभाय स्वाहा।

विद्याया द्वौ मुनी उक्तौ विधात्रानन्दभैरवौ।
छन्दस्तुदैवी गायत्रीदेवतासुन्दरीयुता ॥ १५८ ॥
गोपालो मन्मथोबीजं शक्तिःपावकवल्लभा।
मायाश्रीर्मन्मथैर्हृत्स्यात्कृष्णाय शिरईरितम् ॥ १५९ ॥
गोविन्दायशिखागोपीजनेतिकवचं मतम्।
वल्लभायस्मृतं नेत्रमस्त्रंपावकभार्य्यया ॥ १६० ॥

विनियोग एवं षडङ्गन्यास : इस विद्या के विधात्रा एवं आनन्दभैरव दो ऋषि हैं, देवी गायत्री छन्द है, गोपालसुन्दरी देवता हैं, कामबीज बीज है तथा स्वाहा शक्ति है।

माया, श्री एवं कामबीज से हृदय, 'कृष्णाय' से शिर, 'गोविन्दाय' से शिखा, 'गोपीजन' से कवच 'वल्लभाय' से नेत्र तथा 'स्वाहा' से अस्त्र पर न्यास करना चाहिए।

गोपालसुन्दरीमिति। मायेति। मायाह्रीं। रमाश्रीं। चित्तजन्माक्लीं। कृष्णाय ॥१५५॥ प्रथमकूटं। गोविन्दायद्वितीयंकूटं। गोपीजनवल्लभाय तृतीयं। स्वाहान्ता। वह्नियुग्मार्णा-त्रयोविंशतिवर्णा ॥ १५६-१५८ ॥ षडंगमाह। मायेति ॥ १५९-१६० ॥

टिप्पणी : विनियोग : अस्य गोपालसुन्दरीमन्त्रस्य विधात्रानन्दभैरवो ऋषी देवी गायत्री छन्दः गोपालसुन्दरी देवता, क्लीं बीजं, स्वाहा शक्तिः ममाभीष्टसिद्धये जपे विनियोगः ।

षडङ्गन्यास : ह्रीं श्रीं क्लीं हृदयाय नमः । कृष्णाय शिरसे स्वाहा । गोविन्दाय शिखायै वषट् । गोपीजन कवचाय हुम् । वल्लभाय नेत्रत्रयाय वौषट् । स्वाहा अस्त्राय फट् ।

मूर्ध्नि भाले भ्रुवोरक्ष्णोःकर्णयोर्नासयोर्मुखे ।
चिबुके च गले बाह्वोर्हृदयेजठरे न्यसेत् ॥ १६१ ॥
नाभौ लिङ्गे गुदे सक्थ्नोर्जानुनोर्जङ्घयोरपि ।
गुल्फयोःपादयोर्वर्णान्कूटत्रयविवर्जितान् ॥ १६२ ॥
सृष्टिन्यासोऽयमुदितो हृदाद्यंसान्तिकास्थितिः ।
संहारोंघ्र्यादिमूर्द्धांतःपुनः सृष्टिस्थितिं चरेत् ॥ १६३ ॥

सृष्टि, स्थिति एवं संहारन्यास : शिर, ललाट, भौं, नेत्र, कान, नासिका, मुख, चिबुक, कण्ठ, कन्धा, हृदय, उदर, नाभि, लिङ्ग, गुदा, कमर, जानु, जंघा, गुल्फ एवं पैरों में कूटत्रय को छोड़कर वर्णों का न्यास करना चाहिए। यह सृष्टिन्यास कहा जाता है।

हृदय से कन्धों तक स्थितिन्यास तथा पैरों से शिर तक संहारन्यास होता है। इसके बाद पुनः सृष्टिन्यास करना चाहिए ।

टिप्पणी : सृष्टिन्यास : श्रीविद्या भास्करकार के अनुसार सृष्टिन्यास इस प्रकार बतलाया गया है :

ह्रीं नमः-मूर्ध्नि । श्रीं नमः-ललाटे । क्लीं नमः-भ्रुवोः । कृं नमः-नेत्रयोः । ष्णां नमः-कर्णयोः । यं नमः-नसोः । गों नमः-मुखे । विं नमः-चिबुके । न्दां नमः-कण्ठे । यं नमः-बाहुमूले । गों नमः-हृदि । पीं नमः-उदरे । जं नमः-नाभौ । नं नमः-लिङ्गे । वं नमः-गुदे । ल्लं नमः-कट्यां । भां नमः-जान्वोः । यं नमः-जंघयोः । स्वां नमः-गुल्फयोः । हां नमः-पादयोः ।

स्थितिन्यास : ह्रीं नमः-हृदि । श्रीं नमः-उदरे । क्लीं नमः-नाभौ । कृं नमः-लिङ्गे । ष्णां नमः-आधारे । य नमः-कट्यां । गों नमः-जान्वो । विं नमः-जंघयोः । न्दां नमः-गुल्फयाः । यं नमः-पादयोः । गों नमः-मूर्ध्नि । पीं नमः-ललाटे । जं नमः-भ्रुवोः । नं नमः-नेत्रयोः-। वं नमः-कर्णयोः । ल्लं नमः-नसोः । मां नमः-मुखे । यं नमः-चिबुके । स्वां नमः-कण्ठे । हां नमः-बाहुमूले ।

वर्णन्यासमाह । मूर्ध्नीति । हृदादिबाह्वन्तःस्थितिन्यासः । पादादिमूर्धान्तःसंहार-न्यासः । एवं न्यासत्रयं कृत्वा पुनःसृष्टिस्थितिन्यासौ चरेत् ॥ १६१-१६३ ॥

संहारन्यास : ह्रीं नमः-पादयोः । श्रीं नमः-गुल्फयोः । क्लीं नमः-जंघयोः । क्रु नमः-जान्वोः । ष्णां नमः-कट्यां । यं नमः-गुदे । गों नमः-लिङ्गे । वि नमः-नाभौ । न्दां नमः-उदरे । यं नमः-हृदि । गों नमः-बाहुमूले । पीं नमः-कण्ठे । जं नमः-चिबुके । नं नमः-मुखे । वं नमः-नसाः । ल्लं नमः-कर्णयो । भां नमः-नेत्रयोः । यं नमः-भ्रुवोः । स्वां नमः-ललाटे । हां नमः-मूर्ध्नि ।

इस रीति से सृष्टि, स्थिति, एवं संहार न्यास करने के बाद पुनः सृष्टिन्यास करना चाहिए । कुछ आचार्यों का मत है कि इसके बाद विभूतिपञ्जर न्यास करना चाहिए ।

विभूतिपञ्जर न्यास : इस न्यास के करने से भूति-ऐश्वर्य की वृद्धि होती है । न्यास का क्रम इस प्रकार है :

गों नमः-आधारे । पीं नमः-लिङ्गे । जं नमः-नाभौ । नं नमः-हृदि । वं नमः-कण्ठे । ल्लं नमः-मुखे । भां नमः-दक्षिणांसे । यं नमः-वामांसे । स्वां नमः-दक्षिणोरौ । हां नमः-वामोरौ । गों नमः-कन्धरायाम् । पीं नमः-नाभौ । जं नमः-कुक्षौ । नं नमः-हृदि । वं नमः-दक्षिणस्तने । ल्लं नमः-वामस्तने । भां नमः-दक्षिणपार्श्वे । यं नमः-वामपार्श्वे । स्वां नमः-दक्षिणश्रोण्याम् । हां नमः-वामश्रोण्याम् । गों नमः-शिरसि । पीं नमः-मुखे । जं नमः-दक्षिणनेत्रे । नं नमः-वामनेत्रे । वं नमः-दक्षिण कर्णे । ल्लं नमः-वामकर्णे । भां नमः-दक्षिणनासापुटे । यं नमः-वामनासापुटे । स्वां नमः-दक्षिणकपोले । हां नमः-वामकपोले । गों नमः-दक्षिण हस्तमूले । पीं नमः-दक्षिण कूर्परे । जं नमः-दक्षिण मणिबन्धे । नं नमः-दक्षांगुलिमूले । वं नमः-दक्षांगुल्यग्रे । ल्लं नमः-अंगुष्ठे । भां नमः-तर्जन्याम् । यं नमः-मध्यमायाम् । स्वां नमः-अनामिकायाम् । हां नमः-कनिष्ठकायाम् । गों नमः-वामहस्तमूले । पीं नमः-वाम कूर्परे । जं नमः-वाम मणिबन्धे । नं नमः-वामांगुलिमूले । वं नमः वामांगुल्यग्रे । ल्लं नमः-वामअंगुष्ठे । भां नमः-वाम तर्जन्याम् । यं नमः-वाम मध्यमायाम् । स्वां नमः-वाम अनामिकायाम् । हां नमः-वाम कनिष्ठकायाम् ।

गों नमः-दक्षपादमूले । पीं नमः-दक्ष गुल्फे । जं नमः-दक्ष जंघायाम् । नं नमः-दक्षपादांगुलिमूले । वं नमः-दक्षपादांगुल्यग्रे । ल्लं नमः-दक्षपादांगुष्ठे । भां नमः-दक्ष-तर्जन्याम् । यं नमः-दक्षमध्यमायाम् । स्वां नमः-दक्षअनामिकायाम् । हां नमः-दक्ष-कनिष्ठकायाम् । गों नमः-वामपादमूले । पीं नमः-वामगुल्फे । जं नमः-वामजंघायाम् । नं नमः-वामपादांगुलिमूले । वं नमः-वामपादांगुल्यग्रे । ल्लं नमः-वामपादांगुष्ठे । भां नमः-वामतर्जन्याम् । यं नमः-वाम मध्यमायाम् । स्वं नमः-वाम अनामिकायाम् । हां नमः-वाम कनिष्ठकायाम् ।

गों नमः-मूर्ध्नि । पीं नमः-तत्पूर्वे । जं नमः-तद्दक्षिणे । नं नमः-तत्पश्चिमे । वं नमः-तदुत्तरे । ल्लं नमः-मूर्ध्नि । भां नमः-दक्षिणभुजे । थं नमः-वामभुजे । स्वां नमः-दक्षिणोरौ । हां नमः-वामोरौ । गों नमः-शिरसि । पीं नमः-नेत्रयोः । जं नमः-मुखे । नं नमः-कण्ठे । वं नमः-हृदि । ल्लं नमः-जठरे । भां नमः-मूलाधरे । यं नमः-लिङ्गे । स्वां नमः-जानुनोः । हां नमः-पादयोः ।

गों नमः-श्रोत्रयोः । पीं नमः-गण्डयो । जं नमः-अंसयोः । नं नमः-स्तनयो । वं नमः-पार्श्वयोः । ल्लं नमः-लिङ्गे । भां नमः-ऊर्वो । यं नमः जानुनोः । स्वां नमः-जंघयोः । हां नमः-पादयोः ।

करशुद्ध्यासनन्यासौ न्यासं वाग्देवताभिधम् ।
कृत्वा पूर्वोदितान्कूटत्रयं कास्यहृदि न्यसेत् ॥ १६४ ॥
कूटत्रयद्विरावृत्त्या षडङ्गं पुनराचरेत् ।
कमलावसुधायुक्तं ध्यायेच्छ्रीचक्रगं हरिम् ॥ १६५ ॥

अन्यन्यास : फिर पूर्वोक्त रीति (देखिए तरङ्ग ११ श्लो० ८-१४ एवं २७-३६ की टिप्पणियाँ) से करशुद्धिन्यास, आसन न्यास एवं वाग्देवता न्यास करके तीनों कूटों का शिर, मुख एवं हृदय में न्यास करना चाहिए ।

फिर तीन कूटों की २ आवृत्तियों से पुनः षडङ्गन्यास करना चाहिए । (तत्पश्चात्) कमला एवं वसुधा के साथ श्रीचक्र में स्थित हरि का ध्यान करना चाहिए ।

टिप्पणी : पिछले अध्याय में बतलायी गयी रीति से करशुद्धि न्यास, आसन न्यास एवं वाग्देवता न्यास करने के बाद निम्न रीति से तीन कूटों का न्यास करना चाहिए, यथा :

कृष्णाय नमः-मूर्ध्नि । गोविन्दाय नमः-मुखे । गोपीजनवल्लभाय नमः-हृदये ।

षडङ्ग न्यास : कृष्णाय हृदयाय नमः । गोविन्दाय शिरसे स्वाहा । गोपीजन वल्लभाय शिखाये वषट् । कृष्णाय कवचाय हुम् । गोविन्दाय नेत्रत्रयाय वौषट् । गोपीजन वल्लभाय अस्त्राय फट् ।

क्षीराभोधिस्थकल्पद्रुमवनविलसद्रत्नयुङ्मण्डपान्तः
प्रोद्यच्छ्रीपीठसंस्थं करधृतजलजारीक्षुचापांकुशेषुम् ।
पाशं वीणां सुवेणु दधतमवनिमाशोभितं रक्तकांति
ध्यायेद्गोपालमीशं विधिमुखविबुधैरीड्यमानं समंतात् ॥ १६६ ॥

करशुद्ध्यासनन्यासवाग्देवता न्यासान्सुन्दर्युक्तान्कृत्वामूर्धमुखहृत्सुकूटत्रयंन्यसेत् ॥१६४-१६५ ॥ ध्यानमाह । क्षीरेति । क्षीरसमुद्रस्थकल्पद्रुमवनेविलसन्नरत्नयुक्योमण्डपस्तदन्तःप्रोद्यत्यत्श्रीपीठंतत्रस्थितमष्टकरंपद्मचक्रबाणवेणुदक्षकरंचापपाशांकुशवीणावामकरम -

ध्यान : क्षीरसागर के कल्पवृक्ष वाले वन में सुशोभित रत्नमण्डप के भीतर श्रीपीठ पर स्थित (आठ भुजा वाले) हाथों में क्रमशः पद्म, चक्र, इक्षुचाप, वाण, अंकुश, पाश, वीणा एवं वेणु धारण करने वाले, धरा एवं लक्ष्मी से सुशोभित तथा ब्रह्मा आदि देवताओं से स्तूयमान गोपाल का ध्यान करना चाहिए ।

एवं ध्यात्वा जपेल्लक्षं दशान्शं पायसान्धसा ।
जुहुयाद्वैष्णवे पीठे पूजयेत्सुन्दरींहरिम् १६७ ॥

जपसंख्या एवं हवन : ऐसा ध्यान कर १ लाख जप करना चाहिए । खीर से दशांश-होम करना चाहिए । तथा वैष्णवपीठ पर गोपालसुन्दरी का पूजन करना चाहिए ।

आदावंगानि सम्पूज्यप्रागाद्याशासु पूजयेत् ।
वासुदेवं संकर्षणं प्रद्युम्नमनिरुद्धकम् ॥ १६८ ॥
पूज्यावह्न्यादिकोणेषु शान्तिःश्रीश्चसरस्वती ।
रतिःपुनर्दिक्षु पूज्या रुक्मिणी सत्यभामिका ॥ १६९ ॥
कालिन्दी जाम्बवत्याख्या मित्रविन्दासुनन्दया ।
सुलक्षणानाग्निजिती ततीर्च्या निधयोपि च ॥ १७० ॥
महापद्मश्चपद्मश्चशंखोमकरकच्छपौ ।
मुंकुन्द कुन्दनीलाश्चखर्वश्चनिधयो नव ॥ १७१ ॥
ततश्चसुन्दरीप्रोक्तावृतिपूजां समाचरेत् ।
प्रयोगानपि तत्रोक्तान्कुर्यादिष्ट प्रसिद्धये ॥ १७२ ॥

आवरण पूजा : सर्वप्रथम अंग पूजा कर पूर्व आदि दिशाओं में वासुदेव, संकर्षण, प्रद्युम्न एवं अनिरुद्ध का पूजन करना चाहिए । फिर आग्नेय आदि कोणों में शान्ति, श्री, सरस्वती एवं रति का पूजन करना चाहिए ।

फिर दिशाओं में रुक्मिणी, सत्यभामिका, कालिन्दी, जाम्बवती, मित्रविन्दा, सुनन्दा, सुलक्षणा एवं नाग्निजिती का पूजन करना चाहिए ।

इसके बाद निधियों का पूजन करना चाहिए । महापद्म, पद्म, शंख, मकर, कच्छप, मुकुन्द, कुन्द, नील एवं खर्व ये ९ निधियाँ होती हैं ।

और फिर त्रिपुरसुन्दरी के प्रयोग में बतलायी गयी ९ आवरणों की पूजा करनी

वनिताभ्यां धरालक्ष्मीभ्यांशोभितंब्रह्मादिसुरैःस्तूयमानंगोपालंध्यायेत् ॥१६६-१७०॥ विधीनाह । महापद्मश्चेति ॥ १७१ ॥ ततःसुन्दरीमन्त्रोक्तानिनवावरणानियजेत् ॥ १७२ ॥

चाहिए। और अपने अभीष्ट की सिद्धि के लिए वहीं बतलाये गये काम्य प्रयोगों को भी करना चाहिए।

टिप्पणी : आवरण जा विधि : वृत्ताकार कर्णिका, अष्टदल एवं भूपुर सहित बने यन्त्र पर पूजन करना चाहिए। गोपाल सुन्दरी पूजन यन्त्र (देखिये चित्र ३०)।

इस यन्त्र पर सामान्य पूजा पद्धति के अनुसार पीठ देवताओं एवं विमला आदि वैष्णवी पीठ शक्तियों का पूजन कर ध्यान आवाहन आदि उपचारों से पञ्चपुष्पाञ्जलि दान पर्यन्त पूजन कर आवरण पूजा करनी चाहिए, यथा :

सर्वप्रथम अग्निय आदि कोणों में षडङ्ग पूजा करनी चाहिए, यथा :

ह्रीं श्रीं क्लीं हृदयाय नमः। कृष्णाय शिरसे स्वाहा। गोविन्दाय शिखायै वषट गोपीजन कवचाय हुम्। वल्लभाय नेत्रत्रयाय वौषट्। स्वाहा अस्त्राय फट्।

फिर पूर्व आदि चारों दिशाओं से चारों पत्रों के मूल में निम्नलिखित मन्त्रों से वासुदेव आदि का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ वासुदेवाय नमः। ॐ संकर्षणाय नमः। ॐ प्रद्युम्नाय नमः। ॐ अनिरुद्धाय नमः।

इसके बाद आग्नेय आदि चारों कोणों के चारों पत्रों के मूल में निम्नलिखित मन्त्रों से शान्ति आदि का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ शान्त्यै नमः। ॐ श्रियै नमः। ॐ सरस्वत्यै नमः। ॐ रत्यै नमः।

तत्पश्चात् अष्टदल के पत्रों के मध्य में पूर्व आदि दिशाओं में रुक्मिणी आदि का निम्नलिखित मन्त्रों से पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ रुक्मिण्यै नमः। ॐ सत्यमामायैः नमः। ॐ कालिन्द्यै नमः। ॐ जाम्बवत्यै नमः। ॐ मित्रविन्दायै नमः। ॐ सुनन्दायै नमः। ॐ सुलक्षणायै नमः। ॐ नाग्निजित्यै नमः।

और फिर दलों के बहिर्भाग में पूर्व आदि दिशाओं में तथा मध्य में निम्नलिखित मन्त्रों से ९ निधियों का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ महापद्माय नमः। ॐ पद्माय नमः। ॐ शंखाय नमः। ॐ मकराय नमः। ॐ कच्छपाय नमः। ॐ मुकुन्दाय नमः। ॐ कुन्दाय नमः। ॐ नीलाय नमः। ॐ खर्वाय नमः।

इसके बाद त्रिपुरसुन्दरी की पूजा के प्रसंग में बतलायी गयी रीति से ९ आवरणों की पूजा करनी चाहिए। इस प्रकार आवरण पूजा करने के बाद धूप, दीप आदि उपचारों पूजन करना चाहिए।

एवं यो भजते नित्यं श्रीमद्गोपालसुन्दरीम् ।
सर्वान्कामानवाप्यान्ते सायुज्यं ब्रह्मणो व्रजेत् ॥ १७३ ॥

इस रीति से जो व्यक्ति प्रतिदिन गोपालसुन्दरी की उपासना करता है, उसकी समस्त कामनाएँ पूरी होती है तथा वह अन्त में ब्रह्मस्वरूप प्राप्त करता है ।

इति श्री शुकदेव चतुर्वेदि विरचितायां सटिप्पण्यां मन्त्रमहोदधेः
मोहिनी व्याख्यायां द्वादशस्तरङ्गः ।

ब्रह्मणःसायुज्यंब्रह्मरूपंप्राप्नोति ॥ १७३ ॥ इतिश्रीमन्त्रमहोदधिव्याख्यायांनौकायां-सुन्दरीपूजनंनामद्वादशस्तरंगः ।

त्रयोदश तरङ्ग

अथोच्यन्ते हनुमतो मन्त्राःसर्वेष्टसिद्धये ।
इन्द्रस्वरेन्दुसंयुक्तो वराहोहसफाग्नयः ॥ १ ॥
झिंटीशबिन्दुसंयुक्ताद्वितीयं बीजमीरितम् ।
गदीपान्ताग्निरुद्रेन्दुसंयुतः स्यात्तृतीयकम् ॥ २ ॥
हसरामनुचन्द्राढ्याश्चतुर्थंहसखाःफराः ।
शिवेन्द्राढ्याःपञ्चमःस्याद्धसौमन्बिदुगौपरम् ॥ ३ ॥
ङेयुतोहनुमान्हार्दं मन्त्रोयं द्वादशाक्षरः ।

हनुमान का मन्त्र : अब सब मनोरथों की सिद्धि हेतु हनुमान् के मन्त्र बतलाये जाते हैं ।

इन्द्र स्वर एवं इन्दु सहित वराह (हौं) झिंटीश एवं बिन्दु सहित ह् स् फ् अग्नि (र्) अर्थात् 'ह्स्फ्रें' यह द्वितीय बीज कहा गया है । रुद्र एवं इन्दु सहित गदी (ख) पान्त (फ) तथा अग्नि (र) अर्थात् 'ख्फ्रें' यह तृतीय बीज है । मनु एवं चन्द्र सहित ह्, स् तथा र् अर्थात् 'ह्स्रौं'—यह चतुर्थ बीज है । शिव एवं इन्दु सहित ह्, स्, ख, फ्, तथा र् अर्थात् 'ह्स्ख्फ्रें'—यह पञ्चम बीज है । मनु एवं इन्दु सहित ह् तथा स् अर्थात् 'ह्सौं' यह षष्ठ बीज है । इसके बाद चतुर्थ्यन्त हनुमान् (हनुमते) और अन्त में हार्द (नमः) लगाने से यह १२ अक्षर का मन्त्र बनता है ।

टिप्पणी : हनुमान् का मन्त्र : हौं ह्स्फ्रें ख्फ्रें ह्स्रौं ह्स्ख्फ्रें ह्सौं हनुमते नमः ।

रामचन्द्रोमुनिश्चास्य जगतीछन्द ईरितम् ॥ ४ ॥
हनुमान्देवता बीजं षष्ठं शक्तिर्द्वितीयकम् ।

श्रीहनुमतोमन्त्रान्वक्तुंप्रतिजानीते । अथेति । मन्त्रमुद्धरति । इन्द्रेति । वराहोहः इन्द्रस्वरऔबिन्दुस्ताभ्यांयुतःहौं । हसफस्वरूपम् । अग्नीरःएते ॥ १ ॥ झिंटीशबिन्दुयुताः एबिन्दुयुताः । तेनहस्फ्रें । गदीखः । पान्ताग्निरुद्रेन्दुयुतः । पान्तःफःअग्नीरःरुद्रप् । इन्दुबिन्दुःतैर्युतः । ख्फ्रं ॥ २ ॥ हसरा मनुचन्द्राढ्याः औबिन्दुयुताःह्स्रौं । हसखफराः-शिवेन्द्राढ्याःएबिन्दुयुताः तेनह्स्ख्फ्रें । हसौमन्बिन्दुगौ औबिन्दुयुतोह्सौं । परन्ततः ॥३॥ ङेयुतोहनुमान्हनुमते । हार्दंनमः । यथा–हौंह्स्फ्रेंख्फ्रेंह्स्रौंह्स्ख्फ्रेंह्सौंहनुमतेनमः ॥४॥

विनियोग : इस मन्त्र का रामचन्द्र मुनि है, जगती छन्द कहा गया है, हनुमान् देवता है, पञ्च बीज है तथा द्वितीय बीज शक्ति माना गया है।

टिप्पणी : *विनियोग* : अस्य श्री हनुमन्मन्त्रस्य रामचन्द्रः ऋषिः जगती छन्दः, हनुमान् देवता, हूँ बीजं, हूँ शक्तिः, ममाभीष्ट सिद्धये जपे विनियोगः।

षड्बीजैरंगषट्कं स्यान्मूर्ध्नि भाले दृशोर्मुखे ॥ ५ ॥
कण्ठे च बाहुद्वितयेऽदि कुक्षौ च नाभितः।
लिङ्गे जानुद्वये पादद्वये वर्णान्क्रमान्न्यसेत् ॥ ६ ॥

षडङ्ग एवं वर्णन्यास : मन्त्र के ६ बीजों से षडङ्गन्यास करना चाहिए। तथा मन्त्र के (एक-एक) वर्ण का क्रमशः शिर, ललाट, नेत्र, मुख, कण्ठ, दोनों हाथ, हृदय, दोनों कुक्षि, नाभि, लिंग, दोनों जानु एवं दोनों पैरों पर न्यास करना चाहिए।

टिप्पणी : *षडङ्गन्यास* : हौं हृदयाय नमः। हूस्फ्रें शिरसे स्वाहा। स्फ्रें शिखायै वषट्। हूस्त्रौं कवचाय हुम्। हूस्त्रफ्रें नेत्रत्रयाय वौषट्। हूसौं अस्त्राय फट्।

वर्णन्यास : हौं नमः-मूर्ध्नि। हूस्फ्रें नमः-ललाटे। स्फ्रें नमः-नेत्रयोः। हूस्त्रौं नमः-मुखे। हूस्त्रफ्रें नमः-कण्ठे। हूसौं नमः-बाह्वोः। हं नमः-हृदि। नुं नमः-कुक्ष्योः। मं नमः-नाभौ। तें नमः-लिङ्गे। नं नमः-जान्वोः। मः नमः-पादयोः।

षड्बीजानि पदद्वन्द्वे मूर्ध्निभालेमुखे हृदि।
नाभावूर्वोर्जघयोश्चपादयोर्न्यिसेत्क्रमात् ॥ ७ ॥

पदन्यास : ६ बीज एवं दोनों पदों का क्रमशः शिर, ललाट, मुख, हृदय, नाभि, ऊरु, जंघा एवं पैरों पर न्यास करना चाहिए।

टिप्पणी : *पदन्यास विधि* : हौं नमः-मूर्ध्नि। हूस्फ्रें नमः-ललाटे। स्फ्रें नमः-मुखे। हूस्त्रौं नमः-हृदि। हूस्त्रफ्रें नमः-नाभौ। हूसौं नमः-ऊर्वो। हनुमते नमः-जंघयोः। नमः नमः-पादयोः।

बालार्कायुततेजसंत्रिभुवनप्रक्षोभकं सुन्दरं
सुग्रीवादिसमस्तवानरगणैः संसेव्यपादाम्बुजम्।
नादेनैव समस्तराक्षसगणान्संत्रासयन्तं प्रभुं
श्रीमद्रामपदाम्बुजस्मृतिरतं ध्यायामि वातात्मजम् ॥ ८ ॥

ध्यान : उदीयमान सूर्य जैसी आभावाले, तीनों लोकों को क्षोभित करनेवाले, सुन्दर, सुग्रीव आदि समस्त वानर समुदाय से सेव्यमान चरणोंवाले, अपने नाद से ही

षष्ठंहसौमितिबीजं। द्वितीयंहस्फ्रेमितिशक्तिः। हौंहृत्। हूस्फ्रेंशिरः। स्फ्रेंशिखेस्यादि०। वर्णन्यासमाह। मूर्ध्नीति। एकैकंसर्वत्र० ॥ ५-६ ॥ पदन्यासमाह पडिति। पदद्वन्द्वंहनुमतेनमइति ॥ ७ ॥

समस्त राक्षस-समुदाय को भयभीत करने वाले, अपने स्वामी भगवान् श्री राम के चरणारविन्दों का सतत स्मरण करनेवाले हनुमानजी का ध्यान करना चाहिए।

एवं ध्यात्वा जपेदर्कसहस्रं जितमानसः।
दशांशंजुहुयाद्व्रीहीन्पयोदध्याज्यसंयुतान् ॥ ९ ॥

जपसंख्या एवं हवन : ऐसा ध्यान कर एकाग्र मन से साधक १२ हजार जप करे, तथा दूध, दही एवं घी मिलाकर व्रीहि (धान) से दशांश होम करना चाहिए।

विमलादियुते पीठे पूजा कार्य्या हनूमतः।

पीठपूजा : विमला आदि शक्तियों वाले पीठ पर हनुमान् का पूजन करना चाहिए।

टिप्पणी : *पीठपूजाविधि* : वृत्ताकार कर्णिका, फिर अष्टदल एवं भूपुर सहित बने यन्त्र (देखिये चित्र ३१) पर हनुमान् जी का पूजन करना चाहिए।

श्लोक ८ में वर्णित हनुमानजी के स्वरूप का ध्यान कर मानसोपचार से पूजन कर विधिवत अर्घ्यस्थापन कर निम्नलिखित मन्त्रों से निर्दिष्ट स्थान एवं दिशाओं में पीठ देवताओं का पूजन करना चाहिए, यथा :

पीठ मध्ये—ॐ आधार शक्तये नमः। ॐ प्रकृतये नमः। ॐ कूर्माय नमः। ॐ अनन्ताय नमः। ॐ पृथिव्यै नमः। ॐ क्षीरसमुद्राय नमः। ॐ श्वेतद्वीपाय नमः। ॐ मणिमण्डपाय नमः। ॐ कल्पवृक्षाय नमः। ॐ मणिवेदिकायै नमः। ॐ रत्न-सिंहासनाय नमः।

तदनन्तर आग्नेय आदि कोणों में निम्नलिखित मन्त्रों से धर्म आदि का तथा पूर्व आदि दिशाओं में अधर्म आदि का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ धर्माय नमः-आग्नेये। ॐ ज्ञानाय नमः-नैर्ऋत्ये। ॐ वैराग्याय नमः-वायव्ये। ॐ ऐश्वर्याय नमः-ईशान्ये। ॐ अधर्माय नमः-पूर्वे। ॐ अज्ञानाय नमः-दक्षिणे। ॐ अवैराग्याय नमः-पश्चिमे। ॐ अनैश्वर्याय नमः-उत्तरे।

तत्पश्चात् पुनः पीठ के मध्य में निम्नलिखित मन्त्रों से अनन्त आदि का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ अनन्ताय नमः। ॐ पद्माय नमः। ॐ अं सूर्यमण्डलाय द्वादशकलात्मने नमः। ॐ उं सोममण्डलाय षोडशकलात्मने नमः। ॐ रं वह्निमण्डलाय दशकलात्मने नमः। ॐ सं सत्त्वाय नमः। ॐ रं रजसे नमः। ॐ तं तमसे नमः। ॐ आं आत्मने नमः। ॐ अं अन्तरात्मने नमः। ॐ पं परमात्मने नमः। ॐ ह्रीं ज्ञानात्मने नमः।

ध्यानमाह। बालेति। वातात्मजंहनुमन्तम् ॥ ८-९ ॥

फिर केसरों में पूर्व आदि ८ दिशाओं मे तथा मध्य में निम्नलिखित मन्त्रों से विमला आदि पीठशक्तियों का पूजन करना चाहिए, यथा :

पूर्वादिदिक्षु—ॐ विमलायै नमः । ॐ उत्कर्षिण्यै नमः । ॐ ज्ञानायै नमः । ॐ क्रियायै नमः । ॐ योगायै नमः । ॐ प्रह्वयै नमः । ॐसत्यायै नमः । ॐ ईशानायै नमः । मध्ये—ॐ अनुग्रहायै नमः ।

और फिर आसन मन्त्र से इस पूजित पीठ पर आसन देकर ध्यान, आवाहन आदि उपचारों से मूल मन्त्र से पञ्चपुष्पाञ्जलि समर्पण पर्यन्त हनुमानजी का विधिवत पूजन करना चाहिए ।

केसरेष्वङ्गपूजास्याद्दलेष्वन्यांस्तदाह्वयान् ॥ १० ॥
रामभक्तो महातेजा कपिराजो महाबलः ।
द्रोणाद्रिहारको मेरुपीठकार्चनकारकः ॥ ११ ॥
दक्षिणाशाभास्करश्च सर्वविघ्ननिवारकः ।
एवं नामानिसम्पूज्य दलाग्रेषु च वानरान् ॥ १२ ॥
सुग्रीवमङ्गदं नीलं जाम्बवन्तं नलं तथा ।
सुषेणं द्विविदं मैन्दं पूजयेद्दिक्पतीनपि ॥ १३ ॥

आवरण पूजा : केसरों मे अङ्गपूजा तथा दलों पर तत्तद् नामों वाले हनुमान् का पूजन करना चाहिए । रामभक्त, महातेज, कपिराज, महाबल द्रोणाद्रि हारक, मेरु-पीठकार्चनकारक, दक्षिणाशाभास्कर तथा सर्वविघ्ननिवारक—इन नामों का पूजन कर दलों के अग्रभाग में वानरों का पूजन करना चाहिए । सुग्रीव, अंगद, नील, जाम्बवन्त, नल, सुषेण, द्विविद एवं मैन्द–ये वानर हैं । और फिर दिक्पालों का पूजन करना चाहिए ।

टिप्पणी : आवरण पूजाविधि : सर्वप्रथ केसरों में आग्नेय आदि क्रम से निम्न-लिखित मन्त्रों से अङ्गपूजा करनी चाहिए, यथा :

ह्रां हृदयाय नमः । ह्रस्फ्रें शिरसे स्वाहा । स्फ्रें शिखायै वषट् । ह्रसौं कवचाय हुम् । ह्रस्फ्रें नेत्रत्रयाय वौषट् । ह्रसौं अस्त्राय फट् ।

फिर दलों में पूर्व आदि क्रम से रामभक्त आदि नाममन्त्रों से हनुमान् का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ रामभक्ताय नमः । ॐ महातेजसे नमः । ॐ कपिराजाय नमः । ॐ महाबलाय नमः । ॐ द्रोणाद्रिहारकाय नमः । ॐ मेरुपीठकार्चन कारकाय नमः । ॐ दक्षिणाशा भास्कराय नमः । सर्वविघ्न निवारकाय नमः ।

दलेष्वेतदाह्वयान् हनुमन्नामानि ॥ १० ॥

तदनन्तर दलों के अग्रभाग पर निम्नलिखित मन्त्रों से सुग्रीव आदि वानरों का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ सुग्रीवाय नमः । ॐ अंगदाय नमः । ॐ नीलाय नमः । ॐ जाम्बवन्ताय नमः । ॐ नलाय नमः । ॐ सुषेणाय नमः । ॐ द्विविदाय नमः । ॐ मैन्दाय नमः ।

और फिर भूपुर में अपनी अपनी दिशाओं में निम्नमन्त्रों से इन्द्र आदि दिक्पालों का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ लं इन्द्राय नमः । ॐ रं आग्नेये नमः । ॐ मं यमाय नमः । ॐ क्षं निर्ऋतये नमः । ॐ वं वरुणाय नमः । ॐ यं वायवे नमः । ॐ सं सोमाय नमः । ॐ हं ईशानाय नमः । ॐ आं ब्रह्मणे नमः । ॐ ह्रीं अनन्ताय नमः ।

इस प्रकार आवरण पूजाकर धूप, दीप आदि उपचारों से विधिवत हनुमानजी का पूजन करना चाहिए ।

एवं सिद्धे मनौ मन्त्रीस्वपरेष्टं प्रसाधयेत् ।
कदलीबीजपूराम्रफलैर्हुत्वासहस्रकम् ॥ १४ ॥
द्वाविंशतिब्रह्मचारिविप्रान्सम्भोजयेदथ ।
एवं कृते महाभूतविषचौराद्युपद्रवाः ॥ १५ ॥
नश्यन्ति क्षणमात्रेण विद्वेषिग्रहदानवाः ।
अष्टोत्तरशतं वारिमन्त्रितं विषनाशनम् ॥ १६ ॥
रात्रौ नवशतं मन्त्रं जपेद्यत्रिनाम्बधि ।
यो नरस्तस्यनश्यन्ति राजशत्रुभीतयः ॥ १७ ॥
अभिचारोत्थभूतोत्थज्वरे तन्मन्त्रितैर्जलैः ।
भस्मभिः सलिलैर्वापिताडयेज्ज्वरिणःक्रुधा ॥ १८ ॥
दिनत्रयाज्ज्वरान्मुक्तःससुखं लभतेनरः ।
तन्मन्त्रितौषधं जग्ध्वा नीरोगो जायते ध्रुवम् ॥ १९ ॥

काम्यप्रयोग : इस प्रकार मन्त्र सिद्ध हो जाने पर अपना या दूसरे का अभीष्ट कार्य करना चाहिए ।

केला, बिजौरा एवं आम इन फलों से १ हजार आहुतियाँ देकर २२ ब्रह्मचारी एवं ब्राह्मणों को भोजन कराना चाहिए । ऐसा करने से महाभूत, विष एवं चोर आदि के उपद्रव तथा विद्वेष करनेवाले ग्रह एवं दानव आदि शीघ्र नष्ट हो जाते हैं ।

(इस मन्त्र से) १०८ बार अभिमन्त्रित जल विष को नष्ट कर देता है ।

तानाह । रामभक्तइत्यादि ॥ ११-२० ॥

जो व्यक्ति रात्रि में लगातार १० दिन तक इस मन्त्र का ९०० जप करता है, वह राजभय एवं शत्रुभय से मुक्त हो जाता है।

अभिचारजन्य एवं भूतजन्य ज्वर में इस मन्त्र से अभिमन्त्रित जल या भस्म से क्रोधपूर्वक ज्वरग्रस्त रोगी को प्रताडित करना चाहिए। ऐसा करने से वह ३ दिन के भीतर ज्वरमुक्त होकर सुखी हो जाता है।

इस मन्त्र से अभिमन्त्रित औषधि खाकर मनुष्य निश्चित रूप से निरोगी हो जाता है।

तन्मन्त्रितं पयः पीत्वा योद्धुगच्छेन्मनुं जपन्।
तज्जप्तभस्मलिप्ताङ्गः शस्त्रसंघैन बाध्यते ॥ २० ॥
शस्त्रक्षतं व्रणः शोफो लूतास्फोटोपि भस्मना।
त्रिमन्त्रितेन संस्पृष्टाः शुष्यन्त्यचिरतो नृणाम् ॥ २१ ॥

उस मन्त्र से अभिमन्त्रित जल पीकर और उस मन्त्र को जपते हुए अपने शरीर में भस्म लगाकर जो व्यक्ति इस मन्त्र का जप करते हुए युद्ध के लिए जाता है, उसे युद्ध में अनेक अस्त्र-शस्त्र आदि बाधा नहीं पहुँचाते।

शस्त्र का घाव, अन्य घाव, गाँठ, लूता (चर्मरोग) एवं फोड़ा आदि पर ३ बार अभिमन्त्रित भस्म लगाने से वे शीघ्र ही सूख जाते हैं।

सूर्य्यास्तमयमारभ्यजपेत्सूर्योदयावधि।
कीलकं भस्म चादाय सप्ताहावधि संयतः ॥ २२ ॥
निखनेद्भस्मकीलौ तौ विद्विषां द्वार्य्यलक्षितम्।
विद्वेषं मिथआपन्नाः पलायन्तेऽरयोऽचिरात् ॥ २३ ॥

सूर्यास्त से लेकर सूर्योदयपर्यन्त लगातार ७ दिन कील एवं भस्म लेकर जप करना चाहिए। फिर अपने शत्रुओं की जानकारी के बिना उस भस्म एवं कीलों को शत्रु के दरवाजे पर गाड़ दे। (ऐसा करने से) शत्रु परस्पर झगड़ा कर शीघ्र भाग जाते हैं।

अभिमन्त्रितभस्माम्बुदेहचन्दनसंयुतम्।
खाद्यादियोजितं यस्मै दीयते स च दासवत् ॥ २४ ॥
क्रूराश्चजन्तवोनेन भवंति विधिना वशाः।
ईशानदिक्स्थमूलेन भूतांकुशतरोःशुभाम् ॥ २५ ॥
अंगुष्ठमात्रां प्रतिमां प्रविधाय हनूमतः।
प्राणसंस्थापनं कृत्वा सिन्दूरैः परिपूज्य च ॥ २६ ॥

शस्त्रक्षतादयोवारत्रयमभिमन्त्रितेनभस्मनाभ्रजिताआचिराच्छुष्यन्तिनश्यन्ति ॥ २१-२३ ॥
देहचन्दनन्देहेधृतंयच्चन्दनन्तेनयुतं भस्मांकुशमभिमन्त्रितन्यरमेदीयतेसर्वश्यःस्यात् ॥ २४ ॥

गृहस्याभिमुखे द्वारे निखनेन्मन्त्रमुच्चरन् ।
भूताभिचारचौराग्निविषरोगनृपोद्भवाः ॥ २७ ॥
सञ्जायन्ते गृहे तस्मिन्नकदाचिदुपद्रवाः ।
प्रत्यहंधनपुत्राद्यै रेधते तद्गृहं चिरम् ॥ २८ ॥

शरीर पर लगाये गये चन्दन के साथ अभिमन्त्रित भस्म एवं जल को खाद्यान्न में मिलाकर जिसे खिला दिया जाय वह दास हो जाता है। इस रीति से क्रूर जानवर भी वश में हो जाते हैं।

करंजवृक्ष की ईशानकोण की जड़ लेकर उससे हनुमानजी की प्रतिमा बनाकर उसमें प्राणप्रतिष्ठा करके तथा सिन्दूर लेप करके उक्त मन्त्र का जप करते हुए उसे घर के दरवाजे में गाड़ देना चाहिए। ऐसा करने से उस घर में भूत, अभिचार, चोर, अग्नि, विष, रोग तथा राज्यजन्य उपद्रव कभी भी नहीं होते, और घर में प्रतिदिन धन पुत्र आदि की वृद्धि होती है।

निशि श्मशानभूमिस्थौ भस्मना मृत्स्नयापि वा ।
शत्रोःप्रतिकृतिं कृत्वा हृदि नामसमालिखेत् ॥ २९ ॥
कृतप्राणप्रतिष्ठां तां भिद्याच्छस्त्रैर्मनुं जपन् ।
मन्त्रान्ते प्रोच्चरेच्छत्रोर्नामच्छिन्धि च भिन्धि च ॥ ३० ॥
मारयेति चतस्यान्ते दन्तैरोष्ठंनिपीड्य च ।
पाण्योस्तलेप्रपीड्याथ त्यक्त्वा तां सदनं व्रजेत् ॥ ३१ ॥
एवंसप्तदिनं कुर्वन्हन्याच्छत्रुं शिवावितम् ।
अर्द्धचन्द्राकृतौ कुण्डे स्थण्डिले वा हुतं चरेत् ॥ ३२ ॥
मुक्तकेशःश्मशानस्थे लवणैराजिकायुतैः ।
उन्मत्तफलपुष्पैश्चनखलोमविषैरपि ॥ ३३ ॥
काककौशिकगृध्राणां पक्षैः श्लेष्मातकाक्षजैः ।
समिद्भिश्चत्रिशतं दक्षिणाशामुखो निशि ॥ ३४ ॥
सप्तघस्रानिदं कुर्वन्मारयेद्रिपुमुद्धतम् ।

मारण प्रयोग : रात में श्मशान भूमि की मिट्टी या भस्म से शत्रु की प्रतिमा बनाकर हृदय पर उसका नाम लिखना चाहिए। फिर उसमें प्राणप्रतिष्ठा करके उक्त मन्त्र के बाद शत्रु का नाम और फिर 'छिन्धि, भिन्धि एवं मारय' लगाकर इस मन्त्र का

ईशानेत्यादितद्गृहंचिरमित्यंतदुक्तप्रयोगः। भूतांकुशतरोःकरंजस्य अरिष्टस्यईशानदिशिस्थितेनमूलेनांगुष्ठमितांहनुमत्प्रतिमांकृत्वाप्राणान्संस्थाप्यसिन्दूरेरभ्यर्च्ययद्गृहद्वारिनिखन्यतेतत्रसर्वोपद्रवनाशस्तद्वृद्धिश्च ॥ २५-३१ ॥

जप करते हुए शस्त्र से उस प्रतिमा के टुकड़े टुकड़े करने चाहिए। फिर होंटों को दाँतो से दबाकर हथेलियों से उस प्रतिमा को मसलकर वहीं छोड़कर अपने घर आ जाना चाहिए। सात दिन तक लगातार ऐसा करने से भगवान् शिव के द्वारा रक्षित भी शत्रु मर जाता है।

श्मशान में केश खोलकर अर्धचन्द्राकृतिवाले कुण्ड या स्थण्डिल में राई मिश्रित लवण, धतूरे के फल एवं पुष्प, कौआ, उल्लू एवं गीध के नाखून, रोम एवं पंखों से तथा विष से लिसोड़ा एवं बहेड़ा की समिधा से दक्षिण की ओर मुँह करके रात में होम करना चाहिए। एक सप्ताह तक ऐसा करने से व्यक्ति उद्धत शत्रु को मार डालता है।

शतषट्कं जपेद्रात्रौ श्मशाने दिवसत्रयम् ॥ ३५ ॥
ततो वेतालउत्थाय वदेद्भाविशुभाशुभम्।
उदितं कुरुते सर्वं किंकरीभूय मन्त्रिणः ॥ ३६ ॥

वेताल साधन : श्मशान में रात्रि में लगातार ३ दिन तक उक्त मन्त्र का ६०० जप करना चाहिए। ऐसा करने से वेताल उठकर मान्त्रिक का दास बनकर भविष्य में होने वाली शुभ एवं अशुभ बातों को स्पष्ट करता है तथा अन्य शंकाओं को भी स्पष्ट करता है।

हनुमत्प्रतिमां भूमौ विलिखेत्तत्पुरो मनून्।
साध्यनाम द्वितीयान्तं विमुचयविमोचय ॥ ३७ ॥
तत्सर्वं मार्जयेद्वामहस्तेनाथ पुनर्लिखेत्।
एवमष्टोत्तरशतं लिखित्वा मार्जयेत्पुनः ॥ ३८ ॥
एवं कृते पराधीनोमुच्यते निगडात्क्षणात्।
एवं विद्वेषणादीनि कुर्यात्तत्पल्लवं लिखन् ॥ ३९ ॥

बन्दी मोचन : भूमि पर हनुमानजी की प्रतिमा और उसके आगे साध्य का द्वितीयान्त नाम एवं 'विमोचय विमोचय' सहित मूलमन्त्र लिखना चाहिए। इस सबको बाँये हाथ से मिटाना चाहिए और पुनः लिखना चाहिए। इस प्रकार १०८ बार लिखकर मिटाना चाहिए। ऐसा करने से बन्दी व्यक्ति शीघ्र ही हथकड़ी बेड़ी आदि बन्धनों से मुक्त हो जाता है।

इसी प्रकार 'अमुकं विद्वेषय विद्वेषय' पल्लव लगाकर विद्वेषण, 'अमुकं उच्चाटयोच्चाटय' पल्लव लगाकर उच्चाटन तथा 'अमुकं मारय मारय' पल्लव लगाकर मारण का प्रयोग किया जा सकता है।

शिवाश्रितं शिवेनापिरक्षितं शत्रुमेवंकुर्वन्हन्यात्। अर्द्धचन्द्रेत्यादिरिपुमुद्धृतमित्यंतएकोमारणप्रयोगः। उन्मत्तोधत्तूरः। श्लेष्मातकश्चिक्कणफलोवृक्षः। अक्षोबिभीतकस्तदुत्थसमिद्भिश्चहुतब्बरेज्जुहुयात्सप्तषष्ठान् दिवसान् ॥ ३२-३८ ॥ पराधीनोबद्धोनिगडाच्छङ्खलातो-

वश्यार्थं सर्षपैर्होमो विद्वेषे करवीरजैः ।
कुसुमैरिध्मकाष्ठैर्वा जीरकैर्मरिचैरपि ॥ ४० ॥
ज्वरे दूर्वागुडूचीभिर्दध्नाक्षीरेण वाघृतैः ।
शूले होमःकुबेराक्षैरेरण्डसमिधा तथा ॥ ४१ ॥
तैलाक्ताभिश्चनिर्गुण्डीसमिद्भिर्वा प्रयत्नतः ।
सौभाग्ये चन्दनैश्चंद्रैरोचनैलालवङ्गकैः ॥ ४२ ॥
सुगन्धिपुष्पैर्वस्त्राप्त्यै तत्तद्धान्यैस्तदाप्तये ।
तत्पादरजसा राजीलवणाक्तेन मृत्यवे ॥ ४३ ॥

विविध कामनाओं की पूर्ति हेतु हवन : वश्य के लिए सरसों से, विद्वेषण में कनेर के फूल एवं लकड़ियों से अथवा जीरा एवं काली मिर्चों से होम करना चाहिए।

ज्वर में दूर्वा, गुडूची, दही, दूध या घी से तथा शूल में पाँडर एवं अण्डी की समिधाओं से अथवा तेल में डूबी निर्गुण्डी की समिधाओं से प्रयत्नपूर्वक हवन करना चाहिए।

सौभाग्य के लिए चन्दन, कपूर, गोरोचन, इलायची एवं लौंग से, वस्त्राप्ति के लिए सुगन्धित पुष्पों से तथा धान्यवृद्धि के लिए उस धान्य से ही हवन करना चाहिए।

साध्य के पैर की मिट्टी में राई एवं नमक मिलाकर होम करने से उसकी मृत्यु होती है।

किंबहूक्तेर्विषे व्याधौ शान्तौ मोहे च मारणे ।
विवादे स्तम्भने द्यूतभूतभीतौ च संकटे ॥ ४४ ॥
वश्ये युद्धे नृपद्वारे सग्रेरे चौर संकटे ।
मन्त्रोयं साधितो दद्यादिष्टसिद्धिं ध्रुवं नृणाम् ॥ ४५ ॥

माहात्म्य : विशेष क्या कहें, सिद्ध किया हुआ यह मन्त्र मनुष्यों को विष, व्याधि, शान्ति, मोहन, मारण, विवाद, स्तम्भन, द्यूत, भूतभय, संकट, वश्य, युद्ध, राजद्वार, संग्राम एवं चोर आदि के संकट में निश्चितरूप से अभीष्ट फल देता है।

नक्षे हनुसतो यन्त्रं सर्वसिद्धिप्रदायकम् ।
वलयत्रितयं लेख्यं पुच्छाकारसमन्वितम् ॥ ४६ ॥

मुच्यते । विद्वेषणादीनिविद्वेषसार गोरोचाटान्तत्कृतपल्लवंलिखञ्जेवंकुर्यात् । अमुकंद्वेषय २ इतिद्वेष्ये मारय २ इतिमारणे इत्यादिपल्लवलेखनम् ॥ ३९-४० ॥ कुबेराक्षःसूक्ष्मकण-स्तित्कदुपाविशेषः ॥ ४१-४२ ॥ यद्धान्यैर्होमस्तदाप्तिः राजीलवणयुतेनयत्पादरजसाहूयते-मत्रियते ॥ ४३-४५ ॥

साध्यनामलिखेन्मध्ये पाशबीजप्रवेष्टितम् ।
उपर्य्यष्टदलं कृत्वा वर्मपत्रेषु संलिखेत् ॥ ४७ ॥
वलयं बहिरालिख्यतद्बहिश्चतुरस्रकम् ।
चतुरस्रस्य रेखाग्रे त्रिशूलानिसमालिखेत् ॥ ४८ ॥
भूपुरस्याष्टवज्रेषु हसौंबीजं तु लिखेत्ततः ।
कोणेष्वंकुशमालिख्य मालामन्त्रेण वेष्टयेत् ॥ ४९ ॥
तत्सर्वं वेष्टयेत्त्रेण वलयत्रितयेन च ।
वस्त्रे शिलायां फलके ताम्रपात्रेथ कुड्यके ॥ ५० ॥
भूर्जे वा ताडपत्रे वा रोचनानाभि कुंकुमैः ।
यंत्रमेतत्समालिख्य त्यक्ताशो ब्रह्मचर्य्यवान् ॥ ५१ ॥
कपेःप्राणान्प्रतिष्ठाप्य पूजयेत्तं यथाविधि ।
सर्वदुःखनिवृत्यै तद्धार्यमात्मनि धारयेत् ॥ ५२ ॥
ज्वरमार्य्यभिचारञ्च सर्वोपद्रवशान्तिकृत् ।
योषितामपि बालानां धृतं जनमनोहरम् ॥ ५३ ॥

हनुमानजी का धारणयन्त्र : समस्त सिद्धिदायक हनुमानजी के यन्त्र को बतलाता हूँ :

पूँछ जैसी आकृति के ३ वलय लिखने चाहिए । इसके बीच में साध्य का नाम लिखकर पाश बीज (आं) से वेष्टित करना चाहिए । इसके ऊपर अष्टदल बनाकर पत्रों में वर्मबीज (हुं) लिखना चाहिए । फिर उसके बाहर वृत्त बनाकर उसके ऊपर चतुरस्र बनाना चाहिए । तथा चतुरस्र के भुजाओं के अग्रभाग में त्रिशूल बनाने चाहिए । तत्पश्चात् भुपुर के अष्टवज्रों में 'हसौं' बीज लिखना चाहिए । फिर कोणों में अंकुश बीज (क्रों) लिखकर इस चतुरस्र को वक्ष्यमाण मालामन्त्र से वेष्टित करना चाहिए । तत्पश्चात् इस पूरे यन्त्र को ३ वलयों से वेष्टित करना चाहिए ।

वस्त्र, शिला, फलक, ताम्रपात्र, दीवार, भोजपत्र या ताड़पत्र पर गोरोचन, कस्तूरी एवं कुंकुम से उक्त यन्त्र लिखकर साधक उपवास एवं ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए उसमें हनुमानजी की प्राणप्रतिष्ठा कर उसका विधिवत पूजन करे । सब दुःखों से छुटकारा पाने के लिए यह यन्त्र स्वयं पहिनना चाहिए ।

मन्त्रमाह । वलयेति । पुच्छाकारंवलयत्रयंविलिख्यमध्येआमितिबीजेनवेष्टितंसाध्यनामलिखेत् । तदुपर्यष्टदलेषुहुमिति ॥ ४६-४७ ॥ बहिरेकंवलयंकृत्वोपरिचतुरस्रंकृत्वातद्प्राणिसंबध्यतत्रात्रिशूलानिकृत्वात्रिशूलेषुक्रोमिति वज्रेषुहसौमिति विलिख्यतन्मालामंत्रेणवक्ष्यमाणेनसंवेष्टयतत्पुनर्वलयत्रयेणवेष्टयेत् ॥ ४८-५० ॥ नाभिःकस्तूरी । त्यक्ताशउपवासी ॥ ५१-५३ ॥

यह यन्त्र ज्वर, शत्रु एवं अभिचार को नष्ट करता है, सब उपद्रवों को शान्त करता है तथा यह सुन्दर यन्त्र स्त्री एवं बच्चों द्वारा धारण करने पर उनका भी कल्याण करता है।

टिप्पणी : उक्त धारण यन्त्र चित्र नं० ३२ के अनुसार बना लेना चाहिए। फिर उसमें विधिवत हनुमानजी की प्राणप्रतिष्ठा एवं पूजन करने बाद उसे पहिनना चाहिए।

मालामन्त्रमथो वक्ष्ये प्रणवोवाग्धरिप्रिया।
दीर्घत्रयान्विता माया पूर्वोक्तं कूटपञ्चकम् ॥ ५४ ॥
तारोनमोहनुमतेप्रकटाते पराक्रम।
आक्रान्तदिङ्मण्डलतोयशोवीति चतान च ॥ ५५ ॥
धवलीकृतवर्णान्ते जगत्त्रितयवक्त्र च।
देहज्वलदग्निसूर्य्यकोट्यन्ते तु समप्रभ ॥ ५६ ॥
तनूरुहपदंरुद्रावतारपदमीरयेत्।
लंकापुरीदहान्ते नोदधिलंघनवर्णकाः ॥ ५७ ॥
दशग्रीवशिरःपश्चात्कृतान्तकपदं ततः।
सीताश्वासनवाय्वंते सुतशब्दमुदीरयेत् ॥ ५८ ॥
अञ्जनागर्भसंभूतश्रीरामांते तु लक्ष्मणा।
नन्दकांते रकपिचसैन्यप्राकारवर्णकाः ॥ ५९ ॥
सुग्रीवसख्यकावर्णारिणवालिनिबर्हण।
कारणद्रोणपर्वान्तेतोत्पाटनपदं वदेत् ॥ ६० ॥
अशोकवनवीत्यन्तेदारणाक्षकुमारक।
च्छेदनान्ते वनपदंरक्षाकरसमूह च ॥ ६१ ॥
विभञ्जनांते ब्रह्मास्त्रब्रह्मशक्तिग्रसेतिन।
लक्ष्मणांते शक्तिभेदनिवारणपदं पुनः ॥ ६२ ॥
विशल्यौषधिवर्णान्ते समानयनवर्णकाः।
बालोदितांते भान्वंते मण्डलग्रसनेति च ॥ ६३ ॥
मेघनादेतिहोमांते विध्वंसनपदं वदेत्।
इन्द्रजिद्वधकारांतेणसीतारक्षकेति च ॥ ६४ ॥
राक्षसीसंघवर्णान्ते विदारणचकुम्भ च।
कर्णादिवधशब्दान्त परायणपदं वदेत् ॥ ६५ ॥

मालामन्त्रमाह। प्रणवइति। वाक्ऐं। हरिप्रियाश्रीं। मायादीर्घत्रयान्विता ह्रांह्रींह्रं।

श्रीरामभक्तिशब्दान्ते तत्परेति समुद्धरेत् ।
व्योमद्रुमलंघनेति महासामर्थ्यमेति च ॥ ६६ ॥
महातेजःपुंजवीत्यंते राजमान्यपदं पुनः ।
स्वामिवचनसम्पादितार्जुनान्ते च संयुग ॥ ६७ ॥
सहायान्ते कुमारेतिब्रह्मचारिन्पदं वदेत् ।
गम्भीरशब्दोऽत्रिवर्युदक्षिणाशापदं पुनः ॥ ६८ ॥
मार्तण्डमेरुशब्दान्तेपर्वतेतिपदं वदेत् ।
पीठिकार्चनशब्दांतेसकलेतिपदं पुनः ॥ ६९ ॥
मन्त्रागमाचार्य्यममसर्वग्रहविनाशन ।
सर्वज्वरोच्चाटनेतिसर्वविषविनाशन ॥ ७० ॥
सर्वापत्तिनिवारणसर्वदुष्टेति संपठेत् ।
विबर्हणपदं सर्वव्याघ्रादिभयतत्परम् ॥ ७१ ॥
निवारणसर्वशत्रुच्छेदनेतिपदं मम ।
परस्य च त्रिभुवनपुंस्त्रीनपुंसकात्मकम् ॥ ७२ ॥
सर्वजीवपदं पश्चाज्जातंवशययुग्मकम् ।
ममाज्ञाकारकंपश्चात्संपादयपदद्वयम् ॥ ७३ ॥
नानानामपदंधेयान्सर्वान्राज्ञःससंपठेत् ।
परिवारान्ममेत्यन्ते सेवकान्कुरुयुग्मकम् ॥ ७४ ॥
सर्वशस्त्रास्त्रवीत्यन्ते षाणिविध्वंसयद्वयम् ।
मायादीर्घत्रयोपेताहात्रयंचैहियुग्मकम् ॥ ७५ ॥
विलोमपञ्चकूटानिसर्वशत्रून्हनद्वयम् ।
परदान्ते सानिपरसैन्यानिक्षोभयद्वयम् ॥ ७६ ॥
ममसर्वकार्य्यजातंसाधयद्वितयं ततः ।
सर्वदुष्टदुर्जनान्ते मुखानिकीलयद्वयम् ॥ ७७ ॥
धेत्रयं हात्रयं वर्मत्रितय फट्त्रयं ततः ।
वह्निप्रियांतो मंत्रोयं मालासंज्ञो खिलेष्टदः ॥ ७८ ॥
अष्टाशीत्युत्तराःपञ्चशतवर्णामनोःस्मृताः ।
महोपद्रवसंपाते स्मृतोयं दुःखनाशनः ॥ ७९ ॥

माला मन्त्र का उद्धार : अब मालामन्त्र को बतलाता हूँ—प्रणव, वाग् (ऐं) हरिप्रिया (श्रीं) तथा दीर्घत्रय सहित माया (ह्रां ह्रीं ह्रूं) फिर पूर्वोक्त पाँच कूट

पूर्वोक्तमूलमन्त्रस्थम् ॥ ५४-६७ ॥ अत्रिःदः । वायुःवः । स्वस्वरूपमन्यत् ॥ ६८-७९ ॥

(हौं ह्रस्फ्रें ख्फ्रें हस्त्रौं हस्ख्फ्रें) तथा तार (ॐ) 'नमो हनुमते प्रकट' के बाद 'पराक्रम आक्रान्तदिङ् मण्डल यशोवि' और 'तान' (कहना चाहिए) फिर 'धवलीकृत' वर्ण के बाद 'जगत्त्रितय' एवं 'वज्र' (कहना चाहिए) फिर 'देहज्वलदग्नि सूर्यकोटि' के बाद 'समप्रभतनूरुहरुद्रावतार' पद कहना चाहिए। 'लंकापुरीदह' के बाद 'नोदधिलंघन' वर्ण (फिर) 'सीताश्वासनवायु' के बाद 'सुत' शब्द कहना चाहिए। 'अंजनागर्भ-संभूतश्रीराम' के बाद 'लक्ष्मणानन्दक' 'रकपि' तथा 'सैन्यप्राकार' शब्द (और फिर) 'सुग्रीवसख्यका' वर्ण 'रणवालिनिबर्हणकारणद्रोणपर्व' के बाद 'तोत्पाटन' शब्द कहना चाहिए। 'अशोकवनवि' के बाद 'दारणाक्षकुमारकच्छेदन' फिर 'वन' शब्द 'रक्षाकर समूह' 'विभंजन' 'ब्रह्मास्त्रब्रह्मशक्तिग्रस' एवं 'न लक्ष्मण' के बाद 'शक्ति भेद निवारण' पद तथा 'विशल्यौषधि' वर्ण के बाद 'समानयन' 'बालोदित' 'भानु' एवं 'मण्डलग्रसन' के बाद 'मेघनाद' 'होम' एवं 'विध्वंसन' पद बोलने चाहिए। 'इन्द्रजिद्वधकार' के बाद 'णसीतारक्षक' 'राक्षसीसंघ' 'विदारण' 'कुम्भ' एवं 'कर्णादिवध' शब्दों के बाद 'परायण' पद बोलना चाहिए। 'श्रीरामभक्त' शब्द के बाद 'तत्परसमुद्र' 'व्योमद्रुमलंघन' 'महा-सामर्थ्यम' 'हातेजपुञ्जवि' 'राजमान' शब्द तथा 'स्वामि वचन संपादितार्जुन' के बाद 'संयुगसहाय' एवं 'कुमार ब्रह्मचारिन्' पद कहना चाहिए। 'गम्भीर शब्दो' अत्रि (द) वायु (य) फिर 'दक्षिणाशा' पद तथा 'मार्तण्डमेरु' शब्द के बाद 'पर्वत' शब्द कहना चाहिए। 'पीठकार्चन' शब्द के बाद 'सकल' 'मन्त्रागमाचार्यममसर्वग्रह विनाशन सर्व-ज्वरोच्चाटन' एवं 'सर्वविषविनाशन सर्वापत्तिनिवारणसर्वदुष्ट' पढ़ना चाहिए। फिर 'निबर्हण' पद तथा 'सर्वव्याघ्रादिभय' और उसके बाद 'निवारण सर्वशत्रुच्छेदन' 'मम परस्य च त्रिभुवनपुंस्त्रीनपुंसकात्मकं सर्वजीव' पद के बाद 'जातं' तथा २ बार 'वशय' फिर 'ममाज्ञाकारकं' के बाद २ बार 'सपादय' फिर 'नानानाम' शब्द और 'धेयान् सर्वान् राज्ञः स' पद कहना चाहिए। फिर 'परिवारान्मम' के बाद 'सेवकान्' तथा २ बार 'कुरु' फिर 'सर्वशस्त्रास्त्रवि' के बाद 'षाणि' तथा २ बार 'विध्वंसय' फिर दीर्घत्रियोपेता माया (ह्रां ह्रीं ह्रूं), हात्रय (हाहाहा) ऐ हि युग्म (ऐह्येहि) विलोम क्रम से पंचकूट और फिर 'सर्वशत्रून' तथा २ बार 'हन्' फिर 'परद' के बाद 'लानिसैन्यानि' के बाद २ बार 'क्षोभय' फिर 'ममसर्वकार्यजातं' तथा २ बार 'साधय' फिर 'सर्वदुर्जन' के बाद 'मुखानि' तथा २ बार 'कीलय' ३ बार 'घे' ३ बार 'हा', ३ बार वर्म (हुं), ३ बार 'फट्' और अन्त में वह्निप्रिया (स्वाहा) लगाने से यह सर्वाभीष्टदायक ५८८ अक्षर का माला मन्त्र बनता है। महान् उपद्रव होने पर इस मन्त्र का स्मरण करने से सब दुःख नष्ट हो जाते हैं।

टिप्पणी : माला मन्त्र : ॐ ऐं श्रीं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रस्फ्रें रुफ्रें ह्स्रौं ह्स्रुफ्रें ह्सौं ॐ नमो हनुमते प्रकटपराक्रम आक्रान्तदिङ्मंडल यशोवितानधवलीकृतजगत्त्रितय वज्र-देह ज्वलदग्नि सूर्यकोटिसमप्रभ तनूरुहरुद्रावतार लंकापुरी दहनोदधिलंघनदशग्रीवशिरः कृतांतक सीताश्वासनवायुसुतांजनागर्भसम्भूतश्रीरामलक्ष्मणानन्दकरकपिसैन्यप्राकार सुग्रीव सख्यकारणवालिनिबर्हणकारणद्रोणपर्वतोत्पाटनाशोकवनविदारणाक्षकुमारकच्छेदन वनरक्षा करसमूहविभञ्जनब्रह्मास्त्रब्रह्मशक्तिग्रसनलक्ष्मणशक्तिभेदनिवारणविशल्यौषधिसमानयनबालो दितभानुमण्डलग्रसन मेघनादहोमविध्वंसनइन्द्रजिद्वधकारण सीतारक्षकराक्षसीसंघविदारण कुम्भकर्णादिवधपरायणश्रीराममभक्तितत्परसमुद्रव्योमद्रुमलंघनमहासामर्थ्यमहातेजःपुञ्जविराज मानस्वामिवचनसम्पादितार्जुनसंयुगसहायकुमारब्रह्मचारिन्गंभीरशब्दोदयदक्षिणाशामार्तण्ड मेरुपर्वतपीठकार्चनसकलमन्त्रागमाचार्यममसर्वग्रहविनाशन सर्वज्वरोच्चाटन सर्वविषविनाशन सर्वापत्तिनिवारणसर्वदुष्टनिबर्हणसर्वव्याघ्रादिभयनिवारणसर्वशत्रुच्छेदनममपरस्यचत्रिभुवनपुं-स्त्रीनपुंसकात्मकसर्वजीवजातं वशय२ ममाज्ञाकारकं सम्पादय २ नानानामधेयान्सर्वान्राज्ञः सपरिवारान्ममसेवकान्कुरु २ सर्वशस्त्रास्त्रविषाणि विध्वंसय २ ह्रां ह्रीं ह्रूं ३ एह्येहि-ह्सौंह्स्फ्रेंह्स्रौंरुफ्रेंह्स्फ्रेंसर्वशत्रून् हन २ परदलानिपरसैन्यानि क्षोभय २ ममसर्वकार्यजातं-साधय २ सर्वदुष्टदुर्जनमुख्यानि कीलय २ घे ३ हा ३ हुं ३ फट् ३ स्वाहा ।

द्वादशार्णान्तिमान्वर्णान्षट्त्यक्त्वैकं तथादिमम ।
पञ्चकूटात्मको मन्त्रोनिखिलाभीष्टसाधकः ॥ ८० ॥

पंचकूट मन्त्र : द्वादशाक्षर मन्त्र के अन्तिम वर्णों को तथा प्रारम्भ के एक वर्ण को छोड़ने से पञ्चकूटात्मक मन्त्र बनता है, जो साधकों के सब मनोरथों को पूर्ण कर देता है।

टिप्पणी : मन्त्र : ह्स्फ्रें ह्स्फ्रें ह्स्रौं ह्स्फ्रें ह्सौं ।

चतुर्विंशतिश्लोकैर्निष्पन्नोमालामन्त्रो यथा — ॐऐंश्रींह्रांह्रींह्रूंह्स्फ्रेंरुफ्रेंह्स्रौंह्सुफ्रेंह्सौं ॐनमोहनुमतेप्रकटपराक्रमआक्रांतदिङ्मंडलयशोवितानधवलीकृतजगत्त्रितयवज्रदेह-ज्वलदाग्निसूर्यकोटिसमप्रभतनूरुहरुद्रावतारलंकापुरीदहनोदधिलंघनदशग्रीवशिरःकृतांतक-सीताश्वासनवायुसुतांजनागर्भसंभूतश्रीरामलक्ष्मणानंदकरकपिसैन्यप्राकारसुग्रीवसख्यकार-णवालिनिबर्हणकारणद्रोणपर्वतोत्पाटनाशोकवनविदारणाक्षकुमारकच्छेदनवनरक्षाकरसमूह-विभंजनब्रह्मास्त्रब्रह्मशक्तिग्रसनलक्ष्मणशक्तिभेदनिवारणविशल्यौषधिसमानयनबालोदित-भानुमंडलग्रसनमेघनादहोमविध्वंसनइंद्रजिद्वधकारणसीतारक्षकराक्षसीसंघविदारणकुंभ-कर्णादिबधपरायणश्रीरामभक्तितत्परसमुद्रव्योमद्रुमलंघनमहासामर्थ्यमहातेजःपुंजविराज-मानस्वामिवचनसंपादितार्जुनसंयुगसहायकुमारब्रह्मचारिन्गंभीरशब्दोदयदक्षिणाशामार्त-डमेरुपर्वतपीठिकार्चनलकलमंत्रागमाचार्यममसर्वग्रहविनाशन सर्वज्वरोच्चाटनसर्वविषवि-नाशनसर्वापत्तिनिवारणसर्वदुष्टनिबर्हणसर्वव्याघ्रादिभयनिवारणसर्वशत्रुच्छेदनममपरस्य-चत्रिभुवनपुंस्त्रीनपुंसकात्मकसर्वजीवजातंवशय २ ममाज्ञाकारकंसंपादय २ नानानाम-

मुनीरामोथगायत्रीछन्दोदेवःकपीश्वरः ।

विनियोग : (इस मन्त्र का) मुनि राम है, छन्द गायत्री है, देवता कपीश्वर है।

टिप्पणी : विनियोग : अस्य श्रीहनुमत्पञ्चकूटमन्त्रस्य रामचन्द्रऋषिः गायत्री छन्दः कपीश्वरो देवता ममाभीष्ट सिद्धये जपे विनियोगः ।

पञ्चबीजैःसमस्तेन षडंगं मुनिभिःस्मृतम् ॥ ८१ ॥
रामदूतोलक्ष्मणांते प्राणदातांजनासुतः ।
सीताशोकविनाशोथ लंकाप्रासादभञ्जनः ॥ ८२ ॥
हनुमदाद्याःपञ्चैते बीजाद्याङ्केसमन्विताः ।
षडंगमन्त्राःसंदिष्टाध्यानपूजादिपूर्ववत् ॥ ८३ ॥

षडङ्गन्यास : पाँच बीज और समस्त मन्त्र से षडङ्गन्यास करना मुनियों ने बतलाया है। रामदूत, लक्ष्मण के बाद प्राणदाता, अञ्जनासुत, सीताशोक विनाश, लङ्काप्रासाद भञ्जन तथा प्रारम्भ में हनुमत्—ये चतुर्थ्यन्त उक्तबीजों के साथ लगाने से षडङ्ग मन्त्र बनते है।

इस मन्त्र की ध्यान एवं पूजा आदि की रीति पूर्वोक्त मन्त्र के समान है।

टिप्पणी : षडङ्गन्यास के मन्त्र : ह्स्फ्रें हनुमते हृदयाय नमः। स्फ्रें रामदूताय शिरसे स्वाहा। ह्सौं लक्ष्मण प्राणदात्रे शिखायै वषट्। ह्स्फ्रें अञ्जनासुताय कवचाय हुम्। ह्सौं सीताशोक विनाशाय नेत्रत्रयाय वौषट्। ह्स्फ्रें स्फ्रें ह्स्त्रौं ह्स्फ्रें ह्सौं लङ्काप्रासाद भञ्जनाय अस्त्राय फट्।

तारोवाक्कमलामायादीर्घत्रयसमन्विताः ।
पञ्चकूटानिमन्त्रोयं रुद्रार्णोऽभीष्टसिद्धिदः ॥ ८४ ॥
अर्चनापूर्ववच्चास्य परोमन्त्रोभिधीयते ।

धेयास्सर्वान्राज्ञःसपरिवारान्ममसेवकान्कुरु २ सर्वशस्त्रास्त्रविषाणिविध्वंसय २ ह्रांह्रींह्रूं ३ एह्येहिह्सौंह्स्फ्रेंह्स्त्रौंस्फ्रेंह्स्फ्रेंसर्वशत्रून्हन २ परदलानिपरसैन्यानिक्षोभय २ ममसर्वकार्यजातंसाधय २ सर्वदुष्टदुर्जनमुखानिकीलय २ घे ३ हा ३ हुं ३ फट् ३ स्वाहामालामंत्रोयमष्टाशीत्यधिकपञ्चशतवर्णः (५८८)। मंत्रांतरमाह। द्वादशेति। द्वादशाक्षरस्यांतिमान्षड्वर्णान् हनुमतेनमइति। प्रथममेकंहौमितित्यक्त्वाशेषःपञ्चार्णोमन्त्रः—ह्स्फ्रेंस्फ्रेंह्स्त्रौंह्स्फ्रेंह्सौमिति ॥ ८०-८१ ॥ षडंगमाह। रामदूतइति। हनुमदाद्याश्चतुर्थ्यंताबीजपूर्वाःषडंगमन्त्राः। यथा—ह्स्फ्रेंहनुमतेहृत। स्फ्रेंरामदूतायशिरः। ह्स्त्रौंलक्ष्मणप्राणदात्रेशिखेस्यादि० ॥ ८२ ॥ पूर्ववद्द्वादशवर्णवत् ॥ ८३ ॥ मन्त्रांतरमाह। तारइति। तारॐ। वाक्ऐं। कमलाश्रीं। मायादीर्घत्रयाद्या। ह्रांह्रींह्रूं। पञ्चकूटानिचइदानीमुक्तानि। रुद्रार्णएकादशाक्षरः ॥ ८४ ॥ मन्त्रांतरमाह। हृदयमिति। तद्वत्। ङेतोनमोभगवतेआञ्जनेयाय-

एकादशाक्षर मन्त्र : तार (ॐ) वाक् (ऐं) कमला (श्रीं) दीर्घत्रयसमन्विता माया (ह्रां ह्रीं ह्रूं) और पञ्चकूटबीज (ह्स्फ्रें ख्फ्रें ह्स्त्रौं ह्स्ख्फ्रें ह्सौं लगाने से यह अभीष्ट सिद्धिदायक एकादशाक्षर मन्त्र बनता है।

इस मन्त्र की पूजापद्धति पूर्वोक्त मन्त्र के समान है। इसके अन्य मन्त्र भी बतलाते हैं।

टिप्पणी : एकादशाक्षर मन्त्र : ॐ ऐं श्रीं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्स्फ्रें ख्फ्रें ह्स्त्रौं ह्स्ख्फ्रें ह्सौं।

हृदयंभगवान्ङेन्तंआञ्जनेयमहाबलौ ॥ ८५ ॥
तद्वद्वह्निप्रियांतो यं मनुरष्टादशाक्षरः।

अन्य मन्त्र : हृदय (नमः) चतुर्थ्यन्त भगवान् आंजनेय एवं महाबल (भगवते आंजनेयाय महाबलाय) और अन्त में वह्निप्रिया (स्वाहा) लगाने से यह अष्टादशाक्षर मन्त्र बनता है।

टिप्पणी : अष्टादशाक्षर मन्त्र : नमो भगवते आञ्जनेयाय महाबलाय स्वाहा।

मुनिरीश्वर एवास्यानुष्टुप्छन्दःसमीरितम् ॥ ८६ ॥
हनूमान्देवता बीजं हुं शक्तिर्वह्निवल्लभा।
आञ्जनेयोरुद्रमूर्तिर्वायुपुत्रस्तथैव च ॥ ८७ ॥
अग्निगर्भोरामदूतो ब्रह्मास्त्रविनिवारणः।
एतैर्ङेन्तैःषडंगानि कृत्वा ध्यायेत्कपीश्वरम् ॥ ८८ ॥

विनियोग एवं न्यास : इस मन्त्र का ईश्वर ऋषि है, अनुष्टुप् छन्द है हनुमान् देवता है, 'हुं' बीज है तथा वह्निवल्लभा (स्वाहा) शक्ति है।

आञ्जनेय, रुद्रमूर्ति, वायुपुत्र, अग्निगर्भ, रामदूत तथा ब्रह्मास्त्रनिवारण—इनके चतुर्थ्यन्तरूपों से षडङ्गन्यास करके कपीश्वर का ध्यान करना चाहिए।

टिप्पणी : विनियोग : अस्य श्री हनुमन्मन्त्रस्य ईश्वर ऋषिः, अनुष्टुप् छन्दः, हनुमान् देवता, हुं बीजं, स्वाहा शक्तिः, ममाभीष्टसिद्धये जपे विनियोगः।

षडङ्गन्यास : ॐ आञ्जनेयाय हृदयाय नमः। रुद्रमूर्तये शिरसे स्वाहा। वायुपुत्राय शिखाये वषट्। अग्निगर्भाय कवचाय हुम्। रामदूताय नेत्रत्रयाय वौषट्। ब्रह्मास्त्र-निवारणाय अस्त्राय फट्।

महाबलायस्वाहेति । षडंगमाह । आञ्जनेयइति । आञ्जनेयायहृत् । रुद्रमूर्तयेशिर-इत्यादि० ८५-८८ ॥

दहनतप्तसुवर्णसमप्रभं भयहरं हृदये विहिताञ्जलिम् ।
श्रवणकुण्डलशोभिमुखाम्बुजं नमतवानरराजमिहाद्भुतम् ॥ ८९ ॥

ध्यान : तपे हुए सोने के समान आभावाले, भय को दूर करनेवाले, हृदय पर अञ्जलि बाँधे हुए, कानो में लटकते कुण्डलों से शोभायमान मुखपंकजवाले अद्भुत वानर-राज को प्रणाम करता हूँ ।

अयुतं प्रजपेन्मन्त्रं दशांशं जुहुयात्तिलैः ।
वैष्णवेपूजयेत्पीठे पूर्ववत्कपिनायकम् ॥ ९० ॥

जपसंख्या एवं हवन : इस मन्त्र का १० हजार जप करना चाहिए। तिलों से दशांश होम करना चाहिए । तथा वैष्णव पीठ पर कपीश्वर का पूजन करना चाहिए । (पीठपूजा एवं आवरणपूजा की पद्धति श्लो० १०-१३ की टिप्पणियो में बतलायी जा चुकी है ।)

जितेन्द्रियो नक्तभोजी प्रत्यहंसाष्टकं शतम् ।
जपित्वाक्षुद्ररोगेभ्यो मुच्यते दिवसत्रयात् ॥ ९१ ॥
भूतप्रेतपिशाचादिनाशायैवं समाचरेत् ।
महारोगनिवृत्यै तु सहस्रं प्रत्यहं जपेत् ॥ ९२ ॥
यताशनोऽयुतं नित्यं जपन्ध्यायन्कपीश्वरम् ।
राक्षसौघं विनिघ्नं तमचिराज्जयति द्विषम् ॥ ९३ ॥
सुग्रीवेणसमं रामं संदधानं स्मरन्कपिम् ।
प्रजप्यायुतमेतस्य संधिं कुर्य्याद्विरुद्धयोः ॥ ९४ ॥
लंकां दहन्तं तं ध्यायन्नयुत प्रजपेन्मनुम् ।
शत्रूणां प्रदहेद्ग्रामानचिरादेव साधकः ॥ ९५ ॥
प्रयाणसमये ध्यायन्हनूमन्तं मनुंजपन् ।
योयातिसोऽचिरात्स्वेष्टं साधयित्वा गृहं व्रजेत् ॥ ९६ ॥
यःकपीशं सदागेहे पूजयेज्जपतत्परः ।
आयुर्लक्ष्म्यौ प्रवर्द्धेते तस्य नश्यंत्युपद्रवाः ॥ ९७ ॥
शार्दूलतस्करादिभ्यो रक्षेन्मनुरयं स्मृतः ।
प्रस्वापकाले चौरेभ्यो दुष्टस्वप्नादपिध्रुवम् ॥ ९८ ॥

ध्यानमाह । दहनेति ॥ ८९-९१ ॥ प्रयोगानाह । जितेन्द्रियइति ॥ ९१-९७ ॥ ध्रुवं-ओंकारः ॥ ९८ ॥

काम्यप्रयोग : जो साधक इन्द्रियों को वश में रखकर केवल रात्रि में भोजनकर इस मन्त्र का लगातार ३ दिन तक प्रतिदिन १०८ बार जप करता है, वह मात्र ३ दिन में क्षुद्र रोगों से मुक्त हो जाता है। भूत प्रेत एवं पिशाच आदि को दूर करने के लिए भी उक्त प्रयोग करना चाहिए। किन्तु असाध्य या लम्बी बीमारी से छुटकारा पाने के लिए प्रतिदिन १ हजार जप करना चाहिए।

एक समय हविष्यान्न का भोजन कर राक्षससमूह को नष्ट करते हुए कपीश्वर का ध्यान करते हुए जो साधक प्रतिदिन १० हजार जप करता है, वह शीघ्र ही शत्रु को जीत लेता है।

सुग्रीव के साथ राम की मित्रता कराते हुए कपीश्वर का ध्यान करते हुए इस मन्त्र का १० हजार जप करने से शत्रुओं में सन्धि करायी जाती है।

लङ्कादहन करते हुए कपीश्वर का ध्यान करते हुए जो साधक इस मन्त्र का १० हजार जप करता है, वह शीघ्र ही शत्रुओं के घरों को जला देता है।

यात्रा के समय हनुमानजी का ध्यान करते हुए इस मन्त्र को जपता हुआ जो व्यक्ति जाता है, वह अपना अभीष्ट कार्य सम्पन्न करके शीघ्र ही घर आ जाता है।

जो व्यक्ति अपने घर में सदैव हनुमानजी की पूजा करता है और जप में तत्पर रहता है, उसकी आयु एवं सम्पत्ति बढ़ती है तथा उपद्रव नष्ट हो जाते हैं।

इस मन्त्र का स्मरण करने से सिंह आदि हिंसक जन्तु एवं चोर आदि से रक्षा होती है। सोते समय इसका स्मरण करने से चोरों से रक्षा होती है तथा दुःस्वप्न दिखलायी नहीं देते।

पवनद्वितयं सद्योजातयुक्तं हनूपदम्।
महाकालःशशांकाढ्यःकामिकाफलफःक्रिया ॥ ९९ ॥
सनेत्राणां तमीनागसात्वतोगितआयुरा।
लोहितंरुडाहेतिवेदनेत्राक्षरोमनुः ॥ १०० ॥

व्रीहारोगनाशक मन्त्र का उद्धार : ध्रुव (ॐ) सद्योजातसहित पवनद्वय (यो यो) फिर 'हनू' पद शशांकसहित महाकाल (मं) कामिका (त) तथा 'फलफ' फिर सनेत्रा क्रिया (लि) णान्त (त) मीन (ध) एवं 'ग' फिर सात्वत (ध) तथा

उदररोगनाशकमन्त्रमाह। पवनेति। सद्योजातओंकारस्तद्युतंपवनद्वयंयोयो। हनूस्वरूपं। शशांकाढ्यं महाकालः सबिन्दुर्मः। कामिकाः तः। फलस्वरूपान्तेसनेत्राक्रिया इयुतोलः लि। णांसन्तः। मीनोधः। गस्वरूपं। सात्वतोधः। गितआयुराषस्वरूपं। लोहितंपः। रुडाहस्वरूपं। वेदनेत्राक्षरः चतुर्विंशत्यर्णः। यथा-ॐयोयोहनुमन्तफलफलितधगधगितःआयुरापपरुडाहेति ॥ ९९-१०० ॥

'गित आयुष' फिर लोहित (प) तथा 'रुडाह' लगाने से यह २४ अक्षर का मन्त्र बनता है ।

टिप्पणी : *प्लीहारोग नाशक मन्त्र* : ॐ यो यो हनूमन्त फलफलितधग धगित आयुराषपरुडाह ।

प्लीहरोगहरश्चास्य मुन्याद्यं पूर्ववन्मतम् ।
प्लीह्नयुक्तोदरे स्थाप्यं नागवल्लीदलं शुभम् ॥ १०१ ॥
तदुपर्य्यष्टगुणितं वस्त्रमाच्छादयत्ततः ।
वंशजं शकलं तस्योपरिमुंचेत्कपि स्मरन् ॥ १०२ ॥
आरण्यप्रस्तरोत्पन्ने वह्नौयष्टिं प्रतापयेत् ।
बदरीतरुसंभूतां मन्त्रेणानेन सप्तशः ॥ १०३ ॥
तया संताडयेद्वंशं शकलं जठरस्थितम् ।
सप्तकृत्वःप्लीहरोगो नश्यत्येव नृणां क्षणात् ॥ १०४ ॥

प्रयोगविधि : प्लीहा रोग नाशक इस मन्त्र के ऋषि आदि पूर्वोक्त मन्त्र के समान हैं ।

प्लीहा रोगी के पेट पर पान रखकर उसके ऊपर आठगुना कपड़ा फैलाना चाहिए । फिर उसके ऊपर हनुमानजी का ध्यान करते हुए बाँस का टुकड़ा रखना चाहिए ।

वनपाषाण से उत्पन्न तथा बेर की लकड़ियों से जलायी गयी अग्नि में मूलमन्त्र का जप करते हुए ७ बार यष्टि को तपाना चाहिए । उस यष्टि से पेट पर रखे बाँस के टुकड़े को ७ बार संताडित करना चाहिए । ऐसा करने से मनुष्यों का प्लीहा रोग शीघ्र ही दूर हो जाता है ।

पुच्छाकारे सुवसने लेखिन्या कोकिलोत्थया ।
अष्टगन्धैर्लिखेद्रूपं कपिराजस्य सुन्दरम् ॥ १०५ ॥
तन्मध्येष्टादशार्णं तु शत्रुनामयुतं लिखेत् ।
तेन मन्त्राभिजप्तेन शिरोबद्धे न भूमिपः ॥ १०६ ॥
जयत्यरिगणं सर्वं दर्शनादेव निश्चितम् ।

विजयप्रद प्रयोग : पूँछ जैसे आकारवाले वस्त्र पर कोयल के पंख से अष्टगन्ध से हनुमान जी की सुन्दर मूर्ति लिखनी चाहिए । उसके मध्य में शत्रु के नाम के साथ अष्टादशाक्षर मन्त्र लिखना चाहिए । फिर उस मन्त्र से वस्त्र को अभिमन्त्रित कर तथा शिरपर बाँध कर राजा अपने शत्रुओं को देखने मात्र से ही निश्चयपूर्वक जीत लेता है ।

प्लीहरोगः उदररोगः । तन्नाशकप्रयोगमाह । प्लीहेति ॥ १०१-१०२ ॥ आरण्यप्रस्तरोत्पन्नेवनपाषाणान्निष्कासितेग्नौबदर्युत्थांयष्टिंसप्तधामूलमन्त्रेणतापयेत् ॥ १०३ ॥ तयोदरस्थितेवंशखण्डेताडितेरोगोनश्यति ॥ १०४ ॥ प्रयोगान्तरमाह । पुच्छेति। पुच्छाकारे-

टिप्पणी : पुच्छाकार वस्त्र पर अष्टगन्ध एवं कोयल के पंख से चित्र ३३ की आकृति जैसा हनुमान्‌जी का चित्र बनाना चाहिए और उसके बीच में शत्रु का नाम तथा अष्टादशाक्षर मन्त्र लिखना चाहिए।

इस वस्त्र को 'नमो भगवते आंजनेयाय महाबलाय स्वाहा' इस अष्टादशाक्षर मन्त्र से अभिमन्त्रित कर शिर पर बाँध लेना चाहिए। ऐसा करने से राजा अपने जिस किसी भी शत्रु को देखता है उसे शीघ्र जीत लेता है।

युद्धे जिगीषुर्नृपतिःपूर्वोक्तं लेखयेद्ध्वजे ॥ १०७ ॥
ध्वजमादायोपरागे संस्पर्शान्मोक्षणावधि ।
मातृकां जापयेत्पश्चाद्दशांशेन च होमयेत् ॥ १०८ ॥
सर्षपैस्तिलसंमिश्रैःसंस्पर्शान्मोक्षणावधि ।
गजस्थंतं ध्वजं दृष्ट्वा पलायन्तेऽरयोऽचिरात् ॥ १०९ ॥

विजयदायक ध्वज : युद्ध में विजय की इच्छा करने वाला राजा शत्रु के नाम एवं अष्टादशाक्षर मन्त्र के साथ पूर्वोक्त हनुमानजी के चित्र को ध्वज पर लिखे।

उस ध्वज को लेकर ग्रहण के समय स्पर्शकाल से मोक्षकाल पर्यन्त मातृकाओं का जप करे तथा तिल मिलाकर सरसों से स्पर्श से मोक्ष तक के समय में दशांश होम करे।

युद्ध में हाथी के ऊपर लगे इस ध्वज को देखकर शत्रुदल शीघ्र भाग जाता है।

अथोहनुमतो यंत्रं वक्ष्ये रक्षाविधायकम् ।
लिखेदष्टदलं पद्मं साध्याख्यायुतकर्णिकम् ॥ ११० ॥
दलेष्वष्टार्णमालिख्यमालामन्त्रेण वेष्टयेत् ।
तद्बहिर्मायया वेष्ट्य प्राणस्थापनमाचरेत् ॥ १११ ॥
लिखितं स्वर्णलेखिन्यादले भूर्जतरोःशुभे ।
रोचनाकुंकुमाभ्यां तु वेष्टितं कनकादिभिः ॥ ११२ ॥
सम्पातसाधितं यंत्रं भुजे वा मूर्ध्नि धारयेत् ।
रणे जयमवाप्नोतिव्यवहारे दुरोदरे ॥ ११३ ॥
ग्रहैर्विघ्नैर्विषैःशस्त्रैश्चौरैर्नैवाभिभूयते ।
रोगान्सर्वानपाकृत्य चिरंजीवति भाग्यवान् ॥ ११४ ॥

वक्ष्येकोकिलापिच्छलेखिन्याऽष्टगन्धैर्हनुमद्रूपंकृत्वातद्बहिरष्टादशार्णंविलिख्याधिरन्निशेनशिरोबद्धेनतेनारीक्षयति ॥ १०५-१०९ ॥ यन्त्रमाह । लिखेदिति ॥ ११० ॥ अष्टार्णमालामन्त्रोवक्ष्यमाणौ ॥ १११-११२ ॥ दुरोदरेद्यूते ॥ ११३-११४ ॥

रक्षाकारक यन्त्र : अब हनुमानजी का रक्षाकारक यन्त्र बतलाता हूँ :

अष्टदल कमल और उसकी कर्णिका में साध्य का नाम लिखना चाहिए। दलों में अष्टाक्षर मन्त्र लिखकर उसे वक्ष्यमाण माला मन्त्र से वेष्टित करना चाहिए। इसके बाहर मायाबीज (ह्रीं) से वेष्टित कर प्राण-प्रतिष्ठा करनी चाहिए।

भोजपत्र पर सोने की लेखनी एवं गोरोचन कुंकुम से उक्त यन्त्र लिखना चाहिए। तथा सम्पात साधित इस यन्त्र को स्वर्ण आदि से वेष्टित कर (सोने या चांदी के ताबीज में डालकर) भुजा या मस्तक पर धारण करना चाहिए।

(इसके धारण करने से व्यक्ति) युद्ध, व्यवहार एवं जुआ में जीतता है। ग्रह, विघ्न, विष एवं चोरों से पीड़ित नहीं होता तथा सब रोगों से मुक्त रह कर वह भाग्यवान् दीर्घकाल तक जीवित रहता है।

वियदग्नियुतं दीर्घषट्काद्यं तारसम्पुटम्।
अष्टार्णो मन्त्र आख्यातो मालामन्त्रोऽथकथ्यते ॥ ११५ ॥

अष्टाक्षरमन्त्र का उद्धार : अग्नि (र) सहित वियत् (ह्) इनमें दीर्घ षट्क (आं ईं ऊं ऐं औं अः) लगाकर तार (ॐ) से सम्पुटित करने पर अष्टाक्षर मन्त्र बन जाता है। अब मालामन्त्र को बतलाते हैं।

टिप्पणी : *अष्टाक्षर मन्त्र* : ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रैं ह्रौं ह्रः ॐ।

वज्रकायवज्रतुण्डकपिलेत्यथपिंगल।
ऊर्ध्वकेशमहावर्णबलरक्तमुखेति च ॥ ११६ ॥
तडिज्जिह्वमहारौद्रदंष्ट्रोत्कटकहद्वयम्।
करालिनेमहाट्टहप्रहारिन्निर्तिवर्णकाः ॥ ११७ ॥
लंकेश्वरबधायान्ते महासेतुपदं ततः।
बन्धान्ते च महाशैलप्रवाहगगनेचर ॥ ११८ ॥
एह्येहिभगवन्नंते महाबलपराक्रम।
भैरवाज्ञापयैह्येहिमहारौद्रपदं पुनः ॥ ११९ ॥
दीर्घपुच्छेनवर्णान्ते वेष्टयान्ते तु वैरिणम्।

अष्टार्णमाह। वियदिति। वियत्हः। अग्नीरः। यथा-ॐह्रांह्रांह्रूंह्रैंह्रौंह्रः ॐइत्यष्टार्णः। ॥११५॥ मालामन्त्रमाह। वज्रेति। यथा-ॐवज्रकायवज्रतुण्डकपिलपिङ्गलऊर्ध्वकेशमहाबलरक्तमुखतडिज्जिह्वमहारौद्रदंष्ट्रोत्कटकहहकरालिनेमहाट्टहप्रहारिन्लंकेश्वरवधायमहासेतुबन्धमहाशैलप्रवाहगगनेचरएह्येहिभगवन्महाबलपराक्रमभैरवाज्ञापयएह्येहिमहारौद्रदीर्घपुच्छेनवेष्टयवैरिणंभञ्जय २ हुंफट् ॥ ११६-१२० ॥

भञ्जयद्वितयंहुंफट्प्रणवादिसमीरितः ॥ १२० ॥
बाणनेत्रेन्दुवर्णोयं मालामन्त्रोखिलेष्टदः ।

मालामन्त्र का उद्धार : 'वज्रकायवज्रतुण्डकपिल' फिर 'पिङ्गलऊर्ध्वकेशमहाबल-रक्तमुख' 'तडिज्जिह्वमहारौद्रदंष्ट्रोत्कटक' एवं २ बार 'ह' (ह ह) फिर 'करालिने महादृढ़ प्रहारिन्' ये शब्द तथा 'लंकेश्वरवधाय' के बाद 'महासेतु' एवं 'बन्ध' फिर 'महाशैलप्रवाहगगनेचर एह्येहि भगवन्' के बाद 'महाबलपराक्रम भैरवाज्ञापय एह्येहि महारौद्र' ये शब्द तथा 'दीर्घपुच्छेन' के बाद वेष्टय' फिर 'वैरिणं' तथा २ बार भंजय (भंजय भंजय) फिर 'हुं फट्' तथा प्रारम्भ में प्रणव लगाने से यह १०५ अक्षर का सर्वाभीष्टदायक मालामन्त्र बनता है ।

टिप्पणी : मालामन्त्र : ॐ वज्रकायवज्रतुण्ड कपिलपिङ्गलऊर्ध्वकेश महाबलरक्त-मुखतडिज्जिह्वमहारौद्र दंष्ट्रोत्कटक ह ह करालिने महादृढ़प्रहारिन्लंकेश्वर वधाय महासेतु-बन्धमहाशैल प्रवाह गगनेचर एह्येहि भगवन्महाबल पराक्रम भैरवाज्ञापय एह्येहि महारौद्रदीर्घपुच्छेन वेष्टय वैरिणं भञ्जय भञ्जय हुं फट् ।

रक्षाकारक यन्त्र : भोजपत्र पर सोने की कलम तथा गोरोचन कुंकुम से अष्टदल कमल लिखना चाहिए । इसकी कर्णिका में साध्य का नाम तथा दलों में उक्त अष्टाक्षर मन्त्र लिखना चाहिए । फिर उसे उक्त माला मन्त्र से वेष्टित कर मायाबीज (ह्रीं) से वेष्टित करना चाहिए (देखिये चित्र नं० ३४) ।

हनुमानजी का रक्षाकारक मन्त्र :

इस यन्त्र पर हनुमानजी की प्राणप्रतिष्ठाकर अष्टाक्षर एवं मालामन्त्र से अभिमन्त्रित करना चाहिए। फिर हवन कर सोने, चाँदी या ताँबे के तावीज में रखकर इस यन्त्र को दाहिनी भुजा या गले में धारण करना चाहिए ।

युद्धे जप्तो जयं दद्याद्व्याधौ व्याधिविनाशनः ॥ १२१ ॥
अष्टार्णमालामन्त्रोस्तुमुन्याद्यर्च्चा तु पूर्ववत् ।
भूरिणा किमिहोक्तेन सर्वं दद्यात्कपीश्वरः ॥ १२२ ॥

फल : युद्ध में इस माला मन्त्र का जप करने से यह जयदायक होता है । तथा व्याधि में जप करने से व्याधि को दूर कर देता है ।

बाणनेत्रेन्दुवर्णः पञ्चविंशत्युत्तरशतार्णः ॥ १२१ ॥ अष्टार्णमालामन्त्रौस्वतन्त्राविति-सूचयन्नाह । अष्टार्णेति ॥ १२२ ॥ इतिश्रीमन्त्रमहोदधिव्याख्यायांनौकायांत्रयोदश-स्तरंगः ।

अष्टाक्षर एवं माला मन्त्रों के ऋषि इत्यादि तथा पूजा की रीति पूर्वोक्त मन्त्र के समान है। विशेष कहने की आवश्यकता नहीं है, कपीश्वर हनुमानजी सब कुछ देते हैं।

टिप्पणी : इस अष्टाक्षर एवं मालामन्त्र के विनियोग, न्यास, ध्यान अष्टादशाक्षर मन्त्र के समान हैं तथा पूजापद्धति पूर्वोक्त द्वादशाक्षर मन्त्र के समान है।

इति श्री शुकदेव चतुर्वेदि विरचितायां सटिप्पण्यां मन्त्रमहोदधेः
मोहिनी व्याख्यायां त्रयोदशस्तरङ्गः।

चतुर्दश तरङ्ग

अथ वक्ष्ये महाविष्णोर्मन्त्रान्सर्वार्थसाधकान् ।
ब्रह्माद्या यानुपास्याथ ससृजुर्विविधाःप्रजाः ॥ १ ॥

अब सर्वार्थसाधक विष्णु के मन्त्रों को बतलाता हूँ, जिनकी उपासना कर ब्रह्मा आदि ने विविध प्रजा का सृजन किया ।

मेरुःकृशानुसंयुक्तोऽनुग्रहेन्दुसमन्वितः ।
एकाक्षरो नरहरेर्मन्त्रःकल्पद्रुमो नृणाम् ॥ २ ॥
त्र्यक्षरःसंपुटःप्रोक्तो मायया प्रणवेनच ।

नृसिंह मन्त्र का उद्धार : मेरु (क्ष) एवं कृशानु (र्) इन दोनों को अनुग्रह (औ) तथा इन्दु (अनुस्वार) के साथ मिलाने से नृसिंह का एकाक्षर मन्त्र बनता है, यह साधकों को कल्पवृक्ष के समान (मनोवांछित फलदायक होता) है ।

माया बीज (ह्रीं) या प्रणव (ॐ) से सम्पुटित करने पर यह तीन अक्षर का मन्त्र बन जाता है ।

टिप्पणी : एकाक्षर मन्त्र : क्ष्रौं

तीन अक्षर का मन्त्र : (i) ह्रीं क्ष्रौं ह्रीं । (ii) ॐ क्ष्रौं ॐ ।

ऋषिरत्रिश्चगायत्रीछन्दो देवो नृकेसरी ॥ ३ ॥
षड्दीर्घयुक्तबीजेन षडंगानि समाचरेत् ।
त्र्यर्णं मायापुटेनैव तारसम्पुटितेन वा ॥ ४ ॥

विनियोग एवं न्यास : इन मन्त्रों के अत्रि ऋषि हैं, गायत्री छन्द है तथा नृसिंह देवता हैं ।

षड्दीर्घ सहित बीज से षडङ्गन्यास करना चाहिए । तीन अक्षर के मन्त्र में मायाबीज या प्रणव से सम्पुटित षड्दीर्घसहित नृसिंह बीज से षडङ्गन्यास करना चाहिए ।

विष्णुमन्त्रान्वक्तुंप्रतिजानाति । अथेति ॥ १ ॥ मन्त्रनाह । मेरुरिति । मेरुःक्षः । कृशानूरः । अनुग्रहऔ । इन्दुर्बिन्दुः तेनक्ष्रौं ॥ २ ॥ मायाह्रीं । तत्सम्पुटः प्रणवसम्पुटश्चेति द्वौत्र्यर्णौ ॥ ३-४ ॥

टिप्पणी : विनियोग : अस्य श्रीनृसिंह मन्त्रस्य अत्रि ऋषिः,[3] गायत्री छन्दः श्रीनृसिंहोदेवता ममाभीष्ट सिद्धये जपे विनियोगः ।

षडङ्गन्यास :

एकाक्षर मन्त्र के प्रयोग में : क्ष्रां हृदयाय नमः । क्ष्रीं शिरसे स्वाहा । क्ष्रूं शिखायै वषट् । क्ष्रैं कवचाय हुम् । क्ष्रौं नेत्रत्रयाय वौषट् । क्ष्रः अस्त्राय फट् ।

त्र्यक्षर मन्त्र के प्रयोग में : ह्रीं क्ष्रां ह्रीं हृदयाय नमः । ह्रीं क्ष्रीं ह्रीं शिरसे स्वाहा । ह्रीं क्ष्रूं ह्रीं शिखायै वषट् । ह्रीं क्ष्रैं ह्रीं कवचाय हुम् । ह्रौं क्ष्रौं ह्रीं नेत्रत्रयाय वौषट् । ह्रीं क्ष्रः ह्रीं अस्त्राय फट् ।

द्वितीय त्र्यक्षर मन्त्र के प्रयोग में : ॐ क्ष्रां ॐ हृदयाय नमः । ॐ क्ष्रीं ॐ शिरसे स्वाहा । ॐ क्ष्रूं ॐ शिखायै वषट् । ॐ क्ष्रैं ॐ कवचाय हुम् । ॐ क्ष्रौं ॐ नेत्रत्रयाय वौषट् । ॐ क्ष्रः ॐ अस्त्राय फट् ।

तपनसोमहुताशनलोचनं घनविरामहिमांशुसमप्रभम् ।
अभयचक्रपिनाकवरान्करैर्दधतमिन्दुधरं नृहरिं भजे ॥ ५ ॥

ध्यान : सूर्य, चन्द्रमा एवं अग्नि रूपी नेत्रवाले, शरदकालीन चन्द्रमा जैसी आभा-वाले, चार भुजाओं में क्रमशः अभय, चक्र, धनुष एवं वर धारण करने वाले तथा मस्तक पर चन्द्रकला धारण करने वाले नृसिंह जी का भजन करता हूँ ।

लक्षमेकं जपेन्मन्त्रं दशांशं घृतपायसैः ।
जुहुयात्पूजयेत्पीठे विमलादिसमन्विते ॥ ६ ॥

जपसंख्या, हवन एवं पीठ पूजा : इस मन्त्र का १ लाख जप करना चाहिए तथा घी और खीर से दशांश होम करना चाहिए । तथा विमला आदि शक्ति सहित वैष्णव पीठ पर इनका पूजन करना चाहिए ।

टिप्पणी : पीठ पूजा पद्धति : वृत्ताकार कर्णिका और उसके ऊपर अष्टदल, बत्तीस दल तथा भूपुर सहित बने यन्त्र पर भगवान् नृसिंह जी का पूजन करना चाहिए । (नृसिंह पूजन यन्त्र देखिये चित्र नं० ३५) ।

सामान्य तान्त्रिक पद्धति के अनुसार प्रातः कृत्य करके तथा वैष्णव-पद्धति के अनुसार आचमन, प्राणायाम एवं न्यास आदि करने के बाद पूर्वोक्त श्लोक ५ में वर्णित

ध्यानमाह । तपनेति । सूर्यश्चाग्निश्च नेत्रं । घनविरामःशरत्तत्रयोहिमांशुश्चन्द्रस्तत्तुल्य-कान्तिः । घनसमानगलमितिपाठेनीलकण्ठं । शशिसप्रभमितिपाठान्तरेशशिनासमानाप्रभा-यस्यतम् । ऊर्ध्वयोर्दक्षवामयोश्चक्रपिनाकौ । अधस्थयोर्वराभये । इन्दुधरंशशिशेखरम् ॥५॥ विमलादयउक्ताः ॥ ६ ॥

नृसिंहजी के स्वरूप का ध्यान कर मानसोपचार से पूजन कर विधिवत शंख स्थापन करने के बाद निम्नलिखित मन्त्रों से पीठ-देवताओं का पूजन करना चाहिए, यथा :

पीठ मध्ये : ॐ आधार शक्तये नमः । ॐ प्रकृतये नमः । ॐ कूर्माय नमः । ॐ शेषाय नमः । ॐ अनन्ताय नमः । ॐ पृथिव्यै नमः । ॐ क्षीरसागराय नमः । ॐ श्वेतद्वीपाय नमः । ॐ मणिमण्डपाय नमः । ॐ कल्पवृक्षाय नमः । ॐ मणि वेदिकायै नमः । ॐ रत्नसिंहासनाय नमः ।

इसके बाद आग्नेय आदि चारों कोणों में धर्म आदि का तथा पूर्व आदि चारों दिशाओं में अनुलोम क्रम से अधर्म आदि का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ धर्माय नमः-आग्नेये । ॐ ज्ञानाय नमः-नैऋत्ये । ॐ वैराग्याय नमः-वायव्ये । ॐ ऐश्वर्याय नमः-ईशान्ये । ॐ अधर्माय नमः-पूर्वे । ॐ अज्ञानाय नमः-दक्षिणे । ॐ अवैराग्याय नमः-पश्चिमे । ॐ अनैश्वर्याय नमः-उत्तरे ।

तदनन्तर पुनः पीठ के मध्य में निम्नलिखित मन्त्रों से अनन्त आदि देवताओं का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ अनन्ताय नमः । ॐ पद्माय नमः । ॐ अं सूर्यमण्डलाय द्वादशकलात्मने नमः । ॐ उं सोममण्डलाय षोडशकलात्मने नमः । ॐ रं वह्निमण्डलाय दशकलात्मने नमः । ॐ सं सत्त्वाय नमः । ॐ रं रजसे नमः । ॐ तं तमसे नमः । ॐ आं आत्मने नमः । ॐ अं अन्तरात्मने नमः । ॐ पं परमात्मने नमः । ॐ ह्रीं ज्ञानात्मने नमः ।

तत्पश्चात् पीठ मन्त्र से आसन देकर ध्यान, आवाहन आदि उपचारों से पञ्चपुष्पाञ्जलि-प्रदान पर्यन्त नृसिंह जी का विधिवत पूजन कर आवरण पूजा करनी चाहिए ।

केसरेष्वंगपूजास्याद्दिग्दलेषु खगेश्वरम् ।
शंकरं शेषनागं च शतानन्दं प्रपूजयेत् ॥ ७ ॥
श्रियं ह्रियं धृतिं पुष्टिं कोणपत्रेषु साधकः ।
द्वात्रिंशत्पत्रमध्येषु नृसिंहांस्तावतोर्चयेत् ॥ ८ ॥
कृष्णो रुद्रो महाघोरो भीमो भीषण उज्ज्वलः ।
करालो विकरालश्चदैत्यान्तो मधुसूदनः ॥ ९ ॥
रक्ताक्षःपिंगलाक्षश्चाञ्जनसंज्ञस्त्रयोदशः ।
दीप्ततेजाःसुघोणश्चहनुःषोडशःस्मृतः ॥ १० ॥
विश्वाक्षो राक्षसान्तश्चविशालो धूम्रकेशवः ।
हयग्रीवो घनस्वरो मेघनादस्तथापरः ॥ ११ ॥
मेघवर्णःकुम्भकर्णःकृतान्तक इतीरितः ।
तीव्रतेजा अग्निवर्णो महोग्रो विश्वभूषणः ॥ १२ ॥

विघ्नक्षमोमहासेनःसिंहो द्वात्रिंशदीरिताः ।
इन्द्रादीन्वज्रमुख्यांश्चपूजयेच्चतुरस्रके ॥ १३ ॥

आवरण पूजा : केसरों में अङ्गपूजा करनी चाहिए तथा चारों दिशाओं के पत्रों में खगेश्वर, शंकर, शेषनाग एवं शतानन्द का पूजन करना चाहिए । फिर चारों कोणों के पत्रों में श्री, ह्री. धृति एवं पुष्टि का पूजन करना चाहिए ।

(इसके बाद) बत्तीस दलों में ३२ नामों से नृसिंह जी की पूजा करनी चाहिए । कृष्ण, रुद्र, महाघोर, भीम, भीषण, उज्ज्वल, कराल, विकराल, दैत्यान्त, मधुसूदन, रक्ताक्ष, पिंगलाक्ष, आंजन, दीपतेज, सुघोष, हनु, विश्वाक्ष, राक्षसान्त, विशाल, धूम्र-केशव, हयग्रीव, घनस्वर, मेघनाद, मेघवर्ण, कुम्भकर्ण, कृतान्तक, तीव्रतेज, अग्निवर्ण, महोग्र, विश्वभूषण, विघ्नक्षम एवं महासेन—ये नृसिंह जी के ३२ नाम हैं ।

फिर इन्द्र आदि दिक्पाल तथा वज्र आदि आयुधों का चतुरस्र में पूजन करना चाहिए ।

टिप्पणी : *आवरण पूजा विधि* : सर्व प्रथम केसरों में आग्नेय आदि चारों कोण, मध्य तथा चारों दिशाओं में निम्नलिखित मन्त्रों से षडङ्गपूजा करनी चाहिए, यथा :

क्ष्रां हृदयाय नमः-आग्नेये । क्ष्रीं शिरसे स्वाहा-नैर्ऋत्यै । क्ष्रूं शिखायै वषट्-वायव्ये । क्ष्रैं कवचाय हुम्-ईशान्ये । क्ष्रौं नेत्रत्रयाय वौषट्-मध्ये । क्ष्रः अस्त्राय फट्-चतुर्दिक्षु ।

फिर अष्टदल में–पूर्व आदि चारों दिशाओं के दलों में गरुड़ आदि का तथा आग्नेय आदि चारों कोणों के दलों में श्री आदि का पूजन करना चाहिए, यथा :—

ॐ गरुडाय नमः-पूर्वे । ॐ शंकराय नमः-दक्षिणे । ॐ शेषनागाय नमः-पश्चिमे । ॐब्रह्मणे नमः-उत्तरे । ॐ श्रियै नमः-आग्नेये । ॐ ह्रियै नमः-नैर्ऋत्ये । ॐ धृत्यै नमः-वायव्ये । ॐ पुष्टयै नमः-ईशान्ये ।

इसके बाद बत्तीस दलों में निम्नलिखित मन्त्रों से १-१ पत्र पर क्रमशः कृष्ण आदि नाम वाले नृसिंहजी का निम्नलिखित मन्त्रों से पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ कृष्णाय नमः । ॐ रुद्राय नमः । ॐ महाघोराय नमः । ॐ भीमाय नमः । ॐ भीषणाय नमः । ॐ उज्ज्वलाय नमः । ॐ कराय नमः । ॐ विकरालाय नमः । ॐ दैत्यान्ताय नमः । ॐ मधुसूदनाय नमः । ॐ रक्ताक्षाय नमः । ॐ पिङ्गलाक्षाय नमः । ॐ आञ्जनाय नमः । ॐ दीप्ततेजसे नमः । ॐ सुघोणाय नमः । ॐ हनवे नमः ।

शतानन्दंब्रह्माणम् ॥ ७ ॥ तावतोद्वात्रिंशत्संख्याकान् ॥ ८ ॥ तानाह । कृष्णइति ॥ ९-१३ ॥

ॐ विश्वाक्षाय नमः । ॐ राक्षसान्ताय नमः । ॐ विशालाय नमः । ॐ धूम्रकेशवाय नमः । ॐ हयग्रीवाय नमः । ॐ घनस्वराय नमः । ॐ मेघनादाय नमः । ॐ मेघवर्णाय नमः । ॐ कुम्भकर्णाय नमः । ॐ कृतान्तकाय नमः । ॐ तीव्रतेजसे नमः । ॐ अग्निवर्णाय नमः । ॐ महोग्राय नमः । ॐ विश्वभूषणाय नमः । ॐ विघ्नक्षभाय नमः । ॐ महासेनाय नमः ।

तत्पश्चात् भूपुर में अपनी अपनी दिशाओं में निम्नलिखित मन्त्रों से इन्द्र आदि दिक्पालों का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ लं इन्द्राय नमः । ॐ रं अग्नये नमः । ॐ यं यमाय नमः । ॐ क्षं निर्ऋतये नमः । ॐ वं वरूणाय नमः । ॐ यं वायवे नमः । ॐ सं सोमाय नमः । ॐ हं ईशानाय नमः । ॐ आं ब्रह्मणे नमः । ॐ ह्रीं अनन्ताय नमः ।

और फिर भूपुर के बाहर पूर्व आदि दिशाओं में निम्नलिखित मन्त्रों से वज्र आदि आयुधों का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ वज्राय नमः । ॐ शक्तये नमः । ॐ दण्डाय नमः । ॐ खड्गाय नमः । ॐ पाशाय नमः । ॐ अंकुशाय नमः । ॐ गदायै नमः । ॐ शूलाय नमः । ॐ पद्माय नमः । ॐ चक्राय नमः ।

इस रीति से आवरण पूजा करने के बाद धूप, दीप आदि उपचारों से विधिवत नृसिंहजी का पूजन करना चाहिए ।

एवं संसाधितो मन्त्रःप्रयोगेषु क्षमो भवेत् ।
सहस्राष्टकसंख्यातैःशतपर्वात्रिकैस्तुयः ॥ १४ ॥
जुहुयादुदके तस्य सर्वे नश्यन्त्युपद्रवाः ।
महोत्पातहरोप्येषहोमःसर्वेष्टदो नृणाम् ॥ १५ ॥

काम्यप्रयोग : इस प्रकार (पूजन एवं पुरश्चरण से) सिद्ध किया गया मन्त्र काम्यप्रयोग करने योग्य हो जाता है ।

जो साधक तीन पंखुडीवाले दूब से १००८ आहुतियाँ देता है, वह सब उपद्रवों से मुक्त हो जाता है । यह होम महाउत्पात को दूर करने वाला तथा मनुष्यों को सब अभीष्ट देने वाला कहा गया है ।

संस्थाप्यविधिवत्कुम्भं जपेदष्टसहस्रकम् ।
अभिषिद्विश्वेषाक्रान्तं विषजार्तिनिवृत्तये ॥ १६ ॥

विधिवत कुम्भ स्थापित कर उस पर १००८ बार जप करना चाहिए । उसके जल से विषपीड़ित व्यक्ति का अभिषेक करने से विषजन्य पीड़ा दूर हो जाती है ।

विचरन्विपिने चौरव्याघ्रसर्पाकुले नरः ।
जपन्नमुं मन्त्रवरं न भयं प्रतिपद्यते ॥ १७ ॥

इस मन्त्र का जप करते हुए मनुष्य चोर, व्याघ्र एवं सर्प आदि से व्याप्त जंगल में विचरण करता हुआ भी भयभीत नहीं होता ।

ईक्षिते निशि दुःस्वप्नेजपन्मन्त्रं निशां नयेत् ।
अवशिष्टं स्वप्नफलं सम्यगादिशति ध्रुवम् ॥ १८ ॥

रात में दुःस्वप्न दिखलाई पड़ने पर इस मन्त्र का जप करते हुए शेष रात्रि व्यतीत कर देनी चाहिए । ऐसा करने से वह दुःस्वप्न सुस्वप्न का ही फल देता है ।

कर्णनेत्रशिरःकण्ठरोगान्मन्त्रो विनाशयेत् ।
अभिचारकृतां पीडां मनुमन्त्रितभस्म च ॥ १९ ॥

यह मन्त्र कर्ण रोग, नेत्ररोग, सिररोग, एवं कण्ठरोगों को नष्ट कर देता है तथा इस मन्त्र से अभिमन्त्रित भस्म अभिचारजन्य पीड़ा को दूर कर देती है ।

आत्मानं नृहरिं ध्यात्वा वैरिणं मृगबालकम् ।
आदाय प्रक्षिपेद्यस्यां दिशि तस्यां स गच्छति ॥ २० ॥
स्वकुटुम्बं परित्यज्य न चैवावर्त्ततेपुनः ।
नृसिंहं संस्मरन्वादे रिपोःस्वस्य विनष्टये ॥ २१ ॥
प्रजपेदयुतं मन्त्रंमारणोत्थाद्यनष्टये ।
प्रसूनैर्बिल्ववृक्षोत्थैःफलैस्तत्काष्ठसम्भवैः ॥ २२ ॥
सहस्रं जुहुयाद्वह्नौ वाञ्छितश्रीसमृद्धये ।
पुत्रजीवेद्धवह्नौ तु तत्फलैःपुत्रसम्पदे ॥ २३ ॥

स्वयं को नृसिंह तथा शत्रु को मृगशावक मानते हुए उसे पकड़ कर जिस दिशा में फेंक दिया जाय, वह अपने परिवार को छोड़कर उसी दिशा में चला जाता है, और कभी भी नहीं लौटता ।

विवाद (युद्ध) में नृसिंह मन्त्र का स्मरण करने से शत्रु मर जाता है । इस प्रकार की मृत्यु से उत्पन्न पाप को दूर करने के लिए पुनः इस मन्त्र का १० हजार जप करना चाहिए ।

इच्छित धन एवं समृद्धि के लिए बेल के फूल, फल एवं उसकी लकड़ी से १ हजार आहुतियाँ देनी चाहिए ।

प्रयोगानाह । सहस्रमिति । शतपर्यंदूर्वा ॥ १७-१७ ॥ निशिदुःस्वप्नेदृष्टे मन्त्रंजपन्नवशिष्टांनिशान्नयेत् । सदुःस्वप्नःसुस्वप्नस्यैवफलंददाति ॥ १८-२१ ॥ प्रसंगान्मारणप्रायश्चित्तमाह । प्रजपेदिति । अभिचारजातपापनिवृत्त्यैअयुतंजपेत् ॥ २२ ॥ पुत्रजीवेद्धवह्नौपुत्र-

ब्राह्मीं वचां वा मन्त्रेण मन्त्रितां शतसंख्यया ।
संवत्सरमदन्प्रातर्विद्यापारंगतो भवेत् ॥ २४ ॥
किंबहूक्तेन नृहरिःसर्वेष्टफलदो नृणाम् ।

ब्राह्मी या बच को इस मन्त्र से १०० बार अभिमन्त्रित कर एक वर्ष तक लगातार खाने से व्यक्ति विद्या में पारंगत हो जाता है ।

विशेष क्या कहें भगवान् नृसिंह का मन्त्र मनुष्यों की सभी मनोकामनाओं को पूरा करता है ।

अथोच्यते नरहरिर्भीतिहारीष्टसाधकः ॥ २५ ॥
जयद्वयं श्रीनृसिंहेत्यष्टार्णो मनुरीरितः ।

भयनाशक नृसिंह मन्त्र का उद्धार : अब भय को दूर करने वाला तथा अभीष्ट देने वाला नृसिंह मन्त्र बतलाता हूँ—दो बार 'जय' (जय जय) और फिर 'श्रीनृसिंह' लगाने से यह ८ अक्षर का मन्त्र बनता है ।

टिप्पणी : *भयनाशक मन्त्र* : जय जय श्रीनृसिंह ।

ऋषिर्ब्रह्मास्य गायत्रीछन्दोदेवो नृकेसरी ॥ २६ ॥
शक्तिर्नेत्रं वियद्बीजमुभे चन्द्रसमन्विते ।
वियतादीर्घयुक्तेन चन्द्राढ्येन षडङ्गकम् ॥ २७ ॥

विनियोग एवं न्यास : इस मन्त्र का ब्रह्मा ऋषि है, गायत्री छन्द है, नृसिंह देवता है, चन्द्र (अनुस्वार) सहित नेत्र (इ) तथा वियत् (ह) अर्थात् 'हिं' तथा 'हं' क्रमशः शक्ति एवं बीज हैं । सानुस्वार षड्दीर्घसहित वियत् (ह) से षडङ्गन्यास करना चाहिए ।

टिप्पणी : *विनियोग* : अस्य जयनृसिंह मन्त्रस्य ब्रह्माऋषिः गायत्री छन्दः नृसिंहो देवता हं बीजं हिं शक्तिः ममाभीष्टसिद्धये जपे विनियोगः ।

षडङ्गन्यास : हां हृदयाय नमः । हीं शिरसे स्वाहा । हूं शिखायै वषट् । हैं कवचाय हुम् । हौं नेत्रत्रयाय वौषट् । हः अस्त्राय फट् ।

श्रीमन्नृकेसरितनो जगदेकबन्धो श्रीनीलकण्ठकरुणार्णवसामराज ।
वह्नींदुतीव्रकरनेत्रपिनाकपाणे शीतांशुशेखर रमेश्वर पाहि विष्णो ॥२८॥

जीवतरुकाष्ठदीप्तेग्नौतत्फलैःपुत्रजीवफलैःपुत्राप्त्यैजुहुयात् ॥ २३-२५ ॥ मन्त्रान्तरमाह-जयेति । यथा--जय २ श्रीनृसिंहेति ॥ २६ ॥ नेत्रंइःशक्तिः । वियत्हः-बीजम् । उमेशक्ति-वीजेबिन्दुयुते । दीर्घयुतेनसबिन्दुनावियताहेनषडंगं । हांहृत् हींशिरइत्यादि० ॥ २७ ॥ ध्यानमाह । श्रीमदिति । साम्राराजाईशः । यद्वासामसुराजतेप्रकाशतेससामराजः । साम-गानेकृतेप्रत्यक्षोभवतीत्यर्थः । तीव्रकरोरविः । पिनाकपाणेइत्युपलक्षणंवराभयचक्राणाम् । वामोर्ध्वादिदशोर्ध्वान्तंपिनाकाभयवरचक्रधरइत्यर्थः ॥ २८ ॥

ध्यान : मनुष्य एवं सिंह जैसे शरीरवाले जगत के एक मात्र बन्धु, नील कण्ठवाले, करुणा के सागर, सामगान से प्रसन्न होने वाले, अग्नि, चन्द्र एवं सूर्य रूपी तीन नेत्र वाले धनुर्धारी, चन्द्रकला धारण करने वाले, रमा के स्वामी हे विष्णु ! मेरी रक्षा कीजिये ।

एवं ध्यात्वा जपेल्लक्षाष्टकं तस्यदशांशतः ।
जुहुयात्पायसेनाग्नौ पूजाद्यस्य तु पूर्ववत् ॥ २९ ॥

जपसंख्या, हवन एवं पूजन : ऐसा ध्यान कर (इस मन्त्र का) ८ लाख जप करना चाहिए । खीर से विधिवत स्थापित अग्नि में दशांश होम करना चाहिए । इसकी पूजा आदि की विधि पूर्वोक्त मन्त्र के समान है ।

तारःपद्माचहृल्लेखाजयलक्ष्मीप्रियाय च ।
नित्यप्रमुदितान्ते तु चेतसेपदमीरयेत् ॥ ३० ॥
लक्ष्मीश्रितार्द्धदेहाय रमामायेनमः पदम् ।
एकाधिकैस्त्रिंशदर्णो मनुःपद्मभवोमुनिः ॥ ३१ ॥

लक्ष्मी नृसिंह मन्त्र का उद्धार : तार (ॐ) पद्मा (श्रीं) हृल्लेखा (ह्रीं) फिर 'जयलक्ष्मी प्रियाय' 'नित्यप्रमुदित' के बाद 'चेतसे' कहना चाहिए । फिर 'लक्ष्मी-श्रितार्द्ध' तथा रमा (श्रीं) माया (ह्रीं) और अन्त में 'नमः' पद लगाने से यह ३१ अक्षर का मन्त्र बनता है ।

टिप्पणी : *मन्त्र* : ॐ श्रीं ह्रीं जयलक्ष्मीप्रियाय नित्यप्रमुदितचेतसे लक्ष्मीश्रितार्द्ध-देहाय श्रीं ह्रीं नमः ।

छन्दोतिजगती प्रोक्तं देवः श्रीनरकेसरी ।
बीजंरमाद्रिजाशक्तिः श्रीबीजेन षडङ्गकम् ॥ ३२ ॥

विनियोग एवं न्यास : इस मन्त्र के पद्मभव ऋषि हैं, अतिजगती छन्द है, श्रीनर-केसरी देवता हैं, रमा (श्रीं) बीज है, तथा अद्रिजा (ह्रीं) शक्ति है ।
(षड्दीर्घ सहित) श्रीबीज से षडङ्गन्यास करना चाहिए ।

टिप्पणी : *विनियोग* : अस्य श्रीलक्ष्मीनृसिंहमन्त्रस्य पद्मभवऋषिः, अतिजगती छन्दः, श्रीनरकेसरी देवता, श्रीं बीजं, ह्रीं शक्तिः ममाभीष्टसिद्धये जपे विनियोगः ।

अस्यपूजादिपूजाप्रयोगादिकमेकार्णवत् ॥ २९ ॥ मन्त्रान्तरमाह । तार इति । तारॐ । पद्माश्रीं । हृल्लेखाह्रीं ॥ ३० ॥ रमामाये श्रींह्रीं । स्वरूपमन्यत् । यथा—ॐश्रींह्रींजय-लक्ष्मीप्रियायनित्यप्रमुदितचेतसेलक्ष्मीश्रितार्धदेहायश्रींह्रींनमः । पद्मभवोब्रह्मा ॥ ३१ ॥ अद्रिजाह्रींश्रींबीजेनषड्दीर्घयुक्तेनश्रांश्रींश्रूमित्यादिना ॥ ३२ ॥

षडङ्गन्यास : श्रां हृदयाय नमः । श्रीं शिरसे स्वाहा । श्रूं शिखायै वषट् । श्रैं कवचाय हुम् । श्रौं नेत्रत्रयाय वौषट् । श्रः अस्त्राय फट् ।

क्षीराब्धौवसुमुख्यदेवनिकरैरग्रादिसंवेष्टितः
शंखंचक्रगदाम्बुजंनिजकरैर्बिभ्रंस्त्रिनेत्रःसितः ।
सर्पाधीशफणातपत्रलसितःपीताम्बरालंकृतो
लक्ष्म्याश्लिष्टकलेवरो नरहरिःस्तान्नीलकण्ठो मुदे ॥ ३३ ॥

ध्यान : क्षीरसागर के श्वेत द्वीप में वसु, रुद्र, आदित्य एवं विश्वेदेवताओं से चारों ओर से वेष्टित, चारों हाथों में क्रमशः शंख, चक्र, गदा एवं पद्म धारण करनेवाले, तीन नेत्र वाले शेष नाग के फनरूपी छत्र से सुशोभित, पीताम्बर से अलंकृत, लक्ष्मी से आलिंगित शरीर वाले, नीले कण्ठ वाले श्री नृसिंह भगवान् मुझे हर्ष दें ।

एवं ध्यात्वा जपेल्लक्षत्रयं षष्टिसहस्रकम् ।
मध्वक्तैर्मल्लिकापुष्पैर्जुहुयाज्ज्ञातवेदसि ॥ ३४ ॥
षट्शतं त्रिसहस्राणि पीठे पूर्वोदिते यजेत् ।

जपसंख्या, हवन एवं पूजन : ऐसा ध्यान कर ३ लाख ६० हजार जप करना चाहिए । घी, शहद एवं शर्करामिश्रित मालती के फूलों से अग्नि में ३ हजार ६ सौ आहुतियाँ देनीं चाहिए तथा पूर्वोक्त वैष्णव पीठ पर इनका पूजन करना चाहिए । (देखिये श्लोक संख्या ६ की टिप्पणी) ।

प्रथमावरणेऽङ्गानि परशक्तिरिमाःपुनः ॥ ३५ ॥
भास्वतीभास्करीचिन्ताद्युतिरुन्मीलिनीतथा ।
रमाकान्तीरुचिश्चेति शक्राद्याहेतिसंयुक्ताः ॥ ३६ ॥

आवरणपूजा : प्रथम आवरण में अङ्गपूजा तथा द्वितीय आवरण में इन शक्तियों का पूजन करना चाहिए । भास्वती, भास्करी, चिन्ता, द्युति, उन्मीलिनी, रमा, कान्ति एवं रुचि—ये शक्तियाँ हैं । फिर अपने आयुधों के साथ इन्द्र आदि दिकपालों का पूजन करना चाहिए ।

टिप्पणी : आवरणपूजाविधि : वृत्ताकार कर्णिका, अष्टदल एवं भूपुर सहित बने यन्त्र पर भगवान् लक्ष्मीनृसिंह का पूजन करना चाहिए ।

सर्वप्रथम केसरों में आग्नेय आदि चारों कोणों, मध्य तथा चारों दिशाओं में निम्नलिखित मन्त्रों से षडङ्गपूजा करनी चाहिए, यथा :

ध्यानमाह । क्षीराब्धाविति । क्षीरसमुद्रगतश्वेतद्वीपेवस्वादिदेवौघैरग्रादियथातथा-वेष्टितः । अग्रेवसुभिः दक्षरुद्रैः पश्चिमेआदित्यैः वामेविश्वदेवैरित्यर्थः । अधावामदक्षयोः शङ्खचक्रे । ऊर्ध्वयोर्गदापद्मे । सितश्चन्द्रवर्णः । शेषफणाएवातपत्रंतेनलसितोदीप्तः ।

श्रां हृदयाय नमः-आग्नेये । श्रीं शिरसे स्वाहा-नैऋत्ये । श्रूं शिखायै वषट्-वायव्ये । श्रैं कवचाय हुम्-ईशान्ये । श्रौं नेत्रत्रयाय वौषट्-मध्ये । श्रः अस्त्राय फट्-चतुर्दिक्षु ।

फिर क्षष्टदल में पूर्व आदि अनुलोम क्रम से निम्नलिखित मन्त्रों से एक-एक दल पर भास्वती आदि शक्तियों का क्रमशः पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ भास्वत्यै नमः-पूर्वदले । ॐ भास्कर्यै नमः-आग्नेय दले । ॐ चिन्तायै नमः-दक्षिण दले । ॐ द्युत्यै नमः-नैऋत्य दले । ॐ उन्मीलिन्यै नमः-पश्चिम दले । ॐ रमायै नमः-वायव्य दले । ॐ कान्त्यै नमः-उत्तर दले । ॐ रुच्यै नमः-ईशान दले ।

इसके बाद श्लोक संख्या ७-१३ की टिप्पणी में बतलायी गयी रीति से भूपुर में अपनी २ दिशाओं में इन्द्र आदि दिक्पालों का तथा भूपुर से बाहर पूर्व आदि दिशाओं में वज्र आदि आयुधों का विधिवत पूजन करना चाहिए ।

इस प्रकार आवरण पूजा कर धूप, दीप आदि उपचारों से भगवान् लक्ष्मी नृसिंह का पूजन करना चाहिए ।

इत्थं सिद्धे मनौ मन्त्री निग्रहानुग्रहक्षमः ।
मल्लिकाकुसुमैर्होमादिष्टसिद्धिमवाप्नुयात् ॥ ३७ ॥

इस रीति से पुरश्चरण एवं पूजन करने से मन्त्र सिद्ध हो जाने पर साधक निग्रह एवं अनुग्रह में सक्षम हो जाता है तथा मालती के फूलों के होम से वह अभीष्ट सिद्धि प्राप्त करता है ।

प्रणवो नहरेर्बीजं नमो भगवतेपदम् ।
नरसिंहायतारश्चबीजंमत्स्येतिकीर्तयेत् ॥ ३८ ॥
रूपायतारोबीजंचकूर्मरूपायवर्णकाः ।
तारबीजेवराहार्णारूपायतारबीजे ॥ ३९ ॥
नृसिंहरूपायांते तु तारोबोजं च वामनम् ।
रूपायत्रिस्तारबीजेरामायेतिपदं वदेत् ॥ ४० ॥
तारोबीजं च कृष्णायतारोबीजं च कल्किने ।
जयद्वयं ततःशालग्रामदीर्घासनेत्रका ॥ ४१ ॥
वासिनेदिव्यसिंहायस्वयंभूङेतिमःस्मृतः ।
पुरुषायनमस्तारोबीजमित्युदितोमनुः ॥ ४२ ॥

ईदृङ्नृसिंहोममुदेहर्षायस्तात्भूयात् ॥ ३३-३७ ॥ मन्त्रांतरमाह ।:::प्रणवहृति । नृहरेर्बीजंचर्यौ ॥ ३८-३९ ॥ त्रिस्त्रिवारंतारबीजे ॥ ४० ॥ सनेत्रादीर्घाद्द्युतोनःनिः॥ ४१ ॥ ङेतिमश्चतुर्थ्यंतः ॥ ४२ ॥

दशावतार नृसिंहमन्त्र का उद्धार : प्रणव (ॐ) नृसिंह बीज (क्ष्रौं) फिर 'नमो भगवते' एवं 'नरसिंहाय' फिर प्रणव एवं नृसिंह बीज के बाद 'मत्स्य' एवं 'रूपाय' फिर प्रणव एवं उक्त बीज के बाद 'कूर्म रूपाय' फिर प्रणव एवं बीज के बाद 'वराह' एवं 'रूपाय' फिर प्रणव एवं बीज के बाद 'नृसिंह रूपाय' फिर प्रणव एवं बीज के बाद 'वामन' एवं 'रूपाय' फिर ३ बार प्रणव एवं बीज के बाद 'रामाय' फिर प्रणव एवं बीज के बाद 'कृष्णाय' फिर प्रणव एवं बीज के बाद 'कल्किने' फिर २ बार 'जय' (जयजय) 'शालग्राम' सनेत्रा दीर्घा (नि) तथा 'वासिने' फिर 'दिव्य सिंहाय' के बाद चतुर्थ्यन्त स्वयंभू (स्वयंभुवे) फिर 'पुरुषाय नमः' तथा अन्त में तार (ॐ) तथा बीज (क्ष्रौं) लगाने से यह ९९ अक्षर का मन्त्र बनता है ।

टिप्पणी : मन्त्र : ॐ क्ष्रौं नमो भगवते नरसिंहाय ॐ क्ष्रौं मत्स्यरूपाय, ॐ क्ष्रौं कूर्मरूपाय, ॐ क्ष्रौं वराह रूपाय, ॐ क्ष्रौं नृसिंहरूपाय, ॐ क्ष्रौं वामनरूपाय, ॐ क्ष्रौं ॐ क्ष्रौं ॐ क्ष्रौं रामाय, ॐ क्ष्रौं कृष्णाय, ॐ क्ष्रौं कल्किने जयजय शालग्राम निवासिने दिव्यसिंहाय स्वयंभुवे पुरुषाय नमः ॐ क्ष्रौं ।

हरेर्नवनवत्यर्णा मुनिरत्रिःकिलास्य तु ।
छन्दोतिजगती देवोनृकेसर्य्यवतारवान् ॥ ४३ ॥
बीजं पूर्वोदितं शक्तिराद्याबीजेन चाङ्गकम् ।
कृत्वा षड्दीर्घयुक्तेन ध्यायेत्क्षीरोदधिस्थितम् ॥ ४४ ॥

विनियोग एवं न्यास : ९९ अक्षरवाले इस मन्त्र के अत्रि ऋषि हैं, अतिजगती छन्द है, अवतारवान् नृसिंह देवता हैं, पूर्वोक्त (क्ष्रौं) बीज है तथा आद्या (ॐ) शक्ति है ।

षड्दीर्घ सहित बीज से षडङ्गन्यास कर क्षीर सागर में स्थित भगवान् नृसिंह का ध्यान करना चाहिए ।

टिप्पणी : विनियोग : अस्य दशावतार नृसिंहमन्त्रस्य अत्रि ऋषिः, अतिजगतो छन्दः, अवतारवान् नृसिंहो देवता, क्ष्रौं बीजं, ॐ शक्तिः ममाभीष्टसिद्धये जपे विनियोगः ।

षडङ्गन्यास : क्ष्रां हृदयाय नमः । क्ष्रीं शिरसे स्वाहा । क्ष्रूं शिखायै वषट् । क्ष्रैं कवचाय हुम् । क्ष्रौं नेत्रत्रयाय वौषट् । क्ष्रः अस्त्राय फट् ।

सहस्रचन्द्रप्रतिमोदयालुलक्ष्मीमुखालोकनलोलनेत्रः ।
दशावतारैःपरितःपरातो नृकेसरीमंगलमातनोतु ॥ ४५ ॥

नवनवर्णमनुकल्पलताद्रुमः । अस्य यथा-ॐक्ष्रौंनमोभगवतेनरसिंहायॐक्ष्रौंमत्स्यरूपायॐक्ष्रौंकूर्मरूपायॐक्ष्रौंवराहरूपायॐक्ष्रौंनृसिंहरूपायॐक्ष्रौंवामनरूपायॐक्ष्रौंॐक्ष्रौंॐक्ष्रौंरामायॐक्ष्रौंकृष्णायॐक्ष्रौंकल्किनेजयजयशालग्रामनिवासिनेदिव्यसिंहायस्वयंभुवे-

ध्यान : हजारों चन्द्रमाओं के समान कान्तिवाले, दयालु स्वभाव, लक्ष्मी का मुख देखने हेतु चंचल नेत्रवाले, दशों अवतारों द्वारा चारों ओर से घिरे हुए भगवान् नृसिंह जी माङ्गलिक कार्यों की वृद्धि करें।

जपोयुतं दशांशेन हवनं पायसेन तु।
पीठे पूर्वोदिते पूर्वमङ्गानि परिपूजयेत् ॥ ४६ ॥
दशाक्षतारान्मत्स्यादीन्दिक्पालानायुधान्यपि।
प्रयोगाःपूर्ववत्प्रोक्ताःसर्वसिद्धिप्रदे मनौ ॥ ४७ ॥

जपसंख्या, हवन एवं पूजन : इस मन्त्र का १० हजार जप करना चाहिए। खीर से दशांश होम करना चाहिए तथा पूर्वोक्त रीति से पूजित पीठ पर सर्वप्रथम अङ्गपूजा और फिर दिक्पाल एवं उनके आयुधों का पूजन करना चाहिए।

सर्वसिद्धिदायक इस मन्त्र के काम्यप्रयोग पूर्वोक्त मन्त्र के समान हैं।

अथाभयनृसिंहमन्त्रः।

तारो नमोभगवतेनरसिंहायहृच्चते।
जस्तेजसेआविराविर्भवबज्रनखां ततः ॥ ४८ ॥
वज्रदंष्ट्रचकर्मान्ते त्वाशताञ्रंधयद्वयम्।
तमोग्रसद्वयंवह्नेःकलत्रमभयं पुनः ॥ ४९ ॥
आत्मन्यंते च भूयिष्ठास्तारोबीजंमनुःस्मृतः।
द्विषष्ट्यर्णःशुकःप्रोक्तोमुनिश्छन्दस्तुपूर्ववत् ॥ ५० ॥
अभयोनारसिंहस्तुदेवतान्यत्तु पूर्ववत्।

अभयनृसिंह मन्त्र : तार (ॐ) 'नमो भगवते नरसिंहाय' तथा हृद (नमः) फिर 'तेजस्तेजसे आविराविर्भव बज्रनख' के बाद 'बज्रदंष्ट्र' 'कर्मा' 'शयान्' तथा २ वार रन्धय (रन्धय रन्धय) फिर 'तमो' और २ बार 'ग्रस' (ग्रस ग्रस) फिर वह्नि की पत्नी (स्वाहा) तथा 'अभयं' 'आत्मनि' एवं 'भूयिष्ठा' फिर तार (ॐ) तथा बीज (क्ष्रौं) लगाने से यह ६२ अक्षर का मन्त्र बनता है।

इस मन्त्र के शुक ऋषि हैं, छन्द पूर्वोक्त (अतिजगती) है, नरसिंह देवता हैं तथा न्यास, ध्यान एवं पूजन आदि सब पूर्वोक्त मन्त्र के समान हैं।

उरुक्षायनमः ॐ ॥ अवतारवान्द्वशावतारयुतोनृसिंहोदेवता ॥ ४३ ॥ ॐक्ष्रौंबीजम् ॥ आद्येति। ॐशक्तिः। क्षरांक्षरीमित्याद्यंगम् ॥ ४४-४७ ॥ मन्त्रांतरमाह। तारइति। हृन्नमः ॥ ४८ ॥ वह्नेःकलत्रं स्वाहा ॥ ४९ ॥ बीजंक्ष्रौं। यथा–ॐनमोभगवतेनरसिंहाय-नमस्तेजसेआविराविर्भवबज्रनखबज्रदंष्ट्रकर्माशयान्रन्धय २ तमोग्रस २ स्वाहाअभय-मात्मनिभूयिष्ठाॐक्ष्रौमिति ॥ ५० ॥

टिप्पणी : मन्त्र : ॐ नमो भगवते नरसिंहाय नमस्तेजस्तेजसे आविरावि र्भववज्र-नखवज्रदंष्ट्रकर्माशयान्ग्रन्धय रन्धय तमो ग्रसग्रस स्वाहा अभयमात्मनिभूयिष्ठा ॐ क्ष्रौं ।

विनियोग : अस्य—अभयनरसिंहमन्त्रस्य शुक ऋषिः अतिजगती छन्दः, नरसिंहो देवता, क्ष्रौं बीजं, ॐ शक्तिः ममाभीष्टसिद्धये जपे विनियोगः ।

षडङ्गन्यास : क्ष्रां हृदयाय नमः । क्ष्रीं शिरसे स्वाहा । क्ष्रूं शिखायै वषट् । क्ष्रैं कवचाय हुम् । क्ष्रौं नेत्रत्रयाय वौषट् । क्ष्रः अस्त्राय फट् ।

अथगोपालमनवःप्रोच्यंते स्वप्टसाधकाः ॥ ५१ ॥
गोपीजनपदस्यांतेवल्लभायाग्निसुन्दरी ।
दशाक्षरो मनुःप्रोक्तो मनोरथफलप्रदः ॥ ५२ ॥

गोपालमन्त्र का उद्धार : अब अपनी अभीष्ट सिद्धि देनेवाले गोपाल जी के मन्त्रों को बतलाता हूँ :

'गोपीजन'—इस पद के बाद 'वल्लभाय' एवं अग्निसुन्दरी (स्वाहा) लगाने से यह मनोवांच्छित फल देनेवाला दशाक्षर मन्त्र बनता है ।

टिप्पणी : *दशाक्षर गोपालमन्त्र* : गोपीजनवल्लभाय स्वाहा ।

बृहद्गौतमीय तन्त्र में लिखा है कि मुक्ति एवं भुक्ति देनेवाला यह दशाक्षर मन्त्र लुप्तबीज है । अतः पृथक् रूप से कामबीज का उद्धार कर इसके साथ लगा कर जप आदि करना चाहिए । यह मन्त्र कामबीज के साथ ही फल देता है, अन्यथा नहीं । इसलिए मन्त्र के आदि में कामबीज लगाकर 'क्लीं गोपीजन वल्लभाय स्वाहा'—इस मन्त्र से ही जप, पूजन एवं हवन करना चाहिए ।

किन्तु मन्त्र का मेलापक मिलाते समय कामबीज को छोड़कर केवल उक्त दशाक्षर मन्त्र के वर्णों को ही लेना चाहिए । अर्थात सिद्ध, साध्य आदि शोधन, कुलाकुल शोधन एवं ऋणी-धनी विचार आदि में कामबीज रहित केवल दशाक्षर मन्त्र से ही विचार करना चाहिए ।

नारदोस्य विराट्कृष्णोमुनिपूर्वाःसमीरिताः ।
बीजशक्ती तु विज्ञेये क्रमात्कामानलप्रिये ॥ ५३ ॥

विनियोग : इस मन्त्र के नारद, विराट् एवं कृष्ण ऋषि आदि कहे गये हैं । अर्थात् नारद ऋषि हैं, विराट् छन्द है तथा कृष्ण देवता है । काम (क्लीं) तथा अनलप्रिया (स्वाहा) क्रमशः बीज एवं शक्ति बतलाये गये हैं ।

अन्यत्पूजादि ॥ ५१ ॥ गोपालमन्त्रमाह । गोपीति । अग्निसुन्दरीस्वाहा । यथा—गोपीजनवल्लभायस्वाहा ॥ ५२ ॥ विराट्छन्दः । क्लींबीजं । स्वाहाशक्तिः ॥ ५३ ॥

टिप्पणी : विनियोग : अस्य गोपालमन्त्रस्य नारद ऋषिः, विराट् छन्दः, कृष्णो-देवता, क्लीं बीजं, स्वाहा शक्तिः, ममाभीष्टसिद्धये जपे विनियोगः ।

आचक्रायहृदाख्यातं विचक्रायशिरोपि च ।
सुचक्रायशिखापश्चात्त्रैलोक्यरक्षणं ततः ॥ ५४ ॥
चक्रायकवचंप्रोक्तमसुरांतकशब्दतः ।
चक्रायास्त्रमिदं कुर्य्याद्ङ्गानां पञ्चकं मनोः ॥ ५५ ॥

पंचाङ्गन्यास : 'आचक्राय' से हृदय, 'विचक्राय' से शिर, 'सुचक्राय' से शिखा, फिर 'त्रैलोक्यरक्षण' एवं 'चक्राय' से कवच तथा 'असुरान्त' शब्द के बाद 'चक्राय' से अस्त्र पर न्यास करना चाहिए । इन मन्त्रों से पाँच अङ्गों पर न्यास करना चाहिए ।

टिप्पणी : पञ्चाङ्गन्यास विधि : आचक्राय हृदयाय नमः । विचक्राय शिरसे स्वाहा । सुचक्राय शिखायै वषट् । त्रैलोक्य रक्षण चक्राय कवचाय हुम् । असुरान्तक-चक्राय अस्त्राय फट् ।

सर्वांगेत्रिमनुंन्यस्य वर्णन्यासं समाचरेत् ।
मस्तके नेत्रयोःश्रुत्योर्नसोर्वक्त्रे हृदम्बुजे ॥ ५६ ॥
जठरे लिंगदेशे च जानुनोःपादयोरपि ।
वर्णांस्तारपुटाढ्यस्येद्बिन्द्वाढ्यान्नमसायुतान् ॥ ५७ ॥

सर्वाङ्ग एवं वर्णन्यास : सर्वाङ्ग में ३ बार मूलमन्त्र का न्यास कर वर्णन्यास करना चाहिए ।

मस्तक, नेत्र, कान, नासिका, मुख, हृदय, उदर, लिंग, जानु एवं पैरों में प्रणव से संपुटित 'नमः' सहित सानुस्वार मन्त्र के वर्णों का क्रमशः न्यास करना चाहिए ।

टिप्पणी : वर्णन्यास : ॐ गों ॐ नमः-मस्तके : ॐ पीं ॐ नमः-नेत्रयोः । ॐ जं ॐ नमः-कर्णयोः । ॐ नं ॐ नमः-नसोः । ॐ वं ॐ नमः-मुखे । ॐ ल्लं ॐ नमः-हृदि । ॐ भां ॐ नमः-जठरे । ॐ यं ॐ नमः लिंगे । ॐ स्वां ॐ नमः-जान्वोः । ॐ हां ॐ नमः-पादयोः ।

यह सृष्टिक्रम है । इसी प्रकार स्थिति-क्रम एवं संहारक्रम से भी न्यास करना चाहिए । न्यास के विषय में निबन्धकार का मत है कि विद्यार्थी एवं ब्रह्मचारी को सृष्टि, स्थिति एवं संहारन्यास करके पुनः सृष्टिन्यास करना चाहिए । गृहस्थ को सृष्टि, स्थिति एवं संहारन्यास करने के बाद सृष्टि एवं स्थितिन्यास करना चाहिए तथा यति एवं वैरागी

पञ्चाङ्गमाह । आचक्रायहृत् । विचक्रायशिरः । सुचक्रायशिखा । त्रैलोक्यरक्षणचक्राय-कवचम् । असुरांतकचक्रायअस्त्रम् ॥ ५४-५५ ॥ वर्णन्यासमाह । मस्तकइति ॥ ५६ ॥ तार-पुटानिति । ॐगों ॐनमःमस्तके ॐपींॐनमःनेत्रयोरित्यादि० ॥ ५७ ॥

आदि को केवल सृष्टि, स्थिति एवं संहार न्यास ही करना चाहिए। इस प्रकार विद्यार्थी या ब्रह्मचारी को चतुर्विध, गृहस्थ को पंचविध तथा यति विरागी आदि को त्रिविध न्यास करना चाहिए।

स्थितिन्यास : ॐ गों ॐ नमः-हृदि। ॐ पीं ॐ नमः-जठरे। ॐ जं ॐ नमः-लिंगे। ॐ नं ॐ नमः-जानुनो। ॐ वं ॐ नमः-पादयोः। ॐ ल्लं ॐ नमः-मस्तके। ॐ भां ॐ नमः-नेत्रयोः। ॐ यं ॐ नमः-कर्णयोः। ॐ स्वां ॐ नमः-नसोः। ॐ हां ॐ नमः-मुखे।

संहारन्यास : ॐ गों ॐ नमः-पादयोः। ॐ पीं ॐ नमः-जानुनोः। ॐ जं ॐ नमः-लिंगे। ॐ नं ॐ नमः-जठरे। ॐ वं ॐ नमः-हृदि। ॐ ल्लं ॐ नमः-मुखे। ॐ भां ॐ नमः-नसोः। ॐ यं ॐ नमः-कर्णयोः। ॐ स्वां ॐ नमः-नेत्रयोः। ॐ हां ॐ नमः-मस्तके।

इन न्यासों को करते समय निबन्धोक्त अंगुलि-नियम इस प्रकार है—मस्तक में मध्यमा से, नेत्रों मे मध्यमा एवं तर्जनी से, कानों में तर्जनी, मध्यमा, अनामिका एवं कनिष्ठा से; नाक में अंगुष्ठ एवं अनामिका से, मुख में सब अंगुलियों से; हृदय में अंगुष्ठ एवं तर्जनी से, उदर एवं लिंग में अंगुष्ठ एवं मध्यमा से, जानु म अंगुष्ठ रहित अंगुलिया से तथा पैरों मे सब अंगुलियों से न्यास करना चाहिए।

विशेष : गौतमीय तन्त्र, शारदातिलक एवं क्रमदीपिका में कहा गया है कि कृष्ण के समस्त मन्त्रों की साधना में (i) केशवकीर्त्यादि न्यास (ii) तत्त्वन्यास या दशतत्त्वन्यास तथा (iii) विभूतिपञ्जरन्यास करना आवश्यक है।

गौतमीय तन्त्र में कहा गया है कि केशवकीर्त्यादि न्यास करने मात्र से मनुष्य को विष्णुत्त्व मिल जाता है। भोग एव ऐश्वर्य प्राप्ति की इच्छा हो तो श्रीबीज का योग कर तथा मुक्ति की इच्छा हो तो माया बीज का योग कर यह न्यास करना चाहिए।

केशव कीर्त्यादिन्यास : ॐ श्री अं केशवाय कीर्त्यै नमः-ललाट। ॐ श्री आं नारायणाय कान्त्यै नमः-मुखे। ॐ श्री इं माधवाय तुष्टयै नमः-दक्षनेत्रे। ॐ श्री ईं गोविन्दाय पुष्टयै नमः-वामनेत्रे। ॐ श्री उं विष्णवे धृत्यै नमः-दक्षकर्णे। ॐ श्री ऊं मधुसूदनाय शान्त्यै नमः-वामकर्णे। ॐ श्री ऋं त्रिविक्रमाय क्रियायै नमः-दक्षनासायां। ॐ श्रीं ॠं वामनाय दयायै नमः-वामनासायां। ॐ श्री ऌं श्रीधराय मेधायै नमः-दक्षगण्डे। ॐ श्रीं ॡं हृषीकेशाय हर्षायै नमः-वामगण्डे। ॐ श्रीं एं पद्मनाभाय श्रद्धायै नमः-ओष्ठे। ॐ श्री ऐं दामोदराय लज्जायै नमः-अधरे। ॐ श्री ओं वासुदेवाय लक्ष्म्यै नमः-ऊर्ध्वदन्तपंक्तौ। ॐ श्रीं ओं संकर्षणाय सरस्वत्यै नमः-अधोदन्तपंक्तौ। ॐ श्रीं अं प्रद्युम्नाय प्रीत्यै नमः-मस्तके। ॐ श्रीं अः अनिरुद्धाय रत्यै नमः-मुखे।

ॐ श्रीं कं चक्रिणे जयायै नमः-दक्षकरमूले । ॐ श्रीं खं गदिने दुर्गायै नमः-दक्ष कूर्परे । ॐ श्रीं गं शार्ङ्गिणे प्रभायै नमः-दक्ष मणिबन्धे । ॐ श्रीं घं खड्गिने सत्यायै नमः-दक्ष अंगुलिमूले । ॐ श्रीं ङं शंखिने चण्डायै नमः-दक्ष अंगुल्यग्रे । ॐ श्रीं चं हलिने वाण्यै नमः-वामकरमूले । ॐ श्रीं छं मुसलिने विलासिन्यै नमः-वाम कूर्परे । ॐ श्रीं जं शूलिने विजयायै नमः-वाम मणिबन्धे । ॐश्रीं झं पाशिने विरजायै नमः-वाम अंगुलिमूले । ॐ श्री ञं अंकुशिने विश्वायै नमः-वाम अंगुल्यग्रे । ॐ श्रीं टं मुकुन्दाय विनदायै नमः-दक्षपादमूले । ॐ श्रीं ठं नन्दजाय सुनदायै नमः-दक्षजानुनि । ॐ श्रीं डं नन्दिने स्मृत्यै नमः-दक्षपाद गुल्फे । ॐ श्रीं ढं नराय ऋद्धयै नमः-दक्षपाद अंगुलिमूले । ॐ श्रीं णं नरकजिते समृद्धये नमः-दक्षपाद अंगुल्यग्रे । ॐ श्रीं तं हरये शुद्धयै नमः-वामपादमूले । ॐ श्रीं थं कृष्णाय बुद्धये नमः- वामपाद जानुनि । ॐ श्रीं दं सत्याय मत्यै नमः-वामपाद गुल्फे । ॐ श्रीं धं सात्वताय मत्यै नमः-वामपाद अंगुलिमूले । ॐ श्रीं नं शौरये क्षमायै नमः-वामपाद अंगुल्यग्रे । ॐ श्रीं पं शूराय रमायै नमः-दक्षपार्श्वे । ॐ श्रीं फं जनार्दनाय उमायै नमः-वामपार्श्वे । ॐ श्रीं बं भूधराय वलेदिन्यै नमः-पृष्ठे । ॐ श्रीं भं विश्वमूर्तये विलग्नायै नमः-नाभौ । ॐ श्रीं मं वैकुण्ठाय वसुदायै नमः-उदरे । ॐ श्रीं यं त्वगात्मने पुरुषोत्तमाय वसुधायै नमः-हृदि । ॐ श्री रं असृगात्मने बलिने परायै नमः-दक्षांसे । ॐ श्रीं लं मांसात्मने बलानुजाय परायणायै नमः-ककुदि । ॐ श्रीं वं मेदात्मने बालाय सूक्ष्मायै नमः-वामांसे । ॐ श्रीं शं अस्थ्यात्मने वृषघ्नाय सन्ध्यायै नमः-हृदयादि दक्ष हस्तान्तम् । ॐ श्रीं षं मज्जात्मने वृषाय प्रज्ञायै नमः-हृदयादि वामहस्तान्तम् । ॐ श्रीं सं शुक्रात्मने हंसाय प्रभायै नमः-हृदयादि दक्षपादान्तम् । ॐ श्रीं हं प्राणात्मने वराहाय निशायै नमः-हृदयादि वामपादान्तम् । ॐ श्रीं ळं जीवात्मने विमलाय अमोघायै नमः-हृदयादि उदरे । ॐ श्रीं क्ष क्रोधात्मने नृसिंहाय विद्युतायै नमः-हृदयादि मुखे ।

गौतमीय तन्त्र में लिखा है कि गोपाल मन्त्र की सिद्धि के लिए दशतत्व न्यास अवश्य करना चाहिए । इसके करने से मन्त्र सद्यः सिद्ध हो जाता है । अतः काम्य उपासना में यह न्यास अवश्य करना चाहिए । यह पहिले संहार क्रम से और बाद में सृष्टि क्रम से करना चाहिए ।

दशतत्वन्यास : (i) *संहारक्रम* : गों नमः पराय पृथिवी तत्त्वात्मने नमः-पादयोः । पीं नमः पराय जल त० नमः-लिंगे । जं नमः पराय तेज त० नमः-हृदि । नं नमः पराय वायु त० नमः-मुखे । वं नमः पराय आकाश त० नमः-शिरसि । ल्लं नमः पराय अंहकार त० नमः हृदि । मां नमः पराय महत् त० नमः-हृदि । यं नमः पराय प्रकृति त० नमः-सर्वगात्रे । स्वां नमः पराय पुरुष त० नमः-सर्वगात्रे । हां नमः पराय पर तत्त्वात्मने नमः-सर्वगात्रे ।

(ii) *सृष्टि क्रम* : हां नमः पराय पर तत्त्वात्मने नमः-सर्वगात्रे । स्वां नमः पराय पुरुष त० नमः-सर्वगात्रे । यं नमः पराय प्रकृति त० नमः-सर्वगात्रे । भां नमः पराय महत् त० नमः-हृदि । ल्लं नमः पराय अहंकार त० नमः-हृदि । वं नमः पराय आकाश त० नमः-शिरसि । नं नमः पराय वायु त० नमः-मुखे । जं नमः पराय तेज त० नमः-हृदि । पीं नमः पराय जल त० नमः-लिंगे । गों नमः पराय पृथिवी तत्त्वात्मने नमः-पादयोः ।

भूति (ऐश्वर्य) प्राप्त करने के लिए विभूतिपञ्जरन्यास किया जाता है । इसके करने से साधक—कर्तुं, अकर्तुं एवं अन्यथा कर्तुं—अर्थात् सम्भव एवं असम्भव आदि सभी कुछ करने की शक्ति या सामर्थ्य प्राप्त कर लेता है । इस न्यास को करने की विधि तरङ्ग १२ में बतलायी जा चुकी है । जिज्ञासु जन श्लो० १६१-६४ की टिप्पणी का अवलोकन करें ।

वृन्दारण्यगकल्पपादपतले सद्रत्नपीठेम्बुजे
शोणाभे वसुपत्रके स्थितमजं पीताम्बरालंकृतम् ।
जीमूताभमनेकभूषणयुतं गोगोपगोपीवृतं गोविन्दं
स्मरसुन्दरं मुनियुतं वेणुं रणंतं स्मरेत् ॥ ५८ ॥

ध्यान : वृन्दावन में कल्पवृक्ष के नीचे सुन्दर मणिपीठ पर रक्तवर्णवाले अष्टदल कमल पर विराजमान, पीताम्बर से अलंकृत, मेघ जैसी कान्तिवाले, अनेक आभूषणों से सुशोभित, गौ, गोप एवं गोपियों से घिरे हुए, काम देव से सुन्दर तथा वंशी बजाते हुए भगवान् गोविन्द का स्मरण करना चाहिए ।

एवं ध्यात्वाजपेल्लक्षं दशांशं सरसीरुहैः ।
जुहुयात्पूजयेत्पीठे वैष्णवे नन्दनन्दनम् ॥ ५९ ॥

जपसंख्या, हवन एवं पूजन : ऐसा ध्यान कर १ लाख जप करना चाहिए । कमलों से दशांश होम करना चाहिए । तथा (पूर्वोक्त) वैष्णवपीठ पर नन्दनन्दन का पूजन करना चाहिए (देखिये श्लो० सं० ६ की टिप्पणी) ।

अग्न्यादिकोणेष्वभ्यर्च्य हृदाद्यंगचतुष्टयम् ।
दिशास्वस्त्रंदलेष्वष्टौमहिषीःपरिपूजयेत् ॥ ६० ॥
रुक्मिणीसत्यभामा च नग्नजित्तनयार्कजा ।
मित्रविन्दालक्ष्मणा चजाम्बवत्यासुशीलका ॥ ६१ ॥

ध्यानमाह । वृन्दावनगतकल्पवृक्षतलेमणिपीठेरक्ताष्टपत्रेस्थितंध्यायेत् । जीमूताभंमेघश्यामंस्मरादपिसुन्दरम् ॥ ५८-६० ॥

महिष्योष्टौ सुवर्णाभा विचित्राभरणस्रजः ।
दलाग्रे वसुदेवं च देवकीं नन्दगोपतिम् ॥ ६२ ॥
यशोदां बलभद्रं च सुभद्रां गोपगोपिकाः ।
इन्द्रादीनपिवज्रादीन्पूजयेत्तदनन्तरम् ॥ ६३ ॥

आवरण पूजा : आग्नेय आदि कोणों में हृदय आदि ४ अंगों का पूजन कर दिशाओं में अस्त्र का पूजन करना जाहिए ।

(फिर) अष्टदल में ८ महिषियों का पूजन करना चाहिए । रुक्मिणी, सत्यभामा, नग्नजित, कालिन्दी, मित्रविन्दा, लक्ष्मणा, जाम्बवती एवं सुशीला ये आठों महिषियाँ सुवर्ण जैसी आभावाली तथा विचित्र आभूषण एवं मालाएँ धारण करने वाली हैं ।

दल के अग्रभाग में वासुदेव, देवकी, नन्द गोपति, यशोदा, बलभद्र, सुभद्रा, गोप एवं गोपियों का पूजन करना चाहिए ।

तदनन्तर इन्द्र आदि दिक्पाल तथा वज्र आदि आयुधों का पूजन करना चाहिए ।

टिप्पणी : वृत्ताकार कर्णिका, अष्टदल एवं भूपुर सहित बने यन्त्र (देखिये चित्र ३६) पर गोपाल जी का पूजन करना चाहिए ।

पूजन विधि : सर्वप्रथम श्लोक ५८ में वर्णित गोपाल जी के स्वरूप का ध्यान कर मानसोपचार से पूजन कर विधिवत शंख स्थापित करना चाहिए । फिर उक्त यन्त्र पर श्लो० सं० ६ की टिप्पणी में बतलायी गयी रीति से पीठ देवताओं एवं पीठ शक्ति का पूजन करना चाहिए ।

फिर ध्यान, आवाहन आदि उपचारों से पञ्च पुष्पाञ्जलि समर्पण पर्यन्त गोपाल जी का विधिवत् पूजन करने के बाद उनके शरीर में सृष्टि, स्थिति, दशांश एवं पञ्चाङ्ग न्यास के क्रम से न्यासों का पूजन कर निम्नलिखित मन्त्रों से मुख में वेणु तथा हृदय में वनमाला आदि का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ वेणवे नमः-मुखे । ॐ वनमालायै नमः-हृदि । ॐ कौस्तुभाय नमः-हृदि । ॐ श्रीवत्साय नमः-हृदि ।

इसके बाद पुनः ५ पुष्पाञ्जलियाँ देकर मूल मन्त्र से उनके दक्षपार्श्व में श्वेत चन्दन युक्त श्वेत तुलसी तथा वाम पार्श्व में रक्त चन्दन युक्त रक्त तुलसी चढ़ानी चाहिए । और फिर उनके मस्तक पर २ तुलसी पत्र २ कनेर के फूल तथा २ कमल चढ़ाकर आवरण पूजा करनी चाहिए ।

अर्कजाकालिन्दी ॥ ६१-६२ ॥

आवरण पूजा विधि : सर्वप्रथम[1] केसरों में आग्नेय आदि कोणों में तथा चारों दिशाओं में निम्नलिखित मन्त्रों से पञ्चाङ्ग पूजा करनी चाहिए, यथा :

ॐ आचक्राय स्वाहा-आग्नेये। ॐ विचक्राय स्वाहा-नैऋत्ये। ॐ सुचक्राय स्वाहा-वायव्ये। ॐ त्रैलोक्य रक्षण चक्राय स्वाहा-ईशान्ये। ॐ असुरान्तक चक्राय स्वाहा-चतुर्दिक्षु।

इसके बाद अष्टदल में पूर्व आदि क्रम से निम्नलिखित मन्त्रों से रुक्मिणी आदि ८ महिषियों का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ रुक्मिण्यै नमः-पूर्व दले। ॐ सत्यभामायै नमः-आग्नेय दले। ॐ नग्न जित्यै नमः-दक्षिण दले। ॐ कालिन्द्यै नमः-नैऋत्य दले। ॐ मित्रविन्दायै नमः-पश्चिम दले। ॐ सुलक्षणायै नमः-वायव्य दले। ॐ जाम्बवत्यै नमः-उत्तर दले। ॐ सुशीलायै नमः-ईशान दले।

तत्पश्चात् दलों के अग्रभाग पर पूर्व आदि अनुलोम क्रम से निम्नलिखित मन्त्रों से वसुदेव आदि का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ वसुदेवाय नमः। ॐ देवक्यै नमः। ॐ नन्दाय नमः। ॐ यशोदायै नमः। ॐ बलभद्राय नमः। ॐ सुभद्रायै नमः। ॐ गोपेभ्यः नमः। ॐ गोपीभ्यः नमः।

इसके बाद[2] श्लोक संख्या ७-१३ की टिप्पणी में बतलायी गयी रीति के अनुसार इन्द्र आदि दिक्पालों का तथा वज्र आदि आयुधों का पूजन करना चाहिए। कुछ आचार्यों का मत है कि इसके बाद कृष्णाष्टक[3] का भी पूजन करना चाहिए।

---

[1] गौतमीय तन्त्र का मत है कि गोपाल जी के चारों ओर पूर्व आदि दिशाओं में श्रीदामा आदि का पूजन करने के बाद अङ्ग पूजा करनी चाहिए :

ॐ श्रीदामाय नमः-पूर्वे। ॐ सुदामाय नमः-दक्षिणे। ॐ वसुदेवाय नमः-पश्चिमे। ॐ किंकिण्यै नमः-उत्तरे।

[2] गौतमी तन्त्र के अनुसार अष्टदल एवं भूपुर के बीच में पूर्व आदि दिशाओं में मन्दार आदि का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ मन्दाराय नमः-पूर्वे। ॐ सन्तानकाय नमः-दक्षिणे। ॐ पारिजाताय नमः-पश्चिमे। ॐ कल्पवृक्षाय नमः-उत्तरे।

[3] गौतमीय तन्त्र में ही इन्द्रादि एवं वज्रादि की पूजा के बाद कृष्णाष्टक का पूजन करने का भी उल्लेख मिलता है। जो व्यक्ति पूरी आवरण पूजा करने में असमर्थ हो वह केवल कृष्णाष्टक का पूजन करने से ही मनोवांछित फल प्राप्त कर सकता है। कृष्णाष्टक के पूजन मन्त्र इस प्रकार हैं :

इत्थं सिद्धे मनौ मन्त्रीसाधयेत्स्वमनीषितम् ।
गुडूचीशकलैरग्नौ जुहुयाज्ज्वरशान्तये ॥ ६४ ॥
कृष्णं द्वेषं प्रकुर्वन्तं बलदेवस्य रुक्मिणः ।
द्यूतासक्तस्य संचित्य गोमयोद्भवगोलकान् ॥ ६५ ॥
जुहुयाद्द्वेषसिद्धयर्थं नरयोःसुहृदोर्मिथः ।
पिचुमदफलोत्पन्नतैलाभ्यक्तैःसमिद्वरैः ॥ ६६ ॥
अक्षजैर्जुहुयाद्रात्रावयुतं शत्रुशान्तये ।
अयुतं प्रजपेन्मंत्रमात्मानं संस्मरन्हरिम् ॥ ६७ ॥
मञ्चस्रस्तगतप्राणाकृष्टकंसं रिपुं सुधीः ।
शत्रुजन्मर्क्षवृक्षोत्थसमिद्भिरयुतं निशि ॥ ६८ ॥
जुहुयादित्थमुग्रोपि सपत्नो निधनं व्रजेत् ।
पलाशकुसुमैर्लक्षं विद्यासिद्धयै जुहोतु ना ॥ ६९ ॥
तण्डुलैःसितपुष्पाद्यै राज्यार्थैःप्रत्यहं नरः ।
हुत्वा सप्तदिनान्ते तद्भस्मभाले च मूर्द्धनि ॥ ७० ॥
धारयन्वशयेत्सद्यो यौवतं तच्चपूरुषान् ।
पुष्पं वासोञ्जनं वापि ताम्बूलमथचन्दनम् ॥ ७१ ॥
सहस्रं मनुनाजप्तं दद्याद्यस्मै नराय सः ।
वशमेत्यचिरादेव सपुत्रपशुबान्धवः ॥ ७२ ॥
वृन्दावनस्थं गायंतं गोपीभिःसंस्मरन्हरिम् ।
अपामार्गसमिद्भिर्योजुहुयाद्वशयेज्जगत् ॥ ७३ ॥
रासक्रीडागतं कृष्णं ध्यायन्योयुतमाजपेत् ।
षण्मासाद्वांछितां कन्यामुद्वहेद्भाक्तत्परः ॥ ७४ ॥
जपेत्सहस्रं ध्यायंती या कदम्बस्थितं हरिम् ।
कन्यका वांछितं नाथं मण्डलान्तलंभेत सा ॥ ७५ ॥

ॐ श्रीकृष्णाय नमः । ॐ वासुदेवाय नमः । ॐ देवकी नन्दनाय नमः । ॐ नारायणाय नमः । ॐ यदुश्रेष्ठाय नमः । ॐ वार्ष्णेयाय नमः । ॐ धर्म संस्थापनाय नमः । ॐ असुराक्रान्तभार हारिणे नमः ।

गोपाश्चगोपिकाश्चताः ॥ ६३-६७ ॥ मञ्चात् स्रस्तोगतप्राणआकृष्टश्चासौकंसश्चतथाभूतं रिपुं स्मरन् । रिपुजन्मनक्षत्रवृक्षसमिद्भिर्जुहुयात् । नक्षत्रवृक्षाउक्ताः ॥ ६८-७० ॥ तच्चयौवतं युवतिसमूहःपुरुषान्वशयेत् ॥ ७१-७४ ॥ मण्डलमेकोनपञ्चाशद्दिनानि-

पत्रैःफलैःसमिद्भिर्वाबिल्वोत्थैर्मधुसंयुतैः ।
कमलैःशर्करायुक्तैर्होमाल्लक्ष्मीपतिर्भवेत् ॥ ७६ ॥
बहुना किमिहोक्तेन कृष्णःसर्वार्थदो नृणाम् ।

काम्य प्रयोग : इस प्रकार (पूजन एवं पुरश्चरण से) मन्त्र सिद्ध हो जाने पर साधक अपनी विविध कामनाओं को पूर्ण कर सकता है :

ज्वर मुक्त होने के लिए गुडूची (गिलोय) के टुकड़ों से हवन करना चाहिए ।

दो मित्रों में द्वेष कराने के लिए कृष्ण से द्वेष करते हुए तथा जुआ खेलते हुए बलदेव एवं रुक्म का ध्यान कर गोबर के गोलाओं से हवन करना चाहिए ।

शत्रु को शान्त करने के लिए नीम के तेल में डुबाकर बहेड़े की लकड़ी से रात्रि में १० हजार आहुतियाँ देनी चाहिए ।

स्वयं को कृष्ण मानते हुए तथा शत्रु को मंच से गिरा हुआ एवं चोटी पकड़ कर खींचा जाता हुआ निष्प्राण कंस मानकर १० हजार जप करना चाहिए । तथा रात्रि में शत्रु के जन्मनक्षत्र के वृक्ष (देखिये तरङ्ग श्लो० की टिप्पणी ।) की समिधाओं से हवन करना चाहिए । ऐसा करने से उग्रतम शत्रु भी मर जाता है ।

विद्या सिद्धि हेतु मनुष्य को टेसू के फूलों से १ लाख आहुतियाँ देनी चाहिए ।

राई मिलाकर चावल एवं श्वेतपुष्प आदि से लगातार ७ दिन तक हवन करके उसकी भस्म माथे एवं मस्तक पर लगानी चाहिए । ऐसा करने से मनुष्य युवतियों के समूह तथा पुरुषों को वश में कर लेता है ।

इस मन्त्र से १ हजार बार अभिमन्त्रित कर फूल, वस्त्र, अंजन, ताम्बूल या चन्दन जिस व्यक्ति को दे दिया जाय वह अपने पुत्र एवं बान्धवों के साथ शीघ्र वश में हो जाता है ।

जो व्यक्ति वृन्दावन में गोपियों द्वारा गुणगान किये जाने वाले भगवान् कृष्ण का स्मरण कर अपामार्ग (औंघा) की समिधाओं से हवन करता है, वह जगत को वश में कर लेता है ।

जो व्यक्ति भक्ति तत्पर होकर रासलीला के मध्य में भगवान् श्रीकृष्ण का ध्यान कर उक्त मन्त्र का १० हजार जप करता है, वह ६ महीनों के भीतर इच्छित कन्या से विवाह कर लेता है ।

जो कन्या कदम्ब पर बैठे हुए श्रीकृष्ण का ध्यान कर प्रतिदिन १ हजार जप करती है, वह ४९ दिन के भीतर वांछित पति को प्राप्त करती है ।

तन्मध्येवांछितंप्रियंप्राप्नोति ॥ ७५-७७ ॥

मधु सहित बेल के पत्र, फल या सामिधाओं से अथवा शक्कर सहित कमलों का होम करने से व्यक्ति धनवान हो जाता है। विशेष क्या कहें, भगवान् श्रीकृष्ण का यह मन्त्र मनुष्यों की सब कामनाओं को पूर्ण करता है।

अथ मन्त्रान्तरं वच्मि गोविन्दस्येष्टदं नृणाम् ॥ ७७ ॥
कामोवियद्रेचिकाढ्यःपीतावामाक्षिसंयुता।
चक्रीङ्गिटीशमारूढोबकोनन्तान्वितोमरुत् ॥ ७८ ॥
हृदयान्तो मनुश्रेष्ठो वसुवर्णोखिलेष्टदः।

गोविन्द मन्त्र का उद्धार : मनुष्यों को अभीष्टफलदायक गोविन्द का एक अन्य मन्त्र बतलाता हूँ—

काम (क्लीं) रेचिका सहित वियत् (ह्र) वामाक्षि सहित पीता (पी) ङ्गिटीश सहित चक्री (के), अनन्त सहित बक (शा), मरुत् (य) तथा अन्त में हृदय (नमः) लगाने से सर्वाभीष्टप्रद, ८ अक्षर का श्रेष्ठ मन्त्र बनता है।

टिप्पणी : गोविन्द मन्त्र : क्लीं हृषीकेशाय नमः।

मुनिःसम्मोहनाद्यस्य नारदःपरिकीर्तितः ॥ ७९ ॥
गायत्रीछन्दइत्युक्तं देवस्त्रैलोक्यमोहनः।
कामबीजेन षड्दीर्घयुक्तेनाङ्गं समाचरेत् ॥ ८० ॥

विनियोग एवं न्यास : इस मन्त्र का सम्मोहननारद ऋषि है, गायत्री छन्द है तथा त्रैलोक्यमोहन देवता है।

षड्दीर्घ सहित कामबीज से अङ्गन्यास करना चाहिए।

टिप्पणी : विनियोग : अस्य श्री गोविन्द मन्त्रस्य संमोहननारद ऋषिः, गायत्री छन्दः त्रैलोक्यमोहनो देवता ममाभीष्टसिद्धये जपे विनियोगः।

षडङ्गन्यास : क्लां हृदयाय नमः। क्लीं शिरसे स्वाहा। क्लूं शिखायै वषट्। क्लैं कवचाय हुम्। क्लौं नेत्रत्रयाय वौषट्। क्लः अस्त्राय फट्।

कल्पानोकहमूलसंस्थितवयोराजोन्नतां
सस्थितं पौष्पंबाणमथेक्षुचापकमलेपाशांकुशे बिभ्रतम्।
चक्रंशंखगदेकरैरुदधिजासंश्लिष्टदेहं हरिं
नानाभूषणरक्तलेपकुसुमं पीताम्बरं संस्मरेत् ॥ ८१ ॥

मंत्रांतरमाह। कामइति। कामःक्लीं। वियत्हःरेचिकाढ्यःऋयुतः ह्र। पीताषः वामाक्षिसंयुता ईयुता पी। चक्रीकः ङ्गिटीशए तदारूढःके। बकःशः अनन्तान्वितः आयुतःशाः। मरुत्यः ॥ ७८ ॥ हृदयंनमः। यथा–क्लींहृषीकेशायनमः ॥७९॥ षडंगमाह। कामेति। क्लांहृत् क्लींशिरहृत्यादि० ॥ ८० ॥ ध्यानमाह। कल्पेति। कल्पवृक्षमूलस्थित· गरुडासनंवाणपद्मांकुशशंखादैषु। अन्यान्यन्येषु ॥ ८१ ॥

ध्यान : कल्पवृक्ष के नीचे गरुड़ के ऊँचे कन्धे पर विराजमान, आठों हाथों में क्रमशः पुष्पबाण, इक्षुचाप, कमल, पास, अंकुश, चक्र, शंख एवं गदा धारण किये हुए लक्ष्मी से आलिंगित शरीर वाले, अनेक आभूषण, रक्तचन्दन, पुष्प एवं पीताम्बर धारण करने वाले गोविन्द जी का ध्यान करना चाहिए।

एवं ध्यात्वा जपेत्सूर्यलक्षं त्रिमधुरप्लुतैः।
पलाशपुष्पैर्जुहुयात्तत्सहस्रं हुताशने ॥ ८२ ॥
तर्पयेत्सलिलैस्तावत्पीठे पूर्वोदितेयजेत्।
पक्षिराजायठद्वंद्वमनेन गरुडार्चनम् ॥ ८३ ॥

जपसंख्या, हवन एवं पीठपूजन : ऐसा ध्यान कर १२ लाख जप करना चाहिए। मधु, घी एवं शर्करा मिश्रित पलाश पुष्पों (टेसू के फूलों) से अग्नि में १२ हजार आहुतियाँ देनी चाहिए।

(फिर) जल से १२ हजार तर्पण करना चाहिए। पूर्वोक्त पीठ पर इनका पूजन करना चाहिए। 'पक्षिराजाय' एवं ठद्वय (स्वाहा) इस पीठ मन्त्र से गरुड़ का पूजन करना चाहिए।

टिप्पणी : श्लोक संख्या ६ की टिप्पणी में बतलायी गयी विधि से पीठ देवताओं एवं पीठ शक्तियों का पूजन कर 'पक्षिराजाय स्वाहा'—इस पीठ मन्त्र से गरुड़ का का पूजन कर उस पूजित पीठ पर ध्यान, आवाहन आदि उपचारों से पञ्चपुष्पाञ्जलि समर्पण पर्यन्त विधिवत् भगवान् गोविन्द का पूजन करने के बाद आवरण पूजा करनी चाहिए।

मुकुटं शिरसीत्याथकर्णयोःकुण्डले यजेत्।
करेषु चक्राद्यास्त्राणि श्रीवत्सं कौस्तुभं हृदि ॥ ८४ ॥
वनमालां गले श्रोणिदेशे पीताम्बरं श्रियम्।
वामांगेभ्यर्च्य वह्न्यादिदिग्विदिक्ष्वंगपूजनम् ॥ ८५ ॥
दिक्षु प्रपूज्य चतुरोबाणान्कोणेषु पञ्चमम्।
लक्ष्म्याद्याःशक्तयःपूज्याःशक्राद्या आयुधान्यपि ॥ ८६ ॥
लक्ष्मीःसरस्वतीचापिरतिःप्रीतिश्चतुर्थिका।
कीर्तिःकांतिस्तुष्टिपुष्टी इतिलक्ष्म्यादयो मताः ॥ ८७ ॥

आवरण पूजा : शिर पर मुकुट का पूजन कर कानों में कुण्डलों का पूजन करना चाहिए। हाथों में चक्रादि अस्त्र, हृदय में श्रीवत्स एवं कौस्तुभ, गले में वनमाला तथा कमर में पीताम्बर का पूजन करना चाहिए।

सूर्यलक्षंद्वादशलक्षम् ॥ ८२ ॥

वाम अंग में लक्ष्मी का पूजन कर आग्नेय आदि कोणों में षडङ्ग पूजन करना चाहिए। दिशाओं में ४ बाण तथा कोणों में पंचम बाण का पूजन करना चाहिए।

फिर लक्ष्मी आदि शक्तियों, इन्द्र आदि दिक्पालों तथा उनके आयुधों का भी पूजन करना चाहिए। लक्ष्मी, सरस्वती, रति, प्रीति, कीर्ति, कान्ति, तुष्टि एवं पुष्टि—ये लक्ष्मी आदि शक्तियाँ कही गयी हैं।

टिप्पणी : आवरण जाविधि : सर्वप्रथम वृत्ताकार कर्णिका, अष्टदल एवं भूपुर सहित बने यन्त्र पर पीठ देवताओं तथा पीठशक्तियों का पूजन कर पीठ मन्त्र से गरुड़ का पूजन कर यन्त्र में गोविन्द भगवान् के विग्रह को भावना सहित उनके शिर आदि अंगों में मुकुट आदि का पूजन करना चाहिए, यथा :

शिरसि—ॐ मुकुटाय नमः।

कर्णयोः—ॐ कुण्डलाभ्यां नमः।

करेषु—ॐ शंखाय नमः। ॐ चक्राय नमः। ॐ गदायै नमः। ॐ पद्माय नमः। ॐ पाशाय नमः। ॐ अंकुशाय नमः। ॐ धनुषे नमः। ॐ शराय नमः।

हृदि—ॐ श्रीवत्साय नमः। ॐ कौस्तुभाय नमः। ॐ वनमालायै नमः।

कटिप्रदेशे—ॐ पीताम्बराय नमः।

वामांगे—ॐ श्रियै नमः।

तत्पश्चात् आग्नेय आदि कोणों में, मध्य में तथा चारों दिशाओं में निम्नलिखित मन्त्रों से षडङ्गपूजा करनी चाहिए, यथा :

क्लां हृदयाय नमः-आग्नेये। क्लीं शिरसे स्वाहा-नैर्ऋत्ये। क्लूं शिखायैवषट्-वायव्ये। क्लें कवचाय हुम्-ईशान्ये। क्लौं नेत्रत्रयाय वौषट्-मध्ये। क्लः अस्त्राय फट्-चतुर्दिक्षु।

तदनन्तर पूर्व आदि चारों दिशाओं में ४ बाणों का तथा कोणों में पञ्चम बाण का निम्नलिखित मन्त्रों से पूजन करना चाहिए, यथा :

द्रां शोषणबाणाय नमः-पूर्वे। द्रीं मोहन बाणाय नमः-दक्षिणे। क्लीं सन्दीपन बाणाय नमः-पश्चिमे। ब्लूं तापन बाणाय नमः-उत्तरे। सः मादन बाणाय नमः-कोणेषु।

फिर अष्टदल में पूर्व आदि अनुलोम क्रम से बाममन्त्रों से लक्ष्मी आदि शक्तियों का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ लक्ष्म्यै नमः-पूर्वदले। ॐ सरस्वत्यै नमः-आग्नेयदले। ॐ रत्यै नमः-दक्षिण-दले। ॐ प्रीत्यै नमः-नैर्ऋत्यदले। ॐ कीर्त्यै नमः-पश्चिमदले। ॐ कान्त्यै नमः-वायव्य दले। ॐ तुष्ट्यै नमः-उत्तरदले। ॐ पुष्ट्यै नमः-ईशानदले।

और इसके बाद श्लोक सं० ७-१३ की टिप्पणी में बतलायी गयी रीति के अनुसार इन्द्र आदि दिक्पालों तथा वज्र आदि आयुधों का पूजन करना चाहिए।

इस प्रकार आवरण पूजा कर, धूप, दीप आदि उपचारों से विधिवत भगवान् गोविन्द का पूजन करना चाहिए।

विजयापुष्पसंयुक्तैर्जलैःसंतर्पयेच्छतम्।
प्रातःप्रत्यहमेतस्य वांछितं मासतो भवेत् ॥ ८८ ॥
अयुतं तु घृतेनाग्नौ हुत्वा संपातजं घृतम्।
तावज्जप्तं प्रियाकान्तं भोजयेद्वशमेति सः ॥ ८९ ॥

काम्य प्रयोग : प्रातःकाल विजया पुष्प मिलाकर इस मन्त्र से प्रतिदिन १०८ बार तर्पण करना चाहिए। ऐसा करने से १ महीने के भीतर इच्छित कार्य हो जाता है।

(विधिवत स्थापित) अग्नि में (इस मन्त्र से) १० हजार आहुतियाँ देकर आहुति के शेष बचे घी को १० हजार मन्त्रों से अभिमन्त्रित कर पत्नी अपने पति को खिला दे। ऐसा करने से वह उसके वश में हो जाता है।

कामबीजेपि विज्ञेया परिचर्य्योक्तमन्त्रवत्।
विशेषात्कामिनीवर्गमोहको मनुनायकः ॥ ९० ॥

एकाक्षर मन्त्र : 'क्लीं' इस एकाक्षर मन्त्र के पूजन आदि की रीति उक्त मन्त्र के समान है। यह मन्त्र विशेष रूप से स्त्री समुदाय को संमोहित करता है।

रमाभवानीकंदर्पःकृष्णायस्मृतिरोयुता।
विन्दायवह्निजायांतो द्वादशार्णो मनुःस्मृतः ॥ ९१ ॥

द्वादशाक्षर गोपाल मन्त्र का उद्धार : रमा (श्रीं) भवानी (ह्रीं) कन्दर्प (क्लीं) तथा कृष्णाय फिर 'ओ' सहित स्मृति (गो) 'विन्दाय' और अन्त में वह्निजाया (स्वाहा) लगाने से यह १२ अक्षर का मन्त्र बनता है।

टिप्पणी : गोपाल मन्त्र : श्रीं ह्रीं क्लीं कृष्णाय गोविन्दाय स्वाहा।

मुनिर्ब्रह्मास्य गायत्रीछन्दःकृष्णोस्य देवता।
धरैकचद्ररामाब्धिनेत्राणैरंगमीरितम् ॥ ९२ ॥
उपासनास्य मन्त्रस्य पूर्ववत्परिकीर्त्तिता।

विनियोग, न्यास एवं पूजन : इस मन्त्र के ब्रह्मा ऋषि हैं, गायत्री छन्द है तथा भगवान् कृष्ण देवता हैं।

मन्त्र के २, १, १, ३, ४ एवं २ वर्णों से षडङ्गन्यास करना चाहिए।

उद्धयंस्वाहा ॥ ८३-८९ ॥ मन्त्रांतरमाह। कामेति। क्लीमिति गोपालमनुः। परिचर्येति। तत्पूजोक्ताष्टार्णवदित्यर्थः। अयंस्त्रीवशीकारी ॥ ९० ॥ मन्त्रांतरमाह। रमेति। रमाश्रीं। भवानीह्रीं। कन्दर्पःक्लीं। स्मृतिर्गः ओयुता गो। यथा—श्रींह्रींक्लींकृष्णायगोविन्दायस्वाहेति ॥ ९१ ॥ षडंगमाह। धरैकेति। धराएकः ॥ ९२-९३ ॥

इस मन्त्र की पूजा एवं साधना विधि पूर्वोक्त मन्त्र के समान है।

टिप्पणी : विनियोग : अस्य द्वादशार्ण गोपाल मन्त्रस्य ब्रह्मा ऋषिः गायत्री छन्दः, कृष्णो देवता, ममाभीष्टसिद्धये जपे विनियोगः।

षडङ्गन्यास : श्री हृदयाय नमः। ह्रीं शिरसे स्वाहा। क्लीं शिखायै वषट्। कृष्णाय कवचाय हुम्। गोविन्दाय नेत्रत्रयाय वौषट। स्वाहा अस्त्राय फट्।

अथ वक्ष्येषोडशार्णं मनुं लोकसम्मोहनम् ॥ ९३ ॥

अथ रुक्मिणीवल्लभमन्त्रः।

तारोहृद्भगवतेते रुक्मिणीङेतवल्लभः।
द्विठान्तःषोडशार्णोयं नारदो मुनिरस्य तु ॥ ९४ ॥
छन्दोनुष्टुप्देवता तुरुक्मिणीवल्लभो हरिः।
एकद्वियुगलप्राक्षिवर्णैःपञ्चाङ्गमीरितम् ॥ ९५ ॥

रुक्मिणीवल्लभ मन्त्र : अब १६ अक्षर वाले लोक को सम्मोहित करने वाले मन्त्र को बतलाता हूँ :

तार (ॐ) हृद् (नमः) फिर 'भगवते' एवं 'रुक्मिणी' के बाद चतुर्थ्यन्त वल्लभ (वल्लभाय) और अन्त में ठद्वय (स्वाहा) लगाने से यह १६ अक्षर वाला मन्त्र बनता है।

इस मन्त्र के नारद ऋषि हैं, अनुष्टुप् छन्द है तथा रुक्मिणीवल्लभ हरि देवता हैं। (मन्त्र के) १, २, ४, ७ एवं २ अक्षरों से पञ्चांग न्यास बतलाया गया है।

टिप्पणी : मन्त्र : ॐ नमो भगवते रुक्मिणीवल्लभाय स्वाहा।

विनियोग : अस्य श्री रुक्मिणीवल्लभ मन्त्रस्य नारद ऋषिः, अनुष्टुप छन्दः रुक्मिणीवल्लभाहरिर्देवता ममाभीष्टसिद्धये जपे विनियोगः।

पञ्चाङ्ग न्यास : ॐ हृदयाय नमः। नमो शिरसे स्वाहा। भगवते शिखायै वषट्। रुक्मिणीवल्लभाय कवचाय हुम्। स्वाहा अस्त्राय फट्।

चिन्ताश्मयुक्तनिजदोःपरिरब्धकांतामालिंगितं सजलजेन करेण पत्न्या।
सौवर्णवेत्रयुतहस्तमनेकभूषं पीतांबरं भजत कृष्णमभीष्टसिद्धयै ॥९६॥

ध्यान : चिन्तामणि धारण करनेवाले हाथ से अपनी पत्नी का आलिंगन करनेवाले, हाथ में कमल धारण करनेवाली अपनी पत्नी से भी आलिंगित, दूसरे हाथ में

मन्त्रांतरमाह। तारइति। ॐनमोभगवतेरुक्मिणीवल्लभायस्वाहेति ॥ ९४ ॥ पञ्चांगमाह। एकेति ॥ ९५ ॥ ध्यानमाह। चिन्तेति। चिन्तामणियुतनिजहस्तेनालिंगितकांतायेनतम्। सपद्महस्तयापत्न्यालिंगितं। स्वर्णयष्टियुतदक्षकरम् ॥ ९६

सोने की छड़ी, अनेक आभूषण तथा पीताम्बर धारण करनेवाले भगवान् कृष्ण का अभीष्ट सिद्धि हेतु ध्यान करना चाहिए।

लक्षं जपेद्दशांशेन पद्मैर्होमं समाचरेत्।
अङ्गैर्नारदपूर्वाद्यैःपूजयेद्धरिम् ॥ ९७ ॥
नारदं पर्वतं जिष्णुं निशठोद्धवदारुकान्।
विष्वक्सेनं च शैनेयं दिक्ष्वग्रे विनतासुतम् ॥ ९८ ॥

जपसंख्या, हवन एवं पूजन : १ लाख जप करना चाहिए, तथा कमलों से दशांश होम करना चाहिए।

अङ्गपूजा, नारद आदि, इन्द्र आदि तथा वज्र आदि के साथ भगवान् कृष्ण का पूजन करना चाहिए। नारद, पर्वत, जिष्णु, निशठ, उद्धव, दारुक, विष्वक्सेन एवं शैनेय का दिशाओं में तथा गरुड़ का अग्रभाग में पूजन करना चाहिए।

टिप्पणी : *आवरणपूजाविधि* : श्लोक सं० ९६ में वर्णित भगवान् रुक्मिणीवल्लभ के स्वरूप का ध्यान कर मानसोपचार से पूजन कर विधिवत शंख स्थापित करना चाहिए। फिर पूर्वोक्त यन्त्र पर श्लोक सं० ६ की टिप्पणी में बतलायी गयी रीति से पीठपूजा करने के बाद ध्यान, आवाहन आदि उपचारों से भगवान् का विधिवत पूजन कर आवरण पूजा करनी चाहिए।

सर्वप्रथम केसरों में आग्नेय आदि क्रम से निम्नलिखित मन्त्रों से पञ्चाङ्ग पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ हृदयाय नमः। नमः शिरसे स्वाहा। भगवते शिखायै वषट्। रुक्मिणीवल्लभाय कवचाय हुम्। स्वाहा अस्त्राय फट्।

फिर अष्टदलों में पूर्व आदि दिशाओं में नाममन्त्रों से नारद आदि का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ नारदाय नमः। ॐ पर्वताय नमः। ॐ जिष्णवे नमः। ॐ निशठाय नमः। ॐ उद्धवाय नमः। ॐ दारुकाय नमः। ॐ विष्वक्सेनाय नमः। ॐ शैनेयाय नमः।

इसके बाद श्लोक सं० ७-१३ की टिप्पणी में बतलायी गयी रीति से भूपुर में इन्द्र आदि दिक्पालों का तथा उसके बाहर वज्र आदि आयुधों का पूजन करना चाहिए।

अंगैर्नारदादिभिः। इन्द्रादिभिः वज्रादिभिः ॥ ९७-९८ ॥

अथाष्टाक्षरी ।

कामोगोवल्लभोऽन्तःस्वाहांतोष्टाक्षरो मनुः ।
गायत्रीकृष्णधातारश्छन्दोदेवर्षयो मताः ।
वर्णयुग्मैःसमस्तैश्च पञ्चाङ्गविधिरीरितः ॥ ९९ ॥

अष्टाक्षरी मन्त्र : काम (क्लीं) चतुर्थ्यन्त गोवल्लभ (गोवल्लभाय) तथा अन्त में 'स्वाहा' लगाने से यह अष्टाक्षरी मन्त्र बनता है ।

इस मन्त्र का ब्रह्मा ऋषि है, गायत्री छन्द है तथा कृष्ण देवता है ।

२-२ वर्णों तथा समस्त मन्त्र से पञ्चाङ्ग न्यास करना चाहिए ।

टिप्पणी : मन्त्र : क्लीं गोवल्लभाय स्वाहा ।

विनियोग : अस्याष्टाक्षर मन्त्रस्य ब्रह्मा ऋषिः, गायत्री छन्दः, श्रीकृष्णो देवता ममाभीष्टसिद्धये जपे विनियोगः ।

पञ्चाङ्गन्यास : क्लीं गो हृदयाय नमः । वल्ल शिरसे स्वाहा । भाय शिखायै वषट् । स्वाहा कवचाय हुम् । क्लीं गोवल्लभाय स्वाहा अस्त्राय फट ।

हरिं पञ्चवर्षं व्रजेधावमानं स्वसौन्दर्यसंमोहितं स्वर्गयोषम् ।
यशोदासुतं स्त्रीगणैर्दृष्टकेलिं भजे भूषितं भूषणैर्नूपुराद्यैः ॥ १०० ॥

ध्यान : पाँच वर्ष की आयु वाले, व्रज में क्रीड़ा करते हुए, अपने सौन्दर्य से अप्सराओं को मोहित करने वाले, व्रजाङ्गनाओं द्वारा देखी जा रही क्रीड़ाओं को करने वाले, आभूषणों एवं नूपुर आदि से अलंकृत यशोदा पुत्र श्रीकृष्ण का ध्यान करना चाहिए ।

अष्टलक्षं जपेदष्टसहस्रं ब्रह्मवृक्षजैः ।
समिद्भिरःप्रजुहुयादंगार्चार्दिग्विदिक्ष्वथ ॥ १०१ ॥
वासुदेवःसंकर्षणः प्रद्युम्नश्चानिरुद्धकः ।
रुक्मिणीसत्यभामा च लक्ष्मणाजाम्बवत्यपि ॥ १०२ ॥
संक्रन्दनादयःपूज्याश्चाद्यान्यायुधानि च ।
एवं सिद्धे मनौ मन्त्रो सम्पदामालयो भवेत् ॥ १०३ ॥

जपसंख्या, हवन एवं पूजन : (इस मन्त्र का) ८ लाख जप करना चाहिए, तथा ढाक की समिधाओं द्वारा ८ हजार आहुतियाँ देनी चाहिए ।

मन्त्रांतरमाह । कामइति । क्लींगोवल्लभायस्वाहेति । गायत्रीछन्दः । कृष्णोदेवता । ब्रह्माऋषिः । पञ्चांगमाह । वर्णेति । क्लींगोहृत् । वल्लशिरः । भायशिखा । स्वाहावर्म । सर्वेणास्त्रम् ॥ ९९ ॥ ध्यानमाह । पञ्चेति । निजसौन्दर्यमोहिताप्सरसम् ॥ १०० ॥ ब्रह्मवृक्षजैः पलाशोत्थैः ॥ १०१-१०२॥ संक्रन्दनादयइन्द्रादयः ॥ १०३ ॥

अंगपूजा करने के बाद दिशाओं एवं कोणों में वासुदेव, संकर्षण, प्रद्युम्न एवं अनिरुद्ध का तथा रुक्मिणी, सत्यभामा, लक्ष्मणा एवं जाम्बवती का पूजन करना चाहिए।

और फिर इन्द्र आदि दिक्पाल तथा वज्र आदि आयुधों का पूजन करना चाहिए।

इस प्रकार मन्त्र सिद्ध हो जाने पर साधक सम्पत्तिवान् हो जाता है।

टिप्पणी : आवरण पूजाविधि : सर्वप्रथम मध्य में तथा चारों दिशाओं में निम्नलिखित मन्त्रों से पञ्चाङ्गपूजन करना चाहिए, यथा :

क्लीं गों हृदयाय नमः। वल्ल शिरसे स्वाहा। भाय शिखायै वषट्। स्वाहा कवचाय हुम्। वलीं गोवल्लभाय स्वाहा अस्त्राय फट्।

फिर पूर्व आदि चारों दिशाओं में तथा आग्नेय आदि चारों कोणों में निम्नलिखित मन्त्रों से वासुदेव आदि का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ वासुदेवाय नमः। ॐ संकर्षणाय नमः। ॐ प्रद्युम्नाय नमः। ॐ अनिरुद्धाय नमः। ॐ रुक्मिण्यै नमः। ॐ सत्यभामायै नमः। ॐ लक्ष्मणायै नमः। ॐ जाम्बवत्यै नमः।

और इसके बाद श्लोक सं० ७-१३ की टिप्पणी में बतलायी गयी रीति से इन्द्र आदि दिक्पालों का तथा वज्र आदि आयुधों का पूजन करना चाहिए।

कामसम्पुटितं कृष्णपदं वेदाक्षरोमनुः।
गायत्रीनारदःकृष्णश्छन्दो मुनिरधीश्वरः॥ १०४॥
दीर्घास्ढेन कामेन षडंगन्यासमाचरेत्।

चतुर्वर्णमन्त्र : काम (क्लीं) से संपुटित 'कृष्ण' पद—यह ४ अक्षर का मन्त्र है। इस मन्त्र के नारद ऋषि हैं, गायत्री छन्द है तथा कृष्ण देवता हैं।

षडदीर्घ सहित कामबीज से षडङ्गन्यास करना चाहिए।

टिप्पणी : मन्त्र : क्लीं कृष्ण क्लीं।

विनियोग : अस्य श्रीकृष्ण मन्त्रस्य नारद ऋषिः, गायत्री छन्दः, श्रीकृष्णो देवता मर्माभीष्टसिद्धये जपे विनियोगः।

षडङ्गन्यास : क्लां हृदयाय नमः। क्लीं शिरसे स्वाहा। क्लूं शिखायै वषट्। क्लैं कवचाय हुम्। क्लौं नेत्रत्रयाय वौषट्। क्लः अस्त्राय फट्।

कल्पद्रुमूलसंरूढपद्मस्थं चिन्तमेद्धरिम्॥ १०५॥
कल्पद्रो रतिरमणीयपल्लवेभ्यःप्रोद्भूतैर्मणिनिकरैःप्रसिक्तमीशम्।
ध्यायेयं कनकनिभांशुकेवसानं भुञ्जानं दधिनवनीतपायसानि॥१०६॥

मन्त्रान्तरमाह। कामेनेति। क्लींकृष्णक्लीमितिवेदाक्षरश्चतुर्वर्णः॥ १०४-१०५॥

ध्यान : कल्पवृक्ष के नीचे पद्म दल पर विराजमान श्रीकृष्ण का ध्यान करना चाहिए। कल्पवृक्ष के अति रमणीय पल्लवों से होने वाली रत्नवृष्टि से अभिषिक्त, सुनहरे वस्त्र धारण करने वाले तथा दही, मक्खन एवं खीर खाते हुए भगवान् श्रीकृष्ण का ध्यान करना चाहिए।

चतुर्लक्षं जपेन्मन्त्रं दशांशं बिल्वसम्भवैः।
फलैःप्रजुहुयादग्नौ यजेदंगानि पूर्ववत् ॥ १०७ ॥
महापद्मं तथा पद्मं शंखं मकरकच्छपौ।
मुकुन्दकुन्दनीलाश्चनिधीन्दिक्षु समर्चयेत् ॥ १०८ ॥
इन्द्रादीन्वज्रपूर्वांश्चप्रयजेत्तदनन्तरम्।
इत्थं जपादिभिःसिद्धो मन्त्रो निधिरिवापरः ॥ १०९ ॥

जपसंख्या, हवन एवं पूजन : इस मन्त्र का ४ लाख जप करना चाहिए। बेल फल से अग्नि में दशांश हवन करना चाहिए तथा पूर्ववत् अंगपूजन करना चाहिए।

फिर दिशाओं में महापद्म, पद्म, शंख, मकर, कच्छप, मुकुन्द, कुन्द एवं नील इन निधियों का पूजन करना चाहिए और फिर इन्द्र आदि दिक्पाल तथा वज्र आदि आयुधों का पूजन करना चाहिए।

इस प्रकार जप आदि से सिद्ध मन्त्र व्यक्ति को निधिवान् बनाता है।

टिप्पणी : आवरण आदिविधि : सर्वप्रथम आग्नेय आदि चारों कोणों में, मध्य में तथा चारों दिशाओं में निम्नलिखित मन्त्रों से षडङ्गपूजन करना चाहिए, यथा :

क्लां हृदयाय नमः। क्लीं शिरसे स्वाहा। क्लूं शिखायै वषट्। क्लैं कवचाय हुम्। क्लौं नेत्रत्रयाय वौषट्। क्लः अस्त्राय फट्।

फिर पूर्व आदि दिशाओं में महापद्म आदि निधियों का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ महापद्माय नमः। ॐ पद्माय नमः। ॐ शंखाय नमः। ॐ मकराय नमः। ॐ कच्छपाय नमः। ॐ मुकुन्दाय नमः। ॐ कुन्दाय नमः। ॐ नीलाय नमः।

और इसके बाद श्लोक सं० ७-१३ की टिप्पणी में बतलायी गयी रीति से इन्द्र आदि दिक्पाल तथा वज्र आदि आयुधों का पूजन करना चाहिए।

मन्त्रेष्वेषु दशार्णोक्तान्प्रयोगान्विदधीत च।

काम्य प्रयोग : इन मन्त्रों से भी दशाक्षर मन्त्र के सन्दर्भ में बतलाये गये काम्य प्रयोग किये जाते हैं।

ध्यानमाह। कल्पेति। कल्पद्रोःकल्पवृक्षस्य यत्सिक्तमभिषिक्तम् ॥ १०६-११० ॥

अथ पुत्रप्रदं वक्ष्मिकृष्णमन्त्रमनुष्टुभम् ॥ ११० ॥
देवकीसुतवर्णांते गोविन्दपदमुच्चरेत् ।
वासुदेवपदं प्रोच्य संबुद्धयंतं जगत्पतिम् ॥ १११ ॥
देहिमेतनयं प्रोच्य कृष्णत्वामहमीरयेत् ।
शरणंगतइत्युक्तो मन्त्रोद्वात्रिंशदक्षरः ॥ ११२ ॥

सन्तान गोपाल मन्त्र का उद्धार : अब पुत्रदायक कृष्ण मन्त्र को बतलाता हूं जो अनुष्टुप् छन्द में है—

'देवकी सुत' के बाद 'गोविन्द' पद बोलना चाहिए। फिर 'वासुदेव' पद बोलकर सम्बुद्धन्त जगत्पति (जगत्पते), 'देहि मे तनयं' तथा 'कृष्ण त्वामहं' बोलना चाहिए। और अन्त में 'शरणंगतः' बोलने से ३२ अक्षर का मन्त्र बनता है।

टिप्पणी : सन्तान गोपाल मन्त्र :

देवकीसुत गोविन्द वासुदेव जगत्पते ।
देहि मे तनयं कृष्ण त्वामहं शरणं गतः ॥

नारदोमुनिरस्योक्तोनुष्टुप्छन्दःसमीरितम् ।
देवःसुतप्रदःकृष्णःपादैःसर्वेण चाङ्गकम् ॥ ११३ ॥

विनियोग एवं न्यास : इस मन्त्र का नारद ऋषि कहा गया है। अनुष्टुप् छन्द तथा सुतप्रद कृष्ण देवता बतलाया गया है।

श्लोक के ४ पादो तथा सम्पूर्ण मन्त्र से पञ्चाङ्गन्यास करना चाहिए।

टिप्पणी : विनियोग : अस्य श्री सन्तान गोपाल मन्त्रस्य नारद ऋषिः, अनुष्टुप् छन्दः सुतप्रदः कृष्णो देवता ममाभीष्टसिद्धये जपे विनियोगः।

पञ्चाङ्ग न्यास : देवकी सुत गोविन्द हृदयाय नमः। वासुदेव जगत्पते शिरसे स्वाहा। देहि मे तनयं कृष्ण शिखायै वषट्। त्वामहं शरणंगतः कवचाय हुम्। देवकीसुत ···· शरणंगतः अस्त्राय फट्।

विजयेनयुतोरथस्थितःप्रसमानीय समुद्रमध्यतः ।
प्रददत्तनयान्द्विजन्मने स्मरणीयो वसुदेवनन्दनः ॥ ११४ ॥

ध्यान : समुद्र मे से लाकर ब्राह्मण को उसका पुत्र देते हुए, तथा अर्जुन के साथ रथ पर बैठे हुए भगवान् वासुदेव का ध्यान करना चाहिए।

लक्षं जपायुतं होमस्तिलैर्मधुरसंयुतैः ।
अर्चापूर्वोदिताचैवं मन्त्रः पुत्रप्रदो नृणाम् ॥ ११५ ॥

मन्त्रान्तरमाह। देवकीति। यथा—देवकीसुतगोविन्दवासुदेवजगत्पते। देहिमेतनयं-कृष्णत्वामहंशरणंगतइति ॥ १११-११३ ॥ ध्यानमाह। विजयेनेति। अर्जुनेनयुतोबुधि-मध्याच्चनयानानीयद्विजायददत्ध्येयः ॥ ११४-११५ ॥

जपसंख्या, हवन एवं पूजन : (इस मन्त्र का) १ लाख जप, मधु घी एवं शक्कर मिश्रित तिलों से १० हजार होम तथा पूर्वोक्त रीति से (भगवान् वासुदेव का) पूजन करना चाहिए। इस प्रकार पुरश्चरण करने से यह मन्त्र मनुष्यों को पुत्र देता है।

नृसिंहो माधवारूढो लोहितो निगमादिमः।
कृशानुभार्य्या पञ्चार्णो मनुर्विषहरःपरः ॥ ११६ ॥

विषनाशक गरुड़ मन्त्र का उद्धार : माधवारूढ़ नृसिंह (क्षि) लोहित (प) निगमादि (ॐ) तथा अन्त में कृशानुभार्या (स्वाहा) लगाने से यह विषनाशक पञ्चाक्षर मन्त्र बनता है।

टिप्पणी : गरुड़ मन्त्र : क्षिप ॐ स्वाहा।

अनन्तपंक्तिपक्षीद्रामुनिश्छंदश्चदेवता।
तारवह्निप्रिये बीजशक्ती मन्त्रस्य कीर्तिते ॥ ११७ ॥

विनियोग : अनन्त, पंक्ति एवं पक्षीन्द्र क्रमशः ऋषि, छन्द एवं देवता कहे गये हैं। और तार (ॐ) तथा वह्निप्रिया इस मन्त्र के बीज एवं शक्ति बतलाये गये हैं।

टिप्पणी : विनियोग : अस्य गरुड़ मन्त्रस्य अनन्त ऋषिः, पंक्तिश्छन्दः, पक्षीन्द्रा देवता, ॐ बीजं, स्वाहा शक्तिः, ममाभीष्टसिद्धये जपे विनियोगः।

ज्वलज्ज्वलमहामतिस्वाहाहृदयमीरितम्।
गरुडेतिपदस्यांते चूडानलयुचिप्रिया ॥ ११८ ॥
शिरोमन्त्रो गरुडतःशब्देस्वाहाशिखामनुः।
गरुडाणार्णुदित्वांते प्रभञ्जययुगं वदेत् ॥ ११९ ॥
प्रभेदययुगं पञ्चाद्वित्रासयविमर्दय।
प्रत्येकंद्विस्ततःस्वाहाकवचोमनुरीरितः ॥ १२० ॥
उग्ररूपधरांते तु सर्वविषहरेति च।
भीषयद्वितयं प्रोच्य सर्वंदहदहेति च ॥ १२१ ॥
भस्मीकुरुकुरुस्वाहानेत्रमन्त्रोऽमीरितः।
अप्रतिहतबलान्तेबलाप्रतिहतेति च ॥ १२२ ॥
शासनांते तथा हुंफट्स्वाहास्त्रमनुरीरितः।

हरिप्रसंगात्तद्वाहनस्यगरुडस्यमन्त्रमाह। नृसिंहइति। नृसिंहःक्षिः माधवारूढः इयुतःक्षि। लोहितः प। निगमादिरमॐ। कृशानुभार्यास्वाहा ॥ ११६-११७ ॥ षडंगमाह। ज्वलेति। ज्वल २ महामतिस्वाहाहृत्। गरुडचूडानलस्वाहाशिरः ॥ ११८ ॥ गरुडशिखे-स्वाहाशिखा। गरुडप्रभञ्जय २ प्रभेदय २ वित्रासय २ विमर्दय २ स्वाहास्त्रं ॥ ११९-१२० ॥ उग्ररूपधरसर्वविषहरभीषय २ सर्वंदहदह भस्मीकुरुकुरुस्वाहानेत्रम्। अप्रतिहतबला-

षडङ्गन्यास : 'ज्वल ज्वल महामति स्वाहा' यह हृदय का मन्त्र है। 'गरुड़' के बाद 'चूडानन' एवं शुचिप्रिया (स्वाहा) यह शिर का मन्त्र है। 'गरुड़' के बाद 'शिखे स्वाहा' यह शिखा का मन्त्र है। 'गरुड़' कहकर २ बार 'प्रभंजय', २ बार 'प्रभेदय', फिर २-२ बार 'वित्रासय' एवं 'विमर्दय' और फिर 'स्वाहा'—यह कवच का मन्त्र है। 'उग्ररूप धर' के बाद 'सर्व' 'विषहर' २ बार 'भीषय' फिर 'सर्व दह-दह' 'भस्मी कुरु कुरु' तथा 'स्वाहा'—यह नेत्रमन्त्र कहा गया है। 'अप्रतिहत' पद के बाद 'बलाप्रतिहत' फिर 'शासन' एवं 'हुं फट् स्वाहा'—यह अस्त्र मन्त्र बतलाया गया है।

टिप्पणी षडङ्गन्यास विधि : ज्वलज्वलमहामति स्वाहा हृदयाय नमः। गरुड़ चूडानन स्वाहा शिरसे स्वाहा। गरुडशिखे स्वाहा शिखायै वषट्। गरुड़प्रभंजय प्रभंजय वित्रासय वित्रासय विमर्दय विमर्दय स्वाहा कवचाय हुम्। उग्ररूपधर विषहर भीषय भीषय सर्व दह दह भस्मीकुरुकुरु स्वाहा नेत्रत्रयाय वौषट्। अप्रतिहतबलाप्रतिहत शासन हुं फट् स्वाहा अस्त्राय फट्।

पादे कटौ हृदि मुखे मूर्ध्नि वर्णान्न्यसेत् ॥ १२३ ॥

वर्णन्यास : पैर, कमर, हृदय, मुख एवं शिर में मन्त्र के वर्णों का न्यास करना चाहिए।

टिप्पणी : *वर्णन्यासविधि* : ॐ क्षिं नमः-पादयोः। ॐ पं नमः-कटौ। ॐ ॐ नमः-हृदि। ॐ स्वां नमः-मुखे। ॐ हां नमः-मूर्धि।

तप्तस्वर्णनिभं फणीन्द्रनिकरैःकल्पाङ्गभूषं प्रभुं
स्मर्तॄणां शमयंतमुग्रमखिलं नृणां विषं तत्क्षणात्।
चंच्वग्रप्रचलद्भुजङ्गमभयं पाण्योर्वरं बिभ्रतं
पक्षोच्चारितसामगीतममलं श्रीपक्षिराजं भजे ॥ १२४ ॥

ध्यान : तपे सोने जैसी आभावाले, सर्पों के आभूषणों से व्याप्त अंगों वाले, स्मरण करने वाले मनुष्यों के विष को तुरन्त दूर करने वाले, चोंच के अग्र भाग में चंचल सर्प लिए हुए, हाथों में अभय एवं वरद मुद्रा वाले तथा अपने पंखों से सामगान उच्चारित करने वाले श्री पक्षिराज का ध्यान करता हूँ।

पञ्चलक्षं जपेन्मन्त्रं दशांशं जुहुयात्तिलैः।
पूजयेन्मातृकापद्मे गरुडं वेदविग्रहम् ॥ १२५ ॥
चतुर्थ्यन्तःपक्षिराजःस्वाहापीठमनुःस्मृतः।

प्रतिहतशासनहुंफट्स्वाहाअस्त्रम्। वर्णन्यासमाह। पादइति ॥ १२१-१२३ ॥ ध्यानमाह। तप्तेति। स्मर्तॄणांनृणामुग्रंविषंतत्क्षणाच्छमयति। दक्षेवरम्। पक्षाभ्यामुच्चारिताःसाम्नां बृहद्रथन्तरादीनाङ्गीतपोयेनतम्। बृहद्रथन्तरेपक्षाविति श्रुतेः ॥ १२४-१२५ ॥

जपसंख्या, हवन एवं पूजन : इस मन्त्र का ५ लाख जप करना चाहिए। तिलों से दशांश होम करना चाहिए तथा मातृकापद्म पर वेदमूर्ति गरुड़ जी का पूजन करना चाहिए।

चतुर्थ्यन्त पक्षिराज (पक्षिराजाय) एवं 'स्वाहा' यह पीठमन्त्र कहा गया है।

इष्ट्वाङ्गं कर्णिकामध्ये नागान्पत्रेषु पूजयेत् ॥ १२६ ॥
अनन्तं वासुकिं चापि तृतीयं तक्षकं पुनः।
कर्कोटकं तथा पद्मं महापद्मं समर्चयेत् ॥ १२७ ॥
शंखपालं च कुलिकमिन्द्रादीन्वज्रसंयुतान्।
एवं सिद्धे मनौ मन्त्री नाशयेद्गरलद्वयम् ॥ १२८ ॥

आवरणपूजा : कर्णिका के बीच में अंगपूजन कर दलों पर ८ नागों का पूजन करना चाहिए। अनन्त, वासुकि, तक्षक, कर्कोटक, पद्म, महापद्म, शंखपाल एवं कुलिक की पूजा करनी चाहिए। फिर वज्र आदि आयुधों के साथ इन्द्र आदि दिक्पालों का पूजन करना चाहिए।

इस रीति से मन्त्र सिद्ध हो जाने पर साधक स्थावर एवं जंगम दोनों प्रकार के विषों को नष्ट कर देता है।

टिप्पणी : आवरण पूजा विधि : सर्वप्रथम कर्णिका के मध्य में षडङ्गन्यासोक्त मन्त्रों से अंगपूजा करनी चाहिए, यथा :

ज्वलज्वलमहामति स्वाहा हृदयाय नमः। गरुड़चूड़ानन स्वाहा शिरसे स्वाहा। गरुड़शिखे स्वाहा शिखायै वषट्। गरुड़ प्रभंजय प्रभंजय० कवचाय हुम्। उग्ररूपधर सर्व विषहर० नेत्रत्रयाय वौषट्। अप्रतिहत बलाप्रतिहत० अस्त्राय फट्।

तत्पश्चात् अष्टदल में पूर्व आदि क्रम से नाममन्त्रों से अष्टनागों का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ अनन्ताय नमः-पूर्वदले। ॐ वासुकये नमः-आग्नेय दले। ॐ तक्षकाय नमः-दक्षिणदले। ॐ कर्कोटकाय नमः-नैऋत्यदले। ॐ पद्माय नमः-पश्चिमदले। ॐ महापद्माय नमः-वायव्यदले। ॐ शंखपालाय नमः-उत्तरदले। ॐकुलिकाय नमः-ईशानदले।

और इसके बाद श्लोक सं० ७-१३ की टिप्पणी में बतलायी गयी रीति से इन्द्र आदि दिक्पाल तथा वज्र आदि आयुधों का पूजन करना चाहिए।

विष्णुभक्तिपरो नित्यं यो भजेत्पक्षिनायकम्।
शत्रून्सर्वान्पराभूय सुखी भोगसमन्वितः ॥ १२९ ॥

पक्षिराजायस्वाहेतिपीठमन्त्रः ॥ १२६-१२७ ॥
गरलद्वयंविषद्वयंस्थावरजंगमाख्यम् ॥ १२८-१२९ ॥

जीवेदनेकवर्षाणि सेवितोधरणीधवैः ।
कलेवरांते श्रीनाथसायुज्यं लभते तु सः ॥ १३० ॥

महिमा : विष्णु की भक्ति में सदैव तत्पर रहकर जो व्यक्ति पक्षिराज की उपासना करता है, वह सब शत्रुओं को परास्त कर सुख एवं भोग सहित सौ वर्ष तक जीवित रहता है और मृत्यु के बाद भगवान् विष्णु का सायुज्य प्राप्त करता है ।

इति श्री शुकदेव चतुर्वेदि विरचितायां सटिप्पण्यां मन्त्रमहोदधेः
मोहिनी व्याख्यायां चतुर्दशस्तरङ्गः ।

धरणीधवैर्भूपतिभिःसेवितश्चिरंजीवित्वात्तनुत्त्यंहरिसायुज्यंप्राप्नोति ॥ १३० ॥ इति श्रीमन्त्रमहोदधिव्याख्यायांनौकायांबिष्णुमन्त्रकीर्तनंनामचतुर्दशस्तरङ्गः ।

पञ्चदश तरङ्ग

अथ वक्ष्ये रवेर्मन्त्रं रोगदारिद्र्यनाशम् ।
प्रणवो भुवनेशानीमेधारेचिकयान्विता ॥ १ ॥
उमाकान्तोक्षियुक्सर्गीसूर्यआदित्यइन्दिरा ।
दशवर्णो मनुर्देवभागोस्य मुनिरीरितः ॥ २ ॥
गायत्रीछन्द उद्दिष्टं देवतादिवसेश्वरः ।
मायाबीजं रमाशक्तिर्नियोगोऽभीष्टसिद्धये ॥ ३ ॥

दरिद्रता नाशक रवि मन्त्र का उद्धार : अब रोग एवं दरिद्रता को नष्ट करने वाले रविमन्त्र को बतलाता हूँ :

प्रणव, भुवनेश्वरी (ह्रीं) रेचिका सहित मेधा (घृ), अक्षि सहित सर्गी उमाकान्त (णिः) फिर 'सूर्य आदित्यः' और अन्त में इन्दिरा (श्रीं) लगाने से यह १० अक्षर का मन्त्र बनता है ।

इस मन्त्र के भृगु ऋषि कहे गये हैं, गायत्री छन्द बतलाया गया है, सूर्य देवता हैं, माया (ह्रीं) बीज है, रमा (श्रीं) शक्ति है तथा अभीष्टसिद्धि हेतु इसका विनियोग होता है ।

टिप्पणी : रवि मन्त्र : ॐ ह्रीं घृणिः सूर्य आदित्यः श्रीं ।

विनियोग : अस्य श्री सूर्यमन्त्रस्य भृगुऋषिः गायत्री छन्दः भगवान् दिवाकरो देवता, ह्रीं बीजं, श्रीं शक्तिः, ममाभीष्टसिद्धये जपे विनियोगः ।

सत्येतिहृदयं ब्रह्मशिरोविष्णुशिखास्मृता ।
रुद्रवर्माग्निनेत्रंस्यात्सर्वेत्यस्त्रमुदीरितम् ॥ ४ ॥
तेजोज्वालामणेहुंफट्स्वहांतामनवोंगजाः ।

षडङ्गन्यास : 'सत्य' से हृदय, 'ब्रह्म' से शिर, 'विष्णु' से शिखा, 'रुद्र' से कवच, 'अग्नि' से नेत्र तथा 'सर्व' से अस्त्र पर न्यास करना कहा गया है । अङ्गन्यास के सब मन्त्रों के अन्त में 'तेजोज्वाला गणे हुं फट् स्वाहा' लगाना चाहिए ।

रविमंत्रमाह । प्रणवइति । प्रणव ॐ । भुवनेशानीह्रीं । मेधाधः रेचिकयान्विताऋयुता ॥१॥ अक्षियुक्इयुतःसर्गीचउमाकांतोणःणिः । सूर्यआदित्यःस्वरूपम् । इंदिराश्रीं । ॐ ह्रीं घृणिःसूर्यआदित्यः श्रीं ॥२-३॥ षडंगमाह । सत्येति । सत्यतेजोज्वालामणेहुंफट्स्वाहाहृदं । ब्रह्मतेजोज्वालाम०शिरः ॥४॥ विष्णु तेजोज्वाला० शिखेत्यादि । भूयइति । शिवाश्रियोः ।

टिप्पणी : षडङ्गन्यास विधि : सत्य तेजो ज्वाला गणे हुं फट् स्वाहा-हृदयाय नमः। ब्रह्म तेजो० स्वाहा-शिरसे स्वाहा। विष्णु तेजो० स्वाहा-शिखायै वषट्। रुद्र तेजो० स्वाहा-कवचाय हुम्। अग्नि तेजो० स्वाहा-नेत्रत्रयाय वौषट्। सर्व तेजो ज्वाला गणे हुँ फट् स्वाहा-अस्त्राय फट्।

भूयःषडङ्गं षड्वर्णैःकृत्वान्तःस्थैःशिवाश्रियोः ॥ ५ ॥
शेषार्णैर्जठरेपृष्ठे ङेतनाम्नातयोर्न्यसेत्।

अष्टाङ्गन्यास : शिवा (ह्रीं) एवं श्री (श्रीं) के बीच में मन्त्र के ६ वर्णों से पुनः षडङ्गन्यास कर शेष वर्णों से उसी प्रकार उदर एवं पृष्ठ के चतुर्थ्यन्त नाम एवं 'नमः' सहित तत्तद् स्थानों पर न्यास करना चाहिए।

टिप्पणी : षडङ्गन्यास विधि : ह्रीं ॐ श्रीं हृदयाय नमः। ह्रीं घृ श्रीं शिरसे स्वाहा। ह्रीं वि श्रीं शिखायै वषट्। ह्रीं सू श्रीं कवचाय हुम्। ह्रीं र्यं श्रीं नेत्रत्रयाय वौषट्। ह्रीं आं श्रीं अस्त्राय फट्। ह्रीं दिं श्रीं उदराय नमः-उदरे। ह्रीं त्यं श्रीं पृष्ठाय नमः-पृष्ठे।

आदित्यं च रविं भानुं भास्करं सूर्यमेव च ॥ ६ ॥
मूर्ध्नि वक्त्रे हृदि शिवे पादयोश्चविन्यसेत्।
सद्यादिपञ्चह्रस्वाद्यांश्चतुर्थीनमसान्वितान् ॥ ७ ॥

पंचमूर्तिन्यास : आदित्य, रवि, भानु, भास्कर एवं सूर्य के चतुर्थ्यन्त रूप के आगे प्रणव तथा पंच ह्रस्व (लृं ऋं उं इं अं) लगाकर तथा बाद में 'नमः' लगाकर क्रमशः शिर, मुख, हृदय, लिंग एवं पैरों पर न्यास करना चाहिए।

टिप्पणी : न्यास विधि : ॐ लृं आदित्याय नमः-मूर्धि। ॐ ऋं रवये नमः-मुखे। ॐ उं भानवे नमः-हृदि। ॐ इं भास्कराय नमः-लिंगे। ॐ अं सूर्याय नमः-पादयोः।

माया रमागतानष्टौवर्णमूर्धमुखेगले।
हृत्कुक्षिनाभिजंघे च पादयोश्चप्रविन्यसेत् ॥ ८ ॥

ह्रीं श्रीं बीजयोर्मध्यस्थितैः षड्वर्णैः पुनः षडंगंकृत्वाशेष वर्णैश्चतुर्थ्यन्तैरुदरपृष्ठयोर्न्यसेत्। यथा-ह्रींॐहृत्। ह्रींघृंश्रींशिरः। ह्रींणिश्रींशिखा। ह्रींसूंश्रींवर्म। ह्रींर्यं श्रींनेत्रम्। ह्रींआंश्रींअस्त्रम्। ह्रींदिंश्रींउदरायनमःउदरे। ह्रींत्यंश्रींपृष्ठायनमःपृष्ठे इत्यष्टांगम्। पंचमूर्तिन्यासमाह। आदित्यमिति ॥ ५-६ ॥ सद्यॐकारस्तदादिकाविलोमेनपंचह्रस्वाः ॐ लृंऋंउंइंअंएतद्याद्यांश्चेनमोंताजादित्यादीन्मूर्धादिषु यसेत्। यथा-ॐलृंआदित्यायनमोमर्धिन। ॐ ऋंरवयेनमोमुखे। ॐ उंभानवेनमोहृदि। ॐ इंभास्करायनमोलिंगे। ॐ अंसूर्यायनमः पादयोः ॥ ७ ॥ वर्णन्यासमाह। मायेति। नमोन्वितानित्यपिबोध्यम्। यथा-ॐह्रींॐश्रींनमो मूर्धिन। ॐह्रींघृंश्रींनमोमुखे। ॐह्रींणिंश्रींनमोगले। ॐह्रींसूंश्रींनमोहृदि। ॐह्रींर्यंश्रींनमःकुक्षौ। ॐह्रींआंश्रींनमोनाभौ। ॐह्रींदिंश्रींनमोर्जङ्घयोः। ॐह्रीत्यंश्रींनमःपादयोः ॥ ८ ॥

वर्णन्यास : माया (ह्रीं) एवं रमा (श्रीं) के मध्यस्थ मन्त्र के ८ वर्णों का क्रमशः शिर, मुख, कण्ठ, हृदय, कुक्षि, नाभि, जंघा एवं पैरों पर न्यास करना चाहिए।

टिप्पणी : न्यास विधि : ॐ ह्रीं ॐ श्रीं नमः-मूर्ध्नि। ॐ ह्रीं घृ श्रीं नमः-मुखे। ॐ ह्रीं वि श्रीं नमः-कण्ठे। ॐ ह्रीं सूं श्रीं नमः-हृदि। ॐ ह्रीं र्य श्रीं नमः-कुक्षौ। ॐ ह्रीं आं श्रीं नमः-नाभौ। ॐ ह्रीं दिं श्रीं नमः-जंघयोः। ॐ ह्रीं त्यं श्रीं नमः-पादयो।

स्वरान्सबिंदूनुच्चार्य्यङेंतंशीतांशुमंडलम्।
शिखादिकंठपर्य्यंतंविन्यसेत्संस्मरन्विधुम् ॥ ९ ॥
स्पर्शान्सेन्दून्समुच्चार्य्य ङेंतं भास्करमंडलम्।
कंठादिनाभिपर्य्यं तं न्यसेद्धयायन्प्रभाकरम् ॥ १० ॥
यादीन्सेन्दूश्चतुर्थ्यंतं वह्निमंडलमुच्चरन्।
नाभ्यादिपादपर्य्यन्तं विन्यसेत्पावकं स्मरन् ॥ ११ ॥
मंडलत्रयविन्यासः प्रोक्तस्तेजोविधायकः।

मण्डलन्यास : चन्द्रमा का स्मरण करते हुए सानुस्वार स्वरों को बोलकर चतुर्थ्यन्त सोमण्डल का शिखा से कण्ठ पर्यन्त न्यास करना चाहिए।

सूर्य का ध्यान करते हुए सानुस्वार स्पर्शों (क आदि २५ व्यञ्जनों) को बोलकर चतुर्थ्यन्त सूर्य मण्डल का कण्ठ से नाभि पर्यन्त न्यास करना चाहिए।

अग्नि का स्मरण करते हुए सानुस्वार यकार आदि १० वर्णों को बोलकर चतुर्थ्यन्त वह्नि मण्डल का नाभि से पैरों तक न्यास करना चाहिए।

यह मण्डलत्रय न्यास तेज बढ़ाने वाला बतलाया गया है।

टिप्पणी : न्यास विधि : अं आं इं.....अः सोमण्डलाय नमः-शिखादिकण्ठान्तम। कं खं गं.....मं सूर्यमण्डलाय नमः-कण्ठादि नाभ्यन्तम्। यं रं लं.....क्षं वह्निमण्डलाय नमः-नाभ्यादि पादान्तम्।

अकारादिठकारांतवर्णाढ्यंसोममंडलम् ॥ १२ ॥
ङेनमोंतं न्यसेन्मन्त्री मूर्द्धादिचरणावधि।
डकारादिक्षकारांतं वर्णाढ्यं वह्निमंडलम् ॥ १३ ॥
हृदादिपादपर्य्यन्तं विन्यसेन्ङेनमोन्वितम्।
अग्नीषोमात्मको न्यासः कथितः सर्वसिद्धिदः ॥ १४ ॥

मंडलन्यासमाह। स्वरानिति। विधुं चंद्रस्मरन्चंद्रमंडलंन्यसेत् यथा-अं १६ सोममंडलायनमःशिखादिकंठांतम् ॥ ९ ॥ स्पर्शान्कादीन्मांतान्यथा-कं २५ सूर्यमंडलायनमः कंठादिनाभ्यंतम् ॥ १० ॥ यादीना। यं १० वह्निमंडलायनमोनाभ्यादिपादांतम् ॥ ११ ॥ अग्नीषोमन्यासमाह। अकारादीति। अं-ठं २८ तोममंडलायनमोमूर्धादिपादांतम् ॥ १२ ॥ ङेइति २३ डं-क्षं २३ वह्निमंडलायनमोहृदादिपादांतम् ॥१३-१४ ॥

३. अग्नीषोमन्यास : अकारादि ठकारान्त (सानुस्वार) वर्णों के साथ चतुर्थ्यन्त सोममण्डल और इसके बाद 'नमः' लगाकर शिर से पैरों तक न्यास करना चाहिए ।

इकारादि क्षकारान्त (सानुस्वार) वर्णों को प्रारम्भ में लगाकर चतुर्थ्यन्त वह्नि मण्डल तथा बाद में 'नमः' लगाकर हृदय से पैरों तक न्यास करना चाहिए ।

(यह) अग्नीषोमात्मक न्यास सर्वसिद्धिदायक कहा गया है ।

टिप्पणी : न्यासविधि : अं आं इं·····ठं सोममण्डलाय नमः-मूर्धादिपादान्तम् । डं ढं णं·····क्षं वह्नि मण्डलाय नमः-हृदादिपादान्तम् ।

सबिन्दून्मातृकावर्णानजपांपुरुषात्मने ।
नमोंतं व्यापकं न्यस्येद्धंसन्यासोऽयमीरितः ॥ १५ ॥

हंसन्यास : सानुस्वार मातृकावर्ण, फिर अजपा (हंस) 'पुरुषात्मने' एवं 'नमः' से व्यापक न्यास करना चाहिए । यह हंसन्यास कहलाता है ।

टिप्पणी : न्यास विधि : अं आं इं·····क्षं हंसः पुरुषात्मने नमः-सर्वाङ्गे ।

अष्टावष्टौस्वरान्पंचपंचशः शेषवर्णकान् ।
उक्तादित्यमुखान्यस्येच्चतुर्भिश्चग्रहान्नव ॥ १६ ॥
आधारलिंगनाभीहृत्कंठे चमुखमध्यतः ।
भ्रूमध्ये भालदेशे च ब्रह्मरंध्रे क्रमान्न्यसेत् ॥ १७ ॥
वदेत्खेचरनामांते पदं भगवतेनमः ।

ग्रहन्यास : ८-८ स्वर ५ वर्ग तथा शेष वर्णों में से ४-४ वर्णों के साथ आदित्य आदि ग्रहों के चतुर्थ्यन्त नाम और फिर 'भगवते नमः' लगाकर इन ९ ग्रहों के मन्त्रों से आधार, लिंग, नाभि, हृदय, कण्ठ, मुख, भ्रूमध्य, ललाट एवं ब्रह्मरन्ध्र में न्यास करना चाहिए ।

टिप्पणी : न्यास विधि : अं आं···ऋं आदित्याय भगवते नमः-आधारे । लृं लॄं···· अः सोमाय भगवते नमः-लिंगे । कं खं गं घं ङं अंगारकाय भगवते नमः-नाभौ । चं छं जं झं ञं बुधाय भगवते नमः-हृदि । टं ठं डं ढं णं बृहस्पतये भगवते नमः-कण्ठे । तं थं दं धं नं शुक्राय भगवते नमः-मुखमध्ये । पं फं बं भं मं शनैश्चराय

हंसन्यासमाह । सबिंदूनिति अं-क्षं ५१ हंसःपुरुषात्मनेनमः सर्वांगे ॥ १५ ॥ ग्रहन्यासमाह । अष्टावष्टाविति । अं-८ आदित्यायभगवतेनमःआधारे । लृं-८ सोमायभगवतेनमःलिंगे । क-५ अंगारकाय भ० नाभौ । चं-५ बुधायभ०हृदि० । टं-५ बृहस्पतयेभ० गले । तं-५ शुक्रायभ० मुखमध्ये । पं-५ शनैश्चरायभ०भ्रूमध्ये । यं-४ राहवेभ० भाले । शं-४ केतवेभ० ब्रह्मरन्ध्रे । खेचराग्रहास्तन्नामांतेभगवतेनमः इतिपदंवदेत् । तच्चप्रयोगेलिखितम् । हंसेति । ग्रहन्यासानंतरंहंसाग्नीषोममंडलसंज्ञंन्यासत्रयंपुनःकुर्यात् । प्रथम्-

भगवते नमः-भ्रूमध्ये। यं रं लं वं राहवे भगवते नमः-भाले। शं षं सं हं केतवे भगवते नमः-ब्रह्मरन्ध्रे।

हंसाख्यमग्नीषोमाख्यं मंडलत्रयसंज्ञकम्।
पुनर्न्यासत्रयं कुर्य्यान्मूलेन व्यापकं चरेत् ॥ १८ ॥

इसके बाद पुनः हंसन्यास, अग्नीषोमन्यास तथा मण्डलत्रय न्यास करके मूलमन्त्र से व्यापक न्यास करना चाहिए।

शोणांभोरुहसंस्थितं त्रिनयनं वेदत्रयीविग्रहं
दानांभोजयुगाभयानिदधतं हस्तैः प्रवालप्रभम्।
केयूरांगदहारकंकणधरं कर्णोल्लसत्कुण्डलं
लोकेत्पत्तिविनाशपालनकरं सूर्य्यं गुणाढ्यं भजे ॥ १९ ॥

ध्यान : रक्त कमल पर विराजमान, तीन नेत्र वाले, वेदमूर्ति, चारों हाथों में क्रमशः दान, कमल, पद्म एवं अभय धारण करने वाले, प्रवाल जैसी आभा वाले, केयूर, अंगद, हार एवं कंकण आदि आभूषणों से सुशोभित, कानों में कुण्डल धारण करने वाले, जगत की उत्पत्ति, पालन एवं विनाश करने वाले भगवान् सूर्य का ध्यान करता हूँ।

एवं ध्यायञ्जपेल्लक्षदशकं तद्दशांशतः।
पद्मैस्तिलैर्वाजुहुयात्तर्पयेद्ब्रह्मांजयेद्द्विजान् ॥ २० ॥

जप संख्या एवं हवन आदि : ऐसा ध्यान करते हुए १० लाख जप करना चाहिए। कमल या तिलों से दशांश होम करना चाहिए, और फिर तर्पण तथा ब्राह्मण भोजन करना चाहिए।

प्रयजेत्पीठपूजायां धर्माद्यष्टस्थलेष्विमान्।
प्रभूतं विमलं सारंसमाराध्यं विदिक्ष्वथ ॥ २१ ॥
परमादिसुखं मध्येनंतादीन्पूर्ववद्यजेत्।
सोमाग्निमंडले प्रोच्य रविमण्डलमर्चयेत् ॥ २२ ॥
ततोऽष्टदिक्षु मध्ये च पीठशक्तीरिमानव।
दीप्तासूक्ष्माजयाभद्राविभूतिर्विमला तथा ॥ २३ ॥

करणाद्वैपरीत्येनेत्यर्थः ॥ १६-१८ ॥ ध्यानमाह। शोणेति। रक्तपद्मस्थांवेदत्रयीतनुं। सैषात्रय्येवविद्यातपतीतिश्रुतेः। ऊर्ध्वयोःवा० द०। पद्मद्वयम्। अधोवामदक्षयोरभयदाने ॥ १९-२० ॥ पीठपूजायांधर्मादिकाष्टस्थानेषुपंचैवपूज्याः। प्रभूताय०। विमलाय०। साराय० समाराध्यायेति अग्न्यादिषुसंपूज्य परमसुखायनम.इतिमध्येचसंपूज्य पुनरनंतादीन्पूर्ववत् प्रथमतरंगोक्तवत्। तेचाष्टावेव। ततः सोममंडलाय० वह्निमंडलायेत्यभ्यर्च्य सूर्यमंडलायनम इतियजेत् ॥ २१-२२ ॥ एतानावाह्यएव पीठदेवानिष्ट्वापीठशक्तीर्यजेत्। ताआह। दीप्तेति ॥ २३ ॥

अमोघाविद्युतासर्वतोमुखीपीठशक्तयः ।
ह्रस्वत्रयक्लीबहीनस्वरान्वह्नीन्दुसंयुतान् ॥ २४ ।
बीजानि पीठशक्तीनां तदाद्यास्ताः प्रपूजयेत् ।
ब्रह्मविष्णुशिवात्मांतेकायसौराययोस्मृतिः ॥ २५ ॥
पीठात्मने नमस्तारपूर्वः पीठमनुः स्मृतः ।
तारसेन्दुवियत्कान्तौबिन्दुमद्बिन्दुवर्जितौ ॥ २६ ॥
खोल्कायहृदयंमंत्रो नवार्णो मूर्तिकल्पने ।
अनेनमूर्तौकल्पायां यजेत्प्रद्योतनं प्रभुम् ॥ २७ ॥

पीठ पूजा : पीठ पूजा में धर्म आदि आठ देवताओ के स्थान पर कोणों में प्रभूत, विमल, सार एवं समाराध्य का तथा मध्य में परम सुख का पूजन करना चाहिए ।

फिर पूर्वोक्त रीति से अनन्त आदि का पूजन करना चाहिए । फिर सोम मण्डल एवं वह्नि मण्डल का पूजन कर सूर्य मण्डल का पूजन करना चाहिए ।

तत्पश्चात् आठों दिशाओं में तथा मध्य में इन नौ शक्तियों का पूजन करना चाहिए । दीप्ता, सूक्ष्मा, जया, भद्रा, विभूति, विमला, अमोघा, विद्युता एवं सर्वतोमुखी—ये पीठ शक्तियाँ हैं ।

ह्रस्वत्रय (अ, इ, उ) तथा क्लीव (ऋ, ॠ, ऌ, ॡ) को छोड़ कर शेष स्वरों एवं अनुस्वार को वह्नि (र) में लगाने से (रां, रीं, रूं, रें, रैं, रों, रौं, रं, रः) ये पीठ शक्तियों के बीज बन जाते हैं । इन्हें प्रारम्भ में लगाकर उनका पूजन करना चाहिए ।

'ब्रह्मविष्णुशिवात्म' के बाद 'कायसौरायो' फिर स्मृति (ग) तथा 'पीठात्मने नमः' और इसके प्रारम्भ में तार (ॐ) लगाने से यह पीठ मन्त्र बन जाता है ।

तार (ॐ) सेन्दु वियत् (हं) बिन्दु सहित एवं बिन्दु रहित कान्त (खं खः) फिर 'खोल्काय' एवं हृदय (नमः)–मूर्ति कल्पना के लिये यह नवार्णमन्त्र बतलाया गया है । इससे मूर्ति कल्पित कर भगवान् सूर्य का पूजन करना चाहिए ।

टिप्पणी : पीठ पूजा विधि : सर्वप्रथम श्लोक संख्या १९ में वर्णित भगवान् सूर्य के स्वरूप का ध्यान कर मानसोपचार से पूजन कर ताम्र आदि पात्र में अर्घ्य

तासांबीजान्याह । ह्रस्वेति । ह्रस्वत्रयम् अइउ । क्लीबाःऋॠऌॡ । एतद्व्यतिरिक्तारेफबिंदुयुताः स्वराः क्रमात् तासांबाजान रांरींरूंरें रैं रोंरौंरंरः इति । तत्पूर्वास्तायजेत् । रांदीप्तायैनमः । रासूक्ष्मायैइत्यादि० । पीठमंत्रमाह । ब्रह्मोत । स्मृतिर्गः । ॐब्रह्मविष्णुशिवात्मकायसौराययोगपीठात्मनेनमइति । मूर्तिकल्पनेमंत्रमाह । तारइति । तारॐ । सेंदुवियत्हं । बिंदुयुतस्तद्रहितश्चेति द्वौकांतौखौं खंखः ॥ २४-२५-२६ ॥ खोल्कायस्वरूपं । हृदयंनमः ॥ २७ ॥

स्थापन कर विधिवत गुरुपंक्ति[1] का पूजन कर सामान्य पूजा के अनुसार वृत्ताकार कर्णिका, अष्टदल एवं भूपुर सहित बने यन्त्र (देखिये चित्र ३७) पर नाम मन्त्रों से पीठ देवताओं का पूजन करना चाहिए, यथा :

पीठ मध्य : ॐ मं मण्डूकाय नमः । ॐ कं कालाग्नि रुद्राय नमः । ॐ आधार शक्तये नमः । ॐ प्रकृतये नमः । ॐ कूर्माय नमः । ॐ शेषाय नमः । ॐ पृथिव्यै नमः । ॐ क्षीर समुद्राय नमः । ॐ श्वेतद्वीपाय नमः । ॐ मणिमण्डपाय नमः । ॐ कल्पवृक्षाय नमः । ॐ मणिवेदिकायै नमः । ॐ रत्नसिंहासनाय नमः ।

फिर पूर्व आदि दिशाओं में तथा मध्य में प्रभूत आदि का उनके नाम मन्त्रों से पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ प्रभूताय नमः-पूर्वे । ॐ विमलाय नमः-दक्षिणे । ॐ साराय नमः-पश्चिमे । ॐ समाराध्याय नमः-उत्तरे । ॐ परमसुखाय नमः-मध्ये ।

तत्पश्चात् पीठ के मध्य में नाममन्त्रों से अनन्त आदि देवताओं का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ अनन्ताय नमः । ॐ पद्माय नमः । ॐ आनन्दकन्दाय नमः । ॐ संविन्नालाय नमः । ॐ विकारमय केसरेभ्यो नमः । ॐ प्रकृत्यात्मक पत्रेभ्यो नमः । ॐ पंचाशद्वर्ण-कर्णिकायै नमः ।

पुनस्तत्रैव : ॐ उं षोडश कलात्मने सोम मण्डलाय नमः । ॐ रं दश कलात्मने वह्नि मण्डलाय नमः । ॐ अं द्वादश कलात्मने सूर्य मण्डलाय नमः ।

इसके बाद केसरों में पूर्व आदि ८ दिशाओं में तथा मध्य में निम्नलिखित मन्त्रों से दीप्ता आदि ९ पीठ शक्तियों का पूजन करना चाहिए, यथा :

रां दीप्तायै नमः । रीं सूक्ष्मायै नमः । रूं जयायै नमः । रें भद्रायै नमः । रैं विभूत्यै नमः । रों विमलायै नमः । रौं अमोघायै नमः । रं विद्युतायै नमः । रः सर्वतोमुख्यै नमः ।

फिर 'ब्रह्म विष्णु शिवात्मकाय सौराय योगपीठात्मने नमः' इस पीठ मन्त्र से आसन देकर 'ॐ हं खं खः खोल्काय नमः'—इस मन्त्र से मूर्ति की कल्पना कर ध्यान, आवाहन आदि उपचारों से जगत्पति सूर्य का विधिवत पूजन करना चाहिए ।

प्राग्वत्षडंगं संपूज्य दिक्ष्वष्टांगं प्रपूजयेत् ।
आदित्यं मध्यतोभ्यर्च्य रविभानुं च भास्करम् ॥ २८ ॥

---

[1] ॐ गुरुभ्यो नमः, ॐ परम गुरुभ्यो नमः, ॐ परापर गुरुभ्यो नमः, ॐ परमेष्टि गुरुभ्यो नमः—इन मन्त्रों से गुरुपंक्ति का पूजन करना चाहिए ।

सूर्यं दिशासु सद्यादिपंचह्रस्वादिकान्यजेत् ।
उषां प्रज्ञां प्रभां संध्यामाद्यवर्णाद्याविदिक्ष्वपि ॥ २९ ॥
ब्राह्म्याद्यादिग्दलेष्वर्चेन्महालक्ष्मीस्थलेरुणम् ।
सोमं बुधं गुरुं शुक्रं दिक्ष्वाद्यवर्णादिकान्यजेत् ॥ ३० ॥
अंगारकं शनिं राहुं केतुं कोणेषुपूजयेत् ।
इंद्राद्यानायुधैर्युक्तान्पार्षदानर्चयेद्रवेः ॥ ३१ ॥

आवरण पूजा : पूर्वोक्त रीति से षडङ्ग पूजा कर दिशाओं में अष्टांग पूजन करना चाहिए। आदि में प्रणव तथा पञ्चह्रस्व (लूं, ऋं, उं, इं, अं) लगाकर आदित्य का मध्य में तथा रवि, भानु, भास्कर एवं सूर्य का दिशाओं में पूजन करना चाहिए। विदिशाओं में अपने आद्य वर्ण सहित उषा, प्रज्ञा, प्रभा एवं सन्ध्या का पूजन करना चाहिए। पूर्व आदि दिशाओं के दलों पर ब्राह्मी आदि मातृका का पूजन करना चाहिए। किन्तु महालक्ष्मी के स्थान पर अरुण की पूजा करनी चाहिए। (फिर) दिशाओं में सोम, बुध, गुरु एवं शुक्र का तथा कोणों में मंगल, शनि, राहु एवं केतु का पूजन करना चाहिए। (और फिर) आयुधों सहित इन्द्र आदि रवि के पार्षदों का पूजन करना चाहिए।

टिप्पणी : *आवरण पूजा विधि* : सर्वप्रथम केसरों में आग्नेय आदि ४ कोणों में, मध्य में तथा दिशाओं में निम्नलिखित मन्त्रों से षडङ्ग पूजा करनी चाहिए, यथा :

ॐ सद्योजातज्वालामाली हृं फट् स्वाहा हृदयाय नमः। ॐ ब्रह्म तेजो० स्वाहा शिरसे स्वाहा। ॐ विष्णु तेजो० स्वाहा शिखायै वषट्। ॐ रुद्र तेजो० स्वाहा कवचाय हुम्। ॐ अग्नि तेजो० स्वाहा नेत्रत्रयाय वौषट्। ॐ सर्व तेजो० स्वाहा अस्त्राय फट्।

इसके बाद पूर्व आदि ८ दिशाओं में अनुलोम क्रम से निम्नलिखित मन्त्रों से अष्टाङ्ग पूजन करना चाहिए, यथा—

ह्रीं ॐ श्रीं हृदयाय नमः। ह्रीं घृं श्रीं शिरसे स्वाहा। ह्रीं णि श्रीं शिखायै वषट्। ह्रीं सूं श्रीं कवचाय हुम्। ह्रीं र्यं श्रीं नेत्रत्रयाय वौषट्। ह्रीं आं श्रीं अस्त्राय फट्। ह्रीं दि श्रीं उदराय नमः-उदरे। ह्रीं त्यं श्रीं पृष्ठाय नमः-पृष्ठे।

तत्पश्चात् मध्य में आदित्य का, पूर्व आदि चारों दिशाओं के दलों में रवि आदि का तथा आग्नेय आदि कोणों के दलों में उषा आदि का निम्नलिखित मन्त्रों से पूजन करना चाहिए, यथा :

प्राग्वादात । षडङ्गान्यग्न्यादिषुसम्पूज्यदिक्चतुष्टांगानिन्यासोक्तानियजेत् । आदित्यादीन्मध्येदिक्षुचन्यासवत् ॐकारादिपञ्चह्रस्वाद्यान्। उषामिति आद्यवर्णाद्याःउंउषायैनमइत्यादि०।अष्टम्याभातुःस्थानेरुणमेवयजेदित्यर्थः। सोंसामायेत्यादिपूर्ववत्। आद्यवर्णाद्याः। रविपार्षदेभ्योनमइत्यादि ॥ २८-३१ ॥

ॐ लं आदित्याय नमः-मध्ये। ॐ क्षं रवये नमः-पूर्व दले। ॐ उं भानवे नमः-दक्षिण दले। ॐ इं भास्कराय नमः-पश्चिम दले। ॐ अं सूर्याय नमः-उत्तर दले। ॐ उं उषायै नमः-आग्नेय दले। ॐ प्रं प्रज्ञायै नमः-नैर्ऋत्य दले। ॐ प्रं प्रभायै नमः-वायव्य दले। ॐ सं सन्ध्यायै नमः-ईशान दले।

फिर अष्टदल के अग्र भाग पर पूर्व आदि अनुलोम क्रम से नाम मन्त्रों से ब्राह्मी शक्तियों का अरुण के साथ पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ ब्राह्म्यै नमः। ॐ माहेश्वर्यै नमः। ॐ कौमार्यै नमः। ॐ वैष्णव्यै नमः। ॐ वाराह्यै नमः। ॐ इन्द्राण्यै नमः। ॐ चामुण्डायै नमः। ॐ अरुणाय नमः।

तत्पश्चात् मण्डल के बाहर पूर्व आदि दिशाओं में सोम आदि का तथा आग्नेय आदि कोणों में अंगारक आदि ग्रहों का इन मन्त्रों से पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ सों सोमाय नमः-पूर्वे। ॐ बुं बुधाय नमः-दक्षिणे। ॐ गुं गुरवे नमः-पश्चिमे। ॐ शुं शुक्राय नमः-उत्तरे। ॐ अं अंगारकाय नमः-आग्नेये। ॐ शं शनये नमः-नैर्ऋत्ये। ॐ रां राहवे नमः-वायव्ये। ॐ कें केतवे नमः-ईशान्ये।

तदनन्तर भूपुर में अपनी २ दिशाओं में निम्न मन्त्रों से इन्द्र आदि रवि के पार्षदों का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ लं इन्द्राय नमः। ॐ रं आग्नये नमः। ॐ मं यमाय नमः। ॐ क्षं निर्ऋतये नमः। ॐ वं वरुणाय नमः। ॐ यं वायवे नमः। ॐ सं सोमाय नमः। ॐ हं ईशानाय नमः। ॐ आं ब्रह्मणे नमः। ॐ ह्रीं अनन्ताय नमः।

और फिर भूपुर के बाहर पूर्व आदि १० दिशाओं में निम्नलिखित मन्त्रों से वज्र आदि आयुधों की पूजा करनी चाहिए, यथा :

ॐ वं वज्राय नमः। ॐ शं शक्तये यमः। ॐ दं दण्डाय नमः। ॐ खं खड्गाय नमः। ॐ पां पाशाय नमः। ॐ अं अंकुशाय नमः। ॐ गं गदायै नमः। ॐ शूं शूलाय नमः। ॐ पं पद्माय नमः। ॐ चं चक्राय नमः।

इस रीति से आवरण पूजा कर धूप दीप आदि उपचारों से भगवान् सूर्य का विधिवत पूजन करना चाहिए।

इत्थं सिद्धे मनौ दद्याद्ज्ञानवेर्घ्यं च तद्दिने।
प्राणायामं षडङ्गं च कृत्वा न्यासान्पुरोदितान् ॥ ३२ ॥
स्वमण्डले यजेदर्कं मानसैरुपचारकैः।
सुताम्रघटितं प्रस्थतोयग्राहिमनोहरम् ॥ ३३ ॥

अर्घविधिमाह। प्राणोत ॥ ३२ ॥ प्रस्थंषोडशपलानि ॥ ३३ ॥

मण्डले स्थापयेत्पात्रं रक्तचन्दनचर्चितम् ।
विलोमां मातृकां मूलं विलोमं च पठञ्जलैः ॥ ३४ ॥
रविमण्डलनिर्गच्छत्सुधाबुद्धिविभावितैः ।
त्रयोदशैव वस्तूनि प्रक्षिपेन्मूलमुच्चरन् ॥ ३५ ॥
तिलतण्डुलदर्भाग्रशालिश्यामाकराजिका ।
हयारिकुसुमं रक्तं चन्दनं रक्तचन्दनम् ॥ ३६ ॥
गोरोचनं कुंकुमं चजयां वेणुयवानिति ।
तज्जले पीठमभ्यर्च्यबाह्यभानुं स्वमण्डलात् ॥ ३७ ॥
अखिलैरुपचारैस्तं पूजयेदावृतीरपि ।
प्राणायामत्रयं कृत्वा षडङ्गन्यासमाचरेत् ॥ ३८ ॥
चन्दनेन सुधाबीजं दक्षेकरतले न्यसेत् ।
आच्छादयेदर्घपात्रं वामाक्रान्तेन तेनच ॥ ३९ ॥
अष्टोत्तरशतावृत्त्यामूलेनाभोभिमन्त्रयेत् ।
पुनःपञ्चोपचारैस्तं पूजयेन्मूलमन्त्रतः ॥ ४० ॥
पाणिभ्यां पात्रमादाय जानुनीभूतले न्यसेत् ।
आमूर्घं पात्रमुद्धृत्यदृष्टिं चाधायमण्डले ॥ ४१ ॥
ममसापूजयेत्तत्रभानुमावरणान्वितम् ।
अर्घ्यं दद्याद्रविं ध्यायन्ररक्तचन्दनमण्डले ॥ ४२ ॥
ततःपुष्पाञ्जलिं दद्यान्मण्डलस्थाय भानवे ।
अष्टोत्तरशतं मूलं जपेदासनसंस्थितः ॥ ४३ ॥
प्रत्यकं प्रातरेवं यो दद्यादर्घ्यं विवस्वते ।
लक्ष्मीयशःसुतान्विद्यामैश्वर्य्यंसोऽधिगच्छति ॥ ४४ ॥

अर्घ्यदान : इस प्रकार मन्त्र सिद्ध हो जाने पर उस दिन भगवान् भास्कर को अर्घ्य देना चाहिए, यथा :

प्राणायाम, षडङ्गन्यास एवं पूर्वोक्त अन्य न्यासों को करने के बाद अपने मण्डल में भगवान् सूर्य का मानसोपचारों से पूजन करना चाहिए ।

सुन्दर ताँबे से बने हुए, १ प्रस्थ (१६ पल या ६४ तोला) जल की क्षमता-वाले, रक्त चन्दन से चर्चित सुन्दर पात्र को मण्डल में रखना चाहिए । (फिर) विलोमक्रम से मातृका एवं मूल मन्त्र को पढ़ते हुए रवि मण्डल से निकलती हुई

मूलं विलोममेव ॥३४॥ सूर्यमण्डलाद्विर्गच्छद्यदमृतंतद्धियाचिन्तितैः ॥३५॥ वस्तून्याह । तिलेति । रक्तं करवीरम् ॥ ३६ ॥ वेणुयवान्वंशोत्पन्नयवान् ॥ ३७-३८ ॥ सुधाबीजंवमिति ।

अमृतधारा की भावना से उसमें जल भर कर मूल मन्त्र बोलते हुए ये १३ वस्तुएँ डालनी चाहिए—१. तिल, २. तण्डुल (चावल), ३. कुशाग्र, ४. शालि (धान), ५. श्यामाक, ६. राई, ७. लालकनेर, ८. लाल चन्दन, ९. श्वेत चन्दन, १०. गोरोचन, ११. कुंकुम, १२. जाई एवं १३. वेणुग्रन्थ ।

उस जल में पीठ पूजा कर अपने मण्डल से सूर्य का आवाहन कर समस्त उपचारों से आवरण देवताओं के साथ सूर्य का पूजन करना चाहिए ।

(फिर) ३ बार प्राणायाम कर षडङ्गन्यास करना चाहिए । चन्दन से सुधाबीज (वं) का दाहिने हाथ पर न्यास करना चाहिए । (और फिर) बाँये हाथ में गृहीत अर्घ्य पात्र को दाहिने हाथ से ढँकना चाहिए । १०८ बार मूल मन्त्र से जल को अभिमन्त्रित करना चाहिए । और फिर मूल मन्त्र से पञ्चोपचार से उसका पूजन करना चाहिए ।

(तत्पश्चात्) दोनों हाथों में पात्र लेकर घुटनों को जमीन में रखकर शिर तक पात्र को ऊँचा उठाकर रविमण्डल में दृष्टि लगाकर वहाँ अपने आवरण सहित सूर्य का (ध्यान कर) मानसोपचारों से पूजन करना चाहिए । (और फिर) रक्त चन्दन से चर्चित मण्डल में रवि का ध्यान कर अर्घ्य देना चाहिए । तत्पश्चात् मंडल में स्थित सूर्य को पुष्पाञ्जलि देनी चाहिए तथा आसन पर बैठकर १०८ बार मूल मन्त्र का जप करना चाहिए ।

प्रतिदिन प्रातःकाल उदीयमान सूर्य को जो व्यक्ति इस रीति से अर्घ्य देता है वह लक्ष्मी, यश, पुत्र, विद्या एवं ऐश्वर्य को प्राप्त करता है ।

गायत्र्युपासनासक्तःसन्ध्याबन्दनतत्परः ।
दशवर्णं जपन्विप्रो नैव दुःखमवाप्नुयात् ॥ ४५ ॥

गायत्री की उपासना में आसक्त, सन्ध्या वन्दन में तत्पर एवं इस दशाक्षर मन्त्र का जप करने वाला ब्राह्मण कभी भी दुःखी नहीं होता है ।

अथ वक्ष्मिधरासूनुमन्त्रं सुतधनप्रदम् ।
तारोवियद्दीर्घबिन्दुयुक्तं चन्द्रांकितं पुनः ॥ ४६ ॥
भृगुर्विसर्गीचण्डीशौक्रमाद्रात्रीशसर्गिणौ ।
षड्वर्णो मनुराख्यातोभीष्टदायी ऋणापहः ॥ ४७ ॥

तेनदक्षकरेण ॥ ३९-४५ ॥ मङ्गलमन्त्रमाह । तारइति । तारॐ । वियत् हः दीर्घबिन्दुयुतंहाम् । पुनस्तदेववियत् चद्रांकितंहं ॥ ४६ ॥ विसर्गीभृगुःसः । रात्रीशसर्गिणौबिन्दुयुतौविसर्गयुतौ चण्डीशौखौखंखः ॥ ४७ ॥

मङ्गल के मन्त्र का उद्धार : अब पुत्र एवं धनदायक मङ्गल के मन्त्र को बतलाता हूँ :

तार (ॐ) दीर्घ एवं बिन्दु सहित वियद् (हां) फिर चन्द्राङ्कित वियद् (हं) विसर्गी भूमु (सः) और क्रमशः रात्रीश एवं विसर्ग सहित चण्डीश (खं खः) यह ६ अक्षर वाला अभीष्ट फलदायी तथा ऋणनाशक मंगल का मन्त्र है ।

टिप्पणी : *मङ्गल का मन्त्र* : ॐ हां हंसः खं खः ।

मुनिर्विरूपागायत्री छन्दो देवो धरात्मजः ।
षड्भिर्वर्णैःषडङ्गानि मनोःकुर्वीत साधकः ॥ ४८ ॥

विनियोग एवं न्यास : (इस मन्त्र के) विरूपा ऋषि हैं, गायत्री छन्द है तथा धरात्मज देवता हैं ।

साधक को मन्त्र के ६ वर्णों से षडङ्गन्यास करना चाहिए ।

टिप्पणी : *विनियोग* : अस्य श्री मङ्गल मन्त्रस्य विरूपा ऋषिः, गायत्री छन्दः धरात्मजो देवता ममाभीष्टसिद्धये जपे विनियोगः ।

षडङ्गन्यास : ॐ हृदयाय नमः । हां शिरसे स्वाहा । हं शिखायै वषट् । सः कवचाय हुम् । खं नेत्रत्रयाय वौषट् । खः अस्त्राय फट ।

जपाभं शिवस्वेदजंहस्तपद्मगदाशूलशक्तीर्वरं धारयन्तम् ।
अवन्तीसमुत्थं सुमेषासनस्थं धरानन्दनं रक्तवस्त्रं समीडे ॥ ४९ ॥

ध्यान : जपाकुसुम जैसी आभावाले, शिव के स्वेद से उत्पन्न, चारों हाथों में क्रमशः पद्म, गदा, शूल एवं शक्ति धारण करने वाले, अवन्तिका देश में उत्पन्न, सुन्दर मेष पर विराजमान एवं रक्तवस्त्र धारण करने वाले भूमिपुत्र की वन्दना करता हूँ ।

रसलक्षं जपोहोमःसमिद्भिःखदिरस्यच ।
शैवे पीठेयजेद्भौमं प्रागङ्गानि प्रपूजयेत् ॥ ५० ॥
एकविंशतिकोष्ठेषु मङ्गलादीन्प्रपूजयेत् ।
तद्बहिःककुभांनाथान्कुलिशादींस्ततोर्चयेत् ॥ ५१ ॥
इत्थं जपादिभिःसिद्धं स्वेष्टसिद्धौ प्रयोजयेत् ।

जपसंख्या, हवन एवं पूजन : (इस मन्त्र का) ६ लाख जप तथा खैर की समिधाओं से दशांश होम करना चाहिए ।

शैव पीठ पर भौम का पूजन करना चाहिए । पहिले अंग पूजा करनी चाहिए फिर २१ कोष्ठों में मङ्गल आदि का पूजन करना चाहिए और फिर उसके बाहर इन्द्र

धरात्मजो भौमः ॥ ४८ ॥ देवताध्यानमाह । जपाभमिति । शूलवरौदक्षयोः । अन्ययोरितरे ॥ ४९ ॥ रसलक्षंषड्लक्षम् । शैवेपीठेमृत्युञ्जयोक्ते ॥ ५० ॥ ककुभांनाथानिन्द्रादीन् ।

आदि दिक्पालों का तथा वज्र आदि आयुधों का पूजन करना चाहिए। इस रीति से सिद्ध मन्त्र अपनी अभीष्टसिद्धि में प्रयोग करना चाहिए।

टिप्पणी : पीठ पूजा विधि : एकविंशति कोष्ठात्मक त्रिकोण तथा भूपुर सहित यन्त्र (देखिये चित्र ३८) पर मङ्गल का पूजन करना चाहिए।

श्लोक सं० ४९ में वर्णित मङ्गल के स्वरूप का ध्यान कर मानसोपचार से पूजन कर, विधिवत अर्घ्यस्थापन कर 'ॐ आधार शक्तये नमः' से 'ह्रीं ज्ञानात्मने नमः' तक सामान्य पीठपूजा के मन्त्रों से पीठ देवताओं का पूजन कर पूर्व आदि आठों दिशाओं में तथा मध्य में निम्नलिखित यन्त्रों से पीठ शक्तियों का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ वामायै नमः-पूर्वे। ॐ ज्येष्ठायै नमः-आग्नेये। ॐ रौद्रयै नमः-दक्षिणे। ॐ काल्यै नमः-नैऋत्ये। ॐकलविकरण्यै नमः-पश्चिमे। ॐ बलविकरण्यै नमः-वायव्ये। ॐ बलप्रमथन्यै नमः-उत्तरे। ॐ सर्वभूतदमन्यै नमः-ईशान्ये। ॐ मनोन्मन्यै नमः-मध्ये।

फिर 'ॐ नमो भगवते सकलगुणात्मशक्तियुक्तानन्ताय योग पीठात्मने नमः'—इस मन्त्र से आसन देकर मूल मन्त्र से मूर्ति कल्पित कर ध्यान आवहन आदि उपचारों से पञ्चपुष्पाञ्जलि समर्पण पर्यन्त विधिवत मङ्गल का पूजन करना चाहिए और इसके बाद आवरण पूजा करनी चाहिए।

आवरण पूजा : सर्वप्रथम षडङ्गन्यासोक्त मन्त्रों से आग्नेय आदि चारों कोणों में, मध्य में तथा दिशाओं में अङ्गपूजा करनी चाहिए, यथा :

ॐ हृदयाय नमः-आग्नेये। हां शिरसे स्वाहा-नैऋत्ये। हूं शिखायै वषट्-वायव्ये। सः कवचाय हुम्-ईशान्ये। खं नेत्रत्रयाय वौषट्-मध्ये। खः अस्त्राय फट्-दिक्षु।

इसके बाद त्रिकोण के अन्तर्गत बने २१ कोष्ठकों में नाममन्त्रों से मंगल का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ मङ्गलाय नमः। ॐ भूमिपुत्राय नमः। ॐ ऋणहर्त्रे नमः। ॐ धनप्रदाय नमः। ॐ स्थिरासनाय नमः। ॐ महाकायाय नमः। ॐ सर्वकर्मविरोधकाय नमः। ॐ लोहिताय नमः। ॐ लोहिताक्षाय नमः। ॐ सामगानं कृपाकराय नमः। ॐ धरात्मजाय नमः। ॐ कुजाय नमः। ॐ भौमाय नमः। ॐ भूतिदाय नमः। ॐ भूमिनन्दनाय नमः। ॐ अंगारकाय नमः। ॐ यमाय नमः। ॐ सर्वरोगापहारकाय नमः। ॐ वृष्टिकर्त्रे नमः। ॐ वृष्टिहर्त्रे नमः। ॐ सर्वकामफलप्रदाय नमः।

और फिर त्रिकोण के बाहर श्लोक सं० २८-३१ की टिप्पणी में बतलायी गयी रीति से इन्द्र आदि दिक्पाल एवं वज्र आदि आयुधों का पूजन करना चाहिए।

इस प्रकार आवरण पूजा करने के बाद धूप, दीप आदि उपचारों से विधिवत मंगल का पूजन करना चाहिए।

नारीपुत्रमभीप्संती भौमाहे तद्व्रतं चरेत् ॥ ५२ ॥
मार्गशीर्षेथ वैशाखे तस्यारम्भःप्रशस्यते ।
अरुणोदयवेलायामुत्थायशुचिविग्रहा ॥ ५३ ॥
दन्तान्धावेदपामार्गसमिधामौनसेविनी ।
नद्यादिसलिले स्नात्वा धारयेद्रक्तवाससी ॥ ५४ ॥
नैवेद्यकुसुमालेपान्रक्तान्सम्पाद्य संयता ।
विधिज्ञं विप्रमाहूय भौममर्चेत्तदाज्ञया ॥ ५५ ॥

पुत्रदायक भौमव्रत : पुत्र चाहने वाली स्त्री को मंगलवार के दिन उसका व्रत करना चाहिए। मार्गशीर्ष या वैशाख में इसका प्रारम्भ करना प्रशस्त माना गया है।

अरुणोदय के समय उठकर हाथ मुँह धोकर मौन होकर अपामार्ग (ओंघा) की दाँतुन से दन्तधावन करना चाहिए। (फिर) नदी आदि के जल में स्नान कर लालरंग के वस्त्र पहिनने चाहिए। (और फिर) लालरंग के नैवेद्य, पुष्प एवं आलेप आदि तैयार कर, विधिवेत्ता ब्राह्मण को बुलाकर उसकी आज्ञा से मंगल का पूजन करना चाहिए।

रक्तगोगोमयालिप्तदेशे पीठनिषेविणी ।
मङ्गलादीनि नामानि स्वप्रतीकेषु विन्यसेत् ॥ ५६ ॥
मङ्गलं विन्यसेदंघ्र्योर्भूमिपुत्रं तु जानुनोः ।
ऊर्वोश्चऋणहर्तारं कटिदेशे धनप्रदम् ॥ ५७ ॥
स्थिरासनं गुह्यदेशे महाकायमथोरसि ।
वामबाहौ ततो न्यस्येत्सर्वकर्मावरोधकम् ॥ ५८ ॥
लोहितं दक्षिणे बाहौ लोहिताक्षं गले न्यसेत् ।
वदने विन्यसेत्साध्वी सामगानां कृपाकरम् ॥ ५९ ॥
धरात्मजं नसोरक्षणोःकुजं भौमं ललाटतः ।
भूतिदं तुभ्रुवोर्मध्येमस्तके भूमिनन्दनम् ॥ ६० ॥
अङ्गारकं शिखादेशे सर्वाङ्गे विन्यसेद्यमम् ।
ततो बाहुद्वये न्यस्येत्सर्वरोगापहारकम् ॥ ६१ ॥
मूर्द्धादिपादपर्यन्तं वृष्टिकर्तारमङ्गके ।
विन्यसेद्वृष्टिहर्तारं मूर्द्धान्तं चरणादितः ॥ ६२ ॥

कुलिशादीन्वज्रादीन् ॥ ५१-५२ ॥ भौमव्रतमाह । मार्गेति । शुचिविग्रहाशरीरचित्तानिवर्तनानन्तरंप्रक्षालितपाणिपादमुखा ॥५३-५४॥ स्वप्रतीकेष्वुनिजांगेषु ॥ ५५-५६ ॥ न्यासमेवाह ।

दिक्षु प्रविन्यसेदंत्यं सर्वकामफलप्रदम् ।
आरं वक्रं भूमिजं च नाभौ वक्षसि मूर्द्धनि ॥ ६३ ॥

मंगलादि का न्यास : लाल गोबर आदि से लिपे पुते स्थान पर लालरंग के आसन पर बैठकर अपने शरीर पर मंगल आदि नामों का न्यास करना चाहिए—पैरों में मंगल का न्यास करना चाहिए, जानुओं में भूमिपुत्र का, ऊरुओं में ऋणहर्ता का, कमर में धनप्रद का, गुह्यांग में स्थिरासन का, उदर में महाकाय का न्यास करना चाहिए। फिर बाँये हाथ में सर्वकर्मविरोधक का, दाहिने हाथ में लोहित का और कण्ठ में लोहिताक्ष का न्यास करना चाहिए। मुख में सामगान करने वाले पर कृपाकारक का, नासिका में धरात्मज का, नेत्रों में कुज का, ललाट में भौम का, भ्रूमध्य में भूतिदायक का, मस्तक में भूमिनन्दन का, शिखादेश में अंगारक का और सर्वाङ्ग में यम का न्यास करना चाहिए। फिर दोनों हाथों में सर्वरोगापहारक का, शिर से पैरों तक वृष्टिकर्ता का, पैरों से शिर तक के अंग वृष्टिहर्ता का तथा दिशाओं में २१वें सर्वकामफलप्रद का न्यास करना चाहिए। (फिर) आर, वक्र एवं भूमिज का क्रमशः नाभि, वक्षस्थल एवं शिर पर न्यास करना चाहिए।

टिप्पणी : न्यास विधि : ॐ मंगलाय नमः-पादयोः। ॐ भूमिपुत्राय नमः-जानुनोः। ॐ ऋणहर्त्रे नमः-ऊर्वो। ॐ धनप्रदाय नमः-कटिदेशे। ॐ स्थिरासनाय नमः-गुह्ये। ॐ महाकायाय नमः-उदरे। ॐ सर्वकर्मविरोधकाय नमः-वामबाहौ। ॐ लोहिताय नमः-दक्षिणबाहौ। ॐ लोहिताक्षाय नमः-कण्ठे। ॐ सामगानां कृपाकराय नमः-मुखे। ॐ धरात्मजाय नमः-नसोः। ॐ कुजाय नमः-नेत्रयोः। ॐ भौमाय नमः-ललाटे। ॐ भूतिदाय नमः-भ्रूमध्ये। ॐ भूमिनन्दनाय नमः-मस्तके। ॐ अंगारकाय नमः-शिखादेशे। ॐ यमाय नमः-सर्वाङ्गे। ॐ सर्वरोगापहारकाय नमः-हस्तद्वये। ॐ वृष्टिकर्त्रे नमः-मूर्धादि पादपर्यंतं। ॐ वृष्टिहर्त्रे नमः-पादादिमूर्धान्तं। ॐ सर्वकामफलप्रदाय नमः-दिक्षु।

ततश्च—ॐ आराय नमः-नाभौ। ॐ वक्राय नमः-वक्षस्थले। ॐ भूमिजाय नमः-मूर्ध्नि।

एवं न्यस्तशरीरोसौ ध्यायेद्धरणिनन्दनम् ।
अर्घं संस्थाप्य विधिवत्पूजयेदुपचारकैः ॥ ६४ ॥
एकविंशतिकोष्ठाढ्येत्रिकोणे ताम्रपात्रगे ।
आवाह्य धरणीपुत्रं शाणैःपुष्पैश्चचन्दनैः ॥ ६५ ॥
अङ्गाति पूजयेत्प्राग्वदेकविंशतिकोष्ठके ।
मङ्गलादींस्त्रिकोणेषु वक्रमारं च भूमिजम् ॥ ६६ ॥

ब्राह्म्याद्यामातृकाबाह्ये शक्रादीनायुधान्यपि ।
धूपदीपौ विधायाथ गोधूमान्नं विवेदयेत् ॥ ६७ ॥

पूजा विधि : इस प्रकार अपने शरीर पर न्यास कर वह साध्वी मंगल का ध्यान करे तथा अर्घ्य स्थापित कर विविध उपचारों से विधिवत पूजन करे। २१ कोष्ठक वाले त्रिकोणात्मक ताम्र पत्र पर मंगल का आवाहन कर लाल पुष्प एवं रक्त चन्दन से उसका पूजन करना चाहिए। फिर पूर्वोक्त रीति से अंगपूजा, २१ कोष्ठकों में मंगल आदि पूजन, त्रिकोण के तीनों कोणों में वक्र, आर एवं भूमिज का पूजन, बाहर ब्राह्मी आदि मातृकाओं का पूजन तथा इन्द्र आदि दिक्पालों एवं वज्र आदि आयुधों का पूजन करना चाहिए। फिर धूप एवं दीप देकर गेहूँ से बनायी गयी वस्तुएँ नैवेद्य के रूप में समर्पित करनी चाहिए।

जलपूर्णे ताम्रपात्रे गन्धपुष्पाक्षतान्विते ।
फलं निधाय मन्त्राभ्यां भौमायार्घ्यं निवेदयेत् ॥ ६८ ॥
भूमिपुत्रमहातेजःस्वेदोद्भवपिनाकिनः ।
सुतार्थिनीप्रपन्नात्वां गृहाणार्घ्यं नमोस्तुते ॥ ६९ ॥
रक्तप्रवालसंकाशजपाकुसुमसन्निभ ।
महीसुतमहाबाहो गृहाणार्घ्यं नमोस्तुते ॥ ७० ॥

अर्घ्य दान : ताम्र पात्र में जल भर कर गन्ध, पुष्प एवं अक्षत डालकर उसमें फल रखकर निम्नलिखित 'ॐ भूमिपुत्र महातेज०' तथा 'रक्तप्रवाल संकाश०' इन दोनों मन्त्रों से मंगल को अर्घ्य देना चाहिए।

एकविंशतिकृत्वोथ प्रणमेत्पूर्वनामभिः ।
प्रदक्षिणा विधातव्यास्तावत्यो वसुधात्मजे ॥ ७१ ॥
खदिराङ्गारकेनाथ कुर्य्याद्रेखात्रिकं समम् ।
वामपादेन मन्त्राभ्यामेताभ्यां तत्प्रमार्जयेत् ॥ ७२ ॥
दुःखदौर्भाग्यनाशाय पुत्रसन्तानहेतवे ।
कृतरेखात्रयं वामपादेनैतत्प्रमार्ज्म्यहम् ॥ ७३ ॥
ऋणदुःखविनाशाय मनोभीष्टार्थसिद्धये ।
मार्ज्याम्यसितारेखास्तिस्रोजन्मत्रयोद्भवाः ॥ ७४ ॥

मंगल के पूर्वोक्त २१ नामों से प्रणाम करना चाहिए तथा २१ बार ही मंगल की प्रदक्षिणा करनी चाहिए।

मङ्गलमिति। ॐमङ्गलायनमः पादयोः इत्यादि० ॥ ५७-६८ ॥ मन्त्रमाह। भूमिपुत्रेति ॥ ६९-७० ॥ पूर्वनामभिर्मङ्गलाद्यैः ॥ ७१-७२ ॥

फिर खैर के अंगार से तीन समान रेखाएँ खींचनी चाहिए तथा 'ॐ दुखदौर्भाग्य-नाशाय०' तथा 'ॐ ऋण दुःख विनाशाय०' इन दोनों मन्त्रों से बाँये पैर से उन्हें मिटाना चाहिए।

ततःपुष्पाञ्जलिकरा स्तुवीत धरणीसुतम्।
ध्यायन्ती चरणाम्भोजं पूजासाङ्गत्वसिद्धये ॥ ७५ ॥
धरणीगर्भसम्भूतं विद्युत्तेजःसमप्रभम्।
कुमारं शक्तिहस्तं च मङ्गलं प्रणमाम्यहम् ॥ ७६ ॥
ऋणहर्त्रे नमस्तुभ्यं दुःखदारिद्र्यनाशिने।
नभसि द्योतमानाय सर्वकल्याणकारिणे ॥ ७७ ॥
देवदानवगन्धर्वयक्षराक्षसपन्नगाः।
सुखं यांति यतस्तस्मै नमो धरणिसूनवे ॥ ७८ ॥
योवक्रगतिमापन्नो नृणां दुःखं प्रयच्छति।
पूजितःसुखसौभाग्यं तस्मै क्षमासूनवे नमः ॥ ७९ ॥
प्रसादं कुरु मे नाथमङ्गलप्रदमङ्गल।
मेषवाहनरुद्रात्मन्पुत्रान्देहि धनं यशः ॥ ८० ॥

प्रार्थना : और हाथों में पुष्पाञ्जलि लेकर पूजा की साङ्गता सिद्धि हेतु वह साध्वी मङ्गल के चरण कमलों का ध्यान करती हुई उसकी प्रार्थना करे—

भूमि के गर्भ से उत्पन्न, बिजली जैसी आभा वाले, कुमारावस्था वाले, हाथ में शक्ति धारण करने वाले मंगल को मैं प्रणाम करती हूँ।

ऋण को नष्ट करने वाले प्रभो ! आपको नमस्कार है। दुःख एवं दरिद्रतानाशक, आकाश में द्योतमान तथा सबका कल्याण करनेवाले आपको नमस्कार है।

जिसकी कृपा से देव, दानव, गन्धर्व, यक्ष, राक्षस एवं पन्नग सुखी हो जाते हैं उस भूमिपुत्र को नमस्कार है।

जो वक्रगति होकर मनुष्यों को दुःख देता है, यथा पूजा करने पर सुख एवं सौभाग्य देता है, उस धरापुत्र को नमस्कार है।

हे मङ्गल दायक एवं मङ्गलों के स्वामी आप मुझ पर कृपा करें। हे मेषवाहन हे रुद्रात्मन् पुत्रों को दीजिए तथा धन एवं यश दीजिए।

एवं संस्तूय सम्पूज्य गृह्णीयाद्ब्राह्मणाशिषः।
गुरवे दक्षिणां दत्त्वा भुञ्जीतान्नं निवेदितम् ॥ ८१ ॥

रेखामार्जनमन्त्रमाह। दुःखेति ॥ ७३-७५ ॥ स्तुतिमाह। धरणीति ॥ ७६-८१ ॥

प्रतिभौमदिने कुर्य्यादेवं सम्वत्सरावधि ।
तिलैस्संजुहुयाद्धोमं शतार्द्धं भोजयेद्द्विजान् ॥ ८२ ॥
माहेयमूर्तिंसौवर्णीमाचार्य्यायनिवेदयेत् ।
मण्डलस्थेघटेऽभ्यर्च्यसुतसौभाग्यसिद्धये ॥ ८३ ॥
एवं व्रतपरा नारी प्राप्नुयात्सुभगान्सुतान् ।
धन्यास्यै ऋणनाशाय व्रतं कुर्य्यात्पुमानपि ॥ ८४ ॥

इस प्रकार मङ्गल की स्तुति एवं पूजा कर ब्राह्मण का आशीर्वाद ग्रहण करना चाहिए । गुरू को दक्षिणा देकर भोग लगायी वस्तुएँ उन्हें खिलानी चाहिए ।

इस प्रकार एक वर्ष पर्यन्त प्रत्येक मङ्गलवार को व्रत एवं पूजन करना चाहिए । (फिर एक वर्ष के बाद) तिलों से होम करना चाहिए तथा ५० ब्राह्मणों को भोजन करना चाहिए । मण्डल पर स्थित घट पर सुत एवं सौभाग्य प्राप्ति के लिए सुवर्णमयी मंगल की मूर्ति का पूजन कर वह आचार्य को देनी चाहिए ।

इस रीति से व्रत में परायण स्त्री सौभाग्यशाली पुत्रों को प्राप्त करती है । धन प्राप्ति एवं ऋण नाश के लिए पुरुषों को भी यह व्रत करना चाहिए ।

अग्निर्मूर्द्धेत्यपिमनुं वैदिकं ब्राह्मणो जपेत् ।
तथाङ्गारकगायत्रीं सर्वाभीष्टस्य सिद्धये ॥ ८५ ॥
अङ्गारकायशब्दान्ते विद्महेपदमुच्चरेत् ।
शक्तिहस्ताय च पदं धीमहीतिततो वदेत् ॥ ८६ ॥
तन्नौभौमःप्रचोवर्णान्दियादितिच कीर्तयेत् ।
एषाङ्गारकगायत्री जप्ताभीष्टप्रदायिनी ॥ ८७ ॥

वैदिक मन्त्र एवं अंगारक गायत्री : 'अग्निर्मूर्द्धादिवः'-इस वैदिक मन्त्र का भी ब्राह्मण को जप करना चाहिए ।

तथा समस्त अभीष्टों की सिद्धि हेतु अंगारक गायत्री का जप करना चाहिए । 'अङ्गारकाय' शब्द के बाद 'विद्महे' शब्द बोलना चाहिए । फिर 'शक्तिहस्ताय' शब्द के बाद 'धीमहि' बोलना चाहिए और फिर 'तन्नो भौमः प्रचोदयात्' यह बोलना चाहिए ।

यह अंगारक गायत्री जप करने वालों को अभीष्टफल देती है ।

टिप्पणी : *वैदिकमन्त्र* : ॐ अग्निमूर्द्धादिवः ककुत्पतिः पृथिव्यामयम् । अपाँ ँ रेताँ ँ सिजिन्वति ॥

उद्यापनमाह । तिलैरिति ॥ ८२ ॥ मण्डलस्थइति । सर्वतोभद्रमण्डलेकुम्भंसंस्थाप्य तत्रभौममूर्तिंसौवर्णींमङ्गलप्रतिमांसम्पूज्याचार्यायदद्यात् ॥ ८३-८७ ॥

अंगारक गायत्री : ॐ अङ्गारकाय विद्महे शक्तिहस्ताय धीमहि। तन्नो भौमः प्रचोदयात् ॥

माहेयोपासनं प्रोक्तं गुरुमन्त्र उदीर्य्यते।
खङ्गीशौभारभूतिस्थौतत्राद्यःक्रूरसंयुतः ॥ ८८ ॥
नभोभृगुर्लोहितस्थोहरिर्वायुर्भगान्वितः।
हृदयांतोष्टवर्णोयं मनुर्ब्रह्ममुनिःस्मृतः ॥ ८९ ॥

गुरु के मन्त्र का उद्धार : (इस प्रकार) मंगल की उपासना बतलायी गयी। अब गुरु का मन्त्र बतलाते हैं :

भारभूतिस्थ दो खङ्गीशों में से प्रथम क्रूर (बिन्दु) सहित है (बृं बृ) फिर नभ (ह) लोहितस्थ भृगु (स्प) हरि (त) भगान्वित वायु (ये) और अन्त में हृदय (नमः) लगाने से यह ८ अक्षर का मन्त्र बनता है।

टिप्पणी : बृहस्पति का मन्त्र : बृं बृहस्पतये नमः।

छन्दोनुष्टुप्सुराचार्य्यो देवताबीजमादिमम्।
बराभ्यां दीर्घयुक्ताभ्यां षडङ्गानि प्रकल्पयेत् ॥ ९० ॥

विनियोग एवं न्यास : इस मन्त्र के ब्रह्मा ऋषि है, अनुष्टुप् छन्द है, सुराचार्य देवता हैं तथा आदि (ब्रं) बीज है।

षड्दीर्घ सहित बकार रकार से षडङ्गन्यास करना चाहिए।

टिप्पणी : विनियोग : अस्य श्री बृहस्पति मन्त्रस्य ब्रह्मा ऋषिः, अनुष्टुप् छन्दः, सुराचार्यो देवता, ब्रं बीजं, ममाभीष्टसिद्धये जपे विनियोगः।

न्यास : ब्रां हृदयाय नमः। ब्रीं शिरसे स्वाहा। ब्रूं शिखायै वषट्। ब्रैं कवचाय हुम्। ब्रौं नेत्रत्रयाय वौषट्। ब्रः अस्त्राय फट्।

रत्नाष्टापदवस्त्रराशिममलं दक्षात्किरन्तं-
करादासीनं विपणौ करंनिदधतंरत्नादिराशौ परम्।
पीतालेपनपुष्पवस्त्रमखिलालंकारसम्भूषितं
विद्यासागरपारगं सुरगुरुं वन्दे सुवर्णप्रभम् ॥ ९१ ॥

ध्यान : दाहिने हाथ से रत्न, सुवर्ण एवं वस्त्रों को देते हुए तथा बाँये हाथ को

गुरुमन्त्रमाह। खङ्गीशाविति। खङ्गीशौद्वौबकारौ भारभूतिस्थौऋवर्णस्थौ। तयोराद्यःक्रूरेणबिन्दुनायुतः ॥ ८८ ॥ नभोहः। लोहितस्थोभृगुः पकारस्थः सकारः स्प। हरिस्तकारः भगान्वितोवायुः एयुतोयःते। हृदयं नमः। यथा—बृं बृहस्पतयेनमःइति ॥ ८९ ॥

आदिमबृंमतिबीजम्। षडङ्गमाह। बराभ्यामिति। ब्रांहृत्। ब्रीं शिरइत्यादि० ॥९०॥

ध्यानमाह। रत्नेति। दक्षहस्ताद्रत्नहेमवस्त्रराशीन्निक्षिपंतम्। वामकरंरत्नादिसम्हे आरोपयंतम् ॥ ९१ ॥

रत्न आदि के समूह पर रखते हुए, बाजार में आसीन, पीले वस्त्र, आलेपन, पुष्प एवं समस्त अलंकारों से अलंकृत, विद्या के सागर, पारंगत विद्वान् एवं सुवर्ण जैसी आभा वाले देवगुरु की वन्दना करता हूँ।

जपित्वाशीतिसाहस्रं हुत्वान्नेन घृतेन वा।
धर्माधर्मादिपीठे तं पूजयेदङ्गदिग्भवैः ॥ ९२ ॥

जपसंख्या, हवन एवं पूजन : (इस मन्त्र का) ८० हजार जप कर तथा अन्न या घी से दशांश होम कर धर्म एवं अधर्म आदि शक्तियों वाले पीठ पर अङ्ग एवं दिग्पालों के साथ उनका पूजन करना चाहिए।

टिप्पणी : पूजाविधि : श्लोक ९१ में वर्णित गुरु के स्वरूप का ध्यान कर मानसोपचार से पूजन कर अर्घ्य स्थापित कर सामान्य पूजा पद्धति के अनुसार 'ॐ आधार शक्तये नमः' इत्यादि मन्त्रों से पीठ देवताओं का पूजन कर निम्नलिखित मन्त्रों से धर्म आदि पीठ शक्तियों का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ धर्माय नमः। ॐ ज्ञानाय नमः। ॐ वैराग्याय नमः। ॐ ऐश्वर्याय नमः। ॐ अधर्माय नमः। ॐ अज्ञानाय नमः। ॐ अवैराग्याय नमः। ॐ अनैश्वर्याय नमः।

फिर पीठ मन्त्र से आसन देकर इस पीठ पर ध्यान आवाहन आदि उपचारों से पञ्च पुष्पाञ्जलि समर्पण पर्यन्त विधिवत बृहस्पति का पूजन करना चाहिए। और फिर आवरण पूजा करनी चाहिए, यथा :

आग्नेय आदि ४ कोणों में, मध्य में तथा दिशाओं में षडङ्गन्यासोक्त मन्त्रों से अङ्ग पूजा करनी चाहिए, यथा :

ब्रां हृदयाय नमः। ब्रीं शिरसे स्वाहा। ब्रूं शिखायै वषट्। ब्रैं कवचाय हुम्। ब्रौं नेत्रत्रयाय वौषट्। ब्रः अस्त्राय फट्।

इसके बाद श्लो० २८-३१ की टिप्पणी में बतायी रीति से दिग्पालों का पूजन कर धूप, दीप आदि उपचारों से बृहस्पति का विधिवत् पूजन करना चाहिए।

सिद्धे मनौ प्रकुर्वीत प्रयोगानिष्टसिद्धये।
हरिद्राकुंकुमैर्हुत्वाघृतार्क्तैर्दिवसत्रयम् ॥ ९३ ॥
सविंशतिशतं मन्त्री वासांसि लभते मणीन्।
शत्रुरोगादिपीडासु स्वजने कलहोद्भवे ॥ ९४ ॥
जुहुयात्पिप्पलोत्थाभिःसमिद्भिस्तन्निवृत्तये।

काम्य प्रयोग : मन्त्र सिद्ध हो जाने पर अभीष्ट सिद्धि हेतु काम्य प्रयोग करने चाहिए।

धर्माधर्मादिपीठेइति। पीठशक्तयोभवंतीत्यर्थः ॥ ९२-९४ ॥

घी मिलाकर हल्दी एवं कुंकुम से लगातार ३ दिन तक प्रतिदिन १२० आहुतियाँ देने से साधक मणि एवं वस्त्र प्राप्त करता है।

शत्रु एवं रोगों आदि की पीड़ा में तथा स्वजनों में कलह होने पर उसकी निवृत्ति के लिए पीपल की समिधाओं से हवन करना चाहिए।

तारोवस्त्रं भगीसूर्य्योदेहिशुक्रायठद्वयम् ॥ ९५ ॥
एकादशाक्षरो मन्त्रो हेमवस्त्रप्रदायकः।

शुक्र मन्त्र का उद्धार : तार (ॐ) फिर 'वस्त्रं' भगी सुर्य (मे) 'देहि शुक्राय' एवं ठद्वय (स्वाहा) लगाने से यह ११ अक्षर का सुवर्ण एवं वस्त्र दायक मन्त्र बनता है।

टिप्पणी : शुक्र का मन्त्र : ॐ वस्त्रं मे देहि शुक्राय स्वाहा।

ब्रह्मामुनिर्विराट्छन्दो देवतादैत्यपूजितः ॥ ९६ ॥
बीजंतारोग्निभार्य्या तुशक्तिरस्य प्रकीर्तिता।
एकद्विचन्द्रनेत्राग्निनेत्रवर्णैःषडङ्गकम्।
मन्त्रवर्णैस्तुकृत्वाथ ध्यायेद्विद्यानिधिं सितम् ॥ ९७ ॥

विनियोग एवं न्यास : (इस मन्त्र के) ब्रह्मा ऋषि हैं, विराट् छन्द है, दैत्य-पूज्य देवता है, प्रणव बीज है तथा अग्निभार्या (स्वाहा) शक्ति बतलायी गयी है।

मन्त्र के १, २, १, २, ३, एवं २ अक्षरों से षडङ्गन्यास कर विद्यानिधि शुक्र का ध्यान करना चाहिए।

टिप्पणी : विनियोग : अस्य श्री शुक्र मन्त्रस्य ब्रह्माऋषिः, विराट् छन्दः, दैत्य-पूज्यो देवता, ॐ बीजं, स्वाहा शक्तिः ममाभीष्टसिद्धये जपे विनियोगः।

षडङ्गन्यास : ॐ हृदयाय नमः। वस्त्रं शिरसे स्वाहा। मे शिखायै वषट्। देहि कवचाय हुम्। शुक्राय नेत्रत्रयाय वौषट्। स्वाहा अस्त्राय फट्।

श्वेताम्भोजनिषण्णमापणतटे श्वेताम्बरालेपनं
नित्यं भक्तजनाय सम्प्रददतं वासोमणीन्हाटकम्।
वामेनैवकरेण दक्षिणकरे व्याख्यानमुद्रांकितं
शुक्रंदैत्यवरार्चितं स्मितमुखं वन्दे सिताङ्गप्रभम् ॥ ९८ ॥

ध्यान : बाजार के किनारे पर श्वेत कमल पर आसीन, श्वेत वस्त्र एवं चन्दन से अलंकृत, बाँये हाथ से भक्तजनों को वस्त्र, मणि एवं सुवर्ण देते हुए तथा दाहिने

शुक्रमन्त्रमाह। तारइति। तारॐ। वस्त्रस्वरूपम्। भगीसूर्यः एयुतोमः मे। देहि-शुक्रायस्वरूपम्। ठद्वयं स्वाहा ॥ ९५-९७ ॥ ध्यानमाह। श्वेताम्भोजेति आपणतटे

हाथ में व्याख्यान मुद्रा वाले, दैत्यराज से पूजित प्रसन्नवदन, एवं श्वेत आभा वाले शुक्र की वन्दना करता हूँ ।

अयुतं प्रजपेन्मन्त्रं दशांशं जुहुयाद्घृतैः ।
यजेद्धर्मादिपीठेतमगेन्द्रादितदायुधैः ॥ ९९ ॥

जपसंख्या, हवन एवं पूजन : (इस मन्त्र का) १० हजार जप करना चाहिए । घी से दशांश होम करना चाहिए तथा धर्मादि शक्तियों वाले पीठ पर अंगपूजा, दिक्पाल एवं आयुधों के साथ शुक्र का पूजन करना चाहिए ।

टिप्पणी : पूजा विधि : श्लोक ९८ में वर्णित शुक्र के स्वरूप का ध्यान कर मानसोपचार से पूजन कर अर्घ्यपात्र स्थापित कर श्लो० ९२ की टिप्पणी में बतलायी गयी रीति से पीठदेवताओं एवं धर्म आदि शक्तियों का पूजन कर पीठ मंत्र से आसन देकर उस पीठ पर ध्यान आवाहन आदि उपचारों से पञ्चपुष्पाञ्जलि दान पर्यन्त विधिवत शुक्र का पूजन कर आवरण पूजा करनी चाहिए ।

आवरण पूजा में सर्वप्रथम षडङ्गन्यासोक्त मन्त्रों से अङ्गपूजा और फिर श्लोक सं० २८-३१ की टिप्पणी में बतलायी गयी रीति से इन्द्र आदि दिक्पाल तथा वज्र आदि आयुधों का पूजन कर धूप, दीप आदि उपचारों से विधिवत शुक्र का पूजन करना चाहिए ।

सुगन्धैःश्वेतकुसुमैर्जुहुयाच्छुक्रवासरे ।
एकविंशतिवारं यो लभतेसोंशुकं मणीन् ॥ १०० ॥

काम्य प्रयोग : सुगन्धित श्वेत पुष्पों से जो व्यक्ति २१ शुक्रवारों को हवन करता है, वह वस्त्र एवं मणि प्राप्त करता है ।

बालःपवनदीर्घेन्दुयुक्तो झिण्टीशयुग्जलम् ।
अत्रिर्व्यासायहृदयंमनुरष्टाक्षरो मतः ॥ १०१ ॥

व्यास मन्त्र का उद्धार : पवन, दीर्घ इन्दु सहित बाल (व्यां), झिंटीश सहित जल (वे) अत्रि (द) फिर 'व्यासाय' एव हृदय (नमः) लगाने से यह ८ अक्षर का मन्त्र बनता है ।

टिप्पणी : व्यास मन्त्र : व्यां वेदव्यासाय नमः ।

ब्रह्मानुष्टुम्मुनिश्छन्दोदेवःसत्यवतीसुतः ।
आद्यबीजं नमःशक्तिर्दीर्घाढ्यैर्नादिनाङ्गकम् ॥ १०२ ॥

श्वेतपद्मस्थितम् ॥ ९८-१०० ॥ व्यासमन्त्रमाह । बालइति । बालोवः पवनदीर्घेन्दुयुतः यकाराकारबिन्दुयुतः व्याम् । जलंझिंटीशयुग्वकारएकारयुतः वे । अत्रिर्दः । व्यासाय स्वरूपम् । हृदयंनमः । यथा—व्यांवेदव्यासायनमइति ॥ १०१-१०२ ॥

विनियोग एवं न्यास : (इस मन्त्र के) ब्रह्मा ऋषि हैं, अनुष्टुप् छन्द है, सत्यवती सुत देवता हैं, आद्य (व्यां) बीज है तथा नमः शक्ति है।

षडदीर्घ सहित आद्य बीज से षडङ्गन्यास करना चाहिए।

टिप्पणी : विनियोग : अस्य श्री व्यास मन्त्रस्य ब्रह्मा ऋषिः, अनुष्टुप् छन्दः, सत्यवतीसुतो देवता, व्यां बीजं नमः शक्तिः ममाभीष्टसिद्धये जपे विनियोगः।

षडङ्गन्यास : व्यां हृदयाय नमः। व्यीं शिरसे स्वाहा। व्यूं शिखायै वषट्। व्यैं कवचाय हुम्। व्यौं नेत्रत्रयाय वौषट्। व्यः अस्त्राय फट्।

व्याख्यामुद्रिकयालसत्करतलं सद्योगपीठस्थितं
वामेजानुतले दधानमपरं हस्तं सुविद्यानिधिम्।
विप्रव्रातवृतं प्रसन्नमनसं पाथोरुहाङ्गद्युतिं
पाराशर्य्यमतीवपुण्यचरितं व्यासं स्मरेत्सिद्धये ॥ १०३ ॥

ध्यान : व्याख्यान मुद्रा से सुशोभित करतल वाले, सुन्दर योगपीठ पर आसीन, बाँयी जानु पर दूसरा हाथ रखे हुए, विद्यानिधि, विप्र समुदाय से वेष्टित, प्रसन्न मन, नील कमल जैसी आभा वाले, अत्यन्त पुण्यचरित वाले भगवान् व्यास का सिद्धि हेतु स्मरण करना चाहिए।

जपेदष्टसहस्राणि पायसैर्होममाचरेत्।
पूर्वोक्तपीठे व्यासस्य पूर्वमङ्गानि पूजयेत् ॥ १०४ ॥
प्राच्यादिषु यजेत्पैलं वैशम्पायनजैमिनी।
सुमन्तुं कोणभागेषु श्रीशुकं रोमहर्षणम् ॥ १०५ ॥
उग्रश्रवसमन्यांश्चमुनीन्सेन्द्रादिकायुधान्।
एवं सिद्धमनुर्मन्त्री कवित्वं शोभनाःप्रजाः ॥ १०६ ॥
व्याख्यानशक्तिं कीर्तिं च लभते सम्पदांचयम्।

जपसंख्या, हवन एवं जन : (इस मन्त्र का) ८ हजार जप करना चाहिए। खीर से दशांश होम करना चाहिए।

पूर्वोक्त पीठ पर व्यास का पूजन करना चाहिए। पहिले अंगपूजा करनी चाहिए, (फिर) पूर्व आदि दिशाओं में पैल, वैशम्पायन, जैमिनी एवं सुमन्तु तथा कोणों में श्रीशुक, रोमहर्षण, उग्रश्रवस् एवं अन्य मुनीन्द्रों का इन्द्र आदि दिक्पाल एवं वज्र आदि आयुधों के साथ पूजन करना चाहिए।

विप्रव्रातवृतंब्राह्मणसमूहपरिवेष्टितम्। पाथोरुहाङ्गद्युतिं नीलेन्दीवरकान्तिम् ॥ १०३ ॥
पूर्वोक्तपीठेधर्मादिके ॥ १०४-१०७ ॥

इस प्रकार मन्त्र सिद्ध हो जाने पर साधक को सुन्दर कवित्व शक्ति, अच्छी सन्तान, व्याख्यान शक्ति, कीर्ति एवं सम्पत्ति मिलती है।

टिप्पणी : पूजाविधि : वृत्ताकार कर्णिका, अष्टदल एवं भूपुर सहित बने यन्त्र (देखिये चित्र ३९) पर भगवान् वेदव्यास का पूजन करना चाहिए।

सर्वप्रथम श्लोक संख्या १०३ में वर्णित भगवान् वेद व्यास के स्वरूप का ध्यान कर मानसोपचार से पूजन कर विधिवत अर्घ्य स्थापित कर श्लोक संख्या ९२ की टिप्पणी में बतलायी गयी रीति से पीठदेवताओं तथा धर्म आदि पीठशक्तियों का पूजन कर पीठ मन्त्र से आसन देकर मूल मन्त्र से मूर्ति की कल्पना कर ध्यान आवाहन आदि उपचारों से पञ्चपुष्पाञ्जलि प्रदान पर्यन्त व्यास जी का पूजन करने के बाद आवरण पूजा करनी चाहिये, यथा :

कर्णिका में आग्नेय आदि चारों कोणों में, मध्य में तथा दिशाओं में षडङ्गन्यासोक्त मन्त्रों से अङ्गपूजा करनी चाहिये, यथा :

व्यां हृदयाय नमः–आग्नेये। व्यीं शिरसे स्वाहा–नैर्ऋत्ये। व्यूं शिखायै वषट्–वायव्ये। व्यैं कवचाय हुम्–ईशान्ये। व्यौं नेत्रत्रयाय वौषट्–मध्ये। व्यः अस्त्राय फट्–दिक्षु।

इसके बाद पूर्व आदि चारों दिशाओं में पैल आदि का तथा आग्नेय आदि कोणों में श्रीशुक आदि का उनके नाममन्त्रों से पूजन करना चाहिये, यथा :

ॐ पैलाय नमः। ॐ वैशम्पायनाय नमः। ॐ जैमिनये नमः। ॐ सुमन्तवे नमः। ॐ श्रीशुकाय नमः। ॐ रोमहर्षणाय नमः। ॐ उग्रश्रवसे नमः। ॐ अन्यमुनीन्द्रेभ्यो नमः।

फिर भूपुर में अपनी अपनी दिशाओं में निम्नलिखित मन्त्रों से इन्द्र आदि दिक्पालों का पूजन करना चाहिये, यथा :

ॐ लं इन्द्राय नमः – पूर्वे। ॐ रं अग्नये नमः – आग्नेये। ॐ मं यमाय नमः – दक्षिणे। ॐ क्षं निर्ऋतये नमः – नैर्ऋत्ये। ॐ वं वरुणाय नमः – पश्चिमे। ॐ यं वायवे नमः – वायव्ये। ॐ सं सोमाय नमः – उत्तरे। ॐ हं ईशानाय नमः – ईशान्ये। ॐ आं ब्रह्मणे नमः–पूर्वेशानयोर्मध्ये। ॐ ह्रीं अनन्ताय नमः–निर्ऋतिपश्चिमयोर्मध्ये।

और फिर भूपुर के बाहर पूर्व आदि दिशाओं में निम्नलिखित मन्त्रों से वज्र आदि आयुधों का पूजन करना चाहिये यथा :

ॐ वं वज्राय नमः। ॐ शं शक्तये नमः। ॐ दं दण्डाय नमः। ॐ खं खड्गाय नमः। ॐ पां पाशाय नमः। ॐ अं अंकुशाय नमः। ॐ गं गदायै नमः। ॐ शूं शूलाय नमः। ॐ पं पद्माय नमः। ॐ चं चक्राय नमः।

इस प्रकार आवरण पूजा करने के बाद धूप, दीप, नैवेद्य आदि उपचारों से विधिवत् भगवान् वेदव्यास का पूजन करना चाहिये।

मृत्युञ्जयेन पुटितं यो व्यासस्य मनुं जपेत् ॥ १०७ ॥
सर्वोपद्रवसंत्यक्ता लभते वांछितं फलम् ।

मृत्युञ्जय से पुटित व्यास-मन्त्र की महिमा : जो व्यक्ति मृत्युञ्जयमन्त्र से संपुटित व्यासमन्त्र का जप करता है वह सब उपद्रवों से मुक्त होकर वांछित फल प्राप्त करता है।

टिप्पणी : *मृत्युञ्जय से पुटित व्यास-मन्त्र* : ॐ जूं सः व्यां वेदव्यासाय नमः सः जूं ॐ।

तारःशूलीवामकर्णबिन्दुयुक्तःससर्गसः ॥ १०८ ॥
मृत्युञ्जयस्य मन्त्रोयं त्रिवर्णो मृत्युनाशनः ।
जप्तोयं केवलो नृणामिष्टसिद्धिं प्रयच्छति ।
किंपुनस्तेन पुटितो वेदव्यासमनूत्तमः॥ १०९ ॥

मृत्युञ्जय-मन्त्र का उद्धार : तार (ॐ) वामकर्ण एवं विन्दु सहित शूली (जूं) विसर्ग सहित सकार (सः) यह ३ अक्षर का मृत्युनाशक मृत्युञ्जय का मन्त्र है।

यह अकेला मन्त्र जप करने से भी मनुष्यों को इष्ट सिद्धि देता है, और यदि इससे सम्पुटित व्यास-मन्त्र का जप किया जाय तो इसके फल का क्या कहना है।

टिप्पणी : *मृत्युञ्जय-मन्त्र* : ॐ जूं सः।

विनियोग : अस्य श्री मृत्युञ्जय मन्त्रस्य कहोल ऋषिः, दैवीगायत्री छन्दः, मृत्युंजयो देवता, जूं बीजं, सः शक्तिः, ममाभीष्टसिद्धये जपे विनियोगः।

षडङ्गन्यास : सां हृदयाय नमः। सीं शिरसे स्वाहा। सूं शिखायै वषट्। सैं कवचाय हुम्। सौं नेत्रत्रयाय वौषट्। सः अस्त्राय फट्।

ध्यान : चन्द्रार्काग्निविलोचनं स्मितमुखं पद्मद्वयान्तस्थितं,
मुद्रापाशमृगाक्षसूत्रविलसत्पाणिं हिमांशु प्रभम् ।
कोटिरेन्दुगलत्सुधाप्लुततनुं हारादि भूषोज्ज्वलं,
कान्त्या विश्वविमोहनं पशुपतिं मृत्युञ्जयं भावयेत् ॥

इति श्री शुकदेव चतुर्वेदि विरचितायां सटिप्पण्यां मन्त्रमहोदधेः
मोहिनी व्याख्यायां पञ्चदशस्तरङ्गः ।

मृत्युञ्जयमन्त्रमाह । तारइति । तार ॐ । वामकर्णबिन्दुयुतः ऊबिन्दुयुतः शूलीजः जूम् । ससर्गःसःसः ॥ १०८ ॥

केवलोप्ययंजप्तोनृणांमृत्युनाशनः । किंपुनस्तत्पुटितः । व्यासमन्त्रः । अस्यमन्त्रस्य कहोलऋषिः दैवीगायत्रीछन्दः मृत्युंजयोदेवता जूंबीजं सःशक्तिः । दीर्घाद्यसकारेणषडङ्गम् ॥१०९॥ इतिश्रीमन्त्रमहोदधिव्याख्यायांनौकायांसूर्यादिमन्त्रनिरूपणंनामपञ्चदशस्तरङ्गः ।

षोडश तरङ्ग

महामृत्युंजयं वक्ष्ये दुरितापन्निवारणम् ।
यं प्राप्य भार्गवःशंभोर्मृतान्दैत्यानजीवयत् ॥ १ ॥

पाप एवं विपत्ति को दूर करनेवाले महामृत्युञ्जय मन्त्र को बतलाता हूँ जिसे भगवान् शङ्कर से प्राप्त कर शुक्राचार्य ने मरे हुए दैत्यों को जीवित किया था ।

तारःखंव्यापिनीचंद्रयुक्तारश्चतुराननः ।
अर्धीशबिंदुसंयुक्तो हंसःसर्गीचभूर्भुवः ॥ २ ॥
सकारोबालसर्गाढ्यस्त्र्यंबकंवैदिकोमनुः ।
भूर्भुवःस्वर्भुजंगेशस्तारीजूंसर्गवान्भृगुः ॥ ३ ॥
आकाशोमनुर्बिंद्वाढ्यःप्रणवांतोमनूत्तमः ।
महामृत्युंजयाख्योयं पंचाशद्वर्णनिर्मितः ॥ ४ ॥

महामृत्युञ्जय मन्त्र का उद्धार : तार (ॐ) व्यापिनी चन्द्रयुत खं (हौं) एवं तार (ॐ) फिर अर्धीश बिन्दु सहित चतुरानन (जूं) सर्गी हंस (सः) 'भूर्भुवः' तथा बाल विसर्ग सहित सकार (स्वः) फिर 'त्र्यम्बकं यजामहे०' वैदिक मन्त्र फिर 'भूर्भुवः स्वः' तार युत भुजंगेश (रों) 'जूं' सर्गवान भृगु (सः) मनु एवं बिन्दु सहित आकाश (हौं) तथा अन्त में प्रणव लगाने से यह ५० अक्षरों से निर्मित महामृत्युञ्जय संज्ञक श्रेष्ठतम मन्त्र बनता है ।

महामृत्युञ्जयमन्त्रमाह । तारइति । तारः ॐ । व्यापिनी चन्द्रयुक् औबिन्दुयुतंखंहः हौं । तारः ॐ । अर्धीश बिन्दुयुक्तश्चतुरानन: ऊबिन्दुयुतोजः जूं । सर्गीहंसःसः । भूर्भुवः स्वरूपम् ॥ २ ॥ सकारोबाल विसर्गाढ्योवविसर्गयुतः सकारः स्वः । त्र्यंबकं वैदिको मन्त्रः । यथा— त्र्यंबकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम् । उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीयमामृतादिति । भूर्भुवःस्वःस्वरूपम् । तारयुतोभुजंगेशोरः रों । जूं स्वरूपम् । सर्गवान्भृगुः सः ॥ ३ ॥ मनुबिन्द्वाढ्यः आकाशः औबिन्दुयुतोहः हौं । प्रणवान्तश्चायं मन्त्रः । यथा — ॐ हौं ॐ जूं सः भूर्भुवः स्वः त्र्यंबकं० भूर्भुवः स्वः रों जूं सः हौं ॐ इतिपंचाशद्वर्णः ॥ ४-५ ॥

टिप्पणी : महामृत्युञ्जयमन्त्र : ॐ ह्रौं ॐ जूं सः भूर्भुवः स्वः त्र्यंबकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम् उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीयमामृतात् भूर्भुवः स्वः रों जूं सः ह्रौं ॐ ।

वामदेवकहोलाख्यवसिष्ठामुनयोस्यतु ।
छन्दांस्युक्तानि:रुद्रेण पंक्तिगायत्र्यनुष्टुभः ॥ ५ ॥
सदाशिवमहामृत्युञ्जयरुद्रोस्यदेवता ।
मायाशक्ती रमाबीजं विनियोगोर्थसिद्धये ॥ ६ ॥

विनियोग : इस मन्त्र के वामदेव कहोल एवं वसिष्ठ ऋषि हैं । भगवान् रुद्र ने पंक्ति, गायत्री एवं अनुष्टुप् छन्द बतलाये हैं । सदाशिव महामृत्युञ्जय एवं रुद्र इसके देवता हैं । माया (ह्रीं) शक्ति, रमा (श्रीं) बीज तथा अभीष्टसिद्धि हेतु इसका विनियोग होता है ।

टिप्पणी : विनियोग : अस्य श्री महामृत्युञ्जयमन्त्रस्य वामदेवकहोलवसिष्ठ ऋषयः, पंक्तिगायत्र्यनुष्टुभश्छन्दांसि, सदाशिव महामृत्युञ्जयरुद्रोदेवताः ह्रीं शक्तिः, श्रीं बीजं, ममाभीष्टसिद्धये जपे विनियोगः ।

मूर्ध्नि वक्त्रे हृदिशिवे पदोर्मुन्यादिकान्यसेत् ।

ऋष्यादिन्यास : शिर, मुख, हृदय, लिंग एवं पैरों पर ऋषि आदि का न्यास करना चाहिये ।

टिप्पणी : न्यासविधि : ॐ वामदेवकहोलवसिष्ठेभ्यो ऋषिभ्यो नमः – शिरसि ।
ॐ पंक्तिगायत्र्यनुष्टुब्छन्देभ्यो नमः – मुखे ।
ॐ सदाशिवमहामृत्युञ्जयरुद्रदेवतायै नमः – हृदि ।
ह्रीं शक्तये नमः – लिंगे ।
श्रीं बीजाय नमः – पादयोः ।

त्रिचतुर्वसुनन्देषु गुणवर्णाननुष्टुभः ॥ ७ ॥
तारो नमो भगवतेरुद्रायेतिपदान्वितान् ।
मूलादिनववर्णाद्यानुक्त्वा कुर्य्यात्षडङ्गकम् ॥ ८ ॥
शूलांतेपाणयेस्वाहाहृन्मन्त्रान्ते नियोजयेत् ।
अमृतान्ते मूर्त्तयेमांजीवयेतिशिरोंतिमम् ॥ ९ ॥

मन्त्रौ ह्रौं । रमाश्रीं ॥ ६ ॥ मुन्यादिकान्न्यादीन्मूर्धादिषुन्यसेत् । शिवेलिंगे । षडंगं न्याससमाह । त्रिचतुरिति । चतुर्भिः अनुष्टुभः त्र्यंबकमंत्रस्यादिवर्णान् । मूलादिनववर्णाद्यान्मूलमंत्रस्यादौयेनववर्णास्ताराद्यास्तान् । ॐनमोभगवतेरुद्रायेति पदान्वितान्–तथाशूलपाणये इत्यादि तिस्रश्चतुर्थ्यंतमंत्र तानुक्त्वाषडगकुर्यादित्यर्थः । यथा-ॐह्रौंॐजूंसः भूभुवः स्वः त्र्यंबकं ॐ नमो भगवते रुद्राय शूलपाणये स्वाहा हृत् । ॐ यजामहे ॐ अमृतमूर्तये मां जीवय शिरः ॥ ७-९ ॥

शिखान्ते चन्द्रशिरसेजटिने वह्निवल्लभा ।
त्रिपुरान्तकायहांहींकवचान्ते मनुःस्मृतः ॥ १० ॥
प्रवदेत्त्रिपदस्यान्ते लोचनायपदंपुनः ।
ऋग्यजुःसाममन्त्रायवर्णान्नेत्रमनोःपठेत् ॥ ११ ॥
अग्नित्रयायज्वलचज्वलमांरक्षरक्षच ।
अघोरास्त्रायमन्त्रोयमस्त्रमन्त्रस्ततःस्मृतः ॥ १२ ॥

षडङ्गन्यास : अनुष्टुप् (त्र्यंबकं यजामहे० मन्त्र) के ३, ४, ८, ९, ५ एवं ३ वर्णों के प्रारम्भ में मूलमन्त्र के ९ अक्षर लगाकर तथा बाद में तार (ॐ) 'नमो भगवते रुद्राय' फिर क्रमशः 'शूलपाणये स्वाहा' इत्यादि लगाकर षडङ्गन्यास करना चाहिये । 'शूलपाणये स्वाहा' यह हृदय न्यास के मन्त्र के अन्त में लगाना चाहिये । 'अमृमूर्तये मां जीवय' यह शिर के मन्त्र के अन्त में लगाना चाहिये । शिखा मन्त्र के अन्त में 'चन्द्रशिरसे जटिने स्वाहा' लगाना चाहिये । कवचमन्त्र के अन्त में 'त्रिपुरान्तकाय हां हीं' लगाना चाहिये । नेत्र मन्त्र के अन्त में 'त्रि' 'लोचनाय' एवं 'ऋग्यजुःसाम मन्त्राय' ये पद बोलने चाहिये । अस्त्र मन्त्र के अन्त में 'अग्नित्रयाय ज्वल ज्वल मां रक्ष रक्ष' तथा 'ॐ अघोरास्त्राय' यह मन्त्र लगाना चाहिये ।

टिप्पणी : *षडङ्गन्यास के मन्त्र* : ॐ हौं ॐ जूं सः भूर्भुवःस्वः त्र्यम्बकं ॐ नमो भगवते रुद्राय शूलपाणये स्वाहा – हृदयाय नमः । ॐ····स्वः यजामहे ॐ नमो भगवते रुद्राय अमृतमूर्तये मां जीवय – शिरसे स्वाहा । ॐ····स्वः सुगन्धि पुष्टिवर्धनं ॐ नमो भगवते रुद्राय चन्द्रशिरसे जटिने स्वाहा – शिखायै वषट् । ॐ····स्वः उर्वारुकमिवबन्धनात् ॐ नमोभगवते रुद्राय त्रिपुरान्तकाय हां हीं – कवचाय हुम् । ॐ····स्वः मृत्योर्मुक्षीय ॐ नमो भगवते रुद्राय त्रिलोचनाय ऋग्यजुःसाममन्त्राय – नेत्रत्रयाय वौषट् । ॐ हौं ॐ जूं सः भूर्भुवः स्वः मामृतात् ॐ नमो भगवते रुद्राय अग्नित्रयाय ज्वलज्वल मां रक्षरक्ष ॐ अघोरास्त्राय – अस्त्राय फट् ।

द्वात्रिंशत्त्र्यंबकाद्यर्णान्नमोंतान्बिन्दुसंयुतान् ।
तारादिनववर्णाद्यानगेष्वेषु प्रविन्यसेत् ॥ १३ ॥

ॐ सुगन्धिपुष्टिवर्धनं ॐ चन्द्रशिरसे जटिने स्वाहा शिखा । ॐ उर्वारुकमिव बन्धनात् ॐ त्रिपुरान्तकाय हां हीं कवचम ॥ १० ॥ ॐ हौं मृत्योर्मुक्षीय ॐ नमो त्रिलोचनाय ऋग्यजुःसाममन्त्राय नेत्रम ॥ ११ ॥ ॐ हौं मामृतात् ॐ नमो० अग्नित्रयाय ज्वल ज्वल मां रक्ष रक्ष ॐ अघोरास्त्राय अस्त्रम ॥ १२ ॥ वर्णन्यासमाह । द्वात्रिंशदिति । प्रणवादि नववर्णाद्यान्सबिन्दून्नमोंतांस्त्र्यम्बकमित्यादि द्वात्रिंशद्वर्णान्पूर्ववक्त्रादिष्वंगेषु न्यसेत् । १ ॐ हौं ॐजूं सःभूर्भुवःस्वः त्र्यंनमःपूर्ववक्त्र २ ॐ हौं०वं नमः पश्चिमवक्त्रे इत्यादिप्रयोगः ॥ १३ ॥

पूर्वपश्चिमयाम्योदङ्मुखेषूरसिकण्ठतः ।
वदने नाभिहृत्पृष्ठे कुक्षौ लिंगे गुदे न्यसेत् ॥ १४ ॥
ऊरुमूलोरुमध्ये च जानुनोर्जानुवृत्तयोः ।
स्तनयोःपार्श्वयोरन्ध्योःकरयोर्नसि मूर्द्धनि ॥ १५ ॥

वर्णन्यास : 'त्र्यम्बकं०' इत्यादि ३२ अक्षर में बिन्दु तथा बाद में नमः लगाकर और प्रारम्भ में मूलमन्त्र के ९ वर्ण लगाकर इनका (वक्ष्यमाण) अङ्गों में न्यास करना चाहिये । पूर्व, पश्चिम, दक्षिण एवं उत्तर मुख में, फिर उर, कण्ठ, मुख, नाभि हृदय, पीठ, कुक्षि, लिंग, एवं गुदा में न्यास करना चाहिये । फिर दोनों ऊरुओं के मूल एवं मध्य में, दानों जानुओं में, स्तनों में, पार्श्वों में, पैरों में, नासिका रन्ध्रों में तथा शिर में न्यास करना चाहिये ।

टिप्पणी : न्यासविधि :

ॐ हौं जूं सः भूर्भुवः स्वः त्र्यं नमः पूर्व मुखे । ॐ····स्वः बं नमः पश्चिम मुखे । ॐ···· स्वः कं नमः दक्षिण मुखे । ॐ····स्वः यं नमः उत्तर मुखे । ॐ····स्वः जां नमः उरसि । ॐ····स्वः मं नमः कण्ठे । ॐ····स्वः हें नमः मुखे । ॐ····स्वः सुं नमः नाभौ । ॐ···· स्वः गं नमः हृदि । ॐ····स्वः धिं नमः पृष्ठे । ॐ····स्वः पुं नमः कुक्षौ । ॐ····स्वः ष्टिं मनः लिंगे । ॐ····स्वः वं नमः गुदे । ॐ····स्वः धं नमः दक्षिणोरुमूले । ॐ····स्वः नं नमः वामोरुमूले । ॐ ··· स्वः उं नमः दक्षिणोरुमध्ये । ॐ····स्वः वां नमः वामोरुमध्ये । ॐ···· स्वः रुं नमः दक्षिण जानुनि । ॐ····स्वः कं नमः वाम जानुनि । ॐ···· स्वः मिं नमः दक्षिण जानुवृत्ते । ॐ ···स्वः वं नमः वाम जानुवृत्ते । ॐ····स्वः बं नमः दक्षिण स्तने । ॐ···· स्वः धं नमः वाम स्तने । ॐ····स्वः नां नमः दक्षिण पार्श्वे । ॐ····स्वः मूं नमः वाम-पार्श्वे । ॐ····स्वः त्र्यों नमः दक्षिण पादे । ॐ····स्वः मुं नमः वाम पादे । ॐ····स्वः क्षीं नमः दक्षिण करे । ॐ·· स्वः यं नमः वाम करे । ॐ····स्वः मां नमः दक्षिण नासायाम् । ॐ····स्वः मूं नमः वाम नासायाम् । ॐ···· तां नमः मूर्ध्नि ।

अथैकादशविन्यस्येत्पदानि शिरसि भ्रुवोः ।
नेत्रयार्वदने गण्डेहृदये जठरे शिवे ॥ १६ ॥
ऊर्वोर्जानुप्रदेशे च पादयोःक्रमशःपुनः ।
त्रिवेदगुणबाणाब्धिद्वरामाक्षिगुणेन्दुभिः ॥ १७ ॥

अंगान्याह । पूर्वेति । पूर्ववक्त्रादिष्वेकैकं वर्णन्यसेत् ॥ १४ ॥ ऊरुमूलोरुमध्यजानुवृत्त-स्तनपार्श्वपादकरनासिद्वौद्वौ । मूर्धन्येककम् ॥ १५ ॥ पदन्यासमाह । अथैकेति । शिवेलिंगे ॥ १६ ॥ पदेषु वर्णसख्यामाह । त्रिवेदेति । त्र्यंबकं शिरसि इत्यादि० ॥ १७ १८

त्रिभिर्वर्णैश्चविज्ञेयापदसंख्याक्रमाद्बुधैः ।
मूलेन व्यापकं कृत्वा ततो ध्यायेत्त्रिलोचनम् ॥ १८ ॥

पदन्यास : फिर ११ पदों का क्रमशः शिर, भौं, नेत्र, मुख, गण्ड, हृदय, उदर, लिङ्ग, ऊरु, जानु एवं पैरों में न्यास करना चाहिये । (त्र्यम्बकं यजामहे० इत्यादि मंत्र के) ३, ४, ३, ५, ४, २, ३, २, ३, १ एवं ३ वर्णों से विद्वान क्रमशः एक एक पद बना लें ।

(और फिर) मूलमन्त्र से व्यापक न्यास कर भगवान् शङ्कर का ध्यान करना चाहिये ।

टिप्पणी : *न्यासविधि* : त्र्यंबकं शिरसि । यजामहे भ्रुवोः । सुगन्धिं नेत्रयोः । पुष्टिवर्धनं मुखे । उर्वारुकं गण्डयोः । इव हृदये । बन्धनात् जठरे । मृत्योः लिंगे । मुक्षीय ऊर्वोः । मा जान्वोः । अमृतात् पादयोः ।

हस्ताम्भोजयुगस्थकुम्भयुगलादुद्धृत्यतोयंशिरः
सिञ्चन्तं करयोर्युगेन दधतं स्वांके सकुम्भौकरौ ।
अक्षस्रङ् मृगहस्तमम्बुजगतं मूर्द्धस्थचन्द्रस्रवत्पीयूषोन्नततनुं
भजे सगिरिजं मृत्युञ्जयं त्र्यम्बकम् ॥ १९ ॥

ध्यान : गोद में रखे दोनों हाथों में कुम्भ लिये हुये, उसके ऊपर के दोनों हाथों के कुम्भों से जल लेकर उससे ऊपर वाले दोनों हाथों से अपने शिर पर अभिषेक करते हुए, शेष दोनों हाथों में क्रमशः मृग एवं अक्षमाला धारण किये हुए, शिर पर स्थित चन्द्रमा से टपक रहे अमृत से आप्लावित शरीर वाले, पार्वती सहित तीन नेत्रवाले मृत्युञ्जय का ध्यान करता हूँ ।

मुष्टिसारंगशक्त्याख्यालिंगपंचमुखाभिधाः,

ध्यानमाह । हस्तेति । अष्टहस्तविनियोगमाह । अंकस्थकरयोःकुम्भौदधतं तदूर्ध्वस्थ करयोः कुम्भाभ्यां जलमुद्धृत्यकरद्वयेन स्वशिरोभिषिंचंतंकरयोर्मृगाक्षमाले च दधतमिति । मूर्धनिस्थितोयश्चन्द्रस्ततः स्रावतामृतेनोक्लिन्नातनुर्यस्य । उंदीक्लेदने इत्यस्य निष्ठायामुन्नेतिरूपम् । सगिरिजं भवानीयुतम् । त्रीण्यम्बकानिनेत्राणि यस्यतम् ॥ १९ ॥

मुद्राआह । मुष्टीति । मुष्टिदक्षिण हस्तेन विधायोर्ध्वं समुन्नयेत् । मुद्रामुष्ट्यभिधाख्याना सर्वविघ्नविनाशिनीति मुष्टिमुद्रालक्षणम् । सारंगोमृगस्तन्मुद्रालक्षणं यथा— दक्षस्यानामिकांगुष्ठमध्यमाग्राणियोजयेत् । शिष्टेद्वेउच्छ्रितकुर्यान्मृगमुद्रेयमीरितेति । मुष्टीकरौविधायद्वौवामस्योपरिदक्षिणम् । कृत्वाशिरसियुञ्जीतशक्तमुद्रेयमीरितेति शक्तमुद्रालक्षणम् । उच्छ्रितंदक्षिणांगुष्ठंवामांगुष्ठेनबध्येत् । वामांगुलीर्दक्षिणाभिरंगुलीभिश्च बन्धयेत् । लिंगमुद्रेयमाख्याशिवसान्निध्यकारणीतिलिंगमुद्रा । मणिबन्धकरौ युक्तावंगुल्यग्राणि मेलयेत् । मुद्रापंचमुखाख्येयंदर्शिताशिवतोषिणीति पंचमुखमुद्रालक्षणम् ॥ २० ॥

मुद्राः प्रदर्श्यप्रजपेल्लक्षं तस्य दशांशतः ॥ २० ॥

जपसंख्या : मुष्टि, सारंग, शक्ति, लिंग एवं पंचमुख मुद्राएँ दिखाकर १ लाख जप करना चाहिये ।

मुष्टिमुद्रा का लक्षण :

मुष्टिं दक्षिणहस्तेन विधायोर्ध्वं समुन्नयेत् । मुद्रा मुष्टयभिधाख्याता सर्वविघ्नविनाशिनी ॥

मृगमुद्रा का लक्षण :

दक्षस्यानामिकांगुष्ठमध्यमाग्राणि योजयेत् । शिष्टे द्वे उच्छ्रिते कुर्यान्मृगमुद्रेयमीरिता ॥

शक्तिमुद्रा का लक्षण :

मुष्टी करौ विधाय द्वौ वामस्यावरिदक्षिणम् । कृत्वाणिनि युंजीत शक्तिमुद्रेयमीरिता ॥

लिंगमुद्रा का लक्षण :

उच्छ्रितं दक्षिणांगुष्ठं वामांगुष्ठेन बंधयेत् । वामांगुलीर्दक्षिणाभिरंगुलीभिश्च बंधयेत् ॥
लिंगमुद्रेयमाख्याता शिव सान्निध्यकारिणी ॥

पंचमुखमुद्रा का लक्षण :

मणिबन्धकरौ युक्त वंगुल्यग्राणि मेलयेत् । मुद्रापंचमुखाख्येयं दर्शिता शिवतोषिणी ॥

दशद्रव्यैः प्रजुहुयात्तानि बिल्वफलं तिलाः ।
पायसं सर्पिषादुग्धं दधि दूर्वा च सप्तमी ॥ २१ ॥
वटात्पलाशात्खदिरात्समिधोमधुरप्लुताः ।

हवन : दश द्रव्यों से दशांश होम करना चाहिये । वे द्रव्य इस प्रकार हैं : १. बेल फल, २. तिल, ३. खीर, ४. घी, ५. दूध, ६. दही, ७. दूर्वा, ८. बट की समिधा, ९. पलाश की समिधा एवं १०. खैर की समिधा । इन तीनों समिधाओं को घी, शहद और शक्कर में डुबा कर हवन करना चाहिये ।

वामादिशक्तिसंयुक्ते पीठे शैवे यजेच्छिवम् ॥ २२ ॥
वामाज्येष्ठातथा रौद्रीकाली प्रोक्ता चतुर्थिका ।
कलादिकात्रिकरिणीबलाद्याविकरण्यपि ॥ २३ ॥
बलप्रमथनीचान्या सर्वभूतदमन्यपि ।
मनोन्मनीतिशक्तस्य नवोक्ताः पीठशक्तयः ॥ २४ ॥
तारोनमोभगवतेसकलेतिपदं ततः ।
गुणात्मशक्तियुक्ताय अनन्ताय वदेत्पदम् ॥ २५ ॥
योगपीठात्मने पीठमन्त्रः प्रोक्तोनमोन्तिकः ।

दशद्रव्याण्याह । बिल्वेति ॥ २१ ॥ पीठशक्तीराह । वामेति ॥ २२-२४ ॥ आसनमन्त्रमाह । तारइति । ॐ नमो भगवते सकल गुणात्मशक्तियुक्ताय अनन्ताय योगपीठात्मने नमइति ॥ २५-२६ ॥

पीठपूजा : वामा आदि शक्तियों के साथ शंखपीठ पर शिव का पूजन करना चाहिए। वामा, ज्येष्ठा, रौद्री तथा कालो चौथी शक्ति बतलायी गयी है। कलविकरणी बलविकरणी, बलप्रमथनी, सर्वभूतदमिनी एवं मनोन्मनो— ये ९ शिव की पीठशक्तियाँ होती हैं।

तार (ॐ) 'नमो भगवते सकल' फिर 'गुणात्मशक्तियुक्ताय अनन्ताय' पद बोलना चाहिये, और फिर 'योगपीठात्मने नमः' यह पीठमन्त्र कहा गया है।

टिप्पणी : *पीठपूजाविधि* : वृत्ताकार कर्णिका, अष्टदल और भूपुर सहित बने यन्त्र (देखिये चित्र ४०) पर भगवान् महामृत्युञ्जय का पूजन करना चाहिये।

सर्वप्रथम श्लोक संख्या १९ में वर्णित भगवान् महामृत्युञ्जय के स्वरूप का ध्यान कर मानसोपचारों से पूजन कर विधिवत अर्घ्य स्थापित कर निम्नलिखित मन्त्रों से निर्दिष्ट स्थानों पर पीठदेवताओं का पूजन करना चाहिए, यथा :

पीठमध्ये : ॐ आधारशक्तये नमः। ॐ प्रकृतये नमः। ॐ कूर्माय नमः। ॐ शेषाय नमः। ॐ पृथिव्यै नमः। ॐ क्षीरसमुद्राय नमः। ॐ श्वेतद्वीपाय नमः। ॐ मणिमण्डपाय नमः। ॐ कल्पवृक्षाय नमः। ॐ मणिवेदिकायै नमः। ॐ रत्नसिंहासनाय नमः।

इसके बाद आग्नेय आदि चारों कोणा में धर्म आदि का तथा पूर्व आदि चारों दिशाओं में अधर्म आदि का पूजन करना चाहिये, यथा :

ॐ धर्माय नमः, आग्नेये। ॐ ज्ञानाय नमः, नैर्ऋत्ये। ॐ वैराग्याय नमः, वायव्ये। ॐ ऐश्वर्याय नमः, ईशान्ये। ॐ अधर्माय नमः, पूर्वे। ॐ अज्ञानाय नमः, दक्षिणे। ॐ अवैराग्याय नमः, पश्चिमे। ॐ अनैश्वर्याय नमः, उत्तरे।

तदनन्तर पुनः पीठ के मध्य में निम्नलिखित मन्त्रों से अनन्त आदि देवताओं की पूजा करनी चाहिये, यथा :

ॐ अनन्ताय नमः। ॐ पद्माय नमः। ॐ अं द्वादश कलात्मने सूर्यमण्डलाय नमः। ॐ उं षोडश कलात्मने सोममण्डलाय नमः। ॐ रं दश कलात्मने वह्निमण्डलाय नमः। ॐ सं सत्त्वाय नमः। ॐ रं रजसे नमः। ॐ तं तमसे नमः। ॐ आं आत्मने नमः। ॐ अं अन्तरात्मने नमः। ॐ पं परमात्मने नमः। ॐ ह्रीं ज्ञानात्मने नमः।

तदनन्तर केसरों में पूर्व आदि ८ दिशाओं में तथा मध्य में निम्नलिखित मन्त्रों से वामा आदि पीठशक्तियों का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ वामायै नमः—पूर्वे। ॐ ज्येष्ठायै नमः—आग्नेये। ॐ रौद्र्यै नमः—दक्षिणे। ॐ काल्यै नमः—नैर्ऋत्ये। ॐ कलविकरण्यै नमः—पश्चिमे। ॐ बलविकरण्यै नमः—वायव्ये। ॐबलप्रमथन्यै नमः—उत्तरे। ॐसर्वभूतदमन्यै नमः—ईशान्ये। ॐ मनोन्मन्यै नमः—मध्ये।

पीठे पुष्पाञ्जलिं दत्त्वा मूर्तिं मूलेन कल्पयेत् ॥ २६ ॥

फिर 'ॐ नमो भगवते सकलगुणात्मशक्तियुक्ताय अनन्ताय योगपीठात्मने नमः'—इस मन्त्र से आसन देकर मूलमन्त्र से मूर्ति की कल्पना कर ध्यान, आवाहन आदि उपचारों से पञ्चपुष्पाञ्जलि दान पर्यन्त भगवान् महामृत्युञ्जय का पूजन कर आवरणपूजा करनी चाहिये ।

पाद्यादिकुसुमान्तोपचारान्तेत्वावृतीर्यजेत् ।
ईशानं शम्भुकोणे तु यजेदीशानमन्त्रतः ॥ २७ ॥
तत्पुरुषमघोरं च वामदेवं तृतीयकम् ।
सद्योजातं यजेद्दिक्षु वेदोक्तस्वस्वमन्त्रतः ॥ २८ ॥
ईशानादिसमीपेषु निवृत्त्याद्याः कलाक्रमात् ।
निवृत्तिश्चप्रतिष्ठा च विद्याशान्तिश्चतुर्थ्यपि ॥ २९ ॥
शान्त्यतीतापञ्चमीति ततोंगानियजेच्चषट् ।
सूर्य्येन्दुक्षितितोयाग्निपवनाकाशयज्वनाम् ॥ ३० ॥
मूर्तयोऽष्टौक्रमात्पूज्यास्तृतीयावरणस्थिताः ।
रमाराकाप्रभाज्योत्स्नापूर्णोषापूरणीसुधा ॥ ३१ ॥
चतुर्थावरणेपूज्याःशक्तयो धवलप्रभाः ।
विश्वावन्द्यासिताप्रह्वासारासन्ध्याशिवानिशा ॥ ३२ ॥
पञ्चमावरणेभ्यर्च्याः शक्तयः श्यामविग्रहाः ।
आर्य्याप्रज्ञाप्रभामेधाशान्तिःकान्तिर्धृतिर्मतिः ॥ ३३ ॥
षष्ठावरणगाह्यष्टौसंपूज्या अरुणप्रभाः ।
धरोमापावनीपद्माशान्तामोघाजयामला ॥ ३४ ॥
सप्तमावृतिगाः पूज्याः शक्तयः काञ्चनप्रभाः ।
अनन्तसूक्ष्मसंज्ञश्चतृतीयस्तुशिवोत्तमः ॥ ३५ ॥
एकनेत्रैकरुद्रौ च त्रिमूर्तिः षष्ठईरितः ।
श्रीकण्ठोऽथशिखण्डी च संपूज्या अष्टमावृतौ ॥ ३६ ॥

आवरणपूजाप्रकारमाह । पाद्यादीति । पाद्यार्घ्याचमनीयस्नानवस्त्रोपवीतचन्दनपुष्पाणि दत्त्वावरणपूजांकुर्यात् । तत्रेशानकोणे ईशानः सर्वविद्यानामितितंत्तिरीयशाखोक्तंमं त्रं पठित्वेशानंयजेत्॥ २७ ॥ तत्पुरुषायविद्महे अघोरेभ्योथघोरेभ्यः वामदेवायनमः सद्योजातं प्रपद्यामिइत्यादिभिश्चतुर्भिमन्त्रैस्तत्पुरुषादीन्प्रागादिषुयजेत् । तेषांसमीपेस्वनामभिनिवृत्त्याद्याः कलाद्वितीयावरणेंगानितृतीयेसूर्यादीनां मर्तीः । सूर्यमूर्तयेनमइत्यादिप्रयोगः । चतुर्थेरमादयः । पंचमेविश्वादयः । षष्ठेआर्यादयः । सप्तमेधराद्याः । अनन्तादयोऽष्टमे ॥ २८-३६ ॥

उत्तरादियजेत्पश्चादुमां चण्डेश्वरं पुनः ।
नन्दिनं च महाकालं गणेशं वृषभं पुनः ॥ ३७ ॥
यजेद्भृङ्गिरिटिं स्कन्दं नवमावरणस्थितान् ।
ब्राह्म्याद्यामातरः पूज्या दशमावरणेततः ॥ ३८ ॥
इन्द्रादयश्चवज्राद्या एवं सिद्धो भवेन्मनुः ।

आवरण जा : (फिर) पाद्य आदि उपचारों से पुष्पसमर्पण पर्यन्त पूजन करने के बाद आवरणपूजा करनी चाहिए ।

'ईशान सर्वविद्यानाम्०' इत्यादि तैत्तिरीय संहितोक्त मन्त्र से ईशान कोण में ईशान का पूजन करना चाहिए । फिर 'तत्पुरुषाय विद्महे०' 'अघोरेभ्योथघोरेभ्यो०' 'वामदेवाय नमः०' तथा 'सद्योजातं प्रपद्यामि०' इन वैदिक मन्त्रों से पूर्व आदि दिशाओं में क्रमशः तत्पुरुष, अघोर, वामदेव और सद्योजात का पूजन करना चाहिए ।

ईशान आदि के समीप में क्रमशः निवृत्ति आदि कलाओं क पूजन करना चाहिए । निवृत्ति, प्रतिष्ठा विद्या, शान्ति एवं शान्त्यतीता (ये पाँच कलाएँ होती हैं) । फिर षडङ्गपूजा करनी चाहिए ।

सूर्य, चन्द्र, पृथिवी, जल, अग्नि, पवन, आकाश एवं यजु इन तृतीय आवरण में स्थित आठ मूर्तियों का क्रमशः पूजन करना चाहिए ।

चतुर्थ आवरण में श्वेत आभावाली रमा, राका, प्रभा, ज्योत्स्ना, पूर्णा, उषा, पूरणी एवं सुधा – इन आठ शक्तियों का पूजन करना चाहिए ।

पञ्चम आवरण में श्याम शरीर वाली विश्वा, वन्द्या, सिता, प्रह्वा, सारा, संध्या, शिवा एवं निशा – इन आठ शक्तियों का पूजन करना चाहिए ।

षष्ठ आवरण में अरुण आभा वाली आर्या प्रज्ञा, प्रभा, मेधा, शान्ति, कन्ति, धृति एवं मति – इन आठ शक्तियों का पूजन करना चाहिए ।

सप्तम आवरण में सोने जैसी आभा वाली धरा, उमा, पावनी, पद्मा, शान्ता, अमोघा, जया तथा अमला – इन आठ शक्तियों का पूजन करना चाहिए ।

अनन्त, सूक्ष्म, शिवोत्तम, एकनेत्र, एकरुद्र, त्रिमूर्ति, श्रीकण्ठ तथा शिखण्डी– इनका अष्टम आवरण में पूजन करना चाहिए ।

फिर नवम आवरण में उत्तर आदि दिशाओं में क्रमशः उमा एवं चण्डेश्वर का, नन्दि एवं महाकाल का, गणेश एवं वृषभ का तथा भृंगिरिटि एवं स्कन्द का पूजन करना चाहिए ।

नवमे उत्तरदिशमारभ्योमादय । दशमेमातरः इन्द्रादयश्च । प्रयागानाह । ज मभइति ॥३७-३९॥

तत्पश्चात दशम आवरण में ब्राह्मी आदि मातृकाओं का पूजन करना चाहिए, और फिर इन्द्र आदि दिक्पाल एवं वज्र आदि आयुधों का पूजन करना चाहिए।

इस प्रकार पूजन आदि करने से मन्त्र सिद्ध हो जाता है।

टिप्पणी : आवरणपूजा विधि : सर्वप्रथम कर्णिका में ईशान कोण में 'ॐ ईशानः सर्वविद्यानामीश्वरः सर्वभूतानाम्ब्रह्माधिपति ब्रह्मणोधिपतिर्ब्रह्माशिवो मे अस्तु सदाशिवोम्' – इस वैदिक मन्त्र से ईशान का पूजन करना चाहिए।

फिर पूर्व में 'ॐ तत्पुरुषाय विद्महे महादेवाय धीमहि। तन्नो रुद्रः प्रचोदयात्' – इस वैदिक मन्त्र से तत्पुरुष का पूजन करना चाहिए।

इसके बाद दक्षिण में 'ॐ अघोरेभ्योऽथघोरेभ्योघोरघोरतरेभ्यः। सर्व्वेभ्यःसर्व्वसर्वेभ्यो नमस्ते अस्तु रुद्ररूपेभ्यः।'– इस वैदिक मन्त्र से अघोर का पूजन करना चाहिए।

तत्पश्चात् 'ॐ वामदेवाय नमो ज्येष्ठाय नमः श्रेष्ठायनमो रुद्राय नमः कालाय नमः कलविकरणायनमो बलविकरणाय नमः०' – इस वैदिक मन्त्र से पश्चिम में वामदेव का पूजन करना चाहिए।

तदनन्तर 'ॐ सद्योजातं प्रपद्यामिसद्योजाताय वै नमो नमः। भवे भवेनातिभवे भवस्वमां भवोद्भवाय नमः॥' – इस मन्त्र से उत्तर में सद्योजात का पूजन करना चाहिए।

और फिर ईशान आदि के पास में निवृत्ति आदि कलाओं का उनके नाम-मन्त्रों से पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ निवृत्त्यै नमः। ॐ प्रतिष्ठायै नमः। ॐ विद्यायै नमः। ॐ शान्त्यै नमः। ॐ शान्त्यातीतायै नमः।

इस प्रकार प्रथम आवरण का पूजन कर द्वितीय आवरण में षडङ्गन्यासोक्त मन्त्रों से आग्नेय आदि कोणों में, मध्य में तथा दिशाओं में अङ्गपूजा करनी चाहिए, यथा :

ॐहौंॐजूंसःभूर्भुवःस्वः त्र्यम्बकं ॐ नमो भगवते रुद्राय शूलपाणये स्वाहा – हृदयाय नमः। ॐ ··स्वः यजामहे ॐ····रुद्राय अमृतमूर्तये मां जीवय – शिरसे स्वाहा। ॐ····स्वः सुगन्धि पुष्टिवर्धनं ॐ····रुद्राय चन्द्रशिरसे जटिनेस्वाहा – शिखायै वषट्। ॐ····स्वः उर्वारुकमिव बन्धनात् ॐ····रुद्राय त्रिपुरान्तकाय हांहीं – कवचाय हुम्। ॐ····स्वः मृत्योर्मुक्षीय ॐ····रुद्राय त्रिलोचनाय ऋग्यजुः० – नेत्रत्रयाय वौषट्। ॐ····स्वः मामृतात् ॐ····रुद्राय अग्नित्रयाय ज्वल० – अस्त्राय फट्।

तृतीय आवरण में अष्टदल में पूर्व आदि ८ दिशाओं में नाममन्त्रों से क्रमशः सूर्य आदि ८ मूर्तियों का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ सूर्यमूर्तये नमः। ॐ चन्द्रमूर्तये नमः। ॐ क्षितिमूर्तये नमः। ॐ जलमूर्तये

नमः । ॐ अग्निमूर्तये नमः । ॐ वायुमूर्तये नमः । ॐ आकाशमूर्तये नमः । ॐ यज्वमूर्तये नमः ।

चतुर्थ आवरण में पूर्व आदि ८ दिशाओं में श्वेत आभा वाली रमा आदि ८ शक्तियों का उनके नाममन्त्रों से पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ रमायै नमः । ॐ राकायै नमः । ॐ प्रभायै नमः । ॐ ज्योस्नायै नमः । ॐ पूर्णायै नमः । ॐ उषायै नमः । ॐ पूरण्यै नमः । ॐ सुधायै नमः ।

पंचम आवरण में पूर्व आदि ८ दिशाओं में श्याम शरीर वाली विश्वा आदि ८ शक्तियों का उनके नाम मन्त्रों से पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ विश्वायै नमः । ॐ वन्द्यायै नमः । ॐ सितायै नमः । ॐ प्रह्वायै नमः । ॐ सारायै नमः । ॐ सन्ध्यायै नमः । ॐ शिवायै नमः । ॐ निशायै नमः

षष्ठ आवरण में पूर्व आदि ८ दिशाओं में अरुणआभा वाली आर्या आदि ८ शक्तियों का उनके नाम मन्त्रों से पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ आर्य्यायै नमः । ॐ प्रज्ञायै नमः । ॐ प्रभायै नमः । ॐ मेधायै नमः । ॐ शान्त्यै नमः । ॐ कान्त्यै नमः । ॐ धृत्यै नमः । ॐ मत्यै नमः ।

सप्तम आवरण में पूर्व आदि आठों दिशाओं में सोने जैसी आभावाली धरा आदि ८ शक्तियों का उनके नाम मन्त्रों से पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ धरायै नमः । ॐ उमायै नमः । ॐ पावन्यै नमः । ॐ पद्मायै नमः । ॐ शान्तायै नमः । ॐ अमोघायै नमः । ॐ जयायै नमः । ॐ अमलायै नमः ।

अष्टम आवरण में पूर्व आदि ८ दिशाओं में अपने अपने नाम मन्त्रों से अनन्त आदि ८ रुद्रो का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ अनन्ताय नमः । ॐ सूक्ष्माय नमः । ॐ शिवोत्तमाय नमः । ॐ एकनेत्राय नमः । ॐ एकरुद्राय नमः । ॐ त्रिमूर्तये नमः । ॐ श्रीकण्ठाय नमः । ॐ शिखण्डिने नमः ।

फिर नवम आवरण में उत्तर से प्रारम्भ कर विलोम क्रम से उमा आदि का उनके नाम मन्त्रों से पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ उमायै नमः । ॐ चण्डेश्वराय नमः । ॐ नन्दिने नमः । ॐ महाकालाय नमः । ॐ गणेशाय नमः । ॐ वृषभाय नमः । ॐ भृङ्गरीटाय नमः । ॐ स्कन्दाय नमः ।

दशम आवरण में पूर्व आदि दिशाओं में ब्राह्मी आदि मातृकाओं का उनके नाम मन्त्रों से पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ ब्राह्म्यै नमः । ॐ माहेश्वर्यै नमः । ॐ कौमार्यै नमः । ॐ वैष्णव्यै नमः । ॐ वाराह्यै नमः । ॐ इन्द्राण्यै नमः । ॐ चामुण्डायै नमः । ॐ माहालक्ष्म्यै नमः ।

इसके बाद भूपुर में अपनी अपनी दिशाओं में निम्नलिखित मन्त्रों से इन्द्र आदि

दिक्पालों का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ लं इन्द्राय नमः । ॐ रं अग्नये नमः । ॐ मं यमाय नमः । ॐ क्षं निर्ऋतये नमः । ॐ वं वरुणाय नमः । ॐ यं वायवे नमः । ॐ सं सोमाय नमः । ॐ हं ईशानाय नमः । ॐ आं ब्रह्मणे नमः । ॐ ह्रीं अनन्ताय नमः ।

और फिर भूपुर के बाहर पूर्व आदि १० दिशाओं में निम्नलिखित मन्त्रों से वज्र आदि आयुधों का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ वं वज्राय नमः । ॐ शं शक्तये नमः । ॐ दं दण्डाय नमः । ॐ खं खड्गाय नमः । ॐ पां पाशाय नमः । ॐ अं अंकुशाय नमः । ॐ गं गदायै नमः । ॐ शूं शूलाय नमः । ॐ पं पद्माय नमः । ॐ चं चक्राय नमः ।

इस रीति से आवरण पूजा करने के बाद धूप, दीप, नैवेद्य आदि उपचारों से विधिवत् भगवान महामृत्युञ्जय का पूजन करना चाहिए ।

जन्मभे दशमे तस्मात्पुनश्चैकोनविंशके ॥ ३९ ॥
जुहुयाद्यःसुधावल्याः समिधश्चतुरंगुलाः ।
सरोगान्त्सकलाञ्छत्रून्पराभूय श्रियायुतः ॥ ४० ॥
मोदते पुत्रपौत्राद्यैः शतवर्षाणि साधकः ।
समिद्भिः श्रीफलोत्थाभिर्होमः सम्पत्तिसिद्धये ॥ ४१ ॥
पलाशतरुजाभिस्तु ब्रह्मवर्चससिद्धये ।
वटोत्थाभिर्धनप्राप्त्यै खादिराभिस्तुकान्तये ॥ ४२ ॥
तिलैरधर्मनाशाय सर्षपः शत्रुनष्टये ।
पायसेन कृतो होमः कान्तिश्रीकीर्तिदायकः ॥ ४३ ॥
कृत्या मृत्युक्षयकरो दध्ना संवादसिद्धिदः ।
होमसंख्या तु सर्वत्रायुतमानेन कीर्तिता ॥ ४४ ॥
अष्टोत्तरशतं दूर्वात्रिकहोमाद्रुजांक्षयः ।
स्वजन्मदिवसे यस्तु पायसैर्मधुरान्वितैः ॥ ४५ ॥
जुहोति तस्य वर्द्धन्ते कमलारोग्यकीर्तयः ।
गुडूचीबकुलोत्थाभिः समिद्भिर्हवनं नृणाम् ॥ ४६ ॥
जन्मतारात्रये रोगान्मृत्युं चापि विनाशयेत् ।

काम्य प्रयोग : जो व्यक्ति अपने जन्मनक्षत्र उससे २०वें या २१वें नक्षत्र में गुडूची (गिलोय) की चार अंगुल लम्बी समिधाओं से हवन करता है, वह रोग और अपने

सुधावल्याः गुडूच्याः । चतुरंगुलप्रमाणाः समिधः ॥ ४० ॥ श्रीफलं बिल्वः ॥ ४१-४४ ॥ रुजांरोगाणाम् ॥ ४५-४६ ॥

प्रत्यहं जुहुयाद्दूर्वाअपमृत्युविनष्टये ॥ ४७ ॥
किंबहूक्तेन सर्वेष्टं प्रयच्छति शिवो नृणाम् ।
अपामार्गसमिद्भिश्चसिद्धान्नैर्ज्वरनष्टये ॥ ४८ ॥
दुग्धाक्तैरमृताखण्डैर्मासहोमोखिलाप्तये ।

शत्रुओं को नष्ट कर सम्पत्ति प्राप्त करता है, तथा पुत्र-पौत्रों के साथ आमोद-प्रमोद पूर्वक सौ वर्ष तक जीवित रहता है ।

सम्पत्ति प्राप्त करने के लिये श्रीफल (बेल) की समिधाओंसे हवन करना चाहिए। ब्रह्मवर्चस वृद्धि के लिए पलाश (ढाक) की समिधाओं से होम करना चाहिए। धन-प्राप्ति के लिए वट (बरगद) की समिधाओं से तथा कान्ति बढ़ाने के लिए खादिर (खैर) की समिधाओं से होम करना चाहिए ।

अधर्म का नाश करने के लिए तिलों से तथा शत्रुओं का नाश करने के लिए सरसों से होम करना चाहिए। खीर का होम करने से कान्ति, लक्ष्मी तथा कीर्ति मिलती है। दही का होम परकृत्य एवं अपमृत्यु को नष्ट करता है तथा विवाद में सफलता दिलाता है। सभी होमों में आहुतियों की संख्या १० हजार बतलायी गयी है।

३-३ दूर्वाओं का १०८ बार होम करने से रोग नष्ट हो जाते हैं।

जो व्यक्ति अपनी वर्षगाँठ के दिन त्रिमधुर (घी, शहद एवं शक्कर) के साथ खीर से होम करता है, उसके जीवन में लक्ष्मी, आरोग्यता एवं कीर्ति बढ़ती है।

जन्म नक्षत्र उससे ११वें या २१वें नक्षत्र में गुडूची (गिलोय) एवं बकुल (मौलश्री) की समिधाओं से होम करने से मनुष्यों के रोग एवं अपमृत्यु दूर हो जाते हैं।

अपमृत्यु को नष्ट करने के लिए प्रतिदिन दूर्वाओं का हवन करना चाहिए।

विशेष क्या कहें भगवान् शिव मनुष्यों के सब मनोरथों को पूर्ण करते हैं।

ज्वर को नष्ट करने के लिए अपामार्ग (औंघा) की समिधाओं से हवन करना चाहिए, तथा सब इच्छाओं की पूर्ति हेतु दूध में डुबोकर अमृता (गिलोय) के टुकड़ों से एक मास तक होम करना चाहिए ।

तारोहृद्भगवान्ङेंतो रुद्रा[1]तिदशाक्षरः ॥ ४९ ॥

दशाक्षर मन्त्र का उद्धार : तार (ॐ) हृद् (नमः) चतुर्थ्यन्त भगवान् (भगवते) एवं 'रुद्राय' – यह १० अक्षर का भगवान् रुद्र का मन्त्र है ।

टिप्पणी : *दशाक्षर मन्त्र* : ॐ नमो भगवते रुद्राय ।

जन्मतारात्रयेजन्मनक्षत्रेततो दशमेंकोनविंशयोश्च ॥ ४७-४८ ॥
रुद्रजपांगभूतं दशार्णमाह । तारइति । भगवान् रुद्रोपिङेंतः । पदद्वयं चतुर्थ्यन्तं । यथा – ॐनमो भगवते रुद्रायेति ॥ ४९ ॥

बोधायनोमुनिः पंक्तिश्छन्दो रुद्रोऽस्यदेवता ।
पंचन्यासान्प्रकुर्वीत स्वस्यरुद्रत्व सिद्धये ॥ ५० ॥

विनियोग : इस मन्त्र के बौधायन ऋषि हैं, पंक्ति छन्द है तथा रुद्र देवता है । अपना रुद्ररूप बनाने के लिए (वक्ष्यमाण) ५ प्रकार के न्यास करने चाहिए :

यजुर्वेदास्थितान्मन्त्रानेकत्रिंशत्स्थले न्यसेत् ।
यातेरुद्रशिखादेशे अस्मिन्महतिमस्तके ॥ ५१ ॥
सहस्राणिललाटे तु हँसःशुचिष्वद्योर्न्यसेत् ।
त्र्यंबकंनेत्रयोः श्रुत्योर्नमस्तुत्याय विन्यसेत् ॥ ५२ ॥
मानस्तोकेनासिकायामवततत्यमुखे तथा ।
नीलग्रीवाइतिऋचोर्द्वयं कण्ठे न्यसेद् बुधः ॥ ५३ ॥
नमस्तेअस्त्वायुधेतिमन्त्रमंसद्वये न्यसेत् ।
यातेहेतिरिमांबाह्वोर्येतीर्थानीतिहस्तयोः ॥ ५४ ॥
सद्योजातंप्रपद्यामीत्यृचमंगुष्ठयोन्यसेत् ।
वामदेवायतर्जन्योरघोरेभ्योऽथमध्ययोः ॥ ५५ ॥
तत्पुरुषायानामायामीशानस्तुकनिष्ठयोः ।
नमावः किरिकेभ्यस्तुहृदि मन्त्रमिमं न्यसेत् ॥ ५६ ॥
नमोगणेभ्यः पृष्ठे तु विन्यसेत्साधकोत्तमः ।
ततः पार्श्वद्वयेन्यस्येन्नमोहिरण्यबाहवे ॥ ५७ ॥
हिरण्यगर्भो नाभौ च कट्योर्मीढुष्टमेति च ।
येभूतानामिमं गुह्ये मन्त्रं विनस्य साधकः ॥ ५८ ॥

रुद्रविधानमाह । पंचेति ॥ ५० ॥ यातेरुद्रत्यृचाशिखायांन्यसेत् १ ॥ अस्मिन्महत्यर्णवेशिरसि २ ॥ ५१ ॥ सहस्राणिसहस्रशः भाले ३ ॥ हँसः शुचिषत्°ध्रुवोः ४ ॥ त्र्यंबकंयजामहे०नेत्रयोः ५ ॥ नमः स्रुत्याय च पथ्यायचेतिकर्णयोः ६ ॥ ५२ ॥ मानस्तोके०नसोः ७ ॥ अवतत्यधनुःमुखे ८ ॥ नीलग्रीवाः शितिकंठा दिवँ-नीलग्रीवाः शितिकंठाःशर्वाइतिऋगुद्वयंकंठे ९ ॥ ५३ ॥ नमस्तेअस्त्वायुधायानाततायेत्स्कंधयोः १० ॥ यातेहेति०बाह्वोः ११ ॥ येतीर्थानि०करयोः १२ ॥ ५४ ॥ सद्योजातमितितैत्तिरीयशाखोक्तमन्त्रपंचकमंगुष्ठाद्यंगुलीषु १३, १४, १५, १६, १७ ॥ नमोवःकिरिकेभ्योदेवानांहृदयेभ्यो नमो विचिन्वत्केभ्यो नमोविक्षीणकेभ्योनमआनिर्हतेभ्यइतिहृदि १८, ॥५५॥ ॥५६॥ नमोगणेभ्योगणपतिभ्यश्चवोनमइतिपृष्ठे १९ ॥ नमोहिरण्यबाहवेसेनान्येदिशांचपतयेनमइतिपार्श्वयोः २० ॥ ५७ ॥ हिरण्यगर्भःनाभौ २१ ॥ मीढुष्टमशिवाय नमःकट्योः २२ ॥ येभूतानामधिपतयःगुह्ये २३ ॥ ५८ ॥

अपाने शिरसा युक्तां जातवेदसइत्यचम् ।
मानोमहांतमित्यूर्वोरेषतेजानुनोर्न्यसेत् ॥ ५९ ॥
येपथांपादयोर्न्यस्याध्यवोचत्कवचे न्यसेत् ।
मन्त्रं नमोबिल्मिनेचेत्युपवर्मणि विन्यसेत् ॥ ६० ॥
नमोस्तुनीलग्रीवायतृतीयेऽक्षिणि साधकः ।
प्रमुञ्चधन्वनइतिमन्त्रेणास्त्रं प्रविन्यसेत् ॥ ६१ ॥
इत्येकत्रिंशदंगानां न्यासः प्रथमईरितः ।
ततः कुर्वीत दिग्बन्धं य एतावंतइत्यृचा ॥ ६२ ॥

प्रथम न्यास : यजुर्वेद के (वक्ष्यमाण) मन्त्रों का ३१ अङ्गों पर न्यास करना चाहिए :

'याते रुद्र०' मन्त्र का शिखा पर, 'अस्मिन् महति०' का मस्तक पर, 'सहस्राणि सहस्रशः०' का ललाट पर, 'हँसः शुचिषत्०' का मो पर, त्र्यंबकं यजामहे०' का नेत्रों पर, 'नमः स्रुत्याय च०' का कानों पर, 'मानस्तोके०' का नाक पर, 'अवतत्यधनुः०' का मुख पर, 'नीलग्रीवा०' इन २ ऋचाओं का कण्ठ पर न्यास करना चाहिए। 'नमस्ते अस्त्वा युधाना०' का कन्धों पर, 'यातेहेति०' का भुजाओं पर, 'ये तीर्थानि०' का हथेली पर, 'सद्योजातं प्रपद्यामि०' का अँगूठे पर, 'वामदेवाय०' का तर्जनी पर, 'अघोरेभ्यो०' का मध्यमा पर, 'तत्पुरुषाय०' का अनामिका पर, तथा 'ईशानं सर्व विद्यानां०' का कनिष्ठका पर न्यास करना चाहिए। 'नमो वः किरिकेभ्य०:' इस मन्त्र का हृदय पर न्यास करना चाहिए। 'नमो गणेभ्यो०' का पीठपर, 'नमो हिरण्य बाहवे०' का पार्श्वों पर, 'हिरण्यगर्भः०' का नाभि पर, भीढुष्टमशिवाय०' का कमर पर, 'ये भूतानामधिपतयः' का गुप्तांग पर, 'जातवेदसे०' मन्त्र का शिर के साथ अपान पर, 'मानो महान्तं०' का ऊरुओं पर, 'एषते रुद्रभागः०' का जानुओं पर, 'ये पथां पथिरक्षयः०' का पैरों पर न्यास कर 'अध्यवोचदधिवक्ता०' का कवच पर, 'नमो बिल्मिने च०' का उप कवच पर न्यास करना चाहिए। 'नमोस्तुनीलग्रीवाय०' का तृतीय नेत्र पर और 'प्रमुंच धन्वन०' का अस्त्र पर न्यास करना चाहिए। इस रीति से ३१ अंगों पर उन मन्त्रों का न्यास करना प्रथम न्यास कहलाता है।

जातवेदसेइमामृचांशिरो युतां—जातवेदसेसुनवामसोम० तामग्निवर्णामित्यस्यांतेसुतरसितरसेनमःसुतरसितरसेनमः इतिशिरोयुतामृग्द्वयमपाने २४ ॥ मानोमहांतमूर्वोः २५ ॥ एषतेरुद्रभागः जानुनोः २६ ॥ ५९ ॥ येपथां पथिरक्षयःपदोः २७ ॥ अध्यवोचदधिवक्ताकवचे २८ ॥ नमोबिल्मिनेचकवचिने०इत्युपकवचे २९ ॥ ६० ॥ नमोअस्तुनीलग्रीवाय० तृतीयनेत्रे ३० ॥ प्रमुञ्चधन्वन०अस्त्रं ३१ ॥ ६१ ॥ इतिप्रथमोन्यासः ॥ यएतावंतश्च दिग्बंधः ॥ ६२ ॥

फिर 'य एतावंतश्च०' इस मन्त्र से दिग्बन्ध करना चाहिए।

टिप्पणी : न्यास विधि :

ॐ यातेरुद्र''''शीहि (य. १६. २) – शिखादेशे ।
ॐ अस्मिन्''''तन्नमसि (य. १६. ५५) – शिरसि ।
ॐ सहस्राणि''''कृधि (य. १६. ५३) – माले ।
ॐ हंसः''''शुचिषत् (य. १०. २४) – भ्रुवोः ।
ॐ त्र्यम्बकं''''मामृतात् (य. ३. ६०) – नेत्रयोः ।
ॐ नमः स्रुत्याय''''नमः (य. १६. ३७) – कर्णयोः ।
ॐ मानस्तोके''''हवामेह (य. १६. १६) – नसोः ।
ॐ अवतत्य''''भवः (य. १६. १३) – मुखे ।
ॐ नील ग्रीवाः''''क्षमाचरा० (य. १६. ५६-५७) – कण्ठे ।
ॐ नमस्त''''तवधन्वने (य. १६. १४) – स्कन्धयोः ।
ॐ याते''''परिभुज (य. १६. ११) – बाह्वोः ।
ॐ ये तीर्थानि''''तन्मसि (य. १६. ६१) – हस्तयोः ।
ॐ सद्योजातं''''नमः (तैआ. १०. ४३, १) – अंगुष्ठयोः ।
ॐ वामदेवाय''''नमः (तैआ. १०. ४४. १) – तर्जन्योः ।
ॐ अघोरेभ्यो''''रुद्ररूपेभ्यः (तैआ. १०. ४५. १) – मध्यमयोः ।
ॐ तत्पुरुषाय''''प्रचोदयात् (तैआ. १०. ४६. १) – अनामिकयोः ।
ॐ ईशानः''''सदा शिवोम् (तैआ. १०. ४७. १) – कनिष्ठयोः ।
ॐ नमो वः''''नमऽआनिर्हतेभ्यः (य. १६. ४६) – हृदये ।
ॐ नमो गणेभ्यो''''नमो नमः (य. १६. २५) – पृष्ठे ।
ॐ नमो हिरण्य बाहवे''''पतये नमः (य. १६.१७) – पार्श्वयोः ।
ॐ हिरण्यगर्भ''''विधेम (य. १३. ४) – नाभौ ।
ॐ मीढुष्टम''''गहि (य. १६. ५१) – कटयोः ।
ॐ ये भूतानाम''''तन्मसि (य. १६. ५९) – गुह्ये ।
ॐ जातवेदसे''''दुरितात्यग्निः (तैआ. १०. १. १६) । तामग्निवर्णा०''''नमः (तैआ. १०. २. १) – अपाने ।
ॐ मानो''''रीरिषः (य. १६. १५) – ऊर्वोः ।
ॐ एषते''''पशुः (य. ३. ५७) – जान्वोः ।
ॐ ये पथां''''तन्मसि (य. १६. ६०) – पदोः ।
ॐ अद्धय''''परासुव (य. १६. ५।) – कवचे ।

ॐ नमो विल्मिने····चाहनन्यायच (य. १६. ३५) – उपकवचे ।
ॐ नमो अस्तु····नमः (य. १६. ८) – तृतीयनेत्रे ।
ॐ प्रमुंच····भगवोत्वप् (य. १६. ९) – अस्त्रे ।

इस प्रकार उक्त मन्त्रों का ३१ अंगों पर न्यास करने के बाद 'ॐ य एतावन्तश्च भूयांसश्च दिशो रुद्रान्वित स्थिरे०' (य. १६. ६३) मन्त्र से दिग्बन्ध करना चाहिए ।

मूलवर्णांस्ततोन्यस्येन्मस्तके नसि चालिके ।
मुखे कण्ठे हृदि पुनर्हस्तयोर्दक्षवामयोः ॥ ६३ ॥
नाभौ पदोरितिन्यासो दशांगेषु द्वितीयकः ।

अक्षर न्यास : मूल मन्त्र के वर्णों का क्रमशः मस्तक, नाक, ललाट, मुख, कण्ठ, हृदय, दाहिने एवं बांये हाथ, नाभि एवं पैरों – इन दश अंगों पर न्यास करना चाहिए । यह द्वितीय न्यास कहलाता है ।

टिप्पणी : न्यास विधि : ॐ नमः – मूर्ध्नि । नं नमः – नासिकायाम् । मों नमः – ललाटे । भं नमः – मुखे । गं नमः – कण्ठे । वं नमः – हृदये । तें नमः – दक्षिण हस्ते । रं नमः – वाम हस्ते । द्रां नमः – नाभौ । यं नमः – पादयोः ।

पादोरुहृन्मुखे मूर्ध्नि सद्योजातमुखाद्भृचः ॥ ६४ ॥
विन्यस्य प्रत्यृचं ब्रूयाद्धंसहंसेति साधकः ।
तृतीयन्यासइत्युक्तः कृते यस्मिञ्छिवो भवेत् ॥ ६५ ॥

तृतीय न्यास : 'सद्योजातं प्रपद्यामि०' इत्यादि ५ मन्त्रों का क्रमशः पैर, ऊरु, हृदय, मुख एवं शिर पर न्यास करते समय साधक प्रत्येक मन्त्र के बाद 'हंस हंस' कहे । यह तृतीय न्यास कहा गया है । इसके करने पर साधक शिव हो जाता है ।

टिप्पणी : न्यास विधि :

'ॐ सद्योजातं····नमः । हंस हंस' (तैआ. १०. ४३, १) – पादयोः ।
ॐ वामदेवाय····नमः । हंस हंस । (तैआ. १९. ४. ४१) – ऊर्वोः ।
ॐ अघोरेभ्यो····रुद्ररूपेभ्यः । हंस हंस । (तैआ. १०. ४५. १) – हृदि ।
ॐ तत्पुरुषाय····प्रचोदयात् । हंस हंस (तैआ. १०. ४६. १) – मुखे ।
ॐ ईशानः····शिवोम् । हंस हंस (तैआ. १०. ४०. १) – मूर्ध्नि ।

अक्षरन्यासमाह ॥ मूलेति ॥ ॐ नमःशिरसि–ननमः नसोरित्यादि० ॥ इतिप्रथमोन्यासः १ ॥ ६३ ॥ ॐ शिरसेनमः–नांनासिकायैनमः ॥ इतिद्वितीयोन्यासः २ ॥ सद्योजातंप्रपद्यामीत्यादिकंमन्त्रपंचकंपादादिषुन्यस्येत् ॥ हंसहंसइतिवदेत् ॥ इतितृतीयोन्यासः ३ ॥ ६४ ॥ ६५ ॥

एवं न्यासत्रयं कृत्वा संपुटं रचयेत्ततः ।
दिक्षु वासवमुख्यानां न्यासः संपुट उच्यते ॥ ६६ ॥
त्रातारमिन्द्रमन्त्रेण प्राच्यां न्यस्येद् बिडौजसम् ।
त्वन्नोऽग्नेऋचावह्नि सुगंनइत्यृचायमम् ॥ ६७ ॥
असुन्वंतनिर्ऋति च तत्त्वायामीतितोयपम् ।
आनोनियुद्भिर्वायु च वयंसोमेत्यृचाविधुम् ॥ ६८ ॥
तमीशानमिनीशानमाग्नेयादिषु विन्यसेत् ।
अस्मेरुद्राविधि चोद्ध्वं स्योनेतिपृथिवीमधः ॥ ६९ ॥
एवं यः संपुट कुर्य्यात्सस्यात्किल्विषवर्ज्जितः ।
तं दीप्यमानमीक्षंते प्रेतचौराद्युपद्रवाः ॥ ७० ॥
न पराभवितुं शक्ताः पलायन्तेतिदूरतः ।

संपुटीकरण : इस प्रकार ३ न्यासों को करने के बाद संपुटीकरण करना चाहिए दिशाओं में दिक्पालों का न्यास करना संपुट कहलाता है ।

'त्रातारमिन्द्रं०' मन्त्र से पूर्व में इन्द्र का न्यास करना चाहिए । 'त्वन्नो अग्नेतव०' मन्त्र से (अग्नि कोण में) अग्नि का, 'सुगन्नुपन्था०' मन्त्र से (दक्षिण में) यम का, 'असुन्वंतमयजमान०' मन्त्र से निर्ऋति का, 'तत्वायामिब्रह्मणा०' से वरुण का, 'आनोनियुद्भि०' मन्त्र से वायु का, 'वय सोम व्रते तव०' मन्त्र से सोम का, 'तमीशानं-जगत०' से ईशान का न्यास करना चाहिए । 'अस्मे रुद्रामेहना०' मन्त्र से ऊपर ब्रह्मा का तथा 'स्योना पृथिवि नो भवा०' मन्त्र से नीचे पृथिवी का न्यास करना चाहिए ।

इस प्रकार जो साधक संपुट करता है वह पापरहित हो जाता है । उसके तेज को देखकर प्रेत एवं चोर आदि उपद्रवी जन उसे परास्त करने में स्वयं को असमर्थ पाकर दूर से ही भाग जाते हैं ।

टिप्पणी : संपुटीकरण विधि :

ॐ त्रातारमिन्द्र····मघवाधात्विन्द्रः । (य. २०. ५०) – पूर्वे इन्द्रं न्यसामि ।
ॐ त्वन्नोऽअग्ने····रक्षमाणस्तवव्रते । (य. ३४. १३) – आग्नेये अग्निं न्यसामि ।
ॐ सुगन्नुपंथां····कृणोतु । (कासं. २. १५) – दक्षिणे यमं न्यसामि ।
ॐ असुन्वतं····तुल्यमस्तु । (य. १२. ६२) – नैर्ऋत्ये निर्ऋतिं न्यसामि ।
ॐ तत्वायामि····प्रमोषीः । (य. १८. ४९) – पश्चिमे वरुणं न्यसामि ।

संपुटीकरणंकार्यमित्याह ॥ एवमिति ॥ संपुटं नामत्रातारमिन्द्रमित्यादिमन्त्रैःपूर्वादि-षुक्रमेणमुद्रितांजलिदर्शनं तेषांनतयोऽपिकार्याः ॥ एवं कृतेतेजस्वीभवतीत्यर्थः ॥६६–७०॥

ॐ आनोनियुद्भिः····सदा नः । (य. २७. २८) – वायव्ये वायुं न्यसामि ।
ॐ वय····सचेमहि । (य. ३. ५६) – उत्तरे सोमं न्यसामि ।
ॐ तमीशान····स्वस्तये । (य. २५. १८) – ईशाने ईशानं न्यसामि ।
ॐ अस्मेरुद्रा····अवन्तु देवाः । (य. ३३. ५०) – ऊर्ध्वे ब्रह्माणं न्यसामि ।
ॐ स्योना····शर्म्मसप्रथाः । (य. ३५. २१) – अधोभागे पृथिवीं न्यसामि ।

मनोजूतिर्न्यसेद्गुह्ये बोध्यग्निर्जठरानले ॥ ७१ ॥
मूर्द्धानं हृदये न्यस्येन्मुखे मर्माणि ते ऋचम् ।
जातवेदास्तुशिरसिन्यासः प्रोक्तश्चतुर्थकः ॥ ७२ ॥

चतुर्थ न्यास : 'मनोजूति०' मन्त्र का गुह्यांग में, 'अबोध्यग्नि०' मन्त्र का उदर में, 'मूर्धानं दिवो०' का हृदय में, 'मर्माणि ते वर्मभि०' मन्त्र का मुख में तथा 'जातवेदाय दिवा०' मन्त्र का शिर पर न्यास करना चाहिए – यह चतुर्थ न्यास कहलाता है ।

टिप्पणी : *न्यास विधि* :

ॐ मनोजूति····प्रतिष्ठ । (य. २. १३) – गुह्ये ।
ॐ अबोद्धग्निः··· सिस्रतेनाकमच्छ । (य. १५. २४) – उदरे ।
ॐ मूर्द्धा····देवाः । (य. ७. २४) – हृदि ।
ॐ मर्म्माणि····मदंतु । (य. १७. ४९) – मुखे ।
ॐ जातवेदाय दिवापावकोऽसि (तैत्रा. ३. १०. ५. ९) – शिरसि ।

हृदयं शिवसंकल्पं शिरः पुरुषसूक्तकम् ।
शिखाद्भ्यः संभृतइति वर्मप्रातरथंमतम् ॥ ७३ ॥
विभ्राडितस्मृत नेत्रमस्त्रं तु शतरुद्रियम् ।
अयं तु पंचमान्यासः कृतः सर्वेष्टसिद्धिदः ॥ ७४ ॥

पंचमन्यास : 'यज्जाग्रत०' इत्यादि शिव संकल्प सूक्त के ६ मन्त्रों का हृदय पर, 'सहस्रशीर्षा०' इत्यादि पुरुष सूक्त के १६ मन्त्रो का शिर पर, 'अद्भ्यः संभृतः०' इत्यादि ६ मन्त्रों का शिखा पर, 'आशुः शिशानः' इत्यादि १२ मन्त्रा का कवच

इतिसंपुटीकरणंतत्फलंचोक्त्वा चतुर्थन्यासमाह । मनोजूति० गुह्ये ॥ अबोध्यग्निरुदरे ॥ ७१ ॥ मूर्धानं दिवो० हृदि । मर्माणितेवर्मभिश्छाद०मुखे ॥ जातवेदायदिवापवाकोसि० शिरसि ॥ एवंपंचांगेषुन्यासश्चतुर्थः ॥ ४ ॥ ७२ ॥ षडंगमाह ॥ हृदयमिति ॥ यज्जाग्रतः० हृत् ॥ सहस्रशीर्षा०शिरः । अद्भ्यःसंभृतः०शिखा ॥ आशुः शिशानः०कवचम् ॥ ७३ ॥ विभ्राट्०नेत्रम् ॥ नमस्तेरुद्रमन्यवे इत्यादिशतरुद्रियं अस्त्रम् ॥ इतिपञ्चमन्यासः ५ ॥ ७४ ॥

पर, 'विभ्राट्०' इत्यादि १७ मन्त्रों का नेत्र पर तथा 'नमस्ते रुद्रमन्यव०' इत्यादि शतरुद्रिय अध्याय का अस्त्र पर न्यास करना चाहिए।

टिप्पणी : षडङ्गन्यास : (निम्नोद्धृत सभी मन्त्र रुद्राष्टाध्यायी के हैं और उनके साथ लिखी संख्यायें अध्याय तथा श्लोक संख्या की द्योतक हैं)।

ॐ यज्जाग्रत०। येनकर्म्मा०।-यत्प्रज्ञान०। येनेदम्भूत०। यस्मिन्नृच०। सुषारथि०। (१. ५–१०) – हृदयाय नमः।

ॐ सहस्रशीर्षा०। पुरुषऽएवेद०। एतावानस्य०। त्रिपादूर्ध्व०। ततोव्विराड०। तस्माद्यज्ञात्सर्व०। तस्माद्यज्ञात्सर्व०। तस्मादश्वा०। तं य्यज्ञम्बर्हि०। यत्पुरुषं०। ब्राह्मणो०। चन्द्रमामनसो०। वाय्भ्याऽआसी०। यत्पुरुषेण०। सप्तास्यासन्०। यज्ञेन यज्ञ०। (२. १–१६) – शिरसे स्वाहा।

ॐ अद्भ्यः सम्भृतः। त्वेदाहमेतं०। प्रज्ञापतिश्चरति०। यो देवेभ्यो०। रुचम्ब्राह्म०। श्रीश्चते लक्ष्मीश्च०। (२. १७–२२) – शिखायै वषट्।

ॐ आशुः शिशानो०। संक्रन्दनेना०। सऽइषु हस्तं०। बृहस्पते परिदीया०। बलविज्ञाय०। गोत्रभिदंगोविदं०। अभिगोत्राणि०। इन्द्रऽआसान्नेता०। इन्द्रस्य व्वृष्णो०। उद्धर्षयमघव०। अस्माकमिन्द्रः०। अमीषां चित्तं०। (३. १–१२)– कवचाय हुम्।

ॐ व्विभ्राड् बृहत्०। उदुत्यञ्जातवेदस०। येनापावकचक्षसा०। दैव्यावद्ध्वर्य्यू०। तम्प्रत्नथा पूर्व०। अयंव्वेनश्चोदय०। चित्रं देवाना०। आनइडाभि०। यदद्यकच्च०। तरणिर्व्विश्व०। तत्सूर्यस्य०। तन्मित्रस्य०। वण्णमहाँर२०। बट् सूर्य०। श्रायन्तइव०। अद्द्यादेवाऽ०। आकृष्णेन०। (४. १–१७) – नेत्रत्रयाय वौषट्।

ॐ नमस्त रुद्रमन्यव''''तमेशाञ्जम्भेदद्ध्मः' (५. १–६६) – अस्त्राय फट्।

एवं न्यस्य प्रणम्याथ ध्यायेदात्मनि शंकरम् ॥ ७५ ॥

इस प्रकार न्यास एवं प्रणाम करने के बाद अपनी आत्मा में भगवान शंकर का ध्यान करना चाहिए।

एवमिति ॥ इत्थंपंचांगन्यासंकृत्वाप्रणम्याष्टांगंनत्वात्मानंरुद्रस्वरूपं ध्यायेत् ॥ नमस्कारश्चाष्टभिर्मंत्रैर्विधेयः ॥ मन्त्रोयथा–हिरण्यगर्भः० १॥ यःप्राणतः० २ ॥ ब्रह्मजज्ञानं० ३ ॥ महीद्यौः ४ ॥ उपश्वासय० ५ ॥ अग्नेनय० ६ ॥ यातेअग्ने० ७ ॥ इमंयम० ८ ॥ इमाअष्टावृचःपठन्नष्टांगंनमस्कुर्यात् ॥ अष्टांगानियथा–उरसा। शिरसादृष्टयामनसाश्रद्धयापिच ॥ पद्भ्यांकराभ्यांवाचाचप्रणामोऽष्टांगईरितहृति ॥७५॥

कैलासाचलसंनिभं त्रिनयनं पंचास्यमंबायुतं
नीलग्रीवमहीशभूषणधरं व्याघ्रत्वचाप्रावृतम् ।
अक्षस्रग्वरकुण्डिकाभयकरं चान्द्रीं कलां बिभ्रतं
गंगांभोविलसज्जटं दशभुजं वन्दे महेशं परम् ॥ ७६ ।

ध्यान : कैलास पर्वत पर विराजमान, तीन नेत्र वाले, पाँच मुख वाले, नील कण्ठ वाले, सर्पों के आभूषण धारण करने वाले, व्याघ्रचर्म लपेटे हुए, हाथों में क्रमशः अक्षमाला, वर, कुण्डिका एवं अभय तथा मस्तक पर चन्द्रकला धारण करने वाले, गंगा जल से सुशोभित जटावाले एवं दश भुजाओं वाले पार्वती सहित परम शिव की वन्दना करता हूँ ।

दशलक्षं जपेन्मन्त्रमयुतं परमान्नकैः ।
सघृतैर्जुहुयादग्नौ पीठे पूर्वोदिते यजेत् ॥ ७७ ॥

जप संख्या एवं हवन : इस मन्त्र का १० लाख जप करना चाहिए । अग्नि में पायस एवं घी की १० हजार आहुतियाँ देनी चाहिए, तथा पूर्वोक्त पीठ पर पूजन करना चाहिए ।

पूजायन्त्रमथो वक्ष्ये तथावरणदेवताः ।
अष्टपत्रं षोडशारं चतुर्विंशतिपत्रकम् ॥ ७८ ॥
दन्तपत्रं ततः कुर्य्याच्चत्वारिंशद्दलं ततः ।
तद्बहिर्भूपुरं कुर्यात्तत्र रुद्रं प्रपूजयेत् ॥ ७९ ॥

जायन्त्र : अब मैं (भगवान रुद्र के) पूजायन्त्र तथा आवरण देवताओं को बतलाता हूँ—(सर्व प्रथम) अष्टदल फिर उसके ऊपर क्रमशः षोडशदल, चतुर्विंशति दल, द्वात्रिंशद्दल एवं चत्वारिंशत्दल बनाकर उसके बाहर भूपुर बनाना चाहिए । इस यन्त्र पर भगवान रुद्र का पूजन करना चाहिए ।

टिप्पणी : भगवान् महामृत्युञ्जय का पूजन करने के लिए चित्र ४१ जैसा यन्त्र बनाना चाहिए ।

इष्ट्वा तं कर्णिकामध्ये सद्योजातादिकान्यजेत् ।
दिक्षु मध्ये ततोष्टारे नन्द्यादीनष्टसेवकान् ॥ ८० ॥

ध्यानमाह ॥ कैलासेति ॥ अहीशावासुक्यादयएवभूषणानियस्यतम् ॥ अक्षमालावरौ दक्षयोः ॥ कुण्डिकाकमण्डलुरभयंचवामयोः ॥ परमान्नकैःपायसैः ॥ ७६-७८ ॥ दंतपत्रं-द्वात्रिंशद्दलम् ॥ ७९-८२ ॥

नन्दी महाकालसंज्ञो गणेशोः वृषभस्तथा।
ततोभृंगोरिटिः स्कन्दउमाचण्डीश्वरोऽष्टमः ॥ ८१ ॥
ततस्तुषोडशदले द्वितीयावरणे स्थिताः।
अनन्तसूक्ष्मौ च शिवएकपादेकरुद्रकः ॥ ८२ ॥
ततस्त्रिमूर्तिश्रीकण्ठौ वामदेवोष्टमोमतः।
ज्येष्ठः श्रेष्ठो रुद्रकालौ कलाद्विकरणाभिधः ॥ ८३ ॥
बलोबलाद्विकरणोबलप्रमथनस्तथा।
एतान्संपूज्य तार्तीये तत्त्वसंख्यान्त्सुरान्यजेत् ॥ ८४ ॥
सिद्धयोष्टौ मातरोष्टौ भैरवाष्टकमित्यमून्।
ततश्चतुर्थावरणे भवान्नागान्नृपान्गिरीन् ॥ ८५ ॥
भवः शर्वस्तथेशानः पशुपो रुद्र एव च।
उग्रो भीमोमहादेवः शिवाष्टकमुदाहृतम् ॥ ८६ ॥
अनन्तो वासुकिश्चाथ तक्षकश्चकुलीरकः।
कर्कोटकः शंखपालःकबलाश्वतरावपि ॥ ८७ ॥
इमे नागा वैन्यपृथूहैहयोर्जुनसंज्ञकः।
शाकुन्तलेयो भरतोनलो रामो नृपाष्टकम् ॥ ८८ ॥
हिमवान्निषधो विन्ध्यो माल्यवान्पारियात्रकः।
मलयो हेमकूटश्चगन्धमादनइत्यपि ॥ ८९ ॥
गिर्य्यष्टकं पञ्चमे तु चत्वारिंशत्सुरान्यजेत्।
वासवादयइत्येषां शक्तयो ह्यायुधान्यपि ॥
वाहनानि गजाश्चेतिचत्वारिंशत्सुराःस्मृताः ॥९०॥
इन्द्राग्नियमरक्षांसि वरुणानिलभाधिपाः।
ईशानइतिदिक्पालाःशचीस्वाहावराहजा
खड्गिनीवारुणी चापिवायवी च कुबेरजा ॥ ९१ ॥
ईशानीशक्तयःप्रोक्ताःकुलिशं शक्तिदण्डकौ।
खड्गं पाशोंकुशं चैव गदाशूले च हेतयः ॥ ९२ ॥

कलाद्विकरणाभिधःकलाविकरणः ॥ ८३ ॥ बलाद्विकरणो बलविकरणः ॥ तार्तीये तृतीयावरणे तत्त्वावरणेतत्त्वसंख्यांश्चतुर्विंशतिमितान् ॥ ८४ ॥ तानेवाह ॥ सिद्धयइति ॥ ताउक्ताः। भवान् अष्टौ ॥ एवंनाग नृपतिगिरयोपिप्रत्येकमष्टौ ॥ ८५ ॥ तानेबाह ॥ भवइति ॥ ८६ ॥ नागानाह ॥ अनन्तइति ॥ ८७ ॥ नृपानाह वन्यात ॥ ८८ ॥ गिरीनाह। हिमवानिति ॥ ८९ ॥ वासवादयइति ॥ प्रत्येकमष्टौ ॥ ९० ॥ तानाह। इन्द्रेति ॥ ९१ ॥ ९२ ॥

ऐरावतोजमहिषौ प्रेतमीनपृषन्नराः ।
वृषभो वाहनानि स्युर्दिक्पालानां क्रमादमी ॥ ९३ ॥
ऐरावतःपुण्डरीकोवामनःकुमुदोञ्जनः ।
पुष्पदन्तःसार्वभौमःसुप्रतीकश्चदिग्गजाः ॥ ९४ ॥
पञ्चाब्जान्येवमापूज्य भूगृहे दिक्षु दिक्पतीन् ।
पुनरभ्यर्चयेद्धीमान्षष्ठमावरणं स्मृतम् ॥ ९५ ॥
आग्नेय्यां भूगृहस्याथ विरूपाक्षं प्रपूजयेत् ।
विश्वरूपं यातुधानं वायव्यां तु पशोःपतिम् ॥ ९६ ॥
उद्घ्वलिङ्गमथैशान्यामथोभूसदनाद्बहिः ।
दिक्षु नागाष्टकं पूज्यमेवं सप्तावृतिर्यजिः ॥ ९७ ॥
शेषाख्यस्तक्षकोनन्तोवासुकिःशंखपालकः ।
महापद्मःकम्बलश्चकर्कोटकइमेऽहयः ॥ ९८ ॥
श्वेतोनीलःकुंकुमाभः पीतकृष्णावथोज्ज्वलः ।
वर्णतःशेषमुख्याःस्युस्तेषां जातीःफणान्ब्रुवे ॥ ९९ ॥
विप्रोवैश्यस्तथाविप्रःक्षत्रियो वैश्यशूद्रकौ ।
शूद्रश्चक्रमतो ज्ञेयाः शेषाद्याःपूजनेबुधैः ॥ १०० ॥
दिग्बाणदशसप्ताद्रिशरसंख्यानि तु क्रमात् ।
शतानि त्रिंशत्त्रिंशच्चफणास्तेषां समीरिता । १०१ ॥

आवरण पूजा : कर्णिका के मध्य में भगवान् रुद्र का पूजन कर चारों दिशाओं में तथा मध्य में क्रमशः सद्योजात, वामदेव, अघोर, तत्पुरुष एवं ईशान का पूजन करना चाहिए और फिर अष्टदल में नन्दी आदि अष्ट सेवकों का पूजन करना चाहिए । नन्दी, महाकाल, गणेश, वृषभ, भृङ्गीरिट, स्कन्द, उमा एवं चण्डीश्वर ये आठ सेवक माने गये हैं ।

फिर द्वितीय आवरण में षोडशदल में स्थित इन देवताओं का पूजन करना चाहिए : १. अनन्त, २. सूक्ष्म, ३. शिव, ४. एकपाद, ५. एकरुद्र, ६. त्रिमूर्ति, ७. श्रीकण्ठ, ८. वामदेव, ९. ज्येष्ठ, १०. श्रेष्ठ, ११. रुद्र, १२. काल, १३. कलविकरण, १४. बल, १५. बलविकरण एवं १६ बलप्रमथन ।

॥९३॥९४॥ पंचाब्जानिपद्मानि ९५ ॥ ९६ ॥ यजिःपूजासप्तावृतिःसप्तावरणयुता ॥ ९७ ॥ नागाष्टकमाह । शेषाख्यइति । अहयोनागाः ॥ ९८ ॥ तेषांवर्णानाह । श्वेतइति । पीतौद्वौवासुकिशंखपालौ । कृष्णौमहापद्मकंबलौ ॥ ९९ ॥ जातीराह । विप्रइति ॥ १०० ॥ फणसंख्यामाह । दिगिति । शेषःसहस्रफणः । तक्षकःपंचशतफणः । अनंतःसहस्रफणः । वासुकिशंखपालौससशतफणौ । महापद्मःएकशतफणः कम्बलकर्कोटकौत्रिंशत्फणौ । तथाचैवंप्रयोगः—श्वेतायविप्रवर्णायसहस्रफणायशेषायनमइत्यादिः ॥ १०१ ॥

इन देवताओं का पूजन करने के बाद तृतीय आवरण में इन २४ देवताओं का पूजन करना चाहिए : अणिमा आदि ८ सिद्धियाँ, ब्राह्मी आदि ८ मातृकायें तथा ८ भैरव (ये तृतीय आवरण के २४ देवता माने गये हैं)।

इसके बाद चतुर्थ आवरण में द्वात्रिंशद्दल में भव आदि ८ शिव, अनन्त आदि ८ नाग, वैन्य आदि ८ नृप तथा हिमवान् आदि ८ पर्वतों का पूजन करना चाहिए। भव, शर्व, ईशान, पशुपति, रुद्र, उग्र, भीम एवं महादेव–ये ८ शिव बतलाये गये हैं। अनन्त वासुकि, तक्ष, कुलीरक, कर्कोटक, शंखपाल, कम्बल तथा अश्वतर—ये ८ नाग कहे गये हैं। वैन्य, पृथु, हैहय, अर्जुन, शाकुन्तलेय, भरत, नल एवं राम–ये ८ नृप माने गये हैं। हिमवान्, निषध, विन्ध्य, माल्यवान्, पारियात्रक, मलय, हेमकूट एवं गन्धमादन—ये ८ पर्वत होते हैं।

तत्पश्चात् पञ्चम आवरण में इन ४० देवताओं का पूजन करना चाहिए : ८ दिक्-पाल, उनकी ८ शक्तियाँ, उनके ८ आयुध, ८ वाहन एवं ८ दिग्गज। इस प्रकार ये ४० देवता होते हैं। इन्द्र, अग्नि, यम, निर्ऋति, वरुण, वायु, कुबेर एवं ईशान—ये ८ दिक्पाल होते हैं। शची, स्वाहा, वराहजा, खड्गिनी, वारुणी, वायवी, कुबेरजा एवं ईशानी—ये ८ शक्तियाँ कही गयी हैं। वज्र, शक्ति, दण्ड, खड्ग, पाश, अंकुश, गदा एवं शूल—ये ८ उनके आयुध होते हैं। ऐरावत, अज, महिष, प्रेत, मीन पृषद्, नर एव वृषभ—ये उनके ८ वाहन माने गये है। ऐरावत, पुण्डरीक, वामन, कुमुद, अंजन, पुष्पदन्त, सार्वभौम एवं सुप्रतीक—ये ८ दिग्गज माने गये हैं।

इस प्रकार अष्टदल, षोडशदल, चतुर्विंशतिदल, द्वात्रिंशद्दल तथा चत्वारिंशद्दल–इन पांचा दलों में दवताओं का पूजन कर भूपुर में दिशाओं में पुनः दिक्पालों का पूजन करना चाहिए—यह षष्ठ आवरण का पूजन बतलाया गया है।

इसके बाद भूपुर के अग्निकोण में विरुपाक्ष का पूजन करना चाहिए। नैऋत्य में विश्वरूप का, वायव्य में पशुपति का तथा ईशान कोण में ऊर्ध्वलिङ्ग का पूजन करना चाहिए। फिर भूपुर के बाहर आठों दिशाओं में आठ नागों का पूजन करना चाहिए। इस रीति से सात आवरण सहित पूजन करना चाहिए।

शेष, तक्षक, अनन्त, वासुकि, शंखपाल, महापद्म, कम्बल एवं कर्कोटक—ये आठ नाग होते हैं। शेष आदि इन नागों का वर्णन क्रमशः श्वेत, नील, कुंकुम जैसा, पीला, काला एवं उज्ज्वल होता है। अब उनकी जाति तथा फनों की संख्या को बतलाता हूँ : पूजन में शेष आदि नागों को क्रमशः ब्राह्मण, वैश्य, ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, तथा शूद्र मानना चाहिए। उनके फनों की संख्या क्रमशः १ हजार, ५ सौ, १ हजार, ७ सौ, ७ सौ, ५ सौ, ३० तथा ३० बतलायी गयी है।

टिप्पणी : आवरणपूजा विधि : सर्वप्रथम कर्णिका में मूल मन्त्र से भगवान् रुद्र का पूजन कर दिशाओं में तथा मध्य में निम्नलिखित मन्त्रों से सद्योजात आदि का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ सद्योजाताय नमः। ॐ वामदेवाय नमः। ॐ अघोराय नमः। ॐ तत्पुरुषाय नमः। ॐ ईशानाय नमः।

इसके बाद अष्टदल में पूर्व आदि दिशाओं में निम्नलिखित मन्त्रों से नन्दी आदि ८ सेवकों का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ नन्दिने नमः। ॐ महाकालाय नमः। ॐ गणेशाय नमः। ॐ वृषभाय नमः। ॐ भृङ्गिरीटिने नमः। ॐ स्कन्दाय नमः। ॐ उमायै नमः। ॐ चण्डेश्वराय नमः।

तत्पश्चात् द्वितीय आवरण में षोडशदल पद्म में निम्नलिखित मन्त्रों से अनन्त आदि १६ देवताओं का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ अनन्ताय नमः। ॐ सूक्ष्माय नमः। ॐ शिवाय नमः। ॐ एकपादाय नमः। ॐ एकरुद्राय नमः। ॐ त्रिमूर्तये नमः। ॐ श्रीकण्ठाय नमः। ॐ वामदेवाय नमः। ॐ ज्येष्ठाय नमः। ॐ श्रेष्ठाय नमः। ॐ रुद्राय नमः। ॐ कालाय नमः। ॐ कल-विकरणाय नमः। ॐ बलाय नमः। ॐ बल विकरणाय नमः। ॐ बल प्रमथनाय नमः।

तदनन्तर तृतीय आवरण मे चतुर्विंशति दल में पूर्व आदि अनुलोम क्रम से नाम मन्त्रों से अणिमा आदि ८ सिद्धियों, ब्राह्मी आदि ८ मातृकाओं तथा ८ भैरवों का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ अणिमायै नमः। ॐ महिमायै नमः। ॐ लघिमायै नमः। ॐ गरिमायै नमः। ॐ प्राप्त्यै नमः। ॐ प्राकाम्यायै नमः। ॐ ईशितायै नमः। ॐ वशितायै नमः। ॐ ब्राह्म्यै नमः। ॐ माहेश्वर्यै नमः। ॐ कौमार्यै नमः। ॐ वैष्णव्यै नमः। ॐ वाराह्यै नमः। ॐ इन्द्राण्यै नमः। ॐ चामुण्डायै नमः। ॐ चण्डिकायै नमः। ॐ असितांग भैरवाय नमः। ॐ रुरु भैरवाय नमः। ॐ चण्ड भैरवाय नमः। ॐ क्रोध भैरवाय नमः। ॐ उन्मत्त भैरवाय नमः। ॐ काल भैरवाय नमः। ॐ भीषण भैरवाय नमः। ॐ संहार भैरवाय नमः।

फिर चतुर्थ आवरण में द्वात्रिंशत्दल में नाम मन्त्रों से भव आदि ८ शिवों का, अनन्त आदि ८ नागों का, वैन्य आदि ८ नृपों का तथा हिमवान् आदि ८ पर्वतों का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ भवाय नमः। ॐ शर्वाय नमः। ॐ ईशानाय नमः। ॐ पशुपतये नमः। ॐ रुद्राय नमः। ॐ उग्राय नमः। ॐ भीमाय नमः। ॐ महादेवाय नमः। ॐ अनन्ताय

नमः। ॐ वासुकये नमः। ॐ तक्षाय नमः। ॐ कुलीरकाय नमः। ॐ कर्कोटकाय नमः। ॐ शंखपालाय नमः। ॐ कम्बलाय नमः। ॐ अश्वतराय नमः। ॐ वैन्याय नमः। ॐ पृथवे नमः। ॐ हैहयाय नमः। ॐ अर्जुनाय नमः। ॐ शाकुन्तलाय नमः। ॐ भरताय नमः। ॐ नलाय नमः। ॐ रामाय नमः। ॐ हिमवते नमः। ॐ निषधाय नमः। ॐ विन्ध्याय नमः। ॐ माल्यवते नमः। ॐ पारियात्राय नमः। ॐ मलयाचलाय नमः। ॐ हेमकूटाय नमः। ॐ गन्धमादनाय नमः।

तत्पश्चात् पञ्चम आवरण में चत्वारिंशद्दल में ८ दिक्पाल, उनकी ८ शक्तियों, उनके ८ आयुध, ८ वाहन एवं ८ दिग्गज—इस प्रकार कुल ४० देवताओं का उनके नाम मन्त्रों से पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ इन्द्राय नमः। ॐ अग्नये नमः। ॐ यमाय नमः। ॐ निर्ऋतये नमः। ॐ वरुणाय नमः। ॐ वायवे नमः। ॐ कुबेराय नमः। ॐ ईशानाय नमः। ॐ शच्यै नमः। ॐ स्वाहायै नमः। ॐ वराहजायै नमः। ॐ खड्गन्यै नमः। ॐ वारुण्यै नमः। ॐ वायव्यै नमः। ॐ कुबेरजायै नमः। ॐ ईशान्यै नमः। ॐ वज्राय नमः। ॐ शक्तये नमः। ॐ दण्डाय नमः। ॐ खड्गाय नमः। ॐ पाशाय नमः। ॐ अंकुशाय नमः। ॐ गदायै नमः। ॐ शूलाय नमः। ॐ ऐरावताय नमः। ॐ अजाय नमः। ॐ महिषाय नमः। ॐ प्रेताय नमः। ॐ मीनाय नमः। ॐ पृषदे नमः। ॐ नराय नमः। ॐ वृषभाय नमः। ॐ ऐरावताय नमः। ॐ पुण्डरीकाय नमः। ॐ वामनाय नमः। ॐ कुमुदाय नमः। ॐ अञ्जनाय नमः। ॐ पुष्पदन्ताय नमः। ॐ सार्वभौमाय नमः। ॐ सुप्रतीकाय नमः।

षष्ठ आवरण में भूपुर में पूर्व आदि दिशाओं में निम्नलिखित मन्त्रों से इन्द्र आदि दिक्पालों का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ लं इन्द्राय नमः। ॐ रं अग्नये नमः। ॐ मं यमाय नमः। ॐ क्षं निर्ऋतये नमः। ॐ वं वरुणाय नमः। ॐ यं वायवे नमः। ॐ सं सोमाय नमः। ॐ हं ईशानाय नमः। ॐ आं ब्रह्मणे नमः। ॐ ह्रीं अनन्ताय नमः।

फिर सप्तम आवरण में भूपुर के आग्नेय आदि कोणों में निम्नलिखित मन्त्रों से विरूपाक्ष आदि का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ विरूपाक्षाय नमः – आग्नेये। ॐ विश्वरूपाय नमः – नैर्ऋत्ये। ॐ पशुपतये नमः – वायव्ये। ॐ ऊर्ध्वलिङ्गाय नमः – ईशान्ये।

तत्पश्चात् भूपुर के बाहर पूर्व आदि ८ दिशाओं में निम्नलिखित मन्त्रों से शेष आदि ८ नागों का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ श्वेताय विप्रवर्णाय सहस्रफणाय शेषाय नमः। ॐ नीलाय वैश्यवर्णाय पञ्चशत-

फणाय तक्षकाय नमः । ॐ कुंकुमाभाय विप्रवर्णाय सहस्रफणाय अनन्ताय नमः । ॐ पीताय क्षत्रियवर्णाय सप्तशतफणाय वासुकये नमः । ॐ कृष्णाय वैश्यवर्णाय सप्तशतफणाय शंखपालाय नमः । ॐ उज्ज्वलाय शूद्रवर्णाय पञ्चशतफणाय महापद्माय नमः । ॐ उज्ज्वलाय शूद्रवर्णाय त्रिंशद्फणाय कंबलाय नमः । ॐ उज्ज्वलाय शूद्रवर्णाय त्रिंशद्फणाय कर्कोटकाय नमः ।

इस रीति से ७ आवरणों के साथ भगवान् रुद्र का पूजन करने के बाद धूप, दीप, नैवेद्य आदि उपचारों से उनका विधिवत पूजन करना चाहिए ।

एवमर्चन्महादेवं पञ्चांगन्यासपूर्वकम् ।
दशाक्षरजपासक्तो नसीदेत्स्वेष्टसाधने ॥ १०२ ॥
मनोहराणि गेहानि सुन्दर्य्यो वानलोचनाः ।
धनमिच्छापूरणान्तं लभतेशिवसेवनात् ॥ १०३ ॥

फल : इस प्रकार पञ्चाङ्गन्यास करके महादेव जी का पूजन करते हुए दशाक्षर मन्त्र का जप करने वाला साधक अपने अभीष्ट की सिद्धि में कष्ट नहीं पाता । वह भगवान् शिव की आराधना से सुन्दर मकान, लावण्यवती स्त्री तथा यथेच्छ धन प्राप्त करता है ।

प्रयोगान्पूर्वमन्त्रोक्तान्कुर्वीतात्र दशाक्षरे ।
दशाक्षरं भजन्विप्रोरुद्रजापी भवेत्सदा ॥ १०४ ॥

काम्य प्रयोग : इस दशाक्षर मन्त्र से भी पूर्वोक्त महामृत्युञ्जय मन्त्र द्वारा बतलाये गये काम्य प्रयोग करने चाहिए । इस दशाक्षर मन्त्र का भजन करता हुआ विप्र सदैव रुद्रजापी हो जाता है ।

अथ मन्त्रं कुबेरस्य वक्ष्ये सर्वसमृद्धिदम् ।
यक्षायपदमुच्चार्य कुबेरायपदाच्च वै ॥ १०५ ॥
श्रवणायधनाणन्ते धान्याधिपतयेधनम् ।
धान्यशब्दात्समृद्धि मेदेहिदापयठद्वयम् ॥ १०६ ॥
बाणरामाक्षरो मन्त्रो विश्रवामुनिरस्य तु ।
छन्दस्तुबृहती देवःशिवमित्रं धनेश्वरः ॥ १०७ ॥

कुबेर मन्त्र का उद्धार : अब सब प्रकार की समृद्धि देने वाले कुबेर के मन्त्र को बतलाता हूँ--

---

एवमिति । इत्थंपञ्चांगन्यासंकृत्वा ॥ १०२-१०४ ॥ कुबेरमन्त्रमाह । यक्षायेति । यथा-यक्षायकुबेरायवैश्रवणायधनधान्याधिपतयेधनधान्यसमृद्धिमेदेहिदापयस्वा हेति । बाणरामाऽक्षरःपंचत्रिंशदर्णः ॥ १०५-१०७ ॥

'यक्षाय' पद बोलकर 'कुबेराय' पद फिर 'वैश्रवणाय धन' 'धान्याधिपतये' एवं 'धन धान्य' शब्द के बाद 'समृद्धि मे देहि दापय' तथा अन्त में ठद्वय (स्वाहा) बोलने से यह ३५ अक्षर का कुबेर मन्त्र बनता है।

इस मन्त्र के विश्रवा ऋषि हैं, वृहती छन्द है तथा शिव के मित्र कुबेर देवता हैं।

टिप्पणी : कुबेर का मन्त्र : यक्षाय कुबेराय वैश्रवणाय धन धान्याधिपतये धन धान्य समृद्धि मे देहि दापय स्वाहा।

विनियोग : अस्य श्री कुबेर मन्त्रस्य विश्रवा ऋषिः बृहती छन्दः, शिवमित्रं धनेश्वरो देवता ममाभीष्टसिद्धयर्थे जपे विनियोगः।

त्रिचतुःपञ्चवस्वष्टमुनिवर्णैर्मनूद्भवैः।
कृत्वा षडंगं धनदं चिन्तयेदलकागतम् ॥ १०८ ॥

षडङ्गन्यास : मन्त्र के ३, ४, ५, ८, ८ एवं ७ वर्णों से षडङ्गन्यास करके अलकापुरी में विराजमान कुबेर का ध्यान करना चाहिए।

टिप्पणी : न्यासविधि : यक्षाय हृदयाय नमः। कुबेराय शिरसे स्वाहा। वैश्रवणाय शिखायै वषट्। धनधान्याधिपतये कवचाय हुम्। धनधान्य समृद्धि मे नेत्रत्रयाय वौषट्। देहि दापय स्वाहा अस्त्राय फट्।

मनुजवाह्यविमानवरस्थितं गरुडरत्ननिभं निधिनायकम्।
शिवसखं मुकुटादिविभूषितं वरगदेदधतं भज तुन्दिलम् ॥ १०९ ॥

ध्यान : श्रेष्ठ विमान पर विराजमान, गारुडमणि जैसी आभावाले, मुकुट आदि से अलंकृत, दोनों हाथों में क्रमशः वर एवं गदा धारण करने वाले, तुन्दिल शरीर वाले शिव के मित्र निधीश्वर कुबेर का ध्यान करता हूँ।

लक्षमेकं जपेन्मन्त्रं दशांशं जुहुयात्तिलैः।
धर्मादिपीठे प्रयजेदंगलोकपहेतयः ॥ ११० ॥

जप संख्या, हवन एवं पूजन : इस मन्त्र का १ लाख जप करना चाहिए। तिलों से दशांश होम करना चाहिए, तथा धर्म आदि वाले पूर्वोक्त पीठ पर षडङ्गमन्त्र, दिक्पाल एवं उनके आयुधों के साथ इनका पूजन करना चाहिए।

शिवालये जपेन्मन्त्रमयुतं धनवृद्धये।
बिल्वमूलोपविष्टेन जप्तो लक्षं धनर्द्धिदं ॥ १११ ॥

षडंगमाह। त्रीति यक्षायहृदयायनमइत्यादि० ॥ १०८ ॥ ध्यानमाह। मनुजेति। गरुडरत्नंगारुडमणिः। वरगदेदत्तवामयोः ॥ १०९ ॥ धर्मादयःपीठशक्तय उक्ताः ॥ ११०–१११ ॥

काम्य प्रयोग : धन की वृद्धि के लिए शिव मन्दिर में इस मन्त्र का १० हजार जप करना चाहिए। बिल्व वृक्ष के नीचे बैठकर इसका १ लाख जप करने से धन की समृद्धि होती है।

आदौ तारपुढालक्ष्मीस्ततो मायापुटारमा।
ततःकामपुटासैवङ्तोवित्तेश्वरोनमः॥ ११२॥
षोडशाक्षरमन्त्रोयं सर्वदारिद्र्यनाशनः।
त्रिनेत्रनयनद्वीषुयुग्माणैरंगकंमनोः।
ध्यानार्चनादिकं सर्वमस्य पूर्ववदाचरेत्॥ ११३॥

कुबेर का अन्य मन्त्र : सर्वप्रथम प्रणव पुटित लक्ष्मी (ॐ श्रीं ॐ) फिर माया बीज से पुटित रमा (ह्रीं श्रीं ह्रीं) तत्पश्चात् कामबीज से पुटित लक्ष्मी (क्लीं श्रीं क्लीं) फिर चतुर्थ्यन्त वित्तेश्वर (वित्तेश्वराय) और अन्त में 'नमः' लगाने से यह दरिद्रता नाशक १६ अक्षर वाला कुबेर मन्त्र बनता है।

मन्त्र के ३, २, २, २, ५ एवं २ वर्णों से षडङ्गन्यास करना चाहिए।

इस मन्त्र के ध्यान एवं पूजन आदि की समस्त विधि पूर्वोक्त मन्त्र के समान है।

टिप्पणी : *कुबेर का मन्त्र* : ॐ श्रीं ॐ ह्रीं श्रीं ह्रीं क्लीं श्रीं क्लीं वित्तेश्वराय नमः।

विनियोग : अस्य श्री कुबेर मन्त्रस्य विश्रवा ऋषिः बृहती छन्दः शिवमित्रं धनेश्वरो देवता ममाभीष्टसिद्धये जपे विनियोगः।

षडङ्गन्यास : ॐ श्रीं ॐ हृदयाय नमः। ह्रीं श्रीं शिरसे स्वाहा। ह्रीं क्लीं शिखायै वषट्। श्रीं क्लीं कवचाय हुम्। वित्तेश्वराय नेत्रत्रयाय वौषट्। नमः अस्त्राय फट्।

ध्यान :

मनुज वाह्य विमान वर स्थितं,
गरुडरत्न निभं निधिनायकम्।
शिवसखं मुकुटादि विभूषितं,
वरगदे दधतं भज तुन्दिलम्॥

अथ शम्भोःशिरस्थायादेवसिन्धोर्मनून्ब्रुवे।
प्रणवो हृदयं ङेंतेशिवानारायणीपदे।
तद्वद्दशहरागंगेवह्निजायानखाक्षरः॥ ११४॥

मन्त्रांतरमाह। आदाविति। सैवरमैव। यथा—ॐश्रींॐह्रींश्रींह्रींक्लींश्रींक्लींवित्तेश्वरायनमइति॥ ११२॥ षडंगमाह। त्रीति। ॐश्रींॐहृत् ह्रींश्रींशिरइत्यादि०॥ ११३॥ गंगामन्त्रमाह। प्रणवइति। शिवानारायणीतिपदद्वयंङेंतम्। दशहरागंगेतिपदद्वयमपि चतुर्थ्यन्तम्। वह्निजायास्वाहा। यथा-ॐनमः शिवायैनारायण्यैदशहरा यैगंगायैस्वाहेति नखाक्षरोविंशत्यर्णः॥ ११४॥ ११५॥

गंगा मन्त्र का उद्धार : अब भगवान् शिव के मस्तक पर विराजमान गंगा के मन्त्रों को बतलाता हूँ :

सर्वप्रथम प्रणव फिर हृदय (नमः) फिर चतुर्थ्यन्त शिवा एवं नारायणी (शिवायै नारायण्यै) इसके बाद चतुर्थ्यन्त दशहरा एवं गंगा (दशहरायै गंगायै) और अन्त में वह्निजाया (स्वाहा) लगाने से यह २० अक्षर का मन्त्र बनता है।

टिप्पणी : गंगा का मन्त्र : ॐ नमः शिवायै नारायण्यै दशहरायै गंगायै स्वाहा।

मनुर्व्यासोमुनिश्छन्दः कृतिर्गङ्गास्य देवता।
त्रिवह्निवेदबाणाग्निनेत्रवर्णैःषडङ्गकम् ॥ ११५ ॥

विनियोग एवं न्यास : इस मन्त्र के व्यास ऋषि हैं, कृति छन्द है तथा गंगा देवता है।

मन्त्र के क्रमशः ३, ३, ४, ५, ३ एवं २ वर्णों से षडङ्गन्यास करना चाहिए।

टिप्पणी : विनियोग : अस्य श्री गंगामन्त्रस्य वेदव्यास ऋषिः, कृतिश्छन्दः गंगा देवता, ममाभीष्टसिद्धये जपे विनियोगः।

षडङ्गन्यास : ॐ नमः हृदयाय नमः। शिवायै शिरसे स्वाहा। नारायण्यै शिखायै वषट्। दशहरायै कवचाय हुम्। गंगायै नेत्रत्राय वौषट्। स्वाहा अस्त्राय फट्।

उत्फुल्लामलपुण्डरीकरुचिरा कृष्णेशविन्ध्यात्मिका
कुंभेष्टाभयतोयजानिदधती श्वेताम्बरालंकृता।
हृष्टास्या शशिशेखराखिलनदीशोणादिभिः सेविता
ध्येया पापनिवाशिनी मकरगा भागीरथी साधकैः ॥११६॥

ध्यान : खिले हुए कमल जैसी आभा वाली, चारों हाथों में क्रमशः कुम्भ, वर, अभय एवं कमल धारण करने वाली, श्वेत वस्त्रों से अलंकृत, प्रसन्नवदना, मस्तक पर चन्द्रकला से सुशोभित, मकर पर विराजमान, समस्त नदियों द्वारा आराधित, पापों को नष्ट करने वाली भगवती भागीरथी का साधकों को ध्यान करना चाहिए।

लक्षं जपेद्दशांशेन जुहुयात्सघृतैस्तिलैः।
जयादिशक्तिभिर्युक्ते पीठे भागीरथीं यजेत् ॥११७॥
प्रयजेत्केसरेष्वंगं दले रुद्रं हरिं विधिम्।
सूर्य्यं हिमाचलं मेनां भगीरथमपांपतिम् ॥११८॥

ध्यानमाह। उत्फुल्लेति। इष्टोवरः। वरपद्मे दक्षयोः। कुम्भाभयेवामयोः। मकरगामकरवाहना ॥ ११६ ॥ जयादयः शक्तयउक्ताः ॥ ११७–१२२ ॥

दलाग्रतो मीनकूर्ममण्डूकमकरानपि ।
हंसान्कारण्डवांश्चक्रवाकान्सारसकान्यजेत् ॥११६॥
चतरस्रे शक्रमुख्यानायुधैः संयुतान्यजेत् ।
एवं संसाधितो मन्त्रोभीष्टं यच्छति मन्त्रिणाम् ॥१२०॥

जप संख्या, हवन एवं पूजन : इस मन्त्र का १ लाख जप करना चाहिए, तथा तिलों से दशांश होम करना चाहिए।

जया आदि पीठशक्तियों वाले पीठ पर भागीरथी का पूजन करना चाहिए। केसरों में अंगपूजा तथा अष्टदल में रुद्र, हरि, ब्रह्मा, सूर्य, हिमालय, मेना, भगीरथ एवं सागर का पूजन करना चाहिए। दलों के अग्र भाग पर मीन, कूर्म, मण्डूक, मकर, हंस, कारंडव, चक्रवाक एवं सारसों का पूजन करना चाहिए। भूपुर में इन्द्र आदि दिक्पालों का उनके आयुधों के साथ पूजन करना चाहिए। इस प्रकार से उपासित मन्त्र साधकों को अभीष्ट फल देता है।

टिप्पणी : पूजन यन्त्र : वृत्ताकार कर्णिका, अष्टदल एवं भूपुर सहित बने यन्त्र (देखिये चित्र ४२) पर भगवतो भागीरथी का पूजन करना चाहिए।

पीठपूजा विधि : सर्वप्रथम श्लोक संख्या ११६ में वर्णित भगवतो भागीरथी के स्वरूप का ध्यान कर मानसोपचार से पूजन कर सामान्य अर्घ्य स्थापित कर निम्नलिखित मन्त्रों से निर्दिष्ट स्थानों पर पीठ देवताओं का पूजन करना चाहिए, यथा :

पीठ मध्ये—ॐ आधार शक्तये नमः। ॐ प्रकृतये नमः। ॐ कूर्माय नमः। ॐ शेषाय नमः। ॐ पृथिव्यै नमः। ॐ क्षीरसमुद्राय नमः। ॐ श्वेतद्वीपाय नमः। ॐ मणिमण्डपाय नमः। ॐ कल्पवृक्षाय नमः। ॐ मणिवेदिकायै नमः। ॐ रत्नसिंहासनाय नमः।

तदनन्तर आग्नेय आदि चारों कोणों में धर्म आदि का तथा पूर्व आदि चारों दिशाओं में अधर्म आदि का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ धर्माय नमः—आग्नेये। ॐ ज्ञानाय नमः—नैर्ऋत्ये। ॐ वैराग्याय नमः—वायव्ये। ॐ ऐश्वर्याय नमः—ईशान्ये। ॐ अधर्माय नमः—पूर्वे। ॐ अज्ञानाय नमः—दक्षिणे। ॐ अवैराग्याय नमः—पश्चिमे। ॐ अनैश्वर्याय नमः—उत्तरे।

इसके बाद पुनः पीठ के मध्य में निम्नलिखित मन्त्रों से अनन्त आदि देवताओं का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ अनन्ताय नमः। ॐ पद्माय नमः। ॐ अं द्वादश कलात्मने सूर्य मण्डलाय नमः। ॐ उं षोडष कलात्मने सोम मण्डलाय नमः। ॐ रं दश कलात्मने वह्नि मण्डलाय नमः।

ॐ सं सत्त्वाय नमः। ॐ रं रजसे नमः। ॐ तं तमसे नमः। ॐ आं आत्मने नमः। ॐ अं अन्तरात्मने नमः। ॐ पं परमात्मने नमः। ॐ ह्रीं ज्ञानात्मने नमः।

और फिर केसरों में पूर्व आदि ८ दिशाओं में तथा मध्य में निम्नलिखित मन्त्रों से जया आदि पीठशक्तियों का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ जयायै नमः–पूर्वे। ॐ विजयायै नमः–आग्नेये। ॐ अजितायै नमः–दक्षिणे। ॐ अपराजितायै नमः–नैऋत्ये। ॐ नित्यायै नमः–पश्चिमे। ॐ विलासिन्यै नमः–वायव्ये। ॐ दोग्ध्र्यै नमः–उत्तरे। ॐ अघोरायै नमः–ईशान्ये। ॐ मङ्गलायै नमः–मध्ये।

तत्पश्चात् श्लोक संख्या ११६ में वर्णित भगवती भागीरथी का ध्यान कर मूलमन्त्र से मूर्ति की कल्पना कर 'सर्वशक्ति कमलासनाय नमः' से आसन देकर सामान्य पूजा पद्धति के क्रम से आवाहन आदि से लेकर पञ्चपुष्पाञ्जलि दान पर्यन्त विधिवत् पूजन कर आवरण पूजा करनी चाहिए, यथा :

आवरण पूजा विधि : सर्वप्रथम केसरों में षडङ्गन्यासोक्त मन्त्रों से आग्नेय आदि चारों कोणों में, मध्य में तथा दिशाओं में अङ्गपूजा करनी चाहिए, यथा :

ॐ नमः हृदयाय नमः–आग्नेये। शिवायै शिरसे स्वाहा–नैऋत्ये। नारायण्यै शिखायै वषट्–वायव्ये। दशहरायै कवचाय हुम्–ईशान्ये। गंगायै नेत्रत्रयाय वौषट्–मध्ये। स्वाहा अस्त्राय फट्–दिक्षु।

तदनन्तर अष्टदल में पूर्व आदि दिशाओं में नाममन्त्रों से रुद्र आदि ८ देवताओं का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ रुद्राय नमः। ॐ हरये नमः। ॐ ब्रह्मणे नमः। ॐ सूर्याय नमः। ॐ हिमाचलाय नमः। ॐ मेनायै नमः। ॐ भगीरथाय नमः। ॐ समुद्राय नमः।

तत्पश्चात् दलों के अग्रभाग पर पूर्व आदि दिशाओं में नाम मन्त्रों से मीन आदि का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ मीनाय नमः। ॐ कूर्माय नमः। ॐ मण्डूकाय नमः। ॐ मकराय नमः। ॐ हंसेभ्यो नमः। ॐ कारण्डवेभ्यो नमः। ॐ चक्रवाकेभ्यो नमः। ॐ सारसेभ्यो नमः।

इसके बाद भूपुर में पूर्व आदि अपनी-अपनी दिशाओं में इन्द्र आदि दिक्पालों का उनके निम्नलिखित मन्त्रों से पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ लं इन्द्राय नमः। ॐ रं अग्नये नमः। ॐ मं यमाय नमः। ॐ क्षं निर्ऋतये नमः। ॐ वं वरुणाय नमः। ॐ यं वायवे नमः। ॐ सं सोमाय नमः। ॐ हं ईशानाय नमः। ॐ आं ब्रह्मणे नमः। ॐ ह्रीं अनन्ताय नमः।

और फिर भूपुर में इन्द्र आदि दिक्पालों के पास निम्नलिखित मन्त्रों से वज्र आदि आयुधों का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ वं वज्राय नमः । ॐ शं शक्तये नमः । ॐ दं दण्डाय नमः । ॐ खं खड्गाय नमः । ॐ पां पाशाय नमः । ॐ अं अंकुशाय नमः । ॐ गं गदायै नमः ॐ शूं शूलाय नमः । ॐ पं पद्माय नमः । ॐ चं चक्राय नमः ।

इस रीति से आवरण पूजा करने के बाद धूप, दीप एवं नैवेद्य आदि उपचारों से विधिवत भगवती भागीरथी का पूजन करना चाहिए ।

ज्येष्ठशुक्लदशम्यां तांविशेषेण भजेद्बुधः ।
दद्याद्दशभ्यो विप्रेभ्यो दशप्रस्थमितांस्तिलान् ॥१२१॥
जप्त्वा सहस्रं हुत्वाचोपोष्य तत्रविकल्मषः ।
सर्वभोगसमायुक्तो जायते मानवो भुवि ॥१२२॥

दशहरा की महिमा : विद्वान् साधक ज्येष्ठ शुक्ला दशमी (दशहरा) को विशेषरूप से भगवती गंगा की उपासना करे । इस दिन १० ब्राह्मणों को १० प्रस्थ तिलों का दान करे ।

(इस दिन) १० हजार मन्त्र का जप कर १ हजार हवन कर तथा उपवास करने से मनुष्य पापरहित होकर संसार के सभी भोग प्राप्त करता है ।

तारोनमोभगवतिवाक्सदृग्गगनं हिलि ।
क्रियातन्द्रीपिनाकीशविषलाःसूक्ष्मसंयुताः ॥१२३॥
गङ्गेमांपावयद्वन्द्वमन्ते हुतवहाङ्गना ।
गिरिनेत्राक्षरीविद्या स्मृता पातकसंघहृत् ॥१२४॥
रामवेदाङ्गवह्न्यंकनेत्रार्णैरङ्गमीरितम् ।

गंगा के अन्य मन्त्रों का उद्धार : तार (ॐ) 'नमो भगवति' फिर वाक् (ऐं) सदृक् गगन एवं क्रिया (हिलि) फिर 'हिलि' तत्पश्चात् सूक्ष्म सहित तन्द्री, पिनाकीश, विष एवं ल (मिलिमिलि) फिर 'गंगे मां' तथा २ बार 'पावय' (पावय पावय) और अन्त में हुतवहाङ्गना (स्वाहा) लगाने से यह पातक संघों को नष्ट करने वाला २७ अक्षर का मन्त्र बनता है ।

मन्त्र के ३, ४, ६, ३, ९ एवं २ वर्णों से षडङ्गन्यास करना चाहिए ।

मन्त्रान्तरमाह । तारइति । वाक्ऐं । गगनहः सदृक्इयुतःहि । क्रियालः । तन्द्री मः । पिनाकीशो लः । विषं मः । लःस्वरूपं । एतेसूक्ष्मसन्ता इयुताः । तेनहिलिहिलिमिलिमिलि । हुतवहांगनास्वाहा । गिरिनेत्राक्षरीसप्तविंशत्यर्णा । यथा–ॐनमोभगवतिऐंहिलि २ मिलि २ गंगेमां पावय २ स्वाहेति ॥ १२३-१२४ ॥

टिप्पणी : गंगा मन्त्र : ॐ नमो भगवति ऐं हिलिहिलि मिलिमिलि गंगे मां पावय पावय स्वाहा ।

षडङ्गन्यास : ॐ नमो हृदयाय नमः । भगवति शिरसे स्वाहा । ऐंहिलि हिलिमि शिखायै वषट् । लिमिलि कवचाय हुम् । गंगे मां पावय पावय नेत्रत्रयाय वौषट् । स्वाहा अस्त्राय फट् ।

इयमादिमसप्तार्णत्यक्तोक्तानखराक्षरी ॥१२५॥
बाणवेदाग्निरामाग्निनेत्रार्णैरङ्गमीरितम् ।

इस मन्त्र के प्रारम्भ के ७ वर्णों को निकालने से २० अक्षर का गंगा का मन्त्र बनता है ।

इस मन्त्र के ५, ४, ३, ३, ३ एवं २ वर्णों से षडङ्गन्यास करना चाहिए ।

टिप्पणी : गंगा का मन्त्र : ऐं हिलि हिलि मिलि मिलि गंगे मां पावय पावय स्वाहा ।

षडङ्गन्यास : ऐं हिलिहिलि हृदयाय नमः । मिलिमिलि शिरसे स्वाहा । गंगे मां शिखायै वषट् । पावय कवचाय हुम् । पावय नेत्रत्रयाय वौषट् । स्वाहा अस्त्राय फट् ।

तारोहिलिमिलिद्वन्द्वेगङ्गेदेवि नमोमनुः ॥१२६॥
तिथिवर्णो यमस्याग्निनेत्राक्ष्यक्षियुगाक्षिभिः ।

तार (ॐ) २ बार 'हिलि' (हिलि हिलि) २ बार 'मिलि' (मिलि मिलि) फिर 'गंगे देवि नमः' यह १५ अक्षर का गंगा का मन्त्र है ।

इस मन्त्र के ३, २, २, २, ४ एवं २ वर्णों से षडङ्गन्यास करना चाहिए ।

टिप्पणी : गंगा का मन्त्र : ॐ हिलि हिलि मिलि मिलि गंगे देवि नमः ।

षडङ्गन्यास : ॐ हिलि हृदयाय नमः । हिलि शिरसे स्वाहा । मिलि शिखायै वषट् । मिलि कवचाय हुम् । गंगे देवि नेत्रत्रयाय वौषट् । नमः अस्त्राय फट् ।

तारोमायारमाहार्दं ततो भगवतीति च ॥१२७॥
गंङ्मृत्ये त्रिसप्तवायुस्तेनमोवर्मफड्मनुः ।

षडंगमाह । रामेति । अंकानव । इयमेवविद्या । आदिमाःप्रथमेयेसप्तार्णाः ॐ नमोभगवतीतिताद्धीनानखराक्षरीविंशतिवर्णा ॥ १२५ ॥ मन्त्रान्तरमाह । तारइति । ॐ हिलि २ मिलि २ गंगेदेविनमइति ॥ १२६ ॥ तिथिवर्णःपञ्चदशार्णः । षडंगमाह । अग्नीति । मन्त्रान्तरमाह । तारइति । तारॐ । मायाह्रीं । रमाश्रीं । हार्दंनमः ॥ १२७ ॥

त्रिनेत्रवेदपञ्चाक्षियुग्मार्णैरङ्गमीरितम् ॥१२८॥
एषां चतुर्णां मन्त्राणामुपास्तिःपूर्ववन्मता ।

गंगा का अन्य मन्त्र : तार (ॐ) माया (ह्रीं) रमा (श्रीं) हार्द (नमः) फिर 'भगवति' 'गं' स्मृति (ग), अत्रि (द) सद्गुवायु (यि) और 'ते' फिर 'नमो' वर्म (हुं) तथा अन्त में 'फट्' लगाने से यह १८ अक्षर का मन्त्र बनता है ।

इस मन्त्र के क्रमशः ३, २, ४, ५, २ एवं २ वर्णों से षडङ्गन्यास बतलाया गया है ।

इन चारों मन्त्रों की साधना पूर्वोक्त २२ अक्षर वाले मन्त्र के समान है (देखिये श्लो० ११७–२० की टिप्पणी) ।

टिप्पणी : गंगा का मंत्र : ॐ ह्रीं श्रीं नमो भगवति गंगदयिते नमो हुं फट् ।

षडङ्गन्यास : ॐ ह्रीं श्रीं हृदयाय नमः । नमो शिरसे स्वाहा । भगवति शिखायै वषट । गंगादयिते कवचाय हुम् । नमो नेत्रत्रयाय वौषट् । हुं फट् अस्त्राय फट ।

वाङ्मायाकमलाकामवेदाद्यो विषमिन्दुयुक् ॥१२९॥
मणिकर्णिभगीब्रह्मा हृदयंध्रुवसंपुटः ।
मन्त्रःपञ्चदशार्णोऽस्यमुनिर्व्यासोतिशक्वरी ॥१३०॥
छन्दःश्रीमणिकर्णी तु देवता सुखपुत्रदा ।
चन्द्रनेत्राक्षिनेत्रैषुवह्निवर्णैःषडङ्गकम् ॥१३१॥

मणिकर्णिका मन्त्र का उद्धार : वाग् (ऐं), माया (ह्रीं) कमला (श्रीं) काम (क्लीं) तथा वेदाद्य (ॐ) फिर इन्दुयुत विष (मं) 'मणिकर्णि' भगीब्रह्मा (के) तथा हृदय (नमः) इसे प्रणव से सम्पुटित करने पर यह १५ अक्षर वाला मणिकर्णिका का मन्त्र बनता है ।

इस मन्त्र के वेदव्यास ऋषि हैं, अतिशक्वरी छन्द है तथा सुख एवं पुत्र देने वाली श्री मणिकर्णिका देवता है ।

मन्त्र के क्रमशः १, २, २, २, ५ एवं ३ वर्णों से षडङ्गन्यास करना चाहिए ।

टिप्पणी : मणिकर्णिका का मन्त्र : ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ॐ मं मणिकर्णिके नमः ॐ ।

स्मृतगः । अत्रिदः । सद्गवायुः इयुतोयः यि । वमहुं । स्वरूपमन्यत् । यथा–ॐह्रींश्रीं-नमोभगवति गगदयितेनमोहुंफट्इति अष्टादशार्णः । षडंगमाह ॥ त्रीति ॥ १२८ ॥ उपास्तिःपूजा । पूर्ववद्विंशत्यर्णवत् । मणिकर्णिकामन्त्रमाह । वागिति । वाक्ऐं । मायाह्रीं । कामलाश्रीं । कामःक्लीं । वेदाद्यॐ । इन्दुयुक्विषंसबिन्दुर्मः मं ॥ १२९ । मणिकर्णिस्वरूपम् । भगीब्रह्माक युतःके । हृदयंनमः । ध्रुवसम्पुटआद्यन्तप्रणवयुक्तः ॥ १३० ॥ षडंगमाह । चन्द्रेति । ॐहृत् ऐंह्रींशिरः श्रींक्लींशिखेत्यादि ॥ १३१ ॥

विनियोग : अस्य श्री मणिकर्णिका मन्त्रस्य वेदव्यासऋषिरतिशक्वरी छन्दः. श्री मणिकर्णिका देवता ममाभीष्टसिद्धये जपे विनियोगः ।

षडङ्गन्यास : ॐ हृदयाय नमः । ऐं ह्रीं शिरसे स्वाहा । श्रीं क्लीं शिखायै वषट् । ॐ मं कवचाय हुम् । मणिकर्णिके नेत्रत्रयाय वौषट् । नमः ॐ अस्त्राय फट् ।

फुल्लेन्दीवरनिर्मितां करतले मालामसव्ये करे
बीजापूरफलं सिताम्बुजमयीं मालां दधाना हृदि ।
श्वेतक्षौमवृता शरद्विधुनिभा त्र्यक्षा निबद्धाञ्जलिर्ध्यातव्या
मणिकर्णिका रविसमा तोयेशकाष्ठामुखी ॥ १३२ ॥

ध्यान : लिखे हुए कमलों से बनी माला को दाहिने हाथ में तथा बीजापूर (बिजौरे) को बायें हाथ में धारण करने वाली, श्वेतकमलों की माला को गले में पहिने हुए, श्वेतवस्त्रों से अलंकृत, शरद्कालीन चन्द्रमा जैसी आभा वाली, तीन नेत्र-वाली, सूर्य के समान तेजवाली, पश्चिमाभिमुखी तथा अंजलि बाँधे हुई श्री मणि-कर्णिका देवी का ध्यान करना चाहिए ।

लक्षत्रयंजपेन्मन्त्रं जुहुयात्तद्दशांशतः ।
पुण्डीरकैस्त्रिमध्वक्तैर्यजेत्तां गङ्गयासमम् ॥१३३॥

जनसंख्या, हवन एवं पूजन : इस मन्त्र का ३ लाख जप करना चाहिए । मधुरत्रय (घी, शहद एवं शर्करा) मिश्रित कमल के फूलों से दशांश होम करना चाहिए, तथा गंगा के समान इनका भी पूजन करना चाहिए (देखिये–श्लोक ११७–२० की टिप्पणी) ।

अयं मनुर्जनैर्जप्तो मोक्षलक्ष्मीं प्रयच्छति ।
सुखं समस्तं सन्तानं सौभाग्यं धनसञ्चयम् ॥१३४॥

महिमा : मनुष्यों के द्वारा इस मन्त्र की साधना करने पर यह उन्हें मोक्ष, लक्ष्मी, समस्त सुख, संतान, सौभाग्य एवं अपार धन देता है ।

प्रणवोबिन्दुयुङ्मोंते मण्यन्ते कर्णिकेप्रण ।
वाह्निकेहृदयंमन्त्रो मनुवर्णोस्य पूर्ववत् ॥१३५॥

ध्यानमाह । फुल्लेति । असव्येदक्षकरेइन्दीवरमालां दधतीअपरेवामेबीजपूरम् । शरच्चन्द्रकान्तिः । तेजसारवितुल्या । तोयेशकाष्ठामुखीपश्चिमाभिमुखी ॥ १३२ ॥ पुण्डरीकैः सिताम्भोजैः गंगायासमंयजेत् गंगामन्त्रैरेवावरणपूजांकुर्यात् ॥ १३३ – १३४ ॥ तस्या एव मन्त्रान्तरमाह । प्रणव इति मोबिन्दुयुक् । मं । यथा–मं मणिकर्णिके प्रणवाग्निकेनमः मनुवर्णश्चतुर्दशार्णः । अस्योपासनापञ्चदशार्णावद्विधेया । मणिकर्णिको-पासकःकुदेशेमगधादौमृतोपिब्रह्मवस्यात् ॥ १३५-१३६ ॥ इतिश्रीमन्त्रमञ्जर्याख्यायां-नौकायांशिवादिमन्त्रकथनंनामषोडशस्तरंगः ।

मणिकर्णिका का अन्य मन्त्र : प्रणव विन्दुयुत म (मं) फिर 'मणि' के बाद 'कर्णिके प्रणवात्मिके' और अन्त में हृदय (नमः) लगाने से यह १४ अक्षर का मन्त्र बनता है।

इस मन्त्र की साधना एवं उपासना पूर्वोक्त पंचदशाक्षर मन्त्र के समान है।

टिप्पणी : मणिकर्णिका का मन्त्र : ॐ मं मणिकर्णिके प्रणवात्मिके नमः।

विधेयोपासना सर्वा मणिकर्ण्या उपासकः।
कुदेशेपिमृतो याति ब्रह्मैवामलमव्ययम् ॥१३६॥

मणिकर्णिका की उपासना की उपयोगिता : सभो लोगों को श्री मणिकर्णिका की उपासना करनी चाहिए। इसकी उपासना के प्रभाव से मगध आदि निन्दित प्रदेश में भी मृत्यु होने पर साधक अमल एवं अव्यय ब्रह्मत्व प्राप्त करता है।

इति श्री शुकदेव चतुर्वेदि विरचितायां सटिप्पण्यां मन्त्रमहोदधेः
मोहिनो व्याख्यायां षोडशस्तरङ्गः।

सप्तदश तरङ्ग

अथेष्टदान्मनून्वक्ष्ये कार्तवीर्य्यस्य गोपितान् ।
यःसुदर्शनचक्रस्यावतारःक्षितिमण्डले ॥ १ ॥

शंकराचार्य प्रभृति आचार्यों के द्वारा अप्रकाशित कार्तवीर्यार्जुन के अभीष्ट फल-दायक मन्त्रों को बतलाता हूँ । यह कार्तवीर्यार्जुन भूमण्डल पर सुदर्शन चक्र का अवतार माना जाता है ।

वह्नितारयुतारौद्रीलक्ष्मीरग्नीन्दुशान्तियुक् ।
वेधाधरेन्दुशांत्याढ्यो निद्रार्धीशाग्निबिन्दुयुक् ॥ २ ॥
पाशो मायांकुशंपद्मावर्मास्त्रेकार्तवीपदम् ।
रेफोवाय्वासनोनन्तोवह्निजौ कर्णसंस्थितौ ॥ ३ ॥
मेषःसदीर्घःपवनो मनुरुक्तो हृदन्तिकः ।
ऊनविंशतिवर्णोयं तारादिर्नखवर्णकः ॥ ४ ॥

कार्तवीर्यार्जुन के मन्त्र का उद्धार : वह्नि एवं तार सहित रौद्री (फ्रों), अग्नि इन्दु एवं शान्ति सहित लक्ष्मी (व्रीं), धरा, इन्दु एवं शान्ति सहित वेधा (क्लीं), अर्धीश, अग्नि एवं बिन्दु सहित निद्रा (भ्रूं) फिर क्रमशः पाश (आं) माया (ह्रीं) अंकुश (क्रों) पद्मा (श्रीं) वर्म (हुं) तथा अस्त्र (फट्) फिर 'कार्तवी' वाटवासन अनन्त युत रेफ (र्या), कर्ण सहित वह्निज एवं रेफ (र्जु), सदीर्घ मेष (ना), पवन (य) तथा

अथकार्तवीर्यार्जुनमन्त्रान्वक्तुंप्रतिजानीते । अथेति । गोपितान्यैराचार्यैःशंकराचार्य-प्रभृतिभिरप्रकाशितान् ॥ १ ॥ मन्त्रराजमुद्धरति । वह्नीति । रौद्रीफः । वह्नीरेफः तारओं ताभ्यांयुता । तेनफ्रों । लक्ष्मीःवःअग्नींदुशान्तियुक् व्रबिन्दुईयुता । तेनव्रीं । वेधाः कः धरेन्दुशान्त्याढ्यः लबिन्दुई-युतः । तेनक्लीं । निद्राभः अर्धीशाग्निबिन्दुयुक ऊर बिन्दुयुतः ॥ तेनभ्रूम् ॥ २ ॥ पाशम् । आं । मायाह्रीं । अंकुशं क्रों । पद्माश्रीं वर्महुं । अस्त्रंफट् । कार्तवीस्वरूपम् । वाय्वासनोययुतः अनन्तोयायुतोरेफः । तेनर्या । वह्निजौरेफजकारौ । कर्णसंस्थितौउयुतौ । तेनर्जु ॥ ३ ॥ मेषोनः सदीर्घःना । पवनोयः । हृदन्तिकोनर्मोतोमनुः कथितः । प्रणवादिर्विंशत्यर्णः ॥ ४ ॥

अन्त में हृदय (नमः) लगाने से यह १९ अक्षर वाला कार्तवीर्यार्जुन का मन्त्र बनता है। इस मन्त्र के प्रारम्भ में तार (ॐ) लगाने से यह २० अक्षरवाला मन्त्र हो जाता है।

टिप्पणी : ऊनविंशतिवर्णात्मक मन्त्र : फ्रों व्रीं क्लीं भ्रूं आं ह्रीं क्रों श्रीं हुं फट् कार्तवीर्यार्जुनाय नमः।

विंशतिवर्णात्मक मन्त्र : ॐ फ्रों व्रीं क्लीं भ्रूं आं ह्रीं क्रों श्रीं हुं फट् कार्तवीर्यार्जुनाय नमः।

दत्तात्रेयो मुनिश्चास्य च्छन्दोऽनुष्टुबुदाहृतम्।
कार्तवीर्य्यार्जुनो देवो बीजं शक्तिर्ध्रुवश्चहृत् ॥ ५ ॥

विनियोग : इस मन्त्र के दत्तात्रेय ऋषि हैं, अनुष्टुप् छन्द है, कार्तवीर्यार्जुन देवता है, ध्रुव (ॐ) बीज है तथा हृद (नमः) शक्ति है।

शेषाद्यवीजयुग्मेन हृदयं विन्यसेद्बुधः।
शान्तियुक्तचतुर्थेन कामाढ्येन शिरोऽङ्गकम् ॥ ६ ॥
इन्द्वाढ्यवामकर्णाढ्यमाययार्घीशयुक्तया।
शिखामंकुशपद्माभ्यां सवाग्भ्यांवर्म विन्यसेत् ॥७॥
वर्मास्त्राभ्यामस्त्रमुक्तं शेषार्णैर्व्यापकं चरेत्।

पञ्चाङ्गन्यास : शेष (आ) सहित पहिले दो बीजों (फ्रों व्रीं) से हृदय पर न्यास करना चाहिए। शान्ति (ई) तथा काम बीज सहित चतुर्थ बीज से शिर पर न्यास करना चाहिए। इन्दु, वामकर्ण तथा अर्घीश सहित माया (ह्रीं) से शिखा पर न्यास करना चाहिए। वाक् सहित अंकुश एवं पद्मा (क्रों श्रीं) से कवच पर न्यास करना चाहिए। वर्म एवं अस्त्र (हुं फट्) से अस्त्र पर न्यास करना चाहिए। तथा शेषवर्णों (कार्तवीर्यार्जुनाय नमः) से व्यापक करना चाहिए।

टिप्पणी : न्यासविधि : आ फ्रों व्रीं हृदयाय नमः। ई क्लीं भ्रूं शिरसे स्वाहा। हुं शिखायै वषट्। क्रों श्रें कवचाय हुम्। हुं फट् अस्त्राय फट्।

इन मन्त्रों से पञ्चाङ्ग न्यास कर 'कार्तवीर्यार्जुनाय नमः' से व्यापक न्यास करना चाहिए।

ध्रुवॐ-बीजम्। नमः शक्तिः ॥ ५ ॥ षडङ्गमाह। शेषेति। शेषआ। तद्युतेनाद्यबीजद्वयेनहृत्। आकारयुतत्वादन्यस्वर निवृत्तिः। तेनआफ्रोंव्रीं २ हृदयाययनमः। शान्तीति। ईयुतेनचतुर्थबीजेनकामबीजाढ्येन शिरः। ईक्लींभ्रूंशिरसेस्वाहा ॥ ६ ॥

इन्द्वाढ्येति। सबिन्दुर्वामकर्णऊकारस्तेनआढ्यो यस्या ईदृशा अर्घीशयुक्तयाऊयुतयामाययाशिखाम्। हुं शिखायैवषट। सवाग्भ्यामैंयुताभ्यामंकुशपद्माभ्यांवर्म। क्रैंश्रैंकवचायहुं ॥ ७ ॥

हृदये जठरे नाभौ जठरे गुह्यदेशके ॥ ८ ॥
दक्षपादे वामपादे सक्थिजानुनि जंघयोः ।
विन्यसेद्बीजदशकं प्रणवद्वयमध्यगम् ॥ ९ ॥
ताराद्यान्नवशेषार्णान्मस्तके च ललाटके ।
भ्रुवोःश्रुत्योस्तथैवाक्ष्णोर्नसि वक्त्रे गलेंसके ॥ १० ॥
सर्वमन्त्रेण सर्वाङ्गे कृत्वा व्यापकमद्वयः ।
सर्वेष्टसिद्धये ध्यायेत्कार्तवीर्य्यं जनेश्वरम् ॥ ११ ॥

वर्णन्यास : मन्त्र के १० बीजों का प्रणव से सम्पुटित कर यथाक्रमेण हृदय, जठर, नाभि, जठर, गुप्तांग, दाहिने पैर, बाँये पैर, ऊरु, जानु एवं जंघाओं पर न्यास करना चाहिए । शेष ९ वर्णों के आगे प्रणव लगाकर १–१ वर्ण का क्रमशः मस्तक, ललाट, भौं, कान, नेत्र, नाक, मुख, गला एवं कन्धों पर न्यास करना चाहिए । फिर सम्पूर्ण मन्त्र से सभी अंगों पर व्यापक न्यास करने के बाद अपने सभी अभीष्टों की सिद्धि हेतु राजा कार्तवीर्यार्जुन का ध्यान करना चाहिए ।

टिप्पणी : न्यास विधि : ॐ फ्रों ॐ – हृदये । ॐ व्रीं ॐ – जठरे । ॐ क्लीं ॐ – नाभौ । ॐ भ्रूं ॐ – जठरे । ॐ आं ॐ – गुह्ये । ॐ ह्रीं ॐ – दक्षपादे । ॐ क्रों ॐ – वामपादे । ॐ श्रीं ॐ – ऊर्वो । ॐ हुं ॐ – जानुनोः । ॐ फट् ॐ जंघयोः । ॐ कां – मस्तके । ॐ तं – ललाटे । ॐ वीं – भ्रुवोः । ॐ यां – कर्णयोः । ॐ जुं – नेत्रयोः । ॐ नां – नासिकायाम् । ॐ यं – मुखे । ॐ नं – गले । ॐ मः – स्कन्धे ।

इस प्रकार न्यास करने के बाद 'ॐ फ्रों व्रीं क्लीं भ्रूं आं ह्रीं क्रों श्रीं हुं फट् कार्तवीर्यार्जुनाय नमः' मन्त्र से सब अङ्गों पर व्यापक न्यास करना चाहिए ।

उद्यत्सूर्य्यसहस्रकान्तिरखिलक्षोणीधवैर्वन्दितो
हस्तानां शतपञ्चकेन च दधच्चापानिषूंस्तावता ।
कण्ठे हाटकमालयापरिवृतश्चक्रावतारो हरेः
पायात्स्यंदनगोरुणाभवसनः श्रीकार्तवीर्य्योनृपः ॥ १२ ॥

ध्यान : उदीयमान सूर्य जैसी आभावाले, सब राजाओं से वन्दित, अपने ५–५

वर्माख्याभ्यामस्त्रम् । हुं फट् अस्त्रायफट् शेषार्णैः कार्तवीर्यार्जुनायनमइतिन्यापकम् । वर्णन्यासमाह । हृदयइति । सक्थ्नोरूर्वोर्जानुनोर्जङ्घयोरेकैकमेव प्रणव द्वयान्तःस्थंबीजं-न्यसेत् । ॐफ्रों ॐहृदिॐव्रींॐजठरइत्यादि० ॥ ८ ॥ ९ ॥ ताराद्यानिति । ॐकांमस्तके । ॐतं० ललाटेइत्यादि० ॥ १० ॥ ११ ॥

ध्यानमाह । उद्यदिति । अखिलक्षोणीधवैः सर्वपार्थिवैर्नतः । तावताहस्तशतपञ्चकेने-षूंश्चाणान्दधत् । हाटकमालयास्वर्णस्रजास्यन्दनगोरथस्थितः ॥ १२-१५ ॥

सौ हाथों में धनुष बाण धारण करने वाले, कण्ठ में सोने की माला से सुशोभित, रथ में विराजमान एवं सुदर्शन चक्र के अवतार राजा कार्तवीर्यार्जुन मेरी रक्षा करें।

लक्षमेकं जपेन्मन्त्रं दशांशं जुहुयात्तिलैः।
सतण्डुलैःपायसेन विष्णुपीठे यजेत्ततम् ॥ १३ ॥
वक्ष्यमाणे दशदले वृत्तभूपुरसंयुते।
संपूज्य वैष्णवीः शक्तीस्तत्रावाह्यार्चयेन्नृपम् ॥ १४ ॥

जपसंख्या, हवन एवं पूजन : इस मन्त्र का एक लाख जप करना चाहिए। चावल एवं खीर मिलाकर तिलों से दशांश-होम करना चाहिए, तथा वैष्णव पीठ पर इनका पूजन करना चाहिए।

वृत्ताकार कर्णिका दशदल एवं भूपुर सहित बने वक्ष्यमाण (देखिये-श्लोक सं० २२ की टिप्पणी) यन्त्र पर वैष्णवी शक्तियों का पूजन कर कार्तवीर्यार्जुन का आवाहन कर उनका पूजन करना चाहिए।

टिप्पणी : कार्तवीर्य के पूजन के लिये सामान्यतया षट्कोण कर्णिका, अष्टदल एवं भूपुर सहित बना यन्त्र (देखिये चित्र ४३) प्रशस्त माना गया है।

किन्तु काम्य प्रयोगों में वृत्ताकार कर्णिका, दशदल एवं भूपुर सहित बने यन्त्र पर कार्तवीर्यार्जुन का पूजन किया जाता है। इस यन्त्र के बनाने की विधि आगे श्लोक संख्या २२ में बतलायी गयी है।

पीठ पूजा विधि : सर्वप्रथम श्लोक संख्या १२ में वर्णित कार्तवीर्यार्जुन के स्वरूप का ध्यान कर मानसोपचार से पूजन कर विधिवत अर्घ्यस्थापन कर सामान्य पूजा पद्धति के अनुसार 'ॐ आधार शक्तये नमः' से 'ह्रीं ज्ञानात्मने नमः' तक के मन्त्रों (देखिये तरङ्ग १६ श्लोक २२–२५ की टिप्पणी) से निर्दिष्ट स्थानों में पीठ देवताओं का पूजन करना चाहिए।

इसके बाद केसरों में पूर्व आदि ८ दिशाओं में तथा मध्य में निम्नलिखित मन्त्रों से वैष्णवी पीठ शक्तियों का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ विमलायै नमः – पूर्वे। ॐ उत्कर्षिण्यै नमः – आग्नेये। ॐ ज्ञानायै नमः – दक्षिणे। ॐ क्रियायै नमः – नैऋत्ये। ॐ भोगायै नमः – पश्चिमे। ॐ प्रह्व्यै नमः – वायव्ये। ॐ सत्यायै नमः – उत्तरे। ॐ ईशानायै नमः – ईशान्ये। ॐ अनुग्रहायै नमः – मध्ये।

फिर वैष्णव आसन मन्त्र से आसन देकर मूल मन्त्र से मूर्ति की कल्पना कर ध्यान, आवाहन आदि उपचारों से पञ्च पुष्पाञ्जलि दान पर्यन्त विधिवत कार्तवीर्यार्जुन का पूजन कर आवरण पूजा करनी चाहिए।

मध्येग्नीशासुरमरुत्कोणेषु हृदयादिकान् ।
चतुरङ्गं च संपूज्य सर्वतोस्त्रं ततो यजेत् ॥ १५ ॥
खड्गचर्मधराध्येयाश्चन्द्राभा अङ्गमूर्तयः ।
षट्कोणेषु षडंगानि ततो दिक्षु विदिक्षु च ॥ १६ ॥
चोरमदविभञ्जनं मारीमदविभञ्जनम् ।
अरिमदविभञ्जनं दैत्यमदविभञ्जनम् ॥ १७ ॥
दुःखनाशं दुष्टनाशं दुरितामयनाशकौ ।
दिक्ष्वष्टशक्तयः पूज्याः प्राच्यादिषु सितप्रभाः ॥ १८ ॥
क्षेमंकरी वश्यकरी श्रीकरी च यशस्करी ।
आयुष्करी तथा प्रज्ञाकरी विद्याकरी पुनः ॥ १९ ॥
धनकर्य्यष्टमी पश्चाल्लोकेशा अस्त्रसंयुताः ।
एवं संसाधितो मन्त्रःप्रयोगार्हःप्रजायते ॥ २० ॥

आवरणपूजा : मध्य में आग्नेय, ईशान, नैऋत्य एवं वायव्य कोणों में हृदयादि चार अंगों की पूजा कर फिर चारों ओर 'अस्त्र' का पूजन करना चाहिए। षड्कोण में षडङ्गपूजा करनी चाहिए, तथा ढाल एवं तलवार को धारण करने वाली अंग मूर्तियों का ध्यान करना चाहिए।

तत्पश्चात् दिशाओं एवं विदिशाओं में चोरमदविभंजन, मारीमदविभंजन, अरिमद-विभंजन, दैत्यमदविभंजन, दुखःनाश, दुष्टनाश, दुरितनाश एवं रोगनाश का पूजन करना चाहिए।

फिर पूर्व आदि ८ दिशाओं में श्वेत आभावाली ८ शक्तियों का पूजन करना चाहिए। क्षेमंकरी, वश्यकरी, श्रीकरी, यशस्करी, आयुष्करी, प्रज्ञाकरी, विद्याकरी, तथा धनकरी – ये ८ शक्तियाँ हैं।

फिर आयुधों के साथ दिक्पालों का पूजन करना चाहिए। इस प्रकार साधना करने से यह मन्त्र काम्य प्रयोगों के योग्य हो जाता है।

टिप्पणी : आवरण पूजा विधि : सर्वप्रथम कर्णिका में आग्नेय आदि कोणों में निम्नलिखित मन्त्रों से निर्दिष्ट दिशा में पञ्चांग पूजन करना चाहिए, यथा :

आ फ्रों व्रीं हृदयाय नमः – आग्नेये। ई क्लीं भ्रूं शिरसे स्वाहा – ईशान्ये। हुं शिखायै वषट् – नैऋत्ये। क्रैं श्रैं कवचाय हुम् – वायव्ये। हुंफट् अस्त्राय फट् – सर्वदिक्षु।

---

[1]दिक्षुचारमदविभंजनादींश्चतुरः। विदिक्षुदुःखनाशादीन् ॥ १६ ॥ १७ ॥ [2]दुरितामय-नाशकौ दुरितनाशकोरोगनाशकश्च ॥ १८-२० ॥

इसके बाद षड्कोण में निम्नलिखित मन्त्रों से षडङ्गपूजन करना चाहिए। षडङ्गपूजन करते समय दोनों हाथों में क्रमशः तलवार एवं ढाल धारण करने वाली अंगमूर्तियों का ध्यान करना चाहिए। षडङ्गपूजन के मन्त्र इस प्रकार हैं :

ॐ फ्रां हृदयाय नमः। ॐ फ्रीं शिरसे स्वाहा। ॐ फ्रूं शिखायै वषट्। ॐ फ्रैं कवचाय हुम्। ॐ फ्रौं नेत्रत्रयाय वौषट्। ॐ फ्रः अस्त्राय फट्।

फिर अष्टदल में पूर्व आदि चारों दिशाओं में चोरमदविभंजन आदि का तथा आग्नेय आदि चारों कोणों में दुःखनाश आदि का नाममन्त्रों से पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ चोरमदविमंजनाय नमः – पूर्वे। ॐ मारीमदविमंजनाय नमः – दक्षिणे। ॐ अरिमदविमंजनाय नमः – पश्चिमे। ॐ दैत्यमदविभंजनाय नमः – उत्तरे। ॐ दुःखनाशाय नमः आग्नेये। ॐ दुष्टनाशाय नमः – नैर्ऋत्ये। ॐ दुरितनाशाय नमः – वायव्ये। ॐ रोग नाशाय नमः – ईशान्ये।

तत्पश्चात् पूर्व आदि दिशाओं में दलों के अग्रभाग पर श्वेत आभा वाली क्षेमंकरी आदि ८ शक्तियों का उनके नाम मन्त्रों से पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ क्षेमंकर्यै नमः। ॐ वश्यकर्यै नमः। ॐ श्रीकर्यै नमः। ॐ यशस्कर्यै नमः। ॐ आयुष्कर्यै नमः। ॐ प्रज्ञाकर्यै नमः। ॐ विद्याकर्यै नमः। ॐ धनकर्यै नमः।

तदन्तर भूपुर में अपनी अपनी दिशाओं में इन्द्र आदि लोकपालों का निम्नलिखित मन्त्रों से पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ लं इन्द्राय नमः। ॐ रं अग्नये नमः। ॐ मं यमाय नमः। ॐ क्षं निर्ऋतये नमः। ॐ वं वरुणाय नमः। ॐ यं वायवे नमः। ॐ सं सोमाय नमः। ॐ हं ईशानाय नमः। ॐ आं ब्रह्मणे नमः। ॐ ह्रीं अनन्ताय नमः।

और फिर भूपुर में इन्द्र आदि के बाद निम्नलिखित मन्त्रों से उनके वज्र आदि आयुधों का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ वं वज्राय नमः। ॐ शं शक्तये नमः। ॐ दं दण्डाय नमः। ॐ खं खड्गाय नमः। ॐ पां पाशाय नमः। ॐ अं अंकुशाय नमः। ॐ गं गदायै नमः। ॐ शूं शूलाय नमः। ॐ पं पद्माय नमः। ॐ चं चक्राय नमः।

इस रीति से आवरण पूजा करने के बाद धूप, दीप एवं नैवेद्य आदि उपचारों से विधिवत राजा कार्तवीर्यार्जुन का पूजन करना चाहिए।

कार्तवीर्य्यार्जुनस्याथ पूजार्थं यन्त्रउच्यते ॥ २१ ॥
दिक्पत्रं विलिखेत्स्वबीजमदनश्रुत्यादिवाक्कर्णिकं
वर्मान्तप्रणवादिबीजदशकं शेषार्णपत्रान्तरम् ।
ऊष्माढ्यस्वरकेसरं परिवृतंशेषैःस्वकोणोल्लस-
द्भूतार्णक्षितिमन्दिरावृतमिदं यन्त्रं धराधीशितुः ॥ २२ ॥

काम्य प्रयोगों में पूजन का यन्त्र : अब कार्तवीर्यार्जुन की पूजा के लिए यन्त्र बतलाया जाता है। दश दल बनाकर कर्णिका में अपना बीज, कामबीज, प्रणव एवं वाग्बीज लिखना चाहिए। फिर प्रणव से लेकर वर्मबीज पर्यन्त मूलमन्त्र के १० बीजों को दश दलों पर लिखना चाहिए तथा मन्त्र के शेष १० वर्णों को दलों के बीच में लिखना चाहिए। शषसह सहित १६ स्वरों को केसर में तथा शेष वर्णों से दशदल को वेष्टित करना चाहिए। भूपुर के कोणों में पंचभूतवर्णों को लिखना चाहिए। यह कार्तवीर्यार्जुन की पूजा का मन्त्र कहा गया है।

टिप्पणी : काम्यप्रयोगों में कार्तवीर्यार्जुन की पूजा, चित्र ४४ में दिखाये गये यन्त्र पर की जाती है।

शुद्धभूमावष्टगंधैर्लिखित्वा यन्त्रमादरात् ।
तत्र कुम्भं प्रतिष्ठाप्य तत्रावाह्यार्चयेन्नृपम् ॥ २३ ॥
स्पृष्ट्वा कुम्भं जपेन्मन्त्रं सहस्रं विजितेन्द्रियः ।
अभिषिंचेत्तदम्भोभिः प्रियं सर्वेष्टसिद्धये ॥ २४ ॥

अभिषेक : शुद्ध भूमि में अष्टगन्ध से श्रद्धा सहित उक्त यन्त्र लिखकर उसपर कुम्भ की प्रतिष्ठा कर उसमें कार्तवीर्यार्जुन का आवाहन करके विधिवत पूजन करना चाहिए। फिर इन्द्रियों को वश में करके साधक को कुम्भ का स्पर्श कर मूलमन्त्र का

॥ २१ ॥ यन्त्रमाह । दिक्पत्रमिति । दशदलंविलिख्यकर्णिकायांस्वबीजमदनश्रुत्यादि-वाचोलिखेत् । स्वबीजं क्रौं । मदनःक्लीं । श्रुत्यादिःॐ । वाक्ऐं । स्वबीजानिचागंतर्लिखेत् । वर्मान्तानिप्रणवादीनिदशबीजानिदलेषु यस्यतत् । तथाशेषार्णाःफट्कार्तवीर्यार्जुनायन-मइतिदशपत्रान्तरेषुयस्यतत् । ऊष्माणःशषसहास्तैराढ्याःस्वराः केसरेषुयस्यतत् । प्रतिकेसरंद्वौद्वौ । शेषैःकादिभिरूष्महीनैर्वेष्टितम् । स्वकोणेषूल्लसन्तोभूतार्णाः पञ्चभूतवर्णाः यत्रताद्दशंयन्त्रितिमन्दिरंचतुष्कोणं तेनावृतम् । तृतीयवर्गगाःकर्णवोललाः ? ॥ कर्णौउऊ ॥ ॐललापार्थिवामताइत्यादि० ॥ भूतानांवर्णास्त्रयोविंशेतरंगेवक्ष्यन्ते । तत्रस्तम्भनेभूतवर्णा-लेख्याः ॥ शान्तावाद्याः । वश्येतैजसाः ॥ उच्चाटनेवायवीयाः । विद्वेषणेतामसाः । मारणे-पितैजसाः । जलस्यमण्डलं प्रोक्तंप्रशस्तंशान्तिकर्मणिइत्यादिवक्ष्यमाणत्वात् । इदंधराधी-शितुःकार्तवीर्यस्ययन्त्रम् ॥ २२ ॥ अभिषेकमाह । शुद्धेति । अष्टगंधैः चन्दनागुरुवालक-कुष्ठकुंकुमकर्पूररोचनाजटामांसीभिः । तत्रयन्त्रेतत्रकुम्भे ॥ २३ ॥ २४ ॥

१ हजार जप करना चाहिए, और फिर उस कुम्भ के जल से अपने समस्त अभीष्टों की सिद्धि हेतु प्रियजन का अभिषेक करना चाहिए।

पुत्रान्यशोरोगनाशमायुः स्वजनरञ्जनम्।
वाक्सिद्धिं सुदृशः कुम्भाभिषिक्तो लभतेनरः॥ २५॥
शत्रूपद्रवमापन्ने ग्रामे वा पुटभेदने।
संस्थापयेदिदं यन्त्रमरिभीतिनिवृत्तये॥ २६॥

फल : कुम्भ के जल से अभिषिक्त व्यक्ति पुत्र, यश आरोग्य, आयु, आत्मीय जनों से प्रेम, वाक्सिद्धि तथा स्त्री को प्राप्त करता है।

गाँव या नगर में शत्रुओं का उपद्रव होने पर शत्रुओं का भय दूर करने के लिए इस यन्त्र को स्थापित करना चाहिए।

सर्षपारिष्टलशुनकापासैर्म्रियते रिपुः।
धत्तूरैःस्तभ्यतेनिम्बैर्द्वेष्यते वश्यतेम्बुजैः॥ २७॥
उच्चाट्यते विभीतस्य समिद्भिःखदिरस्य च।
कटुतैलमहिष्याज्यैर्होमद्रव्याञ्जनं स्मृतम्॥ २८॥
यवैर्हुतैःश्रियःप्राप्तिस्तिलैराज्यैरघक्षयः।
तिलतण्डुलसिद्धार्थलाजैर्वश्यो नृपो भवेत्॥ २९॥
अपमार्गार्कदूर्वाणां होमो लक्ष्मीप्रदोऽघनुत्।
स्त्रीवश्यकृत्प्रियंगूणां पुराणां भूतशान्तिदः॥ ३०॥
अश्वत्थोदुम्बरप्लक्षवटाबिल्वसमुद्भवाः।
समिधो लभते हुत्वा पुत्रानायुर्धनं सुखम्॥ ३१॥
निर्मोकहेमसिद्धार्थलवणश्चोरनाशनम्।
रोचनागोमयैःस्तम्भो भूप्राप्तिःशालिभिर्हुतैः॥ ३२॥
होमसंख्या तु सर्वत्र सहस्रादयुतावधि।
प्रकल्पनीया मन्त्रज्ञैः कार्य्यगौरवलाघवात्॥ ३३॥

विविध कामनाओं की पूर्ति के लिए होम : सरसों रीठा, लहसुन एवं कपास के होम से शत्रु की मृत्यु हो जाती है। धतूरे के होम से उसका स्तम्भन, नीम

स्वजनरंजनंजनवश्यताम्। सुदृशोनारीः॥ २५॥ पुटभेदनेनगरे॥ २६॥ अरिष्टानि फेनिलफलानि॥ पद्मैर्वश्यतेवशीक्रियते॥ हुतैरितिसर्वत्रान्वयः॥ २७-२९॥ पुराणांगुग्गुलूनाम्॥ ३०॥ ३१॥ निर्मोकःसर्पकंचुकः॥ हेमधत्तूरः॥ ३२॥ कार्यगौरवलाघवात्॥ अधिककार्येहोमबाहुल्यमल्पेऽल्पम्॥ ३३॥

के होम से विद्वेषण, कमल के होम से वशीकरण तथा बहेड़ा एवं खैर की समिधाओं के होम से शत्रु का उच्चाटन होता है।

जौ के होम से लक्ष्मीप्राप्ति, तिल एवं घी के होम से पापक्षय तथा तिल, तण्डुल, सिद्धार्थ एवं लाजाओं के होम से राजा वश में हो जाता है।

ओंघा, आक एवं दूर्वा का होम लक्ष्मीदायक तथा पापनाशक होता है। प्रियंगु का होम स्त्रियों को वश में करता है। गुग्गुल का होम भूतों को शान्त करता है। पीपल, गूलर, पाकड़, बरगद एवं बेल की समिधाओं से होम करके साधक पुत्र, आयु, धन एवं सुख प्राप्त करता है। साँप की काँचुली, धतूरा, सिद्धार्थ (सफेद सरसों) तथा लवण के होम से चोरों का नाश होता है। गोरोचन एवं गोबर के होम से स्तम्भन होता है तथा शालि (धान) के होम से भूमि प्राप्त होती है।

मन्त्रज्ञ विद्वान को कार्य की न्यूनाधिकता के अनुसार समस्त काम्य प्रयोगों में होम की संख्या १ हजार से १० हजार तक निश्चित कर लेनी चाहिए।

कार्तवीर्य्यस्य मन्त्राणामुच्यन्ते सिद्धिदा भिदाः।
कार्तवीर्य्यार्जुनंङेतमन्ते च नमसान्वितम् ॥ ३४ ॥
स्वबीजाढ्योदशार्णोसावन्येनवशिवाक्षराः।
आद्यबीजद्वयेनाऽसौ द्वितीयो मन्त्र ईरितः ॥ ३५ ॥
स्वकामाभ्यां तृतीयोसौ स्वभ्रूभ्यां तु चतुर्थकः।
स्वपाशाभ्यां पञ्चमोसौ षष्ठःस्वेन च मायया ॥ ३६ ॥
स्वांकुशाभ्यां सप्तमःस्यात्स्वरमाभ्यामथाष्टमः।
स्ववाग्भवाभ्यां नवमो वर्मास्त्राभ्यां तथान्तिमः ॥ ३७ ॥
द्वितीयादिनवान्ते तु बीजयोःस्याद्वयतिक्रमः।
मन्त्रे तु दशमे वर्णा नववर्मास्त्रमध्यगाः ॥ ३८ ॥

कार्तवीर्य के मन्त्रों के भेद : कार्तवीर्य के मन्त्रों के सिद्धिदायक भेद बतलाये जाते हैं :

मन्त्रभेदानाह। कार्तेति। दशस्वपिमन्त्रेषुङेंतंहृदन्तंचतुर्थीनमोंतंकार्तवीर्यार्जुनंयोजयेत् ॥ ३४ ॥ आद्योदशवर्णः। अन्येनवैकादशवर्णाः। तानाह। स्वेति। फ्रौंकार्तवीर्यार्जुनायनमः इतिप्रथमः। द्वितीयमाह। आद्येति। फ्रौंह्रींकार्तवी० द्वितीयः ॥ ३५ फ्रौंक्लींकार्त०इतितृतीयः। फ्रौंभ्रूंकार्त०इतिचतुर्थः। फ्रौंआंकार्त०इतिपंचमः। फ्रौंह्रींकार्त०इतिषष्ठः ॥ ३६ ॥ फ्रौंक्रोंका०इतिसप्तमः। फ्रौंश्रींकार्त०इत्यष्टमः। फ्रौंऐंकार्त० इतिनवमः। हुंफट् कार्त०इतिदशमः ॥ ३७ ॥ इमेदशमन्त्रायदाप्रणवाएकादशार्णः अन्येपि द्वादशार्णाः ॥ ३८-४० ॥

अपने बाज (फ्रों) के साथ चतुर्थ्यन्त कार्तवीर्यार्जुन (कार्तवीर्यार्जुनाय) तथा अन्त में 'नमः' सहित यह १० अक्षर वाला मन्त्र होता है। अन्य मन्त्र ९ या ११ अक्षरवाले होते हैं। उक्त मन्त्र के प्रारम्भ में दो बीज (फ्रों व्री) लगाने से यह द्वितीय मन्त्र बन जाता है। स्वबीज (फ्रों) तथा काम बीज सहित यह तृतीय मन्त्र तथा स्वबीज एवं भ्रूं सहित चतुर्थमन्त्र हो जाता है। स्वबीज एवं पाशबीज (आं) सहित पंचम मन्त्र, स्वबीज एवं मायाबीज सहित षष्ठमन्त्र, स्वबीज एवं अंकुश (क्रों) सहित सप्तम मन्त्र, स्वबीज एवं श्रीबीज सहित अष्टम मन्त्र, स्वबीज एवं वाग्बीज सहित नवम मन्त्र तथा वर्म (हुं) एवं अस्त्र (फट्) सहित दशम मन्त्र हो जाता है।

टिप्पणी : कार्तवीर्यार्जुन के १० मन्त्र : फ्रों कार्तवीर्यार्जुनाय नमः। फ्रों व्रीं कार्तवीर्यार्जुनाय नमः। फ्रों क्लीं कार्तवीर्यार्जुनाय नमः। फ्रों भ्रूं कार्तवीर्यार्जुनाय नमः। फ्रों आं कार्तवीर्यार्जुनाय नमः। फ्रों ह्रीं कार्तवीर्यार्जुनाय नमः। फ्रों क्रों कार्तवीर्यार्जुनाय नमः। फ्रों श्रीं कार्तवीर्यार्जुनाय नमः। फ्रों ऐं कार्तवीर्यार्जुनाय नमः। हुं कार्तवीर्यार्जुनाय नमः फट्।

एतेषु मन्त्रवर्य्येषु स्वानुकूलं मनुं भजेत्।
एषामाद्ये विराट्छन्दोन्येषु त्रिष्टुबुदाहृतम् ॥ ३९ ॥

विनियोग : इन मन्त्रों में से जो भी मन्त्र (सिद्धादि शोधन की रीति से) अपने अनुकूल हो उस मन्त्र की साधना करनी चाहिए।

इन मन्त्रों में से पहिले का विराट् छन्द है। तथा अन्यों का त्रिष्टुप् छन्द है।

टिप्पणी : दशाक्षर मन्त्र का विनियोग : अस्य श्री कार्तवीर्यार्जुन मंत्रस्य दत्तात्रेय ऋषिः विराट् छन्दः कार्तवीर्यार्जुनो देवता ममाभीष्टसिद्धये जपे विनियोगः।

अन्य मन्त्रों का विनियोग : अस्य श्री कार्तवीर्यार्जुनमन्त्रस्य दत्तात्रेय ऋषिः त्रिष्टुप् छन्दः कार्तवीर्यार्जुनो देवता ममाभीष्टसिद्धये जपे विनियोगः।

दशमन्त्रा इमे प्रोक्ताःप्रणवादिपदानि च
तदादिमःशिवार्णःस्यादन्ये तु द्वादशाक्षराः ॥ ४० ॥

इस मन्त्र के १० अन्य भेद : (इन पूर्वोक्त १० मन्त्रों के) प्रारम्भ में प्रणव लगाने से ये १० अन्य मन्त्र बन जाते हैं। इनमें पहिला ११ अक्षर का तथा अन्य सभी १२ अक्षर के होते हैं।

टिप्पणी कार्तवीर्यमन्त्र के १० अन्य भेद : ॐ फ्रों कार्तवीर्यार्जुनाय नमः। ॐ फ्रों व्रीं का० नमः। ॐ फ्रों क्लीं का० नमः। ॐ फ्रों भ्रूं का० नमः। ॐ फ्रों आं का० नमः। ॐ फ्रों ह्रीं का० नमः। ॐ फ्रों क्रों का० नमः। ॐ फ्रों श्रीं का० नमः। ॐ फ्रों ऐं का० नमः। ॐ हुं कार्तवीर्यार्जुनाय नमः फट्।

एवं विंशति मन्त्राणां यजनं पूर्ववन्मतम् ।
त्रिष्टुप्छन्दस्तदाद्ये स्यादन्येषु जगतीमता ॥ ४१ ॥
दीर्घाढ्यमूलबीजेन कुर्य्यादेषां षडंगकम् ।

विनियोग एवं न्यास : इस प्रकार कार्तवीर्य के ये २० मन्त्र बनते हैं । इनकी साधना पूर्वोक्त मन्त्र के समान है ।

उक्त मन्त्रों में से पहिले मन्त्र का त्रिष्टुप् छन्द है तथा अन्य मन्त्रों का जगती छन्द है ।

षड्दीर्घ सहित स्वबीज से इन मन्त्रों की साधना में षडङ्गन्यास करना चाहिए ।

टिप्पणी : *प्रथम मन्त्र का विनियोग* : अस्य श्री कार्तवीर्यार्जुन मन्त्रस्य दत्तात्रेय ऋषिः त्रिष्टुप् छन्दः कार्तवीर्यार्जुनो देवता ममाभीष्टसिद्धये जपे विनियोगः ।

अन्य मन्त्रों का विनियोग : अस्य श्री कार्तवीर्यार्जुनमन्त्रस्य दत्तात्रेय ऋषिः जगती छन्दः कार्तवीर्यार्जुनो देवता० ।

षडङ्गन्यास : फ्रां हृदयाय नमः । फ्रीं शिरसे स्वाहा । फ्रूं शिखायै वषट् । फ्रैं कवचाय हुम् । फ्रौं नेत्रत्रयाय वौषट् । फ्रः अस्त्राय फट् ।

तारोहृत्कार्तवीर्य्यार्जुनाय वर्मास्त्रठद्वयम् ।
चतुर्दशार्णो मन्त्रोयमस्येज्या पूर्ववन्मता ॥ ४२ ॥
भूनेत्रसप्तनेत्राक्षिवर्णैरस्याङ्गपञ्चकम् ।

चतुर्दशार्णमन्त्र : तार (ॐ) हृद् (नमः) फिर 'कार्तवीर्यार्जुनाय', वर्म (हुं) अस्त्र (फट्) तथा अन्त में ठद्वय (स्वाहा) लगाने से यह १४ अक्षर का मन्त्र होता है । इसकी साधना पूर्वोक्त मन्त्र के समान है ।

मन्त्र के क्रमशः १, २, ७, २ एवं २ वर्णों से पंचाङ्गन्यास करना चाहिए ।

टिप्पणी : *चतुर्दशार्णमन्त्र* : ॐ नमः कार्तवीर्यार्जुनाय हुं फट् स्वाहा ।

पञ्चाङ्गन्यास : ॐ हृदयाय नमः । नमः शिरसे स्वाहा । कार्तवीर्यार्जुनाय शिखायै वषट् । हुं फट् कवचाय हुम् । स्वाहा अस्त्राय फट् ।

तारोहृद्भगवान्ङेंतःकार्तवीर्य्यार्जुनस्तथा ॥ ४३ ॥
वर्मास्त्राग्निप्रियामन्त्रःप्रोक्तोष्टादशवर्णवान् ।
त्रिवेदसप्तयुग्माक्षिवर्णैःपञ्चाङ्गकंमनोः ॥ ४४ ॥

पूर्ववत् मन्त्रराजवत् । यजनंमतम् ॥ ४१ ॥ तेषांषडङ्गमाह । दीर्घेति । फ्रांहृत् । फ्रींशिरइत्यादि० । चतुर्दशार्णमाह । तारइति । ॐ नमःकार्तवीर्यार्जुनायहुंफट्स्वाहेति । इज्यापूजा ॥ ४२ ॥ पञ्चांगमाह । भूनेत्रेति । अष्टादशार्णमाह । तारइति । हृत्नमः । कार्तवीर्यार्जुनस्तथेति । ङेंतः । ॐनमोभगवतेकार्तवीर्यार्जुनायहुंफट्स्वाहाइति ॥४३-४४॥

अष्टादशार्णमन्त्र : तार (ॐ) हृद् (नमः) तथा चतुर्थ्यन्त भगवान् एवं कार्तवीर्यार्जुन (भगवते कार्तवीर्यार्जुनाय) फिर वर्म (हुं) अस्त्र (फट्) तथा अग्निप्रिया (स्वाहा) लगाने से यह १८ अक्षर का मन्त्र बनता है।

मन्त्र के क्रमशः ३, ४, ७, २ एवं २ वर्णों से पञ्चाङ्गन्यास करना चाहिए।

टिप्पणी : अष्टादशार्णमन्त्र : ॐ नमो भगवते कार्तवीर्यार्जुनाय हुं फट् स्वाहा।

पञ्चाङ्गन्यास : ॐ नमो हृदयाय नमः। भवगते शिरसे स्वाहा। कार्तवीर्यार्जुनाय शिखायै वषट्। हुं फट् कवचाय हुम्। स्वाहा अस्त्राय फट्।

नमोभगवतेश्रीतिकार्त्तवीर्य्यार्जुनायच।
सर्वदुष्टान्तकायेतितपोबलपराक्रम ॥ ४५ ॥
परिपालितसप्तान्ते द्वीपायसर्वरापदम्।
जन्यचूडामणान्ते येसर्वशक्तिमते ततः ॥ ४६ ॥
सहस्रबाहवेप्रान्तेवर्मास्त्रान्तो महामनुः।
त्रिषष्टिवर्णवान्प्रोक्तःस्मरणात्सर्वविघ्नहृत् ॥ ४७ ॥

अन्य मन्त्र : 'नमो भगवते श्री कार्तवीर्यार्जुनाय', 'सर्वदुष्टान्तकाय' 'तपोबलपराक्रमपरिपालितसप्त' के बाद 'सर्वरा' 'जन्यचूडामण' एवं 'ये सर्वशक्तिमते' फिर 'सहस्रबाहवे' वर्म (हुं) तथा अन्त में अस्त्र (फट्) लगाने से यह ६३ अक्षर का मन्त्र बनता है, जो स्मरणमात्र से सब विघ्नों को दूर कर देता है।

टिप्पणी : कार्तवीर्यय का अन्य मन्त्र : नमो भगवते श्री कार्तवीर्यार्जुनाय सर्वदुष्टान्तकाय तपोबलपराक्रम परिपालितसप्त द्वीपाय सर्वराजन्य चूडामणये सर्वशक्तिमते सहस्रबाहवे हुं फट्।

राजन्यचक्रवर्ती च वीरःशूरस्तृतीयकः।
माहिष्मतीपतिःपश्चाच्चतुर्थःसमुदीरितः ॥ ४८ ॥
रेवाम्बुपरितृप्तश्चकारागेहप्रबाधितः।
दशास्यश्चेतिषड्भिःस्यात्पदैर्ङेन्तैःषडङ्गकम् ॥ ४९ ॥

षडङ्गन्यास : राजन्य चक्रवर्ती, वीर, शूर, माहिष्मतीपति, रेवाम्बुपरितृप्त एवं कारागेह प्रबाधित दशास्य—इन ६ के चतुर्थ्यन्त पदों से षडङ्गन्यास करना चाहिए।

मन्त्रान्तरमाह। नमइति। यथा–नमोभगवतेश्रीकार्तवीर्यार्जुनायसर्वदुष्टान्तकायतपोबलपराक्रमपरिपालितसप्तद्वीपाय सर्वराजन्यचूडामणयेसर्वशक्तिमतेसहस्रबाहवेहुंफट्इति ॥ ४५-४७ ॥ अस्यषडङ्गमाह। राजन्येति। ङेंतैश्चतुर्थ्यन्तैःपदैःषडङ्गंस्यात्। यथा राजन्यचक्रवर्तिनेहृत्। वीरायशिरः। शूरायशिखा। माहिष्मतीपतयेवर्म ॥ ४८ ॥ रेवाम्बुपरितृप्तायनेत्रम्। कारागेहप्रबाधितदशास्यायास्त्रम् ॥ ४९-५० ॥

टिप्पणी : न्यास के मन्त्र : राजन्यचक्रवर्तिने हृदयाय नमः । वीराय शिरसे स्वाहा । शूराय शिखायै वषट् । महिष्मतीपतये कवचाय हुम् । रेवाम्बुपरितृप्ताय नेत्रत्रयाय वौषट् । कारागेहप्रबाधित दशास्याय अस्त्राय फट् ।

सिच्यमानं युवतिभिःक्रीडन्तं नर्मदाजले ।
हस्तैर्जलौघं रुंधन्तं ध्यायेन्मत्तं नृपोत्तमम् ॥ ५० ॥

ध्यान : नर्मदा नदी में जल क्रीडा करते हुए, युवतियों के द्वारा अभिषिच्यमान तथा नर्मदा की जल धारा को अवरुद्ध करने वाले नृपश्रेष्ठ कार्तवीर्यार्जुन का ध्यान करना चाहिए ।

एवं ध्यात्वायुतं मन्त्रं जपेदन्यत्तुपूर्ववत् ।
पूर्ववत्सर्वमेतस्यसमाराधनमीरितम् ॥ ५१ ॥

जपसंख्या एवं साधना : ऐसा ध्यान कर इस मन्त्र का १० हजार जप करना चाहिए, तथा हवन, पूजन आदि अन्य कृत्य पूर्वोक्त मन्त्र की रीति से करने चाहिए । इस मन्त्र साधना के सभी अङ्ग पूर्वोक्त मन्त्र के समान हैं ।

कार्तवीर्य्यार्जुनोवर्णान्नामराजापदं ततः ।
उक्त्वा बाहुसहस्रांते वान्पदन्तस्यसं ततः ॥ ५२ ॥
स्मरणादेववर्णांते हृतंनष्टं च संपठेत् ।
लभ्यते मन्त्रवर्य्योऽयं द्वात्रिंशद्वर्णसंज्ञकः ॥ ५३ ॥
पादैःसर्वेण पञ्चाङ्गं ध्यानयोगादिपूर्ववत् ।

अनुष्टुप् मन्त्र : 'कार्तवीर्यार्जुनो' पद के बाद 'नाम राजा' कह कर 'बाहुसहस्र' तथा 'वान्' कहना चाहिए । फिर 'तस्य सं' 'स्मरणादेव' तथा 'हृतं नष्टं च' कहकर 'लभ्यते' बोलना चाहिए । यह ३२ का मन्त्र है ।

इस अनुष्टुप् के १–१ पाद से तथा सम्पूर्ण मन्त्र से पञ्चाङ्गन्यास करना चाहिए । इसका ध्यान एवं पूजन आदि पूर्वोक्त मन्त्र के समान है ।

टिप्पणी : मन्त्र : कार्तवीर्यार्जुनो नाम राजा बाहु सहस्रवान् ।
तस्य संस्मरणादेव हृतं नष्टं च लभ्यते ॥

विनियोग : अस्य श्री कार्तवीर्यार्जुन मन्त्रस्य दत्तात्रेय ऋषिः अनुष्टुप् छन्दः, श्री कार्तवीर्यार्जुनो देवता ममाभीष्टसिद्धये जपे विनियोगः ।

स्मरन्नयुतंजपेत् । अन्यत्प्रयोगादिकं । पूर्ववच्चतुर्दशाष्टादशार्णवत् ॥५१॥ आनुष्टुभंमन्त्रान्तरमाह । कार्तेति । कार्तवीर्यार्जुनोनामराजाबाहुसहस्रवान् । तस्यसंस्मरणादेवहृतंनष्टंचलभ्यत इति ॥ ५२–५३ ॥

पञ्चाङ्गन्यास : कार्तवीर्यार्जुनो नाम हृदयाय नमः । राजा बाहु सहस्रवान् शिरसे स्वाहा । तस्त संस्मरणादेव शिखायै वषट् । हृतं नष्टं च लभ्यते कवचाय हुम् । कार्तवीर्यार्जुनो''''लभ्यते अस्त्राय फट् ।

कार्तवीर्य्यायशब्दान्तेविद्महेपदमीरयेत् ॥ ५४ ॥
महावीर्य्यायवर्णांते धीमहीतिपदं वदेत् ।
तन्नोर्जुनःप्रवर्णांते चोदयात्पदमीरयेत् ॥ ५५ ॥
गायत्र्यंषार्जुनस्योक्ता प्रयोगादौ जपेत्तुताम् ।

कार्तवीर्य का गायत्री मन्त्र : 'कार्तवीर्याय' पद के बाद 'विद्महे' पद बोलना चाहिए । 'महावीर्याय' पद के बाद 'धीमहि' पद कहना चाहिए । फिर 'तन्नोर्जुनः प्र' के बाद 'चोदयात्' पद बोलना चाहिए । यह कार्तवीर्यार्जुन का गायत्री मन्त्र है । इस मन्त्र का कार्तवीर्य के प्रयोगों के प्रारम्भ में जप करना चाहिए ।

टिप्पणी : गायत्रीमन्त्र : कार्तवीर्याय विद्महे महावीर्याय धीमहि । तन्नोर्जुनः प्रचोदयात् ॥

अनुष्टुभं मनुं रात्रौ जपतां चौरसंचयाः ॥ ५६ ॥
पलायन्ते गृहादूरं तर्पणाद्वचनादपि ।

अनुष्टुप के जप का फल : रात्रि में अनुष्टुप् मन्त्र का जप करने से चौर आदि के समुदाय घर से दूर भाग जाते हैं । इस मन्त्र से तर्पण या इसका उच्चारण करने से भी चोर भाग जाते हैं ।

अथोदीपविधिं वक्ष्ये कार्तवीर्य्यप्रियंकरम् ॥ ५७ ॥
वैशाखे श्रावणे मार्गे कार्तिकाश्विनपौषतः ।
माघफाल्गुनयोर्मासे दीपारम्भः प्रशस्यते ॥ ५८ ॥
तिथौ रिक्ताविहीनायां वारेशनिकुजौ विना ।
हस्तोत्तराश्विरौद्रेषु पुष्यवैष्णववायुभे ॥ ५९ ॥
द्विदैवते च रोहिण्यां दीपारम्भःप्रशस्यते ।
चरमे च व्यतीपाते धृतौ वृद्धौ सुकर्मणि ॥ ६० ॥
प्रीतौ हर्षे च सौभाग्ये शोभनायुष्मतोरपि ।
करणे विष्टिरहिते ग्रहणेर्द्धोदयादिषु ॥ ६१ ॥

गायत्रीमाह । कार्तवीर्यायविद्महेमहावीर्यायधीमहि । तन्नोर्जुनःप्रचोदयादिति ॥५४-५६॥ दीपविधानमाह । अथेति ॥ ५७ ॥ आरम्भेमासानाह । वैशाखेति ॥ ५८ ॥ रिक्ताश्चतुर्थीनवमीचतुर्दश्यस्तद्विहीनतिथौ । नक्षत्राण्याह । हस्तोत्तरेति । रौद्रमार्द्रा । वैष्णवंश्रवणं । वायुभंस्वाती ॥ ५९ ॥ द्विदैवतंविशाखा । योगानाह । चरमेइति । चरमे वैधृतौ ॥ ६० ॥ ६१ ॥

एषु योगेषु पूर्वाह्णे दीपारम्भः कृतः शुभः ।
कार्तिके शुक्लसप्तम्यां निशीथेतीवशोभनः ॥ ६२ ॥
यदि तत्रारवेर्वारःश्रवणं भं तुर्दुर्लभम् ।
अत्यावश्यककार्येषु मासादीनां न शोधनम् ॥ ६३ ॥

दीपारम्भ का मुहूर्त : अब कार्तवीर्य को प्रसन्न करने वाली दीपदान की विधि को बतलाता हूं :

वैशाख, श्रावण, मार्गशीर्ष, कार्तिक, आश्विन, पौष, माघ एवं फाल्गुन में दीपदान का प्रारम्भ करना प्रशस्त माना गया है ।

रिक्ता (४, ७ एवं १२) तिथियों को छोड़कर अन्य तिथियों में तथा मंगल एवं शनिवार के अलावा अन्य वारों में दीपारम्भ करना चाहिए ।

हस्त, उत्तरात्रय, अश्विनी, आर्द्रा, पुष्य, श्रवण, स्वाति, विशाखा एवं रोहिणी नक्षत्र में दीपारम्भ प्रशस्त होता है ।

वैधृति, व्यतीपात, धृति, वृद्धि, सुकर्मा, प्रीति, हर्षण, सौभाग्य, शोभन एवं आयुष्मान योग में तथा विष्टि को छोड़कर अन्य करणों में दीपारम्भ करना चाहिए । इन योगों में पूर्वाह्न के समय दीपारम्भ करना शुभ माना गया है ।

कार्तिक शुल्का सप्तमी के निशीथकाल में यह अत्यन्त शुभ माना गया है । यदि उस दिन रविवार एवं श्रवण नक्षत्र हो तो यह योग अति दुर्लभ होता है ।

आवश्यक कार्यों में मास आदि के शोधन की आवश्यकता नहीं है ।

आद्येह्युपोष्य नियतो ब्रह्मचारीशयीतकौ ।
प्रातः स्नात्वा शुद्धभूमौ लिप्तायां गोमयोदकैः ॥ ६४ ॥
प्राणानायम्य संकल्प्य न्यासान्पूर्वोदितांश्चरेत् ।
षट्कोणं रचयेद्भूमौ रक्तचन्दनतण्डुलैः ॥ ६५ ॥
अन्तःस्मरं समालिख्य षट्कोणेषु समालिखेत् ।
मन्त्रराजस्य षड्वर्णान्कामबीजविवर्जितान् ॥ ६६ ॥
सृणिं पद्मां वर्मचास्त्रं पूर्वाद्याशासु संलिखेत् ।
नवार्णैर्वेष्टयेत्तच्च त्रिकोणं तद्बहिःपुनः ॥ ६७ ॥

दीप स्थापना यन्त्र : पहिले दिन उपवास कर ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए सोना चाहिए । तथा दूसरे दिन प्रातः काल स्नान आदि से निवृत्त होकर गोबर एवं शुद्ध

रात्रावखिलायांपूर्वाह्णे च ॥ ६२-६३ ॥ विधमाह । आद्येति । कौभूमौ ॥ ६४-६५ ॥ स्मरंबलीं ॥ ६६ ॥ षड्वर्णान्ॐक्रों ह्रींश्रूंआंह्रींमिति षट्कोणेषुस्वाग्रमारभ्यलिखेत् । क्रोंश्रींहुंफडितिदिक्षु । शेषैर्नवाक्षरैर्वेष्टयेत् ॥ ६७-६९ ॥

जल से लिपी हुई भूमि में बैठकर प्राणायाम एवं संकल्प करने के बाद पूर्वोक्त न्यासों को करना चाहिए।

भूमि में रक्तचन्दनमिश्रित चावलों से षड्कोण बनाना चाहिए। उसके भीतर कामबीज लिखकर षड्कोणों में मन्त्रराज के कामबीज को छोड़कर बीजों (ॐ फ्रों व्रीं भ्रूं आं ह्रीं) को लिखना चाहिए। सृणि (क्रों) पद्मा (श्रीं) वर्म (हुं) तथा अस्त्र (फट्) इन चारों बीजों को पूर्व आदि चारों दिशाओं में लिखना चाहिए। फिर ९ वर्णों (कार्तवीर्यार्जुनाय नमः) से उस षड्कोण को वेष्टित करना चाहिए। और फिर उसके बाहर त्रिकोण बनाना चाहिए (देखिये चित्र ४५)।

एवं विलिखिते यन्त्रे निदध्याद्दीपभाजनम्।
स्वर्णजं रजतोत्थं वा ताम्रजं तदभावतः ॥ ६८ ॥
कांस्यपात्रं मृन्मयं च कनिष्ठं लोहजं मृतौ।
शान्तयेमुद्गचूर्णोत्थं संधौ गोधूमचूर्णजम् ॥ ६९ ॥
बुध्नेषूर्द्धं समानं तु पात्रं कुर्य्यात्प्रयत्नतः।
अर्कदिग्वसुषट्पञ्चचतुराभांगुलैर्मितम् ॥ ७० ॥
आज्यपलसहस्रं तु पात्रं शतपलैः कृतम्।
आज्येयुतपले पात्रं पलपञ्चशतीकृतम् ॥ ७१ ॥
पञ्चसप्ततिसंख्ये तु पात्रं षष्टिपलं मतम्।
त्रिसहस्रे घृतपले शरार्कपलभाजनम् ॥ ७२ ॥
द्विसहस्रे शरशिवं शतार्द्धत्रिशतामतम्।
शतेक्षिशरसंख्यातमेवमन्यत्रकल्पयेत् ॥ ७३ ॥
नित्यदीपे वह्निपलं पात्रमाज्यं पलं स्मृतम्।
एवं पात्रं प्रतिष्ठाप्य वर्तीःसूत्रोत्थिताःक्षिपेत् ॥ ७४ ॥
एकातिस्रोथवापञ्चसप्ताद्या विषमा अपि।
तिथिमानाद्यासहस्रं तं तु संख्याविनिर्मिताः ॥ ७५ ॥
गोघृतं प्रक्षिपेत्तत्र शुद्धवस्त्रविशोधितम्।
सहस्रपलसंख्यादिदशान्तं कार्य्यगौरवात् ॥ ७६ ॥

पात्रमानमाह। बुध्नइति। बुध्नेमूले। ऊर्ध्वंचपात्रंकुर्यात्। कियच्चाह। अर्केति। मूलेऊर्ध्वंचद्वादशादिमानैरंगुलैःकार्यम् ॥ ७०-७१ ॥ शरार्कपलभाजनं पञ्चविंशत्युत्तरशतपलमितपात्रम् ॥ ७२ ॥ द्वीति। सहस्रद्वयमिते घृतेशरशिवंपञ्चदशोत्तरशतपलंताम्रपात्रम्। अक्षिशरसंख्यातं द्विपञ्चाशत्पलमितम्। अन्यत्रैवमेवघृतानुसारेण पात्रंकल्प्यम् ॥ ७३ ॥ वह्निपलंत्रिपलम् ॥ ७४ ॥ विषमवर्तिकाएकाद्याएकोत्तरशतान्ताज्ञेयाः। तिथीति। पञ्चदशादिसहस्रपर्यंतंयावंतुसंख्यातयाविनिर्मिताःकृताः ॥ ७५ ॥ ७६ ॥

सुवर्णादिकृतां रम्यां शलाकां षोडशांगुलाम् ।
तदर्द्धां वा तदर्द्धां वा सूक्ष्माग्रां स्थूलमूलकाम् ॥ ७७ ॥
विमुञ्चेद्दक्षिणेभागे पात्रमध्ये कृताग्रकाम् ।
पात्राद्दक्षिणदिग्देशेमुक्त्वांगुलचष्तुटयम् ॥ ७८ ॥
अधोग्रांदक्षिणाधारां निखनेच्छुरिकां शुभाम् ।
दीपं प्रज्वालयेत्तत्र गणेशस्मृतिपूर्वकम् ॥ ७९ ॥
वीपात्पूर्वे तु दिग्भागे सर्वतोभद्रमण्डले ।
तण्डुलाष्टदले वापि विधिवत्स्थापयेद्घटम् ॥ ८० ॥
तत्रावाह्य नृपाधीशं पूर्ववत्पूजयेत्सुधीः ।
जलाक्षताः समादाय दीपं संकल्पयेत्ततः ॥ ८१ ॥

दीप स्थापना एवं पूजन : इस प्रकार लिखे हुए यन्त्र पर दीप के पात्र को स्थापित करना चाहिए । वह पात्र सोने, चाँदी या ताँबे का होना चाहिए । इनके अभाव में काँसे का, मिट्टी या लोहे का होना चाहिए । लोहे का पात्र कनिष्ठ माना गया है ।

शान्तिक-पौष्टिक कार्यों के लिए मूंग के आटे का तथा सन्धि के लिए गेहूँ के आटे का पात्र बनाना चाहिए । मूल एवं ऊर्ध्व भाग में पात्र को समान बनना चाहिए । पात्र का मान १२, १०, ८, ६, ५ या ४ अंगुल होना चाहिए ।

सौ पल के भार से बनाये पात्र में १ हजार पल घी, ५ सौ पल के भार से बनाये पात्र में १० हजार पल घी, ६० पल भार से बनाये गये पात्र में ७५ पल घी, १२५ पल भार से बनाये गये पात्र में ३ हजार पल घी, ११५ पल भार से बनाये गये पात्र में २ हजार पल घी ३० पल भार से बने पात्र में ५० पल घी तथा ५२ पल भार से बने पात्र में १०० पल घी डालना चाहिए । इस प्रकार घी के अनुसार पात्र के भार की कल्पना कर लेनी चाहिए । नित्यदीप में ३ पल का पात्र तथा १ पल घी बतलाया गया है ।

इस प्रकार पात्र को स्थापित कर उसमें सूत्र से बनी बत्तियाँ डालनी चाहिए । १, ३,५, ७, १५ या १ हजार सूतों से बत्ती बनानी चाहिए । सामान्यतया विषम-संख्यक सूतों से बत्ती बनानी चाहिए । उस पात्र में शुद्ध वस्त्र में छना हुआ गाय का घी डालना चाहिए । घी की मात्रा काय के अनुसार १ हजार पल तक होती है ।

नृदर्भामष्टांगुलांत-वर्धांश्चतुरंगुलाम् ॥ ७७ ॥ पात्राद्दक्षिगेचतुरंगुलभूमित्यक्त्वाक्षुरिकांभूमौनिक्षिपेत् ॥ ७८ ॥ अधोग्रंयस्यास्तांदक्षिणस्यांधारायस्यास्ताम् ॥ ७९–८१ ॥

सुवर्ण आदि से एक सुन्दर, आगे से पतली तथा पीछे से मोटी १६, ८ या ४ अंगुल की शलाका बनाकर दीपपात्र के भीतर दाहिनी ओर उस शलाका के अग्रभाग की ओर से डालना चाहिए।

दीपपात्र से दक्षिण दिशा में ४ अंगुल छोड़कर भूमि में अधोमुख करके छुरी या वाकु को गाड़ना चाहिए।

फिर गणपति का स्मरण करते हुए दीपक को जलाना चाहिए। दीपक से पूर्व की ओर सर्वतोभद्र मण्डल या चावलों से बने अष्टदल पर घट (मिट्टी के घड़े) को स्थापित करना चाहिए। उस घट पर कार्तवीर्यार्जुन का आवाहन कर साधक को पूर्वोक्त विधि से उसका पूजन करना चाहिए। इसके बाद हाथ में जल एवं अक्षत लेकर दीपदान का संकल्प करना चाहिए।

दीपसंकल्पमन्त्रोऽथ कथ्यते द्वीषुभूमि तः।
प्रणवः पाशमाये च शिखाकार्ताक्षराणि च ॥ ८२ ॥
वीर्य्यार्जुनाय माहिष्मतीनाथायसहस्र च।
बाहवेइतिवर्णान्ते सहस्रपदमुच्चरेत् ॥ ८३ ॥
क्रतुदीक्षितहस्ताय दत्तात्रेयप्रियाय च।
आत्रेयायानुसूयान्ते गर्भरत्नायतत्परम् ॥ ८४ ॥
नभोग्नीवामकर्णेन्दुस्थितौ पाशइमं ततः।
दीपंगृहाणत्वमुकंरक्षरक्षपदंपुनः। ॥ ८५ ॥
दुष्टान्नाशययुग्मंस्यात्तथा पातयघातय।
शत्रञ्जहिद्वयं मायातारः स्वंबीजमात्मभूः ॥ ८६ ॥
वह्निजाया अनेनाथदीपवर्येणपश्चिमा -
भिमुखेनामुकंरक्षअमुकान्तेवरप्रदा ॥ ८७ ॥
नायाकाशद्वयंवामनेत्रचन्द्रयुतंशिवा।
वेदादिकामचामुण्डा स्वाहातुः पुः सबिन्दुकौ ॥ ८८ ॥
प्रणवोग्निप्रियामन्त्रो नेत्रबाणधराक्षरः।

दीपसंकल्प मन्त्र : अब १५२ अक्षर वाला दीपसंकल्प का मन्त्र बतलाता हूँ :

द्वीषुभूमितोद्विपञ्चाशदुत्तरशताक्षरो दीपसंकल्पेमन्त्रः। तमाह। प्रणवइति। पाशआं। मायाह्रीं। शिखावषट् ॥ ८२-८४ ॥ वामकर्णेंदुस्थितौनभोग्नीऊबिन्दुयुतौहरौ। तेनहूं। पाशओं। अमुकमितिपदस्थानेसाध्यनामोच्चार्यम् ॥ ८५ ॥ मायाह्रीं। तारॐ। स्वंबीजंक्रों। आत्मभूःक्लीं ॥ ८६ ॥ ८७ ॥ आकाशद्वयंहद्वयम। वामनेत्रचन्द्रयुतंइबिन्दुयुतंहींहीं। शिवाह्रीं। वेदादिकामचामुण्डाः ॐक्लींह्रीं। तुः पुः तवर्गपवर्गौं ॥८८॥

प्रणव (ॐ) पाश (आं) माया (ह्रीं) शिखा (वषट्) एवं 'कार्त' इनके बाद 'कार्तवीर्यार्जुनाय माहिष्मतीनाथाय सहस्र' 'बाहवे' एवं 'सहस्र' पद बोलने चाहिए। फिर 'क्रतुदीक्षित हस्तायदत्तात्रेय प्रियाय' 'आत्रेयानुसूया'के बाद 'गर्भरत्नाय' फिर वाम कर्ण एवं इन्दु सहित नम एवं अग्नि (हूं) पाश (आं) फिर 'इमं दीपं गृहाण' 'अमुकं रक्ष रक्ष' दुष्टान्नाशय नाशय' फिर २-२ बार पातय एवं घातय (पातय पातय घातय घातय) 'शत्रून् जहि जहि' फिर माया (ह्रीं) तार (ॐ) स्वबीज (फ्रों) आत्मभू (क्लीं) एवं वह्निजाया (स्वाहा) फिर 'अनेन दीपवर्येण पश्चिमाभिमुखेन अमुकं रक्ष अमुकं वर प्रदानाय' फिर वामनेत्र एवं चन्द्र सहित २ बार आकाश (हीं हीं) शिवा (ह्रीं) वेदादि (ॐ) काम (क्लीं) चामुण्डा (व्रीं) 'स्वाहा' फिर सानुस्वार तवर्ग एवं पवर्ग (तं थं दं धं नं पं फं बं भं मं) फिर प्रणव (ॐ) तथा अग्नि प्रिया (स्वाहा) लगाने से यह १५२ अक्षर का मन्त्र बन जाता है।

टिप्पणी : दीपसंकल्प का मन्त्र : ॐ आं ह्रीं वषट् कार्तवीर्यार्जुनाय माहिष्मती-नाथाय सहस्रबाहवे सहस्रक्रतुदीक्षितहस्ताय दत्तात्रेयप्रियाय आत्रेयायानुसूयागर्भरत्नाय हूं आं इमं दीपं गृहाण अमुकं रक्ष रक्ष दुष्टान्नाशय नाशय पातय पातय घातय घातय शत्रूञ्जहि जहि ह्रीं ॐ फ्रों क्लीं स्वाहा अनेन दीपवर्येण पश्चिमाभिमुखेन अमुकं रक्ष अमुकं वर प्रदानाय हीं हीं ह्रीं ॐ क्लीं व्रीं स्वाहा तं थं दं धं नं पं फं बं भं मं ॐ स्वाहा।

दत्तात्रेयोमुनिर्मालामन्त्रस्य परिकीर्तितः ॥८९॥
छन्दोमितं कार्तवीर्य्यार्जुनोदेवः शुभावहः।
चामुण्डया षडंगानि चरेत्षड्दीर्घयुक्तया ॥ ९० ॥

विनियोग एवं न्यास : इस मालामन्त्र के दत्तात्रेय ऋषि हैं, अमित छन्द हैं तथा कार्तवीर्यार्जुन देवता हैं।

षड्दीर्घसहित चामुण्डा बीज से षडङ्गन्यास करना चाहिए।

टिप्पणी : विनियोग : अस्य कार्तवीर्यमाला मन्त्रस्य दत्तात्रेय ऋषिः अमितं छन्दः कार्तवीर्यार्जुनो देवता ममाभीष्टसिद्धये जपे विनियोगः :

नेत्रबाणधराक्षरोद्विपञ्चाशदुत्तरशतार्णः यथा–ॐआंह्रींवषट्कार्तवीर्यार्जुनायमाहिष्मती नाथायसहस्रक्रतुदीक्षितहस्तायदत्ता त्रेयप्रियायआत्रे यायानुसूयागभरत्नायहूंआंइमंदीपं-गृहाणअमुकंरक्ष २ दुष्टान्नाशय २ पातय २ घातय २ शत्रू ञ्जहि २ ह्रींॐफ्रोंक्लींस्वाहा-अनेनदीपवर्येणपश्चिमाभिमुखेनअमुकंरक्ष अमुकवरप्रदानाय हींहींह्रींॐक्लींव्रींस्वाहा तंथंदं-धंनंपंफंबंभंमंॐस्वाहा (१५२) इतिमन्त्रः। चामुण्डयाव्रींमितिबीजेनत्रांत्रींत्रूंत्रैंत्रौंत्रः इति-षडंगम् ॥ ८९-९० ॥

षडङ्गन्यास : व्रां हृदयाय नमः । व्रीं शिरसे स्वाहा । व्रूं शिखायै वषट् । व्रैं कवचाय हुम् । व्रौं नेत्रत्रयाय वौषट् । व्रः अस्त्राय फट् ।

ध्यात्वा देवं ततो मन्त्रं पठित्वान्ते क्षिपेज्जलम् ।
ततो नवाक्षरं मन्त्रं सहस्रं तत्पुरो जपेत् ॥ ९१ ॥

संकल्प विधि : कार्तवीर्यार्जुन का पूर्वोक्त रीति से विधिवत ध्यान कर संकल्प मन्त्र बोलकर अन्त में जल छोड़ना चाहिए ।

फिर दीपक के सम्मुख नवाक्षर मन्त्र का १ हजार जप करना चाहिए ।

तारोऽनन्तो बिन्दुयुक्तोमायास्वंवामनेत्रयुक् ।
कूर्माग्नीशान्तिचन्द्राढ्यौवह्निनार्य्यंकुशंध्रुवः ॥ ९२ ॥

नवाक्षर मन्त्र का उद्धार : तार (ॐ) बिन्दु सहित अनन्त (आं) माया (ह्रीं) वामनेत्र सहित स्वबीज (फ्रों) फिर शान्ति एवं चन्द्र सहित कूर्म एवं अग्नि (व्रीं) वह्नि नारी (स्वाहा) अंकुश (क्रों) तथा अन्त में ध्रुव (ॐ) लगाने से यह नवाक्षर मन्त्र बनता है ।

टिप्पणी : *नवाक्षर मन्त्र* : ॐ आं ह्रीं फ्रीं व्रीं स्वाहा क्रों ॐ ।

ऋषिःपूर्वः स्मृतोनुष्टुप्छन्दो ह्यन्यत्तु पूर्ववत् ।
सहस्रं मन्त्रराजं च जपित्वा कवचं पठेत् ॥ ९३ ॥

विनियोगादि : इस मन्त्र के ऋषि पूर्वोक्त (दत्तात्रेय) हैं, अनुष्टुप् छन्द है तथा देवता एवं न्यास आदि सब पूर्वोक्त मन्त्र के समान हैं ।

इस मन्त्रराज का १ हजार जप करने के बाद कवच (हुं) का पाठ करना चाहिए ।

टिप्पणी : *विनियोग* : अस्य नवाक्षर कार्तवीर्य मन्त्रस्य दत्तात्रेय ऋषिः अनुष्टुप् छन्दः कार्तवीर्यार्जुनो देवता ममाभीष्टसिद्धये जपे विनियोगः ।

षडङ्गन्यास : व्रां हृदयाय नमः । व्रीं शिरसे स्वाहा । व्रूं शिखायै वषट् । व्रैं कवचाय हुम् । व्रौं नेत्रत्रयाय वौषट् । व्रः अस्त्राय फट् ।

एवं दीपप्रदानस्य कर्ताऽऽप्नोत्यखिलेप्सितम् ।
दीपप्रबोधकाले तु वर्जयेदशुभां गिरम् ॥ ९४ ॥

फल : इस प्रकार दीप दान करने वाला व्यक्ति अपने समस्त अभीष्टों को प्राप्त करता है ।

ध्यात्वापूर्वोक्तविधिना ॥९१॥ नव चरमाह । तारइति । तारॐ । अनन्तोबिन्दुयुतःआं । मयाह्रीं । स्वंवामनेत्रयुक्फ्रीं । कूर्माग्नीवरौशान्तिचन्द्राढ्यौईबिन्दुयुतौ । तेनव्रीं । वह्निनारीस्वाहा । अंकुशक्रों । ध्रुवॐ ॥ ९२ ॥ पूर्वोदत्तात्रेयः । अन्यत्षडङ्गादेकम् ॥ कवचं हुंडामरोक्तम् ॥ ९३ ॥ दीपप्रारम्भेशकुनमाह । दीपप्रबोधेत्यादि ॥ ९४ ॥

दीप को प्रज्वलित करते समय अशुभ बातें नहीं कहनी चाहिए।

विप्रस्य दर्शनं तत्र शुभदं परिकीर्तितम्।
शूद्राणां मध्यमं प्रोक्तं म्लेच्छस्य बधबन्धनम् ॥ ९५ ॥
आख्वोत्वोर्दर्शनं दुष्टं गवाश्वस्य सुखावहम्।
दीपज्वाला समासिद्धयै वक्रा नाशविधायिनी ॥ ९६ ॥
सशब्दाभयदा कर्तुरुज्ज्वला सुखदा मता।
कृष्णा तु शत्रुभयदा वमन्ती पशुनाशिनी ॥ ९७ ॥
कृतेदीपे यदा पात्रं भग्नं दृश्येत दैवतः।
पक्षादर्वाक्तदागच्छेद्यजमानो यमालयम् ॥ ९८

दीप प्रज्वलित करते समय के शकुन : (दीप को प्रज्वलित करते समय) ब्राह्मण का दर्शन शुभ फलदायक कहा गया है। शूद्रों का दर्शन मध्यम फलदायक तथा म्लेच्छ दर्शन वध एवं बन्धनदायक माना गया है। उस समय चूहा एवं बिल्ली का दर्शन दोषदायक तथा गौ एवं घोड़े का दर्शन सुखदायक होता है।

दीपक की ज्योति समान हो तो सिद्धिदायक और टेढ़ी मेढ़ी हो तो नाश करने वाली मानी गयी है। ज्योति से चट चट या अन्य प्रकार की आवाज हो तो कर्ता को भय, ज्योति उज्वल हो तो सुखदायक, वह काली हो तो शत्रुभयदायक तथा वह वमन कर रही हो तो पशुओं का नाश करती है।

दीप दान करने पर यदि संयोगवश दीप पात्र टूटा हुआ दिखलायी दे तो १५ दिन के भीतर यजमान यमलोक चला जाता है।

वर्त्यन्तरं यदाकुर्य्यात्कार्यं सिद्धिर्घेद्विलम्बतः।
नेत्रहीनोभवेत्कर्ता तस्मिन्दीपान्तरे कृते ॥ ९९ ॥
अशुचिस्पर्शनेत्वाधिर्दीपनाशे तु चौरभीः।
श्वमार्जाराखुसंस्पर्शे भवेद्भूपतितो भयम् ॥ १०० ॥
यात्रारम्भे वसुपलैःकृतो दीपोऽखिलेष्टदः।
तस्माद्दीपः प्रयत्नेन रक्षणीयोन्तरायतः ॥ १०१ ॥
आसमाप्तेःप्रकुर्वीत ब्रह्मचर्य्यं च भूशयम्।
स्त्रीशूद्रपतितादीनां सम्भाषामपि वर्जयेत् ॥ १०२ ॥

॥ ९५ ॥ आख्वोत्वोर्भूषकमार्ज्जारयो :॥९६-१०० ॥ वसुपलैरष्टपलैः। अंतरायतो विघ्नेभ्यः ॥ १०१ ॥ भूशयभूमिशयनम् ॥ १०२ ॥

जपेत्सहस्रं प्रत्येकं मन्त्रराजं नवाक्षरम् ।
स्तोत्रपाठं प्रतिदिनं निशीथिन्यां विशेषतः ॥ १०३ ॥
एकपादेन दीपाग्रे स्थित्वायो मन्त्रनायकम् ।
ससस्रं प्रजपेद्रात्रौ सोभीष्टं क्षिप्रमाप्नुयात् ॥ १०४ ॥
समाप्य शोभने घस्रे सम्भोज्य द्विजनायकान् ।
कुम्भोदकेन कर्तारमभिषिञ्चेन्मनुंस्मरन् ॥ १०५ ॥
कर्ता तु दक्षिणां दद्यात्पुष्कलां तोषहेतवे ।
गुरौतुष्टेददातीष्टं कृतवीर्य्यसुतो नृपः ॥ १०६ ॥
गुर्वाज्ञया स्वयं कुर्य्याद्यदिवाकारयेद्गुरुम् ।
कृत्वारत्नादिदानेन दीपदानं धरापतेः ॥ १०७ ॥
गुर्वाज्ञामंतराकुर्य्याद्योदीपं स्वेष्टसिद्धये ।
प्रत्युतानुभवत्येष हानिमेव पदेपदे ॥ १०८ ॥
दीपदानविधिन्नूयात्कृतघ्नादिषु नो गुरुः
दुष्टेभ्य.कथितो मन्त्रवक्तुर्दुः खावहो भवेत् ॥ १०९ ॥
उत्तमं गोघृतं प्रोक्तं मध्यमं महिषीभवम् ।
तिलतैले तु ताट्टक्स्यात्कनीयोजादिजं घृतम् ॥ ११० ॥
आस्यारोगे सुगन्धेन दद्यातैलेन दीपकम् ।
सिद्धार्थसम्भवेनाथ द्विषतां नाशहेतवे ॥ १११ ॥
पलैर्दशशतैर्दीपे विहिते चेन्नटश्यते ।
कार्य्यसिद्धिस्तदात्रिस्तुदीपः कार्य्यो यथाविधि ॥ ११२ ॥
तदा सुदुर्लभं कार्य्यं सिद्धयत्येव न संशयः ।

कर्तव्याकर्तव्य : (दीप में, अन्य बत्ती डालने से अभीष्ट कार्य में विलम्ब से सिद्धि मिलती है ।

दीपपात्र में अन्य दीप जलाने पर कर्ता अन्धा हो जाता है । अशुद्ध अवस्था में उसका स्पर्श करने से आधि-व्याधि उत्पन्न होती है । दीप नष्ट होने पर चोरों का भय तथा कुत्ता, बिल्ली एवं चूहे का स्पर्श होने से राजभय होता है ।

यात्रा प्रारम्भ करते समय ८ पल की मात्रा वाला दीप समस्त अभीष्टों को पूरा करता है । (उक्त फलों को ध्यान में रखते हुए) प्रयत्नपूर्वक दीप की विघ्नों से रक्षा करनी चाहिए ।

निशीथिन्यांरात्रौ ॥ १०३-१०६ ॥ रत्नादिदानेनगुरुंवृत्वाधरापतेःकार्तवीर्यस्यदीपदानंकारयेदित्यन्वयः ॥ १०७-१०९ ॥ अजादिघृतंकनीयोऽधमम् ॥ ११०-११२ ॥

प्रत्येक दीप के सम्मुख नवाक्षर (श्लोक ९१–९२ में वर्णित) मन्त्रराज का १ हजार जप करना चाहिए, तथा प्रतिदिन स्तोत्र पाठ करना चाहिए।

विशेषकर निशीथकाल में दीप के सम्मुख एक पैर से खड़ा होकर जो व्यक्ति मन्त्रराज का १ हजार जप करता है, वह शीघ्र ही अपने अभीष्ट को प्राप्त करता है।

इस प्रयोग को अच्छे दिन समाप्त कर श्रेठ ब्रह्मणों को भोजन कराने के बाद कुम्भ के जल से मूल मन्त्र का स्मरण करते हुए कर्ता का अभिषेक करना चाहिए। कर्ता गुरु को पूर्ण सन्तोषदायक एवं पर्याप्त दक्षिणा दे। गुरु के सन्तुष्ट होने पर कृतवीर्य का पुत्र राजा कार्तवीर्यार्जुन सब अभीष्टों को पूरा करता है।

गुरु की आज्ञा से ही यह प्रयोग स्वयं करना चाहिए। अथवा रत्न आदि देकर गुरु का वरण कर कार्तवीर्यार्जुन का दीप दान कराना चाहिए। गुरु की आज्ञा के बिना जो व्यक्ति अपनी इष्टसिद्धि के लिए दीप दान करता है, उसे सिद्धि नहीं मिलती प्रत्युत ऐसा अनुभव किया गया है कि उसे कदम कदम पर नुकसान उठाना पड़ता है।

कृतघ्न आदि दुर्जनों को गुरु दीपदान विधि न बतलावें। दुष्टों को बतलाया गया मन्त्र बतलाने वाले को दुःख देता है।

(दीप के लिए) गौ का घी उत्तम कहा गया है। भैंस का घी मध्यम बतलाया गया है। तिल का तेल भी मध्यम होता है। बकरी आदि का घी अधम होता है। मुख का रोग होने पर सुगन्धित तेल से दीपक प्रज्वलित करना चाहिए। तथा शत्रुओं का नाश करने के लिए सफेद सरसों के तेल से दीप प्रज्वलित करना चाहिए।

१ हजार पल वाले दीप का दान करने पर भी यदि सिद्धि न हो तो विधि पूर्वक ३ दीपों का दान करना चाहिए। ऐसा करने से कठिनतम कार्य भी सिद्ध हो जाते हैं।

यथाकथंचिद्यः कुर्य्याद्दीपदानं स्ववेश्मनि ॥ ११३ ॥
विघ्नाः सर्वेरिभिःसाकं तस्य नश्यन्ति दूरतः।
सर्वदा जयमाप्नोति पुत्रान्पौत्रान्धनं यशः ॥ ११४ ॥
यथाकथंचिद्यो दीपं नित्यं गेहे समाचरेत्।
कार्तवीर्यार्जुनप्रीत्यैसोऽभीष्टं लभते नरः ॥ ११५ ॥

नित्य दीप : जिस किसी भी प्रकार से जो व्यक्ति प्रतिदिन अपने घर में दीपदान करता है, उसके समस्त विघ्न एवं शत्रु दूर से ही नष्ट हो जाते हैं।

॥ ११३ ॥ ११४ ॥ यथाकथंचिदिति। अनेननित्यदीपेपूर्वोक्तस्यपात्रघृतनियमस्यानावश्यकतांदर्शयति। त्रिपलमितेपात्रे एकपलघृतेननित्यंदीपोदेयः। यथाकथंचिद्वा।। सर्वथादात्तव्य एवेतिभावः ॥ ११५ ॥

वह सदैव विजय प्राप्त करता है तथा पुत्र, पौत्र, धन एवं यश प्राप्त करता है। (पात्र एवं घृत आदि के नियम के बिना भी) जो व्यक्ति जिस किसी प्रकार से प्रतिदिन घर में कार्तवीर्यार्जुन की प्रसन्नता के लिए दीपदान करता है, वह अपना अभीष्ट प्राप्त करता है।

दीपप्रियः कार्तवीर्य्यो मार्तण्डो नतिवल्लभः।
स्तुतिप्रियो महाविष्णुर्गणेशस्तर्पणप्रियः॥ ११६॥
दुर्गार्च्चनप्रिया नूनमभिषेकप्रियःशिवः।
तस्मात्तेषां प्रतोषाय विदध्यात्तत्तदादृतः॥ ११७॥

देवताओं की प्रिय वस्तुएं : कार्तवीर्यार्जुन को दीप अत्यन्त प्रिय है। सूर्य को नमस्कार प्रिय है। विष्णु को स्तुति अच्छी लगती है। गणेश को तर्पण प्रिय है। दुर्गा को पूजन प्रिय है तथा शिव को अभिषेक प्रिय है। इसलिए इन देवताओं को प्रसन्न करने के लिए उनके प्रिय कार्यों को करना चाहिए।

दीपदानप्रियोऽर्जुनः। तत्प्रसंगादन्यदेवानांयद्यद्प्रियंतदाह। दीपेति। मार्तण्डः-सूर्योनमस्कारप्रियः॥ ११६॥ दुर्गासुन्दरी॥ ११७॥ इतिमन्त्रमहोदधिटीकायांनौकायां-कार्तवीर्यार्जुनमन्त्रनिरूपणंनामसप्तदशस्तरंगः॥ १७॥

इति श्री शुकदेव चतुर्वेदि विरचितायां सटिपण्यां मन्त्रमहोदधेः
मोहनी व्याख्यायां सप्तदशस्तरङ्गः।

अष्टादश तरङ्ग

कालरात्रिमथो वक्ष्ये सपत्नगणसूदनीम् ।
तारवाक्छक्तिकन्दर्परमाःकाह्वेश्वरीति च ॥ १ ॥
सर्वजनमनोवर्णाहरिसर्वमुखां ततः ।
स्तम्भन्यन्ते सर्वराजवशंकरिपदं ततः ॥ २ ॥
सर्वदुष्टनिर्दलनिसर्वस्त्रीपुरुषार्णकाः ।
कर्णिणीिततो बन्दीशृङ्खलास्त्रोटयद्वयम् ॥ ३ ॥
सर्वशत्रून्भञ्जयद्विर्द्वेष्टृन्निर्दलयद्व यम् ।
सर्वस्तम्भययुग्मंस्यान्मोहनास्त्रेण तत्परम् ॥ ४ ॥
द्वेषिणःपदमुच्चार्य्य तत उच्चाटयद्वयम् ।
सर्ववशंकुरुद्वन्द्वंस्वाहादेहियुगं पुनः ॥ ५ ॥
सर्वं च कालरात्रीति कामिनीतिगणेश्वरी ।
नमोन्तेयं महाविद्या गुणरामधराक्षरा ॥ ६ ॥

कालरात्रि के मन्त्र का उद्धार : अब शत्रु समुदाय को नष्ट करने वाली कालरात्रि को बतलाता हूँ :

तार (ॐ) वाक् (ऐं) शक्ति (ह्रीं) कन्दर्प (क्लीं) तथा रमा (श्रीं) फिर 'काह्वेश्वरि' 'सर्वजन मनो' एवं 'हरि सर्वमुख' के बाद 'स्तम्भनि' 'सर्वराज वशंकरि' 'सर्वदुष्ट निर्दलनिसर्वस्त्रीपुरुषा' एवं 'कर्षणि' फिर 'बन्दी शृङ्खला स्त्रोटय त्रोटय' 'सर्वशत्रून्भंजय

अथ कालरात्रिमन्त्रमाह । तारेति । तारॐ । वाक्ऐं । शक्तिःह्रीं । कंदर्पःक्लीं । रमाश्रीं । अग्रेस्वरूपम् । यथा – ॐ ऐंह्रींक्लीं श्रींकाह्वेश्वरिसर्वजनमनोहरिसर्वमुखस्तंभनिसर्वराजवशंकरि सर्वदुष्टनिर्दलनि सर्वस्त्रीपुरुषाकर्षिणि बन्दी शृङ्खलास्त्रोटय २ सर्वशत्रून्भंजय २ द्वेष्टन्निर्दलय २ सर्वस्तंभय २ मोहनास्त्रेणद्वेषिणउच्चाटय २ सर्ववशं कुरु २ स्वाहादेहि २ सर्वकालरात्रिकामिनिगणेश्वरिनमइति । गुणरामधराद्यरात्रयस्त्रिंशदुत्तरशताणां ॥ १–६ ॥

भंजय' 'द्वेष्टन् निर्दलय निर्दलय' 'सर्व स्तम्भय स्तम्भय' एवं 'मोहनास्त्रेण' के बाद 'द्वेषिण' पद बोलकर 'उच्चाटय उच्चाटय' फिर 'सर्व वशं कुरु कुरु' 'स्वाहा' एवं 'देहि देहि' फिर 'सर्व' 'कालरात्रि' 'कामिनी' एवं 'गणेश्वरि' के बाद अन्त में 'नमः' लगाने से यह १३३ अक्षर वाली महा विद्या बनती है।

टिप्पणी : कालरात्रि का मन्त्र : ॐ ऐं ह्रीं क्लीं श्रीं काल्लेश्वरि सर्वजन-मनोहरि सर्वमुखस्तम्भनि सर्वराजवशंकरि सर्वदुष्टनिर्दलनि सर्वस्त्रीपुरुषाकर्षिणि बन्दी शृङ्खलास्त्रोटय त्राटय सर्वशत्रून्भंजय भंजय द्वेष्टून् निर्दलय निर्दलय सर्व स्तम्भय स्तम्भय मोहनास्त्रेण द्वेषिण उच्चाटय उच्चाटय सर्व वशं कुरु कुरु स्वाहा देहि देहि सर्व कालरात्रि कामिनि गणेश्वरि नमः।

ऋषिर्दक्षोतिजगती छन्दोलर्कनिवासिनी।
देवताकालरात्रिःस्यात्कालिका बीजमीरितम् ॥ ७ ॥
मायाराज्ञीतिशक्तिःस्यान्नियोगःस्वेष्टसिद्धये।

विनियोग : इस मन्त्र के दक्ष ऋषि हैं, अतिजगती छन्द है, अलर्क निवासिनी कालरात्रि देवता है, कालिका (क्रीं) बीज है, मायाराज्ञी शक्ति है तथा अपने अभीष्ट की सिद्धि के लिए इस महाविद्या का निनियोग होता है।

टिप्पणी : विनियोग : अस्य कालरात्रि मन्त्रस्य दक्ष ऋषिः अतिजगती छन्दः अलर्कनिवासिनी कालरात्रिर्देवता क्रीं बीजं मायाराज्ञी शक्तिः ममाभीष्टसिद्धये जपे विनियोगः।

ऋष्यादिन्यास : ॐ दक्षाय ऋषये नमः—शिरसि। ॐ अतिजगती छन्दसे नमः—मुखे। ॐ कालरात्रिर्देवतायै नमः—हृदि। ॐ क्रीं बीजाय नमः—गुह्ये। ॐ मायाराज्ञी शक्तये नमः—पादयोः।

पञ्चांगुलिषु ताराद्यं विन्यसेद्बीजपञ्चकम् ॥ ८ ॥
हृदयं वेदनेत्राणैः शिरो बाणाक्षिवर्णकैः।
प्रोक्ता शिखैकविंशत्या वर्माष्टादशभिःस्मृतम् ॥ ९ ॥
षड्विंशत्यानेत्रमस्त्रं नन्दचन्द्राक्षरैर्मतम्।
विधायैव षडङ्गानि ध्यायेद्विश्वविमोहिनीम् ॥ १० ॥

षडङ्गन्यास : पाँचों अंगुलियों पर प्रणव आदि ५ बीजों (ॐ ऐं ह्रीं क्लीं श्रीं) का न्यास करना चाहिए। फिर मन्त्र के क्रमशः २४ वर्णों का हृदय पर, २५ वर्णों का शिर पर, २१ वर्णों का शिखा पर, १८ वर्णों का कवच पर, २६ वर्णों का नेत्र

कालकाबीजंक्रीं ॥ ७ ॥ ८ ॥ वेदनेत्राणैश्चतुर्विंशतिवर्णैः। बाणाक्षिवर्णकः पंचविंशतिवर्णैः ॥ ९ ॥ नन्दचन्द्राक्षरैरेकोनविंशत्यर्णैः ॥ १० ॥

पर तथा १९ वर्णों का अस्त्र पर न्यास करना चाहिए। इस प्रकार षडङ्गन्यास करने के बाद विश्वमोहिनी देवी का ध्यान करना चाहिए।

टिप्पणी : न्यासविधि : ॐ अंगुष्ठाभ्यां नमः। ऐं तर्जनीभ्यां नमः। ह्रीं मध्यमाभ्यां नमः। क्लीं अनामिकाभ्यां नमः। श्रीं कनिष्ठाभ्यां नमः।

इन मन्त्रों से पाँचों अंगुलियों पर न्यास करने के बाद निम्नलिखित मन्त्रों से षडङ्गन्यास करना चाहिए, यथा :

ॐ ऐं ह्रीं क्लीं श्रीं काङ्केश्वरि सर्वजन मनोहरि सर्वमुखस्तंभनि हृदयाय नमः। सर्वराजवशंकरि सर्वदुष्टनिर्दलनि सर्वस्त्रीपुरुषाकर्षिणि शिरसे स्वाहा। बन्दी शृङ्खला स्त्रोटय त्रोटय सर्वशत्रून्मंजय मंजय शिखायै वषट्। द्वेष्टून् निर्दलय निर्दलय सर्वस्तम्भय स्तम्भय कवचाय हुम्। मोहनास्त्रेण द्वेषिण उच्चाटय उच्चाटय सर्वं वशं कुरु कुरु स्वाहा नेत्रत्रयाय वौषट्। देहि देहि सर्वं कालकामिनि गणेश्वरि नमः अस्त्राय फट्।

उद्यन्मार्तण्डकांति विगलितकबरीं कृष्णवस्त्रावृतांगीं-
दण्डंलिंगंकराब्जैर्वरमथभुवनं सन्दधानां त्रिनेत्राम्।
नानाकल्पौघभासां स्मितमुखकमलां सेवितां
देवसंघैर्मायां राज्ञींमनोभूशरविकलतनूमाश्रयेकालरात्रिम्॥ ११॥

ध्यान : उदीयमान् सूर्य जैसी आभावाली, बिखरे हुए बालों वाली, काले वस्त्र धारण किये हुई, चारों हाथों में क्रमशः दण्ड, लिंग, वर एवं भुवन को धारण करने वाली, तीन नेत्रवाली, विविध आभूषणों से सुशोभित, प्रसन्नवदना, देवगणों से सेवित एवं कामबाण से विकलित शरीर वाली मायाराज्ञी कालरात्रि का ध्यान करता हूँ।

अयुतं प्रजपेन्मन्त्रं दशांशं जुहुयात्तिलैः।
पयोरुहैर्वाविप्रेन्द्रान्संतर्प्य श्रेय आप्नुयात्॥ १२॥

जपसंख्या हवन एवं ब्राह्मण भोजन : इस मन्त्र का १० हजार जप करना चाहिए। तिल या कमलों से दशांश होम करना चाहिए, तथा श्रेष्ठ ब्राह्मणों को भोजनादि से सन्तुष्ट कर साधक श्रेय प्राप्त करता है।

तां यजेत्कालिकापीठे पूजार्थं यन्त्रमुच्यते।
बिन्दुत्रिकोणषट्कोणवृत्ताष्टदलवृत्तकम्॥ १३॥

ध्यानमाह। उद्यदिति। दण्डवरौ दक्ष्योः। लिङ्गभुवने वामयोः। भुवनंब्रह्माण्डम्। नानाकल्पैर्विभासांविविधाभरणसमूहशोभिताम्। मनोभूशरविकलतनूं कामबाणव्याकुल-शरीराम् ॥ ११ ॥ १२ ॥ कालिकापीठेजयादिशक्तियुते ।: पूजायन्त्रमाह। विंद्विति॥ १३॥

कलांपत्र पुनर्वृत्तं त्रिरेखं धरणीगृहम् ।
चतुर्द्वारियुतं कृत्वा बिन्दौ देवीमथार्चयेत् ॥ १४ ॥
तद्यन्त्रं विलिखेद्भूर्जे क्षीरद्रोः फलकेपिवा ।
शान्तयेत्वष्टगन्धेन लेखिन्या चम्पकोत्थया ॥ १५ ॥
कर्चूरागुरुकर्पूररोचनारक्तचन्दनम् ।
कुंकुमंचन्दनं चापि कस्तूरीत्यष्टगन्धकम् ॥ १६ ॥
सिन्दूरहिंगुलाभ्यां च वश्याय विलिखेत्सुधीः ।
सारसोद्भवलेखिन्या स्तंभने कोकिलच्छदैः ॥ १७ ॥
हारितालहरिद्राभ्यां मारणे वायसच्छदैः ।
धत्तूरभानुनिर्गुण्डीखराश्वमहिषासृजा ॥ १८ ॥

पूजनयन्त्र : कालरात्रि का पूजन कालिका पीठ पर करना चाहिए। उसकी पूजा के लिए यन्त्र बतलाता हूँ :

बिन्दु, त्रिकोण, षड्कोण एवं उसके ऊपर वृत्त बनाना चाहिए। फिर अष्टदल बनाकर उसके ऊपर वृत्त तत्पश्चात षोडशदल लिखकर पुनः वृत्त और उसके बाद तीन रेखाओं से चार द्वार द्वारा भूपुर बनाना चाहिए। (देखिये चित्र ४६)।

ऐसा यन्त्र लिखकर मध्यस्थ बिन्दु में देवी का पूजन करना चाहिए।

यह यन्त्र भोजपत्र या दूध वाले वृक्ष (पीपल, पाकड़ गूलर या बरगद) के पत्ते पर लिखना चाहिए। शान्ति के लिए यह यन्त्र अष्टगन्ध से चम्पा की कलम से लिखना चाहिए। कर्चूर, अगर, कपूर, गोरोचन, लालचन्दन, कुंकुम, श्वेत चन्दन एवं कस्तूरी— इन आठ गन्ध पदार्थों को अष्टगन्ध कहते हैं।

वश्य के लिए यह यन्त्र सिन्दूर एवं हिंगुल (बनमष्टा) की कलम से लिखना चाहिए। स्तम्भन में यह यन्त्र हरिताल एवं हल्दी से कोयल के पंख से लिखना चाहिए। मारण में यह यन्त्र धतूरा, आक एवं सिन्धुआर के रस में गदहा, घोड़ा एवं भैंसा का खून मिलाकर कौआ के पंख से लिखना चाहिए।

कलापत्रंषोडशदलम्। तिस्रोरेखायस्यतत् धरणीगृहंचतुष्कोणम् ॥ १४ ॥ कामनाभेदाल्लेखनभेदमाह। तद्यन्त्रमिति क्षीरद्रोःक्षीरवृक्षस्याश्वत्थोदुंबरप्लक्षवटान्यतमस्य॥ १५ ॥ ॥ १६ ॥ स्तम्भनेकोकिलपक्षैः ॥ १७ ॥ हरितालहरिद्राभ्यामित्यन्वयः। मारणेवायसच्छदैः धत्तूररसादिभिर्लिखेत् इत्यस्यान्वयः। भानुरर्करसः। खरादीनामसृजारक्तेन ॥ १८ ॥

पीठ पूजा विधि : सर्वप्रथम श्लोक संख्या ११ में वर्णित कालरात्रि देवी का ध्यान कर मानसोपचार से पूजन कर विधिवत अर्घ्य स्थापित कर निम्नलिखित मन्त्रों से निर्दिष्ट स्थानों पर पीठ देवताओं का पूजन करना चाहिए, यथा :

पीठ मध्ये – ॐ आधार शक्त्यै नमः । ॐ प्रकृतये नमः । ॐ कमठाय नमः । ॐ शेषाय नमः । ॐ पृथिव्यै नमः । ॐ सुधाम्बुधये नमः । ॐ मणिद्वीपाय नमः । ॐ चिन्तामणिगृहाय नमः । ॐ श्मशानाय नमः । ॐ पारिजाताय नमः ।

ततः कर्णिकायाः मूले – ॐ रत्नवेदिकायै नमः ।

कर्णिकोपरि – ॐ मणिपीठाय नमः ।

चतुर्दिक्षु– ॐ मुनिभ्यो नमः । ॐदेवेभ्यो नमः । ॐशिवाभ्यो नमः । ॐशिवमुण्डेभ्यो नमः । ॐ धर्माय नमः । ॐ ज्ञानाय नमः । ॐ वैराग्याय नमः । ॐऐश्वर्याय नमः । ॐ अधर्माय नमः । ॐ अज्ञानाय नमः । ॐ अवैराग्याय नमः । ॐ अनैश्वर्याय नमः । ह्रीं ज्ञानात्मने नमः ।

तत्पश्चात् केसरों में पूर्वादि ८ दिशाओं में तथा मध्य में नाममन्त्रों से जया आदि पीठ शक्तियों का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ जयायै नमः । ॐ विजयायै नमः । ॐ अजितायै नमः । ॐ अपराजितायै नमः । ॐ नित्यायै नमः । ॐ विलासिन्यै नमः । ॐ दोग्ध्यै नमः । ॐ अघोरायै नमः । ॐ मंगलायै नमः ।

इसके बाद 'ह्रीं कालिका योग पीठात्मने नमः'–इस मन्त्र से आसन देकर मूल मन्त्र से मूर्ति कल्पित कर ध्यान, आवाहन आदि उपचारों से पञ्चपुष्पाञ्जलिदान पर्यन्त कालरात्रि देवी का विधिवत पूजन करने के बाद आवरण पूजा करनी चाहिए ।

एवं विलिखिते यन्त्रे कुर्य्यादावरणार्चनम् ।
त्रिकोणे देवतास्तिस्रो वामावर्तेन पूजयेत् ॥ १९ ॥
सम्मोहिनीं मोहिनीं चतृतीयां चविमोहिनीम् ।
षट्सु कोणेषु वह्न्यादिषडङ्गानि ततो यजेत् ॥ २० ॥
वृत्तेस्वराःसमभ्यर्च्या मातरोष्टौ वसुच्छदे ।
कादिक्षान्ता हलोवृत्ते उर्वश्याद्याःकलादले ॥ २१ ॥
उर्वशीमेनकारम्भाघृताचीमञ्जुघोषया ।
सहजन्यासुकेशीस्यादष्टमीतु तिलोत्तमा ॥ २२ ॥
गन्धर्वीसिद्धकन्याचकिन्नरीनागकन्यका ।
विद्याधरी किंपुरुषा यक्षिणीतिपिशाचिका ॥ २३ ॥

॥ १९॥ २० ॥ स्वराअन्नमहृत्यादयः । हलोऽन्यअनानिकंनमहृत्यादीनि । कलादले-षोडशपत्रे ॥ २१ ॥ मञ्जुघोषयासह घृताची ॥ २२ ॥ २३ ॥

पुनर्वृत्ते यजेन्मन्त्री देवतादशकं यथा ।
मन्त्रादिमं पञ्चबीजं स्वस्वदेवतयायुतम् ॥ २४ ॥
पञ्चबणान्स्वबीजाद्यानित्युक्त्वा दशदेवताः ।
भूगृहान्तः समभ्यर्च्या अणिमाद्यष्टसिद्धयः ॥ २५ ॥
भूगृहस्य त्रिरेखासु सम्पूज्या नवदेवताः ।
इच्छाशक्तिःक्रियाशक्तिर्ज्ञानिशक्तिरितित्रयम् ॥ २६ ॥
आद्यरेखागतं पूज्यं द्वितीयायांशिवाजकाः ।
तृतीयायां तु रेखायां सत्त्वमुख्यंगुणत्रयम् ॥ २७ ॥
पूर्वादिषु चतुर्द्वार्षु गणेशं क्षेत्रपालकम् ।
बटुकं यागिनाश्चापि यजेदिन्द्रादिकानपि ॥ २८ ॥
एवं बाह्यार्च्चनं कृत्वा देवीपार्श्वगताःपुनः ।
देव्योद्वादशसम्पूज्याःप्रतिदिक्त्रितयं त्रयम् ।॥ २९ ॥
मायाद्या कालरात्रिश्चतृतीया वटवासिनी ।
गणेश्वरी चकाह्लाख्या व्यापिकालार्कवासिनी ॥ ३० ॥
मायाराज्ञी च मदनप्रियास्याद्दशमीरतिः :
लक्ष्मीःकाह्लेश्वरी चेति देव्यो द्वादशकीर्तिताः ॥ ३१ ॥
नैवेद्यान्ताचनं कृत्वा दद्यान्मद्यादिना बलिम् ।
एवं सम्पूजिता स्वेष्टं कालरात्रिः प्रयच्छति ॥ ३२ ॥

आवरण पूजा : इस प्रकार लिखित यन्त्र पर आवरण पूजा करनी चाहिए। त्रिकोण में संमोहिनी, मोहिनी एवं विमोहिनी इन ३ देवताओं का वामावर्त क्रम से पूजन करना चाहिए। फिर आग्नेय आदि दिशा में षट्कोणों में षडङ्गपूजन करना चाहिए। वृत्त में अकरादि स्वरों का तथा अष्टदल में ब्राह्मी आदि मातृकाओं का पूजन करना चाहिए। (द्वितीय) वृत्त में ककार से लेकर क्षकारान्त व्यञ्जनों का तथा षोडशदल मे उर्वशी आदि का पूजन करना चाहिए। १. उर्वशी, २. मेनका, ३. रंभा, ४. घृताची, ५. मञ्जुघोषा, ६. सहजन्या, ७. सुकेशी, ८. तिलोत्तमा, ९. गन्धर्वी, १०. सिद्धकन्या, ११. किन्नरी, १२. नागकन्यका, १३. विद्याधरी १४. किंपुरुषा १५. यक्षिणी तथा १६. पिशाचिका– (इनका) षोडशदल में पूजन करना चाहिए।

मन्त्रादिमामात । मन्त्रादौवर्तमानबीपञ्चकस्वदेवतायुतंयजेत् । यथाॐपरमात्मननमः । ऐंसरस्वत्यैनमः । ह्रींगौर्यै० । क्लींकामायै० श्रींरमायै इति ॥ २४ ॥ पञ्चेति । स्वबीजाद्यान् पञ्चबाणान्द्रांद्रावणबाणायनमः इत्यादिपूर्वोक्तान् । अणिमादयउक्ताः ॥ २५ ॥ २६ ॥ शिवाजकारुद्रविष्णुब्रह्माणः । सत्त्वमुख्यं सत्त्वरजस्तमांसि ॥ २७ – ३२ ॥

फिर तृतीय वृत्त में इन १० देवताओं का पूजन करना चाहिए, यथा–मूल मन्त्र के ५ बीजों का अपने-अपने देवता के साथ तथा अपने-अपने बीज के साथ ५ बाणों का–इस प्रकार कुल १० देवताओं का पूजन करना चाहिए।

भूपुर के भीतर अणिमादि ८ सिद्धियों का पूजन करना चाहिए। भूपुर की ३ रेखाओं में ९ देवताओं का पूजन करना चाहिए। इच्छाशक्ति, क्रियाशक्ति एवं ज्ञान शक्ति–इन तीनों का पहिली रेखा में, रुद्र, विष्णु एवं ब्रह्मा इन तीनों का दूसरी रेखा में, तथा सत्त्व, रज एवं तमोगुण का तीसरी रेखा में पूजन करना चाहिए।

यन्त्र के पूर्व आदि दिशाओं के चारों द्वारों पर क्रमशः गणेश, क्षेत्रपाल, बटुक एवं योगिनियों का पूजन करना चाहिए। और फिर इन्द्रादि दिग्पालों का भी पूजन करना चाहिए।

इस रीति से बाह्य पूजन करने के बाद देवी के पास चारों दिशाओं में ३–३ के क्रम से १२ देवियों का पूजन करना चाहिए। १ माया, २ कालरात्रि, ३ बटवासिनी ४ गणेश्वरी, ५ काह्ला, ६ व्यापिका, ७ अलार्क वासिनी, ८ मायाराज्ञी, ९ मदनप्रिया, १० रति, ११ लक्ष्मी, एवं १२ काह्लेश्वरी–ये १२ देवियाँ कही गयी हैं।

नैवेद्य समर्पण पर्यन्त पूजन करने के बाद मद्य आदि से बलि देनी चाहिए। इस रीति से पूजन करने पर कालरात्रि साधक को उसका अभीष्ट देती है।

टिप्पणी : आवरण पूजा विधि : सर्वप्रथम त्रिकोण में वामावर्त क्रम से नाममन्त्रों से संमोहिनी आदि ३ देवताओं का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ संमोहिन्यै नमः। ॐ मोहिन्यै नमः। ॐ विमोहिन्यै नमः।

फिर षट्कोण में आग्नेय आदि कोणों में निम्नलिखित मन्त्रों से षडङ्गपूजा करनी चाहिए, यथा :

ॐ ऐं ह्रीं क्लीं श्रीं काह्लेश्वरिसर्वजनमनोहरिसर्वमुखस्तंभनि हृदयाय नमः। सर्वराजवशंकरि सर्वदुष्टनिर्दलनिसर्वस्त्रीपुरुषाकर्षणि शिरसे स्वाहा। बन्दी शृङ्खलास्त्रोटय त्रोटय सर्वशत्रून्भंजय भंजय शिखायै वषट्। द्वेष्टून् निर्दलय निर्दलय सर्वं स्तंभय स्तंभय कवचाय हुम्। मोहनास्त्रेण द्वेषिण उच्चाटय उच्चाटय सर्वं वशं कुरुकुरु स्वाहा नेत्रत्रयाय वौषट्। देहि देहि सर्वं कालरात्रि कामिनि गणेश्वरि नमः अस्त्राय फट्।

तत्पश्चात् वृत्त में 'ॐ अं नमः, ॐ आं नमः, ॐ इं नमः, इत्यादि मन्त्रों से अकारादि १६ स्वरों का पूजन करने के बाद अष्टदल में नाम मन्त्रों से ब्राह्मी आदि ८ मातृकाओं का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ ब्राह्म्यै नमः। ॐ माहेश्वर्यै नमः। ॐ कौमार्यै नमः। ॐ वैष्णव्यै नमः। ॐ वाराह्यै नमः। ॐ इन्द्राण्यै नमः। ॐ चामुण्डायै नमः। ॐ महालक्ष्म्यै नमः।

तदन्तर द्वितीयवृत्त में 'ॐ कं नमः, ॐ खं नमः' इत्यादि मन्त्रों से ककार से क्षकार पर्यन्त समस्त व्यञ्जनों का पूजन करने के बाद षोडशदल में निम्नलिखित मन्त्रों से उर्वशी आदि का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ उर्वश्यै नमः । ॐ मेनकायै नमः । ॐ रंभायै नमः । ॐ घृताच्यै नमः । ॐ मंजुघोषायै नमः । ॐ सहजन्यायै नमः । ॐ सुकेश्यै नमः । ॐ तिलोत्तमायै नमः । ॐ गंधर्व्यै नमः । ॐ सिद्धकन्यायै नमः । ॐ किन्नर्यै नमः । ॐ नागकन्यायै नमः । ॐ विद्याधर्यै नमः । ॐ किंपुरुषायै नमः । ॐ यक्षिण्यै नमः । ॐ पिशचिकायै नमः ।

इसके बाद तृतीय वृत्त में निम्नलिखित मन्त्रों से अपने अपने बीज के साथ मूल-मन्त्र के ५ बीजों के देवता तथा ५ बाणों का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ परमात्मने नमः । ऐं सरस्वत्यै नमः । ह्रीं गौर्यै नमः । क्लीं कामायै नमः । श्रीं रमायै नमः । द्रां द्रावणबाणाय नमः । द्रीं क्षोभणबाणाय नमः । क्लीं वशीकरणबाणाय नमः । ब्लूं आकर्षणबाणाय नमः । सः उन्मादबाणाय नमः ।

तत्पश्चात् भूपुर के भीतर नाम मन्त्रों से अणिमा आदि ८ सिद्धियों का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ अणिमायै नमः । ॐ महिमायै नमः । ॐ लघिमायै नमः । ॐ गरिमायै नमः । ॐ प्राप्त्यै नमः । ॐ प्राकाम्यायै नमः । ॐ ईशितायै नमः । ॐ वशितायै नमः ।

तदनन्तर भूपुर की तीनों रेखाओं में प्रत्येक रेखा में ३–३ देवताओं के क्रम से निम्नलिखित रीति से ९ देवताओं का पूजन करना चाहिए, यथा :

आद्यरेखायां – ॐ इच्छाशक्तये नमः । ॐ क्रिया शक्तये नमः । ॐ ज्ञान शक्तये नमः ।

द्वितीय रेखायां – ॐ रुद्राय नमः । ॐ विष्णवे नमः । ॐ ब्रह्मणे नमः ।

तृतीय रेखायां – ॐ सं सत्त्वाय नमः । ॐ रं रजसे नमः । ॐ तं तमसे नमः ।

फिर पूर्व आदि दिशओं के चारों द्वारों पर निम्नलिखित मन्त्रों से गणेश, क्षेत्रपाल, बटुक एवं योगिनियों का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ गं गणपतये नमः । ॐ क्षं क्षेत्रपालाय नमः । ॐ बं बटुकाय नमः । ॐ यां योगिनीभ्यो नमः ।

इसके बाद पूर्व आदि अपनी अपनी दिशाओं में निम्नलिखित मन्त्रों से इन्द्र आदि दिक्पालों का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ लं इन्द्राय सायुधाय नमः । ॐ रं अग्नये सायुधाय नमः । ॐ मं यमाय सायुधाय नमः । ॐ क्षं निर्ऋतये सायुधाय नमः । ॐ वं वरुणाय सायुधाय नमः । ॐ यं वायवे सायुधाय नमः । ॐ सं सोमाय सायुधाय नमः । ॐ हं ईशानाय सायुधाय नमः । ॐ आं ब्रह्मणे सायुधाय नमः । ॐ ह्रीं अनन्ताय सायुधाय नमः ।

इस रीति से वाह्यपूजा करने के बाद देवी के समीप पूर्व आदि चारों दिशाओं में ३–३ के क्रम से १२ देवियों का उनके नाममन्त्रों से पूजन करना चाहिए, यथा :

पूर्वे – ॐ मायायै नमः । ॐ कालरात्र्यै नमः । ॐ वटवासिन्यै नमः ।

दक्षिणे – ॐ गणेश्वर्यै नमः । ॐ काह्लायै नमः । ॐ व्यापिकायै नमः ।

पश्चिमे – ॐ अलर्कवासिन्यै नमः । ॐ मायाराज्ञै नमः । ॐ मदन प्रियायै नमः ।

उत्तरे – ॐ रत्यै नमः । ॐ लक्ष्म्यै नमः । ॐ काह्लेश्वर्यै नमः ।

इस प्रकार आवरणपूजा करने के बाद धूप, दीप एवं नैवेद्य से विधिवत देवी का पूजन कर मद्य आदि पदार्थों से बलि देनी चाहिए । इस रीति से कालरात्रि का पूजन करने से वह प्रसन्न होकर साधक को अभीष्ट वर देती है ।

शनिवारे तु सन्ध्यायां गच्छेद्रम्यं सरोवरम् ।
हरिद्राक्षतपुष्पैस्तन्मन्त्रेणानेन पूजयेत् ॥ ३३ ॥
तारोनमोजलौकायै द्वितयं सर्वतःपरम् ।
जनंवशंकुरुद्वन्द्वंहुमन्तो मनुरीरितः ॥ ३४ ॥
गृहमागत्य गोत्रायां स्वप्याद्देवीं स्मरन्निशि ।
प्रातस्तत्रैव गत्वाथजलौकाद्वितयं ततः ॥ ३५ ॥
गृहीत्वा तत्प्रशोष्याथ च्छायायां चूर्णयेत्पुनः ।
जलूका चूर्णयुक्तेन कृष्णकार्पाससूत्रतः ॥ ३६ ॥
वातविधाय मुञ्चेत भाजने निर्मिते मृदा ।
कुलालचक्रोत्थितया तत्र तैलंपुनःक्षिपेत् ॥ ३७ ॥
तैलं यन्त्रात्समानीतं भ्रमतो निर्मल शुचि ।
वारस्त्रीसदनाद्वह्निमानीय ज्वालयेत्तु तम् ॥ ३८ ॥
दारुभिःकोकिलाक्षस्य प्रकुर्य्यात्तत्र दीपकम् ।
वह्नेःपुरद्वयं क्षोणीपुरयंत्रे निधापनम् ॥ ३९ ॥

वशीकरणमाह । शनिवारइत्यादिहरिद्राक्षतपुष्पैश्चमन्त्रेणानेनपूजयेदित्यन्तेन । स्पष्टुरिति शेषः ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ गोत्रायांभूमौ ॥ ३५ – ३८ ॥ कोकिलाक्षस्य-कुचिलावृक्षस्य । वह्नेः :पुरंत्रिकोण । तद्द्वयंषट्कोणम् । क्षोणीपुरञ्चतुरस्रम् ॥ ३९ ॥

निशारसेन रचिते मध्ये लाजाससमन्विते ।
कालरात्रिं ततो दीपे समावाह्य प्रपूजयेत् ॥ ४० ॥
युक्तामावरणैःपश्चान्नवीनं खर्परं न्यसेत् ।
दीपोत्थपात्रपतितमादद्यात्कज्जलं सुधीः ॥ ४१ ॥
पश्चिमाभिमुखो मन्त्रीकज्जलं तत्तु मन्त्रयेत् ।
वक्ष्यमाणेन मनुना शतत्रितयसंमितम् ॥ ४२ ॥

वशीकरण : शनिवार को सायंकाल रमणीक सरोवर पर जाना चाहिए, (और) हल्दी, अक्षत एवं पुष्पों से इस मन्त्र से उसका पूजन करना चाहिए ।

तार (ॐ) 'नमो', २ बार 'जलौकाये' फिर 'सर्व' के बाद 'जनं वशं', २ बार 'कुरु' और अन्त में 'हुं' यह पूजन का मन्त्र कहा गया है ।

घर आकर रात्रि में देवी का स्मरण करता हुआ सो जाय । प्रातः उसी सरोवर पर जाकर वहाँ से २ जलौका (जोंक) लाकर छाया में सुखाकर उनका चूरा बना ले । इस चूरे के साथ काले कपास के सूत्र की बत्ती बनाकर उसे कुम्हार की चाक से लायी गयी मिट्टी से बनाये गये पात्र में डालना चाहिए । फिर चलते हुए कोल्हू से निर्मल एवं शुद्ध तेल लाकर दीपक में डालना चाहिए । तत्पश्चात् वेश्या के घर से अग्नि लाकर कुचला की लकड़ियों से जलाकर उससे दीपक को प्रज्वलित करना चाहिए, तथा हल्दी के रस से त्रिकोण षड्कोण एवं भूपुर सहित बने यन्त्र पर बीच में लाजा रखकर उसपर दीपक को स्थापित करना चाहिए ।

तदनन्तर दीपक पर कालरात्रि का आवाहन कर आवरण सहित पूजन करना चाहिए । फिर दीपक पर नवीन खप्पर रखकर दीपक की ज्योति से उत्पन्न काजल लेकर साधक को पश्चिमाभिमुख बैठ कर वक्ष्यमाण ३०० मन्त्रों से उस काजल को अभिमन्त्रित करना चाहिए ।

भूमिःग्लौं । वसुसायकवर्णोष्टपञ्चाशद्वर्णः । प्रयोगोयथा-साधकःशनिवासरेसन्ध्याकालेतडागंगत्वा ॐनमोजलूकायेंजलूकायैंसर्वजनंवशंकुरु २ हुमितिमन्त्रेणहरिद्राक्ताक्षतपुष्पैर्जलंसंपूज्यगृहंगत्वादेवीस्मरन्निशिभूमौशयीत प्रातस्तस्मात्सरसोजलौकाद्वयमादायच्छायाशुष्कंकृत्वासंचूर्ण्यतच्चूर्णयुक्तेनकृष्णकार्पाससूत्रेण वर्तिकांकृत्वाकुलालचक्रानीतमृन्मि मिंतेपात्रे तां निधायभ्रमतस्तैलयन्त्रात्तिलतैलमायादायतत्रनिःक्षिपेत् । वेश्यागृहादग्निमानीयकुचिलाइतिकान्यकुब्जभाषाप्रसिद्धतरोकाष्टैस्तंप्रज्वाल्य तेनतत्पात्रेदीपंकृत्वाहरिद्रारसकृतेत्रिकोणषट्कोणचतुष्कोणात्मकेयन्त्रेमध्येलाजान्प्रक्षिप्यतदुपरिदीपपात्रंस्थापयित्वादीपेकालरात्रिमावाह्यसावरणामिष्ट्वाखर्परंदीपोपरिधृत्वांजनंपातयेत् । तदंजनमादायपश्चिमाभिमुखःशतत्रयमनेनन्त्रेणमन्त्रयेत् ॥ ४० ॥ ४१ ॥ ४२ ॥

टिप्पणी : जलाशय के पूजन का मन्त्र : ॐ नमो जलूकायै जलूकायै सर्वजनं वशं कुरु कुरु हुम् ।

दीप स्थापन यन्त्र : (देखिये चित्र ४७) ।

तारोवाङ्मदनोमायारमाभूमिर्बलूं ह्सौः ।
नमःकाह्लेश्वरि पदं सर्वान्मोहयमोहय ॥ ४३ ॥
कृष्णेते कृष्णवर्णे चकृष्णाम्बरसमन्विते ।
सर्वानाकर्षयद्वन्द्वंशीघ्रंवशंकुरुद्वयम् ॥ ४४ ॥
वाग्भवागिरिजाकाम श्रीबीजान्तो महामनुः ।
वसुसायकवर्णोयमञ्जनस्याभिमन्त्रणे ॥ ४५ ॥

कज्जलाभिमन्त्रण का मन्त्र : तार (ॐ) वाग् (ऐं) मदन (क्लीं) माया (ह्रीं) रमा (श्रीं) भूमि (ग्लौं) फिर 'ब्लूं हसौः नमः काह्लेश्वरि' फिर 'सर्वान् मोहय मोहय कृष्णे' इसके बाद 'कृष्णवर्णे कृष्णाम्बर समन्विते' फिर 'सर्वान्' एवं २ बार 'आकर्षय', 'शीघ्रं वशं' तथा २ बार 'कुरु' फिर वाग् (ऐं) गिरिजा (ह्रीं) काम (क्लीं) एवं अन्त में श्री बीज (श्रीं) लगाने से यह ५८ अक्षर का अंजनाभिमन्त्रण का महामन्त्र बनता है ।

टिप्पणी : अंजनाभिमन्त्रण मन्त्र : ॐ ऐं क्लीं ह्रीं श्रीं ग्लौं ब्लूं ह्सौः नमः काह्लेश्वरि सर्वान्मोहय मोहय कृष्णे कृष्णवर्णे कृष्णाम्बरसमन्विते सर्वानाकर्षय आकर्षय शीघ्रं वशं कुरु कुरु ऐं ह्रीं क्लीं श्रीं ।

दीपादात्मनि संयोज्य देवतामञ्जनं पुनः ।
भौमवारे समभ्यर्च्य नवनीतेन मर्दयेत् ॥ ४६ ॥
मूलेनाष्टोत्तरशतं पुनर्होमं समाचरेत् ।
मधककुसुमैःसाष्टशतं वह्नौ सुसंस्कृते ॥ ४७ ॥
कुमारीं बटुकं नारीं भोजयेन्मधुरान्वितम् ।
तनाञ्जनेन रचिततिलको मन्त्रिसत्तमः ॥ ४८ ॥
दर्शनादेव वशयेन्नरनारीनरेश्वरान् ।
दुग्धेनादौ प्रदत्तं तन्नराणां वशकारकम् ॥ ४९ ॥
तेन स्पृष्टोनरोनूनं दासःस्प्रष्टुर्भवेत्सदा ।

मन्त्रोयथा–ॐऐंक्लीं ह्रींश्रींग्लौंब्लूंह्सौःनमः काह्लेश्वरिसर्वान्मोहय २ कृष्णेकृष्णवर्णे-कृष्णांबरसमन्वितेसर्वानाकर्षय २ शीघ्रं वशंकुरु २ ऐं ह्रींक्लींश्रींइति ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ ततोदीपादेवीमात्मनि संयोज्यतत्कज्जलं भौमवारे नवनीतमर्दितं पात्रेसंस्थाप्यतदग्रेवह्नि-संस्थाप्यसंस्कृत्यमधूकपुष्पैरष्टोत्तरशतंमूलेनहुत्वाकुमारीबटुकस्त्रियोभोजयेत् । तदंजनकृत-तिलकोजगद्वशयेदित्यादि फलंस्पष्टम् ॥ ४६-४९ ॥

हवनादि अन्य कर्म : तत्पश्चात् दीपक से देवी को अपनी आत्मा में स्थापित कर मंगलवार को पुनः देवी एवं अंजन का पूजनकर उस अंजन को मक्खन में मिलाना चाहिए।

फिर सुसंस्कृत अग्नि में महुआ के फूलों से मूलमन्त्र से १०८ आहुतियाँ देनी चाहिए तथा कुमारी, बटुक एवं स्त्रियों को मिष्ठान का भोजन कराना चाहिए।

इस प्रकार बने हुए अंजन का तिलक लगाकर साधक देखने मात्र से ही नर, नारी एवं राजा को बस में कर लेता है। दूध में मिलाकर पिलाने से यह पुरुषों को वश में करता है। साधक के द्वारा स्पर्श करने से ही व्यक्ति उसका सदैव दास हो जाता है।

वशीकरणमाख्यातं स्तम्भनं प्रोच्यतेऽधुना ॥ ५० ॥
हरिद्रारंजिते वस्त्रे लिखेद्यन्त्रमिदं शुभम् ।
निशागोरोचनाकुष्ठाञ्जनैर्गोमूत्रमर्दितैः ॥ ५१ ॥
लिखेदष्टदलं पद्मं रिपुनामाढ्यकर्णिकम् ।
दलेषु विलिखेत्तारद्वयं भूबीजयुग्मकम् ॥ ५२ ॥
चटद्वयं ततो यन्त्रं पीतसूत्रेण वेष्टयेत् ।
कोकिलाख्यतरोःसप्तकण्टकैःपरिकीलितम् ॥ ५३ ॥
भानुवृक्षदलैःसम्यग्वेष्टितं निःक्षिपेत्पुनः ।
वल्मीकरन्ध्रे मेषस्य मूत्रेणोपरि पूरयेत् ५४
अश्मानं रन्ध्रवदनेनिधायाश्मस्थितःसुधीः ।
सहस्रं प्रजपेन्मन्त्रं निशाचरदिशामुखः ॥ ५५ ॥
निशया निर्मितैरक्षैःसमन्त्रःप्रोच्चतेधुना ।
प्रणवोगमनक्षोण्यौ चन्द्रदीर्घत्रयान्वितौ ॥ ५६ ॥
कामाक्षिमायावर्णौते रूपिणीतिपदं ततः ।
सर्वान्ते च मनोहारिण्यन्ते स्तंभययुग्मकम् ॥ ५७ ॥
रोधयद्वितयंपश्चान्मोहयद्वितयं पुनः ।
दीर्घत्रयाढ्यकामस्यबीजंकामोतिमोभगी ॥ ५८ ॥

॥ ५० ॥ स्तम्भनमाह । हरिद्रेति ॥ ५१ ॥ गगनक्षौण्योर्हलौ । चन्द्रोबिंदुः । तेतद्वांर्ह्रींह्रूं इति । अन्तिमःक्षः भगीएयुतःक्षे । यथा-रवौहरिद्रारोचनाकुष्ठतगरैर्गोमूत्रपिष्टैर्हरिद्रारञ्जितेखेऽष्टदलंकृत्वामुकंस्तंभयेतिमध्ये ॐ ॐग्लौंग्लौंचटचटेतिवर्णान्दलेषुचलिखेत् । तद्यन्त्रंपीतवस्त्रंसूत्रेणसंवेष्टयकोकिलतरोःसप्तकंटकैर्विद्धर्कपत्रैः संवेष्टयवल्मीकरंध्रेप्रक्षिप्यमेषमूत्रमुपरिसिक्त्वा रंध्रोपरिशिलांसंस्थाप्यतत्रस्थितोऽमुंमन्त्रंहरिद्रामणिभःसहस्रंजपेत्तैश्चं·

काङ्क्षेश्वरि ततो वमत्रयंपञ्चादशक्षरः ।
प्रोक्तो मन्त्रःप्रजप्तेस्मिञ्छत्रूणां स्तंभनं भवेत् ॥ ५९ ॥

स्तम्भन : इस प्रकार वशीकरण बतलाया गया । अब स्तंभन को बतलाता हूँ :

हल्दी, गोरोचन, कूठ एवं तगर को गोमूत्र में पीसकर उससे हल्दी से रँगे वस्त्र पर अष्टदल लिखना चाहिए । उसकी कर्णिका में शत्रु का नाम (अमुकं स्तम्भय) तथा दलों में २ प्रवण २ भूबीज तथा २ बार 'चट' लिखना चाहिए । फिर इस मन्त्र को पीले वस्त्र से वेष्टित करना चाहिए । तत्पश्चात् कुचला की लकड़ी को ७ कीलों से बींध कर आक के पत्ते में लपेट कर उस यन्त्र को बाँबी में डाल देना चाहिए, और बाँबी को मेढ़ के मूत्र से भर देना चाहिए । फिर बाँबी के मुँह पर पत्थर रख कर उसी पत्थर पर बैठकर साधक नैऋत्य कोण की ओर मुख करके हल्दी के दानों से बनी माला पर वक्ष्यमाणमन्त्र का १ हजार जप करे । अब उस मन्त्र को बतलाते हैं :

प्रणव (ॐ) चन्द्र एवं दीर्घत्रय सहित गगन एवं क्षोणी (ह्लां) ह्लीं ह्लूं) फिर 'कामाक्षिमाया' एवं 'रूपिणि' के बाद 'सर्व' एवं 'मनोहारिणि' फिर २ बार 'स्तंभय' २ बार 'रोधय' २ बार 'मोहय' फिर दीर्घत्रय सहित कामबीज (क्लां (क्लीं क्लूं) फिर 'कामा' भगी अन्तिम (क्षे) 'काङ्क्षेश्वरि' तथा अन्तमें वर्मत्रय (हुं हुं हुं) लगाने से यह ५० अक्षर का मन्त्र बनता है । इस मन्त्र का जप करने से शत्रुओं का स्तम्भन होता है ।

टिप्पणी : *स्तम्भनयन्त्र* : (देखिये चित्र ४८) ।

स्तंभन मन्त्र : ॐ ह्लां ह्लीं ह्लूं कामाक्षि माया रुपिणि सर्वमनोहारिणि स्तंभय स्तंभय रोधय रोधय मोहय मोहय क्लां क्लीं क्लूं कामाक्षे काङ्क्षेश्वरि हुं हुं हुम् ।

रवौ हरिद्रामानीय पिष्ट्वादुग्धेन योषितः ।
तद्रसेन लिखेद्भूर्जे वृत्तमन्तःस्मरान्वितम् ॥ ६० ॥
तद्वृत्तं वेष्टयेत्कामबीजैर्दशभिरादरात् ।
पुनर्वृत्तं प्रकल्प्याथ वेष्टयेदर्कमन्मथैः ॥ ६१ ॥
विरच्याथ पुनर्वृत्तं वेष्टयेत्षोडशस्मरैः ।
तस्योपरिष्टात्षट्कोणं कोणेषु मदनान्वितम् ॥ ६२ ॥
वाग्बीजमध्ये तत्सर्वं यन्त्रं मोहनकारकम् ॥
उपविश्याथ तद्यंत्रे दशवर्णं मनुंजपेत् ॥ ६३ ॥

त्याभिमुखः । मन्त्रोयथा-ॐह्लांह्लींह्लूं कामाक्षिमायारूपिणसर्वमनोहारिणिस्तम्भय २ राधेय २ मोहय २ क्लांक्लींक्लूंकामाक्षेकाङ्क्षेश्वरिहुंहुंहुंइति । एवंकृते रिपुस्तम्भः ॥ ५२ ॥ ५३ ॥ ५४-५९ ॥ मोहनमाह रवाविति । अर्कमन्मथैर्द्वादशकामबीजैः । यथा- रविवारेहरिद्रांनारीदुग्धेन पिष्ट्वातद्रसेनभूर्जपत्रमध्येकामबीजयुतंवृत्तंकृत्वादशकामबीजैः-

ङेंतःकामःकामबीजंकामिन्यैकामसंपुटः ।
ताराद्यो दशवर्णोयं मनुर्लोकविमोहनः ॥ ६४ ॥
पञ्चाहं प्रजपेन्मन्त्रं प्रत्यहं क्रुद्धमानसः ।
तद्दशांशंप्रजुहुयात्तिलैराज्यपरिप्लुतैः ॥ ६५ ॥
होमोत्थभस्मना कुर्वंस्तिलकं नरसत्तमः ।
मोहयेदखिलं विश्वं तद्यन्त्रस्यापि धारणात् ॥ ६६ ॥

मोहन : रविवार को हल्दी लाकर उसे स्त्री के दूध में पीस कर उसके रस से भोजपत्र पर १ वृत्त और उसके भीतर कामबीज लिखना चाहिए। उस वृत्त को १० कामबीजों से वेष्टित करना चाहिए। फिर उसके ऊपर वृत्त बनाकर उसे १२ कामबीजों से वेष्टित करना चाहिए। तत्पश्चात् उसके ऊपर पुनः वृत्त लिखकर उसे १६ कामबीजों से वेष्टित करना चाहिए। उसके ऊपर षड्कोण लिखना चाहिए तथा उसके कोणों में कामबीज लिखना चाहिए। इस पूरे यन्त्र को वाग्बीज के मध्य में करने से यह यन्त्र मोहन करता है।

इसके बाद उस यन्त्र पर बैठ कर दशाक्षर मन्त्र का जप करना चाहिए :

चतुर्थ्यन्त काम 'कामाय' फिर काम (क्लीं) एवं काम संपुटित कामिन्यै (क्लीं कामिन्यै क्लीं) तथा प्रारम्भ में तार (ॐ) लगाने से यह जगत् को मोहित करने वाला दशाक्षर मन्त्र बनता है।

इस मन्त्र का प्रतिदिन क्रुद्ध मानस से ५ दिन तक जप करना चाहिए। तथा घी मिलाकर तिलों से दशांश होम करना चाहिए। हवन की भस्म से तिलक लगाकर या उस यन्त्र को धारण कर साधक समस्त विश्व को मोहित कर देता है।

टिप्पणी : *मोहन यन्त्र* : देखिये चित्र ४९।

मोहन मन्त्र : ॐ कामाय क्लीं क्लीं कामिन्यै क्लीं।

उक्तं मोहनमाकर्षं वक्ष्ये कृष्णाष्टमीदिने ।
भूते वा भूमिजन्मार्कयुक्ते प्रातर्जलान्तरे ॥ ६७ ॥
नाभिदघ्नेस्थितो मूलं सहस्रं सशतं जपेत् ।
ततो गृहं समागत्य तैलाभ्यक्तकलेवरः ॥ ६८ ॥

संवेष्टयपुनर्वृत्तंकृत्वाद्वादशकामबीजैः संवेष्टयपुनर्वृत्तंकृत्वाषोडशकामबीजैःसंवेष्टये परिकामबीजयुक्षट्कोणंकृत्वासर्वं वाग्बीजमध्यस्थंकुर्यात्। तद्यंत्रोपरिस्थित्वापञ्चदिनंप्रत्यहंसहस्रंदशाक्षरंजपेत् ॥ ६०-६३ ॥ मंत्रोयथा-ॐकामायक्लींक्लींकामिन्यैक्लीमिति। जपदशांशेनतिलतैलेनैवजुहुयात्। तद्भस्मनातिलकेनतद्यंत्रधारणेनचविश्वंमोहयेत् ॥ ६४ ॥ ६५ ॥ ६६ ॥ आकर्षणमाह। उक्तमिति। लज्जावतीलज्जालुः। स्पर्शमात्रेणयत्पत्राणिसंकुचं-

पीठादावञ्जनैःकृत्वा स्त्र्याकारं वा नराकृतिम् ।
इष्ट्वा लज्जावतीपत्रैःप्रोक्षेत्तन्मूलजैरसैः ॥ ६९ ॥
तदग्रे प्रजपेच्चत्वारिंशदक्षरकं मनुम् ।
तारोनमःकालिकायैसर्वाकर्षपदं ततः ॥ ७० ॥
रतिवायूभौतिकस्थावमुकीमिति वर्णतः ।
आकर्षयद्वयं शीघ्रमानयद्वितयं ततः ॥ ७१ ॥
पाशोमायांकुशंभद्रकाल्यैहृदयम् ततः ।
चत्वारिंशल्लिपिर्मन्त्रःप्रोक्त आकर्षणक्षमः ॥ ७२ ॥
शतं षष्ट्याधिकं जप्त्वा लोहितैःकरवीरजैः ।
पञ्चाशत्प्रमितैर्मन्त्री पूजयेल्लिखिताकृतिम् ॥ ७३ ॥
मातृकावर्णमेकैकं तन्नमाकर्षयद्वयम् ।
नमइत्यभिसंजप्य पुष्पमेकैकमर्पयेत् ॥ ७४ ॥
धूपदीपनिवेद्यानि कृत्वा होमं समाचरेत् ।
चणकैराज्यसंमिश्रैराकर्षमनुना शतम् ॥ ७५ ॥
कृष्णकार्पाससूत्रस्य कुमारीनिर्मितस्य च ।
गुणं देहमितं कृत्वा अष्टाविंशतितन्तुभिः ॥ ७६ ॥
आकर्षमनुना दद्याद्ग्रन्थीनष्टोत्तरं शतम् ।
तद्दोरके घृते शीघ्रमायातिस्त्रीनरोपि वा ॥ ७७ ॥
त्रिरात्राद्ग्राममध्यस्थोन्यदेश्यो नवरात्रतः ।

आकर्षण : मोहन बतलाया गया, अब आकर्षण को बतलाता हूँ :

कृष्णपक्ष की अष्टमी या चतुर्दशी को मंगल या रविवार होने पर प्रातः नाभि पर्यन्त जल में खड़ा होकर मूल मन्त्र का ११ सौ जप करना चाहिए । फिर घर

न्तिसालज्जालुः । रतिवायूणयौभौतिकस्थौ ऐयुतौ । तेनण्यै । आकर्षणमनुश्चत्वारिंशदर्णः । प्रयोगश्च–कृष्णाष्टम्यांकृष्णचतुर्दश्यांवाकुजरव्यन्यतरयुक्तायांप्रातर्नाभिमात्रेजलेस्थित्वा मूलमेकादशशतंप्रजप्य गृहमागत्यशरीरंतैलेनाभ्यज्यपीठंजनैर्नराकारंयोषिदाकारंवाविलिख्यलज्जावतीपत्रैस्तंसंपूज्यलज्जावतीमूलरसेनसंप्रोक्ष्यतदग्रेऽमुंमन्त्रंषष्ट्याधिकंशतंजपेत् मन्त्रो यथा–ॐनमः कालिकायैसर्वाकर्षण्यैअमुकीमाकर्षय २ शीघ्रमानय २ आंह्रींक्रोंभद्रकाल्यैनमःइति । ततःपञ्चाशत्करवीरपुष्पैःअंअमुकीम् आकर्षय २ नमःआंअमुकीमित्यादिपञ्चादशद्वर्णपूर्वकमेतज्जपंस्तमाकारंपूजयेत् ॥ ६७ ॥ ६८ ॥ ६९ ॥ ७०–७४ ॥ धूपदीपनैवेद्यं कृत्वातदग्रेऽग्निंप्रतिष्ठाप्यतत्राज्याक्तचणकै शतमधुनोक्तमनुनाहुत्वाकुमारीकर्त्तितेनकृष्णकार्पाससूत्रेणाष्टाविंशतितन्तुनिर्मितंस्वदेहमितन्दोरकंकृत्वाकर्षमन्त्रेणाष्टोत्तरशतंग्रंथीन्दत्त्वा तद्धारणान्नरंनारींचाकर्षतीति ॥ ७५ ॥ ७६ ॥ ७७ ॥

आकर शरीर पर तेल लगाकर पीठ पर अंजन से स्त्री या पुरुष की आकृति बनाकर उसका लाजवन्ती के पत्तों से पूजन कर उसकी जड़ के रस से प्रोक्षण करना चाहिए। फिर उसके आगे वक्ष्यमाण ४४ अक्षर वाले मन्त्र का जप करना चाहिए।

तार (ॐ) 'नमःकालिकायै सर्वाकर्ष' तथा भौतिकस्थ रति एवं वायु (ण्यै) फिर 'अमुकीं' २ बार आकर्षय' २ बार 'शीघ्र मानय' फिर पाश (आं) माया (ह्रीं) अंकुश (क्रों) 'भद्रकाल्यै' तथा अन्त में हृदय (नमः) लगाने से यह आकर्षण कारक ४४ अक्षर का मन्त्र बनता है।

इस मन्त्र का १६० बार जप करके साधक ५० लाख कनेर के फूलों से पूर्व लिखित आकृति का पूजन करे। वर्ण माला का १-१ अक्षर बोलकर साध्य का द्वितीयान्त नाम, फिर २ बार 'आकर्षय' तथा अन्त में 'नमः' लगाकर—इस प्रकार बने मन्त्रों से १-१ पुष्प चढ़ाना चाहिए। फिर धूप, दीप एवं नैवेद्य आदि से पूजन कर आकर्षण मन्त्र से घी मिश्रित चनों से १०० आहुतियाँ देनी चाहिए।

तत्पश्चात् कुमारी के हाथ से बने काले सूतों २८ सूत्र वाले अपने शरीर के तुल्य लम्बाई वाले धागे में आकर्षण मन्त्र से १०८ गाँठ लगानी चाहिये। इस गण्डा को धारण करने से अपने गाँव / नगर में रहने वाली स्त्री या पुरुष ३ दिन में और अन्यत्र रहने वाली स्त्री या पुरुष ९ दिन में शीघ्र आ जाते हैं।

टिप्पणी : आकर्षण मन्त्र : ॐ नमः कालिकायै सर्वाकर्षण्यै अमुकीं आकर्षय आकर्षय शीघ्रमानय शीघ्रमानय आं ह्रीं क्रों भद्रकाल्यै नमः।

उक्तमाकर्षणमिदमुच्चाटनमथोच्यते ॥ ७८ ॥
शून्यागारे चतुर्दश्यां कृष्णायां कुक्कुटासनः।
यमाशावदनो मुक्तकचो नीलाम्बरावृतः ॥ ७९ ॥
ग्रंथिसंयुतया मौंज्यारज्ज्वा मन्त्रमिमं जपेत्।
सहस्रद्वयसंख्यातं शबर्य्यादेवतां स्मरन् ॥ ८० ॥
तारोभूधरभृग्वर्कसंवर्ताःक्रिययान्विताः।
प्रत्येकं दीपिकाचंद्रयुक्ताबीजचतुष्टयम् ॥ ८१ ॥
कालरात्रिमहाघ्वांक्षिपदान्तेमुकमुच्चरेत्।
आशूच्चाटययुग्मं तुच्छिर्धिभिधिशुचिप्रिया ॥ ८२ ॥

॥ ७८ ॥ उच्चाटनमाह। शून्यात्। कुक्कुटासनलक्षणमंत्रेवक्तव्यम् ॥ ७९ ॥ ८० ॥ मन्त्रान्तरमाह। तारइति। भूधरोवः। भृगुःसः अर्कोमः। संवर्तश्चः। एतेचत्वारःप्रत्येकं-क्रिययालकारेणयुतास्तथादीपिकाचन्द्रयुताऊबिंदुयुताश्चत्वारिबीजानि। तेनल्लूंस्लूंस्लूंस्लूं ॥ ८१ ॥ शुचिप्रियास्वाहा ॥ ८२ ॥

प्रासादबीजं कामाक्षिसृण्यन्तो मनुरीरितः ।
षट्त्रिंशद्वर्णसंयुक्तः शीघ्रमुच्चाटको रिपोः ॥ ८३ ॥
जपान्ते तद्दशांशेन सर्षपैर्जुहुयान्निशि ।
ततःसर्षपपिण्याकैस्तत्तैलोदकसंयुतैः ॥ ८४ ॥
बलिं प्रदद्यात्तेनैवं मनुना विशिखो भुवि ।
एवं कृते सप्तरात्रं देशाद्दूरं व्रजेदरिः ॥ ८५ ॥

उच्चाटन : यह आकर्षण का प्रयोग बतलाया गया । अब उच्चाटन बतलाता हूँ : कृष्णपक्ष की चतुर्दशी के दिन निर्जन मकान में दक्षिण की ओर मुँह करके शिखा खोलकर नीले वस्त्र पहिन कर एवं कुक्कुटासन में बैठकर शबरी देवता का स्मरण करते हुए गाँठ लगी मूंज की रस्सी की माला से इस मन्त्र का २ हजार जप करना चाहिए ।

तार (ॐ) फिर क्रमशः भूधर, भृगु, अर्क एवं संवर्त सहित क्रिया–इन चारों में सर्वत्र दीपिका एवं चन्द्र लगाने से बने ४ बीज (ब्लूं स्लूं म्लूं ष्लूं), फिर 'कालरात्रि महाघ्वांक्षि' के बाद 'अमुकं' २ बार आशूच्चाटय' २ बार 'छिन्धि' फिर 'भिन्धि' तथा शुचिप्रिया (स्वाहा) फिर प्रासाद बीज (हौं) 'कामाक्षि' एवं अन्त में सृणि (क्रों) लगाने से यह शत्रु का शीघ्र उच्चाटन करने वाला ३६ अक्षर का मन्त्र कहा गया है ।

जप के बाद रात्रि में सरसों से दशांश होम करना चाहिए । फिर सरसों की खली तथा सरसों के तेल को जल में मिलाकर उससे उक्तमन्त्र से शिखा खोलकर भूमि में बलि देनी चाहिए । ऐसा ७ रात तक करने से शत्रु देश छोड़कर दूर भाग जाता है ।

टिप्पणी : उच्चाटन मन्त्र : ॐ ब्लूं स्लूं म्लूं ष्लूं कालरात्रि महाघ्वांक्षि अमुकं आशूच्चाटय आशूच्चाटय छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि स्वाहा हौं कामाक्षि क्रों ।

ययोर्विद्वेषमन्विच्छेत्तयोर्जन्मतरूद्भवम् ।
फलकद्वितयं कृत्वा तत्राकारौ तयोर्लिखेत् ॥ ८६ ॥

प्रासादबीजहौं । सृणिःक्रों ॥ ८३ ॥ प्रयोगोयथा–कृष्णाचतुर्दश्यांशून्यगृहे नीलवस्त्रावृतो मुक्तकच्छोमुक्तशिखोदक्षिणामुखः कुक्कुटासनेनोपविश्य ग्रन्थियुक्तयामुंजरज्ज्वानिशि-सहस्रद्वयममुंमन्त्रंजपेत् । मन्त्रायथा ॐब्लूंस्लूंम्लूंष्लूंकालरात्रिमहाघ्वांक्षिअमुकमाशूच्चाटय २ छिंधि २ भिंधिस्वाहाहौंकामाक्षिक्रोंमिति । ततःशतद्वयमनेनैवमन्त्रेणसर्षपैर्हुत्वातैलोदक-युतेनसर्षपपिण्याकेन तेनमनुनाबलिंदद्यात् ॥ ८४ ॥ एवंसप्ताहंकृतेउच्चाटनसिद्धिः ॥ ८५ ॥ विद्वेषणमाह । ययोरिति । जन्मतरवोन्जमवृक्षाः । तेउक्ताः ॥ ८६ ॥

विषाष्टकेन वालेयीदुग्धाक्तेनाभिधान्वितम् ।
तत्स्पृष्ट्वा प्रजपेन्मन्त्रं सहस्रमधियामिनि ॥ ८७ ॥
वियत्पावकमन्बिन्दुयुग्लौंखंमनुहंसयुक् ।
निद्राग्निमनुबिन्दुस्थाभगवत्यन्तेतिदण्डधा ॥ ८८ ॥
रिण्यन्तेऽमुकममुकंशीघ्रंविद्वेषयद्वयम् ।
रोधयद्वितयंपश्चाद्भंजयद्वितयं रमा ॥ ८९ ॥
मायाराज्ञी चतुर्थ्यन्ता प्रणवं कवचत्रयम् ।
पञ्चाशदक्षरोमन्त्रस्तारादिः सर्वसिद्धिदः ॥ ९० ॥
जपांते फलकद्वंद्वं बद्धारज्ज्वा परस्परम् ।
खरसैरिभगंधर्वपुच्छरोमसमुत्थया ॥ ९१ ॥
वल्मीकरन्ध्रे निखनेत्पुनस्तावज्जपेन्नरः ।
सप्ताहाज्जायते वैरं तयोः प्रीतिमतारपि ॥ ९२ ॥

विद्वेषण : जिन दो व्यक्तियों में विद्वेष कराना हो उनके जन्मनक्षत्र वाले ऋक्ष की लड़की के दो फलक बनाकर उन पर गधी के दूध में विषाष्टक मिलाकर उन दोनों के नाम सहित उनकी आकृति लिखनी चाहिए । फिर इनका स्पर्श करते हुए अर्धरात्रि में इस मन्त्र का १ हजार जप करना चाहिए :

पावक मनु एवं इन्दु सहित वियत (ह्रौं) एवं 'ग्लौं' फिर खं इन्दु एवं मनु सहित हंस (ह्सौं) अग्नि मनु एवं बिन्दु सहित निद्रा (भ्रौं) फिर 'भगव' के बाद 'तिदण्ड धारिणि' फिर 'अमुकं 'अमुकं' 'शीघ्रं' २ बार 'विद्वेषय' २ बार 'रोधय' तथा २ बार 'भंजय' फिर रमा (श्रीं) माया (ह्रीं) चतुर्थ्यन्त राज्ञी (राज्यै) प्रणव (ॐ) और अन्त में ३ कवच (हुं हुं हुं) और इस मन्त्र के प्रारम्भ में तार (ॐ) लगाने से यह ५० अक्षर का सर्वसिद्धिदायक मन्त्र कहा गया है ।

विषाष्टकेन तत्रवक्ष्यति । वालेयीरासभी । अधियामिनिरात्रौ ॥ ८७ ॥ मन्त्रमाह । वियदिति । पावकेन्दुयुक् । रमौबिन्दुयुतंवियतहः ह्रौं । ग्लौं । इंदुयुक्मनुरौंहंसः सतेयुक्तंहं हसौं । अग्निमनुबिंदुस्था निद्राभ.भ्रौं ॥ ८८ ॥ रमाश्रीं ॥ ८९ ॥ कवचंहुं ॥ ९० ॥ सारभोमहिषः । गंधर्वोऽश्वः ॥ ९१ ॥ प्रयोगःप्रीतिमतोर्द्वयोर्जन्मनक्षत्रोत्थेफलकद्वयेतत्ररासभीक्षीरमर्दितेन विषाष्टकेनापरिनाम्युक्तमाकारद्वयं विलिख्यतत्स्पृष्ट्वा निशिसहस्रममुंमन्त्रंजपेत् । मन्त्रो यथा—ॐह्रौंग्लौंह्सौंभ्रौंभगवत्तिदंडधारिणिअमुकममुक शीघ्रंविद्वषय २ रोधय २ भंजय २ श्रींह्रींराज्यै ॐहुंहुंहुं इति । ततःखरमाहिषाश्वपुच्छरोमकृतयारज्ज्वातत् फलकद्वयंमिथोबद्धावल्मीकरंध्रेनिखाप्यपुनर्मंत्रंसहस्रंजपेत् । एवंविद्वेषणसिद्धिः ॥ ९२ ॥

जप करने के बाद उन दोनों फलकों को गदहा, भैंसा तथा घोड़े के पूँछ के बालों से बनी रस्सी से बाँधकर बाँबी के भीतर गाड़ कर फिर १ हजार जप करना चाहिए। ऐसा करने से उन दोनों में प्रेम होने पर भी १ सप्ताह में शत्रुता हो जाती है।

टिप्पणी : विद्वेषणमन्त्र : ॐ ह्रौं ग्लौं ह्सौं भ्रौं भगवति दण्डधारिणि अमुकं अमुकं शीघ्रं विद्वेषय विद्वेषय रोधय रोधय मंजय मंजय श्रीं ह्रीं राज्यै ॐ हुं हुं हुं।

मारणं तु प्रकुर्वीत ब्राह्मणेतरविद्विषि।
तच्छुद्धयर्थं जपेन्मूलमन्त्रमष्टोत्तरंशतम् ॥ ९३ ॥
कृष्णाङ्गारचतुर्दश्यां गोपुराद्वाचतुष्पथात्।
श्मशानाद्वासमानीय मृदं तत्र विनिःक्षिपेत् ॥ ९४ ॥
विडंगानि हयार्य्यर्ककुसुमान्यपि मन्त्रवित्।
तन्मृदापुत्तलीं कुर्य्याच्छ्मशाने निर्जनालये ॥ ९५ ॥
उपविश्य शिखामुक्तो नीलवस्त्रावृतो निशि।
तद्वक्षसि रिपोर्नामलिखित्वा स्थापयेदसून् ॥ ९६ ॥
श्मशानवाससाच्छाद्यतैलाभ्यक्तामथार्च्चयेत्।
स्नापयेत्पुत्तलीं तां तु खराश्वमहिषासृजा ॥ ९७ ॥
रक्तचन्दनधत्तूरकुसुमान्यर्पयेत्ततः।
मारणाख्येन मनुना कुर्य्याद्धोमं च पूजनम् ॥ ९८ ॥
दीर्घत्रयाग्निरात्रीशयुक्तातन्द्रीमृतीश्वरि।
कृंकृत्यन्तेऽमुकंशीघ्रंमारयद्वितयंसृणिः ॥ ९९ ॥
त्रयोविंशत्यक्षराढ्योध्रुवादिर्मारणे मनुः।
अनेन मनुना पूजां कृत्वा होमं समाचरेत् ॥ १०० ॥
उग्रासर्षपभल्लातोन्मत्तबीजैःसुमिश्रितैः।
श्मशानाग्नौशतं साग्रं च्छित्त्वातत्प्रतिमाशिरः ॥ १०१ ॥
तदग्नौ प्रदहेन्मन्त्री पूर्णाहुतिमथाचरेत्।
एवं कृते त्रिसप्ताहाद्रिपुःस्यात्सूर्यजातिथिः ॥ १०२ ॥

मारणमाह। मारणमिति। तद्विप्रेनिषिद्धम् ॥ ९३ ॥ ९४ ॥ विडगंकृमिघ्नम्। हयारिः कवीरः ॥ ९५—९८ ॥ मारणमन्त्रमाह। दीर्घेति। तन्द्रीमःदीर्घत्रयम् अग्नीरः रात्रीशो विन्दुस्तैर्युक्तः। तेनस्त्रांस्त्रीं स्त्रं। सृणिःक्रों ॥ ९९ ॥ ध्र वादिःप्रणवादिः ॥ १०० ॥ उग्रावचा। उन्मत्तोधत्तूरः। सूर्यजातिथिरम ऽत थस्यात्। म्रियतेऽत्यर्थः ॥ १०१-१०२ ॥ प्रयोग ५—कुजवारयुतायां कृ चतुर्दश्यां पुरद्वारचतुष्पथ श्मशानान्मृतमान्मृदमानी - विडंगकरवीरार्कपुष्प युतांकृत्वाश्मशानस्थोविशिखोनीलवस्त्रे निशितय मृदापुत्तलीं हृदि स्ना-

कर्मस्वेवं विधेष्वादौ भैरवाय बलिं दिशेत् ।
माषान्नपलमद्याद्यैरेवं सिद्धिर्भवेद् ध्रुवम् ॥ १०३ ॥
यो मन्त्री विदधातीदृक्कर्म तेन प्रयत्नतः ।
आत्मावनाय संसेव्यो नरसिंहो हरोपि वा ॥ १०४ ॥

मारण : ब्राह्मण को छोड़कर अन्य वर्ण का शत्रु होने पर मारण करना चाहिए। तथा उससे शुद्ध होने के लिए मूलमन्त्र का १०८ बार जप करना चाहिए।

कृष्णपक्ष की चतुर्दशी को मंगलवार होने पर गोपुर, चतुष्पथ या श्मशान से मिट्टी लाकर उसमें वायविडंग, कनेर एवं आक को फूल मिलाने चाहिए, और उससे पुतली बनानी चाहिए।

रात्रि के समय शिखा खोलकर तथा नीले वस्त्र पहिन कर श्मशान या खाली घर में बैठकर पुतली की छाती पर शत्रु का नाम लिखकर उसमें प्राण प्रतिष्ठा करनी चाहिए। फिर उसे कफन से ढँक तेल में डुबोकर उसका पूजन करना चाहिए।

उस पुतली को गदहा, घोड़ा एवं भैंसा के रक्त से स्नान कराना चाहिए। फिर लालचन्दन एवं धतूरे के फूल चढ़ाने चाहिए। मारण मन्त्र से होम एवं पूजन करना चाहिए।

दोर्घत्रय, अग्नि एवं रात्रीश सहित तन्द्री (ह्रां ह्रीं ह्रूं) फिर 'मृतोश्वरी' एवं 'कृं कृत्ये' के बाद 'अमुकं' २ बार 'मारय' तथा अन्त में रुणि (क्रों) और प्रारम्भ में ध्रुव ॐ) लगाने से यह २३ अक्षर वाला मारण मन्त्र बनता है।

इन मन्त्र से पूजन करके वचा, सरसों, भिलावा एवं धतूरे के बीजों को मिलाकर उनसे पुतली के सामन श्मशान के अग्नि में १०० आहुतियाँ डालनी चाहिए। फिर पुतली का शिर काट कर उसे उसी अग्नि में जला देना चाहिए, और फिर पूर्णाहुति देनी चाहिए। ऐसा २१ दिन तक करने से शत्रु मर जाता है।

इस प्रकार के कृत्यों में प्रारम्भ में उड़द से बने पदार्थ, मांस एवं मद्य आदि से भैरव को बलि देनी चाहिए। ऐसा करने से कार्य निश्चित रूप से सिद्ध होता है। जो मान्त्रिक ऐसे कृत्यों को करता है उसे अपनी रक्षा के लिए नृसिंह या शिव की उपासना अवश्य करनी चाहिए।

मयुतांकृत्वाप्राणान्प्रतिष्ठाप्यश्मशानवस्त्रेणाच्छाद्यतैलेनाभ्यज्य खराश्वमहिषरुधिरेणसंस्नाप्य रक्तचन्दनेनविलिप्यधत्तूरपुष्पैः संपूज्यतदग्रे श्मशानाग्निसंस्थाप्यतदग्नौ वचासर्षपभल्लातकधत्तूरबीजमिश्रितैरष्टोत्तरशतंजुहुयात् मन्त्रेण। यथा -ॐह्रांह्रींह्रूं मृतीश्वरिकृंकृत्येअमुकंशीघ्रं मारय २ क्रोंइति। ततःपुत्तलीशिरश्छित्त्वाऽग्नौहुत्वापूर्णाहुतिकुर्यात्। एवमेकविंशतिराज्यंतेरिऽम्रियतइति। ततःप्रायश्चित्तंकुर्यात् ॥ १०३ ॥ १०४ ॥

टिप्पणी : मारण मन्त्र : ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं मृतीश्वरि कृंकृत्ये अमुकं शीघ्रं मारय मारय फ्रों ।

अथचण्डीविधानम् ।
अथो नवाक्षरं मन्त्रं वक्ष्ये चण्डीप्रवृत्तये ।
वाङ्मायामदनोदीर्घालक्ष्मीस्तन्द्रीश्रुतीन्दुयुक् ॥ १०५ ॥
डायैसट्गजलंकूर्मद्वयं झिण्टीशसंयुतम् ।

चण्डी का नवार्ण मन्त्र : अब शतचण्डी में प्रयुक्त होने वाले नवार्ण मन्त्र को बतलाता हूँ :

वाक् (ऐं) माया (ह्रीं) मदन (क्लीं) फिर दीर्घा लक्ष्मी चा), श्रुति एवं इन्दु सहित तन्द्री (मुं) एवं 'डायै' फिर सट्क् जल (वि) एवं झिंटीश सहित कूर्म द्वय (च्चे) – यह नवार्ण मन्त्र कहा गया है ।

टिप्पणी : नवार्ण मन्त्र : ऐं ह्रीं क्लीं चामुंडाये विच्चे ।

नवाक्षरोस्य ऋषयो ब्रह्मविष्णुमहेश्वराः ॥ १०६ ॥
छन्दांस्युक्तानि मुनिभिर्गायत्र्युष्णिगनुष्टुभः ।
देव्यःप्रोक्ता महापूर्वाःकालीलक्ष्मीःसरस्वती ॥ १०७ ॥
नन्दाशाकम्भरीभीमाःशक्तयोस्य मनोःस्मृताः ।
स्याद्रक्तदन्तिकादुर्गाभ्रामर्य्योबीजसंचयः ॥ १०८ ॥
अग्निर्वायुर्भगस्तत्त्वं फलं वेदत्रयोद्भवम् ।
सर्वाभीष्टप्रसिद्धयर्थं विनियोग उदाहृतः ॥ १०९ ॥

विनियोग : इस मन्त्र के ब्रह्मा, विष्णु एवं महेश्वर ऋषि हैं, गायत्री उष्णिक् एवं अनुष्टुप् छन्द मुनियों ने बतलाये हैं । महाकाली, महालक्ष्मी एवं महासरस्वती देवियाँ इसकी देवता हैं । इस मन्त्र की नन्दा, शाकंभरी एवं भीमा शक्तियाँ हैं, रक्तदन्तिका, दुर्गा एवं भ्रामरी बीज हैं, अग्नि, वायु एवं सूर्य तत्त्व हैं, वेदत्रय का फल ध्यान है, तथा सब अभीष्टों की सिद्धि हेतु इसका विनियोग बतलाया गया है ।

टिप्पणी : विनियोग : अस्य श्री नवार्ण मन्त्रस्य ब्रह्मविष्णुरुद्राः ऋषयः गायत्र्युष्णिगनुष्टुप् छन्दांसि, श्री महाकालीमहालक्ष्मीमहासरस्वत्यो देवताः नन्दाशाकं-

---

सप्तशतीपाठांगभूतंचंडीमन्त्रमाह । वागिति । वाक्ऐं । मायाह्रीं । मदनःक्लीं । दीर्घालक्ष्मीश्चा । तंद्रीमः श्रुतींदुयुग् उबिंदुयुक्तः मुं ॥ १०५ ॥ डायैस्वरूपम् । सट्गज्लंवि । कूर्मद्वयं चयुग्मंझिंटीशसंयुतंएयुतं च्चे ॥ १०६ ॥

महाकालीमहालक्ष्मीमहासरस्वत्योदेवताः ॥ १०७ ॥ १०८ ॥ भगःसूर्यः ॥ १०९ ॥

भरीभीमाः शक्तयः, रक्तदन्तिकादुर्गाभ्रामर्यो बीजानि, अग्निवायुसूर्यास्तत्त्वानि, ऋग्यजुसामवेदा ध्यानानि. सर्वाभीष्टसिद्धये जपे विनियोगः।

ऋषिश्छन्दोदैवतानि शिरोमुखहृदि न्यसेत्।
शक्तिबीजानि स्तनयोस्तत्त्वानि हृदये पुनः ॥ ११० ॥

ऋष्यादि न्यास : ऋषि, छन्द एवं देवताओं का शिर, मुख एवं हृदय पर, शक्ति एवं बीज का दोनों स्तनों पर तथा तत्त्वों का पुनः हृदय पर न्यास करना चाहिए।

टिप्पणी : *न्यासविधि* : ब्रह्मविष्णुरुद्र ऋषिभ्यो नमः शिरसि। गायत्र्युष्णिगनुष्टुप् छन्देभ्यो नमः मुखे। महाकालीमहालक्ष्मीमहासरस्वती देवताभ्यो नमः हृदि। नन्दा शाकम्भरी भीमा शक्तिभ्यो नमः दक्षिणस्तने। रक्तदन्तिकादुर्गाभ्रामरी बीजेभ्यो नमः वामस्तने। अग्निवायुसूर्यतत्त्वेभ्यो नमः हृदि।

तत एकादशन्यासान्कुर्वीतेष्टफलप्रदान्।
प्रथमोमातृकान्यासःकार्य्यःपूर्वोक्तमार्गतः ॥ १११ ॥
कृते नयेन देवस्य सारूप्यं याति मानवः।

एकादशन्यास : (i) *शुद्धमातृका न्यास* : इसके बाद अभीष्ट फलदायक ११ न्यासों को करना चाहिए :

सर्वप्रथम पूर्वोक्त रीति से मातृकान्यास करना चाहिए, जिसके करने से मनुष्य देवसदृश हो जाता है।

टिप्पणी : *प्रथमन्यास विधि* : ॐ अं नमः शिरसि। ॐ आं नमः मुखे। ॐ इं नमः दक्षिणनेत्रे। ॐ ईं नमः वामनेत्रे। ॐ उं नमः दक्षिणकर्णे। ॐ ऊं नमः वामकर्णे। ॐ ऋं नमः दक्षिणनासापुटे। ॐ ॠं नमः वामनासापुटे। ॐ ऌं नमः दक्षिणकपोले। ॐ ॡं नमः वाम कपोले। ॐ एं नमः ऊर्ध्वोष्ठे। ॐ ऐं नमः अधरोष्ठे। ॐ ओं नमः ऊर्ध्वदन्तपंक्तौ। ॐ औं नमः अधोदन्तपंक्तौ। ॐ अं नमः मूर्ध्नि। ॐ अः नमः मुखवृत्ते। ॐ कं नमः दक्षिण बाहुमूले। ॐ खं नमः दक्षिण कूर्परे। ॐ गं नमः दक्षिण मणिबन्धे। ॐ घं नमः दक्षिण हस्तांगुलिमूले। ॐ ङं नमः दक्षिण हस्तांगुल्यग्रे। ॐ चं नमः वाम बाहुमूले। ॐ छं नमः वाम कूर्परे। ॐ जं नमः वाम मणिबन्धे। ॐ झं नमः वाम हस्तांगुलिमूले। ॐ ञं नमः वाम हस्तांगुल्यग्रे। ॐ टं नमः दक्षिण पादमूले। ॐ ठं नमः दक्षिण जानुनि। ॐ डं नमः दक्षिण गुल्फे। ॐ ढं नमः दक्षिण पदांगुलिमूले। ॐ णं नमः दक्षिण पादांगुल्यग्रे। ॐ तं नमः वाम पादमूले। ॐ थं नमः वाम जानुनि। ॐ दं नमः वाम गुल्फे। ॐ धं नमः वाम

॥ ११० ॥ एकादशन्यासानाह। ततइति। पूर्वोक्तमार्गतःप्रथमपटश्लोक्तविधिना ॥ १११ ॥

पदांगगुलिमूले । ॐ नं नमः वाम पदांगगुल्यग्रे । ॐ पं नमः दक्षिणपार्श्वे । ॐ फं नमः वामपार्श्वे । ॐ बं नमः पृष्ठे । ॐ भं नमः नाभौ । ॐ मं नमः उदरे । ॐ यं त्वगात्मने नमः हृदि । ॐ रं असृगात्मने नमः दक्षांसे । ॐ लं मांसात्मने नमः ककुदि । ॐ वं मेदात्मने नमः वामांसे । ॐ शं अस्थ्यात्मने नमः हृदयादि दक्षहस्तान्तम् । ॐ षं मज्जात्मने नमः हृदयादि वाम हस्तान्तम् । ॐ सं शुक्रात्मने नमः हृदयादि दक्षपादान्तम् । ॐ हं आत्मने नमः हृदयादि वाम पादान्तम् । ॐ ऊं परमात्मने नमः जठरे । ॐ क्षं प्राणात्मने नमः मुखे ।

अथ द्वितीयं कुर्वीत न्यासं सारस्वताभिधम् ॥ ११२ ॥
बीजत्रयं तु मन्त्राद्यं तारादिहृदयांतिकम् ।
क्रमादंगुलिषु न्यस्य कनिष्ठाद्यासु पञ्चसु ॥ ११३ ॥
करयोर्मध्यतः पृष्ठे मणिबन्धे च कूर्परे ।
हृदयादिषडंगेषु विन्यसेज्जातिसंयुतम् ॥ ११४ ॥
अस्मिन्सारस्वते न्यासे कृते जाड्यं विनश्यति ।

(ii) *सारस्वतन्यास* : इसके बाद सारस्वत संज्ञक द्वितीयन्यास करना चाहिए :

मूलमन्त्र के प्रारम्भिक तीन बीजों के प्रारम्भ में प्रणव और अन्त में 'नमः' लगाकर कनिष्ठका आदि ५ अंगुलियों से 'करतल, करपृष्ठ मणिबन्ध एवंकोहिनी पर न्यास करना चाहिए । तथा हृदय आदि ६ अंगों पर इनका जाति सहित न्यास करना चाहिए । इस सारस्वत न्यास को करने पर जड़ता नष्ट हो जाती है ।

टिप्पणी : द्वितीय न्यासविधि : ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः कनिष्ठयोः । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः अनामिकयोः । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः मध्यमयोः । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः तर्जन्योः । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः अंगुष्ठयोः । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः करतलयोः । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः करपृष्ठयोः । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः मणिबन्धयोः । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः कूर्परयोः । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं हृदयाय नमः । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं शिरसे स्वाहा । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं शिखायै वषट् । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं कवचाय हुम् । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नेत्रत्रयाय वौषट् । ॐ ऐं ह्री क्लीं अस्त्राय फट् ।

ततस्तृतीयं कुर्वीत न्यासं मातृगणान्वितम् ॥ ११५ ॥
मायाबीजादिकाब्राह्मीपूर्वतःपातुमांसदा ।
माहेश्वरीतथाग्नेय्यां कौमारादक्षिणेऽवतु ॥ ११६ ॥

सारस्वतन्यासमाह । अथेति ॥ ११२ ॥ बीजेति । मन्त्रादिमबीजत्रयंप्रणवादिनमोंतंकनिष्ठादिनवस्थानेष्वन्यस्यहृदयादिषुजातियुक्तंन्यसेत् । यथा-ॐऐं ह्रींक्लींनमःकनिष्ठिकायामित्यादि० । ॐऐं ह्रींक्लींहृदयायनमइत्याद्यंगेष्वपि ॥ ११३-११४ ॥ फलमाह । अस्मिन्निति ॥ ११५ ॥ मायेति । ह्रींब्राह्मीपूर्वतोमांपातुइत्यादि० ॥ ११६ ॥

वैष्णवीपातुनैर्ऋत्ये वारा हीपश्चिमेऽवतु ।
इन्द्राणीपावकेकोणे चामुण्डाचोत्तरेऽवतु ॥ ११७ ॥
ऐशानेतु महालक्ष्मीरूर्ध्वं व्योमेश्वरीतथा ।
सप्तद्वपेश्वरी भूमौ रक्षेत्कामेश्वरीतले ॥ ११८ ॥
तृतोयेस्मिन्कृते न्यासे त्रैलोक्यविजयीभवेत् ।

(iii) *मातृकागणन्यास* : तत्पश्चात् मातृकागणसंज्ञक तृतीयन्यास करना चाहिए : प्रारम्भ में मायाबीज लगाकर 'ब्राह्मी पूर्वतः मां पातु' मन्त्र से पूर्व में तथा इसी प्रकार 'माहेश्वरी अग्नियां मां पातु' से आग्नेय में, 'कौमारी दक्षिणे मां पातु' से दक्षिण में, 'वैष्णवी नैर्ऋत्ये मां पातु' से नैर्ऋत्य में, 'वाराही पश्चिमे मां पातु' से पश्चिम में, 'इन्द्राणी वायव्ये मां पातु' से वायव्य में, 'चामुण्डा उत्तरे मां पातु' से उत्तर में, 'महालक्ष्मी ऐशान्ये मां पातु' से ईशान्य में, 'व्योमेश्वरी ऊर्ध्वं मां पातु' से ऊपर, 'सप्तद्वीपेश्वरी भूमौ मां पातु' से भूमि पर तथा 'कामेश्वरी पाताले मां पातु' से नीचे न्यास करना चाहिए। इस तृतीय न्यास को करने पर साधक तीनों लोकों को जीत लेता है।

टिप्पणी : तृतीय न्यासविधि : ह्रीं ब्राह्मी पूर्वतः मां पातु। ह्रीं माहेश्वरी आग्नेय्यां मां पातु। ह्रीं कौमारि दक्षिणे मां पातु। ह्रीं वैष्णवी नैर्ऋत्ये मां पातु। ह्रीं वाराही पश्चिमे मां पातु। ह्रीं इन्द्राणी वायव्ये मां पातु। ह्रीं चामुण्डा उत्तरे मां पातु। ह्रीं महालक्ष्मी ऐशान्ये मां पातु। ह्रीं व्योमेश्वरी ऊर्ध्वं मां पातु। ह्रीं सप्तद्वीपेश्वरी भूमौ मां पातु। ह्रीं कामेश्वरि पाताले मां पातु।

न्यासं चतुर्थं कुर्वीत नन्दजादिसमन्वितम् ॥ ११९ ॥
नन्दजापातु पूर्वांगं कमलां कुशमण्डिता ।
खड्गपात्रकरा पातु दक्षिणे रक्तदन्तिका ॥ १२० ॥
पृष्ठे शाकंभरी पातु पुष्पपल्लवसंयुता ।
धनुर्बाणकरा दुर्गा वामे पातु सदैव माम् ॥ १२१ ॥
शिरःपात्रकराभीमामस्तकाच्चरणावधि ।
पादादिमस्तकं यावद्भ्रामरीचित्रकान्तिभृत् ॥ १२२ ॥
तुर्य्यं न्यासं नरःकुर्य्याज्जरामृत्यूव्यपोहति ।

(iv) *षड्देवीन्यास* : नन्दजा आदि के साथ चतुर्थन्यास करना चाहिए :

॥ ११७-११८ ॥ एतत्फलमाह । तृतीयेति । चतुर्थन्यासमाह । नन्दजेति ॥ ११९ ॥ ॥ १२०-१२२ ॥

'मकलांकुश मंण्डिता नन्दजा पूर्वाङ्गं मे पातु' – मन्त्र से पूर्वाङ्ग पर, 'खड्गपात्रमरा रक्तदन्तिका 'दक्षिणाङ्गं मे पातु' – से दक्षिणाङ्ग पर, 'पुष्प पल्लव संयुना शाकंभरी पृष्ठाङ्गं मे पातु' से पृष्ठाङ्ग पर, 'धनुर्बाणकरा दुर्गा वामाङ्गं मे पातु' से बामाङ्ग पर, 'शिरः पात्रकरा भीमा मस्तकाच्चरणान्तं मे पातु' से मस्तक से पैरों तक तथा 'चित्र-कान्तिभृद्भ्रामरी पादादि मस्तकान्तं मे पातु' मन्त्र से पैरां से मस्तक पर्यन्त न्यास करना चाहिए। इस चतुर्थ न्यास के करने से मनुष्य वृद्धावस्था एवं मृत्यु के भय से मुक्त हो जाता है।

टिप्पणी चतुर्थन्यास विधि : ॐ कमलांकुशमंडिता नन्दजा पूर्वाङ्गं मे पातु। ॐ खड्गपात्रकरा रक्तदन्तिका दक्षिणाङ्गं मे पातु। ॐ पुष्पपल्लवसंयुक्ता शाकंभरी पृष्ठाङ्गं मे पातु। ॐ धनुर्बाणकरा दुर्गा वामाङ्गं मे पातु। ॐ शिरःपात्रकरा भीमा मस्तकाच्चरणान्तं मे पातु। ॐ चित्रकान्तिभृद्भ्रामरी पादादि मस्तकान्तं मे पातु।

अथ कुर्वीतब्रह्माख्यं न्यासं पञ्चममुत्तमम् ॥ १२३ ॥
पादादिनाभिपर्य्यंतं ब्रह्मापातु सदातनः।
नाभेर्विशुद्धिपर्य्यंतं पातु नित्यं जनार्दनः ॥ १२४ ॥
विशुद्धेर्ब्रह्मरंध्रान्तं पातु रुद्रस्त्रिलोचनः।
हंसःपातुपदद्वन्द्वंवैनतेयः करद्वयम् ॥ १२५ ॥
चक्षुषीवृभःपातु सर्वांगानि गजाननः।
परारपरोदेहभागौपात्वानंदमयोहरिः ॥ १२६ ॥
कृतेऽस्मिन्पञ्चमेन्यासे सर्वान्कामानवाप्नुयात्।

(v) *ब्रह्मन्यास* : इसके बाद ब्रह्म संज्ञक पंचम न्यास करना चाहिए : 'ब्रह्मा सनातनः पादादि नाभि पर्यंतं मां पातु' इस मन्त्र से पैरों से नाभि पर्यन्त, 'जनार्दनः नाभेर्विशुद्धिपर्यन्तं नित्यं मां पातु, से नाभि से विशुद्धि चक्र पर्यन्त, 'रुद्रस्त्रिलोचनः विशुद्धेर्ब्रह्मरन्ध्रान्तं मां पातु' से विशुद्धि चक्र से ब्रह्मरन्ध्र पर्यन्त, 'हंस पाददृयं मे पातु' से दोनों पैरों पर, 'वैनतेयः करद्वयं मे पातु' से दोनों हाथों पर, वृषभः चक्षुषी में पातु' से नेत्रों पर, 'गजाननः सर्वाङ्गानि मे पातु' से सब अंगों पर तथा 'आनन्दमयो हरि परापरो देह भागौ मे पातु' से शरीर के दोनों भागों पर न्यास करना चाहिए। इस पञ्चम न्यास को करने पर मनुष्य की सब इच्छाएँ पूरी हो जाती है।

टिप्पणी : पञ्चम न्यासविधि : ॐ ब्रह्मा सनातनः पादादि नाभिपर्यन्तं मां पातु। ॐ जनार्दनः नाभेर्विशुद्धिपर्यन्तं मां पातु। ॐ रुद्रस्त्रिलोचनः विशुद्धेर्ब्रह्मरन्ध्रान्तं

फलमाह। तुर्य्यमिति। पञ्चमंन्यासमाह। अथेति ॥ १२३–१२६ ॥ फलमाह।

मां पातु । ॐ हंसः पादद्वयं मे पातु । ॐ वैनतेयः करद्वयं मे पातु । ॐ वृशभश्चक्षुषी मे पातु । ॐ गजाननः सर्वाङ्गानि मे पातु । ॐ आनन्दमयो हरि परापरौ देहभागौ मे पातु ।

षष्ठं न्यासं ततः कुर्य्यान्महालक्ष्म्यादिसंयुतम् ॥ १२७ ॥
मध्यं पातु महालक्ष्मीरष्टादशभुजान्विता ।
ऊर्द्ध्वं सरस्वतीपातु भुजैरष्टाभिरूर्जिता ॥ १२८ ॥
अधः पातु महाकालीदशबाहुसमन्विता ।
सिंहोहस्तद्वयं पातु परंहंसोक्षियुग्मकम् ॥ १२९ ॥
महिषं दिव्यमारूढो यमःपातुपदद्वयम् ।
महेशश्चण्डिकायुक्तःसर्वांगानि ममावतु ॥ १३० ॥
षष्ठे स्मिन्विहिते न्यासे सद्गतिं प्राप्नुयान्नरः ।

(vi) *महालक्ष्म्यादि षष्ठन्यास* : इसके बाद महालक्ष्मी आदि के साथ षष्ठन्यास करना चाहिए :

'अष्टादश भुजान्विता महालक्ष्मी मध्यं मे पातु' इस मन्त्र से मध्य भाग पर, अष्टभुजान्विता सरस्वती ऊर्ध्व मे पातु' से ऊर्ध्व भाग पर, 'दशबाहु समन्विता महाकाली अधः मे पातु' से अधो भाग पर, 'सिंहः हस्तद्वयं मे पातु' से दोनों हाथों पर, 'परं हंसोक्षि युग्मं मे पातु' से दोनों नेत्रों पर, 'दिव्यमहिषमारूढो यमः पद द्वयं मे पातु' से दोनों पैरों पर, 'महेशश्चण्डिकायुक्तः सर्वाङ्गानि मे पातु', से सब अंगों पर न्यास करना चाहिए । इस षष्ठन्यास को करने पर मनुष्य सद्गति प्राप्त करता है ।

टिप्पणी : षष्ठन्यासविधि : ॐ अष्टादश भुजा युक्ता महालक्ष्मी मध्यं मे पातु । ॐ अष्टभुजायुक्ता सरस्वती ऊर्ध्वं मे पातु । ॐ दशबाहुसमन्विता महाकाली अधः मे पातु । ॐ सिंहः हस्तद्वयं मे पातु । ॐ परहंसोऽक्षियुग्मं मे पातु । ॐ दिव्यमहिषारूढो-यमः पदद्वयं मे पातु । ॐ महेशश्चण्डिकायुक्तः सर्वाङ्गानि मे पातु ।

मूलाक्षरन्यासरूपं न्यासं कुर्वीत सप्तमम् ॥ १३१ ॥
ब्रह्मरंध्रे नेत्रयुग्मे श्रुत्योर्नासिकयोर्मुखे ।
पायौ मूलमनोर्वर्णास्ताराद्यान्नमसान्वितान् ॥ १३२ ॥
विन्यसेत्सप्तमे न्यासे कृते रोगक्षयो भवेत् ।

कृतेस्मिन्निति ॥ १२७ ॥ षष्ठमाह । मध्यमिति । अष्टादशभुजामहालक्ष्मीर्ममभध्यं-पांत्वित्यादिप्रयोगः ॥ १२८ ॥ १२९ ॥ १३० ॥ सप्तमन्यासमाह । मलेति । ॐऐं नमः ह्मरंध्रे इत्यादिप्रयोगः ॥ १३१ ॥ १३२ ॥

(vii) *वर्णन्यास* : मूल मन्त्रों के वर्णों का न्यासरूपी सप्तमन्यास करना चाहिए। ब्रह्मरन्ध्र, दोनों नेत्र, दोनों कान, दोनों नासापुट, मुख एवं गुदा पर मन्त्र के १-१ वर्णों का आदि में प्रणव तथा अन्त में 'नमः' लगाकर न्यास करना चाहिए। इस सप्तमन्यास को करने से रोग नष्ट हो जाते हैं।

टिप्पणी : सप्तमन्यासविधि : ॐ ऐं नमः ब्रह्मरन्ध्रे। ॐ ह्रीं नमः दक्षिणनेत्रे। ॐ क्लीं नमः वामनेत्रे। ॐ चां नमः दक्षिणकर्णे। ॐ मुं नमः वामकर्णे। ॐ डां नमः दक्षनासापुटे। ॐ यैं नमः वामनासापूटे। ॐ विं नमः मुखे। ॐ च्चें नमः मूलाधारे।

पायुतोब्रह्मरंध्रांतं पुनस्तानेव विन्यसेत् ॥ १३३ ॥
कृतेस्मिन्नष्टमे न्यासे सर्वदुःखं विनश्यति।

(viii) *विलोम वर्णन्यास* : गुदा से ब्रह्मरन्ध्र पर्यन्त पुनः मन्त्र के वर्णों का न्यास करना चाहिए। इस अष्टमन्यास को करने से सभी दुःख दूर हो जाते हैं।

टिप्पणी : अष्टमन्यास विधि : ॐ च्चें नमः मूलाधारे। ॐ विं नमः मुखे। ॐ यैं नमः वामनासापुटे। ॐ डां नमः दक्षिण नासापुटे। ॐ मुं नमः वामकर्णे। ॐ चां नमः दक्षिणकर्णे। ॐ क्लीं नमः वामनेत्रे। ॐ ह्रीं नमः दक्षिण नेत्रे। ॐ ऐं नमः ब्रह्मरन्ध्रे।

कुर्वीत नवमं न्यासं मन्त्रव्याप्तिस्वरूपकम् ॥ १३४ ॥
मस्तकाच्चरणं यावच्चरणान्मस्तकावधि।
पुरो दक्षे पृष्ठदेशे वामभागेऽष्टशो न्यसेत् ॥ १३५ ॥
मूलमन्त्रकृतो न्यासो नवमो देवताप्तिकृत्।

(ix) *मन्त्रव्याप्तिन्यास* : मन्त्र व्याप्तिरूपी नवम न्यास करना चाहिए, यथा : मस्तक से पैरों तक, क्रमशः पुरोभाग, दक्षिण, पृष्ठ एवं वाम भाग पर, फिर मस्तक से पैरों तक तथा पैरों से मस्तक पर्यन्त ८ मूल मन्त्र का न्यास करना चाहिए। इस नवम न्यास के करने से देवत्व प्राप्त होता है।

टिप्पणी : नवम न्यासविधि : ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे ८ मस्तकाच्चरणान्तं पूर्णाङ्गे। ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे ८ मस्तकाच्चरणान्तं दक्षिणाङ्गे। ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे ८ मस्तकाच्चरणान्तं पृष्ठे। ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे ८ मस्तकाच्चरणान्तं वामाङ्गे। ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे ८ मस्तकाच्चरणान्तं। ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे ८ चरणात्मस्तकावधि।

एतन्न्यासफलंरोगक्षयः। पायुमारभ्यब्रह्मरंध्रांतंवर्णन्यासोष्टमः ॥ १३३ ॥ एतत्फलंदुःख-नाशः ॥ १३४ ॥ नवममाह। मस्तकोत ॥ १३५ ॥

ततः कुर्वीतदशमं षडंगन्यासमुत्तमम् ॥ १३६ ॥
मूलमन्त्रं जातियुक्तं हृदयादिषु विन्यसेत् ।
कृतेस्मिन्दशमे न्यासे त्रैलोक्यं वशगं भवेत् ॥ १३७ ॥

(x) *षडङ्गन्यास* : इसके बाद षडङ्गन्यास रूपी दशम न्यास करना चाहिए। मूलमन्त्र का जाति के साथ हृदयादि छः अङ्गों पर न्यास करना चाहिए। इस दशम न्यास का करने पर तीनों लोक वश में हो जाते हैं।

टिप्पणी : दशम न्यासविधि : ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे हृदयाय नमः। ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे शिरसे स्वाहा। ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे शिखायै वषट्। ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे कवचाय हुम्। ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे नेत्रत्रयाय वौषट्। ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे अस्त्राय फट्।

दशन्यासोक्तफलदं कुर्य्यादेकादशं ततः ।
खड्गिनीशूलिनीत्यादिपठित्वा श्लोकपञ्चकम् ॥ १३८ ॥
आद्यं कृष्णतरं बीजं ध्यात्वासर्वाङ्गके न्यसेत् ।
शूलेनपाहिनोदेवीत्यादिश्लोकचतुष्टयम् ॥ १३९ ॥
पठित्वा सूर्य्यसदृशं द्वितीयं सर्वतो न्यसेत् ।
सर्वस्वरूपेसर्वेशेइत्यादिश्लोकपञ्चकम् ॥ १४० ॥
पठित्वा स्फटिकाभासं तृतीयं स्वतनौ न्यसेत् ।

(xi) *एकादश न्यास* : तत्पश्चात् उक्त १० न्यासों का फल देने वाला एकादश न्यास करना चाहिए, यथा : 'खड्गिनी शूलिनी घोरा' इत्यादि ५ श्लोक बोलकर प्रथम कृष्णतर बीज का ध्यान कर सभी अंगों में न्यास करना चाहिए। 'शूलेन पाहि नो देवि०' इत्यादि ४ श्लोक बोलकर सूर्य सदृश आभावाले द्वितीय बीज का ध्यान कर सब अंगों में न्यास करना चाहिए। 'सर्वस्वरूपे सर्वे शे०' इत्यादि ५ श्लोकों को बोलकर स्फटिक जैसी आभावाले तृतीय बीज का सभी अगों में न्यास करना चाहिए।

टिप्पणी : एकादश न्यासविधि :

ॐ खड्गिनी शूलिनी घोरा गदिनी चक्रिणी तथा ।
शंखिनी चापिनी बाणा भुशुण्डी परिघायुधा ॥
सौम्या सौम्यतरा शेष सौम्येभ्यस्त्वति सुन्दरी ।

शिरस.पादातमष्टवारंमूलंविन्यसेत्। एवंपादाच्छिरोंतमष्टशः एवंपुरोदक्षिणभागे-पृष्ठेवामंभागेप्येवंप्रत्यहमष्टशो मूलंन्यसेत्। एतत्फलंदेवत्वप्राप्तिः ॥ १३६ ॥ दशममाह। मूर्ध्नेते। मूलंहृदयायनमः इत्यादिकंजातियुक्तंषडंगेन्यसेत्। एतत्फलंजगद्वश्यत्वम ॥ १३७ ॥ एकादशमाह। खड्गिनीति ॥ १३८-१४० ॥

परापराणां परमा त्वमेव परमेश्वरी ॥
यच्च किञ्चित्क्वचिद्वस्तु सदसद्वाखिलात्मके ।
तस्य सर्वस्य या शक्तिः सात्त्वं किं स्तूयसे मया ॥
यया त्वया जगत्स्रष्टा जगत्पात्ति यो जगत् ।
सोऽपि निद्रावशं नीतः कस्त्वां स्तोतुमिहेश्वरः ॥
विष्णुःशरीर ग्रहणमहमीशान एव च ।
कारितास्ते यतोऽतस्त्वां कः स्तौतुं शक्तिमान्भवेत ॥
आद्यं ऐं बीजं कृष्णतरं ध्यात्वा सर्वाङ्गे विन्यसामि ।
ॐ शूलेन पाहि नो देवि पाहि खड्गेन चाम्बिके ।
घण्टास्वनेन नः पाहि चापज्यानिःस्वनेन च ॥
प्राच्यां रक्ष प्रतीच्यां च चण्डिके रक्ष दक्षिणे ।
भ्रामणेनात्म शूलस्य उत्तरस्यां तथेश्वरि ॥
सौम्यानि यानि रूपाणि त्रैलोक्ये विचरन्ति ते ।
यानि चात्यर्थ घोराणि तैरक्षास्मांस्तथा भुवं ॥
खड्गशूल गदादीनि यानि चास्त्राणि तेऽम्बिके ।
करपल्लवसंगीनि तैरस्मान्रक्ष सर्वतः ॥
द्वितीयं ह्रीं बीजं सूर्यसदृशं ध्यात्वा सर्वाङ्गे विन्यसामि ।
ॐ सर्वस्वरूपे सर्वेशे सर्वशक्ति समन्विते ।
भयेभ्यस्त्राहि देवि दुर्गे देवि नमोस्तुते ॥
एतत्तेवदनं सौम्यं लोचनत्रय भूषितम् ।
पातु नः सर्वभूतेभ्यः कात्यायनि नमोऽस्तुते ॥
ज्वाला करालमत्युग्रमशेषासुरसूदनम् ।
त्रिशूलं पातुनो भीतेर्भद्रकाली नमोऽस्तुते ॥
हिनस्ति दैत्यतेजांसि स्वनेनापूर्य या जगत् ।
सा घण्टा पातु नो देवि पापेभ्यो नः सुतानिव ॥
असुरा सृग्वसापंकचर्चितस्ते करोज्वलः ।
शुभाय खड्गो भवतु चण्डिके त्वां नता वयम् ॥
तृतीयं क्लीं बीजं स्फटिकाभं ध्यात्वा सर्वाङ्गे न्यसामि ।

ततः षडङ्गं कुर्वीत विभक्तैर्मूलवर्णकैः ॥ १४१ ॥
एकेनैकेनचैकेनचतुर्भिर्युगलेन च ।
समस्तेन च मन्त्रेण कुर्य्यादङ्गानि षट्सुधीः ॥ १४२ ॥

१४१ ॥ षडंगमाह । एकेनैकेनेति ॥ १४२ ॥

मूल षडङ्गन्यास : इसके बाद मूलमन्त्र के १, १, १, ४ एवं २ वर्णों वाले भागों से तथा समस्त मन्त्र से साधक को षडङ्गन्यास करना चाहिए।

टिप्पणी : षडङ्गन्यास : ऐं हृदयाय नमः। ह्रीं शिरसे स्वाहा। क्लीं शिखायै वषट्। चामुण्डायै कवचाय हुम्। विच्चे नेत्रत्रयाय वौषट्। ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे अस्त्राय फट्।

शिखायां नेत्रयोःश्रुत्योर्नसोर्वक्त्रे गुदे न्यसेत्।
मन्त्रवर्णान्समस्तेन व्यापकं त्वष्टशश्चरेत् ॥ १४३ ॥

अक्षरन्यास : शिखा, दोनों नेत्र, दोनों कान, दोनों नासापुट, मुख एवं गुदा में मन्त्र के वर्णों का न्यास करना चाहिए। तथा समस्त मन्त्र से ८ बार व्यापकन्यास करना चाहिए।

टिप्पणी : न्यासविधि : ऐं नमः शिखायाम्। ह्रीं नमः दक्षिणनेत्रे। क्लीं नमः वामनेत्रे। चां नमः दक्षिणकर्णे। मुं नमः वामकर्णे। डां नमः दक्षिणनासायाम्। यै नमः वामनासायाम्। विं नमः मुखे। च्चें नमः गुदे।

इस रीति से अंगों में वर्णों का न्यास कर ८ बार मूलमन्त्र से व्यापक करना चाहिए।

खड्गंचक्रगदेषुचापपरिघाञ्छूलं भुशुण्डीं शिरः
शंखं संदधतीं करैस्त्रिनयनां सर्वाङ्गभूषावृताम्।
यामस्तौत्स्वपिते हरौ कमलजो हन्तुं मधुं कैटभं
नीलाश्मद्युतिमास्यपाददशकां सेवे महाकालिकाम् ॥ १४४ ॥
अक्षस्रक्परशूगदेषुकुलिशं पद्मं धनुः कुण्डिकां
दण्डं शक्तिमसिं च चर्मजलजं घण्टा सुराभाजनम्।
शूलं पाशसुदर्शने च दधतीं हस्तैःप्रवालप्रभां
सेवे सैरिभमर्दिनीमिहमहालक्ष्मीं सरोजस्थिताम् ॥ १४५ ॥

वर्णन्यासमाह। शिखायामिति। नेत्रश्रुतिनासासुद्वौ। अष्टशोऽष्टवारम् ॥ १४३ ॥
महाकालीध्यानमाह। खड्गमिति। खड्गचक्रबाणशिरःशंखान्दक्षेषुदधतीम्। इतराणिवामेषु। आस्यपाद दशकांदशवक्त्रां दशपादांदशभुजांत्रिंशन्नेत्रामित्यर्थः। हरौसुप्तेकमलासनाब्रह्मामधुकैटभौहंतुंयामस्तात् तुष्टाव। हरेर्निद्रावैष्णवीमायेत्यर्थः। तदुक्तम्। ययास्वयाजगत्स्रष्टाजगत्पातात्तियोजगत्। सापिनिद्रावशनीतहति ॥ १४४ ॥ महालक्ष्मीध्यानमाह। अक्षस्रगिति। कुंडिकांकमंडलुम् जलजंशंखम्। अक्षमालापद्मवाण खड्गवज्रगदाचक्रकमडलशंखादक्षेषु। अन्येवामेषु। सौरिभमर्दिनींमहिषासुरघातिनीं सरोजोद्भवांदेवदेहांनगत तेजःसमुद्भवाम् ॥ १४५ ॥

घण्टाशूलहलानि शंखमुसले चक्रं धनुःसायकं
हस्ताब्जैर्दधतीं घनान्तविलसच्छीतांशुतुल्यप्रभाम् ।
गौरीदेहसमुद्भवां त्रिजगतामाधारभूतां
महापूर्वामत्रसरस्वतीमनुभजे शुम्भादिदैत्यार्दिनीम् ॥ १४६ ॥

ध्यान : अपनी १० भुजाओं में क्रमशः खड्ग, चक्र, गदा, बाण, धनुष, परिघ, त्रिशूल, भुशुण्डी, मुण्ड, एवं शंख धारण करने वाली, तीन नेत्रवाली, सब अंगों में आभूषण पहिने हुए, नीलमणि जैसी आभावाली, दश मुख एवं दश पैरवाली उस महाकाली का ध्यान करता हूँ, जिसकी स्तुति मधुकैटभ का वध करने के लिए भगवान् विष्णु के सो जाने पर ब्रह्माजी ने की थी ।

अपनी १८ भुजाओं में क्रमशः अक्षमाला, परशु, गदा, बाण, वज्र, कमल, धनुष, कमण्डलु, दण्ड, शक्ति, तलवार, ढाल, शंख, घण्टा, पानपात्र, त्रिशूल, पाश एवं सुदर्शन को धारण करने वाली, प्रवाल जैसी आभावाली एवं कमल पर विराजमान महिषासुर मर्दिनी महालक्ष्मी का भजन करता हूँ ।

अपनी ८ भुजाओं में क्रमशः घण्टा, शूल, हल, शंख, मुषल, धनुष एवं बाण धारण करने वाली, बादलों में से निकलते हुए चन्द्रमा जैसी आभावाली, गौरी की देह से उत्पन्न, तीनों लोकों को आधारभूता तथा शुम्भ आदि दैत्यों का वध करने-वाली महासरस्वती का ध्यान करता हूँ ।

एवं ध्यात्वाजपेल्लक्षचतुष्कं तद्दशांशतः ।
पायसान्नेन जुहुयात्पूजिते हेमरेतसि ॥ १४७ ॥

जपसंख्या एवं हवन : इस प्रकार ध्यान कर इस मन्त्र का ४ लाख जप करना चाहिए । तथा विधिवत पूजित अग्नि में खीर से दशांश हाम करना चाहिए ।

जयादिशक्तिभिर्युक्ते पीठे देवीं यजेत्ततः ।
तत्त्वपत्रावृतत्र्यस्रषट्कोणाष्टदलान्विते ॥ १४८ ॥

पीठपूजा एवं जनयन्त्र : इसके बाद जया आदि शक्तियों वाले पीठ पर देवी का त्रिकोण, षड्कोण, अष्टदल एवं तत्त्वदलवाले यन्त्र (देखिये चित्र ५०) पर पूजन करना चाहिए ।

पीठपूजाविधि : श्लोक संख्या १४४-४६ में वर्णित चण्डी के तीनों स्वरूपों का ध्यान कर मानसोपचार से पूजन कर विधिवत अर्घ्य स्थापित कर निम्नलिखित मन्त्रों से पीठ देवताओं का पूजन करना चाहिए, यथा :

महासरस्वत्या ध्यानमाह । घंटेति । शंखमुसलचक्रबाणादिकेषु । घंटाशूलहलधनुर्विवामेषु । घनान्तेति । शरच्च द्रसमप्रभाम् ॥ १४६ ॥ हेमरेतसिवह्नौ ॥ १४७॥ १४८ ॥

पीठमध्ये – ॐ आधार शक्तये नमः । ॐ प्रकृतये नमः । ॐ कूर्माय नमः । ॐ शेषाय नमः । ॐ पृथिव्यै नमः । ॐ सुधाम्बुधये नमः । ॐ मणिद्वीपाय नमः । ॐ चिन्तामणिगृहाय नमः । ॐ श्मशानाय नमः । ॐ पारिजाताय नमः ।

ततः कर्णिकायाः मूले – ॐ रत्नवेदिकायै नमः ।

कर्णिकोपरि – ॐ मणिपीठाय नमः ।

चतुर्दिक्षु – ॐ नाना मुनिभ्यो नमः । ॐ नाना देवेभ्यो नमः । ॐ शवेभ्यो नमः । ॐ सर्वमुण्डेभ्यो नमः । ॐ शिवाभ्यो नमः । ॐ धर्माय नमः । ॐ ज्ञानाय नमः । ॐ वैराग्याय नमः । ॐ ऐश्वर्याय नमः ।

कोणेषु – ॐ अधर्माय नमः । ॐ अज्ञानाय नमः । ॐ अवैराग्याय नमः । ॐ अनैश्वर्याय नमः ।

मध्ये – ॐ आनन्द कन्दाय नमः । ॐ संविन्नालाय नमः । ॐ सर्वतत्वात्मक पद्माय नमः । ॐ प्रकृतिमय पत्रेभ्यो नमः । ॐ विकारमय केसरेभ्यो नमः । ॐ पञ्चाशद्बीजाढ्यकर्णिकायै नमः । ॐ अं द्वादश कलात्मने सूर्यमण्डलाय नमः । ॐ वं षोडश कलात्मने सूर्यमण्डलाय नमः । ॐ सं दश कलात्मने वह्नि मण्डलाय नमः । ॐ सं सत्वाय नमः । ॐ रं रजसे नमः । ॐ तं तमसे नमः । ॐ आं आत्मने नमः । ॐ अं अन्तरात्मने नमः । ॐ पं परमात्मने नमः । ॐ ह्रीं ज्ञानात्मने नमः ।

इसके बाद पूर्व आदि ८ दिशाओं में तथा मध्य में जया आदि पीठ शक्तियों का उनके नाम मन्त्रों से पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ जयायै नमः । ॐ विजयायै नमः । ॐ अजितायै नमः । ॐ अपराजितायै नमः । ॐ नित्यायै नमः । ॐ विलासिन्यै नमः । ॐ दोग्ध्र्यै नमः । ॐ अघोरायै नमः । ॐ मङ्गलायै नमः ।

और इसके बाद 'ह्रीं चण्डिकायोगपीठात्मने नमः' – इस पीठ मन्त्र से आसन देकर मूलमन्त्र से मूर्ति कल्पित कर ध्यान, आवाहन आदि उपचारों से पञ्च पुष्पाञ्जलि दान पर्यन्त चण्डी का विधिवत पूजन करने के बाद आवरण पूजा करनी चाहिए ।

त्रिकोणमध्ये संपूज्य ध्यात्वा तां मूलमन्त्रतः ।
पूर्वकोणे विधातारं सुरया सह पूजयेत् ॥ १४९ ॥
विष्णुं श्रिया च नैर्ऋत्ये वायव्ये तूमया शिवम् ।
उदग्दक्षिणयोःसिंहं महिषं चक्रमाद्यजेत् ॥ १५० ॥
षट्सु कोणेषु पूर्वादिनन्दजां रक्तदन्तिकाम् ।

---

१४९ ॥ १५० ॥

शाकंभरीं तथा दुर्गां भीमां चभ्रामरीं यजेत् ॥ १५१ ॥
सबिन्दुनादाद्यर्णाद्यास्ताराद्याश्चनमोंतिकाः ।
नन्दजाद्यायजेच्छक्तीर्वक्ष्यमाणा अपीदृशीः ॥ १५२ ॥
अष्टपत्रेषु ब्रह्माणीपूज्या माहेश्वरीपरा ।
कौमारीवैष्णवी चाथ वाराहीनारसिंह्यपि ॥ १५३ ॥
पश्चादैन्द्री च चामुण्डा तथातत्त्वदलेष्विमाः ।
विष्णुमायाचेतना च बुद्धिर्निद्राक्षुधा ततः ॥ १५४ ॥
छायाशक्तिःपरातृष्णाक्षांतिर्जातिश्चलज्जया ।
शान्तिःश्रद्धाकान्तिलक्ष्म्यौ धृतिर्वृत्तिःश्रुतिःस्मृतिः ॥ १५५ ॥
तुष्टिःपुष्टिर्दयामाता भ्रान्तिःशक्तिरिति क्रमात् ।
बहिर्भूगृहकोणेषु गणेशःक्षेत्रपालकः ॥ १५६ ॥
बटुकश्चापियोगिन्यःपूज्या इन्द्रादिका अपि ।
एवं सिद्धे मनौ मन्त्री भवेत्सौभाग्यभाजनम् ॥ १५७ ॥

आवरणपूजा : त्रिकोण के मध्य (बिन्दु) में देवी का ध्यान कर मूलमन्त्र से उसका पूजन करना चाहिए। (फिर त्रिकोण के) पूर्व कोण में सरस्वती के साथ ब्रह्मा का, नैऋत्य कोण में लक्ष्मी के साथ विष्णु का तथा वायव्य कोण में उमा के साथ शिव का पूजन करना चाहिए। उत्तर एवं दक्षिण दिशा में क्रमशः सिंह एवं महिष का पूजन करना चाहिए।

(षट्कोण के) पूर्व आदि ६ कोणों में नन्दजा, रक्तदन्तिका, शाकंभरी, दुर्गा, भीमा एवं भ्रामरी का पूजन करना चाहिए। नन्दजा आदि शक्तियों तथा वक्ष्यमाण अन्य शक्तियों का प्रारम्भ में प्रणव, फिर अनुस्वार सहित उनके नाम का आदिवर्ण और अन्त में 'नमः' लगा कर बने मन्त्रों से पूजन करना चाहिए।

अष्टदल में ब्रह्माणी, माहेश्वरी, कौमारी, वैष्णवी, वाराही, नारसिंही, ऐन्द्री तथा चामुण्डा का पूजन करना चाहिए।

फिर चतुर्विंशतिदल में विष्णुमाया, चेतना, बुद्धि, निन्द्रा, क्षुधा, छाया, शक्ति, तृष्णा, क्षान्ति, जाति, लज्जा, शान्ति, श्रद्धा, कान्ति, लक्ष्मी, धृति, वृत्ति, श्रुति, स्मृति, तुष्टि, पुष्टि, दया, माता एवं भ्रान्ति का पूजन करना चाहिए।

भूपुर के बाहर कोणों में गणेश, क्षेत्रपाल, बटुक एवं योगिनियों का पूजन

॥ १५ ॥ सबिंदुइति । ॐनंनन्दजायैनमइत्यादिरूपाच्यमाणाः अपीदृशीःसबिन्दु-नादाद्यर्णाद्यास्ताराद्यानमोंतायजेत् । ॐब्रह्माण्यैनम इत्यादि० ॥ १५२-१५३ ॥ तत्त्वदलेषुच तुर्विंशतिपत्रेषु विष्णुमायाद्याः ॥ १५४-१५७ ॥

करना चाहिए। तथा (पूर्व आदि दिशाओं में) इन्द्र आदि का भी पूजन करना चाहिए। इस प्रकार मन्त्र के सिद्ध हो जाने पर साधक सौभाग्यवान् बन जाता है।

टिप्पणी : आवरण पूजाविधि : त्रिकोण के मध्य में विन्दु पर देवी का ध्यान कर मूलमन्त्र से पूजन करने के बाद हाथों में पुष्पाञ्जलि लेकर – "ॐ संविन्मय परे देवि परामृतरस प्रिये। अनुज्ञां चण्डिके देहि परिवारार्चनाय मे॥" – इस मन्त्र से पुष्पाञ्जलि चढ़ाकर देवी से आज्ञा लेकर आवरण पूजा करनी चाहिए।

तन्त्रशास्त्र के प्रायः सभी ग्रन्थों में आवरणपूजा में सर्वप्रथम षडङ्गपूजा करने का विधान है[१]। अतः त्रिकोण के बाहर आग्नेय आदि चारों कोणों में, मध्य में तथा दिशाओं में निम्नलिखित मन्त्रों से षडङ्गपूजा करनी चाहिए यथा :

ऐं हृदयाय नमः – आग्नेये। ह्रीं शिरसे स्वाहा – ईशान्ये। क्लीं शिखायै वषट् – नैर्ऋत्ये। चामुण्डायै कवचाय हुम् – वायव्ये। विच्चे नेत्रत्रयाय वौषट् – मध्ये। ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे अस्त्राय फट् – दिक्षु।

फिर पुष्पाञ्जलि लेकर मूलमन्त्र पढ़कर "अभीष्ट सिद्धिं मे देहि शरणागत वत्सले। भक्त्या समर्पये तुभ्यं प्रथमावरणार्चनम्॥" – इस मन्त्र से पुष्पाञ्जलि चढ़ानी चाहिए।

द्वितीय आवरण में त्रिकोण के पूर्व आदि कोणों में निम्नलिखित मन्त्रों से सरस्वती सहित ब्रह्मा आदि का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ सरस्वतीब्रह्माभ्यां नमः – पूर्वे। ॐ लक्ष्मी हृषीकेशाभ्यां नमः – नैर्ऋत्ये। ॐ गौरीरुद्राभ्यां नमः – वायव्ये। ॐ सिं सिंहाय नमः – उत्तरे। ॐ मं महिषाय नमः – दक्षिणे।

फिर पुष्पाञ्जलि लेकर मूलमन्त्र पढ़ कर "अभीष्टसिद्धि""द्वितीयावरणार्चनम्।" मन्त्र से पुष्पाञ्जलि चढ़ानी चाहिए।

तृतीय आवरण में षड्कोण में निम्नलिखित मन्त्रों से नन्दजा आदि ६ शक्तियों का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ नं नन्दजायै नमः। ॐ रं रक्तदन्तिकायै नमः। ॐ शां शाकंभर्यै नमः। ॐ दुं दुर्गायै नमः। ॐ भीं भीमायै नमः। ॐ भ्रां भ्रामर्यै नमः।

तदनन्तर पुष्पाञ्जलि लेकर मूल मन्त्र बोलकर "अभीष्ट सिद्धि०""तृतीयावरणार्चनम्" – मन्त्र से पुष्पाञ्जलि चढ़ानी चाहिए।

चतुर्थ आवरण में अष्टदल में ब्रह्माणी आदि ८ मातृकाओं का निम्नलिखित मन्त्रों से पूजन करना चाहिए, यथा :

---

[१] पुष्पपूजा विधायेत्थं कुर्यादावरणार्चनम्। अंगादि दिक्पहेत्यन्तं ततो धूपादिकं चरेत्॥

ॐ ब्रं ब्रह्माण्यै नमः । ॐ मां माहेश्वर्यै नमः । ॐ कौं कौमार्यै नमः । ॐ वैं वैष्णव्यै नमः । ॐ वां वाराह्यै नमः । ॐ नां नारसिंह्यै नमः । ॐ ऐं ऐन्द्र्यै नमः । ॐ चां चामुण्डायै ।

तत्पश्चात् पुष्पाञ्जलि लेकर मूलमन्त्र बोलकर "अभीष्ट सिद्धिं····चतुर्थावरणार्चनम्" मन्त्र से पुष्पाञ्जलि चढ़ानी चाहिए ।

पञ्चम आवरण[१] में चतुर्विंशतिदल में पूर्व आदि क्रम से निम्नलिखित मन्त्रों से विष्णुमाया आदि २४ शक्तियों का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ वि विष्णुमायायै नमः । ॐ चें चेतनायै नमः । ॐ बुं बुद्धयै नमः । ॐ निं निद्रायै नमः । ॐ क्षुं क्षुधायै नमः । ॐ छां छायायै नमः । ॐ शं शक्त्यै नमः । ॐ तृं तृष्णायै नमः ।ॐ क्षां क्षान्त्यै नमः । ॐ जां जात्यै नमः । ॐ लं लज्जायै नमः । ॐ शां शान्त्यै नमः । ॐ श्रं श्रद्धायै नमः । ॐ कां कान्त्यै नमः । ॐ लं लक्ष्म्यै नमः । ॐ घृं घृत्यै नमः । ॐ वृं वृत्यै नमः । ॐ श्रुं श्रुत्यै नमः । ॐ स्मृं स्मृत्यै नमः । ॐ तुं तुष्ट्यै नमः । ॐ पुं पुष्ट्यै नमः । ॐ दं दयायै नमः । ॐ मां मात्रे नमः । ॐ भ्रां भ्रान्त्यै नमः ।

फिर पुष्पाञ्जलि लेकर मूलमन्त्र बोलकर "अभीष्टसिद्धिं····पञ्चमावरणार्चनम्" मन्त्र से पुष्पाञ्जलि चढ़ानी चाहिए ।

षष्ठ आवरण में भूपुर के बाहर आग्नेय आदि कोणों में निम्नलिखित मन्त्रों से गणेश आदि का पूजन करना चाहिए, यथा :

गं गणपतये नमः । क्षं क्षेत्रपालाय नमः । बं बटुकाय नमः । यां योगिनीभ्यो नमः ।

तत्पश्चात् पुष्पाञ्जलि लेकर मूलमन्त्र बोलकर "अभीष्टसिद्धिं····षष्ठावरणार्चनम्" — मन्त्र से पुष्पाञ्जलि चढ़ानी चाहिए ।

सप्तम आवरण में पूर्व आदि अपनी अपनी दिशाओं में निम्नलिखित मन्त्रों से इन्द्र आदि दिक्पालों का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ लं इन्द्राय नमः ।ॐ रं अग्नये नमः । ॐ मं यमाय नमः । ॐ क्षं निर्ऋतये नमः । ॐ वं वरुणाय नमः । ॐ यं वायवे नमः । ॐ सं सोमाय नमः । ॐ हं ईशानाय

[१]तन्त्र शास्त्र के अन्य ग्रन्थों में पञ्चम आवरण में असिताङ्ग आदि ८ भैरवों के पूजन का विधान मिलता है । उनकी पूजा के मन्त्र इस प्रकार हैं :

ॐ ह्रीं आसिताङ्ग भैरवाय नमः । ॐ ह्रीं रुरु भैरवाय नमः । ॐ ह्रीं चण्ड भैरवाय नमः । ॐ ह्रीं क्रोध भैरवाय नमः । ॐ ह्रीं उन्मत्त भैरवाय नमः । ॐ ह्रीं कपाल भैरवाय नमः । ॐ ह्रीं भीषण भैरवाय नमः । ॐ ह्रीं संहार भैरवाय नमः ।

नमः । ॐ अं ब्रह्मणे नमः । ॐ ह्रीं अनन्ताय नमः ।

तदनन्तर पुष्पाञ्जलि लेकर मूलमन्त्र बोलकर "अभीष्टसिद्धि····सप्तमावरणार्चनम्" मन्त्र से पुष्पाञ्जलि चढ़ानी चाहिए ।

अष्टम आवरण में भूपुर के बाहर पूर्व आदि दिशाओं में दिक्पालों के पास वज्र आदि आयुधों का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ वं वज्राय नमः । ॐ शं शक्तये नमः । ॐ दं दण्डाय नमः । ॐ खं खड्गाय नमः । ॐ पां पाशाय नमः । ॐ अं अंकुशाय नमः । ॐ गं गदायै नमः । ॐ शूं शूलाय नमः । ॐ चं चक्राय नमः । ॐ पं पद्माय नमः ।

फिर पुष्पाञ्जलि लेकर मूलमन्त्र बोलकर "अभिष्टसिद्धि····अष्टमावरणार्चनम्" मन्त्र से पुष्पाञ्जलि चढ़ानी चाहिए ।

और फिर[१] आवरण पूजा के बाद धूप, दीप एवं नैवेद्य आदि उपचारों से विधिवत भगवती का पूजन करना चाहिए ।

---

[१]तन्त्रशास्त्र के अन्य ग्रन्थों में अष्टम आवरणका पूजन करने के बाद देवी के दक्षिण भाग में ब्रह्मा, विष्णु एवं रुद्र का पूजन कर नवम आवरण में देवी के १८ दिव्य अस्त्रों के पूजन का विधान है । इन अस्त्रों का पूजन निम्नलिखित मन्त्रों से करना चाहिए, तथा प्रत्येक अस्त्र का पूजन करते समय उसकी मुद्रा दिखलानी चाहिए ।

ॐ अं अक्षमालायै नमः । ॐ पं परशवे नमः । ॐ गं गदायै नमः । ॐ बं बाणाय नमः । ॐ वं वज्राय नमः । ॐ पं पद्माय नमः । ॐ धं धनुषे नमः । ॐ कुं कुण्डिकायै नमः । ॐ दं दण्डाय नमः । ॐ शं शक्तये नमः । ॐ खं खड्गाय नमः । ॐ चं चर्माय नमः । ॐ शं शंखाय नमः । ॐ घं घण्टायै नमः । ॐ सुं सुराभाजनाय नमः । ॐ शूं शूलाय नमः । ॐ पां पाशाय नमः । ॐ सुं सुदर्शनाय नमः ।

अक्षमाला मुद्रा : अंगुष्ठ तर्जन्यग्रेषु ग्रथयित्वांगुलित्रयम् ।
प्रसारयेदक्षमाला मुद्रेयं परिकीर्तिता ।।

परशु मुद्रा : करे करं तु करयोस्तिर्यक् संयोज्य चांगुलीः ।
संहताः प्रसृताः कुर्यान्मुद्रेयं परशोर्मता ।।

गदा मुद्रा : वाममुष्ठ्यन्तरेऽङ्गुष्ठे दक्षिणे सरलांगुलीः ।
वामांगुष्ठः स्पृशेदग्रे योजितः सरलोदरः ।।
अन्योन्याभिमुखौ हस्तौ कृत्वा तु ग्रथितांगुली ।
अंगुल्यौ मध्यमे भूयः सुलम्ने सुप्रसारिते ।।
गदामुद्रेयमुदिता देव्याः सन्तोषवर्द्धिनी ।

बाण मुद्रा : यथा हस्तगता: बाणस्तथा हस्तं कुरुप्रिये ।
बाणमुद्रेयमाख्याता रिपुवर्गनिन्कृतनी ॥ (ज्ञानार्णवे), अथवा
दक्षमुष्टस्तु तर्जन्या दीर्घया बाणमुद्रिका । (वामकेश्वरे)

वज्र मुद्रा : दक्षिणहस्तं मुष्टिं बध्वा क्षेपणाकारं कुर्यात् ।

पद्म मुद्रा : करौ तु संमुखीकृत्य संहतावुन्नतांगुली ।
तलान्तमिलितांगुष्ठो कुर्यादेषाब्ज मुद्रिका ॥

धनुर्मुद्रा : वामस्य मध्यमाग्रन्तु तर्जन्यग्रेण योजयेत् ।
अनामिकां कानष्ठाञ्च तस्यांगुष्ठेन पीड़येत् ॥
दशयेद्वामके स्कन्धे धनुर्मुद्रेयमीरिता ॥

कुण्डिका मुद्रा : करद्वयं यदा शुभ्रं कुण्डाकारं भवेत्तदा ।
कुण्डकेति महामुद्रा कथिता पूर्वसूरिभिः ॥

दण्डमुद्रा : मुष्टिं कुर्यात्तु दक्षस्य (हस्तस्य) दर्शयेद्दण्डमुद्रिका ।

शक्तिमुद्रा : मुष्टिं कृत्वा कराभ्यां च वामस्योपरिदक्षिणम् ।
कृत्वा शिरसि संयोज्या शक्तिमुद्रेयमीरिता ॥

असि (खड्ग) मुद्रा : कनिष्ठेऽनामिके बद्ध्वा स्वांगुष्ठेनैव दक्षतः ।
श्लिष्टांगुली तु प्रसृत्ये संहृष्टे खड्गमुद्रिका ॥

चर्म मुद्रा : वामहस्तं यथा तिर्यक् कृत्वा चैव प्रसार्य च ।
आकुञ्चितांगुलीः कुर्याच्चर्म मुद्रेयमीरिता ॥

जलज(शंख) मुद्रा : वामांगुष्ठन्तु संगृह्य दक्षिणेन तु मुष्टिना ।
कृत्वोत्तानं ततो मुष्टिमंगुष्ठन्तु प्रसारयेत् ॥
वामांगुल्यस्तया श्लिष्टाः संयुक्ता स्युः प्रसारिताः ।
दक्षिणांगुष्ठसंस्पृष्टा ज्ञेयैषा शंखमुद्रिका ॥

घण्टा मुद्रा : वाममुष्टि भ्रमेणैव घण्टामुद्रा प्रजायते ।

सुराभाजन (कुम्भ) मुद्रा : मुष्टयोरूर्ध्वीकृतांगुष्ठे तर्जन्यग्रेषु विन्यसेत् ।
सर्वरक्षाकरी ह्येषा कुम्भमुद्राप्रकीर्तिता ॥

शूल मुद्रा : अंगुष्ठे कनिष्ठान्तु बद्ध्वा श्लिष्टांगुलित्रयम् ।
प्रसारयेत्त्रिशूलाख्या मुद्रैषा परिकीर्तिता ॥

पाश मुद्रा : वाममुष्टिस्थं तर्जन्यादक्षमुष्टिस्थं तर्जनीम् ।
संयोज्यांगुष्ठकाग्राभ्यां तर्जन्यग्रे स्वके क्षिपेत् ॥
एषा वा पाशमुद्रेति विद्वद्भिः परिकीर्तिता ।

सुदर्शन (चक्र) मुद्रा : हस्तौ तु संमुखौ कृत्वा सुलग्नौ सुप्रसारितौ ।
कनिष्ठांगुष्ठकौ लग्नौ मुद्रेषा चक्रसंज्ञिता ॥

मार्कण्डेयपुराणोक्तं नित्यं चण्डीस्तवं पठन् ।
पुटितं मूलमन्त्रेण जपन्नाप्नोति वांछितम् ॥ १५८ ॥
आश्विनस्य सिते पक्षे आरभ्याग्नितिथिं सुधीः ।
अष्टम्यन्तं जपेल्लक्षं दशांशं होममाचरेत् ॥ १५९ ॥
प्रत्यहं पूजयेद्देवीं पठेत्सप्तशतीमपि ।
विप्रानाराध्य मन्त्री स्वमिष्टार्थं लभतेऽचिरात् ॥ १६० ॥

चण्डीपाठ : मूल मन्त्र से संपुटित कर मार्कण्डेयपुराणोक्त चण्डीपाठ को करता हुआ तथा नवार्णमन्त्र का जप करता हुआ साधक अभीष्ट प्राप्त करता है ।

आश्विन शुक्ला प्रतिपदा से अष्टमी तक मूलमन्त्र का १ लाख जप तथा दशांश होम करना चाहिए । प्रतिदिन देवी का पूजन तथा सप्तशती का पाठ करना चाहिए । (अन्त में) ब्राह्मणों का पूजन कर साधक शीघ्र ही मनोवाञ्छित फल प्राप्त करता है ।

सप्तशत्याश्चरित्रे तु प्रथमे पद्मभूमुनिः ।
छन्दोगायत्रमुदितं महाकाली तु देवता ॥ १६१ ॥
वाग्बीजं पावकस्तत्त्वं धर्मार्थे विनियोजनम् ।
मध्यमे तु चरित्रेऽत्र मुनिर्विष्णुरुदाहृतः ॥ १६२ ॥
उष्णिक्छंदो महालक्ष्मीर्देवताबीजमद्रिजा ।
वायुस्तत्त्वं धनप्राप्त्यै विनियोग उदाहृतः ॥ १६३ ॥
उत्तरस्य चरित्रस्य ऋषिःशंकर ईरितः ।
त्रिष्टुप्छन्दो देवतास्य प्रोक्ता महासरस्वती ॥ १६४ ॥
कामोबीजं रविस्तत्त्वं कामाप्त्यै विनियोजनम् ।

सप्तशती के तीनों चरित्रों के विनियोग : सप्तशती के प्रथम चरित्र के ब्रह्मा ऋषि हैं, गायत्री छन्द है, महाकाली देवता है, वाग् (ऐं) बीज है, अग्नि तत्त्व है तथा धर्म के लिए इसका विनियोग होता है ।

मध्यम चरित्र के विष्णु ऋषि बतलाये गये हैं, उष्णिक् छन्द है, महालक्ष्मी देवता है, अद्रिजा (ह्रीं) बीज है, वायु तत्त्व है तथा धन प्राप्ति हेतु इसका विनियोग होता है ।

उत्तर चरित्र के रुद्र ऋषि हैं, त्रिष्टुप् छन्द है, महासरस्वती देवता है, काम(क्लीं) बीज है, सूर्य तत्त्व है तथा काम प्राप्ति हेतु इसका विनियोग होता है ।

॥ १५८ ॥ अग्नितिथिंप्रतिपदम् ॥ १५९ १६० ॥ चण्डीस्तवस्यमार्कंडेयपुराणोक्तस्यऋष्यादीनाह । सप्तशत्याहृति । प्रथमंचरित्रंमधुकंटभवधः ॥ १६१ ॥ मध्यमं महिषासुरवधः ॥ १६२ ॥ अद्रिजाह्रीं ॥ १६३ ॥ उत्तरंशुम्भवधः ॥ १६४ ॥

टिप्पणी : विनियोग : (i) अस्य श्री प्रथम चरित्रस्य ब्रह्माऋषिः, गायत्री छन्दः, महाकाली देवता, ऐं बीजमग्निस्तत्त्वं धर्मार्थे जपे विनियोगः ।

(ii) अस्य श्री मध्यम चरित्रस्य विष्णुर्ऋषिः, उष्णिक् छन्दः, महालक्ष्मी देवता, ह्रीं बीजं, वायुस्तत्त्वं धनप्राप्त्यै जपे विनियोगः ।

(iii) अस्य श्रीमदुत्तर चरित्रस्य रुद्र ऋषिस्त्रिष्टुप् छन्दः, महासरस्वती देवता, क्लीं बीजं, सूर्यस्तत्त्वं कामाप्त्यै जपे विनियोगः ।

एवं संस्मृत्य ऋष्यादीन्व्यात्वा पूर्वोक्तमार्गतः ॥ १६५ ॥
सार्थस्मृतिपठेच्चण्डीस्तवं स्पष्टपदाक्षरम् ।
समाप्तौ तु महालक्ष्मीं ध्यात्वा कृत्वा षडंगकम् ॥ १६६ ॥
जपेदष्टशतं मूलं देवतायै निवेदयेत् ।
एवं यःकुरुते स्तोत्रं नावसीदति जातुचित् ॥ १६७ ॥
चण्डिकां प्रभजन्मर्त्यो धनैर्धान्यैर्यशश्चयैः ।
पुत्रैःपौत्रैरुतारोग्यैर्युक्तो जीवेद्बहूःसमाः ॥ १६८ ॥

ऋष्यादिन्यास एवं सप्तशती का पाठ : इस प्रकार विनियोग कर ऋष्यादिन्यासों को करने के बाद पूर्वोक्तरीति से देवी का ध्यान कर अर्थ का मनन करते हुए पद एवं वर्णों का स्पष्ट उच्चारण करते हुए सप्तशती का पाठ करना चाहिए । पाठ की समाप्ति पर महालक्ष्मी का ध्यान एवं षडङ्गन्यास कर मूलमन्त्र का १०८ बार जप करना चाहिए, तथा यह सब देवी को समर्पित करना चाहिए ।

इस रीति से जो व्यक्ति सप्तशती का पाठ करता है वह कभी भी दुःखी नहीं होता । चण्डिका की उपासना करने वाला व्यक्ति धन, धान्य, यश, पुत्र, पौत्र एवं आरोग्य सहित बहुत वर्षों तक सुख भोगता है ।

टिप्पणी : ऋष्यादिन्यास : ॐ ब्रह्माविष्णुरुद्र ऋषिभ्ये नमः शिरसि । गायत्र्युष्णिक् त्रिष्टुप् छन्देभ्यो नमः मुखे । महाकालीमहालक्ष्मीमहासरस्वती देवताभ्यो नमः हृदि । ऐं ह्रीं क्लीं बीजेभ्यो नमः गुह्ये । नन्दाशाकंभरीभीमाशक्तिभ्यो नभः पादयोः । अग्निवायुसूर्यतत्त्वेभ्यो नमः नाभौ ।

षडङ्गन्यास : ॐ खड्गिनी शूलिनो घोरा गदिनी चक्रिणी तथा ।
शंखिनी चापिनी बाणभुशुण्डी परिघायुधा ॥
हृदयाय नमः ।

कोमःक्लीं ॥ १६५ ॥ सार्थस्मृतिअर्थस्मरणपूर्वकम् ॥ १६६-१६७ ॥ यशश्चयैः कीर्तिसमूहैः । समावर्षाणि ॥ १६८ ॥

ॐ शूलेन पाहि नो देवि पाहि खड्गेन चाम्बिके ।
घण्टास्वनेन नः पाहि चापज्यानिःस्वनेन च ॥
शिरसे स्वाहा ।
ॐ प्राच्यां रक्ष प्रतीच्यां च चण्डिके रक्ष दक्षिणे ।
भ्रामणेनात्म शूलस्य उत्तरस्यां तथेश्वरि ॥
शिखायै वषट् ।
ॐ सौम्यानि यानि रूपाणि त्रैलोक्ये विचरन्ति ते ।
यानि चात्यन्तघोराणि तैरक्षास्मांस्तथा भुवम् ॥
कवचाय हुम् ।
ॐ खड्ग शूल गदादीनि यानि चास्त्राणि तेऽम्बिके ।
करपल्लवसंगीनि तैरस्मान्रक्ष सर्वतः ॥
नेत्रत्रयाय वौषट् ।
ॐ सर्वस्वरूपे सर्वेशे सर्वशक्ति समन्विते ।
भयेभ्यस्त्राहि नो देवि दुर्गे देवि नमोऽस्तुते ॥
अस्त्राय फट् ।

अथशतचण्डीविधानम् ।
शतचण्डीविधानं तु प्रवक्ष्ये प्रीतये नृणाम् ।
नृपोपद्रवआपन्ने दुर्भिक्षे भूमिकम्पने ॥ १६९ ॥
अतिवृष्ट्यामनावृष्टौ परचक्रभये क्षये ।
सर्वे विघ्ना विनश्यन्ति शतचण्डीविधौकृते ॥ १७० ॥
रोगाणां वैरिणां नाशो धनपुत्रसमृद्धयः ।
शंकरस्य भवान्या वा प्रासादान्निकटे शुभम् ॥ १७१ ॥
मण्डपद्वारवेद्याद्यं कुर्य्यात्सध्वजतोरणम् ।
तत्र कुण्डं प्रकुर्वीत प्रतीच्यां मध्यतोपि वा ॥ १७२ ॥
स्नात्वा नित्यक्रिति कृत्वा वृणुयाद्दशवाडवान् ।

शतचण्डीविधानमाह । शतेति । तत्रनिमित्तान्याह । नृपोपद्रवइति ॥ १६९-१७२ ॥ अथप्रयोगः–शास्त्रोक्तविधिनाशंकरालयेभवा यालयेवा मण्डपंवेदिमध्येनिर्माय प्रतीच्यां-कुण्डंमध्येवाकृत्वा कृतनित्यक्रियोमुककामः शतचण्डीविधानमहं करिष्यइति संकल्पंविधाय मातृस्थापनंनांदी श्राद्धं विधायस्वस्तिवाचनं कृत्वा उक्तलक्षणान्दश-विप्रान्मधुपर्कवस्त्रहेमदानादिनावृणुयात । तेचयजमानदत्तासनेषुदत्तमालाभिः समाहिताः सुमनसोभगवतींस्मरन्तः सप्तशतीमूलमन्त्रेणवेद्यांकुम्भंस्थापयित्वातत्रदुर्गामावाह्य-

जितेन्द्रियान्सदाचारान्कुलीनान्सत्यवादिनः ॥ १७३ ॥
व्युत्पन्नांश्चण्डिकापाठरतांल्लज्जादयावतः ।
मधुपर्कविधानेन वस्त्रस्वर्णादिदानतः ॥ १७४ ॥
जपार्थमासनं मालां दद्यात्तेभ्योपि भोजनम् ।
तेहविष्यान्नमश्नन्तो मन्त्रार्थगतमानसाः ॥ १७५ ॥
भूमौ शयानाः प्रत्येकं जपेयुश्चण्डिकास्तवम् ।
मार्कण्डेयपुराणोक्तं दशकृत्वः सुचेतसः ॥ १७६ ॥
नवार्णं चण्डिकामन्त्रं जपेयुश्चायुतं पृथक् ।

शतचण्डी की विधि : मनुष्यों के कल्याण के लिए शतचण्डी की विधि बतलाता हूँ :

राजा पर उपद्रव होने पर, दुर्भिक्ष एवं भूकम्प होने पर, अतिवृष्टि, अनावृष्टि, शत्रु का आक्रमण तथा हानि होने पर शतचण्डी करने से सब विघ्न नष्ट हो जाते हैं, रोग एवं शत्रु का नाश होता है तथा धन एवं पुत्रों की वृद्धि होती है ।

भगवान् शंकर या देवी के मन्दिर के समीप ध्वज एवं तोरण सहित सुन्दर मण्डप बनाना चाहिए । उसमें द्वार एवं वेदी आदि बनाकर पश्चिम भाग में या मध्य में कुण्ड बनाना चाहिए ।

स्नान आदि नित्यकर्म करने के बाद जितेन्द्रिय, सदाचारी, कुलीन, सत्यवादी, व्युत्पन्न, चण्डीपाठ करने वाले, लज्जा एवं दयावान् १० ब्राह्मणों का वरण करना चाहिए । मधुपर्क की विधि से उनका पूजन कर और वस्त्र तथा स्वर्ण आदि देकर उन्हें जप करने के लिए आसन एवं माला देनी चाहिए, तथा उन्हें भोजन कराना चाहिए ।

उन ब्राह्मणों को हविष्यान्न का भोजन करते हुए, एवं भूमि में शयन करते हुए मन्त्रों के अर्थों में मन लगाकर मार्कण्डेय पुराणोक्त दुर्गासप्तशती का १०–१० पाठ करना चाहिए, तथा प्रत्येक व्यक्ति को पृथक् पृथक् नवार्णमन्त्र का १०–१० हजार जप करना चाहिए ।

षोडशोपचारैः संपूज्यतदग्रेप्रत्येकं दशकृत्वः सप्तशतीमयुतंचनवार्णंजपेयुः । हविष्यभोजन-ब्रह्मचर्यभूशयनास्पृश्यास्पर्शादिनियमांश्चरेयुः । यजमानश्च द्विवर्षाद्याउत्कलक्षणाअधि-कांगीमित्यादिदुर्लक्षणरहिताः कुमारीत्रिमूर्तिकल्याणादिनाम्नीर्दशकन्या भोजनवस्त्रहेमदा-नादानाम आक्षरमयीमित्यादिम त्रेणाबाह्यजगत्पूजेत्यादिस्वस्वमन्त्रैः पूजयेत् । एवं चत्वारिदिनानिजपं कुमारीपूजां चसमाप्यपञ्चमेह्निकुण्डे आगमोक्तपूर्वविधानावह्निंसंस्थाप्य-पायसान्नादिभिरुक्तैर्द्रव्यैर्जुहुयुः । सप्तशत्याःप्रत्यश्लोकं दशवारंनवार्णेनायुतंचहोमसंख्या । एकैकोद्विजः सकृत सप्तशतीप्रतिश्लोकं सहस्रं मूलेनचजुहुयादित्यर्थः ॥१७३-१७६ ॥

यजमानःपूजयेच्चकन्यानां दशकं शुभम् ॥ १७७ ॥
द्विवर्षाद्या दशाब्दान्ताःकुमारीःपरिपूजयेत् ।
नाधिकाङ्गीं न हीनाङ्गीं कुष्ठिनीं च व्रणाङ्किताम् ॥ १७८ ॥
अन्धां काणां केकरां च कुरूपां रोमयुक्तनुम् ।
दासीजातां रोगयुक्तां दुष्टां कन्यां न पूजयेत् ॥ १७९ ॥
विप्रां सर्वेष्टसंसिद्धयै यशसे क्षत्रियोद्भवाम् ।
वैश्यानां धनलाभाय पुत्राप्त्यै शूद्रजां यजेत् ॥ १८० ॥
द्विवर्षा सा कुमार्य्युक्ता त्रिमूर्तिर्हायनत्रिका ।
चतुरब्दा तु कल्याणी पञ्चवर्षा तु रोहिणी ॥ १८१ ॥
षडब्दा कालिका प्रोक्ता चण्डिका सप्तहायनी ।
अष्टवर्षा शाम्भवीस्याद्दुर्गा च नवहायनी ॥ १८२ ॥
सुभद्रा दशवर्षोक्तास्तामन्त्रैःपरिपूजयेत् ।
एकाब्दायाःप्रीत्यभावो रुद्राब्दास्तुविवर्जिताः ॥ १८३ ॥
तासामावाहने मन्त्राः प्रोच्यन्ते शङ्करोदिताः ।
मन्त्राक्षरमयीं लक्ष्मीं मातृणां रूपधारिणीम् ॥ १८४ ॥
नवदुर्गात्मिकां साक्षात्कन्यामावाहयाम्यहम् ।
कुमारिकादिकन्यानां पूजामन्त्रान्ब्रवेऽधुना ॥ १८५ ॥
जगत्पूज्ये जगद्वंद्ये सर्वदेवस्वरूपिणी ।
पूजां गृहाणकौमारी जगन्मातर्नमोस्तुते ॥ १८६ ॥
त्रिपुरां त्रिपुराधारां त्रिवर्गज्ञानरूपिणीम् ।
त्रैलोक्यवन्दितां देवीं त्रिमूर्तिं पूजयाम्यहम् ॥ १८७ ॥
कालात्मिकां कलातीतां कारुण्यहृदयां शिवाम् ।
कल्याणजननीं देवीं कल्याणीं पूजयाम्यहम् ॥ १८८ ॥
अणिमादिगुणाधारामकाराद्यक्षरात्मिकाम् ।
अनन्तशक्तिकां लक्ष्मीं रोहिणीं पूजयाम्यहम् ॥ १८९ ॥
कामचारां शुभां कान्तां कालचक्रस्वरूपिणीम् ।
कामदां करुणोदारां कालिकां पूजयाम्यहम् ॥ १९० ॥
चण्डवीरां चण्डमायां चण्डमुण्डप्रभञ्जनीम् ।
पूजयामि महादेवीं चण्डिकां चण्डविक्रमाम् ॥ १९१ ॥

॥ १७७-१९१ ॥

सदानन्दकरीं शान्तां सर्वदेवनमस्कृताम् ।
सर्वभूतात्मिकां देवीं शाम्भवीं पूजयाम्यहम् ॥ १९२ ॥
दुर्गमे दुस्तरे कार्य्ये भवार्णवविनाशिनि ।
पूजयामि सदा भक्त्या दुर्गां दुर्गार्तिनाशिनीम् ॥ १९३ ॥
सुन्दरीं स्वर्णवर्णाभां सुखसौभाग्यदायिनीम् ।
सुभद्रजननीं देवीं सुभद्रां पूजयाम्यहम् ॥ १९४ ॥
एतैर्मन्त्रैःपुराणोक्तैःस्नातां कन्यां प्रपूजयेत् ।
गन्धैःपुष्पैर्भक्ष्यभोज्यैर्वस्त्रैराभरणैरपि ॥ १९५ ॥

कन्यापूजन एवं उसके मन्त्र : यजमान को २ वर्ष से लेकर १० वर्ष तक आयुवाली १० कन्याओं का पूजन करना चाहिए । ये कन्याएँ अधिक या हीन अंग-वाली न हों । कुष्ठरोग ग्रस्त, घाववाली, अन्धी, कानी, टेढ़े नेत्रवाली, कुरूपा, रोमयुक्ता, दासी की पुत्री, रोगिणी एवं दुष्टा कन्या का पूजन नहीं करना चाहिए ।

सब अभीष्टों की सिद्धि हेतु ब्राह्मणकन्या का, यशोवृद्धि के लिए क्षत्रिय कन्या का, धनलाभ के लिए वैश्य कन्या का, तथा पुत्र प्राप्ति हेतु शूद्रकन्या का पूजन करना चाहिए ।

दो वर्ष वाली कन्या कुमारी कहलाती है । ३ वर्ष वाली त्रिमूर्ति, ४ वर्ष वाली कल्याणी, ५ वर्ष वाली रोहिणी, ६ वर्ष वाली कालिका, ७ वर्ष वाली चण्डिका, ८ वर्ष वाली शांभवी, ९ वर्ष वाली दुर्गा तथा १० वर्षवाली कन्या सुभद्रा कहलाती है । इनका निम्नलिखित मन्त्रों से पूजन करना चाहिए । एक वर्ष वाली कन्या में प्रीति का अभाव होता है तथा ११ वर्ष वाली कन्या पूजन में वर्जित है । शंकराचार्य द्वारा बतलाये गये उनके आवाहन के मन्त्र बतलाता हूँ – "मन्त्राक्षरमयी, मातृकाओं का रूप धारण करने वाली, नवदुर्गात्मिका लक्ष्मी का साक्षात् कन्या में आवाहन करता हूँ" – इस मन्त्र से आवाहन करना चाहिए ।

अब कुमारी आदि कन्याओं के पूजन के मन्त्र बतलाता हूँ :

'ॐ जगत्पूज्ये जगद्वन्द्ये०' से कुमारी का, 'ॐ त्रिपुरां त्रिपुराधारां०' से त्रिमूर्ति का, 'ॐ कालात्मिकां कालातीतां०' से कल्याणी का, 'ॐ अणिमादिगुणाधारां' से रोहिणी का, 'ॐ कामचारां शुभां कान्तां०' से कालिका का, 'ॐ चण्डवीरां चण्डमायां०' से चण्डिका का, 'ॐ सदानन्दकरीं शान्तां०' से शांभवी का, 'ॐ दुर्गमे दुस्तरे कार्ये०' से दुर्गा का, तथा 'ॐ सुन्दरीं स्वर्णवर्णाभां०' से सुभद्रा का पूजन करना चाहिए । इन पौराणिक मन्त्रों से स्नान की हुई कन्या का गन्ध, पुष्प, भक्ष्य, भोज्य, वस्त्र एवं आभूषणों से पूजन करना चाहिए ।

॥ १९२ १९५ ॥

वेद्यां विरचिते रम्ये सर्वतोभद्रमण्डले ।
घण्टसंस्थाप्य विधिवत्तत्रावाह्यार्च्चयेच्छिवाम् ॥ १९६ ॥
तदग्रे कन्यकाश्चापि पूजयेद्ब्राह्मणानपि ।
उपचारैस्तु विविधैःपूर्वोक्तावरणान्यपि ॥ १९७ ॥
एवं चतुर्दिनं कृत्वा पञ्चमे होममाचरेत् ।
पायसान्नैस्त्रिमध्वक्तैर्द्राक्षारंभाफलैरपि ॥ १९८ ॥
मातुलिंगैरिक्षुखण्डैर्नारिकेलैःपुरैस्तिलैः ।
जातीफलैराम्रफलैरन्यैर्मधुरवस्तुभिः ॥ १९९ ॥
सप्तशत्यादशावृत्या प्रतिश्लोकं हुतं चरेत् ।
अयुतं च नवार्णेन स्थापिताग्नौ विधानतः ॥ २०० ॥
कृत्वावरणदेवानां होमं तन्नाममन्त्रतः ।
कृत्वा पूर्णाहुतिं सम्यग्देवमग्निं विसर्ज्य च ॥ २०१ ॥

सर्वतोभद्र पर घटस्थापन, पूजन एवं हवन : वेदी पर विरचित रमणीय सर्वतोभद्रमण्डल पर विधिवत घटस्थापन कर उसमें भगवती का आवाहन कर विधिवत पूजन करना चाहिए । उसके आगे विधिवत उपचारों से कन्या एवं ब्राह्मणों का पूजन करना चाहिए । तथा फिर पूर्वोक्त आवरणपूजा करनी चाहिए ।

इस रीति से ४ दिन तक प्रयोग करने के बाद ५ वें दिन होम करना चाहिए । सप्तदशी की १० आवृत्तियों में प्रत्येक श्लोक से मधुरत्रय (शहद, शक्कर एवं घी) सहित खीर, एवं अंगूर, केला, बिजौरा, गन्ने के टुकड़े, नारियल, तिल, आम एवं अन्य मधुर वस्तुओं से होम करना चाहिए । विधिवत स्थापित अग्नि में नवार्ण मन्त्र से १० हजार आहुतियाँ देनी चाहिए । आवरण देवताओं का उनके नाममन्त्रों से होम कर पूर्णाहुति देकर देवताओं एवं अग्नि का विसर्जन करना चाहिए ।

अभिषिञ्चेच्च यष्टारं विप्रौघःकलशोदकैः ।
निष्कं सुवर्णमथवा प्रत्येकं दक्षिणां दिशेत् ॥ २०२ ॥
भोजयेच्चशतं विप्रान्भक्ष्यभोज्यैःपृथग्विधैः ।
तेभ्योपि दक्षिणां दत्त्वा गृह्णीयादाशिषस्ततः ॥ २०३ ॥

॥ १९६-२०० ॥ ततः आवरणदेवतानांनाममन्त्रेस्तारादिस्वाहां तैरेकैकामाहुतिंदत्त्वापूर्णाहुतिंकृत्वादेवीं कुम्भस्थां संपूज्यबलिदानं विधायऋत्विग्भ्यः प्रत्येकं निष्कमशक्तौसुवर्णमितंसुवर्णंदद्यात् ॥ २०१ २०२ ॥ तताविप्राः कलशोदकेनयजमानं निगमपुराणोक्तमन्त्रैरभिषिंचेयुराशिषश्चदद्युः । ततः शतंविप्रान्नानाविधान्नैर्भोजयेत् । तेभ्योपि यथाशक्तिदक्षिणांदद्यात् । इतिशतचण्डीविधिः ॥ २०३ ॥

एवं कृते जगद्वश्यं सर्वे नश्यन्त्युपद्रवाः ।
राज्यं धनं यशःपुत्रानिष्टमन्यल्लभेत सः ॥ २०४ ॥

अभिषेक एवं ब्राह्मणभोजन : फिर ब्राह्मण कलश के जल से यजमान का अभिषेक करें तथा यजमान प्रत्येक ब्राह्मण को ४ निष्क सुवर्ण या दक्षिणा दे। फिर विविध भक्ष्य एवं भोज्य वस्तुओं से १०० ब्राह्मणों को भोजन कराना चाहिए, तथा उन्हें भी दक्षिणा देकर उनका आशीर्वाद लेना चाहिए।

ऐसा करने से संसार वश में हो जाता है, सब उपद्रव दूर हो जाते हैं तथा राज्य, धन, यश, पुत्र एवं अन्य मनोरथ पूर्ण हो जाते हैं।

एतद्दशगुणां कुर्य्याच्चण्डी साहस्रजं विधिम् ।
विद्यावतःसदाचारान्ब्राह्मणान्वृणुयाच्छतम् ॥ २०५ ॥
प्रत्येकं चण्डिकापाठान्विदध्युस्तेदिशामितान् ।
अयुतं प्रजपेयुस्तेप्रत्येकं नववर्णकम् ॥ २०६ ॥
पूर्वोक्ताःकन्यकाःपूज्याःपूर्वमन्त्रैःशतंशुभाः ।
एवं दशाहं सम्पाद्य होमं कुर्य्युःप्रयत्नतः ॥ २०७ ॥
सप्तशत्याःशतावृत्त्या प्रतिश्लोकं विधानतः ।
लक्षसंख्यं नवार्णेन पूर्वोक्तैर्द्रव्यसंचयैः ॥ २०८ ॥
होतृभ्यो दक्षिणां दत्त्वा पूर्वोक्तान्भोजपेद्द्विजान् ।
सहस्रसम्मितान्साधून्देव्याराधनतत्परान् ॥ २०९ ॥
एवं सहस्रसंख्याके कृते चण्डीविधौ नृणाम् ।
सिद्धयत्यभीप्सितं सर्वंदुःखौघश्चविनश्यति ॥ २१० ॥

सहस्रचण्डी की विधि : सहस्रचण्डी की विधि में इससे १० गुना कार्य (पाठ, जप, हवन आदि) करना चाहिए।

शतचण्डीविधेः फलमाह । एवंकृतइति ॥ २०४ ॥

सहस्रचण्डीविधानमाह । एतद्दशगुणमिति । शतचण्डीविधानदशगुणं सहस्रचण्डीविधानमित्यर्थः । तत्र शतंवेप्रवरणम् ॥ २०५ ॥ तेशतविप्राः प्रत्येकंदशदशसप्तशतीपाठान्कुर्युः—अयुतमयुतंनवार्णजपञ्चकुर्युः ॥ २०६ ॥ शतकन्याश्चभोज्याः । एवंदशदिनेषु संपाद्यएकादशेह्निसप्तशतीशतावृत्त्याप्रतिश्लोकंतल्लक्षसंख्यंनवार्णेनचहोमः ॥ २०७-२०८ ॥ ऋत्विग्भ्योपिदशदशनिष्कंमितंसुवर्णंदक्षिणांप्रत्येकंदद्यात् । शेषंपूर्वोक्तवत् । इति सहस्रचण्डीविधिः ॥ २०९ ॥ एतत्फलमाह । एवंसहस्रसंख्याकइति । एतदयुतचण्डीविधान लक्षचण्डीविधानयोरुपलक्षणम् । सहस्रचण्डीदशगुणोऽयुतचण्डीविधिः । सदशगुणोलक्षचण्डीविधिः । जपेहोमेदक्षिणायां कन्यासुविप्रभोजनेचदशगुणत्वम् ॥ २१० ॥

विद्वान् एवं सदाचारी १०० ब्रह्मणों का वरण करना चाहिए। उनमें से प्रत्येक को १० चण्डी पाठ तथा १० हजार नवार्णमन्त्र का जप करना चाहिए।

पूर्वोक्त लक्षण वाली १०० कन्याओं का पूर्वोक्त मन्त्रों से पूजन करना चाहिए। इस प्रकार १० दिन यह सब कार्य करने के बाद विधिवत होम करना चाहिए। सप्तशती की १०० आवृत्तियों से, प्रत्येक श्लोक से, तथा १ लाख नवार्ण मन्त्र से पूर्वोक्त द्रव्य से हवन करना चाहिए।

होताओं को दक्षिणा देकर सज्जन एवं देवी के उपासक १ हजार ब्राह्मणों को भोजन कराना चाहिए। इस प्रकार विधिवत सहस्रचण्डी करने पर मनुष्य की सब मनोकामनाएँ पूरी होती हैं तथा समस्त दुःख एवं पाप नष्ट हो जाते हैं।

मारीदुर्भिक्षरोगाद्या नश्यन्ति व्यसनोच्चयाः।
नेमं विधिं वदेद्दुष्टे खले चौरे गुरुद्रुहि ॥ २११ ॥
साधौजितेन्द्रियेदान्ते वदेद्विधिमिमं परम्।
एवं सा चण्डिका तुष्टा वक्तॄन्छ्रोतॄंश्चरक्षति ॥ २१२ ॥

माहामारी, दुर्भिक्ष, रोग एवं व्यसनादि नष्ट हो जाते हैं।

दुष्ट, खल, चोर एवं गुरु द्रोही को यह विधि नहीं बतलानी चाहिए। सज्जन, जितेन्द्रिय एवं संयमी को यह श्रेष्ठ विधि बतलानी चाहिए। ऐसा करने से भगवती चण्डिका वक्ता एवं श्रोता दोनों की रक्षा करती हैं।

इति श्री शुकदेव चतुर्वेदि विरचितायां सटिपण्यां मन्त्रमहोदधेः
मोहनी व्याख्यायां अष्टादशस्तरङ्गः।

॥ २११ १२ ॥ इतिमन्त्रमहोदधिव्याख्यायांनौकायामष्टादशस्तरंगः ॥ १८ ॥

एकोनविंशति तरङ्ग

चरणायुधमन्त्रस्य विधानमभिधीयते ।
मन्त्री यद्विधिना कृत्वा साधयेत्स्वमनोरथान् ॥ १ ॥

अब चरणायुध (कुक्कुट) के मन्त्र का विधान बतलाता हूँ, जिन विधियों का करके मान्त्रिक अपने समस्त मनोरथों को पूरा कर सकता है ।

तीक्ष्णोर्धीशेन्दुसंयुक्तःसद्योजातयुतोविधिः ।
पिनाकीसूक्ष्मयुग्वर्णत्रयमेतत्पुनःपठेत् ॥ २ ॥
उत्कारीदीर्घसंयुक्तामायाबीजं ततो वदेत् ।
द्विरभ्यस्तंपुनर्वर्णत्रयंपूर्वोदितं पुनः ॥ ३ ॥
कूर्मः सकर्णोवोदीर्घोमन्त्रोयं समुदीरितः ।
पाशाद्योंकुशबाजान्तोष्टादशाक्षरसंयुतः ॥ ४ ॥

चरणायुध मन्त्र का उद्धार : अर्धीश एवं इन्दु सहित तीक्ष्ण (यूं), सद्योजात के साथ विधि (को) सूक्ष्म सहित पिनाकी (लि) फिर इन तीन वर्णों यूं-को-लि को पुनः बोलना चाहिए । फिर दीर्घ संयुक्ता उत्कारी (वा) माया (ह्रीं) तथा २ बार पुनः वे तीनों वर्ण (यूंकोलि यूंकोलि) फिर सकर्ण कूर्म (चु) दीर्घ व (वा) इस मन्त्र के प्रारम्भ में पाश (आं) तथा अन्त में अंकुश (क्रों) लगाने से यह १८ अक्षर वाला मन्त्र बनता है ।

महारुद्रोमुनिश्चास्य च्छंदोतिजगतीरितम् ।
मायाबीजं सृणिःशक्तिर्देवताचरणायुधः ॥ ५ ॥

कुक्कुटमन्त्रंवक्ष्ये प्रतिजानीते । चरणेति ॥ १ ॥ मन्त्रमुद्धरति । तीक्ष्णइति । तीक्ष्णःयकारः अर्धीशेंदुयुक्त ऊबिंदु युतः । तेनयूम् । विधिःकः सद्य जातयुतओयुतः को । पिनाकीलः सूक्ष्म ुक्तयुतःलि एत द्वत्रय पुनर्वारद्वयम् । यूकोलियूंकोलीति ॥ २॥ ऊत्कारी वकारः दीघआ । तेनसयुक्ता वा । मायाबीजह्रीं पूर्वोदितं तथावारद्वयं ।द्विरभ्यस्तं पुनवर्देत्यन्वयः ॥ ३ ॥ कू ःचः सकर्णउयुतःचु । दीर्घोवोवा । पाशाद्यः आंआद्यः । अंकुशबीजान्तः क्रोंअतः । यथा–आंयूंकलियूकोलिवाह्रींयूंकालियूंकोलिचुवक्रोंइति ॥ ४-५ ॥

विनियोग : इस मन्त्र के महारुद्र ऋषि हैं, अतिजगती छन्द है, माया (ह्रीं) बीज है , सृणि (क्रों) शक्ति है तथा चरणायुध देवता है ।

टिप्पणी : *विनियोग* : अस्य चरणायुध मन्त्रस्य महारुद्र ऋषिः, अतिजगती छन्दः, चरणायुधो देवता, ह्रीं बीजं क्रों शक्तिः ममाभीष्टसिद्धये जपे विनियोगः ।

वेदरामाक्षिरामाग्नि वह्निवर्णैःषडङ्गकम् ।
कृत्वा वर्णान्प्रविन्यस्येन्मूर्ध्नि भाले भ्रवोर्द्वयोः ॥ ६ ॥
अक्ष्णोःश्रुत्योर्नसोर्वक्त्रे कण्ठे कुक्षौ च नाभितः ।
लिंगे गुदे जानुपादे न्यस्यैवं संस्मरेत्प्रभुम् ॥ ७ ॥

षडङ्गन्यास तथा वर्णन्यास : मन्त्र के ४, ३, २, ३, ३, एवं ३ वर्णों से षडङ्गन्यास कर मन्त्र के १-१ वर्ण को क्रमशः शिर, भाल, दोनों भौं, नेत्र, कान, नासिका, मुख, कण्ठ कुक्षि, नाभि, लिंग, गुदा, जानु एवं पैरों पर करके चरणायुध प्रभु का ध्यान करना चाहिए ।

टिप्पणी : *षडङ्गन्यास* : आं यूं कोलि हृदयाय नमः । यूं कोलि शिरसे स्वाहा । वा ह्रीं शिखायै वषट् ।यूं कोलि कवचाय हुम् । यूं कोलि नेत्रत्रयाय वौषट् ।

वर्णन्यास : ॐ आं नमः मूर्ध्नि । ॐ यूं नमः ललाटे । ॐ को नमः दक्षिण भ्रुवि । ॐ लि नमः वाम भ्रुवि । ॐ यूं नमः दक्षिण नेत्रे । ॐ क्रों नमः वाम नेत्रे । ॐ लि नमः दक्षिण कर्णे । ॐ वां नमः वाम कर्णे । ॐ ह्रीं नमः दक्षनासापुटे । ॐ यूं नमः वामनासापुटे । ॐ कों नमः मुखे । ॐ लि नमः कण्ठे । ॐ यूं नमः कुक्षौ । ॐ कों नमः नाभौ । ॐ लि नमः लिङ्गे । ॐ चु नमः गुदे । ॐ वां नमः जान्वोः । ॐ क्रों नमः पादयोः ।

सर्वालंकृतिदीप्तकण्ठचरणो हेमाभदेहद्युतिः
पक्षद्वन्द्वविधूननेऽतिकुशलःसर्वामराभ्यर्च्चितः ।
गौरीहस्तसरोजगोरुणाशिखःसर्वार्थसिद्धिप्रदो
रक्तं चंचुपुटं दधच्चलपदःपायान्निजान्कुक्कुटान् ॥ ८ ॥

ध्यान : समस्त आभूषणों से सुशोभित कण्ठ एवं चरणवाले, सोने जैसी शरीर की आभावाले, अपने दोनों पंखों को चलाने में अतिनिपुण, समस्त देवताओं से पूजित, गौरी के हाथ में स्थित लाल कमल जैसी शिखावाले, लालचोंचवाले, चंचल चरणवाले तथा समस्त मनोरथों को पूर्ण करने वाले चारणायुध अपने साधकों की रक्षा करें ।

षडङ्गमाह । वेदेति । आंयूंकोलिहृदयायनमइत्यादि० । वर्णन्यासमाह । मूर्ध्नीति । भ्रुवोरक्ष्णोश्रुतिनासासुचद्वेद्वे । अन्यत्रैकैकम् ॥ ६-७ ॥ ध्यानमाह । सर्वति । सर्वालंकारैर्दीप्तः कंठश्चरणौचयंस्यनिजान्सेवकान्पायाद्रक्षतु ॥ ८ ॥

एवं ध्यात्वासमासीनः शैलाग्रे सरितस्तटे ।
वृषशून्ये पश्चिमस्थे यद्वा शङ्करसद्मनि ॥ ९ ॥

साधनास्थल : ऐसा ध्यान कर पर्वत के शिखर, नदी के किनारे या वृषभादि रहित पश्चिम दिशा में स्थित शिवालय में साधना करनी चाहिए ।

लक्षं जपेद्दशांशेन तिलैर्हवनमाचरेत् ।
शैवे पीठेयजेत्ताम्रचूडं गौरीकरस्थितम् ॥ १० ॥
आदावङ्गानि सम्पूज्य दलेषु प्रयजेदिमान् ।
शम्भुं गौरीं गणपतिं कार्तिकेयं ततःपरम् ॥ ११ ॥
मन्दारं पारिजातं चमहाकालं च बर्हिणम् ।
दलाग्रेषु सुराधीशप्रमुखा नायुधान्वितान् ॥ १२ ॥
एवं कृते प्रयोगार्हो जायते मन्त्रनायकः ।

जपसंख्या, हवन एवं पूजन : (इस मन्त्र का) १ लाख जप करना चाहिए तथा तिलों से दशांश होम करना चाहिए ।

शैव पीठ पर गौरी के हाथ में स्थित ताम्रचूड का पूजन करना चाहिए ।

सर्वप्रथम षडङ्गपूजा कर अष्टदल में शंभु, गौरी, गणपति, कार्तिकेय, मन्दार, पारिजात, महाकाल एवं बर्हि – इन देवताओं का पूजन करना चाहिए । दलाग्र में इन्द्र आदि दिक्पालो का उनके आयुधों के साथ पूजन करना चाहिए । ऐसा करने से यह मन्त्रराज काम्य प्रयोगों के योग्य हो जाता है ।

टिप्पणी : वृत्ताकर कर्णिका, अष्टदल एवं भूपुर सहित बने यन्त्र (देखिये चित्र ५१) पर चरणायुध का पूजन करना चाहिए ।

पीठपूजा विधि : सर्वप्रथम श्लोक संख्या ८ में वर्णित चरणायुध के स्वरूप का ध्यान कर मानसोपचार से पूजन कर सामान्य अर्घ्य स्थापित कर निम्नलिखित मन्त्रों से पीठ देवताओं का पूजन करना चाहिए, यथा :

पीठमध्ये – ॐ आधार शक्तये नमः । ॐ प्रकृतये नमः । ॐ कूर्माय नमः । ॐ अनन्ताय नमः । ॐ पृथिव्यै नमः । ॐ क्षीरसमुद्राय नमः । ॐ श्वेतद्वीपाय नमः । ॐ मणिमण्डपाय नमः । ॐ कल्पवृक्षाय नमः ।

ततः कर्णिकायाः मूले – ॐ मणिवेदिकायै नमः ।

कर्णिकोपरि – ॐ रत्न सिंहासनाय नमः :

॥ ९ ॥ शैवपीठे वामादिशक्तियुते ॥ १०-११ ॥ सुराधीशप्रमुखानिन्द्रादीन् ॥ १२ ॥

चतुर्दिक्षु – ॐ धर्माय नमः । ॐ ज्ञानाय नमः । ॐ वैराग्याय नमः । ॐ ऐश्वर्याय नमः । ॐ अधर्माय नमः । ॐ अज्ञानाय नमः । ॐ अवैराग्याय नमः । ॐ अनैश्वर्याय नमः ।

पुनः पीठमध्ये – ॐ अनन्ताय नमः । ॐ पद्माय नमः । ॐ अं द्वादशकलात्मने सूर्यमण्डलाय नमः । ॐ उं षोडश कलात्मने चन्द्र मण्डलाय नमः । ॐ रं दश कलात्मने वह्नि मण्डलाय नमः । ॐ सं सत्त्वाय नमः । ॐ रं रजसे नमः । ॐ तं तमसे नमः । ॐ आं आत्मने नमः । ॐ पं परमात्मने नमः । ॐ ह्रीं ज्ञानात्मने नमः ।

इसके बाद केसरों में पूर्व आदि ८ दिशाओं में तथा मध्य में वामा आदि पीठ शक्तियों का उनके नाममन्त्रों से पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ वामायै नमः । ॐ ज्येष्ठायै नमः । ॐ रौद्र्यै नमः । ॐ काल्यै नमः । ॐ कलविकरण्यै नमः । ॐ बलविकरण्यै नमः । ॐ बलप्रमथन्यै मनः । ॐ सर्वभूतदमन्यै नमः । ॐ मनान्मन्यै नमः ।

और फिर 'ॐ नमो भगवते सकल गुणात्मक शक्ति युक्तायानन्ताय योग पीठात्मने नमः' इस मन्त्र से आसन देकर मूलमन्त्र से मूर्ति की कल्पना कर ध्यान, आवाहन आदि उपचारों से पञ्चपुष्पाञ्जलि दान पर्यन्त विधिवत चरणायुध का पूजन कर आवरण पूजा करनी चाहिए ।

आवरणपूजा विधि : देव से आवरण पूजा की आज्ञा लेकर सर्वप्रथम आग्नेय आदि कोणों में यथाक्रमेण षडङ्गन्यासोक्त मन्त्रों से अङ्गपूजा करनी चाहिए, यथा :

आं यूं कोलि हृदयाय नमः । यूं कोलि शिरसे स्वाहा । वाह्रीं शिखायै वषट् । यूं कोलि कवचाय हुम् । यूं कालि नेत्रत्रयाय वौषट् । चुवाक्रों अस्त्राय फट् ।

फिर अष्टदल में पूर्व आदि दिशाओं में क्रमशः शम्भु आदि ८ देवताओं का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ शम्भवे नमः । ॐ गौर्यै नमः । ॐ गणपतये नमः । ॐ कार्तिकेयाय नमः । ॐ मन्दाराय नमः । ॐ पारिजाताय नमः । ॐ महाकालाय नमः । ॐ बर्हिणाय नमः ।

तदनन्तर दलों के अग्रभाग में अपनी अपनी दिशाओं में निम्नलिखित मन्त्रों से इन्द्र आदि दिक्पालों का उनके आयुधों के साथ पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ लं इन्द्राय सायुधाय नमः । ॐ रं अग्नये सायुधाय नमः । ॐ मं यमाय सायुधाय नमः । ॐ क्षं निर्ऋतये सायुधाय नमः । ॐ वं वरुणाय सायुधाय नमः । ॐ यं वायवे सायुधाय नमः । ॐ सं सोमाय सायुधाय नमः । ॐ हं ईशानाय सायुधाय नमः । ॐ आं ब्रह्मणे सायुधाय नमः । ॐ ह्रीं अनन्ताय सायुधाय नमः ।

इस रीति से आवरणपूजा करने के बाद धूप, दीप एवं नैवेद्य आदि उपचारों

से विधिवत चरणायुध का पूजन करना चाहिए ।

प्रयोगादौ प्रजप्योसावयुतं द्विशताधिकम् ॥ १३ ॥
दध्ना क्षीरेण मधुना चन्द्रेणसितयान्वितैः ।
दद्यद्बलिं सताम्बूलैः पायसैर्बलिमन्त्रतः ॥ १४ ॥
भोजनादौ भोजनान्ते लक्ष्मीसम्प्राप्तये सुधीः ।
बलिमेतत्प्रदत्त्वाथ कुबेरो धननाथताम् ॥ १५ ॥
शान्तौ पुष्टावपि बलिमेतमेव प्रदापयेत् ।
उक्तस्य वक्ष्यमाणस्य बलेर्मन्त्रोथ कथ्यते ॥ १६ ॥

काम्यप्रयोगों में जप संख्या एवं बलिदान : काम्यप्रयोगों में इस मन्त्र का १०२०० बार जप करने के बाद दही, दूध, मधु, कपूर एवं शक्कर मिलाकर पान के साथ खीर से बलि मन्त्र से बलि देनी चाहिए ।

लक्ष्मी प्राप्त करने के लिए भोजन के प्रारम्भ और समाप्ति के समय विद्वान् को बलि देनी चाहिए । इस बलि को देने से कुबेर धनाधीश बन गया ।

शान्तिक एवं पौष्टिक कर्मों में भी यह बलि देनी चाहिए । अब इस चर्चित बलि के मन्त्र को बतलाता हूँ ।

वामकर्णेन्दुयुक्छूरः सबिन्दुश्चरमेद्रिजा ।
कुक्कुटद्वितय पश्चादेह्येहीमंबलिंवदेत् ॥ १७ ॥
गृह्णयुग्म गृह्णापयसर्वान्कामांश्चदेहिच ।
वायुः सचन्द्रः कर्णेन्दुयुक्चक्रीगिरनन्दिनी ॥ १८ ॥
यूंनमः कुक्कुटायेति मन्त्रो व्योमयुगाक्षरः ।
बलिंदद्यादनेनोक्तं वक्ष्यमाणं चसाधकः ॥ १९ ॥

बलि का मन्त्र : वामकर्ण एवं इन्दु सहित शूर (यूं), सानुस्वार चरम (क्षं) एवं अद्रिजा (ह्रीं) फिर २ बार 'कुक्कुट' 'एह्येहि इमं बलिं' फिर २ बार 'गृह्ण' एवं 'गृह्णापयसर्वान्कामान्देहि' फिर सचन्द्र वायु (यं) कर्ण एवं इन्दु सहित चक्री (कुं) गिरिनन्दनी (ह्रीं) तथा अन्त में 'यूं नमः कुक्कुटाय' लगाने से यह ४० अक्षर का

॥ १३ ॥ चन्द्रः कर्पूरेण ॥ १४-१६ ॥ बलिम त्रमाह । वामेति । वामकर्णेंदुयुक्शूरः ऊबिन्दुयुतःयःयूं । चरमःक्षःसबिन्दुःक्षं । अद्रिजाह्रीं ॥ १७ ॥

वायुःयःसचन्द्रःसबि दुःयं । कर्णेंदुयुक्चक्रीउबिन्दुयुतःक कुं । गिरिनंदिनीह्रीं ॥ १८ ॥ स्वरूपम यत । यथ —यूं ह्रीं कुक्कुट २ एह्येहि इमबलिंगृह्ण २ गृह्णापयसर्वान्कामान्देहियं कुं ह्रींयूं नमः कुक्कुटायेतिव्योमयुगाक्षर चत्वारिंशदर्णः । अनेनमन्त्रेणपूर्वोक्त बलिंवक्ष्यमाणं चदद्यात् ॥ १९ ॥

मन्त्र बनता है। इस मन्त्र से पूर्वोक्त तथा वक्ष्यमाण प्रयोगों में साधक को बलि देनी चाहिए।

टिप्पणी : चरणायुध को बलि देने का मन्त्र : यूं क्षं ह्रीं कुक्कुट कुक्कुट एह्येहि इमं बलिं गृह्ण गृह्ण गृह्णापय सर्वान्कामान्देहि यं कुं ह्रीं यूं नमः कुक्कुटाय।

लाजैस्त्रिमधुरोपेतैर्दद्यान्मन्त्रीबलिं निशि।
वशमेदखिलं विश्वं त्रिदिनं वौदनैर्नृपम् ॥ २०॥
दुग्धमिश्रितगोधूमपिष्टैः कुर्य्यादपूपकम्।
आज्यकर्पूरयुक्तेन तेन दद्याद्बलिं निशि ॥ २१ ॥
त्र्यहमेवं बलौ दत्ते सुखीस्याद्वशयेज्जगत्।
करवीरैर्बिल्वपत्रैः पीतपुष्पैः सुगन्धिभिः ॥ २२ ॥
सहस्रसंख्यैः प्रत्येकं पूजयित्वा जपेन्मनुम्।
सहस्रनिशि सप्ताहं यमुद्दिश्यजनं सुधीः ॥ २३ ॥
सयाति दासतां तस्य मनोवचनकर्मभिः।
छागलावकयोर्मांसैः सप्ताहं वितरेद्बलिम् ॥ २४ ॥
सहस्रं प्रत्यहं जप्त्वा वशमेदखिलं जगत्।
नृपोत्थिते सपत्नोत्थे भये जाते चसंकटे ॥ २५ ॥
आपद्यपि तथा न्यस्यां बलिं दद्यात्सुखाप्तये।
गोपनीयोविधिरयं बलेः कथ्यो न दुर्मतौ ॥ २६ ॥

विविध प्रयोगों में बलिदान : घी, दूध एवं शक्कर सहित लाजाओं की रात्रि में बलि देकर मान्त्रिक पूरे विश्व को वश में कर लेता है।

तीन दिन तक ओदन (भात) की बलि देने से राजा वश में हो जाता है।

गेहूँ के आटे में दूध मिलाकर मालपुए बनाने चाहिए। उनमें घी एवं कपूर मिलाकर उसमें रात्रि में बलि देनी चाहिए। इस प्रकार ३ दिन तक बलि देने पर साधक सुखी हो जाता है तथा जगत् को वश में कर लेता है।

एक-एक हजार कनेर के फूल, बेलपत्र तथा सुगन्धित पीले फूलों से पूजन कर १ सप्ताह तक रात्रि में १ हजार मन्त्र का जप करना चाहिए। साधक जिस व्यक्ति का ध्यान कर यह प्रयोग करता है, वह व्यक्ति मन, वचन एवं कर्म से उसका दास बन जाता है।

प्रतिदिन मूलमन्त्र का १ हजार जप करके १ सप्ताह तक बकरा एवं लावा (पक्षी) के मांस की बलि देने पर साधक सम्पूर्ण जगत को वश में कर लेता है।

ओदनंस्त्रिदिनं बलिंदत्त्वानृपंवशयेत् ॥ २०-२६ ॥

राजभय, शत्रुभय, संकट या अन्य आपत्ति होने पर सुख प्राप्ति हेतु बलि देनी चाहिए।

बलिदान की यह विधि गोपनीय है, इसे दुष्टों को नहीं बतलाना चाहिए।

मुक्तकेशउदावक्त्रो जपेद्भानु सहस्रकम्।
प्रत्यहं वसुघस्रांतं यमुद्दिश्याधियामिनि ॥ २७ ॥
तमाकर्षंतिदूरस्थमपि किं निकटस्थितम्।
जातीफलैलाः संचूर्ण्य कर्पूरं मध्यतः क्षिपेत् ॥ २८ ॥
अभिमन्त्र्यार्कसाहस्रं सिन्दूररजसायुतम्।
उष्णीकृत्याग्नितापेनक्लेदयेद्गांगपाथसा ॥ २९ ॥
स्थापयेदायसे पात्रे तत्स्पृष्टः स्तम्भितो भवेत्।
कर्मारसद्मनो वह्निमानीयायसभाजने ॥ ३० ॥
स्थापयित्वेंधयेत्काष्ठैः करवीरसमुद्भवैः।
जुहुयात्तत्र धत्तूर बीजानि शतसंख्यया ॥ ३१ ॥
सिद्धार्थतैललिप्तानि विषकर्णयुतानि च।
सप्ताह एवं कृत्वारिं स्थानादुच्चाटयेद्ध्रुवम् ॥ ३२ ॥
पक्षं देशान्तरगतं मासं सम्प्रापयेन्मृतिम्।
तालपत्रं नराकारं कृत्वात्र स्थापयेदसून् ॥ ३३ ॥
जपेदष्टसहस्रं तत्तीक्ष्णतैलविलेपितम्।
तस्य खण्डानि पञ्चाशत्कृत्वा पितृवनोत्थिते ॥ ३४ ॥
उन्मत्ततरुसन्दीप्ते जुहुयाज्जातवेदसि।
एवं प्रकुर्वं स्त्रिदिनं मारयेन्मोहयेदरिम् ॥ ३५ ॥
साध्यर्क्षतरुकाष्ठेन कृत्वा पुत्तलिकां शुभाम्।
तस्यामसून्प्रतिष्ठाप्य सहस्रं प्रजपेन्मनुम् ॥ ३६ ॥

वसुघस्रांतमष्टदिनपर्यंतम्। अधियामिनिरात्रौ ॥ २७-२९ ॥ प्रयोगांतरमाह। कर्मारिति लोहकारकगृहाद्वह्निमानीय। लोहपात्रेसंस्थाप्य करवीरकाष्ठैः संदीप्य तत्रसर्षपतैलाक्तानिविषचूर्णयुतानिधत्तूरबीजानि शतंशतंसप्ताहंहुत्वाशत्रुमुच्चाटयेत् ॥ ३०-३२ ॥ एवं पक्षं कृत्वा तं देशान्तरंनयेत्। मासं कृत्वामारयेत्। प्रयोगान्तरमाह। तालेति। नराकारं तालपत्रं कृत्वातत्रशत्रोः प्राणान्संस्थाप्यभल्लातकतैलेन विलिप्य अष्टाधिकं सहस्रमभिमन्त्र्यतस्यपञ्चाशत्खण्डानिकृत्वाधत्तूरकाष्ठदीप्तेश्मशानाग्नौत्रिदिनं हुत्वारिंमारयेन्मोहयेच्च ॥ ३३-३५ ॥ प्रयोगांतरमाह। साध्येति। नक्षत्रवृक्षाउक्ताः। चिताकाष्ठकालेनतांपुत्तलींस्पृष्ट्वामनुं जपेदिनिपूर्वेणसंबंधः ॥ ३६ ॥

चिताकाष्ठस्य कीलेन तां स्पृष्ट्वापितृकानने ।
छिद्याद्यदङ्गं शस्त्रेण तदङ्गं तस्य नश्यति ॥ ३७ ॥
वैरिमूत्रयुतां मृत्स्नां तत्पादरजसासह ।
कुलालमृद्युतां कृत्वा पुत्तलीं रचयेत्तथा ॥ ३८ ॥
तस्या हृदिपदेमूर्ध्नि नामकर्मान्वितं मनुम् ।
लिखेच्छ्मशानाङ्गारैरसून्संस्थापयेत्ततः ॥ ३९ ॥
जप्तां सहस्रं मन्त्रेणतीक्ष्णतैलविलेपिताम् ।
शस्त्रेण शतधा कृत्वा जुहुयात्पितृभूवसौ ॥ ४० ॥
विभीतकाष्ठसन्दीप्ते यमाशावदनो निशि ।
शत्रोर्निधनतारायां कृत्वैवं मारयेदरिम् ॥ ४१ ॥
निधाय गोमयं भूमौ प्रकुर्य्यात्प्रतिमां रिपोः ।
तालपत्रे समालिख्य मनुं नाम्ना विदर्भितम् ॥ ४२ ॥
तत्पत्रं निक्षिपेत्तस्याहृदि तत्प्रतिमोपरि ।
मृज्जं वाराजतं कुम्भं गोमयोदकपूरितम् ॥ ४३ ॥
मनुं नामयुतं तालपत्रेणाढ्यं निधापयेत् ।
तदसून्स्थापयेत्कुम्भे त्रिसंध्यं प्रजपेन्मनुम् ॥ ४४ ॥
प्रत्यहं शतसंख्याकं छायायावद्भवेद्रिपोः ।
गोमयाम्भसि दृष्टायां तच्छायायां तु साधकः ॥ ४५ ॥
अधस्थायाः प्रतिकृतेश्छिद्यादङ्गमभीप्सितम् ।
शस्त्रेण तस्य नाशाय मृतये हृदयं गलम् ॥ ४६ ॥
प्रविद्धे कण्टकैर्मूर्ध्नि शिरोरोगो भवेद्रिपोः ।

तस्याःप्रतिमायायदंगंशस्त्रेणछिद्यात्तदंगंतस्यशत्रोर्नश्यति ॥ ३७ ॥ प्रयोगांतरमाह । वैरीति ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ पितृभूवसौश्मशानाग्नौ ॥ ४० ॥ यमाशावदनोदक्षिणदिङ्मुखः । निधनतारा जन्मनक्षत्रात्सप्तम नक्षत्रषोडशंपंचविंशंच ॥ ४१ ॥ प्रयोगांतरमाह । निधायेति । गोमयेनशत्रोःप्रतिमां कृत्वानामविदर्भितं मन्त्रंतालपत्रेविलिख्यतत्तालपत्रं गोमयप्रतिमाहृदिनिक्षिप्य प्रतिमोपरिरूप्यताम्रमृदामन्यतमनिर्मितं घटंसस्थाप्यगोमयोदकाभ्यामापूर्य तत्रापनामविदर्भितमन्त्रलेखयुतं तालपत्रं निक्षिप्यतत्रशत्रोः प्राणस्थापनं कृत्वाप्रत्यहं त्रिसंध्यंशतं मन्त्रंकुम्भं स्पृष्ट्वाजपेत् । यावत् शत्रोः प्रतिबिंबंघटेदृश्यते तावत्कालंजपेत् ॥ ४२ ४४ ॥ घटोदकेशत्रुप्रतिबिम्बेघेदृष्टेघटाधः स्थायागोमयप्रतिमायायदंगंछिद्यतेतद्रिपोर्नश्यति । हृदिलेचछिन्नेत मृतिः ॥ ४ ॥ प्रतिमामूर्धिन कंटकैर्विद्धेशिरोरोगः हृदिविद्धेमनः पीडापादयग्मेकंटक विद्धेपादरोगइत्यादि० ॥ ४६ ॥

आधयो हृदये विद्धे पदोः पादव्यथा भवेत् ॥ ४७ ॥
दारुणा कुक्कुटं कृत्वा तत्रास्य स्थापयेदसून् ।
ते स्पृष्ट्वा पूर्ववद्धत्वा जपेद्विंसहस्रकम् ॥ ४८ ॥
उपचारैः समभ्यर्च्य च्छादयेद्रक्तवाससा ।
रथे संस्थाप्य तं देवं दिक्षु योधान्निधापयेत् ॥ ४९ ॥
चतुरंगमसंवीतानश्वारूढानुदायुधान् ।
तत्संयुतो रणे गच्छेज्जेतुं बलवतो रिपून् ॥ ५० ॥
वीराढ्यं कुक्कुटं दृष्ट्वा पलायन्ते रणेऽरयः ।
भीता दशदिशः सर्वे हर्य्यक्षं करिणो यथा ॥ ५१ ॥
ताम्रचूडस्य मन्त्रेण मोदकाद्यभिमन्त्रितम् ।
यस्मैददीत भक्षाय स वसो मन्त्रिणो भवेत् ॥ ५२ ॥
अष्टोत्तरं शतं जप्त्वा रोचनाचन्दनादिभिः ।
विदधत्तिलकं भाले दर्शनाद्वशयेज्जनान् ॥ ५३ ॥

विविध काम्यप्रयोग : रात्रि के समय शिखा खोलकर उत्तराभिमुख होकर जिस व्यक्ति का ध्यान कर साधक लगातार ८ दिन तक प्रतिदिन १२ हजार जप करता है, वह व्यक्ति चाहे दूर हो या पास साधक उसे आकर्षित कर लेता है।

जायफल एवं इलायची को पीस कर उसमें कपूर मिलाना चाहिए। उसमें सिन्दूर मिलाकर १२ हजार मूल मन्त्र से अभिमन्त्रित कर आग पर तपाकर गंगाजल से मार्जन करना चाहिए और उसे लोह पात्र में रखना चाहिए। उसका स्पर्श करने वाला स्तम्भित हो जाता है।

लुहार के घर से अग्नि लाकर लोह पात्र में स्थापित कर कनेर की लड़की से प्रज्वलित कर उसमें सरसों का तेल तथा विषचूर्ण मिश्रित धतूरे के बीजों से १०० आहुतियाँ देनी चाहिए। १ सप्ताह तक यह प्रयोग करने से शत्रु का अपने स्थान से उच्चाटन हो जाता है। १५ दिन तक यह प्रयोग करने से शत्रु विदेश चला जाता है, और १ मास तक यह प्रयोग करने से वह मर जाता है।

ताल पत्र को मनुष्य जैसी आकृति का बनाकर उसमें शत्रु के प्राण स्थापित कर उस पर भिलावे का तेल लगाना चाहिए। फिर उसके ५० टुकड़े कर धतूरे की लकड़ी से प्रज्वलित श्मशान की अग्नि में होम करना चाहिए। ऐसा लगातार ३ दिन तक करने पर साधक शत्रु को या तो मार देता है अथवा मोहित (पागल) कर देता है।

॥ ४७ ॥ दारुणेत्यारभ्यहर्यक्षंकारिणोयथेत्यंतमेकः प्रयोगः ॥ ४८-५० ॥ हर्यक्षःकेसरी ॥ ५१ ॥ ५२ ॥ चन्दनादिभिरित्यादिशब्दात् कुंकुमकस्तूरीकर्पूरगजमदाः ॥ ५३ ॥

साध्य व्यक्ति के जन्म नक्षर सम्बन्धी वृक्ष की लकड़ी से सुन्दर प्रतिमा बनाकर उसमें प्राण प्रतिष्ठा कर चिता की लकड़ी की कील से उसे स्पर्श करते हुए श्मशान में मूल मन्त्र का १ हजार जप करना चाहिए । उस प्रतिमा का जो अङ्ग शस्त्र से काट दिया जाता है, शत्रु का वही अङ्ग नष्ट हो जाता है ।

शत्रु के मूत्र से मिली मिट्टी एवं उसके पैर की मिट्टी को कुम्हार की मिट्टी में मिलाकर उससे पुतली बनानी चाहिए । उस पुतली के हृदय, पैर पूर्व शिर पर क्रमशः साध्य का नाम, कर्म का नाम एवं मूल मन्त्र को चिता के अङ्गार से लिखना चाहिए । फिर उसमें प्राण प्रतिष्ठा कर भिलाये का तेल लगाकर १ हजार मूल मन्त्र का जप करने के बाद शस्त्र से उसके १०० टुकड़े कर बहेड़ा की लकड़ी से प्रज्वलित श्मशान की अग्नि में रात्रि के समय दक्षिणाभिमुख होकर होम करना चाहिए । शत्रु के निधन तारा (जन्म नक्षत्र से ७, १६ या २५वाँ नक्षत्र) के दिन ऐसा करने से शत्रु मर जाता है ।

भूमि में गोबर रखकर उससे शत्रु की प्रतिमा बनानी चाहिए । लाल पत्र पर शत्रु के नाम सहित मूल मन्त्र लिखकर उस पत्र को प्रतिमा के हृदय में रखकर उसके ऊपर गोबर एवं जल से भरा हुआ मिट्टी का या चाँदी का कलश रखना चाहिए । तथा उसमें भी ताल पत्र पर नाम सहित मन्त्र लिखकर डाल देना चाहिए । कुम्भ में शत्रु के प्राणों को स्थापित कर प्रतिदिन तीनों सन्ध्याओं में कुम्भ का स्पर्श करते हुए मूल मन्त्र का १०० बार जप करना चाहिए । गोबर मिले जल में शत्रु की आकृति दिखलायी पड़ते ही साधक कुम्भ के नीचे बनी उसकी प्रतिमा का इच्छित अङ्ग शस्त्र से काट दे । ऐसा करने से शत्रु का वह अङ्ग नष्ट हो जाता है । प्रतिमा का हृदय या गला काटने पर शत्रु मर जाता है । प्रतिमा के शिर में काँटा चुभोने से शत्रु के शिर में रोग होता है । हृदय में काँटा चुभाने से मानसिक पीड़ा तथा पैर में काँटा चुभोने से पैरों में रोग होता है ।

लकड़ी से कुक्कुट बनाकर उसमें इसकी प्राण प्रतिष्ठा करनी चाहिए । उसका स्पर्श कर पूर्ववत् ध्यान कर १२ हजार जप करना चाहिए । विविध उपचारों से पूजन कर लाल कपड़े से ढक देना चाहिए । फिर देव को रथ में स्थापित कर उसके चारों ओर कवचधारी एवं अश्वारोही ४ योद्धाओं को नियुक्त कर देना चाहिए । फिर उसे साथ लेकर बलवान शत्रु को जीतने के लिए रणभूमि में जाना चाहिए । वीरों से घिरे उस कुक्कुट को देखकर शत्रु सेना भयभीत होकर चारों ओर भाग जाती है, जैसे सिंह को देखकर हाथियों के झुण्ड भागते हैं ।

ताम्रचूड (चरणायुध) के मन्त्र से अभिमन्त्रित जिसे भी खाने के लिए दे दिया

जाय वह मान्त्रिक के वश में हो जाता है।

गोरोचन, चन्दन, कुंकुम, कस्तूरी एवं कपूर आदि से बने चन्दन को १०८ बार अभिमन्त्रित कर उसका तिलक लगाने से देखने वाले वश में हो जाते हैं।

अथ वक्ष्ये शास्तृमन्त्रमुपासकसमृद्धिदम्।
शास्तारंमृगयेत्युक्त्वा श्रान्तमश्वाग्निरूयुतः॥ ५४॥
ढंगणावृतमित्युक्त्वा पानीयार्थंवनाचदे।
त्यशास्त्रेते ततो रैवतेनमो मन्त्र ईरितः॥ ५५॥

शास्ता के मन्त्र का उद्धार : अब उपासकों को समृद्धि देने वाले शास्ता के मन्त्र को बतलाता हूँ :

'शास्तारं मृगया' कहकर 'श्रान्तमश्वा' ऊ सहित अग्नि (रू) फिर 'ढंगणा वृत्तम्' फिर 'पानीयार्थं वना' 'देत्ये शास्त्रे ते' फिर 'रैवते नमः' लगाने से यह मन्त्र बनता है।

टिप्पणी : *मन्त्र* : शास्तारं मृगयाश्रांतमश्वारूढं गणावृत्तम्।
पानीयार्थं वनादेत्य शास्त्रे ते रैवते नमः॥

द्वात्रिंशदर्णोस्य ऋषीरैवतः परिकीर्त्तितः।
पंक्तिश्छन्दोदेवता तु महाशास्ताखिलेष्टदः॥ ५६॥

विनियोग : ३२ अक्षर वाले इस इस मन्त्र के रैवत ऋषि माने गये हैं। इसका छन्द पंक्ति है तथा देवता सर्वाभीष्टदायक महाशास्ता हैं।

टिप्पणी : *विनियोग* : अस्य शास्तृ मन्त्रस्य रैवत ऋषिः पंक्तिश्छन्दः महाशास्ता देवता ममाभीष्टसिद्धये जपे विनियोगः।

पादैःसर्वेण पञ्चाङ्गं कृत्वात्मनि विभुं स्मरेत्।
साध्यं स्वपाशेन विबन्ध्य गाढं निपातयन्तं खलु साधकस्य।
पादाब्जयोर्दण्डधरं त्रिनेत्रं भजेत शास्तारमभीष्टसिद्धये॥५७॥

न्यास एवं ध्यान : (उक्त श्लोकात्मक मन्त्र के) १-१ चरणों से तथा सम्पूर्ण मन्त्र से पञ्चाङ्ग न्यास करने के बाद अपनी आत्मा में शास्ता प्रभु का ध्यान करना चाहिए।

साध्य व्यक्ति को अपने पाश से दृढ़तापूर्वक बाँध कर साधक के पैरों में गिराने

शास्तृ मन्त्रमाह। अथेति। शास्ताशंभोर्गणविशेषः। अग्निः रेफः ऊयुतःरू॥ ५४॥ यथा-शास्तारंमृगयाश्रांतमश्वारूढंगणावृतम्। पानीयार्थंवनादेत्यशास्त्रेतेरैवतेनम इति-श्लोकरूपोमन्त्रः॥ ५५-५७

वाले, दण्डधारी तथा तीन नेत्र वाले शास्ता का अभीष्टसिद्ध हेतु ध्यान करता हूँ।

टिप्पणी : पञ्चाङ्ग न्यास : शास्तारं मृगयाश्रान्तं हृदयाय नमः। अश्वारूढं गणावृत्तम् शिरसे स्वाहा। पानीयार्थं बनादेत्य शिखायै वषट्। शास्त्रे ते रैवते नमः कवचाय हुम्। शास्तारं····रैवते नमः अस्त्राय फट्।

लक्षमेकं जपेन्मन्त्रं दशांशं जुहुयात्तिलैः।
शैवे पीठे यजेदेवमादावङ्गानि पूजयेत् ॥ ५८ ॥
दलेष्वष्टसु गोप्तारं पिङ्गलाक्षं ततः परम्।
वीरसेनं शाम्भवं च त्रिनेत्रं शूलिनं तथा ॥ ५९ ॥
दक्षं चभीमरूपं चदिक्पालानस्त्रसंयुतान्।
एवं सिद्धो मनुः सर्वमभीष्टं मन्त्रिणेऽर्पयेत् ॥ ६० ॥

जपसंख्या, हवन एवं पूजन : इस मन्त्र का १ लाख जप करना चाहिए। तथा तिलों से दशांश होम करना चाहिए।

शैव पीठ पर शास्ता का पूजन करना चाहिए। (आवरण पूजा में) सर्वप्रथम अङ्गपूजा करनी चाहिए। फिर अष्टदल में गोप्ता, पिंगलाक्ष वीरसेन, शांभव, त्रिनेत्र, शूली, दक्ष एवं भीम रूप का पूजन कर अपने आयुधों के साथ दिक्पालों का पूजन करना चाहिए। इस रीति से सिद्ध किया गया यह मन्त्र साधक को समस्त अभीष्ट फल देता है।

टिप्पणी : पूजन यन्त्र : वृत्ताकार कर्णिका, अष्टदल एवं भूपुर सहित बने यन्त्र पर महाशास्ता का पूजन करना चाहिए। इनका पूजन यन्त्र चरणायुध के पूजन यन्त्र के समान है (देखिये–श्लो० १०-१२ की टिप्पणी)।

पीठ पूजा विधि : महाशास्ता की पीठ पूजा विधि भी चरणायुध के समान है (तत्रैव)।

आवरण पूजा विधि : आवरण पूजा में सर्वप्रथम कर्णिका में आग्नेय आदि कोणों में पञ्चाङ्ग न्यासोक्त मन्त्रों से अङ्गपूजा करनी चाहिए, यथा :

शास्तारं मृगयाश्रान्तं हृदयाय नमः। अश्वारूढं गणावृत्तं शिरसे स्वाहा। पानीयार्थं वना देत्य शिखायै वषट्। शास्त्रे ते रैवते नमः कवचाय हुम्। शास्तारं····रैवते नमः अस्त्राय फट्।

इसके बाद अष्टदल में पूर्व आदि दिशाओं में नाममन्त्रों से गोप्ता आदि देवताओं का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ गोप्त्रे नमः। ॐ पिंगलाक्षाय नमः। ॐ वीरसेनाय नमः। ॐ शांभवाय नमः।

॥ ५८-६० ॥

ॐ त्रिनेत्राय नमः । ॐ शूलिने नमः । ॐ दक्षाय नमः । ॐ भीमरूपाय नमः ।

इसके बाद श्लो० १०-१२॥ की टिप्पणी में बतलाये गये मन्त्रों तथा रीति से आयुधों सहित इन्द्र आदि दिक्पालों का पूजन करना चाहिए ।

और फिर इस रीति से आवरण पूजा करने के बाद धूप, दीप एवं नैवेद्य आदि उपचारों से महाशास्ता का विधिवत पूजन करना चाहिए ।

मध्याह्नेञ्जलिना तस्मै जलं दत्त्वाजलार्थिने ।
गोप्त्रादिभ्यस्तद्गणेभ्यो दद्यादष्टौ जलाञ्जलीन् ॥ ६१ ॥
जलसन्तर्पितः शास्ता सगणोऽभीष्टदो भवेत् ।

तर्पण : मध्याह्न के समय जल की इच्छा करने वाले महाशास्ता को अंजलि से जल देना चाहिए, तथा गोप्ता आदि ८ गणों को भी ८ अंजलि जल देना चाहिए ।

निशि तस्मै बलिं दद्याद्गायत्र्या चाभिमन्त्रितम् ॥ ६२ ॥
तदग्रे प्रजपेन्मूलमष्टोत्तरशतं सुधीः ।
भूताधिपायशब्दान्ते विद्महेपदमीरयेत् ॥ ६३ ॥
महादेवाय च ततो धीमहीतिपदं वदेत् ।
तन्नः शास्ताप्रचोवर्णादयादिति च कीर्तयेत् ॥ ६४ ॥
गायत्र्येषोदिता शास्तुः सर्वाभीष्टप्रदा नृणाम् ।

बलिदान : रात्रि में (वक्ष्यमाण) गायत्री से अभिमन्त्रित कर उसको बलि देनी चाहिए, और उसके बुद्धिमान साधक को मूल मन्त्र का १०८ बार जप करना चाहिए ।

'भूताधिपाय' के बाद 'विद्महे' बोलना चाहिए । फिर 'महादेवाय' के बाद 'धीमहि' पद बोलना चाहिए । और फिर तन्नः शास्ता प्रचोदयात्' कहना चाहिए । यह महाशास्ता का गायत्री मन्त्र समस्त अभीष्टदायक कहा गया है ।

टिप्पणी : महाशास्ता का गायत्री मन्त्र : ॐ भूताधिपाय विद्महे महादेवाय धीमहि । तन्नः शास्ता प्रचोदयात् ।

अथ पार्थिवलिङ्गस्य विधानमभिधीयते ॥ ६५ ॥
स्नातो नित्यं विधायादौ गत्वा शुद्धां भुवं सुधीः ।
उपरिष्टामपाकृत्य षडर्णेनाधिमन्त्रयेत् ॥ ६६ ॥

॥ ६१ ॥ गायत्र्या भूताधिपायेत्यादिकया ॥ ६२-६५ ॥ पार्थिवलिंग विधानमाह । स्नातइत्यादि ॥ ६६ ॥

आकाशः पृथिवीशेषस्थितो बिन्दुसमन्वितः ।
पृथिवीतुचतुर्थ्यन्ता नमोंतः स्यात्षडर्णकः ॥ ६७ ॥
ततो मृदमुपादाय कृत्वानिःशर्करां ततः ।
पात्रेनिदध्यात्संशुद्धे प्रत्यहं पूजनाय ताम् ॥ ६८ ॥

पार्थिवेश्वर पूजन के लिए मिट्टी लाना : अब पार्थिवलिङ्ग के पूजन की विधि बतलाता हूँ :

स्नान एवं नित्यकर्म करने के बाद साधक (उत्तर दिशा की ओर) शुद्ध स्थान पर जाकर ऊपर की (८ अंगुल) मिट्टी को निकाल कर (वक्ष्यमाण) षडक्षर मन्त्र से भूमि को अभिमन्त्रित करे ।

पृथिवी एवं शेषस्थित सानुस्वार आकाश (ह्लां) फिर चतुर्थ्यन्त पृथिवी (पृथिव्यै) और अन्त में 'नमः' लगाने से यह षडक्षर मन्त्र बनता है ।

फिर वहाँ से मिट्टी लेकर उसे कूट-पीस कर (ताम्र आदि के) शुद्ध पात्र में दैनिक पूजा के लिए रख लेना चाहिए ।

टिप्पणी : भूमि अभिमन्त्रण का मन्त्र : ह्लां पृथिव्यै नमः ।

सुदिने सद्गुरोर्मन्त्रौ गणेश्वरकुमारयोः ।
हराद्यांश्चममनून्सप्तगृह्णीयाद्यागसिद्धये ॥ ६९ ॥

मन्त्र दीक्षा विधि : अच्छे दिन सद्गुरु से पूजन करने के लिए गणेश एवं कुमार के तथा हर आदि के ७ मन्त्रों की दीक्षा लेनी चाहिए ।

अथार्चनं शुभे घस्रे आरभेतेष्टसिद्धये ।
कृत नित्यक्रियः शुद्धः प्रदायार्घ्यं विवस्वते ॥ ७० ॥
मृदमादाय तोयेन सुधया मन्त्रितेन च ।
आसिच्य पिण्डयेत्स्वेष्टमानांपात्रे निधापयेत् ॥ ७१ ॥
ततः कालमनुस्मृत्य कामनामपि हृद्गताम् ।
लिङ्गानि पार्थिवानीह पूजयेऽमुकसंख्यया ॥ ७२ ॥

संकल्प : इसके बाद सुमुहूर्त में इष्टसिद्धि के लिए पूजन प्रारम्भ करना चाहिए । स्नान एवं नित्यकर्म करने के बाद भगवान् सूर्य को अर्घ्य देकर मिट्टी लेकर सुधाबीज

षडर्णमाह । आकाशइति । आकाशोहः पृथिवीशेषस्थितः लआयुतः बिंदुयुतश्च ह्लां । चतुर्थ्यंतापृथिवीपृथिव्यै इति ॥ ६७ ॥ ६८ ॥ गणेश्वरकुमारयोर्मंत्रौवक्ष्यमाणौ । हराद्यांश्चसप्तमन्त्रान्वक्ष्यमाणान ६९ ॥ विवस्वते सूर्यायार्घ्यं पूर्वोक्तम् ॥ ७० ॥ सुधया वमितिबीजमन्त्रितजलेनमृदमासिंच्येत्यन्वयः ॥ ७१-७२ ॥

(वं) से अभिमन्त्रित जल डाल कर अपेक्षित मात्रा का मिट्टी का गोला बनाना चाहिए।

उसके बाद काल आदि तथा अपनी कामना का स्मरण कर अमुक संख्यक पार्थिव लिङ्गों का पूजन करता हूँ—यह संकल्प करना चाहिए।

टिप्पणी : पार्थिवेश्वर पूजन का संकल्प : ॐ अद्येत्यादि देशकालौ संकीर्त्य अमुक गोत्रोत्पन्नः अमुक शर्मा/वर्मा/गुप्तोऽहं अमुककामनया अमुक संख्यकानि पार्थिवलिङ्गानि अमुककाल पर्यन्तमहं पूजयिष्ये।

संकल्प्यैवं मृदःपिण्डादादायाल्पां मृदं सुधीः।
एकादशार्णमन्त्रेण कुर्य्याद्बालगणेश्वरम् ॥ ७३ ॥
मायागणेशभूबीजैर्ङेन्तोगणपतिः पुटः।
एकादशार्णमन्त्रोयं स्मृतो बालगणेशितुः ॥ ७४ ॥
वराभयलसत्पाणिपद्मं बालगणेश्वरम्।
निर्मायस्थापयेत्पीठे लिङ्गानि रचयेत्ततः ॥ ७५ ॥

बाल गणेश्वर की रचना : इस प्रकार संकल्प करने बाद साधक मिट्टी के गोला से थोड़ी से मिट्टी लेकर (वक्ष्यमाण), एकादशाक्षर मन्त्र से बालगणेश्वर की मूर्ति बनावे।

माया (ह्रीं) गणेश (गं) तथा भूबीज (ग्लौं)—इन तीनों से संपुटित चतुर्थ्यन्त गणपति (गणपतये) — यह ११ अक्षर वाला बालगणेश का मन्त्र है।

दोनों हाथों में वर एवं अभय धारण करने वाले बालगणेश्वर को बनाकर पीठ पर स्थापित करना चाहिए और फिर लिङ्गों को बनाना चाहिए।

टिप्पणी : बालगणेश्वर की रचना का मन्त्र : ह्रीं गं ग्लौं गणपतये ग्लौं गं ह्रीं।

हरमन्त्रेण गृह्णीयादक्षमात्राधिकां मृदम्।
महेश्वरस्य मन्त्रेण लिङ्गं कुर्य्यात्तया शुभम् ॥ ७६ ॥
अंगुष्ठमानादधिकं वितस्त्यवधिसुन्दरम्।
पार्थिवं रचयेल्लिङ्गं नन्यूनं नाधिकं चतत् ॥ ७७ ॥
शूलपाणेस्तुमन्त्रेण लिङ्गं पीठे निधापयेत्।
एवमन्यानि कुर्वीत यथा संकल्पमादरात् ॥ ७८ ॥

बालगणेश्वरमन्त्रमाह। मायेति। मायाह्रीं। गणेशःगम्। भूबीजंग्लौं। ह्रींगंग्लौंगणपतयेग्लौंगंह्रींमिति ॥ ७४-७५ ॥ हरमन्त्रेण ॐनमोहरायेति। अर्चाबिभीतकफलम्। ॐनमोमहेश्वरायेतिमन्त्रेणलिंगंकुर्यात् ॥ ७६ ॥ लिङ्गमानमाह। अंगुष्टेति। अगुष्ठादिद्वादशांगुलान्तंयथेष्टंकुर्यात् ॥ ७७ ॥ ॐ नमःशूलपाणयेइतिमन्त्रेणपीठेलिङ्गंस्थापयेत् ॥ ७८ ॥

पार्थिवेश्वर के लिंगों की रचना : 'हर मन्त्र' से बहेड़े के फल से कुछ मिट्टी लेकर 'महेश्वर के मन्त्र' से उस मिट्टी से सुन्दर लिङ्ग बनाना चाहिए। लिङ्ग की आकृति अगुष्ठ से अधिक तथा वितस्ति (बालिश्त) से कम होनी चाहिए। (पार्थिवेश्वर के समस्त लिङ्ग समान आकार वाले बनाने चाहिए) उनमें कोई छोटा और कोई बड़ा नहीं होना चाहिए। 'शूल पाणि' के मन्त्र से लिङ्ग को पीठ पर स्थापित करना चाहिए। इस प्रकार एक लिङ्ग को स्थापित कर संकल्पोक्त संख्या के समान आदर-पूर्वक अन्य लिङ्गों को बनाना चाहिए।

टिप्पणी : हर का मन्त्र : ॐ नमो हराय।

महेश्वरमन्त्र : ॐ नमो महेशाय।

शूलपाणिमन्त्र : ॐ नमो शूलपाणये।

अवशिष्टमृदाकुर्य्यात्कुमारं तस्य मन्त्रतः।
स्थापयेल्लिङ्गपंक्त्यन्ते स्वमन्त्रेणार्च्चयेच्चतम् ॥ ७९ ॥
वाग्वर्मकर्णविन्द्वाढ्यश्चरमो मीनकेतनः।
कुमारायनमोंतोयं गुहमन्त्रो दशाक्षरः ॥ ८० ॥

कुमार की रचना तथा उसका मन्त्र : (फिर) बची हुई मिट्टी से (वक्ष्यमाण) कुमार के मन्त्र से (६ मुख वाले) कुमार को बनाना चाहिए और उन्हें लिङ्गों की पंक्ति के अन्त में स्थापित करना चाहिए। तथा उनके मन्त्र से उनका पूजन करना चाहिए।

वाग् (ऐं) वर्म (हुं) कर्ण एवं विन्दु सहित चरम (क्षुं) फिर मीनकेतन (क्लीं) और अन्त में 'कुमाराय नमः' लगाने से यह १० अक्षर वाला कुमार का मन्त्र बनता है।

टिप्पणी : कुमार का मन्त्र : ऐं हुं क्षुं क्लीं कुमाराय नमः।

मन्त्रेणावाहयेद्देवं प्रतिलिङ्गं पिनाकिनः।
ततो लिङ्गस्थितं ध्यायेत्सुप्रसन्नं महेश्वरम् ॥ ८१ ॥
दक्षाङ्कस्थं गजपतिमुखं प्रामृशन्दक्षदोष्णा
वामोरुस्थागपतितनयाङ्के गुहं चापरेण।
इष्टाभीतीपरकरयुगे धारयन्निन्दुकान्तिः
सोव्यादस्मांस्त्रिभुवननतो नीलकण्ठस्त्रिनेत्रः ॥ ८२ ॥

॥ ७९ ॥ कुमारमंत्रमाह। वागिति। वाक्ऐं। वर्महुम्। कर्णविन्द्वाढ्यश्चरमःक्षुम्। मीनकेतनः क्लीं। स्वरूपमं यत् ॥ ८० ॥ ॐनमःपिनाकिनेहलिलिङ्गेशंवमावाहयेत् ॥ ८१ ॥ ध्यानमाह। दक्षेति। दक्षदोष्णादक्षिणबाहुना दक्षिणोत्संगस्थंगणेशंप्रामृशन्। अपरेण वामबाहुनावामोरुस्थाया अगपतितनयायाः पार्वत्या उत्संगे वर्तमानं गुहं कुमार च प्रामृशन्। इष्टाभीतीवराभये कराभ्यांदक्षवामाभ्यां धारयन् ॥ ८२ ॥

आवाहन एवं ध्यान : पिनाकी के मन्त्र से प्रत्येक लिङ्ग में शिव का आवाहन करना चाहिए और फिर लिङ्ग में स्थित प्रसन्न वदन भगवान् शिव का ध्यान करना चाहिए :

दाहिनी गोद में स्थित गणेश के मुख को दाहिनी भुजा से सहलाते हुए, तथा बाँयी गोद मे विराजमान पार्वती की गाद में बैठ कुमार को बाँये हाथ से दुलारते हुए, अन्य दोनों हाथों में वर एवं अभय धारण किये हुए, चन्द्रमा जैसी आभावाले, तीनों लोकों में पूजित, नीले कण्ठ तथा तीन नेत्र वाले भगवान् शिव हमारी रक्षा करें।

टिप्पणी : पिनाकी का मन्त्र : ॐ नमः पिनाकिने।

एवं ध्यात्वा पशुपतेर्मन्त्रेण स्नापयेच्छिवम्।
शिवमन्त्रेण गन्धादीनर्पयेद्वसुरेतस ॥ ८३ ॥

पूजाविधि : इस प्रकार ध्यान कर 'पशुपति' के मन्त्र से स्नान करना चाहिए। तथा 'शिव मन्त्र' से गन्ध, पुष्प, धूप, दीप एवं नैवेद्य आदि उपचारों से भगवान् शंकर का पूजन करना चाहिए।

टिप्पणी : पशुपति का मन्त्र : ॐ नमो पशुपतये

प्रागादिवामावर्तेन दिक्ष्वष्टौ परिपूजयत्।
शर्व भवं रुद्रमुग्रं भीमं पशुपतिं तथा ॥ ८४ ॥
महादेवमथेशानं क्रमात्क्षित्यादिमूर्तिकान्।
क्षित्यप्तेजानिलाकाशयजमानेन्दुभास्कराः ॥ ८५ ॥
क्षित्यादयःस्युःशर्वाद्यास्तत इन्द्रादिकान्यजेत्।

आवरणपूजा : पूर्व आदि आठों दिशाओं मे वामावर्त क्रम से क्षित्यादि मूर्तिवाल शर्व आदि ८ देवताओं का पूजन करना चाहिए। शर्व, भव, रुद्र, उग्र, भीम, पशुपति, महादेव एवं ईशान ये क्रमशः क्षिति (पृथ्वी) आदि की मूर्तियाँ हैं। क्षिति, आप, तेज, अनिल, आकाश, यजमान, इन्दु एवं भास्कर को क्षित्यादि कहते हैं। इसके बाद इन्द्र आदि दिक्पालों का पूजन करना चाहिए।

ॐनमः पशुपतय इतिमन्त्रेणस्नापयेत्। ॐनमः शिवायेतिमन्त्रेण वह्निरेतसे शंकरायगन्ध पुष्पधूपदीपनवेद्यान्यर्पयेत् ॥ ८३ ॥ आवरणार्चनमाह। प्रागादीति। क्षित्यादिमूर्ति कान्शवादीन् प्रागादिषु च वामावर्तेन पूजयेत्। क्षित्यादीनाह। क्षित्यप्तेजइत्यादि। यथा-शवायक्षिति मूर्तय नमः पूर्व। भवायजलमूर्त्तयेनम ईशाने। रुद्रायतेजो मूर्तयेनम उत्तरे। उग्रायवा मूर्त्तयेनमोवायौ। भीमायाकाश मूर्त्तये नमः पश्चिमे। पशुपतये यजमानमूर्तये नमोनैर्ऋत्ये। महादेवायचन्द्रमूर्तयेनमोदक्षिणे। ईशानायसूर्यमूर्तये नमआग्नेय इति ॥ ८४-८६ ॥

टिप्पणी : आवरणपूजा विधि : श्लोक सं० ८२ में वर्णित भगवान् पार्थिवेश्वर का ध्यान कर पाद्यादि उपचारों से पुष्प चढ़ाने तक विधिवत लिङ्ग का पूजन कर आवरणपूजा करनी चाहिए।

आवरणपूजा में सर्वप्रथम[1] पूर्व आदि दिशाओं में विलोमक्रम से शर्व आदि अष्टमूर्तियों का निम्नलिखित मन्त्रों से पूजन करना चाहि, यथा :

ॐ शर्वाय क्षिति मूर्तये नमः – पूर्वे। ॐ भवाय जल मूर्तये नमः – ईशाने। ॐ रुद्राय तेजो मूर्तये नमः – उत्तरे। ॐ उग्राय वायु मूर्तये नमः – वायव्ये। ॐ भीमाय आकाश मूर्तये नमः – पश्चिमे। ॐ पशुपतये यजमान मूर्तये नमः – नैर्ऋत्ये। ॐ महादेवाय चन्द्र मूर्तये नमः – दक्षिणे। ॐ ईशानाय सूर्य मूर्तये नमः – आग्नेये।

तत्पश्चात् इन्द्र आदि देवताओं का निम्नलिखित मन्त्रों से पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ लं इन्द्राय सायुधाय सशक्तिकाय नमः। ॐ रं अग्नये सायुधाय सशक्तिकाय नमः। मं यमाय सायुधाय सशक्तिकाय नमः। ॐ क्षं निर्ऋतये स युधाय सशक्तिकाय नमः। ॐ वं वरुणाय सायुधाय सशक्तिकाय नमः। ॐ यं वायवे सायुधाय सशक्तिकाय नमः ॐ सं सोमाय सायुधाय सशक्तिकाय नमः। ॐ हं ईशानाय सायुधाय सशक्तिकाय नमः। ॐ आं ब्रह्मणे सायुधाय सशक्तिकाय नमः। ॐ ह्रीं अनन्ताय सायुधाय सशक्तिकाय नमः।

इस प्रकार आवरणपूजा करने के बाद धूप, दीप, नैवेद्य, दक्षिणा एवं नमस्कार आदि से भगवान् पार्थिवेश्वर का विधिवत पूजन करना चाहिए।

---

[1] शैवागम लिङ्गार्चन चन्द्रिका एवं पुरश्चरणदीपक के अनुसार पार्थिवेश्वर की आवरणपूजा में सर्वप्रथम ११ रुद्रों का उनके नाममन्त्रों से पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ अघोराय नमः। ॐ पशुपतये नमः। ॐ शिवाय नमः। ॐ विरूपाय नमः। ॐ विश्वरूपाय नमः। ॐ भैरवाय नमः। ॐ त्र्यम्बकाय नमः। ॐ शूलपाणये नमः। ॐ कपर्दिने नमः। ॐ ईशानाय नमः। ॐ महेशाय नमः।

तत्पश्चात् निम्नलिखित ११ शक्तियों का उनके नाम मन्त्रों से पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ भगवत्यै नमः। ॐ उमादेव्यै नमः। ॐ शंकरप्रियायै नमः। ॐ पार्वत्यै नमः। ॐ गौर्यै नमः। ॐ कालिन्द्यै नमः। ॐ काटिव्यै नमः। ॐ विश्वधारिण्यै नमः। ॐ विश्वेश्वर्यै नमः। ॐ विश्वपात्रे नमः। ॐ शिवायै नमः।

और फिर 'ॐ शर्वाय क्षितिमूर्तये नमः' इत्यादि उपर्युक्त मन्त्रों से अष्टमूर्तियों का पूजन कर मध्य में 'ह्रीं उमायै नमः' मन्त्र से उमा का पूजन करना चाहिए। और इसके बाद इन्द्र आदि दिक्पालों का पूजन करना चाहिए।

धूपदीपनिवेद्यानि नमस्कारप्रदक्षिणाः ॥ ८६ ॥
जपं च कृत्वा विसृजेन्महादेवस्य मन्त्रतः ।

उत्तर जा, जप एवं विसर्जन : (आवरण पूजा के बाद) धूप, दीप, नैवेद्य, नमस्कार एवं प्रदक्षिणा आदि से पूजन करना चाहिए और फिर सदाशिवमन्त्र का जप कर महादेव मन्त्र से विसर्जन करना चाहिए ।

टिप्पणी : सदाशिव मन्त्र : ॐ नमः शिवाय ।

विनियोग : ॐ अस्य श्री सदाशिव मन्त्रस्य वामदेव ऋषिः पंक्तिश्छन्दः, श्रीसदाशिवो देवता, ॐ बीजं, नमः शक्तिः शिवाय कीलकं ममाभीष्टसिद्धये जपे विनियोगः ।

ऋष्यादिन्यास : ॐ वामदेवाय ऋषये नमः – शिरसि । ॐ पंक्तिश्छन्दसे नमः – मुखे । ॐ श्री सदाशिव देवतायै नमः – हृदि । ॐ बीजाय नमः – गुह्ये । ॐ नमः शक्तये नमः – पादयोः । ॐ शिवाय कीलकाय नमः – सर्वाङ्गे ।

कराङ्गन्यास : ॐ अंगुष्ठाभ्यां नमः / हृदयाय नमः । ॐ नं तर्जनीभ्यां नमः / शिरसे स्वाहा । ॐ मं मध्यमाभ्यां नमः / शिखायै वषट् । ॐ शिं अनामिकाभ्यां नमः / कवचाय हुम् । ॐ वां कनिष्ठाभ्यां नमः / नेत्रत्रयाय वौषट् । ॐ यं करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः / अस्त्राय फट् ।

ध्यान : ध्यायेन्नित्यं महेशं रजतगिरिनिभं चारुचन्द्रावतंसं,
रत्नाकल्पोज्ज्वलाङ्गं परशुमृगवराभीतिहस्तं प्रसन्नम् ।
पद्मासीनं समन्तात्स्तुतममरगणैर्व्याघ्रकृत्तिं वसानं,
विश्वाद्यं विश्ववन्द्यं निखिलभयहरं पञ्चवक्त्रं त्रिनेत्रम् ॥

महादेवमन्त्र : ॐ नमो महादेवाय ।

तारनत्यादिकाङन्ता हराद्या मनवोदयः ॥ ८७ ॥

हर आदि के ७ मन्त्र : प्रारम्भ में प्रणव फिर 'नमः' और उसके बाद हर आदि के चतुर्थ्यन्त रूप लगाने से 'ॐ नमो हराय' इत्यादि पार्थिवेश्वर पूजन के सात मन्त्र बन जाते हैं ।

प्रतिलिङ्गं यजेद्देवमखिलानि सहैव वा ।
पूजितौ निजमन्त्राभ्यां विसृजेद्गणराड्गुहौ ॥ ८८ ॥

जपं कृत्वा ॐ नमोमहादेवायेतिविसृजेत् । हरादिमन्त्रानाह । तारेति । प्रणवनमआद्याश्चतुर्थ्यंता हराद्याः अद्रयः सप्तसंख्याकामन्त्राः ॐ नमोहरायेत्यादयोमयोक्ताः ॥ ८७ ॥ एवमेक सम्पूज्यापरे पूजयेत् । अल्पकालेबहुकरणपक्षे बहूनिसहैवपूजयेत् । गणेशगुहौस्वमन्त्राभ्यामेवाखिलोपचारैः सम्पूज्यविसर्जयेत् ॥ ८८ ॥

प्रत्येक लिङ्ग का इस रीति से पूजन करना चाहिए। अथवा समस्त लिङ्गों का एक साथ इसी रीति से पूजन करना चाहिए। बालगणेश्वर एवं कुमार का उनके मन्त्रों से पूजन करने के बाद विसर्जन करना चाहिए।

धनपुत्रादिकामैस्तु शिवोर्च्यः प्रोक्तलक्षणः।
विद्याकामैश्चिन्तनीयः परशुं हरिणं वरम् ॥ ८९ ॥
ज्ञानमुद्रां दधद्भस्तैर्वटमूलमुपाश्रितः।
पुंसोर्विरुद्धयोः सन्धौ कुर्य्याल्लिङ्गानि साधकः ॥ ९० ॥
नदीतीरद्वयानीतमृदा तानि च पूजयेत्।
तत्र ध्येयो हरिहरः शङ्खपद्माहिशूलभृत् ॥ ९१ ॥
इन्द्रनीलशरच्चन्द्रनिभोभूषणपुञ्जवान्।
दंपत्योरविरोधार्थमर्द्धनारीश्वरः स्मृतः ॥ ९२ ॥
पीयूषपूर्णकलशं दधत्पाशांकुशावपि।
उच्चाटे मारणे द्वेषे ध्यातव्यः पुनरीदृशः ॥ ९३ ॥
कालीहस्ताम्बुजालम्बः शूलप्रोतद्विषच्चयः।
मुण्डमालालसत्कण्ठो रावित्रासिताखिलः ॥ ९४ ॥
इत्थं तु कामनाभेदाद्ध्यानभेदाः प्रकीर्तिताः।

विविध कामनाओं में पार्थिवेश्वर के ध्यान : धन एवं पुत्र आदि की कामना वाले लोगों को पूर्वोक्त विधि से ही शिव का पूजन करना चाहिए।

विद्या की कामना वालों को वट के मूल में विराजमान तथा चारों हाथों में परशु, हरिण, वर एवं ज्ञान मुद्रा धारण करने वाले भगवान् दक्षिणामूर्ति का ध्यान करना चाहिए।

दो विरोधियों में समझौता कराने के लिए नदी के दोनों किनारों से मिट्टी लाकर उससे लिङ्ग बनाकर उस लिङ्ग का पूजन करना चाहिए। इस प्रयोग में शंख, पद्म, सर्प एवं त्रिशूल धारण करने वाले हरिहर का ध्यान करना चाहिए। इन्द्रनील जैसी आभावाले हरि, तथा शरदकालीन चन्द्र जैसी आभावाले हर हैं। दोनों ही आभूषणों से अलंकृत है। इन दोनों में एक्य की भावनापूर्वक ध्यान करना चाहिए।

पति पत्नी में प्रेम सम्पादनार्थ अर्द्धनारीश्वर का ध्यान करना है, जो चारों हाथों में क्रमशः अमृत, पूर्णकुम्भ, पाश एवं अंकुश धारण किये हुए हैं।

कामनाभेदेनध्यानान्याह। परशुमिति। वटमूलाश्रितोदक्षिणामूर्तिः। वरज्ञानमुद्रे दक्षयोः। परशुहरिणौ वामयोः। संधौ अर्द्धहरिहरोध्येयः। शङ्खपद्माहरिहस्तयोः। नागशूलेहरहस्तयोः। इन्द्रनीलनिभोहरिः। शरच्चन्द्रनिभोहरः ॥ ८९-९३ ॥

उच्चाटन, मारण एवं विद्वेषण आदि में काली के कर कमल का सहारा लेने वाले, अपने त्रिशूल से शत्रुसमूह को छिन्नभिन्न करने वाले, मुण्डमाला धारण करने वाले, तथा अपनी भयानक आवाज से सबको भयभीत करने वाले भगवान् रुद्र का ध्यान करना चाहिए।

इस प्रकार विविध कामनाओं के भेद से भिन्न भिन्न ध्यान बतलाये गये हैं।

पूजयेत्कार्य्यवशतो लक्षावधिसहस्रतः ॥ ९५ ॥
लक्षंपार्थिवलिङ्गानां पूजनाद्भुवि मुक्तिभाक्।
लक्षं तु गुडलिङ्गानां पूजनात्पार्थिवो भवेत् ॥ ९६ ॥
या नारी गुडलिङ्गानि सहस्रं पूजयेत्सती।
भर्तुःसुखमखण्डं सा प्राप्यान्ते पार्वतीभवेत् ॥ ९७ ॥
नवनीतस्य लिङ्गानि संपूज्येष्टमवाप्नुयात्।
भस्मनो गोमयस्यापि बालुकायास्तथाफलम् ॥ ९८ ॥
क्रीडन्ति पृथुका भूमौ कृत्वालिङ्गं रजोमयम्।
पूजयन्ति विनोदेन ते पित्युःक्षितिनायकाः ॥ ९९ ॥
प्रातर्गोमयलिङ्गानि नित्यं यस्त्रीणि पूजयेत्।
बृहतीबिल्वयोः पत्रैर्नैवेद्यं गुडमर्पयेत् ॥ १०० ॥
एवं मासत्रयं कुर्वन्नल्पं लभते धनम्।
एकादशैवलिङ्गानि गोमयोत्थानि यो यजेत् ॥ १०१ ॥
प्रातर्मध्याह्नयोः सायं निशीथे प्रतिवासरम्।
स सर्वाः सम्पदोयायात्षण्मासादेवमाचरन् ॥ १०२ ॥
एकादशयजेन्नित्यं शालिपिष्टमयानिसः।
लिङ्गानि मासमात्रेण सकल्मषचयं दहेत् ॥ १०३ ॥
स्फाटिकं पूजितं लिङ्गमेनोनिकरनाशनम्।
सर्वकामप्रदं पुंसामुदुम्बरसमुद्भवम् ॥ १०४ ॥
रेवाश्मजं सर्वसिद्धिप्रदं दुःखविनाशनम्।
यथाकथंचिल्लिङ्गस्य पूजा नित्यं कृतेष्टदा ॥ १०५ ॥

॥ ९४ ॥ उच्चाटनादिषुध्यानमाह। कालीति। शूलेप्रोतः शत्रुसमूहोयेन। कार्यवशतः अल्पेकार्येऽल्पानांपूजा कार्यगौरवेबहूनां पूजाकार्या ॥ ९४-९९ ॥ धनप्रापकं प्रयोगमाह। प्रातरिति ॥ १०० ॥ सम्पदावहं प्रयोगमाह। एकादशेति। प्रत्यहं कालत्रयेष्टयेएकादशैकादशपूजयेत् ॥ १०१-१०३ ॥ एनोनिकरः पापौघस्तस्य नाशनम्। उदुम्बरसमुद्भवस्ताम्रमयम् ॥ १०४-१०५ ॥

योयजेत्पिचुमन्दोत्थैः पत्रैर्गोमयजं शिवम् ।
क्रुद्धं महेश्वरं ध्यायन्सपराजयते रिपून् ॥ १०६ ॥
यो लिङ्गं पूजयेन्नित्यं शिवभक्तिपरायणः ।
मेरुतुल्योपि तस्याशु पापराशिर्लयं व्रजेत् ॥ १०७ ॥
दोग्ध्रीणां तु गवां लक्षं योदद्याद्वेदपाठिने ।
पार्थिवं योऽर्चयेल्लिङ्गं तयोर्लिङ्गार्चको वरः ॥ १०८ ॥
चतुर्दश्यां तथाष्टम्यां पौर्णमास्यां विधुक्षये ।
पयसास्नापयेल्लिङ्गं धरादानफलं व्रजेत् ॥ १०९ ॥

लिङ्ग पूजन का फल : छोटे एवं बड़े कार्य के भेद से १ हजार से लेकर १ लाख तक लिङ्गों का पूजन करना चाहिए ।

एक लाख पार्थिव लिङ्गों का पूजन करने से मनुष्य भुक्ति एवं मुक्ति दोनों प्राप्त करता है ।

एक लाख गुड से बने लिङ्गों का पूजन करने से मनुष्य राजा बन जाता है ।

जो स्त्री पतिव्रता धर्म का पालन करते हुए १ हजार गुड लिङ्गों का पूजन करती है, वह पति का सुख तथा अखण्ड सौभाग्य प्राप्त कर अन्त में पार्वती हो जाती है ।

नवनीत के लिङ्गों का पूजन कर मनुष्य अपने मनोरथों/इच्छित वस्तुओं को प्राप्त करता है । भस्म, गोबर तथा बालुका से बने लिङ्गों के पूजन का भी यही फल है ।

पृथुक आदि भूमि में धूलि से लिङ्ग बनाकर खेलते थे तथा विनोद में ही उसका पूजन करते थे । वे इसी के प्रभाव से राजा बन गये ।

जो स्त्री प्रातः काल गोबर के लिङ्गों का भटकटैया एवं बेलपत्रों से पूजन करती है तथा नैवेद्य में गुड़ चढ़ाती है वह इस प्रकार ३ मास तक पूजन करने पर प्रचुर धन प्राप्त करती है ।

जो व्यक्ति प्रतिदिन प्रातः, मध्याह्न, सायंकाल एवं अर्धरात्रि में चारों समय ११–११ गोबर के लिङ्गों का पूजन करता है वह ६ मास तक इस प्रकार पूजन करने से समस्त सम्पत्तियाँ प्राप्त कर लेता है ।

चावल के आटे से ११ लिङ्ग बनाकर जो व्यक्ति प्रतिदिन पूजन करता है । वह १ मास तक इस प्रकार पूजन करने से पापराशि को जला देता है ।

पिचुमन्दानम्बः ॥ १०६-१०९ ॥

स्फटिक की लिङ्ग की पूजा करने से सभी पाप दूर हो जाते हैं। तांबे से बना लिङ्ग मनुष्यों की मनोकामनाओं को पूरा करता है। नर्मदेश्वर सब सिद्धियाँ देता है तथा दुःखों को दूर करता है। जिस किसी भी प्रकार के लिङ्ग को प्रतिदिन पूजा करना अभीष्टफल दायक माना गया है।

जो मनुष्य गोबर का लिङ्ग बनाकर क्रुद्धमहेश्वर का ध्यान कर नीम के पत्तों से पूजन करता है, वह शत्रुओं को परास्त कर देता है।

जो व्यक्ति भगवान् शिव की भक्ति में तत्पर होकर प्रतिदिन लिङ्ग का पूजन करता है, उसके सुमेरुतुल्य बड़े से बड़े पापों के समुदाय भी नष्ट हो जाते हैं।

जो व्यक्ति वेदपाठियों को १ लाख दुधारू गाय दान करता है तथा जो अन्य पार्थिव लिङ्ग का पूजन करता है – इन दोनों व्यक्तियों में पार्थिव-लिङ्ग की पूजा करने वाला ही श्रेष्ठ है।

लिङ्गपूजां विधायाग्रेस्तोत्रं वाशतरुद्रियम्।
प्रजपेत्तन्मनाभूत्वा शिवे स्वं विनिवेदयेत् ॥ ११० ॥
यत्संख्याकं यजेल्लिङ्गं तन्मितं होममाचरेत्।
आज्यान्वितैस्तिलैरग्नौ घृतैर्वापायसेन वा ॥ १११ ॥
शिवमन्त्रेण तस्यान्तेब्राह्मणान्भोजयेच्छतम्।
एवं कृते समस्तेष्टसिद्धिर्भवति निश्चितम् ॥ ११२ ॥

उत्तरकर्म : लिङ्ग पूजा करने के बाद उसके सम्मुख अनन्य मन से स्तोत्र या यजुर्वेदोक्त 'नमस्ते रुद्रमन्यव०' इत्यादि 'शतरुद्रिय' का पाठ करना चाहिए और स्वयं को भगवान् के लिए समर्पित कर देना चाहिए।

जितने लिङ्गों का पूजन करे उतना ही हवन करना चाहिए। घृत मिश्रित तिलों से, घी से या खीर से विधिवत स्थापित अग्नि में 'ॐ नमः शिवाय' इस मन्त्र से होम करना चाहिए। फिर इसके बाद १०० ब्राह्मणों को भोजन कराना चाहिए। ऐसा करने से मनुष्यों के सब मनोरथ निश्चित रूप से पूरे हो जाते हैं।

अथ धर्मराजमन्त्रः।
प्रणवांकुशहृल्लेखापाशाः कम्भौतिकेन्दुमत्।
वैवस्वतायधर्मान्ते राजावर्णाः प्रभञ्जनः ॥ ११३ ॥

शतरुद्रियम्। नमस्तेरुद्रमन्यवइतिप्रपाठकं यजुर्वेदोक्तम्। स्वमात्मानं शिवेनिवेदयेत् ॥ ११०-१११ ॥ शिवं मन्त्रेण—ॐनमः शिवायेतिषडक्षरेण ॥ ११२ ॥ यममन्त्रमाह। प्रणवेति। प्रणवॐ। अंकुशः क्रों। हृल्लेखा ह्रीं। पाशः आम्। कंजलंवः भौतिकेन्दुमत् ऐंबिन्दुयुतं वैं। प्रभञ्जनोयः। स्पष्टम यत्। यथा—ॐक्रोंह्रींआंवैं वैवस्वतायधर्मराजाय भक्तानुग्रहकृतेनमः। शमनदंडतायमईवरकः ॥ ११३ ॥

भक्तानुग्रहवर्णान्ते कृतेनम उदीरितः ।
चतुर्विंशतिवर्णात्मा मन्त्रःशमनदेवतः ॥ ११४ ॥

धर्मराज के मन्त्र का उद्धार : प्रणव (ॐ), अंकुश (क्रों), हृल्लेखा (ह्रीं), पाश (आं) तथा भौतिक एवं इन्दु सहित जल (वैं) फिर 'वैवस्वताय धर्म' के बाद 'राजा' तथा प्रभंजन (य) फिर 'भक्तानुग्रह' के बाद 'कृते नमः' लगाने से यह २४ अक्षर का यमराज का मन्त्र बतलाया गया है ।

टिप्पणी : *धर्मराज का मन्त्र* : ॐ क्रों ह्रीं आं वैं वैवस्वताय धर्मराजाय भक्तानुग्रहकृते नमः ।

विनियोग : अस्य श्री धर्मराज मन्त्रस्य वामदेव ऋषिः गायत्री छन्दः शमन देवता ममाभीष्टसिद्धये जपे विनियोगः ।

त्रिनेत्रपञ्चबाणाद्रियुग्मार्णैरङ्गकंमनोः ।
विधाय सावधानेन मनसा चिन्तयेद्यमम् ॥ ११५ ॥

षडङ्गन्यास : मन्त्र के ३, २, ५, ५, ७ एवं २ वर्णों से षडङ्गन्यास करना चाहिए । फिर मनोयोग पूर्वक यमराज का ध्यान करना चाहिए ।

टिप्पणी : *षडङ्गन्यास* : ॐ क्रों ह्रीं हृदयाय नमः । आं वैं शिरसे स्वाहा । वैवस्वताय शिखायै वषट् । धर्मराजाय कवचाय हुम् । भक्तानुग्रहकृते नेत्रत्रयाय वौषट् । नमः अस्त्राय फट् ।

पांथःसंयुतमेघसन्निभतनुः प्रद्योतनस्यात्मजो
नृणां पुण्यकृतां शुभावहवपुः पापीयसां दुःखकृत् ।
श्रीमद्दक्षिणदिक्पतिर्महिषगो भूषाभरालंकृतो
ध्येयः संयमिनीपतिः पितृगणस्वामी यमो दण्डभृत् ॥ ११६ ॥

ध्यान : सजलमेघ जैसे श्याम वर्ण वाले, सूर्य के पुत्र, पुण्यात्माओं को सौम्य तथा पापियों को भीषण रूप वाले, ऐश्वर्यशाली, दक्षिण दिशा के स्वामी, भैंसा, बैल, एवं आभूषणों से सुशोभित, संयमिनी के पति, पितरों के स्वामी तथा दण्ड धारण करने वाले धर्मराज का ध्यान करना चाहिए ।

अभ्यस्तोयं सिद्धमन्त्रःसकलापद्विनाशनः ।
नरकप्राप्तिरोद्धास्याद्विपुभीतिनिवर्तकः ॥ ११७ ॥

॥ ११४ ॥ षडङ्गमाह । त्रिनेत्रेति । ॐक्रोंह्रीं हृदयायनमइत्यादि० । आंवैं शिरइत्यादि० ॥ ११५ ॥ ध्यानमाह । पाथइति । सजलमेघाभः । प्रद्योतनोरविस्तस्यपुत्रः । पुण्यवतांसौम्यः । पापीयसांभीषणः ॥ ११६ ॥ सिद्धमन्त्रस्त्वाहुत्यादिपूजाभावः ॥ ११७ ॥

फल : सिद्धमन्त्र होने के कारण यह अभ्यस्त होते ही समस्त आपत्तियों को दूर करता है, नरक जाने से रोकता है तथा शत्रु भय को नष्ट करता है।

अथ चित्रगुप्तमन्त्रः।

प्रणवोहृद्विचित्रायधर्मान्ते लेखकाय च।
यमवान्तेहिकाधीतिकारिणेपदमुच्चरेत् ॥ ११८ ॥
क्षुधातन्द्रीक्रियोत्कारीवह्नियार्घीशसंयुताः।
यामिनीशयुतामूर्ध्नि जन्मसंपत्पदं ततः ॥ ११९ ॥
प्रलयं कथयद्वन्द्वंस्वाहाष्टात्रिंशदक्षरः।
मन्त्रोयं चित्रगुप्तस्य सर्वदुःखौघनाशनः ॥ १२० ॥

चित्रगुप्त के मन्त्र का उद्धार : प्रणव (ॐ) हृद् (नमः) फिर 'विचित्राय धर्म' 'लेखकाय' 'यमवा' 'हिकाधि' तथा 'कारिणे' वर्ण बोलने चाहिए। फिर क्षुधा (य) तन्द्री (म) (क्रिया) (ल) उत्कारी (व) वह्नि (र) एवं य – इन सब वर्णों में अर्धीश एवं इन्दु लगाने पर 'य्म्ल्र्यूं' फिर 'सम्पत् 'प्रलयं' तथा २ बार 'कथय' और अन्त में 'स्वाहा' लगाने से यह ३८ अक्षर का सब दुःख एवं पापों को दूर करने वाला चित्रगुप्त का मन्त्र कहा गया है।

टिप्पणी : चित्रगुप्त का मन्त्र : ॐ नमो विचित्राय धर्मलेखकाय यमवाहिकाधिकारिणे य्म्ल्र्यूं जन्म सम्पत्प्रलयं कथय कथय स्वाहा।

सप्तषण्णववस्वंगैर्नेत्राणैर्मनुसम्भवैः।
प्रविधायषडङ्गानि चिन्तयेत्कर्मलेखकम् ॥ १२१ ॥

षडङ्गन्यास : मन्त्र के क्रमशः ७, ६, ९, ८, ६, एवं २ वर्णों से षडङ्गन्यास करने के बाद जीवों के कर्मों का लेखाजोखा रखने वाले चित्रगुप्त का ध्यान करना चाहिए।

टिप्पणी : षडङ्गन्यास : ॐ नमो विचित्राय हृदयाय नमः। धर्मलेखकाय शिरसे स्वाहा। यमवाहिकाधिकारिणे शिखायै वषट्। य्म्ल्र्यूं जन्मसम्पत्प्रलयं कवचाय हुम्। कथय कथय नेत्रत्रयाय वौषट्। स्वाहा अस्त्राय फट्।

चित्रगुप्तमन्त्रमाह। प्रणवइति ॥ ११८ ॥ क्षुधायः। तन्द्रीमः। क्रियालः। उत्कारीवः। वह्नीरः। यमवरूपम्। एतेअर्धीशसंयुताऊयुताः। मूर्धिनयामिनीशयुताबिन्दुयुताः। तेनयम्ल्र्यूंइतिपिण्डम्। स्वरूपमन्यत्। मन्त्रोयथा—ॐनमो विचित्राय धर्मलेखकाय यमवाहिकाधिकारिणे य्म्ल्र्यूंजन्म संपत्प्रलयं कथय २ स्वाहेति ॥ ११९-१२० ॥

षडङ्गमाह। सप्तेति।वसवोष्टौ। अंगानिषट् ॥ १२१ ॥

किरीटोज्ज्वलं वस्त्रभूषाभिरामं विचित्रासनासीनमिन्दुप्रभास्यम् ।
नृणां पापपुण्यानि पत्रे लिखन्तं भजेचित्रगुप्तं सखायं यमस्य ॥ १२२ ॥

ध्यान : किरीट, वस्त्र एवं आभूषणों से सुशोभित विचित्र आसन पर विराजमान, चाँदनी जैसे उज्वल मुख वाले, मनुष्यों के पाप पुण्यों को पत्र पर लिखने वाले एवं यमराज के सखा चित्रगुप्त का भजन करता हूँ ।

सिद्धमन्त्रमिमं पुंसां जपतां चित्रगुप्तकः ।
प्रसन्नोगणयेत्पुण्यं नैव पापं कदाचन ॥ १२३ ॥

फल : इस सिद्ध मन्त्र का जप करने वाले मनुष्यो से प्रसन्न होकर चित्रगुप्त उनके पुण्यों की ही गणना करता है पापों की नहीं ।

वक्ष्याम्यथर्ववेदोक्तमासुरीविधिमुत्तमम् ।
कटुकेकटुकान्ते तु पत्रेन्तेसुभगेपदम् ॥ १२४ ॥
अनन्तसुरिरक्तेन्तेपदं स्याद्रक्तवाससे ।
अथर्वणस्यदुहितेकेशवोघोभगीबली ॥ १२५ ॥
अघोरकर्मशब्दान्ते कारिके अमुकस्य च ।
गतिंदहद्वयं कर्णः पविष्टस्यगुदंदह ॥ १२६ ॥
दहसुप्तस्यतन्द्रीनोदहद्वयुग्मं प्रबुद्ध च ।
भृगुः सवालीहृदयं दहद्वन्द्वं हनद्वयम् ॥ १२७ ॥
पच्चयुग्मंतावदन्ते दहतावत्पचेति च ।
यावन्मेवशमायातिवर्मास्त्रे वह्निवल्लभा ॥ १२८ ॥
तारादिरासुरीमन्त्रो दशोत्तरशताक्षरः ।

आसुरी विद्या : अब अथर्ववेद में प्रतिपादित आसुरी विद्या के प्रयोग की श्रेष्ठतम् विधि बतलाता हूँ :

'कटुके कटुक' के बाद 'पत्रे' 'सुभगे' एवं अनन्त (आ) फिर 'सुरिरक्ते' के बाद 'रक्त वाससे' 'अथर्वणस्य दुहिते' तथा केशव (अ) फिर 'घो' भगो बली (रे) तथा 'अघोर कर्म' पद के बाद 'कारिके' 'अमुकस्य' 'गति' तथा २ बार 'दह' फिर कर्ण

ध्यानमाह । किरीटोज्ज्वलमिति ॥ १२२-१२३ ॥ आसुरीमन्त्रमाह । कटुकेइति ॥ १२४ ॥ अनन्तआ केशवःअ । बलीरः भगीएतुतरे ॥ १२५ ॥ कर्णउ ॥ १२६ ॥ तन्द्रीमः भृगुः सः सवाली ययुतः स्य । अन्यस्वरूपम् । मन्त्रोयथा—ॐकटुकेकटुकपत्रेसुभगे आसुरिरक्तेरक्तवाससे अथर्वणस्यदुहिते अघरे अघोर कर्मकारिकेऽमुकस्यगतिंदह २ उपविष्टस्यगुदंदह २ सुप्तस्यमनो दह २ प्रबुद्धस्य हृदयंदह २ हन २ पच २ तावद्दहतावत्पचयावन्मेवशमायातिहुंफट्स्वाहेति । आसुरीसंज्ञादुर्गादेवता ॥ १२७-१२८ ॥

(उ) तथा 'पिष्टस्य गुह्यं' २ बार 'दह' फिर 'सुप्तस्य' तन्द्री (म), 'नो' तथा २ बार 'दह' फिर 'प्रबुद्ध' सवाली भृगु (स्य) 'हृदयं' २ बार 'दह' २ बार 'हन' तथा २ बार 'पच' फिर 'तावत्' 'दह' 'तावत्पच' 'यावन्मे वशमायाति' वर्म (हुं) अस्त्र (फट्) तथा वह्निवल्लभा (स्वाहा) और प्रारम्भ में तार (ॐ) लगाने से यह ११० अक्षरवाला आसुरी मन्त्र बनता है।

टिप्पणी : आसुरी मन्त्र : ॐ कटुके कटुकपत्रे सुभगे आसुरिरक्ते रक्तवाससे अथर्वणस्य दुहिते अघोरे अघोर कर्मकारिकेऽमुकस्य गतिं दह दह उपविष्टस्य गुदं दह दह सुप्तस्य मनो दह दह प्रबुद्धस्य हृदयं दह दह हन हन पच पच तावद्दह तावत्पच यावन्मेदशमायाति हुं फट् स्वाहा।

अङ्गिरास्तुऋषिश्छन्दोविराड् दुर्गासुरी मता ॥ १२९ ॥
देवता प्रणवोबीजं शक्तिः पावकनायिका।
हृन्नवार्णैः शिरोंगार्णैः शिखासप्ताक्षरैर्मता ॥ १३० ॥
वर्माष्टभिर्नेत्रमीशैरस्त्रं बाणरसाक्षरैः।
हुंफट्स्वाहेतिसर्वत्र पठेदंगेषु साधकः ॥ १३१ ॥

विनियोग एवं न्यास : इस मन्त्र के अङ्गिरा ऋषि हैं, विराट् छन्छ है, आसुरी दुर्गा देवता है, प्रणव बीज है तथा स्वाहा शक्ति है।

मन्त्र के ९ वर्णों से हृदय पर, ६ अक्षरों से शिर, ७ वर्णों से शिखा, ८ वर्णों से कवच, ११ वर्णों से नेत्र तथा ६५ वर्णों से अस्त्र पर न्यास करना चाहिए। सभी अङ्गों पर न्यास करते समय साधक को 'हुंफट् स्वाहा' पढ़ना चाहिए।

टिप्पणी : विनियोग : अस्य आसुरी मन्त्रस्य अङ्गिरा ऋषिः विराट् छन्दः आसुरीदुर्गादेवता ॐ बीजं स्वाहा शक्तिः ममाभीष्टसिद्धये जपे विनियोगः।

ऋष्यादिन्यास : ॐ अङ्गिरसे ऋषये नमः – शिरसि। ॐ विराट्छन्दसे नमः – मुखे। ॐ आसुरी दुर्गा देवतायै नमः – हृदि। ॐ ॐ बीजाय नमः – गुह्ये। ॐ स्वाहा शक्तये नमः – पादयोः।

षडङ्गन्यास : ॐ कटुके कटुकपत्रे हुं फट् स्वाहा हृदयाय नमः। सुभगेआसुरि हुं फट् स्वाहा शिरसे स्वाहा। रक्ते रक्तवाससे हुं फट् स्वाहा शिखायै वषट्। अथर्वणस्य दुहिते हुं फट् स्वाहा कवचाय हुम्। अघोरे अघोरकर्मकारिके हुं फट् स्वाहा नेत्रत्रयाय वौषट्। अमुकस्य गतिं दह दह उपविष्टस्य गुदं दह दह सुप्तस्य मनो दह दह प्रबुद्धस्य हृदयं दह दह हन हन पच पच तावद्दह तावत्पच यावन्मेवशमायाति हुं फट् स्वाहा अस्त्राय फट्।

पावकनायिकास्वाहा। षडङ्गमाह। हृन्नेति ॥ १३० ॥ ईशैरेकादशार्णैः। बाणरसाक्षरैः पञ्चपञ्चयर्णैः हुंफट्स्वाहेतिचत्वारोवर्णाःसर्वत्रांगेषुक्तवर्णान्तेवाच्याः ॥१२९-१३१ ॥

शरच्चन्द्रकान्तिर्वराभीतिशूलं सृणिं हस्तपद्मैर्दधानाम्बुजस्था ।
विभूषां वराढ्याहिय्ज्ञोपवीतामुदोथर्वपुत्रीकरोत्वासुरीनः ॥ १३२ ॥

ध्यान : शरद कालीन चन्द्रमा जैसी आभावाली, अपने करकमलों में क्रमशः वर, अभय, शूल एवं अंकुश धारण करने वाली, कमल पर आसीन, आभूषण एवं वस्त्रों से अलंकृत, सर्प का यज्ञोपवीत धारण करने वाली एवं अथर्व की पुत्री भगवती आसुरी मुझे प्रसन्न रखे ।

अयुतं प्रजपेन्मत्रं जुहुयात्तद्दशांशतः ।
घृताक्तराजिकां वह्नौ ततः सिद्धो भवेन्मनुः ॥ १३३ ॥

जप एवं हवन : इस मन्त्र का १० हजार जप करना चाहिए तथा घी मिलाकर राई से दशांश होम करने पर यह मन्त्र सिद्ध हो जाता है ।

पञ्चाङ्गामासुरीं मन्त्री गृहीत्वा मन्त्रयेच्छतम् ।
तया धूपितमात्मानं योजिघ्रेत्सवशो भवेत् ॥ १३४ ॥
मध्वक्तामासुरीं हुत्वा सहस्रं वशयेज्जगत् ।
राजिकाप्रतिमां कृत्वा दक्षांघ्रेर्मस्तकावधि ॥ १३५ ॥
अष्टोत्तरशतं खण्डाज्जुहुयादसिनादितान् ।
नार्याः प्रतिकृतेर्वामपादादिहवनं चरेत् ॥ १३६ ॥
एवं प्रकुर्य्यात्सप्ताहं राजीधनचितेनले ।
ससपत्नोपि मृत्यन्तं दासो जायेत मन्त्रिणः ॥ १३७ ॥
स्त्रीलिङ्गोहः प्रकर्तव्यो मन्त्रे नारी वशीकृतौ ।
कटुतैलान्वितां राजीं निम्बपत्रयुतां रिपोः ॥ १३८ ॥
नामयुङ्मनुना हुत्वा ज्वरिणं कुरुते रिपुम् ।
एवं राजीं सलवणां हुत्वा स्फोटो भवेदरेः ॥ १३९ ॥

अर्कं दुग्धाक्ततद्धोमान्नेत्रे नाशयतेऽरिपोः ।
पालाशेन्धनदीप्तेग्नौ सप्ताहं घृतसंयुताम् ॥ १४० ॥

ध्यानमाह । शरदिति । अभयांकुशेवामयोः । जयादिशक्तियुतेपीठगंदायुधैःपूजाबोध्या ॥ १३२-१३३ ॥ पञ्चाङ्गं मूलशाखापत्रपुष्पफलानि ॥ १३४ ॥ मध्वक्तां खण्डघृतक्षौद्रयुताम् ॥१३५-१३६॥ सपत्नोपिकत्रपिदेहान्तपर्यन्तंदासः स्यात् । किमुतान्यः ॥ १३७ ॥ स्त्रीलिङ्गोहइति । नार्यावशीकरणेप्रतिमाहोमःदौमन्त्रेस्थितानाम् । अमुकस्यउपविष्ट-स्येत्यादीनां षष्ठ्यन्तानां पदानां स्थानेदेवदत्तायाउपविष्टायाः सुप्तायाइत्याद्यूहोविधेयः ॥ १३८-१३९ ॥ अर्कंति । अर्कदुग्धाक्तराजीहोमाद्रिपुनेत्रनाशः ॥ १४० ॥

साधको राजिकां हुत्वा ब्राह्मणं वशयेद्ध्रुवम् ।
क्षत्रियं तु गुडाभ्यक्तां वैश्यं दधियुतां च ताम् ॥ १४१ ॥
शूद्रं लवणसंयुक्तां हुत्वा तां साष्टकंशतम् ।
आसुरीसमिधो हुत्वा मध्वक्ता लभते निधिम् ॥ १४२ ॥
तोयपूर्णे घटे मन्त्री राजिकापल्लवान्विते ।
आवाह्य तां पूजयित्वा शतं मूलेन मन्त्रयेत् ॥ १४३ ॥
तेनाभिषिक्तं मनुजमलक्ष्मीराधयोरुजः ।
उपसर्गाः पलायन्ते परित्यज्यातिदूरतः ॥ १४४ ॥
आसुरीकुसुमं शीतं प्रियंगुर्नागकेसरः ।
मनःशिला च तगरमेतत्सर्वं विचूर्णितम् ॥ १४५ ॥
शताभिमन्त्रितं साध्यमूर्ध्नि क्षिप्तं वशंवदम् ।
निम्बकाष्ठसमिद्धेऽग्नावासुरीं सर्षपान्विताम् ॥ १४६ ॥
अष्टोत्तरशतं हुत्वा सप्ताहं दक्षिणामुखः ।
विदध्यादचिराच्छत्रुं सूर्य्यसूनुगृहातिथिम् ॥ १४७ ॥
किंकुर्य्यान्नृपतिः क्रुद्धः किंकुर्य्युरिपवोखिलाः ।
क्रुद्धःकालोपि किंकुर्य्यादासुरी चेदुपासिता ॥ १४८ ॥

काम्यप्रयोग : राई के पाँचों अङ्गो (जड़, शाखा, पत्र, पुष्प एवं फलों) को लेकर साधक मूलमन्त्र से १०० बार अभिमन्त्रित करे और फिर उससे स्वयं को धूपित करे । (ऐसा करने पर) जो व्यक्ति उसे सूंघता है वह वश में हो जाता है ।

मधु युक्त राई की १ हजार आहुतियाँ देकर साधक जगत को वश में कर लेता है ।

राई से (पुरुष या स्त्री की) प्रतिमा बनाकर दाहिने पैर से मस्तक तक तलवार से उसके १०८ टुकड़े कर राई की लकड़ी से प्रज्वलित अग्नि में उन टुकड़ों का हवन करना चाहिए । स्त्री की प्रतिमा के बाँये पैर से मस्तक तक १०८ टुकड़े कर उससे हवन करना चाहिए । ऐसा १ सप्ताह तक करने पर शत्रु भी जीवन भर

गुडयुतां राजीं हुत्वाक्षत्रियं वशयेत् । दध्यक्तां हुत्वावैश्यम् ॥ १४१ ॥ होममानमष्टोत्तरशतंसर्वत्र ॥ १४२-१४३ ॥ उपसर्गाउपद्रवाः ॥ १४४ ॥ शीतं चन्दनम् ॥ १४५ ॥ वशं वदं वशकृत् ॥ १४६ ॥ सूर्यसूनुगृहातिथिं यमातिथिम् । मृतमित्यर्थः ॥ १४७ ॥ किंकुर्यादिति । आसुर्यामुपासितायां नृपादयोवशवर्तिनः स्युरित्यर्थः । कालेनाप्यासुर्युपासकोनपराभूयतेकिमुतान्यैः । अथर्ववेदोक्तोयं सर्वोपद्रवशान्तिकृन्मन्त्रः ॥ ॥१४८ ॥

साधक का दास हो जाता है। स्त्री का वशीकरण करते समय मन्त्र में 'अमुकस्य उपविष्टस्य सुप्तस्य' इत्यादि पदों के स्थानों पर 'अमुकायाः उपविष्टायाः सुप्तायाः' इत्यादि स्त्रीलिङ्ग के षष्ठ्यन्त पदों का उच्चारण करना चाहिए।

सरसों का तेल एवं नीम के पत्ते मिलाकर राई से शत्रु का नाम लगाकर मूल मन्त्र से होम करने से शत्रु को बुखार आ जाता है।

इसी प्रकार नमक मिलाकर राई का होम करने से शत्रु का शरीर फटने लगता है।

आक के दूध में राई मिलाकर पूर्वोक्त रीति से उसका होम करने से शत्रु अन्धा हो जाता है।

पलाश की लकड़ियों से प्रज्वलित अग्नि में १ सप्ताह तक घी मिलाकर राई का १०८ बार होम करने से साधक ब्राह्मण को वश में कर लेता है। गुड़ मिलाकर राई का होम करने से क्षत्रिय को, दही मिलाकर राई के होम से वैश्य को तथा नमक मिलाकर राई से १०८ आहुतियाँ देकर साधक शूद्र को वश में कर लेता है।

मधु सहित राई की समिधाओं का होम करने से व्यक्ति निधि (गड़ा हुआ खजाना) प्राप्त करता है।

जल भरे घड़े में राई के पत्ते डालकर उसपर आसुरी देवी का आवाहन एवं पूजन कर साधक उसे मूलमन्त्र से १०० बार अभिमन्त्रित करे। उसके जल से जिस व्यक्ति का अभिषेक किया जाता है दरिद्रता आपत्ति, रोग एवं उपद्रव उसे छोड़कर उससे दूर भाग जाते हैं।

राई का फूल, चन्दन, प्रियंगु, नागकेसर, मैनसिल एवं तगर – इन सबको पीसकर मूलमन्त्र से १०० बार अभिमन्त्रित कर इस चन्दन को साध्य व्यक्ति के शिर / मस्तक पर लगाते ही उसे वश में कर देता है।

नीम की लकड़ी से प्रज्वलित अग्नि में १ सप्ताह तक दक्षिणाभिमुख होकर सरसों मिलाकर राई की प्रतिदिन १०८ आहुतियाँ देकर साधक शत्रुओं को यमलोक का अतिथि बना देता है।

यदि आसुरी विद्या की विधिवत उपासना कर ली गयी है तो क्रुद्ध राजा, समस्त शत्रु एवं क्रुद्ध काल भी क्या कर लेगा ?

ग्रन्थाननेकानालोक्य मन्त्रागुप्ततमा मया।
हिताय सुधियां ख्याता विस्तरादुपरम्यते ॥ १४९ ॥

ग्रन्थविस्तरभयान्मन्त्रकथनमुपसंहरति। ग्रन्थानिति ॥ १४९

इतिश्रीमन्महीधरकृतायांमन्त्रमहोदधिव्याख्यायां नौकायांताम्रचूडकार्तवीर्यासुर्यामन्त्रादिनिरूपणं नामैकोनविंशस्तरङ्ग ॥ १९ ॥

मन्त्रशास्त्र के अनेक ग्रन्थों का मनन कर विद्वानों के हितार्थ मैंने इस अध्याय में गुप्ततम मन्त्रों को बतलाया है। ग्रन्थ के अधिक विस्तार की शंका से अब यहीं उपसंहार करता हूँ।

इति श्री शुकदेव चतुर्वेदि विरचितायां सटिपण्यां मन्त्रमहोदधेः
मोहनी व्याख्यायां एकोनविंशस्तरङ्गः।

विंशति तरङ्ग

अथ प्रवक्ष्ये यन्त्राणि गदितानि पुरारिणा ।
शुभे दिने समाराध्य स्वेष्टदेवं यतात्मवान् ॥ १ ॥
स्वप्यात्त्रिदिवसं भूमौ हविष्याशी जपे रतः ।
इदं मे लिखितं यन्त्रमिष्टं तत्कीदृशं प्रभो ॥ २ ॥
इतिपृष्ट्वा निजं देवं प्रत्यहं तं समर्चयेत् ।
तृतीये दिवसे रात्रौ स्वप्नं सम्प्राप्नुयान्नरः ॥ ३ ॥
सिद्धं साध्यं सुसिद्धं वा शत्रुभूतमथोइदम् ।
शत्रुयन्त्रं लिखेन्नैव तदा तदितरल्लिखेत् ॥ ४ ॥
स्वप्नाभावेपि तद्धित्वा परं यन्त्रं लिखेत्सुधीः ।
अथ सम्प्रोच्यते सर्वयन्त्रसाधारणीक्रिया ॥ ५ ॥
स्नातःशुद्धाम्बरधरः पुष्पचन्दनभूषितः ।
द्रव्यैः समुदितैरुक्तस्थले यन्त्रं लिखेद्बुधः ॥ ६ ॥
षष्ठ्यन्तं साधकपदं मध्यबीजोपरिस्मृतम् ।
द्वितीयान्तं साध्यमधः पार्श्वयोःकुरुयुग्मकम् ॥ ७ ॥
वियद्भृग्वौसर्वबीजंमध्यभागादधोलिखेत् ।
ईशानादिचतुष्कोणे हंसःसोहमसून्पुनः ॥ ८ ॥
नेत्रेश्रोत्रे पार्श्वयुग्मे दिक्पबीजानि दिक्षु च ।
यन्त्रगायत्रिकावर्णान्प्रतिकाष्ठं त्रयं त्रयम् ॥ ९ ॥

यन्त्राणिवक्तुमुपक्रमते । अथेति । पुरारिणाशिवेनगौरींप्रतिकथितानि । पूर्वप्रक्रियामाह । शुभइति ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६ ॥ षष्ठ्यंतमिति । देवदत्तस्यइष्टंकुरुकुर्विति ॥ ७ ॥ वियदिति । वियत्हःभृगुःसःह्सौःइतिबीजंयन्त्रस्यजीवः । हंसःसोहमितिवर्णान् यन्त्रस्यापूजाग्रभूनाकाशेषु ॥ ८ ॥ नेत्रेइई ॥ श्रोत्रेउऊ । दिक्पबीजानीन्द्रादिबीजानि लंरंमंषांवंयंसंहंआंह्रींइत्युक्तानि । पूर्वादिषु । प्रतिकाष्ठं प्रतिदिशम् ॥ ९ ॥

यन्त्रराजाय शब्दान्ते विद्महेवरतरत्पम् ।
प्रदायधीमहीत्यन्ते तन्नोयन्त्रःप्रचोदयात् ॥ १० ॥
एषोक्ता यन्त्रगायत्री स्मृता सर्वेष्टसिद्धिदा ।
बहिःप्राणप्रतिष्ठायां मनुं सर्वत्र वेष्टयेत् ॥ ११ ॥
स्थलानुक्तौ भूर्जपत्रे क्षौमे वा ताडपत्रके ।
यन्त्रं विलिख्य घुटिकां बद्ध्वा सूत्रेण वेष्टयेत् ॥ १२ ॥
लाक्षयाच्छादिते स्वर्णे रूप्ये ताम्रेथवा क्षिपेत् ।
मध्यबीजेन सम्पूज्य देवं मातृकयापिवा ॥ १३ ॥
संजप्य हुत्वा सम्पातसिक्तं कृत्वा नियोजयेत् ।
मूर्ध्नि बाहौ गले वापि तत्तदिष्टार्थसिद्धये ॥ १४ ॥

यन्त्र साधना की पूर्व प्रक्रिया : अब उन यन्त्रों के बारे में बतलाता हूं, जिन्हें भगवान् शिव ने पार्वती को बतलाया था :

शुभ मुहूर्त में साधक अपने इष्टदेव का विधिवत पूजन कर, इष्टदेव के मन्त्र का जप करते हुए, हविष्यान्न का भोजन करते हुए लगातार ३ दिन तक संयमपूर्वक भूमि में शयन करे । 'हे प्रभो ! मेरे द्वारा लिखा गया यह अमुक यन्त्र कैसा होगा ?' इष्टदेव से यह पूछकर प्रतिदिन उनका पूजन करना चाहिए । तीसरे दिन रात्रि में साधक को स्वप्न आता है, जिसमें यन्त्र सिद्ध, साध्य, सुसिद्ध या शत्रु है – यह जानकारी मिलती है ।

शत्रु यन्त्र को नहीं लिखना चाहिए । उसके अलावा अन्य (सिद्ध, साध्य एवं सुसिद्ध) यन्त्रों को लिखना चाहिए । स्वप्न न आने पर भी शत्रु यन्त्र छोड़कर अन्य यन्त्रों को ही लिखना चाहिए ।

अब सब यन्त्रों के किए सामान्यतया किए जाने वाली (अनिवार्य) प्रक्रिया को बतलाता हूँ –

स्नान कर, शुद्धवस्त्र धारण कर तथा चन्दन लगाकर साधक (प्रत्येक यन्त्र लिखने के लिए) बतलाये गये द्रव्यों से निर्दिष्ट (भोजपत्र आदि) वस्तु पर एकान्त में यन्त्र को लिखे । (यन्त्र में) साधक का षष्ठ्यन्त नाम मध्य बीज पर कहा गया है । (उसके) नीचे द्वितीयान्त साध्य (व्यक्ति या कार्य) का नाम तथा उसके दोनों ओर २ बार कुरु लिखना चाहिए ।

गायत्रीमाह । यन्त्रेति ॥ १०-१२ ॥ मध्यबीजेनयद्देवताकंयंत्रंतद्बीजेनतदज्ञाने-मातृकया ॥ १३ ॥ सम्पातोहुतशेषस्तेनसिक्तम् ॥ १४ ॥

और तथा विसर्ग सहित वियत् एवं भृगु (हसौः) – इस बीज को (जो यन्त्र का जीव माना गया है) मध्य भाग से नीचे की ओर लिखना चाहिए। फिर 'हंसः सोऽहं' – (जिसे यन्त्र का) प्राण माना जाता है, को ईशान आदि चारों कोणों में लिखना चाहिए। यन्त्र के दोनों ओर क्रमशः नेत्र (ईई) एवं श्रोत्र (ऊऊ) लिखने चाहिए तथा दिशाओं में दिक्पालों के बीजों (लं रं मं क्षं बं यं सं हं आं क्रौं) को लिखना चाहिए। यन्त्र गायत्री के ३–३ वर्णों को प्रत्येक दिशा में लिखना चाहिए।

'यन्त्रराजाय' पद के बाद 'विद्महे वर' फिर 'प्रदाय धीमहि' और अन्त में 'तन्नो यन्त्रः प्रचोदयात्'' – यह यन्त्र गायत्री बतलायी गयी है, जो स्मरण करने मात्र से सब अभीष्टों को देती है।

यन्त्र के बाहर प्राणप्रतिष्ठा मन्त्र से उसे वेष्टित करना चाहिए।

(जिन यन्त्रों को लिखने की)वस्तु बतलायी नहीं गयी उन यन्त्रों को भोजपत्र,रेशमी-वस्त्र या ताड़पत्र पर लिखकर उन्हें लपेट कर चारों ओर धागे से बाँध देना चाहिए।

जिस देवता का यन्त्र हो उसके बीज से या मातृका से पूजन कर, उस देव का मन्त्र जप कर तथा उससे होम कर, हुत शेष घी में यन्त्र को डुबा कर उसे लाख लगे हुए सोने, चाँदी या ताँबे के ताबीज में डाल देना चाहिए। ऐसे यन्त्र को उद्दश्य की सिद्धि हेतु शिर, भुजा या गले में धारण करना चाहिए।

टिप्पणी : यन्त्रगायत्री : यन्त्रराजाय विद्महे वर प्रदाय धीमहि। तन्नो यन्त्रः प्रचोदयात्॥

यन्त्रसेवनसक्तेनोपास्या भूतलिपिःपरा।
ययोपासितया सर्वयन्त्रसिद्धिःप्रजायते॥ १५॥

भूतलिपि की उपासना : यन्त्र बनाने/धारण करने वाले को भूतलिपि की उपासना करनी चाहिए, जिसकी उपासना करने मात्र से सब यन्त्र सिद्ध हो जाते हैं।

भूतलिपरुपास्या जप्या। सायथा—अइउऋऌॡएऐओऔंहयरंवंलडंकंखंघंगंऊचछइंजं णंटंठंढंडंनंतंथंधंदंमंपफंभंवंशंषंसं इतिद्विचत्वारिंशद्वर्णा भूतलिपिः। तदुक्तंशारदायां–पञ्च-ह्रस्वाः सन्वर्गाद्याभेरोऽग्निर्जलंधरा। अन्त्यमाद्य द्वितीयंचचतुर्थंमध्यमंक्रमात्। पञ्चवर्गा-श्चराणिस्युर्वातश्चेते (?) न्दुभिःसहिति। अस्यादक्षिणामूर्तिऋषिःगायत्रीछन्दःवर्णेश्वरीदेवता। हंयरंवंलहृत्। डंकंखंघंगंशरः। ऊचछइंजंशक्ति। णंटंठंढंडंवम। नंतंथंदंधंनंत्रम। मंपंफं भंवंअस्त्रम। गुदलिंगनाभिहृत्कंठभ्रूमध्यकेशान्तशिरोब्रह्मरन्ध्रेषुनवश्वराद्यस्यार्धंप्राग्दक्षिणो-दक्पश्चिमवक्त्रेषुहादिपञ्चकं करयोरग्रेमूलकूपरांगुलिसन्धिमणिब धेषुङादिवर्गात्रादिवर्गौ पादयोरग्रमूलजान्वंगुलीसन्धि गुल्फेषुणादिनादिवर्गौ उदरपार्श्वद्वयनाभिपृष्ठेषुमादिवर्गं गुह्यहृदभ्रूमध्येषुशषसाक्ष्यसेत्। एवं वर्णाढ्यस्यचन्द्रशेखरांत्रिनेत्रांवराक्षमालापुस्तककपाल करांसुरामत्तांध्यायेत्। एवंध्यात्वालक्षंप्रजप्त्वा युतंनिलैर्हुत्वासिद्धमन्त्रोभवति। एवंभूत लिपिसेवयावक्ष्यमाणयंत्रसिद्धिः। श्रीविद्ययोराधारताच॥ १५॥

टिप्पणी : *भूतलिपि* : अं इं उं ऋं लृं एं ऐं ओं औं हं यं रं वं लं डं कं खं घं गं जं चं छं भं जं णं टं ठं ढं डं नं तं थं धं दं मं पं फं मं बं शं षं सं ।

विनियोग : अस्याः भूतलिपेः दक्षिणामूर्तिर्ऋषिः गायत्री छन्दः वर्णेश्वरी देवता ममाभीष्टसिद्धये जपे विनियोगः ।

षडङ्गन्यास : हं यं रं वं लं हृदयाय नमः । डं कं खं घं गं शिरसे स्वाहा । जं चं छं भं जं शिखायै वषट् । णं टं ठं ढं डं कवचाय हुम् । नं तं थं धं दं नेत्रत्रयाय वौषट् । मं पं फं मं बं अस्त्राय फट् ।

वर्णन्यास : ॐ अं नमः – गुदे । ॐ इं नमः – लिङ्गे । ॐ उं नमः – नाभौ । ॐ ऋं नमः – हृदि । ॐ लृं नमः – कण्ठे । ॐ एं नमः – भ्रूमध्ये । ॐ ऐं नमः – ललाटे । ॐ ओं नमः – शिरसि । ॐ औं नमः – ब्रह्मरन्ध्रे । ॐ हं नमः – ऊर्ध्वमुखे । ॐ यं नमः – पूर्वमुखे । ॐ रं नमः – दक्षिणमुखे । ॐ वं नमः – उत्तर मुखे । ॐ लं नमः । – पाश्चम मुखे । ॐ डं नमः – दक्ष हस्ताग्रे । ॐ कं नमः – दक्ष हस्तमूले । ॐ खं नमः – दक्षकूर्परे । ॐ घं नमः – दक्ष हस्तांगुलिसन्धौ । ॐ गं नमः – दक्ष मणिबन्धे । ॐ जं नमः – वामहस्ताग्रे । ॐ चं नमः – वामहस्तमूले । ॐ छं नमः – वामकूर्परे । ॐ भं नमः – वाम हस्तांगुलि सन्धौ । ॐ जं नमः – वाम मणिबन्धे । ॐ णं नमः – दक्षपादाग्रे । ॐ टं नमः – दक्षपादमूले । ॐ ठं नमः – दक्षिणजानौ । ॐ ढं नमः – दक्षपादांगुलिसन्धौ । ॐ डं नमः – दक्षिणगुल्फे । ॐ नं नमः – वामपादाग्रे । ॐ तं नमः – वामपादमूले । ॐ थं नमः – वामजानौ । ॐ धं नमः – वामपादांगुलिसन्धौ । ॐ दं नमः – वाम गुल्फे । ॐ मं नमः – उदरे । ॐ पं नमः – दक्षिणपार्श्वे । ॐ फं नमः – वामपार्श्वे । ॐ मं नमः – नाभौ । ॐ बं नमः – पृष्ठे । ॐ शं नमः – गुह्ये । ॐ षं नमः – हृदि । ॐ सं नमः – भ्रूमध्ये ।

ध्यान : अक्षस्रजं हरिणशोतमुदग्रटंकं, विद्यां करैरविरतं दधतीं त्रिनेत्राम् ।
अर्द्धेन्दुमौलिमरुणामरविन्दरामां, वर्णेश्वरीं प्रणमतस्तनभारनम्राम् ॥

जपसंख्या एवं हवन : इस भूतलिपि का १ लाख जप करने के बाद तिलों से १० हजार आहुतियाँ देने पर यह भूतलिपि सिद्ध हो जाती है । इस रीति से भूतलिपि के सिद्ध हो जाने पर बनाये गये सभी यन्त्र अपना पूर्ण प्रभाव दिखलाते हैं । इसलिए यन्त्र बनाने वाले विद्वान् को यन्त्र सिद्धि हेतु सर्वप्रथम इस भूतलिपि की उपासना करनी चाहिए । इसकी सिद्धि के बिना बनाये गये यन्त्र अपना चमत्कृत फल नहीं देते ।

अथवश्यकरं यन्त्रमुच्यते क्षिप्रसिद्धिदम् ।
भस्मादिशोधिते कांस्यभाजनेऽष्टदलं लिखेत् ॥ १६ ॥

यंत्रमाह अथेति ॥ १६ ॥

गोरोचनाकुंकुमाभ्यां लेखन्या जातिजातया ।
कर्णिकासाध्यनामाढ्यं वर्गयुक्ताष्टपत्रकम् ॥ १७ ॥
तद्वेष्टयेत्स्वराढ्याष्टयुग्मपत्राम्बुजन्मना ।
तद्वेष्टयेत्त्रिभिर्वृत्तैः पूजयेत्सप्तवासरान् ॥ १८ ॥
नृपादिपुरुषाः सर्वे योषितोपि वशाध्रुवम् ।
मोहनाख्ये महायन्त्रे पूजिते स्युर्नसंशयः ॥ १९ ॥
भूर्जादौ लिखितं लोहवेष्टितं शिरसाधृतम् ।
नृपाणां दुष्टसत्त्वानां वशीकरणमुत्तमतम् ॥ २० ॥

वशीकरणयन्त्र : अब शीघ्र ही प्रभाव दिखाने वाले वशीकरण यन्त्र को बतलाता हूँ : राख आदि से साफ की गयी काँसे की थाली में गोरोचन एवं कुंकुम से चमेली की लेखनी से अष्टदल लिखना चाहिए। उसकी कर्णिका में साध्य का नाम तथा आठों दलों में क्रमशः आठों वर्ग लिखने चाहिए। इस अष्टदल को षोडश दल से वेष्टित करना चाहिए, जिसके पत्रों में यथाक्रमेण १६ स्वर लिखे हुए हों। फिर इसे ३ वृत्तों से वेष्टित करना चाहिए तथा (मातृकामन्त्र से) ७ दिन तक इसका पूजन करना चाहिए। मोहन संज्ञक इस महायन्त्र पर पूजन करने पर राजा आदि सभी पुरुष एवं स्त्री आदि निश्चित रूप से वश में हो जाते हैं।

फिर भोजपत्र आदि लिखकर लौह (सोना, चाँदी या ताँबे) के ताबीज में डालकर शिरपर धारण करने से यह राजाओं एवं दुष्टजनों को वश में कर देता है।

टिप्पणी : *वशीकरणयन्त्र* : (देखिये चित्र ५८)

इस यन्त्र को भोजपत्र पर गोरोचन एवं कुंकुम से जाति (चमेली) की कलम से लिखकर स्वर्ण आदि के ताबीज में डालकर शिर पर धारण करना चाहिए।

मायासम्पुटितां साध्याभिधामादौ समालिखेत् ।
तस्या उपर्य्यधश्चापि मायाबीजचतुष्टयम् ॥ २१ ॥
तद्वेष्टयेद्भूपुरेण रेखाद्वितयसंयुतम् ।
भूर्जपत्रे विलिखितं रोचनाशीतकुंकुमैः ॥ २२ ॥
अनामारक्तसम्मिश्रैः पूजितं वशकृन्मतम् ।
कुमारीर्वाडवान्नारीः संभोज्य वितरेद्बलिम् ॥ २३ ॥

॥ १७ ॥ स्वरैराढ्यानि युक्तानि अष्ट दलपत्राणि षडशदलानि यस्मिंस्तेनाम्बुजन्मना-पद्मेनेतद्दृष्टदलंवेष्टयेत् । लोहानिहैमरूप्यताम्राणि । अत्रमातृकादेवता ॥ १८ ॥ १९ ॥२०॥ द्वितीयमाह । मायेति । रेखाद्वयकृतेनभूपुरेणचतुष्कोणेन । शीतचन्दनम ॥ २१ ॥ २२ ॥ वाडवान्विप्रान् ॥ २३ ॥

रक्तपुष्पान्नपललैर्वशीकरणसिद्धये ।
सर्वस्वमपहर्तुं वा निबद्धुं वांछतीश्वरे ॥ २४ ॥
यन्त्रं बाहौ विधृत्येदं गच्छेद्भूमिपतिं नरः ।
क्रोधाक्रान्तमनाभूपः शान्तकापस्तमर्चयेत् ॥ २५ ॥
बीजं सम्पुटनामेदं यंन्त्रमुक्तं मनीषिभिः ।

वशीकरण का (बीज संपुट नामक) दूसरा यन्त्र : सर्वप्रथम मायाबीज से संपुटित साध्य का नाम लिखना चाहिए। उसके ऊपर और नीचे ४-४ मायाबीज लिखने चाहिए। फिर उसे दो रेखाओं वाले भूपुर से वेष्टित करना चाहिए। भोजपत्र पर इस यन्त्र को गोरोचन, चन्दन एवं कुंकुम् से लिखकर (गौरीमन्त्र या उसके बीज से) अनामिका का रक्त मिलाकर कुंकुमादि से पूजा करने पर वशीकरण करता है।

फिर कुमारी, ब्राह्मण एवं स्त्रियों को भोजन करा कर वशीकरण की सिद्धि हेतु लाल पुष्प, अन्न एवं मांस से बलि देनी चाहिए।

राजा के द्वारा सर्वस्व का अपहरण या कारागार में डालने की इच्छा करने पर इस यन्त्र को भुजा में धारण कर जब मनुष्य राजा के पास जाता है, तब वह अत्यन्त क्रुद्ध राजा भी शान्त होकर उस मनुष्य का पूजन करता है।

यन्त्रशास्त्र के मनीषियों ने इसका नाम बीजसम्पुटयन्त्र कहा है।

टिप्पणी : बीजसम्पुट नामक वशीकरण यन्त्र (देखिये चित्र ५३)

इस यन्त्र को भोजपत्र पर गोरोचन, चन्दन एवं कुंकुम से चमेली की कलम से लिखकर गौरीमन्त्र से इसका पूजन करना चाहिए। फिर कुमारी, ब्राह्मण एवं स्त्रियों को भोजन कराकर विधिवत बलि देकर भुजा पर धारण करना चाहिए। इस यन्त्र के प्रभाव से अत्यन्त क्रुद्ध राजा भी वशीभूत होकर साधक का सम्मान करता है।

दक्षिणोत्तरगं कुर्य्याद्रेखाद्वितयमुत्तमम् ॥ २६ ॥
तन्मध्ये विलिखेत्साध्यं तारपद्मालयापुटम् ।
रेखाग्रयोःस्थिते कोष्ठद्वये सर्गिणमन्तिमम् ॥ २७ ॥
रेखाद्वयोपर्य्यधश्चकोष्ठानां त्रितयं लिखेत् ।
मध्यकोष्ठे ससर्गं क्षं श्रीं बीजं पार्श्वकोष्ठयोः ॥ २८ ॥

पललंमांसम् ॥ २४ ॥ अत्रगौरीदेवता ॥ २५ ॥ तृतीयमाह । दक्षिणोत्तरेति । दक्षिणोत्तरायतंरेखाद्वयं कृत्वामध्येनामविलिखेत् ॥ २६ ॥ तारपद्मालयापुटंप्रणवश्रीपुटितम् । ॐश्रींदेवदत्तश्रींॐइति ॥ २७ ॥ रेखाद्वयोपर्यधश्चकोष्ठत्रयेश्रींक्षःश्रींमितिरेखात्रकाष्ठयोरन्तिमंक्षंसर्गिणविसर्गयुतंक्षः ॥ २८ ॥

एतद्रोचनया भूर्जं लिखित्वा वह्निना दहेत् ।
शरावसंपुटस्थं तत्ततो भस्मसमुद्धरेत् ॥ २९ ॥
दुग्धेन सह पीतं तत्स्वामिवश्यकरं परम् ।

स्वामी को वश में करने का यन्त्र : दो दक्षिणोत्तर रेखाओं को लिखकर उसके बीच में तार (ॐ) तथा पद्मालया (श्रीं) इन दोनों से सम्पुटित साध्य व्यक्ति का नाम लिखना चाहिए । रेखाओं के अग्रभाग के मिलने से बने कोष्ठकों में विसर्ग सहित अन्तिम वर्ण (क्षः) लिखना चाहिए । फिर दोनों रेखाओं के ऊपर तथा नीचे ३–३ कोष्टक बनाने चाहिए । (इनमें से) मध्य के कोष्ठक में विसर्ग सहित क्ष (क्षः) तथा पार्श्ववर्ती दोनों कोष्ठकों में श्रीबीज लिखना चाहिए ।

इस यन्त्र को भोजपत्र पर गोरोचन से लिखकर दो सकोरों के बीच में रखकर अग्नि में जला देना चाहिए । फिर उसकी भस्म दूध के साथ पीने से यह स्वामी को निश्चित रूप से वश में कर देता है ।

टिप्पणी : स्वामी को वश में करने वाला यन्त्र (देखिये चित्र ५४)

इस यन्त्र को भोजपत्र पर गोरोचन से चमेली की कलम से लिखकर श्री बीज से इसकी पूजा कर दो सकोरों में रख कर जला देना चाहिए । फिर उसकी भस्म को दूध में मिलाकर पीने से स्वामी वश में हो जाता है ।

दिक्षु मायाचतुष्काढ्यं साध्यं षट्कोणमध्यतः ॥ ३० ॥
कोणेषु कोणमध्येषु मायाबीजं समालिखेत् ।
रोचनाकुंकुमाभ्यां तु भूर्जपत्रे मनोहरे ॥ ३१ ॥
तच्छरावस्थितं पूज्यं जपेन्मायां तदग्रतः ।
शरावात्तत्समादाय बद्ध्वा मूर्द्धनि मानवः ॥ ३२ ॥
अग्नितोयादिदिव्येषु शुचिर्दाहादिवर्जितः ।
जयमाप्नोति तद्रात्रौ कृतां तस्य प्रभावतः ॥ ३३ ॥
दिव्यस्तम्भनसंज्ञं च यन्त्रमुत्तममीरितम् ।

दिव्यस्तम्भन यन्त्र : षड्कोण के मध्य में साध्य का नाम और उनके चारों ओर ४ मायाबीजों को लिखना चाहिए । फिर (षड्कोण के) कोणों में तथा कोणों के बीच में मायाबीजों को लिखना चाहिए ।

साफ भोजपत्र पर गोरोचन एवं कुंकुम से युक्त यन्त्र लिखकर उसे सकोरा में रखकर उसका विधिवत पूजन करना चाहिए तथा उसके आगे मायाबीज का जप करना

शरावय मध्येदहेत् । अत्रश्रीर्देवता ॥ २९ ॥ चतुर्थदिव्यंस्तम्भनमाह । दिविवति ॥ ३०-३२ ॥ पापकर्तापिदिव्ययन्त्रधारणाज्जयति । गौरी देवता ॥ ३३ ॥

चाहिए। (फिर) सकोरे से उसे लेकर साधक अपने शिर में बाँधकर अग्नि, जल आदि वस्तुओं में डूब या जल नहीं पाता। (इस यन्त्र का साधक) रात्रि में इस यन्त्र के प्रभाव से विजय प्राप्त करता है।

इसका नाम दिव्यस्तम्भन यन्त्र कहा गया है।

टिप्पणी : दिव्यस्तम्भन यन्त्र (देखिये चित्र ५५)

भोजपत्र पर गोरोचन एवं कुंकुम से चमेली की कलम से उक्त यन्त्र लिखकर कोरे सकोरे में उसे रखकर मायाबीज से उसका पूजन करना चाहिए तथा उसके आगे मायाबीज का जप करना चाहिए। इस प्रकार सिद्ध यन्त्र को अपने शिर में बाँधकर साधक धधकती अग्नि में भी जल नहीं पाता।

मायाविसर्गिसार्णाभ्यां पुटितं साममध्यतः ॥ ३४ ॥
दलेष्वष्टसु सर्गाढ्यौ सौमायापुटितौ लिखेत्।
चतुरस्रेण तत्पद्मं वेष्टयेद्भूर्जपत्रके ॥ ३५ ॥
रोचनाकुंकुमाभ्यां तु लिखित्वा तच्छरावयोः।
प्रक्षिप्य पूजयेत्सप्तरात्रं मायां जपेन्नरः ॥ ३६ ॥
राजमोहननामेदं यन्त्रं नृपरुषं हरेत्।

राजमोहन यन्त्र : (अष्टदल के) मध्य में मायाबीज (ह्रीं) तथा विसर्ग सहित 'स' (सः) इन दोनों से पुटित साध्यनाम लिखकर आठों दलों में माया से पुटित विसर्ग सहित २ स (ह्रीं सः सः ह्रीं) लिखना चाहिए। फिर भूपर से इसे वेष्टित करना चाहिए।

भोजपत्र पर गोरोचन एवं कुंकुम से लिखकर उसे दो सकोरों में रखकर ७ रात तक मायाबीज का जप करते हुए उसका पूजन करना चाहिए।

राजमोहन नामक यह यन्त्र राजा / मनुष्यों की कठोरता को दूर कर देता है।

टिप्पणी : राजमोहनयन्त्र (देखिये चित्र ५६)

भोजपत्र पर गोरोचन एवं कुंकुम से चमेली की कलम से यह मन्त्र लिखकर दो सकोरों के बीच में रख कर ७ दिन तक प्रतिदिन रात्रि में मायाबीज का जप करते हुए इस यन्त्र का पूजन करना चाहिए। इस रीति सिद्ध किया गया यह यन्त्र

राजमोहनंपञ्चममाह। मायेति। अष्टदलंकृत्वामध्यह्रींसःह्रींदेवदत्तसःह्रींइति-विलिख्यदलेषुह्रींसःह्रीं इति लिखेत्। उपरिभूपुरम्। गौरीदेवता। मृत्युञ्जयंषष्ठमाह। कुब्जादिति। सप्तरोवात्मकचतुष्कोणडुकस्य मृत्युंवशयेतिविलिख्योपरिद्वादशदलेऋऋलृलृ-रहिताःस्वराःलयुतान्कृत्वा त्रिशूलांकितकोणेनचतुरस्रेणवेष्टयेत्। यन्त्रद्वयमध्येइदंयंत्रंसं-योज्य कौंपृथिव्यांनिखनेत्। मातृकादेवता ॥ ३४-३६ ॥

धारण करने से राजा आदि सम्मोहित हो जाते हैं।

क्रुद्धाज्जिघांसोर्नृपतेरात्मरक्षाविधित्सया ॥ ३७ ॥
वक्ष्ये मृत्युं जयं यन्त्रं पद्ममर्कदलं लिखेत्।
कर्णिकायां चतुष्कोणे लिखिखेन्नामक्रियान्वितम् ॥ ३८ ॥
सप्तरेखात्मकं कार्य्यं तच्चतुष्कोणमुत्तमम्।
ईशादिद्वादशदलेष्वक्लीबस्वरसंयुतान् ॥ ३९ ॥
कर्णान्विलिख्य तत्पद्मं चतुरस्रेण वेष्टयेत्।
चतुरस्रस्य कोणेषु त्रिशूलानि समालिखेत् ॥ ४० ॥
भूर्जपत्रद्वये चैतद्यन्त्रं कृत्वा पृथक्पुनः।
यन्त्रद्वयपुटं कृत्वा स्थापयेत्कावुदङ्मुखः ॥ ४१ ॥
तस्योपरिशिलां न्यस्य तत्स्थितो मातृकां जपेत्।

मृत्युञ्जय यन्त्र : क्रुद्ध एवं हत्यारे राजा से आत्मरक्षा करने के लिए मृत्युञ्जय यन्त्र बतलाता हूँ :

सर्वप्रथम द्वादशदल कमल लिखना चाहिए। तथा कर्णिका में चतुष्कोण में क्रिया सहित (मृत्युं वशय) व्यक्ति का नाम लिखना चाहिए। वह चतुष्कोण ७ रेखाओं से बनाना चाहिए। तथा द्वादशदल में ईशान कोण से लेकर क्लीब (ऋॠ ऌ ॡ) स्वरों को छोड़कर अन्य स्वरों के साथ कर्ण (ल) – अर्थात् ल, ला, लि, ली इत्यादि लिखकर उस द्वादश दल को चतुरस्र से वेष्टित करना चाहिए। तथा चतुरस्र के कोणों पर त्रिशूल बनाना चाहिए।

दो भोजपत्रों पर इस यन्त्र को पृथक् पृथक् लिखकर उन दोनों यन्त्रों को परस्पर आमने सामने से मिलाकर उत्तराभिमुख होकर जमीन में गाड़ देना चाहिए। उसके ऊपर शिला रखकर फिर उस पर बैठ कर मातृका का जप करना चाहिए।

एवं कृते साधकः स्याद्वीतत्रासो यमादपि ॥ ४२ ॥
सर्वरोगसमूहाच्च किंपुना राजमण्डलात्।

ऐसा करने से साधक यमराज के भय तथा सब रोगों से भी मुक्त हो जाता है, फिर राजाओं के भय की तो बात ही क्या है ?

टिप्पणी : *मृत्युञ्जय यन्त्र* : (देखिये चित्र ५७)

भोजपत्र पर अष्टगन्ध एवं चमेली की कलम से २ यन्त्रों को लिखकर फिर उन्हें आमने सामने से मिलाकर साधक उत्तराभिमुख होकर जमीन में गाड़ दे। तथा उस स्थान पर शिला रख कर उसपर बैठकर साधक को मातृका का जप करना

॥ ३७-४२ ॥

चाहिए। ऐसा करने से मृत्यु टल जाती है तथा व्यक्ति मृत्यु के भय से मुक्त हो जाता है।

लिखेच्चतुर्दलं पद्मं साध्याख्यायुक्तकर्णिकम् ॥ ४३ ॥
रोचनाकुंकुमाभ्यां तु भूर्जे मायायुतच्छदम्।
तद्यन्त्रं पयसिन्यस्य विवादं वादिना चरेत् ॥ ४४ ॥
जयमाप्नोति गदितं विवादविजयाभिधम्।

विवाद में विजय प्रद यन्त्र : चार दल वाला पद्म तथा उसकी कर्णिका में साध्य व्यक्ति का नाम लिखना चाहिए। पद्म के चारों दलों में मायाबीज लिखना चाहिए। भोजपत्र पर गोरोचन एवं कुंकुम से इस यन्त्र को लिखकर दूध में डालकर वादी के साथ विवाद करना चाहिए। (इस यन्त्र के प्रभाव से व्यक्ति विवाद में) विजय प्राप्त करता है। इस यन्त्र को 'विवाद विजय प्रद' यन्त्र कहते हैं।

टिप्पणी : विवाद में विजय प्रद यन्त्र (देखिये चित्र ५८)

धनिके याचति द्रव्यं दानाशक्तेऽधमर्णके ॥ ४५ ॥
धनिकस्य वशीकृत्यै यन्त्रंभूर्जदले लिखेत्।
रोचनाकुंकुमाभ्यां तु षट्कोणं साध्यकर्णिम् ॥ ४६ ॥
कोणाग्रे कोणमध्येषु कामान्द्वादशसलिखेत्।
तद्वृत्तेन च संवेष्टय माययावेष्टयेद्बहिः ॥ ४७ ॥
पुनर्वृत्तेन संवेष्टय पूजयेत्सप्तवासरान्।
पठेत्सप्तशतीं नित्यमन्ते होमं शताधिकम् ॥ ४८ ॥
कृत्वा सम्भोजयेत्कन्यां धरेद्यन्त्रं गले स्वके।
एवं धनीवशमितो न याचति ददात्यपि ॥ ४९ ॥

धनिक वशीकरण यन्त्र : उपकृत धनिक द्वारा माँगने पर धन न देने पर उस धनिक को वश में करने के लिए यह यन्त्र भोजपत्र पर लिखना चाहिए।

गोरोचन एवं कुंकुम से षड्कोण तथा उसकी कर्णिका में साध्य (धनिक) का नाम लिखना चाहिए। कोणों में तथा कोणों के बीच में १२ कामबीजों को लिखना चाहिए। फिर उसे वृत्त से वेष्टित कर उसे मायाबीजों से वेष्टित करना चाहिए। तथा फिर उसे वृत्त से वेष्टित कर ७ दिन तक उसका पूजन करना चाहिए। प्रतिदिन सप्तशती का पाठ करना चाहिए। अन्तिम दिन १०८ आहुतियाँ देकर कन्याओं को भोजन कराना चाहिए। फिर इस यन्त्र को अपने गले में धारण करने से धनिक

विवादेजयावहं सप्तममाह। लिखेदिति। गौरीदेवता ॥ ४३-४४ ॥ धनिक वश्यकरमष्टममाह। धनिक इति। भूर्जदले भूर्जपत्रे। गौरीदेवता ॥ ४५-४९ ॥

वशीभूत होकर विना माँगे ही धन देता है ।

टिप्पणी : धनिक वशीकरण यन्त्र (देखिये चित्र ५९)

भोजपत्र पर गोरोचन एवं कुंकुम से चमेली की कलम से उक्त यन्त्र लिखकर मायाबीज से उसका ७ दिन तक विधिवत पूजन करना चाहिए । तथा प्रतिदिन दुर्गासप्तशती का पाठ करना चाहिए । अन्तिम दिन नवार्ण मन्त्र से १०८ आहुतियाँ देकर कन्याओं का भोजन करा कर यह यन्त्र अपने गले में धारण करना चाहिए । इस यन्त्र के प्रभाव से धनिक बिना माँगे ही धन दे देता है और वह पूर्णरूपेण वशीभूत हो जाता है ।

दुष्टाराजसमीपस्थाः पैशुन्यं कुर्वते यदा ।
तदा यन्त्रं प्रकुर्वीत दुष्टमोहनसंज्ञकम् ॥ ५० ॥
लिखेदष्टदलं पद्मं भूर्जे चक्रीवतोसृजा ।
कर्णिकागतसाध्याख्यं मायायुक्तककुब्दलम् ॥ ५१ ॥
सर्गान्तभृगुयुक्कोणं वृत्तद्वितयवेष्टितम् ।
कृतासुस्थापनं यन्त्रं सम्पूज्य पयसि क्षिपेत् ॥ ५२ ॥
एकविंशतिरात्रेण दुष्टाः स्युर्वशवर्तिनः ।

दुष्टमोहन यन्त्र : राजा के समीप रहने वाले दुष्ट लोग जब चुगलखोरी करना शुरू कर दें तब इस दुष्टमोहन यन्त्र को बनाना चाहिए ।

भोजपत्र पर गदहे के खून से अष्टदल तथा उसकी कर्णिका में साध्य का नाम लिखना चाहिए । दिशाओं के चारों दलों में मायाबीज तथा कोणों के चारों दलों में सर्गान्तभृगु (सः) लिखकर इसे दो वृत्तों से वेष्टित करना चाहिए । इस यन्त्र में प्राणप्रतिष्ठा कर विधिवत पूजन कर इसे दूध में डाल देना चाहिए । (ऐसा करने से) २१ दिन के भीतर सभी दुष्ट वशीभूत हो जाते हैं ।

टिप्पणी : दुष्टमोहन यन्त्र (देखिये चित्र ६०)

इस यन्त्र को भोजपत्र पर गदहे के खून तथा अनार की कलम से लिखकर इसमें प्राण प्रतिष्ठा कर 'त्रैलोक्यमोहन गौरी' मन्त्र से इसका विधिवत पूजन करना चाहिए । और फिर काले पात्र में दूध भर कर उसमें इस यन्त्र को डाल देना चाहिए । ऐसा करने से २१ दिन के भीतर सभी दुष्टजन सम्मोहित हो जाते हैं ।

चतुरस्रे विषानन्तंगतं मायापुटं भृगुम् ॥ ५३ ॥

दुष्टम हननवममाह । दुष्टाइति ॥ ५० ॥ भूर्जखररक्तनसाध्यगर्भमष्टदलं विलिख्य-दिग्दलेषुमायां विदिग्दलेषुसः इतिविलिख्य वृत्तद्वयनसंवेष्टयप्राणान्संस्थाप्यसंपूज्यदुग्धे-क्षिप्तंवश्यकरम् । गौरीदेवता । जयदंदशममाह । चतुरस्रइति । विषंमः । अन त अः । भृगुः सः । चतुर्दलेह्रींसह्रीं इतिविलिख्यतद्पर्यष्टदलं कृत्वादिक्पत्रेषुरोहरोधस्तम्भक्षोभ-इतिवर्णद्वन्द्वं विदिक्पत्रेषुचइतिचरनः । गौरीदेवता ॥ ५१-५३ ॥

लिखित्वा तस्य कोणेषु ककुप्स्वपि दलाष्टकम् ।
रोहरोधस्तम्भक्षोभदिग्दलेषु क्रमाल्लिखेत् ॥ ५४ ॥
कोणेषु सगिचरमं भूर्जे रोचनयोत्तमे ।
शरावद्वयमध्यस्थं मध्ये साध्याभिधान्वितम् ॥ ५५ ॥
पूजयेद्गन्धपुष्पाद्यैर्दिक्पतिभ्यो बलिं हरेत् ।
व्यवहारेविवादे च वशकृद्राजवेश्मनि ॥ ५६ ॥
यन्त्रमेतत्समाख्यातं जयदंमानवर्द्धनम् ।

विजयप्रद यन्त्र : चतुर्भुज में विष एवं अनन्त सहित तथा मायाबीज से पुटित भृगु (ह्रीं स्मां ह्रीं) लिखकर उसके कोणों में 'ह्रीं सः ह्रीं' लिखकर उसके ऊपर अष्टदल बनाना चाहिए । उसके दिशाओं के दलों में क्रमशः रोहः, रोधः, स्तंभः एवं क्षोभः लिखना चाहिए । तथा कोणों के दलों में सगिचरम (क्षः) लिखना चाहिए । भोजपत्र पर गोरोचन से यह यन्त्र लिखकर मध्य में साध्य के नाम के साथ इसे दो सरोकों के बीच में रखकर गन्ध पुष्प आदि उपचारों से इसका पूजन करना चाहिए । तथा दिक्पालों को बलि देनी चाहिए ।

यह विजयप्रद यन्त्र व्यवहार एवं विवाद में विजय तथा राजद्वार में सम्मान बढ़ाता है ।

टिप्पणी : विजयप्रद यन्त्र (देखिये चित्र ६१)

इस यन्त्र को भोजपत्र पर गोरोचन एवं चमेली की कलम से लिखकर साध्य व्यक्ति के नाम के साथ दो सकोरों के बीच में रखकर 'त्रैलोक्यमोहन गौरी मन्त्र' से इसका पूजन करे और फिर दिक्पालों को उनके मन्त्रों से बलि देनी चाहिए । ऐसा करने से यह यन्त्र सिद्ध हो जाता है । यह यन्त्र व्यवहार, विवाद, राजद्वार एवं शत्रु संकट सभी में विजय दिलाता है ।

यावज्जीवं वशीकर्तुं नरं यन्त्रं तथोच्यते ॥ ५७ ॥
अनामा सृग्गजमदरोचनालक्तकैर्लिखेत् ।
भूर्जे जातीयलेखन्या चतुरस्रं मनोहरम् ॥ ५८ ॥

॥५४-५६॥ गणेशयन्त्रमेकादशमाह । यावदिति ॥ ५७ ॥ चतुरस्रं कृत्वामध्येपंक्तिचतुष्टयं कार्यम् । आद्यायां मायासप्तकम । द्वितीयायां क्रोंह्रींक्लींगंदेवदत्तं वशयगमिति । तृतीयायां क्रोंह्रींक्रोंह्रींक्लींह्र इति । चतुर्थ्यां मायाचतुष्कम् । चतुरस्राद्बहिर्दक्षिणदिशं हित्वात-सृषुदिक्षुगंवाजस्य दशकंदशकंतदुपर्यपिचतुष्काणम् । एतद्यन्त्रकृष्णमृत्कृतगणेशोदरन्यस्यतं संपूज्यदेवदेवेतिसंप्राथ्यहस्तमात्रे र्तं निखायपूरयेदिति । गणपातर्देवता ॥ ५८

तत्राद्यपंक्तौ संलेख्य मायाबीजस्य सप्तकम् ।
द्वितीयायां सृणिर्मायाकामौ नामगसंपुटम् ॥ ५९ ॥
तृतीयायां सृणिपुटामायया संपुटःस्मरः ।
लेख्यं पंक्तौ चतुर्थ्यां तु मायाबीजचतुष्टयम् ॥ ६० ॥
चतुरस्राद्बहिर्दिक्षु दशबीजं गणेशितुः ।
विलेख्य दक्षिणां हित्वा कुर्य्याद्भूयोपि भूपुरम् ॥ ६१ ॥
एतद्यन्त्रं गणपतेरुदरान्तः प्रविन्यसेत् ।
विनिर्मितस्य सुक्षेत्रादात्तयाकृष्णया मृदा ॥ ६२ ॥
पञ्चोपचारैर्गणपं सम्पूज्यामुं मनुं पठेत् ।
देवदेव गणाध्यक्षसुरासुरनमस्कृत ॥ ६३ ॥
देवदत्तं ममायत्तं यावज्जीवं कुरुप्रभो ।
हस्तमात्रे धरागर्ते तं विन्यस्य गणाधिपम् ।
संपूरयेन्मृदागर्तमेवं वश्यो भवेन्नरः ॥ ६४ ॥

जीवन भर वशीभूत करने का यन्त्र : मनुष्य को जीवन भर वशीभूत करने वाले यन्त्र को अब बतलाता हूँ :

भोजपत्र पर अनामिका का खून, गजमद, गोरोचन एवं अलता से चमेली की कलम से चतुर्भुज लिखकर प्रथम पंक्ति में ७ मायाबीज तथा द्वितीय पंक्ति में क्रमशः सृणि (क्रों) माया (ह्रीं) काम (क्लीं) एवं गं से सपुटित नाम लिखना चाहिए। फिर तृतीय पंक्ति में 'क्रों' से सम्पुटित मायाबीज तथा मायाबीज से सम्पुटित काम बीज लिखकर चतुर्थ पंक्ति में ४ मायाबीज लिखने चाहिए। फिर चतुरस्र के बाहर दक्षिण दिशा को छोड़कर अन्य दिशाओं में १०–१० गणेशबीज (गं) लिखकर फिर इसके ऊपर भूपुर बनाना चाहिए।

पवित्र स्थान से लायी गयी काली मिट्टी से निर्मित गणेश की प्रतिमा के पेट में इस यन्त्र को रखकर पञ्चोपचार से गणेश जी का पूजन कर इस मन्त्र को पढ़ना चाहिए।

देव देव गणाध्यक्ष सुरासुर नमस्कृत। देवदत्तं ममायत्तं यावज्जीवं कुरु प्रभो ॥

('देवदत्त' के स्थान पर साध्य व्यक्ति का नाम बोलना चाहिए।)

फिर १ हाथ गहरे गड्ढे में उस गणेश की प्रतिमा को रखकर मिट्टी से उस गड्ढे को भर देना चाहिए। ऐसा करने से मनुष्य वश में हो जाता है।

॥ ५९-६४ ॥

टिप्पणी : जीवन भर वशीभूत करने का यन्त्र (देखिये चित्र ६२)

अनामिका का रक्त, गजमद, गोरोचन एवं अलता मिलाकर उससे चमेली की कलम से भोजपत्र पर उक्त यन्त्र लिखना चाहिए तथा पवित्र स्थना से लायी गयी काली मिट्टी से गणेश की प्रतिमा बनाकर उसके पेट मे यह यन्त्र रखकर 'महागणपति मन्त्र' से पञ्चोपचार से गणेश जी का पूजन कर 'देव देव गणाध्यक्ष ०' यह प्रार्थना करनी चाहिए। फिर उस प्रतिमा को १ हाथ गहरे गड्ढे में रखकर मिट्टी से गड्ढे को भर देना चाहिए ऐसा करने से मनुष्य जीवन भर वश में रहता है।

पद्मं चतुर्दलं कृत्वा साध्याख्यं नेत्रकर्णिकम्।
तारोनमइमान्वर्णाँल्लिखेद्दलचतुष्टये ॥ ६५ ॥
अजितेइत्यपिलिखेद्दक्षिणोत्तरपत्रयोः।
भूर्जे गोरोचनाचन्द्रकेसरागुरुभिः पुनः ॥ ६६ ॥
त्रिदिनं नियतोयन्त्रं संपूज्याह्निचतुर्थके।
एकं सम्भोज्य विप्रेन्द्रं यन्त्रं बाहौविधारयेत् ॥ ६७ ॥
हेमादिसंस्थितं भूपोवशकृद्दर्शनादपि।

राजा को वश में करने का यन्त्र : चतुर्दल कमल लिखकर कर्णिका में 'इ' तथा साध्य का नाम लिखना चाहिए। फिर चारों पद्मों में 'ॐ नमः' – ये शब्द लिखने चाहिए। फिर दक्षिण एवं उत्तर के पत्रों में 'अजिते' लिखना चाहिए।

भोजपत्र पर गोरोचन, कपूर, केसर एवं अगर से यह यन्त्र लिखकर तीन दिन तक प्रतिदिन (अजिता के मन्त्र से) विधिवत पूजन कर चौथे दिन एक श्रेष्ठ ब्राह्मण को भोजन कराने के बाद इस यन्त्र को सोने आदि के ताबीज में डालकर भुजा पर धारण करना चाहिए। (इस यन्त्र के प्रभाव से) देखने मात्र से राजा वश में हो जाता है।

टिप्पणी : राजा को वश में करने का यन्त्र (देखिये चित्र ६३)

चतुर्दलान्तर्विलिखेद्भृत्यनामक्रियान्वितम् ॥ ६८ ॥
दलेषु मायाबीजानि भूर्जे रोचनया सुधीः।
दद्यिन क्षिप्ते तुतद्यन्त्रे भृत्यआज्ञाकरो भवेत् ॥ ६९ ॥

नृपवश्यकरं द्वादशमाह। पद्ममिति। चतुर्दलेइदृतं नाम। ॐनमइतिप्रतिदलम्। अजितेइतिदक्षिणोत्तरदलयोरधिकं लिखेत्। अजितादेवता ॥ ६५-६७ ॥ भृत्यवश्यकरं त्रयोदशमाह। चतुर्दलान्तरिति। क्रिया वशयेति तद्युतम्। गौरीदेवता ॥ ६८-६९ ॥

सेवक को वश में करने का यन्त्र : चतुर्दल कमल के भीतर भृत्यनाम एवं क्रिया (वशय) को लिखना चाहिए तथा चारों दलों में मायाबीजों को लिखना चाहिए। साधक भोजपत्र पर गोरोचन से इस यन्त्र को लिखकर दही में डाल दे। ऐसा करने से सेवक आज्ञाकारी हो जाता है।

टिप्पणी : सेवक को वश में करने का यन्त्र (देखिये चित्र ६४)

चतुरस्रे लिखेत्साध्यनामर्णान्गिरिजा युतान्।
भूर्जे रोचनाया मन्त्री दुष्टप्रभुवशोकृतौ ॥ ७० ॥
शत्रुप्रतिकृते यन्त्रं हृदये तत्प्रविन्यसेत्।
कृता याराजिका पिष्टैःशत्रुपादरजोयुतैः ॥ ७१ ॥
प्रतिमां पूजयित्वा तां चुल्लीपार्श्वे निखानयेत्।
अजासृग्युक्तभक्तेन कृष्णभूते बलिं हरेत् ॥ ७२ ॥
महाकालायदिक्पेभ्योऽरुणपुष्पाःज्यसंयुतम्।
एवं कृते भवेद्वश्यो नृपो दुष्टोपि तत्क्षणात् ॥ ७३ ॥

दुष्ट को वश में करने का यन्त्र : चतुरस्र के मध्य में मायाबीज के भीतर साध्य का नाम लिखना चाहिए। साधक दुष्ट राजा को वश में करने के लिए भोजपत्र पर गोरोचन से इस यन्त्र को लिखें।

उस दुष्ट व्यक्ति के पैर की धूल में पिसी हुई राई मिलाकर उसकी प्रतिमा बनाकर प्रतिमा के हृदय में यह यन्त्र रखना चाहिए। फिर उस प्रतिमा का (त्रैलोक्य मोहन गौरीमन्त्र से) पूजन कर उसे चूल्हे के पास गाड़ देना चाहिए।

इसके बाद कृष्णपक्ष की चतुर्दशी को बकरी के खून से मिश्रित भात, लालपुष्प तथा घी से महाकाल एवं दिक्पालों को बलि देनी चाहिए। ऐसा करने से दुष्ट राजा भी तुरन्त वश में हो जाता है।

टिप्पणी : दुष्ट को वश में करने का यन्त्र (देखिये चित्र ६५)

दौर्भाग्यशमनं भर्तृवशकृद्यन्त्रमुच्यते।
नारीणामीप्सितप्राप्तिकरं सौभाग्यवर्द्धनम् ॥ ७४ ॥

दुष्टवश्यकरं चतुर्दशमाह। चतुरस्रइति। मायाबीजगतान्नामार्णांश्चतुरस्रे विलिख्य-दुष्टपादरजोयुक्तराजिकापिष्टकृततत्प्रतिमायां हृदिन्यस्यतां चुल्लीं निखायकृष्णचतुर्दश्यां महाकालायारुणपुष्पाज्येनयुक्तम जायारक्तयुक्तभक्तेन बलिं दद्यात। :उक्तफलसिद्धिः। गौरीदेवता ॥ ७०-७३ ॥ ललितायन्त्रं पञ्चदशमाह। दौर्भाग्येति। शुक्लत्रयोदश्यां भर्जे-रोचनाकस्तूरी कुंकुमैश्चतुष्कोणाभमष्टदलं कृत्वामायात्रयपुटितं भर्तृनामांतर्विलिख्य-दिक्पत्रेषुमायात्रय कोणदलेएकां कृत्वोत्तरदिग्वक्त्रोरात्रावर्चेत्। ललितादेवता ॥ ७४ ॥

कुर्य्यादष्टदलं पद्मं चतुष्कोणाढ्यकर्णिकम् ।
चतुष्कोणे लिखेन्मायाबीजानां त्रितयं शुभम् ॥ ७५ ॥
ततःस्वनाथनामार्णान्मायाबीजत्रयं पुनः ।
दिक्पत्रे त्रिर्गिरिसुतां विदिक्पत्रेष्वधैकशः ॥ ७६ ॥
भूर्जे सितत्रयोदश्यां रोचनानाभिकुंकुमैः ।
विलिख्योत्तरदिग्वक्त्रो निश्यर्चेत्सप्तवासरान् ॥ ७७ ॥
तदन्ते भोजयेत्सप्तपतिपुत्रान्विताः स्त्रियः ।
ललिताप्रीतये पश्चाद्यन्त्रं धातुगतंधृतम् ॥ ७८ ॥
रूपसौभाग्यसम्पत्तिकरं प्रियवशंवदम् ।
सम्प्राक्तं ललितायन्त्रं कामिनीनामभीष्टदम् ॥ ७९ ॥

दुर्भाग्यनाशक तथा पति को वश में करनेवाला ललिता यन्त्र : दुर्भाग्यनाशक, पति का वश में करने वाला, स्त्रियों को इच्छित फलदायक तथा सौभाग्यवर्धक यन्त्र को बतलाता हूँ ।

चतुर्भुज कर्णिका सहित अष्टदल लिखना चाहिए । चतुर्भुज में ३ मायाबीजों को लिखकर अपने पति का नाम और फिर ३ मायाबीजों को लिखना चाहिए । दिशाओं के चारों दलों पर पर ३–३ मायाबीज तथा चारों कोणों के दलों पर १–१ मायाबीज लिखना चाहिए ।

शुक्ल पक्ष की त्रयोदशी को भोजपत्र पर गोरोचन कस्तूरी एवं कुंकुम से उत्तराभिमुख होकर यह यन्त्र लिखकर रात्रि में ७ दिन तक (ललिता के मन्त्र से) पूजन करना चाहिए । इसके बाद ललिता की प्रसन्नता हेतु पति एवं पुत्र वाली ७ स्त्रियों को भोजन कराना चाहिए ।

इसके बाद इस यन्त्र को सोने, चाँदी या ताँबे के ताबीज में डालकर कण्ठ या भुजा में धारण करने से रूप, सौभाग्य एवं सम्पत्ति की वृद्धि होती है तथा पति वश में हो जाता है ।

यह ललिता यन्त्र स्त्रियों को इच्छित फल देने वाला बतलाया गया है ।

टिप्पणी : ललिता यन्त्र (देखिये चित्र ६६)

गोरोचनाकुंकुमाभ्यां भूर्जेष्टदलमालिखेत् ।
साकारपुटितं नामकर्णिकायां दलेद्विजा ॥ ८० ॥

॥ ७५-७९ ॥ षोडशमाह । गोरोचनेति । सादेवदत्तसाइतिमध्ये । पत्रेषुह्रीं गौरीदेवता ॥ ८० ॥

दिनद्वयं निशास्विष्ट्वाभोजयित्वाङ्गनात्रयम् ।
कण्ठे धृतं भर्तृवश्यकारकं यन्त्रमुत्तमम् ॥ ८१ ॥

पति को वश में करने वाला यन्त्र : गोरोचन एवं कुंकुम से भोजपत्र पर अष्टदल लिखना चाहिए। उसकी कर्णिका में 'सा' से पुटित पति का नाम तथा दलों में मायाबीज लिखना चाहिए।

दो दिन तक लगातार रात्रि में (मायाबीज से) इसका पूजन कर फिर ३ स्त्रियों का भोजन कराकर इस श्रेष्ठ यन्त्र को गले में धारण करने से पति वश में हो जाता है।

टिप्पणी : पति को वश में करने वाला यन्त्र (देखिये चित्र ६७)

भृग्वाकाशविधिक्ष्माखवह्नीञ्छान्तीन्दुभूषितान् ।
लिखेदष्टारपद्मस्य कर्णिकायां दलेष्वपि ॥ ८२ ॥
गोरोचनाचन्दनाभ्यां भूर्जेभ्यर्चेद्दिनत्रयम् ।
धृतं हेमगतं कण्ठे नार्य्या बाह्वोर्नरेण वा ॥ ८३ ॥

दुर्भाग्यनाशक बीज यन्त्र : भृगु (स्) आकाश (ह्) विधि (क्) क्षमा (ल्) फिर शान्ति एवं इन्दु सहित ख एवं वह्नि (ह्रीं) अर्थात् 'स्ह्क्ल्ह्रीं' –इस कूट को अष्टदल को कर्णिका में तथा उसके दलों में भी लिखना चाहिए।

भोजपत्र पर गोरोचन एवं चन्दन से यह यन्त्र लिखकर (सुन्दरीमन्त्र से) इसकी तीन दिन तक विधिवत् पूजा करनी चाहिए। फिर सोने के ताबीज में डालकर स्त्री अपने कण्ठ में तथा पुरुष भुजा पर धारण करे। यह बीजयन्त्र दुर्भाग्यनाशक तथा सौभाग्यदायक माना गया है।

टिप्पणी : दौर्भाग्यनाशन बीजयन्त्र (देखिये चित्र ६८)

सौभाग्यदं बीजयन्त्रं प्रोक्तं दौर्भाग्यनाशनम् ।
चदुदलं लिखेद्भूर्जे स्वासृग्युग्रक्तचन्दनैः ॥ ८४ ॥
कर्णिकायां साध्यनामक्रोधबीजदलेष्वपि ।
तद्यन्त्रं पूजयित्वाज्येक्षिप्तमाकृष्टिकृद्भवेत् ॥ ८५ ॥

॥ ८१ ॥ बीजयन्त्र सप्तदशमाह । भृग्वेत्यं । भृगु सः । आकाशोहः । विधिः कः । क्षमालः । खंहः । वह्निरः । एतान् शा न्तीन्दुविभूषितान् ईर्विदुयुतान् । तेनषट्कूटंसौंहीकीं लींह्रींरींइति । सुन्दरीदेवता ॥ ८२-८३ ॥ आकर्षणय त्रमष्टदशमाह । चतुर्दलमति । स्वरुधिरयुक्तरक्तचन्दनैः क्रोधबीजंह्रुं । रुद्रदेवता ॥ ८४-८ ॥

आकर्षण यन्त्र : अपना खून मिलाकर लाल चन्दन से भोजपत्र पर चतुर्दल लिखना चाहिए। उसकी कर्णिका में साध्य का नाम तथा चारों दलों में क्रोधबीज (हुं) लिखना चाहिए। (दशाक्षर रुद्रमन्त्र से) उस यन्त्र का पूजन कर उसे घी में डालने से वह आकर्षण करता है।

टिप्पणी : आकर्षण यन्त्र : (देखिये चित्र ६९)।

षट्कोणेविलिखेन्नामवाङ्मनोभवमध्यतः।
कोणेषु भृगुरौसर्गोभूर्जे रोचनायार्पितम् ॥ ८६ ॥
पूजितं त्रिपुरायन्त्रं धृतान्तर्विनिवेशितम्।
इष्टस्याकर्षणं तेन भवेत्सप्ताहमध्यतः ॥ ८७ ॥

आकर्षणकारक त्रिपुरा यन्त्र : षड्कोण के भीतर वाग्बीज एवं कामबीज के बीच में साध्य का नाम तथा ६ कोणों में औ एवं विसर्ग सहित भृगु (सौः) लिखना चाहिए।

भोजपत्र पर गोरोचन से यह यन्त्र लिखकर (त्रिपुराबाला / त्रिपुर भैरवी मन्त्र से) इसका पूजन करने के बाद इसे घी में डाल देना चाहिए। एसा करने से १ सप्ताह के भीतर अभीष्ट व्यक्ति आकर्षित हो जाता है।

टिप्पणी : त्रिपुरा यन्त्र (देखिये चित्र ७०)

हरिद्रया लिखेदष्टदलं वह्निधस्रकर्णिकम्।
शिलायां मध्यतो नामभूबीजंदलमध्यतः ॥ ८८ ॥
तदभ्यर्च्यपिधायाथ शिलया निखनेत्क्षितौ।
वादे विवादे जायेत प्रतिवाद्यास्यमुद्रणम् ॥ ८९ ॥

मुखमुद्रण यन्त्र : शिला पर हल्दी से त्रिकोण गर्भित अष्टदल लिखकर त्रिकोण के भीतर साध्यनाम तथा आठों दलों में भूबीज (ग्लौं) लिखना चाहिए। फिर (भूबीज से) उसका पूजन कर (दूसरी शिला से) उसे ढँककर भूमि में गाड़ देना चाहिए। (ऐसा करने से) वाद एवं विवाद में प्रतिवादी का मुँह बन्द हो जाता है।

टिप्पणी : मुख मुद्रण यन्त्र (देखिये चित्र ७१)

वृत्ते नामसमालिख्य क्रियाकर्मसमन्वितम्।
दिक्षु वृत्ताद्बहिर्लेख्यं वकाराणां चतुष्टयम् ॥ ९० ॥

त्रिपुरायंत्रमेकानविंशमाह। षटकोणइति। वाक्ऐं। मनोभवःक्लीं। भृगुः सः औसर्गोसौः। त्रिपुरादेवता ॥ ८६-८७ ॥मुखमुद्रणंविंशमाह। हरिद्रयेति। हरिद्रयाशिलायां त्रिकोणमध्यमष्टदलं कृत्वात्रिकोणेनामनिर्मायदलेष्वरलौंविलिख्यसंपूज्यशिलांतरेणपिधाय-निखनेत्। उक्तफलसिद्धिः। भूमिर्देवता ॥ ८८-८९ ॥ अग्निभयहरमेकर्विंशमाह। वृत्तइति। क्रियेति अमुकस्याग्नि भयहरीति ॥ ९० ॥

वेष्टितं चतुरस्रेण यन्त्रमेतत्सुसाधितम् ।
गोरोचनाचन्दनाभ्यां भूर्जे लिखितमुत्तमम् ॥ ९१ ॥
एतद्यन्त्रं वृतं लोहत्रयेण भुजयाधृतम् ।
निवर्तयेदग्निभयं सदनेपि च संस्थितौ ॥ ९२ ॥

अग्निभयहर्ता यन्त्र : वृत्त के भीतर नाम, कर्म एवं क्रिया (अमुकस्य अग्निभयं हर) लिखकर वृत्त के बाहर चारों दिशाओं में चार 'व' लिखने चाहिए। इस यन्त्र को चतुरस्र से वेष्टित करना चाहिए।

भोपत्र पर गोरोचन एवं चन्दन से इस श्रेष्ठ यन्त्र को लिखकर (मातृका यन्त्र से विधिवत पूजा कर) त्रिलौह (सोना, चाँदी एवं ताँबा) से बने ताबीज में रखकर भुजा पर धारण करने से घर में तथा अन्य स्थान में अग्नि का भय दूर हो जाता है।

टिप्पणी : अग्निभयहर्ता यन्त्र (देखिये चित्र ७०)

मायापुटितमंकारं नामकर्मयुतं लिखेत् ।
चतुर्दलेऽब्जे लेखन्या वायसच्छदजातया ॥ ९३ ॥
दलेष्वपि तथालेख्यं विरोधिक्षतजेन तत् ।
निशिसंपूज्य तद्यन्त्रमोदनं विनिवेदयेत् ॥ ९४ ॥
अजारुधिरसंयुक्तं नारीमेकां चभोजयेत् ।
ततःश्मशाने शर्वस्यगेहे वा शून्यमन्दिरे ॥ ९५ ॥
निखातं तद्द्विषोर्द्वेषं जनयेदचिराद्ध्रुवम् ।

विद्वेषण यन्त्र : (भोजपत्र पर) शत्रु के खून तथा कौआ के पंख की कलम से चतुर्दल लिखकर उसके भीतर तथा दलों में मायाबीज से पुटित 'अं' (ह्रीं अं ह्रीं) तथा कर्मसहित नाम (अमुकौ द्वेषय) लिखना चाहिए।

रात्रि में (मायाबीज से इसका विधिवत) पूजन कर बकरी का खून मिलाकर भात का भोग लगाकर एक स्त्री को भोजन कराना चाहिए। फिर श्मशान, शिवालय या निर्जन घर में इसे गाड़ने से यह उन दोनों व्यक्तियों में निश्चित रूप से तुरन्त ही शत्रुता पैदा कर देता है।

टिप्पणी : विद्वेषण यन्त्र (देखिये चित्र ७३)

॥ ९१ ॥ भुजयाबाहुना। मातृकादेवता ॥ ९२ विद्वेषणद्वात्रिंशमाह। मायेति। भूर्जेरि रुधिरेणकाकपक्षलेखन्याचतुर्दलेह्रीं अंह्रींअं अमुकौद्वेषयेतमध्येदलेष्वपिविलिख्य रात्रावभ्यर्च्यमेषीरुधिरयुक्तमोदनं निवेद्यैकनारीं सभोज्ययंत्र शम्भोः सद्मनिश्मशानादौ-वानिखातंद्वेषासद्धिः। गौरीदेवता ॥ ९३-९५ ॥

विद्वेषणमिदं यन्त्रमथोमारणमुच्यते ॥ ९६ ॥
लिखेदष्टदले पद्मे नामवर्मास्त्रसंपुटम् ।
दिग्दलेष्वथ वर्मैव विदिग्दलगमस्त्रकम् ॥ ९७ ॥
वृत्तेन पद्मं संवेष्ट्य वर्मणावेष्टयेच्चतत् ।
श्मशानाङ्गारमेषासृग्विषैः काकच्छदोत्थया ॥ ९८ ॥
लेखन्या लिखितं यन्त्रं कपालनरसंभवे ।
सञ्छाद्य भस्मना तस्योपरि प्रज्वालयेद्वसुम् ॥ ९९ ॥
प्रत्यहं प्रदहेत्स्तोकं स्तोकं विंशद्दिनावधि ।
विशेद्दन्यखिलं दग्धं शत्रोर्लोकान्तरप्रदम् ॥ १०० ॥

मारण यन्त्र : विद्वेषणकारक यह यन्त्र बतलाया गया, अब मारण यन्त्र बतलाता हूँ :

अष्टदल पद्म के भीतर वर्म एवं अस्त्र हुं फट्) से सम्पुटित साध्यनाम लिखना चाहिए । फिर दिशा के चारों दलों में वर्म (हुं) तथा कोण के चारों दलों में अस्त्र (फट्) को लिखना चाहिए । तत्पश्चात् अष्टदल को वृत्त से वेष्टित कर उसे वर्म (हुं) से वेष्टित करना चाहिए ।

यह यन्त्र कौआ के पंख की लेखनी से तथा चिता के अँगार, भेड़ का खून एवं विष (विषाष्टक) से नरकपाल में लिखना चाहिए । (फिर अस्त्र बीज से इसका पूजन कर) कपाल में भस्म रख कर उसके ऊपर अग्नि प्रज्वलित करनी चाहिए । प्रतिदिन मन्द मन्द आग से २० दिन में उसे जला देना चाहिए । २० वें दिन शेष सबको जला देने पर शत्रु मर जाता है ।

टिप्पणी : मारण यन्त्र (देखिये चित्र ७४)

चतुर्दले लिखेन्नामदलगं सगिमारुतम् ।
उलूककाकरक्तेन भूर्जेभूतदिने निशि ॥ १०१ ॥
रक्तवस्त्रधरो रक्तपुष्पमाल्यानुलेपनः ।
लिखित्वा पूजयेद्यन्त्रं रक्तैः पुष्पैश्चन्दनैः ॥ १०२ ॥

॥ ९६ ॥ मारणत्रयोविंशमाह । लिखेदिति । चिताङ्गारमेषरक्तविषैः काकपक्षलेखिन्यानरकपालेऽष्टदलं तद्वत्तफट् हुंफट्देवदत्तफट् हुंइतिविलिख्य दिग्दलेषुहुंकाणदलेषुफट्ततः पद्मं वृत्तेनतच्चवर्मणावेष्टयसंपूज्यभस्मनिप्रक्षिप्योपरिस्वल्पंस्वल्पमग्निंप्रत्यहं प्रज्वालयेद्यथादिनविंशत्यासर्वंकपालस्यदाहः । एवमुक्तफलसिद्धिः । अस्त्रंदेवता ॥ ९७-१०० ॥ उच्चाटनं चतुर्विंशमाह । चतुर्दलइति । मारुतोयः ॥ १०१-१०२ ॥

कुमारीं भोजयेन्नित्यं दद्यात्तस्यै च दक्षिणाम् ।
एवं विंशतिघस्रान्तं विधाय चरमेदिने ॥ १०३ ॥
यन्त्रं तत्खण्डशः कृत्वा क्षिपेदुच्छिष्टओदने ।
दत्ते तस्मिन्वायसेभ्य उच्चाटो जायतेरिपोः १०४ ॥

उच्चाटन यन्त्र : कृष्ण पक्ष की चतुर्दशी के दिन रात्रि में साधक को लाल वस्त्र पहिन कर लाल चन्दन लगाकर लाल पुष्पों की माला पहिनकर भोजपत्र पर उल्लू एवं कौआ के खून से चतुर्दल पद्म के भीतर साध्यनाम तथा चारों दलों में विसर्ग सहित मारुत (यः) लिखना चाहिए ।

इस यन्त्र को लिखने के बाद लाल चन्दन एवं लाल फूलों से (वायुबीज से) प्रतिदिन पूजन करना चाहिए तथा प्रतिदिन १ कुमारी को भोजन कराकर दक्षिणा देनी चाहिए ।

इस प्रकार २० दिन तक पूजन एवं कुमारी को भोजन कराकर अन्तिम दिन उस यन्त्र के टुकड़े टुकड़े कर जूठे भात में मिलाकर कौओं को खिलाना चाहिए । ऐसा करने से शत्रु का उच्चाटन हो जाता है ।

टिप्पणी : उच्चाटन यन्त्र (देखिये चित्र ७५)

रोचनामृगकर्पूरकुंकुमैः शोभनेदिने ।
भूर्जे प्रविलिखेद्यन्त्रं लेखन्याजातिजातया ॥ १०५ ॥
प्राक्प्रत्यग्दक्षिणोदक्चकुर्य्याद्रेखाष्टकं समम् ।
एवमेकोनपञ्चाशज्जायन्ते कोष्ठकास्ततः ॥ १०६ ॥
दिग्गतान्तिमपंक्तिस्थांश्चतुर्विंशतिवर्णकान् ।
अकारादिजकारान्तांल्लिखेच्चन्द्रसमन्वितान् ॥ १०७ ॥
तदन्तर्गतपंक्तिस्थाञ्झादिभान्तांश्चषोडश ।
तदन्तः स्थान्मादिसान्तान्हकारं शिष्टकोष्ठके ॥ १०८ ॥
रेखाग्रेषु त्रिशूलानि कुर्वीत रदसंख्यया ।
उपर्य्यधस्त्रिशूलान्तर्हल्लेखासप्तकं लिखेत् ॥ १०९ ॥
एवं विलिख्य तद्यन्त्रं पूजयेद्दिवसत्रयम् ।
चण्डीपाठकरो विप्रभोजको भूमिशायकः ॥ ११० ॥

चरमे त्येि ॥ १०३ ॥ तस्मिन्यंत्रखण्डयुक्तोच्छिष्टोदनेकाकेभ्योदत्तेफलम् । वायुर्देवता ॥१०४॥शान्तिकरं पञ्चविंशमाह । रोचनेति । भूर्जेरचनादिभिः पूर्वापरायतं दक्षिणोत्तरायतं चरेखाष्टकं कृत्वातत्रबहिः कोष्ठपंक्तिष्वीशानादिष्वकारादि जकारान्तांस्तदन्तःपंक्तिषु-सकारादिभकारान्तान् । तदन्तः पंक्तिषुमकारादिमकारान्तान्मध्येहं विलिख्यरेखाग्राणि-संवर्ध्यत्रिशूलाकाराणियन्त्रपूर्वभागपश्चिम त्रिशूलमध्यभागेषुसप्तसुहृीं सप्तकंकृत्वेक्तविधि-नापूजितं दोर्ष्णिबाहौधृतमुक्तफलदम् । मातृकादेवता ॥ १०५-११० ॥

ततो लोहत्रयाविष्टं धारयेद्दोष्णि वागले।
उपसर्गाःकलिःकृत्याःशमं यान्ति विधारणात् ॥ १११ ॥

शान्तिकारक यन्त्र : शुभ मुहूर्त में गोरोचन, कस्तूरी, कपूर एवं कुंकुम से चमेली की कलम से भोजपत्र पर यह यन्त्र लिखना चाहिए।

पूर्वापर एवं याम्योत्तर ८-८ रेखाएँ बनानी चाहिए। ऐसा करने से ४९ कोष्ठक बन जाते हैं। फिर ईशान कोण से बाहर वाली पंक्तियों के कोष्ठकों में अकार से लेकर जकार पर्यन्त सानुस्वार २४ वर्णों को लिखना चाहिए। फिर उसके नीचे वाली पंक्तियों के कोष्ठकों में अनुस्वार सहित झकार से लेकर भकार तक १६ वर्ण तथा उससे नीचे की पंक्तियों के कोष्ठकों में अनुस्वार सहित मकार से लेकर सकार पर्यन्त ८ वर्ण और शेष मध्य के कोष्ठक में सानुस्वार हकार लिखना चाहिए। रेखाओं के अग्रभागों पर ३२ त्रिशूल बनाने चाहिए तथा पूर्व एवं पश्चिम दिशा के त्रिशूलों के बीच में ७-७ मायाबीज (ह्रीं) लिखने चाहिए।

इस प्रकार यन्त्र को लिखकर ३ दिन तक साधक चण्डीपाठ, ब्राह्मण भोजन तथा भूमि पर शयन करते हुए इस यन्त्र का पूजन करे। फिर लौहत्रय से बने ताबीज में इस यन्त्र को रखकर भुजा या गले में धारण करे। इस यन्त्र के पहिनने से सब प्रकार के उपद्रव, क्लेश एवं परकृत्य शान्त हो जाते हैं।

टिप्पणी : शान्तिकारक यन्त्र (देखिये चित्र ७६)

पूर्वोक्तविधिना कुर्य्यात्पद्ममष्टदलान्वितम्।
मध्ये नाम्नायुतं सर्गिभृगुणाष्टदलेष्वपि ॥ ११२ ॥
पूर्ववत्पूजितं चैतद्बद्धं कण्ठे भुजे शिशोः।
शाकिनीभूतवेतालग्रहान्सद्यो निवर्तयेत् ॥ ११३ ॥

शाकिनीनिवर्तक यन्त्र : अष्टदल पद्म के भीतर साध्यनाम तथा दलों में सर्गि भृगु (सः) पूर्वोक्त रीति से भोजपत्र पर गोरोचन, कस्तूरी, कपूर एवं चन्दन से तथा चमेली की कलम से लिखना चाहिए।

फिर चण्डीपाठ, ब्राह्मण भोजन एवं भूमि में शयन करते हुए पूर्वोक्त विधि से इसका विधिवत पूजन कर यह यन्त्र शिशु के गले में या उसकी भुजा पर बाँध देना चाहिए। (ऐसा करने से यह यन्त्र) शाकिनी, भूत, वेताल एवं बालग्रहों को दूर कर देता है।

॥ १११ ॥ शाकिनीनिवर्तकं षड्भिरुशमाह। पूर्वोक्तेति। पूर्वोक्तविधिनारोचनादिभिर्भूर्जे जातीलेखिन्याभृगुणासकारेण ॥ ११२ ॥ पूर्ववदिति। दिनत्रयं चण्डीपाठादिना। मातृकादेवता ॥ ११३ ॥

टिप्पणी : शाकिनीनिवर्तक यन्त्र (देखिये चित्र ७७)

धत्तूररसतो लेख्यं पितृकान्तारवाससि ।
कृष्णे वसुतिथौ भूते पुटितं भूपुरद्वयम् ॥ ११४ ॥
कोणान्तराले कोणेषु रेफषोडशकं लिखेत् ।
दिक्षुरेफचतुष्कोणयुतं नामापिमध्यतः ॥ ११५ ॥
पूजितं तत्पितृवननिखातं ज्वरशान्तिकृत् ।

ज्वरनिवर्तक यन्त्र : कृष्णपक्ष की अष्टमी या चतुर्दशी के दिन श्मशान के वस्त्र पर धतूरे के रस से परस्पर विरुद्ध दिशा में २ चतुर्भुज लिखकर उनके ८ कोणों में तथा उनके बीच में १६ 'रं' लिखने चाहिए । फिर मध्य में साध्य नाम तथा चारों दिशाओं में 'रं' लिखकर (अग्निबीज से) उसका पूजन कर श्मशान में उसे गाड़ने से ज्वर शान्त हो जाता है ।

टिप्पणी : ज्वर निवर्तक यन्त्र (देखिये चित्र ७८)

भूर्जे सुगन्धैर्विलिखेत्पद्ममष्टदलान्वितम् ॥ ११६ ॥
नामान्वितं कर्णिकायां दलेष्वजपयायुतम् ।
पूजितं विधृतं बाहौ सर्पभीतिनिवारकम् ॥ ११७ ॥

सर्पभयनाशक यन्त्र : भोजपत्र पर अष्टगन्ध से अष्टदल लिखना चाहिए। इसके मध्य में साध्य का नाम तथा दलों में अजपा (हंसः) लिखना चाहिए । फिर (अजपायन्त्र से) इसका विधिवत पूजन कर भुजा पर धारण करने से यह यन्त्र सर्पभय को दूर कर देता है ।

टिप्पणी : सर्पभयनाशक यन्त्र (देखिये चित्र ७९)

रोचनाहिमकर्पूरकुंकुमैः पद्ममालिखेत् ।
षोडशारं स्वरैर्युक्तं दलं मायाद्यकर्णिकम् ॥ ११८ ॥
तस्योपरिष्टाद्द्वात्रिंशद्दलं व्यंजनयुग्दलम् ।
पद्मं दिग्विदिशाहक्षयुक्तं क्षमापुरवेष्टितम् ॥ ११९ ॥

ज्वरहरं सप्तविंशमाह । धत्तूरेति । कृष्णाष्टम्यां कृष्णचतुर्दश्यां वाश्मशानवस्त्रे धत्तूररसेनपरस्परव्यतिभिन्नं चतुष्कोणद्वयं कृत्वाऽष्टसुकोणेषुतन्मध्येष्वपिरमितिविलिख्य मध्येरं वेष्टितं नामकृत्वापूजितं श्मशानेनिखातं ज्वरहरम् । अग्निर्देवता ॥ ११४ ॥ सर्पभयहरमष्टाविंशमाह । भूर्जइति । रोचनादिनाभूर्जेऽष्टदलं कृत्वामध्येनामदलेषु हंसइतिलिखेत् । हंसोदेवता ॥ ११५-११७ ॥ बन्धमोक्षकृतमेकोनत्रिंशमाह । रोचनेति । हिमं चन्दनम् । कांस्यपात्रेरोचनादिनाषोडशदलेमायाम् । दलेषुस्वरान्विलिख्यतदुपरिककारादिसकारांतार्णयुक्तंद्वात्रिंशद्दलतदुपरिक्षमापुरवेष्टितं चतुष्कोणं कृत्वासप्ताहपूजितं बंधहरम् ॥ ११८-११९ ॥

एतद्यन्त्रं कांस्यपात्रेलिखितं सप्तवासरान् ।
पूजितं भूर्जलिखितं धृतं वा बद्धमोक्षकृत् ॥ १२० ॥

बन्दी को छुड़ाने वाला यन्त्र : गोरोचन, चन्दन, कपूर एवं कुंकुम से षोडश दल कमल लिखकर दलों में १६ स्वर तथा कर्णिका में मायाबीज लिखना चाहिए। उसके ऊपर बत्तीस दल वाले कमल में ककार से सकार पर्यन्त ३२ व्यञ्जन लिखने चाहिए। इस पद्म के चारों ओर दिशाओं में 'ह' तथा चारो कोणों में 'क्ष' लिखना चाहिए।

यह यन्त्र काँसे की थाली में लिखकर ७ दिन तक (मातृका मन्त्र स) पूजन करने से या भोजपत्र पर लिखकर धारण करने से बन्दी कारागार आदि के बन्धन से छूट जाता है।

टिप्पणी : बन्दी को छुड़ाने वाला यन्त्र (देखिये चित्र ८०)

पूर्वोक्ताखिलयन्त्राणां सिद्धिकामेन मन्त्रिणा ।
उपास्या मातृकादेवी यद्वा भूतलिपिःपरा ॥ १२१ ॥
यद्वोपास्यो लेखकाले स्वर्णाकर्षणभैरवः ।

यन्त्र सिद्ध के लिए उपासना : पूर्वोक्त समस्त यन्त्रों की सिद्धि चाहने वाले मान्त्रिक को मातृका देवी या भूतलिपि की उपासना करनी चाहिए। अथवा उसे यन्त्र को लिखते समय स्वर्णाकर्षण भैरव की उपासना करनी चाहिए।

प्रणवोवाग्भवंकामशक्तीदीर्घत्रयान्विते ॥ १२२ ॥
सर्गीभृगुर्भयासेन्दुरापदुद्धराणाय च ।
अजामलान्ते बद्धायङेन्तोलोकेश्वरस्तथा ॥ १२३ ॥
स्वर्णाकर्षणभैरवान्तेदीर्घोबालः प्रभञ्जनः ।
ममदारिद्र्यविद्वेषणायान्तेप्रणवोरमा ॥ १२४ ॥
ङेन्तोमहाभैरवान्ते हृदयं कीर्तितोमनुः ।

स्वर्णाकर्षण भैरव के मन्त्र का उद्धार : प्रणव (ॐ) वाग्भव (ऐं) फिर दीर्घत्रय सहित कामबीज (क्लां क्लीं क्लूं) तथा दीर्घत्रय सहित शक्तिबीज (ह्रां ह्रीं ह्रूं) फिर सर्गी भृगु (सः) इन्दु सहित भया (वं) फिर 'आपदुद्धारणाय' 'अजामल' एवं 'बद्धाय' फिर चतुर्थ्यन्त लोकेश्वर (लोकेश्वराय) 'स्वर्णाकर्षण भैरव' दीर्घबाल 'वा' तथा प्रभंजन (य) फिर 'ममदारिद्र्यविद्वेषणाय' के बाद प्रणव (ॐ) रमा (श्रीं) फिर चतुर्थ्यन्त महाभैरव (महाभैरवाय) और अन्त में हृदय (नमः) लगाने से यह स्वर्णाकर्षण भैरव

॥ १२० ॥ उक्तयंत्राणां सिद्धयेमातृकाभूतलिपिभैरवाणामन्यतउपास्यः । तत्रद्वउक्ते ॥ १२१ ॥ भैरवमाह । प्रणवइति ॥ १२२ ॥ भृगुः सः भयावः ॥ १२३ ॥ दीर्घोबालः वा प्रभंजनोयः । रमाश्रीः ॥ १२४ ॥

का मन्त्र बनता है ।

टिप्पणी : स्वर्णाकर्षण भैरव का मन्त्र : ॐ ऐं क्लां क्लीं क्लूं ह्रां ह्रीं ह्रूं सः वं आपदुद्धारणाय अजामलबद्धाय लोकेश्वराय स्वर्णाकर्षण भैरवाय मम दारिद्र्यविद्वेषणाय ॐ श्रीं महाभैरवाय नमः ।

अष्टपञ्चाशदर्णाद्यो मुनिरस्य चतुर्मुखः ॥ १२५ ॥
पंक्तिश्छन्दोदेवतोक्ता स्वर्णाकर्षणभैरवः ।
नन्दाष्टार्कनवाशादिग्वर्णैरंगं मनोःस्मृतम् ॥ १२६ ॥
अथवाकामशक्तिभ्यां दीर्घाढ्याभ्यां षडङ्गकम् ।

विनियोग एवं न्यास : इस ५८ अक्षर वाले मन्त्र के ब्रह्मा ऋषि हैं, पंक्ति छन्द है तथा स्वर्णाकर्षण भैरव देवता हैं ।

मन्त्र के क्रमशः ९, ८, १२, ९, १० एवं १० वर्णों से षडङ्गन्यास बतलाया गया है । अथवा षड्दीर्घसहित कामबीज एवं शक्तिबीज से षडङ्गन्यास करना चाहिए ।

टिप्पणी : विनियोग : अस्य स्वर्णाकर्षण भैरवमन्त्रस्य ब्रह्मा ऋषिः पंक्तिश्छन्दः स्वर्णाकर्षण भैरवो देवता ममाभीष्टसिद्धये जपे विनियोगः ।

षडङ्गन्यास : ॐ ऐं क्लां क्लीं क्लूं ह्रां ह्रीं ह्रूं सः हृदयाय नमः । वं आपदुद्धारणाय शिरसे स्वाहा । अजामलबद्धाय लोकेश्वराय शिखायै वषट् । स्वर्णाकर्षण भैरवाय कवचाय हुम् । ममदारिद्र्यविद्वेषणाय नेत्रत्रयाय वौषट् । ॐ श्रीं महाभैरवाय नमः अस्त्राय फट् ।

षडङ्गन्यास की दूसरी विधि : क्लां ह्रां हृदयाय नमः । क्लीं ह्रीं शिरसे स्वाहा । क्लूं ह्रूं शिखायै वषट् । क्लैं ह्रैं कवचाय हुम् । क्लौं ह्रौं नेत्रत्रयाय वौषट् । क्लः ह्रः अस्त्राय फट् ।

पारिजातद्रुकान्तारे स्थिते माणिक्यमण्डपे ।
सिंहासनगतं ध्यायेद्भैरवं स्वर्णदायिनम् ॥ १२७ ॥
गाङ्गेयपात्रं डमरुंत्रिशूलं वरंकरैः संदधतं त्रिनेत्रम् ।
देव्यायुतं तप्तसुवर्णवर्णं स्वर्णाकृषं भैरवमाश्रयामः ॥ १२८ ॥

हृदयं नमः । मन्त्रोयथा–ॐऐक्लांक्लींक्लूं ह्रांह्रींह्रूं सः वंआपदुद्धारणाय अजामलबद्धायलोकेश्वरायस्वर्णाकर्षणभैरवाययममदारिद्र्यविद्वेषणाय ॐश्रींमहाभैरवायनमइति ॥ १२५ ॥ षडङ्गमाह । नन्देति । नन्दानव । आशादश ॥ १२६ ॥ अथवेति । क्लांह्रांहृत् क्लींह्रींशिरहित्यादि । ध्यानमाह । पारिजातेति । पारिजातवनमध्यगतेमाणिक्यमण्डपे हेमासनगन्तं ध्यायेत् । गाङ्गेयपात्रं हेमभाजनं वरंचदक्षयोः । त्रिशूलडमरुवामयोः ॥ १२७-१२८ ॥

ध्यान : पारिजात वृक्षों के वन में स्थित माणिक्य निर्मित मण्डप में रत्न सिंहासन पर विराजमान स्वर्ण देनेवाले भगवान् भैरव का ध्यान करना चाहिए :

अपने चारों हाथों में क्रमशः गांगेय पात्र (स्वर्णपात्र), डमरू, त्रिशूल एवं वर धारण करने वाले, तीन नेत्र वाले, तप्त सुवर्ण जैसी आभावाले एवं देवी के साथ विराजमान स्वर्णाकर्षण भैरव का आश्रय लेते हैं।

लक्षं जपेद्दशांशेन पायसैर्जुहुयात्सुधीः।
शैवे पीठेयजेद्देवमङ्गदिक्पालहेतिभिः ॥ १२६ ॥

जप संख्या हवन, एवं पूजन : इस मन्त्र का १ लाख जप करना चाहिए। खीर से दशांश होम करना चाहिए तथा विद्वान् साधक को शैव पीठ पर अंगपूजा दिक्पाल एवं उनके आयुधों के साथ आवरण पूजा करनी चाहिए।

स्वर्णाकर्षण भैरव का पूजन यन्त्र : षड्कोण कर्णिका तथा भूपुर सहित बने यन्त्र (देखिये चित्र ८१) पर स्वर्णाकर्षण भैरव का पूजन करना चाहिए।

टिप्पणी : *पीठपूजा विधिः* सर्वप्रथम श्लोक १२८ में वर्णित स्वर्णाकर्षण भैरव के स्वरूप का ध्यान कर मानसोपचार से पूजन कर विधिवत अर्घ्यस्थापन कर 'ॐ आधारशक्तये नमः' से 'ह्रीं ज्ञानात्मने नमः' तक सामान्य पूजा पद्धति के अनुसार पीठ देवताओं का पूजन कर वामा आदि पीठ शक्तियों का पूजन करना चाहिए। (पीठपूजा की विस्तृत जानकारी के लिए देखिए तरङ्ग १९ श्लो० १०–१२ की टिप्पणी)।

फिर 'ॐ नमो भगवते सकलगुणात्मक शक्तियुक्तायानन्ताय योग पीठात्मने नमः' – इस पीठ मन्त्र से आसन देकर मूलमन्त्र से मूर्ति कल्पित कर ध्यान, आवाहन आदि उपचारों से ५ पुष्पाञ्जलि समर्पण पर्यन्त विधिवत पूजन कर आवरणपूजा करनी चाहिए।

आवरणपूजा विधि : आवरणपूजा में सर्वप्रथम कर्णिका में आग्नेय आदि ४ कोणों में, मध्य में तथा दिशाओं में निम्नलिखित मन्त्रों से षडङ्गपूजा करनी चाहिए :

क्लां ह्रां हृदयाय नमः। क्लीं ह्रीं शिरसे स्वाहा। क्लूं ह्रूं शिखायै वषट्। क्लैं ह्रैं कवचाय हुम्। क्लौं ह्रौं नेत्रत्रयाय वौषट्। क्लः ह्रः अस्त्राय फट्।

तत्पश्चात् भूपुर में पूर्व आदि अपनी अपनी दिशाओं में निम्नलिखित मन्त्रों से इन्द्र आदि लोकपालों का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ लं इन्द्राय नमः। ॐ रं अग्नये नमः। ॐ मं यमाय नमः। ॐ क्षं निर्ऋतये नमः। ॐ वं वरुणाय नमः। ॐ यं वायवे नमः। ॐ सं सोमाय नमः। ॐ हं ईशानाय नमः। ॐ आं ब्रह्मणे नमः। ॐ ह्रीं अनन्ताय नमः।

हेतयो वज्राद्याः ॥ १२९ ॥

और फिर भूपुर के बाहर पूर्व आदि दिशाओं में इन्द्र आदि दिक्पालों के पास निम्नलिखित मन्त्रों से वज्र आदि आयुधों का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ वं वज्राय नमः । ॐ शं शक्तये नमः । ॐ दं दण्डाय नमः । ॐ खं खड्गाय नमः । ॐ पां पाशाय नमः । ॐ अं अंकुशाय नमः । ॐ गं गदायै नमः । ॐ शूं शूलाय नमः । ॐ चं चक्राय नमः । ॐ पं पद्माय नमः ।

इस प्रकार आवरणपूजा करने के बाद धूप, दीप एवं नैवेद्य आदि उपचारों से स्वर्णाकर्षण भैरव का विधिवत पूजन करना चाहिए ।

सिद्धं मनुं जपेन्नित्यंत्रिशतीं मण्डलावधि ।
दारिद्र्यं दूरमुत्क्षिप्य जायते धनदोपमः ॥ १३० ॥
जपादिभिर्मनौ सिद्धे यन्त्रेभ्यः सिद्धिमाप्नुयात् ।
सुवर्णमेधते गेहे नैवारेःस्यात्पराभवः ॥ १३१ ॥

फल : इस रीति से सिद्ध मन्त्र का जो व्यक्ति ४९ दिन तक प्रतिदिन ३०० जप करता है, उसकी दरिद्रता दूर हो जाती है तथा वह कुबेर तुल्य वैभवशाली हो जाता है ।

जप आदि से मन्त्र सिद्ध हो जाने पर यन्त्रों से भी सिद्धि मिलती है । घर में सोना बढ़ता है तथा शत्रु से पराजय नहीं होती ।

इति श्री शुकदेव चतुर्वेदि विरचितायां सटिप्पण्यां मन्त्रमहोदधेः
मोहिनी व्याख्यायां विंशतिस्तरङ्गः



मण्डलमेकोनपञ्चाशद्दिनानि ॥ १३० ॥ एधतेवर्द्धते । अरेः शत्रोः सकाशात् पराभवोनस्यात् ॥ १३१ ॥ इतिश्रीमंत्रमहोदधिव्याख्यायां नौकायां महीधरनिर्मितायां यन्त्रमन्त्रादिकथनंनामविंशस्तरंग ॥ २० ॥

एकविंशति तरङ्ग

नित्यपूजाविधिं सर्वदेवसाधारणं ब्रुवे ।
ब्राह्मेमुहूर्ते उत्थाय कृत्वाशौचादिकं सुधीः ॥ १ ॥
परिधायाम्बरं शुद्धं मन्त्रस्नानं विधाय च ।
प्रविश्यदेवतागारं कुर्य्यात्संमार्जनादिकम् ॥ २ ॥
मङ्गलारार्तिकं कृत्वा निर्माल्यमपसारयेत् ।
दद्यात्पुष्पाञ्जलिं दन्तधावनाचमने अपि ॥ ३ ॥

प्रातः कृत्य : सब देवताओं की सामान्य नित्यपूजा ।वधि को बतलाता हूँ :

साधक ब्राह्ममुहूर्त में उठकर शौचादि से निवृत्ति होकर, शुद्ध वस्त्र पहिनकर, मन्त्रस्नान करने के बाद देवमन्दिर में जाकर सम्मार्जन आदि करे। फिर मङ्गला आरती कर निर्माल्य को हटा दे और फिर पुष्पाञ्जलि समर्पित कर दन्तधावन एवं आचमनार्थ जल चढ़ावे ।

नमस्कृत्यासने शुद्धे उपविश्य गुरुंस्मरेत् ।
शिरःस्थशुक्लपद्मस्थं प्रसन्नं द्विभुजाक्षिकम् ॥ ४ ॥
अहंब्रह्मास्मिसद्रूपं नित्यमुक्तं नशोकभाक् ।
गुरुदेवात्मनामित्थमैक्यं स्मृत्वार्चयेत तम् ॥ ५ ॥
त्रैलोक्यचैतन्यमयादिदेव श्रीनाथविष्णोभवदाज्ञयैव ।
प्रातःसमुत्थाय तवप्रियार्थं संसारयात्रामनुवर्तयिष्ये ॥ ६ ॥
जानामिधर्मं नचमे प्रवृत्तिर्जानाम्यधर्मं नचमे निवृत्तिः ।
केनापि देवेन हृदिस्थितेन यथानियुक्तोस्मि तथा करोमि ॥ ७ ॥
एतच्छ्लोकद्वयेनेष्टदेवतां प्रार्थयेद्बुधः ।
श्रीनाथविष्णोस्थाने तु कार्यऊहोन्यदैवतः ॥ ८ ॥

एवं मन्त्रजातं कथयित्वासर्वदेवतानां कामनाविशेषेणयन्त्राणिचनिरूप्यसर्वदेवसाधारणं पूजाविशेषं वक्तुमुपक्रमते । नित्येति ॥ १-३ ॥ द्वौभुजौद्वेअक्षिणीचयस्यस द्विभुजाक्षिकःतम् ॥ ४-७ ॥ श्रीनाथविष्णोइत्यस्यस्थलेविश्वेशशम्भोभवदाज्ञयैवेतिशिवोपासकेनभवानिदुर्गेइत्यंबोपासकेनोहोविधेयः ॥ ८ ॥

गुरु का स्मरण एवं इष्टदेव की प्रार्थना : (इष्टदेव को) प्रणाम कर शुद्ध आसन पर बैठकर गुरुदेव का स्मरण करना चाहिए। शिरस्थ श्वेतकमल पर आसीन, प्रसन्नवदन, दो भुजा एवं दो नेत्र वाले ब्रह्म का साक्षात् अनुभव एवं ज्ञान करने वाले, नित्यमुक्त एवं शोक रहित गुरुदेव का ध्यान करना चाहिए।

फिर गुरु, इष्टदेव एवं स्वयं में ऐक्य की भावना से उनका पूजन करना चाहिए तथा निम्नलिखित दो श्लोकों से साधक को इष्टदेव को प्रार्थना करनी चाहिए :

"त्रैलोक्य चैतन्यमयादिदेव श्रीनाथ विष्णो भवदाज्ञयैव।
प्रातः समुत्थाय तव प्रियार्थं संसार यात्रामनुवर्तयिष्ये॥
जानामि धर्मं न च मे प्रवृत्तिर्जानाम्यधर्मं न च मे निवृत्तिः।
केनापि देवेन हृदि स्थितेन यथा नियुक्तोऽस्मि तथा करोमि॥"

(प्रार्थना के उक्त श्लोक में) 'श्रीनाथविष्णो०' इस पद के स्थान पर शिवोपासक द्वारा 'विश्वेश शंभोभवदाज्ञयैव', शाक्त उपासक द्वारा भवानि दुर्गे भवदाज्ञयैव' तथा अन्य देवता-उपासक द्वारा उस देवता का सम्बुद्धन्त पद लगाकर बोलना चाहिए।

देवतागुणनामादिस्मरन्त्स्नातुमथो व्रजेत्।
स्नानमान्तरबाह्याख्यं द्विविधं कथितं बुधैः॥ ९॥

स्नान के भेद : इसके बाद इष्टदेव के नाम एवं गुणों का स्मरण करते हुए स्नान करने के लिए जाना चाहिए। विद्वानों ने आन्तर एवं बाह्य भेद से दो प्रकार का स्नान बतलाया है।

कोटिसूर्य्यप्रतीकाशं निजभूषायुधैर्युतम्।
शिरःस्थं संस्मरेद्देवं तत्पादोदकधारया॥ १०॥
विशंत्याब्रह्मरन्ध्रेण निजं देहं विशुद्धया।
प्रक्षाल्यान्तर्गतं पाप विरजो जायते नरः॥ ११॥

आन्तर स्नान विधि : करोड़ों सूर्य के समान तेजस्वी, अपने आभूषण एवं आयुधों से सुशोभित तथा शिरस्थ सहस्रदल पर विराजमान इष्टदेव का ध्यान कर ब्रह्मरन्ध्र से निःसृत उनके पादोदक की धारा से अपने शरीर एवं पापों को धोकर मनुष्य दिव्य हो जाता है।

एवं कृत्वान्तरं स्नानं स्नायाद्वेदोक्तमार्गतः।
अघमर्षणसूक्तं च स्मरेदन्तर्जले सुधीः॥ १२॥

॥ ९॥ आन्तरं स्नानमाह। कोटीति॥ १०-११॥ वेदोक्तमार्गतः स्वशाखोक्तविधिना-तत्तच्छाखानां भिन्नत्वान्नलिखितः। अघमर्षणसूक्तम् ऋतंचसत्यं चेत्यादिकानामृचां समूहविशेषः। अघमर्षणदृष्टमनुष्टुप्छंदरुकंभाववृत्तदेवताकम्॥ १२॥

वैदिक स्नान : इस प्रकार आन्तर स्नान करने के बाद वैदिक विधि से स्नान करना चाहिए और साधक को जल में अघमर्षण सूक्त का जप करना चाहिए।

टिप्पणी : स्नान की वैदिक विधि : सर्वप्रथम हाथ में जल लेकर 'अद्येत्यादि० ममात्मनः श्रुति स्मृति पुराणोक्त फल प्राप्त्यर्थं मम इह जन्मनि जन्मान्तरे वा कायिक वाचिक मानसिक सांसर्गिक ज्ञाताज्ञात-स्पर्शास्पर्श-भुक्ताभुक्त पीतापीतादिसकल पातक निरासपूर्वकमासन-भोजन-शयन-गमानादिषु मिथ्याचारविहारादि दोष निरसन द्वारा श्री परमेश्वर प्रीत्यर्थं अमुक तीर्थे, नद्यां, तडागे वा प्रातःस्नानमहं करिष्ये-यह संकल्प कर समस्त तीर्थों को प्रणाम कर नाभि पर्यन्त जल में खड़ा होकर निम्न लिखित मन्त्र से तीर्थों का आवाहन करना चाहिए, यथा – 'ॐ उरु ॐ हि राजा वरुणश्चकार सूर्य्याय पन्था मन्नवेतवाऽउ। अपदे पादाप्प्रतिधातवे करतापवक्ता हृदयात्विधश्चित्। नमो वरुणाभिष्ठ्टितोत्वरुणस्य पाश।" फिर "ॐ' की आवृत्ति कर 'ॐ अश्वक्रान्ते रथाक्रान्ते विष्णुक्रान्ते वसुन्धरे। मृत्तिके हर मे पापं यन्मया दुष्कृतं कृतम्" – इस मन्त्र से अंगों में मिट्टी लगाकर निम्नलिखित मन्त्रों से मार्जन करना चाहिए :

ॐ आपो हिष्ठ्ठा मयो भुवः। ॐ तान ऊर्ज्जे दधात नः। ॐ महेरणाय चक्षसे। ॐ यो वः शिवतमो रसः। ॐ तस्यभाजपते ह नः। ॐ उशतीरिव मातरः। ॐ तस्मा अरंग मामवः। ॐ यस्य क्षयाय जिन्वथ। ॐ आपो जन यथा च नः।

फिर सूर्याभिमुख होकर जल में स्नान करना चाहिए। तत्पश्चात् कुशाओं से निम्नलिखित मन्त्र से सब अङ्गों का मार्जन करना चाहिए :

ॐ चित्पतिर्मा पुनातु वाकपतिर्मा पुनातु देवो मा सविता पुनात्वच्छिद्रेण पवित्रेण सूर्यस्य रश्मिभिः तस्य ते पवित्रपते पवित्र पूतस्थ यत्काम पुनेतच्छकेयम्।

ॐ पुनातु ३।

तदनन्तर जल में डुबकी लगाकर ३ बार प्रणव या अघमर्षण सूक्त का पाठ करना चाहिए – यथा :

ॐ ऋतञ्च सत्यं चाभीद्धात्तपसोऽध्यजायत ततो रात्र्यजायत ततः समुद्रो अर्णवः समुद्रादर्णवादधि सम्वत्सरो अजायत अहोरात्राणि विदधद्विश्वस्य मिषतो वशी। सूर्या चन्द्रमसौ धाता यथा पूर्वमकल्पयद् दिवञ्च पृथिवीञ्चान्तरिक्षमथो स्वः। और फिर 'ॐ नमो नारायणाय' – इस मन्त्र से ३ बार पुनः डुबकी लगानी चाहिए।

मन्त्रस्नानं ततः कुर्य्यात्तत्प्रकारोधुनोच्यते।
प्राणानायम्यमूलेन कृत्वा न्यासं षडङ्गकम्॥ १३॥

॥ १३ ॥

आदित्यमण्डलात्तीर्थान्याह्वयेत्सृणिमुद्रया ।
मन्त्रत्रयेणाम्बुमध्ये विलिखेत्तन्मनुत्रयम् ॥ १४ ॥
ब्रह्माण्डोदरतीर्थानि करैःस्पृष्टानि ते रवे ।
तेन सत्येन मे देव तीर्थं देहि दिवाकर ॥ १५ ॥
गङ्गे च यमुने चैव गोदावरि सरस्वति ।
नर्मदे सिन्धुकावेरि जलेस्मिन्सन्निधिं कुरु ॥ १६ ॥
आवाहयामि त्वां देवि स्नानार्थमिहसुन्दरि ।
एहि गङ्गे नमस्तुभ्यं सर्वतीर्थसमन्विते ॥ १७ ॥
ततो वह्नितिबीजेन योजयेत्तानि तज्जले ।
अस्त्रेणकौलौमण्डलानि तत्र संचिन्तयेत्पुनः ॥ १८ ॥
मन्त्रयेत्तेन मन्त्रेण रविवारं ततो जलम् ।
कवचेनावगुंठ्याथ रक्षेदस्त्रेण तत्पुनः ॥ १९ ॥
मूलमन्त्रेणेशवारमभिमन्त्र्य नमेज्जलम् ।
मन्त्रेण वक्ष्यमाणेन देवतां मनसि स्मरन् ॥ २० ॥
आधारः सर्वभूतानां विष्णोरतुलतेजसः ।
तद्रूपाश्चततोजाताश्चापस्ताः प्रणमाम्यहम् ॥ २१ ॥
मज्जेज्जलेस्मरंस्तत्रमूलं वैदेवतां तथा ।
उन्मज्ज्यसिचेत्कं सप्तकृत्वः कलशमुद्रया ॥ २२ ॥
मूलेनाथ चतुर्मन्त्रैरभिषिंचेन्निजां तनुम् ।
लिख्यन्तेतेऽथ चत्वारो मन्त्राः शङ्करभाषिताः ॥ २३ ॥
सिसृक्षोर्निखिलं विश्वं मुहुः शुक्रं प्रजापतेः ।
मातरःसर्वभूतानामापो देव्यः पुनंतुः माम् ॥ २४ ॥
अलक्ष्मीं मलरूपां यां सर्वभूतेषु संस्थिताम् ।
क्षालयन्ति निजस्पर्शादापो देव्यः पुनन्तु माम् ॥ २५ ॥
यन्मे केशेषु दौर्भाग्यं सीमन्ते यच्चमूर्द्धनि ।
ललाटे कर्णयोरक्ष्णोरापस्तद्घ्नन्तु वो नमः ॥ २६ ॥

सृणिमुद्रां कुशमुद्राप्रं क्ता ॥ १४ ॥ ब्रह्मांडेत्यादिश्लोकत्रयं पुराणोक्तं तीर्थावाहनमन्त्राः ॥ १५-१७ ॥ वह्नौः चन्द्रः ॥ १८ ॥

तेनमन्त्रेणवंइतिबीजेन । कवचेनहुंइतिबीजेन । अस्त्रेणफडितिमन्त्रेण ॥ १९ ॥ ईशवारमेकादशवारं वक्ष्यमाणेनआधारइत्यादिना । देवताकृतिंध्यानोक्ताम् । कं शिरः । कलशमुद्रयाकुम्भमुद्रया । हस्तद्वयेनसावकाशिकमुष्टिकरेणकुम्भमुद्रा ॥ २०-२६ ॥

आयुरारोग्यमैश्वर्य्यमरिपक्षक्षयः सुखम् ।
सन्तोषःक्षान्तिरास्तिक्यं विद्याभवतु वो नमः ॥ २७ ॥
विप्रपादोदकं पीत्वा शालग्रामशिलाजलम् ।
शंखेन त्रिःपरिभ्राम्य प्रक्षिपेन्निजमस्तके ॥ २८ ॥

मन्त्रस्नान : इसके बाद मन्त्रस्नान करना चाहिए, उसकी विधि को बतलाता हूँ – मूलमन्त्र से प्राणायाम एवं षडङ्गन्यास कर अंकुश मुद्रा द्वारा निम्नलिखित ३ मन्त्रों से जल में सूर्यमण्डल से तीर्थों का आवाहन करना चाहिए। वे तीनों मन्त्र इस प्रकार हैं, यथा :

ॐ ब्रह्माण्डोदर तीर्थानि करैः स्पृष्टानि ते रवे। तेन सत्येन मे देव तीर्थं देहि दिवाकर ॥ ॐ गङ्गे च यमुने चैव गोदावरि सरस्वति । नर्मदे सिन्धु कावेरि जलेऽस्मिन् संनिधिं कुरु ॥ ॐ आवाहयामि त्वां देवी स्नानार्थमिह सुन्दरि । एहि गंगे नमस्तुभ्यं सर्वतीर्थ समन्विते ।

तत्पश्चात् 'वं' यह सुधा बीज उनके जल में मिलाना चाहिए। फिर जल में अग्नि, सूर्य एवं चन्द्रमा के मण्डलों का ध्यान करना चाहिए। और उसी मन्त्र से १२ बार जल को अभिमन्त्रित करना चाहिए। फिर कवच (हुं) से अवगुण्ठन कर अस्त्र (फट्) से संरक्षण करना चाहिए। तत्पश्चात् मूलमन्त्र से जल को १०० बार अभिमन्त्रित करना चाहिए।

तदनन्तर वक्ष्यमाण मन्त्र से मन में देवता का स्मरण करते हुए जल में डुबकी लगानी चाहिए, यथा :

"ॐ आधारः सर्वभूतानां विष्णोरतुलतेजसः। तद्रूपाश्च ततो जाताश्चापस्ताः प्रणमाम्यहम् ॥"

फिर जल में इष्टदेव एवं मूलमन्त्र का स्मरण करना चाहिए। जल से ऊपर आकर कलश मुद्रा से ७ बार अपने मस्तक का अभिषेक करना चाहिए।

फिर मूलमन्त्र एवं वक्ष्यमाण ४ मन्त्रों से अपने शरीर का अभिषेक करना चाहिए। अब भगवान् शंकर के द्वारा उपदिष्ट उन चारों मन्त्रों को लिखता हूँ :

ॐ विसृक्षोविखिलं विश्वं मुहुः शुक्रं प्रजापतेः ।
मातरः सर्वभूतानामापो देव्यः पुनंतु माम् ॥ १ ॥
अलक्ष्मीं मलरूपायां सर्वभूतेषु संस्थिताम् ।
क्षालयन्ति निजस्पर्शादापो देव्यः पुनन्तु माम् ॥ २ ॥

॥ २७-२८ ॥

यन्मे केशेषु दौर्भाग्यं सीमन्ते यच्चमूर्द्धनि ।
ललाटे कर्णयोरक्ष्णोरापस्तद्घ्नन्तु वो मम ॥ ३ ॥
आयुरारोग्यमैश्वर्यमरिपक्षक्षयः सुखम् ।
सन्तोषः क्षान्तिरास्तिक्यं विद्या भवतु वो नमः ॥ ४ ॥

फिर विप्र का चरणोदक या शालिग्राम का चरणामृत पीकर शंख से ३ बार जल घुमाकर अपने शिर पर डालना चाहिए ।

ततो देवान्मनुष्यांश्चसंक्षेपात्तर्पयेत्पितॄन् ।
वस्त्रं संपोड्य संक्षाल्य सक्थिनी वाससी धरेत् ॥ २९ ॥

स्नानाङ्गतर्पण : फिर देव, मनुष्य एवं पितरों का संक्षेप से तर्पण करना चाहिए । (और फिर) वस्त्रों को धोकर घुटने से नीचे तक के वस्त्र पहिनने चाहिए ।

टिप्पणी : तर्पण विधि : स्नान करने के बाद नाभिमात्र जल में खड़े होकर तर्पण करना चाहिए, यथा :

ॐ ब्रह्मादयो देवास्तृप्यन्ताम् । ॐ गौतमादयो ऋषय ॥

इन मन्त्रों से १–१ अञ्जलि देकर 'ॐ सनकादयः मनुस्यास्तृप्यन्ताम्' – इस मन्त्र से २ अञ्जलि जल देना चाहिए । और फिर

ॐ कव्यवाडनलादयो देवपितरस्तृप्यन्ताम् । ॐ अस्मद् पितृपितामह प्रपितामहास्तृप्यन्ताम् । ॐ अस्मद् मातामहप्रमातामह वृद्धप्रमातामहास्तृप्यन्ताम् । ॐ आब्रह्मस्तम्बपर्यन्तं सर्वं जगन्तृप्यताम् ।

इन मन्त्रों से ३–३ अञ्जलि जल देना चाहिए ।

तीर्थाभावात्स्वसदने स्नायादुष्णेन वारिणा ।
अल्पा एव प्रवक्तव्यास्तत्रमन्त्रा यथोचिताः ॥ ३० ॥
हस्तयोरपआदाय कुर्य्यात्तत्राघमर्षणम् ।
भस्मनागोरजोभिर्वा स्नायान्मन्त्रेण वाक्षमः ॥ ३१ ॥

घर में स्नान की विधि : तीर्थ के अभाव में अपने घर में गर्म जल से स्नान करना चाहिए । स्नान करते समय यथोचित अल्प मन्त्र ही बोलने चाहिए तथा हाथ में जल लेकर अघमर्षण करना चाहिए ।

ज्वर आदि रोगों के कारण असमर्थ व्यक्ति को भस्म या गोरज से ही स्नान कर लेना चाहिए ।

देवमनुष्यान्पितॄंश्चसंक्षेपात्तर्पयेत्-ब्रह्मादयोदेवास्तृप्यंताम्-सनकादया मनुष्यास्तृप्यंताम्-कव्यवाडनलादयः पितरस्तृप्य ताम्-तर्पणार्द्राअस्मत्पितरस्तृप्यन्तामिति संक्षेपतर्पणम् । सक्थिनीऊरू ॥ २९-३० ॥ अक्षमोरोगादिना ॥ ३१ ॥

टिप्पणी : घर में स्नान की विधि : 'ॐ अघेत्यादि देशकालौ संशकीर्त्य शरीर शुद्धयर्थं गुहे उष्णोदकेन प्रातःस्नानमह करिष्ये' – ऐसा संकल्प करने के बाद पात्र में ठण्डे जल में गर्म जल मिलाकर उसमें निम्नलिखित मन्त्र से तीर्थों का आवाहन करना चाहिए ।

ॐ गङ्गे च यमुने चैव गोदावरि सरस्वति ।
नर्मदे सिन्धु कावेरि जलेऽस्मिन् सन्निधि कुरु ॥ तत्पश्चात् :

ॐ आपो नारा इति प्रोक्तास्ता एतस्यायनं पुनः । तस्मान्नारायणं देवं स्नानकाले स्मराम्यहम् ॥

ॐ नमो नारायण :

यह बोलते हुए हरिनाम स्मरणपूर्वक स्नान करना चाहिए ।

फिर 'आपो हिष्ठा मयो भुवः०' इत्यादि ३ मन्त्रों से अङ्गों का प्रोक्षण तथा गायत्री मन्त्र से १० बार सब अङ्गों का मार्जन करने के बाद हाथ में जल लेकर 'ॐ ऋतञ्च सत्यं चाभीद्धात्तपसो०' मन्त्र से अघमर्षण करना चाहिए ।

तत आचम्य पीठस्थस्तिलकं रचयेत्सुधीः ।
केशवाद्यभिधानैस्तु स्थानेषु द्वादशस्वपि ॥ ३२ ॥
ललाटोदरहृत्कण्ठदक्षपार्श्वांसके ततः ।
वामपार्श्वांसकर्णे च पृष्ठदेशे ककुद्यपि ॥ ३३ ॥
ललाटे तु गदां कुर्य्याद्धृदये नन्दकं पुनः ।
शंखं चक्रं भुजद्वन्द्वे शार्ङ्गबाणं च मूर्द्धनि ॥ ३४ ॥
इत्थं तु वैष्णवःकुर्य्याच्छैवःकुर्य्यात्त्रिपुंड्रकम् ।
अग्निहोत्रोत्थितं भस्मादायाग्निरितिमन्त्रतः ॥ ३५ ॥
अभिमन्त्र्य त्र्यम्बकेन कुर्य्यात्पंचत्रिपुंड्रकम् ।
क्रमात्तत्पुरुषाघोरसद्योवामेशनामभिः ॥ ३६ ॥
फालांसोदरवक्षस्तुऋग्भिस्तेषामथापि वा ।
कृत्वा संध्यां स्वशाखोक्तां मन्त्रसंध्यां समाचरेत् ॥ ३७ ॥

॥ ३३ ॥ नन्दकंखड्गम् ॥ ३४ ॥ अग्निरितिमन्त्रेण भस्मादायगृहीत्वा । सयथा–अग्निरितिभस्मवायुरितिभस्मजलमितिभस्मस्थलमितिभस्मव्योमेतिभस्मसर्वं हवाइदं भस्ममनएतानिचक्षूंषि तस्माद्व्रतमेतत्पाशुपतं यद्भस्मनाङ्गानिसंस्पृशेदिति ॥ ३५ ॥ तनस्त्र्यंबकं यजामहइतिपूर्वोक्त मन्त्रेणाभिमन्त्र्य क्रमाद्भालादिषुतत्पुरुषादिनामभिः पञ्चत्रिपुण्ड्रकं कुर्यात् । यथा–तत्पुरुषायनमोभाले । अघोरायनमोदक्षांसे । सद्योजातायनमोवामांसे । वामदेवायनमोजठरे । ईशानायनमोवक्षसि । यद्वातत्पुरुषादिनामस्थलेतत्पुरुषायविद्महे० अघोरेभ्यः० सद्योजातंप्रपद्यामि० वामदेवायनमः ईशानःसर्वविद्याना० इति पञ्चभिरेवमन्त्रैस्त्रिपुण्ड्रकाणिविधेयानि ॥ ३६ ३७ ॥

वैष्णव एवं शैवों के तिलक : इसके बाद आसन पर बैठकर आचमन कर साधक केशव आदि नामों से १. ललाट, २. उदर, ३. हृदय, ४. कण्ठ, ५. दक्षिणपार्श्व, ६. दहिना कन्धा, ७. वामपार्श्व, ८. बाँया कन्धा, ९. दाहिना कान, १०. बाँया कान, ११. पीठ एवं १२. ककुद – इन १२ स्थानों पर तिलक लगाने चाहिए। ललाट पर गदा, हृदय पर खड्ग, दोनों भुजाओं पर शंख एवं चक्र तथा कपाल पर धनुष बाण जैसी आकृति के तिलक बनाने चाहिए। वैष्णव को इस रीति से तिलक लगाने चाहिए।

शैव को त्रिपुण्ड्र लगाना चाहिए। 'अग्निरिति भस्म वायुरिति भस्म जलमिति भस्म स्थलमिति भस्म व्योमेति भस्म सर्वं हवा इदं भस्म मन एतानि चक्षूंषि तस्माद्व्रत-मेतत्पाशुपतं यद्भस्मनांगानानि संस्पृशेद्" – इस मन्त्र से अग्निहोत्र की भस्म लेकर "ॐ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्द्धनम्। उर्व्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात् ॥" – इस मन्त्र से अभिमन्त्रित कर 'ॐ तत्पुरुषाय नमः अघोराय नमः, सद्योजाताय नमः, वामदेवाय नमः तथा ईशानाय नमः' – इन मन्त्रों से क्रमशः ललाट, दक्षिण स्कन्ध, वामस्कन्ध, पेट एवं वक्षस्थल पर पाँच त्रिपुण्ड्र लगाने चाहिए।

अथवा :

ॐ तत्पुरुषाय विद्महे महादेवाय धीमहि। तन्नो रुद्रः प्रचोदयात् ॥

ॐ अघोरेभ्योऽथ घोरेभ्यो घोरघोरतरेभ्यः। सर्वेभ्यः सर्वसर्वेभ्यो नमस्तेऽस्तु रुद्ररूपेभ्यः ॥

ॐ सद्योजातं प्रपद्यामि सद्योजाताय वै नमः। भवेऽभवेऽनादि भवे भजस्व मां भवोद्भवाय नमः ॥

ॐ वामदेवाय नमो ज्येष्ठाय नमो रुद्राय नमः कालाय नमः कलविकरणाय नमो बल प्रमथनाय नमः सर्वभूत दमनाय नमः मनोन्मनाय नमः ॥

ॐ ईशानः सर्वविद्यानामीश्वरः सर्वभूतानां ब्रह्माधिपतिर्ब्रह्मणोऽधिपतिर्ब्रह्मा शिवो मेऽस्तु सदा शिवोम् ॥

इन पाँचों मन्त्रों से क्रमशः ललाट दोनों दण्ड, पेट एवं वक्ष पर त्रिपुण्ड्र लगाने चाहिए।

फिर अपनी शाखा के अनुसार वैदिक सन्ध्या करके मन्त्रसन्ध्या करनी चाहिए।

प्राणायामषडङ्गे च कृत्वादाय करेजलम्।
त्रिर्जप्त्वा मूलमन्त्रेण त्वाचमेत्त्रिर्जपन्मनुम् ॥ ३८ ॥
पुनर्दक्षकरेणाम्भो गृहीत्वा वामहस्ततः।
निधाय तस्माच्च्योतद्भिर्बिन्दुभिः सप्रधातनुम् ॥ ३९ ॥

मन्त्रसध्यामाह। प्राणायामेति ॥ ३८-३९ ॥

संमार्ज्य मूलमन्त्रेणावशिष्टं तत्पुनर्जलम् ।
दक्षहस्ते समादाय नासिकान्तिकमानयेत् ॥ ४० ॥
इडयान्तः समाकृष्य तद्धौतैः पापसञ्चयैः ।
कृष्णवर्णं पिंगलयारेचितं प्रविचिंत्यतत् ॥ ४१ ॥
क्षिपेदस्त्रेण पुरतःकल्पितेभिदुरोपले ।
अघमर्षणमेतद्धि निखिलाघनिवारणम् ॥ ४२ ॥
पुनरञ्जलिनादाय जलमर्घ्यं दिशेत्ततः ।
त्रिवारं मूलमन्त्रान्ते षोडशार्णमनुं जपन् ॥ ४३ ॥
रविमण्डलसंस्थाय देवायार्घ्यं पदं वदेत् ।
कल्पयामीतिदद्याच्चमन्त्रोयं षोडशाक्षरः ॥ ४४ ॥
सूर्य्यमण्डलगं ध्यायन्निष्टदेवमनन्यधीः ।
प्रजपेन्मन्त्रगायत्रीं मूलं चाष्टोत्तरं शतम् ॥ ४५ ॥
अष्टाविंशतिवारं वा तर्पयेत्तावदम्भसि ।
दत्त्वार्घ्यं दिननाथाय तीर्थं संहारमुद्रया ॥ ४६ ॥
विसृज्यार्कं लोकपालान्नत्वा देवस्तुतिं पठन् ।
यागस्थानं तथागत्य प्रक्षाल्यांघ्री तथाचमेत् ॥ ४७ ॥
गार्हपत्यादिकानग्नीन् हुत्वोपस्थायतानपि ।
देवतागारमागत्य समाचामेद्यथाविधि ॥ ४८ ॥

मन्त्रसन्ध्या : प्राणायाम एवं षडङ्गन्यास करने के बाद हाथ में जल लेकर मूलमन्त्र से ३ बार आचमन करना चाहिए ।

फिर दाहिने हाथ से जल लेकर बाँये हाथ में रखकर (और दाहिना हाथ उसपर ढँककर) ३ बार मूलमन्त्र का जप करते हुए (तत्त्वमुद्रा द्वारा) टपकते हुए जल-बिन्दुओं से ७ बार शरीर का मार्जन कर शेष जल को दाहिने हाथ में लेकर नासिका के पास ले जाना चाहिए (फिर उस जल को तेजोरूप ध्यान कर) इडानाड़ी से उसे खींचकर उससे देहगत पापों को धोकर उसी जल को कृष्णवर्ण पापपुरुष के साथ

॥ ४०-४१॥ भिदुरोपले वज्रपाषाणे । पापपुरुषंजलं क्षिपेत् । एतदघमर्षणम् ॥ ४२ ॥
मूलम त्रिसत्यवारंरविमण्डलसंस्थायदेवायार्घ्यं कल्पयामीतिषोडशार्णमन्त्रंजपन् देवाय-र्घ्यंदद्यात् ॥ ४३ ४५ ॥
संहारमुद्रयातीर्थं विसृज्यर्द्धहस्तौ विमुखौसंयोज्यतयोरंगुलीः परस्परसंश्लिष्टाः कृत्वाहस्तौसंसुखं कुर्यादितिसंहारमुद्रा ॥ ४६-४७ ॥ सायमग्निहोत्रेआवसथ्येचतयोर्होममुपस्थानं चकृत्वादेव जागृहमागत्यवैष्णवाचमनं कुर्यात् ॥ ४८ ॥

पिङ्गला द्वारा निकालने की भावना कर सामने कल्पित वज्रशिला पर 'फट्' मन्त्र से फेंकना चाहिए। यह अघमर्षण समस्त पापों को दूर कर देता है।

तत्पश्चात् अञ्जलि में जल लेकर ३ बार मूलमन्त्र और उसके बाद षोडशार्णमन्त्र बोलते हुए अर्घ्य देना चाहिए।

'रविमण्डल संस्थाय देवायार्घ्यं' ये बोलकर 'कल्पयामि' – यह पद बोलना चाहिए। यह षोडशार्णमन्त्र है, इससे अर्घ्य देना चाहिए।

(फिर) रविमण्डलगत इष्टदेव का एकाग्रचित्तपूर्वक ध्यान करते हुए गायत्रीमन्त्र तथा मूलमन्त्र का १०८ बार जप करना चाहिए और २८ बार जल से तर्पण करना चाहिए।

तब भगवान् सूर्य को अर्घ्य देकर संहार मुद्रा से तीर्थ का विसर्जन कर सूर्य एवं लोकपालों को प्रणाम कर इष्टदेव की स्तुति करते हुए यज्ञशाला में आकर पैर धोकर आचमन करना चाहिए। फिर अग्निहोत्र एवं उपस्थान कर मन्दिर में आकर विधिवत आचमन करना चाहिए।

टिप्पणी : विविध देवताओं के गायत्रीमन्त्र :

विष्णु गायत्री : ॐ त्रैलोक्य मोहनाय विद्महे कामदेवाय धीमहि। तन्नो विष्णुः प्रचोदयात्॥

नारायण गायत्री : ॐ नारायणाय विद्महे वासुदेवाय धीमहि। तन्नो विष्णुः प्रचोदयात्॥

नृसिंह गायत्री : ॐ वज्रनखाय विद्महे तीक्ष्ण दंष्ट्राय धीमहि। तन्नो नृहरिः प्रचोदयात्॥

हयग्रीव गायत्री : ॐ वाणीश्वराय विद्महे हयग्रीवाय धीमहि। तन्नो हंसः प्रचोदयात्॥

गोपाल गायत्री : ॐ कृष्णाय विद्महे दामोदराय धीमहि। तन्नो विष्णुः प्रचोदयात्॥

राम गायत्री : ॐ दाशरथाय विद्महे सीतावल्लभाय धीमहि। तन्नो रामः प्रचोदयात्॥

शिव गायत्री : ॐ तत्पुरुषाय विद्महे महादेवाय धीमहि। तन्नो रुद्रः प्रचोदयात्॥

दक्षिणामूर्ति गायत्री : ॐ दक्षिणामूर्तये विद्महे ध्यानस्थाय धीमहि। तन्नोधीशः प्रचोदयात्॥

गणेश गायत्री : ॐ तत्पुरुषाय विद्महे वक्रतुण्डाय धीमहि। तन्नो दन्ती प्रचोदयात्॥

सूर्य गायत्री : ॐ आदित्याय विद्महे मार्तण्डाय धीमहि । तन्नः सूर्यः प्रचोदयात् ॥

कामदेव गायत्री : ॐ कामदेवाय विद्महे पुष्पबाणाय धीमहि । तन्नोऽनङ्गः प्रचोदयात् ॥

शक्ति गायत्री : ॐ संमोहिन्यै विद्महे विश्वजन्यै धीमहि । तन्नः शक्तिः प्रचोदयात् ॥

त्वरिता गायत्री : ॐ त्वरितायै विद्महे महानित्यायै धीमहि । तन्नः देवी प्रचोदयात् ॥

बालाभैरवी गायत्री : ऐं वागीश्वर्यै विद्महे क्लीं कामेश्वर्यै धीमहि । सौस्तन्नः शक्तिः प्रचोदयात् ॥

त्रिपुरा गायत्री : ऐं त्रिपुरा देव्यै विद्महे क्लीं कामेश्वर्यै धीमहि । सौस्तन्नः क्लिन्ने प्रचोदयात् ॥

भैरवी गायत्री : ॐ त्रिपुरायै विद्महे महाभैरव्यै धीमहि । तन्नो देवी प्रचोदयात् ॥

दुर्गा गायत्री : ॐ महादेव्यै विद्महे दुर्गादेव्यै धीमहि । तन्नो देवी प्रचोदयात् ॥

जयदुर्गा गायत्री : ॐ नारायण्यै विद्महे दुर्गा देव्यै धीमहि । तन्नो गौरी प्रचोदयात् ॥

लक्ष्मी गायत्री : ॐ महालक्ष्मी च विद्महे विष्णुपत्नीञ्च धीमहि । तन्नो लक्ष्मी प्रचोदयात् ।

सरस्वती गायत्री : ॐ वाग्देव्यै च विद्महे कामराजाय धीमहि । तन्नो देवी प्रचोदयात् ॥

भुवनेश्वरी गायत्री : ॐ नारायण्यै विद्महे भुवनेश्वर्यै धीमहि । तन्नो देवी प्रचोदयात् ।

अन्नपूर्णा गायत्री : ॐ भगवत्यै विद्महे माहेश्वर्यै धीमहि । तन्नोऽन्नपूर्णे प्रचोदयात् ॥

महिषमर्दिनी गायत्री : ॐ महिषमर्दिन्यै विद्महे दुर्गादेव्यै धीमहि । तन्नो घोरे प्रचोदयात् ॥

छिन्नमस्ता गायत्री : ॐ वैरोचिन्यै विद्महे छिन्नमस्तायै धीमहि । तन्नो देवी प्रचोदयात् ॥

कालिका गायत्री : ॐ कालिकायै विद्महे श्मशान वासिन्यै धीमहि । तन्नो देवी प्रचोदयात् ॥

तारा गायत्री : ॐ एकजटायै विद्महे महोग्रायै धीमहि । तन्नो तारे प्रचोदयात् ॥

गरुड़ गायत्री : ॐ गरुड़ाय विद्महे सुपर्णाय धीमहि । तन्नो गरुड़ः प्रचोदयात् ॥

केशवनारायणमाधवैः पीत्वा जलं त्रिधा ।
करौ गौविन्दविष्णुभ्यां क्षालयेन्मधुसूदनात् ॥ ४९ ॥
त्रिविक्रमेण चाप्योष्ठौ वामनाच्छ्रीधरान्मुखम् ।
हृषीकेशेन हस्तं चचरणौ पद्मनाभतः ॥ ५० ॥
दामोदरेण मूर्द्धानं प्रोक्ष्य संकर्षणादिकान् ।
मुखादिषु करांगुल्या वेदादिप्रीणने न्यसेत् ॥ ५१ ॥
मुखे संकर्षणं वासुदेवप्रद्युम्नकौ नसोः ।
अनिरुद्धं च पुरुषोत्तममक्ष्णोः प्रविन्यसेत् ॥ ५२ ॥
अधोक्षजं नृसिंहं चकर्णयोर्नाभितोच्युतम् ।
जनार्दनं हृदि न्यस्येदुपेन्द्रमपि मूर्द्धनि ॥ ५३ ॥
अंसयोश्चहरिं विष्णुं वैष्णवाचमनंत्विदम् ।
केशवाद्याश्चतुर्थ्यन्ता नमोन्ताःप्रणवादिकाः ॥ ५४ ॥
आस्ये नसोः प्रदेशिन्याऽनामयानेत्रकर्णयोः ।
कनिष्ठया नाभिदेशंगुष्ठः सर्वत्रसंयुतः ॥ ५५ ॥
तलेन हृदयेन्यस्येत्सर्वाभिर्मस्तकंसयोः ।
आत्मविद्याशिवैस्तत्त्वैः स्वाहान्तैः प्रपिबेदपः ॥ ५६ ॥
हांहींहूंआदिमैः शैवे शाक्तेवाग्बीजपूर्वकैः ।
क्षालनादिकमंगुल्यास्पर्शोपि स्यादमन्त्रकः ॥ ५७ ॥

आचमन विधि : ॐ केशवाय नमः, ॐ नारायणाय नमः, ॐ माधवाय नमः, —इन मन्त्रों से क्रमशः ३ बार जलपीकर (आचमन कर) 'ॐ गोविन्दाय नमः,

---

तदेवाह । केशवेति । ॐ केशवायनमः नाराणायनमः माधवायनमः इतित्रिर्जलंपीत्वा गोविंदायनमः विष्णवेनमइति द्वाभ्यां करौप्रक्षाल्य मधुसूदनायनमः त्रिविक्रमायनम इतिद्वरोष्ठौप्रक्षाल्य वामनायनमः श्रीधरायनमः इतिमुखं हृषीकेशायनमः इतिदक्षहस्तं पद्मनाभायनमइति पादौचप्रक्षाल्य ॥ ४९-५० ॥

दामोदरायनमः इतिशिरः प्रोक्ष्य संकर्षणायनमइतिमुखं वासुदेवायनमः प्रद्युम्नायनम-इतिनासेचांगुष्ठप्रदेशिनीभ्यांस्पृष्ट्वा अनिरुद्धाय० पुरुषोत्तमाय० इत्यक्षिणी ॥ ५१-५२ ॥ अधोक्षजाय० नृसिंहाय० इतिकर्णौचांगुष्ठानामिकाभ्यांस्पृशेत् । अच्युताय० इतिअंगुष्ठक-निष्ठाभ्यांनाभिम् ॥ ५३-५५ ॥

जनार्दनाय० इतिकरतलेनहृदयम् उपेन्द्राय० इतिशिरः इरये० कृष्णाय० इत्यं-सौचसर्वाभिःस्पृशेत् । इतिवैष्णवाचमनम् । शैवाचमनमाह । आत्मेति । हांआत्मतत्त्वाय-स्वाहा हींविद्यातत्त्वायस्वाहा हूंशिवतत्त्वायस्वाहेति त्रिर्जलंपीत्वा करक्षालनाद्यं सस्पर्शातं ऊर्ध्वांगुलीभिस्तूष्णीमेवकुर्यात् । इतिशैवम् । शाक्तेतुहां इत्यादिस्थानेवाग्बीजमेव ॥ ५६-५७ ॥

ॐ विष्णवे नमः', से हाथ धोने चाहिए। 'ॐ मधुसूदनाय नमः, ॐ त्रिविक्रमाय नमः', से होट, 'ॐ वामनाय नमः, ॐ श्रीधराय नमः', से मुख, 'ॐ हृषीकेशाय नमः', से हाथ तथा 'ॐ पद्मनाभाय नमः', से पैर धाने चाहिए।

'ॐ दमोदराय नम' से मस्तक का प्रोक्षण कर संकर्षणादि के चतुर्थ्यन्त रूपों के पहिले वेदादि (ॐ) तथा अन्त में 'नमः' लगाकर हाथ को अंगुलियों से मुख आदि अंगों पर क्रमशः न्यास करना चाहिए। (यथा) 'ॐ संकर्षणाय नमः' से मुख पर, 'ॐ वासुदेवाय नमः, ॐ प्रद्युम्नाय नमः' से दोनों नासिकाओं पर, 'ॐ अनिरुद्धाय नमः ॐ पुरुषोत्तमाय नमः' से दोनों नेत्रों पर, 'ॐ अधोक्षजाय नमः, ॐ नृसिंहाय नमः' से दोनों कानों पर' 'ॐ अच्युताय नमः' से नाभि पर, 'ॐ जनार्दनाय नमः' से हृदय पर, 'ॐ उपेन्द्राय नमः' से शिर पर तथा 'ॐ हरये नमः, ॐ विष्णवे नमः' से दोनों कन्धाओं पर न्यास करना चाहिए। यह वैष्णव आचमन की विधि है।

केशवादि के चतुर्थ्यन्त नामों के प्रारम्भ में प्रणव तथा अन्त में 'नमः' लगाकर बने मन्त्रों से मुख एवं नासिका पर प्रदेशिनी से, नेत्र एवं कानों पर अनामिका से, नाभि पर कनिष्ठका से सर्वत्र अंगूठा मिलाकर न्यास करना चाहिए। हृदय पर हथेली से और मस्तक पर सब अंगुलियों से न्यास करना चाहिए।

'हां आत्मतत्त्वाय स्वाहा, हीं विद्यातत्त्वाय स्वाहा, हूं शिवतत्त्वाय स्वाहा' इन मन्त्रों से शैवों को ३ बार आचमन करना चाहिए। तथा 'ऐं आत्मतत्त्वाय स्वाहा, ह्रीं विद्यातत्त्वाय स्वाहा, क्लीं शिवतत्त्वाय स्वाहा' मन्त्रों से शाक्तों को आचमन करना चाहिए। तथा हाथ धोने से अंगो के स्पर्श तक की प्रक्रिया बगैर मन्त्र के (मौन रूप से) अंगुलियों द्वारा करनी चाहिए।

एवमाचम्य सामान्यार्घ्येण द्वारं प्रपूजयेत्।
तारखंवह्निसर्गाढ्यंद्वाराघ्र्यं साधयामिच ॥ ५८ ॥
उक्त्वास्त्रमनुनापात्रं क्षालयेत्पूरयेद्धृदा।
तीर्थान्यावाह्य गन्धादीन्निक्षिपेन्निगमादिना ॥ ५९ ॥
धेनुमुद्रां दर्शयित्वा मूलेनाप्यभिमन्त्रयेत्।
सामान्यर्घ्यविधिः प्रोक्तस्तेनोक्ता द्वारदेवताः ॥ ६० ॥

सामान्यार्घ्यमाह। तारमिति। तारॐ। खंहः वह्निसर्गाढ्यंरेफविन्दुयुतं ह्रः ॥ ५८ ॥ निगमादिनाप्रणवेन ॥ ५९ ॥ यथा-ॐ ह्रः द्वाराघ्र्यं साधयामीत्युक्त्वाफडितिपात्रं प्रक्षाल्यनमर्हतिजलेनापूर्यगङ्गेचेतितीर्थान्यावाह्यप्रणवेनगधपुष्पेनिक्षिप्यधेनुमुद्रां प्रदर्श्याष्टकृत्वोमूलेनमन्त्रयेत्। इतिसामान्यार्घ्यविधिः। तेनार्घ्यजलेनोक्ताः प्रथमतरंगोक्ता द्वारदेवताः गणेशमहालक्ष्मीसरस्वती विघ्नक्षेत्रपालगङ्गायमुनाधातृविधातृशंखपद्मानांधलक्षणाः यथास्थानंसंपूज्यवक्ष्यमाणान्यथास्वद्वारपालान्पूजयेत् ॥ ६० ॥

इष्ट्वार्च्चेद्द्वारपालांश्च ते कथ्यन्ते पृथग्विधाः ।
नन्दःसुनन्दश्चण्डश्चप्रचण्डोबलसंज्ञकः ॥ ६१ ॥
प्रबलोभद्रसंज्ञश्चसुभद्रावैष्णवामताः ।
नन्दिसंज्ञोमहाकालोगणेशोवृषभस्तथा ॥ ६२ ॥
भृंगिरिट्यभिधःस्कन्दःपार्वतीशाभिधोपरः ।
चण्डेश्वरइमेशैवाःशाक्तेया मातरः स्मृताः ॥ ६३ ॥
वक्रतुण्डश्चैकदंष्ट्रोमहोदरगजाननौ ।
लम्बोदरश्चविकटोविघ्नराजश्चसप्तमः ॥ ६४ ॥
धूम्रराजोगणपतेर्द्वारपाला इमे स्मृताः ।
इन्द्रोयमोथवरुणः कुबेरस्त्रैपुराः स्मृताः ॥ ६५ ॥
ईशः कृशानुरक्षांसिवायुश्चैवाष्टमः स्मृतः ।
द्वारपूजां विधायेत्थं विघ्नानुत्सारयेत्त्रिधा ॥ ६६ ॥

द्वारपालों का पूजन : इस प्रकार आचमन करने के बाद सामान्यार्घ्य से द्वार-पूजन करना चाहिए, यथा :

तार (ॐ) विसर्ग सहित वह्नि एवं खं (हः) फिर 'द्वारार्घ्यं साधयामि'—अर्थात् 'ॐ हः द्वारार्घ्यं साधयामि'—यह कहकर 'फट्' मन्त्र से पात्र को धोकर 'नमः' से उसमें जल भर कर ('गङ्गे च यमुनेचैव०' इत्यादि मन्त्र से) उसमें तीर्थों का आवाहन कर 'ॐ' से उसमें गन्ध-पुष्प डालना चाहिए। (फिर) धेनु मुद्रा दिखाकर मूलमन्त्र से अभिमन्त्रित करना चाहिए। यह सामान्यार्घ्य की विधि कही गयी है। इससे द्वार देवताओं का पूजन कर द्वारपालों का पूजन करना चाहिए। (गणेश, महालक्ष्मी, सरस्वती, विघ्न, क्षेत्रपाल, गंगा, यमुना, धाता, विधाता शंख-निधि एवं पद्मनिधि–ये द्वार के देवता माने गये हैं)।

अब पृथक् पृथक् सम्प्रदायों के द्वारपालों को बतलाता हूँ—नन्द, सुनन्द, चण्ड, प्रचण्ड, बल, प्रबल, बलभद्र तथा सुभद्र ये विष्णु, के द्वारपाल कहे गये हैं।

नन्दी, महाकाल, गणेश, वृषभ, भृंगीरिट, स्कन्द, पार्वतीश एवं चण्डेश्वर ये शिव के द्वारपाल हैं। ब्राह्मी आदि ८ मातृकाएँ शक्ति की द्वारपाल हैं।

वक्रतुण्ड, एकदंष्ट्र, महोदर, गजानन, लम्बोदर, विकट, विघ्नराज एवं धूम्रराज ये गणपति के द्वारपाल कहे गये हैं।

वैष्णवान्द्वारपालानाह। नदइति शैवानाह। नंदिसंज्ञाइति। ब्राह्म्याद्यामातरः शक्तेर्द्वारपालाः स्मृताः पूर्वोक्ताबोध्याः ॥ ६१ ६३ ॥ गणेशानाह। वक्रेति ॥ ६४-६५ ॥ त्रिधा त्रिप्रकारादिव्यन्तरिक्षभूमिस्थान् ॥ ६६ ॥

इन्द्र, यम, वरुण, कुबेर, ईशान, अग्नि, निर्ऋति एवं वायु—ये त्रिपुरा के द्वारपाल कहे गये हैं।

इस रीति से द्वारपूजा करने के बाद दिव्य, आन्तरिक एवं भौम—इन त्रिविधि विघ्नों का उत्सारण करना चाहिए।

आत्मानं शंकरं ध्यात्वा दृष्ट्यादिव्यान्निवारयेत्।
नभस्थानर्घ्यपानीयैः पार्ष्णिघातैर्घरागतान् ॥ ६७ ॥
अपसर्पन्तु ते भूताये भूता भूमिसंस्थिताः।
ये भूता विघ्नकर्तारस्तेनश्यन्तु शिवाज्ञया ॥ ६८ ॥
अपक्रामन्तु भूतानि पिशाचाः सर्वतो दिशम्।
सर्वेषामविरोधन ब्रह्मकर्मसमारभे ॥ ६९ ॥
विनिवार्य्याखिलान्विघ्नानिदं मन्त्रद्वयं पठन्।
अवकाशप्रदानायान्तरायाणां विनिर्यताम् ॥ ७० ॥
संकोचयन्वाममङ्ग गृहं दक्षपदाविशेत्।
क्षेत्रपालं विधातारं नैर्ऋत्यां दिशि पूजयेत् ॥ ७१ ॥

विघ्नोत्सारण : स्वयं को शंकर मानकर दृष्टि से दिव्य विघ्नों का, अर्घ्यजल से आन्तरिक्ष विघ्नों का तथा पैर के आघात से भूमिगत विघ्नों का निवारण करना चाहिए।

"अपसर्पन्तु ते भूताये भूता भूमिसंस्थिताः। ये भूता विघ्नकर्तारस्तेनश्यन्तु शिवाज्ञया ॥ अपक्रामन्तु भूतानि पिशाचाः सर्वतो दिशम्। सर्वेषामविरोधेन ब्रह्मकर्म समारभे ॥"

—इन दो मन्त्रों से समस्त विघ्नों को निकालकर जाते हुए विघ्नों को निकलने के लिए जगह देने हेतु अपने वामांग को सिकोड़ कर दाहिना पैर आगे रख कर पूजा गृह में प्रवेश करना चाहिए तथा नैर्ऋत्य कोण में क्षेत्रपाल एवं विधाता का पूजन करना चाहिए।

अनन्तं विमलं पद्मंडेतासननमोन्वितम्।
जपन्निधायदर्भांस्त्रीन्कुशचर्माम्बरासने ॥ ७२ ॥
काष्ठपल्लववंशाश्मगोशकृत्तृणमृण्मयम्।
विषमं कठिनं मन्त्रीत्यजेदासनमाधिदम् ॥ ७३ ॥

अर्घ्यपानीयैः सामान्यार्घजलैरन्तरिक्षस्थान् ॥ ६७ ६९ ॥ विनिर्यतां गृहान्निर्गच्छताम् अन्तरायाणां विघ्नानामवकाशदानायवामांगं संकोचयन् दक्षिणपादेनगृहं प्रविशेत् ॥ ७०-७१ ॥ कुशासनव्याघ्रचर्मावस्त्राणामुपर्युपरिस्थापितानामुपरिअनन्त्रासनायनमः विमलासनायनमः पद्मासनायनमःइतिमन्त्रत्रयेणत्रीन्दर्भान्निदध्यात् ॥ ७२ ॥ आधिदं मानसपीडाप्रदम् ॥ ७३ ॥

पृथ्वित्वयेतिमन्त्रेण प्रागुदग्वासमाविशेत् ।
कुर्य्यात्स्वस्तिकपाथोजवीरादिष्वेकमासनम् ॥ ७४ ॥

आसन पर बैठने की रीति : कुश, व्याघ्र चर्म एवं रेशमी वस्त्र के एक के ऊपर एक के क्रम से रखे हुए आसनों पर 'अनन्तासनाय नमः, विमलासनाय नमः तथा पद्मासनाय नमः' इन मन्त्रों का पढ़ते हुए साधक ३ कुशाओं को रखे ।

काठ, पत्ते, बाँस, पत्थर, तिनके एवं मिट्टी से बने आसनों को, विषम, कठिन एवं मन को पीड़ादायक आसनों को छोड़ देना चाहिए ।

'पृथ्वी त्वया धृता०' इस मन्त्र से पूर्व या उत्तर की ओर मुँह करके स्वस्तिक, पद्म, या वीर आसन बाँध कर बैठना चाहिए ।

टिप्पणी : आसनोपवेशन का मन्त्र : 'ॐ पृथ्वीति मन्त्रस्य मेरुपृष्ठ ऋषिः, सुतलं छन्दः, कूर्मो देवता आसनोपवेशने विनियोगः'—ऐसा कहकर दाहिने हाथ की मध्यमा एवं अनामिका से आसन पर कुछ जल छिड़कते हुए निम्नलिखित मन्त्र को बोलते हुए आसन पर बैठना चाहिए । मन्त्र इस प्रकार हैं :

"ॐ पृथ्वी त्वया धृता लोकाः देवित्वं विष्णुना धृता ।
त्वं च धारय मां देवि पवित्रं कुरु चासनम् ॥"

स्वस्तिकासन का लक्षण : जानूर्वोरन्तरे कृत्वा सम्यक् पादतले उभे ।
ऋजुकायो विशेद्योगी स्वस्तिकं तत्प्रचक्षते ॥

पद्मासन का लक्षण : ऊर्वोरुपरि विन्यस्य सम्यक् पादतले उभे । अंगुष्ठौ च निबध्नीयाद्धस्ताभ्यां व्युत्क्रमात्ततः ॥ पद्मासनमिति प्रोक्तं योगिनां हृदयंगमम् ॥

वीरासन का लक्षण : एकं पादमधः कृत्वा विन्यस्योरौ तथेतरे ।
ऋजुकायो विशेद्योगी वीरासनमितीरितम् ॥

अर्घ्यपाद्याचमनीयमधुपर्काचमस्य च ।
पञ्चपात्राणि पुष्पादीन्स्थापयेत्स्वीयदक्षिणे ॥ ७५ ॥
वामेम्बुपात्रं व्यजनं छत्रमादर्शचामरे

प्रागुदग्वा प्राङ्मुखउदङ्मुखोवा । पाथोजंपद्मम् । स्वस्तिकासनपद्मासनवीरासनेष्वन्यतममासनं कुर्य्यात् । स्वस्तिकासनलक्षणं यथा–'जानूर्वोरन्तरेकृत्वासम्यक्पादतलेउभे । ऋजुकायोविशेद्योगीस्वस्तिकं तत्प्रचक्षते ।' पद्मासनं यथा–'उर्वोरुपरिविन्यस्यसम्यक्पादतलेउभेअंगुष्ठौचनिबध्नीयाद्धस्ताभ्यां व्युत्क्रमात्ततः । पद्मासनमितिप्रोक्तं योगिनां हृदयङ्गमम्'इति । अत्रहस्ताभ्यां पादांगुष्ठनिबन्धनन्तुयोगाभ्यासान्वितं बोध्यम् । योगिनां हृदयङ्गममितिविशेषणोपादानात् । जपादौतुपादतलयोरूर्वोरुपरिन्यासमात्रं पद्मासनम् । वीरासनलक्षणं यथा–'एकं पादमधः कृत्वाविन्यस्यारौतथेतरम् । ऋजुकायोविशेद्योगीवीरासनमितीरितम्' इति शारदातिलके । आदशब्दात्षट्कर्मोक्तमपि ॥ ७४-७५ ॥

पूजा सामग्री एवं पात्रों का स्थापन : अर्घ्य, पाद्य, आचमनीय, मधुपर्क एवं पुनराचमनीय के पाँचों पात्र तथा पुष्प आदि को अपने दाहिनी ओर रखना चाहिए। जलपात्र, व्यजन, छत्र, आदर्श एवं चमर को अपने बायीं ओर रखना चाहिए।

कृताञ्जलिर्वामदक्षे गुरून्गणपतिं नमेत् ॥ ७६ ॥
न्यस्यास्त्रंकरयोस्तालत्रयं दिग्बन्धनं चरेत्।
अंगुष्ठयुक्ततर्जन्यासुदर्शनमनुं जपन् ॥ ७७ ॥
प्रणवोहृदयंङेन्तंसुदर्शनपदंपुनः।
अस्त्रायचफडित्युक्तोमन्त्रो द्वादशवर्णवान् ॥ ७८ ॥
विधाय वह्निप्राकारं भूताजेयो भवेत्सुधीः।
भूतशुद्धिं तथा प्राणप्रतिष्ठां मातृकास्थितिम् ॥ ७९ ॥
पञ्चधोक्तां प्रकुर्वीत ततोन्यान्मातृकां चरेत्।
श्रीकण्ठाद्याञ्छंभुभक्तो वैष्णवः केशवादिकान्॥ ८० ॥
गणेशाद्यांस्तुतत्सेवी शक्तिभाङ्मातृकाःकलाः।
ताःक्रमेणैवकथ्यन्ते मुन्यादिन्यासपूर्विकाः ॥ ८१ ॥

फिर साधक अञ्जलि बाँधकर अपने बाँयी ओर गुरु को तथा दाहिनी ओर गणपति को प्रणाम करे।

दोनों हाथों पर 'फट्' का न्यास कर ३ बार ताली बजाकर अंगुठा एवं तर्जनी से शब्द करते हुए सुदर्शन मन्त्र से दिग्बन्ध करना चाहिए।

प्रणव (ॐ) हृदय (नमः) चतुर्थ्यन्त सुदर्शन (सुदर्शनाय) और फिर 'अस्त्राय फट्' –यह १२ अक्षर का सुदर्शन मन्त्र कहा गया है।

(फिर) वह्नि प्राकार को बनाकर साधक भूतों से अजेय हो जाता है।

(तत्पश्चात्) भूतशुद्धि,प्राण प्रतिष्ठा एवं पंचविधि (सृष्टि, स्थिति, संहार, सृष्टि एवं स्थिति) मातृका न्यासों को करना चाहिए। फिर अन्य मातृका न्यासों को करना चाहिए. यथा–शैव को श्रीकण्ठ मातृकान्यास, वैष्णव को केशव कोतिन्यास, गाणपत्य को गणेशकला न्यास तथा शाक्त को शक्ति कला न्यास करना चाहिए।

अब इन न्यासों को उनके ऋषि आदि के साथ बतलाता हूँ।

वामेगुरून्दक्षेगणेशम् ॥ ७६ ॥ करयोरस्त्रन्यस्योपर्युपरितालत्रय कृत्वांगुष्ठतर्जनीभ्यां शब्दं कुर्वन्सुदर्शनमन्त्रेण दिग्बंधनं चरेत् ॥ ७७ ॥ सुदर्शनमन्त्रमाह। प्रणवइति। ॐनमः सुदर्शनायअस्त्रायफडिति ॥ ७८ ७९ ॥ पञ्चधा मातृकान्थितिः। सृष्टिस्थितिसंहार-सृष्टिस्थितिलक्षणं पञ्चविधं मातृकान्यासम्। उक्तां प्रथमतरङ्गे। अन्यान्। श्रीकण्ठाद्यान् ॥ ८० ॥ तत्सेवीगणेशसेवी ॥ ८१ ॥

मुनिःस्याद्दक्षिणामूर्तिर्गायत्रीछन्दईरितम् ।
अर्द्धांद्रिजाहरोदेवो नियोगः सर्वसिद्धये ॥ ८२ ॥
हलोबीजानि गुह्ये तुस्वराञ्छक्तीःपदोर्न्यसेत् ।
हसाभ्यां दीर्घयुक्ताभ्यां कृत्वाङ्गं शङ्करं स्मरेत् ॥ ८३ ॥

श्रीकण्ठ मातृका मन्त्र का विनियोग एवं षडङ्गन्यास : (इस श्रीकण्ठ मातृका मन्त्र के) दक्षिणामूर्ति ऋषि हैं, गायत्री छन्द है, अर्द्धनारीश्वर देवता है तथा सब सिद्धियों के लिए यह मन्त्र विनियुक्त होता है। हल् इसके बीज हैं तथा स्वर शक्ति है—इसका क्रमशः गुप्तांग एवं पैरों में न्यास करना चाहिए।

षड्दीर्घ सहित 'हूस्' से षडङ्गन्यास करने के बाद भगवान् शंकर का ध्यान करना चाहिए।

टिप्पणी : विनियोग : अस्य श्रीकण्ठ मातृका मन्त्रस्य दक्षिणामूर्तिर्ऋषिः गायत्री छन्दः अर्द्धनारीश्वरो देवता हलो बीजानि स्वराः शक्तयः सर्वार्थसिद्धये न्यासे विनियोगः।

ऋष्यादिन्यास : ॐ दक्षिणामूर्ति ऋषये नमः—शिरसि। ॐ गायत्री छन्दसे नमः—मुखे। ॐ अर्द्धनारीश्वरो देवतायै नमः—हृदि। ॐ हल्भ्यो बीजेभ्यो नमः—गुह्ये। ॐ स्वरेभ्यो शक्तिभ्यो नमः—पादयोः। ॐ विनियोगाय नमः—सर्वाङ्गे।

षडङ्गन्यास : हूसां हृदयाय नमः। हूसीं शिरसे स्वाहा। हूसूं शिखायै वषट्। हूसैं कवचाय हुम्। हूसौं नेत्रत्रयाय वौषट्। हूसः अस्त्राय फट्।

पाशांकुशवराक्षस्रक्पाणिशीतांशुशेखरम् ।
त्र्यक्षंरक्तसुवर्णाभमर्द्धनारीश्वरं भजेत् ॥ ८४ ॥

ध्यान : अपने चारों हाथों में पाश, अंकुश, वर एवं अक्षमाला धारण करने वाले मस्तक पर चन्द्रकला धारण करने वाले, तीन नेत्र वाले तथा सुवर्ण जैसी आभावाले भगवान् अर्द्धनारीश्वर का ध्यान करना चाहिए।

एवं ध्यायञ्छम्भुशक्तीचतुर्थ्यन्तनमोन्विते ।
हूसौंबीजं मातृकापूर्वविन्यसेन्मातृकास्थले ॥ ८५ ॥
श्रीकण्ठपूर्णोदर्य्यौ चानन्तोविरजयान्वितः ।
सूक्ष्मेशःशाल्मलीयुक्तो लोलाक्षीयुक्तिर्मूतिकः ॥ ८६ ॥
अमरेशोवर्तुलाक्षावर्घीशोदीर्घघोणया ।
भारभूतिर्दीर्घमुखी तिथीशोगोमुखीयुतः ॥ ८७ ॥

॥ ८२-८३ ॥ ध्यानमाह । पाशेति । पाशांकुशौवामयोः । रक्ताभोहरांशः सुवर्णाभोदेव्यंशः ॥ ८४ ॥ मातृकास्थले ललाटादौपूर्वोक्ते ॥ ८५ ॥ प्रयोगोयथा—हूसौं अंश्रीकण्ठेशपूर्णोदरिभ्यांनमःललाटे हूसौंआंअनन्तेशविरजाभ्यां नमोमुखवृत्तेहूत्यादि० ॥ ८६-८७ ॥

स्थाण्वीशोदीर्घजिह्वायुग्धरःकुम्भोदरीयुतः ।
झिटीशश्चोद्ध्वकेशीभौतिकोविकृतमुख्यपि ॥ ८८ ॥
सद्योज्वालामुखीचानुग्रहउल्कामुखीयुतः ।
अक्रूरः श्रीमुखीमहासेनोविद्यामुखीयुतः ॥ ८९ ॥
क्रोधीशश्चमहाकाल्याचण्डेशश्चसरस्वती ।
पञ्चान्तकः सर्वसिद्धिगौरीयुक्तःप्रकीर्तितः ॥ ९० ॥
शिवोत्तमेशोविन्यस्योयुक्तस्त्रैलोक्यविद्यया :
एकरुद्रोमन्त्रशक्तिः कूर्मेशश्चात्मशक्तियुक् ॥ ९१ ॥
एकनेत्रोभूतमात्रायुक्तःस्याच्चतुराननः ।
लम्बोदर्य्यायुतः प्रोक्तोह्यजेशोद्राविणीयुतः ॥ ९२ ॥
सर्वेशोनागरीयुक्तः सोमेशश्चापिखेचरी ।
लाङ्गलीश्चमञ्जर्य्यादारकेशश्चरूपिणी ॥ ९३ ॥
अर्द्धनाराशवीरिण्यावुमाकान्तः पुनर्युतः ।
काकोदर्य्यातथाषाढीपूतनायुक्त ईरितः ॥ ९४ ॥
चण्डीशोभद्रकालीयुगन्त्रीशोयोगिनीयुतः ।
मीनेशःशंखिनीयुक्तो मेषेशस्तर्जनीयुतः ॥ ९५ ॥
लोहितःकालरात्रिश्चशिखीशः कुब्जनायुतः ।
छगलण्डःकर्पदिन्याद्विरण्डेशश्चवज्रया ॥ ९६ ॥
महाकालोजयायुक्तो बालीशःसुमुखेश्वरी ।
भुजङ्गोरेवतीयुक्तः पिनाकीमाधवीयुतः ॥ ९७ ॥
खड्गीशोवारुणीयुक्तो वकेशोवायवीयुतः ।
श्वेतोरक्षोविदारिण्याभृगुः सहजयायुतः ॥ ९८ ॥
नकुलीशश्चलक्ष्मीयुक्छिवेशोव्यापिनीयुतः ।
संवर्तकोमहामाया प्रोक्ताश्रीकण्ठमातृका ॥ ९९ ॥
यत्रत्वीशपदंनोक्तं श्रीकण्ठादिषुनामसु ।
तत्र सर्वत्र वक्तव्यंशक्तिभ्यांहृत्ततो वदेत् ॥ १०० ॥
त्वगसृङ्मांसमेदोस्थिमज्जाशुक्राण्यसून्वदेत् ।
शक्तिं क्रोधं तथात्मभ्यामन्तान्यादिदशस्वपि ॥ १०१ ॥

॥ ८८ ॥ सद्योजाता ॥ ८९ ९९ ॥ श्रीकण्ठानन्तत्रिमूर्त्यादौपदेययत्रेपदं नास्ति-श्रीकण्ठेशेत्यत्रेवतत्रापिज्ञेयम । शक्तिभ्यां पूर्णोदरीप्रभृतिभ्यांचन्थीद्विवचनम । हृन्नमः । तथाप्रयोगउक्तः ॥ १०० ॥ त्वगिति यादिदशवर्णेषुत्वगादीनात्मभ्यामित्यन्तान्वदेत् । यथा-हसौंयंत्वगात्मभ्यां बालीशसुमुखेश्वरीभ्यां नमः हृदि । हसौंरंअसृगात्मभ्यां भुजङ्गेश्वरेवतीभ्यां नमोदक्षांसइत्यादि० ॥ १०१ ॥

श्रीकण्ठ मातृकान्यास : ऐसा ध्यान कर शिव एवं शक्ति के चतुर्थ्यन्त रूपों के अन्त में 'नमः' तथा प्रारम्भ में 'ह्सौं' एवं मातृका वर्णों को लगाकर (यथाक्रमेण) मातृकास्थलों में न्यास करना चाहिए।

श्रीकण्ठ एवं पूर्णोदरी, विरजा के साथ अनन्त, सूक्ष्मेश एवं शाल्मली, त्रिमूर्तीश एवं लोलाक्षी, अमरेश एवं वर्तुलाक्षी, अर्घीश एव दीर्घघोणा, भारभूति एवं दीर्घमुखी, तिथीश एवं गोमुखी, स्थाण्वीश एवं दीर्घजिह्वा, हर एवं कुम्भोदरी, झिण्टीश एवं ऊर्ध्व-केशी, भौतिकेश एवं विकृतमुखी, सद्योजात एवं ज्वालामुखी, अनुग्रहेश एवं उल्का मुखी, अक्रूरेश एवं श्रीमुखी, महासेनेश एवं विद्यामुखी, क्रोधीश एवं महाकाली, चण्डेश एवं सरस्वती, पञ्चान्तकेश एवं सर्वसिद्धि गौरी, शिवोत्तमेश एवं त्रैलोक्यविद्या, एकरुद्र एवं शक्ति, कूर्मेश एवं आत्मशक्ति, एकनेत्रेश एवं भूतमातृ, चतुराननेश एवं लम्बोदरी, अजेश एवं द्रावणी, सर्वेश एवं नागरी, सोमेश एवं खेचरी, लांगलीश एवं मंजरी, दारुकेश एवं रूपिणी, अर्द्धनारीश एवं वीरिणी, उमाकान्त एवं काकोदरी, आषाढ़ीश एवं पूतना, चण्डीश एवं भद्रकाली, अन्त्रीश एवं योगिनी, मीनेश एवं शंखिनी, मेषश एवं तर्जनी, लोहितेश एवं कालरात्रि, शिखीश एवं कुब्जिनी, छगलण्डेश एव कर्पदिनी, द्विरण्डेश एवं वज्रा, महाकाल एवं जया, बालीश एवं सुमुखेश्वरी भुजंगेश एवं रेवती, पनाकी एवं माधवी, खड्गीश एवं वारुणी, वकेश एवं वायवी, श्वेतेश एवं रक्षाविदारिणी, भृग्वीश एवं सहजा, नकुलीश एवं लक्ष्मी, शिवेश एवं व्यापिनी तथा संवर्तक तथा महामाया –ये श्रीकण्ठ आदि एवं उनकी मातृका कहे गये हैं।

श्रीकण्ठ आदि के नामों में जहाँ 'ईश' पद नहीं कहा गया है वहाँ सर्वत्र 'ईश' बोलना चाहिए, फिर शक्ति के साथ चतुर्थी का द्विवचन और फिर 'नम' बोलना चाहिए।

यकार आदि १० वर्णों के साथ त्वग् असृङ्, मांस, मेद, अस्थि, मज्जा, शुक्र, प्राण, शक्ति एवं क्रोध के साथ क्रमशः आत्मभ्यां लगाकर बोलना चाहिए।

टिप्पणी : न्यासविधि : ॐ ह्सौं अं श्रीकण्ठेश पूर्णोदरीभ्यां नमः–ललाटे। ॐ ह्सौं आं अनन्तेशविरजाभ्यां नमः–मुखवृत्ते। ॐ ह्सौं इं सूक्ष्मेशशाल्मलीभ्यां नमः–दक्षनेत्रे। ॐ ह्सौं ईं त्रिमूर्तीशलोलाक्षीभ्यां नमः–वामनेत्रे। ॐ ह्सौं उं अमरेशवर्तुलाक्षीभ्यां नमः–दक्षकर्णे। ॐ ह्सौं ऊं अर्घीशघोणाभ्यां नमः–वामकर्णे। ॐ ह्सौं ऋं भारभूतेश दीर्घमुखीभ्यां नमः–दक्षनासापुटे। ॐ ह्सौं ॠं तिथीशगोमुखीभ्यां नमः–वामनासापुटे। ॐ ह्सौं लृं स्थाण्वीशदीर्घजिह्वाभ्यां नमः–दक्षगण्डे। ॐ ह्सौं ॡं हरेश कुण्डोदरीभ्यां नमः–वामगण्डे। ॐ ह्सौं एं झिण्टीशऊर्ध्वकेशीभ्यां नमः–ऊर्ध्वोष्ठे। ॐ ह्सौं ऐं भौतिकेश विकृतमुखाभ्यां नमः–अधरोष्ठे। ॐ ह्सौं ओं सद्योजातज्वालामुखीभ्यां नमः–ऊर्ध्वदन्तपंक्तौ। ॐ ह्सौं औं अनुग्रहेशउल्कामुखीभ्यां नमः–अधोदन्तपंक्तौ

ॐ ह्सौं अं अक्रूरेश श्रीमुखीभ्यां नमः–शिरसि । ॐ ह्सौं अः महासेनेश विद्यामुखीभ्यां नमः–मुखे । ॐ ह्सौं कं क्रोधीश महाकालीभ्यां नमः–जिह्वाग्रे । ॐ ह्सौं खं चण्डेश सरस्वतीभ्यां नमः–कण्ठदेशे । ॐ ह्सौं गं पञ्चान्तकेशसर्वसिद्धि गौरीभ्यां नमः–दक्षबाहुमूले । ॐ ह्सौं घं शिवोत्तमेशत्रैलोक्यविद्याभ्यां नमः–दक्षकूर्परे । ॐ ह्सौं ङं एकरुद्रेश मन्त्र शक्तिभ्यां नमः–दक्षमणिबन्धे । ॐ ह्सौं चं कूर्मेश आत्मशक्तिभ्यां नमः–दक्षहस्तांगुलिमूले । ॐ ह्सौं छं एकनेत्रेश भूतमातृभ्यां नमः–दक्षहस्तांगुल्यग्रे । ॐ ह्सौं जं चतुराननेश लम्बोदरीभ्यां नमः–वामबाहुमूले । ॐ ह्सौं झं अजेशद्रावणीभ्यां नमः वामकूर्परे । ॐ ह्सौं ञं सर्वेशनागरीभ्यां नमः–वाममणिबन्धे । ॐ ह्सौं टं सोमेशखेचरीभ्यां नमः–वामहस्तांगुलिमूले । ॐ ह्सौं ठं लाङ्गलीशमंजरीभ्यां नमः–वामहस्तांगुल्यग्रे । ॐ ह्सौं डं दारकेशरूपिणीभ्यां नमः–दक्षपादमूले । ॐ ह्सौं ढं अर्द्धनारीश वीरिणीभ्यां नमः–दक्षजानुनि । ॐ ह्सौं णं उमाकान्तेश काकादरीभ्यां नमः–दक्षगुल्फे । ॐ ह्सौं तं आषाढ़ीशपूतनाभ्यां नमः–दक्षपादांगुलिमूले । ॐ ह्सौं थं चण्डीश भद्रकालीभ्यां नमः–दक्षपादांगुल्यग्रे । ॐ ह्सौं दं अन्त्रीश योगिनीभ्यां नमः–वामपादमूले । ॐ ह्सौं धं मीनेश शंखिनीभ्यां नमः–वामजानुनि । ॐ ह्सौं नं मेषेश तर्जनीभ्यां नमः–वामगुल्फे । ॐ ह्सौं पं लोहितेशकालरात्रीभ्यां नमः–वामपादांगुलिमूले । ॐ ह्सौं फं शिखीशकुब्जिनीभ्यां नमः–वामपादांगुल्यग्रे । ॐ ह्सौं बं छागलंडेशकपर्दिनीभ्यां नमः–दक्षपार्श्वे । ॐ ह्सौं भ द्विरंडेशवज्राभ्यां नमः–वामपार्श्वे । ॐ ह्सौं मं महाकालेश जयाभ्यां नमः–पृष्ठे । ॐ ह्सौं यं त्वगात्मभ्यां बालीशसुमुखेश्वरीभ्यां नमः–उदरे । ॐ ह्सौं रं असृगात्मभ्यां भुजंगेश रवेतीभ्यां नमः–हृदि । ॐ ह्सौं लं मांसात्मभ्यां पिनाकीश माधवीभ्यां नमः–दक्षांसे । ॐ ह्सौं वं मेदात्मभ्यां खड्गीशवारुणीभ्यां नमः–ककुदि । ॐ ह्सौं शं अस्थ्यात्मभ्यां वकेशवायवीभ्यां नमः–वामांसे । ॐ ह्सौं षं मज्जात्मभ्यां श्वेतेश रक्षोविदारिणीभ्यां नमः–हृदयादि दक्षहस्तान्तम् । ॐ ह्सौं सं शुक्रात्मभ्यां भृग्वीशसहजाभ्यां नमः–हृदयादिवामहस्तान्तम् । ॐ ह्सौं हं प्राणात्मभ्यां नकुलीश लक्ष्मीभ्यां नमः–हृदयादि दक्षपादान्तम् । ॐ ह्सौं ळं शक्त्यात्मभ्यां शिवेशव्यापिनीभ्यां नमः–हृदयादि वामपादान्तम् । ॐ ह्सौं क्षं क्रोधात्मभ्यां संवर्तकेशमहामायाभ्यां नमः–हृदयादिमस्तकान्तम् ।

केशवादिमातृकायां साध्यनारायणोमुनिः ।
अमृताद्या तुगायत्रीच्छन्दो लक्ष्मीर्हृहिः सुरः ॥ १०२ ॥
द्विरुक्तैःशक्तिश्रीकामैः षड्ङ्गानिसमाचरेत् ।

केशवादिमातृकामाह । केशवादीति ॥ १०२ ॥

केशव मातृका मन्त्र का विनियोग एवं न्यास : केशव मातृका मन्त्र के नारायण ऋषि हैं, अमृतगायत्री छन्द है तथा लक्ष्मीहरि देवता है ।

शक्तिबीज, श्रीबीज एवं कामबीज की २ आवृत्तियों से षडङ्गन्यास करना चाहिए ।

टिप्पणी : विनियोग : अस्य केशव मातृकान्यासस्य नारायण ऋषिः अमृत गायत्री छन्दः लक्ष्मीहरीदेवतेन्यासकरणे विनियोगः ।

षडङ्गन्यास : ह्रीं हृदयाय नमः । श्रीं शिरसे स्वाहा । क्लीं शिखायै वषट् । ह्रीं कवचाय हुम् । श्रीं नेत्रत्रयाय वौषट् । क्लीं अस्त्राय फट् ।

शङ्खचक्रगदापद्मकुम्भादर्शाब्जपुस्तकम् ॥ १०३ ॥
बिभ्रतं मेघचपलावर्णं लक्ष्मीहरिं भजे ।

ध्यान : अपने हाथों में शंख, चक्र, गदा, पद्म, कुम्भ, आदर्श कमल एवं पुस्तक धारण करनेवाले, मेघ एवं विद्युत जैसी आभावाले लक्ष्मी एवं विष्णु का ध्यान करता हूँ ।

एवं ध्यात्वा जपेच्छक्तिं श्रीकामपुटिताक्षराम् ॥ १०४ ॥
भ्यामन्तविष्णुशक्त्यंतां नमोन्तां प्रणवादिकाम् ।
केशवः कीर्तिसंयुक्तः कान्तिर्नारायणान्विता ॥ १०५ ॥
माधवस्तुष्टिसंयुक्तो गोविन्दः पुष्टिसंयुतः ।
विष्णुस्तुधृतिसंयुक्तः शान्तियुङ्मधुसूदनः ॥ १०६ ॥
त्रिविक्रमः क्रियायुक्तो वामनोदययान्वितः ।
श्रीधरोमेधयायुक्तो हृषीकेशश्चहर्षया ॥ १०७ ॥
पद्मनाभयुक्ता श्रद्धा लज्जादामोदरान्विता ।
वासुदेवश्चलक्ष्मीयुक्संकर्षणसरस्वती ॥ १०८ ॥
प्रद्युम्नःप्रीतिसंयुक्तोऽनिरुद्धोरतिसंयुक्तः ।
चक्रीजयागदीदुर्गाशार्ङ्गीतुप्रभयान्वितः ॥ १०९ ॥

षडङ्गमाह । द्विरुक्तैरिति । ह्रींहृदय श्रींशिरः । क्लींशिखा । ह्रींवर्म । श्रींनेत्रम् । क्लींअस्त्रम । ध्यानमाह । शंखेति । शंखादीनिदक्षे । कुम्भादीनिवामे । मेघाभोहयंशः । चपलाविद्युत् । तन्निभोलक्ष्मीशः ॥ १०३-१०४ ॥ भ्यामन्तेयय रीदृशौ विष्णुशक्ती अन्तेयम्याम्ताम् । तथानमो तेयम्या सानमोन्ता । प्रणवआदौयस्याः साप्रणवादिका । साचसाताम् । यथा-ॐह्रींश्रींक्लींअंक्लींश्रींह्रींकेशवकीर्तिभ्यां नमइत्यादि० ॥ १०५ ॥ ॥ १०६-१०९ ॥

खड्गीतुसत्ययायुक्तः शंखीचण्डासमन्वितः ।
हलीवाणीसमायुक्तो मुसलीचविलासिनी ॥ ११० ॥
शूलीविजययायुक्तः पाशीविरजयान्वितः ।
अंकुशीविश्वयायुक्तो मुकुन्दोविनदायुतः ॥ १११ ॥
नन्दजःसुनदायुक्तो नन्दीसत्यासमन्वितः ।
नरऋद्धीनरकजित्समृद्धीशुद्धियुग्घरिः ॥ ११२ ॥
कृष्णबुद्धीसत्यभुक्तीसात्वतोमतिसंयुतः ।
सौरिक्षमेशूररमेजनार्दनउमान्वितः ॥ ११३ ॥
भूधरःक्लेदिनीयुक्तो विश्वमूर्तिश्चक्लीन्नया ।
वैकुण्ठोवसुधायुक्तो वसुदापुरुषोत्तमौ ॥ ११४ ॥
बलीतुपर्यायुक्तो बलानुजपरायणे ।
बालसूक्ष्मेवृषघ्नस्तुसन्ध्यायुक्प्रज्ञयावृषः ॥ ११५ ॥
हंसःप्रभासमायुक्तो वराहोनिशयान्वितः ।
विमलोमेघयायुक्तो नृसिंहोविद्युतायुतः ॥ ११६ ॥
केशवाद्यामातृकोक्तायादियोगश्चपूर्ववत् ।

केशव मातृका न्यास : ऐसा ध्यान कर शक्ति (ह्रीं) श्री (श्रीं) तथा काम (क्लीं) से सम्पुटित अकारादि वर्ण, फिर विष्णु एवं शक्ति के चतुर्थी द्विवचन के नाम और अन्त में 'नमः' तथा प्रारम्भ में प्रणव लगाकर न्यास करना चाहिए।

केशव एवं कीर्ति, नारायण एवं कान्ति, माधव एवं तुष्टि, गोविन्द एवं पुष्टि, विष्णु एवं धृति, मधुसूदन एवं शान्ति, त्रिविक्रम एवं क्रिया, वामन एवं दया, श्रीधर एवं मेधा, हृषीकेश एवं हर्षा, पद्मनाभ एवं श्रद्धा, दामोदर एवं लज्जा, वासुदेव एवं लक्ष्मी, संकर्षण एवं सरस्वती, प्रद्युम्न एवं प्रीति, अनिरुद्ध एवं रति, चक्री एवं जया, गदी एवं दुर्गा, शार्ङ्गी एवं प्रभा, खड्गी एवं सत्या, शंखी एवं चण्डा, हली एवं वाणी, मुकुन्द एवं विनदा, नन्दज एवं सुनन्दा, नन्दी एवं सत्या, नर एवं ऋद्धि, नरकजित एवं समृद्धि, हरि एवं शुद्धि, कृष्ण एवं बुद्धि, सत्य एवं मुक्ति, सात्वत एवं मति, सौरि एवं क्षमा, शूर एवं रमा, जनार्दन एवं उमा, भूधर एवं क्लेदिनी, विश्वमूर्ति एवं क्लिन्ना, वैकुण्ठ एवं वसुधा, पुरुषोत्तम एवं वसुदा, बली एवं परा, बलानुज एवं परायणा, बाल एवं सूक्ष्मा, वृषघ्न एवं संध्या, वृष एवं प्रज्ञा, हंस एवं प्रभा, वराह एवं निशा, विमल एवं मेघा तथा नृसिंह एवं विद्युता—ये केशव आदि मातृका कहे गये हैं।

॥ ११०-११६ ॥

(इस न्यास में भी) यकार आदि वर्णों के साथ 'त्वगात्मभ्यां' इत्यादि पूर्वोक्त रीति के अनुसार लगाने चाहिए।

टिप्पणी : न्यास विधि : ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं अं क्लीं श्रीं ह्रीं केशवकान्तिभ्यां नमः–ललाटे। ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं आं क्लीं श्रीं ह्रीं नारायणकान्तिभ्यां नमः–मुखवृत्ते। ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं इं क्लीं श्रीं ह्रीं माधवतुष्टिभ्यां नमः–दक्षनेत्रे। ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ईं क्लीं श्रीं ह्रीं गोविन्दतुष्टिभ्यां नमः–वामनेत्रे। ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं उं क्लीं श्रीं ह्रीं विष्णुधृतिभ्यां नमः–दक्षकर्णे। ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऊं क्लीं श्रीं ह्रीं मधुसूदन शान्तिभ्यां नमः–वामकर्णे। ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऋं क्लीं श्रीं ह्रीं त्रिविक्रम क्रियाभ्यां नमः–दक्षनासायाम्। ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ॠं क्लीं श्रीं ह्रीं वामनदयाभ्यां नमः–वामनासायाम्। ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऌं क्लीं श्रीं ह्रीं श्रीधरमेधाभ्यां नमः–दक्षगण्डे। ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ॡं क्लीं श्रीं ह्रीं हृषीकेश हर्षाभ्यां नमः–वामगण्डे। ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं एं क्लीं श्रीं ह्रीं पद्मनाभश्रद्धाभ्यां नमः–ओष्ठे। ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं क्लीं श्रीं ह्रीं दामोदर लज्जाभ्यां नमः–अधरे। ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ओं क्लीं श्रीं ह्रीं वासुदेव लक्ष्मीभ्यां नमः–उर्ध्वदन्तपंक्तौ। ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं औं क्लीं श्रीं ह्रीं संकर्षणसरस्वतीभ्यां नमः–अधोदन्तपंक्तौ। ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं अं क्लीं श्रीं ह्रीं प्रद्युम्न प्रीतिभ्यां नमः–मस्तके। ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं अः क्लीं श्रीं ह्रीं अनिरुद्ध रतिभ्यां नमः–मुखे। ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं कं क्लीं श्रीं ह्रीं चक्रीजयाभ्यां नमः–दक्षबाहुमूले। ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं खं क्लीं श्रीं ह्रीं गदीदुर्गाभ्यां नमः–दक्षकूर्परे। ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं गं क्लीं श्रीं ह्रीं शार्ङ्गीप्रभाभ्यां नमः–दक्षमणिबन्धे। ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं घं क्लीं श्रीं ह्रीं खड्गी सत्याभ्यां नमः–दक्षअंगुलिमूले। ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ङं क्लीं श्रीं ह्रीं शंखीचण्डाभ्यां नमः–दक्षअंगुल्यग्रे। ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं चं क्लीं श्रीं ह्रीं हलीवाणीभ्यां नमः–वामबाहुमूले। ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं छं क्लीं श्रीं ह्रीं मुसलीविलासिनीभ्यां नमः–वाम कूर्परे। ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं जं क्लीं श्रीं ह्रीं शूलीविजयाभ्यां नमः–वाम मणिबन्धे। ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं झं क्लीं श्रीं ह्रीं पाशीविरजाभ्यां नमः–वाम अंगुलिमूले। ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ञं क्लीं श्रीं ह्रीं अंकुशीविश्वाभ्यां नमः–वामअंगुल्यग्रे। ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं टं क्लीं श्रीं ह्रीं मुकुन्द विनदाभ्यां नमः–दक्षपादमूले। ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ठं क्लीं श्रीं ह्रीं नन्दजसुनन्दाभ्यां नमः–दक्षजानुनि। ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं डं क्लीं श्रीं ह्रीं नन्दीसत्याभ्यां नमः–दक्षगुल्फे। ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ढं क्लीं श्रीं ह्रीं नरऋद्धिभ्यां नमः–दक्षपादांगुलिमूले। ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं णं क्लीं श्रीं ह्रीं नरकजित्समृद्धिभ्यां नमः–दक्षपादांगुल्यग्रे। ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं तं क्लीं श्रीं ह्रीं हरिशुद्धिभ्यां नमः–वामपादमूले। ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं थं क्लीं श्रीं ह्रीं कृष्णबुद्धिभ्यां नमः–वामजानुनि। ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं दं क्लीं श्रीं ह्रीं सत्यमुक्तिभ्यां नमः–वामगुल्फे। ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं धं क्लीं श्रीं ह्रीं सात्वतमतिभ्यां नमः–वामपादांगुलिमूले। ॐ ह्रीं

श्रीं क्लीं नं क्लीं श्रीं ह्रीं सौरिक्षमाभ्यां नमः–वामपादांगुल्यग्रे । ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं पं क्लीं श्रीं ह्रीं शूररमाभ्यां नमः–दक्षपार्श्वे । ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं फं क्लीं श्रीं ह्रीं जनार्दनोमाभ्यां नमः–वामपार्श्वे । ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं बं क्लीं श्रीं ह्रीं भूधरक्लेदिनीभ्यां नमः–पृष्ठे । ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं भं क्लीं श्रीं ह्रीं विश्वमूर्तिविलज्जाभ्यां नमः–नाभौ । ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं मं क्लीं श्रीं ह्रीं वैकुण्ठवसुधाभ्यां नमः–उदरे । ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं यं क्लीं श्रीं ह्रीं त्वगात्मभ्यां पुरुषोत्तमवसुदाभ्यां नमः–हृदि । ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं रं क्लीं श्रीं ह्रीं असृगात्मभ्यां बलीपराभ्यां नमः–दक्षांसे । ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं लं क्लीं श्रीं ह्रीं मांसात्मभ्यां बलानुजपरायणाभ्यां नमः–ककुदि । ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं वं क्लीं श्रीं ह्रीं मेदात्मभ्यां बालसूक्ष्माभ्यां नमः– वामांसे । ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं शं क्लीं श्रीं ह्रीं अस्थ्यात्मभ्यां वृषघ्नसन्ध्याभ्यां नमः–हृदादिदक्षकरे । ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं षं क्लीं श्रीं ह्रीं मज्जात्मभ्यां वृषप्रज्ञाभ्यां नमः– हृदादिवामकरे । ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं सं क्लीं श्रीं ह्रीं शुक्रात्मभ्यां हंसप्रभाभ्यां नमः–हृदादिदक्षपादे । ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं हं क्लीं श्रीं ह्रीं प्राणात्मभ्यां वराहनिशाभ्यां नमः–हृदादिवामपादे । ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ळं क्लीं श्रीं ह्रीं शक्त्यात्मभ्यां विमलमेधाभ्यां नमः–हृदाद्युदरे । ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं क्षं क्लीं श्रीं ह्रीं क्रोधात्मभ्यां नृसिंह विद्युताभ्यां नमः–हृदादि मुखे ।

गणेशमातृकायास्तुमुनिर्गणक ईरितः ॥ ११७ ॥
निचृद्गायत्रिकाछन्दो देवःशक्तिविनायकः ।
स्मृत्यादीर्घाढ्ययाचाङ्गं कृत्वा ध्यायेद्गजाननम् ॥ ११८ ॥

गणेशमातृकामन्त्र के विनियोग एवं न्यास : गणेशमातृका मन्त्र के गणक ऋषि हैं, निचृद्गायत्री छन्द है तथा शक्तिविनायक देवता हैं ।

षड्दीर्घ सहित गकार से षडङ्गन्यास करने के बाद गणेश जी का ध्यान करना चाहिए ।

टिप्पणी : विनियोग : अस्य श्री गणेशमातृकान्यासमन्त्रस्य गणक ऋषिः निचृद् गायत्री छन्दः शक्तिविनायको देवता, सर्वार्थसिद्धिये न्यासे विनियोगः ।

षडङ्गन्यास : ॐ गां हृदयाय नमः । ॐ गीं शिरसे स्वाहा । ॐ गूं शिखायै वषट् । ॐ गैं कवचाय हुम् । ॐ गौं नेत्रत्रयाय वौषट् । ॐ गः अस्त्राय फट् ।

गुणांकुशवराभीतिपार्णि राक्तब्जहस्तया ।

यादियोगश्चपूर्ववदिति । ॐह्रींश्रींक्लींयंक्लींश्रींह्रींत्वगात्मभ्यां पुरुषोत्तमवसुदाभ्यां नमोहृदीत्यादि० । गणेशमातृकामाह । गणेशइति ॥ ११७ ॥ षडङ्गमाह । स्मृत्येति । दीर्घयुक्तगकारेणांगम् । गांगींगूंगैंगौंगः इति ॥ ११८ ॥ ध्यानमाह । गुणेति । गुणस्त्रिशूलम् । अंकुशवरौदक्षयोः ॥ ११९ ॥

ध्यान : अपने हाथों में त्रिशूल, अंकुश, वर एवं अभय धारण करने वाले, रक्त कमल से सुशोभित हाथ वाली अपनी प्रिया से आलिंगित, लाल वर्ण वाले तथा तीन नेत्रवाले गणपति का ध्यान करता हूँ।

प्रिययालिङ्गितं रक्तं त्रिनेत्रं गणपंभजे ॥ ११९ ॥
एवं ध्यात्वान्यसेत्स्वीयबीजपूर्वाक्षरान्वितम् ।
विघ्नेशोह्लीसमायुक्तो विघ्नराजःश्रियायुतः ॥ १२० ॥
विनायकःपुष्टियुतःशान्तियुक्तः शिवात्तमः ।
विघ्नकृत्स्वस्तिसंयुक्तो विघ्नहर्तासरस्वती ॥ १२१ ॥
गणस्तुस्वाहयायुक्त एकदन्तःसुमेधया ।
द्विदन्तःकन्तिसंयुक्तो गजवक्त्रश्चकामिनी ॥ १२२ ॥
निरञ्जनोमोहिनीयुक्कपर्दीतुनटीयुतः ।
दीर्घजिह्वःपार्वतीयुक्छंकुकर्णश्चज्वालिनी ॥ १२३ ॥
वृषभध्वजनन्दौ च सुरेशगणनायकौ ।
गजेन्द्रःकामरूपिण्यासूपकर्णस्तथोमया ॥ १२४ ॥
त्रिलोचनस्तेजवत्या लम्बोदरस्तुसत्यया ।
महानन्दश्चविघ्नेशोचतुर्मूर्तिःसुरूपिणी ॥ १२५ ॥
सदाशिवःकामदायुगामोदोमदजिह्वया ।
दुर्मुखोभूतिसंयुक्तःसुमुखोभौतिकायुतः ॥ १२६ ॥
प्रमोदःसितया युक्त एकपादोरमायुतः ।
द्विजिह्वोमहिषीयुक्तःशरश्चापितुभङ्गिनी ॥ १२७ ॥
वीरोविकर्णयायुक्तःषण्मुखोभृकुटीयुतः ।
वरदोलज्जयावामदेवः स्याद्दीर्घघोणया ॥ १२८ ॥
धनुर्धरावक्रतुण्डौद्विरदोयामिनीयुतः ।
सेनानीरात्रिसंयुक्तःकामान्धोग्रामणीयुतः ॥ १२९ ॥
मत्तःशशिप्रभायुक्तो विमत्तोलोललोचना ।
मत्तवाहनचञ्चलेजटीदीप्तिसमन्वितः ॥ १३० ॥
मुण्डीसुभगयायुक्तःखङ्गीदुर्भगयातथा ।
वरेण्यश्चशिवायुक्तो भगायुग्वृषकेतनः ॥ १३१ ॥
भक्तप्रियश्चभगिनीगणेशोभोगिनीयुतः ।
मेघनादश्चसुभगाव्यासीस्यात्कालरात्रियुक् ॥ १३२ ॥

स्वीयबीजपूर्वाणण्यान्यच्चरांणिअकारादीनितैर्युतांगः अंविघ्नेशह्लोभ्यांनमइत्यादिभिः ॥ १२०-१३२ ॥

गणेश्वरःकालिकेतिप्रोक्ताविघ्नेशमातृका ।
त्वगादियोगोयादीनां पूर्ववत्परिकीर्तितः ॥ १३३ ॥

गणेशमातृकान्यास : इस प्रकार ध्यान कर अपने अपने बीजरूपी अक्षरों को पहिले लगाकर विघ्नेश ह्री आदि का न्यास करना चाहिए ।

विघ्नेश एवं ह्री, विघ्नराज एवं श्री, विनायक एवं पुष्टि, शिवोत्तम एवं शान्ति, विघ्नकृत् एवं स्वस्ति, विघ्नहर्ता एवं सरस्वती, गण एवं स्वाहा, एकदन्त एवं सुमेधा, द्विदन्त एवं कान्ति, गजवक्त्र एवं कामिनी, निरंजन एवं मोहिनी, कपर्दी एवं नटी, दीर्घजिह्व एवं पार्वती, शंकुकर्ण एवं ज्वालिनी, वृषभध्वज एवं नन्दा, सुरेश एवं गणनायका, गजेन्द्र एवं कामरूपिणी, सूर्यकर्ण एवं उमा. त्रिलोचन एवं तेजवती, लम्बोदर एवं सत्या, महानन्द एवं विघ्नेशी, चतुर्मूर्ति एवं सुरूपिणी, सदाशिव एवं कामदा, आमोद एवं मदजिह्वा, दुर्मुख एवं भूति, सुमुख एवं भौतिका, प्रमोद एवं सिता, एकपाद एवं रमा, द्विजिह्व एवं महिषी, शूर एवं भंजिनी, वीर एवं विकर्णा, षण्मुख एवं भृकुटी, वरद एवं लज्जा, वामदेव एवं दीर्घघोणा, वक्रतुण्ड एवं धनुर्धरा, द्विरद एवं यामिनी, सेनानी एवं रात्रि, कामान्ध एवं ग्रामणी, मत्त एवं शशिप्रभा, विमत्त एवं लोललोचना, मत्तवाहन एवं चंचला, जटी एवं दीप्ति, मुण्डी एवं सुभगा, खड्गी एवं दुर्भगा, वरेण्य एवं शिवा, वृषकेतन एवं भगा, भक्तप्रिय एवं भगिनी, गणेश एवं भोगिनी, मेघनाद एवं सुभगा, व्यासोस्य एवं कालरात्रि तथा गणेश्वर एवं कालिका ये गणेश-मातृकाएँ कही गयी हैं ।

यकार आदि वर्णों के साथ 'त्वगात्मभ्यां' का योग पूर्वोक्त रीति के अनुसार कर लेना चाहिए ।

टिप्पणी : न्यास विधि : ॐ अं विघ्नेशह्रीभ्यां नमः–ललाटे । ॐ आं विघ्नराज श्रीभ्यां नमः – मुखवृत्ते । ॐ इं विनायकपुष्टिभ्यां नमः–दक्षनेत्रे । ॐ ईं शिवोत्तम शान्तिभ्यां नमः–वामनेत्रे । ॐ उं विघ्नकृत्स्वस्तिभ्यां नमः–दक्षकर्णे । ऊं विघ्नहर्तृ सरस्वतीभ्यां नमः–वामकर्णे । ॐ ऋं गणस्वाहाभ्यां नमः–दक्ष नासायाम् । ॐ ॠं एकदन्त सुमेधाभ्यां नमः–वाम नासायाम् । ॐ ऌं द्विदन्त कान्तिभ्यां नमः–दक्षगण्डे । ॐ ॡं गजवक्त्रकामिनीभ्यां नमः–वाम गण्डे । ॐ एं निरंजनमोहिनीभ्यां नमः–ओष्ठे । ॐ ऐं कपर्दीनटीभ्यां नमः–अधरे । ॐ ओं दीर्घजिह्वपार्वतीभ्यां नमः–ऊर्ध्व दन्तपंक्तौ । ॐ औं शंकुकर्णज्वालिनीभ्यां नमः–अधः दन्तपंक्तौ । ॐ अं वृषभध्वज नन्दाभ्यां नमः–शिरसि । ॐ अः सुरेशगणनायकाभ्यां नमः–मुखे । ॐ कं गजेन्द्रकाम-रूपिणीभ्यां नमः–दक्ष बाहुमूले । ॐ खं सूर्यकर्णोमाभ्यां नमः–दक्ष कूर्परे । ॐ गं

त्वगादियोगइति । गंयंत्वगात्मभ्यां जटिदीप्तिभ्यां नमइत्यादि० ॥ १३३ ॥

त्रिलोचनतेजवतीभ्यां नमः–दक्ष मणिबन्धे । ॐ घं लम्बोदर सत्याभ्यां नमः–दक्ष अंगुलिमूले । ॐ ङं महानन्द विघ्नेशीभ्यां नमः–दक्षअंगुल्यग्रे । ॐ चं चतुर्मूर्तिमुरूपिणीभ्यां नमः–वामबाहुमूले । ॐ छं सदाशिवकामदाभ्यां नमः–वामकूर्परे । ॐ जं आमोदमद जिह्वाभ्यां नमः–वाममणिबन्धे । ॐ झं दुर्मुखभूतिभ्यां नमः–वामअंगुलिमूले । ॐ ञं सुमुख भौतिकाभ्यां नमः–वाम अंगुल्यग्रे । ॐ टं प्रमोद सिताभ्यां नमः–दक्ष पादमूले । ॐ ठं एकपादरमाभ्यां नमः–दक्ष जानुनि । ॐ डं द्विजिह्व महिषीभ्यां नमः–दक्ष गुल्फे । ॐ ढं शूरभंजिनीभ्यां नमः–दक्ष पादांगुलिमूले । ॐ णं वीर विकर्णाभ्यां नमः–दक्ष पादांगुल्यग्रे । ॐ तं षण्मुख भृकुटीभ्यां नमः–वामपाद मूले । ॐ थं वरदलज्जाभ्यां नमः–वाम जानुनि । ॐ दं वामदेवदीर्घघोणाभ्यां नमः–वाम गुल्फे । ॐ धं वक्रतुण्ड धनुर्धराभ्यां नमः–वाम पादांगुलिमूले । ॐ नं द्विरदयामिनीभ्यां नमः–वाम पादांगुल्यग्रे । ॐ पं सेनानी रात्रिभ्यां नमः–दक्षपार्श्वे । ॐ फं कामान्धग्रामणीभ्यां नमः–वाम पार्श्वे । ॐ बं मत्तशशिप्रभाभ्यां नमः–पृष्ठे । ॐ भं विमत्तलोललोचनाभ्यां नमः–नाभौ । ॐ मं मत्तवाहनचंचलाभ्यां नमः–उदरे । ॐ यं त्वगात्मभ्यां जटी दीप्तिभ्यां नमः–हृदि । ॐ रं असृगात्मभ्यां मुण्डीसुभगाभ्यां नमः–दक्षांसे । ॐ लं मांसात्मभ्यां खड्गी दुर्भगाभ्यां नमः–ककुदि । ॐ वं मेदात्मभ्यां वरेण्यशिवाभ्यां नमः–वामांसे । ॐ शं अस्थ्यात्मभ्यां वृषकेतनभगाभ्यां नमः –हृदयादि दक्षहस्तान्तम् । ॐ षं मज्जात्मभ्यां भक्तप्रिय भगिनीभ्यां नमः–हृदयादि वामहस्तान्तम् । ॐ सं शुक्रात्मभ्यां गणेश भागिनीभ्यां नमः– हृदयादिदक्षपादान्तम् । ॐ हं प्राणात्मभ्यां मेघनाद सुभगाभ्यां नमः–हृदयादि वाम पादान्तम् । ॐ ळ शक्त्यात्मभ्यां व्यासीस्यकाल रात्रिभ्यां नमः–हृदयादि उदरान्तम् । ॐ क्षं क्रोधात्मभ्यां गणेश्वरकालिकाभ्यां नमः–हृदयादि मस्तकान्तम् ।

कलायुङ्मातृकायास्तु प्रजापतिऋषिःस्मृतः ।
छन्दउक्तं तुगायत्री देवता शारदाभिधा ॥ १३४ ॥
तारैःषडंगं कुर्वीत ह्रस्वदीर्घान्तरस्थितैः ।

कलामातृका मन्त्र का विनियोग एवं न्यास : कला मातृका मन्त्र के प्रजापति ऋषि हैं, गायत्री छन्द है तथा शारदा देवता है ।

प्रवण के दोनों ओर ह्रस्व एवं दीर्घ स्वर लगाकर षडङ्गन्यास करना चाहिए ।

टिप्पणी : विनियोग : अस्य श्रीकलामातृका न्यासस्य प्रजापतिर्ऋषिः, गायत्री छन्दः, शारदा देवता हलो बीजानि, स्वराः शक्तयः, सर्वार्थसिद्धये न्यासे विनियोगः ।

ऋष्यादिन्यास : ॐ प्रजापति ऋषये नमः–शिरसि । ॐ गायत्री छन्दसे नमः–मुखे । ॐ शारदा देवतायै नमः–हृदि । ॐ हल्भ्यो बीजेभ्यो नमः–गुह्ये । ॐ स्वरेभ्यो

॥ १३४ ॥

शक्तिभ्यो नम—।।दयोः । ॐ विनियोगाय नमः—सर्वाङ्गे ।

षडङ्गन्यास : अं ॐ आं हृदयाय नमः । इं ॐ ईं शिरसे स्वाहा । उं ॐ ऊं शिखायै वषट् । एं ॐ ऐं कवचाय हुम् । ओं ॐ औं नेत्रत्रयाय वौषट् । अं ॐ अः अस्त्राय फट् ।

शंखचक्राब्जपरशुकपालान्यक्षमालिकाम् ॥ १३५ ॥
पुस्तकामृतकुम्भौ च त्रिशूलं दधतींकरैः ।
सितपीतासितश्वेतरक्तवर्णैस्त्रिलोचनैः ॥ १३६ ॥
पञ्चास्यैःसंयुतां चन्द्रसकान्ति शारदां भजे ।

ध्यान : अपने हाथों में शंख, चक्र, कमल, परशु, कपाल, अक्षमाला, पुस्तक, अमृतकुंभ एवं त्रिशूल धारण करने वाली, श्वेत, पीत, कृष्ण, श्वेत एवं रक्त वर्ण के ५ मुखवाली, तीन नेत्रवाली तथा चन्द्रमा जैसी शुभ आभा वाली शारदा देवी का ध्यान करता हूँ ।

ध्यात्वैवं तारपूर्वान्तां न्यसेन्ङेंतकलान्विता ॥ १३७ ॥
निवृत्तिश्चप्रतिष्ठाचविद्याशान्तिस्तथेन्धिका ।
दीपिकारेचिकाचापि मोचिका चपराभिधा ॥ १३८ ॥
सूक्ष्मासूक्ष्मामृताज्ञानामृता चाप्यायनीततः ।
व्यापिनीव्योमरूपा चानन्तासृष्टिःसङ्ऋद्धिका ॥ १३९ ॥
स्मृतिर्मेधा ततःकान्तिर्लक्ष्मीर्द्युतिःस्थिरास्थितिः ।
सिद्धिर्जरापालिनी चक्षान्तिरीश्वरिकारतिः ॥ १४० ॥
कामिकावरदा चाथाह्लादिनीप्रीतिसंयुता ।
दीर्घातीक्ष्णातथारौद्रीभयानिद्रा च तन्द्रिका ॥ १४१ ॥
क्षुधास्यात्क्रोधिनीपश्चात्क्रियोत्कारीसमृत्युका ।
पीताश्वेतारुणापश्चादसितानन्तयान्विता ॥ १४२ ॥

कलामातृका न्यास : इस प्रकार ध्यान कर प्रारम्भ में प्रणव फिर चतुर्थ्यन्त कला नाम (और अन्त में नमः लगाकर) उनका न्यास करना चाहिए ।

निवृत्ति, प्रतिष्ठा, विद्या, शान्ति, इन्धिका, दीपिका, रेचिका, मोचिका,

---

कलामातृकायाः षडङ्गमाह । तारेति । यथा—अंॐआंहृत्० । इंॐईंशिरः । उंॐऊंशिखा । एंॐऐंवर्म । ओंॐऔंनेत्रम । अंॐअःअस्त्रम । ध्यानमाह । शंखेति शंखपरशुकपालाक्षमालामृतकुम्भादधहस्तेषु । अन्यान्यन्येषु । मध्येप्राग्दक्षिणपश्चिमोत्तरैर्मुखैः । क्रमात्सितपीतकृष्णश्वेतरक्तैर्युताम् । तारपूर्वामिति । ॐअंनिवृत्त्यैनमइत्यादि० ॥ १३५-१४२ ॥

पराभिधा, सूक्ष्मा, सूक्ष्मामृता, ज्ञानामृता, आप्यायनी, व्यापिनी, व्योमरूपा, अनन्ता, सृष्टि, ऋद्धिका, स्मृति, मेधा, कान्ति, लक्ष्मी, द्युति, स्थिरा, स्थिति, सिद्धि, जरा, पालिनी, क्षान्ति, ईश्वरिका, रति, कामिका, वरदा, आह्लादिनी, प्रीति, दीर्घा, तीक्ष्णा, रौद्री, भया, निद्रा, तन्द्रिका, क्षुधा, क्रोधिनी, क्रिया, उत्कारी, समृत्युका, पीता, श्वेता, अरुणा, सिता एवं अनन्ता—ये कलाएँ कही गयी हैं।

टिप्पणी : न्यास विधि : ॐ अं निवृत्यै नमः – ललाटे। ॐ आं प्रतिष्ठायै नमः – मुखवृत्ते। ॐ इं विद्यायै नमः – दक्षनेत्रे। ॐ ईं शान्त्यै नमः – वामनेत्रे। ॐ उं इन्धिकायै नमः – दक्षकर्णे। ॐ ऊं दीपिकायै नमः – वामकर्णे। ॐ ऋं रेचिकायै नमः – दक्ष नासापुटे। ॐ ॠं मोचिकायै नमः – वामनासापुटे। ॐ लृं परामिधायै नमः – दक्ष गण्डे। ॐ ॡं सूक्ष्मायै नमः – वाम गण्डे। ॐ एं सूक्ष्मामृतायै नमः – ओष्ठे। ॐ ऐं ज्ञानामृतायै नमः – अधरे। ॐ ओं आप्यायिन्यै नमः – ऊर्ध्व दन्तपंक्तौ ॐ औं व्यापिन्यै नमः – अधः दन्तपंक्तौ। ॐ अं व्योमरूपायै नमः – शिरसि। ॐ अः अनन्तायै नमः – मुखे। ॐ कं सृष्ट्यै नमः – जिह्वाग्रे। ॐ खं ऋद्धिकायै नमः – कण्ठ देशे। ॐ गं स्मृत्यै नमः – दक्षबाहुमूले। ॐ घं मेधायै नमः – दक्ष कूर्परे। ॐ ङं कान्त्यै नमः – दक्ष मणिबन्धे। ॐ चं लक्ष्म्यै नमः – दक्ष हस्तांगुलिमूले। ॐ छं द्युत्यै नमः – दक्ष हस्तांगुल्ग्र। ॐ जं स्थिरायै नमः – वाम बाहुमूले। ॐ झं स्थित्यै नमः – वामकूर्परे। ॐ ञं सिद्धयै नमः – वाम मणिबन्धे। ॐ टं जरायै नमः – वाम हस्तांगुलिमूले। ॐ ठं पालिन्यै नमः – वाम हस्तांगुल्यग्रे। ॐ डं क्षान्त्यै नमः – दक्षपादमूले। ॐ ढं ईश्वरिकायै नमः – दक्ष जानुनि। ॐ णं रत्यै नमः – दक्ष गुल्फे। ॐ तं कामिकायै नमः – दक्ष पादांगुलिमूले। ॐ थं वरदायै नमः – दक्ष पादांगुल्यग्रे। ॐ दं आह्लादिन्यै नमः – वाम पादमूले। ॐ धं प्रीत्यै नमः – वाम जानुनि। ॐ नं दीर्घायै नमः – वाम गुल्फे। ॐ पं तीक्ष्णायै नमः – वाम पादांगुलिमूले। ॐ फं रौद्र्यै नमः – वाम पादांगुल्यग्रे। ॐ बं भयायै नमः – दक्षपार्श्वे। ॐ भं निद्रायै नमः – वामपार्श्वे। ॐ मं तन्द्रिकायै नमः – पृष्ठे। ॐ यं क्षुधायै नमः – उदरे। ॐ रं क्रोधिन्यै नमः – हृदि। ॐ लं क्रियायै नमः – दक्षांसे। ॐ वं उत्कायै नमः – ककुदि ॐ शं समृत्युकायै नमः – वामांसे। ॐ षं पीतायै नमः – हृदयादि दक्षहस्तान्तम्। ॐ सं श्वेतायै नमः – हृदयादि वाम हस्तान्तम्। ॐ हं अरुणायै नमः – हृदयादि दक्षपादान्तम् ॐ। ळं सितायै नमः – हृदयादि वाम पादान्तम्। ॐ क्षं अनन्तायै नमः हृदयादि मस्तकान्तम्।

उक्ताकलामातृकैवं तत्तद्भक्तः समाचरेत्।
ततःस्वमूलमन्त्रस्य न्यासान्कल्पोदितांश्चरेत् ॥ १४३ ॥

॥ ४३ ॥

इस प्रकार (विविध देवताओं के) कलामातृका न्यास बतलाये गये। तद् तद् देवताओं के भक्तों को अपने अपने देवताओं की कला का न्यास करना चहिए।

इसके बाद अपने मूलमन्त्र के कल्पग्रन्थों में बतलाये गये न्यासों को करना चाहिए।

ऋषिश्छन्दोदैवतानि मूर्ध्नि वक्त्रे हृदि न्यसेत्।
बीजं गुह्ये पदोःशक्तिमंगानि करयोरपि ॥ १४४ ॥

ऋष्यादि न्यास की विधि : ऋषि का शिर पर, छन्द का मुख पर, देवता का हृदय पर, बीज का गुह्यांग पर तथा शक्ति का पैरों पर न्यास करना चाहिए। फिर अंगन्यास एवं करन्यास भी करना चाहिए।

अगुष्ठादिष्वंगुलीषु करस्यतत्त्वपृष्ठयोः।
अंगुष्ठाभ्यां तर्जनीभ्यांनमइत्यादिकं वदेत् ॥ १४५ ॥

करन्यास की विधि : अंगूठा आदि अँगुलियों पर, करतल एवं करपृष्ठ पर न्यास करते समय–'अंगुष्ठाभ्यां नमः, तर्जनोभ्यां नमः'—इत्यादि (मध्यमाभ्यां नमः, अनामिकाभ्यां नमः, कनिष्ठकाभ्यां नमः एवं करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः) कहना चाहिए।

हृदयादिष्वथांगानि जातियुक्तानि विन्यसेत्।
स्वस्वमुद्राभिरधुना प्रोच्यन्ते जातयश्चताः ॥ १४६ ॥
हृदयायनमश्चेति शिरसेस्वाहयायुतम्।
शिखायैवषडङ्गं चकवचायहुमित्यपि ।' १४७ ॥
नेत्रत्रयायवौषट्स्यादस्त्रायफडितीरितम्।
जातिषट्कं द्विनेत्रे तु नेत्राभ्यां वौषडुच्चरेत् ॥ १४८ ॥
पञ्चाङ्गेनेत्रसन्त्या गोमुद्राङ्गानामथोच्यते।
प्रसारितमनंगुष्ठं तर्जन्यादिचतुष्टयम् ॥ १४९ ॥
हृदि मूर्ध्नि हिचांगुष्ठहीनोमुष्टिःशिखातले।
स्कंधमारभ्यनाभ्यंता दशांगुल्यस्तुवर्मणि ॥ १५० ॥
तर्जन्यादित्रयं नेत्रत्रये नेत्रद्वयेद्वयम्।
प्रसारिताभ्यां हस्ताभ्यां कृत्वातालत्रयं सुधीः ॥ १५१ ॥
तर्जन्यंगुष्ठयोरग्रे स्कालयन्बन्धयन्दिशः।
एषास्त्रमुद्राश्रीविष्णोरंगमुद्रा उदीरिताः ॥ १५२ ॥

॥ १४४-१४५ ॥ स्वस्वमुद्राभिर्जातियुक्तान्यंगानिहृदयादिषुन्यसेत्। तामुद्राजातयश्चोच्यन्ते ॥ १४६-१४८ ॥ विष्णोरंगमुद्राआह। प्रसारितमिति। हृदिमूर्द्धनिचतर्जन्यादिचतुष्टयमेव। शक्तेः षडङ्गमुद्राआह। हृदीति ॥ १४९-१५२ ॥

हृद्यंगुलित्रयं न्यस्येत्तर्ज्जन्यादिद्वयं तुके ।
शिखाप्रदेशेथांगुष्ठं दशांगुल्यस्तुवर्मणि ॥ १५३ ॥
हृद्वन्नेत्रं पूर्वमस्त्रंशक्तेरंगस्यमुद्रिकाः ।
मुष्टीविनिर्गतांगुष्ठौ संयुक्तौ हृदि विन्यसेत् ॥ १५४ ॥
निस्तर्जनी तादृशौ तुशिरस्यथशिखातले ।
निरंगुष्ठकनिष्ठौ तौनिरंगुष्ठप्रदेशिनी ॥ १५५ ॥
मुष्टीपृथक्कृतौ स्कन्धाद्धृदन्तंवर्मणि स्मृतौ ।
तर्ज्जन्यादित्रयं नेत्रे तलास्फोटोस्त्रमीरितम् ॥ १५६ ॥

अङ्गन्यास विधि : अपनी अपनी मुद्रा एवं जातियों के साथ हृदयादि अंगों पर न्यास करना चाहिए । अब उन मुद्राओं तथा जातियों को बतलाते हैं :

हृदयाय नमः, शिरसे स्वाहा, शिखायै वषट्, कवचाय हुम्, नेत्रत्रयाय वौषट् तथा अस्त्राय फट्—ये ६ जाति कहलाते हैं । दो नेत्रवाले देवता के न्यास में 'नेत्राभ्यां वौषट्' कहना चाहिए । पञ्चाङ्गन्यास में नेत्र को छोड़ दिया जाता है ।

अब अंगन्यास की मुद्राओं को बतलाते हैं : अंगूठे के अलावा शेष तर्जनी आदि ४ उंगुलियों को फैलाकर हृदय एवं शिर पर, अंगूठा रहित मुट्ठी से शिखा पर, कन्धे से नाभि तक १० अंगुलियों से वर्म पर, तीन नेत्रवाले देवता के न्यास में तर्जनी आदि ३ अंगुलियों से और २ नेत्रवाले देवता के न्यास में तर्जनी आदि २ अंगुलियों से न्यास करना चाहिए । फैले हुए हाथों से ३ बार ताली बजाकर साधक तर्जनी एवं अंगूठे के अग्रभाग को फैलाता हुआ दिशाओं को बाँधे—यह अस्त्र मुद्रा कही गयी है । ये विष्णु के अंगन्यास की मुद्राएँ कही गयी हैं ।

तर्जनी आदि ३ अंगुलियों से हृदय पर, २ अंगुलियों से शिर पर, अंगूठे से शिखा स्थान पर, १० अंगुलियों से वर्म पर, हृदय के समान (३ अंगुलियों से) नेत्र पर तथा पूर्ववत् (विष्णु के न्यास के समान) अस्त्र पर न्यास करना चाहिए । ये शक्ति के अंगन्यास की मुद्राएँ कही गयी हैं ।

अंगूठा निकालकर बनी मुट्ठियों को मिलाकर हृदय पर न्यास करना चाहिए । तर्जनी एवं अंगूठा के अलावा शेष अंगुलियों से मुट्ठी बाँधकर और उन्हें मिलाकर शिर पर न्यास करना चाहिए । अंगूठा एवं कनिष्ठा रहित मुट्ठियों से शिखा पर,

---

के शिरसि ॥ १५३ ॥ अस्त्रंपूर्ववदणोरस्त्रतुल्यम् । शिवषडङ्गमुद्राआह । मुष्टीद्वति ॥ १५४ ॥ निर्गतातर्जनीयाभ्यांतौनिस्तर्जनीतादृशावनङ्गुष्ठौसंयुक्तौचमुष्टीशिरसि । निरंगुष्ठौतौसंयुक्तौमुष्टीशिखायाम् । अङ्गुष्ठतर्जनीभ्यां हीनौवियुतौमुष्टीकवचे । तलास्फोटः करतलास्फालनम् ॥ १५५ ॥ १५६ ॥

अंगूठा एवं तर्जनी रहित मुट्ठियों से कवच पर तथा तर्जनी आदि ३ अंगुलियों से नेत्र पर न्यास करना चाहिए। हथेलियों को फैलाना अस्त्र मुद्रा कहलाती है। ये शिव के षडङ्गन्यास की मुद्राएँ कहलाती हैं।

शैवी षडङ्गमुद्रोक्ता वर्णन्यासमथाचरेत्।
जप्त्वा चाप्यफलामन्त्राविघ्नदा न्यासमन्तरा ॥ १५७ ॥

ये शिव के षडङ्गन्यास की मुद्राएँ बतलायी गयीं। इसके बाद वर्णन्यास करना चाहिए। न्यास के बिना मन्त्र का जप करने से वे निष्फल एवं विघ्नदायक हो जाते हैं।

पीठस्य देवतान्यासाद्देहे पीठं प्रकल्पयेत्।
न्यसेन्मण्डूकमाधारे स्वाधिष्ठाने ततःसुधीः ॥ १५८ ॥
कालाग्निरुद्रं नाभौ तु कच्छपं हृदयेततः।
आधारशक्तिमारभ्य हेमपीठावधि न्यसेत् ॥ १५९ ॥
दक्षवामांसवामोरुदक्षोरुषु यथाक्रमात्।
धर्मोज्ञानं चवैराग्यमैश्वर्यं विन्यसेत्ततः ॥ १६० ॥
वदने वामपार्श्वे च नाभौ दक्षिणपार्श्वके।
अधर्मादीन्प्रविन्यस्य हृद्यनन्तमितोम्बुजम् ॥ १६१ ॥
पद्मे सूर्येन्दुवह्नीश्चतेष्वर्णाद्यानिजाःकलाः।
तत्तन्नामादिवर्णाद्यान्सत्त्वाद्यां स्त्रीन्गुणान्यसेत् ॥ १६२ ॥
तत्रात्मत्रयमाद्यर्णपूर्वं तुर्यं परादिकम्।
मायातत्त्वं कलातत्त्वं विद्यातत्त्वं ततो न्यसेत् ॥ १६३ ॥
परतत्त्वं च नामादिवर्णपूर्वाणि विन्यसेत्।
स्वपीठशक्तीर्विन्यस्य न्यसेत्पीठमनुं निजम् ॥ १६४ ॥

न्यासंविना मन्त्राअफलाविघ्नदास्ततोमूलमन्त्रस्यवर्णादिन्यास कुर्यात् ॥ १५७ ॥ पीठन्यासमाह। न्यसेदिति ॥ १५८ ॥ आधारशक्तिकूर्मानंतपृथिवीसागररत्नद्वीपप्रासाद-हेमपीठादीनिहृदि ॥ १५९ ॥

दक्षांसादिषुधर्मादयः पीठपादाः। तेचवृषकेसरिभूतगजरूपाः ॥ १६० ॥ मुखादिष्व-धर्मादयःपीठगात्राणि। तेपिवृषादिरूपाः। इतोनंतोम्बुजंपद्मम ॥ १६१ ॥ तेषुसूर्यादिषुवर्णाद्याः सूर्यादिकलाः कंभंतपिन्यैनमइत्यादिद्वादशकलाः सूर्ये। अंअमृतायैनमइत्याद्याः। षोडशेंदौ। यंधूम्रार्चिषेनमइत्याद्यादशवह्नौ। नामादिवर्णाद्यान् संसत्त्वायनमइत्यादि॰ ॥ १६२ ॥

आत्मत्रयमादयः अउमावर्णास्तत्पूर्वम्। अंआत्मने०। उंअंतरात्मने०। मंपरमात्मने०। तुर्यं-ज्ञानात्मने०। परादिकं-ह्रींपूर्वम् ॥ १६३-१६४ ॥

हृदि न्यस्यानंतमुखं देवानामुत्तरोत्तरम् ।
प्रत्याधारत्वमुदितं पूर्वपूर्वस्य सत्तमैः ॥ १६५ ॥

· *पीठन्यास* : पीठ देवताओं का न्यास करने के लिए अपने शरीर को ही पीठ मान लेना चाहिए ।

साधक को मूलाधार पर मण्डूक का, स्वाधिष्ठान पर कालाग्नि रुद्र का, नाभि में कच्छप का तथा हृदय में आधार शक्ति से हेमपीठपर्यन्त (आधार शक्ति, कूर्म, अनन्त, पृथिवी, सागर, रत्न द्वीप, प्रासाद एवं हेमपीठ) का न्यास करना चाहिए ।

फिर दाहिने कन्धे, बाँये कन्धे, वाम ऊरू तथा दक्षिण ऊरू पर यथाक्रमेण धर्म, ज्ञान, वैराग्य एवं ऐश्वर्य का न्यास करना चाहिए । और मुख, वामपार्श्व, नाभि एवं दक्षिण पार्श्व पर अधर्म आदि (अज्ञान, अवैराग्य एवं अनैश्वर्य) का न्यास करना चाहिए ।

इसके बाद हृदय में अनन्त से पद्म तक (अर्थात् तल्पाकार अनन्त, आनन्दमय कन्द, संविन्नाल, पद्म, प्रकृतिमय पत्र, विकारमय केसर तथा रत्नमय पंचाशद्बीजाढ्य कार्णिक) का न्यास कर पेद्म पर सूर्यमण्डल की तपिनी आदि १२ कालाओं, चन्द्र-मण्डल की अमृता आदि १६ कलाओं तथा वह्निमण्डल की धूम्रार्चिषि आदि १० कलाओं का नाम के आदि वर्ण को प्रारम्भ में लगाकर न्यास करना चाहिए ।

फिर अपने नाम के आदि वर्ण सहित सत्त्व, रज एवं तमो गुण का न्यास करना चाहिए । तत्पश्चात् अपने नाम के आदि वर्ण सहित आत्मा, अन्तरात्मा एवं परमात्मा का तथा आदि में परा (ह्रीं) लगाकर ज्ञानात्मा का न्यास करना चाहिए । तदनन्तर मायातत्त्व, कलातत्त्व, विद्यातत्त्व एवं परतत्त्व का भी अपने नाम के आदिवर्ण सहित न्यास करना चाहिए । इसके बाद पीठशक्तियों का न्यास कर अपने पीठमन्त्र का न्यास करना चाहि ।

हृदय में अनन्त आदि देवों को उत्तरोत्तर एक दूसरे का आधर माना गया है— ऐसा प्राचीन आचार्यों का कथन है ।

टिप्पणी : *पीठन्यास विधि* : अपने अपने कल्पोक्त करन्यास, अङ्गन्यास एवं वर्णन्यासों को करने के बाद अपने शरीर को इष्टदेवता का पीठ मान कर शरीर के विविध अंगों में निम्नलिखित रीति से पीठ देवताओं का न्यास करना चाहिए, यथा :

ॐ मण्डूकाय नमः – मूलाधारे । ॐ कालाग्नि रुद्राय नमः – स्वाधिष्ठाने । ॐ कच्छपाय नमः – नाभौ । ॐ आधारशक्तये नमः – हृदि । ॐ प्रकृतये नमः – हृदि । ॐ कूर्माय नमः – हृदि । ॐ अनन्ताय नमः – हृदि । ॐ पृथिव्यै नमः –

हृदि । ॐ क्षीरसागराय नमः – हृदि । ॐ रत्नद्वीपाय नमः – हृदि । ॐ मणिमण्डपाय नमः – हृदि । ॐ कल्पवृक्षाय नमः – हृदि । ॐ मणिवेदिकायै नमः – हृदि । ॐ हेमपीठाय नमः – हृदि ।

फिर धर्म आदि एवं अधर्म आदि का निम्नलिखित अंगों पर न्यास करना चाहिए, यथा :

ॐ धर्माय नमः – दक्षिणस्कन्धे । ॐ ज्ञानाय नमः – वामस्कन्धे । ॐ वैराग्याय नमः – वामोरौ । ॐ ऐश्वर्याय नमः – दक्षिणोरौ । ॐ अधर्माय नमः – मुखे । ॐ अज्ञानाय नमः – वामपार्श्वे । ॐ अवैराग्याय नमः – नाभौ । ॐ अनैश्वर्याय नमः – दक्षिणपार्श्वे ।

तत्पश्चात् हृदय में अनन्त आदि देवताओं का निम्नलिखित मन्त्रों से न्यास करना चाहिए, यथा :

ॐ तत्पाकारायानन्ताय नमः । ॐ आनन्दकन्दाय नमः । ॐ संविन्नालाय नमः । ॐ सर्वतत्त्वात्मकपद्माय नमः । ॐ प्रकृतमयपत्रेभ्यो नमः । ॐ विकारमय केसरेभ्यो नमः । ॐ पञ्चाशद्बीजाढ्य कर्णिकायै नमः । ॐ अं सूर्यमण्डलाय द्वादशकलात्मने नमः ।

तत्रैव — ॐ कं भं तपिन्यै नमः । ॐ खं बं तापिन्यै नमः । ॐ गं फं धूमायै नमः । ॐ घं पं मरीच्यै नमः । ॐ ङं नं ज्वालिन्यै नमः । ॐ चं धं रुच्यै नमः । ॐ छं दं सुषुम्णायै नमः । ॐ जं थं भोगदायै नमः । ॐ झं तं विश्वायै नमः । ॐ ञं णं बोधिन्यै नमः । ॐ टं ढं धारिण्यै नमः । ॐ ठं डं क्षमयै नमः ।

तत्रैव — ॐ उं सोममण्डलाय षोडशकलात्मने नमः । ॐ अं अमृतायै नमः । ॐ आं मानदायै नमः । ॐ इं पूषायै नमः । ॐ ईं तुष्ट्यै नमः । ॐ उं पुष्ट्यै नमः । ॐ ॐ रत्यै नमः । ॐ ऋं धृत्यै नमः । ॐ ॠं शशिन्यै नमः । ॐ ऌं चण्डिकायै नमः । ॐ ॡं कान्त्यै नमः । ॐ एं ज्योत्स्नायै नमः । ॐ ऐं श्रियै नमः : ॐ ओं प्रीत्यै नमः । ॐ औं अंगदायै नमः । ॐ अं पूर्णायै नमः । ॐ अः पूर्णामृतायै नमः ।

तत्रैव — ॐ रं वह्निमण्डलाय दशकलात्मने नमः । ॐ यं धूम्रार्चिषे नमः । ॐ रं ऊष्मायै नमः । ॐ लं ज्वलिन्यै नमः । ॐ वं ज्वालिन्यै । ॐ शं विस्फुलिंगिन्यै नमः । ॐ षं सुश्रियै नमः । ॐ सं स्वरूपायै नमः । ॐ हं कपिलायै नमः । ॐ ळं हव्यवाहायै नमः ।

तत्रैव — ॐ सं सत्त्वाय नमः । ॐ रं रजसे नमः । ॐ तं तमसे नमः । ॐ आं आत्मने नमः । ॐ अं अन्तरात्मने नमः । ॐ पं परमात्मने नमः । ॐ ह्रीं ज्ञानात्मने नमः ।

तत्रैव — ॐ मां मायातत्त्वाय नमः। ॐ कं कलातत्त्वाय नमः। ॐ विं विद्या तत्त्वाय नमः। ॐ पं परतत्त्वाय नमः।

सभी देवताओं की साधना में उक्तरीति से न्यास करना चाहिए। इसके बाद हृदय पद्म के पूर्वादि केसरों में उस देवता की कल्पोक्त पीठशक्तियों का न्यास करना चाहिए और फिर मध्य में पीठमन्त्र का न्यास करना चाहिए।

इतिदेहमये पीठे ध्यायेत्स्वाभीष्टदेवताम्।
तत्तन्मुद्रां प्रदर्श्याथ कुर्य्यान्मानसपूजनम् ॥ १६६ ॥
अथार्चयेत्ततो देवं मन्त्रेणानेन तन्मनाः।
स्वागतं देवदेवेश सन्निधौ भव केशव ॥ १६७ ॥
गृहाण मानसीं पूजां यथार्थपरिभाविताम्।
केशवेतिपदस्थाने कार्य्य ऊह्योन्यदैवते ॥ १६८ ॥

मानसपूजा : इस प्रकार देहमय पीठ पर अपने इष्टदेव का ध्यान करना चाहिए और उसको मुद्राओं को दिखाकर मानसपूजा करनी चाहिए।

मानसपूजा करते समय तन्मय होकर निम्नलिखित मन्त्र से इष्टदेव का पूजन करना चाहिए :

"ॐ स्वागतं देव देवेश सन्निधौ भव केशव। गृहाण मानसीं पूजां यथार्थपरिभाविताम् ॥

अन्य देवताओं का पूजन करते समय 'केशव' पद के स्थल पर 'शंकर' 'पार्वति' आदि पद बोलने चाहिए।

टिप्पणी : मानसपूजा विधि : सर्वप्रथम अपने इष्टदेव के स्वरूप का ध्यान कर उनकी मुद्राओं को दिखाकर पूर्ण मनोयोग तथा तन्मय भाव से 'ॐ स्वागतं देव देवेश०' मन्त्र से इष्टदेव का सन्निधीकरण करके निम्नलिखित मन्त्रों से मानसपूजा करनी चाहिए, यथा :

ॐ लं पृथिव्यात्मकं गन्धं विलेपयामि नमः। ॐ हं आकाशात्मकं पुष्पाणि समर्पयामि नमः। ॐ यं वाय्वात्मकं धूपं आघ्रापयामि नमः। ॐ रं वह्न्यात्मकं दीपं दर्शयामि नमः। ॐ वं अमृतात्मकं नैवेद्यं निवेदायामि नमः।

मानसा पूजयित्वैवं क्षणं तद्गतमानसः।
स्थित्वामूलमनुंविद्वाञ्जपेदष्टोत्तरं शतम् ॥ १६९ ॥

कुछ क्षणों में इस रीति से मानसपूजा कर साधक को तन्मय भाव से मूलमन्त्र का १०८ बार जप करना चाहिए।

॥ १६६ ६७ ॥ अन्यदैवतेऽहः-शंकरपार्वतीहत्यादि० ॥ १६८-१६९ ॥

जपं निवेद्य देवायस्थापयेदर्घ्यमुत्तमम् ।
बाह्यसंपूजनायाथ तत्प्रकारोनिगद्यते ॥ १७० ॥

फिर देवता को जप समर्पित कर विशेषार्घ्य स्थापित करना चाहिए । अब बाह्य पूजा करने के लिए उसकी विधि बतलाता हूँ :

इति श्री शुकदेव चतुर्वेदि विरचितायां सटिपण्यां मन्त्रमहोदधेः
मोहनी व्याख्यायामेकविंशस्तरङ्गः ।

॥ १७० ॥ इतिमन्त्रमहोदधिव्याख्यायां नौकायामेकविंशस्तरंगः ॥ २१ ॥

द्वाविंशति तरङ्ग

स्ववामाग्रे तु षट्कोणवृत्तभूपुरवेष्टितम् ।
कृत्वा त्रिकोणमूर्ध्वाग्रं स्तंभयेच्छंखमुद्रया ॥ १ ॥
पुष्पाक्षतैःषडंगानि तत्राग्न्यादिषु पूजयेत् ।
अस्त्रक्षालितमाधारं तत्रादध्यान्मनुं जपन् ॥ २ ॥
मंवह्निमण्डलायेति ततो दशकलात्मने ।
अमुकार्घ्येतिपात्रान्ते सनायनमइत्यपि ॥ ३ ॥
चतुर्विंशतिवर्णोयमाधारस्थापने मनुः ।
आधारे पूर्वकाष्ठादिदशार्चेत्पावकीःकलाः ॥ ४ ॥
स्वमन्त्रक्षालितं शंखं स्थापयेन्मनुमुच्चरन ।
अंसूर्य्यमण्डलायान्ते द्वादशेतिकलात्मने ॥ ५ ॥
अमुकार्घ्येतिपात्रायनमोन्तस्त्र्यक्षिवर्णवान् ।
शंखस्थापनमन्त्रोऽयं तारःकामोमहाजलः ॥ ६ ॥
चरायवर्मफट्स्वाहापाञ्चजन्यायहृन्मनुः ।
शंखस्य विंशत्यर्णाढ्यस्तेनप्रक्षालयेत्तु तम् ॥ ७ ॥

अर्घ्यस्थापनमाह । स्वेति । स्ववामाग्रेत्रिकोणषट्कोणवृत्तचतुरस्राणिकृत्वाशंखमुद्रयास्तम्भयेत् । शंखमुद्रालक्षणं यथा–वामांगुष्ठन्तुसंगृह्यदक्षिणेनतुमुष्टिना । कृत्वोत्तानं तथा मुष्टिमंगुष्ठंतुप्रसारयेत् । वामांगुल्यस्तथाश्लिष्टाः संयुताः सुप्रसारिताः । दक्षिणांगुष्ठकेलग्नामुद्राशंखस्यभवतिदेति ॥ १ ॥ ततः पुष्पाक्षतैरग्न्यादिषुषडङ्गानिसंपूज्यास्त्रक्षालितमाधारं मंवह्निमण्डलायदशकलात्मनेदेवार्घ्यपात्रासनायनम इत्याधारंत्रिकोणेस्थापयेत् । तत्राग्नेः कलाधूम्रार्चिराद्याः पूजयेत् ॥ २-४ ॥

स्वमन्त्रेति । शंखमन्त्रक्षालितंशंखम् अंसूर्यमण्डलायद्वादशकलात्मनेदेवार्घ्यपात्रायनमः इतिआधारेस्थापयेत् ॥ ५ ॥ त्र्यक्षिवर्णवांस्त्रयोविंशतिवर्णः अमुकपदस्थानेइष्टदेवतानामोच्चार्यरामार्घ्येत्यादि० । शंखमन्त्रमाह । तारइति । कामःक्लीं । ॐक्लींमहाजलचराय हुंफट्स्वाहापाञ्चजन्यायनमइति ॥ ६-७ ॥

कलाद्वादशसूर्य्यस्य शंखोपरियजेत्क्रमात् ।
विलोमां मातृकां मूलं विलोमं च पठञ्जलैः ॥ ८ ॥
आपूर्य्य मनुनेष्ट्वातं तत्राच्चेंदैन्दवीःकला ।
ॐसोममण्डलायान्तेषोडशान्तेकलात्मने ॥ ९ ॥
अमुकार्घ्यामृतायेतिहृन्मनुश्चार्घ्यपूजने ।
आह्वयेत्तत्र तीर्थानि तन्ममन्त्रैःसृणिमुद्रया ॥ १० ॥
रविमण्डलतःस्वीयहृदो देवमथाह्वयेत् ।
अष्टकृत्वो जपेन्मन्त्रं स्पृष्ट्वाजलमनन्यधीः ॥ ११ ॥
अप्सु विन्यस्य चाङ्गानि हृदा संपूजयेदपः ।
मूलं जपेदष्टशतं च्छादयन्मत्स्यमुद्रया ॥ १२ ॥
संरक्षेदस्त्रमन्त्रेण च्छोटिकामुद्रया जलम् ।
मुद्रया चावगुण्ठिन्या वर्मणा त्ववगुण्ठयेत् ॥ १३ ॥
अमृतीकृत्य गोमुद्रां कुर्वन्नमृतवीजतः ।
संरोधिन्या सन्निरुध्य तत्र मुद्राःप्रदर्शयेत् ॥ १४ ॥
शंखमौसलचक्राख्या परमीकृत्य तत्पुनः ।
महामुद्रां विरचयन्योनिमुद्रां च दर्शयेत् ॥ १५ ॥
कृष्णमन्त्रे गालिनीं च रामे गरुडमुद्रिकाम् ।
शंखाद्दक्षिणदिग्भागे प्रोक्षणीपात्रपूरणम् ॥ १६ ॥

तत्राककलास्तापेन्याद्याः संपूज्यविलोमेनमूलमातृकेजपन् जलेस्तंसंपूय-ॐसोममण्डलाय षोडशकलात्मनेदेवार्घ्यामृतायनमइत्यर्घ्यं संपूज्यतत्रतन्मन्त्रं सृणिमुद्रयागंगेचेत्यादितीर्थमन्त्रेणांकुशमुद्रयाऽर्कमण्डलात्तीर्थमावाह्य स्वहृदोदेवमावाहयेत् । अंकुशमुद्रालक्षणमुक्तम् । मत्स्यमुद्रोक्ता ॥ ८-१२ ॥

अंगुष्ठतर्जनीस्फोटं-छोटिकामुद्रा । वाममुष्टिनिर्गततर्जनीकंकृत्वाशंखोपरिभ्रमणम्-अवगुंठिनीमुद्रा । वर्मणाहुंबीजेन ॥ १३ ॥ गोमुद्रांधेनुमुद्राम् । सायथा-'वामांगुलीनां मध्येषुदक्षिणांगुलिकास्तथा । सयोज्यतर्जनींदक्षां मध्यमानामयोस्तथा । दक्षमध्यमयोर्वामांतर्जनीं चनियोजयेत् । वामयानामयादक्षकनिष्ठां चनियोजयेत् । दक्षयानामयामांकनिष्ठां चनियोजयेत् । विहिताधोमुखीचैषाधेनुमुद्राप्रकीर्तिता'इति । अमृतबीजतः वमितिबीजेनसंरोधिन्यामुद्रया । सायथा-'अंगुष्ठागर्भिणीसंवसंनिरोधेसमीरिता'इति । अंगुष्ठगर्भमुष्टिद्वयमित्यर्थः । तत्रार्घ्यमुद्राः शंखाद्याः ॥ १४ ॥ शंखमुसलचक्रमुद्राउक्ताः । महामुद्रांकुर्वन् परमीकृत्यकरयोरंगुलीः संग्रथ्यकरौवियोजयेदिति । महामुद्रोक्ताः ॥ १५ ॥ करांगुल्यग्राणिवक्रीकृत्यसमुखंयोजितानि-गालिनीमुद्रा । गरुडमुद्रा यथा-'संमुखीतुकरौकृत्वाग्रन्थयित्वाकनिष्ठिके । पुनश्चाधोमुखेकृत्वातर्जन्यौयोजयेत्तयाः । मध्यमानामिकेद्वेतुपक्षाविवविचालयेत्। मुद्रैषापक्षिराजस्यसर्वविघ्ननिवारिणी'इति ॥ १६ ॥

कृत्वार्घ्याम्बुत्र निक्षिप्य तेनोक्षेत्त्रिनिजां तनुम् ।
प्रजपन्मूलगायत्रीं पूजावस्तुचयं तथा ॥ १७ ॥
पाद्याचमनपात्रे च दध्याद्धर्घ्यस्य चोत्तरे ।
एवमर्घ्यविधिः प्रोक्तः सर्वसाधारणोमया ॥ १८ ॥
विहाय शंकरं सूर्यमर्घ्ये शंखःप्रशस्यते ।

विशेषार्घ्यस्थापन : अपने वामग्र भाग में त्रिकोण, षड्कोण, वृत्त एवं चतुरस्र सहित मन्त्र लिखकर शंखमुद्रा से उसे स्तम्भित करना चाहिए । उसके आग्नेय आदि कोणों में पुष्प एवं अक्षतों से षडङ्गपूजा करनी चाहिए । (फिर) अस्त्र (फट्) – मन्त्र से प्रक्षालित आधारपात्र को वक्ष्यमाण मन्त्र बोलते हुए त्रिकोण पर रखना चाहिए ।

'मं वह्निमण्डलाय' फिर 'दशकलात्मने' 'अमुकार्घ्य' 'पात्राय' के बाद 'सनाय नमः' – लगाने से यह २४ अक्षर का आधारपात्र रखने का मन्त्र बनता है । आधार पात्र पर पूर्व आदि दिशाओं में धूम्रार्चिष् आदि अग्नि की कलाओं का पूजन करना चाहिए ।

(फिर आधार के ऊपर) अपने मन्त्र से प्रक्षालित शंख को वक्ष्यमाण मन्त्र बोलते हुए रखना चाहिए । 'अं सूर्यमण्डलाय' के बाद 'द्वादश' 'कलात्मने' 'अमुकार्घ्य एवं 'पात्राय नमः' लगाने से यह २३ अक्षर का शंखस्थापन का मन्त्र बनता है ।

तार (ॐ) काम (क्लीं) एवं 'महाजल' फिर 'चराय' वर्म (हुं) 'फट् स्वाहा पाञ्चजन्याय' और अन्त में हृदय (नमः) लगाने से यह २० अक्षर का शंख का मन्त्र बनता है । इससे उसे धोना चाहिए ।

फिर शंख के ऊपर तपिनी आदि सूर्य की १२ कलाओं का पूजन करना चाहिए । (तत्पश्चात्) विलोम मातृकाओं एवं विलोम मूलमन्त्र को बोलते हुए उसमें जल भरकर वक्ष्यमाण मन्त्र से उसका पूजन कर जल में अमृता आदि चन्द्रमा की १६ कलाओं का पूजन करना चाहिए ।

'ॐ सोममण्डलाय' के बाद 'षोडश' 'कलात्मने' 'अमुकार्घ्यामृताय' और अन्त में हृदय (नमः) लगाने से यह अर्घ्यपूजन का मन्त्र बनता है ।

अर्घ्योदक में (ॐ गंगे च यमुने चैव० इत्यादि) मन्त्र से अंकुश मुद्रा से सूर्य-मण्डल से तीर्थों का अवाहन करना चाहिए तथा अपने हृदय से देव का आवाहन करना चाहिए । फिर जल का स्पर्शकर तन्मय होकर ८ बार मूलमन्त्र का जप करना चाहिए । (तत्पश्चात्) जल में अङ्गन्यास कर हृदय (नमः) मन्त्र से जल का पूजन करना चाहिए तथा मत्स्यमुद्रा से उसे आच्छादित करते हुए मूलमन्त्र का १०८ बार जप

तेनप्रोक्षणीजलेननिजांगमुक्षेत्सिचेत् । मूलगायत्र्यापूजोपकरणानिचउक्षेत् ॥ १७-१८ ॥

करना चाहिए ।

फि अस्त्र (फट्) मन्त्र से छोटिका मुद्रा द्वारा उसका संरक्षण करना चाहिए। वर्म (हुं) मन्त्र से अवगुण्ठनीमुद्रा द्वारा अवगुण्ठन करना चाहिए। धेनु मुद्रा से अमृतीकरण करने के बाद अमृत बीज (वं) से संरोधिनी मुद्रा द्वारा संरोधन कर शंख, मुसल एवं चक्र मुद्राएँ दिखाकर महामुद्रा से परमीकरण करना चाहिए और फिर योनि मुद्रा दिखलानी चाहिए। कृष्णमन्त्र की साधना में गालिनीमुद्रा तथा राम के मन्त्र की साधना में गरुड़ मुद्रा दिखलानी चाहिए ।

शंख से दक्षिण की ओर प्रोक्षणी पात्र में जल भर कर अर्घ्य पात्र से उसमें कुछ जल डालकर उससे अपने शरीर को छींटे लगाने चाहिए तथा मूलमन्त्र एवं गायत्री का जप करते हुए पूजन की वस्तुओं को छींटे लगाने चाहिए।

अर्घ्य पात्र से उत्तर की ओर पाद्य एवं आचमन के पात्र रखने चाहिए। इस प्रकार सब देवताओं की साधना में विशेषार्घ्य स्थापन की यह सामान्य विधि मैंने बतलायी। भगवान् शंकर एवं सूर्य को छोड़कर अन्य देवताओं के अर्घ्य में शंख प्रशस्त माना जाता है।

टिप्पणी : विशेषार्घ्यस्थापन विधि : अर्घ्यस्थापन यन्त्र (देखिये चित्र ८२)।

साधक को अपने वामाग्र भाग में उक्त यन्त्र लिखकर शंखमुद्रा से उसका स्तम्भन कर उसके आग्नेय आदि कोणों में षडङ्गन्यासोक्त मन्त्रों से अंगपूजा कर 'फट्' मन्त्र से सामान्यार्घ्य के जल से आधार पात्र को धोकर 'मं वह्निमण्डलायदशकलात्मने अमुकार्घ्यपात्रासनाय नमः' – इस मन्त्र से यन्त्र के त्रिकोण पर आधार पात्र को रखना चाहिए।

फिर आधार पात्र पर पूर्व आदि १० दिशाओं में निम्नलिखित मन्त्रों से अग्नि की १० कलाओं का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ यं धूम्रार्चिषे नमः। ॐ रं ऊष्मायै नमः। ॐ लं ज्वलिन्यै नमः। ॐ वं ज्वालिन्यै नमः। ॐ शं विस्फुलिंगिन्यै नमः। ॐ षं सुश्रियै नमः। ॐ सं स्वरूपायै नमः। ॐ हं कपिलायै नमः। ॐ ळं हव्यवाहायै नमः।

फिर 'ॐ क्लीं महाजलचराय हुं फट् स्वाहा पाञ्चजन्याय नमः' – मन्त्र से सामान्यार्घ्य के जल से शंख को धोकर 'अं सूर्यमण्डलाय द्वादशकलात्मने अमुकार्घ्यपात्राय नमः' – मन्त्र से आधार पर शंख को रखना चाहिए और फिर शंख पर निम्नलिखित मन्त्रों से सूर्य की १२ कलाओं का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ कं भं तपिन्यै नमः। ॐ खं बं तापिन्यै नमः। ॐ गं फं धूम्रायै नमः। ॐ

घं पं मरीच्यै नमः । ॐ ङं नं ज्वालिन्यै नमः । ॐ चं धं रुच्यै नमः । ॐ छं दं सुषुम्णायै नमः । ॐ जं थं भोगदायै नमः । ॐ झं तं विश्वायै नमः । ॐ ञं णं बोधिन्यै नमः । ॐ टं ढं धारिण्यै नमः । ॐ ठं डं क्षमायै नमः ।

तत्पश्चात् 'क्षं ळं हं शं·····उं ईं ऽं आं अं' – विलोम मातृका तथा विलोम मूलमन्त्र बोलते हुए शंख में तीर्थोदक भर कर 'ॐ सोममण्डलाय षोडशकलात्मने अमुकार्घ्यामृताय नमः' – मन्त्र से लाल चन्दन एवं पुष्प आदि से जल का पूजन कर उसमें चन्द्रमा की १६ कलाओं का निम्नलिखित मन्त्रों से पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ अं अमृतायै नमः । ॐ आं मानदायै नमः । ॐ इं पूषायै नमः । ॐ ईं तुष्ट्यै नमः । ॐ उं पुष्ट्यै नमः । ॐ ॐ रत्यै नमः । ॐ ऋं धृत्यै नमः । ॐ ॠं शशिन्यै नमः । ॐ ऌं चण्डिकायै नमः । ॐ ॡं कान्त्यै नमः । ॐ एं ज्योत्स्नायै नमः । ॐ ऐं श्रियै नमः । ॐ ओं प्रीत्यै नमः । ॐ औं अंगदायै नमः । ॐ अं पूर्णायै नमः । ॐ अः पूर्णामृतायै नमः ।

तदनन्तर – 'ॐ गंगे च यमुने चैव गोदावरि सरस्वति ।
नर्मदे सिन्धु कावेरि जलेऽस्मिन् संन्निधिं कुरु ॥
ॐ ब्रह्माण्डोदरतीर्थानि करैः स्पृष्टानि ते रवे ।
तेन सत्येन मे देव तीर्थं देहि दिवाकर ॥

इन मन्त्रों से अंकुश मुद्रा द्वारा सूर्यमण्डल से अर्घ्योदक में तीर्थों का आवाहन कर अपने हृदय से इष्टदेव का आवाहन करना चाहिए । फिर जल का स्पर्शकर तन्मय भाव से ८ बार मूलमन्त्र का जप कर जल में षडङ्गन्यास कर 'नमः' मन्त्र से जल का पूजन करना चाहिए तथा मत्स्यमुद्रा से उसे ढँकर मूलमन्त्र का १०८ बार जप करना चाहिए । तत्पश्चात् 'फट्' मन्त्र से छोटिका मुद्रा द्वारा संरक्षण, 'हुं' मन्त्र से अवगुण्ठनी मुद्रा द्वारा अवगुण्ठन, धेनु द्वारा अमृतीकरण, 'वं' बीज से संरोधिनीमुद्रा द्वारा संन्निरोधन तथा शंख, मुसल एवं चक्र मुद्राएँ दिखाकर महामुद्रा से परमीकरण करना चाहिए । और फिर योनिमुद्रा दिखलानी चाहिए ।

कृष्णमन्त्र की साधना में गालिनी मुद्रा तथा राममन्त्र की साधना में गरुड़मुद्रा दिखलानी चाहिए । सभी देवताओं की उपासना में विशेषार्घ्य स्थापन की यह सामान्य विधि है । तारा आदि की उपासना में शंख के स्थान पर तत्तद् कल्पोक्त महाशंख आदि पात्र में विशेषार्घ्य का स्थापन करना चाहिए ।

पूर्वोक्त मुद्राओं के लक्षण :

(i) *शंख मुद्रा का लक्षण* : वामांगुष्ठं तु संगृह्य दक्षिणेन तु मुष्टिना ।
कृत्वोत्तानं तथा मुष्टिमंगुष्ठं तु प्रसारयेत् ॥

वामांगुल्यस्तथा श्लिष्टाः संयुता सुप्रसारिताः ।
दक्षिणांगुष्ठके लग्नाः मुद्रा शंखस्य भूतिदा ॥

(ii) *अंकुशमुद्रा का लक्षण* : ऋजुमध्या मध्यपर्वाक्रान्ता तर्जन्यधोमुखी ।
विज्ञेयांकुशमुद्रेयं कुञ्चितामध्यपर्वतः ॥
अथवा : दक्षमुष्टि गृहीतस्य वाममुष्टेस्तु मध्यमाम् ।
प्रसार्य तर्जन्याकुञ्चेत्सेयमंकुशमुद्रिका ॥

(iii) *मत्स्यमुद्रा का लक्षण* : वामोपरिष्टात्संस्थाप्य दक्षहस्तं प्रसारयेत् ।
अंगुष्ठौ युतयोः पार्श्वे मत्स्यमुद्रेयमीरिता ॥

(iv) *छोटिकामुद्रा का लक्षण* : अंगुष्ठतर्जनी स्फोटं छोटिका मुद्रिका मता ॥

(v) *अवगुण्ठन मुद्रा का लक्षण* : सव्यहस्तकृता मुष्टिः दीर्घाधोमुखतर्जनी ।
अवगुण्ठन मुद्रेयमभितो भ्रामिता भवेत् ॥

(vi) *धेनुमुद्रा का लक्षण* : अन्योन्याभिमुखौ श्लिष्टौ कनिष्ठानामिका पुनः ।
तथा तु तर्जनीमध्या धेनु मुद्रा प्रकीर्तिताः ॥

(vii) *सन्निरोधन मुद्रा का लक्षण* : आश्लिष्ट मुष्टि युगला प्रोन्नतांगुष्ठ युग्मका ।
सन्निधाने समुद्दिष्टा मुद्रेयं तन्त्र वेदिभिः ॥
अंगुष्ठ गर्भिणी सैव सन्निरोधे समीरिता ॥

(viii) *मुसल मुद्रा का लक्षण* : मुष्टी कृत्वा तु हस्ताभ्यां वामस्योपरि दक्षिणाम् ।
कुर्यान्मुसल मुद्रेयं सर्वविघ्ननिवारिणी ॥

(ix) *चक्र मुद्रा का लक्षण* : हस्तौ तु संमुखौ कृत्वा संलग्नौ सुप्रसारितौ ।
कनिष्ठांगुष्ठकौ लग्नौ मुद्रैषा चक्रसंज्ञिता ॥

(x) *महामुद्रा का लक्षण* : अन्योन्यग्रथितांगुष्ठौ प्रसारित करांगुलिः ।
महा मुद्रेय मुदिता परमीकरणा बुधैः ॥

(xi) *योनि मुद्रा का लक्षण* : मिथः कनिष्ठके बद्धा तर्जनीभ्यामनामिके ।
अनामिकोर्ध्वं संश्लिष्ट दीर्घमध्यमयोरधः ॥
अंगुष्ठाग्रद्वयं न्यस्येद्योनिमुद्रेयमीरिता ॥

(xii) *गालिनी मुद्रा का लक्षण* : कनिष्ठांगुष्ठकौ युक्तौ करयोरितरेतरम् ।
तर्जनीमध्यमानामासंहतो भुग्नवर्जिता ॥
मुद्रेयं गालिनी नाम कृष्णमन्त्रे प्रकीर्तिता ॥

(xiii) *गरुड़मुद्रा का लक्षण* : संमुखौ तु करौ कृत्वा ग्रथयित्वा कनिष्ठके ।
पुनश्चाधो मुखे कृत्वा तर्जन्यौ योजयेत्तयोः ॥
मध्ययानामिके द्वेतु पक्षाविव विचालयेत् ।

मुद्रैषा पक्षिराजस्य सर्वविघ्न निवारिणी ॥

हेमरूप्योदुम्बराब्जरीतिदारुमृदुद्रुवम् ॥ १९ ॥
पालाशं पद्मपत्रं वा स्मृतंपाद्यादिभाजनम् ।
अशक्तावन्यपात्रेण पाद्यादीनि निवेदयेत् ॥ २० ॥

पाद्य आदि के पात्र : सुवर्ण, चाँदी, ताँबा, शंख, पीतल, पलाश के पत्तों या कमलके पत्तों से बने पाद्य आदि के पात्र श्रेष्ठ माने गये हैं । शक्ति न होने पर अन्यपात्र से पाद्य आदि चढ़ाने चाहिए ।

अन्तर्यागं ततःकुर्य्यात्पीठे देहमये सुधीः ।
न्यासस्थानेषु मण्डूकमुख्यान्गन्धादिभिर्यजेत् ॥ २१ ॥
पीठमन्त्रान्तमन्त्रेण हृदये स्वेष्टदेवताम् ।
कुण्डलीमथचोत्थाप्य द्वादशान्ते परं नयेत् ॥ २२ ॥
तदुत्थामृतधाराभिःप्रीणयेत्स्वेष्टदेवताम् ।
जपं कृत्वा निवेद्यास्मै मनसा न विसर्जयेत् ॥ २३ ॥
मूर्द्धहृत्पादगुह्येषु तनौ पुष्पाञ्जलीन्क्षिपेत् ।
अन्तर्यागं विधायेत्थं बाह्यपूजनमाचरेत् ॥ २४ ॥
अन्तर्यागबहिर्यागो गृहस्थःसर्वमाचरेत् ।
आद्यमेव ब्रह्मचारी वानप्रस्थो यतिस्तथा ॥ २५ ॥

अन्तर्याग की विधि : इसके बाद देहमय पीठ पर साधक को अन्तर्याग करना चाहिए । पीठन्यास में बतलाये गये स्थानो पर मण्डूक आदि देवताओं का गन्ध आदि उपचारों से पूजन करना चाहिए । फिर पीठमन्त्र से पीठ का पूजन कर हृदय में अपने इष्ट देव का पूजन करना चाहिए ।

फिर (आधार चक्र से) कुण्डलिनी को जगाकर ब्रह्मरन्ध्र में विद्यमान परब्रह्म के पास ले जाना चाहिए । वहाँ से टपकने वाली अमृतधाराओं से इष्टदेव को तृप्त करना चाहिए । (फिर) जप करने के बाद, उन्हें समर्पित करना चाहिए तथा शिर, हृदय, पैर, गुप्तांग एवं शरीर पर ५ पुष्पाञ्जलियाँ चढ़ानी चाहिए । इस रीति से अन्तर्याग करने के बाद बाह्यपूजन करना चाहिए ।

ग्रहस्थ को अन्तर्याग एवं बहिर्याग ये दोनों करने चाहिए । (किन्तु) ब्रह्मचारी, वानप्रस्थ एवं यति को केवल अन्तर्याग ही करना चाहिए ।

उदुंबरंताम्रम् । रीतिः पित्तलम् ॥ १९-२१ ॥ कुण्डलीमथेति । आधारचक्रात्कुण्डलिनीमुत्थाप्यद्वादशांतेब्रह्मरंध्रेवर्तमानं परब्रह्मनयेत् ॥ २२-२४ ॥ ब्रह्मचारिवानप्रस्थयतयआद्यमंतर्यागमेव । तेषांद्रव्याभावाद्बहिर्यागेनाधिकारः ॥ २५ ॥

वर्द्धन्यां प्रक्षिपेत्किंचिदर्घोदकमनन्यधीः ।
प्राणानायम्य मूलेन वामे गुरुचयं नमेत् ॥ २६ ॥
दक्षिणे च गणेशानं पीठपूजामथाचरेत् ।
स्वर्णादिनिर्मिते यन्त्रे यद्वा चन्दननिर्मिते ॥ २७ ॥
मण्डूकात्परतत्त्वान्तं दिङ्मध्ये पीठशक्तयः ।
पृथिव्यनन्तरं पूज्यःक्षीराब्धिर्माधवे श्रिया ॥ २८ ॥
इक्षुसिन्धुर्गणेशेस्यादन्यत्रामृतसागरः ।
अग्निराक्षसवाय्वीशकोणे धर्मादयःस्मृताः ॥ २९ ॥
इन्द्रकोनाशवरुणसोमाशासु नञादिकाः ।
धर्मादिपूजने प्राचीतथैवावरणार्चने ॥ ३० ॥
पूजकस्य पुरःकल्प्याःशक्रादिषु यथास्वकम् ।
श्वेताकृष्णारुणापीताश्यामारक्तासिताऽसिता ॥ ३१ ॥
रक्ताम्बराभयधरा ध्येयाःस्युःपीठशक्तयः ।

बाह्यपूजा में पीठ पूजा विधि : तत्पश्चात् अनन्यमन से साधक को (विशेषार्घ्य में से) कुछ जल वर्द्धनी कलश में डालना चाहिए। फिर मूलमन्त्र से प्राणायाम कर अपने बाँयी ओर गुरुपंक्ति को तथा दाहिनी ओर गणपति को प्रणाम कर पीठपूजा करनी चाहिए।

स्वर्ण आदि से निर्मित या चन्दन से लिखित यन्त्र पर मण्डूक से परतत्त्वपर्यन्त देवताओं का तथा आठों दिशाओं एवं मध्य में पीठ शक्तियों का पूजन करना चाहिए।

विष्णु एवं लक्ष्मी के पूजन में पृथिवी के बाद 'क्षीर सागर' का, गणेश के पूजन में 'इक्षु सागर' और देवताओं के पूजन में 'अमृतसागर' का पूजन करना चाहिए।

आग्नेय, नैऋत्य, वायव्य एवं ईशान कोणों में धर्म आदि (ज्ञान, वैराग्य एवं ऐश्वर्य) का पूजन करना चाहिए। पूर्व, दक्षिण, पश्चिम तथा उत्तर दिशाओं में नञपूर्वक उन (अधर्म, अज्ञान, अवैराग्य एवं अनैश्वर्य) का पूजन करना चाहिए। धर्म आदि के पूजन मे तथा आवरणपूजन में पूर्व दिशा साधक के सामने माननी चाहिए (पूज्यपूजकयोर्मध्ये प्राची—कल्पः)। (किन्तु) इन्द्र आदि दिक्पालों के पूजन मे यथास्थान पर पूर्व आदि दिशाओं को मानना चाहिए।

॥ २६ ॥ २७ ॥ मडूकादयःपरतत्त्वांताःपीठदेवताउक्ताः ॥ २८-२९ ॥ कोनाशोयमः । नञादिकाअधर्मादयः ॥ ३० ॥

शक्रादिषुयथास्वकं प्रसिद्धंवप्राची । पीठशक्तीनांध्यानमाह । श्वेतेति । यथाविधिस्थापितायांविधिनाप्रतिष्ठितायाम् । योर्ध्वदृक्अधोदृक्वक्राचतानपूज्याः ॥ ३१ ॥

श्वेत, कृष्ण, अरुण, पीत, श्याम, रक्त, श्वेत, कृष्ण एवं रक्त वस्त्र धारण करने-वाली तथा अभय मुद्रावाली पीठशक्तियों का ध्यान करना चाहिए।

शालग्रामे मणौ यन्त्रे नित्यपूजां समाचरेत् ॥ ३२ ॥
हेमादि प्रतिमायां वा स्थापितायां यथाविधि।
अंगुष्ठादिवितस्त्यन्तप्रमाणा प्रतिमा गृहे ॥ ३३ ॥
पूज्यानदग्धाभिन्ना वा नोद्ध्वाधोहङ् न वक्त्रिका।
लिङ्गं वा लक्षणोपेतं तत्रावाहनमाचरेत् ॥ ३४ ॥

शालिग्राम एवं मणि के यन्त्र पर प्रतिदिन पूजन करना चाहिए। स्वर्ण आदि की प्रतिमा या विधिवत प्रतिष्ठित प्रतिमा का भी प्रतिदिन पूजन करना चाहिए।

अंगूठा से लेकर १ बालिश्त तक के प्रमाण की प्रतिमा का घर में पूजन करना चाहिए। तथा जली हुई, टूटी हुई, ऊपर नीचे दृष्टि वाली, तथा वक्र आकृति वाली प्रतिमा का पूजन नहीं करना चाहिए।

अथवा सुन्दर लक्षणवाले शिवलिङ्ग का पूजन करना चाहिए। (पूजा के समय सर्वप्रथम) प्रतिमा आदि में इष्टदेव का आवाहन करना चाहिए।

मूलमुच्चार्य्य हृदयात्सुषुम्नावर्त्मना सह।
द्वारेण ब्रह्मरन्ध्रस्थनासारन्ध्रे विनिर्गतम् ॥ ३५ ॥
पुष्पाञ्जलौ मातृकाब्जे योजयित्वा विनिक्षिपेत्।
मूर्त्तौ पुष्पाञ्जलिं चैतदावाहनमुदीरितम् ॥ ३६ ॥
शालाग्रामे स्थिरायां वा नावाहनविसर्जने।
आह्वानाद्युपचारेषु श्लोकाञ्छंभूदितान्पठेत् ॥ ३७ ॥
आत्मसंस्थमजं शुद्धं त्वामहं परमेश्वर।
अरण्यामिवहव्यांशं मूर्तावावाहयाम्यहम् ॥ ३८ ॥

आवाहन : मूलमन्त्र बोलकर हृदय से सुषुम्णामार्ग द्वारा ब्रह्मरन्ध्र (सहस्रार) में स्थित (इष्टदेव का) नासारन्ध्र से लाकर पुष्पाञ्जलि के मातृका-यन्त्र में स्थापित कर इस पुष्पाञ्जलि को मूर्ति पर चढ़ाना चाहिए – इस क्रिया को आवाहन कहते हैं।

शालिग्राम या प्रतिष्ठित प्रतिमा में आवाहन एवं विसर्जन नहीं करने चाहिए।

आवाहन आदि उपचारों से पूजन करते समय भगवान् शंकर द्वारा बतलाये गये श्लोकों को बोलना चाहिए, यथा :

"आत्मसंस्थमजं शुद्धं त्वामहं परमेश्वर। अरण्यामिव हव्यांशं मूर्तावावाहयाम्यहम् ॥"

॥ ३२-३८ ॥

पञ्चायतनपक्षे तु मध्ये विष्णुं समर्चयेत् ।
अग्निनिर्ऋतिवायव्येशानेषु गणनायकम् ॥ ३९ ॥
रविं शिवां शिवं मध्ये गणेशश्चेच्छिवं शिवाम् ।
रविं विष्णुं रवौ मध्ये विघ्नाजनगजेश्वरान् ॥ ४० ॥
भवान्यां मध्यसंस्थायामीशविघ्नार्कमाधवान् ।
हरे मध्यगते सूर्यगणेशगिरिजाच्युतान् ॥ ४१ ॥
संपूज्यादौ मध्यगतं गणेशादिततो यजेत् ।
गणेशे मध्यसंस्थे तु पूजयेद्भास्करादितः ॥ ४२ ॥
काण्डानुसमयेनात्र पूजा प्रोक्ता मनीषिभिः ।

पंचायतनपूजा में देवताओं का क्रम : पञ्चायतनपूजा के पक्ष में—मध्य में विष्णु का पूजन करना चाहिए । तथा आग्नेय, नैर्ऋत्य, वायव्य एवं ईशान कोणों में क्रमशः गणेश, रवि, शक्ति एवं शिव का पूजन करना चाहिए ।

मध्य में गणेश हो तो (उक्त कोणों में क्रमशः) शिव, शक्ति, रवि एवं विष्णु का; रवि मध्य में हो तो (उक्त कोणों में) गणेश, विष्णु, शक्ति एवं शिव का; शक्ति मध्य में हो तो (उक्त कोणों में) शिव, गणेश, सूर्य एवं विष्णु का, तथा शिव मध्य में होने पर (उक्त कोणों में क्रमशः) रवि, गणेश, शक्ति एवं शिव का पूजन करना चाहिए ।

सर्वप्रथम मध्यगत (विष्णु) का पूजन कर फिर गणेश आदि का क्रमशः पूजन करना चाहिए तथा मध्य में गणेश होने पर (सर्वप्रथम उनका पूजन कर फिर) रवि आदि का पूजन करना चाहिए ।

यहाँ प्राचीन मनीषियों ने काण्डानुसमय से पूजा बतलायी है ।

टिप्पणी काडणनुसमय : एक देवता के पूजाकाण्ड को समाप्त कर अन्य देवता की पूजा करने को काण्डानुसमय कहते हैं ।

पञ्चायतन पूजा का क्रम (देखिये चित्र ८३) ।

विधायावाहनं चेत्थमावाहन्या तु मुद्रया ॥ ४३ ॥
संस्थापिन्या स्थापयेत्तु मूलान्ते श्लोकमुच्चरन् ।
तवेयं महिमामूर्त्तिस्तस्यां त्वां सर्वगं प्रभो ॥ ४४ ॥

पञ्चायतन पूजामाह । पञ्चेति ॥ ३९-४२ ॥ काण्डानुसमयेनेति । काण्डानुसमयः पदार्थानुसमयश्चेतिविधौ प्रकारद्वयम् । एकस्यपूजा काण्डसमाप्त्यापरार्चनंकाण्डानुसमयः । प्रतिपदार्थं सर्वेषां पूजापदार्थानुसमयः । ततोऽत्रकाण्डानुसमयेनपूजा । आवाहनमुद्रया-आवाहनम् । सायथा–अनामानलसंलग्नांगुष्ठाग्रांजलिरीरिता । देवाह्वानकरीचैषामुद्रा-वाहनसंज्ञिका'इति । आवाहनमुद्राधोमुखी–संस्थापनी ॥ ४३-४४ ॥

भक्तिस्नेहसमाकृष्टं दीपवत्स्थापयाम्यहम् ।
ऊह्यःकार्य्यो भवान्यादौ श्लोकेष्वावाहनादिषु ॥ ४५ ॥

स्थापन : आवाहन मुद्रा से इस प्रकार आवाहन कर मूलमन्त्र के साथ

'तवेयं महिमा मूर्तिस्तस्यां त्वां सर्वगं प्रभो ।
भक्तिस्नेहसमाकृष्टं दीपवत्स्थापयाम्यहम् ॥

—इस श्लोक को बोलते हुए संस्थापनी मुद्रा से स्थापन करना चाहिए ।

आवहन आदि के श्लोकों में भवानी आदि का पूजन करते समय 'आत्मसंस्थामजां शुद्धां त्वामहं परमेश्वरि'—इस प्रकार स्त्रीलिङ्ग के पदों को ऊह कर लेनी चाहिए ।

टिप्पणी : आवाहन मुद्रा : अनामामूलसंलग्नांगुष्ठाग्राङ्गुलिरीरिता ।
देवाह्वानकरी चैषा मुद्रावाहनसंज्ञिका ॥

स्थापनीमुद्रा : अधोमुखी कृता सैव स्थापनीति निगद्यते ॥

मूलश्लोकों पठन्कुर्य्यादासनं चोपवेशनम् ।
सर्वान्तर्यामिणे देवसर्वबीजमयं शुभम् ॥ ४६ ॥
स्वात्मस्थाय परं शुद्धमासनं कल्पयाम्यहम् ।
अस्मिन्वरासने देवसुखासीनोऽक्षरात्मक ॥ ४७ ॥
प्रतिष्ठितो भवेशत्वं प्रसीदपरमेश्वर ।

आसन एवं उपवेशन : मूलमन्त्र के साथ 'सर्वान्तर्यामिणे देवसर्वबीजमयं शुभम् ।
स्थात्मस्थाय परं शुद्धमासनं कल्पयाम्यहम् ॥

—इस श्लोक को बोलकर आसन तथा मूलमन्त्र के साथ :

'अस्मिन्वरासने देव सुखसीनोऽक्षरात्मक ।
प्रतिष्ठितो भवेशत्वं प्रसीद परमेश्वर ॥

—यह श्लोक बोलकर उपवेशन करना चाहिए ।

मूलं श्लोकं ततःकुर्य्यात्सन्निधानं स्वमुद्रया ॥ ४८ ॥
अनन्या तव देवेश मूर्तिशक्तिरियं प्रभो ।
सान्निध्यं कुरु तस्यां त्व भक्तानुग्रहतत्परः ॥ ४९ ॥

सन्निधान : मूलमन्त्र के साथ 'अनन्या तव देवेश मूर्तिशक्तिरियं प्रभो ।
सान्निध्यं कुरु तस्यां त्वं भक्तानुग्रहतत्परः ॥

—यह श्लोक बोलते हुए सन्निधान-मुद्रा से सन्निधान करना चाहिए ।

टिप्पणी : सन्निधान मुद्रा : आश्लिष्टमुष्टियुगला प्रोन्नतांगुष्ठयुग्मका ।
सन्निधाने समुद्दिष्टा मुद्रेयं तन्त्रवेदिभिः ॥

आत्मसंस्थामजांशुद्धामित्यूह्यः ॥ ४७-३९ ॥

पठन्मूलं तथा श्लोकं सन्निरुध्यात्स्वमुद्रया ।
आज्ञया तव देवेश कृपांभोधेगुणांबुधे ॥ ५० ॥
आत्मानन्दैकतृप्तं त्वां निरुणध्मि पितर्गुरो ।

सन्निरोधन : मूलमन्त्र के साथ 'आज्ञया तव देवेश कृपांभोधेगुणांबुधे ।
आत्मानन्दैकतृप्तं त्वां निरुणध्मि पितर्गुरो ॥
—यह श्लोक बोलते हुए अपनी मुद्रा द्वारा सन्निरोधन करना चाहिए।

टिप्पणी : सन्निरोधनमुद्रा : अंगुष्ठगर्भिणी सैव (सन्निधान मुद्रा) सन्निरोधे समीरिता ।

मुद्रया सम्मुखीकुर्य्यान्मूलं श्लोकं च संपठन् ॥ ५१ ॥
आज्ञानाद्दुर्मनस्त्वाद्वा वैकल्यात्साधनस्य च ।
यदपूर्णं भवेत् कृत्यं तदप्यभिमुखो भव ॥ ५२ ॥

सन्मुखीकरण : मूलमन्त्र के साथ—'अज्ञानाद्दुर्मनस्त्वाद्वा वैकल्यात्साधनस्य च ।
यदपूर्णं भवेत्कृत्यंतदप्यभिमुखो भव ॥
—यह श्लोक बोलते हुए अपनी मुद्रा द्वारा सन्मुखीकरण करना चाहिए ।

टिप्पणी : सन्मुखीकरण मुद्रा : हृद बद्धाञ्जलि मुद्रा सन्मुखीकरणे मता ।

कुर्वीत मूलश्लोकाभ्यां प्रार्थन्यामुद्रयार्चने ।
दृशापीयूषवर्षिण्या पूरयन्यज्ञविष्टरम् ॥ ५३ ॥
मूर्तौ वा यज्ञसंपूर्तेःस्थिरो भव महेश्वर ।
न्यसेत्षडङ्गं देवाङ्गे सकलोकरणं सुधीः ॥ ५४ ॥

सकलीकरण : मूलमन्त्र तथा—'दशापीयूषवर्षिण्या पूरयन् यज्ञविष्टरम् ।
मूर्तौ वा यज्ञसंपूर्तें स्थिरो भव महेश्वर ॥'
—इस श्लोक को बोलते हुए प्रार्थिनी मुद्रा द्वारा पूजन करना चाहिए । देवता के अंगों में षडङ्गन्यास करने को विद्वान् सकलीकरण कहते हैं ।

मूलं श्लोकं पठन्कुर्य्यादवगुण्ठं स्वमुद्रया ।
अव्यक्तवाङ्मनश्चक्षुःश्रोत्रदूरामितद्युते ॥ ५५ ॥
स्वतेजःपञ्जरेणाशुवेष्टितो भव सर्वतः ।

अवगुण्ठन : मूलमन्त्र तथा—'अव्यक्तवाङ्मनश्चक्षुः श्रोत्रदूरामितद्युते ।
स्वतेजः पंजरेणाशु वेष्टितो भव सर्वतः ॥'

स्वमुद्रयासन्निधानमुद्रया । उत्तानांगुष्ठौमुष्टी—सन्निधानमुद्रा । स्वमुद्रयासन्निरोधिन्या । सोक्ता ॥ ५० ॥ मुद्रयासंमुखीकरिण्याउत्तानौमुष्टी—संमुखीकरणी ॥ ५१-५२ ॥ हृद्यञ्जलिनिबन्धनं—प्रार्थनीमुद्रा ॥ ५३ ५४ ॥ स्वमुद्रयाऽवगुंठन्या सोक्ता ॥ ५५ ॥

—यह श्लोक बोलते हुए अवगुण्ठनी मुद्रा द्वारा अवगुण्ठन करना चाहिए।

टिप्पणी : अवगुण्ठनीमुद्रा : सव्यहस्त कृता मुष्टिः दीर्घाधोमुखतर्जनी।
अवगुण्ठनमुद्रेयमभितो भ्रामिता भवेत ॥

गोमुद्रयामृतीकृत्य विदध्यात्परमाकृतिम् ॥ ५६ ॥
महामुद्रां विरचयंस्ततःस्वागतमाचरेत्।

अमृतीकरण एवं परमीकरण : धेनु मुद्रा से अमृतीकरण करने के बाद महामुद्रा बनाते हुए परमीकरण करना चाहिए और फिर इष्टदेव का स्वागत करना चाहिए।

टिप्पणी : धेनुमुद्रा : अन्योन्याभिमुखौ श्लिष्टौ कनिष्ठानामिका पुनः।
तथा तु तर्जनीमध्या धेनुमुद्रा प्रकीर्तिता ॥

महामुद्रा : अन्योन्यग्रथितांगुष्ठौ प्रसारितकरांगुलिः।
महामुद्रेयमुदिता परमीकरणा बुधैः ॥

मूलमन्त्रं तथा श्लोकं पठंस्तद्गतमानसः ॥ ५७ ॥
यस्य दर्शनमिच्छन्ति देवाःस्वाभीष्टसिद्धये।
तस्मै ते परमेशाय स्वागतं स्वागतं च ते ॥ ५८ ॥
ततः सुस्वागतं कुर्य्यान्मूलश्लोकौ समुच्चरन्।
कृतार्थोनुगृहीतोस्मि सफलं जीवितं मम ॥ ५९ ॥
आगतो देवदेवेश सुस्वागतमिदं पुनः।

स्वागत एवं सुस्वागत : मूलमन्त्र के साथ'यस्य दर्शनमिच्छन्ति देवाःस्वाभीष्टसिद्धये।
तस्मै ते परमेशाय स्वागतं स्वागतं च ते ॥
यह श्लोक बोलते हुए इष्टदेव का स्वागत करना चाहिए।
फिर मूलमन्त्र तथा 'कृतार्थोनुगृहीतोस्मि सफलं जीवितं मम।
आगतं देव देवेश सुस्वागतमिदं पुनः ॥
यह श्लोक बोलते हुए सुस्वागत करना चाहिए।

श्यामाकविष्णुक्रान्ताब्जदूर्वाःपाद्यजले क्षिपेत् ॥ ६० ॥
मूलश्लोकनमोमन्त्रैःपाद्यं पादाम्बुजेऽर्पयेत्।
यद्भक्तिलेशसम्पर्कात्परमानन्दविग्रहम् ॥ ६१ ॥
तस्मै ते चरणाब्जाय पाद्यं शुद्धाय कल्पये।

पाद्य : श्यामाक, विष्णुक्रान्ता (अपराजिता), कमल एवं दूब को पाद्य के जल में मिलाना चाहिए।

गोमुद्रोक्ता ॥ ५६ ॥ महामुद्राप्युक्ता ॥ ५७-५९ ॥ पाद्यद्रव्याण्याह । श्यामाकेति ॥ ६०-६१॥

मूलमन्त्र तथा 'यद्भक्तिलेश संपर्कात्परमानन्दविग्रहम् ।
तस्मै ते चरणाब्जाय पाद्यं शुद्धायकल्पये ॥

–इस श्लोक को बोलते हुए नमः मन्त्र से इष्टदेव के चरणकमलों में पाद्य चढ़ाना चाहिए ।

लवंगजातिकङ्कोलं प्रक्षिप्याचमनीयके ॥ ६२ ॥
दद्यादाचमनं वक्त्रे मूलश्लोकसुधाक्षरैः ।
वेदानामपि वेद्याय देवानां देवतात्मने ॥ ६३ ॥
आचामं कल्पयामीशशुद्धानां शुद्धिहेतवे ।

आचमन : लौंग, जायफल एवं कंकोल–ये तीनों वस्तुएँ आचमनीय जल में मिलानी चाहिए ।

मूलमन्त्र के बाद 'वेदानामपि वेद्याय देवानां देवतात्मने ।
आचामं कल्पयामीशशुद्धानां शुद्धिहेतवे ॥

–यह श्लोक तथा सुधाबीज (वं) बोलते हुए इष्टदेव के मुख में आचमन देना चाहिए ।

अर्घ्यपात्रे क्षिपेद्दूर्वास्तिलदर्भाग्रसर्षपान् ॥ ६४ ॥
यवपुष्पाक्षतान्गन्धं तेनार्घ्यं मूर्द्ध्नना चरेत् ।
मूलश्लोकशिरोमन्त्रैःदेवस्य मनुवित्तमः ॥ ६५ ॥
तापत्रयहरं दिव्यं परमानन्दलक्षणम् ।
तापत्रयविनिर्मुक्तं तवार्घ्यं कल्पयाम्यहम् ॥ ६६ ॥

अर्घ्य : अर्घ्य पात्र में दूब, तिल, कुशा के टुकड़े, सरसों, जौ, पुष्प, चावल एवं कुंकुम डालने चाहिए ।

मूलमन्त्र के बाद 'तापत्रयहरं दिव्यं परमानन्दलक्षणम् ।
तापत्रय विनिर्मुक्तं तवार्घ्यं कल्पयाम्यहम् ॥

–यह श्लोक तथा शिरोमन्त्र (स्वाहा) बोलते हुए देवता के शिर से अर्घ्य देना चाहिए ।

पात्रे तु मधुपर्कस्य दध्याज्यमधु च क्षिपेत् ।
मूलश्लोकसुधामन्त्रैर्दद्यात्तं वदने प्रभोः ॥ ६७ ॥
सर्वकालुष्यहीनाय परिपूर्णसुखात्मने ।
मधुपर्कमिदं देव कल्पयामि प्रसीद मे ॥ ६८ ॥

आचमनीयद्रव्याण्याह । लवंगेति । कंकोलंसुगंधद्रव्यं मरिचोपमम् ॥ ६२-६४ ॥ शिरोमन्त्रः स्वाहा ॥ ६५ ६६ ॥ सुधामन्त्रो वम् ॥ ६७-६८ ॥

मधुपर्क : मधुपर्क के पात्र में दही, घी एवं शहद मिलाना चाहिए।

मूलमन्त्र के बाद 'सर्वकालुष्यहीनाय परिपूर्णसुखात्मने।
मधुपर्कमिदं देव कल्पयामि प्रसीद मे ॥

–यह श्लोक तथा सुधाबीज (वं) बोलते हुए इष्टदेव को मुख में मधुपर्क अर्पित करना चाहिए।

पुनराचमनं दद्यान्मूलश्लोकान्तरं पठन्।
उच्छिष्टाप्यशुचिर्वापि यस्य स्मरणमात्रतः ॥ ६९ ॥
शुद्धिमाप्नोति तस्मै ते पुनराचमनीयकम्।
स्नानवस्त्रोपवीतान्ते नैवेद्यान्तेपि तत्स्मृतम् ॥ ७० ॥
पाद्यादिवस्त्वभावे तु तत्स्मरन्नक्षतान्क्षिपेत्।

पुनराचमन : मूलमन्त्र के साथ 'उच्छिष्टोप्यशुचिर्वापि यस्य स्मरणमात्रतः।
शुद्धिमाप्नोति तस्मै ते पुनराचमनीयकम् ॥'

–यह श्लोक बोलते हुए पुनः आचमन करना चाहिए।

स्नान, वस्त्र, यज्ञोपवीत एवं नैवेद्य के बाद भी पुनः आचमन करना चाहिए तथा पाद्य आदि की वस्तुओं के अभाव में उनका स्मरण करते हुए अक्षत डालने चाहिए।

गन्धतैलं ततो दद्यान्मूलश्लोकं पठन्सुधीः ॥ ७१ ॥
स्नेहं गृहाण स्नेहेन लोकनाथ महाशय।
सर्वलोकेषु शुद्धात्मन्ददामि स्नेहमुत्तमम् ॥ ७२ ॥
हरिद्राद्यैस्तमुद्वर्त्य स्नापयेदुभयं पठन्।
परमानन्दबोधाब्धिनिमग्ननिजमूर्त्तये ॥ ७३ ॥
सांगोपाङ्गमिदं स्नानं कल्पयाम्यहमीशते।

तैल,उद्वर्तन एवं स्नान : मूलमन्त्र के साथ 'स्नेहं गृहाण स्नेहन लोकनाथ महाशय।
सर्वलोकेषु शुद्धात्मन् ददामि स्नेहमुत्तमम् ॥'

–यह श्लोक बोलते हुए सुगन्धित तैल (इत्र) लगाना चाहिए। फिर हल्दी आदि से उद्वर्तन(उबटन) करने के बाद मूलमन्त्र के साथ 'परमानन्दबोधाब्धिनिमग्ननिजमूर्तये।
सांगोपांगमिदं स्नानं कल्पयाम्यहमीशते ॥

–यह श्लोक बोलते हुए इष्टदेव का स्नान कराना चाहिए।

ततःसहस्रं शंखेन शतं वाशक्तितोपि वा ॥ ७४ ॥
गंधयुक्तोदकैरीशमभिषिञ्चेन्मनुं स्मरन्।

॥ ६९ ॥ स्नानवस्त्रोपवीतनैवेद्येष्वुदक्तेष्वाचमनीयं दद्यात् ॥ ७०–७२ ॥ उभयंमूलश्लोकौ ॥ ७३-७४ ॥

अभिषेक : इसके बाद १ हजार, १ सौ अथवा यथाशक्ति शंखों से सुगन्धित जल से मूलमन्त्र बोलते हुए देवता का अभिषेक करना चाहिए।

पठन्मूलं ततःश्लोकौ दद्याद्वस्त्रोत्तरीयके ॥ ७५ ॥
मायाचित्रपटच्छन्ननिजगुह्योरुतेजसे ।
निरावरणविज्ञानवासस्ते कल्पयाम्यहम् ॥ ७६ ॥
यमाश्रित्य महामाया जगत्सम्मोहिनी सदा ।
तस्मै ते परमेशाय कल्पयाम्युत्तरीयकम् ॥ ७७ ॥
पीतं विष्णौ सितं शम्भौ रक्तंविघ्नार्कशक्तिषु ।
सच्छिद्रं मलिनं जीर्णं त्यजेत्तैलादिदूषितम् ॥ ७८ ॥

वस्त्र एवं उत्तरीय : मूलमन्त्र के साथ 'मायाचित्रपटच्छन्ननिजदुह्योरुतेजसे ।
निरावरणविज्ञानवासस्ते कल्पयाम्यहम् ॥'

—यह श्लोक बोलते हुए वस्त्र चढ़ाना चाहिए। और फिर मूलमन्त्र के साथ

'यमाश्रित्य महामाया जगत्संमोहिनी सदा ।
तस्मै ते परमेशाय कल्पयाम्युत्तरीयकम् ॥'

—यह श्लोक बोलकर उत्तरीय चढ़ाना चाहिए।

उपवीतं भूषणानि प्रयच्छेदुभयं पठन् ।
यस्य शक्तित्रयेणेदं सम्प्रोतमखिलं जगत् ॥ ७९ ॥
यज्ञसूत्राय तस्मै ते यज्ञसूत्रं प्रकल्पये ।
स्वभावसुन्दराङ्गाय नानाशक्त्याश्रयाय ते ॥ ८० ॥
भूषणानि विचित्राणि कल्पयाम्यमरार्चितम् ।

उपवीत एवं आभूषण : मूलमन्त्र के साथ 'यस्यशक्तित्रयेणेदं संप्रोतमखिलंजगत् ।
यज्ञसूत्राय तस्मै ते यज्ञसूत्रं प्रकल्पये ॥'[1]

—यह श्लोक बोलते हुए यज्ञोपवीत चढ़ाना चाहिए। तथा मूलमन्त्र के साथ

'स्वभावसुन्दराङ्गाय नानाशक्त्याश्रयाय ते ।
भूषणानि विचित्राणि कल्पयाम्यमरार्चितम् ॥

—यह श्लोक बोलकर आभूषण चढ़ाने चाहिए।

मूलमन्त्रेण पुटितमेकैकं मातृकाक्षरम् ॥ ८१ ॥
विन्यसेद्देवताङ्गेषु योगोयं लोकमोहनः ।

लोकमोहन : मूलमन्त्र से सम्पुटित वर्णमाला के १-१ अक्षर का देवता के अंगों में न्यास करना चाहिए। यह योग लोकमोहन कहलाता है।

---

[1] ॥ ७५–८१ ॥

कनिष्ठया पात्रसंस्थं पूर्ववद्गन्धमर्पयेत् ॥ ८२ ॥
परमानन्दसौभाग्यपरिपूर्णदिगन्तरम् ।
गृहाण परमं गन्धं कृपया परमेश्वर ॥ ८३ ॥
ततःकनिष्ठांगुष्ठाभ्यां गन्धमुद्रां प्रदर्शयेत् ।

गन्ध : मूलमन्त्र के साथ 'परमान्दसौभाग्यपरिपूर्णदिगन्तरम् ।
गृहाण परमं गन्धं कृपया परमेश्वर ॥

—यह श्लोक बोलते हुए कनिष्ठका से पात्र में रखी गन्ध (कुंकुम) लेकर चढ़ाना चाहिए । और फिर कनिष्ठका एवं अंगूठे को मिलाकर गन्धमुद्रा दिखलानी चाहिए ।

मूलंश्लोकं पठन्नानापुष्पाणि विनिवेदयेत् ॥ ८४ ॥
तुरीयवनसंभूतं नानागुणमनोहरम् ।
अमन्दसौरभं पुष्पं गृह्यतामिदमुत्तमम् ॥ ८५ ॥
तर्ज्जन्यंगुष्ठयोगेन पुष्पमुद्रां प्रदर्शयेत् ।

पुष्प : मूलमन्त्र के साथ 'तुरीयवनसंभूतं नानागुणमनोहरम् ।
अमनन्दसौरभं पुष्पं गृह्यतामिदमुत्तमम् ॥

यह श्लोक बोलते हुए अनेक पुष्प चढ़ान चाहिए और फिर तर्जनी एवं अंगूठे को मिलाकर पुष्पमुद्रा दिखलानी चाहिए ।

अक्षतानर्कधत्तूरौ विष्णौ नैवार्पयेत्सुधीः ॥ ८६ ॥
बन्धूकं केतकीं कुन्दं केसरं कुटजं जयाम् ।
शंकरे नार्पयेद्विद्वान्मालतीं यूथिकामपि ॥ ८७ ॥
शक्तौ दूर्वार्किमन्दारान्मालूरं तगरं रवौ ।
विनायके तु तुलसीं नार्पयेज्जातुचिद्बुधः ॥ ८८ ॥
श्वेतं पीतं हरेरिष्टं रक्तं रविगणेशयोः ।
निर्गन्धं केशकीटादिदूषितं चोग्रगन्धकम् ॥ ८९ ॥
मलिनं तुच्छसंस्पृष्टमाघ्रातं स्वविकासितम् ।
अशुद्धभाजनानीतं स्नात्वानीतं च याचितम् ॥ ९० ॥

पूर्ववन्मूलश्लोकौपठन्गंधमर्पयेत् ॥ ८२-८३ ॥ अंगुष्ठौकनिष्ठामूलल्गनौ-गंधमुद्रा ॥ ८४ ॥ ८५ ॥ तर्जन्यावंगुष्ठमूललग्ने-पुष्पमद्रा । पुष्पाध्यायमाह । अक्षतानित्यादिना । अक्षतान् तण्डुलादीन् । तिलकोपर्य्यर्पणेनदोषः ॥ ८६ ॥ ८७ ॥ शक्तौदूर्वादयोनियोनिषिद्धाः महालक्ष्म्यास्तदूर्वाप्रशस्ता । मालूरंबिल्वम् । तगरं गंधतगरम् । तगरइतिकान्य कुब्जभाषायम् । जातुकदाचिदपि ॥ ८८ ॥ निषिद्धान्याह । निर्गंधमिति ॥ ८९ ॥ तुच्छसंस्पृष्टं शरीरलग्नम् । स्वविकासितंबलादात्मनाविकासितम् ॥ ९० ॥

शुष्कं पर्य्युषितं कृष्णं भूमिगं नार्पयेत्सुमम् ।
चंपकं कमलं त्यक्त्वाकलिकामपिवर्ज्जयेत् ॥ ९१ ॥
कुरण्टकं काञ्चनारं वर्जयेद्बृहतीयुगम् ।
पुष्पं पत्रं फलं देवे न प्रदद्यादधोमुखं ॥ ९२ ॥
पुष्पाञ्जलौ न तद्दोषस्तथापर्य्युषितस्य च ।

पूजन में वर्जित पुष्प : साधक को अक्षत, आक एवं धतूरा—ये सब विष्णु पर नहीं चढ़ाने चाहिए।

बन्धूक (दुपहरिया), केतकी, कुन्द, मौलसरी, कोरैया एवं जयपर्ण, मालती तथा जुही, ये पुष्प शंकर पर नहीं चढ़ाने चाहिए।

दूब, आक, हरसिंगार, बेल एवं तगर ये सब दुर्गा पर नहीं चढ़ाने चाहिए।

सूर्य एवं गणेशजी पर कभी भी तुलसी नहीं चढ़ानी चाहिए।

श्वेत एवं पीले पुष्प विष्णु के लिए तथा लाल पुष्प सूर्य एवं गणेशजी के लिए प्रशस्त माने गये हैं।

सुगन्धिरहित, कीड़ा आदि से दूषित, उग्रगन्धवाले, मलिन, नीच व्यक्ति द्वारा स्पर्श किये गये, सूँघे हुए, स्वयं खिलाये गये, अशुद्ध पात्र से लाये गये, नहाकर गीले वस्त्रों से लाये गये, माँग कर लाये गये, सूखे हुए, बासी, काले तथा भूमि पर पड़े हुए फूलों को देवता पर चढ़ाना नहीं चाहिए। चम्पा एवं कमल की कलियों को छोड़कर अन्य पुष्पों की कलियाँ भी नहीं चढ़ानी चाहिए। पीले रंग की कटसरैया, नागचम्पा एवं दोनों प्रकार की बृहती के फूल भी वर्जित माने गये हैं।

पुष्प, पत्र एवं फल—ये तीनों वस्तुएँ अधोमुख करके देवता को समर्पित नहीं करनी चाहिए। पुष्पाञ्जलि में अधोमुख तथा पर्युषित (बासी) फूल का दोष नहीं माना जाता।

तुलसीबकुलोवृक्षश्चंपकश्चसरोजिनी ॥ ९३ ॥
बिल्वकल्हारदमनास्तथामरुबकःकुशः।
दूर्वाहिवल्ल्यपामार्गविष्णुक्रान्तामुनिद्रुमाः ॥ ९४ ॥
धात्रीयुतानामेतेषां पत्रैःकुर्य्यात्सुराचनम् ।

पूजा में ग्राह्य पत्ते : तुलसी, मौलसरी, चम्पा, कमलिनी, बेल, श्वेत कमल,

---

पर्युषितंदिनांतरानीतम्। सुमंपुष्पम् चंपककमलयोः कलिकाअपिप्रशस्ता ॥ ९१ ॥ पुष्पपत्रफलान्यधोमुखानिनार्पयेद्यथोत्पन्नं तथैवार्पयेदित्यर्थः ॥ ९२ ॥ पुष्पाञ्जलौ अधोमुख-पर्युषितयोर्नदोषः ॥ ९३ ॥ अहिवल्लीनागवल्ली । मुनिद्रुमोऽगस्त्यः ॥ ९४ ॥

दमन, मैनफल, कुशा, दूर्वा, नागवल्ली, ओंघा, विष्णुक्रान्ता, अगस्त्य तथा आँवला–इनके पत्तों से देवताओं का पूजन करना चाहिए।

जंबूदाडिमजंबीरर्तितिणीबोजपूरकाः ॥ ९५ ॥
रंभाधात्री चबदरीरसालःपनसोपि च ।
एषां फलैर्यजेद्देवं तुलसी तु हरेःप्रिया ॥ ९६ ॥
सुवर्णपुष्पं तुलसी नैवन्निर्माल्यतां व्रजेत् ।

प्रशस्तफल : जामुन, अनार, नीबू, इमली, बिजौरा, केला आँवला, बेर, आम तथा कटहल इनके फलों से देवता का पूजन करना चाहिए।

तुलसी विष्णु की प्रिया है। अमलतास का पुष्प तथा तुलसी–ये दोनों निर्माल्य नहीं माने जाते।

पुष्पपूजां विधायेत्थं कुर्य्यादावरणार्चनम् ॥ ९७ ॥
अङ्गादिदिक्पहेत्यन्तं ततो धूपादिकं चरेत् ।
अग्निनैर्ऋतिवाय्वीशकोणेषु हृदयं शिरः ॥ ९८ ॥
शिखां कवचमाराध्य नेत्रमग्रे प्रपूजयेत् ।
दिक्ष्वस्त्रमंगदेव्यस्ता ध्यातव्या वामलोचनाः ॥ ९९ ॥
सिताश्वेतासितास्तिस्रो रक्ताइष्टाभयान्विताः ।
स्वदिक्षु प्रयजेद्दिक्पाञ्जातिहेत्यादिसंयुतान् ॥ १०० ॥
तारादिनिजबीजाद्यांस्तत्प्रयोगोऽधुनोच्यते ।
तारं बीजमथेंद्रायामुकाधिपतये ततः ॥ १०१ ॥
सायुधायसवाहान्ते नायसान्ते परीति च ।
वारायान्ते सशक्तीतिकायामुकपदं ततः ॥ १०२ ॥
पार्षदायनमोंतोऽयं दिक्पालानां मनुःस्मृतिः ।
इन्द्रायेतिपदस्थाने वह्न्यादिपदमुच्चरेत् ॥ १०३ ॥

धात्री आमलकी। तुलस्यादीनां पत्ररपिपूजा। जम्बादीनां पत्ररपिफलैश्च ॥ ९५ ॥ रसालः आम्रः ॥ ९६ ॥ ९७ ॥ दिक्पहेत्यंतमिति। दिक्पालायुधपर्यंतमावरणपूजा। इदंसांप्रदायिकम् क्वचिदगपूजातः प्रागपिवज्राद्यूर्ध्वमप्यावरणानिसंति। अंगपूजा-स्थानमाह। अग्नीति ॥ ९८ ॥ अंगदेवताध्यानमाह। वामलोचनाः स्त्रीरूपाः ॥ ९९ ॥ तिस्रः कवचनेत्रनाम्नरूपाःरक्ताइष्टाभयान्विताबराभययुताः। स्वदिक्षुप्रसिद्धासु दिक्पालानिंद्रा-दीन्। जातिहेत्यादिसंयुतान्। जातयः सुरादयः हेतयोवज्रादयः। आदिशब्दाद्वाहनशक्ती ॥ १०० ॥ प्रणवादीनि यानिनिजबीजानींद्रादिबीजानिपूर्वमुक्तानिलं रंमंषंवंयंसंहंक्षींआं इत्यादीनि। प्रयोगमाह। तारमिति ॥ १०१-१०३ ॥

आद्यामुकपदस्थाने क्रमाज्जातीर्वदेत्सुधीः ।
सुरतेजःप्रेतरक्षःसलिल प्राणतारकाः ॥ १०४ ॥
भूताहिलोकाविज्ञेया आशापालकजातयः ।
पार्षदात्पूर्वममुकस्थाने स्यात्स्वेष्टदेवता ॥ १०५ ॥
बीजानि पूर्वमुक्तानि वाहनान्यायुधान्यपि ।
यातुतोयपयोर्मध्येऽनन्तं पूर्वेशयोस्तुकम् ॥ १०६ ॥
प्रत्यावृत्तिक्षिपेद्देवे पुष्पं मन्त्रमिमं जपन् ।
अभीष्टसिद्धिं मे देहि शरणागतवत्सल ॥ १०७ ॥
भक्त्या समर्पयेतुभ्यमिदमावरणार्चनम् ।

आवरणपूजा : इस प्रकार पुष्पों से पूजन करने के बाद षडङ्गपूजा से प्रारम्भ कर दिक्पाल तथा उनके आयुधों तक आवरणपूजा करनी चाहिए और फिर धूप, दीप आदि उपचारों से इष्टदेव का पूजन करना चाहिए।

आग्नेय, नैर्ऋत्य, वायव्य एवं ईशान कोणों में (क्रमशः) हृदय, शिर, शिखा एवं कवच का पूजन कर अग्रभाग में नेत्र तथा दिशाओं में अस्त्र का पूजन करना चाहिए। (अङ्गपूजा करते समय) ३ श्वेत तथा ३ रक्त वर्ण वाली, हाथ में वर एवं अभय धारण करने वाली, सुन्दर स्त्री जैसे रूपवाली अंगदेवियों का ध्यान करना चाहिए।

अपनी अपनी दिशाओं में जाति एवं आयुध आदि (वाहन एवं शक्ति) के साथ दिक्पालों का पूजन करना चाहिए। इनके मन्त्रों के प्रारम्भ में तार (ॐ) तथा अपने-अपने बीज (लं रं मं क्षं वं यं सं हं ह्रीं एवं आं) लगाने चाहिए। अब प्रयोग विधि को बतलाता हूँ :

तार (ॐ) एवं अपना बीज फिर 'इन्द्राय' 'अमुकाधिपतये' 'सायुधाय' 'सवाहं' के बाद 'नायस' 'परि' एवं 'वाराय' फिर सशक्ति' 'काय' 'अमुक' पार्षदाय' तथा अन्त में 'नमः' लगाने से दिक्पालों की पूजा के मन्त्र बन जाते हैं। 'इन्द्राय' पद के स्थान पर (अन्य दिक्पालों का पूजन करते समय) 'अग्नये' आदि पद बोलना

आद्येति। अधिपतयइत्येतस्मात्पूर्वस्यामुकपदस्यस्थानेसुरादिजातीर्वदेत् ॥ १०४-१०५ ॥ बीजादीतिदिक्पालाश्चपूर्वमुक्ताः। यातुतोयपयोर्निर्ऋतिवरुणयोः।कंब्रह्माणम्। यथा-ॐलं इंद्रायसुराधिपतये सायुधाय सवाहनाय सपरिवाराय सशक्तिकायामुकेष्टदेवता पार्षदाय नमः ॐ रं अग्नये तेजोधिपतये० ॐ मं यमाय प्रेताधिपतये० ॐ क्षं नैर्ऋतये रक्षोधिपतये० ॐ वं वरुणाय जलाधिपतये० ॐ यं वायवेप्राणाधिपतये० ॐ सं सोमाय नक्षत्राधिपतये० ॐ हं ईशानाय भूताधिपतये० ॐ ह्रीं अनन्ताय नागाधिपतये० ॐआंब्रह्मणेलोकाधिपतये० इतिप्रयोगः ॥ १०६ ॥ १०७ ॥

चाहिए। पहिले अमुक पद के स्थान पर साधक को उनकी जाति बोलनी चाहिए। सुर, तेज, प्रेत, रक्ष, जल, प्राण, नक्षत्र, भूत, नाग एवं लोक–ये दिक्पालों की जातियाँ हैं। 'पार्षदाय' से पहिले वाले 'अमुक' के स्थान पर अपने इष्टदेवता का नाम बोलना चाहिए। इनके बीज, वाहन एवं आयुध पहिले बतलाये जा चुके हैं। निर्ऋति एवं वरुण के बीच में अनन्त का तथा पूर्व एवं ईशान के बीच में ब्रह्मा का पूजन करना चाहिए।

प्रत्येक आवरण की समाप्ति पर 'अभीष्ट सिद्धिं मे देहि शरणागतवत्सल। भक्त्या समर्पये तुभ्यमिदमावरणार्चनम्' यह मन्त्र बोलते हुए देवता पर पुष्प चढ़ाने चाहिए।

टिप्पणी : दिक्पालों की पूजा के मन्त्र : ॐ लं इन्द्राय सुराधिपतये सायुधाय सवाहनाय सपरिवाराय सशक्तिकाय अमुक (इष्टदेव का नाम) पार्षदाय नमः। ॐ रं अग्नये तेजोधिपतये सायु० सवा० सपरि० सशक्ति० अमुक पार्षदाय नमः। ॐ मं यमाय प्रेताधिपतये····नमः। ॐ क्षं निर्ऋतये रक्षोधिपतये····नमः। ॐ वं वरुणाय जलाधिपतये····नमः। ॐ यं वायवे प्राणाधिपतये····नमः। ॐ सं सोमाय नक्षत्राधिपतये ···· नमः। ॐ हं ईशानाय भूताधिपतये···· नमः। ॐ ह्रीं अनन्ताय नागाधिपतये···· नमः। ॐ आं ब्रह्मणे लोकाधिपतये सायुधाय सवाहनाय सपरिवाराय सशक्तिकाय अमुक पार्षदाय नमः।

आह्वानाद्युपचारेषु प्रत्येकं पुष्पपाथसी ॥ १०८ ॥
दत्त्वा प्रक्षाल्य च करमुपचारान्तरं चरेत्।

आह्वान आदि प्रत्येक उपचार के बाद जल एवं पुष्प चढ़ाकर हाथ धोकर अन्य उपचार चढ़ाने चाहिए।

धूपपात्रस्थिताङ्गारे क्षिप्त्वागुरुपुरादिकम् ॥ १०९ ॥
पात्रमस्त्रेण संप्रोक्ष्य हृदा पुष्पं समर्पयेत्।
संस्पृशन्वामतर्जन्या मूलश्लोकं च संपठेत् ॥ ११० ॥
वनस्पतिरसोपेतो गन्धाढ्यःसुमनोहरः।
आघ्रेयः सर्वदेवानां धूपोयं प्रतिगृह्यताम् ॥ १११ ॥
साङ्गाय सपरीत्यन्ते वारायङ्गेतदेवता।
धूपं समर्पयामीतिनमोन्तं मन्त्रमुच्चरन् ॥ ११२ ॥
शङ्खाम्बुप्रक्षिपेद्धूमौ धूपमुद्रां प्रदर्शयेत्।

पुष्पपाथसी उष्पोदकेदत्त्वा। धूपमाह। धूपपात्रेति। पुरोगुग्गुलुः। आदिशब्दात् घृतकर्पूरशर्कराः। अग्रावगुर्वादिप्रक्षिप्यफडिति प्रोच्यनमइति पुष्पंसमर्प्य वामतर्जन्यासंस्पृश्य मूलश्लोकान्ते साङ्गाय सपरिवारायरामाय धूपंसमर्पयामीतिशंखोदकंक्षिपेत्। तर्जनी मूलयोरंगुष्ठयोगो–धूपमुद्रा। स्वमन्त्रतः घण्टामंत्रः॥ १०८-११३ ॥

तर्जन्यंगुष्ठयोगेन घण्टामर्चेत्स्वमन्त्रतः ॥ ११३ ॥

धूप : धूपपात्र के अङ्गार पर अगर एवं गुग्गुल रखकर 'फट्' मन्त्र से पात्र का प्रोक्षण कर 'नमः' मन्त्र से पुष्प चढ़ाने चाहिए। फिर बाँयें हाथ की तर्जनी से धूपपात्र का स्पर्श करते हुए मूलमन्त्र के साथ 'वनस्पति रसोपेतो गंधाढ्यः सुमनोहरः। आघ्रेयः सर्व देवानां धूपोऽयं प्रतिगृह्यताम् ॥ –इस श्लोक को पढ़ना चाहिए।

फिर 'साङ्गाय सपरि' के बाद 'वाराय' 'अमुक देवतायै' फिर 'समर्पयामि नमः' –इस मन्त्र को बोलते हुए शंख के जल को भूमि पर डालना चाहिए तथा (दाहिने हाथ को) तर्जनी एवं अँगूठे को मिलाकर धूपमुद्रा दिखलानी चाहिए, और फिर अपने मन्त्र से घण्टा का पूजन करना चाहिए।

टिप्पणी : *धूप का मन्त्र* : मूलं० 'वनस्पति रसोपेतो गन्धाढ्यः सुमनोहरः। आघ्रेयः सर्वदेवानां धूपोऽयं प्रतिगृह्यताम् ॥ साङ्गाय सपरिवाराय अमुक देवतायै धूपं समर्पयामि नमः।

जयध्वनिमन्त्रमातःस्वाहान्तःसदशाक्षरः।
वादयन्वामहस्तेन कीर्तयन्देवतागुणान् ॥ ११४ ॥
धूपयेद्दक्षहस्तेन देवतानाभिदेशतः।
जलं पुष्पाञ्जलिं दद्याद्दीपदानमपीदृशम् ॥ ११५ ॥

घण्टापूजन एवं धूपदान : 'जयध्वनिमातः स्वाहा' इस दशाक्षर मन्त्र से घण्टा का पूजन करना चाहिए। फिर बाँयें हाथ से घण्टा बजाते हुए इष्टदेव के गुणों को गाते हुए दाहिने हाथ से देवता की नाभि के पास से धूप देनी चाहिए। फिर शङ्ख से जल तथा १ पुष्पाञ्जलि चढ़ानी चाहिए। दीपदान में भी ऐसा ही करना चाहिए।

वाममध्यमया स्पर्शोमूलश्लोकस्य कीर्तनम्।
सुप्रकाशो महादीपःसर्वतस्तिमिरापहः ॥ ११६ ॥
सबाह्याभ्यन्तरं ज्योतिर्दीपोयं प्रतिगृह्यताम्।
धूपस्थाने दीपपदं मध्यमांगुष्ठयोगतः ॥ ११७ ॥
दीपमुद्रादर्शनं च तद्दानं नेत्रदेशतः।
भूरिपक्षे तु वर्तीनां विषमावर्तिका मताः ॥ ११८ ॥
घृतदीपोदक्षिणे स्यात्तैलदीपस्तु वामतः।
सितवर्तियुतो दक्षेवामांगे रक्तवर्तिकः ॥ ११९ ॥
अत्रान्यद्धूपवज्ज्ञेयं ततोनैवेद्यमर्पयेत्।

॥ ११४ ॥ विशेषमाह। धूपयेदिति। ईदृशंदीपदानमपि। प्रोक्षणप्रयोगश्चतद्वत् ॥ ११५ ॥ वामेति ॥ ११६-११७ ॥ मध्यमामूलयोरंगुष्ठयोगो–दीपमुद्रा। दीपदानं नेत्रप्रदेशे। वर्तीनां भूरिपक्षेबहुत्वपक्षेऽविषमास्त्याज्याः ॥ ११८ ॥ सितवर्तियुततैलंदीपो-दक्षिणतः। रक्तवर्तियुतोघृतदीपोवामतइत्यर्थः ॥ ११९ ॥

दीप : बाँये हाथ की मध्यमा से दीपक का स्पर्श करते हुए मूलमन्त्र के साथ 'सुप्रकाशो महादीपः सर्वतस्तिमिरापहः । सबाह्याभ्यन्तरं ज्योतिर्दीपोऽयं प्रतिगृह्यताम्' —यह श्लोक बोलकर धूपमन्त्र से धूप के स्थान पर दीप पद लगाकर 'साङ्गाय सपरिवाराय अमुक देवतायै दीपं दर्शयामि नमः' से दीप दान करना चाहिए । मध्यमा एवं अँगूठे को मिलाकर दीपमुद्रा दिखानी चाहिए तथा देवता के नेत्रों के पास तक ऊँचा उठाकर दीपक दिखलाना चाहिए ।

दीपक में अनेक बत्तियाँ होने पर उनकी संख्या विषम होनी चाहिए ।

घी का दीपक दाहिनी ओर तथा तैल का दीपक बाँयी ओर रखना चाहिए । दाहिनी ओर के दीपक में सफेद बत्ती तथा बाँयी ओर के दीपक में लाल बत्ती डालनी चाहिए । इस प्रसंग में अन्य सब बातें धूप के समान होती हैं ।

इसके बाद नैवेद्य समर्पित करना चाहिए ।

स्वर्णादिभाजने साज्यं पायसं शर्करादिकम् ॥ १२० ॥
परिवेष्य यथाशक्तिप्रोक्षेत्कैरस्त्रमन्त्रितैः ।
चक्रमुद्रामथारच्य प्रोक्षेत्तन्मन्त्रितैर्जलैः ॥ १२१ ॥
वायुबीजेनार्कवारं ततस्तज्जातमारुतैः ।
नैवेद्यदोषं संशोष्य चिन्तयेद्दक्षिणेकरे ॥ १२२ ॥
अग्निबीजं तस्य पृष्ठे वामं करतलं न्यसेत् ।
तं दर्शयित्वा नैवेद्ये तदुत्थेनाग्निनाखिलम् ॥ १२३ ॥
नैवेद्यदोषं सन्दह्य ध्यायेद्वामकरेऽमृतम् ।
तत्पृष्ठे दक्षिणंहस्तं कृत्वा तत्र प्रदर्शयेत् ॥ १२४ ॥
आप्लावितं स्मरेद्भोज्यं बीजोत्थामृतधारया ।
प्रोक्ष्य मूलेन तत्स्पृष्ट्वाऽष्टशोमूलमनुं जपन् ॥ १२५ ॥
दर्शयित्वा धेनुमुद्रां गन्धपुष्पैस्तदर्चयेत् ।
देवेपुष्पाञ्जलिं दत्त्वा तेजोदेवमुखोत्थितम् ॥ १२६ ॥

अन्यजलप्रोक्षादि ॥ १२० ॥ ऽर्जलैः । चक्रमुद्रोक्ता । वायुबीजेनद्वादशवारं मंत्रितैर्जलैस्तन्नैवेद्यं प्रोक्षेत् ॥ १२१ ॥

वायुबीजोत्थमारुतैर्नैवेद्यदोषं संशोष्य दक्षिणकरे रं बीजंविचिंत्यदक्षकरपृष्ठेवामकरं दत्त्वानैवेद्यं प्रदर्श्याग्निबीजोत्थाग्निनादोषं दग्ध्वावामकरे वंबीजं ध्यात्वातत्पृष्ठेदक्षहस्तं दत्त्वानैवेद्यं प्रदर्श्यामृतबीजोत्थामृतप्लुतं स्मृत्वामूलेनप्रोक्ष्यतत्स्पृष्ट्वाऽष्टवारं मूलंप्रजप्यधेनुमुद्रांप्रदर्श्यसंपूज्यदेवेपुष्पं दत्त्वादेवस्योद्गतंतेजः स्मृत्वावामांगुष्ठस्पृष्टं नैवेद्यंसजलदक्षहस्तेनमूलश्लोकसहितस्वाहांतेसांगायेतिपठन्नैवेद्यमुद्रां प्रदर्शयेत् । अनामामूलयोरंगुष्ठयोगोनैवेद्यमुद्रा ॥ १२२-१२६ ॥

विचित्य वामांगुष्ठेन स्पृशेन्नैवेद्यभाजनम् ।
दक्षहस्ते जलं धृत्वा मूलश्लोकं शिरःपठेत् ॥ १२७ ॥
सत्पात्रसिद्धं सुहविर्विविधानेकभक्षणम् ।
निवेदयामि देवेश सानुगाय गृहाण तत् ॥ १२८ ॥
साङ्गायेत्यादिकं प्रोच्य जलमुत्सृज्य भूतले ।
नैवेद्यमुद्रामंगुष्ठानामिकाभ्यां प्रदर्शयेत् ॥ १२९ ॥
सपुष्पाभ्यां कराभ्यां त्रिःप्रोद्धरन्भक्ष्यभाजनम् ।
निवेदयामि भवते जुषाणेदं हविर्हरे ॥ १३० ॥
षोडशार्णानिमान्प्रोच्च ग्रासमुद्रां प्रदर्शयेत् ।
वामहस्तेन पद्माभां प्राणाद्यादक्षिणेन तु ॥ १३१ ॥
कनिष्ठानामिकांगुष्ठैर्मुद्राप्राणस्य कीर्तिता ।
तर्जनीमध्यमांगुष्ठैरपानस्य तु सा स्मृता ॥ १३२ ॥
अनामामध्यमांगुष्ठैरुदानस्य च मुद्रिका ।
तर्जन्यनामामध्याभिःसांगुष्ठाभिश्चतुर्थिका ॥ १३३ ॥
सर्वाभिःससमानस्य प्राणाद्यान्डेद्विठान्वितान् ।
तारपूर्वाञ्जपन्मुद्राःप्राणादीनां प्रदर्शयेत् ॥ १३४ ॥
ततो जवनिकां कृत्वा ब्रह्मेशाद्यैरिदं पठेत् ।
पद्मं शालेर्भक्तमितिमूलमन्त्रं च सप्तधा ॥ १३५ ॥
प्रतिसीरामपाकृत्य दद्याच्छ्लोकं पठञ्जलम् ।
समस्तदेवदेवेश सर्वतृप्तिकरं परम् ॥ १३६ ॥
अखण्डानन्दसम्पूर्णं गृहाण जलमुत्तमम् ।

॥ १२७-१२९ ॥ सपुष्पकराभ्यां पात्रमुद्धरन्निवेदयामीतिपठेत् ॥ १३० ॥ पद्माभोवाम-हस्तो–ग्रासमुद्रा ॥ १३१ ॥ प्राणादिमुद्राआह । कनिष्ठेति ॥ १३२ ॥ चतुर्थिकाव्यानमुद्रा ॥ १३३ ॥ सर्वांगुलीभिः समानमुद्रा । द्विठं स्वाहा । ॐप्राणायस्वाहेत्यादि० ॥ १३४ ॥

जवनिकातिरस्करिणी तांत्रवाशालेर्भक्तंब्रह्मेशाद्यैरितिषड्वर्णं पठेत् । यथा–'ब्रह्मेशाद्यैः परितउरुभिः सूपविष्टैः समेतैलक्ष्म्याश्लिष्टद्वलयकरयासादर वीज्यमानः । लीलानर्म-प्रहसनमुखैर्व्याप्नुवन्पंक्तिमध्यंभुंक्तेपात्रेकनकघटितेषड्रसं श्रीरमेशः' ॥ १ ॥ 'शालेर्भक्तंसुप-क्वंशिशिररसितं पायसापूपसूपंलेह्यंपेयंचचोष्यं सितममृतफलं पूरिकाद्यंसुखाद्यम् । आज्यं प्राज्यं सभोज्यं नयनरुचिकरं राजिकैलामरीचस्वादीद्यः शाकराजीपरिकरममृता-हारजोपंजुषस्व' ॥ २ ॥ इतिषड्वर्णम् । रमेशपदंस्थानेदेवताभेदेत्यदेवतानामहः कार्यः । लक्ष्म्येतिपदस्थानेपिगौर्यापार्वत्येत्यादिपदसन्निवेशऊह्यः ॥ १३५ ॥ प्रतिसीरां जवनिकाम् ॥ १३६ ॥

नैवेद्य : सुवर्ण आदि के पात्र में अपनी शक्ति के अनुसार घी के साथ खीर एवं शक्कर आदि पदार्थ परोस कर इनका 'फट्' मन्त्र से जल के द्वारा प्रोक्षण करना चाहिए। फिर चक्रमुद्रा बनाकर मूलमन्त्र से अभिमन्त्रित (विशेषार्घ्य के) जल से प्रोक्षण करना चाहिए। १२ बार वायुबीज (यं) से अभिमन्त्रित जल से नैवेद्य का प्रोक्षित कर उससे उत्पन्न वायु द्वारा नैवेद्य के दोषों का शोषण कर दाहिने करतल पर अग्निबीज (रं) का ध्यान करना चाहिए तथा उसके पृष्ठ पर वामकरतल रखना चाहिए। फिर नैवेद्य दिखाकर उस (अग्निबीज) से उत्पन्न अग्नि द्वारा नैवेद्य के दोष को जलाकर बाँयी हथेली में अमृत बीज (व) का ध्यान करना चाहिए। फिर उसके पीछे दाहिना हाथ कर नैवेद्य दिखा कर उस अमृतबीज से उत्पन्न अमृतधारा से नैवेद्य को अप्लावित मान कर ८ बार मूल मन्त्र का जप करते हुए उसका स्पर्शकर धेनुमुद्रा दिखाकर गन्ध एवं पुष्प चढ़ाने चाहिए।

(फिर) इष्टदेव पर पुष्पाञ्जलि चढ़ाकर देव के मुख से निकलने वाले तेज का ध्यान कर बाँये अंगूठे से नैवेद्यपात्र का स्पर्श करना चाहिए तथा दाहिने हाथ में जल लेकर स्वाहान्त मूलमन्त्र के साथ :

'सत्पात्रसिद्धं सुहविर्विधानेकभक्षणम्। निवेदयामि देवेश सानुगाय गृहाण तत् साङ्गाय सपरिवाराय अमुक देवतायै नैवेद्य निवेदयामि नमः' – कहकर भूमि पर जल डाल कर अंगूठा एवं अनामिका मिलाकर नैवेद्य मुद्रा दिखलानी चाहिए।

पुष्प सहित हाथों से नवेद्य पात्र को तीन बार उठाते हुए 'निवेदयामि भवते जुषाणेदं हविर्हरे' – यह षोडशाक्षर मन्त्र बोलकर बाँये हाथ से कमल जैसी ग्रासमुद्रा दिखलानी चाहिए और दाहिने हाथ से प्राण आदि मुद्राएँ दिखलानी चाहिए।

कनिष्ठका, अनामिका एवं अँगूठे को मिलाने से प्राण की मुद्रा बनती है। तर्जनी, मध्यमा एवं अँगूठा मिलाने से अपान की मुद्रा कहलाती है। अनामिका, मध्यमा एवं अँगूठे से उदान की मुद्रा, तर्जनी, अनामिका, मध्यमा एवं अँगूठा द्वारा व्यान की मुद्रा तथा सब अंगुलियोंद्वारा समान की मुद्रा बनती है। चतुर्थ्यन्त प्राण आदि के अन्त में 'स्वाहा' तथा प्रारम्भ में 'प्रणव' लगाकर बने मन्त्रों का जप करते हुए प्राण आदि की मुद्राएँ दिखलानी चाहिए।

तत्पश्चात् पर्दा खींचकर :

ब्रह्मेशाद्यैः परित उरुभिः सूपविष्टैः समेतैर्लक्ष्म्या शिजद्वलय करया सादरं वीज्यमानः।
लीलानर्म प्रहसन मुखैर्व्याप्नुवन्भक्तिमद्भ्यं, भुंक्तेपात्रे कनकघटिते षड्रसं श्रीरमेशः॥

शालेर्भक्तं सुपक्वं शिशिररसितं पायसापूपसूपं,
लेह्यं पेयं च चोष्यं सितममृतफलं पूरिकाद्यं सुखाद्यम्।
आज्यं प्राज्यं समोज्यं नयनरुचिकरं राजिकैलामरीच-

स्वादो यः शाकराजी परिकरममृताहार जोषं जुषस्व ॥

—ये २ श्लोक तथा ७ बार मूलमन्त्र का जप करना चाहिए।

इसके बाद पर्दा हटाकर 'समस्त देव देवेश सर्वतृप्तिकरं परम्।

अखण्डानन्दसंपूर्ण गृहाण जलमुत्तमम् ॥'

—इस श्लोक को बोलते हुए जल देना चाहिए।

स्थण्डिलेग्निमुपाधाय वैश्वदेवक्रियां चरेत् ॥ १३७ ॥
मूलेन वीक्ष्य चास्त्रेण कृत्वा प्रोक्षणताडने।
कुशैस्तद्वर्मणाभ्युक्ष्य पूर्ववत्स्थापयेच्छुचिम् ॥ १३८ ॥
तन्मन्त्रेण तमभ्यर्च्याहूय तत्रेष्टदेवताम्।
पूजयेद्गंधपुष्पैस्तां महाव्याहृतिभिस्ततः ॥ १३९ ॥
हुत्वा व्यस्तसमस्ताभिराहुतीनां चतुष्टयम्।
अन्नैर्मूलेन जुहुयात्पञ्चविंशतिसंख्यया ॥ १४० ॥
पुनर्व्याहृतिभिर्हुत्वा मूर्तौ देवं नियोजयेत्।
वह्निं विसृज्य देवाय दद्यादाचमनोदकम् ॥ १४१ ॥

बलि वैश्वदेव : स्थण्डिल पर अग्नि को स्थापित कर वैश्वदेव कर्म करना चाहिए :

मूलमन्त्र से (अग्नि को) देखकर, 'फट्' से प्रज्वलित कर, कुशाओं से प्रोक्षण एवं ताडन कर, 'हुं' से अभ्युक्षरण कर प्रथम तरङ्ग में बतलायी गयी रीति से अग्नि की स्थापना करना चाहिए। वैश्वानर मन्त्र से उसका पूजन कर उसमें इष्टदेव का आवाहन कर गन्ध एवं पुष्पों से उनका पूजन करना चाहिए।

फिर महाव्याहृति से होम कर व्यस्त एवं समस्त व्याहृतियों से ४ आहुति देनी चाहिए। फिर मूलमन्त्र से अन्न से २५ आहुतियाँ देनी चाहिए। इसके बाद व्याहृतियों से होम कर इष्ट देव को मूर्ति में नियोजित करना चाहिए। और अग्नि का विसर्जन कर आचमन के लिए जल देना चाहिए।

तेजःसंयोज्य देवस्य निर्गतं देववक्त्रतः।
नैवेद्यांश तदुच्छिष्टभोजिने विनिवेदयेत् ॥ १४२ ॥

देवता के मुख से निर्गत तेज को उसी में संयोजित कर नैवेद्य का एक भाग उसके उच्छिष्टभोजी को देना चाहिए।

॥ १३७ ॥ शुचिंवह्निं पूर्ववत्प्रथमतरंगोक्तविधिना ॥ १३८ ॥ तन्मन्त्रेणवैश्वानरमन्त्रेण-पूर्वोक्तेन ॥ १३९-१४० ॥ १४१-१४२ ॥

विष्वक्सेनो हरेरुक्तश्चण्डेश्वर उमापतेः ।
विकर्तनस्य चण्डांशुर्वक्रतुण्डो गणेशितुः ॥ १४३ ॥
शक्तेरुच्छिष्टचाण्डाली स्मृता उच्छिष्टभोजिनः ।

उच्छिष्टभोजी : विष्णु का विश्वक्सेन, शिव का चण्डेश्वर, रवि का चण्डांशु, गणेश का वक्रतुण्ड तथा शक्ति का उच्छिष्टचाण्डाली उच्छिष्टभोजी कहा गया है ।

ततो लवणमुत्तार्य्य कुर्य्यादारार्तिकं सुधीः ॥ १४४ ॥
अथोनिवेद्य ताम्बूलं दर्शयेच्छत्रचामरे ।
पठेद्देवमना भूत्वा सार्द्धश्लोकचतुष्टयम् ॥ १४५ ॥
बुद्धिः सवासनाक्लृप्तादर्पणं मङ्गलानि च ।
मनोवृत्तिर्विचित्रा ते नृत्यरूपेण कल्पिता ॥ १४६ ॥
ध्वनयो गीतरूपेण शब्दवाद्यप्रभेदतः ।
छत्राणि नवपद्यानि कल्पितानि मया प्रभो ॥ १४७ ॥
सुषुम्णाध्वजरूपेण प्राणाद्याश्चामरात्मना ।
अहंकारो गजत्वेन वेगःक्लृप्तोरथात्मना ॥ १४८ ॥
इंन्द्रियाण्यश्वरूपाणि शब्दादिरथवर्त्मना ।
मनःप्रग्रहरूपेण बुद्धिःसारथिरूपतः ॥ १४९ ॥
सर्वमन्यत्तथाक्लृप्तं तवोपकरणात्मना ।

आरती एवं ताम्बूल आदि उपचार : इसके बाद नमक उसार कर साधक को आरती करनी चाहिए ।

तत्पश्चात् ताम्बूल निवेदित कर छत्र एवं चामर दिखलाने चाहिए तथा तन्मय होकर निम्नलिखित ४॥ श्लोक पढ़ने चाहिए, यथा :

'बुद्धिः सवासना क्लृप्ता दर्पणं मङ्गलानि च । मनोवृत्तिर्विचित्रा ते नृत्यरूपेण कल्पिता ॥
ध्वनयो गीतरूपेण शब्दवाद्य प्रभेदतः । छत्राणि नवपद्यानि कल्पितानि मया प्रभो ॥
सुषुम्णा ध्वजरूपेण प्राणाद्याश्चामरात्मना । अहंकारो गजत्वेन वेगः क्लृप्तोरथात्मना ॥
इन्द्रियाण्यश्वरूपाणि शब्दादिरथवर्त्मना । मनः प्रग्रहरूपेण बुद्धिः सारथिरूपतः ॥
सर्वमन्यत्तथा क्लृप्तं तवोपकरणात्मना ॥
श्लोकानेतान्पठित्वा तु मूलमन्त्रमनन्यधीः ॥ १५० ॥

उच्छिष्टभोजिनआह । विश्वक्सेनइत्यादिना विकर्तनस्यरवेः ॥ १४३-१४४ ॥ सार्धश्लोक चतुष्टयंशिवोक्तम ॥ १४५ ॥तदेवाह । बुद्धिरिति ॥ १४६-१५० ॥

यथाशक्तिजपित्वातं मन्त्रेण विनिवेदयेत् ।
क्षिपन्नर्घस्य पानीयं देवता दक्षिणकरे ॥ १५१ ॥
गुह्यातिगुह्यगोप्ता त्वं गृहाणासात्कृतं जपम् ।
सिद्धिर्भवतु मे देव त्वत्प्रसादात्त्वयि स्थितिः ॥ १५२ ॥
कीर्तितःश्लोकरूपोयं मन्त्रो जपनिवेदने ।
दत्त्वापराङ्मुख चार्घ्यं पुष्पैःशंखं प्रपूजयेत् ॥ १५३ ॥

जप एवं उसका निवेदन : इन श्लोकों को पढ़ने के बाद साधक तन्मय होकर मूलमन्त्र का यथा शक्ति जप कर देवता के दाहिने हाथ में विशेषार्घ्य का जल छोड़ते हुए निम्नलिखित मन्त्र से जप देवता को निवेदित करना चाहिए :

गुह्यातिगुह्यगोप्ता त्वंगृहाणासात्कृतं जपम् । सिद्धिर्भवतु मे देव त्वत्प्रसादात्त्वयिस्थितिः ॥

—जप का निवेदन करने में यह श्लोकात्मक मन्त्र बतलाया गया है ।

फिर पराङ्मुख अर्घ्य देकर पुष्पों से शङ्ख का पूजन करना चाहिए ।

दण्डवत्प्रणिपत्येशं देवे कुर्य्यात्प्रदक्षिणाः ।
अजेशशक्तिगणपभास्कराणां क्रमादिमाः ॥ १५४ ॥
वेदार्द्धचन्द्रवन्ह्यद्रिसंख्याःस्युःसर्वसिद्धये ।

देवताओं की प्रदक्षिणा-संख्या : देव को दण्डवत् प्रणाम कर इष्टदेव को प्रदक्षिणा करनी चाहिए । विष्णु, शिव, शक्ति, गणेश एवं रवि आदि देवताओं की क्रमशः ४, आधी, १, ३ एवं ७ परिक्रमाएँ सब सिद्धियों के लिए करनी चाहिए ।

स्तुत्वा ब्रह्मार्पणाख्येन मनुनाऽऽत्मानमर्पयेत् ॥ १५५ ॥
इतःपूर्वं प्राणबुद्धिदेहधर्माधिकारतः ।
जाग्रत्स्वप्नसुषुप्त्यन्तेऽवस्थासु मनसा वदेत् ॥ १५६ ॥
वाचा चहस्ताभ्यां पद्भ्यामुदरेण शिश्नतस्ततः ।
मेषोनन्तान्वितो यत्स्मृतं यदुक्तं च यत्कृतम् ॥ १५७ ॥
तत्सर्वं प्रोच्य ब्रह्मार्पणं भवत्वग्निवल्लभा ।
मांमदीयं च सकलं हरये ते समर्पये ॥ १५८ ॥

मन्त्रेणगुह्यातिगुह्येत्यादिना तंजपंदेवदत्तकरेघंजलेनार्पयत् ॥ १५१-१५३ ॥ प्रदक्षिणा-संख्यामाह । अजेति । अजेविष्णौवेदाश्चतस्रः प्रदक्षिणाः । ईशेर्द्धम् । शक्तावेका । गणेशस्यतिस्रः । रवेः सप्त ॥ १५४-१५५ ॥

ब्रह्मार्पणमंत्रमाह । इतइति । वकःशः मेषोऽनन्तान्वितः नः आयुतः श्ला । यथा—ॐइतः पूर्वंप्राणबुद्धिदेहधर्माधिकारतो जाग्रत्स्वप्नसुषुप्त्यवस्थासु मनसा वाचा हस्ताभ्यां पद्भ्यामुदरेण शिश्नेन यत्स्मृतं यदुक्तं यत्कृतं तत्सर्वं ब्रह्मार्पणं भवतु स्वाहा मां मदीयं च सकलं हरये ते समर्पये ॐ तत्सदिति ॥ १५६-१५८ ॥

तारस्तत्सदितिप्रोक्तो ब्रह्मार्पणमनुर्बुधैः ।
प्रणवादिद्वर्धशीत्यर्णो देवतात्मसमर्पणे ॥ १५९ ॥

ब्रह्मार्पण विधि : फिर स्तुति करने के बाद ब्रह्मार्पण मन्त्र से आत्मनिवेदन करना चाहिए ।

'इतः पूर्वं प्राणबुद्धिदेहधर्माधिकारतः जाग्रत्स्वप्नसुषुप्त्य' के बाद 'वस्थासु मनसा' फिर 'वाचा' 'हस्ताभ्यां पद्भ्यामुदरेणशिश्ने' एवं अनन्तान्वित मेष (न) फिर 'यत्स्मृतं यदुक्तं' 'यत्कृतं' एवं 'तत्सर्वं' कहकर 'ब्रह्मार्पणं भवतु' एवं अग्निवल्लभा (स्वाहा) फिर 'मां मदीयं च सकलं हरये ते समर्पये' तार (ॐ) तथा अन्त में 'तत्सद्' एवं प्रारम्भ में प्रणव लगाने से यह ८२ अक्षर का देवता को आत्मसमर्पण करने के लिए ब्रह्मार्पणमन्त्र कहा गया है ।

टिप्पणी : *ब्रह्मार्पणमन्त्र* : ॐ इतः पूर्वं प्राणबुद्धिदेहधर्माधिकारतो जाग्रत्स्वप्नसुषुप्त्यवस्थासु मनसा वाचा हस्ताभ्यां पद्भ्यामुदरेण शिश्नेन यत्स्मृतं यदुक्तं यत्कृतं तत्सर्वं ब्रह्मार्पणं भवतु स्वाहा मां मदीयं च सकलं हरये ते समर्पये ॐ तत्सद् ।

संहारमुद्रया देवं संहरेद्धृदये निजे ।
अन्यस्मिन्दैवते काय्यं ऊहो हरिपदे बुधैः ॥ १६० ॥

विसर्जन : संहार मुद्रा द्वारा इष्टदेव को अपने हृदय में स्थापित करना चाहिए । अन्य देवताओं के पूजन में (ब्रह्मार्पण मन्त्र में) 'हरये' के स्थान पर उस देवता को ऊह करनी चाहिए ।

एवं सम्पूज्य देवेशं ब्रह्मयज्ञं समाचरेत् ।
योगक्षेमं ततःकृत्वा मध्याह्ने स्नानमाचरेत् ॥ १६१ ॥

इस प्रकार इष्टदेव का पूजन कर ब्रह्मयज्ञ (वेदाध्ययन) करना चाहिए । फिरयोग-क्षेम (व्यावसायिक एवं घर के कार्य) करने के बाद मध्याह्न में स्नान करना चाहिए ।

स्मार्तं तान्त्रं च पूर्वोक्तं सन्ध्यातर्पणमप्यथ ।
सम्पूज्य पूर्ववद्देवं वैश्वदेवादिक चरेत् ॥ १६२ ॥
देवप्रसादं भुञ्जीत सम्भोज्य ब्राह्मणोत्तमान् ।
आचम्य देवं संस्मृत्य पुराणं शृणुयात्सुधीः ॥ १६३ ॥

मध्याह्नपूजन : पूर्वोक्त रीति से स्मार्त एवं तान्त्रिक सन्ध्या तथा तर्पण कर उक्त विधि से इष्टदेव का पूजन कर बलिवैश्वदेव आदि सब कार्य करने चाहिए । फिर उत्तम

॥ १५९ ॥ संहारमुद्रोक्ता । हरयेइत्यत्रईशानायगौर्यइत्याद्यूहः ॥ १६० ॥ ब्रह्मयज्ञं वेदाध्ययनम् । अलब्धस्यलाभोयोगः । लब्धस्यपरिपालनंक्षेमः ॥ १६१ ॥ तांत्रंस्नानम् । पूर्वोक्तं प्रथमतरंगोक्तम् ॥ १६२-१६४ ॥

ब्राह्मणों को भोजन कराकर देवता के प्रसाद का भोजन करना चाहिए। तत्पश्चात् आचमन एवं देवता का स्मरण कर साधक को पुराणों का श्रवण करना चाहिए।

सन्ध्याहोमं च निर्वृत्य देवं सम्पूज्य पूर्ववत्।
शयीतशुद्धशय्यायां भुक्त्वाल्पं देवतां स्मरन् ॥ १६४ ॥

सायपूजन : सायं सन्ध्या एवं होम करने के बाद इष्टदेव का पूर्वोक्त रीति से पूजन कर हल्का भोजन कर इष्टदेव का स्मरण करते हुए साधक को शुद्ध शय्या पर सोना चाहिए।

एवं यःपूजयेद्देवं त्रिकालं धर्ममाचरन्।
न जातुवैरिभिर्दुःखैःपीड्यते हरिरक्षितः ॥ १६५ ॥

फल : इस प्रकार जो व्यक्ति धर्माचरण करता हुआ तीनों कालों में देवता का पूजन करता है। वह कभी भी शत्रुओं एवं दुःखों से पीड़ित नहीं होता, तथा इष्टदेव सदैव उसकी रक्षा करते हैं।

त्रिकालं पूजनाशक्तैःकार्य्यं द्विःसकृदप्यदः।
विशेषेण यजेद्देवं संक्रान्त्यादिषु पर्वसु ॥ १६६ ॥
दशभिःपञ्चभिर्वापि पूजयेदुपचारकैः।
अशक्तःकारयेत्पूजां दद्यादर्चनसाधनम् ॥ १६७ ॥
दानाशक्तःसमर्चंस्तं पश्येत्तत्परमानसः।

(प्रातः, मध्याह्न एवं सायंकाल) इन तीनों समय पूजन करने में असमर्थ व्यक्ति को (प्रातः एवं सायं) दोनों समय पूजन करना चाहिए। संक्रान्ति आदि पर्वों पर विशेष रूप से (तीनों कालों में) देवता का पूजन करना चाहिए।

असमर्थ व्यक्ति को दश या पाँच उपचारों से भी पूजन कर लेना चाहिए। अथवा पूजा के उपचार देकर पूजन कराना चाहिए। यदि देने का सामर्थ्य न हो तो (जहाँ देव का विधिवत् पूजन हो रहा हो वहाँ जाकर) तन्मय भाव से देवपूजा को देखना चाहिए।

टिप्पणी : *दशउपचार* : पाद्य, अर्घ्य, आचमनीय, मधुपर्क, आचमन गन्ध आदि से नैवेद्य तक (अर्थात् गन्ध, पुष्प, धूप, दीप एवं नैवेद्य)–ये पूजा के १० उपचार कहलाते हैं, यथा :

पाद्यार्घ्याचमनीयञ्च मधुपकाचमनस्तथा। गन्धादयो नैवेद्यान्ता उपचाराः दशात्मकाः॥

पञ्चोपचार : गन्ध, पुष्प, धूप, दीप एवं नैवेद्य–इन पाँच उपचारों को पञ्चोपचार

॥ १६४-१६५ ॥ अदः पूजनम् ॥ १६६ ॥ **दशभिरुपचारैरावाहनासनस्नानाचमनवस्त्र-चन्दनपुष्पधूपदीपनैवेद्यैः। पञ्चभिर्गंधाद्यैः ॥ १६७ ॥**

कहते हैं, यथा– गन्धंपुष्पञ्चधूपंचदीपंनैवेद्यमेवच । प्रदद्यात्परमेशानिपूजापञ्चोपचारिका ॥

साधनाऽभाविनी त्रासी दौर्बोधी सौतकी तथा ॥ १६८ ॥
आतुरी पञ्चधोक्तासौ पूजा सा कीर्त्यतेक्रमात् ।
पूजासाधनवस्तूनामभावान्मनसैव या ॥ १६९ ॥
पूजाम्भसा साधनंयत्साधना भाविनी तु सा ।
त्रस्तःसम्पूजयेद्देवं यथालब्धोपचारकैः ॥ १७० ॥
मानसैर्वापि सा त्रासी ज्ञेया सम्पूर्णसिद्धिदा ।
बालावृद्धाःस्त्रियो मूर्खादुर्बोधास्तत्कृता तु या ॥ १७१ ॥
यथाज्ञानं परार्चासौ दौर्बोधी कीर्तिता बुधैः ।
सूतकी तु नरःस्नात्वा सन्ध्यां स्वां मानसीं चरेत् ॥ १७२ ॥
मानसैर्वार्चयेत्कामी निष्कामःसर्वमाचरेत् ।
सौतक्युक्ताऽऽतुरी रोगान्नस्नायान्न च पूजयेत् ॥ १७३ ॥
विलोक्य मूर्तिं देवस्य यदिवासूर्य्यमण्डलम् ।
सकृन्मूलमनुं जप्त्वा तत्र पुष्पं विनिक्षिपेत् ॥ १७४ ॥
ततो रोगे गते स्नात्वा पूजयित्वा गुरून्द्विजान् ।
पूजाविच्छेददोषो मे मास्त्वितिप्रार्थयेत तान् ॥ १७५ ॥
तेभ्यश्चार्शिषमादाय देवेशं पूर्ववद्यजेत् ।
आतुरी कीर्तिता पूजाःपञ्चैव नारदोदिताः ॥ १७६ ॥

साधना के पाँच भेद : अभाविनी, त्रासी, दौर्बोधी, सौतकी तथा आतुरी–इन पाँच भेदों से साधना पाँच प्रकार कही गयी है । अब क्रमशः इस प्रकार की पूजाओं को बतलाते हैं :

पूजा के साधन एवं उपकरणों के अभाव से मन से या जल मात्र से जो पूजा की जाती है, उस साधना को अभाविनी कहते हैं ।

जो त्रस्त व्यक्ति तत्काल यथा उपलब्ध उपचारों से या मानसोपचारों से पूजन करता है उसे त्रासी साधना कहते हैं–यह सब सिद्धियाँ देती है ।

बालक, वृद्ध, स्त्री, मूर्ख एवं अनजान व्यक्तियों के द्वारा उनकी जानकारी के

पञ्चप्रकारांपूजामाह । साधनाऽभाविनीति । साधनाना पूजापकरणानामभावोयस्याः सासाधनाभाविनी । त्रासोयस्याः सातत्कृतात्रासी । दुर्बोधानामियंदौर्बोधी । सूतकेकृता-सौतकी ॥ १६८ ॥ आतुरस्येयमातुरी ॥ १६९ ॥ क्रमाल्लक्षणमाह । पूजेति । त्रासीमाह । त्रस्तइति ॥ १७० ॥ दौर्बोधीमाह । बालाइति ॥ १७१ ॥ सौतकीमाह । सूतकीत्विति ॥ १७२ ॥ आतुरीमाह । आतुरेति । १७३-१७६ ॥

अनुसार की जाने वाली पूजा को दौर्बोधी कहते हैं।

सूतकी व्यक्ति स्नान कर मानसिक सन्ध्या करे। कामना होने पर मानसिक पूजन तथा निष्काम होने पर सब कार्य करे—यह साधना सौतकी कहलाती है।

रोगी व्यक्ति को स्नान एवं पूजन नहीं करना चाहिए। देव की मूर्ति या सूर्यमण्डल को देखकर एकबार मूलमन्त्र का जप कर उस पर पुष्प चढ़ाना चाहिए। फिर रोग की समाप्ति पर स्नान कर गुरु एवं ब्राह्मणों का पूजन कर 'पूजा विच्छेद का दोष मुझे न लगे'— ऐसी प्रार्थना करना चाहिए। उनसे आशीष लेकर पूर्वोक्त रीति से इष्टदेव का पूजन करना चाहिए। इस साधना को आतुरी कहते हैं। ये पाँचों साधनाएँ महर्षि नारद ने बतलायी हैं।

स्वयं सम्पाद्यसर्वाणि श्रद्धया साधनानि यः।
पूजयेत्तत्परोदेवं स लभेताखिलं फलम् ॥ १७७ ॥
पूजनेन फलार्द्धं स्यादन्यदत्तैस्तु साधनैः।
तस्मात्स्वयं समानीय साधनान्यर्चनं चरेत् ॥ १७८ ॥

पूजा की वस्तुओं को स्वयं लाकर जो व्यक्ति तन्मय भाव से इष्टदेव का पूजन करता है वह पूरा फल प्राप्त करता है।

अन्य व्यक्तियों के द्वारा दिये गये साधनों से पूजा करने पर आधा फल मिलता है। इसलिए पूजा की सभी वस्तुओं को स्वयं लाकर पूजा करनी चाहिए।

देवपूजाविहीनो यःस नरो नरके पचेत्।
यथाकथञ्चिद्देवार्च्चा विधेया श्रद्धयान्वितैः ॥ १७९ ॥

व्यक्ति से जिस प्रकार भी हो सके श्रद्धापूर्वक देवपूजन करना चाहिए (क्योंकि) देवपूजा न करने वाला व्यक्ति नरक को जाता है।

इति श्री शुकदेव चतुर्वेदि विरचितायां सटिप्पण्यां मन्त्रमहोदधेः
मोहिनी व्याख्यायां द्वाविंशस्तरङ्गः

॥ १७७-१७८ ॥ सुरार्चायानित्यतामाह। देवेति ॥ १७९ ॥ इतिमंत्रमहोदधिव्याख्यायां नौकायांदेवार्चानिरूपणंनामद्वाविंशस्तरंगः ॥ २२ ॥

त्रयोविंशति तरङ्ग

वक्ष्येथो सर्वदेवानां पवित्रदमनार्पणम् ।
पवित्रैःश्रावणे पूजा चैत्रे दमनकैरपि ॥ १ ॥
प्रत्यब्दं विधिवत्कुर्य्याद्वर्षाच्चोफलसिद्धये ।

पवित्र एवं दमन-अर्पण : अब सब देवताओं को पवित्र एवं दमन अर्पण की विधि बतलाता हूँ : वर्षपूजा की फलसिद्धि हेतु प्रतिवर्ष पवित्रों से श्रावण में तथा दमनों से चैत्र में विधिवत पूजन करना चाहिए ।

चैत्रे शुल्कचतुर्दश्यां दमनैःपूजयेद्धरम् ॥ २ ॥
नारायणं तु द्वादश्यामष्टम्यां गिरिनन्दिनीम् ।
सप्तम्यां भास्करं देवं चतुर्थ्यां गणनायकम् ॥ ३ ॥
एवं तत्तत्तिथौ तं तं पवित्रैःश्रावणेर्चयेत् ।

पवित्र एवं दमनार्पण की तिथियाँ : चैत्र शुक्ला चतुर्दशी को दमनों से विष्णु का पूजन करना चाहिए । (चैत्रशुक्ला) द्वादशी को नारायण का, अष्टमी को पार्वती का, सप्तमी को सूर्य का तथा चतुर्थी को गणेश का पूजन करना चाहिए । इसी प्रकार श्रावण में इन तिथियों को इन देवताओं का पवित्रों से पूजन करना चाहिए ।

पूर्वाह्णे दमनार्चायाःकृत्वा नित्यार्चनं विभोः ॥ ४ ॥
गत्वादमनकारामं गृह्णीयात्तंक्रयार्पणात् ।
उपविश्य शुचौ देशे मनुनानेन चार्पयेत् ॥ ५ ॥
अशोकाय नमस्तुभ्यं कामस्त्रीशोकनाशन ।
शोकार्तिं हर मे नित्यमानन्दं जनयस्व मे ॥ ६ ॥
इतिसंप्रार्थ्य तत्रार्चेद्रतिकामौ स्वमन्त्रतः ।
कामदेवायकामादिहृदन्तोष्टाक्षरो मनुः ॥ ७ ॥

पवित्रदमनार्चनंवक्तुमुपक्रमते । वक्ष्येथोइति ॥ १-३ ॥ पूर्वाह्णे पूर्वदिने ॥ ४ ॥ क्रयार्पणान्मूल्यदानेन ॥ ५ ॥ ॥ ६ ॥ क्लींकामदेवायनमइतिकामस्यमनुः । ह्रींरत्यैनमइति रतेः ॥ ७ ॥

कामस्यमायारत्यैहृत्पञ्चार्णस्तुरतेर्मनुः ।
इष्टदेवस्य पूजार्थं नेष्यामि त्वामितिब्रुवम् ॥ ८ ॥
उत्पाट्य पञ्चगव्येनाभिषिच्य क्षालयेज्जलैः ।
गन्धादिभिर्हृदाभ्यर्च्य च्छादयेत्पीतवाससा ॥ ९ ॥
निधाय वंशपात्रे तं गीतवादित्रनिःस्वनैः ।
गृहमानीयतद्देशे स्थापयेद्देवतां स्मरन् ॥ १० ॥

दमनपूजा के पहिले दिन के कार्य : दमन पूजा से एक दिन पूर्व इष्टदेव की नित्यपूजा करने के बाद अशोक के उपवन में जाकर मूल्य देकर उसे लेना चाहिए ।

शुद्ध स्थान पर बैठकर निम्नलिखित मन्त्र से–

'अशोकाय नमस्तुभ्यं कामस्त्रीशोकनाशन: । शोकार्तिं हर मे नित्यमानन्दं जनयस्व मे ।।'

प्रार्थना कर उसपर रति एवं काम का अपने अपने मन्त्र से पूजन का चाहिए ।

प्रारम्भ में काम (क्लीं) फिर 'काम देवाय' तथा अन्त में हृदय (नमः) लगाने से यह ८ अक्षर का कामदेव का मन्त्र बनता है ।

माया (ह्रीं) फिर 'रत्यै' और अन्त में हृदय (नमः) लगाने से–यह ५ अक्षर का रति का मन्त्र बनता है ।

'इष्टदेवस्य पूजार्थं त्वां नेष्यामि'–यह कहते हुए उखाड़ कर पञ्चगव्य से अभिषेक कर जल से धोना चाहिए तथा गन्ध आदि से पूजा कर उसे पीले कपड़े से ढँकना चाहिए । फिर उसे बाँस की टोकरी में रखकर गाते बजाते हुए घर लाकर इष्टदेव का स्मरण करते हुए पूजा के स्थान पर रखना चाहिए ।

टिप्पणी : कामदेव का मन्त्र : क्लीं कामदेवाय नमः ।

रति का मन्त्र : ह्रीं रत्यै नमः ।

ततो देवस्य पुरतःकृत्वाष्टदलमम्बुजम् ।
सितकृष्णरक्तपीतवर्णैःसम्पूरयेत्तु तम् ॥ ११ ॥
भूपुरं तद्बहिःकृत्वा पीतवर्णेन पूरयेत् ।
सितरक्तपीतवर्णं तद्बहिर्वर्तुलत्रयम् ॥ १२ ॥
रक्तवर्णेन तद्बाह्ये विदध्याच्चतुरस्रकम् ।
एवं विरचिते रम्ये मण्डले सार्वकामिके ॥ १३ ॥
यदि वा सर्वतोभद्रे मुञ्चेद्दमनभाजनम् ।

दमन सजन का मन्त्र : इसके बाद इष्टदेव के सामने अष्टदल कमल बनाकर सफेद

॥ ८- ३ ॥

काला, लाल एवं पीला रंग भरना चाहिए। इसके ऊपर भूपुर बनाकर उसमें पीला रंग भरना चाहिए। फिर उसके बाहर सफेद, लाल एवं पीले रंग के ३ वृत्त बनाने चाहिए और उसके बाहर लाल रंग से चतुरस्र बनाना चाहिए।

इस प्रकार बनाये गये सार्वकामिक मण्डल पर अथवा सर्वतोभद्रमण्डल पर दमन-पात्र को रखना चाहिए।

टिप्पणी : दमनपूजा का यन्त्र (देखिये चित्र ८४)

सायंकालीनपूजान्ते कुर्य्यात्तस्याधिवासनम् ॥ १४ ॥
ताराद्याभ्यांकामरतिमन्त्राभ्यां तत्र तौ यजेत् ।
दलेष्वष्टसु रत्याद्यानष्टौ कामान्पृथग्विधैः ॥ १५ ॥
कामोभस्मशरीरश्च ततीनङ्गश्च मन्मथः ।
वसन्तसखसंज्ञश्च स्मरइक्षुधनुर्धरः ॥ १६ ॥
पुष्पबाण इमे कामास्तान्यजेन्नामभिर्निजैः ।
प्रणवानङ्गबीजाद्यैश्चतुर्थीहृदयान्वितैः ॥ १७ ॥
कर्पूररोचनान्यंकुनाभिजागुरुकुंकुमैः ।
धात्रीफलैश्चन्दनेन पुष्पैःकामान्क्रमाद्यजेत् ॥ १८ ॥
दमनं गन्धपुष्पाद्यैरभिपूज्याभिमन्त्रयेत् ।
अष्टोत्तरशतं कामगायत्र्या मन्त्रवित्तमः ॥ १९ ॥
कामदेवायवर्णान्ते विद्महेपदमुच्चरेत् ।
पुष्पबाणाय च पदं धीमहीतिततो वदेत् ॥ २० ॥
तन्नोऽनङ्गःप्रचोवर्णाद्यादिति मनोभुवः ।
गायत्र्येषाबुधैरुक्ता जनाजनविमोहिनी ॥ २१ ॥
हृदापुष्पाञ्जलिं दत्त्वा मनुनानेन तं नमेत् ।
नमोस्तु पुष्पबाणाय जगदानन्दकारिणे ॥ २२ ॥
मन्मथाय जगन्नेत्ररतिप्रीतिप्रदायिने ।
ततो निमन्त्रयेद्देवमनेन मनुना सुधीः ॥ २३ ॥

॥१४॥ ताराद्याभ्यां प्रणवादिकाभ्यां कामरतिमन्त्राभ्यामुक्ताभ्यां तत्रमंडलमध्यस्थदमने तौरतिकामौ ॥ १५ ॥ कामानाह । कामइति ॥ १६ ॥ प्रणवेति । ॐ क्लींकामायनम-इत्यादिभिः ॥ १७ ॥ पूजाद्रव्याण्याह । कर्पूरेति । न्यंकुनाभिजाकस्तूरी । तत्रकर्पूरेण-कामपूजारोचनयाभस्मशरीरपूजा कस्तूर्याऽनंगपूजेत्यादिक्रमः ॥१८-१९॥ कामगायत्रीमाह । कामदेवायेति । जनविमोहिनीत्युक्तत्वात्स्वतंत्राप्येषा ॥ २०-२३ ॥

आमन्त्रितोसि देवेश प्रातःकाले मया प्रभो ।
कर्तव्यं तु यथालाभं पूर्णं स्यात्तु तवाज्ञया ॥ २४ ॥
देवे पुष्पाञ्जलिं दत्त्वा दण्डवत्प्रणिपत्य च ।
दमने वर्मणास्त्रेण विदध्यादवगुण्ठनम् ॥ २५ ॥
रक्षणं च क्रमादेतदधिवासनमीरितम् ।
ततो जागरणं कुर्य्याद्देवं गायंस्तुवञ्जपन् ॥ २६ ॥
सर्वाधिवासनं चापि कुर्य्यान्नर्तनजागरौ ।

अधिवास : सायंकालीन पूजा के बाद उसका अधिवास करना चाहिए :

प्रणव सहित काम एवं रति के मन्त्रों (ॐ क्लीं कामदेवाय नमः, ॐ ह्रीं रत्यै नमः) से उन दोनों का पूजन करना चाहिए तथा अष्टदलों में रति सहित आठ कामों का पृथक रूप से पूजन करना चाहिए । काम, भस्मशरीर, अनंग, मन्मथ, वसन्तसखा, स्मर, इक्षुधनुर्धर एवं पुष्पबाण—ये आठ काम बतलाये गये हैं ।

इनके चतुर्थ्यन्त रूपों के प्रारम्भ में प्रणव तथा कामबीज और अन्त में हृदय (नमः) लगाकर बने मन्त्रों से कपूर, गोरोचन, कस्तूरी, अगर, कुंकुम, आँवला, चन्दन एवं पुष्पों से क्रमशः उक्त ८ कामों का पूजन करना चाहिए ।

गन्ध पुष्प आदि से दमन का पूजन कर साधक कामगायत्री से उसको १०८ बार अभिमन्त्रित करे । 'कामदेवाय' पद के बाद 'विद्महे' कहना चाहिए । 'पुष्पबाणाय' पद के बाद 'धीमहि' बोलना चाहिए । फिर तन्नोऽनंगः प्रचो' तथा 'दयात्' वर्णों को बोलना चाहिए । यह कामगायत्री जप करने मात्र से लोगों को मोहित करती है—ऐसा विद्वानों ने कहा है ।

फिर नमः' मन्त्र से पुष्पाञ्जलि देकर इस मन्त्र से प्रणाम करना चाहिए :

'नमोस्तु पुष्पबाणाय जगदानन्दकारिणे । मन्मथाय जगन्नेत्र रतिप्रीतिप्रदायिने ॥'

तदनन्तर इस मन्त्र से साधक देवता को निमन्त्रित करे :

'आमन्त्रितोऽसि देवेश प्रातःकाले मया प्रभो ।
कर्तव्यं तु यथालाभं पूर्णं स्यात्तु तवाज्ञया ॥'

फिर इष्टदेव पर पुष्पाञ्जलि चढ़ाकर दण्डवत् प्रणाम कर वर्म (हुं) से दमन का अवगुण्ठन तथा अस्त्र (फट्) से संरक्षण करना चाहिए । इस समस्त विधि को अधिवास कहते हैं ।

॥ २४ ॥ वर्मणावगुंठनम् अस्त्रेणरक्षणं चकुर्यात् ॥ २५-२६ ॥

इसके बाद रात्रि में देव-के गुण एवं स्तोत्रों को गाते हुए तथा उसके मन्त्रों का जप करते हुए जागरण करना चाहिए। सभी प्रकार के अधिवासों में नृत्य एवं जागरण करना चाहिए।

टिप्पणी : आठ कामों के पूजामन्त्र : ॐ क्लीं कामाय नमः। ॐ क्लीं भस्म-शरीराय नमः। ॐ क्लीं अनंगाय नमः। ॐ क्लीं मन्मथाय नमः। ॐ क्लीं वसन्तसखाय नमः। ॐ क्लीं स्मराय नमः। ॐ क्लीं इक्षुधनुर्धराय नमः। ॐ क्लीं पुष्पबाणाय नमः।

कामगायत्री : कामदेवाय विद्महे पुष्पबाणाय धीमहि। तन्नोऽनंगः प्रचोदयात्॥

प्रातःस्नानादिनिर्वर्त्य कृत्वा नित्यार्चनं विभोः॥ २७॥
संकल्पं दमनार्चाया विदध्याद्देवताज्ञया।
गृहीत्वा दमनस्याथ हस्ताभ्यां मञ्जरीं शुभाम्॥ २८॥
हृदाभिमन्त्रयेन्मन्त्री ततःश्लोकमिमं पठेत्।
सर्वरत्नमयीं दिव्यां सर्वगन्धमयीं शुभाम्॥ २९॥
गृहाण मञ्जरीं देव नमस्तेस्तु कृपानिधे।
मूलमन्त्रेण घण्टादिघोषैर्देवस्य मस्तके॥ ३०॥
समर्प्य तां ततःकुर्य्यान्मालां दमननिर्मिताम्।
हृदाभिमन्त्र्य चानेन श्लोकेनाप्यभिमन्त्रयेत्॥ ३१॥
सर्वरत्नमयीं नाथ दामनीं वनमालिकाम्।
गृहाण देवपूजार्थं सर्वगन्धमयीं विभो॥ ३२॥
मूलमन्त्रं जपन्देवमुकुटे तां समर्पयेत्।
दमनेनेष्टदेवस्य परिवारान्समर्चयेत्॥ ३३॥
ततो नैवेद्यताम्बूले दत्त्वा नत्वा च दण्डवत्।
दमनार्चां कृतां तस्मै श्लोकेन विनिवेदयेत्॥ ३४॥
देव देव जगन्नाथ वांछितार्थप्रदायक।
कृत्स्नान्पूरयमेत्वर्थकामान्कामेश्वरीप्रिय॥ ३५॥
जप्त्वा मूलमनुं वह्निं हुत्वा देवं विसृज्य च।
गुरुं गत्वा दमनकैर्यजेत तोषयेद्धनैः॥ ३६॥
विप्रान्त्सम्भोज्य भुञ्जीत स्वदेवाय निवेदितम्।
एवं कृते कृतार्थःस्याद्वर्षार्चाफलभाङ् नरः॥ ३७॥

॥ २७॥ देवकालावुच्चार्यवर्षपूजासांगत्यायदमनार्चांकरिष्य इतिसंकल्पः॥ २८-३१॥ ॥ ३५-३७॥

दमनार्चा : प्रातःकाल स्नान आदि से निवृत्त होकर प्रभु की नित्य पूजा करने के बाद इष्टदेव की आज्ञा से 'वर्षपूजासांगत्याय दमनार्चां करिष्ये'—यह संकल्प करना चाहिए ।

फिर दोनों हाथों में दमन (अशोक) की मंजरी लेकर 'नमः' मन्त्र से अभिमन्त्रित करना चाहिए तथा यह श्लोक पढ़ना चाहिए :

सर्वरत्नमयीं दिव्यां सर्वगन्धमयीं शुभाम् । गृहाणमंजरीं देव नमस्तेस्तु कृपानिधे ॥

फिर मूलमन्त्र से घण्टा आदि के घोष के साथ इन मंजरियों को देवता के मस्तक पर चढ़ाकर दमन से बनी माला को 'नमः' से तथा निम्न श्लोक से अभिमन्त्रित करना चाहिए—'सर्वरत्नमयीं नाथ दामनीं वनमालिकाम् ।

गृहाण देव पूजार्थं सर्वगन्धमयीं विभो ॥'

और फिर मूत्रमन्त्र का जप करते हुए उस माला को देवता के मुकुट पर चढ़ाना चाहिए ।

(तत्पश्चात्) इष्टदेव के आवरण देवताओं का भी दमन से पूजन करना चाहिए । फिर नैवेद्य एवं ताम्बूल समर्पित कर दण्डवत् प्रणाम कर :

'देव देव जगन्नाथ वांछितार्थप्रदायक । कृत्स्नान्पूरयमेत्वर्थकामान्कामेश्वरीप्रिया ॥'

—इस श्लोक से की गयी दमन पूजा देव को निवेदित करनी चाहिए ।

फिर मूलमन्त्र का जपकर, अग्नि में होम कर, तथा देवता का विसर्जन कर गुरु के पास जाकर दमनों से उनका पूजन करना चाहिए और धन देकर उन्हें सन्तुष्ट करना चाहिए ।

(तदनन्तर) ब्राह्मणों को भोजन करा कर स्वयं इष्टदेव का प्रसाद खाना चाहिए । ऐसा करने से मनुष्य कृतार्थ हो जाता है और वह पूरे वर्ष की पूजा का फल प्राप्त करता है ।

कथिता दमनार्चैषा पवित्रयजनं ब्रुवे ।
पवित्रयजनाहात्तु पूर्वस्मिन्वासरे सुधीः ॥ ३८ ॥
विदध्यान्नित्यपूजान्ते पवित्राणि यथाविधि ।
हेमदुर्वर्णताम्रोत्थतन्तुभिःपट्टसूत्रतः ॥ ३९ ॥
यद्वा कार्पाससूत्रैस्तु निर्मितैर्विप्रभार्य्यया ।
अन्ययां वा सधवया सदाचारप्रसक्तया ॥ ४० ॥
कर्तितैस्तानि कुर्वीत न पुंश्चल्यादिनिर्मितैः ।
त्रिगुणं त्रिगुणीकृत्य निर्मायान्नवसूत्रिकाम् ॥ ४१ ॥

पवित्रारोपविधिमाह । पवित्रेति ॥ ३८ ॥ दूर्वागैरूप्यम् ॥ ३९-४१ ॥

तां प्रोक्ष्यपञ्चगव्येन क्षालयेदुष्णवारिणा ।
प्रणवेनाभिषिञ्चेत्तां मूलेनाष्टोत्तरंशतम् ॥ ४२ ॥
मन्त्रयेन्मूलगायत्र्या तावदेवततःसुधीः ।
रचयेन्नवसूत्रीभिरष्टोत्तरशतेन च ॥ ४३ ॥
तदर्द्धेन तदर्द्धेन जानूरुनाभिमानतः ।
देवेशस्य पवित्राणि शुचौ देशे प्रसन्नधीः ॥ ४४ ॥
ज्येष्ठमध्यकनिष्ठानि तेषु ग्रन्थीन्दधीत च ।
षट्त्रिंशत्तत्त्वमार्तण्डमिताञ्ज्येष्ठादिषु क्रमात् ॥ ४५ ॥
अष्टोत्तरसहस्रेण नवसूत्र्या विनिर्मितम् ।
अष्टोत्तरशतग्रन्थिवनमालापवित्रकम् ॥ ४६ ॥
कृत्वा ताम्रञ्जयेद्ग्रन्थीन्रोचनाकुंकुमादिभिः ।
वैष्णवे पटले तानि संछाद्य सितवाससा ॥ ४७ ॥
स्थापयित्वा विनिर्मायादन्यान्यावरणार्चने ।
सप्तविंशत्यष्टिरविनवसूत्रीकृतानि तु ॥ ४८ ॥
अद्रिनेत्रमिताभिस्तु कुर्य्याद्गुरुपवित्रकम् ।
तावतीभिःकृशानोस्तत्षड्विंशत्या तदान्मनः ॥ ४९ ॥
तत्रग्रन्थीन्यथाशोभं दत्त्वा संरञ्जयेदपि ।
तानि पात्रान्तरे न्यस्य कुर्य्याद्गन्धपवित्रकम् ॥ ५० ॥
द्वादशग्रन्थितिग्मांशुनवसूत्रीविनिर्मितम् ।
निर्मायैवं पवित्राणि कुर्य्यात्पूजार्थमण्डलम् ॥ ५१ ॥

पवित्रपूजा के पहिले दिन के कार्य : इस प्रकार यह दमनपूजा बतलायी गयी। अब पवित्रपूजा को बतलाता हूँ :

पवित्रपूजा करने से एक दिन पहिले साधक नित्य पूजा के बाद विधिवत पवित्राओं को बनावे। ब्राह्मणी या किसी अन्य सदाचार वाली सधवा स्त्री के द्वारा काते गये सोना, चाँदी, ताँबा, रेशम या कपास के धागों से पवित्रा बनाने चाहिए।

॥ ४२ ॥ अष्टोत्तरशतनवसूत्र्याज्येष्ठं चतुःपञ्चाशतामध्यमं सप्तविंशत्याकनिष्ठं पवित्रं कुर्यात्॥ ४३-४४ ॥ ज्येष्ठंषट्त्रिंशद्ग्रन्थियुतम् । मध्यमञ्चतुर्विंशतिग्रन्थियुतम् । कनिष्ठं-द्वादशग्रंथियुतम् ॥ ४५-४७ ॥

अष्टिः षोडश ॥ ४८ ॥ अद्रिनेत्रमिताभिःसप्तविंशतिसंख्याभिस्ताभिर्नवसूत्रीभिर्गुरुपवित्रं तावतीभिस्ताभिः सप्तविंशत्यैतच्छुचेरग्नेस्तत्पवित्रं षड्विंशत्यास्वपवित्रंचकुर्यात् । तत्रग्रंथयः स्वेच्छयादेयाः ॥ ४९-५० ॥ तिग्मांशुर्द्वादश ॥ ५१ ॥

व्यभिचारिणी स्त्री के द्वारा काते गये धागों से उन्हें कभी भी नहीं बनाना चाहिए। तीन धागों को तीन गुना कर नवसूत्रिका को बनाकर पञ्चगव्य से उसका प्रोक्षण कर गरम जल से धोना चाहिए। प्रणव से उसका अभिषेक तथा १०८ मूलमन्त्र एवं १०८ इष्टदेव के गायत्री मन्त्र से उसे अभिमन्त्रित करना चाहिए।

फिर पवित्र स्थान पर प्रसन्नतापूर्वक बैठकर १०८, ५४, या २७ नवसूत्रिकाओं से जानु से नाभिपर्यन्त प्रमाणवाले पवित्रा बनाने चाहिए। ये क्रमशः ज्येष्ठ, मध्यम एवं कनिष्ठ संज्ञक होते हैं। फिर इनमें गाँठे लगानी चाहिए। ज्येष्ठ आदि पवित्राओं में क्रमशः ३६, २४ एवं १२ गाँठ लगाना चाहिए। १००८ नवसूत्रिकाओं तथा १०८ गाँठों के द्वारा बनाये गये पवित्रा को वनमाला कहते हैं। इस प्रकार पवित्रा बनाकर उसकी गाँठों को गोरोचन एवं कुंकुम आदि से रंगना चाहिए। वैष्णव पटल पर उन्हें श्वेतवस्त्र से ढँक कर २७, १६ एवं १२ नवसूत्रिकाओं से आवरणपूजा के लिए पवित्रा बनाकर २७ नवसूत्रिकाओं से गुरु के लिए, २७ नवसूत्रिकाओं से अग्नि के लिए तथा २६ नवसूत्रिकाओं से अपने लिए पवित्रा बनाना चाहिए। इन पवित्राओं में शोभा के लिए जितनी गाँठ अपेक्षित हों, उतनी लगानी चाहिए तथा उन्हें भी रँग लेना चाहिए। उन्हें एक अन्य पात्र में रखकर १२ नव सूत्रिका एवं १२ गाँठों द्वारा गन्धपवित्रा बनाना चाहिए। इस रीति से पवित्राओं को बनाकर पूजन के लिए मण्डल बनाना चाहिए।

पंकजं षोडशदलं पूरयेदष्टवर्णकैः।
नीलहारिद्रशोणाह्वमाञ्जिष्ठश्वेतसंज्ञकैः ॥ ५२ ॥
सिन्दूरधूम्रकृष्णाख्यैस्तद्बहिर्मण्डलत्रयम्।
सूर्य्यसोमाग्निसंज्ञं तत्सितपीतारुणं क्रमात् ॥ ५३ ॥
तद्बाह्याष्टदलं कुर्य्यादरुणं यदिवासितम्।

पवित्रपूजा का यन्त्र : षोडशदल कमल बनाकर उसमें नीला, पीला, लाल, भूरा, सफेद, सिन्दूरी, धुँए जैसा तथा काला रंग भरना चाहिए। उसके ऊपर क्रमशः सफेद, पीले, एवं लाल रंग के सूर्य, सोम एवं अग्निसंज्ञक वृत्त लिखने चाहिए। उसके बाहर लाल या सफेद रंग का अष्टदल बनाना चाहिए।

टिप्पणी : *पवित्र जन का यन्त्र* : (देखिये चित्र ८५)

एवं मण्डलमालिख्य पूजयेत्कुसुमादिभिः ॥ ५४ ॥
तस्योपरि निबध्नीयाद्वितानसमलंकृतम्।
मण्डले स्थापयेद्देवं प्रतिमां यदि वा घटम् ॥ ५५ ॥

॥ ५२-५५ ॥

तत्रेष्टदेवं सम्पूज्य पायसं विनिवेदयेत् ।
देवताग्रे पवित्राणां पात्रे न्यस्याधिवासयेत् ॥ ५६ ॥
उक्तसंख्यस्य सूत्रस्यालाभे तानि यथारुचि ।
ज्येष्ठादीनी पवित्राणि विदध्यात्सर्वथासुधीः ॥ ५७ ॥

यन्त्र एवं इष्टदेव का पूजन : इस प्रकार यन्त्र लिखकर पुष्प आदि से उसका पूजन करना चाहिए । फिर उसके ऊपर सुन्दर चँदावा बाँधना चाहिए । इस मण्डल पर देवप्रतिमा या घट को स्थापित कर उसपर इष्टदेव का पूजन कर खीर का भोग लगाना चाहिए ।

देवता के आगे पवित्राओं के दोनों पात्र रखकर अधिवास करना चाहिए । पूर्वोक्त संख्या में सूत्र न मिलने पर जितना सूत्र मिले उतने से ही ज्येष्ठ आदि पवित्राओं को निश्चित रूप से बनाना चाहिए ।

तत्रद्वाविंशति देवानाहूय प्रतिपूजयेत् ।
ब्रह्मविष्णुमहेशानास्त्रिसूत्र्या देवताःस्मृताः ॥ ५८ ॥
ओंकारचन्द्रमोवह्निब्रह्मनागशिखिध्वजाः ।
सूर्य्यःसदाशिवो विश्वे नवसूत्र्यधिदेवताः ॥ ५९ ॥
क्रिया च पौरुषी वीरा चतुर्थीत्वपराजिता ।
विजया जयया युक्ता मुक्तिदा च सदाशिवा ॥ ६० ॥
मनोन्मनी तु नवमी दशमी सर्वतोमुखी ।
एताःपवित्रग्रन्थीनां देवताःपरिकीर्तिताः ॥ ६१ ॥
आवाहन्यादिमुद्राभिर्नवभिःसाधकोत्तमः ।
तदाह्वानादिकं तत्र कृत्वाच्चेच्चन्दनादिभिः ॥ ६२ ॥
एवं पवित्राण्यभ्यर्च्यदद्याद्गन्धपवित्रकम् ।
तद्धूपयित्वा तारेण हृदयेनाभिमन्त्रयेत् ॥ ६३ ॥
प्रणम्य प्रार्थयेद्देवं श्लोकयुग्ममिदं पठन् ।
आमन्त्रितोसि देवेश सार्द्धं देव्या गणेश्वरैः ॥ ६४ ॥
मन्त्रैशैर्लोकपालैश्चसहितःपरिवारकैः ।

पात्रे देवपवित्रपात्रआवरणपवित्रपात्रेच ॥ ५६-५७ ॥ अधिवासनमाह । तत्रेति ॥ ५८ ॥ शिखिध्वजःकार्तिकेयः । विश्वेविश्वेदेवाः ॥ ५९ ६० ॥ ६१ ॥

आवाहनीस्थापनीसन्निधापनीसन्निरोधिनीसम्मुखीकरणीसकलीकरण्यवगुंठिन्यमृतीकरणीपरमीकरण्योनवाऽऽवाहन्यादिमुद्राः । ताउक्ताः ताभिस्तदाह्वानादिक पवित्रदेवतानांब्रह्मादीनांपदार्थानुसमयेनकांडानुसमयेनचाऽऽवाहनादिचकृत्वागन्धादिनाऽर्चयेत् ॥ ६२-६४ ॥

आगच्छ भगवन्नीश विधिसम्पूर्तिकारक ॥ ६५ ॥
प्रातस्त्वां पूजयिष्यामि सान्निध्यं कुरु केशव ।
ततो गन्धपवित्रं तत्पादयोर्विन्यसेत्प्रभो. ॥ ६६ ॥
केशवेतिपदस्थाने कार्य्यं ऊहोन्यदेवतः ।
भगवत्याःपदेष्वत्रलिङ्गोहो मन्त्रवित्तमैः ॥ ६७ ॥

अधिवास : उन पवित्राओं पर (वक्ष्यमाण) २२ देवताओं का आवाहन कर पूजन करना चाहिए । ब्रह्मा, विष्णु एवं महेश–ये तीन सूत्रों के देवता कहलाते हैं । ओंकार, चन्द्रमा, अग्नि, ब्रह्मा, नाग, कार्तिकेय, सूर्य, सदाशिव एवं विश्वेदेवा–ये नवसूत्रिका के अधिदेवता होते हैं । क्रिया, गौरवी, वीरा, अपराजिता, विजया, जया, मुक्तिदा, सदाशिवा, मनोन्मनी एवं सर्वतोमुखी–ये पवित्राओं की ग्रन्थियों के देवता कहे गये हैं । आवाहनी आदि पूर्वोक्त ९ मुद्राओं द्वारा साधक पवित्राओं में उनका आवाहन आदि करके चन्दन आदि से उनका पूजन करे ।

इस प्रकार पवित्राओं का पूजन कर गन्धपवित्रा को चढ़ाना चाहिए और प्रणव से उसे धूप देकर 'नमः' मन्त्र से अभिमन्त्रित करना चाहिए । फिर इष्टदेव को प्रणाम कर निम्न लिखित दो श्लोक पढ़ते हुए इष्टदेव से प्रार्थना करनी चाहिए, यथा :
'आमन्त्रितोसि देवेश सार्द्धं देव्या गणेश्वरैः । मन्त्रेशैर्लोकपालैश्च सहितः परिवारकैः ॥
आगच्छ भगवन्नीश विधि संपूर्तिकारक । प्रातस्त्वां पूजयिष्यामि सान्निध्यं कुरु केशव ॥'
फिर गन्ध पवित्रा को इष्टदेव के चरणों में चढ़ाना चाहिए ।

(प्रार्थना के उक्त श्लोकों में) विष्णु के अतिरिक्त अन्य देवताओं का पूजन करते समय 'केशव' के स्थान पर 'शंकर, भास्कर या विघ्नराट्' इत्यादि की ऊहा कर लेनी चाहिए तथा भगवती की पवित्रपूजा करते समय उक्त श्लोकों में 'आमन्त्रितासि, देवेशि, आगच्छ त्वं भवानीशे, विधि सम्पूर्ति कारिके, सन्निध्य कुरु पार्वती' इत्यादि स्त्रीलिङ्ग के पदों की ऊहा करनी चाहिए ।

टिप्पणी : *पवित्राओं के देवताओं के पूजनमन्त्र* : पवित्राओं के धागे, सूत्र तथा गाँठों में निम्नलिखित मन्त्रों से २२ देवताओं का पूजन करना चाहिए, यथा :

ॐ ब्रह्मणे नमः – प्रथम दोरके । ॐ विष्णवे नमः – द्वितीय दोरके । ॐ महेशाय नमः – तृतीय दोरके । ॐ ओंकाराय नमः – प्रथम सूत्रे । ॐ चन्द्रमसे नमः – द्वितीय

॥ ६५ ६६ ॥ केशवपदस्थानेऽहः शंकरः भास्करः विघ्नराडित्यादिरूपहृति । भगवत्यां पवित्रारोपणेतुतत्पदेषुलिंगोहोपिकार्यः । यथा–आमन्त्रितासि देवेशिआगच्छत्वंभवानीशेविधि-संपूर्तिकारिकेसान्निध्यं कुरुपार्वतीत्यादिरीत्यालिंगपदानामूहः ॥ ६७ ॥

सूत्रे । ॐ वह्नये नमः – तृतीय सूत्रे । ॐ ब्रह्मणे नमः – चतुर्थ सूत्रे । ॐ नागेभ्यो नमः – पञ्चम सूत्रे । ॐ कार्तिकेयाय नमः – षष्ठ सूत्रे । ॐ सूर्याय नमः – सप्तम सूत्रे । ॐ सदाशिवाय नमः – अष्टम सूत्रे । ॐ विश्वेभ्यो देवेभ्यो नमः – नवम सूत्रे । ॐ क्रियायै नमः – प्रथमग्रन्थौ । ॐ पौरुष्यै नमः – द्वितीय ग्रन्थौ । ॐ वीरायै नमः – तृतीय ग्रन्थौ ॐ अपराजितायै नमः – चतुर्थ ग्रन्थौ । ॐ विजयायै नमः – पञ्चम ग्रन्थौ । ॐ जयायै नमः – षष्ठ ग्रन्थौ । ॐ मुक्तिदायै नमः – सप्तम ग्रन्थौ । ॐ सदाशिवायै नमः – अष्टम ग्रन्थौ । ॐ मनोन्मन्यै नमः – नवम ग्रन्थौ । ॐ सर्वतोमुख्यै नमः – दशम ग्रन्थौ ।

अधिवासं विधायेत्थं निशि जागरणं चरेत् ।
देवस्य स्तुतिनामानि वदन्गायंश्चतद्गुणान् ॥ ६८ ॥

जागरण : इस प्रकार अधिवास करने के बाद रात में इष्टदेव के नाम, उनकी स्तुतियों एवं उनके गुणों को गाते हुए जागरण करना चाहिए ।

प्रातर्नित्यार्चनं कृत्वा मूलेनाष्टोत्तरं शतम् ।
कनिष्ठाख्यं पवित्रं तद्गृहीत्वा चाभिमन्त्रयेत् ॥ ६९ ॥
घण्टावादित्रवेदानां कारयन्घोषमुत्तमम् ।
जयशब्दाश्चदेवस्य कण्ठे मूलेन चार्पयेत् ॥ ७० ॥
एवमेवार्पयेदन्ये पवित्रे मध्यमोत्तमे ।
श्वेतं रक्तं क्रमात्पीतं ध्यायेद्देवं तदर्पणे ॥ ७१ ॥
वनमालापवित्रं तु तावन्मूलेन मन्त्रितम् ।
अर्पयेदिष्टदेवस्य मुकुटे मूलमुच्चरन् ॥ ७२ ॥
ततःसुवर्णकुसुमैःपुष्पैःशतमितैःसह ।
मूलाभिमन्त्रितं देवमूर्ध्नि मूलेन चार्पयेत् ॥ ७३ ॥
हृदान्यपटलस्थानि पवित्राण्यभिमन्त्र्य च ।
तत्तन्नाम्ना नमोंतेन परिवारान्सुरान्यजेत् ॥ ७४ ॥
एवं पवित्रैःसंपूज्य धूपादीनि प्रकल्पयेत् ।
पात्रके देवमावाह्य नित्यहोमं विधाय च ॥ ७५ ॥
मूलेनाग्निपवित्रं तदर्पयेद्देवतां स्मरन् ।
मूर्तौ देवं समुद्वास्य वह्निं संयोज्य चात्मनि ॥ ७६ ॥
पुष्पाञ्जलिं विधायेशे कर्मान्ते विनिवेदयेत् ।
मन्त्रहीनं क्रियाहीनं भक्तिहीनं कृपानिधे ॥ ७७ ॥

॥६८॥ कनिष्ठपवित्रारोपणेदेवंश्वेतंध्यायेत् । मध्यमाग्रेपणेरक्तं ज्येष्ठारोपणेपीतमिति ॥ ६९-७१ ॥ तावष्ट त्तरशतम् ॥ ७२-७७ ॥

पूजनं पूर्णतामेतु पवित्रेणार्पितेन ते ।
इतिसंप्रार्थ्य देवेशं योजयेद्धृदये निजे ॥ ७८ ॥
गुर्वन्तिकं ततो गत्त्वा दत्त्वा पुष्पाञ्जलिं गुरौ ।
स्वाङ्गे षडंगं विन्यस्य गुरुदेहेपि विन्यसेत् ॥ ७९ ॥
पाद्यं दत्त्वा तथैवार्घ्यं वस्त्रालंकारचन्दनम् ।
पुष्पैःसम्पूज्य मूलेन पवित्रं तद्गलेऽर्पयेत् ॥ ८० ॥
स्वशक्त्या दक्षिणां दत्त्वा दण्डवत्प्रमेद्गुरुम् ।
अन्येभ्यःशिष्टवृद्धेभ्यःपवित्राणि ददीत च ॥ ८१ ॥
सर्वथैव गुरोःपूजा कर्तव्या मन्त्रिणा सदा ।
अपूजिते गुरौ सर्वापूजा भवति निष्फला ॥ ८२ ॥
गुरोरभावे तत्पुत्रं तदभावे तदात्मजम् ।
दौहित्रं तदभावेन्यं पूजयेद्गुरुगोत्रजम् ॥ ८३ ॥
ततो धृत्वा पवित्रं स्वं भोजयित्वा द्विजोत्तमान् ।
भुञ्जीत तदनुज्ञातो बन्धुभिस्तनयैःसह ॥ ८४ ॥

पवित्रपूजा : प्रातःकाल नित्यपूजा करने के बाद कनिष्ठसंज्ञक पवित्रा को लेकर मूलमन्त्र से १०८ बार अभिमन्त्रित करना चाहिए। फिर घण्टा, बाजे, वेदध्वनि एवं जय-जयकार के घोष के साथ मूलमन्त्र बोलते हुए वह पवित्रा इष्टदेव के कण्ठ में पहिनाना चाहिए। इसी प्रकार मध्यम एवं ज्येष्ठ संज्ञक पवित्राओं को भी चढ़ाना चाहिए। कनिष्ठ पवित्रा चढ़ाते समय श्वेत वर्ण वाले, मध्यम चढ़ाते समय रक्तवर्ण वाले तथा ज्येष्ठ पवित्रा चढ़ाते समय पीतवर्ण वाले देव का ध्यान करना चाहिए।

वनमाला संज्ञक पवित्रा को मूलमन्त्र से १०८ बार अभिमन्त्रित कर मूलमन्त्र बोलते हुए उसे इष्टदेव के मुकट पर चढ़ाना चाहिए। फिर मूलमन्त्र से अभिमन्त्रित १०० पुरुषों के साथ अमलतास के फूल लेकर मूलमन्त्र से देवता के मस्तक पर चढ़ाने चाहिए।

पटल पर रखे हुए पवित्राओं को 'नमः' मन्त्र से अभिमन्त्रित कर आवरण देवताओं के चतुर्थ्यन्त नामों के साथ नमः लगाकर बने मन्त्रों से आवरण देवताओं पर चढ़ाने चाहिए।

इस प्रकार पवित्राओं से पूजन कर धूप, दीप, नैवेद्य आदि से पूजन करना चाहिए।

॥ ७९-८१ ॥ सर्वथागुरुवंशाभावेकं चिच्छिष्टं संपूज्यतस्यपवित्रं समर्प्यदक्षिणां चदत्त्वापवित्रपूजापूर्णास्त्विवतितद्वचनंप्रार्थयेत् ॥ ८२-८४ ॥

(फिर) अग्नि में देव का आवाहन तथा नित्यहोम करके देवता का स्मरण करते हुए मूलमन्त्र से उसमें अग्निपवित्रा चढ़ाना चाहिए। मूर्ति में देव को तथा अपनी आत्मा में अग्नि को संयोजित कर इष्टदेव की पुष्पाञ्जलि देकर कर्म की समाप्ति पर यह प्रार्थना करनी चाहिए–'मन्त्रहीनं क्रियाहीनं भक्तिहीनं कृपानिधे।

पूजनं पूर्णता मे तु पवित्रेणार्पितेन ते ॥'

इष्टदेव से यह प्रार्थना कर उन्हें अपने हृदय में स्थापित करना चाहिए।

इसके बाद अपने गुरुदेव के पास जाकर पुष्पाञ्जलि चढ़ाकर अपने अंगो में षडङ्गन्यास कर गुरुदेव के शरीर में षडङ्गन्यास करना चाहिए। फिर पाद्य एवं अर्घ्य देकर मूलमन्त्र से वस्त्र, अलंकार, चन्दन एवं पुष्पों से उनका पूजन कर उनके गले में पवित्रा पहिनाना चाहिए (तथा अपने संप्रदाय के) अन्य विशिष्ट एवं वयोवृद्ध लोगों को भी पवित्रा पहिनाना चाहिए। साधक को सदैव अपने गुरु का पूजन करना चाहिए। क्योंकि) गुरु का पूजन न करने पर सब पूजा निष्फल हो जाती है।

गुरु के न होने पर उनके पुत्र का, उसके न होने पर उनके पौत्र का, उसके अभाव में गुरु के दौहित्र का तथा उसके भी न होने पर गुरु के कुटुम्ब या गोत्र के व्यक्ति का पूजन करना चाहिए।

तत्पश्चात् अपनी पवित्रा धारण कर श्रेष्ठ ब्राह्मणों को भोजन कराकर उनकी आज्ञा लेकर अपने पुत्र एवं बन्धुओं के साथ भोजन करना चाहिए।

यथाकथंचित्कुर्वीत पवित्राणि सुरार्चने।
विधेरुक्तस्य चाशक्त्या पूजासंम्पूर्तिहेतवे ॥ ८५ ॥
यस्यां कस्यां तिथौ कुर्य्यात्तिथावुक्ते कृतं न चेत्।
सर्वथा श्रावणेचैव पवित्रं तु निवेदयेत् ॥ ८६ ॥
प्रत्यब्दं यःपवित्रेण पूजां कुर्वीत दैवते।
ऐश्वर्य्यारोग्यसंयुक्तो नैकवर्षाणि जीवति ॥ ८७ ॥
संपूर्णहायनं पूजा देवतानां कृता तु या।
सर्वा सम्पूर्णतांमेति पवित्रदमनार्पणात् ॥ ८८ ॥

पूर्वोक्त विधि से पूजा करने का सामर्थ्य न होने पर वार्षिक पूजा की पूर्ति हेतु जिस किसी भी तरह के पवित्राओं से इष्टदेव का पूजन करना चाहिए।

देव की पूर्वोक्त निर्धारित तिथि को पवित्रपूजा न की जा सकती हो तो जिस

॥ ८५ ॥ यस्यामिति। उक्ततिथौकरणासंभवेसर्वथाश्रावणेपवित्रपूजाचैत्रेदमनार्चा च नित्यत्वेनावश्यं कार्येत्यर्थः ॥ ८६-८८ ॥

किसी भी दिन पूजन करना चाहिए। श्रावण मास में निश्चित रूप से ही पवित्रा चढ़ाने चाहिए।

जो व्यक्ति प्रति वर्ष पवित्राओं से देवता का पूजन करता है, वह आरोग्य एवं ऐश्वर्य के साथ अनेक वर्षों तक जीवित रहता है। देवता की पूरे वर्ष तक की गयी पूजा पवित्रा एवं दमन चढ़ाने से पूर्ण हो जाती है।

अन्योष्वप्युपरागार्द्धोदयसौम्यायनादिषु।
कुर्य्यादलभ्ययोगेषु विशेषाद्देवताऽर्च्चनम् ॥ ८९ ॥
यथायथेष्टदेवेषु नृणां भक्तिःसमेधते।
प्राप्यते तदयत्नेन मनोभीष्टं तथा तथा ॥ ९० ॥
शुचौ तत्तदहेकुर्य्यादेवप्रस्वापनोत्सवम्।
ऊर्जे तथैव देवानामुत्थापनविधिं सुधीः ॥ ९१ ॥
माघकृष्णचतुर्दश्यां विशेषाच्छिवपूजनम्।
आश्विनाद्यनवाहेषु दुर्गापूज्या यथाविधि ॥ ९२ ॥
गोपालं पूजयेद्विद्वान्नभःकृष्णाष्टमीदिने।
रामं चैत्रसिते पक्षे नवम्यामर्चयेत्सुधीः ॥ ९३ ॥
वैशाखाद्यचतुर्दश्यां नर्सिंहं प्रपूजयेत्।
यजेच्छुक्लचतुर्थ्यां तु गणेशं भाद्रमाघयोः ॥ ९४ ॥
महालक्ष्मीं यजेद्विद्वान्भाद्रकृष्णाष्टमीदिने।
माघस्य शुक्लसप्तम्यां विशेषाद्दिननायकम् ॥ ९५ ॥
या काचित्सप्तमीशुक्ला रविवारयुता यदि।
तस्यां दिनेशं सम्पूज्य दद्यादर्घ्यं पुरोदितम् ॥ ९६ ॥

देवोत्सव का समय : सूर्य एवं चन्द्रमा का ग्रहण, अर्धोदय एवं मकर संक्रान्ति आदि (युगादि एवं मन्वादि तिथि) अलभ्य योगों में विशेष रूप से इष्टदेव का महोत्सव एवं विशेष पूजा करनी चाहिए।

अन्येष्वप्युपेति। उपरागश्चंद्रसूर्यग्रहणम्। अर्धोदयलक्षणंत-'अमार्कपातश्रवणयुक्ता-चेत्पौषमाघयोः। अर्धोदयः सविज्ञेयः कोटिसूर्यग्रहैःसमः' इति। सौम्यायनंमकरसंक्रांतिः। आदिशब्दाद्युगादयोमन्वादयः श्रवणद्वादशीप्रमुखाग्राह्याः। तत्रेष्टदेवमहोत्सवोमहापूजा-चविधेया ॥ ८९ ॥तत्रहेतुमाह। यथेति ॥ ९० ॥ शुचावाषाढेतत्तदहेचतुर्थ्यादौगणेशादीनाम्। ऊर्जेकार्त्तिके ॥ ९१ ॥ माघकृष्णचतुर्दश्यां शिवरात्रौशिवपूजाप्रकारः शिवागमाद्बोध्यः। नवरात्रेदुर्गार्चनविधिरपितदागमादेव शुक्लपक्षादिमासाभिप्रायेण एवमग्रेपि। ग्रन्थगौरव-भयात्तन्नोच्यये ॥ ९२-९६ ॥

जिस जिस क्रम से इष्टदेव में मनुष्यों की भक्ति बढ़ती है उसी उसी क्रम से अनायास उनके मनोरथ पूर्ण होते हैं।

आषाढ़ में तत्तद् देवताओं के पूर्वोक्त तिथियों (देखिये श्लोक सं० २) को देवता का शयनोत्सव तथा कार्तिक की उन तिथियों को विधिवत देवोत्थान का उत्सव मनाना चाहिए।

माघ कृष्णा (आगम ग्रन्थों में 'अमान्तादमान्तावधि चान्द्र मासः'-इस नियम के अनुसार अमावस्या से अमावस्या तक शुक्लादि चान्द्रमास ग्राह्य है) चतुर्दशी (शिवरात्रि) को विशेष रूप से भगवान् शिव का पूजन करना चाहिए। आश्विन मास के प्रारम्भिक ९ दिनों (नवरात्र) में दुर्गा का विधिवत पूजा करना चाहिए। श्रावण कृष्णा अष्टमी (जन्माष्टमी) के दिन गोपाल का पूजन करना चाहिए। चैत्रशुक्ला नवमी (रामनवमी) को श्री राम पूजन करना चाहिए। वैशाख शुक्ला चतुर्दशी (नरसिंह चतुर्दशी) को नृसिंह का पूजन करना चाहिए। भाद्रपद शुक्ला चतुर्थी (गणेश चतुर्थी) तथा माघशुक्ल चतुर्थी को गणेश का पूजन करना चाहिए। भाद्रपद कृष्णा अष्टमी (महालक्ष्मी अष्टमी) के दिन महालक्ष्मी का पूजन करना चाहिए। माघ शुक्ला सप्तमी को विशेष रूप से सूर्य का पूजन करना चाहिए। शुक्ल पक्ष को जिस किस भी सप्तमी को रविवार हो उस दिन भगवान् भास्कर का पूजन कर पूर्वोक्त रीति से अर्घ्य देना चाहिए।

तत्तत्कल्पोदितानन्यान्देवताप्रीतिवर्द्धनान्।
विशेषनियमाञ्ज्ञात्वा भजेद्देवमनन्यधीः ॥ ९७ ॥

देवताओं के तत्तद् कल्प ग्रन्थों में उनकी उपासना सिद्धि एवं प्रसन्नता के लिए बतलाये गये अन्य सभी नियमों को जानकर अनन्य भाव से देवता की उपसना करनी चाहिए।

अषाढीकार्तिकीमध्ये किञ्चिन्नियममाचरेत्।
देवसम्प्रीतयेविद्वाञ्जपपूजादितत्परः ॥ ९८ ॥

आषाढ़ मास की पूर्णिमा से कार्तिक मास की पूर्णिमा तक (चातुर्मास्य में) इष्टदेव की प्रसन्नता के लिए जप एवं पूजा में तत्पर होकर किसी विशेष नियम (चातुर्मास्य व्रत) का पालन करना चाहिए।

एवं यो भजते विष्णुं रुद्रं दुर्गां गणाधिपम्।
भास्करं श्रद्धया नित्यं स कदाचिन्नसीदति ॥ ९९ ॥

॥ ९७ ॥ आषाढीति। चातुर्मास्येऽवश्यंतत्तद्देशलभ्यं स्वेष्टंकिंचिद्वस्तुवर्जयेत्। 'योविनानियमं मर्त्योव्रतंवाज्ञाप्यममेववा। चातुर्मास्यं नयेन्मूढोजीवन्नपिमृतोहिसः' इत्यादिनिंदाश्रवणात् ॥ ९८ ॥

स धर्ममाचरन्नित्यं देवपूजापरायणः ।
जितेन्द्रियोखिलान्भोगान्प्राप्येहानन्ततां व्रजेत् ॥ १०० ॥

इस रीति से जो मनुष्य भगवान् विष्णु, रुद्र, दुर्गा, गणेश या सूर्य की श्रद्धासहित सदैव उपासना करता है, वह कभी भी दुःखी नहीं होता ।

वह प्रतिदिन धर्माचरण करने वाला, देवपूजा में परायण एवं जितेन्द्रिय व्यक्ति इस लोक में समस्त भोगों को प्राप्त कर अन्त में अनन्तता प्राप्त करता है ।

इति श्री शुकदेव चतुर्वेद विरचितायां सटिपण्यां मन्त्रमहोदधेः
मोहनी व्याख्यायां त्रयोविंशस्तरङ्गः ।

॥ १०० ॥ इति श्रीमन्त्रमहोदधिव्याख्यायां नौकायां दमनपवित्रार्चननिरूपणं नामत्रयोविंशस्तरंगः ।

चतुर्विंशति तरङ्ग

साधकानां शीघ्रसिद्धयैमन्त्रशुद्धिमथो ब्रुवे ।
साधकस्य तु नामादिवर्णमारभ्य शोधयेत् ॥ १ ॥
मन्त्राद्यक्षरपर्य्यन्तं चक्रे सिद्धादिके क्रमात् ।
जन्मर्क्षोत्थं प्रसिद्धं वा नामग्राह्यं विशोधने ॥ २ ॥

मन्त्रशोधन : अब साधकों को शीघ्र सिद्धि-प्राप्ति हेतु मन्त्रों का शोधन बतलाता हूँ । सिद्धादिचक्रों में साधक के नाम के प्रथम वर्ण से मन्त्र के प्रथमाक्षर तक गणना कर शोधन करना चाहिए । मन्त्रशोधन में जन्मनक्षत्र पर आधारित या प्रसिद्ध नाम ग्राह्य होता है ।

ऊर्द्धगाः पञ्चरेखाः स्युः पञ्चतिर्य्यग्गताः पुनः ।
कोष्ठानि तत्र जायन्ते षोडशैवात्र संलिखेत् ॥ ३ ॥
भूरामशिवनन्दाक्षिवेदार्कदिग्रसाष्टभिः ।
कलामनुशरैरद्रितिथिविश्वैर्मितेषुच ॥ ४ ॥
कोष्ठेषु मातृकावर्णास्तत्रनामादितः क्रमात् ।
सिद्धःसाध्यःसुसिद्धोरिर्ज्ञेयो मन्वक्षरावधि ॥ ५ ॥
यस्मिंश्चतुष्के नामार्णस्तत्स्यात्सिद्धचतुष्टयम् ।
प्रादक्षिण्याद्द्वितीयं स्यात्साध्याख्यं तत्तृतीयकम् ॥ ६ ॥
सुसिद्धाख्यं चतुर्थं तु सपत्नाख्यं स्मृतं बुधैः ।
एककोष्ठे द्वयोर्वर्णः सिद्धसिद्धः प्रकीर्तितः ॥ ७ ॥

मन्त्रशुद्धिं वक्तुमाह । साधकानामिति ॥ १ ॥ २ ॥ अकथहचक्रमाह । ऊर्ध्वगाइति । षोडशकोष्ठान्विधायतत्रैकस्येकादशनवद्विचतुर्द्वादशदशषडष्टषोडशचतुर्दशपं चसप्तपंचदशत्रयोदशेषुकोष्ठेषुक्रमादकारादिवर्णान्पुनः पुनर्विलिख्य कोष्ठचतुष्केसिद्धसाध्यादिविचित्यपुनश्चतुष्केष्विद्धादिगणनं कार्यम् । तत्रप्रथमचतुष्केयस्यां विदिशिनामार्णः द्वितीयादिचतुष्केषुतद्विदिशमारभ्यासिद्धादिगणयेत् । एवंगणने (१) सिद्धसिद्धः १ सिद्धसाध्यः २ सिद्धसुसिद्धः ३ सिद्धारिः ४ ॥ ३-७ ॥

तद्द्वितीये मन्त्रवर्णेसिद्धसाध्यउदाहृतः ।
तृतीये सिद्धसुसिद्धःसिद्धारिःस्याच्चतुर्थके ॥ ८ ॥
नामादियुक्चतुःकोष्ठान्मन्वर्णश्चेद्द्वितीयके ।
चतुष्के तत्र पूर्वं तु यत्र नामाक्षरं स्थितम् ॥ ९ ॥
तत्र तत्कोष्ठमारभ्य गणयेत्पूर्ववत्क्रमात् ।
साध्यसिद्धः साध्यसाध्यस्तत्सुसिद्धश्चतद्रिपुः ॥ १० ॥
एवं ज्ञेयस्तृतीये चेच्चतुष्के मन्त्रवर्णकः ।
तदा पूर्वोक्तया रीत्या क्रमाज्ज्ञेया विचक्षणैः ॥ ११ ॥
सुसिद्धसिद्धस्तत्साध्यस्ततसुसिद्धश्चतद्रिपुः ।
चतुर्थे तु चतुष्के स्यादरिसिद्धारिसाध्यकः ॥ १२ ॥
तत्सुसिद्धोर्य्यरिः पश्चादेवं मन्त्रं विचारयेत् ।
सिद्धसिद्धोयथोक्तेन द्विगुणात्सिद्धसाध्यकः ॥ १३ ॥
सिद्धसुसिद्धोर्द्धजपात्सिद्धारिर्हन्तिबान्धवान् ।
साध्यसिद्धःद्विगुणितःसाध्यसाध्योनिरर्थकः ॥ १४ ॥
द्विगुणाज्जपात्सुसिद्धः साध्यारिर्हन्तिगोत्रजान् ।
सुसिद्धसिद्धोर्द्धजपात्तत्साध्योद्विगुणाज्जपात् ॥ १५ ॥
तत्सुसिद्धग्रहादेवसुसिद्धारिः कुटुम्बहा ।
अरिसिद्धः सुतंहन्यादरिसाध्यस्तुकन्यकाम् ॥ १६ ॥
तत्सुसिद्धस्तुपत्नीघ्नस्तदरिः साधकापहः ।

अकथह चक्र : ५ ऊर्ध्वाधर और फिर ५ तिर्यक्‌रेखा लिखने से १६ कोष्ठक बन जाते हैं । इनमें से १, ३, ११, ९, २, ४, १२, १०, ६, ८, १६, १४, ५, ७, १५ एवं १३ वें कोष्ठक में क्रमश. मातृकावर्णों को लिखना चाहिए ।

इस चक्र में नाम के प्रथम अक्षर से मन्त्र के प्रथम अक्षर तक क्रमशः सिद्ध, साध्य, सुसिद्ध एवं अरि जानना चाहिए ।

जिन ४ कोष्ठकों में साधक के नाम का प्रथम अक्षर हो उन्हें सिद्धचतुष्टय कहते हैं । प्रदक्षिण क्रम से उससे अगले ४ कोष्ठकों को साध्य चतुष्टय, उससे अग्रिम ४ कोष्ठकों को

॥ ८-९ ॥ (२) साध्यसिद्धः ५ साध्यसाध्यः ६ साध्यसुसिद्धः ७ साध्यारिः ८ ॥ १० ॥ (३) सुसिद्धसिद्ध ९ सुसिद्धसाध्यः १० सुसिद्धसुसिद्धः ११ सुसिद्धारिः १२ (४) अरिसिद्धः १३ अरिसाध्यः १४ अरिसुसिद्ध १५ अर्यरिः १६ इति षोडशभेदाभवन्ति । तेषांफलमाह । सिद्धसिद्ध इत्यादि । यथोक्तेनकल्पोक्तेनजपादिनासिद्धोभवतीत्यर्थः ॥ ११-१४ ॥ द्विगुणात्कल्पोक्तद्विगुण्यात्तत्सुसिद्धः साध्यसुसिद्धः ॥ १५-१६ ॥

सुसिद्ध चतुष्टय, तथा अन्तिम कोष्ठकों को विद्वान् शत्रु चतुष्टय कहते हैं।

(साधक एवं मन्त्र) इन दोनों के नाम के प्रथम अक्षर एक कोष्ठक में हों तो (मन्त्र) सिद्ध-सिद्ध कहलाता है। (साधक के नाम के प्रथम अक्षर वाले) कोष्ठक से दूसरे में मन्त्राक्षर होने पर सिद्ध-साध्य, उससे तीसरे में होने पर सिद्ध-सुसिद्ध तथा उससे चौथे कोष्ठक में मन्त्राक्षर होने पर (मन्त्र) सिद्धारि कहलाता है।

नाम के प्रथम अक्षर वाले ४ कोष्ठकों से अग्रिम ४ कोष्ठकों में मन्त्र का प्रथम अक्षर हो तो जिस कोष्ठक में नामाक्षर हो उसकी (पंक्तिवाले) कोष्ठक से प्रारम्भ कर पूर्ववत् गणना करनी चाहिए। यहाँ प्रथम कोष्ठक में मन्त्राक्षर होने पर साध्यसिद्ध, द्वितीय कोष्ठक में होने पर साध्यसाध्य, तृतीय में होने पर साध्यसुसिद्ध तथा चतुर्थ कोष्ठक में मन्त्राक्षर होने पर (मन्त्र को) साध्य-शत्रु जानना चाहिए।

इसी प्रकार यदि तीसरे और चौथे ४–४ कोष्ठकों में मन्त्राक्षर हो तो पूर्वोक्त रीति से ही विद्वानों को गणना कर विचार करना चाहिए। तीसरे ४ कोष्ठकों में (पहिले, दूसरे, तीसरे एवं चौथे कोष्ठक में मन्त्राक्षर होने पर) मन्त्र क्रमशः सुसिद्ध-सिद्ध, सुसिद्ध-साध्य, सुसिद्ध-सुसिद्ध तथा सुसिद्ध-शत्रु कहलाता है। तथा चौथे चारों कोष्ठकों में (पहले, दूसरे, तीसरे एवं चौथे कोष्ठक में मन्त्राक्षर होने पर) वह क्रमशः अरिसिद्ध, अरिसाध्य, अरिसुसिद्ध एवं अरि-अरि कहलाता है।

इसके बाद मन्त्र का इस रीति से विचार करना चाहिए :

सिद्ध-सिद्ध मन्त्र यथोक्त काल में, सिद्ध-साध्य मन्त्र उससे दूने समय में तथा सिद्ध-सुसिद्ध मन्त्र (निर्धारित संख्या से) आधा जप करने से सिद्ध हो जाता है। (किन्तु) सिद्धारि मन्त्र बान्धवों का नाश करता है।

साध्य-सिद्ध मन्त्र दूना जप करने पर सिद्ध हो जाता है। साध्य-साध्य निरर्थक होता है। साध्य-सुसिद्ध भी दूने जप से सिद्ध होता है (किन्तु) साध्यारि मन्त्र अपने गोत्र के लोगों को नष्ट करता है।

सुसिद्ध-सिद्ध आधे जप से, सुसिद्ध-साध्य दूने जप से तथा सुसिद्ध-सुसिद्ध मन्त्र दीक्षा मात्र से सिद्ध हो जाता है। (किन्तु) सुसिद्धारि मन्त्र कुटुम्बियों को नष्ट करता है।

अरिसिद्ध मन्त्र पुत्र को, अरिसाध्य कन्या को, अरिसुसिद्ध पत्नी को तथा अरि-अरिमन्त्र साधक के मार डालता है।

टिप्पणी : सिद्धादिशोधन की आनवार्यता : जिस प्रकार सुखमय दाम्पत्य जीवन के लिए विवाह से पूर्व वर एवं वधू गण, मकूट, नाड़ी आदि गुण दोनों का ज्योतिष शास्त्र के अनुसार विचार कर मेलापक मिलाया जाता है, ठीक इसी प्रकार मन्त्र

दीक्षा से पूर्व साधक एवं मन्त्र के सम्बन्ध का विचार करने के लिए मन्त्रशास्त्र के अनुसार सिद्धादि शोधन किया जाता है। "नास्ति मन्त्र समो रिपुः" – मन्त्र के समान कोई दूसरा शत्रु नहीं होता। क्योंकि वह ऐसा 'वाक्वज्र' है जो साधक को मार भी सकता है। आगम शास्त्र की इन चेतावनियों को ध्यान में रखते हुए मन्त्र ग्रहण करने से पहिले वह सिद्ध, साध्य या शत्रु है इसका भली-भाँति विचार कर लेना चाहिए और यदि कदाचित् भ्रम या प्रमाद वश शत्रुमन्त्र की दीक्षा लेनी हो तो वक्ष्यमाण विधि से उसका त्याग कर देना चाहिए।

अकथह चक्र (देखिये चित्र ८६)।

उदाहरण : उदाहरणार्थ–मान लीजिए कि देवदत्त को कोई मन्त्र ग्रहण करना है, जिसके प्रारम्भ में 'ऐं' है। उक्त चक्र में देवदत्त के नाम का प्रथम अक्षर 'द' २ नं० के कोष्ठक में पड़ता है, तथा मन्त्र का प्रथम अक्षर 'ए' १४ नं० के कोष्ठक में पड़ता है। इस प्रकार देवदत्त के नामाक्षर से मन्त्राक्षर सुसिद्ध–चतुष्टय के चतुर्थ कोष्ठक में पड़ता है। अतः यह मन्त्र देवदत्त के लिए सुसिद्धारि होने के कारण त्याज्य है।

नाम्नो मन्त्रस्य वर्णांश्चलिखित्वा प्रतिवर्णकम् ॥ १७ ॥
सिद्धादिगणनाकार्य्या यावन्मन्त्रसमापनम्।
नाम्नो यदि समाप्तिः स्यात्पुनर्नाम लिखेत्सुधीः ॥ १८ ॥
एवं संशोधितेषु स्युर्भूरिवैसाध्यवैरिणः।
अल्पाः सिद्धसुसिद्धाश्चेदशुभं व्युत्क्रमाच्छुभम् ॥ १९ ॥
मतमित्थं तु केषांचित्तदपि प्राज्ञसंमतम्।

सिद्धादि शोधन की दूसरी रीति : (साधक के) नाम तथा (गृह्यमाण) मन्त्र के वर्णों को लिखकर जब तक मन्त्र समाप्त न हो सिद्धादि गणना करनी चाहिए। यदि नाम के वर्ण समाप्त हो जाँय तो पुनः नाम लिख लेना चाहिए। इस प्रकार संशोधन करने पर साध्य एवं शत्रु अधिक हों तथा सिद्ध एवं सुसिद्ध कम हों तो मन्त्र अशुभ होता है। इसके विपरीत सिद्ध एवं सुसिद्ध अधिक• तथा साध्य एवं शत्रु कम होने पर शुभ होता है। ऐसा कुछ विद्वानों का मत है तथा यह प्राचीन आचार्यों ने भी स्वीकार किया है।

प्रकारांतरेणसिद्धादिशोधनमाह। नाम्न इति ॥१७–१८॥ व्युत्क्रमात् सिद्धसुसिद्धानां बहुत्वेसाध्यारीणामल्पत्वेशुभमित्यर्थः ॥ १९ ॥

टिप्पणी : *उदाहरण* : मान लीजिये कि साधक का नाम देवदत्त तथा मन्त्र – 'वक्रतुंडाय हुं' है। इन दोनों के वर्ण निम्नलिखित हुए :

देवदत्त : द, व, द, त, त,

वक्रतुंडाय हुं : व, क, र, त, ड, य, ह,

यहाँ नाम के प्रथमाक्षर 'द' से मन्त्र का प्रथमाक्षर 'व' १२ वाँ होने के कारण अरि है। इसी प्रकार – 'व' से 'क' सिद्ध है। 'द' से 'र' साध्य है। 'त' से 'त' सिद्ध है। 'त' से 'ड' सुसिद्ध है। पुनः 'द' से 'य' सिद्ध तथा 'व' से 'ह' भी सिद्ध है।

इस तरह यहाँ नाम एवं मन्त्र के वर्णों में सिद्धादि विचार करने से साध्य एवं शत्रुओं की संख्या २ तथा सिद्ध एवं सुसिद्धों की संख्या ५ है। अतः सिद्धादि की संख्या अधिक होने के कारण यह मन्त्र देवदत्त को शुभफलदायक होगा।

अथवान्यप्रकारेण सिद्धादीनां विशोधनम् ॥ २० ॥
द्वादशारे लिखेच्चक्रे वर्णान्पूर्वोदितान्क्रमात् ।
ईशानान्तमकाराद्यान्हान्तान्षंढविवर्जितान् ॥ २१ ॥
तत्र नामार्णमारभ्या मन्त्राद्यर्णावधि क्रमात् ।
गणयेत्सिद्धसाध्यादि फलं तेषां विनिर्दिशेत् ॥ २२ ॥
सिद्धःसिध्यति कालेन साध्यस्तु जपहोमतः ।
सुसिद्धः प्राप्तिमात्रेण साधकं भक्षयेदरिः ॥ २३ ॥
सिद्धो नवैकबाणेषुसाधयो रसदिशाक्षिषु ।
सुसिद्धस्त्रिमुनीशेषु रिपुर्वेदाष्टभानुषु ॥ २४ ॥

अकडमचक्र : अथवा अन्य प्रकार से सिद्धादियों का शोधन करना चाहिए, यथा द्वादश दल चक्र में नपुंसक (ऋ ॠ ऌ ॡ) वर्णों को छोड़कर अकार से हकार तक वर्णों को पूर्वोक्त (प्रदक्षिण) क्रम से लिखना चाहिए। इस चक्र में नाम के प्रथम अक्षर से मन्त्र के प्रथम अक्षर तक – सिद्ध, साध्य, सुसिद्ध एवं अरि इस क्रम से गणना करनी चाहिए।

सिद्ध मन्त्र निर्धारित काल में, साध्य मन्त्र अधिक जप एवं होम करने से तथा सुसिद्ध मन्त्र दीक्षा मात्र से सिद्ध हो जाता है। अरिमन्त्र साधक को खा जाता है।

(नाम के प्रथमाक्षर वाले कोष्ठ से) १, ५ एवं ९ वें कोष्ठक में (पड़नेवाला

इदमतंप्राज्ञसंमतंशिष्टसंमतम् ॥ २० ॥ अकडमचक्रमाह । द्वादशारइति । षंढाऋॠ-ऌॡइतितान् ॥ २१–२२ ॥ जपहोमतः जपहोमाधिक्येन ॥ २३ ॥ स्पष्टार्थमाह । सिद्धो-नवैकादशबाणेष्विति ॥ २४ ॥

मन्त्र) सिद्ध; २, ६ एवं १० वें कोष्ठक में पड़ने वाला साध्य; ३, ७ एवं ११ वें कोष्ठक में पड़ने वाला सुसिद्ध, तथा ४, ८ एवं १२ वें काष्ठक में पड़ने वाला मन्त्र अरि होता है ।

टिप्पणी : अकडम चक्र (देखिये चित्र ८७) ।

उदाहरण : मान लीजिए कि देवदत्त को कोई मन्त्र ग्रहण करना है जिसके प्रारम्भ में 'ऐं' है । उक्त चक्र में देवदत्त के नाम के प्रथम अक्षर 'द' से मन्त्राक्षर 'ऐ' तीसरे स्थान में पड़ता है । अत: देवदत्त के लिए यह मन्त्र सुसिद्ध है । परिणामत: उसे इस मन्त्र की उपासना शीघ्र फलदायक होगी ।

अन्योपीह प्रकारोस्ति सिद्धसाध्यादिशोधने ।
चतुः कोष्ठेषु विलिखेदादिवर्णान्पुनः पुनः ॥ २५ ॥
नामार्णात्सिद्धसाध्यादि ज्ञेयं मन्वक्षरावधि ।
चतुर्थोपि प्रकारोस्ति सिद्धादीनां विशोधने ॥ २६ ॥

सिद्धादिशोधन की चौथी रीति : सिद्धादि शोधन की एक और भी रीति है . चार कोष्ठकों मे अकरादि वर्णों को बार बार लिख लेना चाहिए । (फिर) नाम के प्रथमाक्षर से मन्त्र के प्रथमाक्षर तक सिद्ध, साध्य, सुसिद्ध एवं अरि की गणना करनी चाहिए – यह सिद्धादि शोधन की चौथी रीति है ।

टिप्पणी : सिद्धादिशोधन चक्र (देखिये चित्र ८८)

उदाहरण : पूर्वोक्त उदाहरण की भाँति यहाँ भी मान लीजिए कि देवदत्त को कोई मन्त्र ग्रहण करना है जिसके प्रारम्भ में 'ऐं' बीज है। अब देखिए – उक्त चक्र में देवदत्त के नाम के प्रथमाक्षर 'द' से मन्त्राक्षर 'ऐ' तीसरे स्थान में पड़ता है । अत: नियमानुसार देवदत्त के लिए यह मन्त्र सुसिद्ध हुआ ।

नाम्नो मन्त्रस्य वर्णौघंचतुर्भिर्विभजेत्सुधीः ।
एकादिशेषे सिद्धादिक्रमाज्ज्ञेयं विचक्षणैः ॥ २७ ॥

सिद्धादिशोधन की पाँचवी रीति : नाम एवं मन्त्र के वर्णों को जोड़कर ४ का भाग लगाना चाहिए । यहाँ १ शेष होने पर मन्त्र सिद्ध, २ शेष होने पर साध्य, ३ शेष होने पर सुसिद्ध तथा ४ शेष होने पर शत्रु जानना चाहिए ।

टिप्पणी : उदाहरण : मान लीजिए कि देवदत्त को वागीश्वरी का 'ऐं नमः भगवति वद वद वाग्वादिनि स्वाहा' – यह षोडशाक्षर मन्त्र ग्रहण करना है ।

॥२५-२६॥ प्रकारांतरमाह । नाम्नइति । नाममंत्रयोर्वर्णानेकीकृत्यचतुर्भक्तेएकशेषेसिद्धः द्विशेषे साध्यः त्रिशेषेसुसिद्धः शून्येऽरिरितिफलं पूर्वोक्तम् ॥ २७ ॥

यहाँ देवदत्त के नाम में ४ वर्ण हैं तथा मन्त्र में १६ वर्ण हैं। इस दोनों का योग २० है। इसमें ४ का भाग देने पर शून्य या ४ शेष बचता है। अतः उक्त नियमानुसार देवदत्त के लिए यह मन्त्र अरि है।

सिद्धादिशोधनं प्रोक्तमथवक्ष्मि भशोधनम्।
नेत्रभूगुणवेदक्ष्माधरानयनभूभुजाः॥ २८॥
द्विचन्द्रभुजवाह्नक्षिभूनेत्रत्रिधरागुणाः।
एकैकं भूभुजेद्वयक्षिरामचन्द्रानुडुष्वथ॥ २९॥
अश्विन्यादिषु विज्ञेया आदिवर्णाः क्रमाद्बुधैः।
क्षान्ताबिन्दुविसर्गौ तु पौष्णभागे व्यवस्थितौ॥ ३०॥
जन्मसंपद्विपत्क्षेमप्रत्यरिः साधकोवधः।
मैत्रं परममैत्रं च गणनीयं स्वनामभात्॥ ३१॥
विपद्वधः प्रत्यरिश्चत्याज्या अन्यदुडूत्तमम्।

नक्षत्र शोधन : सिद्धादिशोधन बतलाया गया, अब नक्षत्र-शोधन को बतलाता हूँ : अश्विनी आदि नक्षत्र में क्रमशः अकारादि २, १, ३, ४, १, १, २, १, २, २, १, २, २, २, १, २, ३, १, ३, १, १, १, २, २, ३, एवं ३ वर्ण तथा रेवती में 'क्ष अं अः' स्थित माने गये हैं।

अपने नाम के नक्षत्र से प्रारम्भ कर अग्रिम नक्षत्र क्रमशः जन्म, सम्पद् विपद्, क्षेम, प्रत्यरि, साधक, वध, मित्र एव परममित्र संज्ञक होते हैं। इनमें से विपद्, प्रत्यरि एवं वध त्याज्य हैं, शेष नक्षत्र उत्तम होते हैं।

टिप्पणी : नक्षत्रशोधन चक्र। देखिये चित्र ८९)

उदाहरण : मान लीजिये कि देवदत्त को 'ऐं नमः भगवति०' मन्त्र ग्रहण करना है।

नक्षत्रशोधन चक्र के अनुसार देवदत्त का नक्षत्र अनुराधा तथा मन्त्र का नक्षत्र आर्द्रा हुआ। अनुराधा से आर्द्रा तक उक्त रीति से गिनने पर यह जन्म संज्ञक नक्षत्र होने के कारण ग्रहण योग्य है।

अथर्णधनसंशुद्धिः कथ्यते सिद्धिदायिनी॥ ३२॥
सप्ततिर्य्यग्लिखेद्रेखा द्वादशैवोर्द्ध्वगाः पुनः।
एवं कृते तु जायन्ते कोष्ठाः षट्षष्टिसंमिताः॥ ३३॥

भशोधनं नक्षत्रशोधनम्। तत्रनक्षत्रेषुवर्णविभागमाह। नेत्रेति ॥ २८॥ उडुषुनक्षत्रेषु ॥ २९॥ पौष्णभागेरेवत्यंशे ॥ ३०-३२॥ ऋणधनशोधनमाह सप्तेति। तिर्यक्सप्तरेखाऊर्ध्वंद्वादशकृत्वा ॥ ३३॥

आद्यपंक्तौ लिखेदंकांस्ते कथ्यते यथाक्रमम् ।
मनुनक्षत्रनेत्रार्कतिथिषड्वेदवह्नयः ॥ ३४ ॥
सायकावसवोनन्दाः कोष्ठेषु क्रमतः स्थिताः ।
द्वितीयपंक्तौ संलेख्याः पञ्चदीर्घोज्झिताःस्वराः ॥ ३५ ॥
तृतीयपंक्तौ काद्यर्णाष्टकारान्ताः शिवैर्मिताः ।
ठादिफान्ताश्चतुर्थ्यां तु पञ्चम्यां बादिहान्तिमाः ॥ ३६ ॥
षष्ठ्यां पंक्तौ क्रमाल्लेख्या अंकाःकथ्यन्त एव ते ।
दिक्चन्द्रमुनिवेदाष्टगुणसप्तेपुसागराः । ३७ ॥
रसाश्वरामसंख्याता एवमंका उदीरिताः ।
मन्त्रवर्णान्पृथक्कुर्य्यात्स्वरव्यञ्जनरूपतः ॥ ३८ ॥
कोष्ठे यावतिवर्णःस्याद्गणयेत्तावदंककम् ।
कोष्ठोपरिस्थेनांकेन सर्ववर्णेष्वयं विधिः ॥ ३९ ॥
दीर्घाक्षराणामंकास्तुज्ञेया लघ्वक्षरस्थिताः ।
एकीकृत्याखिलानंकानष्टभिर्विभजेत्पुनः ॥ ४० ॥
शेषोंको मन्त्रराशिः स्यान्नामवर्णेष्वयंविधिः ।
अधः पंक्तिस्थितैरंकैर्गुणनीयास्तु तेखिलाः ॥ ४१ ॥
अधमर्णोंकको राशिरूनोराशिर्धनोस्मृतः ।
मन्त्रो यदाधमर्णः स्यात्तदाग्राह्यो धनी न तु ॥ ४२ ॥

ऋण-धन शोधन : अब सिद्धिदायक ऋण-धन शुद्धि को बतलाते हैं :

७ तिरछो एवं १२ खड़ो रेखा लिखनी चाहिए । ऐसा करने से ६६ कोष्ठक बन जाते हैं । इसकी प्रथम पंक्ति में अंकों को लिखना चाहिए । वे क्रमशः १४, २७, २, १२, १५, ६, ४, ३, ५, ८, एवं ९ बतलाये गये हैं । द्वितीय पंक्ति में पाँच दीर्घ स्वरों (आ, ई, ऊ, ॠ एवं ॡ) को छोड़कर (शेष ग्यारह) स्वरों को लिखना चाहिए । तृतीय पंक्ति में ककार से टकार तक ११ वर्ण, चतुर्थ पंक्ति में ठकार से

आद्यपंक्तौचतुर्दशाद्यंकः । द्वितीयायाम् आईऊॠॡहीनाः स्वराएकादश । तृतीयायां कादिटांताः । चतुर्थ्यांठादिफांताः । पञ्चम्यांबादिहांताः षष्टयांदशाद्यंकालेख्याः ॥ ३४–३८ ॥ कोष्ठेयावतीति । यावतितमेकोष्ठेवर्णस्तमंकमुपर्यंकेनगुणयेत । यथा–प्रथमकोष्ठस्थअकार-श्चतुर्दशगुणितश्चतुर्दशैव । द्वितीयकोष्ठस्थइकारः सप्तविंशत्यागुणिश्चतुः पञ्चाशत् । एवंतृतीयकोष्ठस्थः उकारः सद्वाभ्यांगुणितः षट् । एवमग्रेपि । साधकनामवर्णास्तुदिगा-दिभिरेवंगुणनीयाः । साध्यस्याकानेकीकृत्याष्टभिर्भक्तेशेषः साध्यराशिः । एवं साधकांका-न्गुणितानेकीकृत्याष्टभक्तेशेषःसाधकराशिः ॥ ३९–४१ ॥ मंत्रराशिरधिकश्चेद्ग्राह्यः ॥ ४२ ॥

फकार तक तथा पञ्चम पंक्ति में बकार से हकार तक के वर्णों को लिखना चाहिए। षष्ठ पंक्ति में क्रमशः अंकों को लिखना चाहिए। अब उन्हें बतलाता हूँ – १०, १, ७, ४, ८, ३, ७, ५, ४, १ एवं ७ ये अंक कहे गये हैं। (ऋणि-धनि चक्र देखिये चित्र ९०)

मन्त्र के वर्णों के स्वर एव व्यञ्जनों को पृथक कर लेना चाहिए। फिर जिन कोष्ठकों में जो जो अक्षर हों उनके ऊपर वाले कोष्ठक से अंक लेने चाहिए। इसी प्रकार सब अक्षरों के अंक लेने चाहिए। (आ, ई, ऊ, ॠ एवं ऌ इन) दीर्घ स्वरों के स्थान पर ह्रस्व स्वरों के अंक लेने चाहिए। फिर समस्त स्वर व्यञ्जनों के अंकों को जोड़ कर ८ का भाग देना चाहिए। यहाँ जो शेष बचता है, उसे, मन्त्र राशि कहते हैं।

नाम के स्वर एवं व्यञ्जनों से भी इसी रीति से नीचेवाली पंक्ति से अंक लेकर उनका योग करना चाहिए। इस योग में ८ का भाग देने से शेष नाम राशि कहलाती है।

अधिक राशि ऋणी तथा कम राशि धनी कहलाती है। जब मन्त्र ऋणी हो तो ग्रहण करना चाहिए, धनी नहीं।

टिप्पणी : उदाहरण : मान लीजिए कि देवदत्त को 'ऐं नमः भगवति वद वद वाग्देवि स्वाहा' मन्त्र ग्रहण करना है।

नामाक्षर एवं अंक : द्=७, ए=३, व्=७, अ=१०, द्=७, अ=१०, त्=८, त्=८, अ=१०, कुल संख्याओं का योग=७०

मन्त्राक्षर एवं अंक : ऐ=४, अँ=८, न्=५, अ=१४, म्=२, अः=९, व्=४, अ=१४, द्=४, अ=१४, व्=४, अ=१४, द्=४, अ=१४, व्=४, आ=१४, ग्=२, द्=४, ए=६, व्=४, इ=२७, स्=८, व्=४, आ=१४, ह्=९, आ=१४, कुल संख्याओं का योग=२२४

यहाँ मन्त्र के स्वर एवं व्यञ्जनों के अंको का योग २२४ है। इसमें ८ का भाग देने से ८ शेष बचता है। तथा नाम के स्वर एवं व्यञ्जनों के अंकों का योग ७० है, जिसमें ८ का भाग देने पर ६ शेष बचता है। अतः नियमानुसार मन्त्र राशि ऋणी तथा नामराशि धनी है। इस लिए देवदत्त का यह मन्त्र ऋणी होने के कारण ग्राह्य है।

एवंधनर्णं संप्रोक्तमन्यथा प्रोच्यते पुनः।
नामाद्यक्षरमारभ्य यावन्मन्त्रादिमाक्षरम् ॥ ४३ ॥

प्रकारांतरेणऋणधनशोधनमाह। नामादीति। धनिताऋणिताचपूर्ववत्। अधिकशेषऋणी ऊनोधनीत्यर्थः ॥ ४३ ॥

गणयेन्मातृकाद्यर्णं क्रमेण गुणयेत्त्रिभिः ।
विभक्ते सप्तभिः शिष्टो नामराशिरुदीरितः ॥ ४४ ॥
एवं मन्त्रार्णमारभ्य यावन्नामादिमाक्षरम् ।
गणयित्वा त्रिभिर्हत्वा विभजेत्सप्तभिःसुधीः ॥ ४५ ॥
मन्त्रराशिः स्मृतः शिष्टः पूर्ववद्धनितर्णता ।

ऋण-धन शोधन की दूसरी रीति : इस प्रकार ऋण-धन शोधन बतलाया गया, अब उसकी दूसरी रीति बतलाते हैं :

नाम के प्रथम अक्षर से मन्त्र के प्रथमाक्षर तक वर्णमाला के क्रम से गणना कर ३ से गुणाकर ७ का भाग देने पर शेष को नाम राशि कहते हैं । इसी प्रकार मन्त्र के प्रथम अक्षर से नाम के प्रथम अक्षर तक गणना कर ३ से गुणाकर ७ का भाग देने सेशेष मन्त्र राशि कहलाता है । तथा पूर्वोक्त नियमानुसार अधिक राशि ऋणी एवं कम राशि धनी कहलाती है ।

टिप्पणी : पूर्वोक्त उदाहरण के समान यहाँ भी मान लीजिए कि देवदत्त को 'ऐं नमः भवगति०' मन्त्र ग्रहण करना है । अतः देवदत्त के नाम के प्रथम अक्षर 'दकार' से मन्त्राक्षर 'ऐ' तक गणना करने पर संख्या २९ हुई । इसे ३ से गुणा करने पर ८७ हुआ तथा इसमें ७ का भाग देने से शेष ३ बचा जो नाम राशि हुई । फिर मन्त्राक्षर 'ऐ' से नामाक्षर 'द' तक गणना करने से प्राप्त संख्या २३ को ३ से गुणा किया । इसके गुणनफल ६९ में सात का भाग देने से शेष ६ बचा – यह मन्त्रराशि हुई । यहाँ भी मन्त्र राशि अधिक होने के कारण मन्त्र ऋणी है । अतः यह मन्त्र ग्राह्य है ।

यद्वा मन्त्राक्षराणीह स्वरव्यञ्जनरूपतः ॥ ४६ ॥
पृथक्कृत्य द्विगुणयेद्योजयेत्साधकाक्षरैः ।
तादृशैरष्टभिर्भक्तैर्मन्त्रराशिरुदाहृतः ॥ ४७ ॥
एवं नामार्णसंघोपि द्विगुणीकृत्य योजितः ।
मन्त्रवर्णैरष्टभक्तो नामराशिः स्मृतोबुधैः ॥ ४८ ॥
ऋणिता धनिता चात्र पूर्ववत्परिकीर्तिता ।
उक्तान्यतममार्गेण शोधनीयमृणं धनैः ॥ ४९ ॥

॥ ४४–४५ ॥ प्रकारांतरमाह । यद्वेति । तादृशैः स्वरव्यञ्जनरूपेणपृथक्कृत्तैः साधकनामाक्षरैर्योजयेत् ॥ ४६–४८ ॥ ऋणिताधनिताचपूर्ववत् अधिकऋणीत्यादिप्रागुक्तरीत्या ॥ ४९ ॥

ऋण-धन शोधन की तीसरी रीति : अथवा स्वर एवं व्यञ्जन के रूप में मन्त्र के अक्षरों को पृथक् कर (उस संख्या) को दो से गुणा करना चाहिए। (फिर गुणन-फल में) इसी प्रकार साधक के नामाक्षरों का जोड़ना चाहिए। (इस योगफल में) ८ का भाग देने से शेष को मन्त्र राशि कहते हैं।

इसी तरह नाम के स्वर एवं व्यञ्जनों के योग को दूना कर मन्त्र के अक्षरों को जोड़कर ८ का भाग देने से शेष नाम राशि कहलाता है। यहाँ ऋणता एवं धनता पूर्वोक्त नियमानुसार जाननी चाहिए।

उक्त तीनों प्रकारों में से किसी भी एक रीति से ऋणधन का शोधन कर लेना चाहिए।

टिप्पणी : उदाहरण : देवदत्त के नाम में स्वर एवं व्यञ्जनों का योग ९ है। तथा 'ऐं नमः भवगति०' मन्त्र में स्वर एवं व्यञ्जनों का योग २६ है।

अतः मन्त्र के स्वर-व्यञ्जनों के योग २६ को २ से गुणा करने पर ५२ हुआ। इसमें नामाक्षरों के योग ९ को जोड़ने पर ६१ हुआ। इसमें ८ का भाग देने से ५ शेष बचा। अतः मन्त्र राशि ५ हुई।

नाम के स्वर एवं व्यञ्जनों के योग ९ को द्विगुणित करने पर १८ हुआ। इसमें मन्त्राक्षर २६ जोड़ने से कुल योग ४४ हुआ। इसमें ८ का भाग देने से ४ शेष बचा। अतः नाम राशि ४ हुई।

यहाँ भी नाम राशि से मन्त्र राशि के अधिक होने के कारण मन्त्र ऋणी है। अतः वह देवदत्त को ग्राह्य है।

योमन्त्रः पूर्वजनुषि सेविते नाददात्फलम्।
पापात्पापक्षये जाते फलावाप्तिरनेहसि ॥ ५० ॥
आयुः क्षयाद्गतोनाशं साधकोस्य भवान्तरे।
ऋणित्वात्प्राप्तिमात्रेण मन्त्रोभीष्टं प्रयच्छति ॥ ५१ ॥
समांकौ यद्यभौराशी तदा संसेवनात्फलम्।
धनीमन्त्रस्तु संप्राप्तः फलत्यधिकसेवया ॥ ५२ ॥

मन्त्र के ऋणी एवं धनी आदि होने का फल : जो पूर्व जन्म में (उपासना के समय पापों के होने के कारण) अपना फल नहीं दे पाया। इसके द्वारा पापक्षय

मंत्रस्यऋणित्वेहेतुमाह। योमंत्रइति। पूर्वजःमन्युपासनसमयेपापसद्भावात् पापक्षयं कुर्वन्नान्यत्फलं ददौततः पापक्षयेकृतेफलदानकाले उपासितुरायुः क्षयो जातः समन्त्रः फलादानाज्जन्मांतरेऽऋणीजातः। सप्राप्तिमात्रेणेष्टफलदोभवतीत्यर्थः। अनेहसिकाले ॥ ५०-५२ ॥

होने के समय साधक की आयु समाप्त हो जाने के कारण उसके अन्य जन्म में वह मन्त्र ऋणी हो गया। (अतः वह मन्त्र) ग्रहण करने मात्र से ऋणी होने के कारण (साधक को) अभीष्ट फल देता है।

यदि नामराशि एवं मन्त्रराशि के अंक समान हों, तो उपासना करने से फल मिलता है। किन्तु धनी मन्त्र ग्रहण करने पर वह अत्यधिक साधना करने पर फल देता है।

मन्त्राणां शोधने चैतत्प्रकारान्तरमुच्यते।
षट्कोणे विलिखेत्पूर्वकोणाद्येकैकवर्णकान् ॥ ५३ ॥
अकारादिहकारान्तान्नपुंसकविवर्जितान्।
नामाद्यक्षरमारभ्य मन्त्राणांविधिशोधयेत् ॥ ५४ ॥
प्रथमे संपदां प्राप्तिर्द्वितीये धनसंक्षयः।
तृतीये धनसंप्राप्तिश्चतुर्थे बन्धुविग्रहः ॥ ५५ ॥
पञ्चमे तु भवेदाधिः षष्ठे सर्वस्य संक्षयः।
एवं संशोधितं मन्त्रंदद्याच्छिष्याय मान्त्रिकः ॥ ५६ ॥

मन्त्रशोधन की एक और रीति : मन्त्रों के शोधन प्रसंग में यह एक और रीति बतलाते हैं :

षड्कोण चक्र में पूर्व से प्रारम्भ कर नपुंसक (ऋ, ॠ, ऌ एवं ॡ) स्वरों को छोड़कर अकार से हकार तक क्रमशः १-१ वर्ण को लिखना चाहिए। (यहाँ) नाम के प्रथम अक्षर से मन्त्र के प्रथम अक्षर तक शोधन करना चाहिए।

(नाम के प्रथम अक्षर से मन्त्र का प्रथमाक्षर) पहिले कोष्ठ में हो तो संपत्ति का लाभ, दूसरे में हो तो धन हानि, तीसरे में हो तो धन लाभ, चौथे में हो तो बन्धुओं से कलह, पाँचवे में हो तो आधि-व्याधि एवं छठे कोष्ठक में हो तो सर्वस्व का नाश होता है।

मान्त्रिक को चाहिए कि वह इस प्रकार से शोधन करने के बाद अपने शिष्य को मन्त्र की दीक्षा दे।

टिप्पणी : मन्त्र शोधन चक्र (देखिये चित्र ९१)।

उदाहरण : मान लीजिये कि देवदत्त को 'ऐं नमः भगवति०' मन्त्र ग्रहण करना है।

उक्त चक्र में देवदत्त के नाम के प्रथम अक्षर से मन्त्र का प्रथम अक्षर तीसरे स्थान पर पड़ता है। अतः इस मन्त्र का ग्रहण करने से देवदत्त को धनलाभ होगा।

॥ ५३ ॥ नपुन्सकाऋॠऌॡवर्णाः ॥ ५४-५६ ॥

येषां मनूनां सिद्धादिशोधनं नास्ति तान्ब्रुवे ।
एकवर्णस्त्रिवर्णो वा पञ्चार्णो रसवर्णकः ॥ ५७ ॥
सप्तार्णो नववर्णश्चरुद्रार्णो[1] रदनाक्षरः ।
अष्टार्णो हंसमन्त्रश्चकूटो वेदादितो ध्रुवः ॥ ५८ ॥
स्वप्नलब्धः स्त्रियाप्राप्तो मालामन्त्रो नृकेसरी ।
प्रासादो रविमन्त्रश्चवाराहो मातृकापरा ॥ ५९ ॥
त्रिपुराकाममन्त्रश्चाज्ञासिद्धः पक्षिनायकः ।
बौद्धमन्त्रा जैनमन्त्रा नैवसिद्धादिशोधनम् ॥ ६० ॥
एतद्भिन्नेषु मन्त्रेषु शुद्धिरावश्यकीमता ।
विद्यां मन्त्रं स्तवं सूक्तमरिभूतं त्यजेद् ध्रुवम् ॥ ६१ ॥

मन्त्रशोधन का अपवाद : जिन मन्त्रों के लिए सिद्धादि शोधन की आवश्यकता नहीं है, अब उनको बतलाता हूँ :

एकाक्षर, त्र्यक्षर, पञ्चाक्षर, षडक्षर, सप्ताक्षर, नवाक्षर, एकादशाक्षर, द्वात्रिंशदक्षर, अष्टाक्षर, हंसमन्त्र, कूटमन्त्र, वेदोक्त मन्त्र, प्रणव, स्वप्न में प्राप्त, स्त्री द्वारा प्राप्त, मालामन्त्र, नरसिंहमन्त्र, प्रसाद (हौं), रविमन्त्र, वाराहमन्त्र, मातृकामन्त्र, परा (ह्रीं), त्रिपुरा, काममन्त्र, आज्ञासिद्ध गरुड़ मन्त्र, बौद्ध एवं जैनमन्त्र – इन सब मन्त्रों में सिद्धादि शोधन नहीं किया जाता[1] ।

इसके अलावा शेष सभी मन्त्रों में आवश्यक रूप से सिद्धादि शोधन करना चाहिए । (जो) विद्यामन्त्र, स्तोत्र या सूक्त अरि हो, उसे निश्चित रूप से छोड़ देना चाहिए ।

अरिमन्त्रोगृहीतश्चेदज्ञानवशतस्तदा ।
तस्य त्यागः प्रकर्तव्यस्तत्प्रकारोधुनोच्यते ॥ ६२ ॥
सुदिने स्थापयेत्कुम्भं सर्वतोभद्रमण्डले ।

---

[1] त्रैलोक्य सम्मोहन तन्त्र तथा बृहद्गौतमीय में श्रीकृष्ण के समस्त मन्त्रों में सिद्धादि शोधन एवं ऋणी-धनी विचार को अनावश्यक बतलाया गया है, यथा :

"न चात्र शात्रवा दोषा नर्णस्वादि विचारणा ।
ऋक्ष राशि विचारो वा न कर्तव्यो मनौ प्रिये ॥"–त्रै० सं० तन्त्र ।
"सिद्धसाध्यसुसिद्धारिरूपा नात्र विचारणा"–बृ गौ० ।

---

[1] रसवर्णः षडर्णः ॥ ५७ ॥ रदनाक्षरे द्वात्रिंशदर्णः । कूटोक्तयञ्जनसमूहः । ध्रुवःप्रणवः ॥ ५८ ॥ परा ह्रीं ॥ ५९ ॥पक्षिनायकोगरुडमन्त्रः ॥ ६०–६२ ॥

विलोमं संजपन्मन्त्रं पूरयेत्तं सुपाथसा ॥ ६३ ॥
तत्रदेवं समावाह्य यजेदावरणान्वितम् ।
तदग्रे स्थण्डिलं कृत्वा प्रतिष्ठाप्यानलं ततः ॥ ६४ ॥
जुहुयान्मूलमन्त्रेणविलोमेन शतं घृतैः ।
दिक्पतिभ्यो बलिं दद्यात्पायसान्नैर्घृतान्वितैः ॥ ६५ ॥
पुनः संपूज्य देवेशं प्रार्थयेन्मनुनामुना ।
आनुकूल्यमनालोच्य मया तरलबुद्धिना ॥ ६६ ॥
यदुपात्तं पूजितं च प्रभो मन्त्रस्वरूपकम् ।
तेन मे मनसः क्षोभमशेषं विनिवर्तय ॥ ६७ ॥
पापं प्रतिहतं चास्तु भूयाच्छ्रेयः सनातनम् ।
तनोतु मम कल्याणं पावनी भक्तिरस्तु ते ॥ ६८ ॥
एवं संप्रार्थ्य देवेशं कर्पूरागरुचन्दनैः ।
विलोमं विलिखेन्मन्त्रं ताडपत्रे तदर्चयेत् ॥ ६९ ॥
प्रबध्य निजमूर्ध्न्ये तत्स्नायात्कुम्भस्थितैर्जलैः ।
पुनः संपूर्य्य तं तोयैस्तस्यास्ये मन्त्रपत्रकम् ॥ ७० ॥
संपूज्य कुम्भे सरिति तडागे वा विनिक्षिपेत् ।
विप्रान्संभोज्य मुच्येत पीडयासौ मनूत्थया ॥ ७१ ॥

अरिमन्त्र के त्याग की विधि : यदि अज्ञानवश अरिमन्त्र की दीक्षा ले ली हो तो उसका त्याग कर देना चाहिए। अब उसके त्याग की विधि को बतलाते हैं :

शुभमुहूर्त में सर्वतोभद्रमण्डल पर कुम्भ स्थापित करना चाहिए। तथा विलोम मन्त्र का जप करते हुए उसमें पवित्र जल भरना चाहिए। उसमें देव का आवाहन कर आवरण सहित पूजन करना चाहिए।

उसके सामने स्थण्डिल बनाकर अग्नि की प्रतिष्ठा कर विलोम मन्त्र से घी की १०० आहुतियाँ देनी चाहिए। फिर खीर एवं घी मिश्रित अन्न से दिक्पालों को बलि देकर देव का पुनः पूजन कर निम्नलिखित मन्त्र से प्रार्थना करनी चाहिए :

'आनुकूल्यमनालोच्यमया तरल बुद्धिना। यदुपात्तं पूजितं च प्रभो मन्त्र स्वरूपकं ॥
तेन मे मनसः क्षोभमशेषं विनिवर्तय।

अरिमन्त्रत्यागप्रकारमाह। सुदिनइति। सुपाथसाशोभनोदकेन ॥ ६३-६९ ॥ तंकुंभंजलैरापूर्यतत्रकुम्भेमन्त्रमुक्तंतालपत्रंक्षिपेत्। क्रमंक्रमगतयावर्णमालयारामायनमः आंइत्यादिलांतंप्रजप्यततआरभ्यपुनरकारपर्यन्तंगणयेत्। एवंजप्तोरिमन्त्रोपिसिद्धिदः ॥ ७०-७१ ॥

पापं प्रतिहतं चास्तु भूयाच्छ्रेयः सनातनम् । तनोतु मम कल्याणं पावनी भक्तिरस्तु ते ॥'

–ऐसी प्रार्थना कर ताड़पत्र पर कपूर, अगर, एवं चन्दन से विलोम मन्त्र लिखना चाहिए और उसका पूजन करना चाहिए । (फिर) उसे अपने सिर पर बाँधकर कुम्भ के जल से स्नान करना चाहिए । तत्पश्चात् कुम्भ में पुनः जल भरकर, उसके मुख में (भीतर) मन्त्र लिखा हुआ ताड़पत्र डालकर, कुम्भ का पूजन कर उसे नदी या तालाब में डाल देना चाहिए । (इसके बाद) ब्राह्मणों को भोजन करा कर साधक अरिमन्त्र की पीड़ा से मुक्त हो जाता है ।

अनेकधा शोधनेचेच्छुद्धो न प्राप्यते मनुः ।
मायां कामं श्रियं चादौ दद्यात्तद्दोषमुक्तये ॥ ७२ ॥
यद्वा दुष्टो मनुर्जप्तः सिध्येत्प्रणवसंपुटः ।
यद्वा क्रमोत्क्रमगया प्रजप्तो वर्णमालया ॥ ७३ ॥
मन्त्रे यस्य भवेद्भक्तिर्विशेषः समनूत्तमः ।
वैरिकोष्ठमनुप्राप्तः सिद्धिदस्तस्यजायते ॥ ७४ ॥

मन्त्र की दोषमुक्ति का उपाय : यदि अनेक बार शोधन करने पर भी शुद्ध मन्त्र न मिलता हो तो (मन्त्र के) पहिले माया (ह्रीं), काम (क्लीं) तथा श्री (श्रीं) बीज लगाना चाहिए ।

अथवा दोष युक्त मन्त्र को प्रणव से संपुटित कर जपने से वह सिद्ध हो जाता है । अथवा क्रम एवं व्युत्क्रम वर्णमाला से जप करने पर मन्त्र सिद्ध हो जाता है ।

जिस व्यक्ति की जिस मन्त्र में विशेष भक्ति हो वह मन्त्र (उसके लिए) श्रेष्ठतम होता है । ऐसा मन्त्र अरिवर्ग का होने पर भी उसे सिद्धिदायक होता है ।

बीजमन्त्रास्तथामन्त्रा मालमन्त्रास्तथापरे ।
त्रिधामन्त्रगणाः प्रोक्ता बुधैरागमवेदिभिः ॥ ७५ ॥
बीजमन्त्रादशार्णान्तास्ततो मन्त्रानखावधि ।
विंशत्यधिकवर्णा ये मालामन्त्रास्तु ते स्मृताः ॥ ७६ ॥

मन्त्रों के तीन भेद : आगमवेत्ता विद्वानों ने बीजमन्त्र, मन्त्र तथा मालामन्त्र – ये मन्त्रों के तीन भेद बतलाये हैं । दश अक्षरों तक के मन्त्र बीजमन्त्र, ग्यारह से बीस अक्षरों तक के मन्त्र मन्त्र, तथा बीस अक्षरों से अधिक के मन्त्र मालामन्त्र कहलाते हैं ।

बाल्ये वयसि सिद्धयन्ति बीजमन्त्रा उपासितुः ।
मन्त्रा सिद्धा यौवने तु मालामन्त्राश्चवार्द्धके ॥ ७७ ॥

॥ ७२-७२ ॥ त्रिविधान्मन्त्रानाह । बीजेति ॥ ७५ ॥ नखावधि । विंशत्यर्णावधि ॥७६-७७ ॥

उक्तान्यस्यामवस्थायामभीष्टप्राप्तये सुधीः ।
बीजमन्त्रादिमन्त्राणां द्विगुणं जपमाचरेत् ॥ ७८ ॥

विविध अवस्थाओं में सिद्धिदायक मन्त्र : उपासक की बाल्यावस्था में बीज-मन्त्र सिद्ध होते हैं । युवावस्था में मन्त्र सिद्ध होते हैं । तथा वृद्धावस्था में मालामन्त्र सिद्ध होते हैं । उक्त अवस्थाओं से भिन्न अवस्था में अपने अभीष्ट की सिद्धि के लिए साधक को बीजमन्त्र आदि मन्त्रों का द्विगुणित जप करना चाहिए ।

स्वकुलान्यकुलाख्योथ मन्त्राणां भेद उच्यते ।
प्रकृतिः पञ्चभूतात्मा ततो जाता तु मातृका ॥ ७९ ॥
तस्माद्वर्णास्तु पञ्चाशत्पञ्चभूतमया यतः ।
तृतीयावर्गगाः कर्णा वोलळाः पार्थिवामताः ॥ ८० ॥
नासयौवर्गतुर्य्याश्चवसौवर्णाः स्मृता अपाम् ।
नेत्रेद्वितीयावर्गाणामैरक्षापावकात्मकाः ॥ ८१ ॥
वर्गाद्यानन्तर्झिटीशाअयषामारुता मताः ।
वर्गान्तिमाः कपोलौशोहोबिन्दुश्चेतिनाभसाः ॥ ८२ ॥
विसर्गस्तुप्रकृत्यात्मा सर्वभूतमयो यतः ।
प्राणेरितो विनिर्यातिकण्ठादिस्थानमस्पृशन् ॥ ८३ ॥
पार्थिवादिकवर्णानां स्वकीयाःस्वकुलाभिधाः ।
पार्थीवस्य च वर्णस्य मित्रं वारुणमक्षरम् ॥ ८४ ॥
तैजसं शत्रुभूतं स्यादुदासीनं तुमारुतम् ।
जलोद्भवस्य वर्णस्य पार्थिवं मित्रमीरितम् ॥ ८५ ॥
सपत्नं वह्निसम्भूतमुदासीनं तु वायवम् ।
तैजसस्याथ वर्णस्य वायवं मित्रमुच्यते ॥ ८६ ॥
विदेषी वारुणो वर्णउदासीनस्तुपार्थिवः ।
पवनोत्थितवर्णस्य मित्रं वह्निसमुद्भवम् ॥ ८७ ॥
शत्रुःपार्थिववर्णःस्यादुदासीनस्तु पाथजः ।

॥ ७८-७९ ॥ वर्गगाः तृतीयाः गजडदबाः । कर्णाउऊ । :ओलळाएतेभूवर्णाः ॥ ८० ॥ मासयौः ऋॠऔघझढधभवसएतेजलवर्णाः । नेत्रेइति । इईखछठथफऐरक्षएतेआग्नेयाः ॥ ८१ ॥वर्गाद्यांइति । अआएकचटतपयपाएतेवायवीयाः । वर्गान्तिमाइति । ङञणनमलॡशह अंएतेनाभसाः ॥ ८२ ॥ विसर्गस्यपञ्चभूतमयत्वमाह । विसर्गइति । अन्येवर्णाः कंठादिस्थानानिस्पृशन्तोनिर्यान्तिविसर्गस्तुनतथेतिसर्वभूतमयत्वम् ॥ ८३ ॥ एषां स्वकुलान्यकुलत्वमाह । पार्थिवेति ॥ ८४-८७ ॥

चतुर्णां पार्थिवादीनामाकाशार्णःसखा सदा ॥ ८८ ॥
मनोःसाधकनाम्नोपि यौवर्णावादिमौ त योः ।
स्वकुलादिकभेदस्तु शोध्यो मन्त्रप्रदित्सुना ॥ ८९ ॥
स्वकुलेभीप्सितासिद्धिःसिद्धिर्मित्रेपि कीर्तिता ।
अमित्रे मरणं रोगउदासीने न किञ्चन ॥ ९० ॥
उदासीनममित्रं च मन्त्रं दूरेण वर्जयेत् ।
स्वकुलं मित्रभूतं च गृह्णीयादिष्टकामुकः ॥ ९१ ॥
नक्षत्रैक्येपि सम्प्रोक्तं स्वकुलं नाममन्त्रयोः ।

कुलाकुल विचार : मन्त्रों का स्वकुल एवं अन्य कुल संज्ञक भेद बतलाता हूँ :

क्योंकि प्रकृति पञ्चभूतात्मक है, अतः उससे उत्पन्न मातृका एवं वर्ण पञ्चभूतमय होते हैं। वर्ग के तृतीय अक्षर (ग, ज, ड, द, ब) कर्ण (उ ऊ) ओ, ल एवं क पार्थिव माने गये हैं। नासा (ऋ ॠ), वर्ग के चतुर्थ अक्षर (घ, झ, ढ, ध, भ) व एवं स वर्ण जलसंज्ञक होते हैं। नेत्र (इ ई), वर्गों के द्वितीय अक्षर (ख, छ, ठ, थ, फ) ए, र एवं क्ष – ये वर्ण अग्निमय हैं। वर्गों के प्रथम अक्षर (क, च, ट, त, प) अनन्त (आ) भ्रिटीश (ऐं) आ, य एवं ष – ये वर्ण वायुमय हैं। वर्ग के अन्तिम अक्षर (ङ, ञ, ण, न, म,) कपोल (ऌ ॡ) श, ह एवं विन्दु (अं) – ये वर्ण आकाशात्मक हैं। क्योंकि विसर्ग प्रकृति की आत्मा है, अतः वह सर्वभूतमय होता है। प्राण (विसर्ग) को छोड़कर अन्य वर्ण कण्ठ आदि स्थानों का स्पर्श करते हुए निकलते हैं।

पृथ्वी आदि तत्त्वों के अपने वर्ण स्वकुल संज्ञक होते हैं। पृथ्वी के वर्णों के लिये जलतत्व वाले वर्ण मित्र होते हैं, अग्नि तत्त्ववाले वर्ण शत्रु तथा वायुतत्त्ववाले वर्ण उदासीन होते हैं '

जल तत्त्ववाले वर्णों के लिए पृथ्वी तत्त्ववाले वर्ण मित्र, अग्नि तत्त्ववाले शत्रु, तथा वायुतत्त्ववाले वर्ण उदासीन होते हैं।

तेज तत्त्ववाले वर्णों के लिए वायुतत्त्ववाले वर्ण मित्र, जलतत्ववाले वर्ण शत्रु तथा पृथ्वीतत्त्व वाले वर्ण उदासीन कहलाते हैं।

वायु तत्त्ववाले वर्णों के लिए वह्नितत्त्व वाले वर्ण मित्र, पृथ्वीतत्त्व वाले वर्ण शत्रु तथा वायुतत्त्ववाले वर्ण उदासीन होते हैं।

पृथ्वी आदि चारों तत्त्वों के वर्णों के आकाश तत्त्व वाले वर्ण सदैव मित्र होते हैं।

मन्त्र एवं साधक के नाम के जो प्रथम अक्षरों हों उनके स्वकुल आदि का शोधन

॥ ८८-८९॥ फलमाह । स्वेति । स्वकुलेऽभीप्सितासिद्धिरित्यर्थः ॥ ९०-९१ ॥

दीक्षा देने वाले गुरु को करना चाहिए।

अपने कुल का मन्त्र लेने से अभीष्ट की सिद्धि होती है। मित्र कुल का मन्त्र लेने पर भी सिद्धि होती है। शत्रु कुल का मन्त्र लेने से रोग तथा मृत्यु और उदासीन कुल का मन्त्र लेने से कुछ भी नहीं होता है।

उदासीन एवं शत्रु मन्त्र को दूर से ही छोड़ देना चाहिए। इष्ट की सिद्धि चाहने वाले व्यक्ति को अपने कुल एवं मित्रकुल के मन्त्र को लेना चाहिए।

नाम एवं मन्त्र का एक नक्षत्र होने पर भी स्वकुल कहा जाता है।

टिप्पणी : कुलाकुल चक्र (देखिये चित्र ९२)।

पुंस्त्रीनपुंसकाःप्रोक्ता मनवस्त्रिविधाबुधैः ॥ ९२ ॥
वषडन्ताःफडन्ताश्च पुमांसो मनवःस्मृता।
वौषट्स्वाहान्तगा नार्य्यो हुंनमोन्तानपुंसकाः ॥ ९३ ॥
वश्योच्चाटनरोधेषु पुमांसःसिद्धिदायकाः।
क्षुद्रकर्मरुजां नाशे स्त्रीमन्त्राःशीघ्रसिद्धिदाः ॥ ९४
अभिचारे स्मृता क्लीबा एवं ते मनवस्त्रिधा।

पुरुष, स्त्री एवं नपुंसक मन्त्र : विद्वानों ने पुरुष, स्त्री एवं नपुंसक – इस तरह ३ प्रकार के मन्त्र बतलाये हैं। जिन मन्त्रों के अन्त में 'वषट्' या 'फट्' होता है वे पुरुष कहलाते हैं। 'वौषट्' एवं 'स्वाहा' अन्तवाले मन्त्र स्त्री तथा 'हुं' एवं 'नमः' अन्त वाले मन्त्र नपुंसक कहलाते हैं।

वश्य, उच्चाटन एवं स्तम्भन में पुरुष मन्त्र सिद्धिदायक होते हैं। क्षुद्रकर्म एवं रोगों के नाश में स्त्रीमन्त्र शीघ्र सिद्धि देते हैं। अभिचार में नपुंसक मन्त्र (सिद्धिदायक) कहे गये हैं। इस प्रकार सब मन्त्र तीन प्रकार के होते हैं।

नक्षत्रशोधने जन्मनक्षत्रमितरत्र तु ॥ ९५ ॥
शोधने मन्त्रिभिर्ग्राह्यं प्रसिद्धं जन्मना मता।
दत्तःसंशोधितो मन्त्रो भवेच्छिष्येष्टसिद्धये ॥ ९६ ॥

ग्राह्यनक्षत्र : मान्त्रिक को नक्षत्र शोधन में जन्मनक्षत्र तथा अन्य शोधनों में जन्मकाल से प्रसिद्ध नाम का नक्षत्र लेना चाहिए। भली भाँति शोधन कर शिष्य को दिया गया मन्त्र उसके अभीष्ट की सिद्धि करता है।

पुनमन्त्रत्रयंविध्यमाह। पुंस्त्रीति ॥ ९२-९३ ॥ तेषां विनियोगमाह। वश्योच्चाटनेति ॥ ९४ ॥

छिन्नत्वादिकदोषा ये 'पञ्चाशन्मन्त्रसंस्थिताः ।
तैर्दोषैःसकला व्याप्ता मनवःसप्तकोटयः ॥ ९७ ॥
अतस्तद्दोषशान्त्यर्थं संस्कारदशकं चरेत् ।

मन्त्रों के दश संस्कार : मन्त्रों के छिन्नत्व आदि जो ५० दोष हैं, उनसे सातों करोड़ मन्त्र व्याप्त हैं । अतः इन दोषों की शान्ति के लिए (वक्ष्यमाण) १० संस्कार करने चाहिए । (देखिए – शारदा तिलक, पटल २)

भूर्जपत्रे लिखेत्सम्यक्त्रिकोणं रोचनादिभिः ॥ ९८ ॥
वारुणं कोणमारभ्य सप्तधा विभजेत्समम् ।
एवमीशाग्निकोणाभ्यां जायन्ते तत्र योनयः ॥ ९९ ॥
नवनवदमितास्तत्र विलिखेन्मातृकां क्रमात् ।
अकारादिहकारां तामिशादिवरुणावधि ॥ १०० ॥
देवीं तत्र समावाह्य पूजयेच्चन्दनादिभिः ।
ततःसमुद्धरेन्मन्त्रजननं तदुदीरितम् ॥ १०१ ॥

जनन संस्कार : भोजपत्र पर गोरोचन आदि से समत्रिभुज लिखना चाहिए । पश्चिम के कोण से प्रारम्भ कर उसे ७ समान विभागों म विभक्त करना चाहिए । इसी प्रकार ईशान एवं आग्नेय कोणों से भी उसे ७–७ समान विभागों में बाँटना चाहिए । (ऐसा करने से) इसमें ४९ योनियाँ बन जाती हैं ।

इस चक्र में ईशान कोण से प्रारम्भ कर पश्चिम तक अकार से हकार पर्यन्त समस्त वर्णों को लिखना चाहिए । उसपर मातृका देवी का आवाहन कर चन्दन आदि से उसका पूजन करना चाहिए । फिर उससे मन्त्र के १–१ वर्ण का उद्धार करना चाहिए – इसे जनन कहते हैं ।

टिप्पणी : भोजपत्र पर गोरोचन एवं लाल चन्दन से जनन यन्त्र (देखिये चित्र ९३) लिखना चाहिए :

फिर इसमें विविध मातृका देवी का आवाहन एवं पूजन कर इससे पृथक् भोजपत्र पर अपने मन्त्र के प्रत्येक वर्ण का उद्धार करना चाहिए । फिर इन वर्णों का मार्जन कर पूरा मन्त्र लिख लेना चाहिए ।

छिन्नत्वादीति छिन्नोरुद्धःशक्तिहीनइत्यादयः । पञ्चाशद्दोषास्तल्लक्षणानिचशारदातिलकेद्वितीयपटलेउक्तानि ग्रन्थगौरवभयान्नलिख्यन्ते । सप्तकोटिमितामन्त्राः संति । तेसर्वेपितद्दोषाक्रांताएव ॥ ९७ ॥ जननाख्यं संस्कारमाह । भूर्जपत्रेरोचनाकुंकुमचन्दनैरात्माभिमुखं त्रिकोणं कृत्वात्रिभ्योपिकोणेभ्योमध्येकृताभिः षट्षड्रेखाभिः समाभिर्मध्येनवनवदमिता एकोनपञ्चाशत्त्रिकोणाःकोष्ठाजायंते । तत्रेशानादिपश्चिमकोणांतम तर्मातृकां लिखित्वाऽऽवाह्यसंपूज्यततएकैकमन्त्रार्णमुद्धरेत् । ततः संमार्ज्यपत्रान्तरेलिखेदित्यर्थः । एतज्जननम ॥ ९८-१०१ ॥

दीपन संस्कार : हंस मन्त्र से सम्पुटित इसका (मूलमन्त्र का) १ हजार जप करना दीपन कहलाता है ।

टिप्पणी : जिसका यह संस्कार करना हो उसे हंस मन्त्र से सम्पुटित कर उसका १ हजार जप करना चाहिए, यथा 'रामाय नमः' मन्त्र का दीपन संस्कार करते समय 'हंस रामाय नमः सोऽहं' – का १ हजार जप करना चाहिए ।

जपो हंसपुटस्यास्य सहस्रं दीपनं स्मृतम् ।
नभोवह्नीन्दुयुक्तार्घिसम्पुटस्य जपो मनोः ॥ १०२ ॥
सहस्रपञ्चकमितो बोधनं तत्स्मृतं बुधैः ।

बोधनसंस्कार : नभ (ह), वह्नि (र) एवं इन्दु (अनुस्वार) सहित अर्घीश (ऊ) – अर्थात् 'ह्रूं' – इससे सम्पुटित मूलमन्त्र का ५ हजार जप करना बोधन कहलाता है ।

टिप्पणी : 'रामाय नमः' – मन्त्र का बोधन संस्कार करने के लिए 'ह्रूं रामाय नमः ह्रूं' – का ५ हजार जप करना होगा ।

सहस्रं प्रजपेदस्त्रपुटितं ताडनं हि तत् ॥ १०३ ॥

ताडनसंस्कार : अस्त्र (फट्) से सम्पुटित मूलमन्त्र का १ हजार जप करना ताडन कहलाता है ।

टिप्पणी : 'रामाय नमः' मन्त्र का ताडन संस्कार करने के लिए 'फट् रामाय नमः फट्' – का १ हजार जप करना चाहिए ।

वाग्घंसतारैर्जप्तेन सहस्रं पाथसा मनुम् ।
अभिषिञ्चेत्तवागाद्यैरभिषेकोयमीरितः ॥ १०४ ॥

अभिषेकसंस्कार : वाग् (ऐं) हंस (हंसः) तथा तार (ॐ) – इस मन्त्र का १ हजार बार अभिमन्त्रित जल से इसी मन्त्र से अभिषेक करना अभिषेक संस्कार कहलाता है ।

दीपनमाह । जपइति हंसमन्त्रेणपुटितस्यमन्त्रस्यसहस्रंजपो–दीपनम् । हंसःरामायनमः सोहंइति । बोधनमाह । नभइति । नभोहः वह्नीरः इन्दुर्बिन्दुभ्यैर्युक्तोऽर्घोऊः । तेनह्रूं । एतत्पुटितस्यमनोः पञ्चसहस्रजपो–बोधनम् । ह्रूं रामायनमः ह्रूंइति । फट्रामायनमः फडितिसहस्रजपस्तु–ताडनम् ॥ १०२-१०३ ॥

अभिषेकमाह । वागिति । ऐंहंसःॐइतिमन्त्रेणसहस्राभिमन्त्रितैर्जलैस्तेनैवमन्त्रेणताडपत्रोपरिलिखितमन्त्रेऽभिषेचनम्–अभिषेकः ॥ १०४ ॥

टिप्पणी : अभिषेक संस्कार करने के लिए 'ऐं हंसः ॐ' मन्त्र से १ हजार बार अभिमन्त्रित किये हुए जल से ताड़पत्र पर लिखित मूलमन्त्र का अश्वत्थपत्र से 'ऐं हंसः ॐ'–मन्त्र से अभिषेक करना चाहिए।

हरिर्वह्नयन्वितस्तारीवषडन्तोध्रुवादिकः।
सहस्रं तत्पुटं जप्याद्विमलीकरणे मनुः ॥ १०५ ॥

विमलीकरण संस्कार : वह्नि (र) एवं तार (ॐ) सहित हरि (त्) अर्थात् 'त्रों' इसके अन्त में 'वषट्' तथा आदि में ध्रुव (ॐ) लगाने से बने 'ॐ त्रों वषट्'–इस मन्त्र से सम्पुटित मूलमन्त्र का १ हजार जप करना विमलीकरण कहलाता है।

टिप्पणी : 'रामाय नमः' मन्त्र का विमलीकरण संस्कार करने के लिए 'ॐ त्रों वषट् रामाय नमः वषट् त्रों ॐ'–का १ हजार जप करना चाहिए।

स्वधावषट्पुटं जप्यात्सहस्रं जीवने मनुम्।

जीवनसंस्कार : जीवन संस्कार में 'स्वधा वषट्' मन्त्र से सम्पुटित मूलमन्त्र का १ हजार जप करना चाहिए।

टिप्पणी : 'रामाय नमः' मन्त्र का जीवन संस्कार करने के लिए 'स्वधा वषट् रामाय नमः वषट् स्वधा' का १ हजार जप करना चाहिए।

क्षीराज्ययुतपाथोभिस्तर्पणे तर्पयेन्मनुम् ॥ १०६ ॥

तर्पण संस्कार : तर्पण संस्कार में दूध, घी एवं जल से मूलमन्त्र से उसी का तर्पण करना चाहिए।

टिप्पणी : 'रामाय नमः' मन्त्र का तर्पण संस्कार करने के लिए इस मन्त्र को गोरोचन आदि से ताड़ पत्र पर लिखकर दूध, घी एवं जल से इसी मन्त्र से इसका सौ बार तर्पण करना चाहिए।

जपेन्मायापुटं मन्त्रं सहस्रं गोपनं हि तत्।

गोपन संस्कार : माया (ह्रीं) बीज से सम्पुटित मूलमन्त्र का १ हजार जप करना गोपन कहलाता है।

टिप्पणी : 'रामाय नमः' मन्त्र का गोपन संस्कार करने के लिए 'ह्रीं रामाय नमः ह्रीं'–का १ हजार जप करना चाहिए।

विमलीकरणमाह। हरिरिति। हरिस्तः वह्नयन्वितो रयुतः तारीप्रणवयुतः–त्रों। ॐत्रोंवषट्रामायनमः वषट्त्रों ॐइतिसहस्रजपो–विमलीकरणम् ॥ १०५ ॥ जीवनमाह। स्वधेति। स्वधावषट्रामायनमः वषट्स्वधेति सहस्रजपो–जीवनम्। तर्पणमाह। क्षीरेति। दुग्धघृतोदकंस्तेनैवमन्त्रेणतस्मिन्नेवशतंतर्पयेदिति–तर्पणम् ॥ १०६ ॥

बालातार्तीयबीजेन गगनाद्येन सम्पुटम् ॥ १०७ ॥
सहस्रं प्रजपेन्मन्त्रमेतदाप्यायनं मतम् ।
संस्कारदशकं प्रोक्तं मनूनां दोषनाशकम् ॥ १०८ ॥

आप्यायन संस्कार : बाला के तार्तीय बीज (सौः) के प्रारम्भ में गगन (ह्र) लगाकर उससे सम्पुटित मूलमन्त्र का १ हजार जप करना आप्यायन कहलाता है ।

मन्त्रों के (छिन्नत्वादि) दोषों को नष्ट करने वाले ये १० संस्कार बतलाये गये ।

टिप्पणी : 'रामाय नमः' मन्त्र का आप्यायन संस्कार करने के लिए 'ह्रसौः रामाय नमः हसौः' का १ हजार जप करना चाहिए ।

सिद्धिप्रदा कलियुगे ये मन्त्रास्तान्वदाम्यतः ।
त्र्यर्णएकाक्षरोनुष्टुप्त्रिविधो नरकेसरी ॥ १०९ ॥
एकाक्षरोर्जुनोनुष्टुब्द्विविधस्तुरगाननः ।
चिन्तामणिःक्षेत्रपालो भैरवो यक्षनायकः ॥ ११० ॥
गौपालो गजवक्त्रश्चेटका यक्षिणी तथा ।
मातङ्गी सुन्दरी श्यामा तारा कर्णपिशाचिनी ॥ १११ ॥
शबर्य्येकजटा वामा काली नीलसरस्वती ।
त्रिपुरा कालरात्रिश्चकलाविष्टप्रदा इमे ॥ ११२ ॥

कलियुग में सिद्धिदायक मन्त्र : कलियुग में सिद्धिदायक जो मन्त्र हैं, अब उन्हें बतलाता हूँ : नृसिंह का त्र्यक्षर, एकाक्षर एवं अनुष्टुप् इस प्रकार तीन प्रकार के नृसिंह मन्त्र, एकाक्षर एवं अनुष्टुप् दो प्रकार का अर्जुन मन्त्र, द्विविध हयग्रीवमन्त्र, चिन्तामणि मन्त्र तथा क्षेत्रपाल, भैरव, यक्षराज, गोपाल, गणपति, चेटका यक्षिणी, मातंगी, सुन्दरी, श्यामा, तारा, कर्णपिशाचिनी, शबरी, एकजटा वामाकाली, नीलसरस्वती, त्रिपुरा एवं कालरात्रि के मन्त्र—ये सब कलियुग में अभीष्ट फलदायक माने गये हैं ।

टिप्पणी नृसिंह का एकाक्षर मन्त्र : क्ष्रौं ।
नृसिंह का त्र्यक्षर मन्त्र : क्ष्रीं क्ष्रौं क्ष्रीं ।

गोपनमाह । जपेदिति । ह्रींपुटस्यसहस्रंजपो—गोपनम् । आप्यायनमाह । बालेति । बालायास्तार्तीयंसौः गगनंहः तदाद्येन । तेनहसौः इतिबीजेनसंपुटस्यसहस्रंजपः—आप्यायनम् । एकवर्णेनसंपुटत्वम्—आदावंतेचोच्चारणमेव । एकस्यविलोमत्वाशक्तेः ॥ १०७-१०८ ॥ सिद्धमन्त्रानाह । त्र्यर्णइति । एकवर्णादिस्त्रिविधोनरसिंहः ॥ १०९ ॥ एकार्णोद्विविधोहयग्रीवः । चिंतामणिः क्ष्म्यौंइति ॥ ११०-११२ ॥

नृसिंह का अनुष्टुप् मन्त्र : उग्रं वीरं महाविष्णुं ज्वलन्तं सर्वतोमुखम् ।
नृसिंह भीषणं भद्रं मृत्युं मृत्युं नमाम्यहम् ॥

कार्तवीर्यार्जुन का एकाक्षर मन्त्र : क्रों ।

कार्तवीर्यार्जुन का अनुष्टुप् मन्त्र : कार्तवीर्यार्जुनो नाम राजा बाहुसहस्रवान् ।
यस्य स्मरण मात्रेण गतं नष्टं च लभ्यते ॥

हयग्रीव अनुष्टुप् मन्त्र : हूसूं ।

हयग्रीव का अनुष्टुप् मन्त्र : उद्गिरद् प्रणवोद्गीथ सर्ववागीश्वरेश्वर ।
सर्व वेदमयाचिन्त्य सर्वं बोधय बोधय ॥

चिन्तामणि मन्त्र : क्ष्म्यों ।

अघोरा दक्षिणामूर्तिरुमामाहेश्वरो मनुः ।
हयग्रीवोवराहश्चलक्ष्मीनारायणस्तथा ॥ ११३ ॥
प्रणवाद्याश्चतुर्वर्णा वह्नेर्मन्त्रास्तथारवेः ।
प्रणवाद्योगणपतिर्हरिद्रागणनायकः ॥ ११४ ॥
सौरोष्टाक्षरमन्त्रश्चतथारामषडक्षरः ।
मन्त्रराजोध्रुवादिश्चप्रणवो वैदिकोमनुः ॥ ११५ ॥
वर्णत्रयाय दातव्या एते शूद्रायनो बुद्धैः ।

विप्र आदि तीन वर्णों को देय मन्त्र : अघोर, दक्षिणामूर्ति, उमामहेश्वर, हयग्रीव, वराह एवं लक्ष्मीनारायण के मन्त्र, प्रणव आदि ४ वर्ण वाले अग्नि के मन्त्र, सूर्य के मन्त्र, प्रणव सहित गणपति एवं हरिद्रा गणपति मन्त्र, अष्टाक्षर सूर्य मन्त्र, षडक्षर रामन्त्र, प्रणवादि मन्त्रराज (नृसिंहमन्त्र), प्रणव एवं वैदिक मन्त्र—ये सब मन्त्र ब्राह्मण, क्षत्रिय एवं वैश्य तीन वर्ण के लोगों को देने चाहिए किन्तु शूद्रों को नहीं देने चाहिए ।

सुदर्शनं पाशुपतमाग्नेयास्त्रं नृकेसरी ॥ ११६ ॥
वर्णद्वयाय दातव्या नान्यवर्णे कदाचन ।

ब्राह्मण एवं क्षत्रिय को देय मन्त्र : सुदर्शन, पाशुपत, आग्नेयास्त्र एवं नृसिंह के मन्त्र ब्राह्मण एवं क्षत्रिय दो वर्ण के लोगों को ही देने चाहिए, अन्य वर्णों को कभी भी नहीं देने चाहिए ।

विप्रक्षत्रियविड्भ्योदेयामन्त्रानाह । अघोरेति । उमामाहेश्वरः ॐह्रींह्रींनमः शिवायेत्यादि ॥ ११३-११४ ॥ मन्त्रराजोनरसिंहः ॥ ११५ ॥ विप्रक्षत्रदेयानाह । सुदर्शनमिति ॥ ११६ ॥

छिन्नमस्ता च मातङ्गी त्रिपुरा कालिका शिवः ॥ ११७ ॥
लघुश्यामा कालरात्रिर्गोपालो जानकीपतिः ।
उग्रतारा भैरवश्चेदेया वर्णचतुष्टये ॥ ११८ ॥
मृगीदृशां विशेषेण मन्त्रा एते सुसिद्धिदाः ।

चारों वर्णों को देय मन्त्र : छिन्नमस्ता, मातंगी, त्रिपुरा, कालिका, शिव, लघुश्यामा, कालरात्रि, गोपाल जानकी पति (राम), उग्रतारा एवं भैरव के मन्त्र चारों वर्णों को देने चाहिए। स्त्रियों को ये मन्त्र विशेष रूप से सिद्धिदायक होते हैं।

ब्राह्मणाःक्षत्रियावैश्याःशूद्रानार्य्योधिकारिणः ॥ ११९ ॥
श्रद्धावन्तो देवगुरुद्विजपूजासु सर्वथा ।

पूजा के अधिकारी : श्रद्धावान् ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र एवं स्त्रियाँ देवता, गुरु एवं ब्राह्मणों की पूजा के अधिकारी माने गये हैं।

मायां कामं श्रियं वाचं प्रदद्यान्मुखजन्मने ॥ १२० ॥
मायामृतेबाहुजेभ्य ऊरुजेभ्यःश्रियंगरम् ।
वाणीबीजं तु शूद्रेभ्योऽन्येभ्यो वर्मवषण्नमः ॥ १२१ ॥

विविध वर्णों को देय बीजमन्त्र : ब्राह्मणों को माया (ह्रीं) काम (क्लीं) श्री (श्रीं) तथा वाग् (ऐं) बीज देने चाहिए। माया बीज को छोड़कर शेष (क्लीं, श्रीं एवं ऐं – ये तीनों बीज) क्षत्रियों को, श्री (श्रीं) एवं वाक् (ऐं) बीज वैश्यों को, वाग् बीज शूद्रों को तथा वर्म (हुं) वषट् एवं नमः ये अन्यों को देने चाहिए।

सर्वसाधारणमथहोमद्रव्यमिहोच्यते ।
फलैर्हुतैःसुखावाप्तिःपालाशैरिष्टसिद्धये ॥ १२२ ॥
हयमारैःस्त्रियोवश्या गुडूच्या रोगसंक्षयः ।
दूर्वया बुद्धिवृद्धिःस्याद् गुडेन जनवश्यता ॥ १२३ ॥
बिल्वपत्रैर्घृतैःपद्मैःपाटलैश्चंपकैःश्रियः ।
सिद्धार्थैर्मल्लिकाभिश्चकीर्तयेज्जातिभिर्गिरः ॥ १२४ ॥
व्रीहिभिश्चयवैःप्लक्षोदुम्बराश्वत्थजैधसा ।
तिलैस्त्रिमधुरैरिष्टाःसम्पदःस्युर्नृणांहुतैः ॥ १२५ ॥

वर्णचतुष्टयदेयान्मन्त्रानाह । छिन्नमस्तेति ॥ ११७-११९ ॥ बीजेषुविशेषमाह । मायामिति । मायाकामश्रीवाग्बीजानिमुखजन्मनेविप्राय ॥ १२० ॥ काम श्रीवाचोबाहुजेभ्यः क्षत्रियेभ्यः । श्रीवाचौऊरुजेभ्योविडभ्यः । वाक्शूद्राय । अन्येभ्यः प्रतिलोमानुलोमजेभ्योवर्मादयः ॥ १२१-१२२ ॥ हयमारैःकरवीरैः ॥ १२३ ॥ जातिभिर्जातिपुष्पैर्होमेनगिरोवाचः सिद्धिः ॥ १२४ ॥ प्लक्षादिजातेनएधसासमिद्भिः ॥ १२५ ॥

किंशुकैःकासमर्दैश्चकृतमालैश्चपाटलैः ।
विप्रादयःक्रमाद्वश्याःसौभाग्यं गन्धवस्तुभिः ॥ १२६ ॥
कोद्रवैर्व्याधयोरीणामुन्मत्तत्वं बिभीतकैः ।
कलापैःसाध्वसोत्पत्तिर्मार्षैस्तेषां तु मूकता ॥ १२७ ॥
समिद्भिःशाल्मलैर्नाशो रिपूणामचिराद्भवेत् ।
किं भूरिणा ददातीष्टं देवता समुपासिता ॥ १२८ ॥

होमद्रव्य : अब सर्वसाधारण के लिए होमद्रव्य को बतलाता हूँ :

फलों के होम से सुखप्राप्ति, पलाश के होम से इष्टसिद्धि तथा कनेर के होम से स्त्रियाँ वश में हो जाती हैं। गुडूची (गिलोय) के होम से रोगों का नाश, दूर्वा के होम से बुद्धि की वृद्धि, तथा गुड़ के होम से लोग वश में हो जाते हैं।

बेलपत्र, घी, कमल, गुलाब एवं चम्पा के फूलों का हवन करने से लक्ष्मी मिलती है। सिद्धार्थ (सफेद सरसों) तथा चमेली के होम से कीर्ति बढ़ती है। जाति के फूलों के होम से वाक्सिद्धि, व्रीहि (धान), जौ, प्लक्ष, उदुम्बर एवं पीपल की समिधा तथा त्रिमधुर सहित तिलों के होम से अभीष्ट सम्पत्ति मिलती है।

किंशुक (ढाक), कासमर्द (लिसोड़ा) कृतमाल (राजवृक्ष) तथा गुलाब के होम से क्रमशः ब्राह्मण आदि वर्ण वश में हो जाते हैं। कपूर आदि सुगन्धित वस्तुओं के होम से सौभाग्य बढ़ता है।

बहेड़ाओं के होम से शत्रुओं को रोग तथा पागलपन, मोरपंखों के होम से शत्रुओं को भय, उड़द के होम से शत्रुओं को मूकता, तथा शाल्मली की समिधाओं के होम से तुरन्त शत्रुओं का नाश होता है। विशेष क्या कहें विधिवत उपासना करने से देव मनोवाञ्छित फल देता है।

पुरश्चरण एकस्मिन्कृते जन्मान्तराघतः ।
मन्त्रो यदि न सिद्धःस्यात्तदातत्पुनराचरेत् ॥ १२९ ॥

पुनः पुरश्चरण की आवश्यकता : यदि एक बार पुरश्चरण करने पर भी पूर्व जन्म में किये हुए पापों के प्रभाव से मन्त्र सिद्ध न हो तो दुबारा पुरश्चरण करना चाहिए।

किंशुकादिभिर्हुतैः क्रमाद्विप्रादयोवश्याः । कृतमालोराजवृक्षः । गंधवस्तुभिः कर्पूरादिभिः ॥ १२६ ॥ कलापैर्मयूरपिच्छैस्तेषामरीणां भयोत्पत्तिः ॥ १२७-१२८ ॥ जन्मांतरोपार्जितपापबाहुल्यादेकपुरश्चरणेकृतेयदीष्टसिद्धिर्नभवेत्तर्हिपुनः पुनश्चरणं कुर्यात् ॥ १२९ ॥

यद्वा समुद्रगामिन्यां नद्यामिन्दुरविग्रहे ।
स्पर्शान्मोक्षान्तमाजप्य जुहुयात्तद्दशांशतः ॥ १३० ॥
विप्रान्सम्भोज्य नानान्नैर्मन्त्राणां सिद्धिमाप्नुयात् ।
शश्वज्जपपरस्यापि सिध्यन्ति मनवोचिरात् ॥ १३१ ॥

संक्षिप्त पुरश्चरण विधि : अथवा चन्द्रग्रहण या सूर्यग्रहण में समुद्र-गामिनी (गंगा आदि) नदी में खड़ा होकर स्पर्श काल से मोक्षकाल तक जप करके उसके दशांश का होम तथा उसके दशांशतुल्य ब्राह्मणों को विविध प्रकार का भोजन कराने से मन्त्रसिद्धि मिलती है ।

शाश्वत् जप करने वाले व्यक्ति का मन्त्र भी शीघ्र सिद्ध हो जाता है ।

इति श्री शुकदेव चतुर्वेदि विरचितायां सटिपण्यां मन्त्रमहोदधेः
मोहिनी व्याख्यायां चतुर्विंशस्तरङ्गः

संक्षेपपुरश्चरणप्रकारमाह । यद्वेति । समुद्रगामिन्यां गंगादिकायाम् । विप्रान्संभोज्य-होमसमानसंख्यानेवेत्यर्थः । तद्दशांशतइत्युभयत्रापिसंबंधात् । तद्दशांशतोजपदशांशेनच-जुहुयात् । विप्रान्संभोज्यचसिद्धिमवाप्नुयादितिसम्बन्धः ॥ १३०-१३१ ॥ इति श्रीमन्त्रमहोदधिव्याख्यायांनौकायांमहीधरनिर्मितायां मन्त्रशोधननामचतुर्विंशस्तरंगः ॥ २४ ॥

पंचविंशति तरङ्ग

कर्माणि षडथो वक्ष्ये सिद्धिदानि प्रयोगतः ।
शान्तिर्वश्यं स्तम्भनं च द्वेषमुच्चाटमारणे ॥ १ ॥
उक्तानीमानि कर्माणि शान्तीरोगादिनाशनम् ।
वश्यं वचनकारित्वं स्तम्भो वृत्तिनिरोधनम् ॥ २ ॥
द्वेषोऽप्रीतिःप्रीतिमतोरुच्चाटःस्थानतश्च्युतिः ।
मारणं प्राणहरणमितिषट्कर्मलक्षणम् ॥ ३ ॥

शान्ति आदि षड्कर्म : अब प्रयोग द्वारा सिद्धिदायक षड्कर्मों को बतलाता हूँ : शान्ति, वश्य, स्तंम्भन, विद्वेषण, उच्चाटन एवं मारण – ये षड्कर्म कहलाते हैं ।

रोग आदि के नाश को शान्ति, कथनानुसार करने को वश्य, वृत्तियों के निरोध को स्तम्भन, मित्रों में शत्रुता को विद्वेषण, स्थान से हटाने को उच्चाटन तथा प्राणों के हरण को मारण कहते हैं । षड्कर्मों की ये परिभाषाएं हैं ।

देवतादेवतावर्णा ऋतुदिग्दिवसासनम् ।
विन्यासा मण्डलं मुद्राक्षरं भूतोदयःसमित् ॥ ४ ॥
मालाग्निर्लेखनं द्रव्यं कुण्डस्रुक्स्रुवलेखनीः ।
षट्कर्माणिप्रयुञ्जीत ज्ञात्वैतानि यथायथम् ॥ ५ ॥

षड्कर्मों में ज्ञेय १९ पदार्थ : १. देवता, २. देवताओं के वर्ण, ३. ऋतु, ४. दिशा, ५. दिन, ६. आसन, ७. विन्यास, ८. मण्डल, ९. मुद्रा, १०, अक्षर, ११. भूतोदय, १२. समिधा, १३. माला, १४. अग्नि, १५. लेखन द्रव्य, १६. कुण्ड, १७. स्रुवा, १८. स्रुची एवं १९. लेखनी – इन पदार्थों की यथार्थ जानकारी कर षड्कर्मों में इनका प्रयोग करना चाहिए ।

षट्कर्माणिवक्तुमुपक्रमते । कर्माणीति । तान्याह । शांतिरिति ॥ १ ॥ लक्षणमाह । शांतीरोगादिनाशनमिति । देवताद्येकोनविंशतिएदार्थान् प्रतिकर्मभिन्नान् यथास्वंज्ञात्वा-षट्कर्माणिकुर्यादित्याह । देवत.देवतावर्णाइत्यादिना ॥ २-५ ॥

रतिर्वाणीरमाज्येष्ठादुर्गाकाली च देवता ।
सितारुणहरिद्राभमिश्रश्यामलधूसराः ॥ ६ ॥
प्रपूजयेत कर्मादौ स्ववर्णैःकुसुमैःक्रमात् ।

देवता एवं उनके वर्ण : रति, वाणी, रमा, ज्येष्ठा, दुर्गा एवं काली (यथाक्रमेण शान्ति आदि षड्कर्मों के) देवता होते हैं । तथा श्वेत, अरुण, हल्दी जैसा (पीला), मिश्रित, श्यामल (काला) एवं धूमर – ये उक्त देवताओं के वर्ण होते हैं । प्रत्येक कर्म के प्रारम्भ में उसके देवता का अपने रंग के पुष्पों से पूजन करना चाहिए ।

ऋतुषट्कं वसन्ताद्यमहोरात्रं भवेत्क्रमात् ॥ ७ ॥
एकैकस्यऋतोर्मानं घटिकादशकं मतम् ।
हेमन्तं च वसन्ताख्यं शिशिरं ग्रीष्मतो यदौ ॥ ८ ॥
शरदं कर्मणां षट्के योजयेत्क्रमतःसुधीः ।

ऋतुएँ : एक अहोरात्र में वसन्त आदि ६ ऋतुएँ होती है । एक-एक ऋतु का मान १० घटी माना गया है । हेमन्त, बसन्त, शिशिर, ग्रीष्म, वर्षा एवं शरद् – इन छः ऋतुओं का साधक को शान्ति आदि षड्कर्मों में उपयोग करना चाहिए ।

टिप्पणी : एक अहोरात्र में ६० घटी तथा ६ ऋतुएँ मानी गयी हैं । अतः प्रत्येक अहोरात्र में १–१ ऋतु का मान १० घटी होता है । प्रतिदिन सूर्योदय से १० घटी तक वसन्त, उसके बाद आगे की १० घटी तक शिशिर, फिर आगे की १० घटी तक ग्रीष्म, उसके बाद अग्रिम १० घटी तक वर्षा, फिर अग्रिम १० घटी तक शरद और अन्त की १० घटी तक हेमन्त रहता है । इस प्रकार २४ घण्टे या ६० घटी में उक्त क्रम से छः ऋतुएँ आती हैं । साधक को शान्ति आदि जो कर्म करना अभीष्ट हो, वह कर्म अपनी ऋतु की १० घटी या ४ घण्टे के समय में ही करना चाहिए ।

शिवसोमेन्द्रनिर्ऋतिपवनाग्निदिशःक्रमात् ॥ ९ ॥
तत्तत्कर्माणि कुर्वीत जपन्स्तत्तद्दिशामुखः ।

दिशा : ईशान, उत्तर, पूर्व, नैऋत्य, वायव्य, एवं आग्नेय – ये क्रमशः शान्ति आदि कर्मों की दिशाएँ मानी गयी हैं । शान्ति आदि कर्मों में उनकी दिशा की ओर मुख करके जप करना चाहिए ।

उद्दिशक्रमेणादौदेवता आह । रतिरिति । शांत्यादिकर्मारंभेक्रमाद्रत्यादिपूजा । देवतावर्णानाह । सितेति । रतिःसिता वाणीअरुणेत्यादि० ॥ ६ ॥ स्ववर्णैः सितादिवर्णैः । ऋतूनाह । ऋतुषट्कमिति । शांत्यादौवसंतादीन्युञ्जीत । अत्यहंसूर्योदयान्नाडीदशकं वसंतः तदग्रिमंनाडीदशकं शिशिरइत्यादि० ॥ ७-८ ॥ दिशआह । शिवेति । शिवादिगैशानी ॥ ९ ॥

शुक्लपक्षे द्वितीया च सप्तमी पञ्चमी तथा ॥ १० ॥
तृतीयाबुधजीवाभ्यां युता शान्तिविधौ मता ।
चतुर्थीनवमीषष्ठीत्रयोदशीतिथिस्तथा ॥ ११ ॥
जीवसोमयुताश्चस्ता वशीकरणकर्मणि ।
एकादशी च दशमी नवमी चाष्टमी पुनः ॥ १२ ॥
शनैश्चरसितोपेता प्रोक्ता विद्वेषकर्मणि ।
कृष्णे चतुर्दश्यष्टम्यौ भानुसूनुयुते यदि ॥ १३ ॥
उच्चाटनाख्यं कर्मात्रकर्तव्यं फलसिद्धये ।
भूताष्टम्यौ कृष्णगते अमावास्या तदन्तगा ॥ १४ ॥
भानुमन्दकुजोपेताःस्तम्भमारणयोःशुभाः ।

षड्कर्मों के दिन : शुक्ल पक्ष को द्वितीया, तृतीया, पञ्चमी एवं सप्तमी को बुध एवं बृहस्पति वार होने पर शान्ति कर्म करने चाहिए ।

वशीकरण कर्म में (शुक्ल पक्ष की) चतुर्थी, षष्ठी, नवमी एवं त्रयोदशी को सोमवार एवं बृहस्पति वार होना प्रशस्त माना गया है ।

विद्वेषण में अष्टमी, नवमी, दशमी एवं एकादशी को शुक्र या शनिवार हो तो शुभ कहा गया है ।

यदि कृष्ण पक्ष की अष्टमी एवं चतुर्दशी को शनिवार हो तो फलसिद्धि के लिए उच्चाटन करना चाहिए ।

कृष्णपक्ष की अष्टमी, चतुर्दशी एवं अमावस्या तथा शुक्लपक्ष की प्रतिपदा को रवि, मंगल या शनिवार हो तो यह स्तम्भन एवं मारण में शुभ होता है ।

पद्मं स्वस्तिकविकटे कुक्कुटं वज्रभद्रके ॥ १५ ॥
शान्त्यादिषु प्रकुर्वीत क्रमादासनमुत्तमम् ।
गोखड्गजफेरूणां मेषीमहिषयोस्तथा ॥ १६ ॥
कृत्तौ निवेश्य कुर्वीत जपं शान्त्यादिकर्मणि ।

दिवसानाह । शुक्लपक्षेइति ॥ १०-१३॥ तदंतगाशुक्लप्रतिपत् ॥ १४ ॥ आसनान्याह । पद्ममिति । पद्मस्वस्तिकेउक्ते। विकटलक्षणंयथा-'जानुजंघांतरालेतुभुजयुग्मंप्रकल्पयेत् । विकटासनमेतत्स्यात्' इति । कुक्कुटासनंयथा-'उपविश्योत्कटासने । कृत्वोत्कटासनपूर्वंसमपादद्वयंततः । अंतर्जानुकरद्वंद्वंकुक्कुटासनमीरितम्'इति । ऊर्वोः पादौक्रमान्न्यस्येज्जान्वोः प्रत्यङ्मुखांगुली । करौनिदध्यादाख्यातं वज्रासनमनुत्तमम्' इति । 'सीवन्याः पार्श्वयोर्म्यस्येद्गुल्फयुग्मंसुनिश्चलम् । वृषणाधः पादपार्ष्णीपाणिभ्यांपरिबंधयेत् । भद्रासनंसमुद्दिष्टं योगिभिःपूजितंपरम्' इतिचान्येबोध्ये ॥ १५ ॥ शारीरमासनमुक्त्वोपवेशार्थमासनमाह । गोखड्गेति । फेरुःसृगालः । गवादीनांकृत्तौचर्मण्युपविश्यशांत्यादिविधेयम ॥ १६ ॥

आसन : शान्ति आदि ६ कर्मों में क्रमशः पद्मासन, स्वस्तिकासन, विकटासन, कुक्कुटासन, वज्रासन, एवं भद्रासन का उपयोग करना चाहिए।

गाय, गैंड़ा, हाथी, सियार, भेड़ एवं भैंसा की खाल पर बैठकर शान्ति आदि षट्कर्मों में जप करना चाहिए।

टिप्पणी : पद्मासन का लक्षण : ऊर्वोरुपरि विन्यस्य सम्यक्पादतले उभे। अंगुष्ठौ च निबध्नीयाद्धस्ताभ्यां व्युत्क्रमात्ततः पद्मासनमितिप्रोक्तं योगिनां हृदयं गमम् ॥

स्वस्तिकासन का लक्षण : जानूर्वोरन्तरे कृत्वा सम्यक् पादतले उभे।
ऋजुकायो विशेद्योगी स्वस्तिकं तत्प्रचक्षते ॥

विकटासन का लक्षण : जानुजंघान्तराले तु भुजयुग्मं प्रकल्पयेत्।
विकटासन मेतत्स्यादभिरादिकर्मणि ॥

कुक्कुटासन का लक्षण : कृत्वोत्कटासनं पूर्वं समपादद्वयं ततः।
अन्तर्जानुकर द्वन्द्वं कुक्कुटासनमीरितम् ॥

वज्रासन का लक्षण : ऊर्वोः पादौ क्रमाच्चस्येज्जान्वोः प्रत्यङ्मुखांगुली।
करौ निदध्यादाख्यातं वज्रासनमनुत्तमम् ॥

भद्रासन का लक्षण : सीवन्याः पार्श्वयोर्न्यस्येद् गुल्फयुग्मं सुनिश्चतम्
वृषणाधः पादपार्ष्णीपाणिभ्यां परिबन्धयेत् ॥
भद्रासनं समुद्दिष्टं योगिभिः पूजितं परम् ॥

आसनान्येव संकीर्त्य विन्यासःप्रोच्यतेधुना ॥ १७ ॥
ग्रन्थनं च विदर्भाख्यःसम्पुटोरोधनं तथा।
योगःपल्लवएते षड्विन्यासाःकर्मसु स्मृताः ॥ १८ ॥
प्रत्येकमेषां षण्णां तु लक्षणं प्रणिगद्यते।
एको मन्त्रस्य वर्णःस्यात्ततोनामाक्षरं पुनः ॥ १९ ॥
मन्त्रार्णोनामवर्णश्चेत्येवं ग्रन्थनमीरितम्।
आदौ मन्त्राक्षरद्वन्द्वमेकं नामाक्षरं ततः ॥ २० ॥
एवंपुनःपुनःप्रोक्तो विदर्भोमन्त्रवित्तमैः।
मन्त्रमादौ समुच्चार्य्य ततो नामाखिलं पठेत् ॥ २१ ॥
अन्ते व्युत्क्रमतोमन्त्रमेषसम्पुट ईरितः।

॥ १७ ॥ विन्यासानाह। ग्रंथनमिति ॥ १८ ॥ ग्रन्थनलक्षणमाह। एकइति ॥ १९ ॥ विदर्भलक्षणमाह। आदाविति। ग्रन्थनविदर्भयोर्मंत्रनामवर्णलेखनेऽन्यतरसमासौ-पुनर्लेखनम् ॥ २० ॥ संपुटलक्षणमाह। मन्त्रमिति ॥ २१ ॥

आदिमध्यावसानेषु नाम्नो मन्त्रस्तुरोधनम् ॥ २२ ॥
नामान्ते तु मनुर्योगो मन्त्रान्ते नामपल्लवः ।

विन्यास : इस प्रकार आसनों को बतलाकर अब विन्यासों को बतलाता हूँ : (शान्ति आदि) ६ कर्मों में क्रमशः ग्रंथन, विदर्भ, संपुट, रोधन, योग एवं पल्लव–ये ६ विन्यास बतलाये गये हैं । इन छः में से प्रत्येक का लक्षण बतलाता हूँ :

मन्त्र के १ अक्षर के बाद नाम का एक अक्षर फिर मन्त्र का १ अक्षर और उसके बाद पुनः नाम का १ अक्षर – इस प्रकार मन्त्र एवं नाम के अक्षरों के विन्यास (लगाने) को ग्रंथन कहते हैं ।

प्रारम्भ में मन्त्र के २ अक्षर फिर नाम काम का १ अक्षर – इस प्रकार बार बार मन्त्र एवं नाम के अक्षरों के विन्यास को मन्त्रशास्त्र के ज्ञाता विदर्भ कहते हैं ।

पहिले मन्त्र बोलकर फिर पूरा नाम बोलना चाहिए तथा इसके बाद विलोम क्रम से मन्त्र बोलना – यह सम्पुट कहलाता है ।

नाम के आदि, मध्य एवं अन्त में मन्त्र के विन्यास को रोधन कहते हैं ।

नाम के बाद मन्त्र लगाने को योग तथा मन्त्र के बाद नाम लगाने को पल्लव कहते हैं ।

अर्द्धचन्द्रनिभं पार्श्वद्वये पद्मद्वयाङ्कितम् ॥ २३ ॥
जलस्य मण्डलं प्रोक्तं प्रशस्तं शान्तिकर्मणि ।
त्रिकोणं स्वस्तिकोपेतं वश्ये वह्नेस्तु मण्डलम् ॥ २४ ॥
चतुरस्रं वज्रयुक्तं स्तम्भे भूमेस्तु मण्डलम् ।
वृत्तं दिवस्तद्विद्वेषे बिन्दुषट्काङ्कितं तु तत् ॥ २५ ॥
वायुमण्डलमुच्चाटे मारणे वह्निमण्डलम् ।

रोधनमाह । आदीति ॥ २२ ॥ योगमाह । नामान्तइति । पल्लवमाह । मंत्रांतइति । मंडलमाह । अर्द्धचंद्रेति ॥ २३-२४ ॥ तद्वृत्तंबिन्दुषट्कांकितं वायुमण्डलम् । मुद्राआह । सरोरुहमिति । सरोरुहंपद्ममुद्रा । सायथा–'कोद्वासंमुखौकृत्वासंहतावन्नौपुनः । अंगुलीः प्रसृतानध्येगुष्ठौपद्मस्यमुद्रिका'इति । पाशमुद्रायथा–'तर्जनीमध्यमेवामेऊर्ध्वमुख्यौविधायच । दक्षिणेद्वेअधोमुख्यौसंमुख्यौचपरस्परम् । पाशमुद्राभवेदेषानियः संपीडनेतथोः'इति । गदामुद्रायथा–'अन्योन्याभिमुखौकृत्वाहस्तौतुग्रथितावुभौ । अंगुष्ठौमध्यमेतद्वत्संयुक्तेसुप्रसारिते । गदामुद्रेयमुदितादर्शितविघ्नहारिणी'इति । मुसलमुद्रोक्ता । कुलिशंवज्रमुद्रा । सायथा–'कनिष्टांगुष्ठयुङ्मुद्रात्रिकोणात्वशनेर्मता'इति । अशनेर्वज्रस्यकनिष्टांगुष्ठयोगादन्यासां प्रसारणात्त्रिकोणेत्यर्थः । असिःखड्गमुद्रा । सायथा–'ऊर्ध्वस्यवामहस्तस्यतर्जन्याद्यंगुलित्रयम् । प्रसार्ययोजयेदन्येमिथोंगुष्ठके । खड्गमुद्रेयमुदितासर्वशत्रुनिकृंतनी' इति ॥ २५ ॥

मण्डल : अर्द्धचन्द्र जैसी आकृतिवाला तथा दोनों ओर दो कमलों के चिह्नवाला जल का मण्डल कहा गया है – यह शान्ति कर्म में प्रशस्त माना गया है।

स्वस्तिक गर्भित त्रिकोण को वह्नि का मण्डल कहते हैं। यह वश्य में प्रशस्त होता है।

वज्रसहित चतुरस्र भूमि का मण्डल कहलाता है – यह स्तम्भन में प्रशस्त होता है।

आकाश का मण्डल वृत्ताकार होता है – यह विद्वेषण में प्रशस्त होता है।

६ बिन्दुओं से अङ्कित वृत्त वायुमण्डल कहलाता है – यह उच्चाटन में प्रशस्त होता है। मारण में पूर्वोक्त वह्निमण्डल का उपयोग होता है।

सरोरुहं पाशगदे मुसलं कुलिशं त्वसिः ॥ २६ ॥
षण्मुद्राःकर्मषट्के स्युरथहोमे निगद्यते।

मुद्रा : शान्ति आदि षड्कर्मों में पद्म, पाश, गदा, मुसल, वज्र एवं खड्ग मुद्राओं का प्रयोग होता है। अब होम की मुद्राओं को बतलाते हैं।

टिप्पणी : *पद्म मुद्रा का लक्षण* : करौ द्वौ संमुखौ कृत्त्वा संहतावुन्नतौ पुनः।
अंगुली प्रसृतामध्येऽङ्गुष्ठौ पद्मस्य मुद्रिका ॥

पाश मुद्रा का लक्षण : तर्जनीमध्यमे वामे ऊर्ध्वमुख्यौ विधाय च।
दक्षिणे द्वे अधोमुख्यौ सम्मुख्यौ च परस्परम् ॥
पाशमुद्रा मवेदेषामिथः सम्पीडने तयोः ॥

गदामुद्रा का लक्षण : अन्योन्याभिमुखौ कृत्त्वा हस्तौ तु ग्रथितावुभौ।
अंगुष्ठौ मध्यमे तद्वत्संयुक्ते सुप्रसारिते ॥
गदा मुद्रेयमुदिता, दर्शिता विघ्नहारिणी ॥

वज्रमुद्रा का लक्षण : कनिष्ठांगुष्ठयुङ्मुद्रा त्रिकोणात्व शनेर्मता ॥

खड्गमुद्रा का लक्षण : ऊर्ध्वस्य वाम हस्तस्य तर्जन्या अंगुलित्रयम्।
प्रसार्ययोजयेदन्ये मिथोऽङ्गुष्ठ कनिष्ठके ॥
खड्ग मुद्रेय मुदिता सर्वशत्रुनिकृंतनी ॥

मृगी हंसी सूकरीतिहोमे मुद्रात्रयं मतम् ॥ २७ ॥
मध्यमानामिकांगुष्ठयोगे मुद्रा मृगी मता।
हंसीकनिष्ठाहीनानां सर्वासां योजने मता ॥ २८ ॥
सूकरीकरसंकोचे मुद्रा लक्षणमीरितम्।
शान्तौ वश्ये मृगी हंसी स्तम्भनादिषु सूकरी ॥ २९ ॥

॥ २६ ॥ होममुद्राआह। मृगीति ॥ २७ ॥ तासांलक्षणमाह। मध्यमेति ॥ २८-२९ ॥

होममुद्रा : मृगी, हंसी एवं सूकरी – ये तीनों होम की मुद्राएँ कहलाती हैं।

मध्यमा, अनामिका एवं अँगूठे के योग से मृगी मुद्रा बनती है। कनिष्ठा को छोड़कर शेष सब उँगुलियों को मिलाने से हंसी मुद्रा बनती है। हाथ के संकोच से सूकरी मुद्रा बनती है। इस प्रकार इन तीनों मुद्राओं के लक्षण बतलाये गये हैं।

शान्ति में मृगी, वश्य में हंसी तथा स्तम्भनादि अन्य कर्मों में सूकरी मुद्रा का उपयोग किया जाता है।

चन्द्रतोयधराकाशपवनानलवर्णकाः।
षट्सु कर्मसु यन्त्रस्य बीजान्युक्तानि मन्त्रिभिः ॥ ३० ॥
स्वराःसठौ चन्द्रवर्णाभूतवर्णा उदीरिताः।
चन्द्रार्णहीनास्ते ग्राह्या वशीकृत्यादिकर्मणि ॥ ३१ ॥
केचित्सवलहान्यंरमाहुश्चन्द्रादिवर्णकान्।

वर्ण : मन्त्रशास्त्र के विद्वानों ने चन्द्र, जल, धरा, आकाश, पवन एवं अग्नि के वर्णों को क्रमशः शान्ति आदि षड्कर्मों में यन्त्रों का बीज बतलाया है।

१६ स्वर स एवं ठ (ये १८) चन्द्र वर्ण होते हैं। (कुलाकुल चक्र में बतलाये गये) पाँच भूतों के वर्णों में चन्द्र वर्णों को निकालकर शेष जल आदि तत्त्वों के वर्ण वश्य आदि कर्मों में ग्राह्य होते हैं।

कुछ आचार्य स, व, ल, ह, य एवं र को चन्द्र, जल, भूमि, आकाश, वायु एवं अग्नि का वर्ण कहते हैं।

शान्त्यादिकर्मसु ज्ञेया जातयःषडमूःक्रमात् ॥ ३२ ॥
नमःस्वाहावषड्वौषट्हुंफट्षण्मन्त्रवित्तमैः।

जातियाँ : शान्ति आदि ६ कर्मों में मन्त्रशास्त्र के वेत्ताओं ने क्रमशः नमः, स्वाहा, वषट्, वौषट्, हुम् एवं फट् – इन ६ को जाति बतलाया है।

नासापुटद्वयाधस्ताद्यदाप्राणगतिर्भवेत् ॥ ३३ ॥

वर्णानाह। चन्द्रेति। शांतौचन्द्रवर्णायंत्रेबीजत्वेनलेख्याः। वशीकरणादौजलादिवर्णः ॥ ३० ॥ चन्द्रवर्णानाह। स्वराइति। षोडशस्वराः सठावेतेऽष्टादशचन्द्रवर्णाः सन्ति। तथापिवश्यादौपंचभूतवर्णास्तुप्रातरंगेस्वकुलभेदउक्ताः। तत्रयद्यपिचंद्रवर्णाअपिसंति। तथापिवश्यादौतोयादिवर्णलेखनेचन्द्रवर्णरहितानामेवजलादिवर्णानांलेखनम् ॥ ३१ ॥ केषां चिन्मतेसवलहयराः क्रमाच्चंद्रांबुभूनभोनिलानलवर्णाः ॥ ३२ ॥ जातिरूपान्वर्णानाह। नमइति। भूतोदयमाह। नासेति। नासाविवरयोरधस्ताप्राणगतोजलोदयः। नासामध्यदण्डाश्रयेणप्राणगमनेधरोदयः। सस्तम्भनेज्ञेयः ॥ ३३ ॥

तोयोदयस्तथा ज्ञेयःशान्तिकर्मणि सिद्धिदः ।
नासादण्डाश्रितगतौ प्राणेस्तम्भे धरोदयः ॥ ३४ ॥
पुटमध्यगतौ तस्मिन्द्वेषे व्योमोदयःशुभः ।
पुटोपरिष्टाद्गमने प्राणे स्यात्पावकोदयः ॥ ३५ ॥
तदा कर्मद्वये सिद्धिर्मारणे च वशीकृतौ ।
प्राणेतिर्य्यग्गतौ ज्ञेय उच्चाटे मारुतोदयः ॥ ३६ ॥

पंच भूतों का उदय : जब दोनों नासापुटों के नीचे श्वास चलता हो, तब जल तत्त्व का उदय जानना चाहिए – यह शान्ति कर्म में सिद्धिदायक होता है । (विस्तृत जानकारी के लिए देखिए नरपतिजयचर्या, हंसचार प्रकरण) ।

नाक के मध्य से दण्ड की तरह सीधी श्वास की गति होने पर पृथ्वी तत्त्व का उदय होता है – यह स्तम्भन में सिद्धिदायक होता है ।

नाक के छेदों के बीच में ही श्वास की गति होने पर आकाश तत्त्व का उदय होता है – यह विद्वेषण में शुभ फलदायक होता है ।

नासापुटों से ऊपर श्वास की गति होने पर अग्नि तत्त्व का उदय होता है । उस समय मारण एवं वशीकरण इन दोनों कर्मों में सफलता मिलती है ।

श्वास की तिर्यग् गति होने पर वायुतत्त्व का उदय जानना चाहिए । यह उच्चाटन में शुभ होता है ।

दूर्वायाःसमिधःशान्तौ गोघृतेन समन्विताः ।
दाडिमप्रसुवो होमे वश्येजाघृतसंयुताः ॥ ३७ ॥
मेषीघृताक्ताःसमिधःस्तम्भे राजतरूद्भवाः ।
धत्तूरसमिधोद्वेषे अतसीतैलसंयुताः ॥ ३८ ॥
चूतजाःकटुतैलाक्ता उच्चाटनविधौ मताः ।
कटुतैलयुताःशस्ता मारणेखदिरोद्भवाः ॥ ३९ ॥

समिधा : शान्ति में गाय का घी मिलाकर दूर्वा की समिधा से, वश्य में बकरी का घी मिलाकर अनार की समिधा से, स्तम्भन में मेड़ का घी मिलाकर अमलतास की समिधा से, विद्वेषण में अतसी का तेल मिलाकर धतूरे की समिधा से, उच्चाटन में

॥ ३४ ॥ नासाविवरमध्येप्राणगतौव्योमोदयः । उपरिप्राणगतोवह्न्युदयः ॥ ३५ ॥ तिर्यक्प्राणगतौवायूदयः ॥ ३६ ॥

समिधआह । दूर्वायाइति । दाडिमेति । वश्यार्थं होमेअजाघृताक्तादाडिमसमिधः ॥ ३७ ॥ स्तंभनेमेषीघृताक्ताराजवृक्षसमिधः ॥ ३८ ॥ उच्चाटेसर्षपतैलाक्ताआम्रसमिधः ॥ ३९ ॥

सरसों का तेल मिलाकर आम की समिधा से तथा मारण में कटुतैल मिलाकर खैर की समिधा से होम करना प्रशस्त होता है ।

शङ्खजा पद्मबीजोत्था निम्बारिष्टफलोद्भवा ।
प्रेतदन्तभवा वाहरदोत्था खरदन्तजा ॥ ४० ॥
जपमालाःक्रमाज्ज्ञेयाःशान्तिमुख्येषु कर्मसु ।

माला : शान्ति आदि षड्कर्मों में क्रमशः शंख की, कमलगट्टा की, नीबू की, नीम की, घोड़े के दाँत की तथा गदहे के दाँत की जपमाला बनानी चाहिए ।

मध्यमायां स्थितां मालां ज्येष्ठेनावर्तयेत्सुधीः ॥ ४१ ॥
शान्तौ वश्ये तथापुष्टौ भोगमोक्षार्थके जपे ।
अनामांगुष्ठयोगेन स्तम्भनादौ जपेत्सुधीः ॥ ४२ ॥
तर्ज्जन्यंगुष्ठयोगेन द्वेषोच्चाटनयोःपुनः ।
कनिष्ठांगुष्ठसंयोगान्मारणे प्रजपेत्सुधीः ॥ ४३ ॥

माला पर गणना की रीति : शान्ति, वश्य, पुष्टि, भोग एवं मोक्ष के लिए जप करते समय मध्यमा में स्थित माला को अंगूठे से घुमाना चाहिए । स्तम्भनादि में साधक को अनामिका एवं अंगूठे से जप करना चाहिए । विद्वेषण एवं उच्चाटन में तर्जनी एवं अंगूठे से जप करना चाहिए तथा मारण में साधक को कनिष्ठका एवं अंगूठे से जप करना चाहिए ।

अष्टोत्तरशतं संख्यातदर्द्धं च तदर्द्धकम् ।
मणीनां शुभकार्य्ये स्यात्तिथिसंख्याभिचारके ॥ ४४ ॥

माला की मणिसंख्या : शुभ कार्यों में माला की मणियों की संख्या १०८, ५४ या २७ होती है । तथा अभिचार में १५ मणियों की माला होती है ।

शान्तिर्वश्यं लौकिकाग्नौ स्तम्भनं वटजेनले ।
द्वेषःकलितरूत्पन्ने शेषे पितृवनस्थिते ॥ ४५ ॥

अग्नि : शान्ति एवं वश्य में लौकिक अग्नि में, स्तम्भन में बरगद के काष्ठ के मन्थन से उत्पन्न अग्नि में, विद्वेषण में बहेड़े की लकड़ी से उत्पन्न अग्नि में तथा

मालामाह । शंखजेति । स्तंभनेनिंबफलजा । अरिष्टः फेनिलस्तत्फलजावामाला-विधेया । उच्चाटने वाहरदोत्थाअश्वदंतजा ॥ ४० ॥ मालायांगणनाप्रकारमाह । मध्यमायामिति । ज्येष्ठेनावर्तयेत् भ्रामयेत् ॥ ४१-४३ ॥ मालामणिसंख्यामाह । अष्टोत्तर-शतमिति । तदर्धंचतुष्पंचाशत् । तदर्धकंसप्तविंशतिः । एषात्रिविधामालाशुभेकार्या । अभिचारेस्तंभनादौपंचदशमणियुक्तामाला ॥ ४४ ॥ अग्निमाह । शांतिरिति । वटजेवट-काष्ठान्मथनोत्पादिते । कलितरुद्भवेविभीतकजाते । शेषेउच्चाटनमारणकर्मणिश्मशान-वह्नौहोमः ॥ ४५ ॥

उच्चाटन एवं मारण में श्मशान की अग्नि में होम होता है।

शुभे कर्मणि बिल्वार्कपलाशक्षीरवृक्षजैः।
अशुभे विषवृक्षार्क्षैर्निम्बधत्तूरशेलुजैः ॥ ४६ ॥
काष्ठैःप्रदीपयेदग्निं होमकर्मणि मन्त्रवित्।

अग्नि प्रज्वलित करने की लकड़ियाँ : शुभ कर्मों में बेल, आक, ढाक एवं दूधवाले वृक्षों की लकड़ियों से तथा अशुभ कर्म में कुचिला, बहेड़ा, नींबू धतूरा एवं लिसोड़े की लकड़ियों से मान्त्रिक को अग्नि प्रज्वलित करनी चाहिए।

वह्नेर्जिह्वां सुप्रभाख्यां शान्तिकर्मणि पूजयेत् ॥ ४७ ॥
वश्यकार्य्येहिरक्ताख्यां स्तम्भने कनकाभिधाम्।
विद्वेषे गगनां जिह्वामुच्चाटेप्यतिरक्तिकाम् ॥ ४८ ॥
कृष्णां तु मारणेचार्चेद्बहुरूपां तु सर्वतः।

अग्नि की जिह्वाओं का पूजन : शान्ति कर्म में अग्नि की सुप्रभा संज्ञक जिह्वा का पूजन करना चाहिए। वश्य में रक्तासंज्ञक जिह्वा का, स्तम्भन में हिरण्या नामक जिह्वा का, विद्वेषण में गगना नामक जिह्वा का, उच्चाटन में अतिरक्तिका नामक जिह्वा का तथा मारण में अग्नि की कृष्णा नामक जिह्वा का पूजन करना चाहिए।

भोज्ये संख्याविशेषोपि ज्ञेयःशान्त्यादिकर्मसु ॥ ४९ ॥
शान्तौ वश्ये भोजयेत होमाद्विप्रान्दशांशतः।
उत्तमंतद्भवेत्कर्मतत्त्वांशेन तु मध्यमम् ॥ ५० ॥
होमाच्छतांशतो विप्रभोजनं त्वधमं तु तत्।
शान्तेर्द्विगुणितं विप्रभोजनं स्तम्भने मतम् ॥ ५१ ॥
त्रिगुणं द्वेषणोच्चाटे मारणे होमसम्मितम्।

ब्राह्मणभोजन की संख्या : शान्ति एवं वश्य में होम के दशांशतुल्य ब्राह्मणों को भोजन कराना उत्तम माना जाता है। होम की संख्या के २५ वें भाग तुल्य ब्राह्मणों को भोजन कराना

वह्निप्रसंगात्काष्ठान्यप्याह। शुभइति। शुभेशान्तिपुष्ट्यादौकर्मणिबिल्वादिकाष्ठैरग्निंप्रज्वालयेत्। अशुभेस्तंभनादौविषवृक्षादिकाष्ठैः। विषवृक्षः कुचिलाइतिप्रसिद्धः। अर्को बिभीतकः। शेलुःश्लेष्मातकः ॥ ४६ ॥ अग्निप्रसंगादेवकर्मविशेषेवह्निजिह्वापूजामाह। वह्नेरिति ॥ ४७ ॥ कनकाभिधाहिरण्या ॥ ४८ ॥ होमप्रसंगाद्विप्रभोजनसंख्यामाह भोज्येइति ॥ ४९ ॥ शान्तिवश्ययोर्होमाद्दशांशेनद्विजानांभोजनमुत्तमम्। होमात्पंचविंशांशेनतन्मध्यमम् ॥ ५० ॥ शतांशेनाधमम् ॥ ५१ ॥

अधम माना गया है ।

स्तम्भन में शान्ति की ब्राह्मणभोजन-संख्या से दूने ब्राह्मणों को भोज करना चाहिए ।

विद्वेषण एवं उच्चाटन में शान्ति की संख्या से तीन गुने ब्राह्मणों को तथा मारण में होम की संख्या के बराबर ब्राह्मणों को भोजन कराना चाहिए ।

अतिशुद्धकुलोत्पन्नाःसाङ्गवेदविदोऽमलाः ॥ ५२ ॥
सदाचाररता विप्राभोज्या भोज्यैर्मनोहरैः ।
पूज्यास्ते देवताबुद्ध्या नमस्कार्य्याःपुनः पुनः ॥ ५३ ॥
सन्तोष्या मधुरैर्वाक्यैर्हिरण्यादिप्रदानतः ।
अचिराल्लभतेभीष्टं गृहीतायां तदाशिषि ॥ ५४ ॥
एनोभिचारकर्मोत्थं नश्यतिद्विजवाक्यतः ।

ब्राह्मणों का स्वरूप : अतिकुलीन वंश में उत्पन्न, षडङ्ग वेदों के ज्ञाता, पवित्र, एवं सदाचार में परायण ब्राह्मणों को विविध प्रकार का भोजन कराना चाहिए ।

उनका सुन्दर वस्तुओं से पूजन करना चाहिए । उन्हें देवता मान कर बारम्बार प्रणाम करना चाहिए । मधुर वाणी से तथा सुवर्ण आदि देकर उन्हें सन्तुष्ट करना चाहिए ।

उनका आशीर्वाद लेने पर अभिचार जन्य पाप शीघ्र नष्ट हो जाता है, तथा शीघ्र ही मनोवांच्छित सिद्धि होती है ।

चन्दनं रोचनारात्रिर्गृहधूमश्चितास्भवः ॥ ५५ ॥
अङ्गारोष्टविषाणीतिशान्त्यादौ यन्त्रलेखने ।
पूर्वोक्तं लेखन द्रव्यं गृह्णीयात्तदपि ध्रुवम् ॥ ५६ ॥
पिप्पलीमरिचंशुण्ठीश्येनविष्ठाचचित्रकः ।
गृहधूमोन्मत्तरसोलवणं च विषाष्टकम् ॥ ५७ ॥

लेखन द्रव्य : शान्ति आदि षड्कर्मों में चन्दन, गोरोचन हल्दी, गृहधूम, चिता का अंगार तथा विशाष्टक यन्त्र लिखने के द्रव्य होते हैं । (यन्त्र तरङ्ग में) पूर्वोक्त लेखन द्रव्यों को भी तत्तद् कामना से लेना चाहिए ।

विप्रस्वरूपमाह । अतिशुद्धेति ॥ ५२ ॥ उक्तब्राह्मणभोजनेअभिचारोत्थमेनः पापंनश्यति । तस्मादुक्तमाद्विजाभोज्याः ॥ ५३-५३ ॥ लेखनद्रव्यमाह । चन्दनमिति । रात्रिर्हरिद्रासास्तंभनेलेखनद्रव्यम् । अष्टविषाणिमारणे । पूर्वोक्तं यन्त्रतरंगोक्तं लेखन-द्रव्यम् । तदपितत्तत्कामनयाग्राह्यम् ॥ ५५-५६ ॥ अष्टविषाण्याह । पिप्पलीति ॥ ५७ ॥

पीपल, मिर्च, सोंठ, बाज की बीट, अण्डी, गृहधूम, धतूरे का रस तथा लवण – इन ८ वस्तुओं को विषाष्टक कहते हैं।

शान्तौ वश्ये लिखेद्भूर्जे स्तम्भने द्वीपिचर्मणि।
खरचर्मणि विद्वेषे उच्चाटे ध्वजवाससि ॥ ५८ ॥
नरास्थिनि लिखेद्यन्त्रं मारणे मन्त्रवित्तमः।
येत्वाधाराःस्मृता यन्त्रतरङ्गेतेपि सम्मताः ॥ ५९ ॥

लेखनाधार : शान्ति एवं वश्य में भोजपत्र पर, स्तम्भन में बाघम्बर पर, विद्वेषण में गदहे की खाल पर, उच्चाटन में ध्वजा के वस्त्र पर, तथा मारण में मनुष्य की हड्डी पर मान्त्रिक को यन्त्र लिखना चाहिए।

यन्त्र तरङ्ग में (विविध प्रयोगों में) यन्त्र लिखने के जो आधार बतलाये गये हैं, वे भी ग्राह्य हैं।

वृत्तं पद्मं चतुष्कोणं त्रिषट्कोणं दलेन्दुवत्।
तोयेशसोमशक्राणां या तु वाय्वोर्यमस्य च ॥ ६० ॥
आशासु क्रमतःकुण्डं शान्तिमुख्येषु कर्मसु।

कुण्ड : शान्ति आदि षड्कर्मों में क्रमशः वृत्ताकर, पद्माकार, चतुरस्र, त्रिकोण, षड्कोण एवं अर्धचन्द्राकार कुण्ड पश्चिम, उत्तर, पूर्व, नैऋत्य, वायव्य एवं दक्षिण दिशा में बनाने चाहिए।

सौवर्णौ यज्ञवृक्षोत्थौ स्रुक्स्रुवौ शान्तिवश्ययोः ॥ ६१ ॥
स्तम्भनादिषु कार्य्येषुस्मृतौ लोहमयौ हि तौ।

स्रुवा एवं स्रुची : शान्ति में सुवर्ण के तथा वश्य में यज्ञवृक्ष के स्रुवा एवं स्रुची बनाने चाहिए। स्तम्भन आदि कर्मों में लोहे के बनाने चाहिए।

हेमजा रूप्यजा जाती सम्भवा लेखनी शमे ॥ ६२ ॥
वश्येदूर्वांकुरोत्पन्नास्तम्भनेगस्त्यवृक्षजा।
राजवृक्षभवावास्याद्विद्वेषे तु करञ्जजा ॥ ६३ ॥
शुभेकर्मणि रम्याहे लेखनीं रचयेत्सुधीः।
बिभीतकोत्थितोच्चाटे मारणे तु पुमस्थिजा ॥ ६४ ॥
रिक्तातिथौ कुजदिने विष्टौ तामशुभे पुनः।

लेखनद्रव्यप्रसंगाल्लेखनाधारमाह। शांताविति ॥ ५८ ॥ ५९ ॥ कुंडान्याह। वृत्तमिति। शांतौवृत्तकुण्डंपश्चिमे। पद्माकारं वश्येउत्तरे। स्तंभनेचतुरस्रं पूर्वे। द्वेषेत्रिकोणं नैर्ऋत्ये। उच्चाटेषट्कोणंवायव्ये। मारणेऽर्द्धचंद्राकारं दक्षिणइत्यर्थः॥ ६० ॥ स्रुक्स्रुवावाह। सौवर्णाविति ॥ ६१ ॥ लेखनीमाह। शमेशांतौ ॥ ६२-६४ ॥

लेखनी : शान्ति में सोने की, चाँदी की या चमेली की, वश्य में दूब की, स्तम्भन में अगस्त्य वृक्ष की या अमलतास की, विद्वेषण में करञ्ज की, उच्चाटन में बहेड़े की तथा मारण में मनुष्य की हड्डी की लेखनी बनानी चाहिए।

शुभ कर्मों में साधक को शुभ मुहूर्त में लेखनी बनानी चाहिए। तथा अशुभ कार्य में रिक्ता (चतुर्थी, नवमी एवं चतुर्दशी) तिथि मंगलवार एवं विष्टि करण में उसे बनाना चाहिए।

भक्ष्यं च तर्पणं द्रव्यं तत्पात्रमथकीर्त्यते ॥ ६५ ॥
शांन्तौ वश्ये हविष्यान्नं स्तम्भने परमान्नकम्।
माषामुद्गाश्चविद्वेषे गोधूमाभ्रंशने स्थलात् ॥ ६६ ॥
मसूरान्नं तथा श्यामाअजादुग्धोत्थपायसम्।
मारणे प्रोदितं भक्ष्यं मन्त्रिणां कर्मकुर्वताम् ॥ ६७ ॥

भक्ष्य वस्तुएँ : अब भोजन एवं तर्पण की वस्तुओं तथा उसके पात्रों को बतलाता हूँ :

शान्ति एवं वश्य कर्म करते समय हाविष्यान्न, स्तम्भन करते समय खीर, विद्वेषण करते समय उड़द एवं मूंग, उच्चाटन करते समय गेहूँ, तथा मारण करते समय मान्त्रिक को मसूर एवं काली बकरी के दूध की खीर खानी चाहिए।

शान्तौ वश्येहरिद्राक्तं जलं तर्पण ईरितम्।
मरिचाद्यं कवोष्णं तत्स्तम्भने मारणे तथा ॥ ६८ ॥
मेषरक्तान्वितं तोयं विद्वेषोच्चाटयोर्मतम्।

तर्पण की वस्तुएँ : शान्ति एवं वश्य में हल्दी मिला जल, स्तम्भन एवं मारण में मिर्च मिला गुनगुना जल, तथा विद्वेषण एवं उच्चाटन में भेड़ का खून मिला हुआ जल तर्पण द्रव्य कहा गया है।

स्वर्णपात्रं तर्पणेस्याच्छान्तौ वश्ये च कर्मणि ॥ ६९ ॥
स्तम्भने मृत्तिकापात्रं विद्वेषे खदिरोद्भवम्।
लोहनिर्मितमुच्चाटे कुक्कुडाण्डं तु मारणे ॥ ७० ॥
मृद्वासने समासीनःशान्तौ वश्ये प्रतर्पयेत्।
जानुभ्यामुत्थितःस्तम्भे द्वेषादावेकपात्स्थितः ॥ ७१ ॥

पात्र : शान्ति एवं वश्य में सोने के पात्र में, स्तम्भन में मिट्टी के पात्र में, विद्वेषण में खैर के पात्र में, उच्चाटन में लोहे के पात्र में तथा मारण में मुर्गी के अण्डे में तर्पण

देवताद्येकोनविंशतिवस्तूनिशांत्यादौनिरूप्यपुनरधिकंवक्तुं प्रतिजानीते। भक्ष्यमिति ॥ ६५ ॥ परमान्नकंपायसम्। स्थलाद्भ्रंशनेउच्चाटने॥ ६६-७१ ॥

करना चाहिए।

मृदु आसन पर बैठकर शान्ति एवं वश्य में तर्पण करना चाहिए, स्तम्भन में घुटनों से उठकर तथा विद्वेषण आदि में एक पैर से खड़ा होकर तर्पण करना चाहिए।

षट्कर्मणां विधिःप्रोक्त एवं मन्त्रज्ञ तुष्टये।
सम्यक्कृत्वान्यासजातमात्मरक्षां विधाय च ॥ ७२ ॥
काम्यं कर्मप्रकर्तव्यमन्यथाभिभवो भवेत्।

काम्य कर्मों में सावधानी : इस प्रकार मान्त्रिकों के सन्तोष के लिए (शान्ति, वश्य, स्तम्भन, विद्वेषण, उच्चाटन एवं मारण इन) षड्कर्मों की विधि बतलायी गयी है।

(सर्व प्रथम) विधिवत समस्त न्यास एवं आत्मरक्षा करने के बाद ही काम्य कर्मों को करना चाहिए, अन्यथा हानि / असफलता मिलती है।

शुभं वाप्यशुभंवापि काम्यं कर्मकरोति यः ॥ ७३ ॥
तस्यारित्वं व्रजेन्मन्त्रो नतस्मात्तत्परो भवेत्।

काम्य कर्मों का परिणाम : जो व्यक्ति शुभ या अशुभ किसी भी प्रकार का काम्य कर्म करता है, मन्त्र उसका शत्रु बन जाता है। इसलिए काम्यकर्मों में तत्पर नहीं होना चाहिए।

विषयासक्तचित्तानां सन्तोषाय प्रकाशितम् ॥ ७४ ॥
पूर्वाचार्य्योदितं काम्यं कर्मनैतद्धितावहम्।
काम्यकर्मप्रसक्तानां तावन्मात्रं भवेत्फलम् ॥ ७५ ॥
निष्कामं भजतां देवमखिलाभीष्टसिद्धयः।
प्रतिमन्त्रंसमुदिता ये प्रयोगाःसुखाप्तये।
तदाशक्तिं विहायैवनिष्कामो देवतां भजेत् ॥ ७६ ॥

काम्यकर्मों को बतलाने के हेतु : विषयों में आसक्त चित्त वाले मनुष्यों के सन्तोष के लिए प्राचीन आचार्यों ने काम्यप्रयोग बतलाये हैं। किन्तु ये हितकर नहीं होते।

काम्य कर्मों को करने वालों को केवल उतना फल होता है। किन्तु निष्काम भाव से उपासना करने वालों को समस्त सिद्धियाँ मिलती हैं।

॥ ७२ ॥ एवंकाम्यंकर्मनिरूप्यतत्प्रसक्तिंवारयति। शुभंवेति ॥ ७३ ॥ एवंचेत्किमित्युक्तं तदित्यतआह। विषयेति ॥ ७४ ॥ पूर्वाचार्योक्तमुक्तम्। तद्वस्तुगत्याहितंनभवति। तत्रहेतुमाह। काम्येति ॥ ७५-७६ ॥

सुख प्राप्ति के लिए प्रत्येक मन्त्र के जो काम्य प्रयोग बतलाये गये हैं, उनकी आसक्ति को छोड़कर निष्काम भाव से देवता की उपासना करनी चाहिए।

वेदे काण्डत्रयं प्रोक्तं कर्मोपासनबोधनम्।
साधनं काण्डयुग्मोक्तं तृतीयेसाध्यमीरितम् ॥ ७७ ॥
तस्माद्वेदोदितं कुर्य्यादुपासीत च देवताः।
शुद्धान्तःकरणस्तेन लभते ज्ञानमुत्तमम् ॥ ७८ ॥
कार्य्यकारणसंघातं प्रविष्टश्चेतनात्मकः।
जीवो ब्रह्मैव सम्पूर्णमितिज्ञात्वा विमुच्यते ॥ ७९ ॥
मनुष्यदेहं सम्प्राप्य उपासीत च देवताः।
यो न मुच्येत संसारान्महापापयुतोहि सः ॥ ८० ॥
आत्मज्ञानाप्तये तस्माद्यतितव्यं नरोत्तमैः।
कर्मभिर्देवसेवाभिःकामाद्यरिगणक्षयात् ॥ ८१ ॥

निष्काम उपासना से ज्ञानप्राप्ति एवं मुक्ति : वेदों में कर्मकाण्ड, उपासनाकाण्ड एवं ज्ञानकाण्ड – ये तीन काण्ड बतलाये गये हैं। इनमें से (प्रारम्भ के) २ काण्ड साधन हैं, तथा तृतीय (ज्ञान) काण्ड साध्य है।

इसलिए वेदोक्त मार्ग से देवताओं की उपासना करनी चाहिए। उससे साधक का अन्तःकरण शुद्ध हो जाता है और उसे उत्तम ज्ञान मिलता है।

कार्य, कारण एवं भूतों के संघात रूपी शरीर में स्थित चेतनात्मक जीव ही परब्रह्म है – यह जानकर साधक मुक्त हो जाता है।

मनुष्य देह प्राप्त कर और देवताओं की उपासना कर जो संसार बन्धन से मुक्त न हो वह महापापी है।

निष्कामभजनेफलमाह। वेदेति। कर्मोपासनबोधनं कर्मकांडंज्योतिष्टोमेनस्वर्गकामोयजेतेत्यादि। उपासनाकांडंसूर्योब्रह्मेत्युपासीतयोहवैउद्येष्टंचवेदेत्यादि। इदंकांडद्वयंसाधनं ज्ञानस्य। तृतीयंज्ञानकांडमयमात्माब्रह्मेत्यादि तस्मात्साध्यंफलभूतम। तस्माज्ज्ञानप्राप्तयेप्रयतितव्यमित्यर्थः ॥ ७७ ॥ तत्रोपायमाह। तस्मादिति। निष्कारणवेदोक्ताचरणेदेवतोपासनेचांतःकरणशुद्धिस्ततोज्ञानप्राप्तिरित्यर्थः ॥ ७८ ॥ ज्ञानस्वरूपमाह। कार्येति। कार्याणिकारणानिभूतानिचतत्संघातः शरीरम्। तच्चालकश्चेतनोजीवोवस्तुतोब्रह्मैवेति साक्षात्कारोज्ञानं तस्मान्मुक्तिः तत्त्वमसिश्वेतकेतोअहं ब्रह्मास्मीत्यादिश्रुतेः ॥ ७९ ॥ ज्ञानायाप्रयतमानंनिंदति। मनुष्येति ॥ ८० ॥

फलितमाह। आत्मज्ञानेति। कामक्रोधलोभमदमत्सरांस्त्यक्त्वाकृतैः कर्माभिर्वैदिकैर्देवोपासनादिभिश्चांतःकरणशुद्धिद्वाराज्ञानाप्तिरित्यर्थः ॥ ८१ ॥

इसलिए देवोपासना आदि कर्मों से काम क्रोध आदि शत्रुओं का नाश कर आत्मज्ञान प्राप्त करने के लिए सत्पुरुषों को सदैव प्रयास करना चाहिए।

चिकीर्षुर्देवतोपास्तिमादौ भावि विचारयेत्।
स्नानदानादिकं कृत्वा स्मृत्वा हरिपदाम्बुजम् ॥ ८२ ॥
शयीत कुशशय्यायां प्रार्थयेद्वृषभध्वजम्।
भगवन्देवदेवेश त्रूलभृद्वृषवाहन ॥ ८३ ॥
इष्टानिष्टे समाचक्ष्व मम सुप्तस्य शाश्वत।
नमोजाय त्रिनेत्राय पिङ्गलाय महात्मने ॥ ८४ ॥
वामाय विश्वरूपाय स्वप्नाधिपतये नमः।
स्वप्ने कथय मे तथ्यं सर्वकार्येष्वशेषतः ॥ ८५ ॥
क्रियासिद्धिं विधास्यामि त्वत्प्रसादान्महेश्वर।
एभिर्मन्त्रैः शिवं प्रार्थ्य निद्रां कुर्य्यान्निराकुलः ॥ ८६ ॥
स्वप्नं दृष्टं निशि प्रातर्गुरवे विनिवेदयेत्।
तमन्तरेण मन्त्रज्ञःस्वयं स्वप्नं विचारयेत् ॥ ८७ ॥

पुरश्चरण के पहिले भविष्य-विचार की रीति : देवोपासना करनेवाले को सर्व-प्रथम भविष्य का विचार कर लेना चाहिए।

स्नान एवं दान आदि करने के बाद भगवान् विष्णु के चरण कमलों का ध्यान कर कुश की शय्या पर सोना चाहिए तथा भगवान् शिव से यह प्रार्थना करनी चाहिए :

'भगवन्देवदेवेश शूलभृद् वृषवाहन। इष्टानिष्टे समाचक्ष्व मम सुप्तस्य शाश्वत ॥
नमोजाय त्रिनेत्राय पिङ्गलाय महात्मने। वामाय विश्वरूपाय स्वप्नाधिपतये नमः ॥
स्वप्ने कथय मे तथ्यं सर्वकार्येष्वशेषतः। क्रियासिद्धिं विधास्यामि त्वत्प्रसादान्महेश्वरः ॥

इन मन्त्रों से भगवान् शिव की प्रार्थना कर निश्चिन्ततापूर्वक सोना चाहिए। तथा प्रातःकाल उठने पर रात में देखा हुआ स्वप्न अपने गुरुदेव को बतलाना चाहिए। उनके न होने पर साधक को स्वयं ही स्वप्न का विचार कर लेना चाहिए।

लिङ्गं चन्द्रार्कयोर्बिम्बं भारतीं जाह्नवीं गुरुम्।
रक्ताब्धितरणं युद्धे जयो नलसमर्चनम् ॥ ८८ ॥

देवोपास्तिकुर्वताभविष्यद्विचार्यप्रवर्तितव्यमित्याह। चिकीर्षुरिति। विचार-प्रकारमाह। स्नानसंध्यादिकं कृत्वेत्यादिना ॥ ८२ ॥ शिवप्रार्थनामंत्रमाह। भगवन्निति ॥ ८३-८६ ॥ तमंतरेणगुरुं विनाशुभाशुभं स्वप्नंस्वयमेवविचारयेत् ॥ ८७ ॥ तत्रशुभ-स्वप्नमाह। लिंगमिति ॥ ८८ ॥

शिखिहंसरथांगाढ्ये रथे स्थानं च मोहनम् ।
आरोहणं सारसस्य धरालाभश्चनिम्नगा ॥ ८९ ॥
प्रासादःस्यंदनःपद्मं छत्रं कन्या द्रुमःफली ।
नागो दीपोहयःपुष्पं वृषभोश्वश्चपर्वतः ॥ ९० ॥
सुराघटो ग्रहास्तारा नारी सूर्य्योदयोप्सराः ।
हर्म्यशैलविमानानामारोहो गगने गमः ॥ ९१ ॥
मद्यमांसादनं विष्ठालेपो रुधिरसेचनम् ।
दध्योदनादनं राज्याभिषेको गोवृषध्वजाः ॥ ९२ ॥
सिंहसिंहासनं शंखो वादित्रं रोचनादधि ।
चन्दनं दर्पणश्चैषां स्वप्ने संदर्शनं शुभम् ॥ ९३ ॥
तैलाभ्यक्तःकृष्णवर्णो नग्नो नागर्तवायसौ ।
शुष्ककण्टकिवृक्षश्चचाण्डालो दीर्घकन्धरः ॥ ९४ ॥
प्रासादस्तलहीनश्चनैते स्वप्ने शुभावहाः ।

शुभ एवं अशुभ स्वप्न : लिङ्ग, चन्द्र एवं सूर्य के बिम्ब, सरस्वती, गंगा, गुरु, रक्तसागर में तैरना, युद्ध में विजय, अग्नि का पूजन, मोर, हंस या चक्र वाले रथ पर बैठना, सम्भोग, सारस पर बैठना, भूमि लाभ, प्रासाद, रथ, कमल, छत्र कन्या, फल वाले वृक्ष, सर्प, दीपक, घोड़ा, पुष्प, वृषभ, पर्वत, शराब, घड़ा, ग्रह, तारे, स्त्री, सूर्योदय एवं अप्सराओं को देखना, महल, पर्वत एवं विमान में बैठना, आकाशयात्रा, माँस एवं शराब का खाना-पीना, (शरीर पर) विष्ठा लगाना, खून से नहाना, दही एवं चावल खाना, राज्याभिषेक होना, गौ, बैल, ध्वजा, सिंह एवं सिंहासन को देखना, शंख एवं वाद्यों, गोरोचन, दही, चन्दन एवं दर्पण – इन सब का स्वप्न में दिखलायी देना शुभ होता है ।

तेल एवं उबटन लगाये हुए, काला या नंगा व्यक्ति; गड्ढा, कौआ, सूखा एवं काँटेदार वृक्ष, चाण्डाल, बड़े कन्धेवाला मनुष्य तथा बगैर छत वाला महल – इनका स्वप्न में दिखलाई देना शुभ नहीं होता ।

शिखीति । मयूरयुक्तेहंसयुक्तेचक्रयुक्तेवारथेस्थितिः । मोहनंसुरतम् । निम्नगानदीमात्रम् ॥ ८९ ॥ स्यंदनोरथः । निम्नगाद्यप्सरोंतानांदर्शनमेवशुभम् ॥ ९० ॥ हर्म्यादीनामारोहणम् ॥९१॥ मद्यमांसयोर्भक्षणम् । विष्ठयाशरीरेलेपःरुधिरेणस्नानम् । दधिभक्तभक्षः । राज्यप्राप्तिः । एतानिशुभानि । गवादीनां दर्शनमेवशुभम् ॥ ९२-९३ ॥ अशुभस्वप्नानाह । तैलेति । तैलाभ्यक्तोनापुरुषः नग्नादीनांदर्शनशुभम् ॥ ९४ ॥

शान्तिकुर्वीतदुःस्वप्ने जपेन्मन्त्रमनन्यधीः ॥ ९५ ॥
अब्दत्रिकं जपं तस्य कुर्वतो विघ्नसम्भवः ।
विघ्नसंघमनादृत्य तदा जपपरो भवेत् ॥ ९६ ॥
सिद्धौ विश्वस्तचित्तःसंस्तुरीयेब्दे ससिद्धिभाक् ।

दुःस्वप्न देखने के बाद पुरश्चरण की रीति : दुःस्वप्न दिखलाई पड़ने पर उसकी शान्ति करनी चाहिए और फिर एकाग्रमन से मन्त्र का जप करना चाहिए । इस प्रकार जप करने में साधक को ३ वर्ष तक विघ्न-बाधाओं की सम्भावना रहती है । (अतः) इस स्थिति में विघ्नों को परवाह किये बिना जप में तत्पर रहना चाहिए । सिद्धि का मन में पूर्ण विश्वास लेकर (एकाग्र मन से निरन्तर जप करने वाला) वह साधक चौथे वर्ष में सिद्धि प्राप्त करता है ।

मनःप्रसादःसंन्तोषःश्रवणं दुन्दुभिध्वनेः ॥ ९७ ॥
गीतस्य तालशब्दस्य गन्धर्वाणां समीक्षणम् ।
स्वतेजसःसूर्य्यसाम्येक्षणं निद्राक्षुधाजपः ॥ ९८ ॥
रम्यतारोग्यगाम्भीर्य्यमभावक्रोधलोभयोः ।
एवमादीनिचिह्नानि यदा पश्यति मन्त्रवित् ॥ ९९ ॥
सिद्धिं मन्त्रस्य जानीयाद्देवतायाःप्रसन्नताम् ।

मन्त्रसिद्धि का लक्षण : मन का प्रसन्न एवं सन्तुष्ट होना, दुन्दुभि, गीत एवं ताल का शब्द सुनना, गन्धर्वों को देखना, अपने तेज को सूर्य के समान देखना, निद्रा, क्षुधा एवं जप में आनन्द की अनुभूति होना, स्वस्थ एवं गम्भीर होना, क्रोध एवं लोभ का अभाव होना – मन्त्रवेत्ता साधक को जब ये चिह्न दिखलाई दें तब मन्त्र की सिद्धि तथा देवता की प्रसन्नता जाननी चाहिए ।

ततो जपेधिकं यत्नं प्रकुर्य्याज्ज्ञानलब्धये ॥ १०० ॥
लब्धज्ञानःकृतार्थःस्यात्संसारात्प्रतिमुच्यते ।
ज्ञात्वात्मानं परं ब्रह्मवेदान्तैःप्रतिपादितम् ॥ १०१ ॥

सिद्धि के बाद का कर्तव्य : सिद्धि प्राप्त करने के बाद मन्त्र का अधिक जप तथा ज्ञान प्राप्ति के लिए अधिक प्रयत्न करना चाहिए । वेदान्त में प्रतिपादित 'अयमात्मा ब्रह्म' 'अहं ब्रह्मास्मि' – इस तत्त्वज्ञान का साक्षात् अनुभव कर व्यक्ति कृतार्थ हो जाता है तथा संसार-बन्धन से मुक्त हो जाता है ।

॥ ९५-९६ ॥ मन्त्रसिद्धेर्लक्षणमाह । मनः प्रसादइति । ९७-१०० ॥ आत्मसाक्षात्कार-पर्यंतमेवमन्त्रोपास्तिरित्याह । लब्धज्ञानइति । अहंब्रह्मेतिसाक्षात्कारोज्ञानमित्यर्थः ॥ १०१ ॥

तं वन्दे परमात्मानं सर्वव्यापिनमीश्वरम् ।
योनानादेवतारूपो नृणामिष्टं प्रयच्छति ॥ १०२ ॥

ग्रन्थ समाप्ति का मङ्गलाचरण : उस परमात्मा एवं सर्वव्यापी ईश्वर की वन्दना करता हूँ, जो नाना देवताओं के रूप में मनुष्यों के अभीष्ट को पूरा करता है ।

विलोक्य नानातन्त्राणि प्रार्थितो द्विजसत्तमैः ।
स्वमतेरनुसारेण कृतो मन्त्रमहोदधिः ॥ १०३ ॥

उपसंहार : श्रेष्ठ ब्राह्मणों के द्वारा प्रार्थना करने पर अनेक तन्त्र ग्रन्थों का मनन कर अपनी बुद्धि के अनुसार मैंने मन्त्रमहोदधि की रचना की ।

बाणनेत्रमितास्तस्मिंस्तरङ्गाःसन्ति निर्मिताः ।
तत्रानुक्रमणीं वक्ष्ये मन्त्रिणां सुखवृद्धये ॥ १०४ ॥
भूतशुद्धिस्तथाप्राणप्रतिष्ठान्यसनं लिपेः ।
पुरश्चर्याहोमविधिस्तर्पणाद्याद्य ईरितम् ॥ १०५ ॥
द्वितीयोर्मौ गणेशस्य मन्त्राःसम्यक्समीरिताः ।
कालीकाल्यभिधानानां सुमुख्याश्चतृतीयके ॥ १०६ ॥
तारातुरीये सम्प्रोक्ता ताराभेदास्तु पञ्चमे ।
षष्ठे तरङ्गे गदिताछिन्नमस्ताशबर्य्यपि ॥ १०७ ॥
स्वयंवरामधुमतीप्रमदा च प्रमोदया ।
बन्दीबन्धनहारीति सप्तमे वटणक्षिणी ॥ १०८ ॥
तस्याभेदाश्चवाराहीज्येष्ठाकर्णपिशाचिनी ।
स्वप्नेश्वरी च मातङ्गी बाणेशी मदनेश्वरी ॥ १०९ ॥
अष्टमेविस्तरात्प्रोक्ता बाला बालाभिदा अपि ।
नवमेत्वन्नपूर्णोक्ता तद्भेदामोहनाद्विजा ॥ ११० ॥

अथसमाप्तौमंगलमाचरति । तंवंदेइति । ब्रह्मैवनानादेवतारूपेणजनैः सेव्यतइत्यर्थः । 'योयोयांयांतनुंभक्तः श्रद्धयार्चितुमिच्छति । तस्यतस्यचलां श्रद्धांतामेवविदधाम्यहम् । सतयाश्रद्धयायुक्तस्तस्याराधनमीहते । लभतेचततःकामान्मयैवविहितान्हितान्' इतिभगवद्वचनात् ॥ १०२ ॥ ग्रंथकरणेहेतुमाह । विलोक्येति । ब्राह्मणप्रार्थनमेवहेतुः ॥ १०३ ॥ बाणनेत्रमिताः पंचविंशतिः ॥ १०४ ॥ अनुक्रमणीमाह । भूतशुद्धिरिति । लिपेर्मातृकायान्यसनंन्यासः । आद्येप्रथमतरंगेएतदीरितम् ॥१०५॥ द्वितीयोर्मौद्वितीयतरंगे गणेशमंत्राः । कालयादितृतीये ॥ १०६ ॥

बंधनहारीति । बंदीविशेषणम् । छिन्नमस्तादिबंधंतंषष्ठे ॥ १०७-१०८ ॥ वाराहीवार्तालीवटयक्षिण्यादिकामेश्वर्यंतंसप्तमे ॥ १०९ ॥ मोहनाद्विजामोहनगौरी ॥ ११० ॥

ज्येष्ठालक्ष्मीरत्र मन्त्रा उक्ता प्रत्यंगिरारिहा ।
दशमे बगला वक्त्रावाराहीद्वितयं तथा ॥ १११ ॥
श्रीविद्यैकादशे प्रोक्ता द्वादशे तु तदावृतिः ।
त्रयोदशे तु हनुमान्विस्तरात्प्रतिपादितः ॥ ११२ ॥
चतुर्दशे नारसिंहो गोपालो गरुडोपि च ।
अथपञ्चदशे सूर्यो भौमो जीवःसितो मुनिः ॥ ११३ ॥
षोडशोर्मौ महामृत्युञ्जयो रुद्रो धनेश्वरः ।
जाह्नवीमणिकर्णी च प्रोक्तासप्तदशेर्जुनः ॥ ११४ ॥
अष्टादशे कालरात्रिश्चण्डिकाया नवाक्षरः ।
एकोनविंशे चरणायुधःशास्तृसमन्वितः ॥ ११५ ॥
पार्थिवार्चनकीनाशचित्रगुप्तासुरीविधिः ।
विंशेतरङ्गे यन्त्राणि स्वर्णाकर्षणभैरवः ॥ ११६ ॥
स्नानादिरन्तर्यागान्त एकविंशेर्चनाविधिः ।
द्वाविंशेऽर्घ्यं समारभ्यपूजनं तद्भिदा अपि ॥ ११७ ॥
त्रयोविंशे तु दमनैःपवित्रैश्चसमर्चनम् ।
चतुर्विंशे च भेदेन मन्त्राणां परिशोधनम् ॥ ११८ ॥
तरङ्गे चरमे प्रोक्तं कर्मषट्कमनुक्रमात् ।
एवं मन्त्रोदधावस्मिन्पञ्चविंशतिरूर्मयः ॥ ११९ ॥

महोदधि की अनुक्रमणिका : उस मन्त्रमहोदधि में २५ तरङ्ग है, मान्त्रिकों की सुविधा के लिए अब उसकी अनुक्रमणिका को बतलाता हूँ :

प्रथम तरङ्ग में भूतशुद्धि, प्राणप्रतिष्ठा, मातृकान्यास, पुरश्चरण एवं होम की विधि तथा तर्पण को बतलाया गया है ।

द्वितीय तरङ्ग में गणेश के विविध मन्त्र एवं उनकी साधनाविधि बतलायी गयी है ।

तृतीय तरङ्ग में काली एवं काली सदृश अन्य सुमुखी आदि के मन्त्र तथा साधना विधि बतलायी गयी है ।

चतुर्थ तरङ्ग में तारा की उपासना तथा पञ्चम तरङ्ग में तारा के भेद बयलाये गये हैं ।

अरिहाशत्रुनाशकःषोडशार्णः । बगलावक्त्राबगलामुखी ॥ १११ ॥ तदावृतिः श्रीविद्यायाआवरणपूजा ॥११२॥ मुनिर्वेदव्यासः ॥ ११३-११४ ॥ चरणायुधः कुक्कुटमंत्रः ॥ ११५ ॥ कीनाशोयमः ॥ ११६ ॥ तद्भिदाः पूजाभेदाः ॥ ११७-११८ ॥ चरमेपंचविंशेतरंगे । शांत्यादिकर्मषट्कमनुक्रमणीचेति ॥ ११९ ॥

षष्ठ तरङ्ग में छिन्नमस्ता, शबरी, स्वयंवरा, मधुमती, प्रमदा, प्रमोदा, बन्दी एवं बन्धनहारी के मन्त्रों को बतलाया गया है।

सप्तम तरङ्ग में वटयक्षिणी तथा उसके भेद, वाराही, ज्येष्ठालक्ष्मी, कर्ण पिशाचिनी, स्वप्नेश्वरी, मातङ्गी, बाणेशी एवं कामेशी के मन्त्रों को बतलाया है।

अष्टम तरङ्ग में त्रिपुराबाला तथा उसके भेदों का विवेचन किया गया है।

नवम तरङ्ग में अन्नपूर्णा तथा उसके भेद–त्रैलोक्यमोहन गौरी एवं ज्येष्ठालक्ष्मी के साथ ही प्रत्यङ्गिरा को भी बतलाया गया है।

दशम तरङ्ग में बगलामुखी तथा वाराही को बतलाया है।

एकादश तरङ्ग में श्रीविद्या तथा द्वादश तरङ्ग में उसके आवरण पूजा की विधि बतलायी है।

त्रयोदश तरङ्ग में हनुमान के मन्त्रों एवं प्रयोगों को विस्तार पूर्वक बतलाया है।

चतुर्दश तरङ्ग में नृसिंह, गोपाल एवं गरुड़ के मन्त्रों को बतलाया है।

पञ्चदश तरङ्ग में सूर्य, भौम, बृहस्पति, शुक्र एवं वेदव्यास के मन्त्रों को बतलाया है।

षोडश तरङ्ग में महामृत्युञ्जय, रुद्र, कुबेर, गङ्गा एवं मणिकर्णिका के मन्त्र बतलाये हैं।

सप्तदश तरङ्ग में कार्तवीर्यार्जुन के मन्त्र तथा अष्टादश तरङ्ग में कालरात्रि के मन्त्र, शतचण्डी विधान एवं चण्डी का नवार्ण मन्त्र बतलाया है।

एकोनविंशति तरङ्ग में पार्थिवपूजन, यम एवं चित्रगुप्त के मन्त्र तथा आसुरीविद्या बतलायी है।

विंशति तरङ्ग में विविध यन्त्र तथा स्वर्णाकर्षण भैरव का मन्त्र बतलाया है।

एकविंशति तरङ्ग में स्नान से लेकर अन्तर्याग तक नित्यकर्म तथा द्वाविंशति तरङ्ग में अर्घ्यस्थापन से लेकर पूजन पर्यन्त के कृत्य तथा पूजा के भेद बतलाये हैं।

त्रयोविंशति तरङ्ग में दमन एवं पवित्रों से पूजन, चतुर्विंशति तरङ्ग में मन्त्र शोधन तथा अन्तिम तरङ्ग में षड्कर्मों को बतलाया है। इस प्रकार इस मन्त्रमहोदधि की २५ तरङ्गों में क्रमशः उक्त विषयों को बतलाया गया है।

विशोधनीया विद्वद्भिःक्षन्तव्यं साहसं मम।
चापलं निजबालानां क्षमते जनको यथा॥ १२०॥

प्रार्थना : (संशोधन की आवश्यकता होने पर) विशेषज्ञों को इसमें संशोधन कर लेना चाहिए। जिस प्रकार पिता अपने पुत्रों की चपलता को क्षमा कर देता है

॥ १२० ॥

उसी प्रकार विद्वज्जन मेरे साहस को भी क्षमा करेंगे ।

अहिच्छत्रद्विजच्छत्रवत्सगोत्रसमुद्भवः ।
आसीद्रत्नाकरो नाम विद्वान्ख्यातो धरातले ॥ १२१ ॥
तत्तनूजो रामभक्तःफनूभट्टाभिधोभवत् ।
महीधरस्तदुत्पन्नः संसारासारतां विदन् ॥ १२२ ॥
निजदेशं परित्यज्य गतो वाराणसीं पुरीम् ।
सेवमानो नरहरिं तन्त्र ग्रन्थमिमं व्यधात् ॥ १२३ ॥
कल्याणभिधपुत्रेण तथान्यैर्द्विजसत्तमैः ।
अनेकानागमग्रन्थान्विलोकितृमुनीश्वरैः ॥ १२४ ॥
एकग्रन्थे स्थितं सर्वं मन्त्राणां सारमिच्छुभिः ।
सम्प्रार्थितःस्वमत्यासौ नाम्ना मन्त्रमहोदधिः ॥ १२५ ॥

वंशपरिचय : इस धरातल पर वत्सगोत्र में रत्नाकर के नाम से प्रसिद्ध विद्वान् हुए, जो राजाओं के संरक्षक तथा ब्राह्मणों में मूर्धन्य थे । उनके पुत्र फनूभट्ट हुए, जो भगवान् श्रीराम के भक्त थे । उनके पुत्र श्री महीधर ने संसार की असारता को जानकर अपने देश को छोड़कर वाराणसी में आकर भगवान् नृसिंह की सेवा करते हुए इस ग्रन्थ (मन्त्रमहोदधि) की रचना की ।

अनेक तन्त्रग्रन्थों के मर्मज्ञ तथा एक ही ग्रन्थ में समस्त मन्त्रों को संकलित करने की इच्छा वाले श्रेष्ठ विद्वानों के द्वारा और उनके पुत्र कल्याण के द्वारा प्रार्थना करने पर मैंने अपनी बुद्धि के अनुसार यह मन्त्र महोदधि बनाया है ।

अविच्छिन्नान्वयाःसन्तु निजधर्मपरायणाः ।
मङ्गलानि प्रपश्यं तु सर्वे द्रोहपराङ्मुखाः ॥ १२६ ॥

ग्रन्थ समाप्ति का आशीर्वचन : इस ग्रन्थ के समस्त पाठक गण) अपने धर्म में परायण तथा द्रोह से पराङ्मुख हों । वे (जीवन भर) कल्याण को देखें तथा उनकी अविच्छिन्न वंश परम्परा चले ।

हरिः करोतु कल्याणं सर्वेषां जगदीश्वरः ।
प्रवर्तयन्त्विमं ग्रन्थं यावद्वेदोरविःशशी ॥ १२७ ॥
नरसिंहो महादेवो महादेवार्तिनाशनः ।
मुदे परो महालक्ष्म्यादेवावरनतोस्तु मे ॥ १२८ ॥

स्ववंशमाह । अहिच्छत्रेति ॥ १२१-१२५ ॥ ग्रंथांतेआशिषआह । अविच्छिन्नेति ॥ १२६-१२७ ॥ श्लोकत्रयेणदेवं प्रार्थयते । नरसिंहइति । नृसिंहोमेमुदेहर्षायास्तु । देवनामावरेणसमूहेननतः ॥ १२८ ॥

नृसिंहउत्संगसमुद्रजामां समुद्रजद्वीपगृहे निषण्णः ।
समुद्रजो हीनमतिःसदाव्यात्समुद्रभक्ताखिलसिद्धिदायी ॥ १२९ ॥
राजा लक्ष्मीनृसिंहो जयति सुखकरं श्रीनृसिंहंभजे यं
दैत्याधीशामहान्तोऽहसतनृहरिणा श्रीनृसिंहाय नौमि ।
सेव्यो लक्ष्मीनृसिंहादपरइह नहि श्रीनृसिंहस्य पादौ
सेवे लक्ष्मीनृसिंहे वसतु मम मनः श्रीनृसिंहावभक्तम् ॥ १३० ॥
विश्वेशो गिरिजाबिन्दुमाधवोमणिकर्णिका ।
भैरवोजाह्नवीदण्डपाणिर्मे तन्वतां शिवम् ॥ १३१ ॥

प्रार्थना : जगदीश्वर श्रीहरि सभी का कल्याण करें । जब तक वेद, सूर्य एवं चन्द्रमा हैं तब तक इस ग्रन्थ का प्रचार-प्रसार करें ।

देवताओं के दुःख को नष्ट करने वाले, देव समुदाय से बन्दित भगवान् नृसिंह महालक्ष्मी के साथ मुझे हर्ष दें ।

क्षीरसागर के श्वेतद्वीप के मण्डप में विराजमान, अपनी गोद में स्थित लक्ष्मी के साथ भगवान् श्रीनृसिंह मुझे सदैव रजोगुण रहित (सात्विक) बुद्धि दें, जो अञ्जलि आदि मुद्राओं से पूजन करने वाले भक्तों को समस्त सिद्धियाँ देते हैं ।

भगवान् लक्ष्मीनृसिंह की जय हो । कल्याण कारक श्री नृसिंह की वन्दना करता है । जिस नृसिंह ने बड़े-बड़े दैत्यों को मारा, उस नरहरि को प्रणाम है । लक्ष्मीनृसिंह से ज्यादा कोई भी आराधना योग्य नहीं है अतः मैं उनके चरण कमलों की सेवा करता हूँ श्री नृसिंह के अभक्त का मेरा मन सदैव भगवान् लक्ष्मीनृसिंह में लगे ।

बाबा विश्वनाथ, माता अन्नपूर्णा, बिन्दुमाधव, मणिकर्णिका, भागीरथी गंगा तथा दण्डपाणि मेरा कल्याण करें ।

नृसिंहइति । नृसिंहोमांसदाऽव्यात् । कीदृशः । उत्संगेसमुद्रजालक्ष्मीर्यस्यसः । समुद्रे जातंयच्छ्वेतद्वीपंतत्रयद्गृहंतत्रोपविष्टः समुत्सहर्षः । रजोहीनमतिर्विरजाः । समुद्राअंजल्यादिसमुद्राविदोयेभक्तास्तेषांसर्वसिद्धिदाता ॥ १२९ ॥

राजालक्ष्मीनृसिंहइति । विभक्तिसप्तकेनहरिंस्तौति । नृहरिणामहांतोदैत्याधीशा-अहसतहताः । हन्तेर्लुङिकर्मणिचिण्वदिड्भावेरूपम् । श्रीनृसिंहाव श्रीनृसिंह भक्तम् अवरक्ष ॥ १३० ॥ देवान्स्मरति । विश्वेशइति । ग्रन्थनिष्पत्तिस्थानं काशीस्थानम् ॥ १३१ ॥

अब्दे विक्रमतोजाते बाणवेदनृपैर्मिते ।
ज्येष्ठाष्टम्यां शिवस्याग्रे पूर्णो मन्त्रमहोदधिः ॥ १३२ ॥

रचनाकाल : १६४५ विक्रम सम्वत् की ज्येष्ठ शुक्ला अष्टमी को बाबा विश्वनाथ के सान्निध्य में यह मन्त्रमहोदधि पूरा हुआ ।

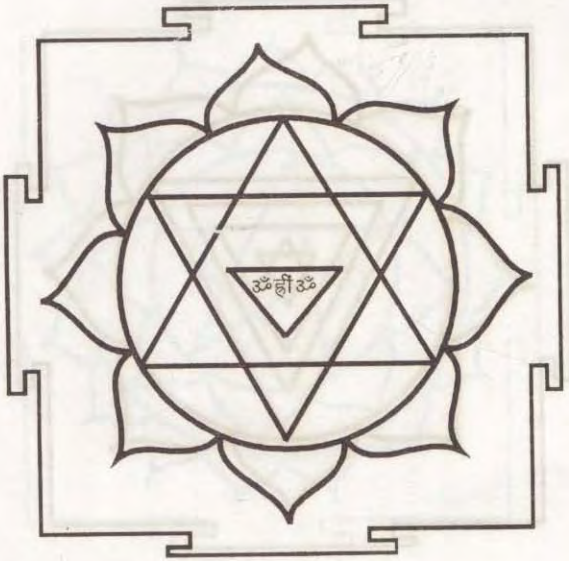
इति श्री शुकदेव चतुर्वेदि विरचितायां सटिप्पण्यां मन्त्रमहोदधेः
मोहनी व्याख्यायां पंचविंशस्तरङ्गः ।

समाप्तोयंग्रन्थः

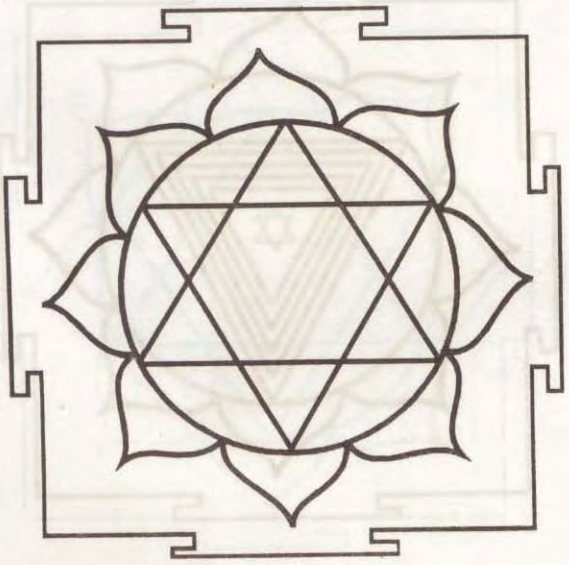


ग्रन्थनिर्मितिकालमाह । अब्देविक्रमतइति । बाणवेदनृपैर्मितेवर्षेपञ्चचत्वारिंशदुत्तरषोडशशततमेविक्रमनृपाब्दतेसति । शिवस्यरामेश्वरस्याग्रे मन्त्रमहोदधिःसमाप्तिमगमत् ॥ १३२ ॥ इति श्रीनन्महीधरविरचितायांमन्त्रमहोदधिव्याख्यायां नौकायांषट्कर्मनिरूपणं नामपञ्चविंशस्तरंगः ॥ २५ ॥ समाप्तोयंग्रन्थः ।

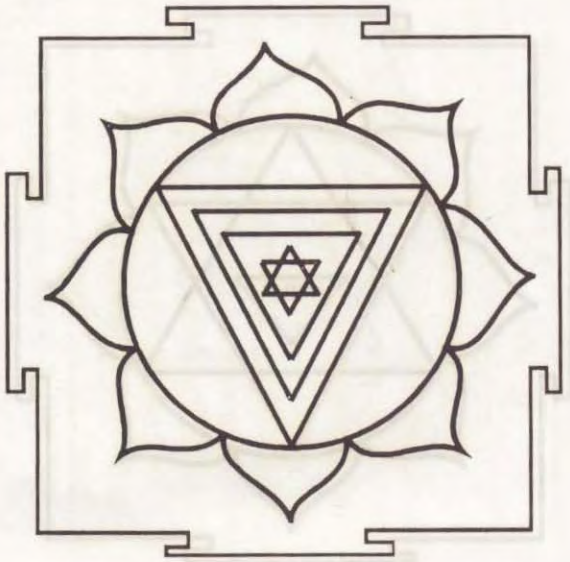
चित्र १ : अग्नि (वह्नि) पूजन-यन्त्र (पृ० ३०)



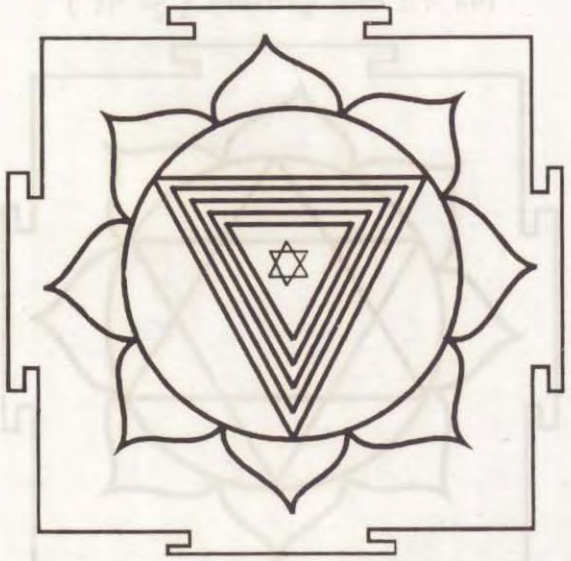
चित्र २ : गणेश पूजन-यन्त्र (पृ० ५१)



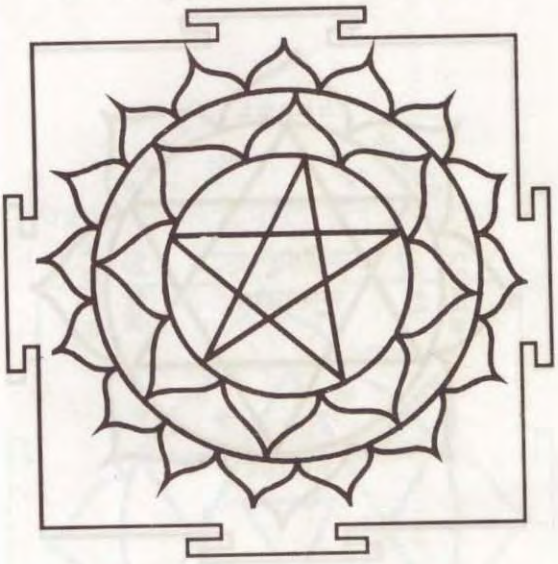
चित्र ३ : काली पूजन-यन्त्र (पृ० ८२)



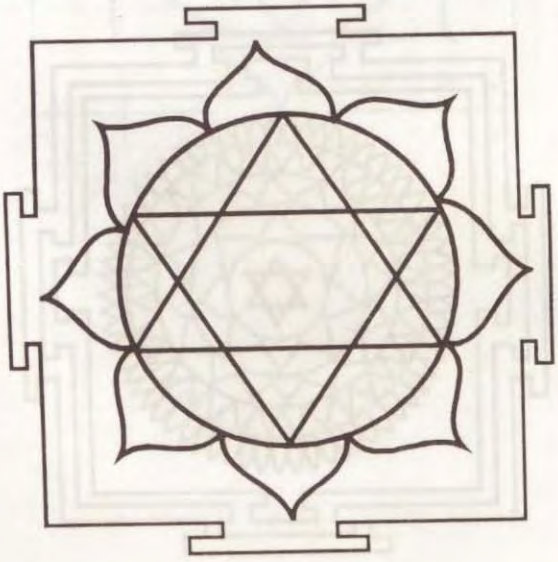
चित्र ४ : काली पूजन-यन्त्र (पृ० ८३)



चित्र ५ : सुमुखी पूजन-यन्त्र (पृ० ९५)



चित्र ६ : तारा पूजन-यन्त्र (पृ० १२५)



चित्र ७ : ताराधारण यन्त्र (पृ० १३७)



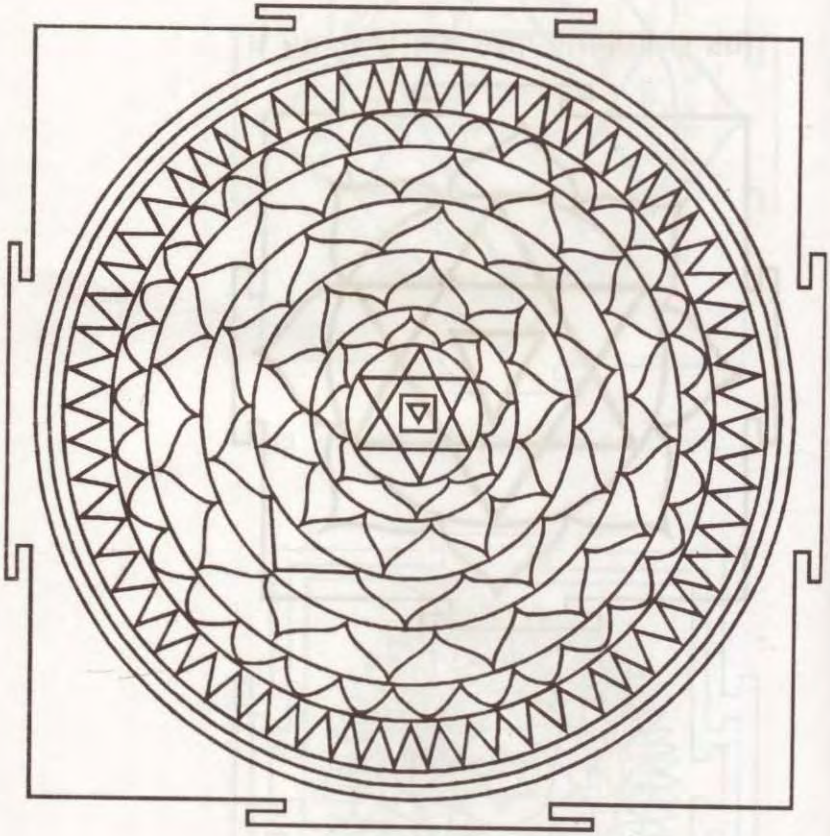
चित्र ८ : विद्याराज्ञी पूजन-यन्त्र (पृ० १४७)



चित्र ६: छिन्नमस्ता पूजन यन्त्र (पृ० १६५)



चित्र १० : स्वयंवरा कला पूजन–यन्त्र (पृ० १७५)



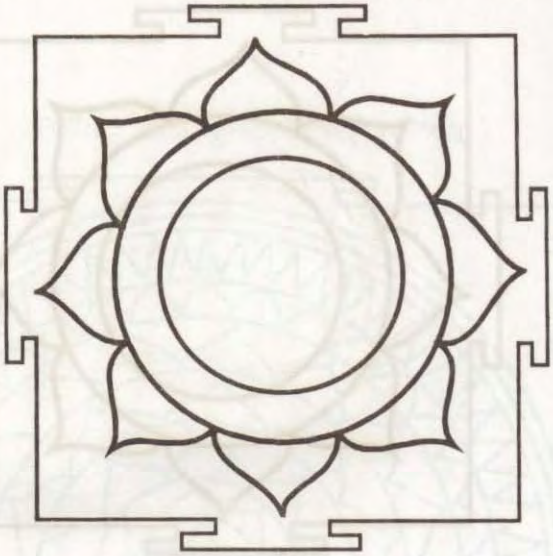
चित्र ११ : मधुमती पूजन-यन्त्र (पृ० १७९)



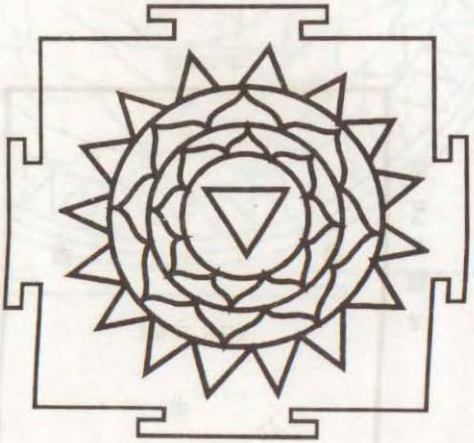
चित्र १२, १३ : बन्धन (बन्दी) मोक्षकर यन्त्र (पृ० १८५)



चित्र १४ : बटयक्षिणी पूजन-यन्त्र (पृ० १८९)



चित्र १५ : मातङ्गी पूजन-यन्त्र (पृ० २०३)



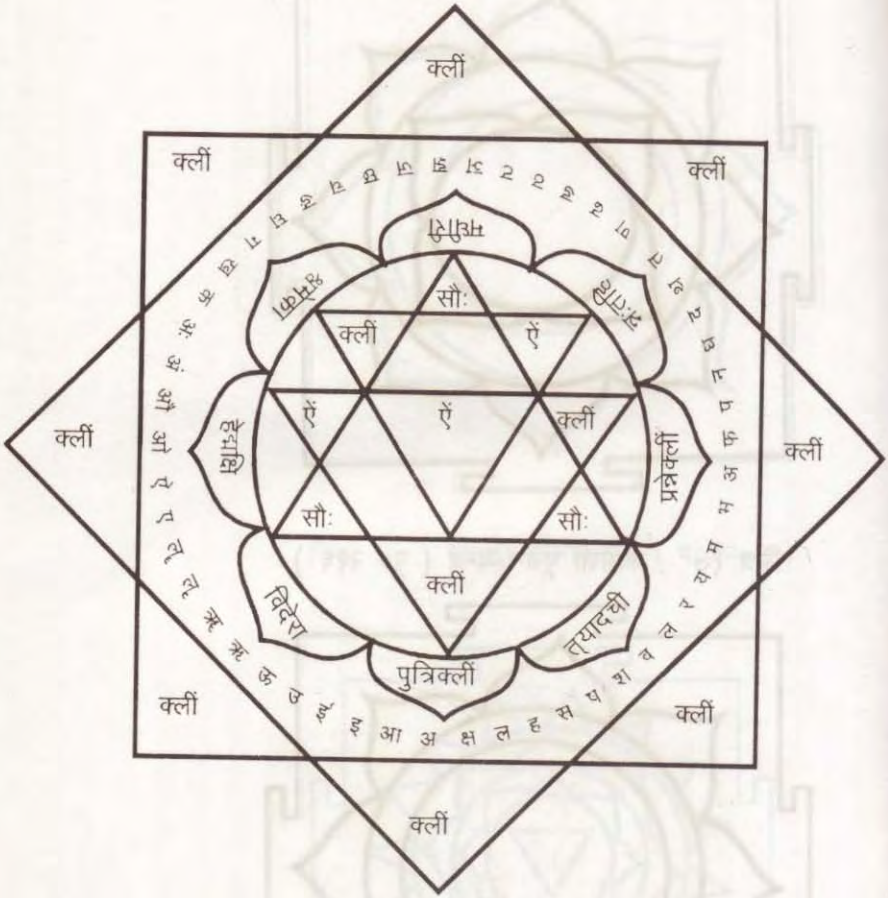
चित्र १६ : बाणेशी पूजन-यन्त्र (पृ० २१२)



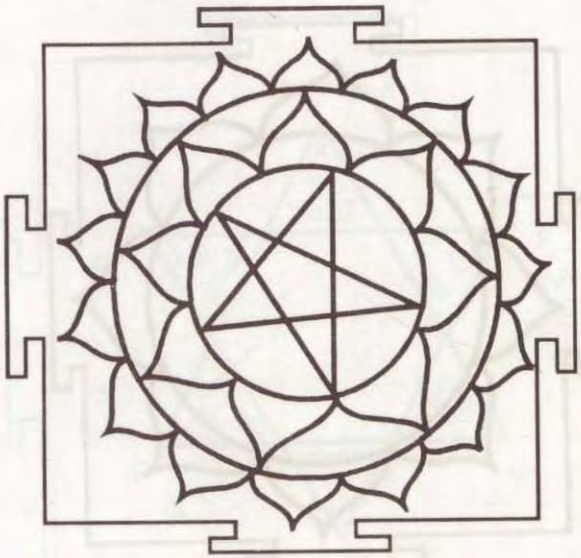
चित्र १७ : कामेशी पूजन-यन्त्र (पृ० २१६)



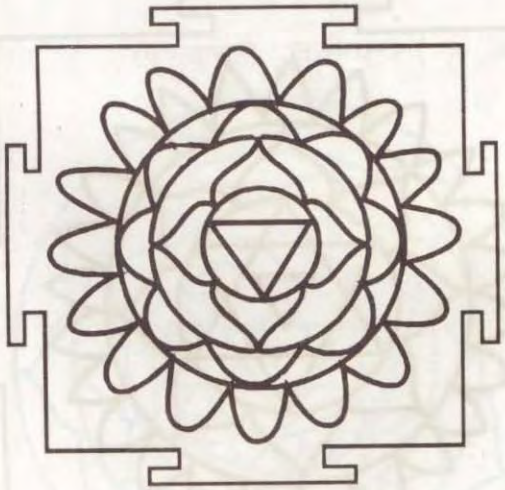
चित्र १८ : बाला धारण–यन्त्र (पृ० २३६)



चित्र १९ : लघुश्यामा पूजन-यन्त्र (पृ० २४६)



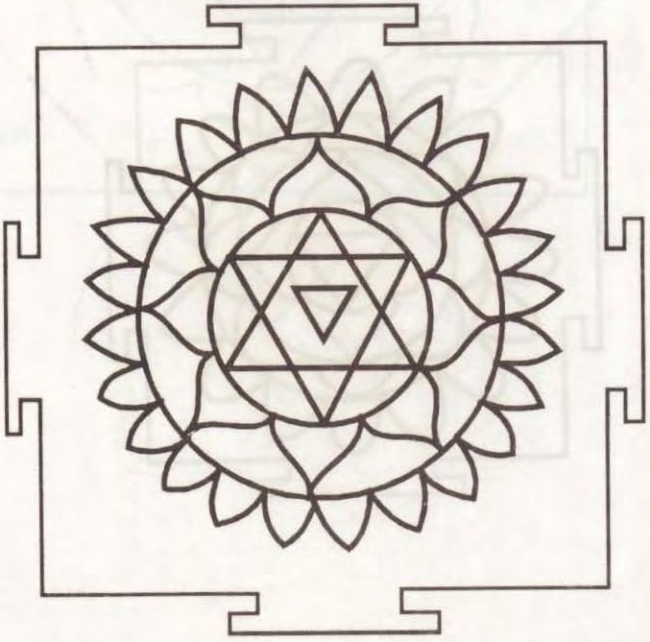
चित्र २० : अन्नपूर्णेश्वरी पूजन-यन्त्र (पृ० २५६)



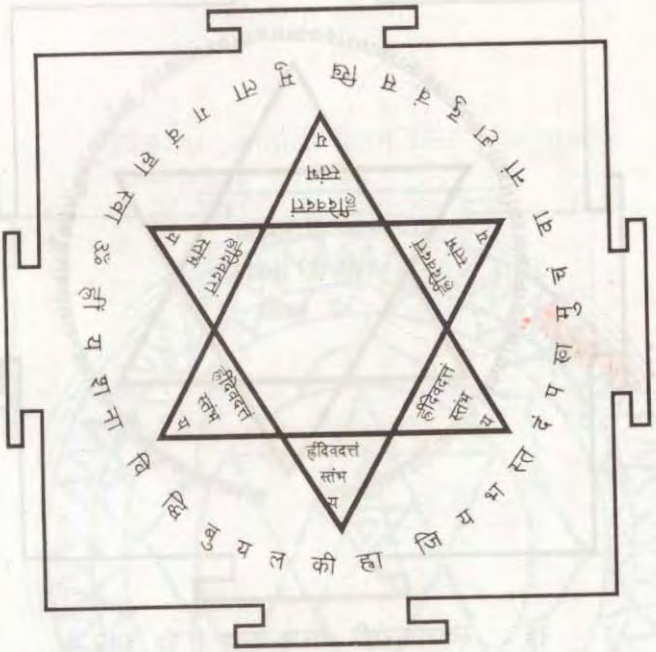
चित्र २१ : त्रैलोक्यमोहन पूजन–यन्त्र (पृ० २६५)



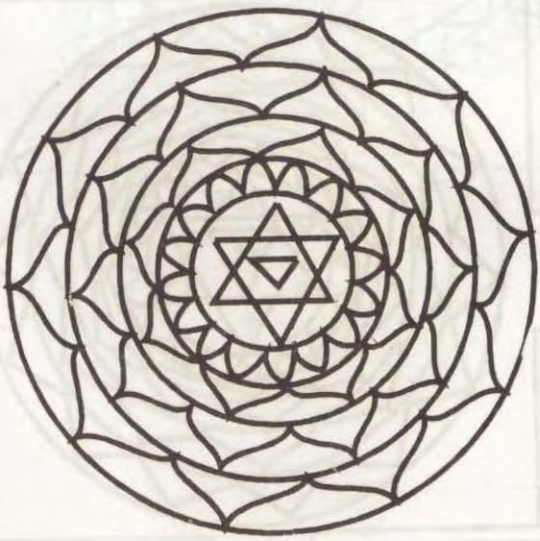
चित्र २२ : बगलामुखी पूजन–यन्त्र (पृ० २८६)



चित्र २३ : बगलामुखी स्तम्भन–यन्त्र (पृ० २६४)



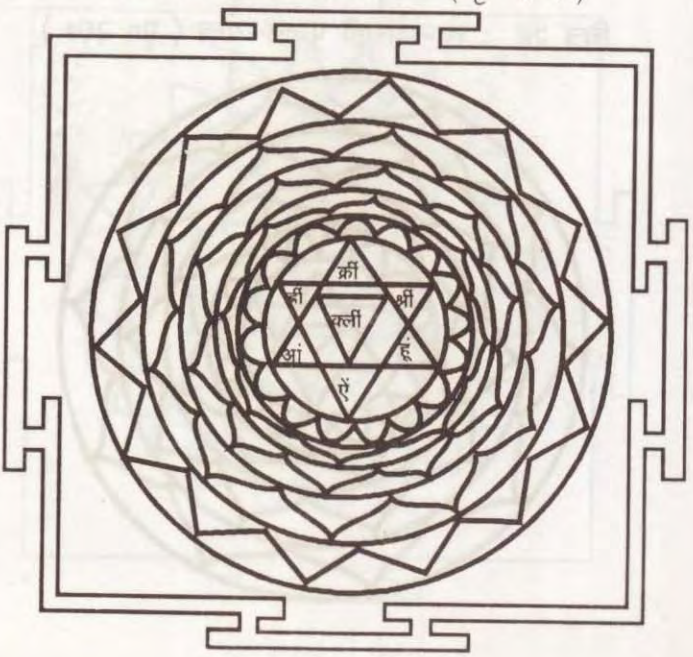
चित्र २४ : स्वप्नवाराही पूजन–यन्त्र (पृ० २६७)



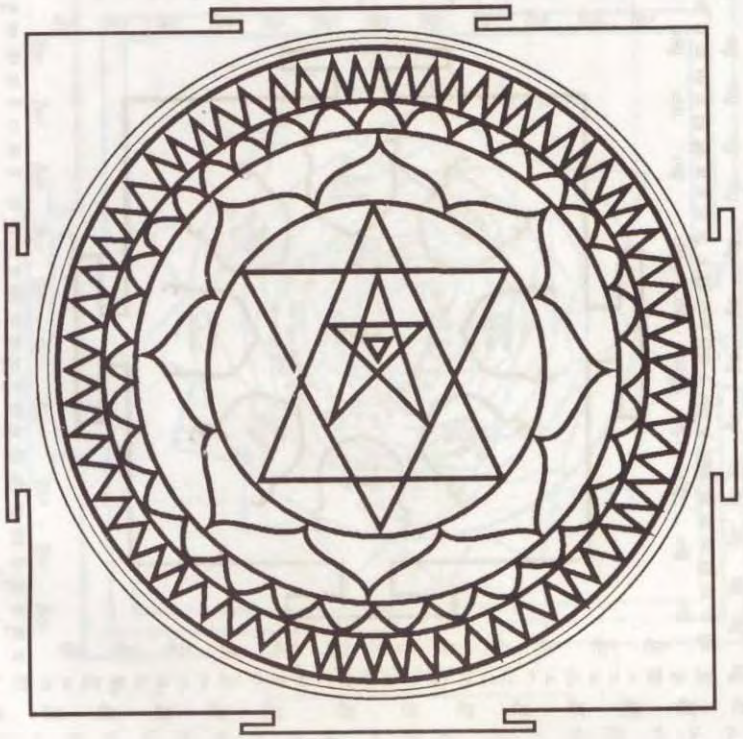
चित्र २५ : स्वप्नवाराही वशीकरण यन्त्र (पृ० ३००)



२६ : स्वप्नवाराही धारण-यन्त्र (पृ० ३०२)

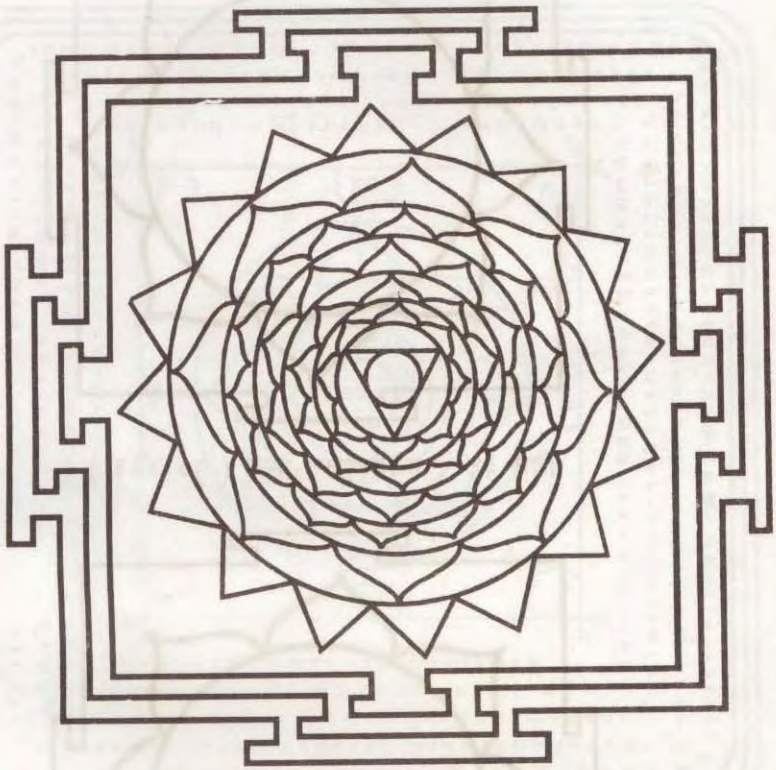


चित्र २७ : वार्ताली पूजन यन्त्र (पृ० ३०४)



चित्र २८ : वार्ताली स्तम्भन यन्त्र (पृ० ३१२)

चित्र २६ : श्रीपूजन–यन्त्र (पृ० ३३६)



चित्र ३० : गोपालसुन्दरी पूजन-यन्त्र (पृ० ३९९)



चित्र ३१ : हनुमत्पूजन-यन्त्र (पृ० ४०३)

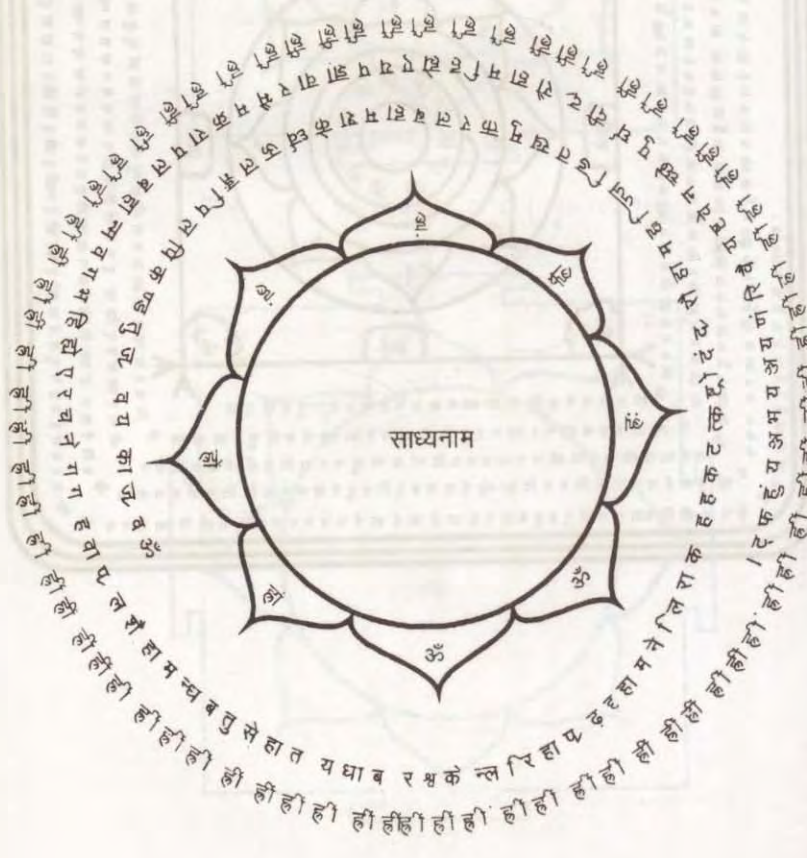


चित्र ३२ : हनुमत् धारण यन्त्र (पृ० ४११)

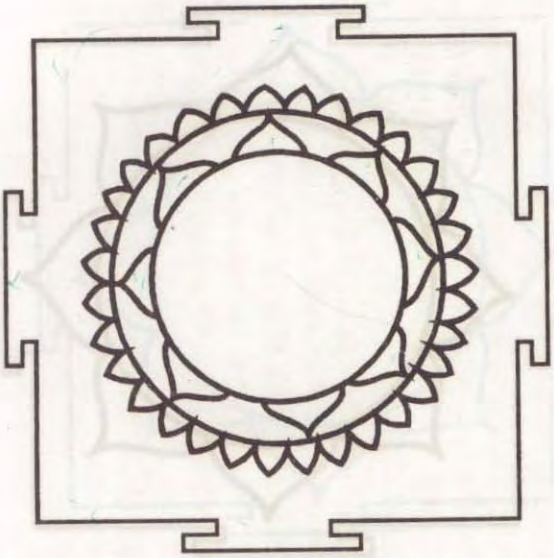
चित्र ३३ : हनुमत् स्वरूप यन्त्र (पृ० ४२०)



चित्र ३४ : हनुमान रक्षाकारक यन्त्र (पृ० ४२२)



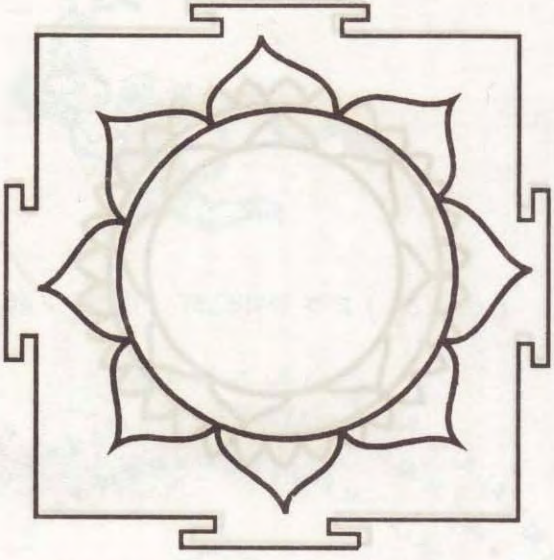
चित्र ३५ : नृसिंह पूजन-यन्त्र (पृ० ४२५)



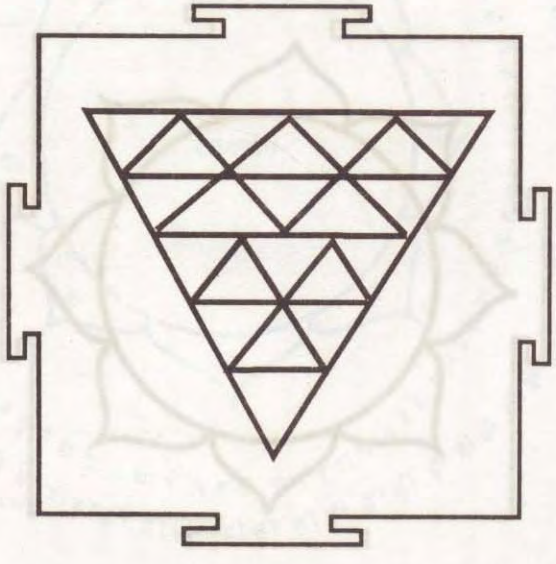
चित्र ३६ : गोपाल पूजन-यन्त्र (पृ० ४४१)



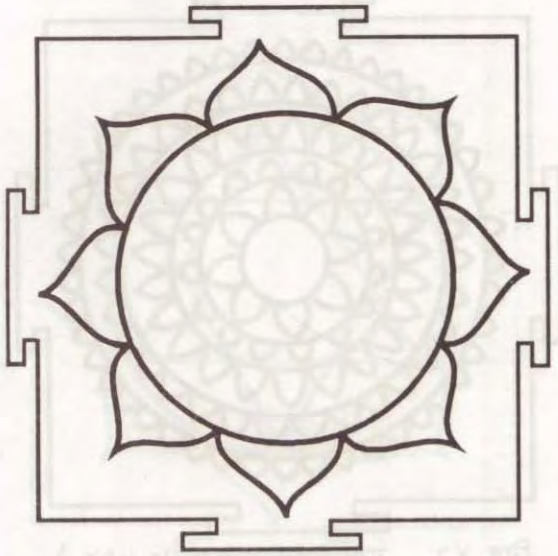
चित्र ३७ : सूर्य पूजन-यन्त्र (पृ० ४६५)



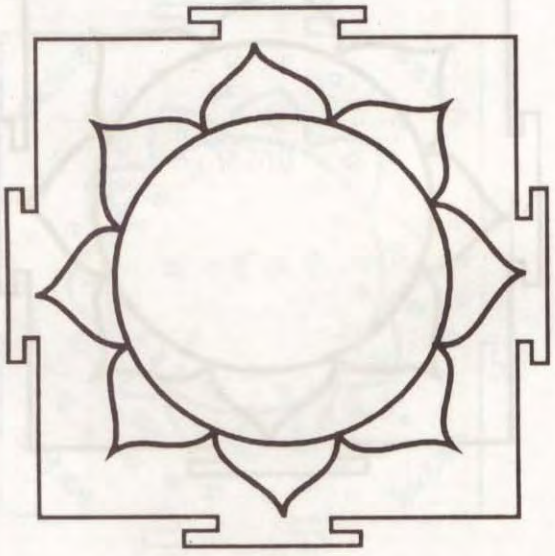
चित्र ३८ : भौम पूजन-यन्त्र (पृ० ४४१)



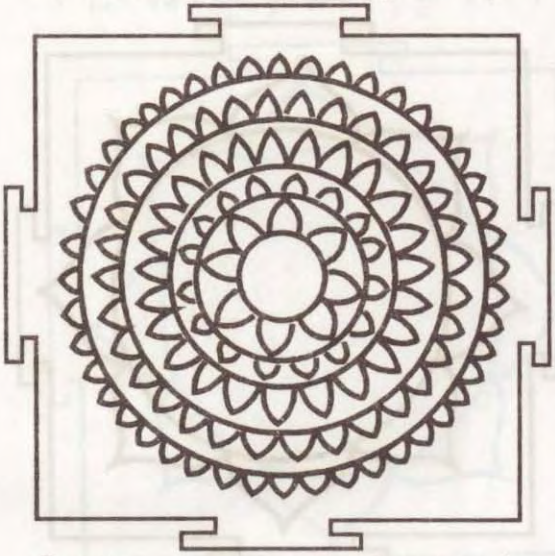
चित्र ३९ : व्यास पूजन-यन्त्र (पृ० ४८२)



चित्र ४० : महामृत्युअय पूजन-यन्त्र (पृ० ४९०)



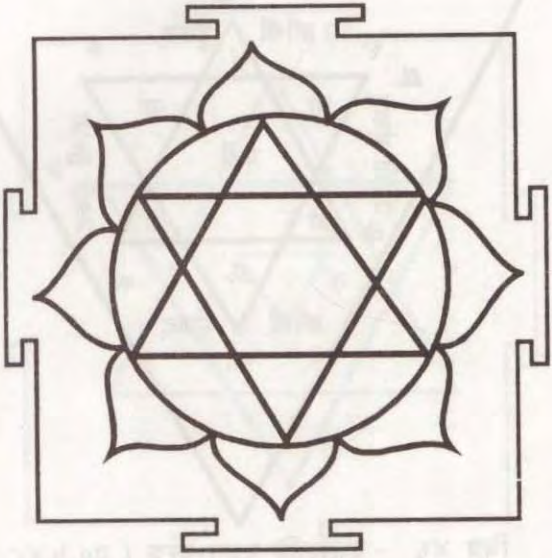
चित्र ४१ : रुद्र पूजन-यन्त्र (पृ० ५०४)



चित्र ४२ : गङ्गा पूजन-यन्त्र (पृ० ५१४)



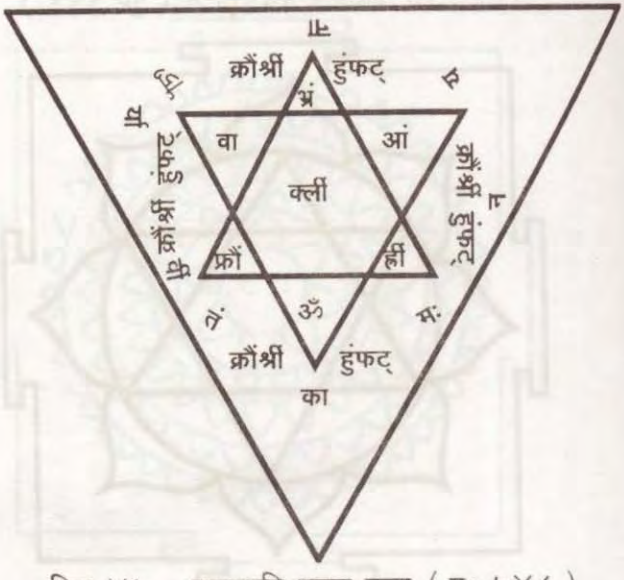
चित्र ४३ : कार्तवीर्य पूजन-यन्त्र (पृ० ५२४)



चित्र ४४ : कार्तवीर्यार्जुनस्य काम्यप्रयोगार्थ पूजन-यन्त्र (पृ० ५२७)



चित्र ४५ : कार्तवीर्य दीप स्थापन यन्त्र (पृ० ५३६)



चित्र ४६ : कालरात्रि पूजन-यन्त्र (पृ० ५४८)



चित्र ४७ : कालरात्रि दीपस्थापन यन्त्र (पृ० ५५५)



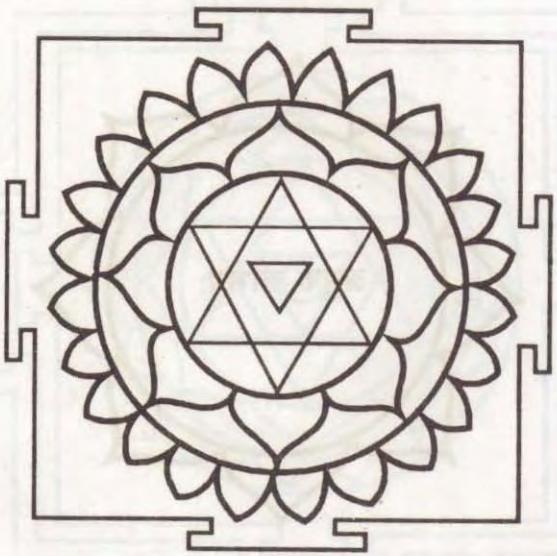
चित्र ४८ : कालरात्रि स्तम्भन यन्त्र (पृ० ५५७)



चित्र ४९ : कालरात्रि मोहन यन्त्र (पृ० ५५८)



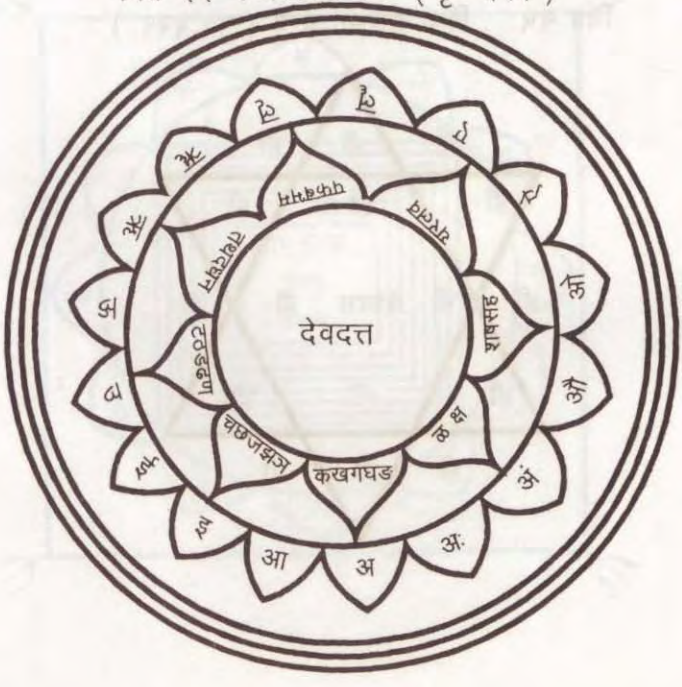
चित्र ५० : चण्डी पूजन-यन्त्र (पृ० ५७५)



चित्र ५१ : चरणयुध पूजन-यन्त्र (पृ० ५९३)



चित्र ५२ : वश्यकरं यन्त्र (पृ० ६२६)



चित्र ५३ : वश्यकरं (द्वितीय) यन्त्र
(पृ० ६२७)



चित्र ५४ : स्वामीवश्यकरं यन्त्र (पृ० ६२८)



चित्र ५५ : दिव्य स्तम्भन यन्त्र (पृ० ६२९)



चित्र ५६ : राजामोहनाय पञ्चमाख्य यन्त्र (पृ० ६२९)



चित्र ५७ : मृत्युअय यन्त्र (पृ० ६३०)



चित्र ५८ : विवादजयकरं यन्त्र (पृ० ६३१)



चित्र ६० : दुष्टमोनाख्यां मोहन यन्त्र
(पृ० ६३२)



चित्र ५९ : धनिकवश्यकरं यन्त्र (पृ० ६३२)



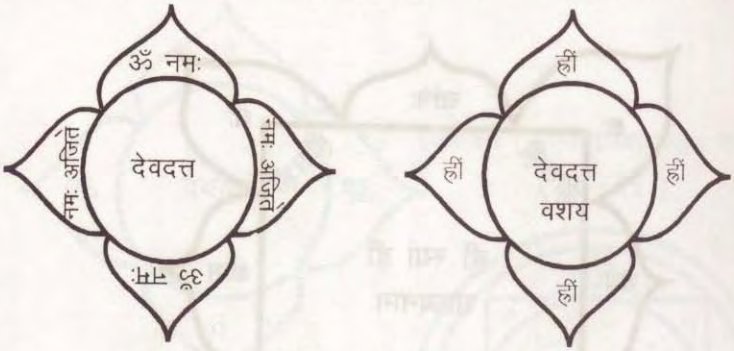
चित्र ६१ : सर्वत्रजयदं यन्त्र (पृ० ६३३)



चित्र ६२ : यावज्जीवनवश्यकरं यन्त्र (पृ० ६२०)



चित्र ६३ : नृपवश्यकरं यन्त्र (पृ० ६३५) चित्र ६४ : भृत्यवश्यकर (पृ०६३६)



चित्र ६५ : दुष्टवश्यकर यन्त्र (पृ० ६३६)



चित्र ६६ : ललिताख्यंपतिवश्यकरं यन्त्र (पृ० ६३७)



चित्र ६९ : पतिवश्यकरं यन्त्र (पृ० ६३८)



चित्र ६८ : दौर्भाग्यनाशन बीजयन्त्र (पृ० ६३८)



चित्र ६९ : आकर्षण यन्त्र (पृ० ६३९)



चित्र : ७० त्रिपुराख्यमार्षण यन्त्र (पृ० ६३९)



चित्र ७१ : मुखमुद्रणंयन्त्र (पृ० ६३९)



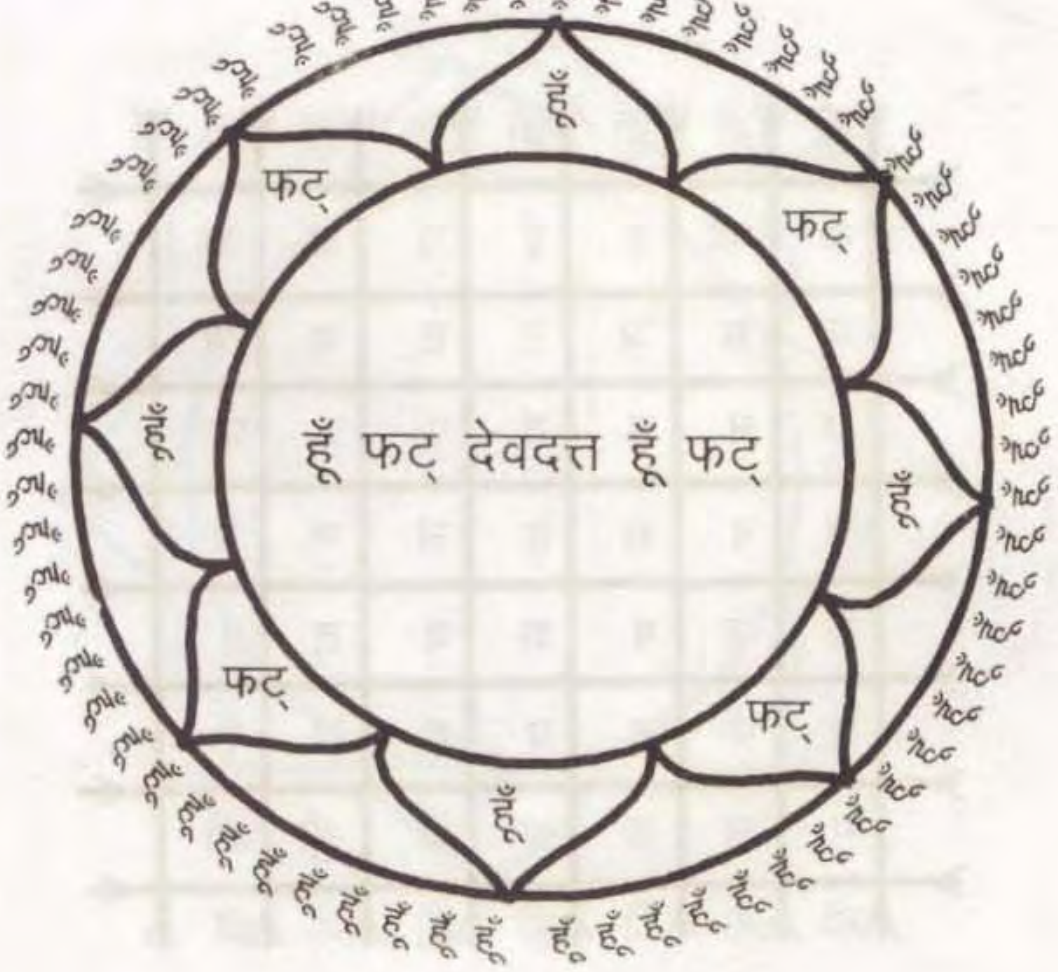
चित्र ७२ अग्निभयहरं (पृ० ६४०)



चित्र ७३ : विद्वेषकरं यन्त्र (पृ० ६४०)



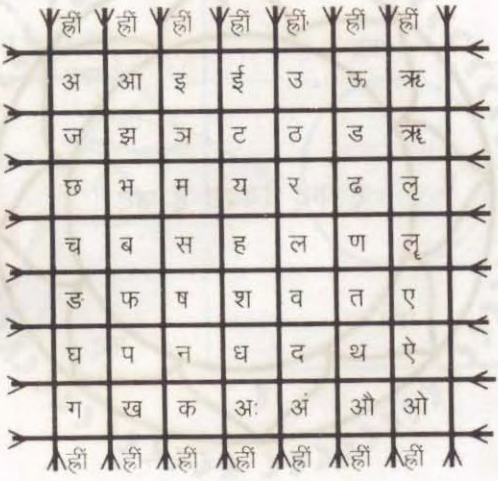
चित्र ७४ : मारणयन्त्र (पृ० ६४१)



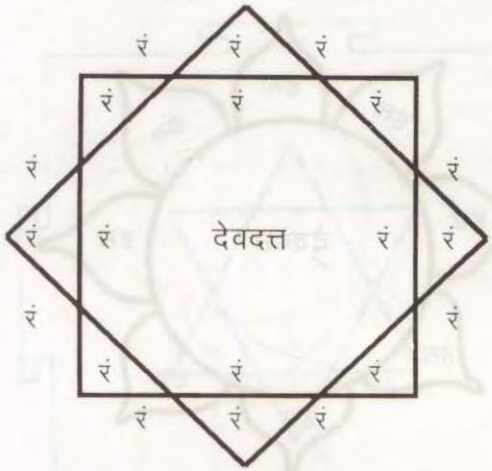
चित्र ७५ : उच्चटनकरं यन्त्र (पृ० ६४२)



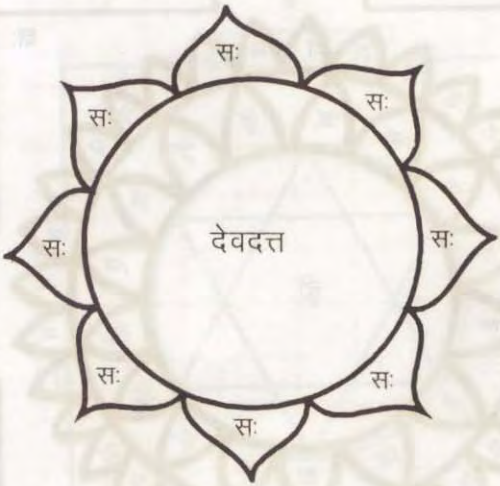
चित्र ७६ : शान्तिकरं यन्त्र (पृ० ६४३)



चित्र ७७ : शाकिनीमिवर्तकं यन्त्र (पृ० ६४४)



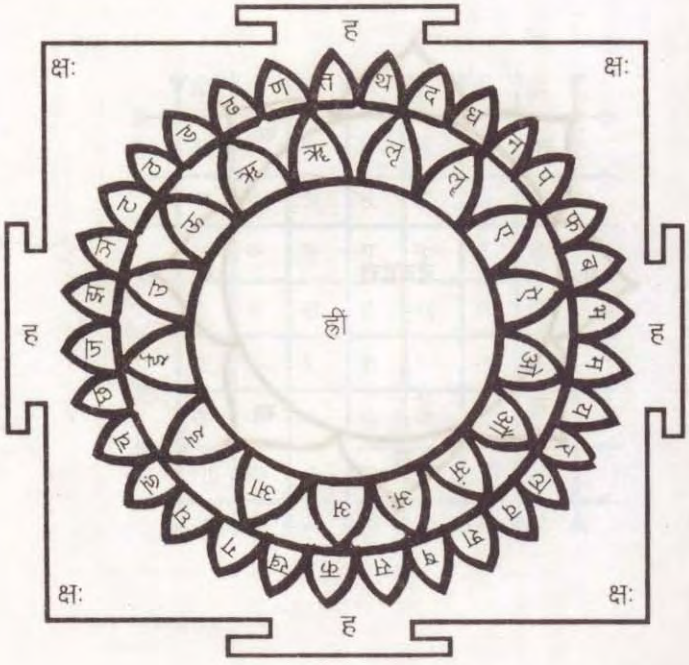
चित्र ७८ : ज्वरहरं यन्त्र (पृ० ६४४)



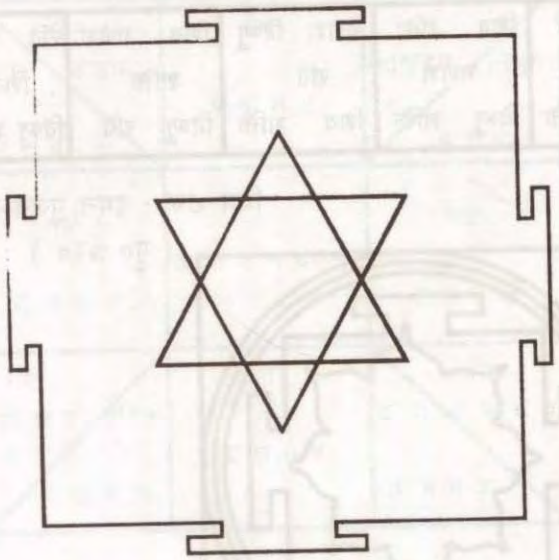
चित्र ७६ : सर्पभयहरं यन्त्र (पृ० ६४४)



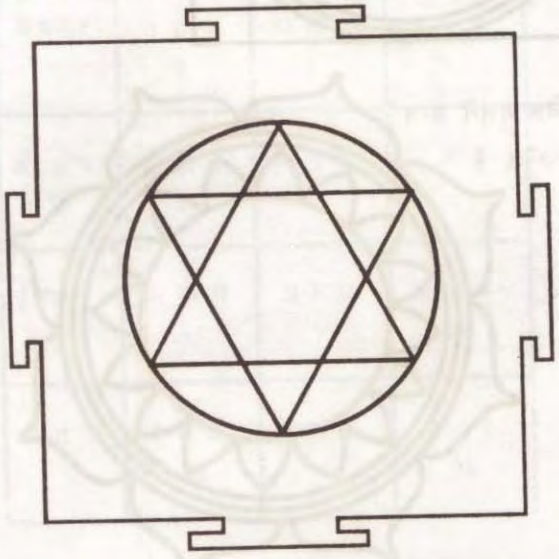
चित्र ८० : बन्धमोक्षकरं यन्त्र (पृ० ६४५)



चित्र ८१ स्वर्णकर्षण भैरव पुजन–यन्त्र (पृ० ६४७)



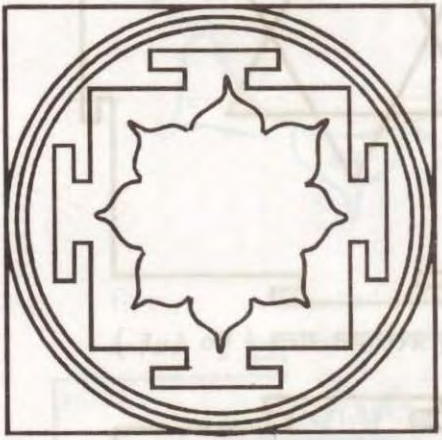
चित्र ८२ : पात्रस्थापन यन्त्र (पृ० ६८६)



चित्र ८३ : पञ्चायत स्थान क्रम यन्त्र (पृ० ६९५)

गणेश रवि विष्णु शिव शक्ति	शिव रवि गणेश विष्णु शक्ति	गणेश विष्णु रवि शिव शक्ति	शिव गणेश शक्ति विष्णु रवि	रवि गणेश शिव विष्णु शक्ति

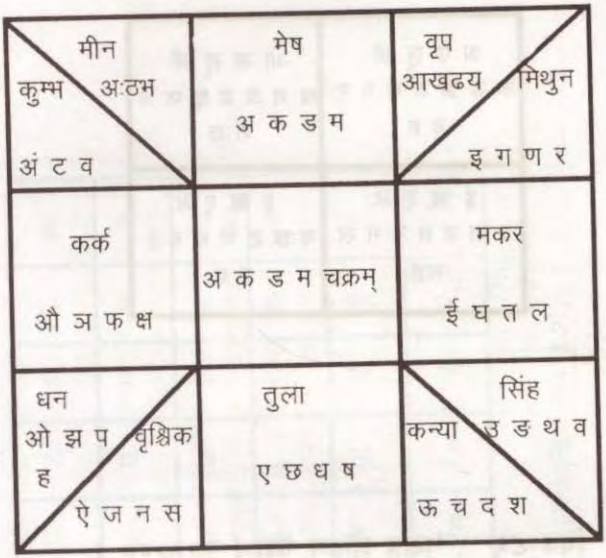
चित्र ८४ : दमन पुजन-यन्त्र
(पृ० ७२०)



चित्र ८५ : पवित्र यजने यन्त्र
(पृ० ७२५)



चित्र ८६ : अकथहचक्रम (पृ० ७२५)



चित्र ८७ : अकडमचक्रम (पृ० ७३९)

अ क थ ह १	उ ङ प २	आ ख द ३	ऊ च फ ४
ओ ड ब ५	ऌ झ म ६	औ ढ श ७	ऌ ञ य ८
ई घ न ९	ॠ ज भ १०	इ ग ध ११	ॠ द व १२
अः त स १३	ऐ ठ ल १४	अं ण ष १५	ए ट र १६

चित्र ८८ : सिद्धादिशोधन चक्र (पृ० ७३९)

अ उ लृ ओ क ङ झ ड थ प म व ह	आ ऊ लॄ औ ख च ञ ढ द फ य श ळ
ई ॠ ऐ अः प ज ठ त न भ ल सज्ञः	इ ऋ ए अं ग छ ट ण ध ब र ष क्ष

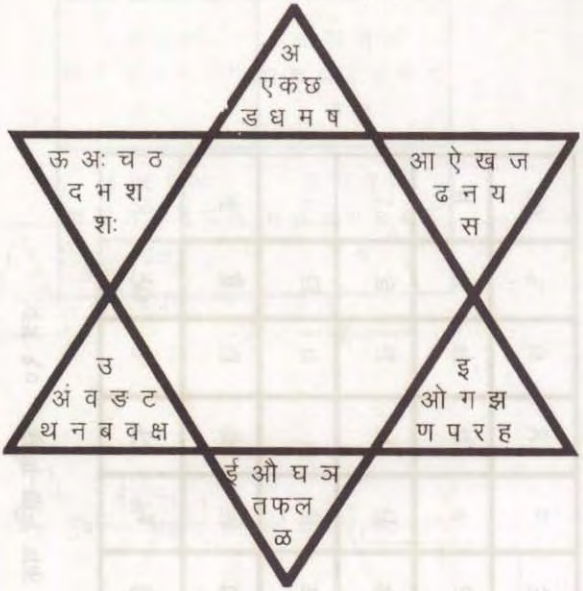
चित्र ८९ : नक्षत्र शोधन चक्र (पृ० ७४०)

अ अ आ	भ इ	क ईउऊ	रो ऋॠऌ ॡ	मृ ए	आ ऐं	पु ओऔ	पु क	आ खग
म घङ	पू च	उ छ ज	ह झ ञ	चि टठ	स्वा ड	वि ढण	अ तथद	ज्ये ध
मू मपफ	पू ब	उ भ	श्र म	ष यर	श ल	पू षश	उ ष सह	रे क्षअंअः

चित्र ९० : ऋषि-ध्वनि चक्र (पृ० ७४२)

०	९	८	७	६	५	४	३	२	१
ऋ	ॡ	ऌ	ॠ	ऋ	ॡ	ऌ	ॠ	ऋ	ॡ
अ	ह	उ	ऋ	ऌ	ए	ऐ	ओ	आ	अं
ख	ग	घ	ङ	च	छ	ज	झ	ञ	ट
ड	ढ	ण	त	थ	द	ध	न	प	फ
ब	भ	म	य	र	ल	व	ष	स	ह
०	९	८	७	६	५	४	३	२	१

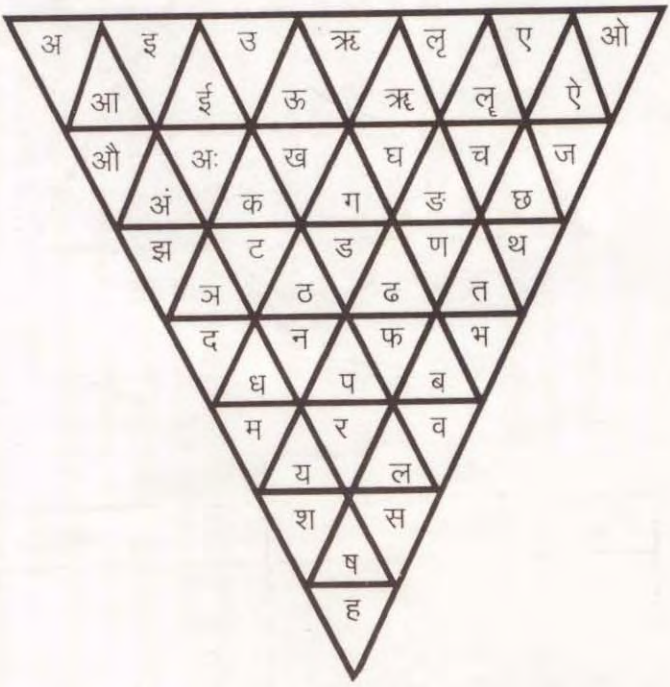
चित्र ९१ : मन्त्रशोधन चक्र (पृ० ७४५)



चित्र ९२ : कुलाकुलचक्र (पृ० ७५१)

वायु	अग्नि	भूमि	जल	आकाश
अ आ	इ ई	उ ऊ	ऋ ॠ	ऌ ॡ
ए	ऐ	ओ	औ	अं
क	ख	ग	घ	ङ
च	छ	ज	झ	ञ
ट	ठ	ड	ढ	ण
त	थ	द	ध	न
प	फ	ब	भ	म
य	र	ल	व	श
ष	क्ष	ळ	स	ह

चित्र ९३ : जनन यन्त्र (पृ० ७५२)



हमारे प्रमुख प्रकाशन

मन्त्रमहोदधिः (मूल एवं हिन्दी अनुवाद)	400.00
मन्त्रमहोदधिः English I: 400.00, English II:	400.00
हिन्दी मन्त्र महार्णव (मूल एवं हिन्दी अनुवाद)	
देवी खण्डः 400.00 देवता खण्डः 400.00 मिश्र खण्डः	200.00
श्रीविद्यार्णवतन्त्रम् (मूलमात्र)	
पूर्वार्धम्: 250.00 उत्तरा० प्रथमः 250.00 उत्तरा० द्वितीयः	250.00
कुलार्णवतन्त्र (मूल एवं हिन्दी अनुवाद)	200.00
नारदपाञ्चरात्रम् (मूल एवं हिन्दी अनुवाद)	250.00
श्रीकृष्णयामलमहातन्त्रम् (मूलमात्र)	150.00
धनदारतिप्रिया तन्त्र (मूल एवं हिन्दी अनुवाद)	10.00
मातृकाभेद तन्त्र (मूल एवं संस्कृत टिप्पणी सहित)	25.00
त्रिपुरासार समुच्चय (नागभट्टकृत एवं गोविन्दाचार्य की संस्कृत टीका)	10.00
त्रिपुरातापियुपनिषद् एवं त्रिपुरोपनिषद्	5.00
हनुमद्वडवानल स्तोत्र, हनुमल्लाङ्गूलास्त्र स्तोत्र एवं हनुमान साठिका	5.00
शिवस्वरोदय (मूल एवं अंग्रेज़ी अनुवाद)	75.00
शनिस्तोत्रावलि	5.00
वामकेश्वरीमतम् (मूल एवं अंग्रेजी अनुवाद)	50.00
कौलज्ञाननिर्णय (मूल एवं अंग्रेजी अनुवाद)	100.00
डामरतन्त्र (मूल एवं अंग्रेजी अनुवाद)	75.00
कामरत्नतन्त्रम् (मूल एवं हिन्दी अनुवाद)	85.00
अद्भुत रामायण (महर्षि वाल्मीकि कृत)	50.00
Encyclopedia of Yoga	300.00
Dictionaries of Tantra Sastra	100.00
Encyclopedia of Indian Erotics	200.00
मनमोदक (बालोप्योगी हास्य प्रधान कहानियाँ)	40.00
लेखक - महताब राय - संपादक - प्रेमचन्द	

कृष्ण कुमार राय की महत्वपूर्ण कृतियाँ –
बीसवीं सदी के सर्वश्रेष्ठ कथाकार - प्रेमचन्द
(दुलर्भ संस्मरण, विचारोत्तेजक शोध लेख)
गल्प समुच्चय (प्रेमचन्द परम्परा की उत्कृष्ट कहानियाँ)
अलका (सामाजिक उपन्यास)
तरंग (गद्य-काव्य, रेखाचित्र इत्यादि)

प्रेस में

प्राच्य प्रकाशन
लमही (पोस्ट, वाया सारनाथ) वाराणसी-२२१००७